डा० मामोरिया की रचनाएँ

१. आधुनिक भारत का वृहत् भूगोल, द्वितीय सस्करण, १९६४
२. भारत की भौगोलिक समीक्षा, स १९६४
३. आर्थिक और वाणिज्य भूगोल, तृतीय सस्करण, १९६४
४. Agricultural Problems of Indian, Fourth Ed., 1963.
५ मानव भूगोल (प्रकाशनाधीन)
६. भूगोल के भौतिक आधार („)

आर्थिक और वाणिज्य भूगोल

(Economic and Commercial Geography)

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत)

लेखक

डा० चतुर्भुज मामोरिया, एम. ए. (भूगोल), पी-एच. डी.,

प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, व्यवहारिक अर्थशास्त्र एवं वित्त विभाग,

महाराणा भूपाल कालेज, उदयपुर।

प्राक्कथन लेखक

डा० रामलोचनसिंह, एम. ए., पी-एच. डी. (लन्दन)

अध्यक्ष, भूगोल विभाग

काशी विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रकाशक

गया प्रसाद एण्ड संस, आगरा

प्रकाशक :

प्रकाशन-विभाग
गयाप्रसाद एण्ड संस
बाँके विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा



मुख्य विक्रय-केन्द्र :

गयाप्रसाद एण्ड संस, हॉस्पीटल रोड, आगरा
ऑरियंटल पब्लिशिंग हाउस, परेड, कानपुर
श्री अलमोड़ा बुक डिपो, गांधीमार्ग, अलमोड़ा
पॉपूलर बुक डिपो, चौड़ा रास्ता, जयपुर
लॉयल बुक डिपो, पाटनकर बाजार, ग्वालियर
कैलाश पुस्तक सदन, हमीदिया रोड, भोपाल



पुस्तक का मूल्य :

२० रुपये



पुस्तक का संस्करण :

प्रथम संस्करण, १९५७
द्वितीय संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण, १९६१
तृतीय संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण, १९६४



मुद्रक :

जगदीशप्रसाद, एम० ए०
एज्युकेशनल प्रेस, आगरा

आर्थिक और वाणिज्य भूगोल
पर
सम्मान्य सम्मतियाँ

"डबल डिमाई आकार के १२०४ पृष्ठों की हिन्दी में यह अपने विषय की पहली पुस्तक है। आवश्यक चित्रों, नक्शों, चार्टों और विशेष तालिकाओं से सुसज्जित इस पुस्तक की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें सभी उपलब्ध नवीनतम आंकड़ों का समावेश किया गया है। पुस्तक की भाषा सरल और सुबोध है। लेखक इतनी उत्तम पुस्तक देने के लिए बधाई के पात्र हैं। हमें विश्वास है कि विद्यार्थी-समाज इस परिश्रमपूर्वक तैयार किये गये ग्रन्थ से लाभ उठावेगा।

३१ दिसम्बर १९५७] —भारत, इलाहाबाद

A distinguished Professor and author of more than a dozen books, Mr Mamoria is well qualified to write a book of this nature The book under written in Hindi gives a comprehensive account of the various branches of Economic Geography. The importance given to subjects relating to India is a welcome feature of the book. **Needless to say that the book will be useful to students of B Com, M. Com. and M A. (Geog.) and other allied** courses who study Economic Geography in the Hindi medium,

31st May, 1958] —*Commerce*, Bombay.

"Mr. Mamoria *has successfully attempted to give* University students an authentic text on Economic Geography. The labour he puts into this task may be *seen from the fact that* about 175 books *in* English were consulted for the purpose. Shri Mamoria has tried to explain the main elements and principles of his subject in a scientific manner in 40

chapters. His style is simple and lucid. **We hope that this book will prove useful to students of Geography, Economics and Commerce.** The author deserves heartiest congratulations for this voluminous work."

Feburary 2, 1958] —*Bharat Jyoti*, Bombay.

"यद्यपि प्रस्तुत ग्रंथ उन विद्यालयों के उद्देश्य से लिखा गया है, जो बी० ए० और एम० ए० की कक्षाओं में भूगोल पढ़ते हैं, किन्तु वस्तुतः यह उन सबके लिए भी उपयोगी होगा जो देश के आर्थिक और औद्योगिक विकास में रुचि लेते हैं। इस बृहत् ग्रंथ में भूगोल का आर्थिक दृष्टि से अध्ययन करते हुए बताया गया है कि भौगोलिक परिस्थितियाँ किस तरह देश के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालती हैं। संसार के विभिन्न भागों में जलवायु, प्राकृतिक व भौगोलिक स्थिति, वनस्पति, कृषि, भूमि, खनिज, यातायात के साधन, बन्दरगाह, जनसंख्या आदि का इतने अधिक विस्तार से परिचय दिया गया है कि प्रत्येक विषय ने स्वयं एक पृथक पुस्तक का रूप धारण कर लिया है। अपने विषय को स्पष्ट करने के लिए लेखक ने विभिन्न देशों की औद्योगिक व आर्थिक प्रगति, समस्याओं और योजनाओं का भी खासा परिचय दिया है। सैकड़ों मानचित्रों और तुलनात्मक तालिकाओं व चार्टों से प्रत्येक विषय को बहुत अधिक विशद और स्पष्ट कर दिया गया है। कहीं हम प्राकृतिक भूगोल—शीतोष्ण कटिबन्ध, समुद्री व वायवीय धाराओं, पथरीली, रेतीली और उपजाऊ भूमि की वैज्ञानिक शुष्क चर्चा पढ़ते हैं तो कहीं खनिज पदार्थों की दृष्टि से विषय विभाजन का विस्तृत परिचय। परन्तु इसके साथ लेखक विभिन्न देशों में होने वाले खनिज उद्योगों की वैज्ञानिक और रासायनिक प्रक्रियाओं का भी पर्याप्त परिचय देता गया है और उन स्थलों पर यह पुस्तक अर्थशास्त्र, विज्ञान और रसायन आदि का ग्रंथ मालूम होता है। कोयला, लोहा, कपास, सिंचाई, यातायात, शक्ति और सभी प्रकरण अपने आप में पूर्ण प्रतीत होते हैं।

यों पुस्तक समस्त विश्व के भूगोल के सम्बन्ध में है, परन्तु भारत सम्बन्धी प्रकरण बहुत विस्तार से लिखे गए हैं। पंचवर्षीय

योजना के विभिन्न आर्थिक अंगों के विकास की दृष्टि से क्या समस्यायें हैं, क्या योजनाएँ हैं, और कितनी प्रगति हो रही है, यह सब भूगोल की इस पुस्तक से जान सकते है। आर्थिक विकास का इतिहास भी इस ग्रन्थ मे मिलेगा। कोयले के ४० पृष्ठो के विस्तृत प्रकरण में कोयले का निर्माण, संसार के विभिन्न भागो मे कोयले की मात्रा, उसके भेद, विभिन्न देशों की तुलना, खानो से निकालने के विविध तरीके, कोयले के सदुपयोग की नई विधियाँ और भारत मे खानो के विकास की योजना आदि सभी कुछ देने का प्रयत्न लेखक ने किया है। खनिज तेल का प्रकरण ३० पृष्ठो का है। मिट्टी के तेल का इतिहास, भूगर्भ मे तेल की उत्पत्ति, लवण, और शोधन की विधि, तेल के उत्पादन के क्षेत्र, उनकी तुलना, विश्व मे तेल का उत्पादन और खपत, पेट्रोल मे प्राप्त होने या बनाये जाने वाले पदार्थ, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, खनिज तेल के स्थानापन्न आदि का सचित्र परिचय इस ग्रन्थ मे मिलेगा। व्यापकता और पूर्णता की यह शैली सभी प्रकरणो में अपनाई गई है। उद्योग के प्रकरण मे भारत के प्रचलित उद्योगो की अच्छी जानकारी मिल जाती है। उद्योगो की समस्या पर अर्थ-शास्त्र का विद्यार्थी इस पुस्तक से बहुत कुछ जानकारी प्राप्त कर सकता है। किस देश मे और भारत के किस क्षेत्र मे कोई उद्योग क्यों विकसित हुआ, आज उसकी स्थिति और भविष्य क्या है, यह इस विशाल ग्रन्थ में पढने को मिल जायेगा। यातायात के प्रकरण मे स्वेज और पनामा नहरो का इतिहास, विकास, व्यापार, अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष, परस्पर तुलना आदि की जानकारी आज के शिक्षित वर्ग के लिए उपयोगी और रोचक होगी।

इस तरह प्रस्तुत ग्रन्थ अनेक दृष्टियों से उपयोगी और ज्ञान-वर्धक हो गया है। विभिन्न रुचियों के पाठक इससे लाभ उठा सकते है।......लेखक का विस्तृत अध्ययन और अनथक परिश्रम इतना उपयोगी ग्रन्थ दे सका, इसके लिए हिन्दी ससार उसके निकट कृतज्ञ रहेगा।

—हिन्दुस्तान, नई दिल्ली

प्रस्तुत पुस्तक आर्थिक और व्यापारिक दृष्टि से किये गये विश्व के भौगोलिक अध्ययन का सुन्दर ग्रन्थ है। ....ऊँचे स्तर

पर भूगोल ग्रन्थ पर लिखने की दिशा मे यह एक स्तुत्य प्रयास है""व्यापकता और पूर्णता की शैली समस्त प्रकरणों में अपनाई गई है। सक्षेप मे यह ग्रन्थ विविध विषयों और गम्भीर समस्याओं पर लिखी गई पुस्तको का एक साथ सुन्दर समन्वय है। लेखक व प्रकाशक ऐसे उत्कृष्ट ग्रन्थ को हिन्दी जगत के सामने रखने के लिए बधाई के पात्र है।"

फरवरी, १६५८] —सम्पदा, दिल्ली

पूज्य मां और पिताजी

को

उनकी पुण्य स्मृति

में

सादर भेंट !

—चतुर्भुज

प्राक्कथन

श्री चतुर्भुज मामोरिया का आर्थिक और वाणिज्य भूगोल नामक पुस्तक प्रस्तुत करने का प्रयास स्तुत्य प्रतीत होता है। हिन्दी भाषा में विश्वविद्यालयों की कक्षाओं के लिये लगभग १२०० पृष्ठों की भूगोल की यह पहली पुस्तक है। मैंने इसे रुचि से पढा है। इसमें लेखक ने आर्थिक एवं वाणिज्य भूगोल के सभी तत्वों पर विशद् रूप से प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। पुस्तक में नवीनतम आंकड़े भी दिये हैं, यह इस विषय की पुस्तक के लिए नितान्त आवश्यक है। पुस्तक की भाषा सरल और सुबोध है। इस रचना के लिए लेखक धन्यवाद के पात्र हैं। मुझे विश्वास है कि लेखक की अन्य पुस्तकों की भांति विद्यार्थी समाज इस कृति से भी पर्याप्त लाभ उठायेगा।

रामलोचन सिंह
एम ए, पी-एच डी. (लंदन)
अध्यक्ष भूगोल विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी—५

२४-७-१९५७

तृतीय संस्करण पर दो शब्द

इस पुस्तक का तृतीय परिवर्द्धित संस्करण विद्वान साथियों तथा विद्यार्थी समुदाय के समक्ष रखते हुए लेखक अत्यन्त हर्ष का अनुभव करता है। पुस्तक के दीर्घकाल तक उपलब्ध न होने से प्रिय पाठकों को जो कठिनाइयां हुई हैं उसके लिए वह क्षमाप्रार्थी है।

प्रस्तुत संस्करण को अत्यधिक विश्वसनीय एवं आद्यतन बनाने का भरसक प्रयास किया गया है। इसमें लेखक को कहाँ तक सफलता मिली है यह निर्णय करना विद्वान सहयोगियों का ही काम है। लेखक ने उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस संस्करण में जो परिवर्तन किये हैं उनसे यह पुस्तक नवीन रूप में उपस्थित की जा रही है। इसमें प्रायः सभी अध्यायों को पूर्णतः फिर से लिखा गया है, अनेक नये अध्याय सम्मिलित किये गए हैं तथा विषय-सामग्री को नवीनतम उपलब्ध आकड़ों के आधार पर तैयार किया गया है। इसमें सरकारी एवं गैर-सरकारी प्रकाशनों तथा विषय पर उपलब्ध अंग्रेजी एवं अमरीकी पुस्तकों का उपयोग किया गया है जिसके लिए लेखक उनके सम्पादक, लेखक तथा प्रकाशक बन्धुओं का हृदय से आभारी है।

पुस्तक को इस रूप में प्रकाशित करने का श्रेय बन्धुवर श्री जगदीशप्रसाद अग्रवाल को है। यदि पुस्तक इस रूप में भूगोल के उच्च कक्षा के विद्यार्थियों के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकी तो लेखक अपना प्रयास उचित मान सकेगा।

उदयपुर
२५ मार्च, १९६४

—चतुर्भुज मामोरिया

द्वितीय संस्करण पर दो शब्द

पुस्तक का द्वितीय पूर्णतः संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष होता है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण डेढ वर्ष से भी कम की अवधि मे समाप्त हो गया। यह इस बात का द्योतक है कि पुस्तक विद्यार्थियों एव अध्यापक बन्धुओं के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध हुई है। द्वितीय संस्करण का प्रकाशन कुछ तो कागज और प्रेस सम्बन्धी कठिनाइयो और कुछ मेरी स्वय की अस्वस्थता एवं समयाभाव से शीघ्र प्रकाशित नही किया जा सका, यद्यपि मेरे प्रकाशक निरन्तर मुझे इसके लिए प्रेरित करते रहे, इसका मुझे दुःख है। इस अवाछनीय विलब के कारण पुस्तक के शीघ्र न निकलने से सहृदय पाठको को जो असुविधा और हानि हुई है उसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

इस संस्करण को तैयार करते समय मेरा ध्यान निरतर यह रहा है कि पुस्तक को अधिक से अधिक उत्तम और पूर्ण बनाया जाये तथा प्रथम सस्करण के समय रही प्रूफ-सम्बन्धी अशुद्धियो का भी यथासभव निराकरण किया जा सके। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण पुस्तक का सशोधन किया गया है। प्रायः सभी अध्यायो मे पुरानी सामग्री निकाल कर यथास्थान नवीनतम सूचना और अद्यतन आंकडे दिये गये हैं। सबसे अधिक परिमार्जन आर्थिक भूगोल के क्षेत्र, मानव और उसका वातावरण, वायुमडल एव प्राकृतिक प्रदेशों, मिट्टी और खाद, मत्स्य पालन, खनिज सम्पत्ति, जनसख्या के वितरण, उसके विकास एव वृद्धि तथा आवास प्रवास और नगरो की उत्पत्ति और विकास के अध्यायो मे और भारत सम्बन्धी विवरण मे किया गया है। इससे यह सस्करण पहले सस्करण से एक प्रकार से बिल्कुल ही भिन्न, अधिक प्रामाणिक, खोजपूर्ण एवं ज्ञातव्य बातो से भरा है। अध्यायों के क्रम में भी परिवर्तन किया गया है जिससे एक दूसरे का भली भाँति समन्वय हो गया है और जिससे अध्ययन मे भी सरलता रहती है।

आशा और विश्वास है कि इन परिवर्तनो के फलस्वरूप अपने वर्तमान स्वरूप मे यह पुस्तक उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियो एव अन्य जिज्ञासुओ के लिये अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकेगी।

सशोधन कार्य में अनेक मित्रों से जो सहयोग मिला है—विशेषकर श्री जानकीलाल न्याती एम॰ ए॰, और श्री राधेकृष्ण रावत एम॰ कॉम—उसके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। मेरे प्रकाशक श्री रामप्रसाद जी अग्रवाल ने जिस लगन एवं तन्मयता के साथ इसका मुद्रण, प्रकाशन एव प्रचार किया है उसके लिए

मैं उनका हृदय से आभार प्रदर्शन करता हूँ। प्रथम संस्करण पर उत्तर प्रदेश सरकार ने भूगोल की उत्तम पुस्तक मानकर मुझे ७०० रु० के पुरस्कार से सम्मानित कर मेरा उत्साह बढाया है उसके लिए मैं उनका बडा अनुगृहीत हूँ। अंत मे पाठको के प्रति भी मैं आभार मानता हूँ जिन्होंने पुस्तक मे अनेक त्रुटियाँ होते हुए भी इसे अपनाया है।

आगामी सस्करण के लिए सुझावों का निमत्रण है।

पहली जनवरी, १९६१]

—चतुर्भुज मामोरिया

प्रथम संस्करण पर दो शब्द

भूगोल के शिक्षक और विद्यार्थी होने के नाते मेरी यह प्रबल इच्छा रही है कि यदि भूगोल शास्त्र के विभिन्न अंगों पर उच्च कक्षाओं के निमित्त प्रामाणिक पाठ्य और सहायक पुस्तकें हिन्दी भाषा में लिखी जायें तो देश के भावी नागरिकों के ज्ञान की अभिवृद्धि इस विषय में भलीभाँति हो सकती है। किन्तु दुर्भाग्यवश इस ओर भारतीय भूगोल शास्त्रियों और विद्वानों का इस अभाव की पूर्ति हेतु कोई विशेष प्रयत्न हुआ हो ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता। यही कारण है कि जहाँ अमेरिका और यूरोप में डा० रमल, डा० फिलिप्स, वेंस्टन, जोन्स, जिमरमैन, व्हिटबेक, फिच, क्लिम, डा० स्टाम्प, श्री चिशोल्म, श्री हटिंग्टन, श्री ट्रिवार्था, श्री टेलर, ब्रून्स, श्री वाई डैला ब्लैंचे, डा० सैम्पल, श्री ह्वाइट और रैनर, श्री डेविस आदि विद्वानों ने भूगोल की विभिन्न शाखाओं पर अँग्रेजी भाषा में अनेक उत्तमोत्तम ग्रंथ प्रस्तुत किये हैं वहाँ भारत में कुछ ही विद्वानों को छोड़कर किसी ने भी इस सम्बन्ध में कोई प्रयास नहीं किया। अस्तु, उच्च परीक्षाओं के विद्यार्थियों को अध्ययन के लिए विदेशी विद्वानों की कृतियों का सहारा लेना पड़ता है जो न केवल कीमती ही होती हैं वरन् भाषा की दृष्टि से भी उनके लिए अग्राह्य होती हैं। इसी कठिनाई से प्रेरित होकर मैंने यह प्रयास करने की धृष्टता की है। सम्भवत. बी० ए० और एम० ए० की भूगोल कक्षाओं के लिए 'आर्थिक और वाणिज्य भूगोल' के पाठ्य-क्रमानुसार यही पहली पुस्तक है जो हिन्दी भाषा में प्रकाशित हो रही है। यह पुस्तक न केवल इन कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए ही लाभदायक होगी वरन् माध्यमिक कक्षाओं के अध्यापक बन्धुओं एवं विशेष रुचि वाले विद्यार्थियों के लिए भी यह सदर्भ ग्रंथ का काम देगी। इस प्रयास में मुझे कितनी सफलता मिली है इसका निर्णय मैं विषय के विद्वानों और पाठकों के हाथ में ही छोड़ता हूँ।

मुख्यत इस पुस्तक का प्रणयन उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों के हेतु ही किया गया है। अत. यह आवश्यक ही था कि इसकी रचना में उच्च कोटि के विदेशी ग्रंथों का अवलम्बन लिया जाय। इसकी दृष्टि से यथासम्भव मैंने उन सभी ग्रंथों से सामग्री चयन करने का प्रयत्न किया है जो इस विषय में सभी प्रकार से प्रामाणिक माने जाते हैं। अतः यदि यह कहा जाय कि यह पुस्तक किसी ग्रंथ विशेष का शाब्दिक अनुवाद मात्र न होकर अनेक पुस्तकों का निचोड़ है तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। ऐसी सभी पुस्तकों की विस्तृत सूची पुस्तक के अन्त में दी गई है। मैं उनके लेखकों, सम्पादकों एवं प्रकाशकों का हार्दिक आभार मानता हूँ। सच तो यह है कि इन पुस्तकों के अध्ययन के बिना इस पुस्तक की रचना ही न हो पाती। यथासम्भव इसमें नवीन-

तम आँकड़े और सूचनायें देने का प्रयत्न किया गया है जिसमें विषय-सामग्री की उपादेयता और भी बढ़ गई है।

इस पुस्तक में आर्थिक और वाणिज्य भूगोल के मुख्य तत्वों एवं सिद्धान्तों का वैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादन किया गया है। अस्तु मानव का वातावरण और उसकी क्रियायें, भूमण्डल, जलमण्डल, वायुमण्डल तथा प्राकृतिक वनस्पति, प्राकृतिक प्रदेश, व्यवसाय आदि से लगाकर खनिज पदार्थ, शक्ति के स्रोत, औद्योगिक व्यवसायों के विकास तत्व तथा विभिन्न उद्योग, स्थल, जल एवं वायु यातायात, जनसंख्या का वितरण, नगरों और बन्दरगाहों का विकास और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी विशद सामग्री प्रस्तुत की गई है। प्रस्तुत पुस्तक में भारत सम्बन्धी सामग्री भी विस्तृत रूप से दी गई है इससे यह पुस्तक और भी महत्वपूर्ण बन गई है। यद्यपि विषय सामग्री के कारण पुस्तक का कलेवर काफी बढ़ गया है किन्तु इससे उच्च कक्षाओं के परीक्षार्थियों का लाभ ही होगा। सम्पूर्ण पुस्तक में असंख्य मानचित्र एवं चित्र आदि दिये गये हैं जिससे पुस्तक की उपादेयता में अधिक वृद्धि हुई है, ऐसी मेरी मान्यता है।

इस पुस्तक की पाडुलिपि तैयार करने में मुझे जो सहयोग श्री राधेकृष्ण रावत, श्री रामकृष्ण रावत, श्री प्रतापसिंह भटनागर, श्री शेषमल जैन से मिली है उसके वे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं। मेरे प्रकाशक श्री जगदीशप्रसाद अग्रवाल ने इस ग्रंथ के प्रकाशन में जो सौहार्द्र और धैर्यता का परिचय दिया है वह प्रशंसनीय है। उनकी इतनी लगन और रुचि के बिना पुस्तक का इतने उत्तम रूप में प्रकाशित होना असम्भव-सा ही था। इसके लिए उन्हें भी हार्दिक धन्यवाद दिये बिना नहीं रहा जा सकता। श्रीमती बिमला मामोरिया ने मुझे गृह-कार्यों से मुक्त कर इस पुस्तक के शीघ्र समाप्त करने में जो अपरोक्ष रूप से सहयोग दिया है उसके लिए उन्हें धन्यवाद देना भी मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ अन्यथा उनके असहयोग में पुस्तक और भी न जाने कितने समय तक अधूरी ही पड़ी रहती।

अन्त में यदि इस पुस्तक के उच्च परीक्षाओं के विद्यार्थियों को समुचित लाभ पहुँच सका और उनमें इस विषय के प्रति रुचि उत्पन्न हो सकी तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा और भविष्य में उनके सम्मुख 'भूगोल के भौतिक आधार' और 'मानव भूगोल' के सिद्धान्तों पर भी इसी श्रेणी की पुस्तकें प्रस्तुत करने का प्रयास करूँगा।

पुस्तक को अधिक पूर्ण एवं उपादेय बनाने हेतु जो सज्जन अपने अमूल्य सुझावों से मुझे अवगत करेंगे, उसके लिए मैं उनका आभारी होऊँगा।

आषाढ़ शुक्ला तृतीया,
वि० स० २०१४

—चतुर्भुज मामोरिया

विषय-सूची

अध्याय १

भूगोल का क्षेत्र और उसकी शाखायें

(GEOGRAPHY—ITS SCOPE & BRANCHES)

भूगोल के शाब्दिक अर्थ हैं 'गोल पृथ्वी'। किन्तु अंग्रेजी के 'Geography' शब्द का विश्लेषण इस प्रकार किया जाता है—'Ge'=Earth, and 'Graph' =to write अर्थात् पृथ्वी का वर्णन करना।[1] अर्थात् मूलरूप से भूगोल की परिभाषा में मानव और उसकी क्रियाओं के अतिरिक्त जीव सबधी तत्वों का जो पृथ्वी से संबंधित है अध्ययन किया जाता है। आधुनिक भूगोल के अन्तर्गत हम "क्यों" और "कैसे" के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।[2] आज भी साधारण व्यक्ति केवल पहाड, नदियो, मैदानो, सागरों, नगरो अथवा राजनीतिक सीमाओ के अध्ययन को ही भूगोल समझता है। पर वास्तव में ऐसी बात नहीं। वर्तमान भूगोल जीता-जागता वह विषय है जिसके अन्तर्गत मनुष्य के आचार-विचार, रहन-सहन तथा उसके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, औद्योगिक और व्यापारिक कार्यो के कारण और परिणाम का विस्तृत विवेचन किया जाता है।

प्रो० स्टैमब्रिज (Stembridge) के अनुसार, "भूगोल धरातल की ऊँचाई, चट्टानो की बनावट और पृथ्वी का जलवायु तथा इनका सम्मिलित प्रभाव जो प्राकृतिक वनस्पति, उपज और विशेष रूप से मनुष्यो के कार्यों पर पड़ता है उसकी विवेचना करता है।"

वर्तमान भूगोल समस्त विज्ञानो का सार है क्योंकि इसका ठीक-ठीक अध्ययन करने के लिए हमे अन्य विज्ञानों—गणित, प्राणि शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, भौतिक शास्त्र, भूगर्भ शास्त्र, विज्ञान, अंक शास्त्र, वाणिज्य शास्त्र आदि द्वारा प्रेषित तत्वों का अध्ययन कर अपने लिए 'क्यों' और 'कैसे' का उत्तर ढूंढना पड़ता है। भूगोल द्वारा वातावरण सम्बन्धी बातो का आन्तरिक अन्वेषण किया जाता है और साथ ही साथ मनुष्य को स्वयं उन वातावरण सम्बन्धी बातों के बीच का पारस्परिक सम्बन्ध भी ज्ञात हो जाता है। इसका विशेष दृष्टिकोण मनुष्य है जो अपने वातावरण से पूर्णतया सम्बन्धित रहता है। भूगोल का उद्देश्य एकीकरण है—अन्वेषण, पैमाइश, मानचित्र खींचना, पृथ्वी के पपड़े का क्रमिक विकास, जलवायु का

1. "A literal definition of Geography would be "a writing about or description of Earth, including all that appears on it".—*Freeman & Raup*, **Essentials of Geography**, 1959, pp. 1-2.

2. "Modern Geography works in common with all other Sciences, from cause to effect."—*L. D. Stamp*, **A Commercial Geography**, 1954, p. 1., *Case & Bergsmark*, **College Geography**, p. vi.

भूगोल[८]

भौतिक या प्राकृतिक भूगोल (Physical Geography)

गणित भूगोल	भौतिक भूगोल	समुद्र विज्ञान	जलवायु विज्ञान	पशु भूगोल	वनस्पति भूगोल
ज्योतिष शास्त्र (Astro-logy)	भूगर्भ शास्त्र (Geo-logy)	समुद्र शास्त्र (Hydro-logy)	भौतिक विज्ञान (Physics)	जीव विज्ञान (Zoology)	वनस्पति विज्ञान (Botany)

मानव भूगोल (Human Geography)

आर्थिक भूगोल	ऐतिहासिक भूगोल	राजनीतिक भूगोल	विजाति भूगोल	सामाजिक भूगोल	सैन्य भूगोल
अर्थशास्त्र (Econo-mics)	इतिहास (History)	राजनीति (Politi-cal Sc.)	मानव जाति शास्त्र (Ethnology)	समाज शास्त्र (Sociology)	सैन्य शास्त्र (Military Sc.)

८—विस्तृत विवरण के लिए देखिए लेखक का "आधुनिक भूगोल की विभिन्न शाखायें और उनका अध्ययन"—समाज शास्त्र, वर्ष, १ संख्या २, पृ० १८-३६

ऐसे उदाहरण हैं जो मानव द्वारा पृथ्वी के धरातल पर किये गये परिवर्तनों की कहानी को व्यक्त करते है।

(३) राजनीतिक भूगोल (Political Geography)

इसका मूल उद्देश्य विभिन्न राज्यो को प्रकृति, राजनीतिक व्यवस्था, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नीति तथा उनके आपसी सम्बन्धो पर पड़ने वाले भौगोलिक अवस्था के प्रभावों की खोज करना है।[12] इस प्रकार राजनीतिक भूगोल का अध्ययन सास्कृतिक शास्त्रो के क्षेत्रो मे (जो कि मानवता का अध्ययन करता है) अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है। आज इस बात में कोई भी दो रायें नही रह गई हैं कि एक देश का विस्तार, प्राकृतिक दशा, नैसर्गिक साधन, भूमि की उर्वरता, आबादी का घनत्व और उसमे जातियों का स्थान तथा उनका आपसी प्रदेशो से सम्बन्ध और समुद्र से लगाव आदि ये ऐसे भौगोलिक तथ्य हैं जो उनके राजनीतिक ढाचे, सरकार के रूप और उनके पड़ोसी देशो के सम्बन्धो को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते रहते हैं।

उदाहरण के लिए ब्रिटेन की निश्चित सामुद्रिक स्थिति, जनसंख्या का भार तथा उसके लोहे और कोयले के विशाल भण्डार आदि भौगोलिक महत्व के तथ्यो ने उसे बाध्य किया कि वह अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये बाहर हाथ-पैर फैलाए और अन्य देशो पर अपना स्वामित्व स्थापित करे। इस प्रकार की उसकी साम्राज्यवादी नीति उसकी प्राकृतिक आवश्यक्ताओं की अभिव्यक्ति मात्र ही है। जर्मनी को घनी आबादी, सामुद्रिक सीमा की परिमितता और अपने प्रदेश के विकास की क्षीण आशा ने समस्त जर्मन राष्ट्र के अन्दर भारी राजनीतिक अशान्ति को पैदा कर दिया और इसकी प्रतिक्रिया ने उसे विश्व में शक्तिशाली व्यापारिक प्रतिद्वन्दी बना दिया। नीदरलैंड्स और स्विटजरलैंड की निष्पक्ष नीति (Neutrality), रूस की प्रसार नीति (Expansionist Policy) दोनो ही के पीछे भौगोलिक परिस्थितियाँ उत्तरदायी रही हैं। वास्तव में भूगोल और राजनीति में इतना घनिष्ट सम्बन्ध हो गया है कि भूगोल की एक नई शाखा 'Geo Politics' का ही विकास हो गया। वर्तमान समय में चीन का भारत की उत्तरी और पूर्वी सीमाओ पर आक्रमण करना उसकी साम्राज्यवादी नीति का नया उदाहरण है और उसमे साम्राज्यवादी भावनाओं का उदय हुआ है।

(४) ऐतिहासिक भूगोल (Historical Geography)

ऐतिहासिक भूगोल के अध्ययन द्वारा हमे यह ज्ञात होता है कि एक राष्ट्र की उन्नति मे इतिहास सम्बन्धी भूगोल का कहाँ तक हाथ रहता है। ऐतिहासिक घटनाओं की पृष्ठभूमि भूगोल द्वारा ही तैयार होती है, क्योंकि प्रत्येक ऐतिहासिक घटना का एक विशिष्ट स्थान और वातावरण होता है।[13] पृथ्वी और मानव एक दूसरे का

---

12. **"Political Geography** is the study of relationship between political units and their physical background."

—*G. Taylor* (Ed.), **Geography in the Twentieth Century,** 1960, p. 41.

13. "History as well as Geography may be called a description,

(५) "आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत उन सब प्रकार के पदार्थों, साधनों, क्रियाओं, समुदायों, रीति-रिवाजों और मानव शक्तियों का विवरण आता है जो जीविकोपार्जन में सहायक होते हैं। कृषि, उद्योग-धन्धे और व्यापार जीविकोपार्जन के तीन प्रमुख ढग है। अतः आर्थिक भूगोल में तीनों ही रूप मिलते हैं। इसकी प्रमुख समस्या उन ढगों की खोज होती है जिनमें भौतिक दशाओं के वितरण का प्रभाव मनुष्य के उन ढगों के वितरण पर, जिनसे लोगों के भोजन, वस्त्र, घर, औजार और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, पड़ता है।" —प्रो० हन्टिगटन[18]

(६) प्रो० शॉ (Shaw) भी प्रो० हन्टिगटन की भाँति इस बात पर जोर देते हैं कि "आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार मानव की विभिन्न जीविकोपार्जन क्रियायें विश्व के उद्योगों, उसके आधारभूत साधनों और औद्योगिक वस्तुओं की प्राप्ति के अनुरूप होती है।" —प्रो० शॉ[19]

(७) प्रो० जॉन्स और डूंकनवाल्ड के अनुसार "आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मानव के उत्पादक धर्धों का अध्ययन किया जाता है। यह इस बात का सकेत करता है कि क्यों प्रदेश विशेषों में किसी वस्तु का उत्पादन और वहाँ से निर्यात होता है तथा क्यों अन्य प्रदेशों में इनका आयात एवं उपभोग किया जाता है। इन लेखकों के अनुसार शिकार करना, मछली पकड़ना, पशु चराना, वन प्रदेशों से वस्तुएँ एकत्रित करना खानें खोदना, उद्योग तथा यातायात सम्बन्धी उत्पादक क्रियाओं का अध्ययन आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।" —जान्स और डूंकनवाल्ड[20]

(८) "आर्थिक भूगोल का सम्बन्ध पृथ्वी के धरातल पर मानव की उत्पादक क्रियाओं के वितरण से है। इन क्रियाओं के तीन रूप होते हैं : प्राथमिक (Primary) क्रियायें, जिनके अंतर्गत मिट्टी समुद्र और चट्टानों से कच्चा माल प्राप्त करना है;

commercial development so far as that is governed by geographical conditions."

—**Chisholm's Handbook of Commercial Geography** by *Stamp & Gilmour*, 1956

18. "All sorts of materials, resources, activities, customs, capacities and types of ability that play a part in the *work of getting a living* are the subject matter of Economic Geography."

—*E. Huntington*, **Principles of Economic Geography.**

19. "Economic Geography is concerned with problems of making a living, with world industries, with basic resources and industrial commodities.'

—*E. B. Shaw*, **World Economic Geography**, 1955.

20. "Economic Geography deals with the productive occupations and attempts to explain why certain regions are outstanding in the production and exportation of various articles, and why others are significant in the importation and utilisation of these products. They consider hunting, fishing, grazing, forest industries, mining, transportation and trade as productive occupations."

—*C. F. Jones & G. G. Drakenwald*, **Economic Geography**, 1959, p. 7.

गौण क्रियाएँ (Secondary), जिनके अन्तर्गत वस्तुओं का निर्माण, स्थानान्तर आदि सम्मिलित किया जाता है, तथा तृतीय श्रेणी की Tertiary क्रियायें, इनके अन्तर्गत मानव की सामाजिक क्रियायें—अध्यापन, न्याय एवं प्रशासनीय सेवायें आदि सम्मिलित की जाती है।"
—डॉ० पाउन्डस [२१]

(९) "आर्थिक भूगोल मानव की उपेक्षित आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है और इस दृष्टि से इसके अन्तर्गत वस्तुओं के उत्पादन क्षेत्रों तथा उत्पादन की अवस्थाओं, यातायात के मार्गों और उनके उपयोग आदि का ही विश्लेषण किया जाता है जबकि मानव की मुख्य आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन एक अन्य महत्वपूर्ण शास्त्र—जिसे अर्थशास्त्र कहा जाता है—में किया जाता है। अर्थशास्त्र के अध्ययन का मुख्य केन्द्र उपयोगिता, मूल्य, मुद्रा, वित्त, साख, ब्याज की दर अधिकोषण कर और विनिमय प्रभृति कार्य है न कि अपने वातावरण के सम्बन्ध में विशेष मानव समूह और उनकी आवश्यकताओं का।"
—रेनर आदि लेखक [२२]

(१०) "आर्थिक भूगोल विश्व के विभिन्न भागों में पाये जाने वाले आधार भूत स्रोतों की भिन्नता का पर्यवेक्षण करता है। यह भौतिक वातावरण की भिन्नता का इन स्रोतों के विदोहन और उपयोग पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन करता है। यह विश्व के भिन्न देशों और प्रदेशों में आर्थिक विकास के अन्तरों का अध्ययन करता है। इसके अंतर्गत उन यातायात, व्यापारिक मार्गों और व्यापार का अध्ययन किया जाता है जो भौतिक परिस्थितियों द्वारा प्रभावित होते है।"
—श्री बेंगस्टन औरवॉन रॅयन [२३]

21 "Economic Geography is concerned with the distribution of man's productive activities over the surface of the earth These activities are primary, secondary and tertiary activities"
—*N. G Pounds,* **An Introduction to Economic Geography,** 1951, p 1.

22. "Economic Geography has taken up the neglected aspects of man's economic affairs and deals in commodities, the places and conditions of their production, transportation and use, while all important aspects of man's economic life are the concern of Economics .. .It has concentrated its attention on utility, value, money, credit, finance, interest rates, securities, banking, taxation and exchange rather than upon specific peoples and their needs in relation to the world in which they live"
—*G. T. Renner & Others* **World Economic Geography,** 1957, p 4.

23. "Economic Geography investigates the diversity in basic resources of the different parts of the world It tries to evaluate the effects that differences in physical environment have upon the utilization of these resources. It studies differences in economic development in different regions or countries of the world. It studies transportation, trade routes, and trade resulting from the differential development and as affected by the physical environment."
—*N. A. Bengston & W. Van Royen,* **Fundamentals of Economic Geography,** 1953, p 10.

हम आर्थिक भूगोल की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं:—

"मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर प्राकृतिक परिस्थितियों के प्रभाव का अध्ययन ही आर्थिक भूगोल का विषय है। इसके अन्तर्गत हम यह अध्ययन करते हैं कि मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों—वस्तुओं के उत्पादन, यातायात और वितरण तथा वाणिज्य—पर उनकी स्थिति, स्थलरूप, जलवायु और वनस्पति आदि प्राकृतिक परिस्थितियों का क्या प्रभाव पड़ता है।"

आर्थिक भूगोल की शाखायें (Branches of Economic Geography)

आर्थिक भूगोल की निम्न शाखायें की जाती हैं :

(क) कृषि भूगोल (Agricultural Geography)

इसके अन्तर्गत उन परिस्थितियों का अध्ययन किया जाता है जो खेती की विभिन्न पैदावारों की उत्पत्ति और उनके वितरण से सम्बन्धित हैं। अस्तु, एक सफल किसान के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने खेत में पैदा की जाने वाली वस्तुओं के उत्पादन सम्बन्धी अवस्थाओं—मिट्टी के उपजाऊपन, जल की मात्रा, सूर्य-प्रकाश और फसलों के बोने और काटने के समय—का ज्ञान प्राप्त करे। इस प्रकार की सूचनायें कृषि सम्बन्धी भूगोल के अध्ययन से ही प्राप्त की जा सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका और इंगलैंड जैसे देशों में आर्थिक भूगोल की इस शाखा का बहुत विकास हुआ है।

(ख) औद्योगिक भूगोल (Industrial Geography)

इसके अन्तर्गत भूमि से प्राप्त खनिज पदार्थों का वितरण, उत्पादन की समस्याओं तथा उत्पादित वस्तुओं की विक्रय सम्बन्धी समस्याओं का उनकी सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि के साथ भौगोलिक दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाता है। इस शाखा के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि किस प्रकार किसी देश के भौगोलिक वातावरण में वहाँ के औद्योगिक साधनों का सर्वोत्तम उपयोग किया जा सकता है। एक देश की कच्ची धातुओं व शक्ति के साधनों के उपयोग और वितरण सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करना ही औद्योगिक भूगोल का कार्य है।

(ग) वाणिज्य भूगोल (Commercial Geography)

इस भूगोल के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न देशों के व्यापार यातायात के साधनों और व्यापारिक केन्द्रों के विकास और उन्नति के कारणों का अध्ययन किया जाता है। वास्तव में इस भूगोल का अस्तित्व पृथक नहीं है क्योंकि किसी भी देश का व्यापार उस देश के कृषि पदार्थों, कच्ची धातुओं तथा औद्योगिक वस्तुओं के आधार पर ही होता है। अतएव किसी भी आर्थिक भूगोल में इन तीनों ही शाखाओं का सम्मिलित अध्ययन किया जाता है।

आर्थिक भूगोल के अध्ययन से लाभ

पिछले कुछ समय से आर्थिक भूगोल का विकास बहुत हो चुका है। आर्थिक भूगोल मृतक नहीं वरन् प्रगतिशील विज्ञान है। इसके अध्ययन से हमको निम्नलिखित लाभ होते हैं:—

(१) यह हमें उन प्राकृतिक साधनों की स्थिति और वितरण आदि से परिचित कराता है जिनके द्वारा वर्तमान समय में किसी देश की आर्थिक उन्नति हो सकती है। आज के इस युग में—जब कि सभी उन्नतिशील राष्ट्र प्रगति की दौड़ में आगे बढ़ रहे हैं—यह जानना कि उस देश की उन्नति के लिए कृषि वस्तुओं और खनिज पदार्थों के उचित मात्रा में प्राप्त होने के क्षेत्र कौन-कौन से हैं, बहुत ही आवश्यक है। इन वस्तुओं के उत्पत्ति क्षेत्रों की जानकारी हमें आर्थिक भूगोल द्वारा ही हो सकती है।

(२) किसी देश में पाई जाने वाली प्राकृतिक सम्पत्ति—वन्य पदार्थ, कृषि पदार्थ और खनिज पदार्थ—का किन साधनों द्वारा कहाँ पर और किस मात्रा में तथा किस कार्य के लिए उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिये किसी भी देश में वन-सम्पत्ति उन्हीं क्षेत्रों में पाई जाती है जहाँ वर्ष के अधिकांश भागों में पर्याप्त गर्मी और वर्षा होती है। वनों से प्राप्त कच्चे माल और इमारती लकड़ी का उपयोग औद्योगिक और व्यापारिक नगरों में ही हो सकता है। मछलियाँ देश के भीतर छिछले जलाशयों में अथवा उन छिछले समुद्री किनारों पर, जो बहुत कटे फटे हों पकड़ी जा सकती हैं। इसी तरह कृषि कर्म के लिए समतल, उपयुक्त जलवायु वाले मैदान ही (जैसे कनाडा, आस्ट्रेलिया, अर्जेंटाइना, सिन्धु-गंगा का मैदान अथवा ह्वांगो प्रदेश) अधिक उपयुक्त होते हैं। कोयला और मिट्टी का तेल मिलने वाले भागों में अन्य धातुओं का अभाव रहता है और जल-विद्युत शक्ति उन्हीं स्थानों में विकसित की जा सकती है जहाँ का धरातल ऊँचा-नीचा हो और जो पर्याप्त वर्षा और घनी आबादी के क्षेत्र के निकट होने है। इन सब बातों का परिचय आर्थिक भूगोल के अध्ययन से ही हो सकता है।

(३) पृथ्वी के गर्भ में कौन से पदार्थ छिपे पड़े हैं, इसका पता बताकर तथा यह पदार्थ मानव आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किस प्रकार सहायक हो सकते हैं—इसका ज्ञान कराकर आर्थिक भूगोल का अध्ययन इस बात की ओर संकेत करता है कि किन स्थानों पर कोई उद्योग विशेष स्थापित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए लोहे और इस्पात का उद्योग कोयले की खानों के निकट तथा सूती वस्त्रों के उद्योग घनी जनसंख्या के केन्द्रों के निकट ही स्थापित किये जाते हैं। अन्य उद्योग भी यथा-सम्भव कच्चे माल अथवा शक्ति के साधनों के निकट ही स्थापित किये जाते हैं। इस प्रकार उद्योगपतियों के लिए भी आर्थिक भूगोल का विषय बड़ा उपयोगी है।

(४) आर्थिक भूगोल के अध्ययन से हम यह ज्ञात कर सकते हैं कि किसी देश की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कच्चा माल या भोज्य पदार्थ या यन्त्र आदि कहाँ से प्राप्त किये जा सकते हैं—तथा इन वस्तुओं के लाने के लिए किस-किस प्रकार के यातायात के साधनों का सहारा लेना पड़ेगा। यदि भारत को अपनी जनसंख्या के लिए अनाज की आवश्यकता है तो निस्सन्देह वह उसे चीन, ब्रह्मा, आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य या कनाडा से मँगवाकर पूरी कर सकता है। अस्तु, व्यापारियों के लिए भी इसका अध्ययन लाभदायक है।

(५) विश्व के विभिन्न भागों में मानव समुदाय किस प्रकार अपनी भौतिक आवश्यकतायें पूरी करता है? उसका रहन-सहन, उसका खान-पान, वेष-भूषा कैसी है? अथवा उसने अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिये अपने प्राकृतिक साधनों का किस प्रकार उपयोग किया है? यह सब बातें हमें आर्थिक भूगोल के अध्ययन से अपने घर बैठे ही ज्ञात हो सकती है। किसी देश विशेष ने किस प्रकार इतनी आर्थिक

उन्नति की ? अथवा कोई अन्य देश क्यों इतना पिछड़ा है ? यह भी आर्थिक भूगोल के अध्ययन द्वारा ज्ञात हो सकता है।

आज के युग में भिन्न-भिन्न देशों के बीच अशान्ति की जो ज्वाला भड़क रही है, उसको शान्त कर विश्व-शान्ति के प्रश्न को हल करने के लिए जो भगीरथ प्रयत्न वैज्ञानिकों, राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों और भूगोलवेत्ताओं द्वारा किये जा रहे है उन सबके पीछे भौगोलिक पृष्ठभूमि अवश्य कार्य कर रही है। अस्तु, यदि आर्थिक भूगोल का उचित रूप से अध्ययन किया जाय तो सभी समस्याएँ सरलता-पूर्वक हल हो सकती है।

(६) प्रत्येक देश में विद्वानो को देश के लिए सुव्यवस्थित योजना (Planning) *बनाने के लिए इस बात की आवश्यकता पड़ती है कि वे देश के भिन्न-*भिन्न भागो में उत्पन्न होने वाले पदार्थों के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें। वे सरलता से यह निर्णय कर सकते है कि देश की प्राकृतिक सम्पत्ति का किस प्रकार तथा श्रेष्ठ उपयोग किया जाय ? देश में कौन-कौन से उद्योग-धन्धों को पनपाया जाय ? कृषि का उत्पादन कैसे बढ़ाया जाय ? और बेकारी आदि की समस्याओं को कैसे दूर किया जाय ? यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि वह व्यक्ति आर्थिक भूगोल का अध्ययन करे।

इस प्रकार हम श्री क्लिम, स्टार्क तथा हाल के शब्दों मे कह सकते हैं कि "आर्थिक भूगोल वह यन्त्र है जो पृथ्वी की प्राकृतिक सम्पत्ति का न्यूनतम क्षति पर अधिकतम उपयोग करने की रीति बतलाता है। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में और कनाडा मे तथा भारत में भी लार्ड डलहौजी द्वारा रेलें अथवा सड़कें देश को एक सूत्र मे बाँधने के लिए बनाई गई थी। टेलीफोन कम्पनियाँ अपने बाजार के भूगोल का अध्ययन करने के उपरान्त ही तार आदि बिछाती हैं और भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार ही वे अपनी भावी योजनाओं का निर्माण करती हैं। *आर्थिक भूगोल केवल व्यापारिक समुदाय के लिए ही उपयोगी विषय* नही है—वरन् कला एवं विज्ञान के क्षेत्र मे कार्य करने वाले अनेक विद्यार्थियों तथा अनुसन्धानकर्त्ताओं के लिये भी इसका ज्ञान लाभदायक है। जीवन के अन्य विविध क्षेत्रो मे भी आर्थिक भूगोल के अध्ययन का विशेष महत्व है।"[२४]

आर्थिक भूगोल के अध्ययन की पद्धतियाँ (Methods of Study)

मानव के जीविकोपार्जन की विभिन्न समस्याओं को समझने के लिए तीन अध्ययन पद्धतियों का सहारा लिया जाता है। ये पद्धतियाँ क्रमश. ये है:—

(१) प्रादेशिक पद्धति (Regional Approach)।

(२) वस्तु अध्ययन पद्धति (Commodity Approach)।

(३) सिद्धान्त अध्ययन पद्धति (Principles Approach)

(१) प्रादेशिक पद्धति—इसके अंतर्गत किसी प्रदेश का अध्ययन उसमे की जाने वाली आर्थिक क्रियाओं के आधार पर किया जाता है। यह प्रदेश जलवायु, प्राकृतिक अथवा भौगोलिक या राजनीतिक हो सकता है जिसका मुख्य आधार क्रमशः जलवायु,

24. *Klimm, Starkey & Hall,* **Introductory Economic Geography.**

भौतिक आकृतियाँ, अथवा राजनीतिक होता है। भौगोलिक प्रदेश भौगोलिक त द्वारा निर्धारित होता है अतः यह स्थायी और अपरिवर्तनशील होता है किन्तु राजनीतिक प्रदेश बहुधा परिवर्तनशील होता है, किसी भी स्थिति में ऐसे प्रदेश की सीमाओं में उलट-फेर हो सकता है। किन्तु यदि एक ही भौगोलिक प्रदेश में दो राजनीतिक इकाइयाँ सम्मिलित हों तो यह प्रदेश सभी भागों में समान विकास नहीं बतायेगा। किसी प्रदेश का विकास मानव के श्रम का ही परिश्रम होता है। अत बहुधा प्रादेशिक अध्ययन के लिए राजनीतिक इकाइयाँ ही चुनी जाती है। इसके अन्तर्गत उस प्रदेश की सीमा, विस्तार, राजनीतिक दशायें, जलवायु, भौतिक परिस्थितियाँ, मानव क्रियायें, यातायात के मार्गों और औद्योगिक केन्द्रों का अध्ययन किया जाता है।

(२) वस्तु अध्ययन पद्धति—इसके अन्तर्गत न केवल विभिन्न स्रोतों (Sources) का वितरण ही ज्ञात किया जाता है वरन् यह भी अध्ययन किया जाता है कि पिछले समय में अब तक इनके उत्पादन, उपभोग, व्यापार आदि में किस प्रकार क्रमिक विकास हुआ है। इस पद्धति से यदि हम रबड़ के उत्पादन का अध्ययन करना चाहें तो हमें इन बातों पर जोर देना पड़ेगा (१) जलवायु, (२) भौतिक परिस्थितियाँ एवं मिट्टी, (३) यातायात के साधनों की दृष्टि से स्थिति, (४) माग और उसकी पूर्ति (५) श्रम की प्राप्ति एवं उसकी समस्यायें, (६) राजनीतिक परिस्थितियाँ, (७) इसका उपयोग एवं उससे सम्बन्धित उद्योग, (८) रबड़ के बागातों की सामाजिक समस्यायें, (९) रबड़ उत्पादन का भविष्य। अर्थात् इस पद्धति के अनुसार यह जानना आवश्यक होगा कि —

(क) कहाँ किसी वस्तु विशेष का उत्पादन सभव है अथवा कहाँ कोई विशेष मानव क्रिया की जा सकती है ?

(ख) विश्व के किन भागों में मनुष्य इनका उत्पादन करता है ?

(ग) मनुष्य किन्हीं विशेष क्षेत्रों को ही विशेष वस्तु उत्पादन अथवा विशेष आर्थिक क्रिया के लिये ही क्यों चुनता है ?

इस पद्धति द्वारा विश्व में किसी वस्तु के क्षेत्रीय विन्यास, किसी उद्योग की स्थापना अथवा मानव की आर्थिक क्रियाओं का व्यवस्थित रूप से अध्ययन किया जा सकता है।

(३) सिद्धान्त अध्ययन पद्धति—कुछ ऐसे मूलभूत सिद्धान्त हैं जो प्राय सभी वस्तुओं और प्रदेशों पर लागू होते हैं। इनमें से कुछ सिद्धान्त भौतिक वातावरण से और कुछ मानव की क्रियाओं अथवा सांस्कृतिक वातावरण से सम्बन्धित होते है। इस प्रणाली के अन्तर्गत भौगोलिक तथ्यों को जानने के लिए भू-अर्थशास्त्र का सहारा लिया जाता है।

प्रश्न

१. आर्थिक भूगोल के अध्ययन का क्षेत्र क्या है ? एक व्यापारी और उद्योगपति को इसके अध्ययन से क्या लाभ है ?

२. पिछले कुछ समय से व्यापारिक और आर्थिक भूगोल के अध्ययन का महत्व किस प्रकार बढ़ गया है ? इसके अध्ययन से क्या लाभ है ?

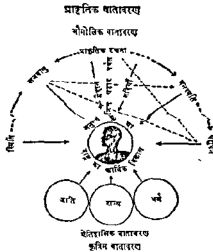
३. भूगोल विज्ञान का आधुनिक परिभाषा देते हुए बताइये कि वर्तमान काल में इसका इतना अधिक महत्व क्यों बढ़ गया है ? भूगोल विज्ञान की मुख्य-मुख्य शाखाओं का वर्णन करते हुए उनका महत्व बताइये।

अध्याय २

मानव और पर्यावरण

(MAN AND HIS ENVIRONMENT)

पर्यावरण या वातावरण और मानव का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट होता है। मनुष्य एक विशेष पर्यावरण में जन्म लेता है, और उसी मे बढता एवं प्रौढ होता है। उसका शरीर, उसके जीवन की रचना, उसके कार्य और उसके जीवन-यापन तथा रहन-सहन के ढग पर्यावरण की उपज है। पर्यावरण तो जीवन के बीज-कोष्ट (germ-cells) मे भी उपस्थित रहता है। मनुष्य के शरीर की क्षमतायें तथा गुण उसके सम्पूर्ण वातावरण से सबंधित है जिसमे वह जन्म लेता और रहता है।



चित्र २. मानव और उसका वातावरण

सभवत. ऐसा कोई जीव नही है जो प्रतिकूल वातावरण मे भी अपना अस्तित्व रख सका है। वह उसी पर्यावरण मे रहता है जिसमे उसका पूर्व से ही समायोजन हो गया है। वास्तव मे जीवन और पर्यावरण परस्पर सह-संबधी है। पर्यावरण और जीवन दोनों इतनी सन्निकटता से घुले-मिले हैं कि जीवन की हरेक किस्म (Variety), और हरेक जाति (Species) और व्यक्तिगत जीवित पदार्थ का पर्यावरण विशिष्ट और पृथक् होता है।

साधारण शब्दों में पर्यावरण उस सबको कहते हैं जो किसी वस्तु को निकट से घेरे है तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।[1] उदाहरण के लिए यदि एक बीज उपयुक्त स्थिति में—अर्थात् उपयुक्त भूमि, पर्याप्त धूप, जल आदि—में बोया जाय तो वह अंकुरित हो उठता है और धीरे-धीरे वृक्ष का रूप धारण कर लेता है। उसमें फल-फूल लगने लगते हैं किन्तु यदि उसके लिए अनुकूल वातावरण उपलब्ध नहीं होता तो उसमें फल-फूलों का लगना भी असंभव-सा होता है। अनेक अनाज, फल-फूल, पशु आदि एक विशेष वातावरण में ही पैदा होते और बढ़ते हैं, अन्य वातावरण में नहीं। आम भारत में ही या दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में ही पैदा होता है, इंगलैण्ड जैसे ठंढे देश में नहीं, चावल का उत्पादन उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में आदर्श होता है, टंड्रा जैसे शीत-प्रधान क्षेत्रों में नहीं। इसी प्रकार ऊँट के लिए मरुस्थली वातावरण अनुकूल होता है किन्तु घोड़े के लिए यही प्रतिकूल। सियार और लोमड़ी अथवा शेर के लिए जंगल का वातावरण उपयुक्त होता है, बस्तियों का नहीं। स्वयं मनुष्य का जीवन भी बहुत सीमा तक उसके पर्यावरण से प्रभावित होता है, किन्तु वह पूर्ण रूप से पशु या वनस्पतियों की भाँति अपने पर्यावरण का दास नहीं है। वह अपनी आवश्यकताओं के अनुकूल वातावरण को परिवर्तित कर देता है, अथवा उससे सामंजस्य स्थापित कर लेता है।

"मानव अपनी परिस्थितियों का जीव है" इस कथन की पुष्टि में मिस सेम्पल के ये विचार ध्यान देने योग्य है "मानव पृथ्वी के धरातल की उपज है। इसका केवल यही तात्पर्य नहीं है कि वह पृथ्वी का शिशु है, उसकी धूल की धूल है, बल्कि सत्य तो यह है कि उसी ने उसका लालन-पालन किया, उसको खिलाया है, उसको कार्य करना सिखाया है, उसके विचार तथा भाव आदि उत्पन्न किये है, उसके सम्मुख कुछ कठिनाइयाँ उपस्थित की है जिसके कारण उसके शरीर तथा मस्तिष्क का विकास हो। कुछ ऐसी सिंचाई व नौका सचालन आदि की समस्यायें सामने रखी हैं जो बहुत जटिल हैं किन्तु इनके साथ ही इन समस्याओं को हल करने का ज्ञान भी उसे दे दिया है। वास्तव में सच तो यह है कि वह उसकी हड्डी-पसलियों, स्नायुओं, मस्तिष्क और आत्मा में रम गई है।"[2] इनके अनुसार मानव मोम या प्लास्टिक के पुतले के समान है जिस पर पर्यावरण का पूर्ण प्रभाव पड़ता है और वह उसी भाँति अपने को ढाल लेता है। सभी स्थानों में मनुष्य अपने वातावरण से निर्देशित होता है। "मनुष्य जिस पृथ्वी को जोतता है, जिस पर यात्रा करता है, जिन समुद्रों पर वह व्यापार करता है, उनसे दूर रह कर उसका कुछ भी वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किया जा सकता है। ध्रुव प्रदेश में रहने वाले रीछों और रेगिस्तानी लता वृक्षों का अध्ययन उनकी जन्मभूमि से दूर रहकर सुगमतापूर्वक नहीं किया जा सकता। मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का भरसक प्रयत्न किया है। दूसरी ओर प्रकृति भी मानव को प्रभावित करने में इतना सतत् प्रयत्नशील रहती है कि हम यह भूल गये है कि मानव के विकास में भौगोलिक तत्वों का कितना प्रभाव है।"[3]

---

1 "Environment is anything immediately sorrounding an object and exerting a direct influence on it."—*P. Gisbert*, **Fundamentals of Sociology,** *p.* 233

2. *E. Semple*, **Influence of Geographic Environment,** 1911, p. 1.

3. **Ibid.**

पहाड़ी भागों के रहने वालों को प्रकृति ने लोहे के समान मजबूत जाँघें इसलिये दी हैं कि वे ऊँचे-ऊँचे भागों पर चढ सकें, किन्तु समुद्र-तटीय भागों में रहने वाले व्यक्ति दुबले-पतले होते है, लेकिन उनके चौड़े वक्ष-स्थल और कठोर भुजायें उनको नावें आदि चलाने के लिए उपयुक्त बना देती हैं। इसी प्रकार नदियों के प्रवाह प्रदेश मे रहने वाले न केवल आराम-तलब और एक स्थान पर टिक कर रहने वाले होते है किन्तु वे बडे मिलनसार भी होते हैं। घास के मैदान अथवा मरुभूमियों में रहने वालो को सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना पडता है। सदैव कठिनाइयाँ झेलना तथा भोजन के लिए एक दूसरे समुदाय के बीच में झगड़े होते रहना उन लोगो मे 'ईश्वर एक है' इस विश्वास को स्थान देता है। यह सब बातें इस ओर निर्देश करती हैं कि भिन्न क्षेत्र मे रहने वालो का जीवन, उनका रहन-सहन, आचार-विचार, रीति-रिवाज तथा उद्योग-धन्धे उनकी परिस्थितियो के अनुसार ही होते हैं। इसके अतिरिक्त यह बात ध्यान मे रखने योग्य है कि भौगोलिक परिस्थितियाँ मनुष्य के आर्थिक प्रयत्नों पर केवल प्रभाव ही डालती हैं, उनको नियंत्रित नही करती क्योंकि मानव ईश्वरदत्त बुद्धि के द्वारा कई स्थानों पर अपनी आवश्यकतानुसार परिस्थितियों में परिवर्तन भी करता है। उदाहरण के लिए विश्व के न्यून वर्षा वाले भागों मे आज उसने अपनी बल-बुद्धि के सहारे पातालतोड कुएँ अथवा नहरों द्वारा सिंचाई करने के साधन अपना लिए है। सूखे प्रदेशो में विज्ञान द्वारा वायु में नमी उत्पन्न कर वहाँ की जलवायु को सूती-वस्त्र के धन्धो के लिए उपयुक्त बना दिया है। इसी प्रकार प्रतिकूल वातावरण मे कृत्रिम रूप से तापक्रम बनाकर रेशम के कीडे पाले हैं। किन्तु इतना सब होने पर भी वह प्रकृति को पूर्ण रूप से विजय नहीं कर सका है। आज भी वह मरुस्थलों मे अनाज पैदा नही कर सका। मैदानों मे सोने की खानें उत्पन्न नही कर सका, अथवा टुन्ड्रा मे चावल या गेहूँ उत्पन्न नही कर सका। अत: यह मानना ही पड़ेगा कि वह कुछ सीमा तक प्रकृति के अधीन है।

भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment)

भौगोलिक पर्यावरण का तात्पर्य ऐसी ऐहिक दशाओं से है, *जिनका अस्तित्व* मनुष्य के कार्यों से स्वतन्त्र है, जो मानव रचित नहीं है, और जो बिना मनुष्य के अस्तित्व एवं कार्यों से प्रभावित हुए स्वत: परिवर्तित होती है।[4] दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि पर्यावरण मे वे सब प्रभाव अन्तर्निहित होने है, जिनका अस्तित्व, यदि मनुष्य को पृथ्वी से पूर्ण रूप मे हटा दिया जाय, तब भी बना रहता है।[5]

डा० डेविस *के अनुसार "मनुष्य के सम्बन्ध मे भौगोलिक वातावरण मे अभि*प्राय भूमि या मानव निवास के चारो ओर फैले उसके उन सभी भौतिक स्वरूपो से

---

4. "Geographical environment means all cosmic conditions and the phenomena which exists independent of man's activity, which are not created by man and which change and vary through their own spontaniety, independent of man's existence and activity.'—*P. Sorokin*, **Contmeporary Sociological Theories**, p. 101.

5. "It consists of all those influences that would exist if men were completely removed from the face of the earth."—*P. H. Landis*, **Man in Environment, p. 107.**

है जिनका प्रभाव उसकी क्रियाओं को निर्धारित करने मे पड़ता है।"[6] इस प्रकार के रूपों में निम्न तत्व सम्मिलित किये जाते है —

(क) सृष्टि सम्बन्धी बातें (Cosmic forces)—सूर्य ताप, विद्युत् सम्बन्धी व्यवस्थायें, उल्कापात, चन्द्रज्योति का प्रभाव, ज्वारभाटे पर चन्द्रमा का आकर्षण, जलवायु के आकस्मिक परिवर्तन में सृष्टि-सम्बन्धी कारण।

(ख) भौतिक भौगोलिक तत्व (Physico-geographic)—भूमि और जल का वितरण, पर्वत और मैदान, नदियाँ, समुद्र तट और समुद्र, भूमिगत जल आदि।

(ग) मिट्टी—चट्टानें, खनिज पदार्थ और धातुएँ।

(घ) जलवायु—तापक्रम, आर्द्रता, ऋतुओं का चक्र, हवायें आदि।

(ङ) अन्य शक्तियाँ—गुरुत्वाकर्षण, विकिरण आदि।

(च) जैविक शक्तियाँ—कीटाणु, बैक्टीरिया आदि अणु-सावयव (Micro-Organism), विभिन्न परोपजीवी कीटाणु (Parasites and Insects); पेड़-पौधे, भ्रमणशील पशु।

(छ) भाववाचक या आदर्श तत्व (Abstract elements)—क्षेत्रीय सम्बन्ध (aerial space or size), प्रादेशिक आकार, प्राकृतिक स्थिति तथा भौगोलिक स्थिति आदि।

उपरोक्त सब तत्व मिल कर मनुष्य का भौतिक पर्यावरण बनाते हैं। ये सभी मनुष्य के जीवन पर प्रभाव डालते हैं। इन्हे प्राथमिक (Primary), प्राकृतिक (Natural) या भौतिक (Physical) पर्यावरण कहा जाता है। इन सबका अस्तित्व मनुष्यो के कार्यों से स्वतन्त्र है, क्योंकि इनका मनुष्य ने सृजन नही किया है, वरन् ये प्रकृति की मानव को देन है।

इस प्राथमिक वातावरण मे मनुष्य प्रविधि या तन्त्र (Technology) की सहायता से संशोधन करता है और उसे अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लेता है। उदाहरण के लिए, वह भूमि को जोतकर खेती करता है, जगलों को साफ करता है, सड़कें, नहरें, रेल मार्ग आदि बनाता है, पर्वतों को काट कर सुरंगें आदि निकालता है, नई बस्तियाँ बसाता है तथा भूगर्भ से खनिज सम्पत्ति निकाल कर अनेक उपकरण एव अस्त्र-शस्त्र, यन्त्र आदि बनाता है और प्राकृतिक शक्तियो का विभिन्न प्रकार से शोषण कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इन सबके

6 "The term 'Geographical Environment' in relation to man covers all those features of the land in which he lives, in respect of their effect upon his habit of life in whatever connection Such features include the surface of the land, with all its physical and natural resources, the nature of the soil, whether fertile or infertile, well watered or dry, its position, whether insular or continental, and ijcontinental, whether coastal or island, its relation to other lands surrounding it, its climate, vegetation and mineral wealth, the distribution of land and water, mountains and plains, plants and animals and all the cosmic forces—gravitational, electric, rediational that play upon the earth and affect the life of man "—*Davis* · **Man and Earth;** शभू रत्न त्रिपाठी, समाजशास्त्र के मूलाधार, १९६१.

फलस्वरूप वह एक नये वातावरण को जन्म देता है। इसे मानव-निर्मित अथवा प्राविधिक (Man-made or Technological) वातावरण कहा जाता है। इन्हें मानव की पार्थिव संस्कृति (Material culture) भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत औजार, गहने, अधिवास, परिवहन और सचार के साधन (वायुयान, रेल, मोटर, रेडियो, तार आदि), प्रेस आदि सम्मिलित किये जाते है। यहाँ एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि इन पार्थिव पदार्थों का कोई उपयोग नही यदि इनके उपयोग करने की क्षमता मनुष्य मे न हो। शारीरिक एवं मानसिक योग्यता का ज्ञान, इनके निर्माण का विज्ञान—ये भी मानव संस्कृति के ही भाग है। ये मानव को सास्कृतिक विरासत (Social heritage) है। संस्कृति के इस भाग को अपार्थिव संस्कृति (Non-material culture) कहते हैं।

"अस्तु, मानव निर्मित वातावरण के दो विशेष अग है (क) पार्थिव संस्कृति में उन सभी औजारो (tools) का समावेश किया जाता है जिन्हे मनुष्य अपने जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओ जैसे भोजन वस्त्र, और मकान की पूर्ति के लिए करता है। (ख) अपार्थिव सस्कृति मे सामाजिक पर्यावरण के विभिन्न रूप सम्मिलित किये जाते हे। इनके अतर्गत मानव समूह या समाज की आदतो (जनरूढियो, जनरीतियो), आस्थाओ (Conventions) और अभ्यासों (Practices) का समावेश होता है जिनका विकास मनुष्यो के सामूहिक रूप से रहने और कार्य करने से होता है। इस प्रकार भाषा, कलायें, पुराण और वैज्ञानिक ज्ञान, धार्मिक अभ्यास, धर्म, परिवार और सामाजिक व्यवस्था, सपत्ति, सरकारें, आर्थिक रचनायें और सस्थायें, क्रीडा, सगीत, विशिष्ट सस्कार, पर्व, प्रथायें, और इसी प्रकार के प्रतिष्ठित व्यवहारो के उपकरण, जो मानव समाज मे विकसित होते है, अपार्थिव सस्कृति के भाग हैं।"

पार्थिव और अपार्थिव सस्कृति का उपयोग प्रायः साथ-साथ होता है। दोनो ही मनुष्य की अनेक आवश्यकताओ और समस्याओं का समाधान करने के प्रयास की उपज हैं।

इस प्रकार पर्यावरण को दो मोटे रूप में बाँटा जा सकता है:—

(१) भौतिक, प्राकृतिक अथवा भौगोलिक पर्यावरण

(२) मानव-निर्मित अथवा सास्कृतिक पर्यावरण

भौतिक पर्यावरण के अन्तर्गत सम्पूर्ण प्रकृति के साम्राज्य की वे सभी शक्तियाँ, क्रियायें तथा तत्व सम्मिलित होते हैं जिनका प्रभाव मानव, उसकी क्रियाओं, भोजन, वस्त्र तथा आदतों आदि पर पड़ता है। दूसरी ओर, सामाजिक अथवा सास्कृतिक पर्यावरण के अन्तर्गत मानव को संचालित करने वाली और सामाजिक क्रियाओं को निर्देशित करने वाले तत्व सम्मिलित किये जाते हैं, जो उसके रहन-सहन को सुचारु बना देते हैं।

इस सबंध मे श्री ह्वाइट और रैनर द्वारा प्रस्तुत की गई व्याख्या नीचे दी गई है :—

"Natural environment consists of the entire realm of Nature which impinges upon man the *forces, processes* and *elements* of natural surroundings. The **forces** include insolation, global rotation and revolution, gravitation, volcanic action, earth movement, and

phenomenon of life itself. The **processes** include erosion, sedimentation, transmission of heat, air and water circulation, birth, growth, and death, evolution of organic species, and 'numerous others. The **environmental** elements include a group of factors, viz, (i) **Physical elements** consisting of weather and climate, land forms, soils and rocks, minerals, surface waters, underground waters, the ocean, and the coast zone; (ii) **Biotic elements**, comprise of flora, fauna and micro-organisms; and (iii) **abstract elements**, consisting of the aerial space or size, regional shape or form, natural situation, geographical location and geomatrical position."

"Social Environment is the regulator of human beings, and the director of social processes. It consists essentially of three man made patterns of living, viz, (i) **pattern of social control**, comprising of folkways, customs, mores etc, institutions such as the govt., marriage, police, law, war, school and press, (ii) **activity pattern**, such as occupations or industries, political and military undertakings, educational and cultural endeavours, aesthetic efforts, recreations; and (iii) **construction patterns or cultural landscape**, 'which consists of land sub-division system, canals and other surface fittings of the land, crop and animal husbandry patterns, rural habitation and associated farm features, urban and semi-urban formations, mines and quarries, factories and workshops, docks, piers, wharves, jetties and other port installations, roads and railway patterns, reserved spaces (forests, parks, cemetries, recreation areas), residual unused or waste areas and boundaries, custom houses, and military **fortifications**."[7]

पर्यावरण के स्वरूप (Forms of Environment)

पर्यावरण के साधारणत दो स्वरूप होते है—अनुकूल (Favourable) और प्रतिकूल (Unfavourable)। भिन्न-भिन्न पर्यावरण भिन्न-भिन्न प्राणियो के लिए अनुकूल और प्रतिकूल हुआ करते है। कभी-कभी एक ही पर्यावरण किसी प्राणी विशेष के लिए एक परिस्थिति मे अनुकूल हो सकता है, वही दूसरी स्थिति मे प्रतिकूल हो जाता है। अनुकूल वातावरण उसे कहते है, जो किसी जीवधारी के अस्तित्व की रक्षा, विकास और उन्नति मे सहायक होता है। इसके विपरीत जो पर्यावरण जीवधारी के अस्तित्व, रक्षा और विकास मे बाधक होता है, उसे प्रतिकूल पर्यावरण कहा जाता है। जहाँ अनुकूल पर्यावरण मिलता है वहाँ जीवधारी को कोई कठिनाई नही पडती, किन्तु जब प्रतिकूल वातावरण मे उसे रहना पडता है तो वह उसे अपने अनुरूप बनाने का प्रयास करता है। उदाहरण के लिए जल पर चलने के लिए जलयान, आकाश मे उडने के लिए वायुयान एव स्थल पर चलने के लिए मोटर, रेलगाडी आदि बनाई जाती है इसी प्रकार गरमी से बचने के लिए वातानुकूल कमरे, सर्दी से बचने के लिए 'हीटर' और बरसात से बचने के लिए बरसाती या छाते की व्यवस्था की गई। अत्यन्त शीत प्रधान प्रदेशो मे सर्दी से बचने के लिए बालदार कपडे पहने जाते है। शुष्क प्रदेशो मे जल की कमी को पाताल तोड कुएँ या नहरें बनाकर दूर किया जाता है। प्रतिकूल परिस्थितियो के अनुसार अपने मे परिवर्तन कर लेने की क्षमता केवल

7. *White and Renner*, **Op. Cit.**, pp. 649-65.

जलवायु है, अपराध दर और मद्यपान ऋतुओं के चढ़ाव और उतार के कारण होते है। तिब्बत जैसे प्रदेश में नवजात कन्याओं की हत्या और एक स्त्री द्वारा अनेक पुरुषों को वरण करने का कारण वहाँ के भौगोलिक साधनों की न्यूनता में पाया जाता है। धार्मिक भावना की वृद्धि का कारण मानव का शान्त प्रदेश में निवास करना है। ज्योतिष विद्या के ज्ञान प्राप्त करने का विचार खुले मरुस्थल में रहने के फलस्वरूप ही उदय हुआ क्योंकि वहाँ मरुस्थल भूमि की अपेक्षा आकाश कहीं अधिक आकर्षण का विषय था। प्रदेश विजित करने का विचार स्फूर्तिदायक जलवायु में रहने के कारण उत्पन्न हुआ जिससे मनुष्य को आलसी बनाने वाली जलवायु वाले व्यक्तियों को विजित करने की शक्ति प्राप्त हो सकी।"[१४]

इससे स्पष्ट होता है कि कुछ विद्वान मनुष्य को वातावरण का दास या कीड़ा मानते हैं। जैसा वातावरण होता वैसा ही जीवन वहाँ के निवासियों को व्यतीत करना पड़ता है। इस विचार धारा के मुख्य पोषक निम्न विद्वान रहे है :—[१५]

हिप्पोक्रेट्स (Hipprocrates)	कार्ल रिटर (Karl Ritter)
हैरोडोटस (Herodotus)	हम्बोल्ट (Hamboldt)
थ्रूसीडाइडस (Thrucidides)	डार्विन (Darwin)
अरस्तू (Aristotle)	हैकल (Haeckle)
स्ट्रेबो (Strabo)	डिमोलिन (Demollin)
बोडिन (Bodin)	रैटजेल (F. Ratzel)
मांटेस्क्यू (Montesquieu)	सेम्पल (Semple)
बकल (Buckle)	

आधुनिक युग मे रैटजेल तथा सेम्पल के विचार बहुत ही महत्वपूर्ण माने जाते हैं। रैटजेल ने लिखा है:—

"हमारी बुद्धि, संस्कृति और सभ्यता की प्रगति की तुलना एक चिड़िया की असीमित उड़ान से न होकर एक पौधे के ऊपरी तने से हो सकती है। हम सदैव पृथ्वी से बँधे रहते है क्योंकि टहनियाँ तने पर ही बढ़ सकती है। मानव प्रकृति अपना सिर आकाश मे जितना ऊँचा चाहे उठाले किन्तु उसके पैर धरती पर ही टिकेंगे और धूल धूल में ही मिल जायेगी।"[१६]

रैटजेल के मत को स्वीकार करते हुए कुमारी सेम्पल ने लिखा है, "मनुष्य का जन्म पृथ्वी से हुआ है, पृथ्वी ने उसे जन्म दिया है, उसका लालन पालन किया है, उसको भोजन दिया है, उसको व्यवस्था मे लगाया है, उसके विचारो को निर्देशित किया है, उसके सम्मुख कठिनाइयाँ उपस्थित की है जिससे उसका शरीर सुदृढ़ हुआ है और उसकी बुद्धि मे तीव्रता उत्पन्न की है। उसे नौकारोहण व सिंचाई की समस्यायें दी हैं साथ ही उसके हल को भी उसके कान मे फुसफुसा कर बता दिया

14. *P. H. Landis*, **Man in Environment**, p. 115
15. विस्तृत विवरण के लिए लेखक का 'मानव भूगोल' (प्रकाशनाधीन) देखें।
16. *F. Ratzel*, **History of Mankind**, p. 3.

है। पृथ्वी का कण-कण उसकी हड्डियों, स्नायुओं, मस्तिष्क और आत्मा में समाया हुआ है।"[17] किन्तु यह जानना आश्चर्यजनक होगा कि कुमारी सेम्पल ने नियतिवाद का पूर्ण रूप से समर्थन नहीं किया उसने मनुष्य की सूझ-बूझ व लगन को भी कहीं कहीं महत्त्व दिया है। सेम्पल के अनुसार प्रकृति का मनुष्य पर निरंतर तथा निश्चयात्मक प्रभाव पड़ता है किंतु इस कार्य में प्रकृति मनुष्यों की भाँति शोरगुल नहीं मचाती, वरन् वह मूक रहती है।[18]

(२) सम्भववाद—दूसरी विचारधारा के अनुसार भौतिक वातावरण तो केवल मनुष्य के समीप परिस्थितियाँ उपस्थित करता है, जिसका प्रयोग वह अपने बढ़ते हुए ज्ञान के अनुसार करता है अतः वह प्रकृति का दास नहीं है। उसने अपने बुद्धि-बल से प्राकृतिक वातावरण को ही संशोधित अथवा परिवर्तित कर दिया है तथा अपने आर्थिक ढांचे को भी बदल दिया है। प्रकृति, प्रो० ब्लाशे के अनुसार कभी भी एक सलाहकार से अधिक नहीं है।[19] इन्होंने कहा है, "वातावरण उन्नति करते हुए मानव समाज के रूप और प्रकृति को निश्चित नहीं करती। वातावरण तो समाज की दिशायें निर्धारित करता है। नये तत्वों की खोज हो रही है और जैसे जैसे मानव का ज्ञान, विचार और सामाजिक कार्य विकसित होते हैं वैसे-वैसे पुराने तत्वों को नया महत्व दिया जाता है। इनका संबंध पारस्परिक है।" विज्ञान ने भौगोलिक वातावरण के प्रभाव को बहुत कुछ प्रभावहीन कर दिया है। डा० बाउमैन के शब्दों में, "मनुष्य दक्षिणी ध्रुव पर आरामदेय और प्रकाश से पूर्ण नगर बना सकता है और शिक्षा, रंगमंच और खेल-कूदों की व्यवस्था कर सकता है। अथवा कुछ पनामा नहरों के खोदने में जो खर्च लगता है, उतना खर्च करके सहारा में ऐसे कृत्रिम पर्वतों का निर्माण कर सकता है जो वर्षा होने को विवश कर दे।"[20]

इस विचारधारा के प्रमुख पोषक फ्रांस के ब्लाशे (Blache) और ब्रून्स (Brunhes), तथा संयुक्त राज्य अमरीका के बाऊमैन (Bowman), कार्ल सौर (Carl Saur), फेब्वरे (Febvre) तथा टैथम (Tetham) हैं।

फेब्वरे इस मत का जनक माना जाता है। इनके अनुसार "मानव एक भौगोलिक दूत है, पशु नहीं। वह सर्वत्र पृथ्वी की रचना की विवेचना में उन परिवर्तनशील भौगोलिक अभिव्यक्तियों के समन्वय ढूंढने में योग देता है जिनका अध्ययन करना भूगोल का एक महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है।"...... "कहीं अनिवार्यताएँ नहीं हैं, सब ओर सम्भावनायें है। मनुष्य उनके स्वामी के रूप में उनका निर्णायक है। इस स्थिति परिवर्तन से मनुष्य को प्रथम स्थान मिलता है, मनुष्य को ही, न कि पृथ्वी, जलवायु का प्रभाव और स्थानों की नियतिवादी परिस्थितियों को।"[21] गोल्डनवीजर भी

17. *E. Semple,* **Op. Cit.** p 1.

18. **Ibid,** p 2.

19. *Blache,* **Op. Cit.,** p. 32.

20. *I. Bouman,* **Geography in Relation to Social Sciences,** 1927, p. 16.

21. *G. Taylor (Ed.),* **Geography in the Twentieth Century,** 1960, p. 154.

इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मानव संस्कृति के लिए प्रकृति चूना और ईंटें प्रदान करती है इससे अधिक कुछ नही। वह मानव को नही बनाती। मानव प्रकृति का उपयोग कर अपने को अपने अनुकूल बनाता है। यदि मानव का सहारा न मिले तो संस्कृति उतनी ही शक्तिहीन हो जाये जितनी कि वह कार्य को मिटाने में शक्तिहीन है। वह इसे बडी सीमा तक परिवर्तित भी नहीं कर सकती।[22] ब्रून्स मानते है कि ,,चूँकि मनुष्य पृथ्वी पर रहता है अतः वह उस पर निर्भर करता है किन्तु इस कथन का यह अर्थ नही कि वह प्रकृति का दास है। वह सामान्य नियम से नही बच सकता। उसकी क्रिया पृथ्वी की अन्य क्रियाओ मे सम्मिलित है, परन्तु इसका तात्पर्य यह नही कि सब क्रियायें पूरी प्रकार से पूर्व निश्चित हैं।" ब्लाशे के मतानुसार मानव एक क्रियाशील तथा निष्क्रिय प्राणी दोनो ही है। वह अपने वातावरण का उपयोग अपने अनुभव के आधार पर करता है। मनुष्य का नियन्त्रण पृथ्वी के उन तत्वो पर है जो गतिशील है—उदाहरणार्थ बहता जल, कटाव से ढीली हुई मिट्टी, वृक्ष आदि। इन लेखक के अनुसार प्रकृति को सर्वशक्तिमान नही माना जा सकता क्योंकि यह निर्विवाद सत्य है कि जहाँ प्रकृति की कोई योजना नहीं थी, उन भूभागों में भी कृषि उत्पादन होता रहता है। मानव ने अपनी बुद्धि और विज्ञान की सहायता से विभिन्न फसलो के उपक्षेत्रो को अधिक बढ़ा दिया है, उनकी शीघ्र पक जाने वाली किस्मो का आविष्कार किया है, और प्रतिकूल जलवायु क्षेत्रो में इतना उत्पादन किया जाने लगा है। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि मानव प्रकृति का दास न होकर उसका स्वामी है।

(३) समन्वयवादी विचारधारा—उपरोक्त दो विचारधाराओ के अतिरिक्त एक और विचारधारा प्रचलित हुई है, जिसके प्रमुख पोषक डा० टेलर (Taylor) माने जाते हैं। इस विचारधारा के अनुसार मनुष्य न तो प्रकृति का दास ही है और न ही उसका स्वामी और न ही मनुष्य के कार्य करने की क्षमता असीमित है। मनुष्य को प्रकृति के साथ एक समझौता या सहयोग (Compromise) करना पड़ता है। मानव और प्रकृति में निरन्तर पारस्परिक क्रिया-प्रक्रिया होती रहती है जिसके फलस्वरूप मनुष्य का जीवन भूतल पर सफलतापूर्वक चल पाता है। इस विचारधारा के पोषकों का मत है कि मानव प्रकृति के प्रभाव से पूरी प्रकार मुक्त नही हो सकता। संभववादी फेब्वरे ने भी इस बात को स्वीकार किया है। उसके अनुसार "मनुष्य चाहे कुछ भी करे, वह वातावरण के नियन्त्रण से स्वतन्त्र नहीं रह सकता।" कुछ इसी प्रकार के विचार ब्रून्स द्वारा भी व्यक्त किये गये है "वह शक्ति और साधन जो मनुष्य के पास है बहुत ही सीमित है। प्रकृति में उसे ऐसी सीमायें दिखाई पडती हैं जिन्हें वह पार नही कर सकता। मनुष्य अपना कार्य कुछ सीमा के भीतर ही कर सकता है। वह अपने पर्यावरण में थोड़ा-बहुत परिवर्तन अवश्य कर सकता है किन्तु वह उससे पूर्ण रूप से छुटकारा नही पा सकता। वह पर्यावरण में परिवर्तन कर सकता है किन्तु वह उसे कभी दबा नही सकता, वह सदैव ही उससे नियन्त्रित रहेगा।" इस सम्बन्ध में स्कार्फ का मत भी ध्यान देने योग्य है। वे कहते हैं "यह कहा जाता है कि विश्व में सबसे मूर्खतापूर्ण बात यह है कि मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करली है। यह उतना ही हास्यास्पद कथन है जितना यह है कि प्रकृति मानव को नियन्त्रित

22. *A. Goldenweiser*, **Anthropology,** pp. 450-453.
23. *UNESCO*, **Handbook of Suggesitons for Teaching of Geography,** 1954, p. 5.

करती है।'[23] कथन यह होना चाहिए कि मानव और प्रकृति में पारस्परिक सामंजस्य, सम्बन्ध अथवा सहयोग है 'न कि दोनों में शक्ति का प्रदर्शन अथवा असहयोग।

डा० टेलर ने इस विचारधारा को 'Stop and Go Determinism' की संज्ञा दी है। उनके अनुसार, "मनुष्य किसी देश की उन्नति को तीव्र या कम कर सकता है। वह उसे रोक सकता है, परन्तु यदि वह बुद्धिमान है तो उसे भौतिक पर्यावरण द्वारा निर्देशित मार्ग से दूर हटने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।" शुष्क मरुस्थलों में बिना जल प्राप्ति का प्रबंध किये गन्ना या चावल जैसी वस्तुओं का उत्पादन करना एक मूर्खता ही होगी। इसी प्रकार टुंड्रा जैसे शीत उजाड़ खंडों में बिना आवश्यक ताप प्राप्त किये फसलों का उत्पादन करना असंभव ही होगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि विज्ञान की सहायता से गेहूँ की कुछ जल्दी पकने वाली किस्में उत्तरी ध्रुवों के निकटवर्ती भागों में बोई जाने लगी हैं किन्तु उत्पादन में वह सुलभता, या निपुणता प्राप्त नहीं हो सकती जो किसी उपयुक्त भौतिक दशाओं वाले क्षेत्र में हो सकती है। स्पष्ट है कि मानव को यथासंभव पर्यावरण से दूर नहीं हटना चाहिए।

श्री टेलर ने मनुष्य को पर्यावरण का स्वामी नहीं माना है बल्कि उसकी तुलना चौराहे पर खड़े एक पुलिसमैन से की है जो मनुष्यों के चलने की गति को धीमी या तीव्र कर सकता है, परंतु उनकी दिशा को परिवर्तित नहीं कर सकता।

अस्तु, हम यह कह सकते हैं कि चूँकि मनुष्य स्वयं वातावरण का एक प्रमुख अंग है जो अन्य भौतिक दशाओं की भांति जड़रूप में न होकर चेतन है। वह सदैव अपने को वातावरण के अनुकूल ढालने का प्रयत्न करता है। परन्तु उस पर पर्यावरण का निरंकुश नियंत्रण नहीं है क्योंकि श्री रसेल स्मिथ के शब्दों में "मनुष्य पृथ्वी का केवल निवासी ही नहीं है, वह एक सृजनकर्ता, भौगोलिक दूत तथा पृथ्वी को परिवर्तन करने वाला भी है।" [24] इस दृष्टि से यह निष्कर्ष निकालना असंगत न होगा कि मनुष्य पर्यावरण के एक अंग के रूप में क्रियाशील और निष्क्रिय दोनों ही है। चूंकि मनुष्य पृथ्वी पर रहता है, वह उस पर निर्भर भी करता है अतः वह प्रकृति को सदैव आज्ञा मानकर ही जीत सकता है। अस्तु, मनुष्य को प्रकृति के सिद्धान्तों को समझ कर उसके गुण के अनुसार अपनी सुविधाओं और आकांक्षाओं में संबंध स्थापित करना चाहिए। उसे प्रत्येक कदम पर प्रकृति से सहयोग करने की आवश्यकता होती है, अन्यथा वह उससे पूरी तरह लाभ नहीं उठा सकेगा। इसीलिए यह कहा गया है कि प्रकृति को जीतने या स्वयं उसका दास बनने की अपेक्षा मनुष्य को प्रकृति के साथ सहयोग करने की सोचनी चाहिए वस्तुतः मनुष्य का कल्याण प्रकृति से युद्ध करने में नहीं उससे सहयोग करने में है ("the maxim should be not conquest of, nor submission to, but co-operation with nature.")

पर्यावरण का प्रभाव

भौगोलिक पर्यावरण मनुष्य पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों ही रूप से अपना प्रभाव डालता है। प्रत्यक्ष प्रभाव डालने वाले कारकों में जलवायु को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। हंटिंगटन के अनुसार "जलवायु का स्थान प्रथम है, इसलिए नहीं कि

---

24. *R. Smith*, **Industrial & Commercial Geography.**

वह सबसे महत्वपूर्ण है, वरन् वह सबसे अधिक मौलिक (Fundamental) है। अनेक देशों में फैली हुई सुस्ती, बेईमानी, अनैतिकता, मूर्खता और इच्छा शक्ति की निर्बलता का कारण जलवायु ही है।" कुमारी सेम्पल के अनुसार "सभ्यता के प्रारंभ और विकास में जहाँ तक आर्थिक प्रगति का सबंध है, जलवायु एक बड़ा शक्तिशाली तत्व है।" पर्यावरण का अप्रत्यक्ष प्रभाव प्राकृतिक वनस्पति और मिट्टियों द्वारा मनुष्य पर पड़ता है और इन पर जलवायु का। इसी प्रकार सांस्कृतिक पर्यावरण का प्रभाव पहले मानसिक होता है, जो मानव सहयोग एवं सहकारिता में परिणित हो जाता है। पर्यावरण के विभिन्न प्रभावों को अन्यत्र बताया गया है।

कुमारी सेम्पल ने भौगोलिक पर्यावरण के प्रभावों को चार भागों में विभाजित किया है:—[२५]

(१) सीधे भौतिक प्रभाव (Direct Physical Influence)—जिसके कारण मनुष्यों के शारीरिक अंगो में अन्तर उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार के सीधे प्रभावों में ऊँचाई और जलवायु को प्रमुख माना जाता है।

(२) मानसिक प्रभाव (Mental Influence)—जिसके फलस्वरूप धर्म, साहित्य, भाषा, आचार-विचार आदि में भिन्नता पाई जाती है।

(३) आर्थिक और सामाजिक प्रभाव (Economic and Social Influence) जो पर्यावरण की निर्धनता तथा सम्पन्नता पर आश्रित होते हैं।

(४) मानव गतियाँ—जो जलवायु या अधिक साधनो मे परिवर्तन के कारण आवश्यक हो जाती हैं। इनका प्रभाव मनुष्य के आवास-प्रवास पर अत्यन्त अमिट रूप से पड़ता है।

डा. हंटिंगटन ने भौगोलिक तथ्यों के पारस्परिक सबंधों का जो चित्रण किया है उससे पता लगता है कि:—

(क) प्राकृतिक पर्यावरण के तत्व एक दूसरे से प्रभावित हैं। किसी भी तत्व को अन्य साथी तत्वो से अलग कर नहीं समझा जा सकता है, इससे सतुलन बिगड़ जाता है।

(ख) भौतिक पर्यावरण का प्रभाव मनुष्य के कार्य-कलापों, सोच-विचार आदि पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों ही प्रकार से पड़ता है।

(ग) भौतिक वातावरण पशुओं, और वनस्पति पर सीधा प्रभाव डालता है और ये दोनों अपना प्रभाव मानव पर डालते हैं।

(घ) मनुष्य स्वयं एक क्रियाशील प्राणी है। वह स्वयं पशु एवं वनस्पति जगत तथा भौतिक पर्यावरण के अन्य अंगो को प्रभावित करता है।

दूसरे शब्दो में कहा जा सकता है कि मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे से गतिज संतुलन में बंधे है। इस प्रकार की एकता को पार्थिव एकता (terrestrial unity) कहा जाता है। मानव और प्रकृति दोनों मिलकर एक सतुलन स्थापित करते हैं। इस संबंध मे डा० मुकर्जी के विचार ध्यान देने योग्य हैं "मनुष्य समाज न केवल

25. *Quoted by A. J. Dastur* in **Man & His Environment,** p. 21.

तापक्रम, आर्द्रता, सूर्यप्रकाश, ऊंचाई आदि से एक सतुलन मे बंधा है वरन् वह उनके, अपरोक्ष प्रभावों से भी प्राणि-जगत से इसका सम्बन्ध विविधता से बुना है, मनुष्य पौधे उगाता है, और पशु पालता है, कीड़े तक पालता है जो उस क्षेत्र से आदि-वासी हैं।"[२६]

डा० हटिंगटन के अनुसार पर्यावरण एवं मानव प्रतिक्रियाओं का चत्रण सामने चार्ट मे दिया गया है:—[२७]

26. *R. K. Mukerjee,* **Regional Sociology.**

27. *E. Huntington,* **Principles of Human Geography, 1951.**

(२) छितरा हुआ आकार (Fragmented or Scattered)—ऐसे आकार के देशों में अनेक भाग मध्यवर्ती या मुख्य भाग से दूर टूटे-फूटे रूप में बिखरे होते हैं अथवा इनके बीच में अन्य देशों के भाग होते हैं। यूनान का आकार बहुत ही छिन्न-भिन्न है। जब सामुद्रिक शक्ति का विकास हुआ तो इसके सभी भागों के बीच में एकता थी किन्तु जब इस शक्ति का ह्रास होने लगा तो यूनान का भी पतन हो गया क्योंकि कोई ऐसी मध्यवर्ती शक्ति नहीं थी जो इस एकता को बनाये रखती। ब्रिटेन, जापान, न्यूजीलैंड, डेनमार्क, इटली, फिलीपाइन्स आदि देश इस आकार के अन्य उदाहरण हैं। जापान चार बड़े और हजारों छोटे-छोटे द्वीपों से मिलकर बना है। जिनकी रक्षा जापान सदैव से अपने हवाई बेड़े और जहाजी बेड़े की सहायता से करता रहा है। किन्तु जब इसकी हवाई शक्ति कमजोर हो गई तो जापान के जहाज शीघ्रता से नष्ट कर दिये गये। भारत प्रजातंत्र के पूर्वी भाग में असम और बंगाल के बीच में पाकिस्तान का भाग धंसा हुआ है जिसके चारों ओर भारतीय क्षेत्र है तथा पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच १००० मील की दूरी है जो भारत देश में होकर जाती है। इस प्रकार के आकार वाले देशों में यातायात की कठिनाई रहती है।

(३) लम्बाकार (Elongated or longitudinal or attentuated) देशों का धरातल एक ही दिशा में अधिक फैला होना है। चिली, जैकोस्लोवाकिया, डेन्मार्क, नार्वे, आदि इनके प्रमुख उदाहरण हैं। चिली २५०० मील लम्बा किन्तु केवल ११० मील चौड़ा देश है। इसका नियन्त्रण किसी केन्द्रवर्ती बिन्दु से करना कठिन होता है क्योंकि केन्द्रीय सरकार अधिक लम्बाई के कारण उत्तरी या दक्षिणी भागों की समस्याओं को समझने में असमर्थ होती है। इसके अतिरिक्त यातायात के साधनों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। अधिक लम्बाई के कारण जलवायु में विभिन्नता पाई जाती है अतः कृषि-कार्य करना भी कठिन हो जाता है।

(४) विस्फोटक आकार (Prorupted, tumoid or sprawled)—जब किसी क्षेत्र का विस्तार केन्द्र से बाहर या दूर की ओर होने लगता है तो उसका आकार विस्तृत हो जाता है। यह विस्तार मुख्यतः व्यापारादि के निमित्त होता है। रूस के अनेक भाग समुद्र में दूर तक चले गये हैं। इसी प्रकार अलास्का का पैनहैंडल, ब्रह्मा का तनासरिम तट, तथा मुख्य चीन का ५०० मील लम्बा कान्सू विस्तार इस प्रकार के अन्य उदाहरण हैं। ब्रिटिश भारत और रूस के बीच में अफगानिस्तान का पूर्वी घुसा हुआ भाग Buffer-state के रूप में विद्यमान है। पहले उत्तरी मैक्सिको संयुक्त राज्य के बीच में एक खाड़ी के रूप में घँसा हुआ था जिससे टैक्सास और दक्षिणी कैलीफोर्निया के बीच सीधा स्थल मार्ग नहीं था अतः इस सुविधा की प्राप्ति के लिए ही गैस्डन को मैक्सिको से खरीद लिया गया। द्वितीय युद्ध के बाद जर्मनी में से अनेक टुकड़े काटे गये जो क्रमशः इंगलैंड, रूस, अमरीका और फ्रांस को मिले। इन टुकड़ों के चले जाने से जर्मनी का आकार सघन हो गया है।

भौगोलिक स्थिति (Geographical location)

भौगोलिक स्थिति यह बताती है कि कोई क्षेत्र, स्थान अथवा देश अन्य ऐसे ही भाग के सम्बन्ध में कहाँ स्थित है। प्रो० हटिंगटन के अनुसार "पृथ्वी के गोले पर स्थित ही भूगोल की वास्तविक कुंजी है।"[2] क्योंकि किसी देश की भौगोलिक

2. *Huntington & Cushing*, **Principles of Human Geography**, p. 3.

स्थिति ही उसके विकास और उन्नति के लिए उत्तरदायी है। पृथ्वी पर किसी भी भाग की स्थिति तभी अनुकूल और महत्वपूर्ण समझी जाती है जबकि अन्य घने बसे देशों से वह स्थान सरलतापूर्वक पहुँचने योग्य हो तथा वहाँ मानव और पदार्थो के यातायात की समस्त सुविधायें वर्तमान हो, वहाँ की जलवायु सम हो। अन्यथा इन सब बातो के अभाव में वहाँ की स्थिति प्रतिकूल होगी। कुमारी सैम्पल ने स्थिति का महत्व इन शब्दों में व्यक्त किया है 'किसी देश या मनुष्यों के इतिहास में उसकी स्थिति बड़ा महत्वपूर्ण भौगोलिक तथ्य है।"[3]

भौगोलिक दृष्टिकोण से किसी स्थान की स्थिति मध्यवर्ती हो सकती है, अन्य दूसरे स्थान सकी तुलना में कम मध्यवर्ती होते हैं और अन्य स्थान इस केन्द्रवर्ती स्थिति से काफी दूर होते हैं। अत: किसी देश की भौगोलिक स्थिति निम्न प्रकार की हो सकती है —

१ केन्द्रीय स्थिति २ निकटवर्ती स्थिति
३ सीमान्त स्थिति ४ सामरिक स्थिति

(१) केन्द्रीय स्थिति (Central location)—महाद्वीपो में अनेक देश उनके मध्यवर्ती भागों में स्थित होते है। यूरोप मे यदि एक रेखा मास्को से पेरिस बेसिन तक मार्सेलीं से ओडेसा और मास्को को जोडती हुई खींची जाये तो यह क्षेत्र मध्यवर्ती स्थिति में होगा किंतु कभी कभी भौगोलिक अथवा ऐतिहासिक कारणो से यह केन्द्रवर्ती स्थिति पश्चिमी या दक्षिणी-पश्चिमी भागों की ओर सरकती रही है। इस मध्यवर्ती स्थिति का सबसे बडा दोष यह है कि जहाँ इसका सम्बन्ध निकटवर्ती देशो से होता है वहाँ उन देशो द्वारा सदैव ही इस पर आक्रमण किये जाने का भय रहता है। आस्ट्रिया हंगरी, और बरगंडी जो किसी समय बडे शक्तिशाली देश थे उन पर पड़ौसी देशो की ओर से सदैव आक्रमण हुए है। जर्मनी रूमानिया, पोलैंड आदि की भी यही स्थिति रही है। किन्तु अफगानिस्तान, स्विटजरलैंड, इथोपिया, नैपाल, बोलीविया आदि देशो की स्थिति केन्द्रवर्ती होने हुए भी पडौसी देशो के आक्रमण इन पर नही हो सके क्योकि ये न केवल ऊँचे पहाड़ी भागो से घिरे हुए हैं वरन् यहाँ तक पहुँचने के लिए मार्गों की भी बडी असुविधा है। भारत में मध्यप्रदेश की स्थिति केन्द्रवर्ती है। यूरेशिया में मध्यपूर्व के देशों की स्थिति बडी लाभदायक है। केन्द्रवर्ती स्थिति का लाभ भी होता है। उदाहरण के लिए यूरोप की खाद्यान्नो की पूर्ति डैन्यूब नदी के घाटी वाले क्षेत्रो से की जाती है। जर्मनी और जैकोस्लोविया से यूरोप के अन्य देशो को कारखानो का निर्मित माल मिलता रहा है। स्विटजरलैंड के प्राकृतिक दृश्यो, स्वास्थ्यवर्धक केन्द्रो, दुग्ध उत्पादन और वैज्ञानिक उपकरणो की सभी भागो में बडी माग रही है।

(२) पडौसी स्थिति (Adjacent Situation)—यह स्थिति केन्द्रवर्ती भागों से कुछ दूर की स्थिति होती है। इसको भी वही लाभ प्राप्त होते है किन्तु इस स्थिति के देशो को आक्रमण का अधिक भय नही रहता। स्पेन, इटली, बाल्कन राज्य, मध्य रूस, दक्षिणी स्कैंडेनेविया, ब्रिटेन आदि देशो की स्थिति मध्य यूरोप के

---

3. "*The location of a country or a people is always the supreme geographical fact in its history*"—*E. Semple*, **Influences of Geographic Environment**, 1911, p. 129

सबंध मे पड़ौसी स्थिति है। इन देशो मे विदेशी प्रभाव अवश्य पडता है किन्तु विध्वंसकारी नही जैसा कि पौलैंड, जर्मनी आदि देशों को छिन्न भिन्न करने मे पड़ा है। प्रथम महायुद्ध के पूर्व यूरोप के अधिकाश पड़ौसी देश मध्यवर्ती यूरोप के रूर, साईलेशिया, बोहेमिया, सैक्सोनी आदि औद्योगिक क्षेत्रो की ओर बढ रहे थे किन्तु १९१८ के बाद जब मध्य यूरोपीय देशो ने व्यापार के लिए ऊंची तट-कर दरें नियत करदी तो यह स्थानान्तर एक प्रकार से रुक सा गया।

(३) सीमान्त स्थिति (Peripheral Situation)—इस प्रकार की स्थिति वाले देश प्राचीनकाल का फोनेशिया, लघु एशिया, पुर्तगाल, आयरलैंड, आइसलैंड, उत्तरी स्कैंडेनेविया, फिनलैंड और यूनान को मानी जाती है। ये देश यूरोप के सीमा-वर्ती भागो मे स्थित हैं। ऐसे देशो का सबध केन्द्रीय देशो मे सीधा नही होता अतः इनका व्यापार साधारणतः सामुद्रिक मार्गो द्वारा ही होता है।

(४) सामरिक स्थिति (Strategic Situation)—कुछ क्षेत्रो तथा स्थानो की स्थिति युद्ध की दृष्टि से बडी महत्वपूर्ण होती है। ऐसे स्थान दर्रो के निकट, बन्दरगाह अथवा सामुद्रिक तट पर अन्य द्वार होते हैं। यूरोप मे डावर जलडमरूमध्य और रूर घाटी के मध्य का सम्पूर्ण क्षेत्र सामरिक महत्व का है। इसी मे होकर पूर्वी यूरोप से पश्चिमी यूरोप को व्यापारिक मार्ग जाते है। इसी क्षेत्र मे स्थल सीमा और जल सीमा का मिलन होता है और इसी मे ऐतिहासिक निर्णायक लडाई लडी गई हैं—नैपोलियन-युद्ध, फ्रैंको-प्रशियन युद्ध, प्रथम तथा द्वितीय महायुद्ध आदि।

संयुक्तराज्य अमरीका के उत्तरी-पूर्वी भाग मे भी एक महत्वपूर्ण सामरिक क्षेत्र है जिसमे हड्सन घाटी, मोहक घाटी, इरी झील की निम्न भूमि सम्मिलित हैं। यह विस्तृत क्षेत्र अटलांटिक तट से लगा कर मध्यवर्ती मैदान तक फैला है। इसके मुख्य सामरिक केन्द्र न्यूयार्क, शिकागो, एलबैनी, बफैलो, क्लीवलैंड, डिट्रायट-विन्डसर आदि है। इस क्षेत्र मे इतना अधिक व्यापार होता है कि यहाँ असख्य नगरो की स्थापना हो गई है।

सामरिक स्थिति निम्न प्रकार की हो सकती है—

(१) जहाँ दो या दो से अधिक व्यापारिक मार्ग आकर मिलते हैं वहाँ सामरिक केन्द्र स्थापित हो जाता है। पहाड़ी घाटियो के केन्द्र, नदी के बेसीन, तटीय मैदान तथा अन्य प्राकृतिक अवरोधो के निकट स्थित केंद्र राजनीतिक और व्यापारिक महत्व के केन्द्र बन जाते हैं। शिकागो, विन्नीपेग, कोलम्बो, होनोलूलू, डाकर, सिंगापुर, न्यूयार्क, पेरिस, नयी दिल्ली, डेनवर और समरकंद सडको, रेलमार्गो, सामुद्रिक मार्गो तथा वायुमार्गो के मिलन पर स्थित केन्द्रो के प्रमुख उदाहरण है।

(२) समुद्रतट पर स्थित मार्गो के द्वार, खाडी, नदियो के मुहाने, जलडमरूमध्य, तथा नव्य नदियों के किनारे स्थित केन्द्रो की स्थिति व्यापार के लिए बडी लाभदायक होती है। ऐसे केंद्रो पर बडे व्यापारिक नगर स्थापित हो जाते है जिनका सामरिक महत्व भी बढ जाता है क्योकि यहाँ सामुद्रिक मार्गो और स्थल मार्गो का मिलन होता है। ऐसे केंद्र व्यापारिक द्वार (portal or gateway location) कहलाते है। ब्यूनेस आयरस, बोस्टन, कलकत्ता, सिएटल, शघाई, न्यूयार्क, करांची आदि इसके मुख्य उदाहरण हैं।

(३) पहाडी और मैदानी क्षेत्रो के मिलन बिन्दुओ (nodal locations)

पर भी व्यापार तथा यात्रियो को यातायात के साधनो मे परिवर्तन करना पड़ता है। ऐसे स्थानो पर जो केंद्र स्थापित हो जाते है वे एक ओर व्यापार मे संलग्न होते है दूसरी ओर व्यापारिक मार्गो की रक्षा भी करते है। कारवा के मार्गो पर, मरुस्थलों की सीमा पर, पहाडी दर्रो के निकट स्थित केंद्रो की स्थिति सामरिक दृष्टि से बडी महत्वपूर्ण हो जाती है। एशिया मे यारकद और फलगन तथा पामिरा और दमिश्क, अफ्रीका मे सहारा मरुस्थल से निकलने वाले चार कारवा मार्ग पर स्थित टिम्बक्टू और तुर्गट, कानो और त्रिपोली एवेशर और बैंगाजी तथा एलफैशर और अस्यूत ऐसे ही नगरो के जोडे हैं। उत्तरी अमरीका मे एल पास्को, यूमा, साल्ट लेक सिटी और स्कारमैंटो तथा आस्ट्रेलिया मे कूलगार्डी और पोर्ट अगस्ता भी इस प्रकार के नाभि बिन्दुओं के उदाहरण है। दर्रो के निकट की स्थिति के मुख्य उदाहरण बेरूत और दमिश्क, प्रेग और ड्रेसडन, सिएटल और याकिमा, टूंटो तथा इनब्रुक और खैबर तथा बोलन हैं। सामुद्रिक नाभि बिन्दुओ मे पनामा और स्वेज नहरें, मलक्का और बाबुलमंडप, जिब्राल्टर, सुन्ड, आदि प्रमुख है। सामुद्रिक मार्गो पर स्थित द्वीपों की स्थिति भी सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। माल्टा, लका, हवाई, सिंगापुर, होनोलूलू, साइप्रस आदि द्वीप इसके उदाहरण हैं।

स्थिति का राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक ढाँचे पर जो प्रभाव पडता है वह बडा महत्वपूर्ण होता है। स्थिति न केवल मानव अधिवासो के स्थापित होने मे अपना प्रभाव डालती है वरन वह मनुष्यो के आर्थिक प्रतिमानो को भी निर्धारित करती है। सडकें, रेलें तथा नहरो और यातायात के अन्य मार्गो के निर्माण मे स्थिति का प्रभाव निश्चय रूप से दीख पडता है। स्थिति का महत्व हम एथेंस और रोम नगरो के उदाहरण से स्पष्ट कर सकते है। प्राचीन काल मे अपनी स्थिति के कारण ही एथेंस (जो टर्की तथा इटली के बीच मे तथा मिश्र के सम्मुख था) शक्ति और सभ्यता की चरम सीमा तक पहुँच सका था। जब सभ्यता का विस्तार भूमध्यसागरीय प्रदेशो मे हुआ तो यह सौभाग्य रोम को प्राप्त हुआ। और जब सभ्यता का विकास उत्तरी और पश्चिमी भागो मे हुआ तो रोम की स्थिति नगण्य हो गई। औद्योगिक क्रांति के समय इंगलैंड ने भी अपनी स्थिति से बडा लाभ उठाया। स्पेन, पुर्तगाल, फ्रास, हॉलैंड और इगलैंड मे साम्राज्य-विस्तार के लिए बडी प्रतिस्पर्द्धा हुई किन्तु सफलता इगलैंड को ही मिली। इसका मुख्य कारण उसकी स्थिति ही थी। इगलैंड के साम्राज्य का कालान्तर मे इतना विस्तार हुआ कि शताब्दियो के लिए 'ब्रिटिश साम्राज्य मे सूर्य कभी नही छिपता' (Sun never sets in the British Empire) यह लोकोक्ति बन गई।

इसी प्रकार १७७५ से १८२५ तक दक्षिणी अपलेशियन पहाडी भागो मे कम्बरलैंड-गैप की स्थिति सामारिक दृष्टि से बडी महत्वपूर्ण रही थी। यही आतरिक भागो का द्वार था किन्तु ईरी नहर के बन जाने के बाद इसका महत्व घट गया और इसके स्थान पर न्यूयार्क हार्बर मे लगाकर ईरी झील तक का निम्न प्रदेश महत्व पा गया।

जब भूमध्यसागर में वाणिज्य का विस्तार और विकास हुआ तो वेनिस, जो एड्रियाटिक सागर के सिरे पर स्थित है, यूरोप के भीतरी भागो के लिए द्वार के रूप मे महत्वपूर्ण हो गया और उत्तरी तथा दक्षिणी यूरोप मे ब्रैनर दर्रा आने जाने के लिए उपयुक्त हुआ। जब व्यापार की उन्नति अटलांटिक सागर के तटीय राज्यो मे

हुई तो वीजर, एल्ब, राईन, थेम्स नदियाँ व्यापार का मार्ग बन गई और वेनिस तथा ब्रेनर का महत्व घट गया। जब पालदार जहाजों का विकास हुआ तो अजोर्स, कनारी और विरजिन द्वीपों का सामरिक महत्व बढ गया और बाद में धुआंकशो के विकास के फलस्वरूप पनामा तथा स्वेज के डमरूमध्यों की स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण हो गई। इनको काटकर प्रमुख व्यापारिक नहरें बनाई गई। वायु यातायात की प्रगति होने पर अब मियामी, करकस और नैपाल जैसे स्थानों का महत्व बढ गया।

इगलैंड की मध्यवर्ती स्थिति की तरह ही रूस की स्थिति भी बड़ी महत्वपूर्ण मानी गई है। श्री मैंकाइन्डर ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उन्होंने इसे विश्व-द्वीप (World Island) का हृदयस्थल (Heartland) माना है। उनका कहना था कि इस क्षेत्र का केंद्र भौगोलिक धुरी बनेगा। उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि जिसका अधिकार पूर्वी यूरोप पर है वह हृदयस्थल का स्वामी है, जो हृदय-स्थल पर राज्य करता है वह विश्व-द्वीप का स्वामी है और जो विश्व-द्वीप पर राज्य करता है वह सम्पूर्ण विश्व का स्वामी है।"[४] वास्तव में रूस की स्थिति ने ही उसे मध्य यूरोप का प्राकार बनाया और एशियाई आक्रमणों से उसकी रक्षा की।

श्री मैकीन्डर के अनुसार पृथ्वी के धरातल पर जो २५%स्थल है उसका २/३ भाग यूरेशिया और अफ्रीका द्वारा घेरा गया है तथा विश्व की ७/८ वी जनसख्या यूरेशिया-अफ्रीका के भू-भागों मे रहती है तथा शेष इनके निकटवर्ती अथवा दूरस्थ द्वीपो और महाद्वीपो मे। अत उन्होने यह सिद्धान्त बनाया कि जो शक्ति यूरेशिया, अफ्रीका पर स्वामित्व रखती है (जिसे उन्होंने विश्वद्वीप की संज्ञा दी थी) तो वह विश्व को विजय करने की स्थिति मे है क्योंकि उसके नियत्रण मे विश्व की ७/८ भाग जनसंख्या का तथा दो-तिहाई क्षेत्रफल होगा। कोई भी सामुद्रिक शक्ति इसका मुकाबला नही कर सकेगी क्योंकि स्थल पर स्थित राज्यों का अधिकार सीमावर्ती हवाई अड्डो (Naval bases) पर रहेगा। अपनी असीम जनसख्या तथा विशाल सम्पत्ति के कारण स्थल-शक्ति विदेशी आक्रमण का पूरी तरह सामना कर सकेगी। यूरेशिया-अफ्रीका स्थल-भूमि पर उसी शक्ति का अधिकार हो सकेगा जिसके अधिकार मे यूरेशिया के सरक्षित निम्न प्रदेश है जिनका विस्तार बाल्टिक काले सागर से लगाकर पूर्व की ओर यनीसी नदी तक तथा आर्कटिक सागर के दक्षिण से लगाकर टर्की होता हुआ मंगोलिया तक फैला है। इस विस्तृत क्षेत्र मे लगभग ४२½लाख वर्ग मील क्षेत्रफल के मैदान हैं जिनके आर्थिक श्रोतों की संभावना अधिक है। इस विश्वद्वीप पर केवल पश्चिम को छोडकर किसी भी ओर से आक्रमण होने की सभावना नही मानी गई। अत. यहाँ कृषि और औद्योगिक शक्ति का विकास हो सकेगा। इस विकास के फलस्वरूप यूरोप, मध्यपूर्व, भारत और पूर्व के देशो को होते हुए सम्पूर्ण स्थल का स्वामी बना जा सकता है। इसी विजय के फलस्वरूप आस्ट्रेलिया और पश्चिमी गोलार्द्ध पर आधिपत्य जमाना भी संभव माना गया। हृदय द्वीप की सुरक्षा का

4. "Who rules East Europe Commands the Heartlands ;
Who rules the Heartlands Commands the World Island ;
Who rules World Island Commands the World."

—*Sir Harold Mackinder*

—Democratic Ideals and Reality—A Study in the Politics of Reconstruction, 1942, p 150.

मुख्य कारण भौतिक परिस्थितियों को माना गया। इन क्षेत्र की नदियाँ आतरिक बहाव के क्षेत्रों में अथवा आर्कटिक प्रवमहासागर मे गिरती है। केवल वाल्टिक तथा काले सागर पर स्थित सामुद्रिक आधारों की ओर से आक्रमण सभव है। उत्तरपूर्व की ओर ग्रीनालैंड का बडा ही ऊबड-खाबड क्षेत्र है, पूर्व की ओर अल्टाई और थियानशान पर्वत हैं जिसके बीच मे मगोलिया और सिक्याग के शुष्क प्रदेश हैं। दक्षिण की ओर हिंदुकुश पर्वत तथा अफगानिस्तान और ईरान के पठार तथा काले सागर और कैस्पियन सागर के बीच काकेशस पर्वत और उनके उपरात अर्मेनिया का पठार है। दक्षिण-पश्चिम की ओर कार्पेथियन पर्वत एक प्राकृतिक अवरोध बनाते है, उत्तर पश्चिम की ओर जैपलैंड के भूखड तथा उत्तर की ओर आर्कटिक महासागर हैं।

मैकिन्डर के इस सिद्धान्त को प्रसिद्ध अमरीकी लेखक स्पाइक्मैन ने पूर्णत स्वीकार नही किया है। इनका विचार है कि यनीसी और पौलैंड के बीच का क्षेत्र बड़ा ही अनुपयुक्त है अत यूरेशिया की वास्तविक शक्ति हृदय-द्वीप मे नही वरन् यह हृदय-द्वीप के निकटवर्ती देशों मे निहित है जिसे उसने Rimland की सज्ञा दी है। इस क्षेत्र मे विश्व की अधिकाश जनसख्या निवास करती है तथा इसी मे आर्थिक स्रोतो की अधिकता मिलती है। अत. उनके अनुसार इतिहास स्थल शक्ति और जल शक्ति के बीच सुस्पष्ट युद्ध रेखा नही है वरन् यह रिमलैंड मे होने वाली क्रमिक घटनायें हैं जो विश्वद्वीप और उसके निकटवर्ती ब्रिटेन तथा जापान द्वीप समूहों के बीच एक युद्ध-क्षेत्र (Buffer zone) की भाँति कार्य करता है। इनका सिद्धान्त है कि "जो इस रिमलैंड का स्वामी है वही यूरेशिया पर राज्य करता है और जो यूरेशिया पर राज्य करता है वह विश्व के भाग्य को नियन्त्रित करता है।" [५]

इस प्रकार स्पष्ट होगा कि भौगोलिक स्थिति मे अन्तर मे पड जाता है। इसका महत्व मानव कार्यो और उसकी विचारधाराओ के साथ घटता-बढता है। [६] किन्तु इस कोई सदेह नही कि यह वास्तविक है।

भौगोलिक स्थिति का महत्व पूर्ण रूप से समझने के लिए स्थिति के उन रूपो का भी अध्ययन होना आवश्यक है जो विभिन्न राष्ट्रो के बीच मे अंतर्राष्ट्रीय सबध स्थापित करने मे सहायक होने है, जिनका उद्देश्य शाति स्थापित करना तथा सास्कृतिक आदान-प्रदान करना है। इस दृष्टि से विश्व मे चार प्रकार की भौगोलिक स्थिति स्पष्टत मिलती है। प्रथम किसी क्षेत्र की स्थिति इतनी प्रमुख (Pivotal location) होती है कि उसके कारण उस राष्ट्र की स्थिति सामरिक दृष्टि से बड़ी लाभदायक और सुरक्षित मानी जाती है। दूसरे, एक सीमावर्ती क्षेत्र जहा आपस मे लडाई भगडे होने की सभावना रहती है। तीसरे, दूरस्थ स्थिति जिनका सामरिक महत्व होता है। चौथे, ऐसी स्थिति जिसके कारण विश्व पर नियत्रण रखा जा सकता है। यहाँ यह स्मरणीय है कि यह प्रमुख स्थिति परिवर्तनशील होती है।

---

5. "Who controls the Rimland rules Eurasia; who rules Eurasia controls the destinies of the World"—*N. J. Spykman*, **The Geography of Peace,** 1944, p. 3.

6 "Geographical location seldom remains fixed. Instead it ebbs and flows in accordance with the tide of human affairs, with the streams of man's ideas and values. But it is nonetheless real."—*White and Renner*, **College Geography,** 1957, p. 641.

जब पश्चिमी सभ्यता का विकास एजियन सागर के निकटवर्ती भागों में हुआ तो मुख्य स्थिति का क्षेत्र मैसेडोनिया में रहा क्योंकि इनमें होकर न केवल यूनानी प्रायद्वीप पर नियंत्रण रखा जा सकता था वरन् स्थल की ओर भी अनेक दिशाओं में सैन्य-सचालन कर इसको सुरक्षित रखा जा सकता था। नियंत्रण के मुख्य केन्द्र इस काल में इटली, सिसली, क्रीट, कोरसिका, रोड्स, हेल्सपोंट तथा कोरिंथ के डमरूमध्य थे।

जब सभ्यता का स्थानान्तर सम्पूर्ण भूमध्यसागरीय प्रदेशों की ओर हुआ तो आकर्षण बिंदु रोम हो गया और मुख्य क्षेत्र इटली के प्रायद्वीप पर विस्तृत हो गया। इस क्षेत्र के अंतर्गत इटली, फ्रांस का अधिकांश भाग, स्विटजरलैंड आदि थे और सामरिक महत्व के नियंत्रक केन्द्र जिब्राल्टर, ट्यूनिस, नील का डेल्टा, सिलीशियन द्वार, डार्डेनलीज, बासफोरस, डैन्यूब, राईन और रोन की घाटी बन गयें।

इसके बाद जब सभ्यता के क्षेत्र अटलांटिक महासागरीय देशों में फैले तो सामरिक क्षेत्र भी इन्हीं भागों में स्थापित हो गये। इसका मुख्य कारण सामुद्रिक शक्ति का विकास होना था।

वायु शक्ति के विकास के फलस्वरूप एक बार फिर सामरिक महत्व के क्षेत्रों की स्थिति में परिवर्तन हुआ है। हवाई जहाजों द्वारा अब विश्व के किसी भी क्षेत्र को पहुँचा जा सकता है, उसके द्वारा उसका विनाश किया जा सकता है अतः स्थल या जल की अपेक्षा ऐसे क्षेत्र अधिक सुरक्षित नहीं माने जा सकते। वायु युग में सामाजिक महत्व के मुख्य क्षेत्र उत्तरी ध्रुवों के निकटवर्ती भागों में केन्द्रित माने जाते हैं। ऐसे मानचित्र पर यूरेशिया की आकृति आर्कटिक ध्रुव की ओर गोलाई लिए हुए, और भूमध्यसागर की अर्द्ध-वृत के रूप में दिखाई देती है। उत्तरी अमरीका के दो पुच्छले ग्रीनलैंड और आइसलैंड हे जो वृत्त के चारों ओर फैले हुए है। वायु युग में विश्व के प्रमुख क्षेत्र या विश्व द्वीप के हृदयस्थल रूस, पश्चिमी चीन, कनाडा और आतरिक सयुक्त राज्य के विस्तृत भूभाग है जो एक दूसरे को आर्कटिक वृत्त होते हुए एक दूसरे के आमने सामने पड़ते है। इन्हीं भूमियों पर आधुनिक विश्व का हृदयस्थल है जहाँ तक भूमि या समुद्र पर होकर पहुंचना से कठिनता ही हो सकता है किन्तु वायु मार्गों द्वारा ये सरलता से पहुँचे जा सकते है। इस मुख्य क्षेत्र के चारों ओर एक अराबंधित सा क्षेत्र है जिसकी स्थिति सीमावर्ती है और जिसे विश्व के सीमा प्रदेश (Worl Border Island or Coastlands) कहते है। इनके अतर्गत पश्चिमी यूरोप, भूमध्यसागरीय यूरोप, एशिया के दक्षिणी और पूर्वी छोर, उत्तरी अमरीका का तटीय भाग और कैरीबियन क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है। इनसे दूर बाहर की ओर विश्व का दूसरा क्षेत्र World Fringelands कहलाता है ग्लोब पर स्थित कुछ ऐसे केन्द्र हैं जो वायुयानों द्वारा न केवल World Borderland से ही व्यापार कर सकते हैं वरन् जहाँ से दूरस्थ क्षेत्रों को भी पहुंचा जा सकता है। कराची, कलकत्ता, पोर्ट आर्थर, डाकर, नैटाल, मियामी, बगदाद, पैट्रोपावलोस्क, अलास्का, ग्रीनलैंड, नोव्या जैम्लिया आदि इसके कुछ उदाहरण है।

स्थिति का जलवायु पर प्रभाव

स्थिति का प्रभाव किसी देश की जलवायु पर भी बहुत पड़ता है। जो देश निम्न अक्षांशों में फैले होते हैं उनका जलवायु विषुवत् रेखा अथवा ध्रुवों की निकटता की अपेक्षा बहुत अच्छा होता है। इनकी जलवायु न अधिक गर्म, न अधिक ठंडी तथा न

अधिक सूखी और न अधिक तर होती है। अतः आधुनिक काल की सभ्यता भी इन्हीं अक्षांशों में पाई जाती है। जलवायु की उत्तमता के फलस्वरूप यहाँ के निवासियों की कार्य-क्षमता और उत्पादन शक्ति बहुत होती है। यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका और साइबेरिया के कुछ भाग आज भी सभ्यता में बढ़े-चढ़े हैं। भिन्न-भिन्न सभ्यताओं के आपसी सम्पर्क के कारण ही मानव का विकास होता है। अतः एक देश का दूसरे देश के साथ आवागमन के साधनों द्वारा सम्पर्क हो जाने के कारण न केवल उन देश की सभ्यता में ही वृद्धि होती है, बल्कि उनका व्यापार भी बढ़ जाता है। रूस, इङ्गलैंड अथवा यूरोप के अन्य देश जिनका सम्बन्ध निकटवर्ती देशों से है वे सब उन्नति की चरम सीमा तक पहुँच चुके हैं। जबकि आस्ट्रेलिया अथवा न्यूजीलैंड का सम्पर्क अन्य देशों से ठीक प्रकार न होने के कारण आज भी वहाँ पूरी तरह आर्थिक विकास नहीं होने पाया है।

उत्तम स्थिति और यातायात के साधनों के पूर्ण विकास के कारण ही उपयुक्त जलवायु वाले देशों में विभिन्न प्रकार के फल आदि पैदा किये जा सकते हैं। जैसे कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा और दक्षिणी आस्ट्रेलिया में नारंगियाँ, मध्य अमेरिका में केले, ब्राजील में कहवा और उत्तरी-पूर्वी संयुक्त राज्य में सेब अधिक पैदा किये जाते हैं। मध्य अक्षांशों में उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना और रूस के विस्तृत घास के मैदानों में जो खेती की जाने लगी है उनका मुख्य कारण आवागमन के साधनों की सुविधा के साथ-साथ इन मैदानों की उत्तम स्थिति है।

उत्तम स्थिति के कारण ही जिन स्थानों की प्रसिद्धि पहले नहीं हो सकी थी वे ही स्थान अब आमोद-प्रमोद के स्वास्थ्य-वर्धक स्थान बन गये हैं। उदाहरण के लिए फ्रांस में अटलांटिक सिटी और बियारित्स, अर्जेन्टाइना में माइडेल पलारा, बेल्जियम में आस्टेंड, इङ्गलैंड में ब्राइटन, भारत में पुरी समुद्र-तट के किनारे प्रमुख आमोद-प्रमोद के स्थान बन गये हैं। उष्ण भागों में इसी प्रकार पहाड़ी स्थान हवाखोरी के क्षेत्र बन गये हैं।

किसी देश के व्यापार पर भी उस देश की स्थिति का बड़ा प्रभाव पड़ता है। जो देश विश्व के प्रमुख बाजारों से दूर होते हैं उनका न तो पूरा आर्थिक विकास ही होता है और न उनका व्यापार ही बढ़ पाता है। न्यूजीलैंड, अलास्का और चिली ऐसे ही देशों के उदाहरण हैं। स्वेज नहर के बन जाने के पश्चात् दक्षिणी-अफ्रीका, यूरोप और एशिया के बीच के व्यापारिक मार्गों से बहुत दूर पड़ गया है। इसी कारण केपटाउन का महत्व भी बहुत कम हो गया है किन्तु पोर्ट सईद स्वेज नहर के कारण बहुत उन्नति कर गया है।

वास्तव में कुमारी एलेन के शब्दों में 'स्थिति की तुलना उस तराजू से की जा सकती है जिसका एक पलड़ा जलवायु और उससे सम्बन्धित वनस्पति प्रदर्शित करता है तथा दूसरा पलड़ा उस देश की राजनीतिक स्थिति एवं सभ्यता को बताता है।'

तट-रेखा

संसार के विभिन्न देशों के व्यापार और वहाँ के मनुष्यों के चरित्रों पर तट-रेखा का भी प्रभाव पड़ता है। अफगानिस्तान, आस्ट्रेलिया, हंगरी, बोलिविया, स्विट्जरलैण्ड, नेपाल, भूटान आदि ऐसे देश हैं जिनकी अपनी तट-रेखा नहीं है। अतः इन देशों को अपने व्यापार के लिए तटवर्तीय देशों पर निर्भर रहना पड़ता है। तट-रेखा पर स्थित बन्दरगाहों को प्राप्त करने के लिए शताब्दियों से रूस और जापान अपने निकटवर्ती देशों में युद्ध करते रहे हैं। तट-रेखा का किसी देश की

उन्नति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिन देशों के तट अधिक कटे-फटे हैं वहाँ समुद्र देश के भीतरी भागों तक चला जाता है। इससे न केवल देश का जलवायु ही समान हो जाता है और देश के अधिक से अधिक भागों में वर्षा होती है, बल्कि इन कटे-फटे तटों की समुद्री-तरंगों का वेग मन्द रहने के कारण प्राकृतिक पोताश्रयों का आधिक्य हो जाता है जिससे वहाँ बड़े-बड़े जहाज आकर ठहरते है और उस देश का वैदेशिक व्यापार भी बढ़ जाता है और बन्दरगाह की पृष्ठ-भूमि मे उद्योग-धन्धों की प्रगति होती है। यही नहीं, समुद्री किनारे के कटे-फटे होने के कारण देश के विभिन्न भाग एक दूसरे के निकट आ जाते हैं। ग्रेट-ब्रिटेन और जापान का कोई भी भाग समुद्र-तट से २०० मील से अधिक दूर नही है अत. निर्यात् की जाने वाली वस्तुऐं कम व्यय में ही बन्दरगाह तक ले जाई जाती है और आयात की हुई वस्तुएँ जहाजों द्वारा देश के भीतरी भागों मे सरलतापूर्वक भेजी जा सकती है। इङ्गलैंड, नार्वे, डेन्मार्क, हालैण्ड, बेल्जियम, स्पेन, पुर्तगाल, चिली का दक्षिणी भाग इसी प्रकार के देश हैं जिनका सामुद्रिक-तट बहुत कटा-फटा है। अत निरन्तर समुद्र के सम्पर्क मे रहने के कारण इन देशों के निवासी न केवल निर्भीक, उत्साही और अच्छे नाविक तथा मछुए ही बन गये है बल्कि यहाँ के निवासियों ने नई दुनिया की भी खोज की और अपने उपनिवेश भी स्थापित किये। इनका विदेशी व्यापार भी बहुत बढ़ा-चढ़ा है। भारत की तट-रेखा देश के विस्तार के अनुपात में बहुत ही कम कटी-फटी है। भारत के समुद्र-तट की लम्बाई ३,५३५ मील है अर्थात् यहा प्रति ४०० वर्ग मील पीछे १ मील की तट-रेखा है। भारत का तट बहुत ही कम कटा-फटा छिछला व बालुका मंडित है जहाँ उत्ताल तरंगे नृत्य किया करती है। अत. देश के समुद्र-तट के निकट बडी-बड़ी खाडियाँ, उपकूलों (lagoons) अथवा प्राकृतिक बन्दरगाहो की नितान्त कमी है। पश्चिम मे खभात व कच्छ की खाड़ी और कोचीन तथा मलाबार के उपकूल दक्षिण मे मनार की छिछली खाड़ी और पूर्व बगाल की खाड़ी के ऊपर हुगली का मुहाना है। केवल बम्बई के बन्दरगाह को छोडकर शेष सभी बन्दरगाह मद्रास, विशाखापट्टनम, कलकत्ता, ओखा, काडला और कोजीकोड़ सभी—बनावटी हैं, अत जहाजों को तट से दूर खड़ा रहना पड़ता है। इसी तरह ब्रह्मा, बलूचिस्तान, कनाडा और रूस का उत्तरी भाग अधिक कटा-फटा होते हुए भी इन देशों के आर्थिक विकास मे कोई सहयोग नही दे सका, क्योंकि या तो तटों के पीछे के भाग पहाड़ी अथवा मरुस्थलीय है अथवा वहाँ वर्ष के अधिकाश भागों मे बर्फ जमी रहती है।

(२) भूमि का आकार और बनावट (Land Forms)

भूमि के विभिन्न आकार मानव-जीवन पर बडा प्रभाव डालते है। इन आकारो के अंतर्गत पहाड, पठार और मैदान सम्मिलित किये जाते हैं। भूतल के धरातल पर दृष्टि डालने से ज्ञात होगा कि उसमें स्थान-स्थान पर अनेक छोटी मोटी रचनायें दीख पडती हैं जो या तो प्रवाहित जल, हिम, वायु और लहरो आदि के कारण या इनके द्वारा भराव के कारण बनती है। ऊँचाई के अनुसार धरातल को मुख्यत. निम्न तीन भागों में बाँटा गया है—

१ निम्न स्थल (Low lands)—०' से २,०००' तक
१. उच्च स्थल (High lands)—२,०००' से ६,०००' तक
३. अति उच्च स्थल (Very High land)—६,०००' से अधिक

देश का धरातलीय सगठन ही उसके आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक

दृष्टिकोणो का निर्माण करता है। धरातल की बनावट, मनुष्य के शरीर तथा उसके स्वास्थ्य और कार्य शक्ति पर भी प्रभाव डालती है।

(क) पर्वत और मानव

पर्वतीय प्रदेशो की कुछ विशेषतायें ये हैं —

(१) इन प्रदेशो मे समतल भूमि की अत्यधिक न्यूनता होती है अतः कृषि आदि कार्यों के लिए पर्याप्त भूमि नही मिलती।

(२) पर्वतो की भू-रचना इतनी जटिल होती है कि आवागमन के साधन बनाने मे बड़ी कठिनाई पड़ती है, फलस्वरूप मनुष्यो के विचारो के आदान-प्रदान मे बाधा पड़ती है।

(३) अनेक पर्वतो मे आर्थिक साधन अवश्य पाये जाते है किन्तु उनको प्राप्त करना कठिन होता है क्योकि इनका वितरण असमान होता है।

(४) शीतकाल मे पर्वतो की जलवायु निकटवर्ती मैदानो की अपेक्षा बहुत ही ठंढी रहती है अतः इस मौसम मे कृषि, व्यापार एव अन्य बाहरी क्रिया करना असभव हो जाता है। अनेक ऊँचे भागो मे बर्फ गिरा करता है।

(५) पर्वत समान प्रकार के नही होते, जैसे पश्चिमी और पूर्वी हिमालय के भागो मे भू-रचना एवं भू आकारो मे विभिन्नता पाई जाती है तथा जलवायु में अन्तर होने के कारण वनस्पति आदि मे भी भिन्नता मिलती है।

(६) ऊँचाई निचाइयो मे बडा अतर मिलता है। अत मनुष्य इन प्रदेशो मे पहाडी ढालो का ही अधिक उपयोग करता है। अधिक ऊँचे ढालो मे सदैव बर्फ जमी रहती है। हिम-रेखा की यह ऊँचाई सर्वत्र समान नही है। विषुवत रेखा पर हिमरेखा १५,००० फीट से अधिक ऊँचाई पर मिलती है, किन्तु ऊँचे अक्षांशो मे कम ऊँचाई पर जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होगा —

अक्षांश	हिमरेखा की ऊँचाई
०–१०° उत्तरी	१५,५०० फुट
०–१०° दक्षिणी	१७,४०० "
१०–२०° उत्तरी	१५,५०० "
१०–२०° दक्षिणी	१८,४०० "
२०–३०° उत्तरी	१७,४०० "
३०–३०° दक्षिणी	१६,८०० "
३०–४०° उत्तरी	१४,१०० "
३०–४०° दक्षिणी	६,६०० "

इस हिमरेखा का मानव के उद्योग, उसके बसाव तथा व्यापारिक मार्गों पर बडा प्रभाव पड़ता है।

कुमारी सेम्पल के अनुसार "पर्वतीय ढाल एक प्रयोगशाला है, और स्वयं पर्वत सामाजिक प्राचीनताओ का अजायबघर। ढाल के प्रत्येक भाग पर ताप तथा वर्षा की मात्रा के अनुसार ही मनुष्य अपने कार्यों का प्राकृतिक वातावरण के साथ

? अनुकूलन करता है। इसी स्थानीय अनुकूलन के कारण ही एक बड़े ढाल पर अनेक प्रकार के मानव-समाज अथवा समुदाय पाये जाते हैं। वृष्टि छाया के ढालों पर तथा वर्षा की मात्रा के अभाव में मानव अधिवासों की प्रायः अधिकता नहीं पाई जाती, और वे छोटे-छोटे बिन्दुओं के रूप में इधर-उधर बिखरे दिखाई पड़ते हैं।" यह एक आश्चर्यजनक किन्तु सत्य बात है कि यद्यपि पर्वतीय प्रदेशों में मानव ने भरण-पोषण के लिए अनेक व्यवसाय अपनाये हैं किन्तु फिर भी वह दरिद्र ही पाया जाता है। इसका मुख्य कारण, डा० डेविस के मतानुसार आर्थिक साधनों की कमी या अनुपयोगिता है। इनके अनुसार, "पर्वतीय प्रदेशों के सभी भार्गीक्षिक लाभों को दृष्टिगत रखते हुए यह कहना अधिक समाचीन है कि ये ऊँचे भाग अत्यन्त ही सीमित अवसरों के क्षेत्र हैं केवल उन भागों को छोड़ कर जहां खनिज पदार्थ मिलते हैं। वन-सम्पत्ति समाप्त प्राय हो चुकी है, कृषि अलाभिक होती है और एकान्तता बहुत ही अधिक मिलती है। अतः ये उपयोगिता की दृष्टि से निर्धन या अभाव के प्रदेश (Regions of Scantiness) माने जाते हैं।" [7]

आवागमन के मार्गों के अभाव से पर्वतीय मनुष्यों के स्वभाव, स्वरूप एवं कार्यों में बड़ी भिन्नता मिलती है। व्यापक दृष्टि से ये लोग सरल, हृष्ट-पुष्ट, परिश्रमी तथा विश्वासपात्र होते हैं। साथ ही ये अधिकांशतः निरक्षर, रूढ़ीवादी और अंध-विश्वासी होते हैं। निर्धन होने के कारण वडे झगड़ालू भी होते हैं। वैयक्तिक दृष्टि से एक क्षेत्र और दूसरे क्षेत्र के निवासियों में अंतर पाया जाता है। अफगान बड़े लम्बे-चौड़े और तन्दुरुस्त होते हैं किन्तु भोटिया और गुरखा छोटे कद के। नेपाल के शेरपा जाति के लोग बड़े हृष्ट-पुष्ट और पर्वतारोहण में कुशल होते हैं। स्विटजरलैंड के निवासी आर्थिक दृष्टि से बड़े उन्नतिशील और कुशल कारीगर हैं, जबकि भोटिया और नागा बहुत ही असभ्य और पिछड़े हुए हैं।

पहाड़ और कृषि—पहाड़ी क्षेत्रों में अनेक व्यवसाय अपनाये जाते हैं। समतल भूमि का अभाव होने के कारण खेती के लिए अधिकतर सूर्य का प्रकाश प्राप्त करने वाले ढाल चुने जाते हैं, जहाँ वर्षा की मात्रा भी पर्याप्त हो जाती है। अथवा घाटियों के निचले भाग जहाँ पर्वत-श्रेणियों द्वारा हवा की तीव्रता से बचाव हो जाता है। अतः अधिकांश गांव और खेत इन्हीं भागों में मिलते हैं किन्तु पहाड़ी घाटियों में कई बार हानिकारक पाले पड़ते हैं अतः पहाड़ी ढाल ही कृषि के उपयुक्त होते हैं। इन ढालों पर निश्चित ऊँचाई तक ही खेती सम्भव होती है। उदाहरण के लिए, विषुवत्-रेखीय अक्षांशों पर ३ से १० हजार फीट की ऊँचाई तक, ३०° अक्षांशों पर ८ हजार फीट तक, ४५° अक्षांशों पर ४½ हजार फीट और ५५° अक्षांशों पर केवल ७०० फीट की ऊँचाई तक ही कृषि सम्भव मानी गई है।

इन ढालों पर अत्यन्त प्राचीन कही जाने वाली सरकती हुई या स्थानान्तरित खेती (Shifting or migratory) की जाती है जिसके अंतर्गत किसी क्षेत्र विशेष के ढालों को साफ कर छोटे छोटे खेत बनाये जाते हैं और वर्षा के जल को दीवारें बनाकर रोका जाता है। इन खेतों में केले, मटर, टमाटर, आलू, सब्जियाँ, ज्वार, बाजरा चावल, कोदों आदि बो दिये जाते हैं। खेती प्रायः कुल्हाड़ी (Hoi) से की जाती है। एक स्थान पर दो या तीन वर्ष तक ही खेती की जाती है। यह स्थानान्तर खेती या

---

7. *Davis*, **Earth and Man**, p. 282.

तो स्थायी रूप से बसे लोगों द्वारा की जाती है अथवा उन परिवारों द्वारा जो आज यहाँ तो कल वहाँ रहते है। इस प्रकार की खेती आज भी बोर्नियो, मलाया, ब्रह्मा, लंका, जापान, इडोनेशिया काश्मीर, स्विट्जरलैंड, नेपाल, जावा और उत्तरी इटली में की जाती है।[8]

पहाडी भागों में भूमि के ऊँची नीची होने, मिट्टी के तीव्र गति से कट कर बह जाने, पतली और पथरीली मिट्टी की अधिकता के कारण खेती करने मे बडी कठिनाई पडती है। हा. हंटिंगटन के अनुसार यद्यपि पर्वतों पर मैदानी भागो की अपेक्षा अधिक मिट्टी बनती है किन्तु अधिक कटाव के कारण वहाँ पत्थरो की अधिकता हो जाती है। प्रायः सभी पर्वतों पर यह पत्थर प्रत्येक वर्ष निकल आते हैं।[9] इनमे खेती करना अलाभदायक होता है। पहाडी ढालो पर खेती के स्थानान्तर के मुख्य कारण मिट्टियों का कम गहरा और अनुत्पादक होना, फसलो को बीमारी लग जाना, पशुओं द्वारा फसलो का नष्ट किया जाना और समतल भूमि का अभाव होना है।

पहाड़ और वन-व्यवसाय—पहाडी भागो मे ढालो पर जलवायु तथा ऊँचाई के अनुसार विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं। हिमालय के ढालों पर विषुवत रेखीय वनों से लगाकर कोणधारी वन तक मिलते हैं, किन्तु रॉकीज और आल्पस पर्वतों तथा एडीज पर मुख्यत कोणधारी वनों का साम्राज्य पाया जाता है। इन वनो मे व्यापारिक कार्यों के लिए विभिन्न किस्मों की लकडियाँ प्राप्त की जाती हैं। यहाँ के निवासियों का मुख्य व्यवसाय इन वनो की लकडियाँ काटना, इन्हें बहाकर कारखानों तक लाना आदि है। इन पर आश्रित उद्योग कनाडा मे कागज और लुब्दी बनाना, जापान मे रेशम के कीडे पालना, सयुक्त राज्य अमरीका और पश्चिमी यूरोप मे कागज, दियासलाई, तारपीन का तेल और लुब्दी आदि तैयार करना है।

लकडहारों का जीवन भी अस्थायी होता है। एक क्षेत्र के वन कट जाने पर, *उन्हे अन्यत्र जाना पडता है फलत जनसख्या भी सघन नहीं होती।*

पहाड़ और पशु पालन—पहाड विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों के जन्मदाता होते हैं। साधारणतया ऊँची चोटियो पर वर्फ पडने के कारण किसी प्रकार की वनस्पति नही पाई जाती। किन्तु ज्यो-ज्यो चोटियो से नीचे जाते हैं हल्की वर्षा होने के कारण चारागाह पाये जाते हैं जिनमे भेड़-बकरियाँ पलती है। इनसे नीचे के भागो मे घनी वर्षा हो जाने से हरे-भरे घने जगल पाये जाते है जिनसे मनुष्य के लिए उत्तम प्रकार की इमारती लकडी मिलती है। पहाडो के सबसे निचले ढालो पर पतझड वाले वन और घास पैदा होती है जिनमे असख्य भेड व बकरियाँ और गायें आदि चराई जाती हैं। यही कारण है कि पहाड़ी भागो मे पशु-पालन का धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। आल्पस पर्वत मे, स्विट्जरलैंड और नार्वे, काश्मीर, भूटान आदि मे ग्रीष्मकालीन चारागाह पाये जाने के कारण वहाँ दूध-दही का धन्धा बहुत मुख्य हो गया है। स्थानान्तरण समय ग्रीष्मकाल होता है और लौटने का समय शीतकाल का आरभ। स्थानान्तरण मे घास की मात्रा तथा पहाड़ों की ऊँचाई पशुओं की मात्रा को निर्धारित करती है। मध्य एशिया मे भी पहाड़ी भागों मे पशु बहुत

8. *R. K. Mukerjee*, **Regional Sociolgoy**, pp. 160-161.
9. *E. Huntington*, **Principles of Humon Geography**, p. 215.

चराये जाते हैं। आल्पस पर्वत पर केवल ६ या ७ सप्ताह तक ग्रीष्म-कालीन चरागाह उपयोग मे आ सकते हैं। किन्तु नार्वे में पशुचारण दो महीने तक हो सकता है। शीतकाल[10] मे पशु पहाडी चरागाहो द्वारा घाटियों मे ले जाये जाते है। वर्तमान समय मे दूध देने वाले पशुओं को अब ऋतु के अनुसार बार-बार पहाडों से न उतारा जाता है और न चढाया जाता है, वरन् उन्हे पर्वतीय क्षेत्रो मे ही निश्चित ऊँचाई पर रखा जाता है जिससे पशुओ को स्थानान्तर मे अधिक दूरी पार नहीं करनी पडती।[11] पहाडो के दक्षिणी ढाल उत्तरी ढालो की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होते है क्योकि इन्हीं ढालो पर सूर्य की पर्याप्त किरणें और वर्षा गिरती है अतः मानव की आर्थिक क्रियायें इन्ही भागों मे होती हैं। उत्तरी ढाल प्राय. निर्जन ही होते हैं।

पहाड और जलवायु—पहाड किसी देश के जलवायु पर भी अपना प्रभाव डालते हैं। पहाड़ो के कारण किसी देश का जलवायु न केवल ठंडा ही हो जाता है किन्तु वहाँ वर्षा भी बहुत होती है क्योकि जो भाप भरी हवायें पहाडों के निकट आती हैं उन्हें पार करने के लिये इन्हे विवशत ऊँचा उठना पड़ता है और इस क्रिया मे हवा नम होकर अपनी सारी तरी वर्षा के रूप मे वहाँ छोड़ देती है। कहा जाता है कि भारत मे हिमालय पर्वत न होता तो सारा उत्तरी भारत सहारा की तरह मरुस्थल होता। पहाडों के वायु-मार्गी की दिशा (wind ward) मे उसकी विपरीत दिशा (lee-ward) की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है तथा जो भाग पहाड़ों के निकट होते हैं वहाँ पहाड़ो से दूर होने वाले स्थानो की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है।

ग्रीष्म-काल मे अधिक ठंडे होने के कारण पहाडी भागो मे कई उत्तम हवाखोरी के स्थान बन गये है। भारत मे इस प्रकार के स्थानों की अधिकता है जहाँ प्रति वर्ष मैदानो के निवासी गर्मी मे प्रचण्ड और तीव्र गर्मी से बचने के लिये इन स्थानों को चले जाते है। पहाडी भागो की ठढी और स्वास्थ्यवर्धक जलवायु, धूप की अधिकता, सुन्दर प्राकृतिक छवि, एकाकीपन और घर के बाहर खेल-कूद एव भ्रमण का अवसर मिलता है। स्विट्जरलैंड और काश्मीर आज इसी कारण विश्व के आकर्षण केन्द्र बने हुये हैं।

पहाड न केवल वर्षा ही देते है, बल्कि वे किसी देश को ठढी हवाओ से भी बचाते हैं। उत्तरी रूस की ओर से आने वाली ठढी हवाएँ हिमालय पर्वत के कारण भारत मे नही जा सकती और इसीलिए भारत एक गर्म देश रह जाता है। जबकि उत्तरी कनाडा से आने वाली ठंढी हवायें दक्षिणी सयुक्त-राज्य अमेरिका तक शीतकाल मे चली जाती हैं इसलिये वहाँ का तापक्रम बहुत नीचा हो जाता है। अगर रॉकी और एन्डीज पर्वत उत्तर से दक्षिण होने की अपेक्षा पूर्व से पश्चिम की ओर फैले होते तो उत्तरी दक्षिणी अमेरिका का जलवायु भी भारत ही की तरह सुन्दर होता।

पहाड देश को बाहरी आक्रमण से भी बचाते है। भारत के उत्तरी और पूर्वी भागों पर अवेध्य पर्वतों के कारण ही विदेशी भारत मे न आ सके। परन्तु, उत्तरी-पश्चिमी भागो मे खैबर, बोलन आदि दर्रों के कारण सदैव ही विदेशी आक्रमणकारी भारत मे आते रहे हैं।

---

10. *B. Winchester*, **The Swiss Republic.** p. 307.
11. *J. Brunhes*, **Human Gergrapluy.** p. 141.

पहाड़ और जनसंख्या—पहाड़ मैदान की अपेक्षा कम बसे होते हैं। विश्व के बहुत ही थोड़े नगर पहाड़ी भागों में बसे हैं। यही कारण है कि उच्च हिमालय, आल्पस, रॉकी या एण्डीज पर्वत अथवा मध्य एशिया के पहाड़ी भाग मानव से शून्य हैं जबकि गंगा, राइन अथवा सैंट लारेंस के मैदान मानव-निवास से परिपूर्ण हैं। दक्षिणी नार्वे का धरातल पहाड़ी होने के कारण समुद्री जलवायु के होते हुए भी बहुत ही कम आबाद है। यहाँ प्रति वर्ग मील २५ से भी कम व्यक्ति निवास करते हैं। अतः प्रत्यक्ष रूप से धरातल की बनावट किसी प्रदेश की आर्थिक उन्नति की सीमा को निर्धारित करती है। ऊँचे पहाड़ों से भरे हुए प्रदेश की आर्थिक उन्नति अधिक नहीं हो सकती क्योंकि उपजाऊ भूमि के अभाव, पथरीली ढालू भूमि और प्रतिकूल जलवायु के कारण न तो यहाँ खेती-बारी ही अधिक हो सकती है और न उद्योग-धन्धों की ही उन्नति हो सकती है और न मार्गों की ही सुविधा है। यही कारण है कि ऐसे प्रदेशों में आबादी घनी नहीं होती। पहाड़ी भागों के घर छोटे और सीधे-सादे होते हैं। ये प्रायः पक्के तथा पत्थरों और लकड़ियों के बने होते हैं। हिमालय के कांगड़ा, कुमायूँ और गढ़वाल जिलों में गाँवों का रूप बहुत छितरा हुआ होता है। ये गाँव अधिकतर घाटियों में पाये जाते हैं क्योंकि वहाँ थोड़ी भी समतल भूमि मिल जाने पर उसमें सिंचाई कर खेती की जा सकती है।[१२] चीन और तिब्बत में इस प्रकार छितरे हुए गाँव बहुत पाये जाते हैं। जापान में जनसंख्या अधिक होने के कारण पहाड़ों के ढालों पर खेती की जाती है—क्योंकि कुल भूमि का केवल १५.७% भाग खेती के योग्य है।[१३] साधारणतया जन-संख्या का जमाव सँकरी घाटियों अथवा नदियों के किनारे होता है। अन्य निवास स्थान दर्रों के निकट, जहाँ बाहरी भागों से सम्पर्क बना रहता है खनिज केन्द्रों पर स्थापित होते हैं। युद्ध की दृष्टि से कई स्थान महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर लेते हैं। पहाड़ी प्रदेशों के निवासियों के मुख्य धन्धे पशु-पालन, खाने खोदना, लकड़ी चीरना आदि हैं जिन पर अधिक आबादी निर्भर नहीं रह सकती। जनसंख्या का जमाव सभी पर्वतीय भागों में समान नहीं होता। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अधिकतर निवास ऊँचाई पर ही मिलते हैं। उदाहरण के लिए मध्य अमरीका, दक्षिणी अमरीका और मैक्सिको में अधिकांश जनसंख्या २००० मीटर से ऊपर मिलती है। इसी प्रकार पीरू और बोलीविया में तीन-चौथाई जनसंख्या का ११ हजार फीट की ऊँचाई पर रहती है। इसके विपरीत समशीतोष्ण कटिबंधीय पहाड़ी भागों में जनसंख्या अधिकतर निचले भागों में ही पाई जाती है क्योंकि थोड़ी सी ऊँचाई पर ही जलवायु रहने योग्य नहीं मिलता। यहाँ बहुधा मैदानी और पहाड़ी क्षेत्र के बीच के भागों में ही अधिवास पाये जाते हैं।

पहाड़ी भागों में एक विशेष बात देखने को मिलती है। यहाँ अधिकांश मनुष्य मौसम के अनुसार स्थानान्तरण करते हैं। ग्रीष्म में अधिक ऊँचे भागों पर और शीतकाल में निचले भागों में चले जाते हैं। अतः जनसंख्या का जमाव स्थायी नहीं होता। यह स्थानान्तरण न केवल दैनिक ही होता है, वरन् अनेकों भागों में मौसमी भी। प्रो० ब्रून्स के अनुसार मौसमी स्थानान्तर के दो मुख्य कारण हैं (१) मनुष्यों की घुमक्कड़ प्रवृत्ति (migratory habit) और जलवायु में परिवर्तन।[१४] स्विट-

12. *Baden Powell*, **The Indian Village Community**, pp. 57-58.

13. *A. Stead*, **Japan by Japanese**, p. 425.

14. *J. Brunhes*, **Op. Cit**, p. 144.

जरलैंड में आल्पस पर्वतों पर वर्ष में चार, एटलस पर्वत पर कहीं चार और कहीं-कहीं दो स्थानान्तरण होते हैं। 33760

पहाड़ और सामाजिक जीवन—पहाड़ी क्षेत्रों में आज भी प्राचीन जन-जातियाँ पाई जाती हैं। आने-जाने के मार्गों की कठिनाइयों तथा पहाड़ों में बने मार्गों और पगडंडियों से विदेशियों के अपरिचित होने के कारण पहाड़ों के भीतरी भागों तक पहुँचना बहुत असम्भव है। अतः पहाड़ी निवासियों के जीवन पर न तो बाहरी आक्रमण का कोई प्रभाव ही पड़ता है और न उनके रीति-रिवाज और भाषा आदि पर ही कोई प्रभाव पड़ता है। भारत के छोटा-नागपुर के कोल, संथाल, हो, भील और नीलगिरि की टोडा आदि जातियों के आचार-विचार, धर्म, रीति-रिवाज, वेष-भूषा आदि सभी प्राचीन ढंग के हैं। समय का उनके जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। यूरोप में कार्नवाल और वेल्स की केल्ट जाति, फ्रांस की ब्रिटेन, लंका की वेद्द, फिलीपाईन की एटाज और मलाया की समांग जाति इसी श्रेणी की है। जिन पहाड़ी भागों में समीपवर्ती मैदानों की जातियाँ रहती हैं वहाँ भी पहाड़ियों ने उन पर अपना प्रभाव डाला है। पहाड़ी भागों में अजीब सामाजिक रूप मिलते हैं। उदाहरणार्थ अपेलेशियन और ओजार्क के हिलबिली (Hill billy) या दरिद्र गोरे, स्कॉटलैंड के हाइलैण्डर (Highland-r), दक्षिणी कैरोलिना के सेंडहिलर (Sandhiller) ज्यार्जिया के क्रेकर (Craker) और चैकोस्लोवाकिया के स्लोवाक (Slovak) प्रायः पिछड़े हुए और रूढ़िवादी होते हैं। इसलिए आज भी पहाड़ी क्षेत्रों में अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, विदेशियों के प्रति अविश्वास की भावना, व्यक्तिवादी और स्वतन्त्रता-प्रेमी, तीव्र धर्मान्धता और अपने निवास स्थान और परिवार के प्रति अटूट प्रेम पाया जाता है। निरन्तर परिस्थितियों से लड़ते रहने के कारण वे बड़े वीर, साहसी, परिश्रमी, उद्योगी, ईमानदार और मितव्ययी होते हैं।[15] इनके पुट्ठे और पाँव बड़े मजबूत, छाती चौड़ी और सुन्दर स्वास्थ्य होता है। इनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य "To have and to hold" रहता है। संकुचित आर्थिक आधार होने के कारण ये बड़े गरीब होते हैं। इनकी दरिद्रता ही इन्हें झगड़ालू और चिड़चिड़ा बना देती है। परिवार के प्रति इनका अगाध स्नेह होता है अतः यदि कोई किसी की हत्या कर दे तो उससे बदला लेना अपना कर्त्तव्य मानते हैं। वास्तव में सभ्य समाज से विलग होने के कारण तथा आधुनिक परिस्थितियों से अपरिचित रहने के कारण वे बड़े अज्ञानी और अपढ़ रह जाते हैं। फलतः न तो उनमें किसी प्रकार की उन्नति ही हो सकती है और न क्षेत्रों का व्यापार अथवा वाणिज्य ही बढ़ सकता है।

पहाड़ और खनिज-पदार्थ—पहाड़ों का सबसे अधिक लाभ इस बात में है कि उनकी चट्टानों से अनेक प्रकार के बहुमूल्य खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं। अतः पहाड़ी भागों में बहुत समय से खानें खोदना एक मुख्य व्यवसाय हो गया है। अत्यन्त प्राचीन काल में ही मानव ने पर्वतों से खनिज पदार्थ प्राप्त करने का प्रयास किया है। इसका एक उदाहरण मिश्र के शासकों द्वारा भेजी गई खान खोदने वाली टुकड़ियों से मिलता है जिन्होंने सिनाई पहाड़ियों पर तांबे की खुदाई सर्व प्रथम की। यह खानें सबसे प्राचीन समझी जाती है और इनमें आज भी प्राचीन सुरंगें मिलती हैं जो इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि इनसे किसी समय तांबा निकाला जाता था।[16]

15. *E. Sample*, **Op. Cit.**, p. 601
16. *J. H. Breasted*, **The Conquest of Civilization**, p. 30.

भारत के दक्षिणी पठार पर मैंगनीज, लोहा, सोना आदि पदार्थ; दक्षिणी अफ्रीका और ब्राजील मे सोना तथा हीरा और बिहार-उडीसा मे कोयला आदि पाये जाते है। रूस के यूराल, अमरीका के रॉकी और ऐंडीज पर्वतों मे विशाल खनिज भडार मिलते है। टर्की, मैक्सिको आदि मे तेल भडार पाये जाते हैं। इन पदार्थों से औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिलता है तथा देश का व्यापार बढता है। शीतोष्ण प्रदेश मे पहाडो से निकलने वाले झरनों से जल-विद्युत् शक्ति का विकास भी किया जाता है। नार्वे, स्वीडेन, जापान, कनाडा, स्पेन, स्विट्जरलैंड, इटली तथा दक्षिणी भारत मे ऐसे ही अनेक जल-प्रपातो मे जल-विद्युत शक्ति प्राप्त हो गई है जिससे लकडी चीरने, लुग्दी व कागज बनाने, एल्यूमीनियम तथा हवा से नाइट्रोजन प्राप्त करने का उद्योग, सूती, रेशमी व ऊनी कपडो के कारखाने चलाये जाते हैं।

पहाड़ और उद्योग—यातायात के मार्गो की असुविधा के कारण पहाडी भागो मे उद्योग और यातायात का पूर्ण विकास नही होता। पहाडी जातियाँ केवल ऐसा सामान तैयार करती हैं जो मूल्य मे अधिक परन्तु वजन मे हल्की होती है। यही कारण है कि स्विट्जरलैंड के निवासी घडियाँ बनाने, फीता बनाने, लकडी पर खुदाई का काम करने और लोहे और तांबे पर नक्काशी का कार्य करने, दवाइयाँ और बिजली का सामान बनाने मे बडे चतुर हो गये है।[17] काश्मीर में शाल-दुशाले पशमीने और अन्य ऊनी माल तथा लकडी पर खुदाई का काम, चाँदी ताबे के बर्तनो पर मीनाकारी और गलीचो पर बेल-बूटे आदि का काम अच्छा होता है। नार्वे और स्वीडेन मे भी लकडी की खुदाई का काम अच्छा किया जाता है।

ज्यूरा और ब्लैक फारेस्ट में हर प्रकार की घडियाँ बनाई जाती है। पर्वतीय वातावरण में प्रकृति की क्रूरता स्पष्ट है। अत उद्योगशील मनुष्य जीविकोपार्जन के लिये नाना प्रकार के साधनो की ओर हाथ बढाता है। उदाहरण के लिए, एक अध्यापक बढईगीरी का काम भी कर लेता है, वकील लुहारी का, मन्त्री एक राज का और सभी छोटे-छोटे भूमि के टुकडो पर खेती कर लेते है। धन और समय दोनो के अभाव के कारण अपने मस्तिष्क का पूर्ण रूप मे विकास नही कर पाते अतः समाज की यथोचित सेवा करने मे असमर्थ रहते है।

पहाड और यातायात के साधन—पर्वत यातायात एवं सदेशवाहन के साधनों के विकास में बाधा डालते है क्योंकि समतल भूमि के अभाव मे सडकें अथवा रेलें आदि नही बनाई जा सकती और यदि बनाई भी जायें तो उनके निर्माण में बडा व्यय पडता हैं। अत यह प्रदेश उद्योग और व्यापार के विकास में अति सीमित और पिछडे हुए होते है। माल ढोने के लिए हिमालय पर्वतो में बैल, याक, बकरियाँ, खच्चर, गदहे, एण्डीज और रॉकी पर्वतो पर लामा और अल्पाका अथवा कई क्षेत्रो में मनुष्यों को ही बोझा ढोने में हाथ बँटाना पडता है। फिर भी मनुष्य ने पहाडो द्वारा प्रस्तुत की गई बाधाओं को पार करके उनमें सुरगे खोदकर रेल-मार्ग और मोटर मार्ग निकाल लिए हैं। इटली के आल्पस पर्वत में होकर स्विट्जरलैंड को जाने के लिए ६ बडी-बडी सुरगें हैं यथा **सिम्पलन, सेंटगोथार्ड, ब्रैनर और माउंट सेनिस** आदि जिनमें होकर बिजली की रेलें दौड़ा करती हैं। इन्ही रेल-मार्गों द्वारा स्विट्जरलैंड की इतनी उन्नति हुई है। इसी प्रकार पूर्वी सयुक्त-राज्य को जाने के लिए पश्चिमी रॉकी पर्वत

---

17. *E. F. Knight,* **Where Three Empires Meet, p. 40.**

में किंग्स हार्स पास और कैलगरी दर्रों में होकर रेल-मार्ग निकाले गये हैं। भारत में पश्चिमी घाट में थालघाट और भोरघाट दर्रों द्वारा उत्तर और दक्षिण तथा उदयपुर और जोधपुर डिवीजन के बीच पीपलीघाट के दर्रों में होकर रेल-मार्ग बनाये गये है जिनसे आना-जाना सुलभ हो गया है।

(ख) पठार और मानव जीवन

पठार साधारणत अपने पास वाले भूभागों से ऊँचे होते हैं। इनमें समतल मैदानी ऊँचे भाग का स्थान पहाडी भागो से बहुत अधिक होता है। पठारो में नदियाँ गहरी घाटियाँ बनाकर बहती हैं तथा उनकी चट्टानें कठोर और कटी-फटी होती हैं। इनकी भूमि मैदानों की तरह उपजाऊ नही होती।

पुराने पठार सख्त चट्टानो के बने होते हैं। ऋतु परिवर्तन से उनके धरातल पर कमजोर मिट्टी मिलती है। ऐसी ऊँचाई पर पठार खेती के अयोग्य मिट्टी वाले तथा मनुष्यो के कार्य करने के अयोग्य होते हैं। लेकिन ऐसे पठार जहाँ ज्वालामुखियो के उद्गार से लावा नाम की उपजाऊ मिट्टी बिछा दी गई है वे पठार खेती तथा मानव जीवन के उपयोगी बन गये हैं। ऐसे पठारो में फ्रास का मध्य पठार और दक्षिणी भारत के पठार की उपजाऊ और काली मिट्टी रुई उपजाने के लिये उपयोगी है। पुराने पठारो में अच्छे खनिज-पदार्थ पाये जाते है—जैसे मध्य प्रदेश, पश्चिमी अफ्रीका और ब्राजील में मैंगनीज; कनाडा और पश्चिमी आस्ट्रेलिया में सोना, दक्षिणी अफ्रीका में ताँबा और हीरे। यूरोप के पठारी भाग में भी सोना और कोयला जैसे उपयोगी खनिज पाये जाते हैं जिनसे उनके पास अच्छे कल-कारखाने स्थापित किये गये है।

उष्ण कटिबन्ध मे स्थित पठारो पर अर्द्ध-उष्ण अथवा शीतोष्ण और अर्द्ध-शीतोष्ण जलवायु मिलती है। अत यहाँ की मानवी दशायें गर्म भागो से अच्छी होती है। बोलीविया और मैक्सिको मे है जनसंख्या ऊँची भूमि पर रहती है। ग्वाटेमाला कॉस्टारीका, ब्राजील और कोलंबिया के अधिकाश भागो में भी यही दशा पाई जाती है। उष्ण कटिबन्धीय अमरीका में भी पठारो पर गोरी जातियाँ रहती है। किन्तु अनातोलिया, ईरान, स्पेन के मैसेटा और दक्षिणी अफ्रीका के पठारो पर जनसंख्या कम मिलती हैं। यहाँ केवल पशुपालन का धन्धा ही किया जाता है। घास अधिक होने के कारण लाखो भेडें पाली जाती है। मध्य अक्षाशो में पठारो पर वातावरण मानव निवास के लिये अनुपयुक्त है। यहाँ ताप इतना कम है कि जीवन की उच्चतम दशाओं की प्राप्ति भी कठिन होती है। तिब्बत का पठार इसका मुख्य उदाहरण है। यहाँ के निवासी या तो चरवाहे हैं या गुफाओ और मठो में रहने वाले लामा लोग है।

आवागमन और यातायात की कमी सामाजिक आदान-प्रदान में बाधा उपस्थित करती है। अत पठारो के अधिकाश भागो में शुद्ध जातीयता और सामाजिक एकरूपता अक्षुण्ण बनी रहती है। स्पेन के मैसेटा पठार पर स्पेन के लोगो का शुद्ध तत्व पाया जाता है। छोटा नागपुर के पठार पर भी संथाल जातियो और भीलो में शुद्ध द्रविड तत्व मिलता है। बौद्ध धर्म का जन्म यद्यपि भारत के मैदानो में हुआ किन्तु अब वह अपने प्राचीन रूप में तिब्बत के ऊँचे पठार पर ही अधिक मिलता है। अफ्रीका के पठारों पर एबीसीनिया के प्राचीन गिरजाघर अपने विकृत रूप में अब भी मौजूद है जिसकी भावनायें वहाँ के लोगो मे प्रबल हैं। अमरीका में मौरमोन्जिम धर्म स्नेक नदी और ग्रेट बेसिन के पठारो में अब भी उन्नत है।

आर्थिक कार्य कलापो के लिये पठार अधिक उपयोगी नही होते क्योंकि यहाँ

प्राकृतिक साधनो का अभाव पाया जाता है। पठारों पर वर्षा का अभाव होने से न केवल कृषि करने मे कठिनाई ही पडती है वरन् वन-प्रदेश भी उत्तम प्रकार के नही होते। उष्ण कटिबन्धीय पठारो पर अवश्य उपयुक्त अवस्थाओ मे गेहूँ तथा कहवा पैदा किया जाता है।

(ग) मैदान और मानव

मैदान भूतल के निचले और समतल भाग होते हैं जिनका विस्तार काफी बडा होता है। ये सभी अक्षांशो और आकारो के मिलते है। इनकी स्थिति महाद्वीपीय भागों मे अथवा समुद्रतटीय भागो मे या पहाडी भागो मे होती है। ये मैदान नदियो द्वारा, हिमानियो द्वारा अथवा झीलो के पट जाने से बनते हैं। यह वास्तविक तथ्य है कि मैदान, जलवायु, मिट्टी, भू-आकार, प्राकृतिक-सम्पदा आदि बातो मे एक दूसरे से बहुत भिन्न होते हैं इसीलिए विभिन्न भागो मे उनका उपयोग समान रूप से नही किया जाता है।

मैदानो का आर्थिक विकास सबसे अधिक होता है क्योकि इनमे मनुष्यों को निम्नलिखित सुविधाये प्राप्त होती है—

(१) समतल भूमि पर यातायात के साधनो का—विशेषतः सडकों, रेलमार्गों और नदियो का—उपयोग सरलता से किया जा सकता है।

(२) उपजाऊ मुलायम मिट्टी होने के कारण मैदान विश्व के अन्न भण्डार (Graneries) बन गये हैं। जहाँ कहीं वर्षा जल पर्याप्त नही है वहाँ सस्ते मूल्य पर सिंचाई के साधन उपलब्ध कर कृषि विकास किया जा सकता है।

(३) मैदानो मे मुख्यतः उद्योग धधो का पूर्ण विकास होता है।

मैदान और जनसख्या का वितरण—भूमि की प्राकृतिक बनावट का भी जन-सख्या के वितरण पर बडा प्रभाव पडता है। यह बात इसी से सिद्ध होती है कि सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या का ९/१० भाग भूमि के उन प्रदेशो मे निवास करता है, जो साधारणत समुद्र-तल से २,००० फुट से भी कम ऊँचे हैं। मैदानो मे जीवन-निर्वाह की सुविधाये अधिक पाई जाती है। विस्तृत भूतल सपाट होने के कारण आवागमन के मार्गो की सुगमता और कृषि, पशु-पालन अथवा औद्योगिक प्रयत्नो के करने की सुविधाओ के कारण मैदानो मे जन-सख्या का जमाव घना होता है। यही कारण है कि प्राचीन काल से ही नदियो के मैदानो—दजला, फरात, गगा, सिन्धु, यॉगटीसी-क्याँग, नील आदि नदियो के मैदानों मे जनसख्या अधिक पाई जाती है। यहाँ का मुख्य व्यवसाय खेती करना रहा है। इन्ही प्रदेशो मे सभ्यता का जन्म हुआ और यही वह फली-फूली और क्रमश विश्व के अन्य भागों मे फैली। वर्तमान समय मे प्राय सभी बडे-बडे नगर, औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्र जो वास्तव में घनी आबादी के जमाव हैं, मैदानो मे ही स्थित है जब कि उच्च पर्वतीय प्रदेश बिल्कुल निर्जन है।

भूमि की उर्वरा-शक्ति किसी स्थान विशेष पर जनसख्या को आकर्षित करती है। जिन भागो मे भूमि उपजाऊ होती है, वहाँ मनुष्य खेती करके अपना जीवन-निर्वाह करते है। किसी स्थान मे खेती के आरम्भ होते ही वहाँ की जन-संख्या बढने लगती है, क्योंकि यह उद्यम बहुत ही सरल और उपादेय हुआ करता है। इसके द्वारा थोडी ही मेहनत से सरलता पूर्वक जीवन-निर्वाह हो सकता है। जितनी भूमि एक गाय के निर्वाह के लिए आवश्यक है उतनी भूमि पर अन्न उत्पन्न करने से ८ मनुष्यो का पालन हो सकता है। अतएव प्रति वर्गमील भूमि पर खेती करके अधिक मनुष्य निर्वाह कर सकते

हैं। किसान को अपनी भूमि से इतना निकट का सम्बन्ध होता है कि वह अपनी भूमि छोड़कर अन्यत्र नहीं जा सकता। खेती-बारी के लिए उपजाऊ भूमि, यथेष्ट जल और गर्मी की आवश्यकता होती है। अस्तु, जिन प्रदेशों में ये तीनों बातें पाई जाती हैं वहाँ खेती-बारी खूब हो सकती है और परिणामतः वहाँ जनसंख्या का जमाव भी अधिक होता है। यही कारण है कि उपजाऊ भूमि वाले नदियों के विस्तृत मैदानों तथा भारत का सिन्धु-गंगा का मैदान, समुद्र-तटीय मैदानों, चीन में याँगटीसीक्याँग का बेसिन मिश्र में नील की घाटी आदि भागों में मध्य एशियाई पर्वतों अथवा अफ्रीका के पहाड़ों से लाई गई उपजाऊ मिट्टी के जम जाने से तथा मानसूनी जलवायु के कारण पर्याप्त गर्मी और पानी की उपलब्धता होने के कारण जनसंख्या का विस्तार बहुत ही अधिक पाया जाता है। भारत, चीन तथा जापान के उपजाऊ प्रदेशों में क्रमशः ३१२, ५०० और ३०० मनुष्य प्रति वर्गमील में पाये जाते हैं। भूमि की इस उर्वरा शक्ति के कारण ही सिन्धु-गंगा के मैदानों में ४० करोड़, जावा में १.५ करोड़, और थाईलैंड-इण्डोचीन में १ में १.५ करोड़ मनुष्य तक रहते हैं। यहाँ कई भागों में तो प्रति वर्गमील पीछे १,००० से २,००० तक व्यक्ति रहते हैं। पूर्वी बंगाल में जनसंख्या का घनत्व ६००से १,००० और ग्रामीण चीन में ६०० से ८०० व्यक्ति प्रति वर्गमील का है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के विस्तृत मैदानों का विशेषकर हालैंड, बेल्जियम, डेन्मार्क, जर्मनी और रूस के मैदानों का भी यही हाल है। उत्तरी अमेरिका में वैज्ञानिक रीति की खेती, बड़े-बड़े कल-कारखाने, व्यापार और घनी आबादी के क्षेत्र, मिसीसिपी के मैदान, एटलान्टिक तटीय मैदान और महाद्वीपीय तटीय मैदानों में ही स्थित है। वास्तव में दक्षिणी-पूर्वी एशिया के मानसूनी प्रदेश और यूरोप के शीतोष्ण खण्डों में विश्व की ⅓ भूमि पर सम्पूर्ण जन-संख्या का ⅔ भाग पाया जाता है। साथ ही यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि कृषक जातियों को शिकारी तथा पशु चराने वाली जातियों की भाँति भोजन के लिए प्रतिदिन की दौड़-धूप नहीं करनी पड़ती। इस कारण ये जातियाँ कृषि-प्रधान देशों में अवकाश का समय शिक्षा, साहित्य, कला तथा अन्य विद्याओं में व्यतीत करती हैं।

मैदान और मानव की सभ्यता—आदि काल से ही मैदान सभ्यता के केन्द्र रहे हैं। विस्तृत मैदानों में सभ्यता का विकास होता है जिससे मानव की भावनायें परिष्कृत और विशाल होती हैं किन्तु पहाड़ी भागों में एक छोटे देश की सभ्यता ठूँठ पेड़ की भाँति ही रह जाती है जिसमें न पत्तियाँ होती हैं न फूल और न फल। मैदानों में अनेक जातियों के मिश्रण से विचारों में विशालता आती है। मानव मुख्यतः दयालु, अहिंसक और परोपकारी बन जाता है। भारत की सभ्यता बहुत प्राचीन है। इसका जन्म गंगा, सिन्धु के किनारे प्राचीन आर्यों द्वारा हुआ। इसी प्रकार चीन की सभ्यता का केन्द्र ह्वीहो नदी की घाटी और मिश्र की सभ्यता का स्रोत नील नदी की घाटी था। यह सभी घाटियाँ चारों ओर पर्वतों से घिरी थीं। अतः बहुत काल तक विदेशी आक्रमणकारियों का इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सका। इस प्राचीन सभ्यता में मनुष्य खेती द्वारा भरण-पोषण करके शेष समय दर्शन शास्त्र के अध्ययन, उसके मनन और अन्य बातों के सोचने में व्यतीत करता था। उसकी आवश्यकतायें सीमित थीं और सरलतापूर्वक सन्तुष्ट भी हो जाती थीं। किन्तु आधुनिक सभ्यता में इन बातों का कोई स्थान नहीं। आज की सभ्यता भौतिक सभ्यता है क्योंकि आज के मानव की आवश्यकतायें असीम हैं और उनमें से प्रत्येक का पूरा करना भी बड़ा कठिन है। जिस घाटी अथवा प्रदेश में होकर नदियाँ बहती हैं उसे वे धनवान और समृद्धिशाली

बना देती है। वर्तमान भौतिक सभ्यता का जन्म-स्थान पश्चिमी यूरोप का वह निचला भाग है, जिसे नदियों ने बनाया है।

मैदान और मानव के व्यवसाय—मैदानों में जलवायु और मिट्टी के अनुसार अनेक प्रकार के व्यवसाय किये जाते हैं। जहाँ उपयुक्त जलवायु और उपजाऊ मिट्टी मिल जाती है, वे मैदान कृषि के प्रधान क्षेत्र बन जाते हैं। गंगा, ह्वांगो, सिंधु, नील दजला, फरात और मिसीसिपी नदियाँ इसके उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इनमें कृषि स्थायी रूप से की जाती है। गंगा और सिंधु के मैदानों में गेहूँ, चावल, तिलहन, गन्ना, कपास, ज्वार-बाजरा तथा तम्बाकू बहुत पैदा होता है। ह्वांगो की घाटी में चावल, सोयाफली, नील की घाटी में कपास, गेहूँ, गन्ना, तम्बाकू और मिसीसिपी के मैदान में कपास, रुई, मक्कई विस्तृत पैमाने पर पैदा की जाती है। किंतु साइबेरिया के निचले भू-भाग और अमेजन की घाटी दलदली भूमि और अत्यधिक सर्दी तथा गरमी के कारण कृषि कार्यों के लिए अनुपयुक्त है। कृषि की दृष्टि से मिसीसिपी के मैदान अधिक महत्वपूर्ण हैं। पहले यहाँ पशु पालन तथा बिसन भैंसों का शिकार ही किया जाता था किंतु अब इनमें खाद्यान्न, उत्पादन और वैज्ञानिक ढंगों से पशु-पालन किया जाता है। नदियों द्वारा सिंचाई की जाकर एक बहुत बड़े क्षेत्र को उत्पादक बनाया जाता है। इसी कारण भारत को **गंगा का दान**, मिश्र को **नील का दान**, और पाकिस्तान को **सिंधु नदी का दान** कहा जाता है। किन्तु कभी कभी ये नदियाँ बाढ़ के समय अपने निकटवर्ती क्षेत्रों में बड़ा विनाशकारी, दृश्य उपस्थित कर देती हैं। वर्षाऋतु में भारत में ब्रह्मपुत्र, गंगा, कोसी, दामोदर, महानदी, गोदावरी, जमुना, चीन में ह्वांगो और अमरीका में मिसीसिपी नदियाँ ऐसे ही दृश्य उपस्थित कर देती हैं जिनसे अपार धन-जन की हानि होती है। अतएव, नदियों पर अब बाँध बनाकर इनके जल को नियंत्रित किया जा रहा है।

तटीय मैदानों में जल के एकत्रित होते रहने तथा जलप्रवाह के ठीक न होने के कारण दलदल बन जाते हैं। ऐसे भागों में न केवल मिट्टियाँ खारी जलयुक्त होती हैं वरन मैंग्रोव-प्रभृति वन मिलते हैं तथा जनसंख्या का अभाव होता है। किंतु अब मानव ने इन प्रदेशों के दलदलों को वैज्ञानिक ढंगों से सुधारने का प्रयत्न किया है। बेल्जियम और हालैंड में इस प्रकार के प्रयास बड़े सफल हुए हैं। नीदरलैंड्स में तीन-चौथाई क्षेत्र समुद्र के धरातल से भी नीचा है अतः अनेक बार लहरों के साथ समुद्र का जल भूमि की ओर बढ़ आता था। राइन, म्यूज, तथा अन्य छोटी नदियों के डेल्टों में दलदली भूमि का आधिक्य होने से कृषि और अधिवास के लिए अनुपयुक्त स्थिति थी। अतः इस भूमि का पुनरुद्धार करने का कार्य आरम्भ किया गया। इसके अंतर्गत निचले भागों से समुद्री जल को हटाया गया है। इसके लिए तटीय भागों में बाँध बनाने का कार्य १० वीं शताब्दी से आरम्भ किया गया है। किंतु सबसे महत्वपूर्ण योजना ज्वीडरजी को सुखाने की है। इसके अंतर्गत ऊपरी भाग में बाँध बनाया गया है। इसकी लम्बाई लगभग ३०० फीट है।

समुद्रतटीय मैदानों में मछली पकड़ने, मोती, घोंघे तथा सीपें एकत्रित करने का कार्य भी किया जाता है। अनेक मैदानी भागों में खनिज पदार्थ भी निकाले जाते हैं। टैक्सास तथा कुम्बे, बंगाल की खाड़ी, थार के मरुस्थल आदि क्षेत्रों में पेट्रोलियम के विशाल भण्डार अनुमानित किये गये हैं। रूमानिया में भी मिट्टी का तेल निकाला जाता है। जर्मनी, बेल्जियम और फ्रांस के मैदानी भागों में कोयला मिलता

है तथा भारत में स्वर्णसीरी, स्वर्णरेखा और सोना नदियों की बालू से सोना प्राप्त होता है।

मैदान और यातायात के साधन—मैदानी भू-भागों में समतल भूमि और मुलायम धरातल होने से यातायात के साधनों के बनाने में बड़ी सुविधा होती है। मैदानों में न केवल रेलें और सड़कें ही सुगमता से बनाई जा सकती हैं बल्कि नदियाँ भी धीमी बहन के कारण उत्तम जलमार्ग प्रदान करती हैं। भारत की गंगा और ब्रह्मपुत्र, पाकिस्तान की सिन्धु, चीन की यागटीसीक्याँग, यूरोप की राइन, रोन, डेन्यूब और वाल्गा में तथा अमेरिका की सैंट लारेंस और मिसीसिपी तथा दक्षिणी अमेरिका की अमेजन नदियों में रेल-मार्गों की कमी के कारण यातायात का कार्य नदियों पर निर्भर है। मैदानों में जैसे झील-प्रदेश, फ्रांस, जर्मनी या इङ्गलैंड और रूस में नहरों द्वारा भी यातायात की सुविधा होती है। सपाट भूमि होने के कारण वायुयान के ठहरने के स्थान भी मैदानों में ही बनाये जाते हैं।

(३) मिट्टी (Soil)

प्राकृतिक साधनों में मिट्टी का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि मानव की आवश्यकताओं की सभी वस्तुएँ—भोजन, वस्त्र, आश्रय —मिट्टी द्वारा ही प्राप्त होते हैं। विद्वानों ने मिट्टी की श्रेष्ठता का वर्णन यह कह कर किया है कि मानव इस मिट्टी की सतान है। विल्काक्स महोदय ने यहा तक कहा है कि मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही आरम्भ होती है।[१८] जिन देशों अथवा क्षेत्रों की मिट्टी अधिक उपजाऊ होती है वहाँ मानव का मुख्य व्यवसाय खेती करना होता है और फलत वहाँ जनसंख्या भी सघन होती है। भूमि की उर्वरा शक्ति के कारण ही आज सयुक्त-राष्ट्र अमेरिका, चीन और भारत विश्व के प्रमुख कृषि प्रधान देश हो गये हैं। किन्तु रेतीली अनउपजाऊ मिट्टी के कारण पश्चिमी सयुक्त-राज्य, सहारा तथा थार के मरुस्थलों में अब तक खेती नहीं की जा सकी है और इसी कारण यह प्रदेश विश्व के उजाड़ और निर्जन स्थानों में गिने जाते हैं। किसी स्थान के मिट्टी का प्रकार यह भी निश्चित करता है कि वहाँ किस प्रकार की वनस्पति पाई जायगी। उदाहरण के लिए उन देशों में जहाँ भूमि अच्छी होती है, सघन वन पाये जाते है, किन्तु रेतीली भूमि में केवल यत्र-तत्र कांटेदार झाड़ियाँ ही पैदा हो सकती है।

आधुनिक यूरोप के लोगों के पूर्वजों ने स्टैपी और भूरी मिट्टियों का उपयोग पशु-पालन के लिये किया था। कालान्तर में उन्होंने कृषि-कार्य सीखा। रोमन काल तक यूरोप के अधिकाश भाग में खेती होने लगी और मिट्टी अच्छी फसल देने लगी। अमरीका में यूरोपीय उपनिवेशकों ने भी सबसे पहले शीतोष्ण जगलों की मिट्टी का उपयोग किया। इनमें मक्का और तम्बाकू की खेती सफलतापूर्वक की गई। अमरीका के विशाल-झील प्रदेश, उत्तरी न्यू इङ्गलैंड और उत्तरी अपलेशियन के उच्च क्षेत्र में फिनिस (Finnis), नार्वेजियन (Norwegian) और फ्रेंच-कैनेडियन निवासियों ने वहाँ की पोडजोल मिट्टियों में बहुत कुछ सुधार का प्रयास किया किन्तु यह अधिकतर

18 "The history of civilization is the history of the soil, and the education of the individual begins from the soil"—*Wilcox*.

चट्टानों के टुकडो से युक्त होने के कारण अधिक अनुकूल न बनाई जा सकी। फलतः इन मिट्टियो ने निम्न कोटि का जीवन स्तर प्रदान किया।

मिट्टियो का प्रभाव स्थानीय सामाजिक आचार-विचार पर भी पड़ता है। किसी देश में जनसख्या का वितरण और उसका घनत्व मिट्टी पर ही निर्भर करता है। मिट्टियाँ विशेष रूप से सास्कृतिक जीवन को प्रभावित करती है। गगा के मैदान के भाग मिट्टियो के निवासियो का जीवन सुखी और सास्कृतिक स्तर बहुत ऊँचा है। ये स्वभावत परोपकारी और अहिसक होते है किन्तु पश्चिमी राजस्थान के लोग प्राय. स्वार्थी और लुटेरे होते है। इसी प्रकार महाराष्ट्र की काली मिट्टी के निवासी अहिंसक, समाज-प्रेमी तथा देश के प्रति अटूट श्रद्धा रखने वाले है। मानव की प्राचीनतम सभ्यता का जन्म मरुस्थलीय प्रदेशो मे हुआ—जैसे पश्चिमी भारत, मैसोपोटेमिया और मिश्र—जिनके भग्नावशेष आज भी वर्तमान है। इनकी मिट्टियाँ मुख्यत नदियो की तलहटियो की तरुण मिट्टी है जो अधिक उपजाऊ होती है।

(४) खनिज पदार्थ (Mineral Resources)

किसी देश की भूगर्भिक रचना का उसके प्राकृतिक धरातल पर बडा प्रभाव पड़ता है क्योकि भूगर्भिक सम्पत्ति ही यह निश्चित करती है कि किन देशो मे उनसे उद्योग हो सकते है और कौन से देश इसके अभाव मे निर्धन रह जाते है। बहुधा जिन देशों मे पुरानी कठोर चट्टानें पाई जाती है, वहाँ खेती का उद्योग भूमि की अनउर्वरता के कारण नही किया जा सकता, किन्तु यह चट्टानें धातु पादार्थों मे बडी धनी होती हैं। इस प्रकार की चट्टानो के क्षेत्र मुख्यत ब्रजील के पठार, गायना की उच्च सम-भूमि, अफ्रीका का अधिकाश दक्षिणी भाग, अरब. प्रायद्वीपीय भारत, चीन, आस्ट्रेलिया का पठार, मध्य साइबेरिया, स्कैडिनेविया प्रायद्वीप, स्काटलैंड, पहाड, उत्तरी-पश्चिमी आयरलैंड, कनाडा की लारेंस शील्ड और रूस का मध्यवर्ती भाग आदि है। इन सभी भागो मे धातु पदार्थो का बाहुल्य पाया जाता है जबकि नवीन मुलायम चट्टानो वाले क्षेत्र खेती के लिए बहुत ही उपयुक्त होते है अथवा इन क्षेत्रो मे कोयला और मिट्टी का तेल पाया जाता है। इस प्रकार के मुख्य क्षेत्र उत्तरी अमेरिका के मध्यवर्ती मैदान, दक्षिणी अमेरिका, ओरीनोको, अमेजन और पौरेग्वे नदियो के मैदान और आस्ट्रेलिया के मध्यवर्ती मैदान है। इन सभी मैदानो मे बडी विस्तृत मात्रा मे खेती की जाती है। कई भाग मिट्टी के तेल और कोयले में धनी है। खनिज-पदार्थो का किसी स्थान पर पाया जाना वहाँ मनुष्य को रहने मे आकर्षित करता है। पूर्वी आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और अलास्का इसके प्रमुख उदाहरण है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया पूर्णत. मरुस्थल होते हुए भी अपनी कालगुर्ली और कूलगार्डी की सोने की खानो के कारण अंग्रेजों को विषम जलवायु होते हुए भी रहने के लिए आकर्षित कर सका है। इसी प्रकार अलास्का मे सोने और दक्षिणी अफ्रीका मे सोना, पन्ना और हीरा आदि की खानो के निकट अंग्रेज अधिक मात्रा मे जाकर बस गये हैं। भारत मे भी खनिज-पदार्थो की उपलब्धता के कारण ही छोटा नागपुर का पठार भी आकर्षण का केन्द्र हो गया है।

चूंकि खनिज क्षेत्रो मे जीविकोपार्जन के साधनो का अभाव पाया जाता है, अतः स्वभावत. ही खनिज खोदने वालो के समुदाय छोटे तथा अस्थाई होते हैं।[19]

19. *Huntington & Williams*, **Economic & Social Geography**, p. 169.

खानें खोदने मे स्त्रियो की अपेक्षा पुरुषो की आवश्यकता अधिक होती है अतः इन समुदायो मे पुरुषो की ही अधिकता मिलती है। सयुक्त राज्य के नेवाडा क्षेत्र मे खनिज श्रमिको सबंधी विचार प्रकट करते हुए डा० हटिंगटन ने लिखा है "खनिज श्रमिक सदैव स्थानान्तरित होते रहते हैं जिसके कारण उनके सामाजिक जीवन तथा चरित्र का स्तर अत्यन्त निम्न कोटि का होता है। दिन भर के कठिन परिश्रम के उपरान्त इनके आमोद-प्रमोद के साधन अधिकतर जुआ खेलना और शराब पीना है क्योकि उनका कार्य क्षेत्र पत्थरो तथा चट्टानो तक ही सीमित है, जिसकी छाप इनके सपूर्ण जीवन पर व्यक्त होती है। वह नीरस प्राणी होता है और उसके जीवन मे धर्म का कोई स्थान नही होता।"[२०] दूसरे शब्दो मे "खनिज क्षेत्रो में सास्कृतिक वातावरण अत्यन्त नीरस, छिन्न-भिन्न तथा अस्त व्यस्त सा प्रतीत होता है।" क्योकि इन क्षेत्रो मे सभी वस्तुओ की व्यवस्था करना न केवल दुष्कर होता है वरन् व्यय-साध्य भी, तथा जीवन सुविधायो की पूर्ति खनिज-मालिको द्वारा इसलिए भी नही की जाती कि यह सारा कार्य सामयिक अथवा अस्थायी होता है।" किन्तु कुछ भागो मे जहाँ यह उद्योग स्थायी रूप ले लेता है वहाँ प्रायः सभी प्रकार की सुविधायें जुटा दी जाती हैं जिससे श्रमिक कार्य छोडकर अन्यत्र न जा सकें। इसका सबसे उत्तम उदाहरण चिली की ताँबे की खानो और यूटाहा की तांबे की खानो मे मिलता है। इसका उल्लेख श्री जोन्स और डूकेनाल्ड ने किया है। "ताँबे की खानो मे बहुधा श्रमिक मध्य चिली तथा निकटवर्ती भागो से लाये गये हैं जिनके लिए खाद्यसामग्री कई स्थानों से प्राप्त की जाती है। मीठा जल ७० मील की दूरी से एण्डिज के ऊपरी भागो से नलो द्वारा लाया जाता है। इमारती सामान, खान खोदने के यत्र, मशीनें, इंजन तथा अन्य आवश्यक सामग्री लाने और खनिज को निर्यात करने के लिए ताँबा खान कपनी द्वारा रेलो व सडको का निर्माण किया गया है।" यूटाहा के बारे मे इन्ही लेखको ने लिखा है कि "खनिजो के लिए मनुष्य उन क्षेत्रो मे भी रह सकता है जहाँ पहले वह कभी नही पहुँच सका था। खनिज नगर के चारों ओर केवल शुष्क पर्वतो का ही साम्राज्य है। मनुष्यो के सभी कार्य यहाँ तांबे की खुदाई से सबधित हैं। इनके लिए पशु, भोजन, वस्त्र और अन्य सभी सामग्री बाहर से ही मँगवाई जाती है।"[२१]

खनिज क्षेत्र एक विशेष प्रकार के वातावरण को जन्म देते है। इन क्षेत्रों मे खनिज प्राप्ति के लिए उसकी वनस्पति को नष्ट करना पडता है जिसके फलस्वरूप कालातर में भूमि आवरणहीन होकर मिट्टी के कटाव की समस्या को जन्म दे देती है। इससे ज्यों ज्यों खनिज पदार्थो का निकाला जाना बढता जाता है, त्यो त्यो यह क्षेत्र दरिद्र होता जाता है और खनिजो की समाप्ति पर उस क्षेत्र का दृष्य बडा जन-विहीन हो जाता है। यत्र-तत्र उजड़े हुए गाँव और भूत नगरियाँ (Ghost Towns) देख पडती हैं।

---

20. *Huntington*, **The Human Habitat,** p 83.
21. *Jones & Drakemoald*, **Economic Geography,** p. 357.

अध्याय ४

मानव और पर्यावरण (क्रमशः)

(५) जल-विस्तार (Water Bodies)

जलाशय के अन्तर्गत झीलें, सागर और महासागर आते हैं—इन सब का स्थलवासियों के जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। सूर्य की गर्मी से जो भाप बनती है वही बादल के रूप में होकर पानी बरसाती है जिसके फलस्वरूप पहाड़ियों से नदियाँ निकलती हैं—इनके द्वारा देश में सिंचाई होती है। वर्षा होने पर कई प्रकार की वनस्पति पैदा होती है जिस पर मनुष्यों और पशुओं का जीवन निर्भर है। शीतोष्ण कटिबन्ध के समुद्रों में असंख्य प्रकार की मछलियाँ रहती हैं, जो मनुष्यों का मुख्य भोजन है। ग्रेट ब्रिटेन, नार्वे, न्यूफाउन्डलैंड, ब्रटिश कोलम्बिया, जापान तथा न्यूजीलैंड में मछली पकड़ना राष्ट्रीय उद्योग बन गया है। मछलियों का महत्व ध्रुवी प्रदेशों तक ही सीमित नहीं है वरन् मध्य सम-शीतोष्ण कटिबन्ध में भी भोज्य पदार्थों में इनको प्रधानता प्राप्त है। इन प्रदेशों में विदेशी व्यापार के आरम्भ का इतिहास मछुआ उद्योग से ही सम्बन्धित है। "Amesterdam was built on herrings" कथन बिल्कुल सही है। गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के जहाज सचालन की शिक्षा भी मिलती है। यही कारण है कि इन देशों के निवासी साहसी व सामुद्रिक व्यवसाय में कुशल बन गये हैं। दक्षिणी फिलीपाइन और सूलू द्वीप समूह के बीच में रहने वाले मोरोवजान लोगों का मुख्य जीवन समुद्रों में ही बीतता है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त वे नावों को ही अपना घर समझते हैं और इन्हें केवल मछलियाँ पकड़ने की कला ही ज्ञात है। समुद्र व्यापार के लिए भी बड़े उपयोगी हैं। प्राचीन समय में जब नौ-विद्या (Shipp ng) की उन्नति नहीं हुई थी तब समुद्रों के कारण एक देश दूसरे देश से बिल्कुल अलग था। किन्तु आजकल सबसे उत्तम व्यापारिक मार्ग समुद्र ही है। इनके द्वारा एक देश दूसरे देश से सुगमतापूर्वक व्यापार कर सकते हैं।

झीलें और मानव—झीलों से हमें बहुत से लाभ प्राप्त होते हैं :—

(१) एक साथ कई झीलें मिल कर किसी नदी द्वारा संयुक्त होकर छोटी-छोटी नहरों द्वारा मिलकर व्यापारिक जल मार्ग प्रदान करती हैं। उत्तरी अमेरिका में सेन्ट लारेन्स नदी द्वारा संयुक्त बड़ी झीलों में जहाज चलाये जाते हैं। इन झीलों में होकर बहुत बड़ी मात्रा में गेहूँ, कच्चा लोहा, तांबा और कोयला बाहर भेजा जाता है। शिकागो और टोरेन्टो नगर बड़ी झील पर स्थित होने के कारण ही तो इतने प्रसिद्ध हैं।

(२) यदि झीलें बड़ी हुई तो समुद्र की तरह वे भी जलवायु पर प्रभाव डालती हैं। ग्रीष्म ऋतु में उनके कारण निकटवर्ती स्थान ठंडे और शीत में गरम रहते हैं। कनाडा की झीलों का प्रायद्वीप (Lake Peninsula) ह्यूरन, इरी और ओन्टेरियो

झीलों के बीच में है। इससे इसका जलवायु बहुत सौतदिल (सम) रहता है। अतः वहाँ कई प्रकार के फल उत्पन्न किये गये है।

(३) पर्वतीय झीलें अपने स्वच्छ और निर्मल गहरे जल, सुन्दर वृक्षों और प्राकृतिक दृश्यों के कारण आसपास के भूभाग को ग्रीष्मावास के उपयुक्त बनाती हैं। स्विट्जरलैंड की जिनेवा, कांसटैंस, लुसर्न झीलें, इटली की गार्डो, मैग्वायर तथा कोमो; इङ्गलैंड की लेक डिस्ट्रिक्ट की विंडरामयर, थर्लमियर आदि दूसरी झीलें तथा काश्मीर की डल, वूलर और नैनीताल तथा कोडेकनाल झीलें प्रतिवर्ष सैंकड़ों व्यक्तियों को स्वास्थ्य लाभ करने के लिये आमन्त्रित करती है।

(४) नदियों के बीच पड़ने वाली झीलें नदी के बहाव को नियमित बनाकर वर्षा ऋतु मे आने वाली भयंकर बाढ़ों को रोकती है और नदी मे जल की मात्रा भी वर्ष भर नियमित ही रहती ह। जिनवा झील रोन नदी, तानल सेप मिनाम नदी और मध्य स्विट्जरलैंड की झीलें राइन नदी की शाखाओं मे बाढ आने से रोकती है। यही नहीं, ऐसी नदियों वाली झीलें जल पथ, पीने का जल तथा आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई के साधन भी प्रदान करती हैं।

(५) झीलें जल के प्राकृतिक भंडार है। विश्व के अधिकांश भाग में बड़े-बड़े नगरों में पीने का पानी पहाड़ी झीलों से ही प्राप्त किया जाता है। ग्लासगो नगर में पीने का पानी लॉक कैट्रीन (Loch Katrine) से, लिवरपूल मे वेल्स की विर्निवी (Vyrnyway) झील से, मैन्चेस्टर मे थर्लमियर (Thirlmere) से और न्यूयार्क मे कैट्सकिल्स (Catskills) झीलों मे आता है।

(६) बड़ी-बड़ी झीलों—बैकाल, ग्रेट लेक्स और राजस्थान की जयसमुद्र आदि मछलियाँ और घोंघे आदि खाने की वस्तुयें भी मिलती है।

(७) पृथ्वी की खारे पानी की झीलों से भिन्न-भिन्न प्रकार के नमक तथा रासायनिक द्रव्य प्राप्त होते हैं। साधारण खाने का नमक (Common Salt) भारत मे साभर, पचभद्रा लूनकरनसर झीलों से और एशिया की मृतक सागर से, सुहागा (Borax) तिब्बत और बोलिविया की झीलों से, सोडियम कार्बोनेट (Sodium Carbonate) केनिया की मागडी सोडा झील (Magdi Soda Lake) से तथा जवाखार (Potassium Salts) मृतक सागर से प्राप्त होते है।

(८) प्राचीन शुष्क झीलों की तहें सुन्दर उपजाऊ मैदान प्रदान करती है। कैस्पियन सागर के उत्तर मे ऐसा ही उपजाऊ मैदान बन रहा है। प्राचीन काल की अगसीज (Agassiz) झीलों के सूख जाने से कनाडा और बोनविले (Bonville) झीलों के सूख जाने से संयुक्त राज्य में २०,००,००० वर्ग मील क्षेत्रफल का उपजाऊ मैदान है। काश्मीर की सुन्दर घाटी भी उसमें स्थित ३५० झीलों के सूख जाने से ही बनी है।

(९) पहाड़ी स्थानों के निकट झीलों के जल से जल-विद्युत प्राप्त की जाती है। संयुक्त राज्य मे कोलोराडो नदी पर बोल्डर बाँध (Boulder dam) और कूली बाँध; भारत मे पश्चिमी घाट में वाइटिंग और फाइफ झीलों से बिजली उत्पन्न की जाती है।

सामुद्रिक धारायें और मानव—समुद्री धारायें भी समुद्र के किनारों के रहने वाले लोगों के जीवन पर कई तरह से प्रभाव डालती हैं। उनमें से प्रधान ये हैं :—

(१) धारायें समुद्र के व्यापारिक मार्गों पर प्रभाव डालती है। इसका महत्व

प्राचीन समय के हवा द्वारा चलने वाले जहाजों के लिये अधिक था। जिस समय पुर्तगाल के मल्लाह भारत आते थे तो वे आते समय दक्षिणी-पश्चिमी मानसून धाराओं और लौटते समय उत्तरी-पूर्वी मानसून धाराओं से सहायता लिया करते थे।

(२) धारायें अपने किनारे के देश के जलवायु पर भी प्रभाव डालती है। जब ठंडी धारायें किसी महाद्वीप के किनारे पर पहुँचती हैं तो उस प्रदेश को ठंडा तथा जब गर्म धारा किसी महाद्वीप के किनारे पहुँचती है तो उसको गर्म बना दिया करती है। उदाहरण के लिए लेब्रोडोर और इङ्गलैंड एक ही अक्षांशो मे स्थित है फिर भी ठंडी धारा के प्रभाव से लेब्रोडोर ठंढा और गर्म धारा के प्रभाव से इङ्गलैंड गर्म रहता है।

(३) जब कोई ठंडी धारा गर्म धारा से मिलती है तो वहाँ कोहरा उठा करता है और वे स्थान मछलियाँ पकडने के उत्तम क्षेत्र बन जाते है। ऐसे स्थानो मे न्यूफाउन्डलैंड और जापान द्वीप समूह के प्रदेशो की गिनती की जा सकती है।

(४) धारायें समुद्र के किनारे पर नदियों द्वारा इकट्ठा किया हुआ पदार्थ बहा ले जाती है और किनारों को उथला होने से बचा कर अच्छे बन्दरगाह बनाने मे सहायता करती हैं।

(५) धाराओं से समुद्र के पानी मे गति होती रहती है, इस तरह वे स्थिर समुद्रों की भाँति उनको जमने से बचाती है। समुद्रो के खुले रहने से उन समुद्रों के पास के प्रदेशो का व्यापार बढता है।

ज्वार-भाटा और मानव—ज्वार-भाटा से निम्नलिखित लाभ होते हैं—

(१) ज्वार-भाटा मनुष्य के लिए परम उपयोगी सिद्ध हुआ है। आधुनिक काल मे ज्वार-भाटा का उपयोग अधिकतर सामुद्रिक जहाजों को बन्दरगाहो मे जल बढ जाने से तट तक लाने मे किया जाता है। उथले समुद्रो, खाडियो और मुहाने पर बसे हुए बन्दरगाहो के लिए ज्वार-भाटा बडे काम का होता है। ज्वार आने पर पानी इतना गहरा हो जाता है कि बडे-बडे जहाज सुगमतापूर्वक अन्दर आ सकते हैं और भाटा होता है तो लौटते पानी के साथ बन्दरगाह से बाहर निकल सकते हैं। भूमध्य सागर जैसे बन्द सागर मे ज्वार-भाटा नहीं आने के कारण ही नील, पो और रोन नदियो के मुहाने पर उत्तम बन्दरगाह नहीं पाये जाते। इसके विपरीत टेम्स, राइन, ऐल्ब, गगा, इरावदी, सैवर्न, दजला आदि नदियों के मुहाने पर उत्तम बन्दरगाह हैं क्योंकि उनमे ज्वार-भाटा आते हैं।

(२) समशीतोष्ण कटिबन्ध के पोताश्रयो तथा बन्दरगाहो को ज्वार-भाटा हिममुक्त रखता है क्योंकि ज्वार-भाटा के कारण जल मे निरन्तर हलचल होती रहती है तथा नदी के स्वच्छ जल के साथ समुद्र का खारा जल मिलकर बर्फ को गलाने में सहायक होता है।

(३) ज्वार-भाटा नदियो द्वारा लाई मिट्टी और कीचड तथा कूडा-करकट को समुद्र मे बहा ले जाता है जिनसे नदियों के मुहाने स्वच्छ और व्यापार के लिए जलयात्रा के योग्य बने रहते है।

(४) ज्वार का जल सागर तट की नरम चट्टानो को निरन्तर रगडकर तट की आकृति को परिवर्तित करता रहता है। यह चट्टानों के छोटे-छोटे टुकडो को तट पर जमा करके रॉक-बीच (Rock Beach) तथा इन खडो को भी अधिक सूक्ष्म रेतीले

पदार्थों में चूर्ण करके तथा तट पर जमा करके सैंड-बीच (Sand Beac/ करता है। कहीं-कहीं बड़ी चट्टानों से आवृत्त नरम चट्टानों का निचला अंश ज्वा.. द्वारा रगड़ खाकर बह जाता है तथा कन्दरायें (Cave.) और महराव (Arches) बन जाते हैं।

(५) अब तो ज्वार-भाटे से शक्ति भी उत्पन्न की जाने लगी है।

(६) जलवायु (Climate)

प्रो. केस और बर्गस्मार्क के अनुसार जलवायु हमारे भौतिक पर्यावरण का अनिश्चित तत्व है।[२२] नियतिवाद के पोषक जलवायु को ही मनुष्य के विचार, कार्य, धर्म, राजनीति इत्यादि का निर्धारक मानते हैं। कुमारी सेम्पल के शब्दों में "सभ्यता के आरंभ और विकास में जहाँ तक आर्थिक विकास का सम्बन्ध रहता है, वहाँ जलवायु एक बड़ा शक्तिशाली तत्व है।"[२३] डा० हंटिंगटन के अनुसार भी मानव पर प्रभाव डालने वाले तत्त्वों में जलवायु का स्थान प्रथम है इसलिए नहीं कि यह सबमें महत्वपूर्ण है वरन् इसलिए कि वह सबसे अधिक मौलिक है।[२४] जलवायु का प्रभाव निस्संदेह मानव की सभी क्रियाओं पर पड़ता है। वस्तुओं के उत्पादन, वितरण और व्यापार में जलवायु का नियन्त्रण स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। जलवायु खेती की प्रणालियों का सूत्रपात करती है। उद्योगों में श्रमिकों की कार्य क्षमता भी जलवायु द्वारा ही निर्धारित होती है। अतः यहाँ हम जलवायु के प्रभाव का विस्तृत विवेचन करते हैं।

जलवायु और सभ्यता—मनुष्य की सभ्यता पर जलवायु का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। विश्व की प्राचीन सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे ही हुआ क्योंकि नदियों के पानी ने खेती के कार्य और मनुष्य के विकास को बहुत सरल बना दिया था। उदाहरण के लिये नील नदी की घाटी में मिश्र की सभ्यता, फरात नदी की घाटी में बेबीलोनिया की सभ्यता, सिन्धु नदी की घाटी में हिन्दुओं की मोहन-जोदड़ो की सभ्यता का और ह्वांगहो की घाटी में चीन की सभ्यता फली-फूली। इन सब घाटियों में लगभग एक-सी जलवायु पाये जाने के कारण इनकी सभ्यता में भी समानता थी। इसके पश्चात् रूमसागरीय सभ्यता का विकास हुआ और यह अधिक जलवृष्टि वाले प्रदेशों में फैली। इस प्रकार जब अधिक वर्षा का होना भी बन्द हो गया तो इस सभ्यता का अन्त हो गया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मध्य एशिया के लुटेरों के हमले यूरोप के देशों पर इसलिये होते थे कि उनके प्रदेशों में जल वृष्टि के अभाव के कारण कोई वस्तु पैदा नहीं हो सकती थी। श्री स्मेल-स्मिथ के शब्दों में, "साधारण कठिनाई वाली जलवायु ही सभ्यता का बीजारोपण करत है

22. *Case & Bergsmark*, **College Geography,** 1954, p. 37.

23. "It is a potent factor in the beginning and in the evolution of civilization, so far as this goes hand in hand with economic development"—*E. Semple.*

24. "Climate stands first, not because it is the most important but merely because it is the most fundamental"—

E. Huntington..

और उसे पनपाती है।"२५ वास्तव में सभ्यता का जन्म उन्हीं प्रदेशों में हुआ जहाँ प्रकृति ने उत्पादन वर्ष के एक प्रमुख भाग में सीमित रखा और इस क्षेत्र के निवासियों को परिश्रम करने के लिए प्रेरित किया। विषुवत् रेखीय और ध्रुवीय प्रदेशों के बीच में ऐसे प्रदेश मिलते हैं जहाँ प्रकृति ने बाधा और सुविधा का समन्वय प्रस्तुत किया है। इन प्रदेशों में वह परिश्रम करता है, बचत करता है और भविष्य के लिए योजनायें बनाता है।

यह सच है कि मनुष्य ने गर्म भागों में जन्म लिया, किन्तु उसकी वृद्धि शीतोष्ण प्रदेशों में हुई। गरम प्रदेशों में पिछड़े हुए मानव ने अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति बिना किसी परिश्रम के ही की क्योंकि इन प्रदेशों में प्रकृति इतनी उदार है कि उन्हें अपने भोजन और वस्त्र प्राप्त करने के लिये अधिक प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। इसलिये इन प्रदेशों के निवासी साधारणतया बहुत ही सुस्त और अकर्मण्य रह गये हैं। इसका मुख्य उदाहरण हमें पूर्वी द्वीप समूह, कांगो और अमेजन की घाटियों के जीवन से मिलता है। इन्हें प्रकृति द्वारा बिना किसी प्रयत्न के ही केले, फल, मछलियाँ अथवा पशु भोजन के लिये मिल जाते हैं। उष्ण तथा तर जलवायु के कारण वस्त्रों की आवश्यकता नहीं रहती। अस्तु, ये प्रायः नंगे ही रहते हैं। किन्तु ध्रुव प्रदेशों में रहने वाले एस्किमों और लैप्स को (जिन्हें बहुत ही कठोर शीत में रहना पड़ता है) पिगमियों, पेपुओं अथवा अमेजन के लोगों की अपेक्षा वस्त्र और भोजन के लिये अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इन शीत प्रदेशों में उस मनुष्य के लिये कोई स्थान नहीं जो शारीरिक अथवा मानसिक शक्ति में पूर्ण न हो।

जलवायु का मानव की कार्य शक्ति पर प्रभाव—जलवायु का कार्य शक्ति पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। भूगोल के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० हंटिंगटन ने बड़े परिश्रम के बाद अपने तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर (जो उन्होंने डेन्मार्क और संयुक्त राज्य, *के विद्यार्थियों और मजदूरों के विषय में किये हैं*) यह सिद्ध किया है कि ६०·६५° डिग्री फारेनहाइट औसत तापक्रम में मनुष्यों में शारीरिक स्फूर्ति उच्चतम सीमा तक पहुँच जाती है। उनके अनुसार सदा एक-सा तापक्रम रहता भी—जैसे अमेजन, कांगो व पूर्वी द्वीप समूह में रहता है—मानव को शिथिल, क्षीण और अकर्मण्य बना देता है। इसी प्रकार तापक्रम का जल्दी-जल्दी और एकाएक बदलने अथवा अधिक ठंडा या अधिक तापक्रम की दशा में कार्य करने से कार्य-क्षमता कम हो जाती है। हवा में नमी होने से इसमें वृद्धि होती है। प्रो० हंटिंगटन के अनुसार शारीरिक परिश्रम के लिये ६०-६५° फा० और मानसिक कार्य के लिए ३८-४०° फा० तापक्रम की आवश्यकता होती है।

प्रो० हंटिंगटन के अनुसार यदि कोई कारखाना अच्छे से अच्छा सामान तैयार करना चाहता है तो उसे शीतकाल में मशीन की गति धीमी कर देनी चाहिये और ग्रीष्म में फिर कुछ धीमी कर देनी चाहिये, किन्तु पतझड़ में अधिक से अधिक तेज कर देनी चाहिये इसलिये कि शीतोष्ण चक्रवात न केवल स्फूर्ति प्रदान करते हैं बल्कि कार्य-क्षमता को भी बढ़ाते हैं। इसी कारण ब्रिटिश द्वीप समूह व पूर्वी संयुक्त राज्य स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत अच्छे समझे जाते हैं। यही नहीं, किसी स्थान की जलवायु यह भी निर्धारित करती है कि किन क्षेत्रों में मानव बिना थकान अनुभव किये

25. "Civilization is the product of climatic adversity"—*Russel Smith*

कार्य कर सकता है और किन स्थानों में थोड़ी ही देर बाद उसे थकान अनुभव होने लगती है। सच तो यह है कि शीतल जलवायु में मानव को प्रेरणा मिलती है जब कि उष्ण जलवायु न केवल उसके स्नायुओं को ही शिथिल बना देता है किन्तु उसको कई रोगों का—विशेषकर मलेरिया, पेचिश तथा अन्य प्रकार के रोगों का—शिकार भी बना देती है। शीतल जलवायु के कारण ही अमेरिका और इङ्गलैंड में बहुत से विचारक और उत्तम नेता पैदा हुये हैं। अधिक गर्मी के कारण हमारे यहाँ चार महीनों तक पूरी तरह कार्य नहीं हो सकता। भारतीय मजदूर की अकुशलता का मुख्य कारण देश की जलवायु है। उष्ण जलवायु के कारण अफ्रीका के मध्यवर्ती भागों में मानव शरीर में गुर्दे, तिल्ली अथवा प्रजनन अंगों में कई प्रकार की बीमारियाँ लग जाती हैं। यही कारण है बहुत समय से ही गिनी तट को अंग्रेजों की कब्र (White men's grave) कहा गया है क्योंकि इस गर्म जलवायु में अंग्रेज स्वस्थ नहीं रह सकते। अधिक ठंडे भागों में भी कठोर शीत के कारण कार्य बिल्कुल नहीं हो सकता। इसी प्रकार कोहरे वाली जलवायु भी मनुष्य को काल्पनिक और निराशावादी बना देती है जैसे कि स्केन्डेनेविया के निवासी। इसी प्रकार गर्म जलवायु के कारण ही भारतीय रोगी, निराशावादी और भाग्य पर विश्वास करने वाले होते हैं। अस्तु, यह कहा जा सकता है कि भिन्न-भिन्न देशों के निवासियों का स्वभाव उन देश के जलवायु के अनुसार ही बनता है। यदि अंग्रेज अधिक प्रसन्न मुख और खेल-कूद पसन्द करने वाले हैं तो उसका मुख्य कारण वहाँ का मेघाच्छन्न आकाश है जो मनुष्य को उनके घरों से बाहर जाकर आनन्द मनाने के लिये उत्साहित करता है। पूर्वी देशों के लोगों में जो उदासीनता और पश्चिमी देशों में जो चंचलता, गम्भीरता और असीम धैर्य पाया जाता है उसका मुख्य कारण जलवायु ही है। मिस्र के निवासी बहुत अच्छे ज्योतिषी और गणितज्ञ माने जाते हैं, उसका मुख्य कारण वहाँ की जलवायु ही है। वहाँ आकाश सदा साफ रहता है और वहाँ के मरुस्थल में तारे ही मुसाफिरों को रात्रि में मार्ग का ज्ञान कराते हैं। ब्रिटिश द्वीप समूह में वर्ष के अधिकांश भाग में जलवायु आर्द्र रहता है। इस कारण वहाँ पक्के रंग का बनना मुश्किल है, इसलिये वहाँ के निवासी हल्के रंग पसन्द करते है, किन्तु भारत जैसे गर्म देश में गहरे रंगों का रिवाज है। भूमध्य सागरीय देशों में तेज धूप पड़ने के कारण चमकीले वस्त्र पहनना पसन्द किया जाता है। भारत के बारे में यह कहा जा सकता है कि मई से अगस्त तक के चार महीनों को छोड़ कर शेष महीनों में जलवायु मनुष्य को फुर्तीला और शरीर को सशक्त बनाने वाली है। शारीरिक कार्य करने के लिये पंजाब, हिमाचल प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, देहली और काश्मीर उत्तम हैं किन्तु मानसिक कार्यों के लिये बंगाल, गुजरात और महाराष्ट्र की जलवायु उत्तम है।

श्री अरस्तू (Aristotle) ने एशिया और यूरोप के मनुष्यों के मानसिक गुणों को दोनों महाद्वीपों के अनेक प्रकार के भौगोलिक वातावरण से सम्बंधित किया है। उनके अनुसार, "ठंडे देशों के लोग विशेषत यूरोप के साधारणतया प्रेरणा वाले होते हैं किन्तु उनमें बुद्धिमानी और चतुराई का अभाव मिलता है और इसलिये वे अपेक्षतया स्वतंत्र रहते हैं किन्तु उनका राजनीतिक विकास नहीं हो पाता। इसके विपरीत एशिया के लोगों में बुद्धि और चतुराई तो मिलती है किन्तु प्रेरणा का अभाव होता है अतः ये लोग अधिकतर दास होते हैं। इन दोनों ही परिस्थितियों के बीच में यूनानी लोग हैं जिनमें दोनों के गुण मिलते हैं।"[२६]

26. *Barker, E. (Trans.)* **The Politics of Aristotle, 1946, p. 296.**

श्री बोदिन ने भी कुछ इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए है। इनके अनुसार "समशीतोष्ण कटिबंधीय मनुष्य उत्तरी अक्षांशो के मनुष्यों से अधिक प्रखर बुद्धि वाले तथा दक्षिणी अक्षांशों के लोगो से अधिक बहादुर होते है।"

हिपोक्रेट्स के अनुसार जलवायु का प्रभाव मनुष्यो की प्रकृति को बनाता है। उदाहरणार्थ, गर्म और आर्द्र जलवायु मे रहने वाले एशियाई लोग अधिक आराम पसद, सुस्त और निष्क्रिय होते हैं जबकि यूरोपवासी ठंडी जलवायु मे रहने के कारण बडे क्रियाशील, परिश्रमी और चुस्त होते है।

श्री मांटेस्क्यू ने भारत की गरम जलवायु को यहाँ के धर्म, ढग, रिवाज और नियमों के कडेपन का प्रधान कारण बताया है। इनका जलवायु पर इतना विश्वास था कि उन्होने तो जलवायु पर आधारित एक सिद्धान्त (Blanket Theory of Climate) ही बना दिया था जिसके अनुसार जाति व देश के ऐतिहासिक व सामाजिक घटनाओ का प्रधान कारण वहाँ की जलवायु ही होती है। उन्होने तो यहाँ तक कहा है कि किसी भी देश के कानून बनाते समय उस देश की जलवायु का अवश्य ध्यान रखना चहिए। इनके अनुसार "वह विधानकर्ता बुरे है जो जलवायु-जनित बुराइयों को अपने विधान में स्थान देते हैं किन्तु वह विधानकर्ता अच्छे है जो जलवायु-जनित बुराइयो का विधान बनाते समय विरोध करते है।"[२७]

श्री हंटिंगटन ने तो जलवायु के प्रभाव को इतना महत्व दिया है कि उनके अनुसार ईमानदारी, फुर्तीलापन आदि साधारण गुण जलवायु का ही प्रभाव है। अनेक देशो मे फैली हुई सुस्ती, बेईमानी, अनैतिकता, मूर्खता और इच्छाशक्ति की निर्बलता का कारण ही जलवायु है।

श्री बकल का मत है कि जलवायु, मिट्टी तथा भोजन एक दूसरे से सबधित है। जलवायु किसी भी सभ्यता के लोगों की सम्पदा तथा आराम निर्धारित करती है और यही दो बातें किसी भी सभ्यता के प्रादुर्भाव तथा प्रारम्भिक विकास के लिए आवश्यक है। इनके अनुसार यूरोपीय सभ्यता का मुख्य कारण वहा की जलवायु ही है जिसके कारण मनुष्य जलवायु से उत्तेजना प्राप्त करता है, अपनी कार्यक्षमता और कुशलता को बढाता है तथा अपना जीवन नियमानुकूल चलाता है। **रटजैल** के शब्दो मे, "भूमध्य सागरीय क्षेत्रों मे सभ्यता का विकास कोई इतिहास की घटना नही है वरन् यह जलवायु की ही देन रही है।"[२८] **मैक्नीकॉफ** ने भी स्थिति, आर्थिक साधन तथा आवागमन के मार्गो के साथ-साथ जलवायु को सभ्यता का जन्मदाता माना है।[२९]

इस सम्बन्ध मे डा० प्राइस के विचार उद्धरण-योग्य है। वे कहते है कि इतिहास, पर्यवेक्षण तथा प्रयोगशालाओ मे किये गए प्रयोगो से स्पष्ट होता है कि अत्यधिक ऊँचे तापक्रम वयस्कों की स्मरण शक्ति तथा बुद्धि को हानि पहुँचाते है। यह एक प्रकार से निश्चित-सा ही है कि उष्ण कटिबंधीय जलवायु मनुष्य की शक्ति मे ह्रास करती है···कुछ लोग विशेषकर नीग्रो तथा चीनी गर्म पर्यावरण मे रहने वाले

---

27. *Montesque, C.*, **The Spirit of Laws**, p. 279.
28. *Ratzel, F*, **The History of Mankind**, p. 29.
29. *Davis J. & Barnes H. E.*, **Introduction to Sociology**, p. 67.

गोरे लोगों की अपेक्षा अधिक प्रसन्न चित्त प्रतीत होते है ।……इसी सागरीय प्रदेशो के कुछ गोरे लोग उत्तरी देशो के गोरो की अपेक्षा उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों मे भली प्रकार रह सकते है । यह कहना असंभव है कि इसका कारण जातीय गुण है अथवा सांस्कृतिक पर्यावरण की विभिन्नता अथवा उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में आने वाले गोरे लोगों द्वारा किये गए परिवर्तन ।"[30]

जलवायु और जनसंख्या—जनसंख्या के वितरण में जलवायु का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है । मनुष्य उन्ही भागों मे रहना पसन्द करता है जहाँ की जलवायु उसके स्वास्थ्य के लिये तथा उद्योग के लिये अनुकूल होती है । यही कारण है कि सबसे पहले मानव का विकास कर्क रेखा और ४०° उत्तरी अक्षांशो के बीच के भागो मे हुआ जो न तो अधिक गर्म ही है और न अधिक ठंडे हैं, जहाँ न अधिक वर्षा ही होती है और न सूखा ही पड़ता है तथा कार्य करने के लिये तापक्रम सदैव ही उपयुक्त रहा करता है ।[31] किन्तु इसके विपरीत उष्ण कटिबंधीय जंगलों—अमेजन तथा कांगो नदी के बेसिनो मे, पूर्वी द्वीप समूह आदि मे—तीव्र गर्मी व सदा वर्षा होने के कारण प्रति वर्गमील १० से भी कम व्यक्ति रहते हैं । आर्कटिक अथवा एन्टार्कटिक महाद्वीप में तो अत्यधिक शीत के कारण प्रति वर्गमील १ से भी कम मनुष्य रहते हैं । इन प्रदेशों की जलवायु या तो बहुत गर्म और नम है जिसके कारण मानव की कार्यशक्ति पर बडा अहितकर प्रभाव पड़ता है अथवा बहुत ही ठंडी है जिसके कारण एक निश्चित समय तक कोई भी कार्य करना असम्भव हो जाता है । इसके विपरीत अर्द्ध-उष्ण कटिबंधीय भागों मे जहाँ जलवायु साधारणतया गर्म और पर्याप्त वर्षा (४-५ महीनो तक) वाला होता है और जहाँ वर्षा में दो फसलें सुगमतापूर्वक पैदा की जा सकती है वहाँ जनसंख्या का जमाव शीघ्र बढ़ता जाता है । सिंध और गंगा का मैदान शताब्दियों से उत्तम जलवायु के कारण घना बसा है । इसी प्रकार शीतोष्ण सामुद्रिक जलवायु वाले प्रदेश—उत्तरी पश्चिमी यूरोप, उत्तरी संयुक्त राज्य अमेरिका आदि—अपनी उत्तम जलवायु के कारण ही (जिसका कार्यशीलता और मस्तिष्क पर बड़ा अनुकूल प्रभाव पडता है) विश्व के घने बसे हुये भागो मे गिने जाते हैं । अस्तु, प्रति वर्ग मील पीछे बेल्जियम मे ७०० और इङ्गलैंड में ५०० से भी अधिक व्यक्ति रहते हैं । न्यून तापक्रम के कारण ही टुन्ड्रा प्रदेश किसी काम का नही है । ग्रीनलैंड और अन्टार्कटिका के ६० लाख वर्गमील भूमि को न्यून तापक्रम ने ही व्यर्थ बना दिया है । जुलाई की ५०° समताप रेखा कृषि प्रधान देशों की उत्तरी सीमा बनाती है अत कनाडा और अलास्का की लगभग ६० लाख वर्गमील भूमि और यूरेशिया की लगभग ६५ लाख वर्गमील भूमि पर जनसख्या का घनत्व १ मनुष्य से भी कम रहता है । यदि १० लाख वर्गमील अन्य भूमि को भी इनमे सम्मिलित कर लिया जाय, जो निम्न तापक्रम के कारण महाद्वीपीय पहाडों और पठारों पर मिलती है, तो केवल तापक्रम के आधार पर ही ससार की कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र ५७५ लाख वर्गमील भूमि से घटकर ४४० लाख वर्गमील ही रह जाता है

जलवायु और निवास-गृह—किसी देश के निवासियो के रहने के लिये किस प्रकार के मकान होगे इस पर उस देश की जलवायु का प्रभाव पडेगा । उदाहरण के लिये कनाडा और रूस के उत्तरी भागों मे जहां कठोर सर्दी पड़ती है, वहाँ न तो लकड़ी

30. *Price, A. G.*, **White Settlers in Tropics.**

31. *Vidal de la Blache*, **Principles of Human Geography,** p. 75.

ही पैदा हो सकती है और भूमि पर सदैव बर्फ जमे रहने के कारण पत्थर या मिट्टी आदि भी प्राप्त नहीं हो सकते। अत एस्कीमो, समोयडी, लैप्स और फिन आदि के मकान बर्फ के ही बनाये जाते हैं। इनका आकार गुम्बजनुमा और छोटा होता है इसके भीतर जाने के लिये एक सँकडी गली-सी होती है। मकानो मे खिडकियाँ बिल्कुल नहीं रखी जाती। केवल धुआँ निकलने के लिये छोटा-सा सुराख ऊपर की तरफ बना दिया जाता है। अधिक बडी खिडकियाँ और दरवाजे वहाँ इसलिए नहीं रखे जाते क्योंकि यहाँ लगातार बर्फ गिरती रहती है। इसके विपरीत शुष्क और गर्म जलवायु के कारण मरुस्थलों मे या तो तम्बू आदि बनाये जाते हैं, अथवा मरुस्थलो के निकट जहाँ मिट्टी, पानी, लकडी व पत्थर मिल जाते हैं पक्के मकान बनाये जाते हैं। किन्तु इनमे भी खिडकियाँ नहीं रखी जातीं, क्योंकि मरुस्थलो मे तेज बालू की आँधियाँ चलती रहती हैं। वर्षा कम होने के कारण मकानो की छतें चौरस बनाई जाती हैं जिससे वर्षा का जल उन पर इकट्ठा न हो सके। सर्दियो मे इन पर बैठने और गर्मियो मे रात्रि मे सोने का काम लिया जाता है। उत्तर के शीतोष्ण वनों मे अथवा घास के मैदानों मे पत्थर के अभाव मे मकान लकडी के/लट्ठो के अथवा घास-फूस के बनाये जाते हैं। ग्रेट-ब्रिटेन में निम्न तापक्रम और अधिक वर्षा मे बचने के लिए मकान अधिकतर ईंटों, पत्थर अथवा सीमेन्ट के बनाये जाते हैं जिनकी छतें इसलिये ढालू रखी जाती हैं कि अधिक वर्षा का पानी अथवा बर्फ उन पर मे नीचे फिसल जाये। अधिक शीत बचने के लिये कमरो मे बिजली द्वारा गर्मी भी पहुँचाई जाती है चूँकि आकाश सदा मेघाच्छादित रहता है। इसलिये कमरो को पूरी तरह प्रकाश पहुँचाने के लिये काच की खिडकियाँ रखी जाती हैं। इसके विपरीत भूमध्यसागरीय प्रदेशो मे चौरस छतों वाले मकान, जिनमे प्रत्येक मे खिडकिया और आँगन होते है, बनाये जाते है। भारत जैसे गरम देश मे कडी धूप मे बचने के लिये मकान से बाहर बरामदे बनाना और सूर्य प्रकाश की प्राप्ति के लिये मकानो मे छोटी-छोटी खिडकियाँ अथवा रोशनदान बनाना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त गर्म देशो मे ठंडे देशो की अपेक्षा सडकें भी बहुत सँकरी बनानी पडती हैं।

जलवायु और भोजन—मानव के भोजन पर भी जलवायु का प्रभाव पडता है। उदाहरण के लिये गर्म देशो मे हलके और कम मात्रा मे भोजन की आवश्यकता होती है, किन्तु ठंडे देशो मे शरीर मे गर्मी और शक्ति बनाये रखने के लिये अधिक मात्रा मे भोजन की आवश्यकता पडती है। यही कारण है कि शीतोष्ण-कटिबन्धीय देशो मे माँस मदिरा, अडे, मक्खन और मछली आदि अधिक व्यवहार में लाये जाते है जबकि भारत जैसे देश मे अधिकाश जनसख्या निरामिष भोजी (Vegetarian) है।

जलवायु और वस्त्र—उष्ण देशो मे जलवायु गर्म होने के कारण वर्ष भर में बहुत ही कम वस्त्र की आवश्यकता पडती है। उदाहरण के लिये भारत मे प्रति व्यक्ति पीछे कपडे की वार्षिक खपत १८ गज है जबकि स० रा० मे यह मात्रा ६४ गज की है। गर्म देशो मे हलके सूती वस्त्र ही अधिक पहने जाते है, जो काफी ढीले-ढाले भी होते हैं। किन्तु ठंडे देश मे प्राय साल भर ही ऊनी वस्त्र, समूर के बाल या मछलियों की खालों के ऐसे वस्त्र पहनने पडते हैं जो साधारणतया बहुत ही तंग और चुस्त होते हैं।

प्राकृतिक परिस्थिति मे जलवायु की एक ऐसी शक्ति है, जिसमे मनुष्य अपने लाभ के लिये बहुत कम परिवर्तन कर सकता है। यह सत्य है कि थोडी-मात्रा में मनुष्य

आजकल 'एयर कंडीशन' करके वायु के ताप को घटा-बढा सकता है, परन्तु इसका लाभ अभी तक जनसाधारण के लिये नही है और यदि ऐसा हो भी जाय तो भी इसका लाभ मनुष्य के निवास स्थान तक ही सीमित रहेगा । बाहरी क्षेत्रो मे उसका कार्य जलवायु पर निर्भर रहेगा । मनुष्य के शरीर पर जलवायु का बड़ा मार्मिक प्रभाव पड़ता है । उसका स्वास्थ्य, उसकी कार्यशक्ति, उसके वस्त्र, उसका निवास स्थान तथा उसका भोजन इत्यादि इसी के फल है । मनुष्य के शरीर का तापक्रम लगभग ९८.४° फा० रहा करता है । इस ताप को बनाये रखने के लिये मनुष्य के शरीर से सदा एक प्रकार की गर्मी निकलती रहती है । जब मनुष्य चुपचाप बैठा रहता है, उस समय उसके शरीर के प्रति वर्ग सेन्टीमीटर से प्रति सेकन्ड १ मिली कैलोरी गर्मी जाती रहती है । परन्तु यदि वह काम करने लगे तो कार्य के अनुसार निकल जाने वाली गर्मी ७ मिली कैलोरी तक बढ जाती है । इस मात्रा से कम गर्मी निकलने पर शरीर को अधिक गर्मी लगने लगती है और उससे अधिक निकलने पर शरीर को ठंड लगने लगती है । शरीर को इन दोनो दशाओ से सुरक्षित रखने के लिये मनुष्य वस्त्र का प्रयोग करता है । पृथ्वी के उन भागो मे जहाँ जलवायु का ताप अधिक होता है और इसलिये मनुष्य के शरीर से कम गर्मी निकल पाती है, बहुत ही कम वस्त्र पहने जाते है । अफ्रीका के मध्य भाग मे अथवा हमारे देश के दक्षिण प्रदेश मे इसका उदाहरण मिलता है । परन्तु जहाँ जलवायु का ताप कम होता है और इसलिये शरीर से अधिक गर्मी निकल जाती है वहाँ अधिक तथा गर्मी रोकने वाले वस्त्र पहनने की प्रथा है । इसका उदाहरण यूरोप के ठंढे देशो मे मिलता है । ऋतु परिवर्तन का प्रभाव भी इसी प्रकार होता है ।

संसार को वस्त्र के अनुसार तीन भागों मे बाँटा जाता है । पहला वह भाग है जहाँ पूरे वर्ष भर इतनी गर्मी पडती है कि न्यूनतम वस्त्रो की आवश्यकता पडती है; दूसरे वे भाग है जहाँ जाडे और गर्मी मे अधिक अन्तर पड जाने के कारण ऋतु के अनुसार वस्त्र बदलने पडते है, और तीसरे वे भाग हैं जहाँ वर्ष भर कठोर सर्दी पडती है और इसलिये केवल गर्म वस्त्रो का ही प्रयोग किया जाता है । अधिक उष्णतर जगलों में तो मानव आज भी बिल्कुल ही नगे रहते है या कमर मे पेडो की छाल या घास आदि लपेटते हैं ।

जलवायु और प्रवास—ससार के विभिन्न प्रदेशों मे एक-सी जलवायु पाई जाती है । अत यदि किसी देश मे जनसंख्या उस देश की भरण-पोषण की शक्ति से अधिक होती है तो वह अपने समान जलवायु वाले देशो मे जाकर बस जाती है । अंग्रेज इसी कारण न केवल कनाडा और दक्षिणी अफ्रीका में ही पहुँचे किन्तु आस्ट्रेलिया में भी जा पहुँचे । जापानी पूर्वी एशिया के देशो और भारतवासी लका, पूर्वी अफ्रीका और उत्तरी दक्षिणी अमेरिका में जाकर रहने लगे हैं । जब अंग्रेज भारत में थे तो यहाँ की तेज धूप से बचने के लिये ग्रीष्म काल में शिमला, नैनीताल, डलहौजी, उटकमंड, पचमढी, दार्जिलिंग अथवा आबू पर चले जाते थे क्योकि इस समय वहाँ की जलवायु शीतल होती थी ।

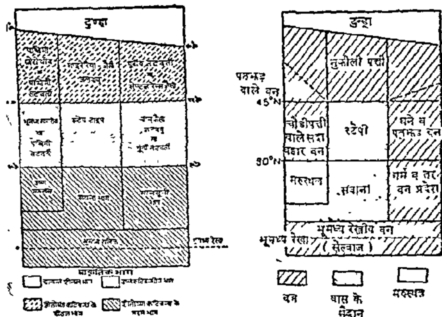
जलवायु और उद्योग धन्धे—भिन्न-भिन्न प्रकार की जलवायु मे भिन्न-भिन्न प्रकार के धन्धे किये जाते हैं । उदाहरण के लिए उष्ण प्रदेशों में बहुधा जगली पशुओं का शिकार किया जाता है, जब कि मरुस्थलो मे शुष्क जलवायु के कारण कोई चीज पैदा नही होती, अतः लूट-मार, चोरी करने आदि के लिए प्रसिद्ध होते हैं । शीत

और शीतोष्ण कटिबन्धों में मछलियों और बालदार पशुओं का शिकार करना तथा लकड़ी काटना ही मनुष्य का मुख्य धन्धा होता है। वास्तव में यह कहना बिल्कुल उपयुक्त है कि प्राथमिक धन्धों पर ही नहीं बल्कि माध्यमिक धन्धों पर भी जलवायु का गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिये सूती वस्त्र व्यवसाय के लिए तर जलवायु की आवश्यकता है क्योंकि शुष्क जलवायु में सूत का धागा बार-बार टूट जाता है और वह अधिक लम्बा भी नहीं काता जा सकता। तर जलवायु के कारण ही मैनचेस्टर, ओसाका, बम्बई व अहमदाबाद में सूती वस्त्रों के कारखाने पाये जाते हैं। इसके विपरीत इङ्गलैंड में पिनाइन पर्वत के पूर्व में स्थित यार्कशायर अपेक्षाकृत सूखा है, इसलिए वहाँ सूती कपड़े के कारखाने नहीं पाये जाते। आटा पीसने के व्यवसाय के लिए सूखे जलवायु की आवश्यकता होती है, इसलिए कराँची, सेंट पाल, बुडापेस्ट और मिनियापालिस में आटा पीसने की कई बड़ी-बड़ी चक्कियाँ स्थापित की गई हैं। सिनेमा व्यवसाय के लिए स्वच्छ आकाश और उज्ज्वल प्रकाश तथा पर्याप्त धूप की आवश्यकता होती है जिससे कि फोटो साफ आ सके। इसी कारण कैलीफोर्निया, इटली और भारत में बम्बई के निकट तथा फ्रांस में सिनेमा की फिल्म बनाने का व्यवसाय बहुत उन्नति कर गया है। रस्सी बनाना, कागज बनाना और छपाई के धन्धों के लिए भी उपयुक्त जलवायु की आवश्यकता होती है।

जलवायु और वनस्पति—किसी देश की प्राकृतिक वनस्पति न केवल भूमि के धरातल, मिट्टी के गुण आदि पर ही निर्भर रहती है, बल्कि वहाँ के तापक्रम और वर्षा का भी उस पर प्रभाव पड़ता है क्योंकि प्रत्येक पौधे के लिए वर्षा, गर्मी, प्रकाश और वायु की आवश्यकता पड़ती है। भूमध्य रेखीय प्रदेशों में निरन्तर तेज धूप, कड़ी गर्मी और अधिक वर्षा के कारण ऐसे वृक्ष पैदा होते हैं जिनकी पत्तियाँ घनी, ऊँचाई बहुत और लकड़ी कठोर होती है। इसके अतिरिक्त वृक्षों के नीचे झाड़ियों और घास का भी गहरा जाल-सा बिछा रहता है। किन्तु गर्म रेगिस्तानों में कड़ी गर्मी पड़ने पर भी वर्षा के नितान्त अभाव में केवल ऐसी झाड़ियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से उनकी वाष्प या नमी उड़ न सके। जैसे कुछ झाड़ियों में काटे होते हैं तथा जड़ें बहुत लम्बी होती हैं, कुछ के पत्ते मोटे और तनों पर बाल होते हैं। इन सब युक्तियों के कारण वे साल भर हरी-भरी रहती हैं। सूडान और प्रैरी प्रदेशों के कारण केवल लम्बी-लम्बी घास तो उगती है किन्तु बड़े-बड़े वृक्षों का वहाँ अभाव-सा रहता है। इनके विपरीत ठंडे प्रदेशों में कठोर सर्दी पड़ने के कारण सदैव बर्फ जमा रहता है इसलिए केवल काई अथवा छोटी-छोटी हल्की झाड़ियों के अतिरिक्त और कोई वृक्ष पैदा नहीं होता। यही कारण है कि यहाँ के निवासी लकड़ियों के दर्शन करने को भी तरसते हैं। मानसूनी जलवायु के प्रदेशों में जहाँ साल के आठ महीने सूखे बीतते हैं, ऐसे वृक्ष पैदा होते हैं कि जिनकी पत्तियाँ गर्मी के आरम्भ में ही सूख जाती हैं। शीतोष्ण कटिबन्धों में तीव्र सर्दियों के कारण कोमल लकड़ियों वाले ऐसे वृक्ष पैदा होते हैं जिनकी पत्तियाँ नुकीली होती हैं। ये वृक्ष बर्फ का भार आसानी से सह सकते हैं। अस्तु, जिन भागों में वन पाये जाते हैं वहाँ के निवासियों का मुख्य व्यवसाय लकड़ी काटना होता है और साधारण वर्षा वाले भागों में कृषि और उससे सम्बन्धित उद्योगों का विकास होता है। नीचे के चित्रों द्वारा स्पष्ट ज्ञात होगा कि जलवायु के अनुसार ही भूमंडल पर वनस्पति के खण्ड पाये जाते हैं।

जलवायु और कृषि कार्य—संसार के विभिन्न देशों में जलवायु की विभिन्नता के कारण खेती करने के तरीके भी भिन्न होते हैं। निम्न तापक्रम और शुष्कता के

कारण पृथ्वी के लगभग ५०% से भी अधिक भाग पर पशु-पालन, खानें खोदना अथवा लकड़ी काटने के अतिरिक्त खेती आदि नहीं की जा सकती। जिन देशों में पर्याप्त वर्षा (४०" से अधिक) और उच्च तापक्रम पाये जाते हैं वहाँ खेती, सिंचाई की सहायता के बिना ही की जाती है। ऐसी खेती आर्द्र कहलाती है। इस प्रकार की खेती के अन्तर्गत चावल, गन्ना, दालें आदि अधिक पैदा किए जाते हैं। भारत में बंगाल, बिहार



चित्र २. जलवायु और वनस्पति

उड़ीसा और मद्रास के कुछ भागों तथा विश्व के अधिक वर्षा वाले भागों में इसी प्रकार की खेती की जाती है। संसार के अर्द्ध शुष्क प्रदेशों—सं० रा० अमेरिका के पश्चिमी भागों, आस्ट्रेलिया, द० अफ्रीका और पश्चिमी एशिया तथा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र आदि—में वर्षा के अभाव के कारण फसलें सूखी खेती की सहायता से की जाती है। इस प्रकार के ढंग से गेहूँ, जौ, चना आदि बोये जाते हैं। किन्तु इस ढंग की खेती बड़ी मँहगी पड़ती है। उन प्रदेशों में जहाँ मिट्टी उपजाऊ होती है और वर्षा की कमी होती है वहाँ पानी के अभाव की पूर्ति सिंचाई के साधनों द्वारा की जाती है। इस प्रकार की सिंचित खेती के सहारे सं० रा० अमेरिका, रूस, चीन, मिश्र, फारस और भारत में गेहूँ, चावल, गन्ना, कपास आदि फसलें पैदा की जाती हैं।

जलवायु का सबसे अधिक प्रभाव खेती पर पड़ता है क्योंकि सभी देशों में एक-सी पैदावार उत्पन्न नहीं की जा सकती। किस देश में कौनसी फसल पैदा की जायगी इसका निर्धारण तापक्रम और वर्षा करते हैं। यह ठीक है कि गेहूँ की पैदावार विश्व के सभी भागों में थोड़ी-बहुत मात्रा में अवश्य की जा सकती है किन्तु यह कहा जा सकता है कि जिन देशों में तापक्रम ५७° फा० से कम और वर्षा १०" से कम किन्तु

४०" से अधिक होती है वहाँ इसकी पैदावार कम होती है। विभिन्न प्रकार की जलवायु वाले प्रदेशों मे विभिन्न प्रकार की फसलें पैदा की जा सकती हैं; जैसे उष्ण प्रदेशों में चावल, गन्ना, चाय, काफी, रबड़, महोगनी, सागौन, साल, गर्म मसाले, सिनकोना, केले, अनन्नास, नारियल आदि खूब होते हैं क्योंकि इन प्रदेशों मे इन फसलों के लिये उपयुक्त जलवायु मिलती है। ठंडे देशों मे गेहूँ, जौ, राई, चुकन्दर, सेब और नासपाती आदि फल पैदा किये जाते हैं। भूमध्यसागरीय जलवायु में तेज धूप और सर्दी मे वर्षा होने के कारण नीबू, नारंगी, जैतून, अंजीर—आदि रसदार फल बहुत पैदा किये जाते हैं। इसी प्रकार मानसूनी जलवायु का मुख्य फल केला और आम है और गर्म रेगिस्तानो का खजूर। उष्ण कटिबन्धीय घास के मैदानो में कपास, मकई, कहवा तथा प्रेरी, पम्पाज और स्टैपी में गेहूँ अधिक पैदा किये जाते है। अतः यह कहा जा सकता है कि ससार के भिन्न-भिन्न देशों मे भिन्न-भिन्न प्रकार की जलवायु के कारण भिन्न-भिन्न प्रकार की फसले व फल पैदा किये जाते है।

अगले पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट ज्ञात होगा कि कृषि की विभिन्न उपजों के लिए किस प्रकार की आवश्यकता पड़ती है—

जलवायु और व्यापार—जलवायु किसी देश के व्यापार और माल के लाने ले जाने मे भी अपना प्रभाव डालती है क्योंकि न केवल कृषि पदार्थ ही बल्कि पशु पदार्थ भी अपने भौगोलिक परिस्थिति के लिये जलवायु पर ही निर्भर रहते है। यदि पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब और राजस्थान मे गेहूँ, पश्चिमी बंगाल मे चावल, उत्तर प्रदेश मे शक्कर और दक्षिणी भारत मे तिलहन का अधिक व्यापार होता है तो उसका मुख्य कारण यही है कि इन भागो मे उपयुक्त जलवायु के कारण ये वस्तुयें अधिक मात्रा मे उत्पन्न होती है। इसी प्रकार गंगा की निचली घाटी मे जूट और मध्य प्रदेश मे कपास के व्यापार की वृद्धि का मुख्य कारण जलवायु ही है। उष्ण भागो मे (जो, अधिकतर यूरेशिया व अमेरिका के उपनिवेश है) विदेशी पूंजी, विदेशी प्रबन्ध एवम् निरीक्षण मे व्यापारिक पैमाने पर विशेष रूप से बिक्री के लिये मूल्यवान ऊँचे दर्जे की फसलें—शक्कर, चाय, रबड़, कोको, केला, नारियल, लौंग आदि—पैदा की जाती हैं। इन्ही पदार्थों पर शीतोष्ण कटिबन्धो के देशो के कई व्यवसाय निर्भर रहते हैं। पूर्वी देशो के मार्ग का पता लगाने का एकमात्र कारण इन देशो मे पैदा होने वाली उपरोक्त वस्तुयें थी। इसी प्रकार पशु पदार्थ के व्यापार पर जलवायु का प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिये शीतोष्ण-प्रदेशो में उत्तम जलवायु के कारण ही दूध-दही के धन्धे के लिए चौपाये अधिक पाले जाते है। इसी कारण भूमध्यसागरीय प्रदेशो मे ऊन तथा चीन और जापान मे रेशम का व्यापार अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में शिकागो मे विश्व की सबसे बड़ी मांस की मन्डी है तथा भारत मे कानपुर, मद्रास और आगरा मे जो चमड़े का व्यापार अधिक होता है उसका एकमात्र कारण इनके पृष्ठ-प्रदेशो मे अधिक जानवरों का पाला जाना है।

जलवायु और व्यापारिक मार्ग—व्यापारिक मार्गों का निर्धारण करने मे भी जलवायु का बड़ा हाथ रहता है। उदाहरण के लिए पहाड़ी क्षेत्रो मे शीतकाल में बर्फ पड़ने के कारण रेल-मार्ग कुछ समय के लिए बन्द हो जाते है तथा निम्न भागो मे अधिक वर्षा के कारण रेल की पटरियाँ और पुल आदि नष्ट हो जाते है। रेगिस्तान मे बालू के टीलो के कारण न तो सड़कें ही बनाई जा सकती हैं और न रेल-मार्ग ही। शीत प्रधान देश मे बर्फ पड़ने के कारण नदियाँ जम जाती हैं (जैसा कि उत्तरी रूस,

उपज	सीमा रेखा	जलवायु सम्बन्धी आवश्यकतायें		जलवायु
		तापक्रम (डिग्री में)	वर्षा	
गेहूँ	२०–६०° उ० व दक्षिण अक्षांश	३९-६८ फा०	२०- ४०″	ठंडी और तर
चावल	४०° उ० व दक्षिण अक्षांश	७५-९० फा०	६०-१००″	गर्म, तर
मकई	४०–४५° उ० व दक्षिण अक्षांश	५५-८३ फा०	४०- ८०″	गर्म, तर
जई		२८-६८ फा०	२०- ४०″	ठंडी और आर्द्र
कपास	३०–४०° उ० व दक्षिण अक्षांश	६८-८७ फा०	२०- ४०″	गर्म, तर. आर्द्र
गन्ना	३०° उ० व दक्षिण अक्षांश	६५-८८ फा०	६०- ८०″	गर्म, तर
चाय	५–३५° उ० व दक्षिण अक्षांश	७५-८५ फा०	६०-१००″	गर्म, तर
कहवा	२८–३८° उ० व दक्षिण अक्षांश	५०-७५ फा०	६०-१००″	गर्म, तर
रबड़	विषुवत् रेखा के ५° उ० व द०	७५-८० फा०	६०-१००″	गर्म, तर
कोको	विषुवत् रेखा के १५° उ० व द०	७५-८० फा०	७५-१००″	गर्म, तर

साइबेरिया व कनाडा में होता है) अतः वे शीतकाल में व्यापार के नाम की नहीं रहती। इसी प्रकार बाल्टिक सागर जाड़ों मे व्यापार के अयोग्य हो जाता है तथा शीतकाल मे भारत और तिब्बत के बीच मे होने वाला व्यापार भी ठप्प हो जाता है। प्राचीन काल मे जहाज हवा की सहायता से ही अपनी यात्रा करते थे। अफ्रीका का चक्कर लगा कर भारत मे आने वाले जहाज वर्षा में अरब सागर को पार करते थे क्योकि उस समय हवायें दक्षिण पश्चिम के उत्तर पूर्वी भाग की ओर चली जाती थी किन्तु शीत ऋतु मे और ग्रीष्म ऋतु मे लौटते हुये जहाज अफ्रीका का चक्कर लगा कर जाते थे। किन्तु अब आधुनिक जलयानो पर उन हवाओं का प्रभाव नहीं पडता क्योकि वे यंत्र शक्ति से चलाये जाते हैं। अब भी बहुत से जहाज लिवरपूल से आस्ट्रेलिया जाने के लिये केप-मार्ग का अनुसरण करते हैं क्योकि पछुआ हवायें अनुकूल पड़ती हैं और स्वेज मार्ग से लौटते हैं ताकि पछुआ हवाओं की प्रतिकूलता से बचते रहें। जिन भागो में सघन कुहरा घिर जाता है वहाँ जहाजो के टकराने की आशंका रहती है अत. ऐसे भागों से बचने का प्रयत्न किया जाता है। उत्तरी अटलांटिक जल-मार्ग न्यूफान्डलैंड से बचकर जाता है। ग्रीनलैंड द्वीप के निकट समुद्र में बड़े-बड़े हिम-पिंड तैरते रहते हैं इसलिये यूरोप से अमेरिका जाने वाला समुद्री मार्ग ग्रीनलैंड से बचकर दक्षिण की ओर जाता है। वायुयानों के मार्गों पर भी जलवायु का बडा प्रभाव पड़ता है। ऊपरी आकाश मे अधिक ठंड होने के कारण, गहरे बादल तथा वर्फ व बालू की आँधियो और तेज हवा के कारण हवाई जहाज नष्ट होकर गिर पड़ते हैं। शीतकाल मे कोहरा होने के कारण भी हवाई जहाजों को बड़ी हानि होती है। बर्फीले प्रदेशो मे बर्फ पर फिसलने वाली बिना पहियो की गाड़ियाँ तथा गर्म प्रदेशो मे पहियों वाली गाडियां और रेगिस्तान मे ऊँट की सवारी आदि का होना जलवायु के ही परिणाम हैं।

मानव ने कई प्रकार से जलवायु के साथ सामजस्य स्थापित कर लिया है। जैसे, (१) ऐसी वस्तुओं का प्रयोग करना जिनसे सीधे जलवायु के प्रभाव से बचा जा सके। अत्यंत शीत प्रदेशो मे सर्दी से बचने के लिए सील, ह्वेल, आदि मछलियों की खाल के कपडे अथवा समूरदार खालो के चुस्त कपडे पहनना, समशीतोष्ण अथवा शीतोष्ण भागो मे ऊनी कपड़ो का उपयोग करना, उष्ण प्रदेशों मे सूती कपडे पहनना जहाँ इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं हो सके वहाँ धूप, वर्षा, शीत आदि से बचने के लिए गुफाओं आदि का प्रयोग करना।

(२) जिन प्रदेशों मे ये परिस्थितियाँ भी सम्भव नहीं होती वहाँ वह अपने आपको जलवायु मे अनुकूलन कर लेता है और धीरे-धीरे इस प्रकार की जलवायु मे रहने का अभ्यस्त हो जाता है।

(३) जलवायु के अनुकूल ही वह वनस्पति, फसलो तथा अपने कार्यों मे परिवर्तन कर लेता है। मरुस्थली भागो मे अत्यधिक ताप या सूखे को मानव नहीं बदल सका किन्तु उसने सिंचाई के साधन उपलब्ध कर खेती को सफल बना लिया है।

(४) श्री मिल्स के अनुसार अधिक तापक्रम मे शरीर से अधिक पसीना बहा कर और अधिक नमक निकाल कर अनुकूलन करता है। इसी कारण अधिक गरमी मे बार-बार पानी पीने की आवश्यकता पड़ती है। नमक की मात्रा भी अधिक चाही जाती है। ऊँचे तापक्रम मे शरीर में रक्त का दौरा कम रहता है। इस विधि के द्वारा शरीर जलवायु के साथ अनुकूलन करता है।

(७) वनस्पति (Vegetation)

भूमि की बनावट, तापक्रम, आर्द्रता, सूर्य का प्रकाश मिलकर किसी प्रदेश को वनस्पति और जीव मंडल को निर्धारित करते हैं। जलवायु और वर्षा के अनुसार (१) सदाबहार (Perennial) अथवा जंगल, (२) वार्षिक वनस्पति (Annual Vegetation) वाला भाग अथवा घास के मैदान, तथा (३) नगण्य वनस्पति (Nominal Vegetation) वाला भाग या मरुस्थल। मरुस्थल लगभग ६० लाख वर्ग मील भूमि में विस्तृत है। इसके अतिरिक्त ११० लाख वर्गमील प्रदेश इतना शुष्क है कि उस पर घास तो उगती है किन्तु खेती विस्तृत आधार पर सम्भव नही।

जलवायु की दशाओ मे स्थानीय अन्तर होने के कारण जंगल कठोर लकड़ी के सदाबहार अथवा नुकीले पत्तियो वाले सदाबहार अथवा पतझड़ वाले होते हैं। घास के मैदानों मे लम्बे और गुच्छेदार घास के सवाना तथा छोटी और अच्छी घास के प्रेरी या शुष्क और भूरे स्टेपी प्रदेश आते है। रेगिस्तानो मे केवल झाड़ियाँ और कँटीदार वनस्पति अथवा केवल काई और लिचेन ही हो सकते हैं। क्योंकि यहाँ आर्द्रता का अभाव मिलता है। मानसूनी जलवायु प्रदेश मे केवल एक ऋतु मे ही वर्षा होती है अतः शुष्क ऋतु मे वृक्षों की पत्तियाँ झड़ जाती हैं। शीतोष्ण कटिबन्धों में जहाँ वर्षा ग्रीष्म मे न होकर शीतऋतु मे होती है वहाँ ग्रीष्म ऋतु के कठिन ताप को न सहन कर सकने के कारण वनस्पति अनेक ढगो से जल प्राप्त करती और सचय रखती है।

वन सम्पत्ति का मानव जीवन के रहन-सहन और उद्योग-धन्धों पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए नार्वे, स्वीडेन, कनाडा, साइबेरिया आदि देशों मे व्यापारिक वन सम्पत्ति के कारण ही इन देशो के निवासियो का मुख्य-उद्योग लकड़ी काटना हो गया है। शीत जलवायु के रूप मे प्रकृति भी नदियो आदि मे बर्फ जमा कर लकड़ियों को वन प्रदेशो से औद्योगिक केन्द्रो तक पहुँचाने मे सहयोग देती है। यही कारण है कि इन देशो मे लकडी चीरने, नावें बनाने, कागज बनाने, लुग्दी, दियासलाई और फर्नीचर आदि तैयार करने के कारखाने स्थापित हो चुके हैं। वनों से कई प्रकार के कच्चे सामान भी प्राप्त होते हैं किन्तु सबसे बडा लाभ इनके द्वारा जलवायु को सम बनाने तथा अधिक मात्रा मे वर्षा देने और मिट्टी के कटाव को रोकने में होता है। वनस्पति भौतिक परिस्थितियों तथा जलवायु के आपसी प्रभाव का सूचक है क्योंकि विभिन्न जलवायु प्रदेश मे विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। जिन भागों मे मानव ने अपने भोजन के लिए प्राकृतिक वनस्पति को नष्ट कर दिया है वहाँ उस क्षेत्र की प्राकृतिक रचना और जलवायु के अनुसार ही विशेष प्रकार के खाद्यान्न अथवा अन्य फसलें पैदा की जाने लगी हैं। उदाहरण के लिए रबड, कहवा, चावल, शक्कर अथवा केले शीत या शीतोष्ण जलवायु मे पैदा नहीं किये जा सकते—और न अंगूर व सेव ही विषुवत् रेखीय जलवायु मे पैदा की जा सकती है।

वनस्पति किसी क्षेत्र की मानवीय उपयुक्तता का मापक है। वनस्पति से ही क्षेत्र विशेष के सांस्कृतिक उत्थान का अनुमान लगाया जा सकता है। वहाँ के निवासियों के विभिन्न व्यवसायों की कल्पना की जा सकती है और उसके अन्तर्देशीय तथा

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर प्रकाश डाला जा सकता है। वनस्पति जलवायु की परिचायक होती है और मिट्टी की दशा की भविष्यवाणी करती है।

तापक्रम तथा इसका विस्तार		अत्यधिक गर्म	गर्म शीतोष्ण	ठंढे शीतोष्ण	अत्यधिक ठंढा
वर्षा की मात्रा	४०"	सदाबहार वन	पतझड़ वन	हिमाच्छादित मरुस्थल	
	२०" से ४०"	उष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान (सवन्ना)	कांटेदार झाड़ियाँ और घास के मैदान	शीत बंजर प्रदेश	
	१०" से कम	शुष्क तथा उष्ण मरुस्थल	साधारण झाड़ियाँ	शीत मरुस्थल	

(८) पशु (Fauna)

पशु भी वनस्पति के समान प्राकृतिक वातावरण पर निर्भर रहते हैं। इनमें अन्तर केवल इतना है कि इनमें *स्थान परित्याग करने की क्षमता होती है।* किसी स्थान पर पाए जाने वाली पशु सम्पत्ति अधिकांशतः वहाँ की वनस्पति पर ही निर्भर रहती है। उष्ण कटिबन्धीय जङ्गलों में बन्दर, चिमगादड़, छिपकली, शेर, चीतें, भालू, जहरीले जानवर, सर्प, चींटी, दीमक, कीड़े मकोड़े तथा घनी वनस्पति के कारण भयानक और विषैले जीव-जन्तु जो प्रायः वृक्षों पर ही रहते हैं अथवा वृक्षों पर उछल-कूद कर सकें पाये जाते हैं। मरुस्थलों में कटीली झाड़ियाँ अथवा खजूर व मोटे अनाज पर निर्वाह करने वाले ऊँट और बकरियाँ आदि पाई जाती हैं जहाँ मक्का, जौ, चुकन्दर आदि पैदा किये जाते हैं। घास के मैदानों में चौपाये, जैबरा, हिरन, गीदड़, टिड्डी, झींगुर और टुंड्रा के शीत भागों में श्वेत लोमड़ी रेंडियर, समूरदार पशु अथवा भालू अधिक पाये जाते हैं। प्रवाल मुख्यतः उष्ण कटिबन्धीय भागों में, स्पंज अर्द्ध-उष्ण कटिबन्ध में और अनेक प्रकार की मछलियाँ तथा घोंघे और पक्षी प्रायः सर्वत्र ही पाये जाते हैं।

मानव ने अपनी बुद्धि और श्रम द्वारा बहुत से पशुओं को पालतू बनाकर अपने दैनिक भोजन, वस्त्र, औजार आदि की आवश्यकता पूरी की है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में घोड़े, तिब्बत में याक, एण्डीज में लामा और भारत व चीन में बैलों के बिना खेती करना प्रायः असम्भव है। टुंड्रा में सील, वालरस आदि मछलियाँ वहाँ के निवासियों के लिए माँस, चर्बी, तेल, खालें आदि प्रदान करती हैं। समुद्रों की मछलियाँ आज के सभ्य जगत की सबसे मूल्यवान सम्पत्ति मोती के रूप में देती हैं। किन्तु यह विचारणीय है कि अमुक पशु अमुक वातावरण में ही रह सकते हैं। उदाहरण के लिए मोती देने वाली मछलियां केवल गहरे समुद्रों और शहद की मक्खियाँ बकवीट (Buckwheat) अनाज वाले स्थानों में ही पाली जा सकती हैं।

अपनी परिस्थिति के अनुसार ही पशु हिंसक या अहिंसक होते हैं। हिंसक पशु अपनी आवश्यकता के अनुसार तेज नाखून, लंबे पंजे, शक्ति और तीक्ष्ण दृष्टि वाले होते हैं जबकि अहिंसक पशु साधारणतः नम्र, तीव्र गति से दौड़ने वाले, सतर्क और सामूहिक जीवन व्यतीत करने वाले होते है।

मानव उपयोग की दृष्टि से पशु दो प्रकार के होते हैं; मित्र पशु और शत्रु पशु। मित्र पशु मानव के लिए बड़े सहायक होते है। एँडीज और रॉकी पर्वत पर लामा और अलपाका, तिब्बत के पठारों पर याक, ब्रह्मा मे हाथी, मरुस्थलों मे ऊँट और टुन्ड्रा मे रेंडियर तथा सभ्य देशों में मधुमक्खी, रेशम के कीड़े तथा गाय-बैल, और भेड़ बकरियाँ मानव के लिए वरदान स्वरूप है। पिछले कुछ पशुओं से मानव को सामान ढोने की सुविधा मिलती है और पालतू पशुओं से दूध, चमड़ा, खाले, मास आदि।

इसके विपरीत शत्रु पशु वे हैं जो परोक्ष रूप से मानव को हानि पहुँचाते हैं। अनेक ऐसे कीड़े-मकोड़े और कीटाणु हैं जिनके काटने से मनुष्य बीमार हो जाते हैं और उनकी शक्ति, कार्य-क्षमता आदि कम हो जाती है तथा ये कीटाणु उसकी फसलों को नष्ट कर देते है तथा पालतू पशुओं को भी कमजोर बना देते हैं। इस सबका प्रभाव उसके सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र पर पड़ता है। चूहे, चिड़ियाँ गिलहरी और खरगोश खेती को अपरिमित हानि पहुँचाते है। टुन्ड्रा के दलदली भागों में मच्छर, मध्य अफ्रीका में टिसी-टिसी (Tse-Tse) मक्खियाँ तथा मलाया, द० अफ्रीका, भारत, हिंदचीन आदि क्षेत्रों में टिड्डी दलों द्वारा खड़ी हुई फसलें नष्ट हो जाती है। बन्दर, हाथी, भेड़िये, बाघ आदि भी खेतों को नष्ट कर देते है।

विषुवत् रेखीय भागो से लगाकर समशीतोष्ण क्षेत्रों तक मच्छरों का प्रभाव रहता है। इससे इन क्षेत्रों मे मलेरिया का बड़ा प्रकोप पाया जाता है, विशेषत. उष्ण प्रदेशों मे। उष्ण प्रदेशों मे ही अफ्रीका के सघन वनो मे टिसी-टिसी मक्खियाँ जंगली पशुओं तथा झाड़ियों पर रहती है। इनके काटने से शरीर मे विष घुस जाता है जिससे धीरे-धीरे खून जमने लगता हैं, शरीर मे आलस्य भरता है और मनुष्य को सोने की बीमारी (Sleeping sickness) हो जाती है जिससे कालान्तर में मनुष्य की मृत्यु तक हो जाती है। इन बीमारियों के अतिरिक्त उष्ण कटिबन्धीय भागो में नेहरू, पीला बुखार, पेचिश, आदि बीमारियाँ भी खूब फैलती हैं।

प्रो० ब्रून्स का मत है कि मनुष्य ने प्राकृतिक वनस्पति और पशु जगत पर विजय प्राप्त करली है। इनके अनुसार यद्यपि वनस्पति और पशु वृद्धि के लिए प्रकृति भौतिक परिस्थितियाँ बनाती है किन्तु जिस ढंग से भूमि का विदोहन किया जाता है तथा पशुओं को पाला जा रहा है वह सब मानव स्वेच्छा का उदाहरण प्रस्तुत करते है। प्रो० ब्रून्स के शब्दो मे, "ब्रूस के पठार पर अथवा रूस की काली मिट्टी मे होने वाली मकई, भूमध्य सागरीय भागों में सीढ़ीदार ढालों पर अंगूर तथा जैतून, चीन और दक्षिणी पूर्वी एशिया में चावलों के खेत, रोमन कैम्पेना तथा सहारा मे ताड़ की छाया में पैदा किये जाने वाले अजीर के वृक्ष आदि सभी मनुष्यों के परिश्रम, इच्छा और स्वतन्त्रता के प्रमाण है।" इसी प्रकार उसने पशुओं को भी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पाला है। जो पशु उसके लिए हानिकर है उसके विरुद्ध उसने वैज्ञानिक उपायों का सहारा लिया है। उसने खाद्यान्नों की अनेक नई किस्मे तैयार की है और पशुओ को समान वातावरण मे विश्व के अनेक भागो मे

स्थानान्तरण किया है। किन्तु इन सब पर भौतिक परिस्थितियों का प्रभाव पूर्ण रूप से दृष्टिगोचर होता है जैसा कि **प्रो० ब्रुन्स** ने कहा है—"पैदा किये गये पौधे और पालतू पशु दोनों का ही भूगोल मोटे रूप में उस क्षेत्र की साधारण जलवायु सबधी भूगोल से सबधित है और कृषि के मुख्य रूप तथा पशु पालन का अध्ययन पृथ्वी के जलवायु प्रदेशो की विशेषता जाने बिना सभव नही है।"[32]

(ख) सांस्कृतिक परिस्थिति (Cultural Environment)

ससार के मानव जीवन को अध्ययन करने से पता चलता है कि मनुष्य जाति की आवश्यकताओ की उत्पत्ति का प्रमुख कारण जलवायु अथवा सभ्यता अर्थात् समाज की रीति-नीति ही है। शरीर को सुरक्षित रखने वाली आवश्यकतायें जलवायु के कारण उठती है। परन्तु शरीर को एक विशेष रूप से सुरक्षित रखने के लिये जो आवश्यकतायें होती हैं वे सामाजिक अथवा सास्कृतिक हैं। जिस प्रकार ससार के भिन्न भिन्न भागो में जलवायु की भिन्नता के कारण विशेष प्रकार के वस्त्र, भोजन, निवास-स्थान इत्यादि की आवश्यकता होती है उसी प्रकार सामाजिक सगठन तथा सांस्कृतिक भिन्नता के कारण पृथ्वी के भिन्न-भिन्न भागो मे भिन्न-भिन्न आवश्यकतायें होती है। आवश्यकताओं की पूर्ति मे सारा ससार आज लगा हुआ है। मनुष्य की ये आवश्यकतायें तथा उनकी पूर्ति भौगोलिक परिस्थिति के ही प्रभाव हैं।

ससार मे मनुष्य जाति की उन्नति का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि प्राकृतिक तथा सास्कृतिक परिस्थिति एक दूसरे से अलग नही की जा सकती है। मनुष्य पर इन दोनो परिस्थतियो का प्रभाव सम्मिलित रूप से होता है। किन्तु मनुष्य । इन विशेषताओ के कारण जिनका वर्णन ऊपर किया गया है इस प्रभाव को नापना ... न है। किसी भी देश के आर्थिक विकास मे सास्कृतिक परिस्थितियो का गहरा प्रभाव पड़ता है। सास्कृतिक वातावरण उन भूखण्डो का मिश्रण है जो मनुष्य की क्रियाओ का प्रदर्शन करते हैं। इनमे जो तत्व सम्मिलित है उनमे विस्तृत खेत, सिंचाई के साधन, मकान, यातायात व सवाद सचार के साधन और मनुष्य स्वय हैं।

सास्कृतिक परिस्थितियो के अन्तर्गत निम्न बातो का विवेचन किया जाता है—

१. मनुष्य की प्रजातियाँ (Races of Man)—किसी भी देश की आर्थिक एवं व्यापारिक स्थिति पर उस देश के निवासियो की जाति का गहरा प्रभाव पडता है। विश्व मे मुख्यत. चार प्रकार की प्रजातियाँ पाई जाती है—पीत वर्ण, कृष्ण वर्ण, गौर वर्ण और लाल वर्ण। मोटे तौर पर गौर वर्ण के लोग अधिकाशत समस्त यूरोपीय, उत्तरी अफ्रीका, द प एशियाई और आस्ट्रेलियाई है। पीतवर्ण के लोग लैपलैंड से लगाकर थाईलैंड तक खीची जाने वाली रेखा के पूर्व के क्षेत्रो मे मिलते है। उत्तरी और पूर्वी एशियाई, फिनिश, लैप्स, एस्कीमो, चुकी और कमचोडल्स आदि पीतवर्ण के ही है। काले वर्ण के लोग मुख्यत. अफ्रीकी नीग्रो, इडोनेशियन तथा सामुद्रिक नीग्रीटोस है। विश्व की जनसख्या का लगभग ४३% पीत वर्ण का, ६३% गौरवर्ण और २४% काले वर्ण का है।

(क) पीत वर्ण (Yellow Race) वाले मनुष्यों का रग पीला, बाल सीधे चपटी नाक, उभरी हुई गाल की हड्डियाँ, गोल खोपडी, आँखें छोटी और तिरछी होती

32. *Brunhes*, **Op. Cit.**, p. 100.

हैं। ये दो भागों में बँटे हुए है : (१) उत्तर में मंगोलिया तथा बैरिंग सागर से लगा कर कैस्पीयन सागर तक फैले हुये है जो मंगोलिया मे मंगोल, एशिया माइनर और तुर्किस्तान मे तुर्क, उत्तरी यूरोप में फिन और लैप, हंगरी में मगयार, उत्तरी पूर्वी एशिया में साइबेरियन, जापान में जापानी तथा कोरिया में कोरियन लोग कहलाते है। (२) दक्षिण मे पीत वर्ण वाले ये मनुष्य चीन में चीनी, ब्रह्मा में ब्रह्मी, श्याम मे श्यामी तथा तिब्बत मे तिब्बती कहलाते हैं। पीत वर्ण के लोगों की सभ्यता बडी ऊँची है और ये लोग विशेषकर व्यापारी वर्ग के है। इसका कारण इन देशो मे पाये जाने वाले खनिज पदार्थ और आवागमन के मार्गो की सुविधा है। इनकी उन्नति का श्रेय मुख्यतया गौर वर्ण की जाति को है।

(ख) कृष्ण वर्ण (Black Race) जाति के मनुष्यों का रंग काला या गहरा भूरा, बाल घुघराले, नाक चपटी, गालो की हड्डियाँ उभरी हुई, चौड़े होठ, मोटे और भद्दे, जबडे बाहर निकले हुये, तंग और लम्बी खोपडी तथा कद ठिगना होता है। ये भी मुख्यतया दो भागों मे बँटे हैं (१) पूर्वी भाग के लोग जिन्हे आस्ट्रेलिया तथा मलाया द्वीप समूह में निग्रीटो (Negrito) कहते हैं। (२) पश्चिमी भाग के लोग जिसमें विशेषकर अफ्रीका के आदिम निवासी है। सूडान और भूमध्यवर्ती अफ्रीका में इनको सूडानी, मध्य और दक्षिणी अफ्रीका मे बंटू, दक्षिणी अफ्रीका मे होटेंटो और कांगो नदी के बेसिन और अडमान द्वीपो मे पिग्मी तथा लंका मे वेद्द (Veddah) कहते है। ये प्राणी बिल्कुल ही नग्नावस्था मे रहते है। कृष्ण वर्ण की जाति के लोग सबसे कम सभ्य और व्यापार की दृष्टि से बहुत ही पिछडे हुये हैं क्योंकि उष्ण प्रदेशो की गर्मतर जलवायु और खाद्य पदार्थो की बाहुल्यता ने इनको आलसी, अकर्मण्य और निरुत्साही बना दिया है जिसके फलस्वरूप इनका आर्थिक विकास बहुत कम हो पाया है।

(ग) गौर वर्ण (White Race) के लोगो का रंग श्वेत, कद लम्बा, बाल भूरे, जबडे छोटे, नाक सीधी और गठी हुई, ओंठ अच्छी प्रकार से बने हुये तथा आँखें नीली होती हैं। इस जाति के दो भाग हैं (१) वे लोग जो भूमध्य सागर के निकटवर्ती देशों में रहते है। इसके अन्तर्गत मिश्री, तुरेग, सुमाली, बरबर, इट्टीसोपन, फेलेन आदि है। इन सबको हैमाइट कहते है। इसकी एक शाखा—जिसे सैमाइट कहते है—के लोग एबीसीनियन, अरब, असीरियन और फोनीकियन कहलाते है। (२) वे लोग हैं जो विशेषकर भारत तथा ब्रिटिश द्वीप समूह में रहते है। इस शाखा के लोगो को भारत में हिन्दू, दक्षिण में द्रविड, फारस, ईरान और आर्मेनियाँ मे ईरानी, यूनान में यूनानी, कैल्टस मे आयरिश तथा अन्य स्थानो में स्कॉच, वेल्स, ब्रिटेन्स, स्पेनिश, रूमानियन, इटेलियन, स्लोवेनिक, रूसी, जेक्स, पोल, बलगेरियन, सर्वीयन, जर्मन, डच, अंग्रेज तथा स्कैन्डेवियन्स, इण्डोनेशियन-मावरी-समोव आदि कहते हैं। इन लोगो की सभ्यता विश्व मे सबसे बढी-चढी है। वर्तमान काल मे वाणिज्य, व्यापार और राजनीतिक विषयो मे इन लोगो ने बडी प्रगति की है। इसका मुख्य कारण इनके निवास स्थान की उत्तम जलवायु है। इसी कारण से ये लोग मेहनती, उत्साही, धैर्यवान तथा अच्छे आविष्कारक है। उद्योग-धन्धों और विज्ञान की उन्नति मे उन्होंने काफी प्रभाव डाला है।

(घ) लाल वर्ण (Red Race) की विशेषता पीत वर्ण जातियो से मिलती-जुलती है। इनके बाल काले व सीधे, इनका रंग ताम्रयुक्त, नाक बडी किन्तु सँकरी,

आँखे सीधी व बड़ी तथा कद लम्बा होता है। ये तीन श्रेणियो मे विभक्त पाये जाते है . (१) उत्तर मे एलास्का प्रात, लैब्रेडोर तथा उत्तरी पूर्वी भागो मे (अमरीका) **एस्कीमों**, उत्तरी अमेरिका के मध्यवर्ती मैदानो मे **रैड इंडियन**; (२) मध्य अमेरिका मे **मैक्सिको**, और (३) अमेजन बेसिन मे **अमेजोनियन**, दक्षिणी भागो मे **उवावो** और **पेटेगोनियन** कहलाते है। ये विश्व के सबसे अधिक पिछड़े हुये लोग है जिनका विकास बिल्कुल नही हो पाया है।

टेलर के अनुसार जातियों का वर्गीकरण[33] (Taylor's Classification of Races)—कनाडा के प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता ग्रिफिथ टेलर ने विश्व मे सात प्रकार की जातियाँ बतलाई है —

जाति	सिर का आकार
निग्रीटो	अव-सकीर्ण सिर
नीग्रो	अति-लम्बा सिर
आस्ट्रेलॉएड	लम्बा-सिर
भूमध्यसागरीय	मध्य कोटि का लम्बा सिर
नौर्डिक	मध्य कोटि का सिर
अल्पाइन	चौडा सिर
मगोलिक या पूर्व अल्पाइन	अति चौडा सिर

विभाजन की इस प्रणाली को बडी मान्यता दी गई है क्योकि मध्य एशिया से सम्बन्धित उनकी स्थिति की व्यवस्था ठीक इसी प्रकार है। इस आधार पर हम इस तथ्य पर पहुँच सकते हैं कि लम्बा सिर बहुत प्राचीन मानव उत्पत्ति का द्योतक है और चौडा सिर नवीन उत्पत्ति का।

(१) निग्रीटो (Negrito)—निग्रीटो रग मे लाल से लेकर काला कत्थई तक होता है। इनका डील डौल नाटा और इनकी नाक चौडी और चपटी होती है। अणुवीक्षण यन्त्र से देखने पर इनके बाल चपटे और फीते के समान होते हैं। इससे ये आपस मे लिपट कर गाँठ का निर्माण करते है। इनके जबडे और दाँत निकले होते हैं जिसमे एक उत्तल (Convex) स्वरूपीय ढाँचा बनता है। इस समय कुछ निग्रीटो ही जीवित है। उनमे भी अन्य जातियो के रक्त का इतना मिश्रण हो गया है कि उनके सिर के असली आकार के विषय मे ठीक-ठीक कुछ कहा नही जा सकता। परन्तु उनके सिर का आकार तार्किक रूप से अवश्य ६८ मे ७० तक रहा होगा। निग्रीटो प्रकार के लोग इस समय लका, मलाया, फिलिपाइन और न्यूगिनी के जगली पहाडी प्रदेशो मे रहते हैं। इनके बडे-बडे दल युगैंडा, कागोलैंड, फ्रेंच विषुवत रेखा, कैमरून और अडमान द्वीप समूह मे रहते है। अन्य स्थान जैसे पश्चिमी अफ्रीका और दक्षिणी अफ्रीका मे भी इनके कुछ चिह्न मिलते है। तसमानिया और जावा मे भी पहले उनका निवास होगा।

33 *Taylor, G*, "The Evolution & Distribution of Race, Culture & Language", **Geographical Review**, Vol. XI, No. 1,1921, pp. 59-119.

(२) **नीग्रो** (Negro)—इनका सिर अत्यन्त लम्बा होता है और अनुपात ७० से ७२ तक मिलता है। उर्ध्वकाट (cross-section) में इनके बाल लम्बे और अंडाकार होते हैं जिससे यह घुघराले बन जाते हैं। इनके चमड़े का रंग प्रायः काला और काजल के समान होता है। इनके जबड़े निकले हुए और नाक चपटी और चौड़ी होती है। नीग्रो जाति दो स्थानों में मिलती है—प्राचीन दुनियाँ के दोनों किनारों पर। इनमें पहली है सूडान और गीनी तट पश्चिमी अफ्रीका में और दूसरी है पपुआ या न्यूगिनी में मिलती है। पूर्वैतिहासिक युग में नीग्रो दक्षिणी यूरोप और एशिया में भी रहे है।

(३) **आस्ट्रेलॉएड** (Australoid)—इनका सिर लम्बा और अनुपात ७२ से ७४ तक होता है। बाल पूर्णतः घुघराले और चमड़ा काला से कत्थई रंग का होता है। प्रत्येक बाल उर्ध्व काट में लम्बा अंडाकार होता है। जबड़े कुछ निकले हुये और नाक साधारण रूप में चौड़ी होती है। मानव जाति के ये प्रकार आस्ट्रेलिया में मिलते हैं। ये एक समय सारे आस्ट्रेलिया में छाये हुये थे (ब्रिटिश उपनिवेशों के पूर्व)। दक्षिणी भारत के जंगलों में भी इन लोगों का दल मिलता है। ब्राजील के **बॉस** और **बूटो कूडो** जातियाँ भी इसी प्रकार की है। पूर्वी और मध्य अफ्रीका की बंटू जाति भी इससे समता रखती है। पूर्वैतिहासिक युग में आस्ट्रेलॉएड उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया और दक्षिणी यूरोप में भी पाये जाते थे।

(४) **भूमध्य सागरीय** (Mediterranean)—साधारण सिर (अनुपात ७४ से ७७), अंडाकार नाक, घुघराले बाल (उर्ध्व काट में अंडाकार) और निकले जबड़े वाली यह जाति कई स्थानों में मिलती है। इनकी प्राचीनतम जाति, जो **आरिगनेशियम** के नाम से प्रसिद्ध है, कद में बड़े छोटे और हड्डीदार चेहरे के होते हैं। आगे की यह जाति जिसका उदाहरण आइबेरियन है सुडौल शरीर वाली और जैतून एवं तांबे के रंग की होती है। इनसे भी आगे की जाति (सैमाइट) लम्बी और सुन्दर होती है और उनकी नाक सुदृढ़ होती है। यह जाति सभी बसे हुये महा-देशों के बाहरी किनारों पर मिलती हैं। इसमें यूरोप के **पुर्तगीज**, अफ्रीका के **मिश्री**, भारत के **द्रविड़** और आस्ट्रेलिया के **माइक्रोनेसियन** सम्मिलित है। उत्तरी अमरीका के **इरोक्वाइस** और दक्षिणी अमेरिका के **तूपी** भी इसी श्रेणी में आते हैं।

(५) **नॉर्डिक** (Nordic)—मध्य कोटि की लम्बाई और चौड़ाई के सिर (७८ से ८२), लहरदार बाल (अंडाकार उर्ध्वकाट), चपटा चेहरा और गरुड़वत नाक इनकी पहचान है। अधिकांश नौर्डिक लोगों के चमड़े हल्के भूरे से गुलाबी रंग के होते हैं। उत्तरी यूरोपियन के चमड़े गोरे से गुलाबी गोरे होते है। मानव इतिहास के उषाकाल में यह जाति यूरोप के भूमध्य सागरीय किनारों पर फैली थी और एशिया एवं दोनों अमरीका में। कहा जाता है कि न्यूजीलैंड और वृहद् आस्ट्रेलेसियन—सामुद्रिक प्रदेशों में पोलीनेशिया के भाग में भी इनका विस्तार था। सिर्फ अफ्रीका में इनके विस्तार के कटिबन्ध नहीं मिलते यद्यपि उत्तर पश्चिमी अफ्रीका के लोगों में इनके कुछ लक्षण वर्तमान हैं।

(६) **अल्पाइन** (Alpine)—अल्पाइन चौड़े सिर के होते हैं (८१ से ८५) और चेहरे एवं चमड़े का ढाँचा सीधा होता है। नाक साफ तौर से संकीर्ण और बाल साफ होते है। (उर्ध्व काट में गोलाकार) और रंग में भूरी गोराई से चर्म रंग तक। अल्पाइन जाति की पश्चिमी शाखा जिसमें **स्लेव, आरमेनियंस, अफगान** आदि

सम्मिलित हैं रंग में गोरे होते हैं। परन्तु पूर्वी शाखा के लोग यानी फिन्, मँगोआर्स, मंयूज, और सीवक्स कुछ पीलापन लियें होते हैं। मानव इतिहास के प्रारम्भ में ये दोनों अमेरिका और एशिया के कुछ भागों में विस्तृत थे और यूरोप के मध्य की ओर घुसे हुये थे।

(७) मंगोलियन (Mangolians)—उत्तर अल्पाइन या मंगोलियन गोल सिर (८५ से ९०) के होते हैं। इनके बाल सीधे, चेहरा और जबड़ा नतोतल ढांचे (Concave-profile) और नाक सकरी, रंग हल्का पीला सा खुमानी रंग का होता

इतिहास के उपाकाल में यह गति सिर्फ मध्य एशिया के केन्द्रीय स्थानों में सीमित थी। उसके बाद वह पश्चिम में तुर्किस्तान और पूर्व में पूर्वोतट तक फैली। पिछले प्रदेश में यह अल्पाइन, नॉडिक और भूमध्य सागरीय लोगों से मिश्रित हो गई जिससे एक नई जाति वर्ण शंकर बनी जो चीन तथा उसके समीपवर्तीय प्रदेशों में पाई जाती है।

२. धर्म (Religion)

पृथ्वी पर निवास करने वाली सभी जातियों और समुदायों के रहन-सहन, आचार-विचार और खान-पान पर भिन्न-भिन्न धर्म प्रणालियों का गहरा प्रभाव पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि विभिन्न समुदायों की गतिविधि उनके धर्म के अनुसार ही हो जाती है। धर्मप्रणालियाँ किसी कार्य विशेष को निषेधात्मक बता और कुछ पर विशेष प्रतिबन्ध लगा कर विभिन्न समुदायों के कार्यों को निर्धारित करती हैं। इसका प्रभाव उनके आर्थिक विकास पर भी पड़ता है।

विश्व में मुख्यतया चार प्रकार के धर्म पाये जाते हैं (१) हिन्दू धर्म, (२) इस्लाम धर्म, (३) बौद्ध धम, और (४) ईसाई धर्म।

विश्व के मुख्य धर्मों के अनुयायियों की संख्या[34]

ईसाई धर्म	८०४,३०६,८६०
यहूदी धर्म	११,८६६,६२०
मुस्लिम धर्म	४१६,५७०,०२८
पारसी धर्म	१४०,०००
शिन्टो धर्म	३०,०००,०००
कनफ्यूशियस धर्म	५०,०५३,२००
बुद्ध धर्म	१५०,३१०,०००
हिन्दू धर्म	३१५,९९९,४६५
आदि धर्म	१२१,१५०,०००
अन्य धर्म	३०६,२४७,३२७
योग	२,५०६,६३४,०००

हिन्दू धर्म के अनुयायी विशेषत भारत में पाये जाते हैं जिनकी अनुमानित सख्या लगभग ३२ करोड़ है। इस धर्म के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न जातियाँ पाई जाती

34. Encyclopaedia Britannica's 1956 Book of the year.

हैं जिनके प्रत्येक के कर्तव्य धर्म के द्वारा ही निर्धारित किये गये है। जाति विशेष के व्यक्ति अपने धंधे को छोड़कर दूसरे धंधे नहीं कर सकते जिसके फलस्वरूप उस जाति के व्यक्तियों का पूर्ण रूप से बौद्धिक और आर्थिक विकास नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त क्योंकि एक जाति ही एक धन्धे को कर सकती है अतः जातियों की संख्या अधिक होने के कारण बड़े पैमाने पर उत्पादन नहीं किया जा सकता। किन्तु आधुनिक काल में पश्चिमी विचारों और व्यक्तियों के संसर्ग से तथा आवागमन के साधनों की उन्नति और शिक्षा का प्रचार होने के कारण जातियों की धर्म सम्बन्धी भावनायें प्रायः विलुप्त होती जा रही है। यह अधिकतर अहिंसा को मानते है अतः इनका भोजन भी विशेषतः शाकाहारी होता है।

इस्लाम धर्म के अनुयायी विशेषकर पुरानी दुनिया के देशों में यथा—उत्तरी अफ्रीका के मिश्र, सहारा, मरक्को, अरब, ईरान, सीरिया, टर्की, पैलेस्टाइन, बिलोचिस्तान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, पूर्वी अफ्रीका और मध्यवर्ती एशिया के राज्यों में तथा उत्तरी चीन, डच गायना, पूर्वी अफ्रीका आदि देशों मे फैले हुये है। ये ३० करोड़ से भी अधिक है। इस धर्म मे *मद्यपान करना और सूअर का मांस खाना* धर्म के विरुद्ध माना जाता है। अतः भूमध्य सागर के पूर्वी तटीय मुस्लिम देशों मे अंगूर के लिये उपयुक्त जलवायु होने पर भी अंगूर से शराब बनाने का धंधा बिल्कुल नही किया जाता है। किन्तु इन देशों मे कहवा पीने का अधिक प्रचार होने के कारण वह अवश्य पिया जाता है। अरब की तो मोचा काफी विश्वभर में सबसे अच्छी समझी जाती है। मुस्लिम धर्म अपने अनुयायियों को पूंजी पर ब्याज लेने से मनाई करता है अतः मुस्लिम प्रदेशों मे आधुनिक अथवा देशी बैंकिंग प्रणाली का बहुत थोड़ा विकास हो पाया है।

बौद्ध धर्म का जन्म भारत मे ५ वी ६ठी शताब्दी में हुआ था। इस धर्म के अनुयायी प्रायः दक्षिणी एशिया के देशों मे चीन, जापान, तिब्बत, मंगोलिया, नेपाल, थाईलैंड, कोरिया, हिन्द एशिया, ब्रह्मा और लंका में पाये जाते हैं। यह धर्म अहिंसा सिखाता है। अतः इन देशों मे मांस तथा उन व्यवसाय के लिये पशु-पालन का धन्धा नहीं किया जाता।

ईसाई धर्म विशेष पश्चिमी यूरोप के देशों मे और अमेरिका में पाया जाता है। इस धर्म के तीन भेद किये जाते है—रोमन कैथोलिक, प्रोटेस्टेन्ट और यूनानी अपोस्टोलिक। इनमें से सबसे ज्यादा अनुयायी रोमन कैथोलिक मत के है जो विशेषकर पश्चिमी, दक्षिणी-पश्चिमी यूरोप, संयुक्त राज्य अमरीका, मैक्सिको और दक्षिणी अमेरिका में पाये जाते हैं। इन लोगों के अपने धर्म में किसी प्रकार की मनाही न होने के कारण ये लोग मांस भी खाते है और शराब भी पीते हैं। इन देशों मे शराब व्यवसाय व पशु पालन की विशेष उन्नति हुई हैं। औद्योगिक दृष्टि से भी इन लोगों ने विश्व में सबसे ज्यादा उन्नति की है।

३. शासन प्रणाली

किसी देश के व्यापार पर अथवा वहाँ के आर्थिक विकास पर शासन प्रणालियों का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। जिन देशों मे शासन प्रबन्ध अच्छा नहीं होता अथवा जहाँ मनुष्यों को अपने जान और माल का सदैव डर बना रहता है वहाँ न तो उद्योग-धन्धे ही पनप सकते हैं और न देश का आर्थिक विकास ही हो सकता है।

विलोचिस्तान, अफगानिस्तान, मैक्सिको और पाकिस्तान इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। इन देशो की शासन प्रणाली दोषपूर्ण होने के कारण वहाँ सदैव लूट-मार तथा आन्तरिक गृह युद्ध होते रहते है और इसलिये ये देश आज तक उन्नति नही कर सके है। प्राकृतिक सम्पत्ति मे धनी होने पर भी चीन शक्तिशाली शासन के अभाव मे अब तक एक निर्धन देश रह गया है। किन्तु जापान की सरकारी नीति के कारण ही (जो देश मे उद्योग-धन्धो के पूर्ण विकास के लिए दृढ सकल्प थी) आज जापान एशिया क सबसे महत्वपूर्ण औद्योगिक देश हो गया है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की व्यापारिक नीति (भारत से कच्चा माल इगलैंड को भेजना और वहाँ से तैयार माल भारत के बाजारो मे बेचने) के कारण ही बहुत समय तक भारत के उद्योग-धन्धे विकसित न हो सके और वह बहुत काल तक एक कृषि प्रधान देश ही रह गया।

४. जनसंख्या (Population)

किसी देश की जनसख्या के आकार और सघनता का वहाँ के वाणिज्य और व्यापार पर भी बहुत प्रभाव पडता है। जनसख्या का घनत्व स्वास्थ्यकर जलवायु, विस्तृत मैदान अथवा नदी घाटियो की उपलब्धता, भूमि की उर्वरा शक्ति अथवा जीवन निर्वाह के साधनो और आवागमन के साधनो (मार्गों) की सुविधा पर निर्भर करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय सघ के अनुमानानुसार (सन् १९६१) सम्पूर्ण विश्व मे ३०,३४० लाख व्यक्ति निवास करते थे जिनमे से १७,०४२ लाख (लगभग ५५% एशिया मे रूस को छोडकर), ४,२६२ लाख यूरोप मे, ४,१५४ लाख अमरीका मे, २,०८८ लाख रूस मे, २,६०१ लाख अफ्रीका मे और १६३ लाख ओसिनिया मे थे। चीन विश्व का सबसे घना बसा देश है जहाँ ७७०० लाख व्यक्ति रहते हैं। इसके बाद भारत का स्थान आता है (४,३८० लाख)। इन दोनो देशो के बाद विश्व के प्रमुख देशो मे सोवियत रूस (२,०८८ लाख), सयुक्त राज्य अमेरिका (१,७६३ लाख), जापान (९४९ लाख), जर्मनी, इङ्गलैंड, इटली और फ्रास का नम्बर आता है।

यह तथ्य विशेष रूप से स्मरणीय है कि विश्व की आधी जनसख्या पृथ्वी के केवल ५% भाग पर रहती है और विश्व के विशाल खुले क्षेत्र जिनका क्षेत्रफल सम्पूर्ण विश्व का लगभग ५७% है, वे केवल ५% जनसख्या को निवास प्रदान करते हैं। दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि ९५% विश्व की जनसख्या उत्तरी गोलार्द्ध मे रहती है जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण विश्व के धरातल का ८०% भाग आता है।

विश्व की जनसख्या तीन बडे-बडे क्षेत्रो मे ही केन्द्रित है—(१) दक्षिणी-पूर्वी एशिया के मानसूनी प्रदेशो मे चीन, जापान, जावा, भारत आदि है; (२) पश्चिमी और मध्य यूरोप, (३) पूर्वी और मध्य सयुक्त राज्य अमेरिका। प्रथम देशो की जनसख्या का अधिक भाग कृषि पर ही निर्भर है। भूमि की पर्याप्त मात्रा, उर्वरा शक्ति गर्मी और वर्षा की उपलब्धता तथा परिश्रमी मनुष्यो के कारण ही यहाँ जनसख्या अधिक है। द्वितीय और तृतीय श्रेणी के देशो मे खनिज पदार्थो की अधिकता तथा कला-कौशल मे उन्नति हो जाने के फलस्वरूप जनसंख्या का जमाव विशेषकर खनिज अथवा औद्योगिक केन्द्रो मे ही है। इसी कारण एशिया के मानसूनी देशो की अपेक्षा यहाँ व्यापार और उद्योग भी अधिक होता है और इसीलिये यहाँ बडे-बडे नगरो की सख्या भी अधिक है। इन भागो मे ग्रामीण जनता का प्रतिशत बिल्कुल ही कम है जब कि एशियाई देशो मे शहरो मे रहने वाली जनसंख्या बहुत कम है।

इन अधिक जनसख्या वाले देशों के विपरीत भूमण्डल के कुछ भाग बिल्कुल ही निर्जन है। ऐसे विस्तृत भू-भाग आर्कटिक महासागर के निकट फैले हुए हैं जहाँ तीव्र शीतकाल होने के कारण फसलें पैदा नही की जा सकतीं और ग्रीष्म ऋतु मे भी पाला पड़ने का डर रहता है तथा मिट्टी भी अनउपजाऊ है। दूसरा जनसख्याविहीन भाग भूमध्य रेखा के गर्म-तर प्रदेशो मे स्थित है। केवल जावा ही इसका अपवाद है। इन भागो मे तीव्र गर्मी, अधिक वर्षा, अस्वास्थ्यकर जलवायु तथा बीमारियो के कारण बहुत ही कम जंगली लोग यहाँ रहते है।

जनसख्या के इस असमान वितरण के कारण अनेक देशो मे स्थान के लिए बड़ी समस्या उत्पन्न हो गई है। जर्मनी, फ्रास, इटली आदि देशो की नये देशो की ओर जाकर बसने की प्रवृत्ति इसका उत्तम उदाहरण है। इसी प्रकार जापान, चीन और भारत की जनसख्या के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता रहती है।

५. यातायात के साधन

सास्कृतिक परिस्थिति का सबसे अधिक महत्वशाली अग आवागमन है। रेल, तार, रेडियो, वायुयान इत्यादि आवागमन के मुख्य सूत्र हैं। आवागमन का प्रभाव मनुष्य के सभी प्रकार के सामाजिक जीवन पर पड़ता है। आवागमन मनुष्य की गति का ही एक रूप है जिसका वर्णन ऊपर दिया गया है। मनुष्य का ससर्ग, उसका वाणिज्य तथा उसके उद्योग-धन्धे आवागमन पर निर्भर है। पृथ्वी के जिन भागो मे आवागमन की अधिक तथा सुचारु रूप से उन्नति की गई है वे भाग आजकल की सभ्यता मे सबसे आगे बढे हुए है। सयुक्त राज्य अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप इस बात के उदाहरण है। जिन भागो मे आवागमन की उन्नति विशेष है वहाँ पर मनुष्य जाति मे एक ऐसी विशेषता आ जाती है जो ससार के अन्य भागो मे नही पाई जाती। यह है वहाँ का भौतिकवाद (Materialism)। परन्तु भौतिकवाद के साथ ही साथ वहाँ पर मनुष्य का मानसिक विकास भी अधिक मात्रा मे देखा जाता है। जिन भागो मे आवागमन की कमी होती है वहाँ पर लोग प्राय. अन्ध-विश्वासी तथा रूढ़ीवादी होते हैं क्योकि ससर्ग की कमी के कारण उनकी विचारधारा सकुचित रहती है। ससार मे बहुत ऐसे भाग हैं जहाँ पर इसका उदाहरण देखा जा सकता है। ज्ञान और सभ्यता की उन्नति के साथ ही साथ आवागमन का सबसे महान कार्य संसार को एक कर देने मे है। रेडियो की सहायता से बर्फ से घिरे हुए सैकडो मील दूर स्थित एन्टार्कटिक महाद्वीप मे बैठे हुए वैज्ञानिक लोग भी यह जान सकते है कि दुनिया मे इस समय क्या हो रहा है। वायुयान तथा कैमरा की सहायता से संसार के किसी भी कोने का फोटो आज हम प्राप्त कर सकते है। आवागमन के इन सूत्रो द्वारा आज सारे ससार की समस्यायें मनुष्य जाति की समस्यायें बन गई है। यही कारण है कि आजकल का भूगोल प्राचीन समय का सा भूगोल नही रहा है जब कि पृथ्वी के कुछ थोडे से भागो का थोडा सा ज्ञान प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त था। आजकल भूगोल एक वृहत् विद्या, एक विज्ञान बन गया है जिसका कुछ ज्ञान साधारण मनुष्य को भी आवश्यक है। बिना इस ज्ञान के कोई भी शिक्षा पूर्ण शिक्षा नही कही जा सकती क्योकि आज का संसार एक सघर्ष है। इस ससार के रहने वालो का ससर्ग तथा सघर्ष सार्वभौमिक हो गया है। ससार का कोई भी रहने वाला वृहत् ससार की धारा से अपने को अलग नही रख सकता है। जैसा कि पिछले युद्ध ने सिद्ध कर दिया, आजकल ससार के एक कोने के रहने वालो को

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरों की सहायता लेनी पडती है। ऐसी दशा मे यदि हमको ससार के विभिन्न कोनो का कुछ भी ज्ञान नही है तो हम केवल कूप मण्डूक ही है जो अपने संकुचित ज्ञानरूपी कुए में उछल-कूद मचा रहे है।

अन्त मे कहा जा सकता है कि पृथ्वी मनुष्य का मुख्य निवास स्थान है, वह उस पर जन्म लेता है, तथा उसकी मिट्टी, वायु और सूर्य प्रकाश से उसके शरीर तथा मस्तिष्क का पूर्ण विकास होता है। पृथ्वी उसके सस्कारों और सकल्पो को जन्म देती है, उसे कार्य करने के लिये उत्साहित करती है और उसके कार्य क्षेत्र तथा प्रगति की धारा को भी निश्चित करती है। पृथ्वी के भौतिक साधन उसके लिए पैतृक सम्पत्ति के रूप मे है। इन्ही से वह जीविकोपार्जन करता है। जहाँ कही वह रहता है अपने को वातावरण के अनुकूल ढाल लेता है और अपने लिए भोजन, वस्त्र तथा निवास स्थान की आवश्यकताओ की पूर्ति करता है। किन्तु यह स्मरणीय है कि उस पर वातावरण का निरकुश नियन्त्रण नही है क्योकि वह पृथ्वी का न केवल निवासी ही है वरन् वह उसका सृजनकर्ता और उस पर परिवर्तन लाने वाला क्रियाशील प्राणी भी है। किन्तु वह पूर्णत उसका भाग्य विधाता नही कहा जा सकता क्योकि प्रकृति शक्तिशाली है और वह अपनी विभिन्न परिवर्तनशील परिस्थितियों मे भी शक्तिशाली ही बनी रहती है। अत उस पर पूर्णत विजय प्राप्त करना सभव नही है। अत यह कहना न्यायसगत होगा कि मनुष्य केवल अपने को वातावरण के अनुकूल ढाल ही नही लेता है वरन् एक सीमा तक वातावरण को अपने अनुकूल बना लेता है जिससे वह अपनी आवश्यकताओ को भी भली भाँति पूरा कर सके। अस्तु, मनुष्य वातावरण के एक पात्र के रूप मे क्रियाशील और निष्क्रिय दोनो ही है। चूकि पृथ्वी पर रहता है अत उसे उस पर निर्भर रहना ही पडता है।

जो समाधान मनुष्य अपने वातावरण के अनुकूल करता है वे बहुधा बौद्धिक और व्यावसायिक ही होते है। ये ही उसके विचारो को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक आदि व्यवसाय मानव मे अपनी विशेषताओं को जन्म देता है। उदाहरणार्थ, शिकारी स्वभावत. हिंसक होता है और उसका उद्देश्य हिंसा करना ही होता है। चरवाहा पालक होता है और उसका उद्देश्य पोषण करना है। किसान की प्रवृत्ति निर्माण और विकास की ओर होती है अतः वह शांति का समर्थक होता है। इसी प्रकार नगरवासियो का खेती से बहुत ही कम सम्बन्ध होने के कारण भूमि से उनका कोई प्रेम नही होता।

प्रश्न

१. "मनुष्य अपनी परिस्थितियों का जीव है।" इस कथन की पुष्टि करिये।

२. "एक प्राकृतिक वातावरण" से किन किन भौगोलिक तत्वों का आशय होता है? क्या मनुष्य उनमें महत्वपूर्ण परिवर्तन कर सकता है? प्राकृतिक परिस्थितियों द्वारा प्रस्तुत असुविधाओं को दूर करने के लिए मनुष्य ने कौन-कौन से कृत्रिम साधन निकाले है?

३. "जिन भौगोलिक दशाओं के अन्तर्गत मनुष्य रहता है, उनके ही अनुसार उसका चरित्र और व्यवसाय बन जाता है।" भारत और इङ्गलैंड के निवासियों के उदाहरण से इसे समझाइये।

४. जीव-जन्तु तथा वनस्पति पर जलवायु का क्या प्रभाव पड़ता है? इसमें मानवीय प्रयत्न द्वारा कहाँ तक परिवर्तन हुआ है?

५. किसी देश के व्यापार और वाणिज्य पर वहाँ की प्राकृतिक परिस्थिति और जलवायु का क्या प्रभाव पड़ता है ?

६. "मनुष्य न केवल अपने वातावरण की उपज ही है, बल्कि वह उसका निर्माता भी है।" इस कथन की पुष्टि करिये ?

७. "परिवर्तनशील मानव स्थिर वातावरण में नहीं रहता, यद्यपि भौतिक वातावरण में उसके द्वारा किया गया परिवर्तन बहुत ही धीमा होता है।" इसकी विवेचना करिये।

८. "वातावरण के विभिन्न अंगों से जलवायु का ही मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर अधिक प्रभाव पड़ता है।" इसे समझाइये।

अध्याय ५

स्थलमंडल

(LITHOSPHERE)

स्थलमंडल और उसके रूप

पृथ्वी की आकृति गोलाकार है जिसका व्यास लगभग ८,००० मील और परिधि २५,००० मील से कुछ कम है। इसका आयतन २६० बिलियन घन फीट है और उसका धरातलीय क्षेत्रफल १,९७,००० वर्ग मील। पृथ्वी के बारे मे कुछ मनोरंजक तथ्य इस प्रकार है[1]:—

आकार

पृथ्वी का भूमध्यरेखीय व्यास	१२,७५७ किलोमीटर	७९२६ ७ मील
पृथ्वी का ध्रुवीय व्यास	१२,७१४ ,,	७९०० ० मील
भूमध्यरेखीय परिधि	४०,०७७ ,,	२४,९०२ मील
ध्रुवीय परिधि	४०,००० ,,	२४,८६० मील

क्षेत्रफल

जल भाग का क्षेत्रफल	३६१० ला०	वर्ग किलोमीटर	१३९४ ला०	वर्ग मील
भू भाग का क्षेत्रफल	१४९० ,,	,,	५७५	,,
सयुक्त पृथ्वी का क्षेत्रफल	५१०० ,,	,,	१९६९	,,

धरातल

सर्वोच्च भाग (माउट एवरेस्ट)	८,८४० मीटर	२९,०२८	फुट
भूमि की औसत ऊँचाई	८२५ मीटर	२,७०७	फुट
धरातल (जल+थल) की औसत ऊँचाई	२५० मीटर	८२०	फुट
भूमडल की औसत ऊँचाई	२,४५० मीटर	७,०४०	फुट समुद्र से नीचे
सागर की औसत गहराई	३,८०० मीटर	१२,४६०	,,
सागर की सबसे अधिक गहराई (स्वायर द्वीप)	१०,८०० मीटर	३४,४३०	,,

पृथ्वी के ऊपरी भाग को **भूपटल** (Crush) की सज्ञा दी गई है। इसके दो भाग किये गये हैं। जो भाग जल से आवृत है उसे **जल मंडल** (Hydrosphere=Water Sphere) कहा जाता है और जो भाग जल से ऊपर उठा है उसे **भूमंडल** (Lithosphere=Rock Sphere) कहते हैं। मोटे तौर पर लगभग ५५,००,०००

1. *A. Holmes*, **Principles of Physical Geology, 1951, p. 11.**

वर्गमील क्षेत्र पर स्थल मडल और शेष पर जल मंडल है, अर्थात् श्री वेगनर (Wagner) के अनुसार क्रमशः ७१·७% और २८·३% भाग पर जल और थल है तथा श्री क्रेमल (Krummel) के अनुसार ७०·७% तथा २९·२% पर।

स्थल मडल का ४/५ भाग उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है और केवल १/५ दक्षिणी गोलार्द्ध में। अक्षांशों के अनुसार उत्तरी गोलार्द्ध में २०° से ७०° और दक्षिणी गोलार्द्ध में ७०° से ८०° के बीच में स्थल-भाग की अधिकता है।

स्थल मडल का सभी भाग एक-सा नही है। कुछ भाग दूसरों की अपेक्षा ऊँचे और कुछ कम नीचे हैं। सम्पूर्ण स्थल मडल का १/३ वा भाग समुद्रतल से ६०० फुट तक ऊँचा है, दूसरा १/३ वा भाग ६०० से १,५०० फुट तक ऊँचा है; तीसरा १/६ वा भाग १,५०० से ३,००० फुट तक ऊंचा है, १/६ से कुछ कम ३,००० से ६००० फुट तक और शेष दसवा भाग ६,००० फुट से अधिक ऊँचा है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि विश्व के धरातल का ५५ प्रतिशत भाग १५०० फुट से नीचा है; १८% भाग १,५०० से ३,००० फुट तक और २७% ३,००० फुट से अधिक ऊँचा है। यदि ऊँचे-ऊँचे पर्वतों को तोड़-फोड़ कर नीचे भागों में बिछा दिया जाय तो इस सपाट स्थल मडल की ऊंचाई समुद्रतल से २३०० फीट हो जायेगी। और यदि सम्पूर्ण स्थलीय भाग को महासागरों में फैला दिया जाय तो समस्त पृथ्वीतल पर २ मील गहरा एक भू-महासागर फैल जायेगा।

स्थलमण्डल का महत्त्व

यह अनुमान किया जाता है कि अपनी उत्पत्ति के समय हमारी पृथ्वी एक भीषण ज्वालापूर्ण द्रव से प्रज्वलित गोले के रूप में थी जो निरन्तर सूर्य की परिक्रमा करती रहती थी। अनेक युगों के उपरान्त इस ज्वलन्त गोले की ऊपरी परत ठंडी होकर कड़ी होने लगी। यह कड़ी ऊपरी परत ही हमारी ठोस पृथ्वी का प्रथम आवरण है जिसे स्थल मडल कहते हैं।

ग्लोब पर मनुष्यों के विचार से स्थल मडल का स्थान अधिक महत्व का है क्योंकि इसी स्थल मडल पर मनुष्य अपना निवास स्थान (गृह) बनाता है और इसी से अपने भोजन, वस्त्र तथा अनेक जीवनोपयोगी पदार्थ प्राप्त करता है। केवल मनुष्य ही के लिए नहीं वरन् समस्त जीवन चर तथा अचर प्राणियों के जीवन के लिए स्थल की उपस्थिति परम आवश्यक है क्योंकि वृक्ष, लता, तृण आदि स्थल पर ही उत्पन्न होते हैं। समस्त पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, कीट-पतंग अधिकांश स्थल पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। वायु में उड़ने वाले पक्षियों को भी इसी स्थल के वृक्षों पर अपना घोंसला बनाना पड़ता है। जल-जन्तुओं को भी अपने जीवन के लिए स्थल द्वारा ही प्रदत्त स्वच्छ मीठे जल तथा महीन मिट्टी और कीचड़ पर निर्भर रहना पड़ता है। इन्ही कारणों से ग्लोब पर स्थल को अधिकतम महत्वपूर्ण माना गया है।

पृथ्वी के धरातल की बनावट

आधुनिक पृथ्वी के धरातल पर यदि हम ध्यानपूर्वक दृष्टि डालें तो हमें यह सर्वत्र समान दिखाई नही देगा। इस पर हमें बड़ी विषमताएँ दिखाई देंगी। हम देखेंगे कि ऊपरी स्थल पर कहीं ऊँची कहीं नीची भूमि है। कहीं पर्वत हैं तो कहीं पठार या पहाड़ियाँ हैं जिनके बीच-बीच में घाटियाँ विद्यमान हैं। कहीं बड़े

खण्ड तथा कही अच्छे गर्त मिलेंगे। कही ज्वालामुखी पर्वत मिलेंगे तो कही विस्तृत मरस्थल या समतल क्षेत्र मिलेंगे। इन भिन्न-भिन्न विस्तृत स्थल खडो के बीच मे झीलें, नदियाँ, झरने, हिमप्रपात, हिमसरिताएँ, प्राकृतिक क्षेत्र इत्यादि विद्यमान पाए जावेंगे। इनके बाहर महासागरो तथा सागरों की विशाल तथा विस्तृत जलराशि मिलेगी। इनके बीच मे भिन्न-भिन्न प्रकार के द्वीप मिलेंगे। यदि हम कुछ काल तक इनका निरीक्षण करते रह तो देखेंगे कि इनकी आकृति स्थिर नही रहती। उसमे भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। ये सभी विशेषताएँ प्राकृतिक शक्तियों की क्रियाओ द्वारा उत्पन्न होती है।

पृथ्वी का भीतरी भाग बडा गर्म और ठोस है ऐसा मानने के निम्न कारण है—

(१) धरातल से नीचे उतरने पर तापक्रम मे वृद्धि होती जाती है, प्रति ५५ फुट की गहराई पर लगभग १° फा० तापक्रम बढता जाता है।

(२) ज्वालामुखी के उद्गार के समय पृथ्वी के गर्भ से गर्म लावा, राख आदि पदार्थ निकलते है।

(३) भूगर्भ के अनेक स्थानो मे गर्म-पानी के सोते मिलते हैं।

(४) भूकम्प की लहरे पृथ्वी के भीतर पर्याप्त गहराई तक उसी प्रकार गुजरती हैं जिस प्रकार वे ठोस पदार्थ मे होकर निकलती हैं।

(५) जब ज्वार आता है तो समस्त पृथ्वी एक इकाई की तरह व्यवहार करती है अर्थात् पपड़ी और भीतरी भाग मे समान प्रतिक्रिया होती है।

पृथ्वी की परतो के बारे मे अनेक विद्वानो —प्रो० स्विस, प्रो० ग्राप्ट, प्रो० होम्स और प्रो० जैफ़रे ने अनेक अनुमान लगाये हैं, इनमे से **प्रो० स्विस** का अनुमान अधिक मान्य है। इनके अनुसार पृथ्वी के तीन विभिन्न पर्त हैं, जो इस प्रकार है—

(१) पृथ्वी की ऊपरी तह सबसे हल्की होती है। इसको **स्थलमंडल** (Lithosphere) कहते हैं। इसकी मोटाई लगभग ५० से ३०० किलोमीटर है। यह ग्रैनाइट चट्टानो की बनी है और इसमे सिलका (Silica) तथा अलूमीनियम अधिकता से पाये जाते है। इसलिये इसका संक्षिप्त नाम सियाल (Sial) है। इसका घनत्व २ ७ है। महाद्वीप का निर्माण इसी सियाल मे हुआ है।

(२) इसमे दूसरी तह बसाल्ट चट्टानो की बनी है। यह भारी है। इसका घनत्व २ ६ से ४ ७ है। इस परत मे सिलका और मैगनेसियम तत्व प्रधान हैं इसलिए इसे सीमा (Sima) कहते है। सीमा परत से सागरो की तलैटी बनती है। इसे **मिश्रित मडल** (Pyrosphere) कहते हैं। इसकी मोटाई १ हजार से २ हजार किलोमीटर तक है।

(३) इन दोनो परतों के अन्त में केन्द्रीय पिंड आता है जिसे **परिमाण मंडल** (Barysphere) कहते हैं। यह लगभग २,९०० किलोमीटर की गहराई पर है। यह मुख्यत निकल (Nickel) और लोहे का बना है अत. इसे निफे (Nife) कहते हैं। इसका घनत्व ११ है।

इन तीनो परतो के ऊपर बारीक मिट्टी की पर्त होती है।

विभिन्न भूगोल शास्त्रियो ने इन तीन परतो को भिन्न-भिन्न रूपो से नाम दिया है। श्री ग्राच्ट (Gracht) ने इन्हे सियाल, सीमा और निफे कहा है। श्री जैफरे ने इन्हे ऊपरी परत, मध्यवर्ती परत और नीचे की परत के नाम से पुकारा है। श्री होम्स ने इन्हे ऊपरी पपडी, भूपृष्ठ या (Crust), अध स्तर (Substratum) और भूकेन्द्र (Core) कहा है। प्रो० डेली के अनुसार केन्द्रीय भाग लोहे का कठोर भाग है। बाहरी परत सिलीकेट का बना है तथा इन दोनों के बीच का भाग लोहे और सिलीकेट के मिश्रण से बना है।

नीचे की तालिका मे इन विभिन्न विद्वानो द्वारा प्रस्तुत पृथ्वी की सरचना बताई गई है :—

स्विस परत	संगठन	प्रो ग्राच्ट परत	संगठन	जैफ्रे तथा होम्स परत	सगठन	प्रो. डेली परत	संगठन
पहला	सियाल	पहला	सियाल	पहला	सियाल	पहला	सियाल
दूसरा	सीमा	दूसरा	सीमा	दूसरा	सियाल +सीमा	दूसरा	सियाल +सीमा
तीसरा (केन्द्रीय भाग)	निफे	तीसरा	सीमा और निफे का मिश्रण	तीसरा	सीमा	तीसरा (केन्द्रीय)	निफे
		चौथा (केन्द्रीय)	निफे	चौथा (केन्द्रीय)	निफे		

निम्नाकित तालिका से पृथ्वी के आतरिक भाग के विभिन्न क्षेत्रो की मोटाई, उनकी रचना और उनका घनत्व स्पष्ट होगा[2] —

क्षेत्र	गहराई	घनत्व	रचना
१. वाह्य सियाल/पर्त	१० से ३० मील	२ ७५ से २ ६	धारीदार चट्टाने ग्रेनाइट, डोलोराइट, नीस आदि
२. सीमापर्त	३० से ४२० मील	३ १ से ४'७५	ग्रेबो, पेरीडोटाइट, बेसाल्ट
पालसाइट/पर्त	४२० से १८०० मील	४ ७५ से ५'०	पथरीले उल्का या पैलेसाइट
४. अन्त. भाग : बाह्य	१८०० से ३२०० मील	११'०	द्रव सिलीकेट
,, : आतरिक	३२०० से ३४०० मील	१८'०	ठोस लोहा और निकल

२. एस. सी. चटर्जी, भूगोल के भौतिक आधार, १९५८, पृ० ४९

शैल या चट्टानें (Rocks)

पृथ्वी का ऊपरी तह ८,००० मील व्यास वाली पृथ्वी पर केवल ५० या ६० मील मोटा परत है। यह भूपृष्ठ पृथ्वी के भीतरी भाग वाले पदार्थ की अपेक्षा हल्का होता है। यह सिलीकन और एल्यूमीनियम से निर्मित होता है। स्थल जिस पदार्थ से बना है उसे चट्टान (Rock) कहते हैं। अस्तु, प्रत्येक प्रकार का पत्थर चाहे वह सख्त हो या नरम—शैल या चट्टान कहलाता है। चट्टान स्वाभाविक निक्षेप का वह पिंड है जिनसे भूपृष्ठ का ठोस भाग बनता है।[3] इस प्रकार चट्टान ग्रेनाइट की भांति सख्त भी हो सकती है और मिट्टी अथवा बालू की भांति मुलायम भी। यह चाक की तरह अप्रवेश्य (Permeable) भी हो सकती है तथा ग्रैनाइट, स्लेट और मिट्टी की तरह अप्रवेश्य भी।

चट्टानें या शिलायें कई प्रकार के खनिजो के संयोग से बनती हैं। कई चट्टानें एक ही खनिज से बनी होती हैं और कई चट्टानें कई प्रकार के खनिजों के संयोग से बनती हैं। ये खनिज भी कई प्रकार के मूल तत्वो के रासायनिक संयोग के मिलन से बने हैं। कुछ खनिज एक ही मूल तत्व के बने होते हैं, जैसे सोना, तांबा, कोयला आदि। किन्तु अधिकांश खनिज एक से अधिक मूल्यवान तत्वों के योग से बनते हैं। यह खनिज पदार्थ पृथ्वी में उस समय भी मौजूद थे जब वह पिघलती हुई अथवा गैस रूप में थी—जैसे जैसे पृथ्वी ठंडी होती गयी यह खनिज पदार्थ चट्टानों के रूप में ठोस कणदार होकर जमते गये। अभी तक ६३ रासायनिक तत्वों का पता चला है। स्थल के अधिकांश भाग का निर्माण इनमें से केवल १६ तत्वों द्वारा ही हुआ है। विद्वानों का अनुमान है कि कि स्थल, जल तथा वायुमंडल का ६८% भाग केवल इन आठ तत्वों से बना है—आक्सीजन (Oxygen) ७१%, सिलीकन (Silican) २७.३६%, कैल्सियम (Calcium) ३.७५%, सोडियम (Sodium) २.७५%, एल्यूमीनियम (Aluminium) ८.००%, लोहा (Iron) ५.००%, पोटैशियम (Potassium) २.४८%, और मैगनेशियम (Magnesium) २.०७%। अन्य आठ तत्व टाइटेनियम (०.६२%), फास्फोरस (०.१३%) कार्बन (०.०६%), हाइड्रोजन (०.१४%), मैंगनीज (०.०६%), गंधक (०.०५%), क्लोरीन (०.०४%), और बेरियम (०.०५%) हैं। अर्थात् ये तत्व १.५५% भाग का निर्माण करते हैं[4]। तांबा, सीसा, जस्ता, टीन, सोना चांदी आदि तत्वों का मिश्रण बहुत ही कम है।[5]

---

3 In the broadest sense, rock refers to any of the solid part of the earth, but in a restricted sense, it is a natural earth substance with a specific characteristic mineral composition"
—*Quoted by Bengston & Van Royen*, **Op. Cit.**, p. 29.

४. एस सी. चटर्जी, वही पुस्तक, पृ० २-३

५. (क) आक्सीजन प्रधान खनिज—स्फटिक और लोहे के आक्साइट, लाल गेरू, पीला गेरू आदि।
(ख) सिलिकन प्रधान खनिज—फेल्स्पार, नेफलीन, अभ्रक, क्लोराइट, आगाइट, हार्नब्लेंड-एम्फबोल्स, जहरमोहरा, कियोलिन (चीनी मिट्टी) आदि।
(ग) कार्बोनेट खनिज—मैग्नेसाइट, कैल्साइट, डोलोमाइट आदि।
(घ) अन्य खनिज—सोनामाखी, रूपामाखी, हरमोंठ आदि।

और नवीनतम योजना के नगरों में तो पूर्णत. प्रत्येक भाग एक निश्चित स्थान पर बनाया जाता है। नगरो के पूर्ण विकास की अवस्था मे उनमे अनेक कार्य पेटियो का उद्भव हो जाता है जिनमे विशेष कार्य ही किया जाता है—जैसे अनाज की मडी, सराफा बाजार, कपडे का बाजार, साग-सब्जियो का बाजार, जूतो का बाजार, फैशनेबुल वस्तुओ का बाजार, पुस्तको का बाजार आदि।

इस कार्य पेटी (functional area) का महत्व बहुत अधिक माना गया है। डिकिनसन ने तो इस सम्बन्ध मे यहाँ तक कहा है कि "एक नागरिक अधिवास की परिभाषा मूलत. उसके कार्यो मे है न कि वहाँ की जनसख्या मे। इसके अतिरिक्त नगर का नागरिक स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि उसके विभिन्न कार्य क्या है जिन्हे वह करता है।" प्रो० ब्लैनचार्ड ने इसका महत्व इस प्रकार व्यक्त किया है : कार्य पेटी के अध्ययन के अन्तर्गत उसके निवास स्थलो, उनकी स्थिति का कारण, उनके विभिन्न स्वरूप, उनका जनसख्या, सडको तथा उनके आपसी सम्बन्ध सभी बातें ली जाती है। इन सभी तत्वो को Morphology of the City कहा गया है। इन बातो के अतिरिक्त नगर की जल नालियाँ, इसके ट्रैफिक के क्षेत्र और दिशायें तथा दैनिक कार्यवाही का भी अध्ययन किया जाता है।" एक नागरिक केन्द्र के कार्य सामाजिक, आर्थिक, प्रशासकीय तथा सास्कृतिक सम्मेलन के फलस्वरूप विकसित होते हैं। और ये ही सब मिलकर पूरे नगर का विकास करते है। आधुनिक काल मे नगर के कार्यों के उत्थान और पतन के कारण इस प्रकार माने गये है —

आकर्षण तत्व—(१) उपयुक्त भू-भाग, जिसका ढाल अधिक ऊँचा हो और जो न अधिक नीचा ही हो; (२) विभिन्न कार्य-क्षेत्रों के बीच मे दौडने वाले कार्यशील मार्गों की उपस्थिति; (३) लोगों का अधिक आना जाना हो (high sequency of movement) (४) अन्न सभावित विकास वाले क्षेत्रों के निकट हों, तथा (५) नगर वासियों का जीवन स्तर तथा क्रय-विक्रय की शक्ति ऊँची हो जिससे कार्य क्षेत्रो का उत्थान हो सके।

विपरीत तथ्य—उपरोक्त तथ्यो के विपरीत, (१) यदि भूमि का ढाल बडा ही असमान हो जिस पर नियत्रण न किया जा सके; (२) निकटवर्ती भाग मे ही कहीं असमान कार्य क्षेत्र की उत्पत्ति, जो भविष्य मे अधिक विकसित होने की सभावनायें रखते हो, (३) सामाजिक, धार्मिक अथवा साम्प्रदायिक असतोष तथा अन्तर; (४) जीवन स्तर नीचा हो; तथा (५) यातायात के मार्ग सकडे मोडदार हों अथवा नगर की निर्माण-प्रणाली कुसगत हो तो कार्य क्षेत्रो का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

किसी भी नगर मे मुख्यत कार्यशील (active) तथा सुषुप्त (dormant) विभाग होते हैं अर्थात् कुछ ऐसे क्षेत्र होते हैं जहाँ नागरिक कार्य अधिक होते है तथा वह क्षेत्र दिन मे घना बसा हो जाता है। भीड-भाड अधिक बढ जाती है और लोगों का सामाजिक सम्पर्क भी टैलीफोन, डाक व्यवस्था तथा बसो के कारण अधिक निकट का हो जाता है। इस क्षेत्र को अधिक व्यस्त बनाने मे प्रशासकीय, व्यापारिक, यातायात उद्योग तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्यों का भी योग रहता है। ये सभी स्थल दिन मे काफी व्यस्त रहते है और यदि रात में इन्हे कोई वायुयान से देखे तो उसे कुछ विशेष स्थलो पर बत्तियों का झुण्ड सा दिखाई पडेगा जबकि कुछ अन्य स्थलों पर बत्तियों का प्रकाश कम होगा। ऐसे पिछले स्थल निवास-स्थान अथवा कम महत्व के कार्य

क्षेत्र होते है, जो नगर के सुगुप्त विभाग का निर्माण करते हैं इनमे बड़े पैमाने पर आवागमन के सुव्यवस्थित मार्गो का अभाव मिलता है तथा मार्गो पर अधिक भीड़-भाड़ भी नही मिलती, क्योंकि इनकी स्थिति भौगोलिक दृष्टि से कार्यशील की अपेक्षा कम अनुकूल होती है।

आरम्भ मे प्राचीन काल की बस्तियों का स्वरूप तथा कार्य आधुनिक काल की बस्तियो से बिल्कुल भिन्न था। उदाहरण के लिए डा० टेलर के अनुसार, २०००० वर्ष पूर्व पैलियोलीथिक युग में ब्रिटेन के निवासी कन्दराओ मे रहते थे। इसके बाद इन घरो का स्वरूप आस्ट्रेलिया मे पाई जाने वाली गुफाओं की भाँति हो गया। लगभग ६००० वर्ष पूर्व मेसोलिथिक युग मे ये लोग एस्कीमो की भाँति के घरो मे रहने लगे। नियोलिथिक काल के बारे मे निश्चितता से कहना कठिन है, किन्तु ताम्र-युग मे ये गड्ढेदार मकानों मे रहने लगे। लौह युग मे इनका स्थान घास-फूँस की झोपड़ियो ने ले लिया। इनके बाद के युगो मे ता ये लोग अच्छे मकानो मे रहने लगे। ग्रेट-ब्रिटेन के कुछ प्राचीन नगर और कस्बे इन्ही अवस्थाओ मे होकर निकले हैं तथा एक युग के खडहरो पर दूसरे युग की पद्धति का निर्माण हुआ है। कुछ कस्बो मे इन सभी अवस्थाओ के अवशेष मिलते है।

डा० टेलर ने इस तथ्य को एक सिद्धान्त के रूप मे रखा है, जिसे खंड तथा स्तर सिद्धान्त (Jone and Strata Concept) कहा गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार नगर का विकास उसके मूल-केन्द्र (nucleus या Core or Kernel) पर आरम्भ होता है और वही से यह विकास विभिन्न कार्य-क्षेत्रो मे होने लगता है। यह मूल-केन्द्र गमनागमन के मार्गों का मिलन बिन्दु तथा दुकानो आदि का केन्द्रीय-करण होता है। इसी भाव का आकर्षण नगर निवासियों के लिए अधिक होता है और इसलिए इसमे सामाजिक सम्पर्क तथा भीड-भाड भी अधिक रहती है। प्रत्येक नगर का मूल-केन्द्र वह बिन्दु होता था जहाँ सबसे अधिक प्रतिस्पर्द्धा होती थी, क्योंकि यही वह बिन्दु होता है जो अपने प्रदेश की सभी मांगो को पूरा करने के लिए कम से कम खर्च पर पहुँचा जा सकता है।" इसी गुण के कारण वहाँ भौतिक सुविधायें बढ जाती हैं और व्यापार तथा अन्य कार्यों का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। अत यह मूल-केन्द्र नागरिक जीवन और कार्यक्षेत्र का जीवन-तत्व बन जाता है। इसी का प्रभाव नगर के भवनों पर और उनके स्वरूपो पर पड़ता है।

इस मूल-केन्द्र पर दो शक्तियो का प्रभाव पड़ता है। जो शक्तियाँ इस केन्द्र को समस्त प्रदेश का आकर्षण बिन्दु बना देती हैं उन्हे **केन्द्रोपसारी शक्तियाँ** (Centripetal forces) कहा जाता है किन्तु जो शक्तियाँ नागरिक कार्यों को केन्द्र की अपेक्षा बाहर की ओर उन्मुख होने को प्रेरित करती हैं उन्हे **बहिर्गामी शक्तियाँ** (Centrifugal forces) कहा जाता है। ये दोनो प्रवृत्तियाँ मिल कर एक विकसित नागरिक केन्द्र मे परिवर्तन लाती हैं। जिसके कारण मूल-केन्द्र मे भूमि का मूल्य बढ जाता है; तथा मकान कई मंजिले बनाये जाने लगते है। फलस्वरूप इससे जनसंख्या का घनत्व भी बढ जाता है।

इस सम्बन्ध मे एक बात ध्यान मे रखी जानी चाहिए। किसी नगर की शैशवावस्था मे बहिर्गामी शक्तियों की अपेक्षा केन्द्रोपसारी शक्तियाँ अधिक प्रभावकारी होती हैं। ज्यो-ज्यो नगर किशोरावस्था की ओर बढता है, त्यो त्यो बहिर्गामी शक्तियाँ अधिक प्रभावशाली होने लगती हैं। इससे नगरो के निकट विकेन्द्रीकरण होने लगता

है। इसके उपरान्त पूर्व-प्रौढ़ावस्था तक पहुँचते पहुँचते प्रायः प्रत्येक नगर एक संक्रामक अवस्था में गुजरता है—यहाँ तक कि बहिर्गामी शक्तियाँ इतनी अधिक प्रभावशाली हो जाती हैं कि वे केन्द्रोपसारी शक्तियों को सन्तुलित कर देती हैं। किन्तु ज्योंही नगर प्रौढ़ हो जाता है केन्द्रोपसारी शक्तियाँ अधिक बलवान हो जाती हैं और उसके उपरोक्त बहिर्गामी शक्तियाँ जिससे नगरों के निकटवर्ती भागों में उपनगर या सहायक नगरों (Satellite Towns or Green Towns) का जन्म हो जाता है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप नगर के निर्माण-क्षेत्र (Built up area) के स्वरूप और प्रकृति में भी परिवर्तन होने लगता है। नगर निवासी मूलकेन्द्र से बाहर की ओर अधिक खुले भागों की ओर रहने लगते हैं। नगर की केन्द्रीय इमारतों में अब दफ्तर या प्रशासनीय कार्यालय स्थापित हो जाते हैं तथा केन्द्रीय भागों में व्यापार आदि का क्षेत्र बन जाता है। साओ पालो का 'Triangle'; न्यूयार्क का 'Downtown' अथवा पिट्सबर्ग का 'Golden Triangle' इन्हीं केन्द्रवर्ती भागों में व्यापार का आदान-प्रदान होता है। भारत में दिल्ली का चाँदनीचौक, बम्बई का कालबादेवी रोड तथा कलकत्ता का चौरंगी ऐसे ही मध्यवर्ती बिन्दु हैं इनमें विशिष्ट वस्तुओं का विनिमय होता है। बैंक, बीमा कम्पनियाँ, प्रशासनीय केन्द्र, बाजार तथा आमोद-प्रमोद के स्थान भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फैले होते हैं।

जब नगर का मूलकेन्द्र अधिक विकसित होने लगता है तो उसका विकास केन्द्र से बाहर की ओर भी होने लगता है तथा भीतरी भाग का पुनरुद्धार होता है। पुरानी इमारतों के स्थान पर नई इमारतें बन जाती हैं। पुराने भाग रहने के लिए अथवा कुटीर उद्योगों के लिए काम में लाये जाने लगते हैं। इस क्षेत्र में अधिकतर दरिद्र लोग रहते हैं। इनमें अधिक गंदी बस्तियाँ (Chawls) जन्म ले लेती हैं। थोड़ा बहुत व्यापार भी इस क्षेत्र में होता रहता है। बाहरी भाग में अधिकतर निवास-स्थल और बड़े उद्योग मिलते हैं किन्तु ये दोनों एक दूसरे से पृथक होते हैं। इन्हीं बाहरी भागों में नगरों के बाहर निवास स्थल सड़कों के दोनों ओर बनने लगते हैं जहाँ दिन में जनसंख्या भारी संख्या में नगरों की ओर चली जाती है, फलतः ऐसे भागों को रात्रि नगर (Dormitory towns) कहा जाता है।

सामान्यतः प्रत्येक आधुनिक नगर की संरचना इस प्रकार की होती है :—

(१) नगरों का प्राचीन मध्यवर्ती भाग अब रहने का स्थान न रहकर कार्यालयों का क्षेत्र बन जाता है जो रात्रि के समय प्रायः सूना रहता है। महाद्वीपीय अनेक नगरों में—पेरिस, ब्रुसेल्स या वियना, उदयपुर-नगर को सीमित रखने वाली चार दीवार को तोड़कर उसका क्षेत्र बढ़ा दिया गया है। कई अन्य नगरों में यही बाहर का भाग ही आमोद-प्रमोद, शिक्षा अथवा स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र और आधुनिक ढंग का बाजार-सा हो जाता है।

(२) मध्यवर्ती भाग को भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है—जैसे लंदन का 'West End' ब्यूनस आयर्स का 'Centro; शिकागो का 'Loop' दुकानें तथा अन्य केन्द्रीय सेवायें भी स्थापित हो जाती हैं। इन बाहरी क्षेत्रों में ही नगर के खेल के मैदान, चरागाह, कब्रिस्तान, श्मशान आदि भी होते हैं।

कभी कभी नगरों के बाहर का विकास बड़ा असमान होता है। सड़कों के किनारे निवास-स्थान बनाये जाते हैं जबकि इनके पीछे गंदी बस्तियाँ भी हो सकती हैं। इन्हीं बाहरी भागों में विस्तार के लिए पर्याप्त क्षेत्र मिल जाने के कारण बड़ी फैक्ट्रियाँ आदि भी बन जाती हैं।

(५) शक्ति के सम्पूर्ण साधन कोयला, तेल व जल-शक्ति सर्वत्र सन्तोषजनक स्थिति में पाये जाते है और उनका उचित उपयोग भी किया जाता है।

(६) प्राकृतिक साधनो की शीघ्र और लाभ पूर्ण उन्नति होने से अच्छे मजदूरो की कमी नही है।

(७) वानस्पतिक भोज्य पदार्थों तथा कच्चे माल की कमी होने से यहाँ के निवासी परम्परा से अच्छे व्यापारी हुए हैं और अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए वानस्पतिक सभ्यता के शान्तिप्रिय लोगों के प्रति हमेशा इनका आक्रमणकारी रुख रहा है।

(द) **पिछड़े हुए प्रदेश** (Regions of Arrested Development)—ये प्रदेश पृथ्वी के वे भाग है जिन पर प्रकृति कम दयावान है। सर्वत्र प्रतिकूल भौगोलिक अवस्थाएँ पाई जाती है, इस कारण मनुष्य अपनी शक्ति भर प्रयत्न करने पर भी बड़ी कठिनाई से पेट भर पाता है। उसे अपनी मेहनत का उचित पुरस्कार नही मिलता। इसलिए यहाँ की आर्थिक प्रगति धीमी और प्रायः रुकी हुई है। लेकिन इन प्रदेशों को उन्नत करने की बड़ी आवश्यकता है। आज प्रत्येक देश की जनसख्या बढ़ रही है इसलिए उसके सामने बढ़ती हुई जनसख्या के पेट भरने का प्रश्न है। यह तब हल हो सकती है जब इन प्रदेशो की ओर उचित ध्यान देकर हर साधन का उचित उपयोग किया जाय और अन्य साधनो द्वारा इनको उन्नतिशील किया जाय। इन प्रदेशो को यह नाम इसलिए दिया जाता है कि यहाँ के साधनों के उपयोग की उच्चतम स्थिति बहुत शीघ्र पहुँच जाती है और अगर इसके अनन्तर भी प्रयत्न किये जाते हैं तो उनके अनुपात मे फल नही मिलता। इसलिए इन प्रदेशो मे लोगो का किसी धन्धे को शुरु करना तथा उसे छोडना जनसख्या के घटने और बढ़ने पर निर्भर करता है। ये प्रदेश विषुवत रेखा के समीपीय भाग, मरुस्थलो के किनारो के भाग, शीत प्रधान-शीतोष्ण जलवायु तथा महाद्वीपीय जलवायु के भाग,शुष्क पहाड तथा पठार और वृत्तीय डेल्टो के दलदल वाले भागो मे फैले हुए है। यद्यपि आज मनुष्य विज्ञान के बल से सूखे प्रदेशो मे खेती कर सकता है, वृत्तीय जगलो व दलदलो को साफ कर सकता है और पहाडी ढालो को सीढीदार खेतों मे परिणत कर सकता है किन्तु इतना सब होते हुए भी वह शक्तिशाली भौगोलिक दशाओ को अपने वश मे करने मे असफल रहा है। यहाँ उसकी सम्पूर्ण बुद्धि और विचार शक्ति नत हो जाते हैं। इन प्रदेशो के मुख्य लक्षण ये है —

(१) यहाँ प्राकृतिक वनस्पति बहुत ही कम पाई जाती है। इसलिए वानस्पतिक साधनो की यहा सामान्यतः कमी है।

(२) खेती यहाँ का असफल धन्धा है। मुख्य धन्धे ढोर पालना और घास उगाना है और जहाँ कहीं सभव होता है लकडी चीरने तथा मछली मारने का काम किया जाता है।

(३) वानस्पतिक भोज्य पदार्थ मोटे और कम मात्रा मे होते है जैसे जौ, राई, ज्वार, बाजरा और आलू। कच्चे माल मे लकडी और रेशे वाले पदार्थ मुख्य है। पशु साधन पर्याप्त मात्रा मे पाये जाते हैं। लेकिन बहुत कम ऐसी चीजे बच रहती हैं जिनका दूसरी चीजो के बदले मे उपयोग किया जा सके। मछली मारना और लकडी चीरना तुलनात्मक दृष्टि से अधिक लाभप्रद है और यही व्यापार में मुख्य स्थान रखते है।

अध्याय ३८

बृहत् प्राकृतिक प्रदेश

(MAJOR NATURAL REGIONS)

पृथ्वी के विभिन्न भाग कभी एक समान नहीं होते यद्यपि कई भाग एक दूसरे से सटे हुये इस प्रकार आपस में आबद्ध है कि उनमें भेद करना ठीक नहीं मालूम देता किन्तु वे जलवायु, वनस्पति और अन्य प्राकृतिक साधनों में एक दूसरे से भिन्न होते है। पृथ्वी पर जलवायु (जैसा कि हम अनुभव से जानते है) सब जगह एक समान नहीं है। विषुवत रेखा के समीपीय देशों में जलवायु गर्म और तर रहता है किन्तु मध्य देशान्तर रेखाओं वाले देश शुष्क और ध्रुव प्रदेश नितान्त ही ठंडे और शुष्क रहते है। कहने का तात्पर्य यह है कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न प्रकार की जलवायु पाई जाती है। उदाहरणत ग्रेट ब्रिटेन की जलवायु भारतीय जलवायु से एक दम भिन्न है। वहाँ का वनस्पति व अन्य प्राकृतिक साधन हमारे देश से कभी मेल नहीं खाते। इतना ही नहीं हम यह भिन्नता एक ही देश के विभिन्न प्रदेशों में भी पाते हैं। जैसे सिन्ध या राजस्थान इस माने में बंगाल व आसाम से बिल्कुल भिन्न हैं। हम यह अच्छी प्रकार जानते है कि पृथ्वी के बहुत से भाग एक दूसरे से दूर स्थित होते हुए भी कई बातों में इतने समान होते है कि वे एक-से लगते हैं। भूमध्य सागरीय देशों की जलवायु उत्तरी अमरीका स्थित कैलिफोर्निया और आस्ट्रेलिया के कुछ पश्चिमी तथा दक्षिणी भागो के बहुत ही समान है और इस प्रकार जलवायु की दृष्टि से हम इन दूर-दूर स्थित प्रदेशों में किसी प्रकार का भेद नहीं कर सकते और चूँकि जलवायु का मिट्टी और वनस्पति पर अद्भुत प्रभाव होता है। इसलिए वे भाग जिनमे जलवायु की समान दशायें मौजूद हैं वनस्पति तथा मिट्टी की दृष्टि से भी एक दूसरे के समान ही होते हैं। अगर हम मानवीय दृष्टिकोण से विचारें तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि खेतिहर तरीके जो इनमें से एक भाग के लिए उपयुक्त और सही है वह निश्चय ही दूसरे प्रदेशों के लिए भी सही होते हैं। किन्तु यहाँ पर यह समझ लेना आवश्यक है कि यह बात केवल तब सत्य होती है जबकि इन सब भागो की आर्थिक तथा अन्य दशायें भी समान हों। अगर एक भाग दूसरे भाग से आर्थिक दशा मे पिछड़ा है या उसकी विकास की गति में अन्तर है तो उनमें भिन्नता आना स्वाभाविक ही होगा। परन्तु उपरोक्त बातें अगर सही हैं तो फिर जो वस्तुयें एक भाग में पैदा होती है वही दूसरे भाग में भी अच्छी प्रकार पैदा होंगी। उदाहरणत. नारंगियाँ स्पेन, कैलिफोर्निया, दक्षिणी अफ्रीका के केप प्रान्त और आस्ट्रेलिया के पश्चिमी तथा दक्षिणी भागों में भली प्रकार पैदा होती हैं। इन्हीं सब समानताओं के कारण प्राकृतिक वातावरणों के मुख्य प्राकृतिक प्रदेशों का मन्तव्य स्थिर हुआ है।[1] अब हम इन्हीं मन्तव्यों को लेकर आगे बढ़ेंगे और यह समझने की कोशिश करेंगे कि प्राकृतिक प्रदेश क्या है। स्पष्ट परिभाषा के

1. *L. D. Stamp*, **'A Commercial Geography', p. 11.**

(४) ये प्रदेश खनिज पदार्थों के भंडार हैं। यहाँ कई प्रकार के धातु सम्बन्धी और अधातु सम्बन्धी खनिज पाये जाते हे जो केवल उन स्थानों पर खोदे जाते हैं जहाँ पर अच्छी सुविधा होती है। ये यहाँ के अमूल्य साधन है।

(५) इन प्रदेशो मे कोयले तथा तेल की कमी जल शक्ति पूरा कर देती है। स्कैन्डिनेविया और एल्पाईन देशो मे इसका औद्योगिक कारखानो मे उपयोग किया जाता है।

(६) यहाँ के निवासी शारीरिक दृष्टि से मजबूत होते है किन्तु सभ्यता की दृष्टि से पिछडे हैं। खाद्य पदार्थों की कमी और कच्चे माल की कठिनाई इनके विकास मे ऐसे रोडे हैं जो इनको आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों मे सब तरफ आगे बढने से रोकते है। ऐसी हालत मे यहाँ के लोग निम्न भौतिक गुण और क्षीण सामाजिक व्यवस्था से प्रसन्न रहते है।

(य) सतत कठिनाइयों वाले प्रदेश (Regions of Lasting Difficulties)—इन प्रदेशो मे ठडे और गरम मरुस्थल, विषुवत् रेखीय वन प्रदेश, अमेजन और काँगो के भीतरी भाग और पूर्वी द्वीप समूह तथा पश्चिमी अफ्रीका के गायना तट के कुछ भाग सम्मिलित हैं। इन प्रदेशो मे भौगोलिक शक्तियाँ निरन्तर लोगो की आशाओं और प्रयत्नो को विफल करती रहती है। ऐसी हालत मे लोग बडी कठिनाई से अपना काम चला पाते हैं। उनका जीवन युद्धमय और बडा कठिन तथा भयकर होता है। उनके आर्थिक जीवन की कहानी उनके त्याग, दु.ख और उत्सर्गपूर्ण जीवन की कहानी है। अभी ये प्रदेश आर्थिक दृष्टि से बहुत ही गिरे हुए है। लेकिन जहाँ पर धातुएँ पाई जाती है—जैसे यूकन मे सोना, स्पिटबर्जन द्वीप मे कोयला, मेकेन्जी घाटी मे तेल मिलता है—वहाँ हालत कुछ अच्छी है। कई प्रदेशों को आर्थिक दबाव के कारण हजारो कठिनाइयो का सामना कर साफ किया गया लेकिन जब कार्य शक्ति कम हो गई तो वे जल्दी ही आस-पास के प्रभाव के कारण दब गये। इस कारण इन प्रदेशो मे स्थायी जनसख्या और सुगठित आर्थिक दशा अब तक भी सभव नही हो पाई है। यहाँ के प्राकृतिक साधन बहुत ही निम्न कोटि के हैं और सामान्यत एक ही प्रकार के पाये जाते हैं। साधारणतः यहाँ के साधन अभी तक उपयोग मे नहीं लाये गये हैं क्योकि यहाँ की विशेष जलवायु इसमे बाधक होती हैं। ठडे रेगिस्तानों मे भूमि हमेशा बर्फ से पटी रहती है। अत यहाँ की भूमि बिल्कुल बजर है और जीवन निर्वाह के योग्य नहीं है। समुद्र अवश्य इस दृष्टि मे धनी है और बहुत ही बडी मात्रा मे मछलियाँ प्रदान करते है। इनके अलावा चिडियाँ, रीछ और लोमडियाँ बहुत होती है। किनारों पर ग्रीष्म ऋतु मे बर्फ टूट जाता है इस कारण कुछ घास उग आती है और उस पर रेनडियर निर्वाह करते है। यहाँ के निवासी घुमक्कड और शिकारी होते हैं जो अधिकाश रूप मे जानवरो, मछलियो और चिडियो पर निर्वाह करते है।

गर्म रेगिस्तानो मे वर्षा का अभाव तथा रात-दिन और ग्रीष्म व सर्दी के तापक्रम मे अन्तर एक विशेष प्रकार की बनस्पति तथा पशु जीवन को जन्म देता है। शुष्क घास के मैदानों पर भेड-बकरियाँ निर्वाह करती है। ऊँट यहाँ के आवागमन का मुख्य साधन है। ठडे रेगिस्तानो के विपरीत यहाँ पर मूल खाद्य पदार्थ व कच्चा माल वानस्पतिक साधनों से प्राप्त किया जाता है। वृत्तीय जगलो तथा निम्न प्रदेशों मे वर्षा और कम तापक्रम दोनों ऊँचे रहते है जो वातावरण को बहुत ही क्रूर बना देते हैं।

रूप में 'पृथ्वी के वे प्रदेश जिनमें सम्पूर्ण प्राकृतिक दशायें—प्राकृतिक बनावट व रूपरेखा, जलवायु और वानस्पतिक तथा पशु-जीवन—साधारणतः समान हों प्राकृतिक प्रदेश कहलाते हैं।" भूगोल शास्त्र के क्षेत्र में प्राकृतिक प्रदेश का यह मन्तव्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक भूगोल के कई मन्तव्यों से यह अपना विशेष महत्व रखता है। इस मन्तव्य के प्रणेता प्रसिद्ध भूगोल-शास्त्रज्ञ और विचारक प्रो० ए० जे० हर्बर्टसन हैं। उनके शब्दों में प्राकृतिक प्रदेश "पृथ्वी के धरातल का वह भाग है जो निश्चय ही उन तमाम दशाओं में समानता रखता है जिनका मानव जीवन पर प्रभाव पडता है।[2] प्रो रोक्सबी के अनुसार "यह वह क्षेत्र होता है जिसमें विशेष भौतिक परिस्थितियों के कारण विशेष प्रकार का आर्थिक जीवन पाया जाता है।"[3]

सम्पूर्ण पृथ्वी के धरातल को कई प्राकृतिक विभागों में बाँटा जा सकता है। पृथ्वी का यह विभाजन जलवायु तथा वनस्पति किसी के भी आधार पर किया जा सकता है। लेकिन यहाँ हमारे लिए यह समझ लेना अति आवश्यक है कि ये भाग किसी भी तरह पृथ्वी के बाहर अलग-अलग स्पष्ट खण्डो के रूप में नही है। किसी भी वस्तु के समान इनका ठीक बाहरी भागों मे वर्गीकरण नही हो सकता। इन प्रदेशो की सीमायें बहुत ही अस्पष्ट हैं क्योंकि एक प्रदेश की प्राकृतिक दशायें जो कि उसमे पाई जाती है दूसरे प्रदेश की दशाओ से अपने आपको एक दम सीमित नहीं कर लेती। या यों कहिये कि जहाँ एक प्रदेश की सीमा समाप्त होती है वही पर उस प्रदेश की प्रचलित जलवायु दशायें समाप्त नही होती और जहाँ दूसरा प्रदेश आरम्भ होता है वही पर अचानक उस प्रदेश की जलवायु दशायें अपना प्रभाव नही दिखाने लगती। जलवायु की ये दशायें एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश मे धीमे-धीमे समाप्त होती है। अत हम एक प्राकृतिक प्रदेश से दूसरे को निश्चित करने के लिए कोई ऐसी रेखा उसके बीच मे नही बना सकते जो उनमे भेद कर सके। एक प्रदेश मे जो दूसरे प्रदेश के अन्तर से बढता है वह अत्यन्त साधारण और क्रमश: होता है। इस कारण दो प्रदेशो के बीच का बहुत सारा भाग सही रूप मे **अन्तरिम क्षेत्र** (Transition Belt) ही समझा जा सकता है और फिर चूंकि दो भिन्न प्रदेशो की प्राकृतिक परिस्थिति में कभी एकता नही होती और वहाँ की स्थिति तथा प्राकृतिक बनावट स्थानीय जलवायु पर पूर्ण प्रभाव डालती है इसलिए एक ही प्राकृतिक प्रदेश के भागो मे भी कई स्थानीय भेद होते है। अत. प्राकृतिक प्रदेशो का जलवायु के आधार पर यह वर्गीकरण असत. ही सत्य होता है। इस कारण भिन्न-भिन्न प्रदेशो को एक निश्चित किस्म में बताने का मतलब केवल मात्र यही है कि उनमे भिन्नता होने के बदले समानतायें अधिक है। भूगोल-वेत्ता इन प्रदेशों का नामकरण करने मे मुख्यत वहाँ के जलवायु के लक्षणो का अधिक ध्यान रखते है। किन्तु चूंकि जलवायु का वनस्पति पर बहुत ही गहरा प्रभाव होता है

---

2. 'Natural Region is an area of the earth's surface which is essentially homogeneous with respect to the conditions that affect human life". *A. J. Herpertson*, "Major Natural Regions. An Essay in Systemic Geography." **Geographical Journal,** Vol XXV, 1905, p. 300.

3. "Natural Region is an area throughout which a particular set of physical conditions will lead to a particular kind of economic life"—*P. M Roxby*, What is a Natural Region, Geographical Teacher Vol. 4, 1907-8.

क्रूर जलवायु के फलस्वरूप यहाँ के लोग कद मे छोटे और मानसिक रूप से अविकसित रहते है। इन प्रदेशो के मुख्य लक्षण ये है :—

(१) प्राकृतिक साधनो की कमी और समानता लोगो के लिए सन्तोषप्रद नही होती।

(२) प्राकृतिक दशाएँ निरन्तर आर्थिक विकास मे अड़चने पैदा करती हैं।

(३) शक्ति के साधनो की कमी होने से औद्योगिक उन्नति सम्भव नही होती।

(४) यहाँ ऐसे कोई साधन बच नही रहते जिनका व्यापारिक दृष्टि से उपयोग किया जा सके। जहाँ कही बच रहते है वे इतने निम्न कोटि के होते है कि उनसे बहुत कम लाभ होता है।

(५) यहाँ की जीवन दशाएँ इतनी निकृष्ट और भयकर हैं कि यहाँ किसी की उन्नति सम्भव नही हो पाती। उपनिवेश बसाने वाले भी यहाँ से पीछे हटते हैं। कारण ये प्रदेश ससार के सबसे पिछड़े हुए भाग हैं।

इस कारण कभी-कभी कोई विशेष प्रदेश वहाँ की वनस्पति के आधार पर भी पुकारा जाता है। इस प्रकार हम उन प्रदेशों को जहाँ पर कि शीतोष्ण महाद्वीपीय जलवायु पाई जाती है शीतोष्ण घास के मैदान या प्रेरी के नाम से भी वर्गीकरण करते हैं। कभी-कभी प्राकृतिक प्रदेश का नामकरण उस स्थान के नाम के आधार पर भी होता है, जैसे कुछ प्रदेश चीनी जलवायु तथा सूडान की तरह की जलवायु से भी समझे जाते हैं। लेकिन हमें यह न भूलना चाहिये कि हमेशा जलवायु ही प्रधान वस्तु होती है और जगह गौण। वनस्पति यद्यपि महत्त्वपूर्ण है पर वह भी जलवायु पर ही आधारित होती है। इसलिए हमेशा जलवायु के अनुरूप नामकरण करना ही अधिक उपयुक्त होता है।

प्रमुख प्राकृतिक खण्ड

जलवायु के आधार पर संसार को निम्न प्रमुख प्राकृतिक प्रदेशों में विभाजित किया गया है। इन प्रदेशों की जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, खेती तथा मनुष्य के कामकाजों में विभिन्नता की अपेक्षा समता अधिक रहती है। संसार के प्रमुख प्राकृतिक प्रदेश ये हैं :—

(क) उष्ण कटिबन्धीय प्रदेश (Tropical or Hot Regions)—

(१) भूमध्य रेखीय निम्न भूमि के प्रदेश या अमेजन तुल्य प्रदेश (Equatorial Low Lands or Amazon Type)

(२) सवन्ना या सूडान तुल्य प्रदेश (Savanna, Sudan or Tropical Grasslands)

(३) मानसूनी प्रदेश (Monsoon Lands)

(४) उष्ण मरुस्थल या सहारा तुल्य प्रदेश (Hot Desert or Sahara Type Regions)

(ख) उष्ण-शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेश (Warm Temperate Regions)—

(१) भूमध्य सागरीय प्रदेश (Mediterranean or Western Margin Type)

(२) गर्म-शीतोष्ण वन प्रदेश या चीनी जलवायु प्रदेश (Warm Temperate Lands or China Type or Eastern Margin Type)

(३) शीतोष्ण मरुभूमि या गोबी या ईरान जलवायु प्रदेश (Temperate Deserts or Gobi and Iran Type)

(४) तूरान तुल्य प्रदेश (Turan Type)

(५) तिब्बत तुल्य प्रदेश (Tibet Type)

(ग) शीत-शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेश (Cool Temperate Regions)—

(१) शीतोष्ण वन प्रदेश या पश्चिमी यूरोपीय जलवायु प्रदेश (Cool Temperate West Margin or West European Type)

(२) शीतल-शीतोष्ण पूर्वी प्रदेश या सेंटलोरेंस प्रदेश (St. Lawrence or Eastern Margin Type)

(३) प्रेरी जलवायु प्रदेश या शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान (Prairie or Temperate Grassland Type)

(४) साइबेरिया या आन्तरिक निम्न वन प्रदेश (Siberian or Interior Lowland Type)

(५) अल्टाई तुल्य प्रदेश (Altai Type)

(घ) ध्रुवीय प्रदेश (Polar Regions)—

(१) टुंड्रा जलवायु प्रदेश (Tundra Type)

(२) अतिशीत या हिमावरण प्रदेश (High land or Ice-Cap Type)

इन प्राकृतिक खण्डों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा अक्षांशीय स्थिति नीचे दिये गये चार्ट के अनुसार है :

९०°	अतिशीत प्रदेश		
	टुंड्रा तुल्य प्रदेश		
७०°	साइबेरिया तुल्य प्रदेश		
६०°	पश्चिमी यूरोपीय तुल्य प्रदेश	प्रेरी तुल्य प्रदेश	सैंट लारेंस तुल्य प्रदेश
४५°	भूमध्य सागरीय प्रदेश	तूरान तुल्य प्रदेश	चीन तुल्य प्रदेश
		तिब्बत तुल्य प्रदेश	
३०°	सहारा तुल्य प्रदेश	ईरान तुल्य प्रदेश	मानसूनी प्रदेश
२०°	सवाना (सूडान) तुल्य प्रदेश		
५°	विषुवत रेखीय प्रदेश		
०°			

कुछ प्रदेश प्राकृतिक साधनों में दरिद्र होते हैं और कुछ बहुत ही सम्पन्न और इस दृष्टि से प्रादेशिक भिन्नता सत्य है। किन्तु इस भिन्नता का दूसरा पहलू भी है। कभी-कभी अच्छे सम्पन्न प्रदेश भी शक्ति तथा आर्थिक विकास में समान नहीं होते। कुछ प्रदेश प्राकृतिक साधनों में दरिद्र होते हुए भी घने आबाद और उन्नत देखे जाते हैं लेकिन कुछ प्रदेशों का हाल बिल्कुल ही उल्टा है। प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता होते हुए भी वे पिछड़े रहते हैं। इसका एक मात्र कारण यही है कि साधन-सम्पन्नता होते हुए भी उन्नति करने के सब जगह समान अवसर नहीं होते। इसलिए लोग कुछ ऐसे प्रदेशों से तो दौड़ में आगे बढ़ जाते हैं और कुछ पीछे रह जाते हैं। इसी प्रकार लोगों में सांस्कृतिक भेद भी प्रदेश के अवसर लाभ और उनकी सीमितता पर निर्भर करते हैं। हम संसार के मुख्य-मुख्य प्रदेशों का यहाँ संक्षेप में वर्णन करेंगे।

आवश्यक परिवर्तन तालिका

१ इंच	= २५.४ मिलीमीटर
१ मीटर	= ३.२८ फुट
	= १.०९ गज
१ मील	= १.६१ किलोमीटर
१ वर्ग मील	= ६४० एकड
	= २५९ हैक्टेअर्स
१ एकड़	= ४८४० वर्ग गज
	= लगभग १ मिस्र फैदन (Egyption feddan)
	= १.६१ इराकी डुनुम (Iraqi dunms)
१ हैक्टेअर	= १०,००० वर्ग मीटर
	= लगभग २१/२ एकड
१ वर्ग किलोमीट	= १०० हैक्टेअर्स
१ घन फुट	= ६.२३ गैलन (बृटिश)
	= ६.४८ गैलन (अममीकन)
१ घन मीटर	= ३५.३ घन फीट
	= १००० लिटर
	= १ टन जल
१ मिलीयार्ड	= १,०००,०००,००० घन मीटर
	= १ घन किलोमीटर
	= ८१०,००० एकड फुट
१ एकड फुट	= ४३,५६० घन फुट
१ टन	= २२४० पौंड
	= लगभग १ घन मीटर जल की यात्रा
	= लगभग ३७ बुशल अनाज
१ बुशल	= ८ गैलन
	= लगभग ६० पौंड़ अनाज
१ क्विंटल	= २२० पौंड
	= १०० किलोग्राम
१ किलोग्राम	= २.२ पौंड
१ घन मीटर प्रति सैकड	= ३५.३ घन फुट प्रति सैकड
१ (मैगावाट (Mw)	= १००० किलोवाट (Kw)
	= १३४० अश्व-शक्ति
१ अश्व शक्ति (Horse pans)	= ७४६ वॉट
१.३४ हार्सपावर	= १ किलोवाट
१ किलोवाट घंटा	= १००० वाट शक्ति १ घंटे मे

(अ) बाहुल्यता वाले प्रदेश (Regions of Bounty)—इन प्रदेशों में विषुवत् रेखीय निम्न प्रदेश और पठार अर्थात मलाया, पूर्वी द्वीप समूह, सिंहलद्वीप, भारत के दक्षिणी-पश्चिमी समुद्री किनारे, पश्चिमी अफ्रीका, अमेजन तथा कांगो बेसिन के कुछ भाग और उत्तरी पूर्वी दक्षिणी अमरिका सम्मिलित है। इन प्रदेशों में प्रकृति दयावान और दानशील होती है। भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रचुर साधन उपहार स्वरूप देती है। यहाँ पर लोग अपनी आवश्यकताओं की चीजें स्वयं पैदा करने का कष्ट नहीं करते। प्रकृति उनके लिए सब कुछ कर देती है। वे केवलमात्र उनको इकट्ठा कर उपयोग में लाते है। अतिवृष्टि और ऊँचा तापक्रम यहाँ के मुख्य लक्षण हैं जो वनस्पति और पशु जीवन के पूर्ण विकास के लिए वरदान स्वरूप सिद्ध हुए है। किन्तु प्रकृति का यह वरदान यहाँ के मानव जीवन के लिए किसी ऋषि द्वारा दिये गये शाप से कम नहीं है। पग-पग पर उन्हें अड़चनों का सामना कर आगे बढ़ना पड़ता है। यद्यपि प्रकृति लोगों के लिए जीवन-यापन के साधन जुटाती है किन्तु उन्हें विकास नहीं करने देती। वह लोगों से आज्ञा-पालन चाहती है, स्वतन्त्र विचार और स्वतन्त्र कार्य से उसे चिढ़ है इसीलिए वह लोगों पर एक तानाशाह के रूप में राज्य करती है। निम्न प्रदेशों या उच्च प्रदेश सब जगह लोगों को जीवन-युद्ध की प्रचंड ज्वाला में परीक्षा देनी पड़ती है। प्रकृति के पट्ट वनस्पति और पशु जीवन के बढ़ते हुए प्रभाव के सम्मुख मानव को हताश होकर हार स्वीकार करनी पड़ती है क्योंकि प्रकृति जो है पीछे है। यहाँ की जलवायु मानव जीवन के विकास में सहायक न होकर रास्ते में रोड़े अटकाती है। अस्वास्थ्यकर जलवायु मनुष्यों की शक्ति को क्षीण कर उनके सामाजिक और आर्थिक विकास के रास्तों को बन्द कर देती है। किन्तु जहाँ तक बहुमूल्य साधनों का प्रश्न है ये प्रदेश सबसे अधिक धनी माने गये हैं और आज संसार के व्यापार में एक मुख्य स्थान रखते है। इन प्रदेशों के मुख्य लक्षण ये हैं :—

(१) यहाँ अगणित प्रकार के वानस्पतिक पदार्थ मिलते हैं क्योंकि वर्षा अधिक होने से उनकी बढ़वार भी द्रुतगति से होती है।

(२) मुख्य-मुख्य वस्तुएँ जंगलों तथा पौधों से प्राप्त होती हैं। खेती व पशु साधन व्यापारिक दृष्टि से बहुत कम महत्त्व के हैं।

(३) यद्यपि यहाँ पर अच्छी संख्या में अनेक प्रकार के पशु पाये जाते हैं किन्तु पालतू पशु बहुत ही कम और कमजोर होते हैं।

(४) चूँकि यहाँ अतिवृष्टि और तापक्रम ऊँचा रहता है इस कारण भूमि जल्द ही नष्ट हो जाती है। अतः खेती की फसलें पैदावार और भोजन तत्व की दृष्टि से बहुत निम्न रहती हैं।

(५) सामान्यतः यहाँ खनिज पदार्थ बहुत कम पाये जाते है और जो कुछ भी पाये जाते हैं तापक्रम और नमी की अधिकता के कारण उनका उपभोग केवल नहीं के बराबर होता है।

(६) इनके विपरीत वृत्तीय बीमारियाँ, आवागमन के साधनों और मजदूरों की कमी आदि कुछ ऐसी कठिनाइयाँ हैं जिससे यहाँ के प्राकृतिक साधनों का उचित रूप से उपयोग कठिन ही नहीं असंभव भी होता है।

(ब) उन्नत प्रदेश (Regions of Increment)—साधारण दृष्टि से देखने से तो यह मालूम होता है कि ये प्रदेश भी उपरोक्त प्रदेशों से बहुत कुछ मिलते-जुलते

क्रमश. स्फटिक, अर्द्धस्फटिक और शीशे की तरह होती है। इनमें चूना, लोहा, मैगनेशियम, सिलीकेट और कुछ कम अनुपात मे लोहे के आक्साइड होते हैं।

(३) **क्षारीय चट्टानों** (Alkali) मे क्षारीय-पृथ्वी अथवा लोहा-मैंगनेशियम के सिलीकेटों के स्थान पर क्षार की अधिकता रहती है। डियोराइट, पारफीराइट (Parphyrite) और एन्डीसाइट (Andecite) इनके विभिन्न रूप होते है।

(४) **सिलिकन चट्टानो** (Silican) मे सिलका की मात्रा अधिक होती है तथा लोहा और चूना व मैगनेशियम कम होता है।

आग्नेय चट्टानो में साधारणत. निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं —

(१) आग्नेय चट्टानों मे कण गोल नही होते। यह भिन्न-भिन्न रूप तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के स्फटको (Crystals) से बनी होती हैं।

(२) यह चट्टाने ठोस और पिंड रूप होती हैं। इनमे परतें नही होती किन्तु वर्गानुसार इसमे पूर्ण विकसित जोड होते है।

(३) यह चट्टाने सख्त होती है तथा इनमे से जल नहीं गुजरता।

(४) इन चट्टानो मे कोई प्राणिज (Organic) अवशेष अथवा जीव-जन्तुओ और पौधो के चिन्ह नही पाये जाते।

आग्नेय चट्टानें बडे महत्व की मानी जाती है क्योकि ससार के अधिकतर खनिज पदार्थ इन्ही चट्टानो मे पाये जाते हैं।

(२) प्रस्तरीभूत चट्टानें

यह चट्टाने धरातल पर अधिक मात्रा मे पाई जाती हैं। विद्वानो का अनुमान है कि पृथ्वी के तीन चौथाई भाग पर यह चट्टानें बिछी हुई पाई जाती है। किन्तु यह अधिक गहराई तक नही पाई जाती। यद्यपि पृथ्वी के धरातल पर चट्टानें इतनी विस्तृत है किन्तु स्थल के निर्माण मे इनका केवल पांच प्रतिशत भाग ही है। शेष ९५ प्रतिशत भाग मे आग्नेय और रूपान्तरित चट्टानें भरी पडी है। इन शिलाओ का निर्माण वर्तमान चट्टानो के घिसे हुए अंश से ही होता है और इनका सचय बिखरे हुए रूप मे होता है किन्तु सतह रासायनिक पदार्थ के द्वारा छिछले सागरो की तलहटी मे जल के द्वारा लाई गई बालू, मिट्टी और ककड आदि के जम जाने से बनती है। निरन्तर जमते रहने से कारण ऊपरी परतो के दबाव और पानी मे घुल कर आये हुए चूना या अन्य पदार्थों के मिलने से परत जम कर सख्त चट्टानें बन जाती हैं। पृथ्वी के धरातल पर उथल-पुथल होने के कारण पानी के भीतर बनी हुई यह चट्टानें बाहर निकल आती है। इन चट्टानो में कई परतें एक दूसरे के ऊपर जमी रहती है। इन चट्टानों मे समुद्र मे रहने वाले जीवधारियो के अवशेष भी मिले रहते हैं। इन चट्टानो मे स्फटिक मिट्टी और चूने की अधिकता होती है।

चट्टानो के बनने के अनुसार यह चट्टाने तीन प्रकार की हो सकती हे—

(१) **चट्टानों के चूर्ण से बनी हुई चट्टानें**—इस प्रकार की बनी हुई चट्टानों मे बालू, शेल, बजरी और चिकनी मिट्टी की अधिकता के कारण क्रमश इन्हे बालू का पत्थर या बलुहीं (Annaceous Rocks) या चिकनी मिट्टी का पत्थर (Agrillaceous Rocks) कहते हैं। बालू का पत्थर इमारती पत्थरो मे सबसे महत्वपूर्ण है।

हैं। परन्तु बात ऐसी नहीं है। दोनों जगह यद्यपि अति वृष्टि और ऊँचा तापक्रम रहता है, किन्तु भेद इतना सा है कि इन प्रदेशों में वर्षा सामयिक होती है। इसलिए यहाँ की जलवायु ग्रीष्म में गर्म और तर व सर्दी में शीतल और शुष्क रहती है। ऐसे प्रदेशों में मुख्यतः मानसूनी देश आते है। इन देशों में तापक्रम तथा वर्षा की भिन्नता और साथ ही सामयिक मौसम परिवर्तन आदि कुछ ऐसी विशेषताएँ पाई जाती है जो वनस्पति तथा पशु जीवन के सफल विकास के लिए बहुत ही अनुकूल होती है। इसी कारण मानसून प्रदेश जंगल, पौधे, पशु तथा अन्य साधनों में बहुत सम्पन्न होते हैं। खेती यहाँ का सफल और उत्पादक उद्योग है। इन प्रदेशों में लोगों को अपने श्रम के अनुपात में अधिक लाभ मिलता है और शायद यही कारण है कि यहाँ प्रति वर्गमील पीछे जनसंख्या दुनिया में सबसे अधिक पाई जाती है। यहाँ पाये जाने वाले प्राकृतिक साधनों की किस्मों में केवल दो ही मुख्य है जो कि वनस्पति और पशु जीवन से सम्बन्ध रखते है। वानस्पतिक साधनों में जंगली पैदावार जैसे लकड़ी, लाख, गोंद कई प्रकार के रंग, रंगने और चमड़ा कमाने के पदार्थ, मोम, शहद और घास, पौधों में चाय, काफी, रबड, सिनकोना, केला, गन्ना, नारियल और मसाले, खेतिहर पैदावार में गेहूँ, चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा, दालें, तिलहन, कपास, जूट और तम्बाकू आदि मुख्य वस्तुएँ हैं। पशु पदार्थों में चमड़ा, दूध, गोस्त ऊन, जलाने तथा खाद के लिए गोबर और खेती तथा यातायात के साधनों में उनका सहयोग। इनके अलावा मछलियाँ, मुर्गियाँ और अन्य वनस्पति तथा पशु साधन आदि सब साधन वस्तुतः बहुत ही बड़े परिमाण में उपलब्ध होते है। इन प्रदेशों के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं :—

(१) वनस्पति साधनों की प्रचुरता है। भोज्य पदार्थ तथा कच्चे माल उत्पादन करने की दृष्टि से खेती मुख्य है। कच्चे माल के साधनों में इसके अलावा जंगल और पौधों की वस्तुएँ भी सहयोग देती हैं।

(२) घरेलू पशुओं का घनत्व यहाँ सबसे अधिक है। इनकी सेवाएँ और पदार्थ मनुष्य जीवन के लिए अनिवार्य है।

(३) यहाँ पर खेती तथा जंगली पशुओं की पैदावार दुनिया के अन्य साधन प्राप्त प्रदेशों की तुलना में अद्वितीय है।

(४) यहाँ की भूमि नमी और खाद से हमेशा पूरित रहती है अतः सामान्यतः दो फसलें उगाना यहाँ का नियम हैं।

(५) चूँकि यहां मौसम का सामयिक भेद बहुत ही मुख्य है अतः कई प्रकार की फसलें पैदा करना सम्भव होता है।

(६) खनिज पदार्थों का वितरण इन प्रदेशों में बहुत ही विस्तृत और उत्तम है। इसके साथ-साथ जल-विद्युत के साधनों की प्रचुरता यहाँ के लोगों की औद्योगिक आवश्यकता को पूरा करती है।

(७) यद्यपि मानव शक्ति और उसकी दक्षता मौसम के साथ बदलती रहती है किन्तु फिर भी लोगों का स्वास्थ्य साधारण और सन्तोषजनक है। वनस्पति-जन्य सभ्यताओं में यहाँ के निवासी अन्य लोगों से बहुत ही प्रगतिशील और उन्नत हैं।

(ग) उद्योगशील प्रदेश (Regions of Efforts)—ये प्रदेश शीतोष्ण कटिबन्ध में पाये जाते हैं। इनके स्पष्टतः दो भाग हैं—जैसे एक तो शीत प्रधान और दूसरा उष्ण प्रधान। शीतोष्ण प्रदेश—शीत प्रधान शीतोष्ण कटिबन्ध वाले भाग के

(३) **प्राणिज चट्टानें**—तीसरे प्रकार की प्रस्तरीभूत चट्टानें जीव-जन्तुओं अथवा पेड़-पौधों के धीरे-धीरे एकत्रित होकर जमने से बनती है। इस प्रकार की चट्टानों में यदि चूने की मात्रा अधिक होती है तो उसे **चूने की चट्टान** (Calcareous Rocks) कहते हैं और यदि उसमें वनस्पति की मात्रा अधिक होती है तो उसे **कार्बन की चट्टानें** (Carbonaceous Rocks) कहते है—चूना प्रधान चट्टानों में चूने का पत्थर मुख्य है। जीवधारियों के अस्थि पंजर तथा पानी में मिले हुए चूने के एकत्र होने से इनका निर्माण होता है। चूने का पत्थर प्राय उष्ण व शीतोष्ण कटिबन्धों के छिछले समुद्रों में बना हुआ माना जाता है। भूतल पर यह बहुतायत से मिलता है। भारत में सौराष्ट्र में तथा उत्तर प्रदेश में चूने का पत्थर अधिक मिलता है। यह पत्थर विशेष तौर पर सीमेंट बनने के काम में आता है। इस प्रकार के पत्थरों का जमाव मध्यप्रदेश, राजस्थान और विन्ध्य पर्वत में भी पाया जाता है। बालू या मिट्टी आदि के मिश्रण के कारण चूने की चट्टानों के कई ढेर हो जाते हैं जैसे खड़िया, शैल खड़िया, डोलोमाइट आदि। कार्बन प्रधान चट्टानों में कोयले का पत्थर अथवा मिट्टी के तेल का पत्थर आदि मुख्य हैं।

परतदार चट्टानों की विशेषतायें निम्नलिखित है :—

(१) यह चट्टानें भिन्न-भिन्न रूप तथा आकार के छोटे-छोटे कणों की बनी होती हैं। इनमें कुछ कण बड़े और बहुत ही छोटे होते हैं।

(२) यह चट्टानें बहुत सी परतों अथवा तहों से बनी होती हैं जो एक के ऊपर एक समतल रूप में बिछी रहती हैं।

(३) चूंकि यह चट्टानें जल में बनी होती हैं अत इनमें मिट्टी की दरारें होती हैं जिनमें लहरों और धाराओं के चिह्न पाये जाते है।

(४) इनमें जीव-जन्तुओं और वनस्पति के अवशेष पाये जाते है।

(५) ये चट्टानें अपेक्षाकृत मुलायम होती है।

पृथ्वी की भीतरी गर्मी और दबाव के कारण, जो आग्नेय और परतदार चट्टानों के रूप बदल जाते है, उनके कुछ उदाहरण ये हैं :—

मौलिक चट्टानें	रूपान्तरित चट्टानें
(१) *आग्नेय चट्टानें*—	
ग्रेनाइट	ग्रेनाइट नीस
साइनाइट	साइनाइट नीस
ग्रैबो	ग्रैबो नीस
बैसाल्ट	स्लेट
अभ्रकयुक्त चट्टानें	शिस्ट
बिटूमीनस	ऐंथ्रेसाइट तथा ग्रैफाइट
(२) **परतदार चट्टानें**—	
कोंग्लोमरेट	कोंग्लोमरेट शिस्ट
बलुआ पत्थर	स्फटिक (क्वार्टजाइट)
शेल	स्लेट, अभ्रक शिस्ट

पश्चिमी किनारों पर यह प्रदेश मुख्यतः पतझड़ वाले वनों (सख्त लकड़ी के) से पटे है। ओक, बीच, एल्म और वर्च यहाँ के विशेष पेड़ है। किन्तु इनके अलावा जहाँ कहीं जंगल कम है या साफ कर लिए गए है वहाँ खेती और ढोर पालने का काम किया जाता है। खेती मे अनाज, फल, जड़ें, घास, हैम्प व फ्लेक्स आदि वस्तुएँ उगाई जाती है जो यहाँ की जलवायु के अनुकूल होती है। ढोर पालने के अन्तर्गत भेडें, ऊन और गोस्त और गाय-भैंसे प्रधानत दूध और चमडे के लिए पाली जाती है। लकडी चीरना, मछली मारना, फल उगाना आदि दूसरे मुख्य धन्धे है। पूर्वी किनारों वाले प्रदेशो मे भी प्राय वही धन्धे पाये जाते है जो पश्चिमी प्रदेशो मे पाये जाते है। किन्तु जंगल और मछलियाँ यहाँ के मुख्य साधन है और इन्ही पर अधिकतर लोग अपना जीवन यापन करते है। जंगल वैसे तो पतझड़ वाले ही है पर कोणधारी वन भी पाये जाते है। सामान्यतः शीत प्रधान शीतोष्ण भागो की जलवायु स्वास्थ्यकर है। यहाँ के रहने वाले चुस्त और मेहनती होते है। ये भाग आवश्यक रूप से औद्योगिक प्रदेश बन गये है और संसार की औद्योगिक वस्तु निर्माण-कला तथा व्यापार करने में बढे-चढे है।

इसके विपरीत भूमध्यसागरीय प्रदेश (उष्णता प्रधान शीतोष्ण प्रदेश) में गर्म व शुष्क गर्मियाँ और उष्ण व तर सर्दियाँ बीतती है। इसलिये यहाँ पर होने वाले पेड जैसे जैतून, कोर्क, चेस्टनट, ओक फर, सिडार, साईप्रस, शहतूत और ऐसे पेड जो र.., मोम या तेल युक्त होते है, मुख्य है। ये ग्रीष्म के ताप और शुष्कपन को सह लेने के ..ने होते है। चूंकि यहाँ प्राकृतिक चरागाहों की कमी है अत: ढोर पालने का काम बहुत कम होता है। सख्त किस्म के गेहूँ और जौ तथा चावल जहाँ संभव हो सकता है, काफी परिमाण मे उगाये जाते है। कपास जहाँ पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होती है पैदा की जाती है। फल उगाने का साधन बहुत होने के कारण यहाँ पर रस वाले फल (नारङ्गी, नीबू और अंगूर), अंजीर, जैतून, एप्रीकोट, पीच आदि विशेष रूप से पैदा किये जाते है। शहतूत की पत्तियों का रेशम के कीडे पालने के लिये उपयोग किया जाता है। रेशम के कीड़े पालना यहाँ का मुख्य धन्धा है। यहां के मनुष्यो को शीत प्रधान शीतोष्ण भाग वाले लोगो की तुलना मे प्राकृतिक साधनो द्वारा अपना जीवन निर्वाह करने के लिए कम मेहनत और कम चिन्ता करनी पड़ती है। किन्तु इन्होंने अपनी शक्ति को तथा विचारों को कला और सामाजिक व्यवस्था को ऊँचा उठाने की ओर केन्द्रित कर ऊँची सभ्यताओं को जन्म दिया है। सामान्यत इन प्रयत्नशील प्रदेशो मे लोगो को अपनी शक्ति तथा प्रयत्नों के अनुपात मे अपने परिश्रम का फल मिल जाता है। यहाँ की रहने वाली जातियाँ स्वस्थ, कार्यशील और चुस्त है। अत ये प्रदेश आर्थिक रूप से बहुत ही ऊँचे उठे हुए है। इन प्रदेशो के मुख्य लक्षण ये है —

(१) खेती यहाँ का मुख्य धन्धा नही है। ढोर पालने, मछली पकडने, लकडी चीरने व फल उगाने आदि सब धन्धों से खेती का धन्धा गौण है।

(२) मूलभूत भोज्य पदार्थ तथा कच्चा माल व पशु मुख्य साधन है।

(३) औद्योगिक कारखानो के लिए यहाँ आवश्यक वानस्पति का भोज्य पदार्थों तथा कच्चे माल की कमी है। अत ये अन्य प्रदेशों से मँगवाये जाते हैं।

(४) चूंकि खनिज उद्योग के लिए जलवायु अनुकूल है इस कारण जहाँ कहीं यह उद्योग सम्भव है, बहुत ही बढा-चढा और अच्छी अवस्था मे है।

ऊँचे भागों को काटकर समतल बनाने वाली शक्तियो को **अपचयन की शक्तियाँ** (Deggradational forces) और ऊँचे स्थलों के कटे हुए भागों को नीचे भागो में जमा करने वाली शक्तियों को **जमाव की शक्तियाँ** (Aggradational forces) कहते है। अनुमानित प्रति वर्ष पृथ्वी के धरातल की चट्टानो का छिलन जो समुद्र गर्भ मे पहुँच जाता है उसकी मात्रा ८०,००० लाख टन की है। इसमे से लगभग ३० प्रतिशत घुले हुए रूप मे समुद्र मे पहुँचता है। इसी प्रकार औसतन लगभग ६००० वर्षो मे १ फुट ऊँचे भागो की घिसावट हो जाती है किन्तु विशेष भागो मे घिसावट की यह दर भिन्न भिन्न होती है। जैसे, इरावदी नदी की घाटी मे १ फुट भूमि को नीचा होने मे लगभग ४०० वर्ष लगते है जबकि हड्सन नदी की घाटी मे ४७,००० वर्ष।[6]

उपरोक्त दोनो प्रकार की शक्तियो मे निरन्तर संघर्ष होता रहता है। ज्यो ही कोई भूभाग सागर के गर्भ मे ऊँचा उठता है त्यो ही बाह्य शक्तियाँ उसको काटना-छाटना आरम्भ कर देती है। इसके फलस्वरूप भूमि की छीलन आदि समुद्र के तल पर पहुँच कर नवीन भूमि पुन. ऊँची उठने के लिए तैयार होती रहती है। अस्तु, दोनो शक्तियो के इस संघर्ष के फलस्वरूप भूमि के उत्थान-पतन का कभी समाप्त न होने वाला एक अखण्ड चक्र चलता रहता है, इस चक्र को **भ्रम्युत्थान चक्र** (Evolutianary Cycle) कहते है। इस चक्र की तीन अवस्थायें होती है —

(क) प्रारम्भिक रूप मे भूमि की विषमतायें कम होती है इसे **स्थल की युवावस्था** कहा जाता है,

(ख) मध्य रूप मे भूमि पर विषमतायें विकसित रूप मे होती हैं इसे **स्थल की प्रौढावस्था** कहते है; और

(ग) अन्तिम रूप मे पुन विषमतायें कम हो जाती है इसे **वृद्धावस्था** कहा जाता है।

इन शक्तियो के पारस्परिक सघर्षों के फलस्वरूप जो रूप भूपृष्ठ पर दृष्टिगोचर होते है उन्हे ही स्थल-रूप (Landforms) की संज्ञा दी जाती है। इन रूपो का मानव और उसके कार्यों पर बडा प्रभाव पडता है।

भूपृष्ठ के किसी विशेष तत्व को स्थल रूप कहने के लिए उसमे निम्न विशेषतायें होनी चाहिए :—

(१) इसका धरातल ऐसा होना चाहिये कि वह दूसरों से पूर्णतः भिन्न हो;

(२) इसकी चट्टानो की बनावट और इसकी साधारण रचना स्पष्ट तथा प्रधान होनी चाहिए,

(३) यह इतना प्रत्यक्ष होना चाहिये कि उसे प्राकृतिक घटना सम्बन्धी शास्त्र की किसी भी व्याख्या मे सम्मिलित किया जा सके।

---

6. *A. Holmes*, **Principles of Physical Geology**, 1951, p. 152

जैसा कि ऊपर कहा गया है चट्टानें खनिज के समूहों के एकत्रित होने बनती हैं। चट्टानों के बनने की विधि के अनुसार उनको तीन मुख्य वर्गों में बाँटा जाता है—

(१) प्रारम्भिक या आग्नेय चट्टानें (Primary or Igneous Rocks)।

(२) गौण, प्रस्तरीभूत, जलीय या परतदार चट्टानें (Secondary or Sedimentary, Aqueous or Stratified Rocks)।

(३) रूपान्तरित या परिवर्तित चट्टानें (Metamorphic Rocks)।

(१) आग्नेय चट्टानें

यह चट्टानें पृथ्वी के भीतर से निकले हुये लावा जैसे द्रव पदार्थ के शीतल होने से बनती हैं। यह चट्टानें पृथ्वी के धरातल पर सबसे पहले बनी हैं। इन चट्टानों के ठंढे होने के स्थान तथा उनके बनने के समय के आधार पर दो भाग किये जा सकते हैं—**आंतरिक अथवा पातालो चट्टानें** अथवा **डाइक चट्टानें** (Intrusive or Plutonic Rocks or Dyke Rocks) और **बाहरी अथवा बाह्य** (External or Volcanic Rocks) चट्टानें।

भीतरी चट्टानें—पृथ्वी के गर्भ से निकलने वाला गर्म द्रव लावा धरातल तक नहीं आ पाता किन्तु अत्यन्त गहरे स्थानों पर रह कर ही धीरे-धीरे ठंढा होता रहता है। अत्यन्त गहराई पर ठंढा होने में इसे बहुत समय लगता है। अतः इसमें बड़े-बड़े रवे मिलते हैं। ऊपर की चट्टानों के घिसकर टूट जाने पर यह भीतरी चट्टानें धरातल पर पहुँच जाती हैं। बिल्लौर, फाल्सपर और अभ्रक मोटे दानों वाले चट्टानों के मुख्य उदाहरण हैं। भीतरी चट्टानों का मुख्य उदाहरण **ग्रैनाइट और डोलोमाइट** है। यह अधिकतर मकान बनाने और लोहे को साफ करने के लिये काम में लाई जाती है। इन शिलाओं पर जल का प्रभाव धीरे-धीरे पड़ता है और इनमें जल भी बहुत कम प्रविष्ट होता है किन्तु यह शिलायें परतहीन और बहुत कम कड़ी होती हैं जिनसे इनको काटने-छाटने में बड़ी मेहनत पड़ती है। ग्रैनाइट पत्थर विशेषकर इङ्गलैंड, स्वीडेन, फ्रान्स, कनाडा और भारत में मद्रास तथा मैसूर में पाया जाता है।

बाहरी चट्टानें ज्वालामुखी के उद्गार से निकले लावा के धरातल पर जम कर ठंढे होने से बनती हैं। लावा के शीघ्र ही ठंढे हो जाने के कारण इन चट्टानों में छोटे-छोटे रवे पाये जाते हैं। इस प्रकार की चट्टानों के मुख्य उदाहरण **बैसाल्ट** है। यह चट्टानें महासागरीय ज्वालामुखियों और द्वीपों में अधिक मिलती हैं। इनमें क्षार की मात्रा कम होती है किन्तु लोहा, चूना और मैग्नेशियम अधिक मात्रा में मिलते हैं। यह चट्टानें ग्रैनाइट चट्टानों की अपेक्षा ऊँचे तापक्रम पर पिघलती हैं किन्तु उनकी अपेक्षा पतली होती हैं और इन पर मौसम क्षति का प्रभाव बड़ी जल्दी पड़ता है। भारत में इस प्रकार की चट्टानें दक्षिण के पठार पर पाई जाती हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार की आग्नेय चट्टानों में भिन्न-भिन्न प्रकार के तत्व भिन्न-भिन्न मात्रा में रहते हैं जैसे—

(१) **पैरिडोटाइट** (Peridotite) स्फटिक चट्टान है जिसमें लोहा, मैगनेशियम, सिलीकेट और आक्साइड सम्मिलित रहते हैं।

(२) **बैसाल्ट, डियोराइट** (Diorite) तथा **टैचीलाइट** (Tachilyte)

महाद्वीपो की सख्या ७ है और द्वीपों की अनेक। सबसे बडा महाद्वीप एशिया और सबसे छोटा महाद्वीप आस्ट्रेलिया है, जिनका क्षेत्रफल क्रमश १८६ लाख और ३२ लाख वर्गमील है। अन्य महाद्वीप क्षेत्रफल के अनुसार ये हैं—अफ्रीका, उत्तरी अमरीका, दक्षिण अमरीका, अटार्कटिक और यूरोप। इन महाद्वीपो सम्बन्धी आवश्यक आँकडे इस प्रकार है[7] —

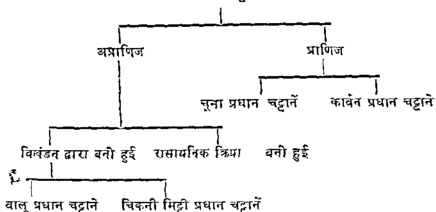
महाद्वीप	क्षेत्रफल (वर्ग मीलो मे)	१९६१ मे जनसख्या (००० मे)	सबसे ऊची चोटी (फीटो मे)	
एशिया	१०,४०४,०००	१,७०४,१८५	माउन्ट एवरेस्ट,	२९,२०८ फुट
अफ्रीका	११,६४३,०००	२६०,०९६	माउन्ट किलोमाजरो,	१९,३२० ,,
उत्तरी अमरीका	९,३६६,०००	२६६,४५२	माउन्ट मैकिनले,	२०,३०० ,,
दक्षिणी अमरीका	६,८७२,०००	१४८,९७८	माउन्ट एकनकँगुआ,	२३,००० ,,
अन्टार्कटिका	५,२५०,०००	—	माउन्ट मरकाम,	१५,१०० ,,
यूरोप (रूससहित)	१०,५५२,१४३	६३७,९८६	माउन्ट एल्बुर्ज,	१८,५२६ ,,
आस्ट्रेलिया और ओसीनिया	३,२९१,०००	१६,३००	माउन्ट कोमियसको,	७,३०५ ,,
योग	५७,६००,०००	३,०३३,९९७		

क्षेत्रफल के विचार से एशिया विश्व का सबसे बडा महाद्वीप है जो १०° उत्तर से ८०° उत्तर अक्षाश और ३०° पूर्वी देशान्तर से १७०° पश्चिमी देशान्तर तक फैला है। उत्तर से दक्षिण तक यह ५,३०० मील लम्बा और पूर्व से पश्चिम तक ६,७०० मील चौडा है। क्षेत्रफल मे यह यूरोप (रूसरहित) से चार गुना बडा है। यह महाद्वीप पृथ्वी के कुल थल भाग का १/३ घेरे हुए है। इसका क्षेत्रफल १०४लाख वर्गमील है। यह दक्षिण में भूमध्यरेखा के अत्यन्त निकट और उत्तर मे उत्तरी ध्रुव से केवल ७०० मील दूर है। इसके उत्तर मे आर्कटिक महासागर, दक्षिण मे हिन्द महासागर पूर्व मे प्रशान्त महासागर तथा पश्चिम मे यूरोप महाद्वीप, भूमध्यसागर तथा लाल सागर है। इस महाद्वीप का अधिकाश भाग पठारी है। विश्व के सबसे ऊँचे पर्वत और पठार तथा सबसे नीचा थल भाग (मृतक सागर जो समुद्र की सतह से १३०० फुट नीचे है) यही है। प्राकृतिक रचना की दृष्टि से इस महाद्वीप को मुख्यत —इन भागो मे उत्तर पश्चिम की निम्न भूमि और पूर्वी तथा दक्षिणी नदियो की घाटियॉ, मध्यवर्ती ऊँचा भूमि खण्ड और उसमे सम्बन्धित पर्वत मालायें तथा पठारी भाग—विभाजित किया जाता है।

यूरोप, आस्ट्रेलिया को छोडकर विश्व का सबसे छोटा महाद्वीप है। वास्तव मे यह एशिया का ही एक प्रायद्वीप है जो यूराल पर्वत द्वारा उससे कुछ अलग है। यह महाद्वीप ३५° उत्तर अक्षाश से लगाकर ७१° उत्तर अक्षाश तक तथा १०°पश्चिमी देशान्तर और ६६° पूर्वी देशान्तरो के बीच फैला है। ३०° पूर्वी देशान्तर इसके बीच मे निकलता है। इसका क्षेत्रफल रूस को छोड कर १९·०२ लाख वर्गमील है। यह सम्पूर्ण महाद्वीप विषुवत् रेखा से काफी उत्तर मे है। इसका अधिकाश भाग शीतोष्ण कटि-

7. **Britannica Book of The Year,** 1963, p. 40

परतदार चट्टानों का साधारण वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :—



यह न तो ग्रैनाइट जैसा कडा और न चूने के पत्थर जैसा नरम और शीघ्र क्षय होने वाला होता है। बालू का पत्थर तहदार भी होता है। बालू के पत्थर की चट्टानें भारत मे मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और विन्ध्याचल पर्वत मे अधिक पाई जाती है। इनका प्रयोग इमारतें बनाने के लिए किया जाता है। बालू की चट्टानें छिद्रदार चट्टानें होती है, अतः इनमे पानी भरा रहता है। इसको कुँए खोदकर निकाला जा सकता है। जिन चट्टानो मे चिकनी मिट्टी अधिक पाई जाती है उनमे छिद्र बहुत कम पाये जाते हैं। इस कारण आग्नेय चट्टानो को बेध कर पानी नीचे नही जाने पाता। किन्तु जब चट्टानें धरातल पर आ जाती है तो उनमे कटाव बडी जल्दी होने लगता है। इसलिए इन चट्टानो का प्रयोग मकान बनाने मे नही किया जता। इस प्रकार की चट्टानों का मुख्य उदाहरण शेल और ककड है। भारत मे ककड अधिकतर उत्तर प्रदेश और पूर्वी पजाब मे पाया जाता है।

(२) विलीन रसायनों से निर्मित प्रस्तरीभूत चट्टानें—प्राय बहते हुए जल के साथ घुलनशील तत्वो के कारण बनती है। इस प्रकार से बनी चट्टानो के मुख्य उदाहरण हरसोठ, चट्टानी नमक, पोटेशियम नमक, स्टेलकटाइट और ओलाइट है। रासायनिक रूप से बनी हुई ये चट्टानें अप्राणिज (Inorganic) होती है। हरसोठ शुष्क प्रदेशो के खारी झीलो मे जमा हुआ होता है। भारत मे यह राजस्थान के जैसलमेर, बीकानेर और जोधपुर डिवीजन मे प्राप्त होता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत में हरसोठ का ७४० लाख टन का जमाव है जिसमे से ५०६ लाख टन राजस्थान मे, १६३ लाख टन मद्रास मे, सौराष्ट्र में ४४ लाख, कच्छ मे २० लाख, हिमाचल प्रदेश मे ३ लाख और उत्तर प्रदेश मे २० हजार टन है। इसका प्रयोग रासायनिक खाद बनाने तथा चूना मिला कर प्लास्टर आफ पेरिस, रंग, पालिस और द्रव भरने वाले पदार्थो के बनाने में किया जाता है।

चट्टानी नमक भारत मे पजाब के मंडी राज्य मे द्रांग और गुमा की खानो से तथा पाकिस्तान मे कोहाट, सिन्ध तथा पश्चिमी पाकिस्तान में तथा जर्मनी व इंगलैड मे प्राप्त होता है। इसका प्रयोग रासायनिक पदार्थों के बनाने मे होता है।

आस्ट्रेलिया विश्व का सबसे छोटा महाद्वीप है जो एशिया के दक्षिण पूर्व की ओर प्रशान्त महासागर मे स्थित है। यह १०° दक्षिण अक्षाश और ३८° दक्षिण अक्षाश तथा १२८° पूर्वी और १५४° पूर्वी देशान्तर के बीच फैला है। इसके बीच मे से १३५° पूर्वी देशान्तर निकलता है तथा मकर रेखा मध्यवर्ती भाग के कुछ उत्तर से निकलती है। सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया उष्ण कटिबन्ध मे ही है जिसका पश्चिमी भाग विस्तृत मरुस्थल है। इसके उत्तर और पश्चिम मे हिंदमहासागर, पूर्व में प्रशान्त महासागर और दक्षिण मे एटार्कटिक महासागर हैं। इसका क्षेत्रफल लगभग ३० लाख वर्ग मील है। रचना की दृष्टि से इसके तीन भाग किये जाते हैं : पूर्व के पर्वत, मध्यवर्ती मैदान और पश्चिम के पठार।

द्वीप (Islands)

इन महाद्वीपों के अतिरिक्त ६ बड़े द्वीप और १२ मध्यम श्रेणी के द्वीप हैं जिनका क्षेत्रफल ४० से १०० हजार वर्ग मील के बीच मे है। छोटे द्वीपों की सख्या १२५ है जिनका क्षेत्रफल १,००० से ४०,००० वर्गमील है। अत्यन्त छोटे द्वीपो की संख्या तो कई हजार हैं, जिनमे प्रत्येक का क्षेत्रफल १,००० वर्ग मील से कम है। आर्कटिक, प्रशान्त और आध्र महासागर के कुछ प्रमुख द्वीप इस प्रकार है—

द्वीप	महासागर	वर्गमील
ग्रीनलैंड	आर्कटिक	८४०,०००
न्यू गिनी	प्रशान्त	३४७,०००
वोर्नियो	प्रशान्त	३०७,०००
मैडेगास्कर	भारतीय	२२८,०००
बैफीन	आर्कटिक	२३१,०००
सुमात्रा	भारतीय	१६४,०००
ग्रेट ब्रिटेन	आध्र	८६,०००
होन्शू	प्रशान्त	८८,०००
विक्टोरिया	आर्कटिक	८०,०००
एल्समियर	,,	४१,०००
सेलीबीज	प्रशान्त	७३,०००
द० द्वीप	,,	५८,०००
जावा	,,	४६,०००
उ० द्वीप	,,	४४,५००
क्यूबा	आध्र	४४,०००

चूने का पत्थर	संगमरमर
पीट, लिगनाइट	ग्रेफाइट

(३) परिवर्तित चट्टानें

आग्नेय और प्रस्तरीभूत चट्टानों के मूल रूप में परिवर्तन हो जाने से जो चट्टानें बनती हैं उन्हें परिवर्तित चट्टानें कहते हैं। पृथ्वी के भीतरी भागों की गर्मी अथवा दबाव या दोनों ही कारणों से उपरोक्त दोनों प्रकार की चट्टानों के रूप और गुण में परिवर्तन हो जाता है। इस परिवर्तन से मूल चट्टानें बहुत कठोर बन जाती हैं और उनके खनिज भी बदल जाते हैं। इन चट्टानों में पूर्ण परिवर्तन हो जाने पर उनका पहचाना जाना भी कठिन हो जाता है। अधिकांश चट्टानों का प्रयोग छतों, मेजों की प्लेट और पट्टी आदि बनाने के लिए होता है। स्लेट भारत में हिमालय पर्वत की कांगड़ा घाटी, अल्मोड़ा और गढ़वाल जिलों में और रेवाड़ी में पाई जाती है। **संगमरमर** राजस्थान में मकराना, राजनगर, अजमेर, किशनगढ़ जयपुर, और अलवर जिले में; मध्यप्रदेश के जबलपुर में श्वेत और बड़ौदा के मोतीपुरा में हरा संगमरमर तथा जैसलमेर में पीला संगमरमर भी पाया जाता है। **कोयला** तो ग्रेफाइट के रूप में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, आस्ट्रिया, नार्वे, इटली, लंका और मेडागास्कर में पाया जाता है। इसका प्रयोग पेन्सिल बनाने में होता है।

विश्व के प्रमुख स्थल रूप (Principal Land Forms)

भूपृष्ठ अनेक प्रकार की चट्टानों से बना है जो न तो अपने रूप में निश्चल है और न स्थायी ही है। अनेक शक्तियों के कारण पृथ्वी की ऊपरी पपड़ी का रूप निरन्तर धीरे-धीरे बदलता रहता है। भूपृष्ठ पर कार्य करने वाली दो शक्तियाँ हैं: **भौमिक या आन्तरिक शक्तियाँ** (Endogenetic forces or Mountain-building forces) और **समतलस्थापक या बाह्य शक्तियाँ** (Exo-genetic forces)

(१) **आन्तरिक शक्तियाँ**—इन शक्तियों का जन्म पृथ्वी के आन्तरिक भाग में बहुत गहराई पर होता है। ये नीचे से अपना कार्य करती हैं। इनका सम्बन्ध आन्तरिक गर्मी तथा समतुलन की समस्याओं से सम्बन्धित है। ये शक्तियाँ भी दो प्रकार की होती हैं (क) **धीमी शक्तियां** जिनमें उत्क्षेप (Emergence) और निमज्जन (Submersence) होता है तथा जो पृथ्वी के धरातल पर घरेरे और दरारें (folds and faults) उत्पन्न करती हैं। इनमें पर्वत बनते हैं। इन शक्तियों के फलस्वरूप कुछ क्षेत्र समुद्र के भीतर से उठ जाते हैं और कुछ पानी में बैठ जाते हैं। (ख) **आकस्मिक शक्तियाँ** बड़ी तेजी से कार्य करती हैं। भूकम्प और ज्वालामुखी का विस्फोट इसी प्रकार की शक्तियाँ हैं। इनके कारण एक साथ बहुत से क्षेत्र ऊपर उठ आते हैं अथवा नीचे धँस जाते हैं। जल प्रवाह का रुख बदल जाता है और भूपृष्ठ के वर्तमान आकार को ढकने के लिये भीतर से फेंका हुआ पदार्थ बहुत अधिक परिमाण में फैल जाता है।

(२) **बाह्य शक्तियाँ**—ये शक्तियाँ मुख्यतः वायुमंडल से सम्बन्धित हैं। एक ओर वर्षा तथा बर्फ और दूसरी ओर बहता हुआ पानी, वायु और हिम सदैव पृथ्वी की पपड़ी की असमानताओं को समतल करने में तल्लीन रहते हैं। ये शक्तियाँ ऊंचाइयों को नष्ट करती हैं और तोड़े हुए पदार्थों को इधर उधर ले जा कर जमा कर देती हैं।

(२) **महासागरीय द्वीप** (Oceanic Island)—वे द्वीप होते है जो महासागरों के गहरे भागो मे महाद्वीपो से दूर स्थित होते हैं। इनको चट्टानो की सरचना का सबंध निकटवर्ती स्थलखडो से नही होता। ये महासागर की तलों से उठकर ही बनते हैं। कुछ द्वीपो की रचना ज्वालामुखी पदार्थों के जमने से तथा कुछ की प्रवालों द्वारा होती है। इसके प्रकार के द्वीप क्रमश. सैंट हैलेना, हवाई द्वीप और एलाइस द्वीप है।

(३) **आंतरिक द्वीप** (Inland Island)—ये वे द्वीप होते हैं जो महाद्वीपो पर स्थित झीलों अथवा नदियो के बीच मे स्थित होते हैं। लहरों और जलप्रवाह से कटते रहने के कारण ये प्राय अस्थायी होते है।

महासागर जल के उन बड़े क्षेत्रो को कहते है जिनका क्षेत्रफल बहुत अधिक होता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से निम्न महासागर है[८] —

महासागर	क्षेत्रफल (वर्गमीलो मे)	औसत गहराई (फुटो मे)	अधिकतम गहराई फुटो मे	
प्रशान्त महासागर	६६,०३०,१२४	१४,०००	मैरीनासड्रैंच फिलीपाइन्स के निकट	३५,९४८
अंध महासागर	३४,८००,०००	१२,६००	मिलवाकी डीप	३०,२४६
हिन्द महासागर	२८,६००,०००	१३,०००	जावा ट्रैंच	२४,४४०
आर्कटिक	५,४४१,०००	४,२००	हैराल्ड द्वीप के उत्तर मे ४०० मील दूर	१७,८५०

इनके अतिरिक्त अनेक सागर पृथ्वी के धरातल पर है जिनमे मुख्य ये हैं —

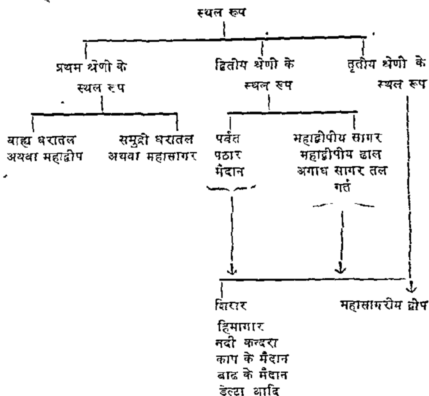
मलाया सागर	३१,३६,००० वर्गमील
कैरेबियन सागर	१७,७०,१७० वर्गमील
भूमध्य सागर	११,४६,००० वर्गमील
बहरिंग सागर	८७८,००० वर्गमील
ओखोट्स्क सागर	५८२,००० वर्गमील
जापान सागर	४०३,००० वर्गमील
उत्तरी सागर	२२१,००० वर्गमील
बाल्टिक सागर	१५७,००० वर्गमील
लाल सागर	१७७,००० वर्गमील

विकास चक्र (Cycle of Evolution)[९]

पृथ्वी के आन्तरिक तथा बाह्य शक्तियो की क्रिया, प्रतिक्रिया तथा अन्तर क्रिया के कारण स्थल उठ जाता है, उसमे कटाव हो जाता है, कट-छँटकर अवशिष्ट रूप धारण कर लेता है तथा आवरणक्षय से प्राप्त पदार्थ से नये स्थल बन जाते हैं। जैसे ही महासागर के नीचे से कोई स्थल प्रकट होता है, बाह्य शक्तियाँ इसको काटना

8. **Hindustan Yearbook,** 1962, p. 47.
९ लेखक के भौतिक भूगोल के आधार (प्रकशनाधीन) पर आधारित।

प्रत्यक्ष रूप से पृथ्वी के स्थल रूपों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :—



प्रथम श्रेणी के स्थल रूप—महाद्वीप और महासागर भूपृष्ठ के सबसे विस्तृत भाग हैं तथा उत्क्षेप और निम्मजन द्वारा यह बहुत पहले ही बन गये थे। महाद्वीपीय धरातल मनुष्य का निवास स्थान तथा उसके कार्य करने का स्थान बनाता है। जल-वायु की दशाओं के द्वारा महासागरों का मनुष्य की कार्य प्रणाली पर प्रभाव पडता है।

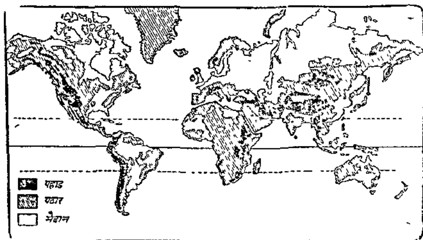
द्वितीय श्रेणी के स्थल रूप—प्रत्येक महाद्वीप और महासागर को दूसरे प्रकार के स्थल रूपों में विभक्त किया जा सकता है जो महाद्वीप और महासागरों के बनने के साथ-साथ ही बनें। महाद्वीपों में पर्वत, पठार और मैदान; महासागरों में महाद्वीपीय सागर और ढाल, अगाध सागर तल, और महासागरीय गर्त वह रूप है जिन्हे प्रधान स्थल रूप कहते हैं।

तृतीय श्रेणी के स्थल रूप—प्रधान स्थल रूपों के कटने-छंटने पर तथा अनावृतिकरण के कारण एक तीसरी श्रेणी के स्थल रूप विकसित हो जाते हैं जिनमें भू-पृष्ठ का छोटे से छोटा ब्यौरा सम्मिलित रहता है।

(क) पहाड़ (Mountains)

पृथ्वी के सम्पूर्ण धरातल के क्षेत्रफल का ५५ प्रतिशत मैदान, १८-प्रतिशत भूमि पठार और २७ प्रतिशत भूमि पहाड है।[10] पृथ्वी के धरातल के सब पहाड़ो मे एक विशेषता यह है कि वह अपने आस-पास के स्थल से अधिक ऊँचे उठे हुए हैं और उनका अन्त एक चोटी मे होता है जिसका क्षेत्रफल प्राय. बहुत कम होता है। बहुधा २,००० फुट अथवा इससे अधिक ऊँचाई वाले भू-भागों को पहाड़ कहते हैं। नीचे दिए हुए चित्र का अध्ययन करने से ज्ञात होगा कि पृथ्वी पर दो पर्वत मालाएँ फैली हुई हैं—एक पूर्वी गोलार्द्ध मे और दूसरी पश्चिमी गोलार्द्ध मे।

पूर्वी गोलार्द्ध की पर्वतमालाएँ एशिया महाद्वीप के मध्य मे पामीर के पठार से निकल कर चार भागो में बँट गई हैं (१) पहली शाखा अफगानिस्तान, फारस, टर्की होती हुई दक्षिणी यूरोप मे फैल गई है। इसमे हिन्दू-कुश, सुलेमान, जैग्रास, टारस, पान्टिक, काकेशस और एलबुर्ज पर्वत मुख्य हैं। दक्षिणी यूरोप की पर्वत माला मे कार्पेथियन, आल्पस और पिरेनीज मुख्य है। इनकी सबसे ऊँची चोटी माउन्ट ब्लेक



चित्र ४ धरातल के प्रमुख आकार

१७,५८२ फीट है। (२) दूसरी शाखा जो कम ऊँची और टूटी हुई है अरब और अबीसीनिया के पठारो पर होती हुई दक्षिण अफ्रीका मे गई है। इसमे मध्य अफ्रीका के पर्वत ही मुख्य है। इनकी सबसे ऊँची चोटी किलीमांजरो १६,३२० फीट है। (३) तीसरी शाखा हिमालय पर्वत, अराकान और पीगूयोमा के नाम से भारत मे होती हुई मलाया प्रायद्वीप तथा द्वीप समूह मे होकर आस्ट्रेलिया तक चली गई है। इस भाग की सबसे ऊँची चोटी माउन्ट एवरेस्ट २९,०२८ फीट है। यही विश्व की सबसे ऊँची चोटी है। (४) चौथी शाखा चीन तथा साइबेरिया मे होती हुई बेरिंग जल संयोजक तक चली गई है।

---

10 *Bengston and Van Royen*, **Op. Cit.**, p. 32.

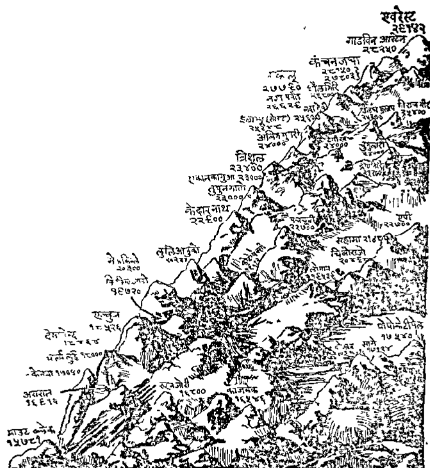
बध मे है और वह भी उसके उत्तरी भाग में। अतः यूरोप का कोई भी भाग गरम नहीं है। उत्तर मे थोड़ा सा भाग उत्तर ध्रुव वृत के भीतर पहुँच जाने के कारण बहुत ठंढा और उजाड है। इसके उत्तर मे आर्कटिक महासागर, पश्चिम मे आंध्र महासागर, पूर्व में एशिया महाद्वीप और दक्षिण मे भूमध्यसागर है। प्राकृतिक रचना की दृष्टि से इसके तीन भाग किये जाते है: उत्तर पश्चिमी पर्वतीय भाग, मध्यवर्ती मैदान और दक्षिण पर्वतीय भाग तथा प्रायद्वीप। यह महाद्वीप सबसे अधिक उन्नत है।

अफ्रीका क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व का दूसरा बडा महाद्वीप है जो स्वेज के स्थल डमरूमध्य द्वारा एशिया से जुड़ा है तथा यूरोप महाद्वीप से भूमध्यसागर द्वारा अलग। यह ३६° उत्तर अक्षांश से ३५° दक्षिण अक्षांश और १८° पश्चिमी देशान्तर से ५२° पूर्वी देशान्तर के बीच फैला है। भूमध्य रेखा इसके बीचो बीच होकर निकलती है किन्तु क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तर का भाग चौड़ा और बड़ा तथा दक्षिण का भाग सकडा और छोटा है। इसका अधिकाश उष्ण कटिबन्ध मे है। २०° पूर्वी देशान्तर इसके बीच में होकर निकलती है। भूमि रचना की दृष्टि से इस महाद्वीप के तीन भाग किये जाते हैं: तटीवर्ती समुद्री मैदान, दक्षिणी पठारी भाग और उत्तर का विस्तृत मरुस्थली भाग। सच तो यह है कि सम्पूर्ण महाद्वीप पठारों का ही महाद्वीप है जिसके केवल तटीय भागो मे ही निचले मैदान मिलते हैं। यह महाद्वीप अधिकाश पुरानी चट्टानो का बना है, जिसकी औसत ऊँचाई समुद्रतल से ३,००० फुट है। इसका क्षेत्रफल ११६ लाख वर्ग मील है। यह महाद्वीप केवल दक्षिणी और कुछ उत्तरी भाग को छोड़कर प्रायः अनुन्नत ही है। क्योंकि इसके बहुत बड़े भाग मे न केवल गर्म मरुस्थल ही वरन भूमध्यरेखिक घने वन प्रदेश मिलते हैं।

उत्तरी अमरीका लगभग १०° उत्तरी अक्षाश और ७०° उत्तरी अक्षांश तथा १६५° पश्चिमी और ६८° पूर्वी देशान्तरो के बीच फैला है। इसके दक्षिण भाग मे कर्क रेखा गई है अतएव इसका अधिकाश भाग शीतोष्ण कटिबन्ध मे है। १००° पश्चिम देशान्तर इसके बीच मे से होकर निकलता है। इसका क्षेत्रफल ९३ ६ लाख वर्ग मील है। इसके उत्तर मे आर्कटिक महासागर, पूर्व मे आंध्र महासागर और यूरोप, पश्चिम मे प्रशान्त महासागर और एशिया तथा दक्षिण मे दक्षिणी अमरीका है। उत्तर पश्चिम मे यह बेरिंग जलडमरूमध्य द्वारा एशिया महाद्वीप से तथा दक्षिण मे पनामा जलडमरूमध्य द्वारा दक्षिणी अमरीका से जुडा है। प्राकृतिक बनावट की दृष्टि से यह चार भागो मे बाटा गया है पश्चिम के पर्वत, मध्यवर्ती मैदान, पूर्व के निचले पठार और पूर्वी समुद्र तटीय मैदान।

दक्षिणी अमरीका उत्तरी अमरीका से पनामा के सँकड़े जलडमरूमध्य द्वारा जुडा है। इसके उत्तर पूर्व मे आंध्र महासागर, पश्चिम मे प्रशांत महासागर तथा दक्षिण मे अन्टार्कटिक महासागर है। यह १२° उत्तरी अक्षांश और ५५½% दक्षिणी अक्षाश और लगभग ८२° पश्चिम और ३५° पश्चिमी देशान्तरो के बीच मे फैला है। भूमध्य-रेखा इसके उत्तरी भाग मे और मकर रेखा इसके मध्यवर्ती भाग के दक्षिण से और ६०° पश्चिमी देशान्तर इसके मध्य मे निकलता है। इस महाद्वीप का आकार त्रिभुजाकार है जिसका चौडा आधार उत्तर को और सकडा शीर्ष दक्षिण मे है। इसका क्षेत्रफल ६६ लाख वर्ग मील है। प्राकृतिक रचना की दृष्टि से इसके भी चार भाग हैं—पश्चिम का संकडा प्रशान्त तट, पर्वतीय भाग, मध्यवर्ती मैदान और पूर्व तथा उत्तर के पठार।

(१) पुटीकृत या मोड़दार पर्वत मालाएँ (Folded Mountains)—खिंचाव और दबाव की शक्तियों के कारण सनति (Synclines) और प्रतिनति (Anticlines) का क्रम बन जाता है जो या तो अधिक धक्कों के कारण या आवरण-क्षय के कारण टूट जाते हैं विश्व के अधिकांश पर्वत इसी प्रकार के हैं। इनमे ही खान खोदने और पत्थर निकालने का काम किया जाता है। इनमें नई और पुरानी सभी पुटीकृत पर्वत



चित्र ४. प्रमुख पर्वतों की चोटियों की तुलनात्मक ऊँचाई

मालाएँ सम्मिलित है। नई पुटीकृत पर्वत मालाओं में आल्पस और हिमालय मुख्य हैं तथा पुरानी पुटीकृत पर्वत मालाओं में पिनाइन्स (इङ्गलैण्ड), एपलेशियन, जूरा (फ्रांस), अल्टाई (मध्य एशिया) पर्वत मालाएँ हैं। इनमें केलेडियन पर्वत मालाएँ भी सम्मिलित की जा सकती हैं कारण कि उनमें भी परतों का पता लगा है।

ओसीनिया द्वीप समूह के अन्तर्गत निम्न द्वीप सम्मिलित किये जाते है.—

पोलीनेसिया (Polynesia)	क्षेत्रफल (वर्गमील)	जनसंख्या
कुक द्वीप	८४	१७,४००
एलीस द्वीप	६	५,२००
मरकस	४६२	१२७,४००
समोआ द्वीप	१,२११	४८,६००
सोसाइटी द्वीप	६५०	४००
टोकूलो द्वीप	६	१,७००
टोगा द्वीप	२५०	६०,३००
टूमोटू द्वीप	३३०	८,१००
माइक्रोनेसिया (Micronesia)		
कैरोलीन द्वीप	४६१	४०,८००
गिल्वर्ट द्वीप	१४४	३१.६००
भैरीआना द्वीप	३७०	३४,५००
मारशल द्वीप	७०	१४,४०३
नौरू	८	४,५००
मेलेनेशिया (Melanesia)		
बिस्मार्क द्वीप समूह	१९,२००	१६२,६००
फीजी द्वीप	७,०५६	३६८,०००
न्यू कैलेडोनिया	८,५५०	७५,८००
न्यू हैब्राइडस	५,७००	५६,४००
सोलोमन द्वीप	१६,०००	१६३,८००

स्थिति के विचार से तीन प्रकार के द्वीप माने गये है.—

(१) महाद्वीपीय द्वीप (Continental Island)—वे द्वीप होते है जो महाद्वीपो के समीप स्थित होते है तथा उनकी चट्टानो की संरचना समीपवर्ती स्थलखड से मिलती जुलती है। ये द्वीप मुख्य स्थल खडो से उथले सागरो द्वारा प्रथक होते हैं। ये बहुधा मध्यस्थ स्थलखंडो के डूब जाने से बनते है। ये द्वीप बहुधा जलमग्न चबूतरों पर स्थित होते हैं। ऐसे द्वीपो के मुख्य उदाहरण ब्रिटिश द्वीप समूह, पश्चिमी द्वीप समूह, न्यूफाउंडलैंड, पूर्वी द्वीप समूह, लका, सिसली, कारसिका, सारडीनिया, तथा मैलेगासी (मैडेगास्कर) है।

चट्टानें अधिक हैं। ये खनिज पदार्थों के भंडार हैं और जल-विद्युत विकास के लिये यहाँ बहुत सुविधायें हैं। ये अनेक देशो के बीच प्राकृतिक सीमा बनाते हैं और यातायात मे बाधक है।

(२) **हरसीनियन पर्वत**—मध्यजीव युग मे पर्वत-निर्माणकारी हरसीनियन घटना घटित हुई है जिसके फलस्वरूप बने पर्वत **हरसीनियन पर्वत** अथवा अल्टाइड (Altaids) कहलाते हैं। भूतत्ववेत्ताओ का मत है कि ये पर्वत अतीत काल मे कभी यूरोप और एशिया के आर-पार फैले थे। इन पर घर्षण होते होते ये समतल-प्राय हो गये। तदुपरान्त भूगर्भिक हलचलो के फलस्वरूप इनमे दरारें पड गई और ये अत्यधिक अस्तव्यस्त से हो गये। कुछ दरारो के मध्य भाग ऊपर उठ गये और कुछ भाग नीचे धसक गये। इस प्रकार इनके क्षेत्र मे अनेक अवरोधी पर्वतो का निर्माण हो गया। उदाहरणार्थ,वॉसजेज, ब्लैक फारेस्ट, यूराल, अलताई इत्यादि। ये सामान्यत कम ऊँचे हैं इसलिये ये मनुष्य द्वारा बहुत-कुछ प्रयोग मे आते रहे है। स्तर-भ्रश के समय इनके क्षेत्र मे यत्र-तत्र लावा के उद्गार हुए जिन पर उपजाऊ क्षेत्र बन गये हैं। अनेक खनिज पदार्थों के भण्डार इनकी आग्नेय चट्टानों मे सुलभ हुए है। इनमे यातायात मे विशेष बाधा नही पडती। इन सुविधाओं के कारण इनके क्षेत्र अन्य पहाडी क्षेत्रो की अपेक्षा अधिक सघन जनसख्या वाले है।

(३) **केलीडोनियन पर्वत**—पुराजीव-कल्प मे पर्वत निर्माणकारी 'केलीडोनियन घटना' घटित हुई, जिसके फलस्वरूप केलीडोनियन पर्वतो का निर्माण हुआ। वर्तमान अधमहासागर के उत्तरी भाग तथा उत्तरी यूरोप के स्थान पर इस घटना के पूर्व एक विस्तृत महाद्वीप था, जिस पर पुराकल्प मे केलीडोनियन पर्वत श्रेणी का आविर्भाव हुआ। यह कदाचित् हिमालय की तरह बहुत ऊँची पर्वतमाला थी। भूतत्व वेत्ताओ का मत है कि इसी समय अधमहासागर का जन्म हुआ। ये अत्यन्त प्राचीन पर्वत युगो तक घर्षित होते रहे है, अतः इनकी चोटियाँ काफी चपटी होगई है। भूगर्भिक हलचलो से अनेक बार इनमे स्तर-भ्रश हो चुके हैं। इनमे यत्र-तत्र ज्वालामुखी उद्गार भी हुए है। इनका अधिकाश क्षेत्र समतल प्राय हो चुका है और यत्र-तत्र कुछ अवशिष्ट पर्वत रह गये हैं, उदाहरणार्थ जूरा पर्वत, स्कॅंडिनेवियन पर्वत, अरावली, सतपुडा, महादेव इत्यादि। इनमे कठोर चट्टानें, मुख्यतः रूपान्तरित चट्टानें मिलती हैं, जो इमारती पत्थरो का भण्डार हैं। इनके प्रदेश मे उपजाऊ मिट्टियाँ मिलती है।

(ख) पठार (Plateaus)

इन पर्वत मालाओ से जुडे हुए भू-भाग पठार होते है। पठार भूमि से उठे हुए वह भाग हैं जो चोटी पर काफी चौडे किन्तु एक तरफ या उससे अधिक ओर अपने घिरे हुए भू-भागो से ऊँचे होते हैं। पठारो की ऊँचाई ६०० फीट से लेकर २,३०० फीट तक मानी गई है। किन्तु हिमालय के उत्तर मे तिब्बत के पठार की ऊँचाई १६,००० फीट है। दक्षिणी अमेरिका मे बोलेविया की ऊँचाई १०,००० से १२,००० फीट; उत्तरी अमेरिका मे ग्रेट बेसिन कोलम्बिया के पठार ६,००० से ८,००० फीट तक ऊँचे हैं और भारत के दक्षिणी पठार की ऊँचाई १,००० से लेकर ४,००० फीट तक है।

दुनिया के मुख्य पठार **एशिया** मे तिब्बत, एशिया माइनर, मगोलिया, ईरान, अरब, तारीम बेसीन, अनातोलिया, सिटिम और अलदान का पठार, जुगरिया का

तथा रूपान्तरित करना शुरू कर देती हैं। यह काटा हुआ पदार्थ बहते हुए जल, वायु तथा जमते हुए हिम द्वारा इधर उधर ले जाया जाता है। इस तलछट के निक्षेप से नये स्थल रूप बन जाते हैं। महासागर की तलहटी में लगातार मिट्टी जमा होते रहने से यह प्रत्यक्ष होती है कि कुछ दिन पश्चात् नया स्थल दिखाई देने लगेगा। अतः पृथ्वी के धरातल के क्रमबद्ध रूप से ऊँचे उठने तथा नीचे धँसने से स्थल रूप कहीं बाहर उठ आते हैं तो कहीं कट-छंटकर चौरस हो जाते हैं। इसी क्रम को **विकास चक्र** कहते हैं।

इस विकास चक्र के कारण ही प्रत्येक स्थल रूप का एक जीवन काल होता है। स्थल रूप के जीवन इतिहास में यह भिन्न-भिन्न अवस्थायें नवीन, प्रौढ तथा पुरातन कहलाती हैं। प्रारम्भिक रूप अथवा नवीन अवस्था में रूप परिवर्तन केवल प्रारम्भ होता है, मध्य अवस्था अथवा प्रौढावस्था में रूप परिवर्तन पूर्णतः विकसित हो जाता है और जब तक यह पूर्णतः बदल जाता है—ऊपर उठा हुआ एक स्थल पिंड निचला रूप रेखाहीन मैदान बन जाता है।

नया उठा हुआ स्थल खण्ड जैसे ही बाहर प्रकट होता हो उस पर मौसमी क्षति तथा अनावृत्तिकरण के साधन अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं, तथा सकरी कन्दरा के समान बन जाती है जिनमें से होकर उत्प्रेक्ष अनुरूप नदियाँ बहती है इसमें बहुत से जल प्रपात तथा झरने होते हैं। धीरे-धीरे घाटियों के किनारे चौड़े होने शुरू हो जाते हैं तथा श्रेणियों से भरपूर हो जाता है। आवरणक्षय का कार्य लगातार चलता रहता है यहाँ तक कि सारा उठा हुआ स्थल पिंड एक समतल मैदान बन जाता है। इस आवरणक्षय के मैदान में श्रेणियों के अवशेष होते है।

जब भूपटल की चट्टानों पर अत्यधिक दबाव पड़ता है तो ये टूट जाती हैं। इस प्रकार से चट्टानों के टूट जाने को स्तर भ्रंश कहते है।

भूपटल की चट्टानों पर वह दबाव इतना अधिक बार पड़ चुका है कि अब ठोस चट्टानों का मिलना प्राय कठिन सा हो गया है। प्राय सभी ठोस चट्टानों में स्तर भ्रंश हो चुके हैं। किन्तु ज्यों ज्यों पृथ्वी के गर्भ की ओर बढ़ा जाता है यह दबाव कम होता जाता है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कुछ मील की गहराई पर तो चट्टानों में बिल्कुल ही तड़क नहीं पड़ पाई है। तड़के पड़ने वाले समस्त क्षेत्र को भ्रंश क्षेत्र कहते हैं। इन चट्टानों के टूटे हुए भागों में होकर वर्षा आदि का जल आसानी से ही पृथ्वी के भूगर्भ में प्रवेश कर जाता है तब वहाँ अभ्यान्तरिक जल बनकर भीतर ही भीतर क्रियात्मक अथवा ध्वसात्मक कार्य किया करता है। कभी कभी इतना अधिक दबाव पड़ जाता है कि चट्टानों के टूटने के फलस्वरूप कुछ नीचे रह जाते हैं। यह दरारें अचानक ही पड़ जाती है और इसका प्रभाव कुछ ही फीटों तक सीमित रहता है।

भूपटल पर कई बार दबाव इस प्रकार धीरे-धीरे अथवा ऐसी स्थिति में पड़ता है जिससे चट्टानों के टूटने के बजाय उनमें मोड़ पड़ जाती है। यह मोड़ कुछ सीमित क्षेत्र में पड़ जाते हैं अथवा कई बार बहुत ही विस्तृत क्षेत्रों में पड़ जाते हैं। कई पर्वतीय क्षेत्रों में परतदार चट्टानों पर बाहरी दबाव पड़ने के कारण लहरों की तरह के मोड़ पड़ जाते हैं। इस प्रकार बने हुए पहाड़ों को **मोड़दार पर्वत** कहते हैं।

प्राचीन गोंडवानालैंड के अंग भी इस प्रकार के पठारों में गिने जाते हैं।

(६) **वायुनिर्मित पठार**—वायु द्वारा बनाये गए पठार प्रायः मध्य एशिया और चीन में मिलते हैं। उत्तरी चीन के लोएस के पठार का निर्माण शीतोष्ण क्षेत्रों से आने वाली पछुआ हवाओं द्वारा लाई गई बारीक मिट्टी से हुआ है। पश्चिमी पाकिस्तान का पोटवार पठार भी इसी प्रकार बना है।

(७) **हिम नदियों द्वारा निर्मित पठार**—प्राचीन काल की हिम नदियों ने घर्षण द्वारा पहाड़ों से पठार बनाये हैं। ग्रीनलैंड तथा एंटार्कटिक का पठार हिम-नदियों द्वारा आवरणक्षय से ही बने हैं।

(८) **लावा निर्मित पठार**—ज्वालामुखी के उद्गार में बहुत सा लावा जो भूगर्भ से बाहर आता है, ज्वालामुखी के चारों ओर तथा दूर तक फैल कर आस-पास के क्षेत्र से एक ऊँचे भाग का निर्माण कर देता है, यही लावा का पठार होता है। भारत का दक्षिण का पठार तथा संयुक्त राज्य का कोलंबिया का पठार इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

(ग) मैदान (Plains)

मैदान पृथ्वी के धरातल के समतल, नीचे और बहुत कम ढाल वाले भू-भाग होते हैं। पृथ्वी के धरातल पर पहाड़ों और पठारों के सम्मिलित क्षेत्रफल से भी अधिक क्षेत्रफल मैदानों का है। संसार के सबसे बड़े मैदान अधिकतर नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बने हैं यद्यपि हिमानियों और समुद्र की लहरों का भी उनमें से कुछ के बनने में बहुत कुछ हाथ रहा है। संसार के लगभग सब मैदान ६०० फीट से नीचे हैं। ये लगभग समतल और अत्यन्त उपजाऊ हैं। मैदानों में पहाड़ों और पठारों की अपेक्षा आवागमन के मार्ग बनाने में बड़ी सुविधा रहती है और जो नदियाँ मैदानों में बहती हैं वे व्यापार के लिए सुविधाजनक जलमार्ग बनाती हैं। इसी कारण मैदान ही पृथ्वी के सबसे घने बसे हुये भाग हैं, जैसे—उत्तरी-पश्चिमी यूरोप, दक्षिणी रूस, चीन, भारत और संयुक्त राज्य के मैदान विश्व के अत्यंत घने बसे हुए देश हैं। किन्तु कुछ मैदान अत्यधिक शीत के कारण जनसंख्या में शून्य हैं, जैसे साइबेरिया और उत्तरी कनाडा के मैदान। जल की कमी भी मैदानों को निर्जन बनाने में बड़ी सहायक होती है जैसे सहारा, अरब और आस्ट्रेलिया तथा थार के विस्तीर्ण मरुस्थल।

पृथ्वी के मुख्य मैदान एशिया में साइबेरिया का मैदान, गंगा-सिन्ध का बड़ा मैदान, दजला और फरात नदियों के मैदान, ह्वांगहो और यांग्टीसीक्यांग नदियों के मैदान; यूरोप में भी सीन, ल्वायर, एल्ब, ओडर, राइन, पो और डेन्यूब नदियों के मैदान; अफ्रीका में नील नदी का मैदान, **उत्तरी अमेरिका** में सैन्टलारेन्स, मिसीसिपी तथा मिसौरी नदियों के मैदान, **दक्षिणी अमेरिका** में लाप्लाटा, अमेजन और ओरि-नीको नदियों के मैदान तथा आस्ट्रेलिया में मरे-डार्लिङ्ग का मैदान मुख्य हैं।

ऐसा अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वी के स्थल भाग का ३०% ही इतना समतल, गरम और नरम है कि उस पर खेती की जा सकती है। **कुमारी सेम्पल** के अनुसार पृथ्वी पर मैदान ही उद्योग-धन्धों, कृषि, संस्कृति और राजनीति की उन्नति के स्थान हैं। इन्हीं स्थानों में संसार के बड़े-बड़े औद्योगिक और व्यापारिक नगर बसे हैं तथा ये मैदान ही प्राचीन काल में विश्व की प्रमुख सभ्यताओं और संस्कृति के

पश्चिमी गोलार्द्ध की पर्वत माला उत्तरी अमेरिका के अलास्का प्रान्त मे प्रारम्भ होकर दक्षिणी अमेरिका के हार्न अन्तरीप तक ६३०० मील की लम्बाई तक चली गई है। रॉकी पर्वत और एण्डीज पर्वत इस शाखा के मुख्य अग है। रॉकी पर्वत अलास्का से न्यू मैक्सिको तक २,३०० मील की लम्बाई मे और एडीज पर्वत पनामा से हॉर्न अन्तरीप तक ४,००० मील की लम्बाई मे पश्चिमी तटों पर फैले हैं। जिनकी ऊँची चोटियाँ क्रमश: माउन्ट मैकिनले २०,३०० फीट, तथा माउन्ट ऐकनकैगुआ २३,००० फीट, सोराय २५,२५० फीट है और माउन्ट एल्टबर्ट १४,५०० फीट।

इन पर्वत मालाओ के अतिरिक्त कुछ फुटकर बिखरे हुए पर्वत भी है जैसे— उत्तरी पश्चिमी यूरोप के पहाड़ अथवा उत्तरी अमरीका के ऐपेलेशियन और ब्राजील के पहाड, यूरोप और रूस के बीच मे यूराल का पर्वत (किन्तु यह अधिक ऊँचा नही है)।

पर्वतों की विशेषताएँ

यद्यपि पर्वतो की प्रकृति मिश्रित होती है, किन्तु इनकी मुख्य विशेषताये निम्न हैं :—

(१) पृथ्वी के अधिकाश पर्वत परतदार चट्टानो के बने हैं—उदाहरणार्थ आल्पस, हिमालय, रॉकीज और ऐण्डीज—जो यह सिद्ध करते हैं कि ये किसी समुद्र की तलहटी मे बने है जिन्हे भूसनितियाँ (Geosynclines) कहते है। ये सब पर्वत टर्शरी युग मे आज से लगभग ७ करोड वर्ष पूर्व बने है।

(२) उत्तरी अमरीका के एपैलेशियन तथा इगलैड के पिनाइन पर्वत ३५ करोड वर्ष पूर्व के बने माने जाते है।

(३) स्थिर रूप मे विश्व के सभी पर्वत वृत्त या चन्द्राकार है तथा ये उत्तर से दक्षिण को अथवा पूर्व से पश्चिम को अपने महाद्वीप के तट के समानान्तर फैले हुए है। दोनो अमरीका मे पर्वत श्रेणियाँ पश्चिमी तट के समानान्तर उत्तर से दक्षिण तक चली गई हैं और यूरेशिया मे ये दक्षिणी-तट के समानान्तर पूर्व से पश्चिम तक फैली हैं। उनकी आकृति टेढी-मेढी है। हिमालय की आकृति तलवार की तरह है जो दक्षिण के पठार की उत्तरी आकृति से मिलती जुलती है। आल्प्स पर्वत फ्रास के पठार और बोहेमिया के पठार तथा कारपेथियन पर्वत रूमानिया और बोहेमिया के पठार के अनुसार ही टेढे हुए है।

(४) यूरोप, अमरीका और एशिया के पर्वतो की परतो के गूढ अध्ययन से यह प्रत्यक्ष होता है कि परत की मोटाई चारो ओर के मैदानो की अपेक्षा मोड़ खाये हुए अथवा पर्वतीय प्रदेशो मे अधिक होती है। मिसीसिपी के बेसिन मे परतदार चट्टानें ४,००० फुट मोटी हैं किन्तु एपैलेशियन क्षेत्र मे यह ४०,००० फुट तक मोटी है। इसी प्रकार आल्प्स क्षेत्र की चट्टानें उत्तर की ओर की चट्टानो से दो या तीन फुट मोटी हैं।

बनावट के अनुसार पर्वतों का विभाजन

बनावट के अनुसार विश्व की पर्वत मालाओ का विभाजन निम्न प्रकार से किया जा सकता है—

अध्याय ६

जलमंडल

(HYDROSPHERE)

जल-थल का वितरण

भूमंडल पर सभी जगह जल ही जल या थल ही थल नहीं है। किन्तु दोनों का वितरण प्राय साथ-साथ है। पृथ्वी के धरातल पर अनुमानत. ७१% भाग पर जल और २९% पर स्थल है। यदि समस्त पृथ्वी के धरातल को समतल बना दिया जाय तो पृथ्वी पर २ मील की तह तक जल भर जायेगा। स्थल का सबसे बड़ा क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध में है और सबसे बड़ा जल का भाग दक्षिणी गोलार्द्ध मे। जल और स्थल के विस्तार मे अधिकता होने के कारण पृथ्वी को दो भागों में विभक्त किया जाता है, जल गोलार्द्ध (Water hemisphere) और स्थल गोलार्द्ध (Land hemisphere)। स्थल गोलार्द्ध मे ५३% जल तथा जल गोलार्द्ध मे ८९% जल है।[1] यह विशेष महत्वपूर्ण बात है कि दक्षिणी गोलार्द्ध मे ८१% जल और १९% स्थल है जबकि उत्तरी गोलार्द्ध मे यह प्रतिशत क्रमश ४० और ६० है। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्धों मे जल का वितरण अक्षांशों के अनुसार कुछ इस प्रकार है[2] :—

अक्षांश	उत्तरी गोलार्द्ध	दक्षिणी गोलार्द्ध
०	——	——
१०	७९ प्रतिशत	७७ प्रतिशत
२०	६३ प्रतिशत	७६ प्रतिशत
३०	५८ प्रतिशत	७८ प्रतिशत
४०	४९ प्रतिशत	७७ प्रतिशत
५०	४४ प्रतिशत	८९ प्रतिशत
६०	३० प्रतिशत	९७ प्रतिशत
७०	७१ प्रतिशत	९९ प्रतिशत
८०	९५ प्रतिशत	८५ प्रतिशत
९०	— प्रतिशत	२७ प्रतिशत

1 *Klimm, L. E; Starkey, O P., and Russel J. A.* **Introductory Economic Geography,** 1956 p. 28.

2. *Nazir and Mathur,* **Foundations of Geography,** Pt. I, p. 68.

(२) एकाकी पर्वत मालायें (Block Mountains)—भूकम्प के प्रभाव से पृथ्वी की पपड़ी पर दरारें पड़कर कुछ भाग उठा हुआ रह जाता है और शेष नीचे धँसकर छिन्न-भिन्न होकर समुद्र मे डूब जाता है। ऐसे पर्वतों को एकाकी पर्वत (Block Table या Horst Mountain) कहते हैं। यूरोप के वॉसजेस और ब्लेक फोरेस्ट ऐसे ही पर्वत हैं। संयुक्त राज्य अमरीका के ग्रेट बेसीन और सियरा नेवेदा इसके अन्य उदाहरण हैं। इनके किनारों का ढाल बहुधा खड़ा होता है और इनकी चोटी मेज की भाँति होती है। दो एकाकी पर्वतो के बीच जो भूमि नीचे से धँस जाती है उसे दरार घाटी (Rift Valley) कहते है। कैलिफोर्निया की घाटी, मृतक-सागर, लालसागर तथा राईन की घाटी सब इसी प्रकार की है।

(३) क्षत-विक्षत अथवा अवशिष्ट पर्वत मालायें (Mountains of Denudation)—ये पर्वत मालाएँ किसी समय ऊँची थी लेकिन कालान्तर मे क्षयात्मक क्रियाओं द्वारा नीची हो गई है। ये पर्वत मालाएँ नीचे पहाड़ों, पेनीप्लेन या पठारों के रूप मे देखी जाती है। स्काटलैंड की पहाड़ियाँ और स्पेन के सियरा गाडियाना और सियरा मोरेना, उत्तरी अमरीका के ओजार्क, कैट्सकिल और अपलेशियन पर्वत, दक्षिण पूर्वी साइबेरिया, भारत के पूर्वी घाट, दक्षिणी चीन के उच्च प्रदेश, सतपुड़ा और महादेव सब इसी प्रकार की श्रेणियाँ हैं।

(४) संग्रहित (Mountains of Accumulation)—ये पर्वत ज्वालामुखी पर्वतों से निकले पदार्थों के बनते है। ज्वालामुखी के मुख से जो लावा मिट्टी आदि पदार्थ निकलता है वह मुख के चारों ओर शंकु (Conical) के आकार मे लगातार ऊँचा उठा करता है। शंकु की आकृति वाले इसी टीले तथा तरल पदार्थ को निकालने वाले छिद्र को ज्वालामुखी कहते है। जापान का फ्यूजीयामा इसका सबसे उत्तम उदाहरण है।

पर्वत निर्माणकारी क्रियाओ के अनुसार पर्वतों का विभाजन निम्न प्रकार से किया जाता है[११] :—

अल्पाइन पर्वत मालायें (Mts. of Alpine Episode)—नवीनतम पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप अल्पाइन पर्वतो का निर्माण हुआ है। इस युग मे ही ससार के समस्त नवीन मोडदार पर्वत बने। इन्ही मे आल्पस पर्वत शामिल है। इसी के नाम पर इस युग के पर्वत नवीन मोडदार पर्वतों को अल्पाइन युग पर्वत या अल्पाइन पर्वत कहा जाता है। ये भूमण्डल पर दो प्रधान क्रमो मे स्थित है— 'प्रशान्त महासागर तटीय क्रम' (Circum Pacific system) तथा 'मध्यवर्ती क्रम' (Mid-world system)। पहले क्रम मे रॉकी, एडीज तथा एशियाई द्वीपों की पर्वत-श्रृंखलायें शामिल है और दूसरे क्रम मे आल्पस, पोंटिक, एलबुर्ज, जैग्रोस, हिन्दुकुश, हिमालय इत्यादि सम्मिलित है। अल्पाइन पर्वतो मे ही ससार की सबसे ऊँची और विस्तृत पर्वत-श्रेणियाँ मिलती है। लाखो वर्षो से निरन्तर ऊपर उठते रहने के फलस्वरूप इनका आविर्भाव हुआ है। विद्वानों का मत है कि ये अब भी उठ रहे है। इनका क्षेत्र संसार का सबसे असंयत क्षेत्र है। विश्व के प्राय समस्त ज्वालामुखी इन्ही के क्षेत्र मे स्थित है और ये ही भूकम्प के भी प्रधान क्षेत्र हैं। इन पर तलछट चट्टानों का विस्तार है, जिनमे मुख्यत. चूना व बालुका-प्रस्तर की

११. सी बी. मामोरिया, विश्व भूगोल, १९५० पृ० १४८-१४९

मुरे	३,७२०
वोल्गा	३,७००
सिंध	२,९००
ब्रह्मपुत्र	२,९००
गंगा	२,५१०
गोदावरी	१,४५०
नर्मदा	१,२९०
कृष्णा	१,२९०
महानदी	८९०
कावेरी	७६०

झीलें (Lakes)

ये वे जल भाग होते हैं जो चारों ओर स्थल भाग से घिरे रहते हैं। झीलों का आकार बनावट के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है जैसे भारत की नैनीताल झील जिसका क्षेत्रफल केवल ½ वर्गमील है तथा कैस्पियन सागर जिसका क्षेत्रफल १६६,३०० वर्गमील है। ये झीलें न केवल मैदानी क्षेत्रों में पाई जाती है (उदाहरणार्थ, उत्तरी-पश्चिमी रूस में लोडोगा, ओनेगा, अरल सागर, बैकाल झील) वरन् पहाड़ी क्षेत्रों में भी (मध्य एशिया में कोकोनार, अफ्रीका में ताना तथा द० अमरीका में टीटीकाका)।

विश्व की कुछ मुख्य झीलें इस प्रकार है :—

कैस्पियन सागर	१६६,३८० वर्गमील
सुपीरियर	३१,८२० वर्गमील
विक्टोरिया	२६,२२८ वर्गमील
अरल सागर	२५,००० वर्गमी
ह्यूरन	२३,०१० वर्गम
मिशीगन	२२,४०० वर्ग
चाड	२०,००० वर्ग
न्यासा	१४,००० वर
बैकाल	१२,३०० व
टैंगेनिका	१२,७०० व
ग्रेट बियर	१२,००० ट
ग्रेट स्लेव	११,१७० (
ईरी	९,९४०
विनीपेग	९,३९८ति
ओंटेरियो	७,५४०ति

भीलें खारी पानी या मीठे पानी दोनों की ही होती हैं। इIntroductory अथवा पृथ्वी की आतरिक क्रियाओं द्वारा बनती है। ये समुद्री किन y, Pt. I, p. 68. पर्वतीय भागों में स्थित होती हैं।

पठार, उत्तरी चीन का लोयम पठार, दक्षिणी भारत का पठार; **उत्तरी अमेरिका** में लौरेंशिया, मेक्सिको, चियापास, होंडुरास, मध्य अमरीको पठार और सैन्ट्रल मैरोटा तथा लेबरेडोर का पठार; **दक्षिणी अमेरिका** में बोलेविया, पीरू, इक्वेडोर, कोलबिया और ब्राजील का पठार; **अफ्रीका** में एबीसीनिया और सहारा के दक्षिणी भाग का बडा मध्यवर्ती पठार; **यूरोप** में यूनान, पुर्तगाल का पठार और **आस्ट्रेलिया** में पश्चिमी रेगिस्तान के पठार हैं।

रचना और बनावट के अनुसार पठार निम्न प्रकार के होते हैं—

(१) **पर्वतों से घिरे पठार** (Intermont Plateaus)—यह पठार सब ओर से ऊँची पर्वत श्रेणियों द्वारा घिरे होते हैं। इस प्रकार के पठार बड़े ऊँचे और विस्तृत होते हैं। ये पठार प्राय १०,००० फीट की ऊँचाई पर पाये जाते हैं। कभी कभी ये पठार इतने पूर्णत. घिरे होते है कि नदियां भी समुद्र तक पहुँचने का मार्ग नहीं पाती। इन पठारों का ढाल भीतर की ओर होता है और इनकी नदिया अन्दर को बहती हैं। उदाहरणार्थ तिब्बत, बोलिविया, तारिम और मगोलिया के पठार; सयुक्त राज्य का **'साल्ट लेक प्लेटो'** और बलूचिस्तान का पठार इत्यादि।

(२) **पर्वत प्रान्तीय पठार** (Piedmont Plateaus)—यह पठार किसी ऊँचे पर्वत के सहारे-सहारे फैले होते ह। इन पठारों के एक ओर पर्वत होते है और दूसरी ओर मैदान या समुद्र। इनका विस्तार कम होता है। उदाहरणार्थ उत्तरी इटली के पश्चिम का पठार तथा अपलेशियन पर्वत के पूर्व का पठार, दक्षिणी अमरीका का पैटेगोनिया का पठार। ऐसे पठारों की चट्टानें लेटी हुई पडी रहती हैं और नदियाँ इनमें गहरे खड्ड बनाती है। कोलोराडो नदी का खड्ड कई मील तक गहरा है।

(३) **कटावदार पठार** (Dissected Plateaus)—जिन पठारो पर अधिक वर्षा होती है वहाँ तेज बहने वाली नदियाँ बहती है। उनके बहाव से गहरी और तग घाटियाँ बन जाती है जिससे पठार कई भागों में बँट जाता है। छोटे-छोटे पठारों को मेसा (Mesa) कहते है। ऐसे कटे-फटे पठारो को कटावदार पठार कहते हैं। उदाहरणार्थ स्कॉटलैंड तथा वेल्स के पठार।

(४) **शुष्क प्रदेशों के पठार**—ये पठार प्राय समतल होते है। इनकी स्थिति, रचना तथा आकार कटावदार पर्वतों के सदृश होते है। इन प्रदेशों मे बहुत कम वर्षा होने से वर्षा के जल अथवा नदियो के प्रवाह द्वारा धरातल में क्षय नहीं हो पाता, इसलिए सतह समतल रहती है। वायु द्वारा उड़ाकर लाई गई मिट्टी से सब गड्ढे भर जाते हैं जैसे अरब का पठार।

(५) **प्राचीन पठार**—इस कोटि मे अत्यन्त प्राचीन पठार शामिल हैं। ससार मे तीन महान चबूतरे जैसे प्रदेश मिलते है—

(अ) **लारेंशियन ढाल** (Laurantian Shield)—अथवा कनाडा का पठार

(ब) **बाल्टिक ढाल** (Baltic Shield)—अथवा स्केन्डिनेविया का पठार।

(स) **अंगारा ढाल** (Angara Shield)—अथवा साइबेरिया का पठार।

उच्च अक्षाशो मे होने के कारण इनका धरातल हिम-नदियो द्वारा कट-फट गया है। इनकी सीमाओं के समीप खाडिया तथा झीलें स्थित है। इस प्रकार के पठारों को **हिम पठार** (Ice Plateaus) भी कहते हैं।

(५) नदी के मार्ग मे कई गड्ढे होते है। जब नदी सूख जाती है तो ये गड्ढे पानी से भरे रहते है। इस प्रकार बनी झीलें छोटी होती हैं।

(६) कुछ बहते हुए नालो की घाटी मे पेडो के उग आने से या बडे बडे पेड के तनो से दीवार सी बन जाने के कारण पानी रुककर झीलो का रूप ले लेता है। इस प्रकार की झीले सयुक्त राज्य मे रेड नदी मे बहुत पाई जाती है।

(७) नदियाँ जब समतल भूमि मे बहती है तब उनमे मुडाव आ जाते हैं। ये मुडाव धीरे-धीरे बढ जाते है तब बाढ के समय नदी मुड़ाव का मार्ग छोड़ कर पुन. सीधे मार्ग पर बहने लगती है। इन मुडावो में बाढ के समय जल भर जाता है और झीले बन जाती है। इस प्रकार की झीलों का आकार नाल (घोडे के खुर) के समान होता है। इन्हे खुर के आकार की झीलें कहते हैं। मिस्सीसीपी नदी की घाटी मे इस प्रकार की झीलें अधिक पाई जाती है।

(८) जब ज्वालामुखी से निकलने वाला लावा नदियो की घाटी में जमा हो जाता है तो पानी का बहाव रुक जाता है और झील बन जाती है। एबीसीनिया पठार की ताना झील इसी प्रकार बनी है।

(९) नदियो की घाटियो मे समीपस्थ पहाडी क्षेत्रो मे फिसल-फिसलकर आने वाले शिलाखडो के कारण नदी का मार्ग रुक जाता है और वहाँ झीलें बन जाती हैं। पामीर की घाटी मे एक विशाल शिलाखड डेढ मील लम्बा, १ मील चौडा तथा १००० फीट ऊँचा फिसल आने से नदी का पानी रुककर झील बन गई है।

(१०) हिमानियाँ बढती हुई कभी-कभी नदियो के मार्ग मे जमा हो जाती हैं और बाध की तरह पानी रोक लेती हैं। इस प्रकार भी झीलें बन जाती है।

(११) जब हिमानियाँ पहाडी भागो को छोडकर भूमि तल पर बहती हैं, तो वे अपने मार्ग मे चट्टानो की काट छाँट करती जाती हैं। भूतल पर कही इस प्रकार की छीलन के इकट्ठे होने से बडे-बडे गड्ढे बन जाते है जो बाद मे बर्फ के पिघले हुए पानी से भर जाने पर झील का रूप धारण कर लेते है। उत्तरी अमेरिका और उत्तरी यूरोप की अधिकाश झीलें इसी प्रकार बनी हैं। उदाहरणार्थ सुपीरियर, मिशीगन, ह्यूरन, ईरी, आर्टेरियो, लोडेगा, ओनेगा, वैनर और पेप्स।

(ग) आकस्मिक क्रियाओं द्वारा बनी झीलें—

(१२) कभी-कभी पृथ्वी के खिसकने से अथवा अवलाशो के यकायक गिर जाने से किसी नदी की धारा का पानी रुक कर झील का रूप धारण कर लेता है।

झीलों का अस्थायित्व

उपरोक्त भाति से बनी झीलो के बारे मे कहा जा सकता है कि बडी से बडी झील भी एक न एक दिन नष्ट हो सकती है। वास्तव मे झीलो का जीवन अल्पकालीन होता है। जिन प्रदेशो मे झीलें वर्तमान हैं वे या तो उस पर बहने वाले नालो की यौवनावस्था को प्रमाणित करती है या वर्तमान नदी नालो की आकस्मिक प्रभावों की द्योतक है। कुछ प्राचीन झीलें तो मिट्टी आदि से पट कर मैदान के रूप मे परिवर्तित हो गई हैं। नदी के स्थायित्व को कम करने मे नीचे लिखी बातें प्रभाव डालती है।

(१) नदियाँ और नाले अपने बढते हुए डेल्टे के रूप में हमेशा बहुत बडे

आदि स्रोत रहे हैं। मैदानों का निर्माण या तो रचनात्मक क्रियाओं द्वारा होता है जैसे ज्वालामुखियों, हिमागार, नदियों या समुद्रों के उथले होकर नए धरातल बनने से बने हुये मैदान या क्षयात्मक क्रियाओं द्वारा जैसे पठारों को पेनीप्लेन मैदानों में परिवर्तन करना।

मैदानों का निम्नलिखित विभाजन किया जा सकता है

(१) तटीय मैदान (Coastal Plains)—ये उथले समुद्रों के तटीय भागों के जल से ऊपर निकलने या नदियों के द्वारा पहुँचाई हुई मिट्टी के द्वारा समुद्र तल में नये मैदानों का निर्माण होने से बनते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिण-पूर्व के मैदानों या दक्षिणी भारत के दक्षिण-पश्चिम के केरल के तटीय मैदान इस प्रकार के मैदानों के उदाहरण हैं।

(२) झीलों के मैदान (Lacastrine Plains)—ऐसे मैदान झीलों के तल के सूखने से बनते हैं। झीलों के सूखने का कार्य दो प्रकार से होता है—या तो उनका तल ऊपर उठने से या मिट्टी भर जाने से। उत्तरी अमेरिका के प्रेरी के मैदान भी एक पुरानी झील एगेसिज (Agassiz) के भर जाने से बने हुए बताए जाते हैं। हंगरी के मैदान भी इसी प्रकार बने हैं।

(३) नदियों के मैदान (River Plains)—ऐसे मैदानों को कछारी मैदान भी कहते हैं। यह कछारी मिट्टी नदियों द्वारा लाई जाती है। संसार के बड़े-बड़े मैदान इसी प्रकार के हैं। गङ्गा-सिन्ध का मैदान और ह्वांगहो के मैदान इसी प्रकार के उदाहरण हैं। इनमें से कुछ नदियाँ बहुत सी मिट्टी प्रति वर्ष समुद्र में डालकर डेल्टे के रूप में नई भूमि का निर्माण किया करती हैं।

(४) हिमावरण मैदान (Glacial Plains)—हिमावरण या हिमानियों के पिघलकर उनमें मिले कंकड पत्थर (Morraine) आदि के जम जाने से इस प्रकार के मैदानों की रचना होती है। यूरोप के उत्तर का बड़ा मैदान या कनाडा का मध्य इसी प्रकार के मैदानों के उदाहरण हैं। इन मैदानों में असंख्य छोटी-छोटी झीलें पाई जाती हैं।

(५) ज्वालामुखी मैदान (Lava Plains)—ज्वालामुखियों के उद्गार के समय निकली हुई राख (Ash) या लावा आसपास के धरातल को समतल बनाकर ऐसे मैदान बनाते है, जैसे विसूवियस ज्वालामुखी ने नेपल्स के पास ऐसे मैदान का निर्माण किया है। लावा के मैदान दक्षिणी पठार और संयुक्त राज्य के वाशिंगटन क्षेत्र में भी हैं। ये बड़े विस्तृत और उपजाऊ होते है।

(६) रचनात्मक मैदान (Structural Plains)—ऐसे मैदान चट्टानों के समतल बिछौने की तरह बिछने से बनते है। संयुक्त राज्य अमेरिका का मध्य का मैदान तथा रूस का बड़ा मैदान इस प्रकार के मैदानों के उदाहरण हैं।

(७) पेनी प्लेन (Peni Plains)—ये मैदान क्षयात्मक क्रियाओं द्वारा बने हुये होते हैं। ऐसे मैदान पहाड़ों के छिन्न-भिन्न होकर नीचे होने से बनते हैं। समुद्री किनारों पर लहरें भी ऐसे मैदानों का निर्माण करती हैं। कभी-कभी किसी पेनी प्लेन में बहुत कुछ टीले रह जाते हैं इन्हें Monadonacks कहते हैं। पेनीप्लेन के उदाहरण मध्य रूस, पूर्वी इंग्लैण्ड, अरावली पर्वत का मैदान तथा पेरिस का बेसीन है।

सर जान मुरे (Sir John Murray) के अनुमार पृथ्वी के धरातल पर, विभिन्न गहराई व ऊँचाई के जल स्थल का विस्तार इस प्रकार है[4]—

ऊँचाई फीटो मे	क्षेत्रफल (दस लाख वर्गमीलो मे)	समस्त गोले का प्रतिशत
स्थल खण्ड—		
१२००० फीट से ऊपर	२	१
६००० से १२००० फीट तक	४	२
३००० मे ६००० फीट तक	१०	५
६०० से ३००० फीट तक	२६	१३
० से ६०० फीट तक	१५	८
	५७	२६
जल खण्ड—		
० से ६०० फीट गहरा	१०	५
६०० मे ३००० फीट गहरा	७	३
३००० से ६००० फीट गहरा	५	२
६००० से १२००० फीट गहरा	२७	१५
१२००० मे १८००० फीट गहरा	८१	४१
१८००० से अधिक गहरा	१०	५
	१४०	७१

मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि महासागरो का तीन-चौथाई १०,००० फीट से गहरा है, कई खड्ड तो ३०,००० फीट तक गहरे है।

महासागरों का धरातल (Surface of Oceans)

जैसा कि ऊपर कहा गया है पृथ्वी पर स्थल की अपेक्षा जल का भाग अधिक है। परन्तु जल तरल है और स्थल की भाँति ठोस नही है इसलिए इसमे उस प्रकार का परिवर्तन नही होता जिस प्रकार का स्थल भाग मे होता है। तरल होने के कारण बिना टूटे-फूटे ही यह अपने को नई-नई परिस्थितियो मे वदल लेता है। यही कारण है कि जल का धरातल साधारणतया समतल रहता है परन्तु जल के धरातल के नीचे उसी प्रकार की असमानता पाई जाती है जिस प्रकार की स्थल पर। प्राय सागर और महासागर के तल मे उसी प्रकार के पहाड और घाटियाँ पाई जाती है जिस प्रकार की स्थल पर।

4. *Sir John Murray*, **The Ocean.**

जलचक्र (Hydrologic Cycle)

पृथ्वी के धरातल पर जितना जल वर्षा के रूप मे गिरता है उसका कुछ भाग वाष्प बनकर पुन वायुमडल मे मिल जाता है और कुछ नदी नालो द्वारा बहा कर झीलों, समुद्रों अथवा महासागरो मे ले जाया जाता है और शेष भूमि मे सोख जाता है। इस प्रकार भूमि के धरातल पर जल का वितरण नदी, तालाब, झील, सागर अथवा महासागर के रूप मे मिलता है। जल का स्वरूप और उसका आकार सभी स्थानों पर प्राय एकसा नहीं होता। कहीं यह वाष्प के रूप और कहीं जल के रूप में ही रहता है। धरातल पर गर्मी पडने से सागरो तथा महासागरो का जल वाष्पीभवन क्रिया द्वारा वाष्प बन कर उड़ता रहता है और गैस या बादलो के रूप में आकर उचित तापक्रम पर फिर से वर्षा के रूप मे धरातल पर गिर जाता है और पुनः किसी न किसी रूप मे सागर या महासागर के तल मे पहुँच जाता है। जल की प्रत्येक बूंद इस प्रकार एक पूरा चक्कर लगा लेती है। इस क्रिया को जल-चक्र कहा जाता है। यह चक्र जल की एकता का परिचायक है।

नदियाँ (Rivers)

नदी, उस जलधारा को कहते है जो किसी ऊँचे पर्वत, हिमयुक्त चोटियो, झील आदि से निकल कर एक विस्तृत भाग मे बहती हुई किसी अन्य नदी, झील सागर मे विलीन हो जाती है। प्रत्येक पहाडी भाग से निकलने वाली नदियो के तीन कार्य या खड होते हैं। (१) पहाडी क्षेत्र में नदी का कार्य विध्वसक होता है। यह अपने दोनो ओर के भागो को काटती, नष्ट करती और अपने मार्ग को विस्तृत और गहरा करती हुई मैदानी भाग मे उतरती है। इसमे क्षतविक्षित चट्टानो के टुकडे मिले रहते हैं। (२) मैदानी भाग मे नदी का कार्य मुख्यत रचनात्मक होता है। यहाँ वह अपने साथ लाई हुई मिट्टी, बालू, बजरी आदि को मैदान के ढाल के अनुसार जमा करती है। इसकी अनेक धारायें घुमावदार रूप मे बहती है और बाढ के समय भीषण दृश्य उपस्थित कर देती है। (३) मैदान के निचले भाग मे भूमि का ढाल अत्यन्त धीमा होने से उसका वेग कम पड जाता है और उसके जल मे मिली मिट्टी धीरे-धीरे जमने लगती है और एक त्रिभुजाकार क्षेत्र (डेल्टा) बनाकर यह समुद्र से मिल जाती है। वह सारा प्रदेश जिसका जल बहकर नदी या उसकी सहायक नदियो मे आता है वह उसका प्रवाह-क्षेत्र (Catchment area) कहलाता है।

विश्व की सबमे बडी नदी नील है। यह ४,१५७ मील और सबसे छोटी भी (फ्रास मे) ४८२ मील लम्बी है। अन्य मुख्य नदियां इस प्रकार हैं[3] :—
पर थि

(५)	लम्बाई (किलोमीटर मे)
घाटियो द्वारा	६,६६०
आकार मे अवरु	६,२८०
अधिक मिलती है मिसीसिपी	६,२६०
(४)	५,१५०
बहाकर लाती है	४,६६०

इन शिलाखडो
नबजाती है। ey of India School Atlas, 1961, p. 1.

के सब महासागरो मे कुल मिलाकर ५२ खड्ड है। सबसे गहरा खड्ड प्रशात महासागर मे जापान द्वीप के पास मिनंन्डो डीप ३५,४५० फीट है। अंध महासागर का सबसे गहरा गर्त पोर्टोरीको के निकट नेअर्स डीप २७,९७२ फीट है।

समुद्र के धरातल के ये चारो भाग लगभग हरेक महासागर मे पाये जाते हैं। कही ये बडे और कही ये छोटे होते हैं। इनके अतिरिक्त सागरों की तली मे अन्य कई प्रकार की विषमतायें भी मिलती है जैसे लम्बे और सँकरे उभार, ज्वालामुखी शकु, जलमग्न समुद्री दरियाँ आदि।

समुद्री तली के संचय (Ocean Deposits)

महासागरो एव सागरो की तली के विभिन्न भागो पर विभिन्न पदार्थ सचित होकर तली को ढके रहते है। इनके प्राप्ति स्रोतो के आधार पर इन्हे दो वर्गों मे बाटा गया है -

(१) **थल से प्राप्त** (Terrigenous or Land Derived) पदार्थ।

(२) **सागर से प्राप्त** (Pelagic as Ocean Derived) पदार्थ।

(१) **महाद्वीपीय जमाव**—वे पदार्थ जो निकटवर्ती थल भागो से नदियो, लहरो तथा वायु द्वारा लाये जाकर समुद्र की तली पर सचित रहते है महाद्वीपीय तलछट या थल से प्राप्त पदार्थ कहलाते है। ज्यो ज्यो तट से दूरी बढती जाती है, समुद्री तली पर भारी से हल्के पदार्थो का विस्तार मिलता है। उदाहरणार्थ तट के बिल्कुल समीप शिलाखड, ककड, रोडे इत्यादि सचित रहते हैं। इससे आगे रोडी और बजरी मिलती है। इससे भी आगे मोटी काप तथा चीका और इससे आगे काप के अत्यन्त बारीक कण सचित रहते है। ये थल पदार्थ समुद्री तली के महाद्वीपीय जलमग्न चबूतरे तक ही सामान्यत पहुँच पाते है। इनके बहुत कुछ सूक्ष्म कण महाद्वीपीय ढाल के क्षेत्र मे भी मिल जाते है।

(२) **अगाध सागरीय जमाव**—ये वे पदार्थ है जो समुद्री वनस्पति तथा समुद्री जीवो के अवशेष है और महासागरो व सागरो की तली पर सचित पाये जाते हैं। इन्हे ऊज (Ooze) भी कहते है। जिस क्षेत्र की ऊज मे जिस जीव या वनस्पति के अवशेषो की प्रचुरता हो उसी के आधार पर उसका नामकरण किया जाता है। इसके प्रकार के मुख्य ऊज-जमाव ये है—

(१) **ग्लोबीजेरीना** (Globigerina)—आन्ध्र महासागर, हिन्द महासागर तथा दक्षिणी प्रशान्त महासागर की तलियों के अधिकाश क्षेत्र पर ग्लोबीजेरीना जलजीवों का आवरण रहता है। इसमे चूने की अधिकता होती है।

(२) **टेरोपॉड** (Pteropod)—उष्ण कटिबन्धीय समुद्रो मे टेरोपॉड जीव प्रचुरता से मिलते हैं। इनका क्षेत्र १००० फीट तक की गहराई वाले समुद्र ही हैं। इनमे भी चूने का अश अधिक रहता है।

(३) **डायटम** (Diatoms)—अटार्कटिका महाद्वीप के समीपवर्ती भागो मे डायटम नामक ऊज मिलता है जो सूक्ष्म-वनस्पति के अवशेषो से बनते है।

(४) **रेडियोलेरिया** (Radioleria)—प्रशान्त महासागर तथा हिन्द महासागर के उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो मे मिलते हैं। इनमे सिलिका की प्रचुरता होती

झीलों की उत्पत्ति

बनने के अनुसार उनका विभाजन इस प्रकार है:—

(क) भूमि की अभ्यान्तरिक गति के फलस्वरूप बनी झीलें। इसके अन्तर्गत निम्न प्रकार की झीलें आती हैं—

(१) समुद्र के तह के ऊपर उठ आने से तटीय प्रदेश में एक नया धरातल समुद्र से निकल आता है। इसमें समुद्र का पानी कुछ गड्ढों में एकत्रित होकर झील का रूप ले लेता है। ऐसी झीलों के बनने के बाद यदि नदियाँ बराबर पानी लाती रहती है तो झील का पानी सूख नहीं पाता किन्तु यदि नदियाँ थोड़ा पानी लाती है और भाप बन कर अधिक जल उड़ता रहता है तो धीरे-धीरे उनका आकार छोटा होता जाता है। प्रथम प्रकार की झीलों में अरल सागर, काला सागर और कैस्पियन सागर तथा द्वितीय प्रकार की झीलों में अफ्रीका की चाड झील मुख्य है।

(२) पृथ्वी के धरातल पर कहीं-कहीं नदियों के तल में भूकम्प के कारण परिवर्तन हो जाते है। कहीं पर वे भाग ऊपर उठ जाते है इससे जल प्रवाह में रुकावट पड जाती है। जल जमा होते रहने के कारण झील बन जाती है। संयुक्त राज्य में टिनैसी नदी की घाटी में रील फूट झील इसी प्रकार बनी है।

(३) सख्त भू-भाग पर दबाव अथवा तनाव के कारण दरारें पड जाती हैं। इसके फलस्वरूप दरार झीलें बन जाती है। एशिया के मृतक सागर से अफ्रीका के रुडौल्फ झीलों तक का प्रदेश इसी प्रकार से बनी दरार घाटियों वाली झीलों से भरा पड़ा है।

(४) धरातल पर ज्वालामुखी पर्वतों में निकले लावा आदि के नदियों के मार्ग में आकर रुक जाने से झीलें बन जाती है अथवा ज्वालामुखी पर्वतों के शान्त होने पर उनके मुख में वर्षा का पानी जमा होते रहने से भी झीलें बन जाती है। वह करती झीलों को क्रेटर झील कहते है।

दृश्य ३ **(ख) नदी की घाटी के विकास के परिणाम स्वरूप बनी झीलें—**

धीमा हो (१) नदी के बढते हुए डेल्टा से नदी की धारा का पानी रुक जाता है और जमने लग झील के रूप में इकट्ठा हो जाता है। इस प्रकार की झीलें भारत में जाती है। और कृष्णा नदी के डेल्टाओं के बीच में पाई जाती है। ये कम गहरी आता है वह

विश्व) नदियों के मुहाने पर बने रेत के टीलों द्वारा नदी का पानी रुककर झी (फास ा धारण कर लेता है। भारत में केरल के समुद्र तट पर तथा पूर्वी तट पर चि___रोर पुलीकट झीलें इसी प्रकार बनी है।

(५), अधिक बाढ़ग्रस्त मैदान के विकास के फलस्वरूप सहायक नदियों की घाटियों द्वारा ऊँची दीवारें बन जाती है जिसमें सहायक नदी का जल झील के आकार में अवरुद्ध हो जाता है। अमेजन की सहायक नदियों में इस प्रकार की झीलें अधिक मिलती है।

(४) कई स्थानों पर सहायक नदी अपने साथ इतनी मात्रा में ऐसे शिलाखं बहाकर लाती है जिसे मुख्य धारा अपने साथ बहाकर नहीं ले जा सकती। धीरे-धीरे इन शिलाखंडों की मात्रा बढती जाती है और नदी का पानी रुककर वहां झीलें बनजाती हैं।

रेखाओं पर स्थित है क्योंकि यहाँ साल भर आकाश साफ रहने के कारण सूर्य की गरमी से भाप बनकर बराबर उड़ता रहता है और नमक समुद्र में जमा रहता है। यहाँ जल का खारापन ३६‰ है। इन स्थानों से उत्तर या दक्षिण में स्थित महासागरों में यहाँ की अपेक्षा कम खारापन पाया जाता है। किन्तु भूमध्य रेखा और ध्रुवों के निकट के सागर कम खारे हैं। यहाँ के पानी में ३४‰ खारापन होता है। विषुवत् रेखा पर प्रायः सालभर ही आकाश में बादल छाये रहते हैं इसलिये पानी भाप बन कर कम उड़ पाता है। इसके अलावा नदियाँ भी अपने साथ बहुत मीठा पानी लाकर समुद्रों में मिलाती रहती है। इसलिए इन भागों में नमक की मात्रा कम होती है इसी प्रकार ध्रुवों के निकट ठंढ अधिक होने के कारण पानी भाप बनकर बहुत ही कम उड़ता है। इसके अतिरिक्त थल के ऊपर का बर्फ पिघलने से इन समुद्रों में पर्याप्त मात्रा में मीठा जल मिलता है। यहाँ खारापन ३४‰ होता है।

स्थल में घिरे सागरों में जल कम आता है और भाप अधिक बनती है। इस कारण लाल सागर में नमक की मात्रा अधिक पाई जाती है क्योंकि यहाँ गिरने वाली नदियाँ अपने साथ कम पानी लाती है जो लगातार गरमी पड़ने के कारण शीघ्र ही भाप बन कर उड़ जाता है। किन्तु इसके विपरीत बाल्टिक और उत्तरी सागर में एक तो ठंढ की अधिकता के कारण भाप बन कर पानी कम उड़ता है और दूसरे गरमी की ऋतु में इसमें गिरने वाली सैकड़ों छोटी-छोटी नदियाँ बरफ के पिघले हुए पानी को समुद्र में गिराती रहती है। कैस्पियन सागर (१४‰ से १७०‰), मृतक सागर (२३७.५‰) और साल्ट लेक तो बहुत ही खारे है (२२०‰)।

समुद्र का तापक्रम (Temperature of Oceans)

समुद्र के ऊपरी धरातल के पानी का तापक्रम अक्षांशों के अनुसार होता है। भूमध्य रेखा के पास ऊपरी पानी का तापक्रम प्रायः ८०° फा० रहता है, पर ध्रुवों के पास धरातल के पानी का तापक्रम २८° फा० हो जाता है। इतना कम तापक्रम होने पर भी खारीपन के कारण जल जमता नहीं है। इस तापक्रम में प्रचलित हवाओं, सामुद्रिक धारा और भूभागों के बीच में आ जाने का प्रभाव पड़ता है। उष्ण कटिबन्ध में जो जल भाग भूमि से घिरे रहते है उनका तापक्रम खुले सागरों के तापक्रम से अधिक रहता है। फारस की खाड़ी में यह तापक्रम ९४° फा० और लाल सागर में ९६° फा० तक पहुँच जाता है। समुद्र के धरातल के तापक्रम में दैनिक तथा ऋतुओं के अनुसार अन्तर पड़ता है। विषुवत् रेखा पर समुद्री धरातल का दैनिक तापान्तर १०° फा० रहता है। शीतोष्ण कटिबन्ध में ऋतुओं के अनुसार २०° फा० तक तापक्रम भेद हो जाता है।

जिस प्रकार पहाड़ों पर चढ़ने से तापक्रम गिरता जाता है, उसी प्रकार समुद्र में अधिकाधिक गहराई पर तापक्रम कम होता जाता है। तीन चार मील की गहराई पर तो तापक्रम हिमांक बिन्दु से कुछ ही ऊपर होता है। इसका कारण यह है कि तली का ठंढा पानी एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक धीरे-धीरे चलता रहता है। उदाहरण के लिए भूमध्य रेखा पर सतह का तापक्रम ८०° फा० तक होता है, ३६०० फीट की नीचाई पर ४०° फा० ही रह जाता है। ६००० फीट की गहराई पर यह ३६° फा०; १२००० फीट की गहराई पर ३४° फा० और १२००० से आगे सदैव शीत का साम्राज्य रहता है।

परिमाण में झीलों को उथल बनाने व उनको छिछला बना कर सुखाने के लिए मट्टी डालने का काम करते है। जब झीलो मे नदी का पानी मिलता है तो वह तिहीन हो जाता है और उसके साथ बह कर आई हुई मिट्टी कंकड आदि जमा होने गता है। धीरे-धीरे समस्त झील इन पदार्थों से पट जाती है।

(२) झीलो से निकलने वाली नदियाँ अपनी धारायें गहरी काट कर निकल ही है इसलिए झीलो का तल पहले से नीचा होता चला जा रहा है।

(३) कुछ झीले ऐसी है जिनसे कोई नदी तो नही निकलती किन्तु वाष्पी-करण की क्रिया की अधिकता के कारण क्रमश. पानी कम होता जाता है।

(४) कुछ झीलो के पानी मे वनस्पति उग जाती है और जब यह वनस्पति ष्ट हो जाती है तो उन पौधो की जडें आदि झील के पेंदे मे जमकर उनको उथला बना देती है। कुछ समय बाद पेंदे की मिट्टी पानी के ऊपर निकल आती है और झील क्रमश. सूखने लगती है।

(५) अधिकाश झीले शिलाखडो के जमाव के द्वारा बनी होती हैं जो बहुत मजबूती से नही जमे होते है। अत इनमे से होकर बहने वाले नालो द्वारा धीरे-धीरे इनका कटाव होता रहता है। कभी-कभी जब यह कटाव अत्यधिक हो जाता है तो रुका हुआ पानी सब बह जाता है और झीले खाली हो जाती हैं।

जल-स्थल का विस्तार

जल और थल भागो का विकास एक दूसरे के विपरीत हुआ है। इसी तथ्य के आधार पर श्री लोथियन ग्रीन ने महाद्वीपो और महासागरो की उत्पत्ति का चतुष्फलक सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। पृथ्वी के गोले पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि हमारी पृथ्वी का ढाँचा **चतुष्फलक** (Tetrahedron) है जिस पर जल और स्थल का विस्तार इस प्रकार है —

(१) उत्तरी गोलार्द्ध मे स्थल और दक्षिणी गोलार्द्ध मे जल की अधिकता है।

(२) जल और स्थल प्राय दोनो ही विषम त्रिभुजाकार है। स्थल त्रिभुजो के आधार उत्तर की ओर हैं, वे दक्षिण की ओर पतले होते-होते नुकीले हो गये है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका और भारत इसके उदाहरण हैं। इसके विपरीत प्रशात महासागर, भूमध्यसागर, अरब सागर और बगाल की खाडी और जल-खडो का आधार दक्षिण की ओर तथा शीर्ष उत्तर की ओर है।

(३) संसार के स्थल-प्रदेश उत्तरी गोलार्द्ध मे आर्कटिक महासागर के चारो ओर है। जिनके दक्षिणी भाग अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका और एशिया तथा आस्ट्रेलिया के रूप मे दक्षिण की ओर लटके हुए है।

(४) पृथ्वी के गोले पर जो स्थान एक दूसरे के ठीक विपरीत ओर स्थित होते है वे एक दूसरे के **कुदलांतर** (Antipodes) कहलाते हैं। इस प्रकार पृथ्वी पर जल और स्थल कुदलातर बनते हैं। *आस्ट्रेलिया उत्तरी अटलाटिक का कुदलातर है।* अफ्रीका और यूरोप मध्य प्रशात महासागर के कुदलातर है। इसी प्रकार उत्तरी अमेरिका हिन्द महासागर का और एशिया अटलाटिक महासागर का तथा अन्टार्कटिक का स्थल-समूह आर्कटिक महासागर का कुदलातर है।

(१) लहरें (Waves)—अधिकतर हवा की चपेटों से उत्पन्न होती है। लहरों मे पानी आगे नही बढता किन्तु वह केवल ऊपर नीचे होता रहता है। हवा और आधी के अलावा कभी-कभी समुद्र के नीचे ज्वालामुखी पहाड़ो के उद्गारो से या भूचाल आने से भी लहरें बड़ी विनाशकारी होती हैं। बडे से बडे जहाज भी इसमे टूट जाते है। ऐसी लहरें उथले समुद्र मे किनारो तक आगे बढ जाती है और उनका पानी तट पर आगे बढकर टकराता है। ऐसी लहरो को सर्फ (Surf) कहते है। इनकी ऊँचाई ५०-५० फीट तक होती है।

२. धारायें (Current)—यह भी समुद्र की एक गति है। जिस समय समुद्र का पानी एक स्थान से बह कर दूसरे स्थान को जाता है तो पानी की एक धारा बन जाती है। ये एक प्रकार से समुद्र की नदिया हैं। इनकी गति निरन्तर बनी रहती है जिसके कारण पानी गर्म होकर फैलता है और उसकी जगह ठढा पानी आ जाता है। इस तरह एक ही समय पानी मे दो प्रकार की धारायें चलती है—ठढी और गर्म। गर्म धारायें समुद्र की सतह के ऊपर चलती है और ठढी धारायें उसके नीचे।

३ ज्वार भाटा (Tides)—यह समुद्र की तीसरी गति है। प्राय समुद्र के किनारे के सभी स्थानो मे जल लगातार ऊपर चढता हुआ और लगातार धीरे-धीरे उतरता हुआ भी मालूम होता है। पानी के इस चढाव को ज्वार और उतार को भाटा कहते हैं। दिन रात मे इस प्रकार दो बार समुद्र का पानी ऊपर चढता है और दो ही बार नीचे उतरता है।

धाराओं की उत्पत्ति के कारण—समुद्र की धारायें इन कारणो से उत्पन्न होती हैं : (१) पृथ्वी के समुद्री धरातल पर तापक्रम की भिन्नता का होना, (२) वर्षा का अधिक तथा कम होना, (३) भाप का कम अधिक बनना, (४) समुद्र मे नमक (खारीपन) का कम अधिक होना। इनके मार्ग पर निम्नलिखित बातो का प्रभाव पडता है।

(१) पृथ्वी की दैनिक गति और स्थायी हवाओ का प्रभाव।

(२) पृथ्वी पर महासागरो के बीच मे स्थान-स्थान पर महाद्वीपो का होना।

धाराओं के प्रकार—धारायें दो प्रकार की होती है (१) ठंढी, और (२) गर्म। जो धारायें ठढे ध्रुव सागरो से भूमध्य रेखा को आती है वे ठढी होती हैं। इसलिए इनको ठढी धारायें कहते है और जो धारायें भूमध्य रेखा के गर्म सागरो से ध्रुव प्रदेशो के ठढे महासागरो की ओर आती है वे गर्म होती है और गर्म धारायें कहलाती हैं। धाराओ के नाम (हवाओ के विपरीत) जिधर वे जाती हैं उसी नाम पर रखे जाते हैं। उदाहरण के लिए जो धारा जापान को जाती है उसको जापान की धारा कहते हैं।

सामुद्रिक धाराओ की तीन मुख्य शृखलाये हैं —

(१) आध्र महासागर की धारायें :—इसकी मुख्य धारायें ये है .

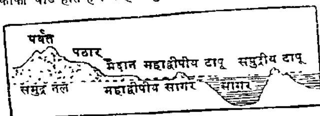
(क) दक्षिण ध्रुव सागर की ठढी धारा
(ख) बेंग्वेला की ठढी धारा
(ग) भूमध्य रेखीय दक्षिणी गर्म धारा
(घ) ब्राजील की गर्म धारा

समुद्र के धरातल को गहराई के हिसाब से चार भागो मे बाँटा जा सकता है:—

(१) **महाद्वीपीय निमग्न स्थल** (Continental Shelf)—समुद्र का वह भाग है जिसकी गहराई ६०० फीट से अधिक नही होती और जिसका ढाल नाम मात्र (०°०७')का होता है। ऐसे भाग प्राय समुद्रतट से मिले रहते है जिन पर प्राय. लोग स्नान किया करते है। ये स्थल पहाड़ी तटो के निकट सँकरे और मैदानों के निकट काफी चौडे होते है। इनकी औसत चौडाई ४० मील है। ये या तो पृथ्वी के धँस जाने से बने है या नदियो द्वारा लाई गई मिट्टी के समुद्र मे जम जाने के कारण। अधिक छिछले होने के कारण इन भागो मे सूर्य का प्रकाश आसानी से पहुँच जाता है। अत ससार के प्राय सभी बड़े-बड़े समुद्री स्थलो मे (उत्तरी अमेरिका का ग्रांड-बंक, ब्रिटिश द्वीप समूह का **डॉगर बैंक** और जापान के तटीय समुद्र) मछलियाँ बहुत अधिक मात्रा मे पकडी जाती है। नदियों द्वारा लाई गई काँप मिट्टी समुद्र के इसी भाग पर जमा होती है। केवल बहुत ही महीन मिट्टी महाद्वीपीय ढाल पर बह कर आती है। यह काँप समुद्रीय स्थल को समतल करती रहती है। समस्त पृथ्वी का ५% भाग निमग्न तट है।

(२) **महाद्वीपीय मग्न ढाल** (Continental Slope)—यह समुद्रीय स्थल का अतिम भाग है जहाँ समुद्र की सतह का ढाल अधिक हो जाता है। इन भागो की गहराई ६०० से १२,००० फीट तक होती है। ये भाग मनुष्यो के अधिक काम के नही होते। इनमे सिर्फ बारीक मिट्टी और कई प्रकार के छोटे-छोटे जीवाश(Oozes) पाये जाते है। इस भाग की रचना भी जमने की क्रिया द्वारा ही हुई है।

(३) **गहरे समुद्रीय मैदान या अगाध सागर तल** (Deep Sea Plains)—जहाँ महाद्वीपीय ढाल समाप्त होते है उसी से आगे ये मैदान आरम्भ होते हैं। ये सपाट और काफी चौडे होते है। ये ही समुद्र के अधिक भाग को घेरे हुए हैं। इनकी



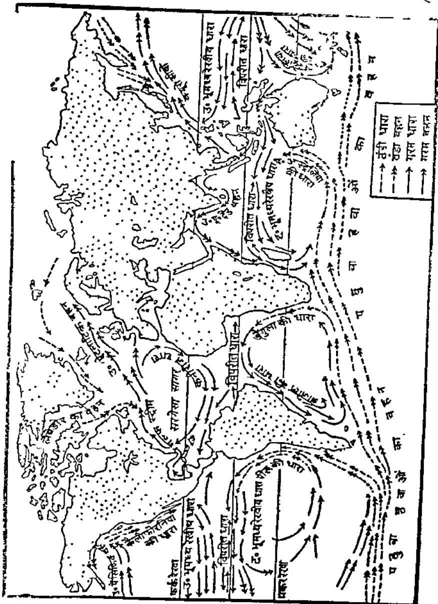
चित्र ६. समुद्रीय धरातल

गहराई १२,००० से १८,००० फीट तक होती है, किन्तु इनका ढाल अत्यन्त साधारण होता है। इनके ऊपर महीन मिट्टी की तह बिछी रहती है जो छोटे-छोटे जीवाशों और हवा द्वारा लाई जाकर बिछा दी जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ गहरे भागों मे लाल मिट्टी भी जमी हुई पाई जाती है।

(४) **महासागरीय गर्त** (The Deeps)—ये समुद्र के सबसे गहरे भाग होते हैं। इनकी गहराई १८,००० से ३०,००० फीट तक होती है। ये भाग धरती के अन्दर धँस जाने से बने है। इनको दीवारें ढालू होती हैं। इनमे से अधिकाश उन समुद्रों के निकट पाये जाते है जहाँ ज्वालामुखी पर्वतो का उद्‌गार हो रहा है। संसार

और चन्द्रमा के साथ सूर्य समकोण बनाता है। इसी दिन ज्वार हल्का होता है। इस ज्वार को लघु ज्वार कहते है।

खुले महासागर मे कभी-कभी ज्वार एक या दो फुट ही ऊँचा रहता है। परन्तु समुद्र के सँकरे भाग मे जैसे खाड़ियो और नदियो के मुहानो पर ज्वार की लहर बहुत



चित्र ७. समुद्र की धाराएँ

है। यह गहरे समुद्री पेटे पर पाये जाते है क्योंकि जल मे यह आसानी से नही घुलते।

महासागरों का खारापन (Salinity of the Oceans)

अनुमान लगाया गया है कि प्रति वर्ष नदियाँ लगभग १५८,३५७,००० टन नमक धरातल से बहाकर समुद्र मे जमा करती हैं। समस्त महासागरो एव सागरो तथा थल से घिरे समुद्रो में कुल नमक की मात्रा १४,१३०,०००,०००,०००,००० टन अनुमानित की गई है। यदि इस मात्रा को समुद्र मे निकाल कर पृथ्वी के धरातल पर समान रूप से बिछाया जावे तो सर्वत्र ४०० फुट मोटा पर्त बिछ जायेगा। इससे स्पष्ट होता है कि समुद्र के जल मे नमक की कितनी मात्रा विद्यमान है।

सभी महासागरो का जल नदियो द्वारा लाये गये विभिन्न प्रकार के खनिज पदार्थों और लवण आदि के कारण खारा होता है। किन्तु यह खारापन सभी जगहो में एक सा नही रहता। कही नमक की मात्रा अधिक और कहीं कम होती है। उदाहरण के लिए लाल सागर अधिक खारा है। लाल सागर मे खारापन ३७‰ से ४१‰, फारस की खाडी मे ३८‰ और भूमध्यसागर मे ३७‰ से ३९‰ है। किंतु बाल्टिक सागर कम (उत्तर में ३०‰ और दक्षिण मे १५‰) खारा है। मामूली तौर पर यह कहा जा सकता है कि समुद्र के पानी के १००० भाग मे ३५ भाग नमक होता है। *श्री डिटमार (Dittmar) के अनुसार समुद्र जल मे नमक की मात्रा* इस प्रकार होती है —[5]

सोडियम क्लोराइड (खाने का नमक)	२७ २१३	पौंड
मैग्नेशियम क्लोराइड	३ ८०७	पौंड
मैग्नेशियम सलफेट	१ ६५८	पौंड
कैलशियम सलफेट	१ २६०	पौंड
पोटाशियम सलफेट	० ८६३	पौंड
कैलशियम कारबोनेट	० १२३	पौंड
मैग्नेशियम ब्रोमाइड	० ०७६	पौंड
	योग ३५ ०००	पौंड

जो नदियाँ समुद्र मे गिरती है वे थोडी मात्रा मे भूमि से अपने साथ नमक लाती है। जब स्वच्छ जल भाप बनकर उड़ जाता है तो नमक समुद्र में जमा होता रहता है। यही नमक समुद्री पानी को खारा बना देता है। समुद्र के पानी में खारेपन की अधिकता या कमी दो कारणो से होती है—(१) नदियो द्वारा अधिक मात्रा मे मीठे जल का मिलना, और (२) जल का भाप बन कर उड जाना।

सबसे अधिक खारापन उन सागरो मे पाया जाता है जो कर्क और मकर

5 *Quoted by P. Lake,* **Physical Geography,** 3rd Ed., 1952, p. 154.

पदार्थ प्राप्त करने का उद्योग विशेषत न्यूफाउडलैंड, ग्रेट ब्रिटेन, आदि देशों मे विकसित किया गया है। उत्तरी कैरोलिना मे हेल, आम्डा और एग्लसे मे ब्रोमाइन के तथा टैक्सास राज्य मे फी पोर्ट और विलास्को मे मैगनेशियम प्राप्त करने के कारखाने स्थापित किये गये हैं। मोती प्राप्त करने का उद्योग मुख्यत जापान सागर, आस्ट्रेलिया तट, कैरेबियन सागर और बहरीन की खाडी मे किया जाता है।

शक्ति के भंडार—वैज्ञानिको का अनुमान है कि महासागरीय जल मे अनन्त औद्योगिक शक्ति भरी पडी है, जिसका निकट भविष्य मे उपयोग होने की पूरी सभावना व्यक्त की गई है। समुद्रो के ज्वार से शक्ति प्राप्त करने के प्रयास भी पिछले १००० वर्षो मे किये जा रहे है। फ्रास मे रेंस नदी की इम्चुअरी पर एक विशाल बाँध बनकर समाप्त हो चुका है जिससे २५ फुट ऊँचे ज्वार के जल को एस्चुअरी में घुसने के बाद निकलने से रोका जाता है। इससे अनुमानत ५५ करोड किलोवाट विद्युत उत्पन्न होगी।

व्यापारिक मार्ग के रूप मे—महासागर व्यापार के निमित्त एक सामुद्रिक सडक का भी कार्य करते हैं। अनुमानत वायु मार्गो की अपेक्षा १/१०० तथा थल मार्गो की तुलना मे केवल १/४ ही खर्च होता है। अतएव कोई आश्चर्य नही कि विश्व के सभी बडे महासागरो मे सामुद्रिक मार्गो का जाल सा बिछा है। व्यापारिक वस्तुओ के जल द्वारा ढोने पर खर्च कम लगता है किन्तु समय कुछ अधिक। किन्तु अधिकाश भारी और मूल्य मे हल्की वस्तुओ का यातायात जल मार्गो द्वारा ही किया जाता है।

महासागरो ने ही आदि काल से मानव को अपनी ओर आकृष्ट कर नौका सचालन की ओर बढाया है। कोलम्बस, वैस्प्यूसीयस, वास्कोडिगामा, ड्रेक, मैगेलिन कुक, स्कॉट प्रभृति मानवो ने ही सामुद्रिक मार्गो द्वारा विश्व के नये क्षेत्रों का पता लगाकर अनेक उपनिवेश स्थापित किये हैं जिनका आर्थिक महत्व विश्व के लिए बडा अधिक रहा है।

इस प्रकार महासागर मानव हित के लिए बडे महत्वपूर्ण है।

प्रश्न

१. पृथ्वी के धरातल पर पाये जानी वाली भिन्न भिन्न प्रकार की चट्टानों का वर्णन करते हुए उनका आर्थिक महत्व बताइये।
२. भूतल पर मुख्य मैदानों और पठारों का वर्णन करते हुए बताइये कि आर्थिक विकास पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है?
३. भिन्न भिन्न प्रकार के मैदानों का वर्णन करिये। इनके बनने के कारणों पर भी प्रकाश डालिये।
४. महासागरों के विभिन्न खण्डों पर अपने विचार प्रकट करिये।
५. चट्टानें क्या हैं? उनका वर्गीकरण करते हुए विभिन्न प्रकार की चट्टानों की विशेषतायें बताइये। ग्रेनाइट, बैसाल्ट, चूने का पत्थर तथा सगमरमर को किस प्रकार की चट्टानों के अंतर्गत रखेंगे?

अक्षांशों के सहारे महासागरों का औसत धरातलीय तापक्रम[6]
(तापक्रम सेंटीग्रेड में)

	आंध्र महासागर	भारतीय महासागर	प्रशान्त महासागर
उत्तरी अक्षांश :—			
७०—६०	५ ६०	—	—
६०—५०	८ ६६	—	५·७४
५०—४०	१३·१६	—	९ ९९
४०—३०	२० ४०	—	१८ ६२
३०—२०	२४ १६	२६·१४	२३ ३८
२०—१०	२५ ८१	२७ २३	२६ ४२
१०— ०	२६ ६६	२७ ८८	२७ २०
दक्षिणी अक्षांश :—			
७०—६०	—१ ३०	—१ ५०	—१·३०
६०—५०	१ ७६	—१ ६३	५ ००
५०—४०	८·६८	८ ६७	११ १६
४०—३०	१६ ९०	१७ ००	१६ ९८
३०—२०	२१ २०	२२ ५३	२१ ५३
२०—१०	२३ १६	२५ ८५	२५ ११
१०— ०	२५ १८	२६ ०१	२६ ०१

कुछ ऐसे समुद्र भी है जिनमें डूबी हुई पहाडियो की रुकावट के कारण महासागर का ऊपरी गरम पानी ही प्रवेश करता है इसलिए उनकी तली वाले पानी का तापक्रम ऊँचा हो जाता है। अटलांटिक और भूमध्य सागर के ऊपरी धरातल के पानी का तापक्रम एकसा (६५° फा०) रहता है पर जिब्राल्टर प्रणाली के पास एक निमग्न पहाडी स्थिति होने के कारण दो मील की गहराई पर अटलांटिक का तापक्रम ४०° फा० हो जाता है, लेकिन इसी गहराई पर भूमध्य सागर का तापक्रम ६५° फा० से कम नहीं होता। इसी प्रकार बाबुलमदप की रुकावट के कारण दो फर्लाङ्ग की गहराई के बाद हिन्द महासागर और लाल सागर के तापक्रम मे बडा अन्तर पड़ जाता है। लालसागर का तापक्रम ७०° फा० से कही कम नही होता किन्तु महासागर का तापक्रम बराबर कम होता जाता है। लेकिन दोनो के धरातल का तापक्रम प्राय. समान (८५° फा०) होता है।

महासागर की गतियाँ (Movements of the Oceans)

समुद्र का जल कभी शान्त नही रहता। इसमें निरन्तर गतियाँ पैदा होती रहती है। ये गतियाँ तीन प्रकार की है :—

6 *H. U. Sverdrup*, **Oceanography for Meteorologists**, 1945.

और कुमेरु ज्योति, गोधूलि, और विश्व किरणो (Cosmic rays) के अध्ययन द्वारा इसका अभी पता लगाया जा रहा है।

वायुमंडल के भौतिक लक्षण

(१) वायु के आयतन मे प्रसार और सकुचन आसानी से हो जाता है। प्रसार से वायु ठढी होती है और सकुचन से गर्म हो जाती है।

(२) वायु का घनत्व भूतल पर सबसे अधिक है और ज्यों-ज्यो ऊपर जावें वह कम होता जाता है। ऐसा अनुमान है कि वायुमडल की सम्पूर्ण वायु-राशि का ६० प्रतिशत भाग भूतल से २२ मील ऊँचाई तक के क्षेत्र मे ही आ जाता है।

(३) वायु का घनत्व जितना कम होगा, उसमे वाष्प की मात्रा उतनी ही अधिक होगी। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि वाष्प का घनत्व शुष्क वायु के घनत्व से कम है। अत यदि वायु नम है, अर्थात् उसमे वाष्प मौजूद है, तो उसका घनत्व कम होगा।

(४) भूतल से ६,००० फीट की ऊँचाई तक ही अधिकांश वाष्प स्थित है। इसके ऊपर बहुत ही कम वाष्प मिलती है, यद्यपि इसकी किंचित उपस्थिति ३० मील से ६० मील ऊँचाई के स्तरो मे भी मिलती है।

(५) वायु मे होकर ताप की किरणे बिना किसी बाधा के गुजर जाती हैं। किन्तु वाष्प ताप को सोख लेती है और वायु को गर्म कर देती है, अतः नम वायु अपेक्षाकृत गर्म होती है।

(६) वायु मे होकर प्रकाश की किरणें स्वतन्त्रतापूर्वक गुजर सकती हैं।

वायुमंडल को संरचना (Composition of Atmosphere)

वायुमंडल मे २०,००० फीट की ऊँचाई तक अनेक गैसे आदि पाई जाती हैं जिनमे से ६६% आक्सीजन और नेत्रजन गैसो का होता है। अन्य गैसों मे हाइड्रोजन, कार्बन डाई आक्साइड, आरगन, हीलियम, क्रिप्टन, जीजन, निओन आदि गैसें होती हैं। इनके अतिरिक्त धूलीकण भी वायु मे मिले पाये जाते है। हम्फ्रेज (Humphreys) के अनुसार वायु मिली गैसो का प्रतिशत भाग इस प्रकार है —

वायुमंडल की गैसें[3]

गैस	प्रतिशत भाग	गैस	प्रतिशत भाग
नेत्रजन	७८·६	हीलियम	०·०००५
ओपजन	२० ६६	क्रिप्टन	०·०००१
आरगन	० ६४	जीनन	०·००००५
कारबन डाइ-आक्साइड	० २६	ओजोन	अंशमात्र
हाइड्रोजन	० ०३	वाष्प	परिवर्तनशील
निऑन	०·०१	धूलिकण	,,

अन्य अशुद्धियाँ (गधक और शोरे का तेजाब) नगण्य

3. *Humphrey's* **Physics of Air,** *D. M. Deeley,* **Principles of Meteorology,** 1935, p. 27

(ङ) भूमध्य रेखीय उत्तरी गर्म धारा
(च) गल्फस्ट्रीम की गर्म धारा
(छ) लैब्रेडोर की ठढी धारा
(ज) कनारी की ठढी धारा

(२) प्रशांत महासागर की धारायें :—इसकी मुख्य धारायें ये हैं :

(क) भूमध्य रेखीय उत्तरी गर्म धारा
(ख) क्यूरोसीवो की गर्म धारा
(ग) क्यूराइल की ठढी धारा
(घ) केलीफोर्निया की ठढी धारा
(च) दक्षिणी ध्रुव सागर की ठढी धारा
(छ) हम्बोल्ट या पीरू की ठढी धारा
(ज) भूमध्य रेखीय दक्षिणी गर्म धारा
(झ) न्यू साउथ वेल्स की गर्म धारा

(३) हिन्द महासागर की धारायें :—इसकी मुख्य धारायें ये है :

(क) दक्षिण हिमसागर की ठढी धारा
(ख) पश्चिमी आस्ट्रेलिया की ठढी धारा
(ग) भूमध्य रेखीय दक्षिणी गर्म धारा
(घ) मोजेम्बीक की गर्म धारा

ज्वार-भाटा (*Tides*)

ज्वार भाटा का कारण चन्द्रमा और सूर्य का आकर्षण है। आकर्षण शक्ति के नियम के अनुसार समुद्र का पानी पृथ्वी के केन्द्र की ओर खिचता है और इधर उधर गिरने से बच जाता है। चन्द्रमा और सूर्य पृथ्वी को अपनी ओर खीचते है। चन्द्रमा यद्यपि छोटा होता है, परन्तु सूर्य की अपेक्षा पृथ्वी के अधिक निकट है, इसलिए चन्द्रमा का खिचाव सूर्य की अपेक्षा अधिक होता है।

चन्द्रमा पृथ्वी को अपनी ओर खीचता है। परन्तु पानी द्रव पदार्थ होने के कारण थल की अपेक्षा अधिक खिच जाता है। पानी के इसी उठने को "ज्वार" कहते हैं। परन्तु पानी चन्द्रमा के ठीक नीचे उठता है, तो पृथ्वी भी कुछ खिच आती है। वहाँ का स्थान खाली होता है और उसे लेने के लिए इधर उधर का पानी आ जाता है इसका परिणाम यह होता है कि चन्द्रमा के नीचे जब ज्वार उठता है, तो ठीक दूसरी ओर भी पृथ्वी पर वैसा ही ज्वार उठता है। इस प्रकार पृथ्वी के दोनो ओर एक साथ ज्वार उठते हैं। परन्तु साथ ही चन्द्रमा से समकोण बनाते हुए पृथ्वी पर दो स्थानों पर भाटा रहता है, जहाँ पानी उतर जाता है। इस प्रकार पृथ्वी पर एक ही समय मे दो ज्वार और दो भाटा होते है।

जब पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य एक सीध मे आ जाते है, तो चन्द्रमा और सूर्य दोनों मिलकर पानी को अपनी ओर खीचते है। इसलिए इन दिनो ज्वार और दिनो की अपेक्षा अधिक होता है। इसे बृहत ज्वार कहते हैं। पूर्णमासी और अमावस्या के दिन ऐसा होता है। परन्तु इन दोनों दिनो के बीच में अर्थात् अष्टमी के दिन पृथ्वी

सूर्य ताप का अधिकांश भाग प्रकाश के रूप मे दिखाई देता है। सूर्य ताप की तीव्रता वायुमडल की बाहरी सतह पर सूर्य की किरणों के झुकाव और सूर्य के प्रकाश की अवधि पर निर्भर है और यह दोनो अक्षाश और ऋतु पर निर्भर है। पृथ्वी की सूर्य से विभिन्न दूरी का प्रभाव भी सूर्यताप पर पडता है। २० दिसम्बर को सूर्य से पृथ्वी सबसे निकट (Perihelion)—९१५ लाख मील और २१ जून को सबसे अधिक दूर (Aphelion) ९४५ लाख मील रहती है। अतएव दक्षिणी गोलार्द्ध ग्रीष्मऋतु मे उत्तरी गोलार्द्ध की अपेक्षा अधिक गर्मी प्राप्त करता है किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध मे ग्रीष्म ऋतु अधिक लम्बी होने के कारण दोनो गोलार्द्धों मे एक वर्ष मे प्राप्त सूर्य-ताप की मात्रा लगभग एकसी होती है। समरात्रि (Equinoxes) और अयन स्थितियो (Solstices) पर २४ घटो मे प्राप्त सूर्य-ताप की मात्रा जो प्रतिवर्ग-डेकामीटर प्रति किलोवाट घटो मे प्राप्त होती है, उसका अनुमान श्री एंगोट ने १३५ किलोवाट लगाया है। विभिन्न अक्षाशो पर सूर्य-ताप की मात्रा इस प्रकार होती है[६]—

तिथियाँ	अक्षाश				
	०°	२०°	४०°	९०° उ०	९०° द०
२२ मार्च	१,०३८	९८०	८०५	३०	०
२१ जून	९१५	१,०८५	१,१५०	१,१४९	०
२० सितम्बर	१,०२३	९७२	८०५	२०	०
२० दिसम्बर	९७७	७०२	३७१	०	१,३६१

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि भूमध्य रेखा पर प्राप्त मौसमी सूर्यताप को मात्रा मे भिन्नता सबसे कम है क्योकि यहाँ सूर्य वर्ष मे दो बार ठीक सिर पर चमकता है और यहाँ सूर्य की ऊँचाई सबसे कम दो अयन स्थिति वाली तिथियो को ६६½° होती है जबकि सूर्य कर्क और मकर अयन रेखाओ पर सीधा चमकता है। भूमध्य रेखा पर वर्ष भर दिन की अवधि १२ घटे रहती है। सूर्य की निकटता के कारण २० दिसम्बर और २२ मार्च को प्राप्त सूर्य-ताप की मात्रा २१ जून और २० सितम्बर को प्राप्त मात्रा से अधिक होती है। कर्क और मकर रेखायें भूमध्य रेखा की अपेक्षा अधिक सूर्य-ताप प्राप्त करती है क्योकि न केवल यहाँ इन तिथियो पर सूर्य सीधा चमकता है वरन् इन रेखाओ की ओर दिन भी अधिक लबे होते हैं। ध्रुवी वृतो पर ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर को भी सूर्य हमेशा क्षितिज के ऊपर रहता है। किन्तु दिन के बड़े होने से दोपहर के समय सूर्य की कम ऊँचाई के कारण प्राप्त सूर्य की ताप की कमी अधिक मात्रा मे पूरी हो जाती है और ध्रुवो पर ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर को सभी अक्षाशो से अधिक सूर्य शक्ति मिलती है। दक्षिणी गोलार्द्ध मे ग्रीष्म ऋतु के समय पृथ्वी की सूर्य से निकटता के कारण उत्तरी ध्रुव की अपेक्षा दक्षिणी ध्रुव को अधिक तापशक्ति प्राप्त होती है।

तापक्रम का अकन सयुक्त राज्य अमरीका मे फारेनहीट डिग्री मे तथा ब्रिटिश

6. *Kendreu*, **Op. Cit.**, p. 6.

१

ऊँची उठती है। नदियों के अनेक मुहानों पर ज्वार बीस फुट ऊँचा उठ आता है। संसार में सबसे ऊँचा ज्वार उत्तरी अमरीका के पूर्व में फंडी की खाड़ी में उठता है। यहाँ पानी ७० फुट ऊँचा उठ जाता है।

महासागरों का महत्व (Importance of Oceans)

मानव के लिए महासागरों का महत्व बहुत अधिक है। ये जीवनदाता कहे जाते हैं क्योंकि इनका न केवल स्थल की जलवायु पर ही प्रभाव पड़ता है वरन् वे वर्षा प्रदायक भी होते हैं। वाष्पीकरण क्रिया द्वारा इनका जल भाप बनकर भूमि पर वर्षा करता है, जिससे अन्तत. अनेक नदियों का जन्म होता है। इसके अतिरिक्त ये वायुमंडल के तापक्रम को भी प्रभावित करते हैं। वायुमंडल की आर्द्रता उष्ण कटिबन्धों में शीतलता और शीत कटिबन्धों में उष्णता प्रदान करती है। जिन भू भागों पर सामुद्रिक अथवा महासागरीय प्रभाव पड़ता है, उनका जलवायु सामुद्रिक होता है, जहाँ तापक्रम भेद अधिक ऊँचा नहीं होने पाता। स्वास्थ्य की दृष्टि से तटीय मैदानों की जलवायु अच्छी समझी जाती है और इसीलिए समुद्र तटों पर सभी देशों में *आमोद-प्रमोद के केन्द्र स्थापित हो गये हैं जहाँ अनेकों पर्यटक भ्रमणार्थ जाते हैं।*

खाद्य-भंडार—महासागर मानव के लिए खाद्य-भंडार के रूप में भी कार्य करते हैं। वैज्ञानिकों का कथन है कि यदि जल जन्तुओं की रक्षा और संख्या-वृद्धि की ओर उचित रूप से ध्यान दिया जाय तो भूमि की अपेक्षा समुद्र मनुष्य को अधिक भोजन प्रदान कर सकते हैं। शीतोष्ण कटिबन्धों में सैकड़ों प्रकार की खाने योग्य मछलियाँ, केंकड़े, घोंघे आदि जीव मिलते हैं और इसीलिए जापान, ब्रिटेन, पूर्वी संयुक्त राज्य अमरीका, रूस और चीन विश्व के प्रमुख मछली उत्पादक क्षेत्र बन गए हैं। मोटे तौर पर कुल मछलियों का ४८% प्रशान्त महासागर में, ४७% आंध्र महासागर से, और ५% हिन्द महासागर से प्राप्त होता है।

खनिज भंडार—महासागर अनेक खनिजों के भी भंडार होते हैं। लगभग ५० विभिन्न प्रकार के खनिज महासागर के जल से प्राप्त किये जाते हैं। अनुमानतः १ घन मील समुद्री जल में १६ करोड़ टन नमक, २ करोड़ टन मैगनेशियम क्लोराइड और सल्फेट, ६.५ लाख टन कैल्सियम क्लोराइड तथा कारबोनेट और ४ लाख टन पोटैशियम सल्फेट पाया जाता है।[7] परन्तु इनके अतिरिक्त अनेक खनिज मिलते हैं—यथा ब्रोमाइन, कारबन, सिलीकन, लोहा, मैंगनीज, ताँबा, सोना, जस्ता, सीसा, चाँदी आदि। १ घन मील क्षेत्र में ७ टन यूरेनियम, ५ ग्राम रेडियम तथा १ करोड़ डालर का सोना विद्यमान है। सम्पूर्ण जल क्षेत्र ३० करोड़ घनमील में फैला हुआ है अत. इस विस्तृत जल राशि में इन खनिजों की सम्पदा का अनुमान लगाया जा सकता है। कुल महासागरीय जल में लगभग २०० करोड़ टन यूरेनियम मिलने की आशा व्यक्त की गई है जो हमारी अणुशक्ति उत्पादक भट्टियों को शताब्दियों तक चलाने के लिए पर्याप्त है[8]।

खनिज पदार्थों और मछलियों से सम्बन्धित अनेक उद्योग महासागरों के तटवर्ती देशों में उन्नत हो गये हैं। मछली का तेल निकालने, खाद बनाने, रासायनिक

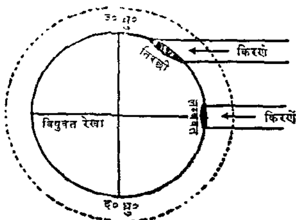
---

7. **Encyclopedia Brittanica,** 1954, Vol. 16, p. 684
8. *J. Gordon Cook*, **The World of Water,** p. 52

(क) हवा विपुवत रेखा पर ध्रुवो की अपेक्षा कम वायुमडल पार करती है अत: इसकी गर्मी वायुमडल मे कम क्षीण होती है।

(ख) सूर्य की किरणे विपुवत् रेखा पर ध्रुवो की अपेक्षा पृथ्वी पर कम स्थान घेरती है (सीधे पडने के कारण) अत विपुवत् रेखा पर पृथ्वी ध्रुवो की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाती है और वायु का तापक्रम अधिक होता है।

(२) समुद्रतल से ऊँचाई—ऊचे स्थानो मे दिन मे रात अधिक शीतल होती है क्योकि उस समय सूर्य ताप की प्राप्ति नही होती और ताप का विसर्जन अधिक होता है। ऐसे स्थानो पर दिन-रात के तापो का अन्तर(*Range of Temperature*) अत्यन्त अधिक होता है। निम्न स्थानो मे यद्यपि रात दिन से शीतल होती है किन्तु तापक्रम का अन्तर अधिक नही होता है। इसका कारण यह है कि निम्न स्थानो मे ताप का विसर्जन बहुत कम होता है। इन बातो से पता चलता है कि किसी स्थान का तापक्रम, ताप सचय और विसर्जन के अन्तर पर नर्भर रहता है। सामान्यत प्रत्येक ३३० फीट की ऊँचाई पर १° फा० तापक्रम कम होता जाता है।



चित्र ८ सूर्य की लम्बरूप और तिरछी किरणें और उनका प्रभाव

(३) समुद्र की निकटता (Distance from the Sea)—जल स्थल की अपेक्षा अधिक समय मे गर्म होता है और वह अधिक काल के उपरान्त गर्मी निकालता है। समुद्र शीत ऋतु मे पास के थल की अपेक्षा गर्म होता है, वहाँ से तट के मैदानो की ओर से जो हवाये चलती है वे वहाँ की जलवायु को गर्म बना देती है। गर्मी की ऋतु मे समुद्र थल की अपेक्षा अधिक ठढा होता है और जो ठढी हवायें वहाँ से चलती है वे तट के मैदानो की जलवायु को ठढा बना देती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि समुद्र के निकट के स्थान भीतरी स्थानो की अपेक्षा गर्मियो मे कम गर्म और जाडे मे बहुत कम ठढे होते है। जो स्थान समुद्र के निकटतम होते है उनकी जलवायु **समुद्री जलवायु** (Maritime Climate) कहलाती है। समुद्र से दूर के स्थानो की जलवायु **स्थलीय जलवायु** (Continental Climate) कहलाती है। लाहौर जो समुद्र से बहुत दूर है गर्मियो मे बहुत गर्म और जाडे मे ठढा रहता है,

अध्याय ७

वायुमंडल

(ATMOSPHERE)

पृथ्वी के चारो ओर लगभग ३०० मील की ऊँचाई तक वायु का एक आवरण-सा चढ़ा है जिसे **वायुमंडल** (Atmosphere) कहा जाता है। पृथ्वी की आकर्षण शक्ति द्वारा आकृष्ट होकर यह पृथ्वी के साथ-साथ घूमता है। यदि ऐसा न होता तो धरातल पर वनस्पति, जीव-जन्तु और मानव सभी का रहना प्रायः असभव ही होता। यह वायुमण्डल न केवल जल और थल को ही घेरे है वरन् दोनो के भीतर भी व्याप्त है। वायुमडल निचले भागो मे ही अधिक सघन है। इसका लगभग आधा पिंड समुद्रतल के धरातल से १८,००० फीट की ऊँचाई तक केन्द्रित है। १/४ भाग १८००० फीट से ३६,००० फीट की ऊँचाई तक और शेष १/४ भाग ३६,००० फीट से अधिक ऊँचाई पर।[1] वायुमडल का महत्व इसी बात से स्पष्ट होता है कि यदि इसका अस्तित्व न होता तो दिन के समय पृथ्वी का तापक्रम २३०° फा० तक और रात का तापक्रम ३००° फा० तक पहुँच जाता। इस स्थिति मे किसी भी जीवधारी का जीवित रहना असभव होता।

वायुमडल को अब तक प्राप्त खोजो के फलस्वरूप चार भागो मे विभाजित किया जाता है :[2]

(१) **अधोमंडल या परिवर्तनमंडल** (Troposphere)—इस भाग की ऊँचाई पृथ्वी के धरातल से ५ से १० मील तक है। इसमे भारी हलचले—आधी, मेघ गर्जन, विद्युत आदि होती रहती है। इस भाग मे वाष्प तथा मेघ अधिक होती है तथा ऊँचाई के अनुसार तापक्रम घटता जाता है। प्रति १००० फीट पर ३.५° फा० की कमी होती है।

(२) **समतापमंडल** (Stratosphere or Isothermal Layer)—यह भाग १० से २० मील की ऊँचाई तक मिलता है। इसमे तापक्रम स्थिर रहते है तथा वायु ऊपर से नीचे या नीचे से ऊपर चलती रहती है। मेघ प्राय. नही पाये जाते, धूलिकण और वाष्प भी बहुत कम मात्रा मे मिलती है।

(३) **ओषोणमंडल** (*Ozonosphere*)—इस भाग की ऊँचाई २० मील से २५ मील तक है। यह भाग सूर्य की पराकासनी किरणो (*Ultra-Violet Rays*) का शोषण कर लेता है जिनमे बहुत अधिक गर्मी रहती है।

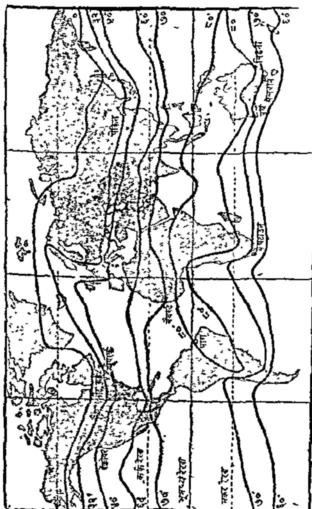
(४) **आयनमंडल** (Ionosphere)—यह भाग २५ मील से ऊपर है। यह अनेको स्तर वाला माना जाता है। रेडियो तरगो, ध्वनि-तरगो, उल्का पात, सुमेरु

1. *White and Renner*, **College Geography,** 1957, p. 33

2. *Freeman and Raup*, **Essentials of Geography,** 1959, pp. 34-35.

उसी स्थान के नाम से पुकारी जाती है जैसे ८०° तापक्रम के स्थानो को मिलाने वाली ८०° फा० समताप रेखा कहलाती है।

मानचित्रो में मासिक समताप रेखायें खीची जाती है, वार्षिक नही क्योंकि यदि वार्षिक रेखायें खीची जावे तो सब रेखायें विषुवत् रेखा के लगभग समानान्तर



चित्र ९ जनवरी की समताप रेखायें

ही होगी और इसलिए तापक्रम का परिवर्तन बहुत ही कम दीख पड़ेगा। समताप रेखायें अक्षाशो के साथ पूर्व से पश्चिम की ओर खीची जाती हैं। इन रेखाओ का रुख दक्षिणी गोलार्द्ध में उत्तरी गोलार्द्ध की अपेक्षा अधिक पूर्व-पश्चिम की ओर होता है क्योंकि दक्षिणी गोलार्द्ध के बहुत बड़े भाग में पानी और उत्तरी गोलार्द्ध में जमीन अधिक है। सबसे अधिक वार्षिक औसत तापक्रम अयन रेखाओ में और सबसे कम

वाष्प की मात्रा के अतिरिक्त अन्य गैसों को प्रतिशत मात्रा धरातल की वायु में सब जगह एक सी ही रहती है। श्री हम्फ्रे के अनुसार वायु की विभिन्न गैसों के बारे में निम्न विशेषताएँ है :—

(अ) अधिकांश वाष्प वायुमंडल के निचले भागो में ही अर्थात् ५ किलोमीटर (७-८ मील) तक ही मिलती है। इसकी मात्रा ११ से ७० किलोमीटर के बीच में बढ़ती जाती है।

(आ) हाइड्रोजन वायुमडल में १०० किलोमीटर की ऊँचाई तक बढती जाती है, जहाँ इसका प्रतिशत ९९ तक हो जाता है।

(इ) ओषजन, ११ किलोमीटर तक, नेत्रजन ३० किलोमीटर तक तथा आरगन ११ किलोमीटर तक पाई जाती है। इसके बाद इनकी मात्रा कम होती जाती है।

(ई) धूल के कण अदृश्य रूप में वायुमडल के बहुत बड़े भाग को घेरे रहते है।

(उ) वायुमंडल के निचले स्तर में भारी गैसें और ऊपरी स्तर में हल्की गैसों का आधिक्य मिलता है।

(ऊ) वायु में वाष्प की मात्रा वायु के तापक्रम के अनुसार बदलती है। यह भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर तथा भूतल से ऊपर की ओर कम होती जाती है। वाष्प की मात्रा में सामयिक और स्थानीय परिवर्तन होते है।

वायुमंडल का ताप (Insolation)

वायुमडल के ताप का सबसे बडा स्रोत सूर्य है जिसका व्यास लगभग ८६४,००० मील है और जो पृथ्वी के व्यास से लगभग १०० गुना अधिक है। आयतन में यह पृथ्वी से १० लाख गुना अधिक है। अनुमानत इसकी सतह का तापक्रम १००००° फा० और केन्द्र का तापक्रम ५०,०००,००० फा० है। सपूर्ण पिंड गैसों का बना है। सूर्य के इस विशाल पिंड से गरमी निकलकर ताप-तरगों के रूप में निरन्तर शून्य मे प्रसारित होती रहती है। सूर्य का यह ताप प्रति मिनट एक करोड मील से भी अधिक तेजी से चलता है और सूर्य से ९३० लाख मील दूर पृथ्वी तक ९ मिनट में पहुँच जाता है। इस विशाल मात्रा का केवल दो अरब वाँ भाग ही पृथ्वी को मिलता है क्योंकि सूर्य पृथ्वी से बहुत दूर है।[४] सूर्य से प्राप्त इस शक्ति को सौर्य-ताप (Insolation) या सौर्य-विकिरण (Solar Radiation) कहते है। श्री एबॉट (Abbot) के अनुसार पृथ्वी के धरातल पर सूर्य से प्रति मिनट प्रति वर्ग सेंटीमीटर भाग को १·९४ कैलोरी या १३५ मिलीवाट गरमी मिलती है। गर्मी की यह मात्रा सभी स्थानों पर स्थिर है। श्री किम्बाल के अनुसार सूर्य से जितनी गरमी या ताप मिलती है उसका ४२% भाग वायुमडल की ऊपरी तह से प्रतिबिंबित होकर शून्य में मिल जाता है, ११% वायु सोख लेती है, ४% धूलिकण और गैसें सोख लेती है और केवल ४३% ताप ही पृथ्वी-तल पर पहुँच पाता है।[५]

---

4. *W. G. Kendrew*, **Climate**, 1932, pp. 5-6.
5. **Monthly Weather Review**, 1928.

कॉमनवैल्थ के देशो में सैटीग्रेड मे किया जाता है। विभिन्न प्रकार की मौसम मे दिन का औसत तापक्रम कुछ इस प्रकार से रहता है :—[7]

साधारण मौसम	तापक्रम फारेनहीट मे	तापक्रम सैटीग्रेड मे
शीत या हिमाक		
बिदु से नीचे	३२° से नीचे	०° से नीचे
ठडा मौसम	३२° से ५०°	०° से १०°
गरम मौसम	५०° से ६८°	१०—२०°
उष्ण मौसम	६८° से ८६°	२०°—३०°
अत्युष्ण मौसम	८६° सेअधिक	३०° से ऊपर

सूर्य ताप पर प्रभाव डालने वाले कारक

सूर्य की गरमी कही अधिक और कही कम मात्रा मे मिलती है। एक ही समय मे सम्पूर्ण विश्व का तापक्रम एकसा नही रहता जैसे ग्रीष्म ऋतु उष्ण रहती है तथा सुबह की हवा का तापक्रम दोपहर की हवा के तापक्रम से भिन्न रहता है अथवा ग्रीष्म ऋतु के एक दिन का तापक्रम शरद ऋतु के एक दिन के तापक्रम से भिन्न रहता है। हवा का तापक्रम एक स्थान पर एक दिन अथवा वर्ष के विभिन्न समयो मे बदलता रहता है। इसका कारण यह है कि सूर्य के सामने पृथ्वी की दशा सर्वदा एकसी नही रहती और इसीलिए मध्यान्ह के समय सूर्य की ऊँचाई भी बदलती रहती है। जून के महीने मे सूर्य की गर्मी और प्रकाश दोनो दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा उत्तरी गोलर्द्ध मे अधिक मिलते है जबकि दिसम्बर के महीने मे विपरीत दशा हो जाती है। इसलिए वर्ष के विभिन्न समय एक ही स्थान मे, चाहे वह उत्तरी गोलार्द्ध मे हो या दक्षिणी गोलार्द्ध मे, एक सी गर्मी और रोशनी नही रहती। यहाँ तक कि एक दिन के विभिन्न समयो मे भी सूर्य की गर्मी एकसी नही रहती।

मध्यान्ह-काल मे जब सूर्य की किरणें सबसे ज्यादा लम्बाकार पडती है तो सूर्य की ऊँचाई सबसे कम रहती है जबकि सुबह व सध्या के समय सूर्य की किरणें तिरछी गिरती है और सूर्य की ऊँचाई अधिक होती है। अत. मध्याह्न के समय सूर्य की किरणें वायु-मडल को कम पार करती है जबकि सुबह व शाम के समय सूर्य की किरणे अधिक वायु-मडल मे होकर गुजरती है। यही कारण है कि मध्याह्न के समय सुबह व शाम की अपेक्षा अधिक गर्मी पडती है और एक स्थान पर दिन के भिन्न समय मे एकसी गर्मी नही पडती।

किसी स्थान का तापक्रम नीचे लिखी बातो पर निर्भर रहता है :—

(१) अक्षांश (Latitude)—ज्यो-ज्यो हम विषुवत रेखा के उत्तर और दक्षिण मे बहुत दूर जाते है त्यो-त्यो कम गर्मी पाई जाती है क्योकि भूमध्यरेखा पर सारे वर्ष सूर्य की किरणें थोडी-बहुत सीधी ही गिरती हैं। जैसे कोलम्बो मे लन्दन की अपेक्षा अधिक गर्मी पडती है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

7. *Klimm, Starkey and Hall* **Op. Cit**; p. 12.

(३) ये समभार रेखायें समुद्र के ऊपर स्थल की अपेक्षा अधिक नियमित तथा सीधी होती है।

(४) दक्षिणी गोलार्द्ध में जल की अधिकता के कारण ये समभार रेखायें अधिक सीधी व नियमित होती है। उत्तरी गोलार्द्ध मे स्थल की प्राकृतिक रुकावटें के कारण इन रेखाओ की आकृति झुकी हुई और टेढी-मेढी हो जाती है।

वायु भार की पेटियाँ (Pressure Belts)

भूमध्य रेखा के आस-पास निरन्तर अधिक गर्मी होने के कारण निम्न भार पाया जाता है। यहाँ सूर्य की तीव्र गर्मी के कारण वायु अधिक गर्म हो जाती है और फैल कर (Expand) ऊपर उठती है। इस वायु की जगह को घेरने के लिए भूमध्य रेखा के दक्षिणी और उत्तरी भागो से ठढी (अधिक बोझवाली) हवायें आती है। ऊपर उठी हुई यह वायु अधिक ऊँचाई पर पहुँच कर शीतल हो जाती है और सिकुडने लगती है जिसके कारण उसमे बोझ आ जाता है इसलिए वह फिर नीचे गिरने लगती है; लेकिन जिस जगह मे उठी थी ठीक उसी जगह पर न गिर कर उससे कुछ दूर विपुवत रेखा के दोनो ओर गिरती है। उस जगह की जलवायु का बोझ इसके दबाव के कारण और भी बढ जाता है। अत भूमध्य रेखा के दोनो ओर कर्क और मकर रेखाओ के लगभग जहाँ वायु नीचे उतरती है उसका बोझ अपनी दोनो दिशाओ की अपेक्षा अधिक हो जाता है। इसलिए इस भाग मे विपुवत रेखा और ध्रुओ की ओर हवायें चलने लगती है। ध्रुवो पर अत्यन्त शीत होने के कारण वायु भार सदा उच्च रहता है। परन्तु ध्रुवो से कुछ दूर पृथ्वी की दैनिक गति के कारण वायु भार कम हो जाता है। क्योकि वहाँ से हवाये विपुवत रेखा की ओर चला करती है। भूमडल पर विपुवत रेखा और उप-ध्रुवीय भागो मे निम्न भार तथा ध्रुवो और अयनवृत्तीय भागो मे उच्च भार पाया जाता है। निम्न भार की पेटियाँ तापक्रम के प्रभाव से बनी है। अत इन्हे **ताप-रचित पेटियाँ** (Thermally-induced Belts) कहते है। शेष अधिक भार की पेटियाँ पृथ्वी के परिभ्रमण का परिणाम है। इन्हे **गति-रचित पेटियाँ** (Dynamically-induced Belts) कहते हैं। इस प्रकार पृथ्वी पर निम्नलिखित भार की पेटियाँ पाई जाती है —

(१) **विपुवत्‌रेखा के निम्नभार के क्षेत्र** (Equatorial Low Pressure Belts)—जो भूमध्य रेखा के दोनो ओर ५° तक फैले हुए है। यहाँ अधिक गर्मी के कारण कम भार पाया जाता है। यहाँ की हवायें ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर और दोनो ओर को आई हुई हवा मे फैलती रहती है। इस क्षेत्र मे हवायें पृथ्वी के समानान्तर नही चलती। ऐसे स्थानो को **शात खण्ड** (Doldrums) कहते है क्योकि वायु वहाँ शात रहती है।

(२) **ध्रुवों के उच्चभार के क्षेत्र** (Polar High Pressure Belts)—ध्रुवो पर अधिक ठढक होने के कारण अधिक भार पाया जाता है। दक्षिण ध्रुव एक ऊँचे और सदा बर्फ से ढके रहने वाले महाद्वीप एन्टार्कटिक पर स्थित होने के कारण अधिक भार की पेटी मे है। इसी प्रकार उत्तरी ध्रुव पर भी, एक बर्फ से ढके महासागर आर्कटिक से घिरा होने से, अधिक दबाव पाया जाता है। यहाँ हवायें ध्रुवों की ओर से उप-ध्रुवीय भागो की ओर चलती हैं।

किन्तु बम्बई जो समुद्र के तट पर है न तो गर्मियों मे अधिक गर्म और न सर्दियो मे अधिक ठढा रहता है।

(४) **वायु प्रवाह की दिशा का प्रभाव** (Direction of Prevailing Winds)—हवाओं की दिशा का प्रभाव भी तापक्रम को ऊँचा या नीचा करने मे होता है। जाड़े मे शीतल अफगानिस्तान के पठार से आने वाली हवायें पजाब को उससे अधिक शीतल बना देती है जितना वह होना चाहिए था। पश्चिमी यूरोप की पश्चिमी हवाये जो अटलांटिक महासागर पर होकर आती हैं यूरोप के पश्चिमी भाग को एशिया के पूर्वी भाग की अपेक्षा (जहाँ पर शीतल वायु आती है) अधिक गर्म बना देती है। इसी प्रकार जिन स्थानों पर गर्म देशो से गर्म वायु आती है वहाँ का तापक्रम बढ जाता है। राजस्थान के मरुस्थल से आने वाली गर्म हवाओं से उत्तर प्रदेश का तापक्रम गर्मियो मे बढ जाता है।

(५) **मिट्टी की प्रकृति का प्रभाव** (Nature of the Soil)—आर्द्र भूमि की अपेक्षा रेतीली शुष्क भूमि शीघ्र गरम और रात को अधिक ठढी हो जाती है। बगाल, जहाँ मिट्टी तर रहती है, दिन मे अधिक गर्म नही होता और न रात को ही अधिक ठढा होता है।

(६) उद्भिज का प्रभाव (Vegetation)—वनो से ढके हुए स्थान बिना वनो वाले स्थानो से गर्मी मे अधिक शीतल रहते हैं और अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं।

(७) **सामुद्रिक धारायें** (Ocean Currents)—तापक्रम पर सामुद्रिक धारायें भी अपना प्रभाव डालती है। गर्म धारा पर बहने वाला वायु जाड़े में गर्म होता है। किन्तु गर्मियो मे गर्म धारा के जलवायु पर कोई प्रभाव नही पड़ता क्योकि पृथ्वी पहले ही उससे अधिक गर्म होती है। जैसे इङ्गलैण्ड का जलवायु जाड़े में **गल्फस्ट्रीम** के कारण कुछ गर्म हो जाता है किन्तु गर्मी मे गल्फस्ट्रीम का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसी प्रकार जापान मे **क्यूरोसिवो** गर्म धारा जाड़े मे भी कोई प्रभाव नही डालती क्योकि जाड़े मे साइबेरिया और चीन से हवा आती है। क्यूरोसिवो जापान के पूर्व में है इसलिए उस पर होकर हवा नही जाती। शीतल धारा पर से आने वाली हवा गर्मियो मे देश के जलवायु को शीतल कर देता है किन्तु जाड़े मे शीतल धारा का कोई प्रभाव नही पड़ता क्योकि पृथ्वी पहले से ही हवा मे ठंढी रहती है।

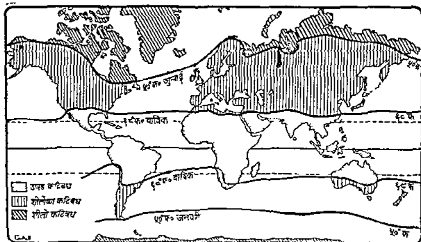
तापक्रमान्तर (Range of Temperature)

किसी स्थान का सबसे अधिक तापक्रम दोपहर मे दो या चार बजे के बीच मे होता है और सबसे कम सूर्योदय के पहले। सूर्य मे आई हुई किरणें भूमि पर गरमी पैदा करती है किन्तु वह गरमी धीरे-धीरे निकलती है। अत दोपहर के समय सबसे अधिक तापक्रम होता है। किन्तु दिन की सम्पूर्ण गरमी क्रमशः रात मे निकल जाती है। इसी कारण सुबह की हवा मे शीतलता मिलती है। दिन के विभिन्न समयों मे किसी विशिष्ट स्थान मे भिन्न-भिन्न ही तापक्रम होता है।

तापक्रम का क्षैतिज वितरण
(Horizontal Distribution of Temperature)

समताप वे रेखायें है जो सब स्थानों को समुद्र के धरातल पर मानते हुए एक से तापक्रम वाले स्थान को मिलाती है। जिस तापक्रम वाले स्थान को यह मिलाती है

तापक्रमो मे कुछ भी अन्तर नही पड़ता क्योकि पूरे साल भर तक एकसा ही तापक्रम बना रहता है। यहाँ जाडे और गर्मी की अपेक्षा दिन और रात के तापक्रमो मे अधिक अन्तर होता है। किसी भी महीने में तापक्रम ६८° फा० से कम नही जाता। यहाँ मध्यान्ह सूर्य कर्क रेखाओ के परे कभी नही चमकता लेकिन इस कटिबन्ध के उन भागो मे जो भूमध्य रेखा से दूर है अर्थात् अर्द्ध-उष्ण (Sub-tropical) भागो मे अवस्था बदलने लगती है और जाडे तथा गर्मी के तापो मे अन्तर पडने लग जाता है।



चित्र ११ ताप कटिबन्ध

(२) **शीतोष्ण कटिबन्ध** की सीमा ५०° फा० की गरमी की समताप रेखा तक उत्तरी और दक्षिणी गोलार्ध मे है।

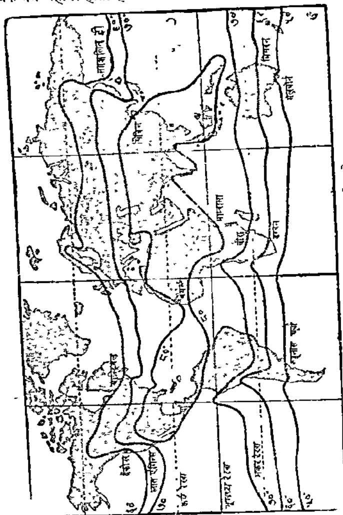
शीतोष्ण कटिबन्ध मे जाडे और गर्मी का अन्तर अधिक हो जाता है। इस कटिबन्ध मे कम से कम आठ महीने ऐसे होते है जब ताप ६८° फा० से कम रहता है। जाडे और गर्मी के अतिरिक्त बसन्त और पतझड दो और ऋतुयें होती है। पृथ्वी का सबसे अधिक भाग इसी कटिबन्ध मे है। इस कटिबन्ध मे दिन अथवा रात्रि की लम्बाई २४ घटे से कम ही रहती है।

(६) **शीत कटिबन्ध**—वे प्रदेश हैं जहाँ केवल चार महीने ऐसे होते है जिसमे ताप ५०° फा० से ऊपर रहता है। गर्मी बहुत थोडी होती है किन्तु जाडे का समय विस्तृत रहता है। इसके अतिरिक्त जाडे और गर्मी के तापक्रम मे बहुत अधिक अन्तर रहता है। ये वे प्रदेश है जहाँ दिन मध्य ग्रीष्म ऋतु मे लगातार कम से कम १४ घण्टे का अवश्य रहता है जब कि सूर्य बिल्कुल नही छिपता है और निरन्तर रात (जब कि सूर्य बिल्कुल नही निकलता—मध्य शीत ऋतु) कम से कम १४ घण्टे की अवश्य होती है।

परन्तु हमे उक्त विवेचन से यह न समझ लेना चाहिए कि उष्ण कटिबन्ध मे स्थित स्थान अन्य कटिबन्धो की अपेक्षा अवश्य ही अधिक गर्म होगे। उष्ण कटिबन्ध मे स्थित स्थानो पर सूर्य की लम्बरूप किरणें साल मे दो बार पडती हैं फिर भी वहाँ पर्वतीय स्थानो का तापक्रम समशीतोष्ण कटिबन्ध के स्थानो से कम हो सकता है।

ध्रुवों के समीप पाया जाता है। समताप विषुवत् रेखा (Thermal I quator) अयन रेखाओं से गुजरती है।

साधारणतः समताप रेखाओं के मानचित्र जनवरी और जुलाई महीनों के तैयार किये जाते हैं क्योंकि उत्तरी गोलार्द्ध में जनवरी सबसे अधिक ठंढा और जुलाई सबसे अधिक गर्म महीना होता है और दक्षिणी गोलार्द्ध में इसके प्रतिकूल होता है।



चित्र १० जुलाई की समताप रेखायें

यहाँ दिये गये जनवरी और जुलाई के मानचित्रों को देखने से हमें नीचे लिखी बातें ज्ञात होंगी :

(१) समताप रेखायें महाद्वीपों से समुद्र की ओर जाते समय गर्मी में विपुवत् रेखा की ओर मुड़ जाती हैं और सर्दी में ध्रुवों की ओर झुक जाती है। स्थानीय

इन कटिबन्धो मे किसी स्थान विशेष के जलवायु का ठीक पता नही चल सकता। इसलिए **आतप-कटिबन्ध** (Zone of Insolation) कहलाते है अर्थात् ये कटिबन्ध *मध्यान्ह सूर्य की ऊँचाई और दिन की लम्बाई पर निर्भर है।*

विभिन्न कटिबन्धो मे जलवायु सम्बन्धी दशाये इस प्रकार पाई जाती है :—

इन तापकटिबन्धो के अतर्गत उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध मे पृथ्वी के धरातल् का क्षेत्रफल इस भाँति अनुमानित किया जाता है :—[10]

क्षेत्र	उ० गोलार्द्ध	द० गोलार्द्ध
शीत कटिबन्ध	७० ला० वर्गमील	आर्थिक दृष्टि मे नगण्य
शीत-शीतोष्ण	१०० ,,	,,
उष्ण-शीतोष्ण	४५ ,,	२० लाख वर्गमील
अर्द्ध उष्ण	८० ,,	४० ,,
उष्ण	७५ ,,	६० ,,

वायुमण्डल की गतियाँ (Atmospheric Circulation)

पवन जलवायु का मुख्य अङ्ग है। पृथ्वी के तापक्रम का अन्तर (Inequality of Temperature) पवन की उत्पत्ति का कारण होता है। पृथ्वी के ताप मे ही वायु गर्म होती है और जहाँ ताप अधिक होता है वहाँ की वायु अधिक गर्म होती है। जहाँ ताप कम होता है वहाँ वायु भी कम गर्म होती है। वायु के इस कम और अधिक होने से पवन-प्रवाह का गहरा सम्बन्ध है।

उपग्रह सम्बन्धी वायु नियम (Planetary Wind System)

यदि पृथ्वी पर जल ही जल हो या सब स्थल ही स्थल हो और की कही ऊँचाई-नीचाई न हो बल्कि सम धरातल हो तो सूर्य ताप और पृथ्वी के के कारण विपुवत् रेखा और ध्रुवों के वृत्तो पर निम्न भार व कर्क तथा मकर मे ताप तथा ध्रुवो पर उच्च भार होगा और वायु सदा उच्च भार से निम्न भार विस्तृत बहेगी। इसी प्रकार सूर्य के अन्य ग्रहो पर भी जिन पर वायु मण्डल है र रहता इसी प्रकार इन्ही कारणो से अवश्य चलेंगे। वायु प्रवाह के इसी साधारण घण्टे का प्रत्येक उपग्रह पर सूर्य ताप और आवर्तन के कारण उत्पन्न हो सकता है उपग्रव कि **वायु प्रवाह** (Planetary wind system) कहते हैं। इनमे केवल वाणि अवश्य पछुआ हवायें ही सम्मलित की जा सकती है। शेप प्रवाह पृथ्वी के स्थल भाग और ऋतुओ के कारण विशेप रूप से उत्पन्न होते हैं जो अन्य उन्ध मे उत्पन्न नही हो सकते। वहाँ पर स्थानीय अन्तर होने के कारण स्थानीय वायुबन्ध वहाँ

10 **Blackie's Atlas.**

वायुभार का वितरण इस प्रकार है[१] —

समुद्रतल पर	=	२६.६२	इंच
१,८२४ फीट पर	=	२८.००	,,
२,८१४ ,,	=	२७.००	,,
३,८२४ ,,	=	२६.००	,,
४,८८६ ,,	=	२५.००	,,
५,६७४ ,,	=	२४.००	,,
१२,००० ,,	=	१६.०३	,,
१८,००० ,,	=	१४.६४	,,

१६,००० फीट के बाद तो वायु भार की कमी के कारण सास लेना भी कठिन हो जाता है अत पर्वतारोही अपने साथ ऑक्सीजन की थैलियाँ ले जाते है।

वायु भार में दैनिक परिवर्तन—२४ घटो मे दो बार वायुभार बढता और दो बार घटता है। सामान्यत प्रतिदिन ४ बजे प्रात से १० बजे तक तथा ४ बजे साय से १० बजे रात तक वायु भार बढता है तथा प्रात. १० बजे से ४ बजे साय तथा १० बजे रात्रि से ४ बजे प्रात तक वायुभार घटता है। इस चढाव-उतार को **'बैरोमीटर का ज्वार-भाटा'** (Berometric Tide) कहा जाता है।

वायु भार के दैनिक परिवर्तन सम्बन्धी निम्नांकित बाते उल्लेखनीय है—

(१) भूमध्य रेखा से ध्रुवो की ओर वायु-भार का यह दैनिक उतार-चढाव कम होता जाता है और ६०° अक्षाश के बाद यह नही देखा जाता।

(२) समुद्रतटीय भागो मे रात्रि-कालीन चढाव-उतार थल के भीतरी भागो के चढाव-उतार से अधिक होता है जबकि भीतरी भागो मे वायु-भार का दिवस-कालीन चढाव-उतार समुद्र-तटीय भागो के चढाव-उतार से अधिक होता है। यह अन्तर थल और जल के गुणधर्म की भिन्नता के कारण पडता है।

(३) अधिक ऊँचाई पर वायु-भार का दैनिक परिवर्तन अदृश्य हो जाता है, अर्थात् वहाँ वायु-भार मे कोई परिवर्तन नही आता।

मानचित्र मे कम या अधिक भार वाले भागो को समझने के लिए **सम वायु-भार** (Isobars) रेखायें खीची जाती है। ये वे रेखायें है जो पृथ्वी के धरातल पर एक से भार वाले स्थानो को मिलाती है। जब भार रेखायें एक दूसरे के निकट होती हैं तो प्रकट होता है कि भार का ढाल अधिक है। लेकिन जब ये रेखायें एक दूसरे से दूर व अधिक फासले पर होती है तो हम कहते हैं कि **भार का ढाल कम** (Light Gradient) है।

समभार रेखाओ की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं —

(१) ये पूर्व-पश्चिम दिशा मे चलती है।

(२) अधिक ऊँचे स्थानो की अपेक्षा कम ऊँचाई पर वायुभार कम होता है।

---

१ हवा का दबाव मिलीबार (१०० mb=२६.५३ इंच या ३० इंच=१०१२.० mb) में नापा जाता है। तल का दबाव लगभग १,००० मीलीबार माना गया है। यह दबाव इंचों में भी बताया जा सकता है।

अधिक पड़ती है। इन हवाओं का साधारण वेग १० से २० मील होता है किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध मे स्थल की कम रुकावट होने के कारण इनका वेग कुछ अधिक होता है।



चित्र १२ स्थायी हवायें

चूँकि ये हवायें अपेक्षाकृत अधिक ठंडे स्थानों में आती हैं अतः इनके चलने पर सुहावना मौसम आ जाता है। ये हवायें नियमित या स्थिर रूप से चलती है अतः बहुत विश्वसनीय होती हैं। यह हवायें समुद्रो पर अत्यधिक प्रकट होती हैं।

(ख) पछुआ हवायें (Westerlies)—ये हवायें अयन रेखाओ मे अधिक भार वाले स्थानों की ओर चलती है। ये ३५° अक्षाश मे ४०° ध्रुव-वृत्तो तक दोनों गोलार्द्धों में चलती है। निर्दिष्ट स्थान से बहुत आगे निकल जाती हैं और ऐसा मालूम होता है मानो वे दक्षिण-पश्चिम अथवा पश्चिम से आती हैं। पछुआ हवायें कभी बहुत ही धीमे और कभी बहुत ही तेज वेग से चलती है। पछुआ हवाओ का प्रदेश व्यापारिक हवाओ के प्रदेश में कहीं अधिक बडा है। वे प्राय. शीतोष्ण कटिबन्ध और शीत कटिबन्ध में चला करती है। दक्षिणी गोलार्द्ध में ४०° और ५०° अक्षाशो के बीच मे समुद्र की अधिकता होने और इनके मार्ग मे कोई रुकावट न होने के कारण इतनी प्रबल वेग से चलती हैं कि इनको **गरजने वाली चालीसा या वीर पवनें** (Roaring Forties or Brave West-Winds) कहते हैं तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे ५०° के दक्षिण में **भयानक पचासा** (Furious Fifties) पुकारी जाती है।

पश्चिमी पवनें गर्म प्रदेश से आने के कारण गर्म होती है। ये अपने साथ बहुत नमी लाती हैं। इसलिए इन हवाओं से उष्ण कटिबन्ध के बाहर पश्चिमी तटो पर (पश्चिमी यूरोप, पश्चिमी कनाडा, दक्षिणी-पश्चिमी चिली आदि) अधिक वर्षा होती है, किन्तु इन हवाओ मे बहुत अस्थिरता होती है। चक्रवात और प्रतिचक्रवात इनके नियमित मार्गों में बाधा डालते हैं अतः ये अनिश्चित मौसमी दशायें उत्पन्न करती हैं। ग्रीष्म ऋतु मे इन हवाओ की पेटियाँ जाड़े की अपेक्षा शांत होती है। जाड़े कभी-कभी भयंकर तूफान उत्पन्न होते है और हवा किसी भी दिशा मे चलने लगती है। पूर्वी तट सूखे रहते है।

(ग) **ध्रुवीय हवायें** (Polar winds)—ये हवायें ध्रुवो के शीतल देशो से शीतोष्ण प्रदेशों की ओर ७०° या ८०° अक्षाश तक चली जाती है। उत्तरी गोलार्द्ध मे **नारइस्टर** (Nor-easter), नामी तूफान हवायें बडे वेग से चलती है ठंढी होती है। लेकिन ये कभी-कभी ही चलती हैं, हमेशा नही।

(३) उपध्रुवीय निम्नभार क्षेत्र (Sub-Polar High Pressure Belts)—ध्रुवों से कुछ दूर पृथ्वी की दैनिक गति के कारण वायु का निम्न भार पाया जाता है क्योंकि हवाएँ यहाँ से भूमध्य रेखा की ओर चलती है। यह निम्न भार उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिकतर समुद्र पर ही—उत्तरी अटलांटिक महासागर मे आइसलैण्ड और उत्तरी पैसिफिक मे एलूशियन द्वीपो के चारो ओर—और दक्षिणी गोलार्द्ध में एण्टार्कटिक के चारों ओर पाया जाता है।

(४) अयन रेखाओं के उच्च वायु भार क्षेत्र (Tropical High Pressure Belts)—कर्क और मकर रेखाओ के निकट ३०° से ४०° के बीच मे विषुवत् रेखा के दोनो ओर अधिक भार की पेटियाँ पाई जाती हैं। इन भागों मे हवा शान्त रहती है। इन अक्षाशो को घोड़ो की अक्षांश (Horse Latitudes) भी कहते है। यह नाम पडने का कारण यह है कि प्राचीन समय में जब घोडो के व्यापारियों के जहाज इस शांत खण्ड (Belts of Calm) मे फँस जाते थे तो वे अपना बोझ हल्का करने के लिए घोडो को समुद्र मे फेंक दिया करते थे। चूंकि हवाएँ सदा ऊपर के दोनो ओर के भागो से नीचे के गर्म भागो मे उतरती हैं इसलिए हवा का तापक्रम बढ जाता है जिससे हवायें पानी नही बरसाती। इसी कारण पृथ्वी के सभी मरुस्थल इन शात खण्डो में ही पाये जाते है। (१) कर्क रेखा के शात खण्डो मे—प० राजस्थान अरब, ईरान, सहारा और केलिफोर्निया के मरुस्थल है। (२) मकर रेखा के शान्त खण्डों मे विक्टोरिया, कालाहारी, एटकामा के मरुस्थल है।

ताप कटिबन्ध (Zones)

पृथ्वी के ताप-कटिबन्धों या क्षेत्रों को दो प्रकार से विभाजित किया जाता है—क्षैतिज (Horizontal) और लबवत् (Vertical)। प्रथम प्रकार वह है जिसमे ताप कटिबन्धो का विभाजन सूर्य की किरणो के कोणो अर्थात् अक्षाश रेखाओ के आधार पर ही किया जाता है। इस प्रकार के कटिबन्धों की सीमायें यूनानी विद्वानों के मतानुसार निम्नलिखित है जो भूमध्य रेखा के दोनो ओर पाई जाती है —

(१) उष्ण कटिबन्ध (Torrid Zone)—भूमध्य रेखा के दोनो ओर २३½° तक है। इसकी सीमान्तक रेखा को उत्तरी गोलार्द्ध में कर्क रेखा (Tropic of Cancer) और दक्षिणी गोलार्द्ध मे मकर रेखा (Tropic of Capricorn) कहते है।

(२) शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone)—जो उष्ण कटिबन्ध के बाद ६६½° उत्तर और इतने ही अश के दक्षिणी अक्षाश में है। इसकी सीमान्त-रेखा को उत्तरी गोलार्द्ध मे आर्कटिक वृत्त (Arctic Circle) और दक्षिणी गोलार्द्ध मे एन्टार्कटिक वृत्त (Antarctic Circle) कहते हैं।

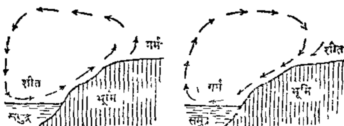
(३) शीत कटिबन्ध (Frigid Zone)—उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्धों मे ६६½° अक्षाशो से ध्रुवों तक फैला है।

ताप कटिबन्ध के विभाजन का द्वितीय प्रकार वह है जिसमे अक्षाश रेखाओं को सीमा न मान कर समताप रेखाओ को ही सीमा रेखा मान लेते है। इस प्रणाली का जन्मदाता प्रसिद्ध जर्मन भूगोलवेत्ता श्री सूपान (Supan) था। इस विभाजन के अनुसार :

(१) उष्णकटिबन्ध की सीमा ६८° फा० की वार्षिक समताप रेखा तक दोनो गोलार्द्धों मे है। उष्ण कटिबन्ध की विशेषता यह है कि यहाँ पर गर्मी और जाड़ो मे

(२) सामयिक या अस्थायी हवायें (Periodic Winds)

(क) **स्थलीय और समुद्री पवनें** (Land and Sea Breezes)—दिन के समय जब सूरज चमकता है तो स्थल जल की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है जिससे उसके पास हवा गर्म होकर फैल जाती है और उसका दवाब कम हो जाता है। लेकिन समुद्र इस समय अपेक्षत ठंढा रहता है। इसके ऊपर की हवा ठंढी और भारी होती है।



चित्र १४ स्थलीय और समुद्रीय मन्द पवने

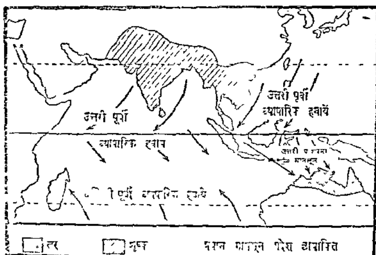
अत. पानी पर के अधिक भार वाले स्थानो की ओर से ठंढी और भारी हवा भूमि पर के कम दवाव वाले स्थानो की ओर चलती है। इन हवाओ को समुद्री पवन (Sea Breeze) कहते है। ये हवायें दिन में सुबह दस बजे से लेकर सूर्यास्त तक चलती हैं। यह हवायें कभी-कभी जमीन के बीस-पचीस मील भीतरी भाग तक घुस जाती है। अयन रेखाओ मे शीतोष्ण कटिबन्ध की अपेक्षा जन और स्थलीय हवायें ज्यादा चलती है। दैनिक मौसमी अवस्थाओ पर इन पवनो का खूब असर पडता है—कभी-कभी तो इनके कारण दैनिक तापक्रम कई अंशो तक कम हो जाता है।

रात के समय जमीन समुद्र की अपेक्षा ठढी हो जाती है तो उसके पास की हवा समुद्र की हवा की अपेक्षा अधिक ठढी और भारी हो जाती है। इसलिए रात के समय हवा स्थल से समुद्र की ओर चलती है। इन पवनो को स्थलीय पवनें (Land Breeze) कहते है। यह हवायें सूर्यास्त से लगातार प्रात ८ बजे तक चलती रहती हैं।

(ख) **स्थानीय पवनें** (Local Winds)—स्थानीय पवने अधिक प्रसिद्ध हैं क्योंकि जिन स्थानो पर यह चलती हैं वहा के निवासियो के जीवन और व्यवसाय पर बडा प्रभाव डालती है। कुछ मुख्य स्थानीय पवने इस प्रकार है—**सिमूम** (Simoom) नाम की गर्म और तेज पवनें सहारा मरुस्थल मे चलती है। ये अपने साथ इतनी मिट्टी और बालू ले आती है कि यात्रियो की आँखो, नाक और मुँह मे घुस जाती है। **सिरक्को** (Sirroco) नाम की गर्म और नम हवायें भूमध्य सागर के इटली प्रदेश मे चलती है। पूर्व की ओर चलने वाली गर्म हवाओ को मिश्र मे **खमसीन** (Khamsin), अरब मे **सिमूम** (Simoom) और पश्चिम की ओर सूडान में **हरमाटन** (Harmaton) कहते है। उत्तरी अमेरिका मे राकी पहाड से मैदान मे चलने वाली गर्म हवा को **चिनूक** (Chinook) कहते है। यह मैदान के बर्फ को बहुत जल्दी पिघला देती है और गेहूँ के पकने मे बड़ी मदद देती है। यूरोप मे इस गर्म और शुष्क हवा को **फोहन** कहते हैं। न्यू साउथ वेल्स मे इन्हें **ब्रिक फिल्डर्स** (Brick Fieldrs), ब्यूनेस आयरस मे **जोंडा** (Zenda) और कैलीफोर्निया मे **संटा**

ताप कटिबन्ध	दबाव तथा हवा सम्बन्धी विभाग	जलवायु सम्बन्धी प्रदेश	
१ आर्कटिक तथा अन्टार्कटिक के शीत कटिबन्ध	उत्तर तथा दक्षिणी ध्रुवी हवाओं की पेटियाँ	ठंढे प्रदेश (frigid)	(क) आर्कटिक निम्न प्रदेश अथवा टैगा-तुल्य (ख) आर्कटिक उच्च प्रदेश अथवा टुंड्रा तुल्य
२. उत्तरी तथा दक्षिणी सम-शीतोष्ण कटिबंध	दक्षिणी पछुवा हवायें उत्तरी पछुवा हवायें भूमध्य सागरीय प्रदेश	[१] शीत-शीतोष्ण प्रदेश (Cool-Tempe-rate)	(क) पश्चिमी यूरोप तुल्य (ख) पूर्वी तट अथवा सेंट लारेंस तुल्य (ग) आतरिक मैदान अथवा महा-द्वीपीय या प्रेरी तुल्य (घ) शीतोष्ण उच्च भूमि अथवा आतरिक पठार अथवा शीतोष्ण मरुस्थल तुल्य
		[२] उष्ण शीतोष्ण प्रदेश (Warm Tempe-rate)	(क) भूमध्य सागरीय (ख) पूर्वी तट अथवा चीन तुल्य (ग) आतरिक मैदान अथवा तूरान तुल्य (घ) आतरिक पठार अथवा ईरान तुल्य
	उत्तरी-पूर्वी तथा दक्षिणी-पश्चिमी व्यापारिक हवा की पेटियाँ	गर्मतर प्रदेश (Tropi-cal)	(क) गर्म रेगिस्तान अथवा सहारा तुल्य (ख) गर्मी मे वर्षा पाने वाले प्रदेश या मानसून तुल्य (ग) उष्ण कटिबंधीय घास के मैदान अथवा सवन्ना या सूडान तुल्य (घ) विपुवत रेखीय प्रदेश

समय भूमध्य रेखा के पास स्थल से कहीं अधिक तापक्रम और कम दबाव पाया जाता है। अतः ग्रीष्म का मानसून स्थल से समुद्र की ओर लौटने लगता है। इसे **शरद ऋतु का मानसून** (Winter Monsoon) कहते हैं। इस शरद मानसून के मार्ग में अधिकतर स्थल होता है जहाँ भाप की सामग्री बहुत कम होती है। अतः इस मानसून में भाप की कमी रहती है। स्थल से समुद्र की ओर लौटने के कारण इस मानसून को ऊँचे प्रदेश से नीचे प्रदेश को उतरना पड़ता है इसलिए इसमें जो कुछ भाप होती है



चित्र १६ शीतऋतु का मानसून

इसको पानी में बदलने का अवसर नहीं मिलता है। अस्तु, ये उत्तरी पूर्वी मानसून बहुत थोड़े प्रदेश में और थोड़ी मात्रा में पानी बरसाते हैं। बंगाल की खाड़ी से भाप मिल जाने पर यह मानसून लंका की पहाड़ियों और दक्षिणी पूर्वी भारत में कुछ पानी बरसा देती है। उत्तरी आस्ट्रेलिया, न्यूगिनी और पूर्वी द्वीपसमूह के कुछ द्वीपों में भी इस समय वर्षा होती है। मानसूनी हवाओं का महत्व भारत के लिए बहुत अधिक है क्योंकि—

(१) भारत की सम्पूर्ण वर्षा का लगभग ८०% ग्रीष्म ऋतु में दक्षिणी पश्चिमी मानसूनी हवाओं द्वारा प्राप्त होता है। शीतकाल के मानसून बहुत ही कम वर्षा लाते हैं जो अधिकतर मद्रास प्रदेश तक ही सीमित रहती है।

(२) अनेक स्थानों में वर्षा का वितरण असमान है। कहीं वर्षा अत्यधिक होती है जिससे फसलें नष्ट हो जाती हैं और कहीं सूखा पड़ने के कारण अकाल पड़ जाते हैं जिससे लाखों नर-नारी काल के ग्रास बन जाते हैं।

(३) अनिश्चित वर्षा के प्रदेश में मानसून विश्वासजनक नहीं होते। नियमित समय पर वर्षा न होने से लोगों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। जब वर्षा नियत समय पर तथा अच्छी होती है तो फसल भी अच्छी होती है। देश के

किसी दूसरे रूप मे प्रत्येक ग्रह मे होगे । इसलिए जल और स्थल वायु प्रवाह, मानसून हवा तथा अन्य स्थानीय वायु प्रवाह इस सम्बन्ध मे शामिल नही किए जा सकते ।

हम हवाओ का निम्न रूप से अध्ययन कर सकते है—(१) स्थायी हवायें, (२) सामयिक हवाये, (३) स्थानीय हवायें, (४) अनियमित हवाये ।

पृथ्वी पर वायु की पेटियों का वितरण[1]

अक्षाश		वायुपेटियाँ
९०°-६०°	उत्तर	ध्रुवी हवायें
६०°-३५°	उत्तर	प्रचलित पछुवा हवाये
३०°	उत्तर के निकट	अश्व अक्षाश
२५°- ५°	उत्तर	व्यापारिक या स्थायी हवायें
५° उ०-५°	दक्षिण	शात खड
५°-२५°	दक्षिण	व्यापारिक हवाये
३०°	दक्षिण के निकट	अश्व अक्षाश
३५°-६०°	दक्षिण	प्रचलित पछुवा हवायें
६०°-९०°	दक्षिण	ध्रुवी हवायें

स्थायी हवाएं (Permanent Winds)

(क) **व्यापारिक हवाएं** (Trade winds)—वे हवायें होती है जो अयन रेखा से विपुवत् रेखा की ओर चला करती हैं क्योंकि अयन रेखा पर अधिक भार होने की वजह से हवाये अधिक भार वाले स्थलो से कम भार वाले स्थानो की ओर ...ती है । इस प्रकार ये हवायें उत्तरी गोलार्द्ध मे ५° से ३०° उत्तरी अक्षाश और ...ी गोलार्द्ध मे ३०° दक्षिणी अक्षाश से विपुवत् रेखा की ओर चला करती है । ...म के अनुसार इनका रुख क्रमश उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी हो जाता ...ाओ का नाम व्यापारिक हवायें इसलिए पडा कि प्राचीन समय मे जहाज एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाए जाते थे । इसलिये उनको इस पवन ...श्चित एकरूपता (Regularity) से अधिक सहायता मिलती थी ।

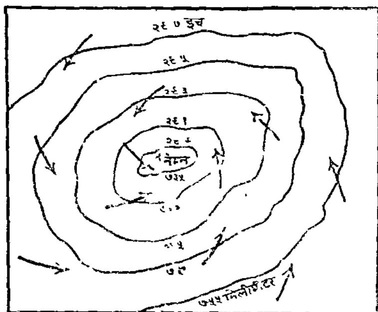
...कि व्यापारिक हवायें उत्तर-पूर्व से आती है इसलिए वह सब नमी (जो ये महाद्वीपो के पूर्वी भागो मे वर्षा देती है, किन्तु पश्चिमी भाग बिल्कुल सूखे हे जिसके फलस्वरूप महाद्वीपो के पश्चिमी भागो मे ही मरुस्थल पाये जाते है ।

३. उत्त...

कटिबं... व्यापारिक हवाओ का अधिक प्रसार दक्षिणी अटलाटिक और हिन्द महासागर ...कमी भागो मे ही अधिक है । इन सब भागो मे वहां गर्मी की अपेक्षा सर्दी ...तर

1. *H. M. Kendall, R. M. Glendinning and C. H. Macfadden,* **Introduction to Geography,** 1951, p. 104.

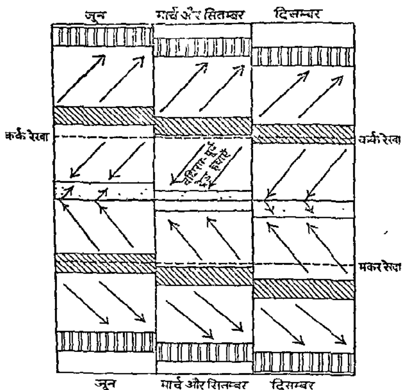
चक्रवात (Cyclone) —कभी-कभी किसी-किसी स्थान पर गर्मी की अधिकता या अन्य किसी कारण से हवा का दबाव कम हो जाता है, परन्तु उस स्थान के चारों ओर हवा का दबाव अधिक होता है। फलत अधिक दबाव वाले स्थानो से हवा मध्य के कम दबाव वाले क्षेत्र की ओर चलने लगती है। लेकिन पृथ्वी की गति तथा उसके घूमने के कारण हवा एक चक्र-रूप मे आती है और चक्कर खाते हुए लम्बे ऊँचे गोल स्तम्भ जैसी दिखाई देती है। उस हवा के साथ-साथ धूल और सूखी पत्तियाँ कूडा-करकट आदि सभी चक्कर खाते रहते है। साधारणतया यह चक्कर खाते हुए हवा के गोल स्तम्भ छोटे-छोटे होते है परन्तु कभी-कभी तो यह बहुत बडे होते हैं। उसका व्यास २० मील से लेकर ४००-५०० मील या उससे भी अधिक होता है। इसमें जैसे ऊपर बताया जा चुका है भीतर की ओर हवा का दबाव कम होता है और बाहर चारो ओर अधिक। हवा तेजी के साथ बाहर से भीतर की ओर जाती है परन्तु प्रवेश करते ही चक्कर मे घूमने लग जाती है। भीतर के स्थान मे गर्मी अधिक होने से आने वाली हवा भी गरम और हल्की होकर ऊपर उठ जाती है और ठंडी होकर वर्षा भी कर देती है। इन चक्कर खाते हुए हवा के गोल स्तम्भो



चित्र १७ चक्रवात

का चक्रवात (Cyclone) कहते हैं। यह एक तरह के तूफान होते है। उत्तरी गोलार्द्ध के शीतोष्ण कटिबन्ध मे यह जाड़े के दिनो मे और उष्ण-कटिबन्ध मे गर्मी की ऋतु मे उत्पन्न होते हैं क्योंकि इन कटिबन्धो मे उन्ही दिनो तापक्रम मे अधिक अन्तर होता है। उत्तरी गोलार्द्ध के चक्रवातों मे हवा की दिशा घडी की सुइयो के प्रतिकूल (Anti-clock-wise) होती है परन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध मे वह घडी की सुइयो की

ये हवायें प्रायः निश्चित अक्षांशों में ही चला करती है और इनका क्षेत्र सूर्य की प्रत्यक्ष गति से बराबर सम्बन्ध रखता है। जब सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में चमकता है तो इनका क्षेत्र कुछ उत्तर की ओर खिसक जाता है और जब सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में चमकता है तो इनका क्षेत्र कुछ दक्षिण की ओर खिसक जाता है। इस उत्तर और दक्षिण की ओर खिसकने के कारण पछुआ हवाओं और व्यापारिक हवाओं के सीमान्तक प्रदेश गर्मियों में तो व्यापारिक पवनों के क्षेत्र में रहते हैं और जाड़ों में पछुआ हवाओं के। इन क्षेत्रों को अस्थायी पवन क्षेत्र (Transition Belts) कहते हैं।



चित्र १३ हवा की पेटियों का सरकना

इन पवनों को स्थायी पवनें (Permanent winds) कहते हैं। लेकिन इनका प्रवाह यथा समय वायु के भार में अन्तर पड़ने से अक्सर टूट जाया करता है। तापक्रम में असाधारण अन्तर के पड़ जाने से ही ऐसा होता है। यह असाधारण अन्तर स्थल की प्रधानता के कारण पूरे एशिया महाद्वीप में अधिक देखा जाता है।

Introᶜ १रण उत्तरी गोलार्द्ध में पवन प्रणाली (Wind systems) दक्षिणी गोलार्द्ध ६०° से ६५° की पवन धारा की अपेक्षा कम स्थिर (Steady) होती है।

सम्पृक्त हवा (Saturated wind) कहते है। भाप भरी हवा सूखी हवा से हल्की होती है।

भाप भरी हवा मे तापक्रम के अनुसार भाप की मात्रा इस प्रकार अनुमानित की गई है[14] —

तापक्रम (फा० मे)	भाप की मात्रा (ग्रेन मे)	१०° फा० का तापक्रम में अन्तर होने पर भाप धारण करने की शक्ति मे पडने वाला अन्तर
१०°	·७	—
२०°	·१	—
३०°	१·६	—
४०°	२ ६	१ ०
५०°	४ १	१ २
६०°	५ ७	१ ६
७०°	८ ०	२ ३
८०°	१० ६	२ ६
९०°	१४ ७	३ ८
१००°	१९ ७	५ ०

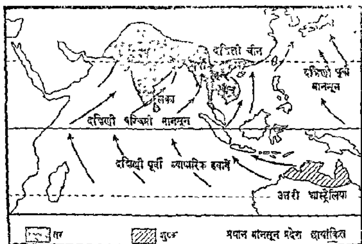
वायु मे भाप जितनी मात्रा मे होती है उसे वायु की वास्तविक आर्द्रता (Absolute Humidity) कहते है। यदि १ घनफुट वायु मे ४०° फा० तापक्रम पर २ ग्रेन भाप मौजूद है तो वायु की वास्तविक आर्द्रता २ ग्रेन प्रति घन फुट होगी। यह आर्द्रता भूमध्य रेखीय भागो मे अत्यधिक होती है और ध्रुवो की ओर घटती जाती है तथा थल-भागो की अपेक्षा जल भागो पर तथा शीतकाल और रात की अपेक्षा ग्रीष्मकाल और दिन मे अधिक होती है।

हवा मे किसी तापक्रम पर कुल जितनी भाप रह सकती है उसका जितना प्रतिशत हवा मे मौजूद होता है उसे हवा की सापेक्षिक आर्द्रता (Relative Humidity) कहते है। यदि ७०° फा० तापक्रम पर १ घनफुट हवा मे ८ ग्रेन भाप रह सकती है किन्तु यदि केवल ४ ग्रेन ही भाप मौजूद है तो हवा की सापेक्षिक आर्द्रता $\frac{४ \times १००°}{८}$ = ५० प्रतिशत है।

14. *Finch and Trewartha*, **Elements of Geography, 1941, p. 108.**

कहते हैं। इन्हीं प्रदेशों में कभी-कभी उत्तर की ओर से ठंढी पवनें चलती हैं जो एड्रियाटिक प्रदेश में बोरा (Bora) कहलाती है। स्पेन में इन्हें सोलानो (Solano); रोन की घाटी और दक्षिण फ्रांस में मिस्ट्रल (Mistral), उत्तरी आल्पस में फोन (Fohn) कहते हैं। अर्जेंटाइना में ठंढी हवाओं को पैम्पेरो (Pampero), ऐन्डीज में पूना (Poona) और साइबेरिया में बूरां (Buran) कहते हैं।

(ग) **मौसमी हवायें** (Monsoons)—मानसून एक 'अरबी' शब्द है जिसका अर्थ मौसम है। ये वे हवायें हैं जो साल के छ महीने समुद्र से स्थल की ओर और दूसरे ६ महीने स्थल से समुद्र की ओर चलती हैं। वास्तव में ये स्थलीय और जलीय पवनों के बड़े रूप हैं। इन हवाओं के चलने के कारण पृथ्वी पर पाए जाने वाले स्थल और जल के गर्म होने की अलग-अलग तासीर का होना है। मई, जून और जुलाई के महीने में सूर्य की किरणें कर्क रेखा पर सीधी पड़ती हैं इसलिए उत्तरी भारत, चीन, आदि के मैदान बहुत गर्म हो जाते हैं। अस्तु, यहाँ कम दबाव पाया जाता है। इस समय हिन्द महासागर का वह भाग जो तनिक विषुवत् रेखा के दक्षिण में है अपेक्षत ठंढा होता है। अत उसकी हवा भारी और ठंढी होती है इसलिए यहाँ अधिक भार पाया जाता है। अत यहाँ गर्म भाप से भरी हवायें दक्षिण



चित्र १५. ग्रीष्म ऋतु का मानसून

पश्चिम से भारतवर्ष, लंका, ब्रह्मा और मलाया महाद्वीप में तथा दक्षिण-पूर्व से चीन, जापान, इंडोचीन, और थाईलैन्ड में प्रवेश करती हैं। कहीं-कहीं मार्ग में ऊँची भूमि या पहाड़ों की रुकावट पड़ने से उनको पार करने के लिए ये ऊपर उठती हैं और ठंढी होकर इन भागों में खूब पानी बरसाती हैं। यह **ग्रीष्म ऋतु का मानसून** (Summer Monsoon) कहलाता है और मई से अक्टूबर तक चलता है।

जाड़े की ऋतु में सूर्य की किरणें उत्तरी भारत के मैदानों पर तिरछी पड़ने लगती हैं अत यह मैदान शीघ्र ठंढे हो जाते हैं। इनकी हवायें ठंढी होकर भारी हो जाती हैं। अत इन भागों में इस समय अधिक दबाव पाया जाता है। किन्तु इस

वर्षा का वितरण (Distribution of Rainfall)

धरातल पर वर्षा का वितरण सभी भागो मे समान नही है। इस मात्रा को अधिक, मध्यम, अल्प और अत्यल्प के नामो से पुकारा जाता है।

उष्ण कटिबन्ध मे वर्षा का वितरण कुछ इस प्रकार है :—

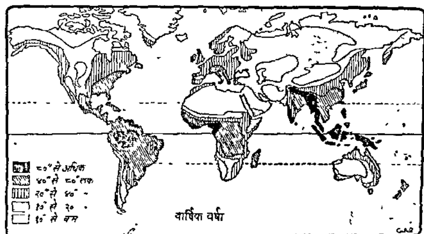
(१) ८०″ से अधिक भारी वर्षा (Heavy rainfall)
(२) ४०″ से ८०″ तक वर्षा—मध्यम वर्षा (Moderate)
(३) १५″ से ४०″ तक वर्षा—अल्प वर्षा (Light Rainfall)
(४) १५″ से कम वर्षा —अत्यल्प (Low or Poor)

शीतोष्ण कटिबन्ध मे वर्षा का वितरण इस प्रकार है —

(१) ४०″ से अधिक वर्षा = अतिवर्षा
(२) २५″ से ४०″ तक = मध्यम वर्षा
(३) ५″ से २५″ तक = अल्प वर्षा
(४) ५″ से कम = अत्यल्प वर्षा

वर्षा के विन्यास मानचित्र का अध्ययन करने से निम्न तथ्य स्पष्ट होते है —

(१) ज्यो-ज्यो हम विषुवत रेखा के उत्तर या दक्षिण की ओर जाते है वर्षा कम होती जाती है। ध्रुवो पर अधिक सर्दी पडने के कारण हवा मे भाप नही रहती, अत वर्षा कम होती है।



चित्र ११ वार्षिक वर्षा का वितरण

(२) पहाडो के पवनमुखी ढालो पर पवनमुखी ढालो की अपेक्षा, जो समुद्री हवाओ के रास्ते मे नही पडते अधिक वर्षा होती है।

व्यापार में वृद्धि होती है और सरकारी खजाने भरे रहते हैं। किन्तु जब मानसून विश्वासघात करते हैं तो न केवल सारी खेती ही सूख जाती है, बल्कि उद्योग-धन्धे भी फीके पड़ जाते हैं और सरकारी आय-व्यय को सतुलित करना भी कठिन हो जाता है। सच तो यह है कि आर्थिक जगत के तीन मुख्य क्षेत्र—भोजन, वस्त्र और आश्रय—सभी मानसून द्वारा प्रभावित होते हैं। इसलिए कहते हैं कि "भारतीय कृषि अथवा भारत सरकार की आय मानसून का जुआ है।"[१२]

(४) मानसून द्वारा वर्षा लगातार नहीं होती। कभी-कभी तो वर्षा का अन्तर बहुत लम्बा हो जाता है जिससे फसलों को सूखे समय में पानी देने का प्रबन्ध करना पड़ता है। भारत में सिंचाई का कारण वर्षा का अनिश्चित, अनियमित और अपर्याप्त होना ही है।

(५) मानसूनों द्वारा किन्हीं भागों में मूसलाधार वर्षा होती है और किन्हीं में बौछारें ही पड़ती हैं। लन्दन की २४" वार्षिक वर्षा १६१ दिनों में हल्की फुहारों के रूप में होती है जबकि बम्बई की ७२" वर्षा केवल ७५ दिन में ही हो जाती है। जब वर्षा तेजी से गिरती है तो भूमि का कटाव अधिक होता है। अधिकांश जल का प्रयोग नहीं हो पाता और वह व्यर्थ में ही समुद्र में बहकर चला जाता है।

(६) मानसून उठते समय समुद्र में बड़े तूफान आते हैं। इनके द्वारा समुद्र की लहरें किनारों तक मीलों फैल जाती हैं और धन-जन दोनों की अपार हानि करती हैं। अक्टूबर १६४२ के भीषण तूफान से बंगाल के मिदनापुर जिले में लगभग १० हजार और चौबीस परगने में १ हजार व्यक्ति मरे और ७५% जानवरों की क्षति हुई। १८७६ की बाकरगंज तूफान में मेघना के कछार में लगभग १ लाख व्यक्ति डूब गये।

(७) वास्तव में सच तो यह है कि भारत के लिए मानसून का वही महत्व है जो मिश्र देश के लिए नील नदी का है। भारत की आर्थिक सम्पन्नता बहुत कुछ मानसून पर ही निर्भर रहती है। इसीलिए यह कहा भी जाता है कि "सम्भवतः भारतीय मानसून की भाँति चमत्कारी प्रभाव वाली अन्य कोई वस्तु नहीं है।"[१३]

(घ) अनियमित हवायें (Variable Winds)—हवा के असाधारण तापक्रम के फलस्वरूप वायु-मण्डल में जो गड़बड़ी पैदा हो जाती है उसी से तूफान उठते हैं। ये तूफान पानी के भँवर की भाँति वायु की भँवरें हैं। ये तूफान दो प्रकार के होते हैं—एक तो पवन भँवर के केन्द्र की ओर के निम्न वायु भार (Low Pressure) के कारण बड़े वेग से दौड़ती है और दूसरे अधिक वायु भार ((High Pressure) के कारण केन्द्र से दूर बाहर की ओर सवेग जाती है। इनमें पहले को चक्रवात और दूसरे को प्रति-चक्रवात कहते हैं। इन तूफानों से सम्बन्ध रखने वाली पवनें सदा पहिए की भाँति सदा चक्कर लगाती हैं इसलिए धीरे-धीरे उसका मुख प्रत्येक दिशा की ओर बदलता रहता है।

---

12 "Indian Agriculture or Indian Budget is a gamble in rains."

13. "Probably there is no other single group of weather phenomenon, so far-reaching in its effect, as the Indian monsoons."

महाद्वीपों में वर्षा की मात्रा इस प्रकार है—(प्रतिशत में)[१५]

महाद्वीप	वर्षा की मात्रा			
	४०" से अधिक	२०"-४०"	१०"-२०"	१०" से कम
१. आस्ट्रेलिया	११	२२	३०	३७
२. यूरोप	०	५२	४२	५
३. एशिया	१५	१८	३२	३५
४. अफ्रीका	२८	१८	१७	१५
५. उत्तरी अमरीका	१८	३०	३७	५
६. दक्षिणी अमरीका	७६	८	५	११

जलवायु के प्रकार (Climatic Types)

श्री राबर्ट वार्ड (Robert C Ward) के शब्दो मे "जलवायु के नियमित अध्ययन के लिए पृथ्वी के धरातल को विस्तृत भागों मे बाँटना अत्यधिक आवश्यक है।" परन्तु तापक्रम के कटिबन्ध और दबाव सम्बन्धी विभाग दोनों ही वृष्टि को नगण्य स्थान देते हैं यद्यपि वृष्टि जलवायु पर प्रभाव डालती है।

डा० कुइन (Dr Kceppen) ने ऋतु सम्बन्धी तत्वों के महत्व के आधार पर जलवायु सम्बन्धी प्रदेशों का विस्तृत विभाजन किया है। उनका विभाजन तापक्रम और वृष्टि पर आधारित है। इस स्थिति को ध्यान मे रखते हुए एक ओर तो पूर्वी तथा पश्चिमी तटों की भिन्नता को प्रदर्शित करता है तथा दूसरा तटीय प्रदेश और आंतरिक भाग की भिन्नता को स्पष्ट करता है। भिन्न-भिन्न प्रकार की जलवायु की परिभाषा सख्यात्मक अङ्कों द्वारा की गई है। बड़े-बड़े विभागों को बड़े अक्षरों से प्रदर्शित किया गया है और उनके उप-विभागों को छोटे अक्षरों द्वारा। ये छोटे अक्षर जलवायु की विशेषताओं को बतलाते हैं। इन जलवायु के पांच मुख्य वर्गों का उप-विभाजन वर्गों के आधार पर किया गया है —

इन जलवायु के पाँच मुख्य वर्गों का उपविभाजन वर्षा के आधार पर किया गया है :—

A जलवायु के मुख्य उपविभाग Af Am और Aw हैं। यहाँ f का तात्पर्य वर्ष भर नमी से है जहाँ किसी भी माह में २.४" से कम वर्षा न हो। m का अर्थ विभिन्न प्रकार की अधिक वर्षा तथा छोटे शुष्क ऋतु के मानसून से है। w का अर्थ जाडे में शुष्क ऋतु या कम से कम एक माह मे २४" से कम वर्षा वाले क्षेत्र से है। यह तीनों प्रकार क्रमश: विषुवत् रेखीय अथवा उष्ण वर्षा वाले जंगल, उष्ण मानसून एवं उष्ण सवाना तुल्य जलवायु के समान है।

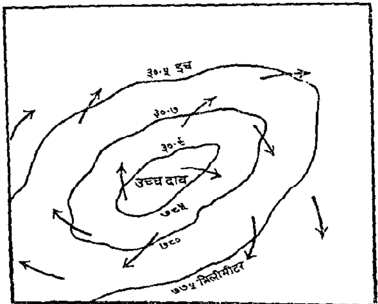
B जलवायु के उपविभाग Bwh, Bsh, Bwk और Bsk है। यहाँ w का अर्थ रेगिस्तान, s का अर्थ स्टेप, h का अर्थ उष्ण जहाँ ६४.४° फा० से अधिक

---

15. *G Taylor*, **Australia, Physiographic and Economic, p. 53.**

दिशा (Clock-wise) के अनुकूल चलती है। इनमे हवा मध्य की ओर तेजी से चलती है इसलिये हवा का सारा चक्करदार स्तम्भ भी आगे की ओर बढता चलता है। इनके आने पर वर्षा होती है और मौसम ठंडा हो जाता है।

प्रतिकूल चक्रवात (Anti-cyclone)—यह चक्रवात का बिल्कुल उल्टा है। चक्रवात में यह हवा का दबाव मध्य मे कम होता है और बाहर के आस-पास के स्थानो मे अधिक। लेकिन प्रतिकूल चक्रवात मे मध्य में हवा का दबाव अधिक होता है और बाहर चारो ओर के स्थानो मे कम। इसलिये इनमे हवा का प्रवाह भीतर से बाहर की ओर होता है। चक्रवातो से प्रतिकूल होने के कारण इनमे हवा की दिशा



चित्र १८ प्रति चक्रवात

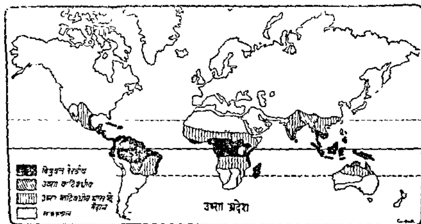
उत्तरी गोलार्द्ध मे घडी को सुइयों की दिशा मे और दक्षिणी गोलार्द्ध मे घडी की सुइयो के प्रतिकूल दिशा मे होती है। प्रतिकूल चक्रवातो के बीच मे दबाव होने से हवाये मध्यवर्ती ठंढे स्थान से बाहरी सूखे गरम स्थानो की ओर चलती है जिससे वे ऊपर की ओर चढने नही पाती है और इसी मे वर्षा भी नही होती फलत आकाश स्वच्छ और ऋतु सुहावनी रहती है।

वायु-मण्डल मे वाष्प (Water Vapour in Atmosphere)

धरातल पर सूर्य की गर्मी के कारण भाप बनती रहती है। समुद्र, भील, नदी, तालाब, कुओ आदि मे से जल भाप के रूप मे बदल कर वायुमण्डल मे मिलता रहता है। यह भाप हवा मे मिलकर उसे आर्द्र बनाती है। तापक्रम के अनुसार हवा मे जितनी मात्रा मे भाप रह सकती है उतनी यदि हवा मे मौजूद हो तो उस हवा को

तापान्तर भेद ५° से १०° फा० तक ही रहता है किन्तु ऊँचे पहाडी स्थानों में तो ५०° फा० से भी कम तापक्रम पाया जाता है। वैसे सभी स्थानों का तापक्रम ७५° से १००° फा० तक रहना तो साधारण सी बात है। सभी महीनों का औसत तापक्रम ६५° फा० (१८°सै०) से अधिक रहता है। कई स्थानों पर दैनिक औसत तापक्रम भेद वार्षिक औसत तापक्रम भेद से भी अधिक रहता है। इन भागों में जलवायु में अन्तर पड जाने का मुख्य कारण यहां चलने वाली हवायें और वर्षा है। अर्द्ध-उष्ण-कटिबन्धीय भू-भागों में जलवायु में बडा अन्तर पड जाता है। ग्रीष्म में अधिक गर्मी और सर्दी में अधिक सर्दी पडती है।

उष्ण कटिबन्ध के अधिकांश भागों में व्यापारिक हवाओं का प्रभाव बहुत रहता है जो साल भर ही यहाँ निश्चित एकरूपता से चलती है। ये हवायें ठंडे स्थानों पर होकर आती है अतः इनमें वाष्प अधिक भर जाती है और जब स्थल के निकट आने पर इन्हे किसी पहाड को पार करने के लिए ऊँचा उठना पडता है तो वाष्प घनीभूत होकर वर्षा हो जाती है। इसी कारण व्यापारिक हवाओं की पेटी में स्थित ऊँचे पर्वतीय भागों में पूर्वी ढालों पर अत्यधिक वर्षा होती है किन्तु नीचे भाग



चित्र २१ उष्ण जलवायु खण्ड

अथवा पर्वतीय भाग के पश्चिमी ढाल शुष्क रह जाते है। यही कारण है कि दुनिया के अधिकांश मरुस्थल व्यापारिक हवाओं की पेटी में पश्चिम की ओर ही फैले है।

इन भागों की वर्षा में भी बहुत अन्तर हुआ करता है। कहीं पर इतनी कम वर्षा होती है कि सफलतापूर्वक खेती भी नहीं की जा सकती और कहीं ४००" से भी अधिक वर्षा हो जाती है। सबसे अधिक वर्षा ग्रीष्म में ही होती है। केवल भूमध्य रेखा के निकटवर्ती भाग को छोडकर जहाँ बिजली की कडक के साथ संवाहनिक वर्षा होती रहती है प्रायः प्रति दिन ही दोपहर के बाद वर्षा हो जाती है। अर्द्ध-उष्ण कटिबंधीय भागों में मानसून हवायें जलवायु पर बडा असर डालती है। मानसूनों से वर्षा तभी होती है जब वे किसी ऊँचे स्थान को पार करने के लिए ऊँची उठती हैं। यह वर्षा ग्रीष्म-काल में ही अधिक होती है। शीतकाल तो प्रायः सूखा ही बीतता है।

वर्षा (Rainfall)

वर्षा होने के लिए वायु का ठंढा होना आवश्यक है। गर्मी के कारण जल भागो का जल वाष्प बनकर उडता है, इस क्रिया को वाष्पीकरण (Evaporation) कहा जाता है। यह भाप घनीभूत (Condense) होने के लिए किसी एक विधि का सहारा लेती है :

(१) हवा ऊपर उठती है और किसी पर्वत-श्रेणी आदि से टकराकर ठंढी हो जाती है।

(२) आर्द्र हवा ठंढी हवा को स्पर्श करती है और स्वयं भी ठंढी हो जाती है।

(३) ठंढी हवायें गर्म हवाओं के सम्मेलन से तथा गर्म हवा का ठंढी हवा द्वारा धकेल दी जाने पर वह ठंढी हो जाती है।

(४) गर्म प्रदेशो से ठंडे प्रदेशो की ओर जाते-जाते वायु ठंढी हो जाती है।

जलवायु ठंढी हो जाती है तो वर्षा की सभावना भी बढ जाती है। अस्तु, वर्षा तीन प्रकार से हो सकती है —

(१) **चक्रवाती वर्षा** (Cyclonic Rains)—जब ठंढी और गर्म दो वायु राशियाँ आमने-सामने से आकर मिलती है तो गर्म हवा ठंढी हवा के सीमान्त मे घुसने का प्रयास करती है और ठंढी वायु द्वारा ऊपर की ओर धकेल दी जाती है। ऊपर उठने पर वह ठंढी होकर वर्षा प्रदान करती है। शीतोष्ण कटिबन्ध मे तथा भारत में शीतकालीन वर्षा इसी प्रकार होती है। उष्ण कटिबन्ध मे भी ऐसी वर्षा होती है। ऐसी वर्षा फुहारो के रूप मे होती है, विशेषकर पछुआ हवा की पेटियो मे क्योकि गरम हवा एक दम ऊपर को ओर नही चढती वरन् धीरे-धीरे और कुछ ठंढी होकर ऊपर की ओर चढती है।

(२) **संवाहनिक वर्षा** (Convectional Rains)—गर्म हवा हल्की होने से स्वभावत: ही ऊपर उठती है और फैलने के कारण उसका तापक्रम कम हो जाता है तथा उसकी भाप जल बिन्दुओं के रूप मे बदल जाती है और वर्षा होने लगती है। ऐसी वर्षा कम वायु भार वाले विषुवत् रेखीय प्रदेशो मे दोपहर के समय तथा ग्रीष्म ऋतु मे उत्तरी गोलार्द्ध के महाद्वीपों के भीतरी भागों मे होती है। यह बडी मूसलाधार होती है और थोड़ी ही देर के लिए होती है।

(३) **पार्वत्य वर्षा** (Relief Rainfall)—जब वायु किसी पर्वत को पार करने के लिये ऊपर उठती है तो वह ऊपर उठने मे ठंढी हो जाती है और पानी बरसता है। ऐसी वर्षा को पार्वत्य वर्षा (Relief Rains) कहते है। हवाये पहाडो के पवनमुखी ढाल (Windward) पर अधिक वर्षा करती है जब कि पवनविमुखी (Leeward Side) बिल्कुल सूखी रह जाती है। ऐसे भागो को वृष्टि-छाया प्रदेश (Rain Shadow area) कहते हैं। हिमालय के दक्षिणी ढाल और पश्चिमी घाटों पर इसी प्रकार की वर्षा होती है।

उपर्युक्त अवस्थाओं में अत्यधिक वर्षा होती है। सभी महीनों का औसत तापक्रम ६५° फा० से ऊँचा रहता है।

(२) इस प्रदेश की वायु मुख्य व्यापारी हवायें होती हैं जो ठंडे भागो से गरम भागो की ओर चलती हैं अत सूखी होती है, और इनसे वर्षा तभी होती है जब ये विवशतः ऊँची उठती है।

(३) कर्क और मकर अयन रेखाओ के सभी स्थानो मे साल मे दो बार सूर्य सिर पर रहता है — एक बार जब सूर्य विपुवत् रेखा के उत्तर की ओर तथा दूसरी बार उसके दक्षिण की ओर खिसकता है। अत. दो अत्यधिक और दो न्यूनतम तापक्रम तथा वर्षा के समय होते हैं।

(४) कुछ ठंडी सामुद्रिक धाराओ के कारण तटीय भागों का तापक्रम कम हो जाता है। फलस्वरूप वहाँ वर्षा भी कम होती है।

(५) उष्ण कटिबन्धो में तेज चक्रवात चलते हैं जिनसे अपार हानि होती है।

उष्ण कटिबन्धीय जलवायु धरातल के बड़े क्षेत्र पर पाई जाती है। यह क्षेत्र नई दुनिया मे मैक्सिको से लगाकर दक्षिणी फ्लोरिडा होता हुआ साओपाओ से गुजर कर पेरेग्वे के अन्तिम छोर पर होता हुआ चिली के अन्टैफोगेस्टा तक चला गया है। पुरानी दुनिया मे यह क्षेत्र दक्षिणी अल्जीरिया, मिश्र, उत्तर-पश्चिमी तथा दक्षिणी भारत, उत्तरी इन्डोनीज होता हुआ अफ्रीका के दक्षिणी भाग तथा उत्तरी मध्य आस्ट्रेलिया और पूर्वी द्वीप समूह तक फैला है।

उष्ण कटिबन्धीय प्रदेश मे निम्न जलवायु प्रदेश सम्मिलित किये गये हैं .—

(१) उष्ण कटिबन्धीय वर्षामय प्रदेश (Tropical Rainy Type)— इसके प्रतिनिधि प्रदेश गिन्नी तट, कांगो और अमेजन बेसीन हैं।

(२) सवन्ना जलवायु प्रदेश (Tropical Savanna Type)—इसके प्रतिनिधि प्रदेश सूडान, ब्राजील के उच्च प्रदेश और ओरीनीको बेसीन हैं।

(३) मानसूनी जलवायु प्रदेश (T·opical Monsoon Type)।

शुष्क जलवायु प्रदेश (Dry Climate Regions)

इस प्रकार की जलवायु की मुख्य विशेषता यह है कि यहाँ वर्षा कम होती है किन्तु वाष्पीभवन निरन्तर होता रहता है। इस जलवायु मे दो प्रकार के प्रदेश सम्मिलित हैं . (१) गर्म शुष्क मरुस्थल और (२) अर्द्ध-शुष्क अथवा स्टेपी प्रदेश। इसके अतिरिक्त ये विभाग निचले तथा मध्यम अक्षांशो में पाये जाते हैं। अत शुष्क अथवा उष्ण जलवायु मे (१) गर्म और निम्न अक्षांशो वाले मरुस्थल, (२) गर्म और निम्न अक्षांशो के स्टैपी; (३) शीतोष्ण अथवा मध्यम अक्षांशो के मरुस्थल तथा शीतोष्ण अथवा मध्यम अक्षांशो के स्टैपी सम्मिलित किये जाते हैं। डा० कुइपन के अनुसार आर्द्र और अर्द्ध-शुष्क प्रदेश के बीच सीमा निश्चित करने वाली वर्षा की मात्रा की आधी वर्षा शुष्क और अर्द्ध-शुष्क जलवायु के बीच की सीमा बनाती है।

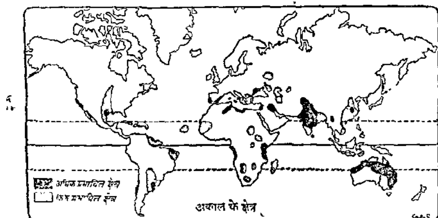
शुष्क जलवायु की तीन मुख्य विशेषतायें हैं :—

(१) अत्यधिक मौसमी तापक्रम।

(३) समुद्री तटों से ज्यों-ज्यों महाद्वीपों के भीतरी भागों की ओर जाते हैं वर्षा में कमी होती जाती है। महाद्वीप के भीतरी भागों (उदाहरणार्थ, गोबी का रेगिस्तान, मध्य एशिया, आस्ट्रेलिया और उत्तरी अमेरिका आदि) में समुद्र से दूर होने के कारण वर्षा बहुत कम होती है।

(४) उष्ण कटिबन्धीय भागों ४०° उत्तरी और ३५° दक्षिणी अक्षांशों के बीच में व्यापारिक हवाओं के चलने के कारण महाद्वीप के पूर्वी भागों (जापान, दक्षिणी पूर्वी एशिया, चीन) में अधिक वर्षा होती है। शीतोष्ण कटिबन्धीय भागों में ४५° और ६०° अक्षांशों के बीच में पछुआ हवाओं के कारण महाद्वीपों के पश्चिमी भागों (पश्चिमी द्वीप समूह, पश्चिमी यूरोप आदि में) पर अधिक वर्षा होती है। शीतोष्ण कटिबन्धों के चक्रवायु द्वारा उत्तरी और मध्य यूरोप तथा अमेरिका में भी कुछ वर्षा हो जाती है।

(५) भूमध्य महासागर के किनारे, दक्षिणी आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अमेरिका ग्रीष्म में व्यापारी हवाओं के मार्ग होने के कारण सूखे रहते हैं किन्तु सर्दी में ये प्रदेश पछुआ हवाओं के रुख में होने के कारण शीतकालीन वर्षा का उपभोग करते हैं।



चित्र २० अकाल के क्षेत्र

(६) भूमध्य रेखा पर संवाहनिक वर्षा होती है किन्तु शीतोष्ण कटिबन्ध के अक्षांशों में प्रायः चक्रवातिक वर्षा होती है।

(७) ग्रीष्म में समुद्र के अधिक भार वाले स्थानों से आने वाली मानसूनी हवाओं द्वारा भारत, चीन, जापान, इन्डोचीन में वर्षा होती है। इन भागों में वर्षा की कमी के कारण अकाल पड़ जाते हैं। संसार के प्रमुख अकाल क्षेत्र ऊपर के चित्र में बताए गए हैं।

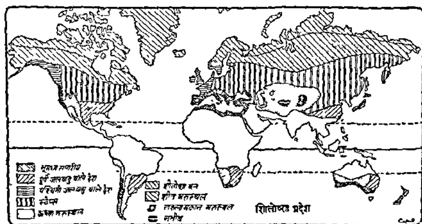
(८) उष्ण कटिबन्ध के चक्रवातों द्वारा हिन्द महासागर के तटीय भागों पर भी जिनका प्रभाव फिलीपाइन द्वीपों और जापान तक पहुँचता है, वर्षा होती है।

४ महीने तक तापक्रम हिमांक बिन्दु से नीचे गिर जाता है। वर्षा का औसत २०" से ३०" तक होता है। किन्तु स्थिति भिन्नता और अक्षांश रेखीय विस्तार के कारण इसमें स्थानीय भेद उत्पन्न हो जाते हैं। अतः गर्म शीतोष्ण प्रदेशों (Warm Temperate Regions) की आर्द्र समताप जलवायु के तीन उप विभाग किए गए है जो ३०° और ४५° अक्षांशों के बीच में स्थित है—

(१) शुष्क ग्रीष्म ऋतु वाली अर्द्ध-उष्ण (Dry Summer Sub-tropical) अथवा 'भूमध्य सागरीय जलवायु प्रदेश' जिनके अन्तर्गत द० प० आस्ट्रेलिया, मध्यवर्ती चिली, भूमध्य सागरीय तटीय प्रदेश, और दक्षिणी कैलीफोर्निया सम्मिलित है। इनमें ६ से ८ महीने तक तापक्रम ६५° फा० से कम रहते है तथा वर्षा २०" से कम होती है। यह मुख्यतः ठंडी ऋतु होती है। ग्रीष्म ऋतु वर्षा विहीन होता है।

(२) आर्द्र अर्द्ध उष्ण (Wet Sub-tropical) अथवा चीन तुल्य जलवायु—इसमें प्लेट-नदी का क्षेत्र, द० पूर्वी स० राज्य और दक्षिणी चीन सम्मिलित है। यहाँ ४ से ६ महीने तक तापक्रम ६५° फा० से कम रहता है तथा वर्षा ३०" से ऊपर होती है। कभी पाला भी पड़ जाता है।

(३) पश्चिमी समुद्रतटीय (Marine West Climate) या पश्चिमी यूरोप तुल्य जलवायु प्रदेशों में पश्चिमी प्रशांत का ब्रिटिश कोलंबिया तट, द० चिली और यूरोप के पश्चिमी तटीय देश है। औसत तापक्रम ३६° फा० से कम रहता है तथा वर्षा साल भर ही होती है।



चित्र २२ शीतोष्ण जलवायु खण्ड

आर्द्र निम्नताप जलवायु (The Humid Microthermal Climates)

इस प्रकार की जलवायु की विशेषता यह है कि इसमें तापक्रम कम होता है। यह जलवायु कठिनतम होती है जिसमें शीत ऋतु बहुत ठंडी और पाले का मौसम बहुत घना तथा लम्बा होता है। वार्षिक तापान्तर भी अधिक होता है—साधारणतः ४५° फा० से ५५° फा० तक। वायुमंडल में अधिक सापेक्ष आर्द्रता होने के कारण ग्रीष्म ऋतु में सड़ी गर्मी और दुखदायी मौसम होता है। किन्तु इस प्रकार का मौसम केवल

वार्षिक औसत तापक्रम हो तथा k का अर्थ ठंढा, जहाँ ६४४° फा० से कम वार्षिक औसत तापक्रम होता है। इस प्रकार यह चिन्ह क्रमशः निम्न अक्षांश के मरुस्थल (शुष्क), निम्न अक्षांश के स्टेपी (अर्ध शुष्क), मध्य अक्षांशीय मरुस्थल (शुष्क) और और मध्य अक्षांशीय स्टेप (अर्ध शुष्क) प्रदेशों को प्रकट करते हैं।

C जलवायु के निम्नलिखित उपविभाग हैं : (Cs) यहाँ s का अर्थ ग्रीष्म में शुष्क ऋतु, जैसे भूमध्यसागरीय या शुष्क ग्रीष्म जलवायु है। cfa तथा cwa यहाँ f का अर्थ सबसे अधिक गर्म माह का तापक्रम ७१.६° फा० के ऊपर तथा w का अर्थ जाड़े में शुष्क ऋतु से है, जैसे उपोष्ण-आर्द्र जलवायु (चीन तुल्य या वर्गीकरण की दूसरी प्रथा के अनुसार सम-शीतोष्ण मानसून जलवायु) तथा cfb जलवायु पश्चिमी तट की समुद्री जलवायु है जो पछुआ हवाओं की पेटी में ही लगभग ४०° अक्षांश से ध्रुवों की ओर बढ़ती है। c प्रकार की जलवायु के गौण उपविभाग csb तथा csa हैं जिनमें भूमध्य सागरीय जलवायु के क्रमशः समुद्री तथा स्थलीय प्रकार आते हैं। ऐसी जलवायु मध्य चिली और कैलिफोर्निया के भीतरी भाग में पाई जाती है। cw का अर्थ आर्द्र-उपोष्ण भागों में जाड़े के शुष्क क्षेत्रों से है—जैसे दक्षिणी चीन के भीतरी भाग में (यह उष्ण मध्य ना के उच्च प्रदेशों में भी दिखाई पड़ता है जैसे पूर्वी अफ्रीका और ब्राजील में)।

D प्रकार की जलवायु या महाद्वीपीय आर्द्र जलवायु के निम्नलिखित उपविभाग हैं : Dfa, Dwa (लम्बी ग्रीष्म ऋतु), Dfb तथा Dwb (छोटी ग्रीष्म ऋतु) Dfa और Dwa जलवायु के अन्तर्गत यूरोप और उत्तरी अमेरीका के वे क्षेत्र आते हैं जहाँ संसार की व्यावसायिक फसल मक्का उगायी जाती है। इसीलिये इसे मक्का **की पेटी की जलवायु** कहते हैं। इसी प्रकार Dfb और Dwb जलवायु को बसन्ती गेहूँ की जलवायु कहते हैं। यह उत्तरी अमरीका में संयुक्त राज्य तथा दक्षिणी कनाडा में १००° देशान्तर के पूर्व में पायी जाती है। यह यूरेशिया में स्टेपी क्षेत्र को शामिल करती है। उप-आर्कटिक जलवायु (टैगा) Dfc, Dwc और Dwb है। यहाँ c का अर्थ एक माह तक ५०° फा० से ऊपर तापक्रम वाली ठंढी ग्रीष्म ऋतु, और b का अर्थ ठंढा जाड़ा जिसमें सर्वाधिक ठंढे माह का तापक्रम ३६.४ फा० से कम हो।

E प्रकार की जलवायु दो प्रकार की होती है। Et या टुन्ड्रा जलवायु और बर्फीली पठार की जलवायु तथा Ef जलवायु जिसमें सर्वाधिक गर्म माह का तापक्रम ३२° फा० कम रहता है। अन्तिम प्रकार की उच्च प्रदेशीय जलवायु है जिसमें अधिक तापान्तर पाया जाता है।

उष्ण कटिबन्धीय वर्षा पूर्ण जलवायु (Tropical Rainy Climate)

उष्ण कटिबन्धीय जलवायु वाले क्षेत्र ४०° उत्तरी और दक्षिणी अक्षांशों तक फैले माने जाते हैं। उष्ण कटिबन्धीय और अर्द्ध उष्ण कटिबन्धीय (Subtropical) भू-भागों का जलवायु लगभग वर्ष भर समान रहता है और थोड़े बहुत जो भी परिवर्तन होते हैं (केवल उष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों को छोड़कर) वे भी निश्चित अन्तर से ही होते हैं। ये भाग विषुवत् रेखा के अत्यन्त निकटवर्ती हैं अतः अधिक गर्म रहते हैं। अत्यन्त ऊँचे भागों को छोड़कर कहीं पाला नहीं पड़ता। शीत ऋतु साधारणतया ठंढी और ग्रीष्म ऋतु अधिक गर्म होती है। इन भागों में समुद्र का प्रभाव भी अधिक पड़ता है। अतः कई भू-भागों की जलवायु सामुद्रिक कही जा सकती है जहाँ वार्षिक

टुन्ड्रा प्रदेशों में वर्ष के अधिकतम भाग में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ने के कारण शरद ऋतु लम्बी और ग्रीष्म ऋतु बहुत छोटी होती है। शीत ऋतु में तापक्रम बहुत नीचे हो जाते हैं तथा अनेक क्षेत्रों में ५० फीट मोटी बरफ जम जाती है। औसत तापक्रम ४०° फा० से ५०° फा० तक रहता है। वर्षा की मात्रा ५" से १५" तक होती है विशेषत तटीय भागों में। इसके प्रतिनिधि प्रदेश उत्तरी अमरीका के उत्तरी भाग तथा उत्तरी साइबेरिया हैं।



चित्र २३. शीत जलवायु खण्ड

विशिष्ट हिम आवरण प्रदेश (Ice-Cap Type) उत्तरी और दक्षिणी दोनों ही गोलार्द्धों में पाये जाते हैं। यहाँ तापक्रम २१°फा० से २५.६°फा० तक रहता है। इसके अतिरिक्त यहाँ तीव्र तूफानी हवायें निरन्तर चलती रहती हैं। ग्रीनलैंड और कनाडा इस प्रदेश के मुख्य क्षेत्र हैं।

कुछ विशेष प्रकार की जलवायु इस प्रकार हैं —

पर्वतीय जलवायु (Mountain Climate)

यह मुख्यतः ऊँचे भागों में पाई जाती है। यहाँ ऊँचाई के साथ-साथ तापक्रम और वायुभार कम होता जाता है। वर्षा की मात्रा वायु की दिशाओं द्वारा प्रभावित होती है। पवनमुखी ढालों पर अन्य ढालों की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है। ज्यों-ज्यों ऊँचे चढ़ते हैं शीतऋतु कठोर और लम्बी होती जाती है और कई अंशों में जलवायु ध्रुवीय प्रदेश से मिलती जुलती होती है। पठारी भागों में जलवायु समान सा रहता है किन्तु निम्न भागों की अपेक्षा न्यून रहता है। लेह का सबसे ठंडे महीने का तापक्रम १७° फा० तथा सबसे गर्म महीने का तापक्रम ६१°फा० रहता है तथा वर्ष का औसत तापक्रम ४१° फा०। इसके विपरीत बोगोटा के ये तापक्रमांक क्रमश: ५८° फा०, ५६ फा० और ५०° फा० रहते हैं। इन दोनों की वर्षा का योग क्रमश: ३.२" और ६३.४" होता है।

उष्ण-कटिबन्धीय देशों में चक्रवातों का प्रभाव और इनसे धन-जन की हानि भी बहुत होती है। इनका जन्म भूमध्य रेखा के शान्त खण्डों में होता है। इनका मार्ग अधिकतर उत्तर-पश्चिम की ओर ही रहता है। ये केवल गर्मी में ही भीतरी देशों में प्रवेश करते है और अपना प्रभाव दिखाते हैं। ये चक्रवातों से कई बातों में भिन्न होते हैं। इनका क्षेत्र सीमित तथा ढाल-ढाल तेज होती है और इनसे वर्षा भी अधिक होती है, किन्तु ये बड़े विनाशकारी होते हैं।[१६]

उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात विषुवत् रेखा तथा १५° अक्षांश के बीच व्यापारिक हवाओं के साथ पश्चिम की ओर मुड जाते हैं। १५° और ३०° के बीच इनका पथ अनिश्चित होता है। लेकिन ये उत्तरी गोलार्द्ध मे उत्तर की ओर चलते है और दक्षिण गोलार्द्ध मे दक्षिण की ओर। ३०° अक्षांश को पार करते ही यह पूर्व की ओर मुड़ जाते है और इनकी शक्ति भी कम होने लगती है।

उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात के प्रधान क्षेत्र ये है —

क्षेत्र	चक्रवातों की संख्या
पश्चिमी उत्तरी प्रशान्त महासागर	३०
दक्षिणी हिन्द महासागर	१३
आस्ट्रेलिया के उत्तरी पूर्वी तथा उत्तरी पश्चिमी तटीय प्रदेश	१३
बंगाल की खाड़ी	८
पश्चिमी द्वीप समूह	५
अरब सागर	४

नीचे की तालिका मे उष्ण-कटिबन्धों मे स्थित भिन्न-भिन्न अक्षांशों पर पाये जाने वाले सर्वोच्च और सर्वन्यून तापकम, वर्षा तथा आर्द्रता की मात्रा बताई गई है :—[१७]

उत्तरी और दक्षिणी अक्षांश	सर्वोच्च तापक्रम	सर्वन्यून तापकम (फा० मे)	मेघाच्छन्नता (प्रतिशत)	वर्षा (इंचो मे)
०°—१०°	६७°	६५°	४२%	६८″
१०°—२०°	६६°	६५°	४०%	४०″
२०°—३०°	१०७°	४५°	३४%	२५″
३०°—४०°	६८°	२७°	४०%	२४″

उष्ण-कटिबन्धीय जलवायु की विशेषतायें ये है :—

'(१) इस भाग मे साल भर ही सूर्य की किरणें प्राय. सीधी पड़ती है अतः तापक्रम ऊँचा रहता है। इसी कारण वाष्पीभवन क्रिया भी अधिक होती है और

16. *P. Lake*, **Physical Geography,** 1952, p. 133.
17. *C. E. Brooks*, **Climate, p.** 115.

प्रश्न

१. दैनिक और वार्षिक तापक्रम पर प्रभाव डालने वाले कारणों को बताइये।

२. उन अवस्थाओं का वर्णन करिये जिनके कारण मानसूनी हवायें उत्पन्न होती हैं। इन हवाओं का क्या प्रभाव पड़ता है ?

३. चक्रवायु से आप क्या समझते हैं ? इनमें किस प्रकार का मौसम पाया जाता है ?

४. "किन्हीं भी मौसम सम्बन्धी अवस्थाओं का इतना अधिक प्रभाव नहीं पड़ता जितना कि भारतीय मानसून का" इसे समझाइये।

५. पृथ्वी के धरातल पर पाई जाने वाली वायु प्रणालियों का वर्णन करिये और इनके उत्पन्न करने वाले कारणों पर प्रकाश डालिये।

६. मानसून और चक्रवातों की उत्पत्ति के कारणों पर प्रकाश डालते हुए बताइये कि आर्थिक अवस्थाओं पर इनका क्या प्रभाव पड़ता है ?

७. पृथ्वी के धरातल पर सूर्य-ताप के वितरण का वर्णन करिये।

(२) अधिक वार्षिक और दैनिक तापक्रम।

(३) कम आर्द्रता तथा कम वनस्पति के कारण सूर्यताप की अधिकता।

पृथ्वी के धरातल की अवस्थाओ से किसी प्रकार रुकावट न पडने के कारण हवायें प्रबल होती है विशेषत: दिन के समय। वर्षा बहुत कम होती है और प्रत्येक वर्ष अत्यधिक बदलती रहने के कारण इसकी मात्रा अनिश्चित होती है। यहाँ सापेक्ष आर्द्रता कम किन्तु वास्तविक आर्द्रता अधिक होती है। हवायें संतृप्त नही होने पाती अत. यहाँ सूर्य का प्रकाश अधिक होता है और मेघाच्छन्नता बहुत ही कम।

इस जलवायु के अन्तर्गत (१) गरम अथवा निचले अक्षाशो वाले मरुस्थल (Warm or Low Latitude Deserts) है। जैसे सहारा, अरब, अटकामा और आस्ट्रेलिया का मरुस्थल। इनमे वर्षा १०" से भी कम होती है और वनस्पति का अभाव रहता है।

(२) निम्न अक्षाशो की या गर्म स्टैपी प्रदेश (Low Latitude or Warm Steppe Type) मे उत्तरी सूडान, कालाहारी, आस्ट्रेलिया के स्टैपी प्रदेश है। इनमे वर्षा बहुत थोड़ी होती है।

(३) मध्य अक्षाशीय अथवा शीतोष्ण मरुस्थल प्रदेश (Middle Latitude or Temperate Deserts) जिसमे दक्षिणी कैलीफोर्निया का मोजेव तथा मंगोलिया का गोबी मरुस्थल सम्मिलित है। यहाँ वर्षा ६" से भी कम होती है।

(४) मध्य अक्षाशीय अथवा शीतोष्ण स्टैपी प्रदेश (Middle Latitude or Temperate Steppe)—इनके अन्तर्गत दक्षिण-पूर्वी रूस के स्टैपी और संयुक्त राज्य के बड़े मैदान सम्मिलित है। इनमे वर्षा ६" से १०" तक होती है अत. वनस्पति छोटी घास या भाडियो की होती है।

तर समताप जलवायु (Humid Mesothermal Climate)

इस प्रकार की जलवायु शीतोष्ण प्रदेशो मे पाई जाती है तथा इसकी विशेषता यह है कि यहाँ अत्यधिक गरम और ठढा तापक्रम नही पाया जाता। इसमे सामान्य ऋतुयें होती हैं। इस प्रकार की जलवायु के प्रदेश या तो मध्यवर्ती अक्षाशो के विषुवत् रेखा की ओर वाले किनारो पर है या ध्रुवो की ओर वाले क्षेत्रो मे समुद्र तट के समीप पाये जाते है। इस जलवायु मे उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो की अपेक्षा भी अधिक विरोधाभास पाया जाता है। महाद्वीपो के भीतरी भागो मे शीतऋतु बड़ी कठोर और ग्रीष्मऋतु बहुत गरम होती है। पश्चिम तटीय भागो मे सामुद्रिक प्रभाव के कारण जलवायु मौतदिल होता है किन्तु पूर्वी तटीय भागो मे स्थलीय हवायें चलने के कारण शीत ऋतु मे कडी सर्दी और ठढी गर्मियाँ होती है। इस प्रदेश की जलवायु पर सामुद्रिक प्रभाव अधिक पडता है। क्यूरोसीवो तथा गल्फस्ट्रीम की गरम धारायें और लैब्रेडोर तथा साखालीन की ठढी धारायें जलवायु को बड़ा प्रभावित करती है। इनके कारण शीतकाल मे भी नार्वे के फियोर्ड खुले रहते हैं जबकि सैंट लारेंस नदी इस समय जम जाती है। चक्रवातो का भी इस जलवायु पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। इनके कारण मौसम मे बड़ी अनियमितता आ जाती है जिनके कारण कभी मौसम एक दम गरम और कभी एक दम ठंडा हो जाता है। इस जलवायु में सबसे ठढे महीने का तापक्रम ४३° फा० से ऊपर किन्तु ६५° फा० से नीचे रहता है। शीत ऋतु मे १ से

कभी-कभी विश्व की जनसख्या को वन-प्रदेशीय और ध्रुवीय आदि भागो में बाँट देते है। इन प्रदेशों और वहाँ के मनुष्यो में सीधा सबध पाया जाता है। "'सच तो यह है कि वनस्पति का प्रकार तथा उसका होना ही एक प्रदेश की सबसे मुख्य विशेषता है।"

वनस्पति की भौतिक आवश्यकतायें

जलवायु और मिट्टी के अन्तर्सम्बन्ध से वनस्पतियाँ उगती है। जलवायु की मुख्य बातें, जिनका प्रभाव इन पर पडता है, निम्नलिखित हैं :—

(१) ताप
(२) जल
(३) प्रकाश
(४) पवन
(५) मिट्टी

(१) ताप (Temperature)—प्रत्येक प्रकार की वनस्पति के पूर्ण विकास के लिए एक निश्चित मात्रा मे तथा निश्चित काल तक के लिए ताप की आवश्यकता होती है। साधारणतः ४०° से ५०° फा० का ताप सभी वनस्पतियो के लिए आवश्यक है, इससे कम ताप में उनका शारीरिक विकास और कार्य बन्द हो जाते है। इसी कारण शीत प्रदेशो मे वनस्पति का विकास रुक जाता है और केवल छोटी झाडियो का ही रूप मिलता है किन्तु सहारा की मरुभूमि मे अधिक ऊँचे तापक्रम के कारण वनस्पति की एक ऐसी जाति होती है जिसमे जड का ही अधिक विकास होता है। इन स्थानों की वनस्पतियों मे पत्तियाँ तो कम तथा छोटी रहती है तथा बिल्कुल ही नही होती परन्तु जडें बहुत लम्बी और दूर तक फैलने वाली होने के अलावा प्राय मोटी ही होती हैं अर्थात् इन स्थानों मे अधिकतर वनस्पतियाँ भूमि के नीचे छिपी रहती है। किन्तु टुन्ड्रा जैसे प्रदेशो मे जहाँ भूमि बर्फ से ढकी रहती है और ताप बहुत कम होता है वनस्पति की एक ऐसी जाति होती है जिसका विकास मुख्यतया भूमि के ऊपर ही अधिक होता है। यहाँ की वनस्पतियों मे जड तो नही किन्तु पत्तियो की प्रधानता होती है। इन वनस्पतियों की जडें बहुत ही छोटी और पतली होती हैं और अधिकतर भूमि के ऊपर ही फैलती है क्योकि इन स्थानो मे बर्फ का उपरी भाग ही पिघलता है। नीचे के भाग मे बर्फ बराबर जमी रहती है जिससे उसमें जडें नही घुस सकती। मोस और लिचेन (Moss & Lichen)—एक प्रकार की वनस्पति—इस प्रकार की वनस्पतियो के मुख्य उदाहरण है।

इसी प्रकार अति-उष्ण कटिबन्ध के चौडी पत्तियो वाले तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के नुकीली पत्तियों वाले पेडो की भिन्नता भी न्यूनाधिक ताप ही के कारण होती है। वनस्पतियो के जीवन मे ताप का महत्व इस बात से भी जाना जाता है कि पृथ्वी के अधिकांश भागो मे वनस्पतियाँ गर्मी मे ही (अर्थात् उस समय मे ही जब ताप काफी होता है) बढती है। जिस समय जाडा आ जाता है (अर्थात् ताप काफी नहीं रहता), उस समय ये नही बढती। सुप्तावस्था मे यूरोप के ठंढे देशो मे जाडे के दिनो मे घास नही

तटीय प्रदेशों में ही पाया जाता है; आंतरिक भाग शुष्क होते हैं। इन प्रदेशों पर मेंढूंआ हवाओं का प्रभाव होता है। यद्यपि वर्षा सर्दियों में ही होती है। गर्मी में वर्षा वाहनिक होती है और तेज बौछारों के रूप में होती है किन्तु शरद ऋतु में यह चक्रवातीय होती है और वर्षा के रूप में होती है।

इस प्रकार की जलवायु उन प्रदेशों में पाई जाती है जो अधिकतर ध्रुवों की ओर या महाद्वीपों के अत्यधिक आन्तरिक भागों में या या पर्वत श्रेणियों के अत्यधिक वायु विमुख भागों की ओर स्थित है। इस जलवायु के प्रदेश दक्षिण की ओर आर्द्र अथवा शुष्क आर्द्र उष्ण जलवायु के प्रदेशों और उत्तर की ओर अर्द्ध ध्रुवीय अथवा टैगा तुल्य जलवायु प्रदेशों के बीच में स्थित है। उत्तरी अमरीका और यूरेशिया में ३५° अथवा ५०° अक्षांशों से ध्रुवों की ओर इस जलवायु का विस्तार है। ज्यों-ज्यों हम महाद्वीपों के पश्चिमी किनारों से आन्तरिक भागों की ओर बढ़ते हैं त्यों-त्यों सागरीय अथवा तटीय जलवायु के स्थान पर अधिक विषम महाद्वीपीय जलवायु मिलती है। उत्तरी अमरीका में पर्वत श्रेणियों के तटों के समानान्तर होने के कारण पश्चिमी तटीय जलवायु से महाद्वीपीय जलवायु में परिवर्तन तीव्र एवं आकस्मिक होता है। यूरोप और एशिया में यह बहुत क्रमशः होता है। इसी प्रकार यदि उत्तरी अमरीका तथा एशिया में आर्द्र महाद्वीपीय जलवायु के दक्षिण में चीन तुल्य जलवायु है तो यूरोप में इसके दक्षिण में भूमध्य सागरीय जलवायु मिलती है।

चूंकि यह जलवायु महाद्वीपीय है तथा इस पर स्थल का बहुत प्रभाव पड़ता है अतः यह अधिकतर उत्तरी गोलार्द्ध में ही पाई जाती है जहाँ स्थल समूह की अधिकता है। यह जलवायु महाद्वीपों के आन्तरिक और पूर्वी किनारों तक ही सीमित है।

स्थानीय दशाओं के अनुसार इस जलवायु के तीन मुख्य विभाग किये जा सकते हैं :—

(१) आर्द्र महाद्वीपीय प्रदेश (Humid Continental Regions), जहाँ ग्रीष्म ऋतु छोटी होती है, या बसन्त ऋतु के गेहूँ के प्रदेश (Spring Wheat Belt Type)।

(२) आर्द्र-महाद्वीपीय प्रदेश—जहाँ ग्रीष्म ऋतु लम्बी होती है—या मक्का उत्पादक पेटी तुल्य (Corn Belt Type) या मध्य यूरोप तुल्य प्रदेश।

(३) परिवर्तित आर्द्र महाद्वीपीय जलवायु अथवा न्यू इङ्गलैण्ड तुल्य प्रदेश।

अर्द्ध आर्कटिक जलवायु (Sub-Polar Climate)

अर्द्ध-आर्कटिक अथवा टैगा तुल्य जलवायु महाद्वीपीय जलवायु का विषम रूप है। इसके प्रतिनिधि प्रदेश फिनलैंड, उत्तरी रूस, साइबेरिया मध्य अलास्का तथा मध्य कनाडा है। इस प्रदेश में शरद ऋतु बहुत लम्बी और ठंडी होती है और ग्रीष्म ऋतु छोटी होती है। औसत तापक्रम लगभग ५०° फा० तक रहते हैं किन्तु ४ महीने तक यह हिमांक से भी कम रहता है। वर्षा बहुत ही कम (२०" के लगभग) होती है विशेषकर गर्म महीनों में।

ध्रुवीय जलवायु (Polar Climate)

यह जलवायु ६०° से ९०° अक्षांशों के बीच मिलती है। यह जलवायु बहुत कठिनतम एवं दुखदायी है। इसमें दो प्रकार की जलवायु मिलती है: (१) टुन्ड्रा प्रदेशीय, तथा (२) हिम आवरण तुल्य।

का साधन है। जहाँ कही प्रकाश कम रहता है वहाँ भोजन मे कमी हो जाने के कारण वनस्पतियाँ कम पाई जाती है। पत्तियो मे जो हरा रंग होता है वह इसी प्रकाश के कारण है। यह हरे रग वाला पदार्थ वायु मे मिली हुई कार्बन-डाइ-आक्साइड गैस तथा प्रकाश द्वारा बनता है। इसी से पेड को शक्कर भी मिलती है। जब किसी पेड को प्रकाश कम मिलने लगता है तब उसकी पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं और वह सूख जाता है क्योकि उस हालत मे हरा रग (Chlorophyl) कम बनता है।

प्रकाश सूर्य की किरणो से उत्पन्न होता है। अतएव अधिक देर तक सूर्य की किरणो के रहने से ताप की मात्रा भी अधिक हो जाती है। इस अधिक प्रकाश और उसके साथ ही अधिक ताप होने के कारण ही गरमी मे ध्रुवो के बहुत निकट तक भी काफी वनस्पतियाँ उग आती है। जहाँ वनस्पति उगने का मौसम छोटा होता है किन्तु प्रकाश अधिक समय तक मिले तो वहाँ भी पेड-पौधे उग आते है। उदाहरण के लिए फिनलैंड और नार्वे के उत्तर मे जौ ८६ दिनो मे ही पक जाता है किन्तु स्वीडेन मे ५५° उत्तरी अक्षाशो के निकट इसे पकने में १०० दिन लग जाते है।[3]

(४) पवन (Winds)—पवन भी वनस्पतियो के लिए एक उपयोगी तत्व है। वायु मे रहने वाली एक गैस विशेष से ही वनस्पतियो को एक प्रकार का भोजन मिलता है। इसके अतिरिक्त पवन वर्षा का कारण है जिस वनस्पतियो को जल मिलता है किन्तु सहायता मिलने की अपेक्षा कभी-कभी पवन से वनस्पतियो को हानि भी होती है। यह हानि पेडो को तोड डालने तथा उसके जल को सुखा डालने से होती है। पवन का मुख्य प्रभाव वनस्पतियो मे उपस्थित जल की मात्रा को कम करना है। पेडो के जल को पवन उनकी पत्तियो द्वारा उडा ले जाता है। जितनी ही अधिक सूखी और गरम पवन होती है उतना ही अधिक जल वह पेडो से सोख लेती है। उसी तरह जितनी ही बडी पत्ती होती है उससे उतना ही अधिक जल पवन उडा सकती है। लेकिन जहाँ वायु मे जल अधिक रहता है अथवा पत्तियाँ छोटी होती हैं वहाँ पवन पेडो से बहुत कम जल उड़ा सकती है। यही कारण है कि अत्युष्ण कटिबंध मे जहाँ पर वायु और पेडो मे जल की मात्रा अधिक रहती है पेडो की पत्तियाँ बहुत चौडी होती है जिससे पेड का काफी जल वायु मे उड जाता है। लेकिन शीतोष्ण कटिबन्ध मे जहाँ वायु और पेड दोनो में जल की मात्रा कम रहती है पेडो की पत्तियाँ नुकीली होती हैं और कम चौडी होती है जिससे पेडो से अधिक जल हवा मे नही आ सकता। शीतोष्ण कटिबन्ध में ही जहाँ कही चिकनी मिट्टी या पेड होते है वहाँ उन पेड़ो की पत्तियाँ चौडी होती हैं क्योकि चिकनी मिट्टी मे पानी को मात्रा अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त जहाँ कही स्थायी पवन अधिक वेग से चला करती है वहाँ ऊँचे पेड नहीं उग सकते हैं। आरकने द्वीप के पश्चिमी भागो में पवन के ही कारण पेड नही पाये जाते। साइबेरिया में वृक्ष ७२° उत्तरी अक्षांश तक उग सकते है किन्तु अल्युसीयन द्वीपो में केवल ५०° उत्तरी अक्षाश तक ही।

(५) मिट्टी (Soil)—वनस्पतियो पर ताप और जल का जो प्रभाव पडता है उसे मिट्टी का प्रभाव कम कर देता है। मिट्टी से ही वनस्पतियो को भोजन मिलता है। मिट्टी में मिले हुए अनेक प्रकार के नमक पानी में घुलकर वनस्पतियो के भोजन

3. *Andrews*, **Text Book of Geography**, p. 68.

महाद्वीपीय जलवायु (Continental Climate)

इस प्रकार की जलवायु मध्य अक्षांशों में पाई जाती है। इसमें तापक्रम भेद अधिक रहता है। ग्रीष्म काल या दिन के समय तापक्रम १००° फा० तक बढ़ जाते हैं तथा शीत ऋतु या रात के समय ये ३०° फा० तक हो जाते हैं। ज्यों-ज्यों समुद्र दूर होते जाते है, न केवल ग्रीष्म और शीत ऋतु अधिक कठोर होती जाती है वरन् बसन्त कुछ गरम और पतझड़ कुछ ठंडी होती है। समुद्र से दूरी बढ़ने पर वर्षा की मात्रा में कमी होती जाती है। वायु में आर्द्रता की कमी रहती है तथा मेघाच्छन्नता भी कम होती है। *उत्तरी अमरीका के मध्यवर्ती और पूर्वी भाग तथा यूरोप और* एशिया के मध्यवर्ती भाग इसी प्रकार की जलवायु वाले हैं।

सामुद्रिक जलवायु (Maritime or Oceanic Climate)

इस प्रकार की जलवायु समुद्रतटीय भागों में विशेषकर मध्य अक्षांशों के पश्चिमी तटीय भागों में होती है। सामुद्रिक प्रभाव के कारण दैनिक तथा सामयिक तापक्रम भेद कम रहते हैं। *ग्रीष्म ऋतु ठंडी और शीत ऋतु मध्यम होती है।* वायुमंडल में आर्द्रता और मेघों की मात्रा अधिक होती है। वर्षा पर्याप्त और वर्ष भर ठीक प्रकार वितरित रहती है।

इस प्रकार स्पष्ट होगा कि तापक्रम तथा वर्षा के अनुसार विश्व को कई जलवायु भागों में बाँटा जाता है। निम्न तालिका में इन जलवायु क्षेत्रों संबंधी आवश्यक आँकड़े प्रस्तुत किये गये हैं।—[18]

क्षेत्र या कटिबन्ध	स्थान	जलवायु का प्रकार	अक्षांश	ठंडे महीने का औसत तापक्रम (फा० में)	गर्म महीने का औसत तापक्रम (फा० में)	तापक्रमान्तर	वर्षा (इंचों में)
उष्ण कटिबन्ध	१. वादी हल्फा	महाद्वीपीय	२१ उ०	६१ ३	९३ ४	३२'१	—
	२. होनोलूलू	सामुद्रिक	२१ उ०	७० ०	७७ ५	७ ५	—
अर्द्ध-उष्ण	१ बगदाद	महाद्वीपीय	३३ उ०	५० ९	९२ ८	४१ ९	७'१
कटिबन्ध	२ बरमूदा	सामुद्रिक	३२ उ०	६१ ७	८० १	१८'४	—
शीतोष्ण	१ विनीपेग	महाद्वीपीय	५०° उ०	० ५	७२	७१'५	—
कटिबन्ध	२ सैमीपैलेसिक	,,	५०° उ०	−१५ ९	६६ ४	८२'३	७'३
	३ सिसलीद्वीप	सामुद्रिक	४९° उ०	४५ ७	६१ २	१५ ५	—
	४. माघाशिलयन द्वीप	,,	५०° उ०	− ० ४	६२ २	६२'६	—
ध्रुव प्रदेश	१. साकूटस्क			−१०'०	६६ ०	७६'०	१३'७
	२. एल्बर्टा			− ४'०	६०'०	६४'०	१२'३
	३. स्पिट्जबर्गेन			− २	४०'०	४२ ०	११ ८

18. Compiled from G. *Ward's*, **Climate.**

(२) घास के मैदान (Grasslands)

(३) मरभूमियाँ (Deserts)।

इन खण्डो को निर्धारित करने मे वनस्पतियो की मात्राओ और उनके आकारो पर ही ध्यान रखा गया है। वन खण्डो मे वनस्पतियो की बहुतायत का पता पेड़ो की सघनता तथा उनके आकारो मे लगता है। घास के मैदानो मे वनस्पतियो की कमी प्रायः पेडो की अनुपस्थिति से ही लग जाती है। मरभूमि मे तो जहाँ-तहाँ ही वनस्पतियाँ दिखाई पडती हैं और उनकी मात्रा भी बहुत कम होती है।

(१) वन-खण्ड (Forests)

वन अधिकतर ससार के उन भागो मे पाये जाते हैं जहाँ वर्षा साल भर होती ही रहती है अथवा वर्ष की किसी ऋतु मे घनी हो जाती है अथवा जिनकी मिट्टी पर जाडे की गिरी हुई बर्फ पिघलकर यथेष्ट नमी प्रदान कर देती है। अतः सघन वनों की उत्पत्ति के निमित्त ऊँचा तापक्रम और घनी वर्षा होना आवश्यक है। वन उन्हीं क्षेत्रों मे अच्छे उग सकते हैं जहाँ ग्रीष्म के ४ महीनों मे (उत्तरी गोलार्द्ध मे) औसत तापक्रम ५०° फा० से नीचे नही जाता है और जहाँ इसी अवधि मे वर्षा २″ से ऊपर होती है।[५] इन अवस्थाओं के अनुसार संसार मे तीन प्रकार के वन पाये जाते हैं जो क्रमश उष्ण कटिबन्ध, अर्ध-उष्ण कटिबन्ध और शीतोष्ण कटिबन्ध मे फैले हैं :—

(क) सदा हरे-भरे रहने वाले अत्यन्त गर्म और तर वन।

(ख) पतझड वाले वन।

(ग) नुकीली पत्तियो वाले वन।

(क) सदा हरे-भरे रहने वाले वन (Tropical Evergreen Forests)— उष्ण कटिबन्धो मे अधिक वर्षा होने और लगातार गर्मी पडने के कारण भूमध्य रेखीय भागो मे वनस्पतियाँ बडी आसानी से उग आती हैं जो बहुत ही सघन होती हैं। इन स्थानो मे जाडो और गर्मी के तापो मे कुछ भी अन्तर नही होता। अत पेडो के पतझड का कोई नियत समय नही होता। बहुधा देखा जाता है एक ही पेड पर एक डाल में पतझड हो रहा है और उसी समय पेड की दूसरी डाल पर नई पत्तियाँ निकल रही हैं। इसी कारण इन वनों को सदाबहार वन कहते हैं। इन वनो का सबसे अधिक विस्तार भूमध्य रेखा पर ५° उत्तर और ५° दक्षिणी अक्षाशो के बीच मे है। यह वन अमेजन व कागो नदी की घाटी मे, गिनी तट और पूर्वी द्वीपसमूह मे पाये जाते हैं। ऐसे सघन वनो को अमेजन की घाटी मे सेल्वाज (Selvas) कहते हैं। इन वनों की सघनता के कारण वृक्षो के ऊपरी भाग को ही प्रकाश प्राप्त होता है। अत. प्रकाश प्राप्त करने की होड मे ये वृक्ष अधिकाधिक ऊँचे होते रहते हैं। इन वृक्षो की औसत ऊँचाई २०० से ३०० फीट तक होती है। इनके शिखर छतरीनुमा होते हैं।

---

5. "A good forest climate is one with a warm rainy vegetative season a continuously moist sub-soil and a low wind velocity especially in the dormant season"—*Finch and Trewartha*, **Elements of Geography, 1945, p. 414.**

अध्याय ८

प्राकृतिक वनस्पति

(NATURAL VEGETATION)

प्राकृतिक वनस्पति (*Flora*) के अन्तर्गत अनेक प्रकार के पेड-पौधे तथा लतायें आदि सम्मिलित की जाती है जैसे पीपल, खजूर, ताड, बरगद, बबूल, सिरस, मौस, एल्गाई, पतवार, काइयाँ, शैवाल, घास और झाडियाँ आदि।[1] इनमे से प्रत्येक के अनेक उप-भेद होते है। प्राकृतिक बनस्पति के सबसे बडे समूह को, जो जलवायु, मिट्टी और पारस्परिक स्पर्धा आदि समन्वय सैकडो वर्षो से करता चला आ रहा है, उसे समुदाय (*Association*) कहते है। यही समुदाय मानव की क्रियाओ को प्रभावित करते है। बानस्पतिक समुदायो मे एक विशेष प्रकार के जीव-जन्तु भी सबधित रहते हैं क्योकि वह अपने को वनस्पति के अनुसार ही ढाल लेते है। ये पौधे सूक्ष्म आकार से बृहद आकार के होते है। पृथ्वी के सभी भागो मे किसी न किसी प्रकार की घास मिलती है। यही वनस्पति सारे ससार के जीवो का आधार है। प्रत्येक जीव का भोजन किसी न किसी रूप मे इसी वनस्पति से मिलता है। जो जीव-जन्तु मासाहारी (Carnivorous) होते है वे अपने भोजन के लिए प्राय ऐसे जीवों का शिकार किया करते है जो घासाहारी (Herbivorous) होते हैं। शेर और चीते जंगलो मे हिरनो का शिकार करके अपना जीवन बिताते है किन्तु ये हिरन घास और पत्तो से ही पलते हैं। मछलियाँ एक दूसरे को खाकर रहती है किन्तु इनमे भी सबसे छोटी मछली, जिससे बडी मछली का भोजन चलता है, जल मे पैदा होने वाली प्लैंकटन (Plankton) नामक वनस्पति पर ही रहती है। इस प्रकार घुमा फिराकर हम सबका जीवन वनस्पति के द्वारा प्राप्त हुए भोजन पर ही निर्भर है।

वनस्पति मनुष्य की परिस्थिति का एक मुख्य अग है। भोजन के अतिरिक्त बहुत-सी ऐसी आवश्यकताएँ है—जैसे मकान और वस्त्र इत्यादि—जिनमे मनुष्य को वनस्पति से अधिक सहायता मिलती है। किन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वनस्पति का भी अपना एक जीवन है जो अपनी निजी परिस्थिति के अनुसार, जिस पर मनुष्य का भी प्रभाव पडता है, उन्नति किया करता है। इस प्रकार वनस्पति को पृथ्वी का सजीव अग समझना चाहिए। **थी ब्लाश** के अनुसार "किसी भी भूभाग मे जाने पर सबसे पहले हमारा ध्यान प्राकृतिक वनस्पति ही आकर्षित करती है। यदि वह प्रचुर मात्रा मे हुई तो हमे आश्चर्य होता है और यदि न्यूनतम मात्रा मे तो दुःख होता है। वह मनुष्यों से नैसर्गिक सबध स्थापित करती है। शायद इसी कारण हम

---

1. "The floral realm contains such diverse plants as algae. mosses, linchens, grasses, weeds, scrubs, vines and trees. These vary in size from almost microscopic molds to veritable giants such as the sequoias, banyan or ceiba trees"—*White and Renner*, **Op. Cit**, p. 297.

(२) मैरेन्टसी (Marantaceae), जिसकी प्रमुख प्रकार हल्दी है।

(३) कैन्नेसी (Cannaceal), जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की बेतें शामिल की जाती है, और

(४) जिंजीबेरेसी (Zingiberaceae), जिसके अन्तर्गत गर्म मसाले के वृक्ष सम्मिलित किये जाते है।

इन सघन वनो के कुछ बहुमूल्य वृक्ष ये हैं :—आबनूस, महोगनी, बाँस, सीबा, रोजवुड, ताँगवुड, ब्राजील-वुड, रबड, आयरन-वुड, मेनिआँक, नारियल, केला, पारा सुपारी, ग्रीन हार्ट, सैगो, सिंकोना, वेत, ब्रैड-फ्रूट आदि।

अर्ध-उष्ण कटिबन्ध के वन (Sub-Tropical Forests)—जिन भागों में वर्षा की मात्रा कम होती है अथवा पतझड की ऋतु होती है अथवा जहाँ केवल ग्रीष्म में ही वर्षा होती है वहाँ सदा हरे-भरे रहने वाले जगलो के स्थान पर मानसूनी वनो की बहुतायत होती हैं। इस प्रकार के वन भारत, मलय-प्रदेश, इण्डोचीन आदि देशो, में—जहाँ मानसूनी जलवायु मिलता है—पायें जाते है। इन देशो मे पेडों की पत्तियाँ प्रचण्ड ग्रीष्म-काल के आरम्भ मे झड जाती है। केवल गर्मी मे ही वर्षा होने के कारण इन जगलो मे बडी-बडी डालियो वाले बडे छतनार वृक्ष पैदा होते है जो वर्षा और शीतऋतु मे तो हरे रहते है किन्तु शुष्क तथा अति उष्ण-ग्रीष्म काल के आरम्भ होते ही वाष्पीभवन द्वारा पत्तियों से भीतरी जल का विनाश रोकने के लिये अपनी पत्तियाँ झाड देते है। इसके अतिरिक्त इन भागों मे घास-फूस, लतादि की उतनी बहुतायत नही रहती जितनी भूमध्य-रेखीय प्रदेशो मे होती हैं। इसके अतिरिक्त जो कुछ घास वर्षा ऋतु मे उग आती है वह अन्य समयो पर वर्षा न होने के कारण सूख जाती है। कम वर्षा वाले भागो मे बडे छतनार वृक्षों के स्थान पर छोटी पत्तियो वाले कटीले वृक्ष तथा काँटेदार झाडियाँ पैदा हो जाती हैं। घास-फूस का विरलापन और पतझड का निश्चित समय पर ही होना इन दोनो को छोडकर लगभग और सब बातें भूमध्य-रेखीय वनो और मानसूनी वनो मे एक-सी ही मिलती है।

इन वनो के सबसे प्रसिद्ध पेड सागवान, बाँस, साल, ताड, चन्दन, कदम्ब, सेमल, सिरिस, शीशम, देवदार, महोगनी, बेंत, तथा फलो के वृक्ष—आम, जामुन, नारियल, आदि है। सयुक्त राज्य मे तुपेलो (Tupelo), गम, साइप्रेस, ऐस, काला-गम, लालगम, जलबलूत और देवदार आदि वृक्ष मिलते है। दक्षिणी अमेरिका मे ब्राजील मे भी कम वर्षा के कारण भूमध्य रेखीय सघन वनो के स्थान पर कटिंगा (Catinga) नामक झाडियाँ ही अधिक पैदा होती हैं जिनकी पत्तियाँ शुष्क-ऋतु मे झड जाती है।

(ख) **पतझड़ वाले वन** (Deciduous Forests)—ये वन उन प्रदेशों मे पाये जाते है, जहाँ जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन विशेष रूप से होते है। इनके वृक्ष अपनी पत्तियाँ भी झाडते है इससे वृक्षो द्वारा जल प्राप्त करने और पुन जल छोडने की क्रिया के बीच समतुलन सा बना रहता है। इन वनो मे वृक्षो की उत्पत्ति धीमी होती है, वे नाटे होते है तथा वृक्षो मे लकडी की मात्रा अधिक होती है। ये वन-प्रदेश साधारण शीत-प्रधान, समशीतोष्ण या पश्चिमी यूरोपीय जलवायु वाले प्रदेशो मे पाये जाते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध मे इनका विस्तार सयुक्त राज्य अमरीका के भीतरी

उगती है परन्तु अमेजन और कांगो की घाटियो मे, जहाँ कभी जाडा नही पडता, घास और पेड सदा बढते रहते हैं। जिन पौधों का वनस्पति भाग कभी लुप्त नही होता उन्हे 'बारहमासी' (Perennials) कहते हैं।

अस्तु, ताप के अनुसार ही विश्व की वनस्पति को उष्ण कटिबन्धीय, शीतोष्ण कटिबन्धीय, शीत कटिबन्धीय और मध्यवर्ती भागो मे विभाजित किया जाता है।

(२) जल (Water)—ताप के साथ जल भी वनस्पतियों के जीवन का मुख्य साधन है। ताप के द्वारा तो वनस्पतियो की भिन्न-भिन्न जातियाँ निश्चित होती हैं और जल के द्वारा उनकी न्यूनता या अधिकता (Luxuriance) का निश्चय होता है। जल की सहायता से वनस्पतियाँ मिट्टी से अपना भोजन ग्रहण करती है। मिट्टी मे मिला हुआ वनस्पतियों का भोजन जल के द्वारा घुल कर उनकी जड़ो मे होता हुआ वनस्पतियो के प्रत्येक अङ्ग मे पहुँच जाता है। इस प्रकार जहाँ जल की मात्रा अधिक होती है वहाँ वनस्पतियो को अधिक भोजन मिलता है और इसलिए वहाँ पर वनस्पतियों की मात्रा भी अधिक होती है। ऐसे स्थानो पर बडे-बडे पत्तों से लहलहाते हुए पेड़ो और हरी-हरी घासो की प्रधानता रहती है। कागो तथा अमेजन की घाटी में जहाँ जल बहुत बरसता है वनस्पतियो की अधिकता होने के कारण पैर रखने की जगह भी कठिनाई से मिलती है। अत्यधिक नम भागो मे पाये जाने वाले पौधो को 'नम भूमि के पौधे' (Hygrophytes) कहते है।[2] ऐसे पौधो के तने लम्बे और पतले, जड़ें छोटी, पत्तियाँ चौडी और पतली होती हैं और उनमे लकडीदार रेशे बहुत कम होते हैं। लेकिन सहारा जैसी भूमि मे, जहाँ जल की कमी रहती है और जिसके कारण वनस्पतियाँ अपना भोजन आसानी से नही पा सकती, इनकी कमी सबको अखरती है। परन्तु मरुभूमि मे जहाँ कही जल अर्थात् मरुद्यान (Oasis) होते हैं वहाँ काफी घास और पेड होते हैं। शुष्क जलवायु के पौधो को Xerophytes कहते है। इनकी जड़ें बहुत लम्बी होती हैं। जिन भागो मे एक मौसम मे अच्छी वर्षा होती है और दूसरे मौसम मे शुष्कता पाई जाती है, वहाँ ट्रोपोफाइट (Tropophytes) वनस्पति होती है जो एक मौसम मे हरीभरी और दूसरे मौसम मे सूखी होती है। यह बात स्मरणीय है कि जहाँ वर्षा अधिक होती है या आर्द्रता अधिक पाई जाती है वहाँ वृक्ष पैदा होते है जिनके पत्ते बडे होते हैं जिससे वृक्षों का जल अधिकाधिक मात्रा मे बाहर निकाला जा सके। इसके विपरीत जहाँ वर्षा का अभाव होता है, वहाँ वृक्ष छोटे होते हैं, उनके पत्ते कम होते है और ये चिकने-मोटे होते हैं जिससे उनसे पानी कम निकल सके। विषुवत् रेखीय भागो मे वनस्पति अधिक सघन होती है किन्तु मरुस्थली भागो मे केवल जल के निकटवर्ती भागो मे ही वृक्ष मिलते है, अन्यत्र छोटी घास या बालू मिट्टी। कनाडा के कोलम्बिया प्रान्त मे वर्षा के होने के कारण उगने वाले पेड पूर्वीय प्रान्तो के पेडो की अपेक्षा बडे होते हैं। वहाँ से डगलसफर नामक पेड ससार के सबसे बड़े पेड़ो मे से है।

(३) प्रकाश (Light)—जल की तरह प्रकाश भी वनस्पतियों के भोजन

---

2. **Hygrophites** are water loving plants found in damp and moist climate. ***Xerophytes*** *are plants adapted to arid conditions*. **Tropophytes** are green in one season and dry in another. They are found in tropical wet and dry climates.

(ग) नुकीली पत्तियों वाले वन (Coniferous Forests)—इस प्रकार के वनों का विस्तार उत्तरी अमेरिका और यूरेशिया के उत्तरी भागों में है। इन सबमें रूस के साइबेरिया के वन, जिन्हें टैगा (Taiga या Boreal Forests) कहते हैं, बहुत विस्तृत है। एशिया में इस वन प्रदेश की दक्षिणी सीमा ५५° अक्षांश तक है।



चित्र २५ उत्तरी यूरोप के चौड़ी पत्ती के वन

उत्तर-पश्चिमी यूरोप में यह ६०° अक्षांश तक फैले है और उत्तरी अमेरिका के पूर्व में ४५° अक्षांश तक ये वन मिलते हैं। अलास्का और मैकैंजी नदियों के बेसिनों में तो इन वनों का विस्तार आर्कटिक वृत्त के भी ३०० मील उत्तर और पूर्वी कनाडा में इसके ५०० मील दक्षिण तक है। नार्वे, स्वीडेन, फिनलैंड, रूस तथा माउदेनिया में ये वन शृंखलाबद्ध पेटियों में मिलते है किन्तु दक्षिणी-गोलार्द्ध में ये वन इतने विस्तृत नहीं है।

इस प्रकार ये वन उत्तरी गोलार्द्ध में शीतोष्ण कटिबन्ध के उत्तरी भागों में, जहाँ जाड़ा बहुत ही कठिन होता है और शीतकाल छोटा और साधारण गर्मी वाला होता है तथा जहाँ पिघली हुई बर्फ से वनस्पतियों के उगने के लिए काफी जल मिल जाता है, पाये जाते है। इन भागों में जल की कमी होने के कारण पेड़ों की पत्तियाँ नुकीली होती है जिससे उन पत्तियों के द्वारा हवा के साथ अधिक जल वाष्प बनकर नहीं उड़ पाता। दक्षिणी गोलार्द्ध में ये पेड़ पहाड़ों को छोड़कर और जगहों में बहुत कम मिलते हैं क्योंकि वहाँ समुद्र की निकटता के कारण अधिक कठिन जाड़े नहीं पड़ते। इन वनों में झाड़-झखाड़ बिल्कुल नहीं मिलते और इस कारण इनमें आना-जाना भी सरलतापूर्वक हो सकता है। पेड़ों के निचले भागों में डालें कम होती

का काम देते है। लेकिन इनमें से किसी भी नमक की मात्रा अधिक हो जाय तो वही नमक पेड के लिए विष का काम करता है। इसलिए मिट्टी मे जहाँ नमक अधिक होते हैं वनस्पतियाँ कम उगती है। उनका रूप कंटीली झाडियो जैसा होता है।

कणो के अनुसार मिट्टी मे जल की मात्रा कम या अधिक होती है। छोटे कणो वाली अर्थात् चिकनी मिट्टी मे जल की मात्रा अधिक रहती है लेकिन यदि मिट्टी के कण मोटे होते है तो उस मिट्टी मे जल बहुत ही कम रहता है। इस प्रकार मिट्टी की बनावट पेडो को मिलने वाली जल की मात्रा का निश्चय करती है। यदि मिट्टी चिकनी होती है तो उससे पेड़ो को जल अधिक मिलता है किन्तु यदि मिट्टी मोटी अर्थात् बालूमय है तो उससे पेडों को जल बहुत ही कम मिलता है। इसी बनावट पर मिट्टी मे मिली हुई वायु की मात्रा भी निर्भर रहती है। चिकनी मिट्टी मे परमाणुओ के पास-पास होने के कारण वायु तो कम किन्तु जल कम रहता है। जल और वायु वनस्पतियो के लिए आवश्यक है इसलिए उनके लिए उपयोगी मिट्टी वही है जो न बहुत मोटी ही हो और न चिकनी ही हो अर्थात् जिसमे वनस्पतियो की जड़ें सास भी ले सकें और जल के द्वारा भोजन भी पा सकें।

मोटी मिट्टी मे जो जल पडता है वह शीघ्र ही नीचे सोख जाता है और प्राय. जडो की पहुँच से बाहर हो जाता है। साथ ही ऐसी मिट्टी मे ताप भी अधिक दूर तक प्रवेश कर जाता है जिससे यह मिट्टी चिकनी मिट्टी की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाती है। चिकनी मिट्टी की प्रकृति ठीक इसमे उल्टी होती है। इसमे कणो के एक दूसरे के अधिक निकट होने के कारण पानी और ताप अधिक दूर तक अन्दर नही जा सकते। वनस्पतियो के सीधे खडे रहने का सहारा भी मिट्टी की इसी बनावट पर निर्भर है। बारीक मिट्टी के पेडो की जडें भीतर घुसकर उसे खूब अच्छी तरह पकड लेती है, जिससे पेड हवा के तेज से तेज झोके को भी अच्छी तरह सहन कर सकता है। मोटी मिट्टी के पेडो की जडो को इतने सहारे का मिलना कठिन हो जाता है।

भूमध्य रेखीय भागो मे, विशेषत कागो के जगलो मे, जहाँ चना मिली मिट्टी पाई जाती है, वहाँ ऊँचे वृक्षों की अपेक्षा छोटे छोटे खुले घास के मैदान मिलते है। समशीतोष्ण जलवायु की रेतीली मिट्टी मे पाइन का वृक्ष अधिक उगता है।

वनस्पति के प्रकार (Types of Vegetation)

जलवायु और मिट्टी की भिन्न-भिन्न अवस्थाओ के कारण पृथ्वी पर अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती है। इन सब प्रकारो मे से बहुत से तो ऐसे हैं जिनमे कुछ पारस्परिक समानता भी पाई जाती है। इसी समानता को ध्यान मे रखते हुए वनस्पतियो के आधार पर पृथ्वी के कई खण्ड किए गये है। ये खण्ड इस प्रकार हैं :—

(१) वन खण्ड (Forest)[४]

---

४. वन पौधों का समूह होता है जिसमें विविध प्रकार के पेडों की प्रधानता रहती है। जंगल के लिए ग्रीष्म का ताप ५०°फा० या इससे अधिक होना आवश्यक है। ध्रुवी कटिबन्ध के बाहरी भागों में १५" वर्षा होना नितांत आवश्यक है। चक्रवाती प्रदेशों में ३०" वर्षा, उष्ण कटिबन्धों में ४५" से ६०", चौड़ी पत्ती वाले वनों के लिए तथा सदाबहार वनों के लिए ६०" से १५०" तक वर्षा आवश्यक मानी गई है— *White and Renner*, **Op. Cit**, p. 297.

की लकडी भी कडी होनी है। ब्रिटिश कोलम्बिया मे डगलस फर (Douglas fir) नामक पेड़ बहुत बडा और ऊँचा होता है। इसका तना लगभग २०० फीट से ऊँचा और ८० फीट गोल होता है। ससार के सबसे पुराने और बड़े-बड़े वृक्ष इसी भाग मे उपलब्ध होते है।

पृथ्वी पर वन-प्रदेशों का विस्तार (Extent of Forests)

ऐसा अनुमान किया गया है कि पृथ्वी के जितने क्षेत्रफल पर वन-प्रदेश हैं उसके आधे भाग मे (लगभग ४६%) सदा हरे-भरे रहने वाले उष्ण कटिबन्ध के वनो से आच्छादित है। लगभग ३५% क्षेत्रफल पर शीतोष्ण कटिबन्ध के नुकीली पत्ती वाले वन खड़े हैं और शेष १५% पर पतझड वाले वन खडे है। नीचे की तालिका में पृथ्वी पर वनो का विस्तार बतलाया गया है :

विश्व में वनो का वितरण[6]

महाद्वीप	उत्पादन वन (१० लाख एकड मे)	अन्य वन	कुल वन	वनो का प्रतिशत	प्रति एकड पीछे उत्पादक वन
१. यूरोप रूस	१,७६३	१,८६६	३,६५६	३८	३·२
२. उ० अमरीका	१,२५३	५४७	१,८००	३१	६·२
३. द० अमरीका	१,६४१	२२५	१,८६६	४३	१५·८
४. अफ्रीका	७५६	१,३४२	२,०६८	२८	४·०
५. एशिया	८८५	४००	१,२८५	२०	०·७
६. ओसीनिया	१२४	७४	१६८	६	१०·४
उपरोक्त महाद्वीपो का योग	६,४५६	३,३७६	६,८३२	३०	२·७

निम्न तालिका का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से ज्ञात होगा कि यद्यपि उष्ण-कटिबन्धीय वनों का विस्तार अधिक है किन्तु व्यापारिक दृष्टि से उनका महत्व बहुत कम है। व्यापारिक दृष्टि से तो नुकीली पत्ती वाले वन ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वनों से प्राप्त होने वाले पदार्थों का ७०% इन जगलो से मिलता है। पतझड वाले वनो में केवल फर्नीचर के लिए लकडी मिलती है। ये वन सब वनो से मिलने वाली लकड़ी का १८% उत्पन्न करते है और उष्ण-कटिबन्ध के वन केवल २% लकड़ी उत्पन्न करते है।

---

6. U. N. O. Division of Forestry and Forest Products, **Forest Resources of the World,** 1948.

इनके नीचे भी झाडझंखाडो और लताओ आदि के कारण सदैव अन्धकार छाया रहता है। इन वनों में थोड़े से ही क्षेत्र में भिन्न-भिन्न प्रकार के पेड पौधे उग आते है अत किसी विशेष प्रकार की लकडी का वनो से हटाया जाना नितान्त कठिन होता है। प्रो० रसल का विश्वास है कि वनो के १०० वर्ग गज के क्षेत्र मे जितनी प्रकार के वृक्ष पाये जाते है उतनी प्रकार के वृक्ष कनाडा के वन प्रदेशो के १००वर्ग मील क्षेत्र



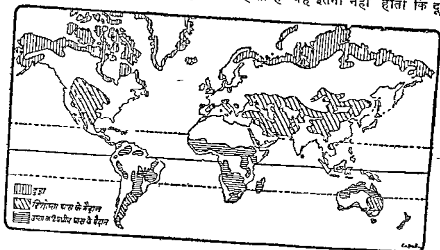
चित्र २४. अमेजन के उष्ण कटिबन्धीय वन

मे भी नही पाये जाते। केवल फिलीपाइन मे ही लगभग ३००० प्रकार की वनस्पति मिलती है। यहा एक एकड मे २५-३० प्रकार के वृक्षो का मिलना कोई आश्चर्यजनक बात नही। इन पेडो की लकडिया अधिक गर्मी पडने के कारण बडी कठोर होती हैं अत. उन्हे काटने मे बडी असुविधाओ का सामना करना पडता है। फिर यदि लकडियाँ किसी प्रकार काट भी ली जायँ तो वनो से बाहर ले जाना—भूमि पर सघन वन-सम्पत्ति और कीचड के कारण—और भी दुष्कर होता है। अतः प्राय. बहुमूल्य लकडियाँ वनो मे ही नष्ट हो जाती है और उनका कोई उपयोग नही होने पाता। मानव विकास के लिए ये वन बडे अनुपयुक्त सिद्ध हुए हैं किन्तु फिर भी कुछ स्थानो में जगलो से मानव का भीषण सघर्ष हुआ है मुख्यत मध्य अमरीका के कैरेबियन निम्न स्थल पश्चिमी जावा और मलाया के भाग, सुमात्रा तथा गिनी तट पर। इनमे वनो को साफकर पौध वाली उपजो—केला, नारियल और रबड आदि—की खेती की जाने लगी है।

मोटे तौर पर विषुवत् रेखीय वनो मे चार प्रकार के एक बीज-पत्रीय पौधे उगते हैं :—

(१) केला जो साइटीमिनी (Scitamineae) किस्म का अंग है।

को छोडकर अन्य किसी भी स्थान पर जल की मात्रा पेडो के उगने के लिए पर्याप्त नही होती। इन प्रदेशो मे वर्षा विशेषकर गर्मी मे होती है तथा यहाँ वर्षा के अपर्याप्त मात्रा मे होने से और इस ऋतु मे आर्द्रता के भाप रूप मे अधिक नष्ट होने से वृक्ष नहीं उग सकते। जो कुछ थोडी बहुत वर्षा होती है वह इतनी नही होती कि दूर



चित्र २७ घास के मैदान

तक मिट्टी मे सोख जाय, इसलिए मिट्टी का थोडा-सा भाग ही तर हो पाता है। अत अधिकाश पौधे घास ही होते हैं जो लम्बी होती है तथा गुच्छो मे उगती है और जिसकी पत्तियाँ कडी होती है।[8] ताप की विभिन्नता के कारण ही घास विषुवतीय भागो से लगाकर ध्रुवी क्षेत्रो तक पाई जाती है। इसके लिए १५″ से ३०″ की वर्षा पर्याप्त होती है। अत इन भागो मे घास के मैदान पाये जाते है। ये मैदान दो प्रकार के होते हैं।

(क) उष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदान।

(ख) शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान।

(क) उष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदान (Tropical Grasslands or Savannahs)—ये घास के मैदान सूडान या सवन्ना जलवायु वाले प्रदेशो मे मिलते हैं। ये घास के मैदान उत्तर अक्षाश तक उत्तरी गोलार्द्ध मे ३०° उत्तर अक्षाश और दक्षिण गोलार्द्ध मे ३०° दक्षिण अक्षाश तक पाये जाते है। इनका सबसे अधिक विस्तार सूडान, वेनीजुएला, जम्बेजी नदी के बेसिन, ब्राजील के दक्षिणी भाग और आस्ट्रेलिया के उत्तरी भाग मे है। विषुवत् रेखीय वन-प्रदेशो की दीर्घकालीन शुष्क ऋतु तथा केवल ग्रीष्म ऋतु तथा केवल ग्रीष्म कालीन वर्षा के कारण यहाँ बहुत ऊँची (५ से १५ फीट) तर-घास उत्पन्न होती है जिसके बीच मे कही-कही छाते की आकृति के छोटी-छोटी पत्तियो या काँटे वाले वृक्ष पाये जाते हैं; जैसे खेजडा, इमली

8. *E. Warming*, **Ecology of Plants,** 1925, p. 295.

शुष्क भागो के पूर्व मे ४०° और ६०° अक्षाशो के बीच में है, किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध मे पूर्वी तटीय भागो मे ४०° अक्षाशो से सुर दक्षिण तक फैले है। ये प्राय आस्ट्रेलिया और अफ्रीका मे नही पाये जाते।

ग्रीष्म में अत्यन्त साधारण गर्मी, शीतकाल की कड़ी सर्दी और बारह महीनो अच्छी वर्षा हो जाने के कारण यहाँ अच्छी, कडा और पुष्ट लकडियो के वन पाये जाते है जिनके चौडे पत्तो वाले वृक्षों की पत्तियाँ कडी सर्दी से बचने के लिए शीतकाल में ही झड जाती है। इन वनो मे झाड़-झखाड नहीं होते अत इन वनो मे आने-जाने और लकडी आदि काटकर लाने मे बडी सुविधा होती है। इन वनो मे मुख्य पेड ओक, मैपिल, बीच, एम, रीमू, मताई, हैमलोक, अखरोट, चेस्टनट, पोपलर, एश, चेरी, हिकौरी, बर्च, तोताग, तावा और कौरीपाइन आदि हैं। ये वृक्ष मकान तथा फर्नीचर बनाने को सुन्दर और पुष्ट लकडियाँ प्रदान करते है। ये वन प्राय. ऐसे स्थानो पर पाये जाते है जहाँ खेती के लिए बहुत-सी उपयोगी दशायें मिलती हैं। अतः बहुधा मनुष्यो ने इन वनों को काटकर खेती योग्य भूमि निकाल ली है। झाडियो में हौज, एल्डरबरी झाडी, सासाफराम, सुमाक आदि मुख्य है।

अधिक उच्च तथा शीतल भागों मे जहाँ शीतकाल मे बर्फ गिरती है चिर-हरित नुकीली पत्ती वाले वृक्ष भी पाये जाते है। अत पतझड़ वाले वनो को प्रायः **मिश्रित वन** (Mixed Forests) भी कहते हैं।

भूमध्य सागरीय वनस्पति (Mediteranean Vegetation)—गर्म मरुस्थलों से ध्रुवों की ओर बढने पर मार्ग मे भूमध्यसागरीय जलवायु प्रदेश पडते हैं। इस प्रदेश की वनस्पतियो को मुख्य कर दो कठिनाइयो का सामना करना पडता है—एक तो जाडे में शीत का और दूसरे गर्मी मे जल के अभाव का। इसलिए यहाँ की वनस्पतियों की प्राय दो सुप्तावस्थाएँ होती है—एक जाडे मे और दूसरी गर्मी मे। केवल वसन्त ऋतु मे ही यहाँ की वनस्पतियाँ भली प्रकार बढ सकती है।

इन प्रदेशो मे प्राकृतिक वनस्पति मे खुले, सूखे किन्तु सदा हरे-भरे रहने वाले वन मिलते है जो कम वर्षा तथा अनुपजाऊ मिट्टी वाले स्थानो मे कटीली झाडियो मे बदल गये है जिन्हें **झाडीदार जंगल** (Scrub Forest) कहते है। यूरोप मे इस प्रकार की झाडियो को **मैक्वीस** और सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे **चैपरेल** कहते है। इन प्रदेशों के वन सदा ही हरे-भरे रहते हैं क्योकि शीतकाल मे नमी के साथ साधारण सर्दी पडती है जिससे पत्तियाँ झडती नही और ग्रीष्म काल की गर्मी तथा शुष्कता से बचने के लिए यहां के वृक्षों की जडे लम्बी तथा मोटी और तने मोटे और खुरदरी छाल वाले होते है जिनमे यथेष्ट जल भरा रहता है। पत्तियाँ भी मोटी, चिकनी चौडी लोचदार और प्राय मोमी होती हैं—कई पत्तियो पर तो रुएँ भी होते है जिसमे इनका जल वाष्प बन कर नही उडने पाता। जलवायु की इन विशेषताओं के कारण इन प्रदेशों मे घास के अभाव का होना एक स्वाभाविक बात है।

इन वनो के मुख्य वृक्ष—चौडी पत्तियों वाले—ओक, जैतून, अजीर, पाइन, फर, साइप्रस, कौरीगम, यूकलीप्टस, चेस्टनट, लारेल, शहतूत, वालनट आदि हैं। सूर्य के प्रकाश की प्रधानता के कारण ये प्रदेश फल वाले पेडो की उत्पत्ति के लिए विशेष उपयुक्त हैं। अत. यहाँ नीबू, नारंगी, अंगूर, अनार, नाशपाती, शहतूत तथा शफ्तालू आदि रसदार फल खूब होते हैं।

(ख) **शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान** (Temperate Grasslands)—शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान उन स्थानो मे, जो समुद्र से दूर है और जहाँ वर्षा अधिक नहीं होती, पाये जाते है। शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदानो की घास उष्ण-प्रदेशो की अपेक्षा अधिकतर छोटी, कोमल और कम घनी होती है। इन प्रदेशो के ऐसे विस्तार है जिनमे एक भी पेड नही मिलता। इन घास के मैदानों को भिन्न-भिन्न देशो मे भिन्न-भिन्न नामो से पुकारते है। एशिया (जहाँ इनका विस्तार बालकश भील के निकटवर्ती भागो तथा मचूरिया और और डॉल के मरुस्थल मे है) और यूरोप मे (काले सागर के निकट भागो मे) इन घास के मैदानो को **स्टेपी** (Steppes), उत्तरी अमेरिका मे **प्रेरीज** (Praries), दक्षिणी अमेरिका मे **पम्पास** (Pampas), आस्ट्रेलिया मे **डाउन-लैड्स** (Downlands) तथा दक्षिण अफ्रीका मे **वेल्ड** (Veld) कहते है। उत्तरी अमरीका मे ये बडे मैदानो मे तथा दक्षिणी अमरीका मे पैटेगोनिया के पूर्वी ढालो पर मिलते है। इन मैदानो मे सर्वत्र अत्यधिक समानता है।

इन मैदानो मे ग्रीष्मकाल अत्यन्त उष्ण तथा शुष्क, शीतकाल हिमाच्छादित तथा बसन्त वर्षा काल होता है। बसन्त ऋतु मे वर्फ पिघलने और थोडी बहुत वर्षा हो जाने के कारण जमीन आर्द्र हो जाती है और सम्पूर्ण भूमि हरी घास और अनेक प्रकार के फूलो से परिपूर्ण हो जाती है। ग्रीष्मकाल के पहले भाग तक जब वर्षा होती रहती है यह घास हरी रहती है। किन्तु ग्रीष्मकाल के अत्यधिक उष्ण हो जाने पर यह झुलस जाती है और सारा देश भूरा (Parched) हो जाता है। शीतकाल मे घास के मैदान प्राय वर्फ से ढके रहते है। ग्रीष्म मे मामूली बौछारो और तीव्र गर्मी के कारण आर्द्रता के अधिकाश भाग का वाष्पीकरण हो जाता है। अत जल पृथ्वी की सतह के नीचे अधिक गहराई तक नही जाने पाता और इसलिए इन प्रदेशो मे पेड नही उग सकते। वृक्ष केवल नदियो के किनारे ही दृष्टिगोचर होते है अन्यत्र झाडियाँ (सिल्वर बैरी, वर्फलोबरी आदि) तथा छोटी घासे मिलती है। इन घास के मैदानो मे तेज दौडने वाले तथा घास खाने वाले जानवर मिलते है, जैसे शुतुर्मुर्ग, घोडे आदि। ग्रीष्म मे इन मैदानो मे गेहूँ की खेती अधिक की जाती है और पशु चराए जाते है। प्रेरी के मैदानो मे तो इतना अधिक गेहूँ पैदा किया जाता है कि उन्हे विश्व के **खाद्यान्न भंडार** (Granaries of the World) कहा जाता है।

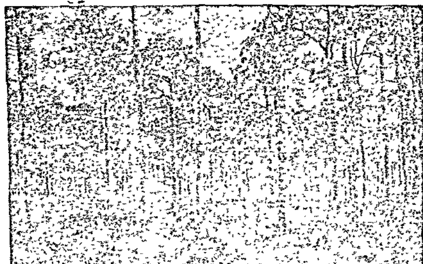
(३) मरुभूमि की वनस्पति (Desert Vegetation)

मानसूनी प्रदेशो से पश्चिम की ओर जाने मे वर्षा की कमी के कारण वन क्षीण होने जाते हैं तथा आगे चलकर कटीली झाडियो के रूप मे परिवर्तित हो जाते हैं। इसी प्रकार उष्ण घास के मैदानो से ध्रुवो की ओर बढने पर घास कम होती जाती है और अन्त मे ये मैदान भी मरुस्थल हो जाते हैं। ये मरुस्थल क्रमश उष्ण-मरुस्थल (Hot Deserts) और शीत-मरुस्थल (Cold Deserts of Tundra) कहलाते है।[६] पहले मरुस्थलो मे वर्षा की कमी और द्वितीय प्रकार के मरुस्थलो मे तापक्रम की कमी के कारण वनस्पति नगण्य सी होती है।

---

६. उष्ण कटिबन्धों में १०" से कम वर्षा वाले भाग मरुस्थलों के पौधों को जन्म देते हैं। शीतवारी कटिबन्धों में मरुस्थल ६" से ८" वर्षा वाले भागों में मिलते हैं।

है और तनों की लम्बाई काफी रहती है। वृक्ष एक दूसरे के पास-पास नहीं होते तथा वृक्ष जातियाँ सामूहिक रूप से मिलती हैं।



चित्र २६ कनाडा में नुकीली पत्तियों वाले वन

वनस्पति शास्त्र की दृष्टि से इन वनों में निम्न प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं —

(१) **कोणधारी वृक्ष**, जो मुख्यत उत्तर की ओर मिलते है।

(२) **ट्रापोफाइटिक**, जो कोणधारी और चौडी पत्ते वाले वनो से भिन्न होते हैं।

(३) मुख्यत चौडी पत्ती वाले वृक्ष, जिन्हे डाईकोटिलेडान्स (Dicotyledanes) कहते है।

(४) **मेजोफाइटिक** (Mesophytic), जो पूर्वी तट पर मिलते है।

इन वनों की लकडी बहुत ही मुलायम और बहुमूल्य होती है जिससे वह कागज बनाने, दियासलाई की सीकें, चौखट, पेटियों आदि बनाने के अधिक उपयुक्त होती है। इन वनो के मुख्य वृक्ष चीड, स्प्रूस, हैमलोक फर, बालसम, एस्पेन, लार्च सीडर, साइप्रस आदि है। ये वृक्ष सदा हरे-भरे रहते है। इनकी ऊपरी पर्त मोटी और चिकनी होती है जिससे वे हिम, पाला और कठोर शीत से अपनी रक्षा कर सकें। शीत जलवायु के कारण लकडी बहुत कम नष्ट हो पाती है। सूखी ऋतु में तो प्राय. इन वनो में आग लग जाया करती है जिससे मीलो तक यह वन जल कर भूमि को काली बना देते हैं।

इन वनों के पश्चिमी भागो मे, जो समुद्र के निकट हैं और जहाँ वर्षा की तो अधिकता है किन्तु जाडे कम कठिन होते है, पेड़ बहुत बडे-बडे होते है। इन पेडो

वाली वनस्पति को तापक्रम और वर्षा के अनुसार निम्न पाँच खण्डों में विभाजित किया था :—

(१) ऐसी वनस्पति जिसे उगने के लिए सदैव उच्च तापक्रम और भारी वर्षा की आवश्यकता होती है उसे मेगाथर्म (Megatherms) कहते है। इस प्रकार की वनस्पति के अन्तर्गत उष्ण-कटिबन्धीय हरे-भरे जगल आते हैं जहाँ निरन्तर वर्षा होती रहती है तथा ठढे महीने का तापक्रम भी ६४·५° फा० से ऊपर रहता है।

(२) ऐसी वनस्पति जो शुष्क जलवायु और तीव्र तापक्रम चाहती है उसे जेरोफाइट्स (Xerophytes) कहते हैं। इस प्रकार की वनस्पति स्टैपी, उष्ण-मरुस्थलों और शीतोष्ण कटिबन्ध के गर्म भागों में मिलती है। इनके पत्ते प्राय: शुष्क ऋतु में झड जाते है।

(३) ऐसी वनस्पति जिसे न तो अधिक वर्षा और न अधिक तापक्रम ही की आवश्यकता रहती है उसे मेसोथर्म (Mesotherms) कहते हैं। किन्तु कुछ को ग्रीष्म् कालीन तीव्र तापक्रम की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार की वनस्पति २२° से ४५° उत्तर और ८०° दक्षिण अक्षाशो के मध्य मे मिलती है जहाँ ग्रीष्म का तापक्रम ७२° फा० और शीत में तापक्रम ४३° फा० से ऊपर रहता है। भूमध्यसागरीय वनस्पति इसका मुख्य उदाहरण है।

(४) ऐसी वनस्पति जो कम गर्मी, कम औसत वार्षिक तापक्रमान्तर, शीतल और छोटी ग्रीष्म ऋतु किन्तु कठोर शीत चाहती है माइक्रोथर्म (Microtherm) कहलाती है और जहा ग्रीष्म मे तापक्रम ५०° फा० और शीतकाल में ४३° फा० से भी कम रहता है। शीतोष्ण पतझड वाले वन और स्टैपी इसके उदाहरण हैं।

(५) आर्कटिक वृत्तो के परे की वनस्पतियो को हैकीस्टोथर्म (Hekistotherm) कहते है जिन्हे बहुत ही कम गर्मी की आवश्यकता होती है। इस भाग के मुख्य पौधे लिचन, काई आदि है।

उपरोक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त निम्न वर्गीकरण भी सर्व-मान्य है—

(१) भूमध्य रेखा के हरे-भरे रहने वाले चौडी पत्ती वाले वन (Equatorial Evergreen Forests)।

(२) उष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदान (Tropical Grasslands)।

(३) मानसूनी वन (Monsoon Forests) या चौडी पत्ती वाले मिश्रित वन (Mixed Forests)।

(४)-(५) उष्ण और शीतोष्ण मरुस्थलीय वनस्पति (Tropical & Temperate Desert Vegetation)।

(६) भूमध्यसागरीय सदा हरे-भरे रहने वाले वन (Mediterranean Evergreen Forests)।

(७) शीतोष्ण-कटिबन्धीय पतझड वाले वन (Temperate Deciduous Forests)।

(८) शीतोष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदान (Temperate Grasslands)।

पृथ्वी के धरातल पर विभिन्न प्रकार के वनों का विस्तार इस प्रकार है :—

महाद्वीप	नुकीले वन	पतझड़ वन	उष्ण कटिबन्धीय कठोर लकड़ी के वन
	(लाख एकड़ों मे)		(लाख एकड़ों मे)
यूरोप	५७६०	१६५०	नही है
एशिया	८८६०	५७२०	६३५०
अफ्रीका	७०	१७०	७७३०
आस्ट्रेलिया	१५०	१५०	२५३०
उत्तरी अमेरिका	१०४६०	२६०	१०८०
दक्षिणी अमेरिका	१०६०	११५	१८६६
पृथ्वी	२६४५०	८,३६५	१६५५६

नीचे की तालिका मे विश्व के कुछ प्रमुख देशों मे प्रति १००० व्यक्तियों के पीछे वन-क्षेत्रफल तथा प्रति व्यक्ति पीछे लकड़ी का उपयोग बताया गया है इससे ज्ञात होगा कि भारत की स्थिति इस सम्बन्ध मे कितनी असन्तोषजनक है।[7]

देश	प्रति १,००० व्यक्ति पीछे वन-क्षेत्रफल (एकड़ों मे)	प्रति व्यक्ति पीछे लकड़ी का उपयोग (घन फीटों में)
कनाडा	७,७५७	२५०
फिनलैंड	१,४७०	२६६
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	४३०	२००
स्वीडेन	६६०	१२६
नार्वे	६५०	११८
रूस	४४०	६६
फ्रांस	६०	२६
जर्मनी	५०	२७
ब्रिटेन	१०	१५
बेल्जियम	२०	२४
नीदरलैंड	१०	१६
भारतवर्ष	२६	१५

(२) घास के मैदान (Grasslands)

भूमध्य रेखीय प्रदेशों और मानसूनी वनों से ज्यों-ज्यों उत्तर या दक्षिण की ओर दूर जाते है त्यों-त्यों वर्षा द्वारा प्राप्त जल की मात्रा भी कम होती जाती है और इसी कारण जंगल भी कम घने पाये जाते है, यहाँ तक कि नदियों की घाटियों

7. *Hailey*, **Economics of Forestry,** pp. 18—31.

जलवायु के अनुसार वनस्पति के खंडों का वर्गीकरण

जलवायु	जल की मात्रा	तापक्रम	वन-प्रकार	लकड़ियों की किस्म
१. भूमध्य रेखीय (Equatorial)	बहुत अधिक	ऊँचा	सदाबहार	सरत लकड़ी
२. मानसूनी (Monsoonal)	अधिक किन्तु सूखी ऋतु	साधारण	पतझड़ वाले चौड़ी पत्ती वाले वृक्ष	"
३. उष्ण शीतोष्ण कटिबन्धीय (Warm Temperate)	साधारण किन्तु सूखी ऋतु	साधारण	चौड़ी पत्ती के वृक्ष	.
४. शीत-शीतोष्ण कटिबन्धीय (Cool Temperate)	कम	साधारण किन्तु ग्रीष्मकाल अल्प	नुकीले जंगल	मुलायम लकड़ी
५. उष्ण कटिबन्धीय (Tropical)	कम	साधारण किन्तु वाष्पीभवन अधिक	सवन्ना	,
६. शीतोष्ण (Temperate)	२०″ से कम	साधारण, तापक्रम-भेद अधिक	शीतोष्ण घास के मैदान	घास
७. मरुस्थलीय (Dry)	१०″ से कम	अत्यधिक तापक्रम	कँटीली झाड़ियाँ	"
८. पर्वतीय (Mountain Type)	वर्षा की मात्रा अनियमित	कम तापक्रम	पहाड़ी	काटेदार वृक्ष झाड़ियाँ, जंगल आदि

ताड, बबूल, छुई-मुई (Mimosa) आदि। वर्षा में घास हरी रहती है किन्तु शुष्क शरद, शीत तथा वसन्त काल में सूख जाती है, फिर चारों ओर बादामी रंग का सूखा दृश्य दिखाई पड़ता है। केवल नदियों के तटों पर सदैव पर्याप्त जल मिलने के



चित्र२८ सवन्ना वनों का एक दृश्य

कारण पेड अधिक संख्या में मिलते हैं किन्तु नदियों के तटों से दूर होते ही पुन सूखी घास के मैदान आ जाते है। कहीं-कहीं पार्कों की तरह पेडों और झाडियों के कारण इन घास के मैदानों को पार्कलैंड (Parkland) भी कहते हैं।

अफ्रीका, एशिया तथा आस्ट्रेलिया में घास के इन मैदानों को, जहाँ घास की पत्तियाँ कडी, लम्बी और चौडी होती हैं **सवन्ना** (Savannah), अमेजन नदी के उत्तर में ओरीनीको नदी के संग्रहण क्षेत्र में **लैनास** (Llanos), अमेजन के दक्षिण में ब्राजील के सुभाग पर **कम्पास** (Campos) और अफ्रीका में **पार्कलैंड** (Parkland) कहते हैं। ये घास के मैदान भारत, मध्य अमरीका और पूर्वी द्वीप के शुष्क भागों भी मिलते हैं।

"उष्ण कटिबन्धीय भागों में अनेक जाति की घासें होती हैं। उदाहरण के लिए, **कम्पोजिटा घास** की ६०० जातियाँ और १३,००० उप-जातियाँ; **लिगुमिनासा घास** की ५०० जातियाँ और १२,००० उपजातियाँ होती हैं। इसी प्रकार **ग्रेमी-नैशिया और लिलोमिया** घासों की भी हजारों जातियाँ होती हैं। इस प्रदेश की घासों की दूसरी विशेषता यह है कि इनकी घास अधिकांशत पशुओं के लिए खाने योग्य नहीं होती क्योंकि इनमें से अधिकांश जहरीली होती हैं अथवा कडी और तेज धार वाली जिससे पशुओं के मुँह में चीरे पड जाते हैं तथा घास के कीडों के कारण वे बीमार हो जाते हैं।"

(३) वृक्ष न होने के कारण जब नदियों में बाढ आ जाती है तो वे अपने साथ रेत, मिट्टी, पत्थर आदि लाकर कृषि योग्य भूमि में डाल देती है। ये नदियाँ जब वृक्षहीन पहाडियों में आती है तो वृक्षो की जडो द्वारा रोक-टोक न होने के कारण वे अपने साथ बहुत से कक्ड पत्थर ले आती है जिससे उनके किनारो की जमीन ककरीली हो जाती है और फिर वह भूमि कृषि योग्य नही रहती और यदि पर्वतो पर वन न हो तो वर्षा का पानी इतने जोर से बहे कि वह मैदान की उपजाऊ मिट्टी को अपने साथ बहा ले जाये और तमाम भूमि को ऊसर बना दे।

पाकिस्तान मे पजाब के होशियारपुर जिले मे चरवाहों ने पहाडी वन भेड-बकरी चरा-चराकर नष्ट कर दिए है। इसका परिणाम यह हुआ है कि पहाडी नालो ने कृषि-योग्य भूमि पर इतनी रेत-मिट्टी और ककड लाकर बिछा दिए है कि सारी भूमि कृषि करने के काम की नही रही है। इसी प्रकार अलबेनिया, सैंट हैलेना, फ्रास और चीन मे भी पर्वतीय भागो के वन कट जाने से अधिक भाग ऊसर हो गये है।

जो नदियाँ वन प्रदेशो मे आती है उनके किनारो पर उपजाऊ मिट्टी आकर इकट्ठी हो जाती है जो बहुत ही लाभदायक होती है। जहाँ से नदियाँ दूसरी ओर मुडती है उसी स्थान पर अक्सर नाले नदियों से मिलते है। उनके मिलने से नदी और नाले के सगम पर नाले मे कुछ हट कर दाहिनी और बाईं ओर रेत के टीले जमा हो जाते है। इस प्रकार दोआब के बीच में भी कई गाँव ऐसे है जहाँ कि वृक्ष बहुत कम होते है। गोदावरी, कृष्णा और महानदी में भी रेत के ढेर इकट्ठे हो गए है। इसका कारण भी वे वृक्ष-हीन पहाडियाँ है जहाँ से ये नदियाँ निकलती है।

(४) जगल वर्षा के पानी को स्पज की भाँति चूस लेते है अत निम्न पडौसी प्रदेश मे बाढ का भय अधिक नही रहता और पानी का बहाव धीमा होने के कारण समीपवर्ती भूमि का कटाव भी अधिक नहीं होता। वास्तव मे वनस्पति से युक्त भूमि एक कबल की तरह काम करती है और निर्जन भूमि अपने पर गिरे वर्षा-जल को बडी तीव्र गति के साथ बहा देती है। छोटा नागपुर के पठार, हिमालय की तलहटी के वनो तथा उडीसा के वनो के अनुचित रूप से काटे जाने के कारण ही आज यमुना, चबल आदि नदियो मे बाढ के कारण अगणित भूमि-क्षेत्रों की उत्पादन शक्ति का ह्रास हो रहा है। घाघरा, गडक, कोसी, चम्बल, सोना, स्वर्णरेखा, अजंजा, दामोदर, तिस्ता, ब्रह्मपुत्र, महानदी और गोदावरी आदि सभी नदियो मे उनके विकास-क्षेत्र की वनस्पति के नष्ट हो जाने से प्रतिवर्ष भयंकर बाढें आती है।

(५) वन हवा की तेजी को रोक देते है या कम कर देते है और इस प्रकार वे बहुत से भागो को शीत अथवा तेज बालू की आँधियो के भय से मुक्त कर देते हैं। थार के रेगिस्तान की बालू अपने किनारे पर वनस्पति न होने के कारण ही प्रतिवर्ष करोडो टन की मात्रा में पश्चिमी उत्तर-प्रदेश के जिलों की ओर बढती जा रही है।

(६) वे वर्षा के पानी को भूमि में रोक देते है और धीरे-धीरे बहने देते हैं। इससे मैदानी भाग के कुओ का जल-तल (Water Level) अधिक नीचे नही पहुँचने पाता। पजाब के होशियारपुर और जालधर जिलो और उत्तर प्रदेश के आगरा, मथुरा, इटावा और जालौन आदि जिलो के कुओ का जल-तल बहुत ही नीचा है क्योकि इनके निकटवर्ती स्थानो के वनो को बडी मूर्खता से नष्ट किया गया है।

(क) उष्ण मरुस्थलीय वनस्पतियाँ (Hot Desert's Vegetation)—इन मरुस्थलों में केवल वही पेड़ पौधे होते हैं जिनका जल एकत्र करने का ढंग बड़ा निराला होता है। इनमें से कुछ की जड़ें बहुत ही लम्बी और मोटी होती हैं जिससे वे मिट्टी की निम्नतम गहराई से भीतरी जल चूस सके और अपने मोटे भागों में सचित कर सकें। कुछ पौधों की पत्तियाँ तथा तने बहुत मोटे और इस प्रकार प्राकृतिक रूप से सुरक्षित रहते हैं कि उनमें से पानी बाहर न जा सके और शुष्क जलवायु से उनकी रक्षा करने के लिए उन्हीं में जमा रहे। कुछ वृक्षों की पत्तियों पर एक प्रकार का भोमी आवरण रहता है जो पत्तियों द्वारा वाष्पीभवन की क्रिया को रोकता है। कुछ के तनो पर नुकीले काटे होते है जो उन्हे जानवरों द्वारा खाने से बचाते है। कुछ पर मोटा गूदा होता है। इन मरुस्थलों की झाड़ियों को Xerophytes कहते हैं।

उष्ण-मरुस्थलो की वनस्पति मुख्यत चार भागो मे बाँटी जा सकती है: (१) शुष्क घास के मैदान उन भू-भागों में पाये जाते है जहा उष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान समाप्त होते है और मरुस्थल प्रारम्भ होते है। इन पर कुशा या सरपत जैसी घास उगती है। (२) कटीली झाड़ियाँ उन स्थलो पर मिलती है जहाँ मरुस्थल समाप्त होकर भूमध्य सागरीय प्रदेश आरम्भ होते हैं। ये झाड़ियाँ इन मरुस्थलों को केवल चारा प्रदान करती हैं। (३) काँटेदार वृक्ष—जैसे बबूल, कैर, खेजड़ा आदि मरुस्थल के मध्य भाग में इधर-उधर छिटके रहते है। (४) मरुद्यानों के उपजाऊ भाग—मरुस्थलो के आस-पास के पर्वतो का जल पर्वतो की तलहटियो में समाकर नीचे-नीचे किसी कड़ी चट्टान तक पहुँच कर मरुस्थल के मध्य भाग में यहाँ-वहाँ प्राकृतिक स्रोतों (Natural Springs) के रूप में निकल आता है। इन मरुद्यानो के चारों ओर थूर और ताड आदि के वृक्ष पैदा होते हैं। विश्व मे सबसे बड़े नखलिस्तान (Oasis) अफ्रीका में नील नदी की घाटी मिलते है।

(ख) शीत मरुस्थलीय वनस्पति (Vegetation of the Tundras)—इस प्रकार की वनस्पति यूरेशिया और कनाडा के धुर उत्तरी भागो में पाई जाती है। इन शीत-मरुस्थलो में कड़ी सर्दी और छोटी ग्रीष्म ऋतु के कारण वनस्पति का प्रायः अभाव-सा रहता है। शीत-ऋतु में भूमि बर्फ से आच्छादित रहती है अत. कोई पेड पौधे नही उगते। किन्तु ग्रीष्म-काल में बर्फ से ऊपरी भाग के पिघल जाने से कई प्रकार की शीघ्रतापूर्वक बढने वाली छोटी घासें उग आती है जिनमें रग-बिरंगे कई किस्म के फूल खिल आते हैं। लेकिन इन घासो का जीवन केवल थोडे ही दिनों रहता है। गर्मी के अन्त होने के साथ-साथ इन घासो का भी अन्त हो जाता है। घास के अतिरिक्त एक प्रकार की काई (Lichen) भी यहाँ पाई जाती है तथा कुछ छोटी-छोटी झाड़ियाँ जैसे क्रॉनबेरी, काउबैरी, विल्लो, सेज (Sedge), सेवार (Moss), बिलबैरी, ब्ल्यूबैरी आदि। यहाँ की वनस्पति अल्पकाल में ही अपना जीवन-चक्र पूरा कर लेती है। प्रो० शिम्पर (Prof. Schimper) के अनुसार यहाँ के अधिकाश पौधे केवल ३ सप्ताह के अल्पकाल में ही उगते, बढते और वृद्ध होकर मर जाते हैं।

संसार के वनिस्पतीय कटिबन्ध (Vegetation Zones of the World)

जलवायु और प्राकृतिक वनस्पति का इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि संसार को प्राकृतिक वनस्पति के अनुसार उन्ही भागों मे विभाजित किया गया है जिनमे जलवायु अनुसार। सन् १८७४ ई० में ए० डी० कंडिल महाशय ने पृथ्वी पर पाई जाने

लकडी अथवा लगभग ३-४ गैलन मिट्टी के तेल से उतनी ही गर्मी प्राप्त होती है जितनी कि १ गैलन शुद्ध पेट्रोल से।

(१४) कई देशों में मनुष्य अपने भरण-पोषण के निमित्त वनो पर ही निर्भर रहते है। अब भी अर्द्ध-सभ्य और असभ्य मानव प्रकृति-दत्त वनो मे जगली पशुओ का शिकार कर कद-मूल-फल एकत्रित करके अपना पेट भरता है। बेल्जियन कांगो के इतूरी वनो के बौने, लूजन के पर्वतीय भागो के **नीग्रो**, न्यूगिनी के पंपुआँ, लका के वेद्दा, राजस्थान के भील, मध्य प्रदेश के गोंड आज भी वनो मे रह कर ही अपनी जीविका चलाते है। वनो के किनारो पर अधिक सभ्य मानव भूमि साफ कर अपने लिए अनाज पैदा करते हैं।

इस प्रकार वन-सम्पदा किसी देश की आर्थिक उन्नति के लिए सभी प्रकार से लाभदायक होती है। **श्री चटबरक** के शब्दो मे "वन राष्ट्रीय-सम्पत्ति है। आधुनिक सभ्यता को इनकी बडी आवश्यकता है। ये केवल जलाने की लकडी ही नही देते प्रत्युत हमारे उद्योग-धन्धो के लिए कच्चा माल और पशुओं के लिए चारा भी प्रदान करते है। किन्तु इनका अप्रत्यक्ष महत्व सबसे अधिक है।"[११]

वनस्पति का संरक्षण (Conservation of Vegetation)

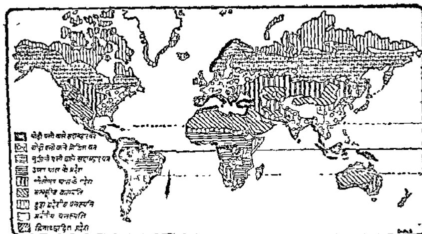
आजकल प्रत्येक देश मे लकडी का उपभोग वहाँ के उत्पादन से अधिक ही होता है। अनुमान लगाया गया है कि विश्व के ४०,००० लाख हैक्टेअर भूमि पर वन भूमि पाई जाती है जिनमे से केवल ३,००० लाख की ही उत्तम प्रकार देख-भाल की जाती है, १०,००० लाख हेक्टेअर जङ्गलो का विदोहन किया जा रहा है और शेष ५,००० लाख हैक्टेअर जगल इस प्रकार नष्ट हो गए है कि उनका कोई महत्व नही रह गया है और वास्तव मे कृषि के लिए वे बडे खतरनाक सिद्ध हो रहे है। २,००० लाख हैक्टेअर जगल अब भी अछूते पडे है और उनकी हिफाजत करना आवश्यक है।[१२] संसार मे वनो की कटाई का वार्षिक औसत नए लगाये गये वृक्षो से ३०% अधिक है। इसलिए आधुनिक काल मे यूरोप और अमरीका तथा रूस की राष्ट्रीय सरकारें वनो के सरक्षण के प्रश्न को इतना महत्व दे रही है। इन देशो मे केवल तैयार वृक्षो को ही काटा जाता है। छोटे और बीज वाले वृक्षो को यथाशक्ति बढने दिया जाता है। कनाडा की सरकार वृक्षो के बगीचो को प्रोत्साहन देती है क्योंकि वहाँ से लकडी चीरने के कारखाने तथा कागज बनाने वाली मिलो का काम केवल वनो के वृक्षों से ही नही चल सकता। भारत मे भी १९५० से राष्ट्रीय सरकार के आदेशानुसार देश के सभी भागो मे जुलाई-अगस्त मास मे वन महोत्सव मनाया जाने लगा है। इसके फलस्वरूप अब देश मे कई करोड वृक्ष बोये जा चुके है। अनुमान लगाया गया है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति वर्ष भर मे दो वृक्ष बोये तो सारे भारत मे ५

११ वनों का महत्व मत्स्यपुराण मे इस प्रकार व्यक्त किया गया है—
"Digging of 10 wells is equal to digging of one pond, digging of 10 ponds is equal to digging a lake. Digging of 10 lakes is as meritorious as begetting a virtuous son, but begetting of 10 virtuous sons has the same effect as that of planting a tree."

12. *Government of India*, **Our forests**, Chapter VII.

(९) शीतोष्ण-कटिबन्धीय नुकीले वन (Temperate Coniferous Forests)।

(१०) टुन्ड्रा के मरुस्थल (Cold Deserts or Tundras)।



चित्र २६ विश्व के मुख्य वनस्पति खण्ड

आगे तालिका में जलवायु के अनुसार वनस्पति के खण्डों का वितरण किया गया है।

वनों का महत्व (Importance of Forests)

वन-प्रदेश किसी देश के आर्थिक विकास के लिए बड़े महत्वपूर्ण माने गये हैं। अतएव आरम्भ से ही मानव प्राकृतिक वनस्पति से सामजस्य स्थापित करता रहा है।

वनों द्वारा मानव को अनेक लाभ प्राप्त है जिनका विवेचन यहाँ करना उचित होगा।

(१) वन वायु में नमी उत्पन्न करते हैं। इससे वाष्प घनीभूत होकर वर्षा हो जाती है। वन वाले भागों में वन रहित क्षेत्रों की अपेक्षा वर्षा अधिक होती है। यह वर्षा मात्रा में अधिक और समय में भी निश्चित रूप से होती है। नील नदी के डेल्टा में आरम्भ में वर्षा का औसत केवल ६ दिन था किन्तु वृक्षारोपण हो जाने के बाद यह औसत बढ़कर ४० दिन का हो गया। कांगो और अमेजन के वनों में तो अत्यधिक वर्षा होती है। वृक्षों की छाया भूमि को सूर्य की किरणों के सुखा देने वाले प्रभाव से बहुत कुछ बचाये रखती है। **डाक्टर पार्क्स** (Parks) कहते हैं कि, "वृक्षों द्वारा भूमि पर सूर्य की तेज किरणें नहीं पड़ने पाती। साथ ही वाष्पीकरण क्रिया से भूमि में आर्द्रता रोक रखने में भी सहायता देते हैं।" पंजाब तथा मध्यप्रदेश में जिन जिन भागों में जंगल लगाये गये हैं वहाँ पहले की अपेक्षा अधिक वर्षा होने लगी है। उत्तर-प्रदेश के इटावा जिले में जंगल लगाये जाने ही के कारण वर्षा की मात्रा बढ़ गई है। वृक्षों के कट जाने से अनेकों स्थानों में वर्षा का कम होना देखा गया है।

अध्याय ६

जीव-जन्तु

(ZEO-GEOGRAPHY)

धरती पर सैकडों, हजारों युगो पूर्व अनेक प्रकार के जीव जन्तु विद्यमान थे। यह बात आज प्राचीन चट्टानो मे दबे उनके अनेक अवशेषो से ज्ञात होती है। इन समस्त युगो मे ये सब जीव जन्तु पृथ्वी के अधिकाधिक भाग मे फैलते रहे है और आज भी वे इस ओर अग्रसर है।

प्राकृतिक अवरोध—धरातल पर विद्यमान अनेक प्रकार के अवरोध इनके विस्तार मे रुकावट डालते रहे है। जैसे भूमि पर रहने वाले जीव-जन्तु समुद्रों की स्थिति के कारण एक भू भाग से दूसरे भू भाग को तब तक नही पहुँच सकते जब तक कि वे स्वय तैर कर अन्य स्थानो पर नही पहुँच जायँ। इसी तरह समुद्री जीव स्थल भागों के अवरोध स्वरूप भी दूसरे क्षेत्र मे जाने से रुक जाते है। ऐसे जीव-जन्तु जिन्हे उष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है ठढी जलवायु वाले प्रदेशो मे कदापि नही फैल सकते और जिन पशुओ को घास की अधिक आवश्यकता होती है वे मरु-स्थलो तथा पहाडो के कारण कदाचित ही अन्य स्थानो पर जाते है।

कई पशु पक्षी एक स्थान से दूसरे स्थान को बडी आसानी से पहुँच सकते है, क्योकि उनके चलने को पैर उडने को पख तथा तैरने को पर (Fins) होते हैं। जैसे जैसे वे भोजन की खोज मे आगे बढते है और घूमते है वे पृथ्वी के समस्त कोनों तक पहुँच जाते है। यह बात पृथ्वी पर जीवन के प्राचीन इतिहास के लिए उतनी ही सही है जितनी कि यह वर्तमान जीवन के लिए है।

जो चिडियाँ बहुत लम्बी और ऊँची उडान ले सकती हैं, दूर दूर तक फैलने मे सफल होती है। किन्तु भूमि पर चलने वाली चिडिया और चौपाये अपने क्षेत्र विशेष तक ही सीमित देखी जाती है। जैसे अफ्रीका का शुतुर्मुर्ग (Ostrich), आस्ट्रेलिया का एमू (Emu) तथा दक्षिणी अमेरिका का रिया (Rhea)। प्रत्येक दक्षिण मे अपने अपने महाद्वीप तक ही सीमित है। जबकि एल्बेट्रास नामक समुद्री चिडिया जो बिना पखो को फड फडाये ही उड सकती है, समस्त दक्षिणी महासागरों के चारो ओर पाई जाती है।

यदाकदा पश्चिमी यूरोप मे भी उत्तरी अमेरिका की लगभग पचास प्रकार की चिड़ियाँ देखने को मिल जाती हैं। परन्तु यूरोप मे पाई जाने वाली एक भी स्ट्रैगलर (Straggler) चिडिया उत्तरी अमेरिका मे नही देखी जाती। इसका कारण यह है कि सनातन रूप से चलने वाली पछुवा हवाये हमेशा उत्तरी अमेरिका से यूरोप की ओर प्रवाहित होती है। पवनो की दिशा पृथ्वी की आवर्तन गति द्वारा निर्धारित होती है। पृथ्वी की आवर्तन गति का इस प्रकार जीव जन्तुओं के वितरण पर प्रभाव होता है।

राबर्टसन महाशय के मतानुसार मद्रास मे खेती बढाने अथवा जलाऊ लकडी की आवश्यकता के कारण जब बहुत से जगल काट डाले गये तो वहाँ वर्षा भी कम हो गई। जंगलो के कम हो जाने से जलवायु मे अन्तर पड़ जाता है। सर रिचार्ड टेम्पल का कहना है, "दक्षिण भारत मे जंगलो का काटना बढता ही जाता है। वहाँ तो जगल के वृक्ष काटने के साथ ही साथ लताएँ, झाड़ियाँ आदि भी साफ की जा रही हैं। कहीं-कहीं नदियों के किनारे बहुत दूर तक वृक्ष भी काट डाले गये है। यदि यही बात जारी रही तो कुछ दिनो बाद नदियो के उद्गम स्थानो तक सब वृक्ष काट डाले जायेंगे और उसका परिणाम यह होगा कि वर्षा की कमी के कारण नदियो मे पानी भी नही रहेगा।" दक्षिण और मध्य-भारत मे वनो के नष्ट होने से जो हानि हो रही है वे अब लोगो को भली-भाँति विदित हो रही हैं। उत्तर-प्रदेश के आगरा, इलाहाबाद और अवध के जिलो मे जो हानि हुई है वह भी किसी से छिपा नही है। इलाहाबाद मे तो लगभग २०% भूमि कृषि के अयोग्य हो गई है।

(२) पहाडों के ढाल पर जगलो की रक्षा करना बडा आवश्यक है। नदी, झरने आदि जो पानी बहाकर लाते है वह कुछ तो झाडो मे आकर अटक जाता है और कुछ मैदान मे जमा हो जाता है। पहाडो के ढालो से जो पानी आता है उसे ढाल पर के जगलो के कारण पास की नदियो अथवा झरनो की ओर ही वह आना पड़ता है। पानी जब बरसता है तो वह झाडों पर ही सबसे पहले गिरता है और बाद मे धीरे-धीरे टपक-टपक कर वह जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि पृथ्वी पानी को अधिक जमा रखती है। चीन के शाटुङ्ग प्रान्त मे जो पहाडियाँ हैं वहाँ की झाडियाँ करीब करीब समाप्त हो गई है। मनुष्यो को लकडी जलाने की इतनी अधिक आवश्यकता पडी कि उन्होंने वृक्षो की जडो को भी खोद डाला और वहाँ के वृक्षो का नाश कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि उस जमीन मे जो पानी रोक सकने की शक्ति थी वह जाती रही और साथ ही उत्पादन शक्ति भी कम हो गई। किनारो पर के झाडियो अथवा वृक्षो के काट जाने से झरनो, नालो अथवा नदियों का पानी शीघ्रता से वह जाता है। जिन प्रदेशों मे वन-प्रदेश अन्धा-धुन्ध काट डाले गये हैं वहाँ पानी की अधिक आवश्यकता पडती है और जब नदी के उद्गम स्थानो के पास के जगल नष्ट कर दिये जाते है तो नदी के ऊपरी भाग मे नावे नही चलाई जा सकती और उसमे बाढ (Floods) भी अधिक आने लगती है। यह बाढ इतने जोरों से आती है कि यह अपने किनारे के गाँवो, सडको, पुलो, रेलो आदि को बहाकर ले जाती है। भारत मे प्रतिवर्ष ही नदियो मे बाढ आ जाने से बहुत नुकसान होता है। पहाडो पर ढोरों को लगातार चराने से वहाँ पर वृक्षो का उगना कम हो जाता है जिससे वहाँ पर बरसने वाला पानी बड़े वेग के साथ नीचे आता है।[10] इस पानी के कारण पहाडियो पर जो खेत रहते है वे धान की फसल के समय ऐसे मालुम होते हैं मानो अनेक छोटे-छोटे तालाब भरे हों। पानी इसी वर्षा के समय ही किसानों को मिलता है और दूसरे समय मे मिलने की आशा नही रहती इसलिए किसान इसी समय पानी इकट्ठा कर लेता है।

---

10. "If you choose goat and sheep, you choose wonton destruction and consequent poverty, but if you choose cattle, you serve the soil and gain prosperity in every way."

—*Dr. P. Rao Deshmukh.*

होते है। जल-चरों मे गरम खून वाले केवल ह्वेल, सील आदि ही होते हैं जो स्थल चरो के ही वंशज माने जाते है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इन्होंने धीरे धीरे समुद्री जीवन को स्वीकार कर अपने आप को उनके अनुकूल बना लिया है। ऐसा विश्वास करने का कारण यह है कि कई समुद्री स्तनपोषी जन्तु (Mammals) अभी भी कई बातो मे स्थलचरो से मिलते जुलते है। वे अपने बच्चों को अपने स्तन का दूध पिलाते हैं और उन्हें जीवित रहने में सहायता करते है। उन्हे श्वांस लेने के लिये बार बार समुद्र की सतह पर आना पडता है। अन्य मछलियों की तरह उनमे ऐसी कोई विधि नही पाई जाती जिससे वे जल मे धुली वायु का ही प्रयोग कर सकें। स्थल के भीमकाय जीवो से वे सिर्फ कुछ रीतियो मे ही भिन्न होते हैं जो उन्हे समुद्र के अधिक योग्य बनाती है। उनकी टागो मे कुछ इस प्रकार परिवर्तन हुआ है कि जिससे वे तैर सकें। ठंडी जलवायु वाले जीवो की तरह ह्वेल के शरीर पर फर (Fur) नहीं होते। उनकी ठंड से रक्षा उनके शरीर पर मोटी चर्बी की परत से होती है।

स्थल के जीवो मे कुछ ऐसे अंग होते हैं जिनसे वे ध्वनि कर सकते है। ध्वनि की दृष्टि से चिड़ियो का गाना और मनुष्य की बोली बडा ही महत्वपूर्ण है। परन्तु समुद्र के जीव प्राय शान्त होते हैं।

स्थल के जीव—समुद्र की अपेक्षा स्थल के जीव अधिक चतुर और बुद्धिमान होते हैं। इसका कारण यह है कि स्थल के जीव अनेक प्रकार के भौगोलिक वातावरण के बीच पलते है और बडे होते है। कई जीव तो केवल भूमि तक ही सीमित हैं—उदाहरणत मधुमक्खियाँ और दीमक—बडे ही विचित्र स्वभाव का परिचय देते है। यही नही, चिडियो द्वारा घोसला बनाना, बीवर द्वारा घर बनाना, कबूतरो द्वारा घोसले की रचना करना और कुत्तो द्वारा गन्ध के जरिये खोज करना आदि कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो स्थल-चारियों के बुद्धिमता पूर्ण स्वभाव को व्यक्त करते हैं। जलचरों मे इनकी बराबरी का कोई भी उदाहरण नही मिलता।

सभी जीवो मे सर्वोपरि मनुष्य की आश्चर्यजनक बुद्धि का विकास भी स्थल पर ही सभव हुआ है। क्योकि स्थल पर ही जलवायु, पैदावार तथा अन्य बातो की बडी मात्रा मे रूप विभिन्नता मिलती है जो सही अर्थ मे मानव बुद्धि के विकास को गति प्रदान कर सकती है। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश के नीरस बर्फीले उजाड खडो मे सभ्यता का विकास उतना ही असम्भव है जितना कि अधियारे गहरे समुद्र के जीवों के लिए उन्नति करना।

जलवायु का प्रभाव—संसार मे जीवो के वितरण पर धरातल के तापक्रम की भिन्नता का अभूतपूर्व प्रभाव देखा जाता है। प्राय अधिकतर पशु उन प्रदेशों तक सीमित देखे जाते है जहाँ कि उन्हें अपने बच्चों को पालने के लिए लम्बी और उष्ण ग्रीष्म ऋतु मिलती है। किन्तु पेड-पौधो के विपरीत—जो अपना भोजन मिट्टी और हवा मे प्राप्त करते हैं—जीव वनस्पति के भोजन अथवा अन्य पशुओ के ऊपर निर्वाह करते हैं। शेर जैसे मास भक्षी जीव प्राय. घास चरने वाले पशुओं को खाते हैं। इस प्रकार अन्ततोगत्वा सभी जानवर अपने भोजन के लिये प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पेड पौधों पर ही निर्भर करते है। अस्तु पशुओ का वितरण कुछ सीमा तक पौधो के वितरण पर ही निर्भर है जो कि स्वय जलवायु पर आधारित होते है।

(७) जंगलो के वृक्षों से जो पत्तियाँ आदि सूख-सूख कर गिरती है वह धीरे-धीरे सड-गल कर मिट्टी में मिल जाती है और उसको अधिक उपजाऊ बना देती हैं।

(८) वन सुन्दर दृश्य उपस्थित करते है और देश के प्राकृतिक सौंदर्य की वृद्धि करते हैं। अतएव वे देशवासियों में सौंदर्य-भावना पैदा करते है और उन्हें सौंदर्य एव प्रकृति-प्रेमी बनाते है।

(९) घने जगलो में कई प्रकार के कीडे-मकोड़े तथा छोटे-छोटे असख्य जीव-जन्तु रहते है जिन पर बडे-बडे पशु अपना निर्वाह करते है। भारतीय वनो में कई प्रकार के शाकाहारी—यथा बारहसिंगा, हिरन, साभर, बैल, सुअर—तथा मासाहारी जीव—तेंदुआ, शेर, रीछ आदि—रहते हैं जिनका शिकार कर कई व्यक्ति अपना पेट पालते हैं। सघन वनो में अब भी बहुत सी जगली जातियाँ निर्वाह करती है। भारतीय वनो में लगभग १३० लाख गाय-बैल, ३० लाख भैंसे और ९० लाख अन्य पशु चराये जाते है जिनसे सरकार को १०० लाख रुपये की वार्षिक आय होती है।

(१०) वन केवल जलाने के लिए ईधन तथा घरेलू काम के लिए इमारती लकडी ही प्रदान नही करते बल्कि अकाल के समय कई प्रकार के फल-मूल-कद तथा पशुओं के लिए चारा भी पर्याप्त मात्रा में प्रदान करते है। व्यापारिक स्तर पर जगली पदार्थो को एकत्रित करने का कार्य भी महत्वपूर्ण है। गैल्वाज के वृक्षो से गोंद, रबड, गटापारचा, गाटा-जिलोटुग, रतन, सुपारी आदि प्राप्त किये जाते है। जगलों से जडी बूटिया तथा वृक्षों की छाल भी प्राप्त की जाती है जिनमें मुख्य सिकोना, हींग कार्क, तारपीन आदि मुख्य है।

(११) जिस प्रकार वन कम वर्षा वाले स्थानो के लिए बहुत उपयोगी हैं उसी प्रकार अधिक वर्षा को रोकने के लिए भी उपयोगी है। हवा में नमी रहने के कारण न तो बहुत अधिक वर्षा हो पाती है और न वर्षा की कमी ही रह पाती है। पानी काफी बरसने वाले जगल वाले प्रदेशो को न तो अधिक वर्षा से हानि उठानी पडती है और न कम वर्षा होने से सूखा मरना पडता है।

(१२) वन प्रतिदिन हवा से जल देते रहते है जिससे गर्मियो मे आस-पास का प्रदेश ठडा रहता है। जगली क्षेत्रो की आबहवा न तो अधिक गर्म होती है और न बहुत ठढी ही रहती है। वृक्षो से गर्म लू तथा ठढी हवा के झोंके कम पड जाते है। हर समय तरावट बनी रहती है और हवा दुखने नही पाती जिसके फलस्वरूप जलवायु हमेशा समशीतोष्ण रहती है। हवा को शुद्ध करने में भी वृक्ष बहुत उपयोगी होते है। जितनी गन्दी वायु होती है उसको वृक्ष शुद्ध कर देते है और इस प्रकार ह वन हमें रोगों से बचाते है क्योकि वृक्ष शुद्ध वायु छोडते है जिस पर हमारा जीवन है निर्भर है और हमारी छोडी हुई विषैली गैस को स्वय ग्रहण करते है और उसे शुद्ध कर फिर से हमें देते है। इस प्रकार वन हमें प्राण-दान भी देते है।

(१३) प्राचीन काल के कारबनयुग के जगलों द्वारा ही आज हमें शक्ति का मुख्य साधन कोयला प्राप्त होता है। फ्रांस, इटली, जर्मनी और यूरोपीय देशों में जो नये आविष्कार किए गए हैं उनसे ज्ञात हुआ है कि जगलों से प्राप्त होने वाली लकड़ियों से बहुत अधिक शक्ति और गर्मी प्राप्त होती है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि लगभग १० पौंड लकडी के कोयले (Charcoal) अथवा २० पौंड सख्त

होता रहा है। फलत. आज उनमे और उनके प्राचीन रूपों मे विशेष अन्तर दृष्टिगत होता है। यही नही पृथ्वी पर वर्तमान जीवन सिलाभूत-अवशेष रूपो से एक दम भिन्न पाया जाता है।

प्राचीन काल से जीवों के रूप मे अन्तर उपस्थित करने वाले कई कारणो मे कोई ऐसा महत्वपूर्ण नही है जैसा उनके भौगोलिक वातावरण मे परिवर्तन। भौगोलिक वातावरण के परिवर्तन से ही जीवन के रूपो मे अन्तर पैदा होता है। जब किसी समुद्र नितल का कुछ भाग धीरे-धीरे ऊपर उठ आता है जिससे वह तटीय मैदान का रूप ले ले, तो जिस प्रकार के जन्तु पहले इस भाग पर रहे है उनको अनिवार्य रूप से नया घर बनाने की आवश्यकता पडती है। साथ ही साथ समीपस्थ भूमि पर पैदा होने वाले जीवो को नवीन भूमि पर भी अपना प्रभाव जमा लेने का अवसर मिल जाता है। ऊँचे पर्वत अनावृत्तिकरण के प्रभाव से धीरे-धीरे कट कर नदी घर्षित समतल प्राय मैदान मे बदल जाते है। अतएव ऊँचे पर्वतो पर रहने वाले जीव या तो अपने आप को नवीन परिस्थितियो के अनुसार ढाल लेते हैं या फिर नष्ट हो जाते है। जलवायु मे शनैं शनैं होते रहने वाले परिवर्तनो के बीच, जिससे पूर्वी कनाडा और उत्तरी पूर्वी सयुक्त राज्य अमेरिका पर फैली हुई हिमयुगीय बर्फ की शिलायें धीरे-धीरे कभी आगे और कभी पीछे हटती रही है, पेड पौधे और जीव पहले तो इन भागो से दूर बहा दिये गये और फिर पुन उनको लौट जाने का अवसर मिला। पृथ्वी के इतिहास मे इस प्रकार के परिवर्तन बार बार होते रहे हैं। उनमे से प्रत्येक ने अपने प्रदेश के जीवों के रूप परिवर्तन मे कुछ न कुछ अवश्य प्रभाव डाला है। आज ससार मे जो कुछ भी पेड पौधे और जीव फैले हुए पाये जाते है वे अपने रूप परिवर्तन की लम्बी श्रृङ्खला मे वर्तमान अवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उष्ण कटिबन्ध में पशु जीवन

उष्ण कटिबन्ध पशु जीवन के लिए विशेष तौर पर उपयुक्त है। क्योंकि इस भाग मे प्रचुर मात्रा मे वनस्पति पैदा होती है जो पशुओ को बडी मात्रा मे भोजन प्रदान करती हैं। इस भाग के बडे-बडे पशु घने जंगलो की अपेक्षा सवन्ना घास के मैदानो में ही अधिक मिलते है। उष्णवृत्तीय द० अमेरिका, अफ्रीका और पूर्वी भागो के बीच यद्यपि जीवन की अवस्थायें बहुत कुछ मिलती जुलती ही हैं फिर भी यहाँ के पशुओ मे बडा विभेद पाया जाता है। उष्णवृत्तीय दक्षिणी अमेरिका मे चौडी नाक वाले बन्दर, स्लोथ अरमाडिलो, जैगुआर लामा, पिकेरी, विभिन्न चिडियायें, कोनडोर तथा अन्य कई चिड़ियाँये पाई जाती है जो अफ्रीका और एशिया में अन्यत्र नही देखी जाती।

उष्ण वृतीय अफ्रीका मे संकरी नाक वाले बन्दर, ऐप्स, गोरिला, चिम्पेंजी, बेबून, लैमूर, जिराफ, जेबरा, हिप्पोपोटोमस, हाथी, रिनोसर्स, शेर और तेन्दुआ आदि जीवो का घर है। इन बडे स्तन धारी जीवो के अतिरिक्त शुतुमुर्ग, होर्नबिरस तथा कई चिडियाँ भी वहाँ पाई जाती हैं।

पूर्वी प्रदेशो मे कई प्रकार के पशु देखे जाते हैं। अफ्रीका के समान यहाँ भी हाथी, रिनोसर्स, लैमूर और बन्दर आदि होते है। इनके विपरीत यहाँ चीते, रीछ व हिरन आदि पशु पाये जाते है जो अफ्रीका मे नही देखे जाते है।

वर्ष की अवधि मे २६,७०० लाख नए वृक्ष पैदा हो सकते है।[13] विश्व के लगभग ५० से ऊपर देशों में वर्ष के किसी न किसी दिन अथवा सप्ताह मे वृक्षारोपण उत्सव मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र, फिलीपाइन्स और कम्बोडिया मे इस दिन को 'Arber day', जापान में 'Green Week'; इजराइल मे 'New Year's Day of Trees'; आइसलैंड मे 'The Students' Afforestation Day' तथा भारत मे 'Van Mahotsava' कहते है।

यद्यपि लकडी का उपयोग वृक्षो के उत्पादन से अधिक है किन्तु अभी भी विश्व के कई देशो मे विशेषतः दक्षिणी अमरीका, मध्य अफ्रीका, द० पू० एशिया और इण्डोनेशिया मे विशाल वन सम्पत्ति वर्तमान है जिसे छुआ भी नही गया है। इन क्षेत्रों मे जलवायु की अनुकूलता से वृक्ष बहुत जल्दी उग आते है, किन्तु यातायात के साधनों की असुविधाओ के कारण इन वनो का पूर्णत लाभ नही उठाया जा सका है। यद्यपि विश्वस्त आँकडो के अभाव मे यह निर्णयपूर्वक नही कहा जा सकता है कि पृथ्वी के कितने भाग मे वन वर्तमान है फिर भो जो कुछ सूचनाये उपलब्ध है उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि लकडियो के वनो का क्षेत्रफल उत्तरी अमेरिका के आकार से तीन गुना है।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् से ससार के वनो से प्राप्त लकडियो की मात्रा मे निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। १९४६ मे वनो की गोल लकडी की उपज का अनुमान १४१,००० घन मैट्रिक था और उनका वजन १०,००० लाख मैट्रिक टन था। इस समस्त उपज का मूल्य ७१,००० लाख डालर था, इनके महत्व का अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि लकडी का यह मूल्य कोयले के वार्षिक उत्पादन के मूल्य से तिगुना है।[14]

प्रश्न

१. उष्ण कटिबन्धीय और शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों का वर्णन करिये और यह बताइये कि इन प्रदेशों से वाणिज्य की क्या वस्तुएँ प्राप्त होती है।

२. "वन किसी देश की राष्ट्रीय सम्पत्ति है और सभ्यता को उनकी बहुत आवश्यकता है।" इस कथन की पुष्टि करिए और जलवायु, वर्षा तथा उद्योग धन्धों पर पडने वाले इनके प्रभाव को बताइए।

३. विश्व में शीतोष्ण कटिबन्ध के प्रमुख वन कहा स्थित है? इनमे वाणिज्य की क्या वस्तुएँ प्राप्त होती है और कौन से उद्योग-धन्धे इन पर आधारित रहते है।

४. विभिन्न प्रकार के वन प्रदेशों का वर्णन करते हुए उनके बीच के अन्तर को बताइये और प्रत्येक की उपज बताइये।

"शीतोष्ण वनों की अपेक्षा उष्ण कटिबन्ध के वनों मे अधिक लकडिया पाई जाती है किन्तु विश्व के वाणिज्य में इनका महत्व अधिक नहीं है।" इस कथन की पुष्टि करते हुए बताइये कि इन के विदोहन न होने के क्या कारण हैं?

५. उष्ण कटिबन्धीय और शीतोष्ण कटिबन्धीय वनों की तुलनात्मक व्याख्या करते हुए बताइये कि इनमे क्या-क्या वस्तुएँ प्राप्त होती है और उनका व्यापार मे क्या महत्व है?

---

13 **Ibid.**

14 ***F A. O.*, Year book of Forest Products Statistics.**

से न्यूजीलैंड तक पाई जाती है परन्तु उत्तर की ओर यह उत्तम आशा अन्तरीप से अधिक ऊपर नहीं देखी जाती।

उत्तरी ध्रुव प्रदेश मे मांस-भक्षी जीवो में ध्रुवीय रीछ, ध्रुवीय लोमड़ी, वोलविराइन, वालरस तथा सील मछलियाँ प्रमुख है। एल्यूशियन द्वीप के निवासय को सील मछली से उनके भोजन तथा वस्त्र प्राप्त होते हैं। खुर वाले जानवरों में यहाँ रेनडियर मुख्य है। यह प्रधानत काई, लीचन और मास पर निर्भर-रहता है अत. यह इनकी खोज मे ग्रीष्म मे उत्तर की ओर तथा जाडो में दक्षिण की ओर घूमता रहता है। यहाँ की रहने वाली कई जातियाँ इसको पालती हैं और इससे स्लेज खीचने का काम लेती है। इसके दूध, मांस तथा चमड़े से वे अपने भोजन तथ वस्त्र की आवश्यकताओ को पूरा करते है। इनके अतिरिक्त मूस, मस्क वैल, ध्रुवीय खरगोश, लेमिंग और पेटामिगिन यहाँ के अन्य मुख्य पशु-पक्षी है। सर्प यहा बिल्कुल ही नही पाये जाते। कई ध्रुवीय पशु जाडो में प्रायः कहीं छिप जाते है परन्तु ग्रीष्म में पुन उनकी संख्या बढ जाती है।

जीवधारियों के भौगोलिक प्रदेश

(Zeo-Geographical Regions)

प्राणि-शास्त्रवेत्ताओं के अनुसार जीव-जन्तु वानस्पतिक समुदायों से सम्बन्धित होते हैं। इन्होंने भूतल को ऐसे कई प्रदेशो में बाटा है जिनमे विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु पाये जाते हैं। ऐसे भागो को जहाँ एक विशेष प्रकार की वनस्पति तथा उससे सम्बन्धित विशेष प्रकार के जीव-जन्तु पाये जाते है, **जीव-जन्तुओं के भौगोलिक प्रदेश** कहते है।[1] ये प्रदेश पशु-जीवन के अतरो पर ही आधारित होते हैं, और चूकि जीवो मे भी सबसे मुख्य स्तनपोषी पशु होते हैं अत इनमें जो अन्तर मिलता है, उसी के अनुसार ये प्रदेश भी विभिन्नता लिए होते हैं।

स्तनपोषी जीव तीन उप-विभागो मे बटे हैं :

(१) नाभी वाले स्तनपोषी (Placental mammals)—जिनके बच्चे अपनी माँ के दूध पर पाले जाते है। मनुष्य भी इसी श्रेणी मे सम्मिलित किया जाता है। ये जीवित रहने के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं।

(२) थैली वाले प्राणी (Marsupials)—जिनके बच्चो का जन्म अपूर्ण अवस्था मे होता है और जिन्हे बडे होने तक अपनी मा से सम्बन्ध रखना पडता है। कंगारू ऐसी ही श्रेणी मे आता है। इनका जीवन विशेष रूप का नही होता और ये आदि-जीवन के प्रतिरूप होते है।

(३) अंडे देने वाले प्राणी (Monotremes)—इनके बच्चे अडो से पैदा होते है। इनमें कुछ रेंगने वाले जीव भी होते है जैसे प्लैटीप्स। यह सब गरम-खून वाले पृष्ठपोषी जीव होते है, इन पर बाल होते है और जन्म के कुछ समय बाद तक ये मा के दूध पर निर्भर रहते है।

---

1. "Zeo-geographical region is a part of the earth's surface having an assemblage of mammalian fauna which possesses traits that distinguish it from that of other parts of the world—*E. W. Briault and J. H. Hubbard*, **An Introduction to Advanced Geography**, 1957, p. 293.

प्राकृतिक वातावरण का अन्तर—पृथ्वी के विभिन्न भाग अपनी प्रकृति आदि मे एक दूसरे से इतने भिन्न हैं कि उन पर अनेकानेक और भिन्न प्रकार के जीव जन्तुओं का पाया जाना स्वाभाविक है। परन्तु जो भेद जल और स्थल की भौगोलिक अवस्थाओं मे पाया जाता है उसका कोई साम्य नहीं। समुद्र अथाह जल राशि से घिरे है और स्थल वायु के महा समुद्र से। अत जो जीव स्थल पर पैदा होते है वे उनसे बिल्कुल भिन्न होते है जो कि शताब्दियों से समुद्र मे रहते आ रहे हैं। स्थल और जल जीवो की भिन्नता लम्बी अवधि से महासागर और महाद्वीपों के वर्तमान होने की बात को भी स्पष्ट करते है।

समुद्र जल का घनत्व वायु से कही अधिक है। जल तथा वायु के घनत्व का अन्तर स्थल और समुद्र के जीवन की भिन्नता पर गहरा प्रभाव डालता है। कई समुद्री जीव जिस जल मे रहते हैं वे उसमें कभी भारी नहीं होते। अतः वे बिना किसी श्रम के ही पानी पर पड़े रह सकते हैं और अपनी समस्त शक्ति का उपयोग तैरने मे कर सकते हैं। कई प्रकार की मछलियाँ और अन्य समुद्री जन्तु खुले समुद्रों के बीच ही अपना जीवन बिता देते है। वे विश्राम आदि के लिये न तो तट पर ही आते है और न समुद्र के नितल पर ही जाते है।

इसके विपरीत पक्षी जो हवा मे उडते है हवा से भारी होते है। फलतः उनकी अधिकतर शक्ति नीचे भूमि पर गिरने से बचाव करने में ही खर्च हो जाती है। अच्छे से अच्छे उडाक पक्षी भी विश्राम के लिये कुछ समय के लिये भूमि अथवा पेड़ो पर उतर आते है। जब पक्षी उड़ने के लिए उठते हैं तो हवा उनको इतना कम सहारा देती है कि उनको चलने के लिये पैर वाञ्छनीय हो जाते है।

गहरे महासागर सदा ही शान्त, शीतल, अँधियारे और एक दम नीरस होते हैं। मौसम परिवर्तन वहा कभी देखा ही नहीं जाता। समुद्र का नितल प्रायः मन्द ढाल वाला ऊँचा नीचा मैदान होता है जो हजारो मीलो तक कीचड की तह से ढका रहता है। किन्तु भूमि पर अनेकानेक भिन्नतायें और अवस्थायें देखने को मिलती है। वहाँ रात और दिन तथा ग्रीष्म से जाडे तक बराबर कई परिवर्तन होते हैं। धरातल पर उष्ण और शीतल, शान्त और तूफानी, स्वच्छ और मेघाच्छन्न, शुष्क और तर आदि कई प्रकार का मौसम वर्ष भर मे देखा जा सकता है। अत जीवन के बड़े रूप (Higher Forms of life), जो कि प्राय भूमि पर ही पाये जाते है, वहाँ पर पाई जाने वाली विभिन्न भौगोलिक अवस्थाओ की एक सम्मिलित प्रतिक्रिया ही समझा जाना चाहिये। स्थल की अपेक्षा गहरे समुद्रो मे नीरस वातावरण के कारण जीवन का रूप बड़ा ही सीधा और सरल होता है।

सामुद्रिक जीव—समुद्र मे पाये जाने वाले जीव बहुत ही साधारण किस्म के होते है। पौधो की तरह समुद्र के कई जीव नितल (bottom) से ही चिपके रहते हैं। कुछ मछलियाँ जैसे तारक मत्स्य (Star Fish) आदि बहुत ही मन्द गति वाली होती है, कुछ जैली मछली (Jelly Fish) जैसी मछलियां जल पर ही तैरती रहती हैं और स्वयं बहुत कम हिलती डुलती हैं। बडे ही उच्चरूप से व्यवस्थित कुछ समुद्री जीव ही शीघ्रता के साथ चलते हैं पर इसके विपरीत लगभग समस्त स्थल चरजीव स्वतन्त्रता से घूमते है, दौड़ते है या उड़ते हैं।

स्थल-चरो मे बडे बडे और महत्वपूर्ण जीव गरम खून (Warm blooded) वाले होते है। परन्तु अधिकतर जल-प्लावी जीव ठंडे खून वाले (Cool blooded)

के आगमन के साथ ही यहाँ पशु जीवन के वितरण में पूर्ण परिवर्तन हो गया है। यह परिवर्तन न केवल संख्या बल्कि किस्म की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। आजकल असंख्य भेड़ें विस्तृत प्रदेश में चरती हुई देखी जाती हैं। इसी तरह यहाँ बड़ी मात्रा में खरगोश बढ़ गये हैं। इस मानव परिवर्तन के कारण यहाँ प्राकृतिक पशु जीवन का सन्तुलन बिगड़ गया है।

मध्यवर्ती और दक्षिण अमरीका का सम्बन्ध उत्तरी अमरीका से रहा है, यहाँ के जीव भी कुछ सीमा तक अलग से रहे हैं। यहाँ अंडे देने वाले पशुओं का अभाव किन्तु नाभि वाले पशुओं का आधिक्य है। मारमोसेट स्लोथ, आर्मेडिलो, ओपोसम, इसके मुख्य उदाहरण हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अत्यन्त प्राचीनकाल में द० अमरीका का सम्बन्ध स्थल द्वारा अफ्रीका से रहा है किन्तु कालान्तर में यह सम्बन्ध विच्छेद हो जाने के कारण इन जीवों का सम्बन्ध भी इस महाद्वीपों से टूट गया। आरम्भ में यहीं से स्तनपोषी जीव दक्षिणी अमरीका को आये, जहाँ अमेजन नदी की घाटी के घने वनों में इन्हें जीवित रहने के लिए अनुकूल दशायें मिलीं। इस प्रदेश को नया स्थल (New land or Neogaean) कहा जाता है।

विश्व के अन्य भाग तीसरे क्षेत्र में सम्मिलित किये जाते हैं जिसे उत्तरी-भाग (Northern Land or Arctogaean) कहा जाता है। यहाँ अंडा देने वाले जीवों का सर्वथा अभाव पाया जाता है। आरम्भ में यहाँ नाभि वाले स्तनपोषी जीवों का प्रादुर्भाव हुआ माना जाता है। ऐसे पशु मुख्यतः खुर वाले होते हैं।

यूरोप, हिमालय के उत्तर के एशिया तथा उत्तरी अमरीका के उत्तरी भाग को होलार्कटिक (Holarctic) प्रदेश में सम्मिलित किया जाता है। इस प्रदेश में बहुत ही कम प्राचीन पशु हिमयुग का सामना करके बच सके हैं अतः यहाँ के अधिकांश जीव आधुनिक युग की ही देन हैं। न यहाँ अंडे देने वाले पशु मिलते हैं और न थैली वाले पशु ही। इस प्रदेश को दो भागों में विभक्त किया जाता है, (क) **पूर्व का प्रदेश** (Palaearctic) और (ख) **पश्चिम का प्रदेश** (Nearctic)। प्राचीन काल में इन दोनों प्रदेशों के बीच स्थल सम्बन्ध था जिसके फलस्वरूप उत्तरी अमरीका में भी नाभि वाले स्तनपोषी जीव पहुँच सके। ये सम्भवतः बेहरिंग जल-डमरू मध्य होकर अथवा ग्रीनलैंड तथा आइसलैंड होकर यहाँ पहुँचे होंगे। इसका प्रमाण साइबेरिया और अलास्का में मिलने वाले बालदार पशुओं के अवशेषों से मिलता है। किन्तु यह निश्चित है कि न तो एटीलोप जैसा पशु उत्तरी अमरीका में जीवित रह सका और न ही ऊँट या घोड़े साइबेरिया में चले जाने पर जीवित रह सके।

यह महत्वपूर्ण बात है कि उत्तरी अमरीका में हिमयुग का पीछे हटना प्लीस्टोसीन युग के अन्त में हुआ जिसके फलस्वरूप उत्तरी अमरीका के आधे दक्षिणी भाग में उपनिवेश बनने लगे और आर्मेडिलो तथा ओपोसम जैसे जीव दक्षिण अमरीका से यहाँ आ पहुँचे क्योंकि दोनों महाद्वीपों के बीच कोई आड़ी अवरोधक रेखा न थी। अस्तु, इस भाग को Sonoran Region की संज्ञा दी गई है। इसकी तुलना का कोई भाग पूर्वी क्षेत्र में नहीं है।

अफ्रीका को **इथोपियन प्रदेश** (Ethopian Region) में सम्मिलित किया गया है। कुछ वैज्ञानिक इसको भी उत्तरी प्रदेश का ही भाग मानते हैं क्योंकि यहाँ जो हाथी पाया जाता है इसका संबंध प्राचीन काल के एक ऐसे ही जीवधारी से था

जीवन युद्ध का सिद्धान्त—प्राय: किसी भी प्रदेश मे रहने वाले जीवो की मात्रा उतनी ही होती है जितनी उस प्रदेश मे भरण पोषण की क्षमता होती है। जहाँ भोजन की बहुलता होती है वहाँ जीवों की संख्या भी अधिक होती है किन्तु जहाँ भोजन आदि का अभाव है वहाँ पशु जीवन भी कम ही पाया जाता है।

किसी भी प्रदेश में पाये जाने वाले जीवों की संख्या में मानव चेष्टाओं द्वारा प्राय परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य अपनी आवश्यकता के लिये कभी कभी जगली जानवरों को मार कर उनके स्थान पर पालतू पशु रखने लगता है। मानव की इस प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उस प्रदेश मे जानवरो की सख्या घट जाती है। किन्तु इस प्रकार के परिवर्तनों के बाद भी उस प्रदेश के जीवों की सख्या वस्तुतः शताब्दियो तक लगभग वही बनी रहती है। क्योकि जीव मनुष्य की अपेक्षा बहुत शीघ्र और अधिक संख्या मे बढते हैं। केवल सालमन मछली ही एक बार में हजारो अण्डे देती है। अस्तु, यदि समस्त छोटे छोटे जीव बडे हो जायँ और फिर नये बच्चों को जन्म दें तो उनकी सख्या अपार रूप से बढ जाती है।

जीवो की इतनी शीघ्र और अधिक बढवार होते हुए भी किसी स्थान विशेष पर उनकी सख्या सीमित ही रहती है क्योकि उनमें से अधिकतर जीवित रहने का अवसर प्राप्त करने के लिये भीषण आपसी सघर्ष में ही समाप्त हो जाते हैं। अनेक छोटे छोटे जन्तुओ को बडे जीव अपना भोजन बना लेते हैं। इसलिये प्राय. वही जीव जीवित रहते हैं जिन्हे अपने साथियो से अधिक अवसर और लाभ प्राप्त हैं और इस प्रकार 'जीवन युद्ध' (Struggle for existence) में सफल होने के लिये अधिक योग्य हैं। जीवन युद्ध में सफल होने वालो की सफलता को ही अवसर 'योग्यतम का जीवन' (Survival of the Fittest) कहा जाता है। जीवित रहने वाले जीव वही होते है जो प्राकृतिक चुनाव मे (Natural selection) में सही उतरते है।

उपर्युक्त भौगोलिक वातावरण मे पलने वाले जीवों के जीवन-युद्ध मे सफल होने के अवसर अधिक रहते है। मछलियाँ अपने विशेष आकार के कारण ही समुद्रों मे इधर उधर बडे आराम से घूम फिर सकती हैं। इसी से उनको अपना भोजन प्राप्त करने तथा विपदाओ से बचने की सरलता रहती है। खुले समुद्रो में पलने वाले कई छोटे गतिहीन जीव पाये जाते हैं। ये जीव समय पर अपना रंग समुद्र जल के अनुसार बना लेने मे सिद्ध होते हैं। अत. जब कभी उन पर हमला होता है तो वे अपने आपको एकदम अदृश्य बना लेते है। कई जीवो की पीठ काले रंग की होती है और नीचे हल्का रंग होता है जिससे छाया के प्रभाव को मिटाया जा सके। इस तरह वे बडी कठिनाई से ही दिखाई पड सकते है और उनको अपने शिकार की ओर बढने में भी अधिक अच्छे अवसर रहते हैं। मरुस्थलों मे जीव प्राय भूरे रंग के और बर्फीले ध्रुव प्रदेशों मे सफेद रग के देखे जाते हैं। इनका रंग ठीक वहाँ के धरातल के अनुरूप ही होता है।

पशु जीवन का भेद—पशु जीवन की जितनी भी किस्मे देखी जाती है वे सब अति प्राचीन कुछ बची हुई किस्मो से ही निकली हुई हैं। लेकिन जब उनके प्राचीन रूप—जो अवशेष रूप (Fossils) मे सुरक्षित पाये जाते है—की तुलना आज के जीवित रूपो से की जाती है तो उनमे कोई साम्य नही पाया जाता। लाखों वर्षों से पृथ्वी पर जीवन का विकास हुआ है इसलिये जीवो की किस्मों मे धीरे-धीरे अन्तर

अध्याय १०

मिट्टियाँ और खाद

(SOILS & MANURES)

मिट्टी का महत्व

यदि पृथ्वी का कोई भाग मनुष्य के लिये सबसे अधिक महत्वपूर्ण है तो वह है मिट्टी। मिट्टी का प्रश्न कृषिकर्ताओं, बागवानों और वन-पदाधिकारियों सभी के लिये महत्व रखता है। वन-पदाधिकारियों (Forest Officers) को नये वन उपजाने तथा वर्तमान वनों की देख-भाल का काम करना पड़ता है। अत मिट्टी की जानकारी रखना उनके लिये अनिवार्य है। जब तक मिट्टी की प्रकृति के विषय में समुचित ज्ञान प्राप्त न किया गया हो उससे अधिक उपज उपलब्ध होना सम्भव नहीं।

मिट्टी पर ही मनुष्य अपने लिये अथवा दूसरों के लिये भोजन उत्पन्न करता है। फल और अनाज मिट्टी से ही उपजते हैं। मिट्टी से घास उगती है, चारा उगाया जाता है। घास व चारा पशुओं को खिलाकर हम उनके दूध की वस्तुएँ तथा अपने पहनने का सामान प्राप्त करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि सभी जीव-जन्तु चाहे वे मनुष्य हो, चाहे पशु और चाहे चिड़िया वे मिट्टी में उत्पन्न होने वाले ही किसी न किसी पदार्थ पर निर्भर रहते है। श्री विलकॉक्स के अनुसार तो, "मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही आरम्भ होती है।" वास्तव में मनुष्यों और राष्ट्रों का जीवन-माप दंड उनके मिट्टी के सामंजस्य में ही निहित है। विश्व के प्रत्येक भाग में जनसंख्या का एक बड़ा भाग कृषि और उससे सम्बन्धित उद्योगों मे संलग्न है—फ्रांस और सं० रा० अमरीका में २५ से ४०%; इटली में ३५%, जापान में ६०%, भारत में ७०%; चीन और यूगोस्लाविया में ८०%।

मिट्टी का निर्माण (Soil Formation)

श्री ह्यू बैनेट के अनुसार "मिट्टी भूतल पर मिलने वाले असंगठित पदार्थों का वह ऊपरी पर्त है जो मूल चट्टानों तथा वनस्पति अंश के योग से बनता है।"[1] अतः स्पष्ट है कि मिट्टी न केवल मूल चट्टानों का चूर्ण ही है वरन् वनस्पति के सड़े-गले अंश भी उसमें सम्मिलित होते हैं।

मिट्टी तीन प्रकार से बनती है। ये क्रियायें निम्नलिखित हैं:—

(१) रासायनिक कटाव या चट्टानों के छिन्न-भिन्न होने से (Chemical Weathering)—भूमि को काटने वाली शक्तियाँ, जैसे जल इत्यादि चट्टानों को

1. "Soil is a layer of unconsolidated materials at the earth's surface which has been derived from rocks and organic matter through agencies of decay and disintegration." —*Hugh Bannett.*

शीतोष्ण कटिबन्ध के पशु

उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध में यूरोप, एशिया और उत्तरी अमेरिका का अधिकाश भाग सम्मिलित है। जीव जन्तुओ के विचार से यह प्रदेश पुरानी दुनियाँ में उष्ण कटिबन्ध से हिमालय तथा सहारा मरुस्थल द्वारा अलग कर दिया गया है। नई दुनियाँ में उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका हाल के भौगभिक समय में समुद्र द्वारा अलग हो गये हैं। इस समस्त कटिबन्ध मे पशु जीवन में आश्चर्य-जनक समानता पाई जाती है। परन्तु उत्तरी अमेरिका में पाये जाने वाले कई स्तन-धारी जीव जैसे ओपोसम, चहचहाने वाली चिड़ियायें, सर्प और कई अन्य जीव यूरोप तथा एशिया में नही मिलते। इसी तरह यूरोप तथा एशिया के कई जीव-जन्तुओ का उ० अमरिका में अभाव पाया जाता है।

उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध में, जैसा कि हम जानते है, कई जलवायु भेद पाये जाते है। इसी कारण वहाँ विशेष प्रकार की वनस्पति पेटियाँ देखी जाती है। इन वनस्पति पेटियो का वहाँ के पशु जीवन पर गहरा प्रभाव देखा जाता है। उत्तरी अमेरिका के ओपोसम, दोनो अमेरिकाओ की गिलहरियाँ, पेडो पर रहने वाले स्तन धारी तथा चिडियायें प्राय जगलो में रहती हैं। चरने वाले तथा खुर वाले स्तनधारी मुख्यत. स्टेपी और प्रेरी मे देखे जाते है जहाँ कि बिसन, एन्टीलोप, भैंसें, प्रेरी कुत्ते आदि के लिये घास उत्तम भोजन प्रदान करती है। कुछ स्टेपी में जहा वर्षा अनिश्चित होती है और फलस्वरूप भोजन की कमी रहती है वहाँ स्थानीय तौर पर पशु संख्या कम होती है। अफ्रीका तथा एशिया के स्टेपी और मरुस्थलीय भागो के बीच के अन्तरिम प्रदेशो में ऊँट, घोडे, जगली गधे, भेडें तथा बकरियाँ विशेष तौर पर पाई जाती है।

दक्षिणी अमेरिका और दक्षिणी अफ्रीका में उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के बीच कोई असाधारण रुकावट नही है। अत इन दोनो महाद्वीपो में उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के पशुओ के बीच भेद करने वाला महत्वपूर्ण साधन उपयुक्त प्रदेश ही है। दक्षिणी अमरिका के शीतोष्ण भाग मे पम्पाज पर घूमने वाले लामा और प्रेरी कुत्ते की भाँति विजकच्चा मुख्य पशु है। इनके अतिरिक्त रिया यहाँ का दूसरा मुख्य पशु है जो अफ्रीकी शुतुर्मुर्ग से मिलता-जुलता होते हुए भी काफी भिन्न है। इसी तरह द० अमरिका के सुदूर दक्षिण-टेरा-डेल-फ्यूगो—में चहचहाने वाली चिडियाँ पाई जाती है जो अफ्रीका आदि भागो मे नही देखी जाती। यहाँ इनके विपरीत सूर्य चिडियायें देखी जाती है।

ध्रुव प्रदेशो में पेड पौधो की न्यूनता के कारण पशुओ की किस्में तथा सख्या दोनो ही कम है। परन्तु चूँकि यहाँ भीषण जाडा पडता है अत. यहाँ बडी मात्रा मे समूर वाले पशु पाये जाते है जो अन्यत्र नही मिलते। साधारणत. इन भागों में पशु समुद्रतटों के समीप मिला करते है क्योकि यहाँ भोजन आदि की अधिक सुविधा रहती है। समुद्रतटो से दूर केवल घास चरने वाली जाति के कुछ पशु मिलते हैं।

दक्षिणी ध्रुव प्रदेश मे अभी भी बडे पशुओ का अभाव देखा जाता है। इस भाग मे दक्षिणी अमरिका के सुदूर दक्षिण मे पैटेगोनिया के समीप एक प्रकार की नील मछली पाई जाती है। यही यहाँ का सबसे प्रमुख स्तनधारी जीव है। इसके अलावा एन्टकार्टिक प्रदेश मे पेंग्वीन नामक चिड़िया प्रसिद्ध है। यह दक्षिणी अमेरिका

मिट्टियों को खनिज मिलते हैं अत रासायनिक दृष्टि से पैतृक पदार्थ बड़े महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

प्रो० सैलिसबरी के अनुसार परतदार चट्टानों मे अधिकांशतः बालू व पत्थर टूट कर निम्न कोटि की मिट्टी को जन्म देता है। किन्तु शेल चिकनी मिट्टी का निर्माण करती है। ये अधिक चिकनी होती हैं। चूने की चट्टानो से बनी मिट्टी उपजाऊ होती है किन्तु जब उनमे चूने का अश अलग हो जाता है तो उनकी उर्वरता कम हो जाती है। जो मिट्टी फासफेट चूने की चट्टान से बनती है वह काफी उर्वर होती है। आग्नेय परिवर्तित चट्टानें अनेक प्रकार की मिट्टियो को जन्म देती हैं। सामान्यत: ग्रैनाइट, रीयोलाइट, क्वार्टजाइट अनुर्वर होती हैं। इनमें अम्ल (Acid) अधिक होता है किन्तु लावा से बनी मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ होती है। जिन मिट्टियो में रेत अथवा गोल पत्थरो की अधिकता होती है उन्हे **हल्की मिट्टियाँ** (Light Soils) कहते हैं किन्तु जिनमे चिकनी मिट्टी अथवा महीन रेत मिली होती है उसे **भारी मिट्टी** (Heavy Soils) कहते हैं। भूतल पर हल्की मिट्टियो के क्षेत्र अपेक्षतया कम पाये जाते हैं।

जलवायु—रूसी वैज्ञानिकों का मत है कि मिट्टी बनने मे सबसे बड़ा हाथ जलवायु का ही रहता है। एक-सी जलवायु वाले प्रदेशों म एक-सी गुण वाली ही मिट्टियाँ मिलती हैं चाहे वे भिन्न-भिन्न चट्टानो से ही क्यो न उत्पन्न हुई हो। पुरानी मिट्टियाँ अपनी कुछ विशेषतायें रखती हैं क्योकि उनमें कुछ तत्व तो अधिक मात्रा मे इकट्ठा हो जाते हैं और अन्य तत्व कम हो जाते हैं। एक-सी जलवायु वाले दूर-दूर के प्रदेशों मे पुरानी मिट्टियों का अध्ययन करने से यही मालूम होगा कि उनकी विशेषताओ मे बहुत कुछ समानता पाई जाती है, यद्यपि यह बहुत अधिक सम्भव है कि वे चट्टानो से ही बनी होगी। रूसी स्टेप मे कई प्रकार की चट्टानें पाई जाती है, जैसे—ग्रेनाइट, बेसाल्ट और बोल्डर क्ले (Boulder clay)। परन्तु सर्वत्र एक-सी जलवायु होने के कारण इन सबके ऊपर लगभग वैसी ही काली मिट्टी मिलती है। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मिट्टी के अन्दर पाये जाने वाले गुण उस प्रदेश की जलवायु के ही परिणामस्वरूप होते है।

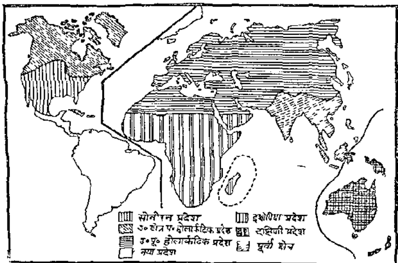
एक और उदाहरण लीजिये। एक ही चट्टान भिन्न-भिन्न जलवायु मे विभिन्न प्रकार की मिट्टियो को जन्म देती है। ग्रेनाइट नाम की चट्टानो को ल लीजिये। शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में इससे भूरी पोडसोल (Podsol) मिट्टी, स्टेपी प्रदेशो में काली मिट्टी (जिसे चर्नोजम भी कहते हैं) और उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो मे लाल मिट्टी (Laterite) बनती है। भारत के दक्षिणी द्वीप भी काली मिट्टी (जो लावा के बहाव के द्वारा बनी है) चूना, पोटास और सोडा आदि से बनी है। यह अर्द्ध-शुष्क भागो मे ही पाई जाती है। इसके विपरीत बगाल और बिहार मे (जहाँ औसत वर्षा ५०" से ८०" तक होती है) मिट्टी चिकनी दोमट है किन्तु पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पजाब मे बलुई दोमट (Sandy loam)। अत: हम देखते हैं कि मिट्टियो के रग जलवायु बदलन के साथ-साथ बदलते रहते है क्योकि कम या अधिक वर्षा होने से लोहे की मात्रा भी कम या अधिक होती है। इसी विभिन्नता के कारण पूर्वी बगाल की मिट्टी चावल और जूट, दकन के पठार की कपास तथा पजाब और उत्तर की मिट्टी गहूँ के उत्पादन के लिए उपयोगी है।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि स्तनपोषियों का जन्म विषुवत् रेखा के उत्तर मे एशिया मे हुआ जहाँ से वे विश्व के अन्य देशो मे फैले और अपने आपको वातावरण के अनुकूल बना कर जीवित रहने मे सफल हो सके।

आस्ट्रेलिया और न्यूगिनी दो ही ऐसे भाग माने जाते हैं जहाँ अब भी आदिम अंडे देने वाले जीव मुख्य रूप से पाये जाते है। यहाँ **कगारू, वोमबॅट, बैडकोट्स, वैलीबी,** प्रभृति पशु मिलते हैं जो इस बात का प्रमाण है कि ये स्तनपोषी जीव दक्षिण-पूर्वी एशिया से ही यहाँ आये है और इन देशो के बीच मे स्थल-सम्बन्ध रहा है। किन्तु वहाँ पर इनके स्थान पर नाभि वाले स्तनपोषी जीवो का ही आधिक्य रह गया। एक अन्य युग मे इनका सम्बन्ध टूट गया और यहाँ के जीव अन्य महाद्वीपों से बिल्कुल अलग हो गये। इस प्रदेश को **दक्षिणी भाग** (Southern land or Notogaea) कहते हैं।

इस भाग मे सभ्य मनुष्यो के पहुँचने के पूर्व उल्लेखनीय स्तनधारी पशु, आस्ट्रेलिया का जगली कुत्ता और कुछ चूहे रहे है। पशुओ के समान यहाँ पाई जाने वाली चिड़ियाँ भी अपने किस्म की अकेली ही है। **इमू, कैसोवरीज, पैरेडाइज चिड़ियाँ कोकेटोन** आदि यहाँ की मुख्य चिड़ियाँ है जो कि अन्यत्र कही भी नही पाई जाती।

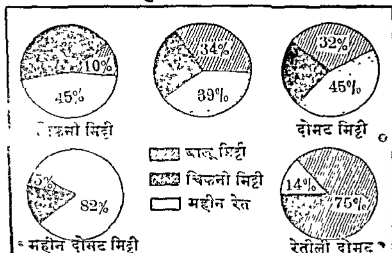
न्यूजीलैंड तथा पडोसी द्वीपो मे अण्डे देने वाले पशुओ का भी अभाव पाया जाता है। वहा पर केवल एक दो स्थानीय स्तनधारी जीव पाये जाते है। जैसे चूहे और चिमगादड़ (bat) आदि। इनके अतिरिक्त कुछ स्थानीय चिड़ियों मे जैसे कीवी आदि-जो उड नही सकती—पाई जाती है। सर्प भी यहाँ के जन्तुओं मे विशेष स्थान रखते है।



चित्र ३०. जीवधारियो के भौगोलिक प्रदेश

यह एक बहुत ही ध्यान देने योग्य बात है कि आस्ट्रेलिया मे सभ्य मनुष्यो

(१) **मिट्टी के कणों का आकार** (Soil Texture)—एक स्थान की मिट्टी दूसरे स्थान की मिट्टी से उसके कणो के आकार मे बहुत कुछ भिन्न होती है—जिसे 'मिट्टी का आकार' कहते है। आकार के अनुसार मिट्टी कई भागो में बाँटी जा सकती है—जैसे ककड (Gravel), बालू (Sand), महीन रेत, (Silt) और



चित्र ३१. मिट्टियो का आकार

चिकनी मिट्टी (Clay)। पत्थरो और बजरी के कणो का व्यास दो मिलीमीटर से अधिक, महीन रेत का ०.०५ से २ मिली मीटर, महीन रेत का ०.०००२ से ०.०५ मिली मीटर और चिकनी मिट्टी के कणो का आकार ०.०००२ मिली मीटर से भी कम होता है। प्रत्येक प्रकार की मिट्टी में विभिन्न प्रकार के कण मिले रहते हैं।

बिल्कुल रेतीली (Sand) अथवा बिल्कुल चिकनी मिट्टियाँ (Clay) पौधों की वृद्धि के लिये अच्छी नही मानी जाती क्योंकि रेतीली मिट्टियो मे कण बडे-बडे होने के कारण उनका पानी शीघ्र भाप बनकर उड जाता है और इसलिए फसलें बडी जल्दी सूख जाती है। ऐसी मिट्टी मे केवल वही फसलें पैदा हो सकती है जो जल के अभाव को सह सकती है। बिल्कुल चिकनी मिट्टियों मे कण बिल्कुल ठोस होते हैं अतः उनमे पौधो की जडें कठिनता से फैल पाती है। ऐसी मिट्टियो मे खेती करना बहुत ही कठिन होता है क्योंकि उनमे पौधो के लिए आवश्यक भोजन नही मिल पाता किन्तु चिकनी और रेतीली मिट्टियों के मेल से बनी हुई दोमट मिट्टी (Loam) खेती के लिए बहुत ही अच्छी मानी जाती है। इस प्रकार की मिट्टी प्राय नदियों के डेल्टो मे मिलती है और उसमे चावल, गन्ना, जूट आदि फसलें पैदा की जाती है।

(२) **मिट्टी का रङ्ग** (Colour of the Soil)—मिट्टी के रंग से मिट्टी के भौतिक और रासायनिक गुणो का ज्ञान हो जाता है। मिट्टी का रग कई प्रकार का होता है—लाल, पीला, भूरा या काला। लाल और भूरी मिट्टियो का रंग यह बताता

जो उत्तरी प्रदेश में रहता था। अफ्रीका में भी पृथकता के कारण एक विशेष प्रकार के जीवों का उदय हुआ है। हिमयुग में वर्तमान सहारा के स्थान पर स्टैपी घास के मैदान थे अतः यहाँ से दक्षिण की ओर जीवों का स्थानान्तरण स्वतन्त्रतापूर्वक हो सका, जो आज के अफ्रीकी जीवों के पुरखे माने जाते हैं। मरुस्थल की उत्पत्ति पर न केवल उत्तर की ओर से ही वरन् पूर्व की ओर से भी चीते, हिमालयन-पैंडा, भेड बकरियों आदि का आना संभव हो गया। यद्यपि भेड़ और बकरियाँ दोनो ही यहाँ मिलती है किन्तु वे पालतू पशुओ के रूप में कम। ऐप (Ape) बन्दर अब भी बडी संख्या में यहाँ मिलते हैं।

ईथोपियन प्रदेश का ही एक उप-विभाग-मैडेगास्कर या मैलेगासी को माना जाता है जहाँ लैमूर जाति के बदर तो खूब मिलते हैं किन्तु खुर वाले जीवों का अभाव मिलता है।

पूर्वी प्रदेश (Oriental Region) के अन्तर्गत भारत, चीन, दक्षिणी-पूर्वी एशिया तथा मलेशिया सम्मिलित किये जाते हैं। यहाँ अधिकतर खुर वाले पशु मिलते है जैसे *बैल, गाय,* और यहाँ प्राचीन काल के लैमूर भी मिलते है, जो इस बात के द्योतक है कि एशिया के महान स्थल से इस भाग का सम्बन्ध बहुत ही थोडे समय के लिए रहा है जिससे निम्न श्रेणी के जीवो पर ऊँची श्रेणी के जीवो का आधिपत्य न हो सका अथवा एशिया के कुछ विषुवत्‌रेखीय द्वीपो के सघन वनों ने इन जीवो को प्रश्रय दिया जिससे आज भी लैमूर जैसे जीव यहाँ जीवित रह सके।

भारत और द० चीन, ब्रह्मा तथा इडोचीन के बीच जीवों मे कुछ अन्तर दृष्टिगोचर होता है। हिमालय पर्वतो की उत्पत्ति के पश्चात् ऊँची श्रेणी के जीव पूर्वी प्रदेश से दो मार्गों द्वारा भारत की ओर बढे है। एक इस विशाल पर्वत श्रेणी के पश्चिमी ओर से जिसके द्वारा शुष्कता सहन करने वाले पहाडी जीव यहाँ पहुँचे जैसे पहाडी शेर और दूसरे दक्षिण चीन के वन मार्गों मे होकर इस पर्वत श्रेणी के पूर्वी ओर। चीता इसी प्रकार भारत मे आया।

जाता है कि उसके द्वारा पौधे की वृद्धि होती है और उसके द्वारा पौधे को उपयुक्त भोजन मिलता है अत यह आवश्यक है कि मिट्टी में जल और वायु दोनों ही पर्याप्त मात्रा में मिले रहने चाहिए।

(ख) रासायनिक गुण—मिट्टी में कुछ रासायनिक गुण भी मिले रहते है। इन्ही रासायनिक पदार्थों के कारण मिट्टी में उपजाऊपन पाया जाता है। साधारणतया मिट्टी मे सिलीका, एल्युमिनियम, मैगनेशियम, लोहा, पोटाश, फासफोरस, सोडियम और कैल्शियम मिला रहता है। जब यह पदार्थ जल में अच्छी तरह घुल जाते हैं तो मिट्टी को उपजाऊ बनाकर पौधो की जडो द्वारा पहुँच कर उनकी वृद्धि करते हैं। यही घोल पौधो मे स्टार्च, शक्कर, प्रोटीन और चर्बी पैदा करता है। इनके अतिरिक्त मिट्टी मे खनिज पदार्थों के कण, सडी गली वनस्पतियो के अंश, जीवित कीडे-मकोडे तथा नाइट्रोजन भी मिले रहते है। मिट्टी में समाया हुआ पानी रासायनिक पदार्थों और ह्यूमस के मिलने से एक प्रकार के हल्के तेजाब के समान हो जाता है। जिस मिट्टी में यह पानी अधिक होता है वह मिट्टी तेजाबी मिट्टी (Acidic Soil) कहलाती है। इसमें खेती बडी कठिनाई से होती है। सूखे भागो में क्षार के कण एकत्रित हो जाते हैं जिससे वहाँ की मिट्टी अनुपजाऊ हो जाती है। ऐसी मिट्टी को 'क्षारीय मिट्टी' (Alkaline Soil) कहते है। कृषि के लिए सबसे अच्छी मिट्टियाँ वे मानी जाती है, जहाँ न अत्यन्त कम वर्षा हो और न अत्यन्त अधिक। मध्यम वर्षा वाले भागो में जल तथा क्षार एक दूसरे के प्रभाव को कम कर देते हैं।

मिट्टी की तहें (Soil Profile)

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है मिट्टी चट्टानो के काटने, टूटने, उनके क्षय होने और पौधो तथा जानवरो के सडने व गलने से बनती है। अत अपने उत्पत्ति-काल में मिट्टी इस प्रकार की नही थी जिस प्रकार कि हम उसे आज देखते हैं। तब से अब तक इसके भौतिक और रासायनिक दोनो रूप बदल गये है। मिट्टी कई मुलायम तत्वों से मिलकर बनी है। यह मुलायम तत्व कई परतो में मिलते हैं। सबसे मुलायम और समान रूप पदार्थ से बना हुआ पर्त ऊपर होता है। उसके नीचे कुछ कठोर पर्त होता है जिसमे असमान आकार के कण मिलते हैं और सबसे नीचे की पर्त में धरातल की चट्टानो के मोटे-मोटे टुकडे ही अधिक मिलते हैं। इन परतो को **मिट्टी की तहें या मिट्टी को क्षितिज** (Soil Horizon) कहते हैं। जब मिट्टी पुरानी हो जाती है तो उसमे प्राय तीन तहें अथवा परिधियाँ दिखाई पडने लगती है जिनमे विभिन्न भौतिक और रासायनिक गुण मिलते है। मृतिका विज्ञान के शास्त्रियों ने मिट्टी की तीन तहें की है—

(१) 'अ' तह (A Horizon)—यह ऊपरी तह होती है जिनमें वनस्पति और पशुओ के सड़े-गले अश अधिकता से पाये जाते हैं। इसमे कण छोटे और उनमें जल तथा वायु की मात्रा पर्याप्त होती है। घास के क्षेत्रो मे इसका रग गहरे कत्थई से लगाकर काला तक होता है। आर्द्र देशो में इस तह का उपजाऊपन अधिक पानी में घुल जाने के कारण बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। किन्तु 'अ' तह पौधो की वृद्धि के लिए सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती है।

(२) 'ब' तह (B Horizon)—यह शुष्क प्रदेशों में हल्के रंग और कम उपजाऊपन की तह होती है किन्तु आर्द्र देशो में ऊपरी तह का उपजाऊपन अधिक

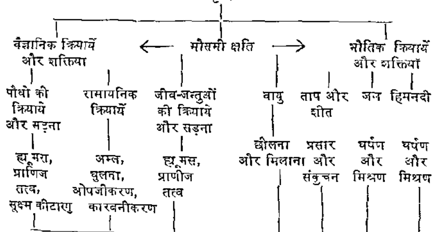
घोल-घोल कर काट डालती है। चट्टानो के अन्दर पाये जाने वाले रासायनिक पदार्थ घुलकर बह जाते है। अत: उसमे रासायनिक परिवर्तन हो जाता है। ऐसी चट्टानो का मुलायम चूरा मिट्टी बन जाता है। यह क्रिया आर्द्र भागो मे होती है।

(२) **भौतिक कटाव** (Physical Weathering)—भूमि को काटने वाली शक्तियाँ अपना सीधा आक्रमण चट्टानों पर ही करती है और उसका बहुत महीन चूरा बना डालती है। उदाहरणतः रेगिस्तान की चट्टानें दिन मे सूर्य की तेज गरमी से फैल जाती हैं और रात को हवा का तापक्रम कम हो जाने से सिकुडने लगती है। एक बार फैलने और दूसरी बार सिकुडने से तथा बार-बार ऐसा ही होते रहने से चट्टाने टूटने लगती है। उनके इस प्रकार के टूटने मे कोई रासायनिक परिवर्तन नही होता। यह उनका प्राकृतिक कटाव होता है।

(३) **जीवधारियों द्वारा कटाव** (Biological Weathering)—पेडो की जड़ें, जानवरों के बनाये हुये गड्ढे व बिल चट्टानो मे रासायनिक व प्राकृतिक परिवर्तन कर देते है जिसके फलस्वरूप मिट्टी का जन्म होता है।

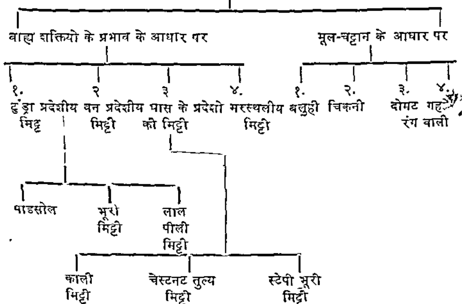
मिट्टी भूमि के कटाव की ही एक उपज है। अत उसको बनाने में किसी प्रदेश की तीन बातों का प्रभाव होता है। वे ये हैं—(अ) जलवायु, (ब) वनस्पति, तथा (स) वह चट्टान जिसके टूटने से वह मिट्टी बनी है। इस कथन का वास्तविक अभिप्राय समझने के लिये हम मिट्टी के दो भेद करते हैं—पहला भेद उन मिट्टियों का जिनके गुणो पर जलवायु तथा वनस्पति का अधिक प्रभाव पडा है और पैतृक चट्टान (Parent Rock) का कम (जैसे प्रेरी प्रदेश की मिट्टिया)। दूसरे भेद मे वे

मिट्टी की रचना को निम्न तालिका से समझा जा सकता है—



मिट्टियाँ आती है जिनके गुण पैतृक चट्टान (Parent Rock) पर आश्रित है अर्थात् जिनके बनने मे जलवायु तथा वनस्पति का प्रभाव अपेक्षाकृत कम पडता है (जैसे दक्षिणी भारत अथवा वाशिंगटन राज्य की काली लावा मिट्टियाँ) पैतृक चट्टानो से ही

ग्लिनका (Glinka) नामक एक रूसी वैज्ञानिक ने भी मिट्टी के दो मुख्य भेद बताये है। पहला वह जिसमे मिट्टी के मुख्य गुण बाहरी कारणो द्वारा उत्पन्न होते है, जैसे जलवायु अथवा वनस्पति आदि के प्रभाव से। दूसरा भेद वह है जिसमे मिट्टी के मुख्य गुण उसकी पैतृक चट्टान से मिलते हैं। इस प्रकार की मिट्टियो को क्रमशः 'इक्टोडिनैमोमॉरफिक'[४] और 'इन्डोडिनैमोमॉरफिक'[५] कहते हैं।



जलवायु के आधार पर मिट्टियों का वर्गीकरण

मिट्टियो का वर्तमान वर्गीकरण जलवायु पर आधारित है। जलवायु के अनुसार दो प्रकार की मिट्टियाँ भूतल पर पाई जाती है। पहले प्रकार की मिट्टियाँ आर्द्र भागो मे बनती हैं। इन मिट्टियो की ऊपरी तहें बहुधा धुली और खनिज रहित होती है। चूना जल के साथ बह कर चला जाने के कारण इसका अभाव मिलता है। यह केन्द्रीय तह मे थोडी मात्रा मे मिलता है। चूने के अभाव के कारण ही इन मिट्टियो को चूना रहित मिट्टियाँ (Non-lime accumulating Soil) कहते हैं। साधारण भाषा मे ये मिट्टियाँ पैडेलफर (Pedalfers) कहलाती है। इनमे अल्यूमीनियम और लोहे के अश पाये जाते हे किन्तु चूने का अभाव होता है।

दूसरे प्रकार की मिट्टियाँ शुष्क और अर्द्ध-शुष्क भागो मे बनती हैं। इनमे

4. 'Ektodynamomorphic' Soil.
5. 'Endodynamomorphic' Soil.

जीवांश—मिट्टी के निर्माण मे वनस्पति और जीवो का भी बड़ा योग रहता है। जीवधारी, चाहे वे जीवित अवस्था में हो अथवा मृत, मिट्टी के निर्माण और परिवर्तन मे बड़ा योगदान देते है। छोटे-जीव-जन्तु तथा कीटाणु भूमि के निर्माण मे बड़े महत्वपूर्ण होते है। ऐसे कीटाणुओ मे बैक्ट्रीया, फफूंद, प्रोटोजोआ और अनेक सूक्ष्म कीडे आदि प्रमुख हैं। ये मिट्टी-मे-बडी मात्रा मे पाये जाते है। इनमे से कुछ जीव भीतरी भागो मे रासायनिक तत्वो को ऊपर ले आते हैं और कुछ ऊपरी भागो से उन्हे आन्तरिक भागो मे पहुँचा देते हैं। और इस प्रकार न केवल ये कीटाणु ही वरन् वृक्ष आदि भी गहराई से विभिन्न खनिजों को प्राप्त कर पुन. भूमि मे मिलाते रहते है और इस प्रकार मिट्टी मे सतुलन स्थापित करते है। कुछ अन्य कीटाणु मिट्टी मे छेद कर देते है जिनके द्वारा वनस्पति की जड़े भीतर पहुँच जाती है। कुछ इन्ही छेदो द्वारा जल व वायु को भी मिट्टी मे मिला देते हैं और कुछ ऐसे होते हैं जो मरने पर स्वयं को मिट्टी मे मिला देते है। इस पदार्थ को वनस्पति एव जीवाशो का सडा गला पदार्थ अथवा ह्यूमस' (Humus) कहा जाता है। अस्तु यह कहना सत्य ही है कि "ये जीवाश तथा वनस्पति सम्मिलित रूप से कार्य करते रहते है, अपनी वृद्धि करते हैं। मिट्टी से भोजन करते है, उसे पचाते हैं और अपनी अवधि पूरी हो जाने पर मर जाते है, और अन्त मे सड गल कर एक बडी ही पेचीदा, रहस्यमय तथा जीवनदायक वस्तु प्रदान करते है जिसे हम मिट्टी की सज्ञा देते हैं"[2]।

मिट्टी मे ह्यूमस की मात्रा के होने पर उसकी उर्वरा-शक्ति बढ जाती है। ह्यूमस की भौतिक महत्ता बहुत ही मूल्यवान है, यह चिकनी मिट्टियो को हल्का कर उन्हे अधिक छिद्रमय बना देता है जिससे खेती करना सुगम हो जाता है। यह बलुही मिट्टी को बाधने का काम करता है जिससे उनमे जल तथा पौधों की खुराक रह सके। यह ठढी मिट्टियो को गरम करता है और हल्की मिट्टियो के तापक्रम को अधिक विषम होने से बचाता है। "रूस की काली मिट्टी, अमरीका की प्रेरी मिट्टी तथा इंगलैंड के फैन्स प्रदेश की मिट्टी को छोडकर कोई ऐसी मिट्टी नही है जिसमे ह्यूमस मिला कर उसके भौतिक गुणो को सुधारा न जा सके। इसके अतिरिक्त ह्यूमस पौधों मे भोजन-संग्रह का काम करता है।"[3]

मिट्टी मे 'ह्यूमस' की मात्रा सर्वत्र भिन्न-भिन्न पाई जाती है। घास के मैदानो की मिट्टियो मे इसकी मात्रा साधारणत ७० से १०० प्रतिशत तक मिलती है किन्तु जिन क्षेत्रो मे कृषि अत्यन्त लम्बे काल से की जा रही है वहाँ इसकी मात्रा कम होती है। पथरीले भागो मे भी इसकी मात्रा कम होती है।

मिट्टी के गुण (Properties of Soils)

पौधों की वृद्धि के लिये मिट्टी की उपयोगिता उसके दो गुणो पर निर्भर रहती है। (क) भौतिक (Physical), व (ख) रासायनिक (Chemical)।

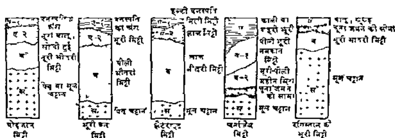
(क) भौतिक गुण—भौतिक गुणो के अन्तर्गत मिट्टी के कणों का आकार, मिट्टी मे पानी और वायु की मात्रा तथा मिट्टी के रग आदि का विचार किया जाता है।

2. *M. S. Anderson (Ed.)* **Geography of Living Things**, 1951, p. 129.

3. **Ibid**, p. 139.

तेजाब की भी मात्रा पर्याप्त होती है। नाइट्रोजन तथा फासफेट की कमी रहती है। वन प्रदेशीय मिट्टियाँ जलवायु भेद से मुख्यत. तीन प्रकार की होती है—

(अ) गहरी भूमि मिट्टी (Podsols or Grey Soil)—यह मिट्टी उत्तरी गोलार्द्ध मे शीत-शीतोष्ण कटिबन्ध के वनो में मिलती है जहां कड़ी लकड़ियाँ या नुकीली पत्ती वाले जगल उगे है। इस मिट्टी में वनस्पति अश की कमी होती है क्योंकि पेडो से झडी हुई पत्तियो का ओपजनीकरण (Oxidization) होता रहता है जिससे उनसे वनस्पति अश बहुत कम प्राप्त हो पाता है। जड़ों के द्वारा ऊपरी पर्त में वनस्पति अश में वृद्धि इसलिये नहीं हो पाती क्योंकि जडें मिट्टी की निचली तहो तक समाई रहती है। वनस्पति अश की कमी तथा अधिक ओपजनीकरण के



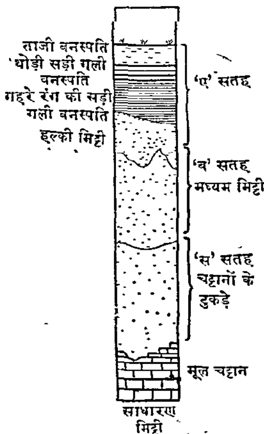
चित्र ३३. विभिन्न प्रकार की मिट्टियो की तहे

फलस्वरूप इस प्रदेश की मिट्टी का रग गहरा भूरा या कत्थई होता है। यह मिट्टी जगल या झाड़ी वाले मध्य चक्रवाती प्रदेशों मे विकसित होती है। इसके लिए ३०" से ५०" तक वर्षा, एक गर्म और अति गर्म ग्रीष्म ऋतु तथा एक निश्चित किन्तु साधारण शीत ऋतु होनी आवश्यक है। इसी के साथ पेड-पौधे, पत्तियो और वहीं रहने वाले जानवरो के सडने और सडे-गले पदार्थो का धरातल की मिट्टी से मिलने के कारण यह मिट्टियाँ अधिक तेजाबी (Acidy) हो जाती हैं अत खेती के लिये अनुपयुक्त होती हैं। इन्हे उपजाऊ बनाने के लिए निरन्तर खाद देने की आवश्यकता होती है। इस मिट्टी में जहाँ वन साफ कर लिए गये हैं खेती की जाती है किन्तु उगने की ऋतु छोटी होने के कारण तथा जाडो में बर्फ अधिक पडने के कारण फसल पनप नहीं पाती। यह मिट्टी कृषि की दृष्टि से महत्व की नही है। केवल निजी उपयोग के लिए कृषक जई, जौ, आलू, राई और कुछ साग-सब्जी पैदा कर लेते हैं। मिट्टी की अनुपयुक्तता के कारण ही यहाँ लकड़ी काटना, मछली पकडना और शिकार करने का धन्धा किया जाता है।

(ब) भूरी मिट्टी (Brown Soil)—यह मिट्टी शीतोष्ण प्रदेश के नम प्रदेशो मे मिलती है जिनमे चौडी पत्तियो के वन मिलते हैं। इनमें वनस्पति का अश होता है और गहरी भूरी मिट्टी से अपेक्षाकृत अधिक उपजाऊ होती है। इस प्रकार की मिट्टी उत्तरी-पूर्वी सयुक्त राष्ट्र, मध्य यूरोप के पश्चिमी भाग, उत्तरी चीन, कोरिया तथा मध्य व दक्षिणी जापान में मिलती है। इन प्रदेशो में वर्षा की कमी से उपजाऊ पदार्थ कम बह पाते हैं। अतः इसमें तेजाब का अंश कम होता है। इसमें लोहा, चूना, पोटाश तथा अन्य खनिज अश अधिक पाये जाते है। इसमे लगभग ३" की गहराई तक

है कि मिट्टी में लोहे का अंश मौजूद है। मिट्टी में वनस्पति के सड़े-गले अंश अथवा पशुओं के अस्थि-पंजर मिले रहने के कारण उसका रंग काला होता है। इस प्रकार की मिट्टियाँ गेहूँ और कपास के उत्पादन के लिये बहुत अच्छी समझी जाती है। सूखे भागों में जल की कमी के कारण मिट्टियों का रंग ललाई लिये हुए रहता है जिनमे पैदावार नही हो सकती। शीतोष्ण प्रदेशों मे हल्के रंग की मिट्टियाँ पाई जाती है किन्तु आर्द्र भागो की मिट्टियाँ गहरे रंग की होती है और अधिक गर्म होती है। यह पानी को व सूर्य की किरणों को आसानी से सोख लेती हैं। साधारण रूप से यह कहा जा सकता है कि गहरे रंग की मिट्टियाँ उपजाऊ मानी जाती हैं और हल्के रंग की अनुपजाऊ। जब मिट्टी में से खनिज पदार्थ घुलकर निकल जाते है तो उनका रंग पीला हो जाता है।

(३) मिट्टी में वायु और जल की मात्रा (Aeration & Moisture)—किसी भी फसल के पैदा करने के लिए मिट्टी [illegible] मात्रा मे वायु और जल का मिला रहना आवश्यक है। पौधों को [illegible] सारा ही जल मिट्टी के द्वारा ही प्राप्त होता है। विभिन्न कणो वाली मिट्टियाँ यह बताती है कि कौन सी मिट्टियाँ सरलता से पानी को अपने मे रोक सकती हैं और कौन सी शीघ्र ही पानी को बहा देती है। जब पानी की एक पतली-सी तह कणो पर चिपकी रहती है तो उसे **'चादरी पानी'** (Hygroscopic Water) कहते है। यह नम भागों के छोटे कणों वाली मिट्टी मे अधिक होता है। यह पानी एक ही स्थान पर रहता है और भाप बन कर नही उड़ पाता। जब अधिक वर्षा के कारण पानी कणो के धरातलीय खिचाव से ऊपर आ जाता है तो उसे **'नालीय पानी'** (Capillary Water) कहते हैं। जब लगातार वर्षा होने के कारण पानी मिट्टी में आवश्यकता से अधिक जमा हो जाता है तो पृथ्वी की आकर्षण शक्ति से वह नीचे चला जाता है। इस पानी को **'आकर्षणीय पानी'** (Gravitational Water) कहते है।



साधारण मिट्टी

मिट्टी में वायु का मिला रहना इसलिये आवश्यक माना

अधिक और गहरा प्रभाव होने के कारण इनका रंग काला या गहरा भूरा होता है। घास के प्रदेशों का खेती के काम में लाया जाना आसान है और इनकी मिट्टी भी उपजाऊ होती हैं। इसलिये इन प्रदेशों का महत्व कृषि की दृष्टि से बहुत अधिक है। रंग के अनुसार यह मिट्टी तीन प्रकार की होती है :—

(अ) काली मिट्टी (Black Soil)—कुछ खास प्रदेशों मे काली मिट्टी मिलती है। यह उन प्रदेशों मे पाई जाती है जहा अपेक्षाकृत अच्छी वर्षा हो जाती है। इसलिये लम्बी-लम्बी सघन घास उग आती है जिसके गलने से भूमि मे वनस्पति अंश की प्रचुरता हो जाती है। वनस्पति अश की अधिकता के कारण ही इस मिट्टी का रग काला होता है। वर्षा कम होने से इसके उपजाऊ पदार्थ बह नही सकने अत इसमें चूना और क्षारे पदार्थों की प्रचुरता होती है। इसमे चीका भी पाया जाता है। अत. इस मिट्टी मे बिना खाद के ही कई वर्षो तक खेती की जा सकती है। यह मिट्टी गेहूँ और कपास की खेती के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है। रूस में इस मिट्टी को 'चर्नोजम' (Chernozem) कहते है। यह शब्द रूसी भाषा का है जिसका अर्थ काली मिट्टी होता है। यह मिट्टी दक्षिणी मध्य कनाडा, सयुक्त राज्य, दक्षिणी रूस, पश्चिमी साइबेरिया, उत्तरी पश्चिमी दक्कन, मध्य क्वीन्सलैण्ड, मध्य अर्जेन्टाइना, सूडान तथा दक्षिणी अफ्रीका सब मे मिलती है। भारत मे काली मिट्टी या रेगर मिट्टी मध्य प्रदेश, बरार, सौराष्ट्र महाराष्ट्र और गुजरात के कुछ भागो तक फैली है।

(ब) प्रेयरी प्रदेशीय मिट्टी या चेस्टनट तुल्य भूरी मिट्टी (Chestnut Brown Soil)—जिन घास के मैदानो मे मामूली वर्षा (२५″ से ३०″ तक) होती है वहाँ भी काफी घास उग आती है। उस घास के उगने से मिट्टी को वनस्पति अश प्राप्त हो जाता है। किन्तु इसमें काली मिट्टी की अपेक्षा वनस्पति अश कुछ कम होता है फिर भी यह काफी उपजाऊ होती है। इस मिट्टी मे चूने और क्षारे पदार्थों की कमी होती है किन्तु साथ ही ये मिट्टियाँ तेजाबी नही होती। इनका दाना महीन और रग काला तथा लाल-भूरा (Reddish-Brown) होता है। यह ससार भर की कृषि योग्य मिट्टियो मे सर्वोत्तम उर्वरा शक्ति-सम्पन्न समझी जाती है। इसमें खेती के लिये जल भी पर्याप्त मात्रा मे विद्यमान रहता है। इसमे कई प्रकार की पैदावारें उगाई जाती हैं। यह मिट्टी मध्य सयुक्त राज्य, मध्य रूस, मध्य साइबेरिया, उत्तरी पूर्वी अर्जेन्टाइना, और फ्रांसीसी सूडान इत्यादि देशो मे मिलती है।

(स) स्टेपी भूरी मिट्टी (Brown Steppe Soil)—उष्ण तथा शीतोष्ण प्रदेश के जिन घास के मैदानो मे बहुत कम वर्षा होती है वहां घास भी छोटी-छोटी और कम होती है इसलिये वहाँ की भूमि मे वनस्पति अंश साधारण होता है किन्तु यह मिट्टी इन प्रदेशो की मिट्टी की अपेक्षा अधिक उपजाऊ होती है। यह मिट्टी मध्य सयुक्त राज्य, स्पेन, मध्य साइबेरिया, उत्तरी चीन, उत्तरी भारत तथा मध्य अर्जन्टाइना मे और आस्ट्रेलिया तथा अफ्रीका के सवन्ना प्रदेशों मे पाई जाती है। यह मिट्टी उपजाऊ होते हुए भी बहुत चरागाहो के काम मे लाई जाती है क्योंकि वर्षा की मात्रा फसलो के बढ़ने के लिये पर्याप्त नही होती तथा मिट्टी मे नमी का अभाव रहता है और निचली पर्तो मे ह्यूमस की मात्रा भी अधिक नही होती।

(४) मरुस्थलीय मिट्टी (Desert Soils)—यह मिट्टी बलुही तथा हल्के रंग की होती है। मरुस्थल प्रदेश शुष्क रहते हैं और प्रायः वनस्पति शून्य होते हैं। इसलिए यहाँ की मिट्टी मे वनस्पति अंश की कमी रहती है। वर्षा का प्राय. अभाव

वर्षा के कारण बह कर नष्ट हो जाता है इसलिए यह तह इन प्रदेशो में बड़ी उपजाऊ होती है क्योंकि इसमें ऊपरी भाग के सभी तत्व आकार जम जाते है।

(३) 'स' तह (C Horizon)—यह मिट्टी की सबसे निचली तह होती है जिसमें नीचे की चट्टानो का अश अपने कुछ परिवर्तन रूप में मिला रहता है। यह तह उपजाऊ नही होती क्योंकि इसमें ह्यूमस और प्रकाश की कमी रहती है।

मिट्टियों का प्रकार (Types of Soils)

खेती-बाड़ी के दृष्टिकोण से मिट्टी एक जड़ पदार्थ न होकर मनुष्य, पौधो और पशुओ की भाँति प्रगतिशील (Dynamic) है। अत मिट्टी की विशेषतायें उसके बनने के समय पर निर्भर करती हैं। रूस की चरनोजम और दक्षिणी भारत की काली-ट्रैप मिट्टी सहस्रो वर्षो मे बनती रही है। अत इन पर वनस्पति,जलवायु और निचली चट्टानो का पूर्ण प्रभाव पड चुका है। इस प्रकार की मिट्टियो को 'पूर्ण या प्राचीन मिट्टी' (Mature Soil) कहते है। जिन मिट्टियो पर इन बातो का प्रभाव नही पडा है वे 'नवीन या अपूर्ण मिट्टियाँ' (Immature Soil) कहलाती है। प्राचीन मिट्टिया नई मिट्टियो की अपेक्षा उपजाऊ होती है।

नवीन या तरुण मिट्टी (Immature Soils)—इस प्रकार की मिट्टी मे पैतृक चट्टानों के रासायनिक तत्व मे अधिक अन्तर नही आता। इनमें ह्यूमस की मात्रा कम रहती है अत ये मिट्टियाँ प्राय रेत, कीचड और चिकनी ही होती है। पथरीले टुड्रा प्रदेश मे भी अधिक शीत के कारण चट्टानो का सडना-गलना नही होता अतएव यहा की मिट्टियो मे नेत्रजन आदि का अभाव नही हो पाता।

प्रौढ़ मिट्टी (Mature Soil)—जब तरुण मिट्टी बहुत दिनो तक किसी जलवायु मे रहती है तो यह परिपक्व बन जाती है। ज्यो-ज्यो समय व्यतीत होता जाता है त्यो-त्यो मौलिक चट्टान की रासायनिक रचना खड-खड हो जाती है। लोहे का आक्सीकरण (Oxidation) हो जाता है, एल्यूमीना का जलयोजन (Hydration) तथा चूना, पोटाश और अन्य पदार्थों का विलयन (Solution) हो जाता है। अर्थात् मिट्टी की भौतिक और रासायनिक रचना में परिवर्तन हो जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें कीटाणु उत्पन्न होकर नेत्रजन की मात्रा को बढा देते है। अतः इस प्रकार की मिट्टियो में ऊपरी और निचली तहो मे स्वरूप, आकार, रग और गुणो में काफी भिन्नता मिलती है।

पुरानी मिट्टी (Old Soils)—जब किसी स्थान की मिट्टी एक लम्बे युग तक अछूती पडी रहती है तो वह वृद्ध हो जाती है। उसकी ऊपरी सतह पूर्णत रिसने वाली और ऊसर हो जाती है। उसके नीचे की सतह ठोस और कडी होती है। इस तह को pan layer कहा जाता है। बजरी या लैटेराइट इस प्रकार की मिट्टी का मुख्य स्वरूप हैं।

विभिन्न प्राकृतिक खण्डो की जलवायु और वनस्पति की अलग-अलग विशेषतायें होती हैं। अतः विभिन्न प्राकृतिक खण्डो की मिट्टियाँ भी एक दूसरे से पृथक होती है। जो मिट्टियाँ केवल एक प्राकृतिक खण्ड मे पाई जाती है उन्हे 'खण्डीय मिट्टिया' (Zonal Soils) कहते हैं—जैसे चरनोजम या काली मिट्टी। जो मिट्टियाँ एक से अधिक प्राकृतिक खण्डो मे पाई जाती हैं उन्हे 'बहुखण्डीय मिट्टियाँ (Intra-Zonal Soils) कहते हैं—जैसे स्टेपी भूरी मिट्टी।

(४) गहरे रंग वाली मिट्टी (Dark Soil)—यह मिट्टी बेसाल्ट नामक चट्टान से बनती है। यह काफी उपजाऊ होती है। इसके लक्षण बहुत कुछ दोमट मिट्टी में मिलते-जुलते होते है।

भूमण्डल पर कुछ मिट्टियो मे शताब्दियो से खेती-बाडी की जा रही है जैसे सिंधु-गंगा के मैदान या ह्वागहो के मैदान मे। इतने लम्बे समय से कृषि होते रहने मे इसमे से कई तरह के खनिज पदार्थो के कण समाप्त हो जाते है जिससे उनका उपजाऊपन सीमित हो जाता है। इस प्रकार की मिट्टियो को 'कृषित मिट्टी' (Cultivated Soils) कहते है। इसके विपरीत अमरीका के मध्यवर्ती मैदानो मे तथा साइबेरिया की काली मिट्टी के प्रदेशो मे खेती थोडे ही वर्षो से आरम्भ की गई है। अत इनका उपजाऊपन बहुत अधिक है और इनका भविष्य भी उज्जवल है। ऐसी मिट्टियो को 'अछूती मिट्टी' (Virgin Soils) कहते है।

निर्माण विधि के अनुसार मिट्टी का प्राकृतिक वर्गीकरण

मूल स्थान पर स्थिति तथा स्थान परिवर्तन के आधार पर भी मिट्टी को दो प्रकारो मे बाटा जा सकता है—

(१) मूल, स्थानीय अथवा अवशेष मिट्टी (Residual Soil)

(२) स्थानान्तर या परिवाहित (Transported Soil)

(१) मूल स्थानीय मिट्टी (Residual Soil)—यह वह मिट्टी है जो मूल चट्टान से टूट-फूट के बाद बनकर उसी स्थान पर रहती है अर्थात् जहाँ इसका निर्माण हो, वही पर प्राप्त होती है। इसे अवशिष्ट मिट्टी (Residual Soil) भी कहते हैं। पेड-पौधे या जीव-जन्तुओ के ढाँचो की सडी-गली सामग्री के जमते रहने से स्थानीय मिट्टी बनती है, इसलिए इस प्रकार की मिट्टी को Muck Soil भी कहते हैं अर्थात् जो प्राणिवर्गीय प्रदेशो के क्षय के परिणाम स्वरूप बनी हो। यह बहुधा वन प्रदेशो तथा जलाशयो के पेंदे मे बनती है। इस मिट्टी मे एक ही प्रकार के खनिज कण पाये जाते हैं, अतः यह कृषि के अनुपयुक्त होती है। यह कुछ लिबलिबी-सी होती है और प्राय पठारो तथा ऊँचे भागो मे पाई जाती है।

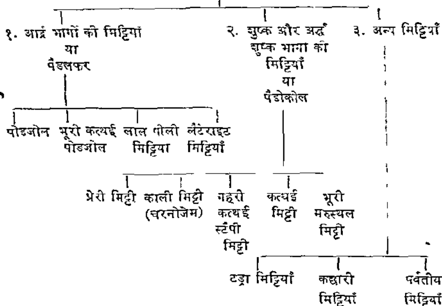
(२) स्थानान्तरित मिट्टी (Transported Soil)—यह वह मिट्टी होती है जो चट्टानो की टूट-फूट से बनकर बाह्य प्राकृतिक शक्तियो (जल, वायु, हिमनदी इत्यादि) द्वारा मूल स्थान से हटाकर अन्यत्र पहुँचा दी गई हो।

विविध प्राकृतिक शक्तियो के योग के अनुसार स्थानान्तरित मिट्टी निम्न प्रकारो मे विभाजित की जाती है—

(i) जल प्रवाहित मिट्टी अथवा दांप (Alluvial Soil)—यह मिट्टी जल-प्रवाह द्वारा अपने मूल स्थान से बहा कर अन्यत्र विस्तीर्ण कर दी जाती है। यह नदियो के बेसिन, घाटियो तथा डेल्टा प्रदेशो मे विशेषत मिलती है। जल प्रवाह से इनके कण बारीक होते जाते है इसलिए नदियो की ऊपरी तलहटी मे इसके कण बडे-बडे और डेल्टा प्रदेश तक पहुँचते-पहुँचते बहुत छोटे होते जाते है। इस मिट्टी मे वनस्पति अंश पर्याप्त मात्रा मे होता है। इसमें चूने की मात्रा खूब होती है। अन्य खनिज

वर्षा के अभाव के कारण मिट्टी में मिले खनिज और चूना बह नहीं पाता वरन् वह वहीं रहता है। अतः इन मिट्टियों को **चूने-वाली मिट्टियाँ** (Lime accumulating Soils) कहते है। व्यापक दृष्टि से ये पैडोकोल (Pedocols) कहलाती है।

नीचे के चार्ट मे इन दोनों की उप-श्रेणियाँ बताई गई हैं.—



जिन मिट्टियो के निर्माण मे मूल चट्टान की अपेक्षा वाह्य प्राकृतिक शक्तियों का अधिक योग होता है उन्हे निम्न प्रकारो मे बाँटा जाता है—

(१) टुन्ड्रा प्रदेशीय मिट्टी (२) वन प्रदेशीय मिट्टी
(३) घास के प्रदेशो की मिट्टी (४) मरुस्थलीय मिट्टी

(१) टुन्ड्रा प्रदेशीय मिट्टी (Tundra Soils)—यह नीले भूरे रंग की होती है। शीतकाल मे बर्फ ढकी रहती हैं किन्तु ग्रीष्म काल मे कुछ समय के लिये बर्फ पिघल जाती है और दलदल बन जाता है। इस मिट्टी में वनस्पति अंश की बहुत कमी होती है। यह उत्तरी कनाडा, ग्रीनलैण्ड तट, उत्तरी रूस, उत्तरी साइबेरिया तथा दक्षिणी चिली में मिलती है।

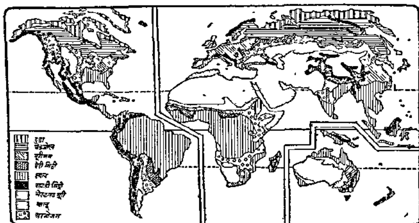
(२) वन प्रदेशीय मिट्टी (Forest Soils)—इस प्रकार की मिट्टियाँ नम प्राकृतिक प्रदेशो में पाई जाती है। इन खण्डो में वह मिट्टियां एक स्थायी वनस्पति की चादर के नीचे तैयार होती हैं। इन प्रदेशो की मिट्टी में चूना तथा अन्य घुलनशील लवण तथा वनस्पति अंश की कमी होती है किन्तु लोहे का अंश काफी होता है।

संक्षेप मे विश्व में प्रमुख मिट्टियो के क्षेत्र ये है :—

मिट्टी का प्रकार	रंग	क्षेत्र	वनस्पति और फसलें
(१) टुड्रा प्रदेशीय मिट्टी (Tundra Soil)	हल्की लाल और नीली भूरी।	एशिया और यूरोप तथा उ० अमेरिका के उत्तर के भागो मे (उ० कनाडा, ग्रीनलैंड, उत्तरी रूस, साइबेरिया, द० चिली)।	काई और लिचन
(२) पोडसोल (Podsols)	हरी	टुड्रा के दक्षिणवर्तीय क्षेत्रो मे (रूस, स्वीडेन, अलास्का)।	नुकीले वन तथा सन और जई आदि।
(३) जंगलो की भूरी मिट्टी (Grey Brown)	भूरी	इङ्गलैंड का पश्चिमी भाग, स० रा० की न्यू इङ्गलैंड और झीलो के राज्य, द० अफ्रीका संघ, उ० चीन, कोरिया व दक्षिणी जापान।	चौड़ी पत्ती के वन तथा जई, जौ, राई, गेहूँ, मक्का और चरी की फसले।
(४) उष्ण और अर्द्ध-उष्ण कटिबन्धो की लाल और पीली मिट्टी (Yellow Soil)	हल्की लाल या पीली।	मध्य और द० चीन, ब्रह्मा, प्रायद्वीपीय भारत, हिन्द चीन, स० रा० अमेरिका के उत्तरी पूर्वी भाग, ब्राजील, मैक्सिको, मध्य अमेरिका, कांगो, नाइजीरिया और घाना, उत्तरी-पूर्वी आस्ट्रेलिया, द० फ्रांस।	चावल, गन्ना, तम्बाकू, चाय, जूट तथा उष्ण-कटिबन्धीय वन।

वनस्पति के कण मिले रहते है। इस मिट्टी की मुख्य विशेषता यह है कि इस पर कई प्रकार की खेती की जा सकती है।

(स)·लाल-पीली मिट्टी (Red Yellow Soil)—इस प्रकार की मिट्टी उष्ण तथा उष्ण कटिबन्धीय भागो के प्रदेशो मे मिलती है। इसका विकास जगलो म होता है किन्तु इसके लिये गम और आर्द्र वातावरण होना आवश्यक है। अधिक वर्षा तथा लम्बे ग्रीष्मकाल के फलस्वरूप इन प्रदेशो मे पानी मिट्टी की निचली सतहो तक सोख जाता है और उपजाऊ तत्वो को अपने साथ नीचे से ले जाता है जिससे यह मिट्टी अनुपजाऊ हो जाती है। लोहे के छोटे-छोटे कणो के मिले होने के कारण इनका रग लाल होता है। इन मिट्टियो में फासफोरस, वनस्पति का सडा-गला अश, नोषजन तथा अन्य खनिज पदार्थों की कमी रहती है। इन मिट्टियो का दाना महीन होने और पानी रोकने की शक्ति होने के कारण निरन्तर खाद प्राप्त होने पर बहुत उपजाऊ हो जाती



चित्र ३४ विश्व में मिट्टियो का वितरण

है। इसकी ऊपरी तह में भूरी, भुरभुरी, चीका और दोमट के कण मिले रहते है किन्तु निचली तह यथेष्ट गहराई तक सगठित रूप से पाई जाती है। मैदानो में यह मिट्टियाँ गहरी और उपजाऊ तथा पठारो पर हल्की, पतली और बजरीली होती हैं। यह मिट्टी दक्षिणी-पूर्वी एशिया (द० चीन और प्रायद्वीपीय भारत) उत्तरी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी फ्रास, सयुक्त राज्य, मध्य अमेरिका, अमेजन बेसिन, कागो बेसिन इत्यादि में मिलती है। यह बलुई होती है और इसमे वनस्पति अश कम होता है। इसी मिट्टी के क्षेत्र मे जहाँ-तहाँ लेटेराइट मिट्टी भी मिलती है जो बहुत अनुपजाऊ होती है।

(३) घास के प्रदेशों की मिट्टी (Grassland Soils)—इस प्रकार की मिट्टी का विस्तार वन प्रदेशीय मिट्टियो की अपेक्षा बहुत कम है। इस मिट्टी मे वनस्पति अश काफी मिलता है क्योकि भूमि की ऊपरी सतह में घास की जडो का जाल-सा बिछा रहता है जिसके सड-गल जाने से वनस्पति अश (humus) की प्राप्ति हो जाती है। इस मिट्टी के उपजाऊ तत्वो की हानि पानी के निचले पर्तो तक सोखे जाने से नही हो पाती क्योकि इन प्रदेशो में अधिक वर्षा नही होती। वनस्पति का अश

मिट्टी की समस्यायें

मिट्टी जड़ नहीं वरन् चेतन पदार्थ है (It is not static but dynamic)। अतः अन्य जीवों की भाँति मिट्टी की भी कुछ अपनी विशेषतायें, संभावनायें और समस्यायें होती है। ये समस्यायें मुख्यतः दो हैं :—

१ भूमि के कटाव की समस्या।

२ मिट्टी के उपजाऊपन की समस्या और उसकी उर्वरा शक्ति को बनाये रखने की समस्या।

(१) भूमि क्षरण की समस्या (Soil Erosion)

कई भागों की मिट्टियाँ बहते हुए पानी के जोर से कटकर समुद्र में चली जाती हैं। धरती कटने (Soil Erosion) की समस्या भारत जैसे अधिक वर्षा वाले देश में बड़ी विषम हो गई है। मिट्टी के कटाव को 'रेंगती हुई मृत्यु' कहा गया है। यह परिणाम भूमि तक ही सीमित नहीं है किन्तु उन्हें मनुष्यों को भी भुगतना पड़ता है, क्योंकि भूमि के नष्ट होने से भूमि की पैदावार क्षीण होती जाती है। भूमि के सतह के ऊपर ही वनस्पति जन्य तत्व, रासायनिक तत्व और भूमि की शक्ति को बढ़ाने वाले पदार्थ एकत्रित रहते हैं जिनसे पौधों को खुराक मिलती रहती है। यदि एक बार यह ऊपरी सतह नष्ट हो जाती है तो भूमि की उर्वरा शक्ति भी क्षीण होती जाती जिसके फलस्वरूप वहाँ किसी प्रकार की वनस्पति पैदा होना असम्भव हो जाता है।

विश्व की उन सभी ढालू भूमियों पर जहाँ न तो जंगल है, न घास के मैदान है और जहाँ कृषि-योग्य भूमि की ठीक प्रकार से मेड़बन्दी नहीं की जाती वहाँ की मिट्टी सदैव कटती रहती है। प्रत्येक स्थान पर मिट्टी का कटाव समान नहीं होता। यह कई बातों पर निर्भर है। जैसे—मिट्टी का गुण, भूमि का ढाल, वर्षा की मात्रा आदि। कठोर मिट्टी की अपेक्षा कोमल छोटे कण वाली मिट्टी अधिक ढाल और मूसलाधार वर्षा में शीघ्र कट कर बह जाती है।

भूमि क्षरण के प्रकार—मिट्टी का कटाव कई प्रकार से होता है :—

(१) जब घनघोर वर्षा के कारण निर्जन पहाड़ियों की मिट्टी जल में घुलकर बह जाती है तो इसे भूमि का **'धरातली कटाव'** (Sheet Erosion) कहते हैं।

(२) जब पानी बहता है तो उसकी विभिन्न धारायें मिट्टी को कुछ गहराई तक काट देती है, जिससे धरातल में कई फुट गहरे गड्ढे बन जाते हैं। इस प्रकार के कटाव को **'नाले का कटाव'** (Gully Erosion) कहते हैं। धरातली कटाव सभी ढालू भूमि की ऊपरी मूल्यवान मिट्टी को बहा देता है जिससे उसकी उर्वरा शक्ति कम हो जाती है। परन्तु नाले का कटाव प्रथम प्रकार के कटाव से अधिक हानिकर होता है।

(३) मरुभूमि में प्रचण्ड वायु द्वारा भी मिट्टी का कटाव होता रहता है। इसके द्वारा मिट्टी कट कर एक स्थान से ले जाई जाकर दूसरे स्थान पर बिछा दी जाती है, इसे **'वायु का कटाव'** (Wind Erosion) कहते हैं।

इन विभिन्न प्रकार के कटावों द्वारा भारतवर्ष और सं० रा० अमरीका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया की हजारों एकड़ भूमि नष्ट की जा चुकी है। भारत में तीनों ही प्रकार के कटाव मिलते हैं।

होने के कारण पानी की निचली सतहों तक सोख जाने व खनिज अंशो मे बह जाने का प्रश्न ही नही उठता। यहाँ तो वाष्पीकरण द्वारा जल नीचे की सतहो से ऊपर को खिंचता रहता है। इसमे खनिज नमक काफी मात्रा मे मौजूद होते है अत यह मिट्टी अनुपजाऊ तो नही होती किन्तु कृषि कार्य मे लाई नही जाती क्योकि जल का काफी अभाव रहता है। यह मिट्टी उष्ण तथा शीतोष्ण प्रदेशो के मरुस्थलो तथा अत्यन्त शुष्क भागो मे मिलती है।

ऊपर बताया जा चुका है कि मिट्टी चट्टानो की टूट-फूट का फल है। चट्टाने मौसम के इन तीन प्रभावो के कारण टूटती-फूटती हैं (१) सूर्य, वर्फ, बहता पानी, समुद्र की लहरे और हवाये आदि भौतिक शक्तियो द्वारा, (२) कार्बन-डाइ-आक्साइड, वनस्पति के सडे-गले अश आदि रासायनिक शक्तियो द्वारा; और (३) पौधों की जड़ें जो चट्टानो मे घुसकर उनमे दरारे पैदा कर देती है और पशु—जैसे चीटी, केंचुआ आदि भूमि को खोद कर उसे ढीला कर देते हैं।

मूल चट्टानों के अनुसार मिट्टियों का वर्गीकरण

जिन मिट्टियो के निर्माण मे मूल चट्टान का साधन प्रबल होता है उनके निम्न भेद किये जाते है—

(१) **बलुई मिट्टी** (Sandy Soil)—इस मिट्टी का जन्म सिलीका (Silica) प्रकार की चट्टानो मे हुआ है। इसके कण ढीले होने है क्योकि उनको सगठित रखने के लिये इस मिट्टी मे चिपकने वाले पदार्थ का अभाव होता है। इसमें अधिक समय तक नमी स्थिर नही रह सकती क्योकि वाष्पीकरण सरलता से जारी रहता है। इस मिट्टी में खेती करने के लिये सिंचाई की बहुत आवश्यकता होती है। पौधे के लिये आवश्यक तत्वो की इसमें बहुत कमी होती है। ऐसी मिट्टी नदियो के ऊपरी भागो में मिलती है और ऊसर क्षेत्रो मे भी दरी का बाहुल्य होता है। यह शुष्क मिट्टी होती है। अत खेती के दृष्टिकोण से व्यर्थ है।

(२) **चिकनी या चीका मिट्टी** (Clayey Soil)—यह मिट्टी शेल (Shale) नामक मुलायम चट्टान से बनती है। इसके कण बारीक और सगठित होने हैं क्योकि इस मिट्टी में चिपचिपा पदार्थ प्रचुरता से पाया जाता है। यह पानी धीरे-धीरे सोखती है क्योकि कणो के बीच बहुत कम स्थान होता है किन्तु सोखा हुआ जल बहुत समय तक स्थिर रहता है क्योकि हवा गहराई तक अन्दर नही पहुँच सकती और वाष्पीकरण बहुत ही कम हो पाता है। अत बहुत कम सिंचाई द्वारा भी फसल उगाई जा सकती है। पौधे के आवश्यक तत्व पर्याप्त मात्रा मे मिलते हैं। किन्तु इसमें पौधो की जडें गहराई तक नही जा सकती इसलिये घास के लिये यह बहुत उपयुक्त होती है। ऐसी मिट्टी में हल चलाना भी कठिन होता है इसलिये यह खेती के लिये उपयुक्त नहीं समझी जाती।

(३) **दोमट मिट्टी** (Loam)—यह बलुही तथा चिकनी मिट्टियो के मिश्रण से बनती है। इसके कण न बहुत मोटे और न बहुत बारीक ही होते है। कणो में साधारण स्थान होता है जिससे पानी आसानी से सोख जाता है और स्थिर भी रहता है। पौधो की जडें आसानी से अन्दर जा सकती हैं और हल चलाना आसान होता है। इस मिट्टी मे पौधो के लिये आवश्यक तत्व काफी होते है। सिंचाई की आवश्यकता नहीं पडती। यह मिट्टी खेती के लिये आदर्श मिट्टी है।

यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रतिवर्ष सहस्रों टन उपजाऊ मिट्टी बहकर नदियों द्वारा समुद्र के गर्भ में विलीन कर दी जाती है। भूमि के कटाव के मुख्य प्रदेश भारत में हिमालय प्रदेश की तलहटी वाले भाग (जिनमें अम्बाला जिले के पहाड़ी ढाल, आसाम, बंगाल आदि हैं), मद्रास, महाराष्ट्र, दक्कन, मध्यप्रदेश और छोटा नागपुर हैं।

अनुमान लगाया गया है कि प्रतिवर्ष भूमि के कटाव के कारण भारत की १,५०० लाख एकड़ भूमि कृषि अयोग्य होती जा रही है। भारत के विभिन्न भागों में प्रतिवर्ष वर्षा द्वारा सतह की १/२० इन्च मिट्टी बहकर चली जाती है। प्रायः सभी बड़ी-बड़ी नदियों द्वारा भूमि का कटाव होता है। उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में तो यमुना और चम्बल नदियों ने भूमि को काट-काट कर ऐसे गहरे खड्ड बना दिये हैं कि जिनके फलस्वरूप अकेले उत्तर प्रदेश में ही एक लाख एकड़ भूमि कृषि के अयोग्य बना दी गई है।

संयुक्त राज्य अमरीका में लगभग ५ करोड़ एकड़ भूमि कृषि के लिए पूर्णरूप से अयोग्य हो गई है और लगभग दूसरी ५ करोड़ एकड़ भूमि अत्यधिक रूप से कट रही है। अनुमानतः २ लाख एकड़ भूमि प्रतिवर्ष नष्ट हो रही है।[6] इस विनाश का मुख्य कारण श्री ह्वाइट और रैनर के शब्दों में यूरोपीय कृषिप्रणाली है। "विज्ञान की आशातीत उन्नति होने से विशेषतः आवागमन के साधनों के विकास से सभ्य मनुष्य पृथ्वी के सुन्दर भागों तक पहुँच गया और अपने साथ वर्तमान पाश्चात्य सभ्यता के गुण दोष भी लेता गया। उत्तरी अमरीका, दक्षिणी अमरीका, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में उसने यूरोपीय सभ्यता का रोपण भी किया यद्यपि कहीं-कहीं इसका विकास भी हुआ किन्तु दृढ़ रूप से इसकी गहरी जड़ें कहीं भी नहीं जम सकीं क्योंकि यूरोपीय मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों पर विजय पाने की युक्तियों में ही केवल जानकार होते हैं, वे केवल यही सीख पाये हैं कि यूरोपीय कृषि यूरोपीय जलवायु में किस प्रकार होती है। अन्य भागों में उनके अनुभव सफल सिद्ध नहीं हुए, वरन् उनकी मूर्खताओं द्वारा भयंकर परिणाम होने की आशंका हो गई है, जिसके कारण वहाँ की संस्कृति अथवा सभ्यता की नींव हिल-सी गई है।"[7]

नदियों के इन बीहड़ों ने मथुरा, आगरा और इटावा जिले तथा राजस्थान के धौलपुर, करौली और कोटा जिलों की भूमि को नष्ट कर दिया है। वायु कटाव के द्वारा भी पंजाब और राजस्थान के बीकानेर, जोधपुर, जयपुर, भरतपुर और कोटा जिलों में बड़ी हानि पहुँची है। राजस्थान का मरुस्थल तो प्रतिवर्ष आधे मील की रफ्तार से पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिलों की ओर अग्रसर हो रहा है और डर है कि यदि शीघ्र ही वृक्षारोपण द्वारा इसको न रोका गया तो केवल समस्त राजस्थान ही नहीं अपितु सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के भी मिट्टी के नीचे दब जाने की सम्भावना है।

भूमि क्षरण को रोकने के उपाय

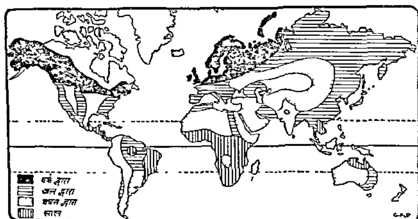
मिट्टी की पोषक शक्ति स्थिर रखने के लिये उसे भूमि क्षरण से बचाना आवश्यक है। श्री रूजवेल्ट के शब्दों में, "यदि मिट्टी नष्ट हो जाती है तो मनुष्य को

6. *White and Renner.*, **Geography—An Introduction to Human Ecology, p. 423.**

7. **Ibid.**

लवण भी जो जल प्रवाह के मार्ग में पड़ते हैं इसमें पाये जाते हैं अतः यह संसार की अत्यन्त उपजाऊ मिट्टियों में गिनी जाती है।

(ii) **हिम प्रवाहित मिट्टी** (Glacial or Till Soil)—उन प्रदेशों में जो अतीत काल में बर्फ से ढके थे और अब भी जहाँ वर्ष में अधिकांश समय तक बर्फ जमी रहती है इस प्रकार की मिट्टी मिलती है। इस मिट्टी के कण कड़े तथा बहुत मोटे होते है। कभी-कभी तो बहुत बड़े-बड़े पत्थर के टुकड़े भी इसमें मिलते हैं। शीत प्रदेशीय पहाड़ी भागों मे हिम नदियों के तीव्र प्रभाव से चट्टानें टूट कर उनके साथ बह आती हैं और घाटियों में जमा हो जाती हैं। इस मिट्टी के प्रदेश उत्तरी गोलार्द्ध में उत्तरी-पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के उत्तरी भाग में मिलते है। यह मिट्टी कृषि के लिये कुछ महत्व रखती है।



चित्र ३५. स्थानान्तरित मिट्टियाँ

(iii) **वायु प्रवाहित मिट्टी** (Eolin Soil or Locss)—वायु वेग से अपने स्थान से स्थानान्तरित मिट्टी को वायु प्रवाहित मिट्टी कहते हैं। स्थानान्तरण में वायु का प्रभावशाली कार्य तभी सम्भव होता है जब भूमि पर वनस्पति न उगी हो। अतः शुष्क तथा मरुस्थलीय भागो मे इस तरह का स्थानान्तरण सम्भव होता है। शुष्क प्रदेशों की बलुही मिट्टी के मोटे कण बालुका-स्तूप (Sand dunes) की शक्ल में जमा हो जाते हैं और बारीक कणो के पर्त दूर-दूर तक जम जाते है। ड्यून मिट्टी सं० रा० अमरीका के दक्षिणी पूर्वी समुद्र तट पर और फ्रांस के उत्तरी भागों में पाई जाती है। नदियों के तट पर मरुस्थलों की सीमाओं के निकट इस प्रकार स्थानान्तरित मिट्टी का प्रसार खूब मिलता है। वायु प्रवाहित मिट्टी का ज्वलन्त उदाहरण लोएस (Loess) मिट्टी है जिसका विस्तार ह्वांगहो नदी की ऊपरी तलहटी में सहस्त्रों वर्गमील में मिलता है। वहाँ इस मिट्टी की गहराई सैकड़ों फुट तक मिलती है। चीन में यह मिट्टी समीपस्थ गोबी और शामो के मरुस्थल से वायु द्वारा उड़ाकर लाई जाती है।

(२) कृषकों को जलाऊ लकड़ी उपलब्ध हो सके इसके लिए गांवों के समीप ही शीघ्र उगने वाले वृक्ष रोपे जायँ जिससे अधिक उपयोगी जंगलों का काटा जाना रोका जा सके।

(३) खेतों में चरने वाले पशुओं की संख्या सीमित रक्खी जाय और उनके लिये अलग-अलग चरागाह नियत किये जायँ तथा उन्हें बांध कर भी चारा खिलाया जाय। ढालू स्थानों में चराई की अधिकता को रोकने के लिये तरुण घासों की चराई से रोकना, बारी-बारी से चराई करना तथा अत्यधिक चराई को रोकना आवश्यक है।

(४) कृषि योग्य भूमि को एक तल की करके उसमें मेड़बन्दी कर देने से उसकी सतह को धरातली कटाव से मुक्त किया जा सकता है। अधिक वर्षा के बाद जब खेतों पर जल स्थिर हो जाता है तब उस जल को छोटी-छोटी नालियों द्वारा बहा देना चाहिये।

(५) पहाड़ी ढालों पर कृषि करने के लिये सम ऊँचाई की रेखा के साथ सीढ़ीदार खेत बनाना जिसमें वर्षा का जल धीरे-धीरे बह सके। ढालू भागों पर सीढ़ीदार वृक्ष रोपण करने से वृक्ष की जड़ें मिट्टी को बांध देती हैं और समतल सीढ़ियाँ कटाव को रोक देती हैं।

(६) बीहड़ भूमि पर बाँध बना कर जल के प्रवाह को नियन्त्रित किया जाय।

(७) मरुस्थलीय तथा अर्द्ध-मरुस्थलीय भागों में सिंचाई की सुविधायें उपलब्ध करना जिससे भूमि नम होकर मुलायम मिट्टी को उड़ने से रोक सके। इसके अतिरिक्त घासें या लम्बी जड़ों वाले पौधों को रेत के टीलों में रोपा जाये जिससे इनका आगे बढ़ना रुक सके।

(२) मिट्टी का उपजाऊपन और खाद

भिन्न-भिन्न प्रकार की मिट्टियों में भिन्न-भिन्न गुण होते हैं। कुछ मिट्टियों में फसलें भली प्रकार उग सकती हैं जब कि अन्य में उनका उगाना लाभप्रद नहीं होता। उदाहरण के लिये बलुही मिट्टी में कण बिखरे होने के कारण जल तथा वायु सरलता से भिद सकती है किन्तु इस प्रकार की मिट्टियाँ जल को अधिक समय के लिए रोक नहीं सकतीं। किन्तु उचित रूप से सिंचाई करके इन पर फल तथा सब्जियों का उत्पादन किया जा सकता है। दोमट मिट्टियों में जल सरलता से नहीं भिद पाता। किन्तु इनमें पौधों की जड़ें भली भाँति पनप सकती हैं। इन पर अनेक प्रकार की फसलें उगाई जा सकती हैं। चिकनी मिट्टी में जल पहुँचने पर वह चिपचिपी और दलदली हो जाती है। सूखने पर उसमें दरारें पड़ जाने से कृषि करना कठिन हो जाता है। कई क्षेत्रों में तो इन पर केवल घास के मैदान ही पाये जाते हैं।

एक उपजाऊ मिट्टी के निम्न लक्षण होते हैं :—

(१) अधिक गहराई जिसमें पौधों की जड़ें पूर्ण रूप से विकसित हो सकें।

(२) नमी की अधिकता तथा नियमित रूप से उसकी पूर्ति।

(३) जिसमें वायु का प्रवेश हो सके और जिसका तापक्रम उपयुक्त हो;

(४) जिसमें पोषण शक्ति का अभाव न हो।

किन्तु पूर्णरूप से कोई भी मिट्टी पूर्णतः उपजाऊ नहीं होती। इसलिये कृषि के

मिट्टी का प्रकार	रंग	क्षेत्र	वनस्पति और फसलें
(५) प्रेरीय मिट्टी (Prairie Soil)	कालापन लिये	संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य में; पनामा; द० अमेरिका का पराना और पैरेग्वे बेसिन, मध्य रूस; मध्य साइबेरिया, फ्रेंच सूडान।	शीतकाल का गेहूँ और मक्का।
(६) काली मिट्टी (Black Earth or Chernozem)	काला या नारंगी	शीतोष्ण घास के मैदानों मे (प्रेरीज, पैम्पास, स्टैपी, वैल्ड, डाउन्स, दकन के उत्तर-पश्चिमी भाग, मध्य चीन के उत्तरी भाग)।	घास के मैदान तथा गेहूँ, कपास, आदि।
(७) मरुस्थलीय मिट्टी (Desert Soil)	पीली	पीरू, उ० चिली, मैक्सिको के कुछ भाग, उटाहा, एरीजोना, नवाडा, सहारा, अरब, एशिया माइनर थार का मरुस्थल, मध्य एशिया, मंगोलिया और विक्टोरिया तथा कालाहारी का मरुस्थल।	बालू के कारण उजाड़ किन्तु नखलिस्तानों में खजूर, ताड, अनाज आदि।
(८) पर्वतीय मिट्टी (Mountain Soil)	हल्की नीली	संसार के अधिकांश पर्वतो पर।	वन-प्रदेश, मक्का, ज्वार, बाजरा, चावल।
(९) लैटेराइट मिट्टी (Laterite Soil)	भूरी	द० अफ्रीका, द० अमरीका के विपुवत्वृत्तीय जंगलो में तथा दकन के छोटा नागपुर पठार पर।	फसलें पैदा नहीं की जा सकती।

प्रथम वर्ग मे खनिज व रासायनिक खादें सम्मिलित की जाती हैं। द्वितीय वर्ग मे गोबर की खाद, हरी खाद, मछली की खाद तथा हड्डी व खून की खाद सम्मिलित की जाती है।

(क) रासायनिक तथा खनिज खादें

मिट्टी को चार मुख्य तत्वों की आवश्यकता होती है: फासफोरस, कैलशियम, नाइट्रोजन तथा पोटेशियम। रोगशमन क्षमता उत्पन्न करने के लिए थोड़ी मात्रा में मैंगनीज व लोहा भी अपेक्षित हैं। अत सब खादें इन्ही तत्वों की पूर्ति करने वाली होती है। रासायनिक खादें बडी कीमती होती हैं, अत. इनका प्रयोग केवल वे ही किसान कर सकते हैं जो धनी है या जो मूल्यवान व्यावसायिक फसलें पैदा करते हैं। अगले पृष्ठ की तालिका में विश्व के विभिन्न देशो मे रासायनिक खाद का उपयोग बताया गया है।

(१) फासफेट (Phosphate)—भारत मे फासफेट बिहार के हजारीबाग, मुघेर व गया जिलो से प्राप्त होने वाली अभ्रक का अश है। आग्नेय तथा परिवर्तित चट्टानो से भी फासफेट मिलता है। ऐसी चट्टानें तिरुचिरापल्ली व मसूरी के निकट भी मिलती हैं। ससार मे इस प्रकार की चट्टानें उत्तरी अमेरिका (फ्लोरिडा, दक्षिणी केरोलिना), उत्तरी अफीका (ट्यूनीसिया, फ्रेंच मोरक्को) तथा यूरोप मे मिलती हैं।

चट्टानो के अतिरिक्त फास्फेट विदेशो मे पशुओ की वधशालाओं के निकट कारखानो से (जहाँ उनका खून और अस्थियाँ भेज दी जाती हैं) भी प्राप्त किया जाता है किन्तु इस प्रकार प्राप्त की गई मात्रा अधिक नही होती। द० पैसिफिक महासागर के शुष्क द्वीपो तथा पीरू तट से कुछ दूर और पश्चिमी द्वीप समूह मे ग्वानो (Guano) नामक चिडियायें मछलियाँ खाकर रहती है। इन्ही के मल से फास्फेट प्राप्त किया जाता है।

(२) पोटैशियम खाद (Potash)—इस प्रकार की खादें पोटेशियम-सल्फेट, पोटैशियम क्लोराइड व पोटैशियम नाइट्रेट हैं। पोटाश नमक अधिक मात्रा में जर्मनी (स्टैफर्ट) और फ्राम (एलसस) और कम मात्रा मे स्पेन व सयुक्त राज्य (सर्ल्स भील, कैलिफोर्निया) से प्राप्त होता है। भारत मे ये खादें बिहार और पजाब मे प्राप्त होंती हैं।

(३) कैलशियम खाद (Calcium)—यह खाद चूने (Lime Stone) से, जो भारत में बहुतायत से मिलता हैं, प्राप्त होती हैं। यह बहुत सस्ती पडती है। यह भारत मे शाहाबाद (बिहार), कटनी (मध्यप्रदेश) तथा राजस्थान मे जोधपुर से प्राप्त होती है। आसाम मे जयन्तिया व खासी पर्वतो से भी मिलती है। पाकिस्तान मे नमक की पहाडी से प्राप्त होती है। डोलोमाइट से मैगनेशियम के साथ कैलशियम भी मिलता है। डोलोमाइट मसूरी, देहरादून, नैनीताल के निकट तथा मध्यप्रदेश से प्राप्त होता है। जिप्सम की प्राप्ति काश्मीर, उत्तर प्रदेश (देहरादून), जोधपुर व गुजरात से प्राप्त होती है। पाकिस्तान मे सीमाप्रान्त (कोहाट) तथा सिन्ध से प्राप्त होती है। यूरोप व अमेरिका मे भी कैलशियम खाद खूब मिलती है।

भूमि क्षरण के कारण—भूमि के कटाव के कई कारण है। इसका मुख्य कारण मानव की अज्ञानता है।

(१) अज्ञानतावश वह कई शताब्दियो से इस कार्य में प्रकृति की सहायता करता रहा है। अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओ (लकडी, ईधन आदि) की पूर्ति के लिए उसने निर्भतया पूर्वक वृक्षो को नष्ट किया है। जब किसी स्थान की वन-सम्पत्ति नष्ट हो गई तो वर्षा के पानी को वहाँ की भूमि काट कर उपजाऊ मिट्टी को बहा ले जाने मे बडी सहायता मिलती है।

(२) इसी प्रकार जगलो के समीप रहने वाली जातियों ने असाधारण सख्या मे भेड-बकरी आदि पशुओ को पाल कर जगलो की वनस्पति को उन्हे बेफिक्री के साथ चरा-चरा कर नष्ट कर दिया है। जानवरो के द्वारा भूमि की घास जब बुरी तरह चरा दी जाती है तो इसका भूमि पर वही प्रभाव पडता है जैसा कि जगलो को काट कर भूमि को साफ कर देना है। सयुक्त राज्य ने यह प्रयोग करके देखा है कि घास से ढकी हुई भूमि से साल मे प्रति एकड एक टन मिट्टी नष्ट होती है जब कि बिना घास की मिट्टी से प्रतिवर्ष प्रति एकड ४० टन मिट्टी नष्ट होती है जब कि मिट्टी का ढाल और जलवायु दोनो दशायें एक-सी रहती हैं।

(३) बहुत-सी आदिम जातियो ने जगलो को साफ कर कृषि के लिए भूमि प्राप्त कर ली है। इन साफ किये हुए जगलो मे भूमिंग कृषि प्रणाली (Jhuming) द्वारा खेती की जाती है। इस प्रणाली के अन्तर्गत एक स्थान की भूमि को साफ करके उस पर खेती की जाती है और दो-तीन वर्ष बाद जब वर्षा द्वारा उस भूमि की ऊपरी सतह धुल कर बह जाती है तो वह भूमि छोड दी जाती है और फिर दूसरे स्थानो के जगलो को जला कर नई भूमि पर खेती की जाती है। इस प्रकार बहुत से जगल प्रतिवर्ष नष्ट हो जाते है।

(४) कृषि के अवैज्ञानिक ढगो से भूमि के कटाव मे बडी सहायता मिलती है।

भूमि क्षरण की हानियाँ—भूमि के कटाव के परिणाम बहुत ही हानिकर होते है—

(१) जंगलो के नष्ट हो जाने से भयंकर बाढ़ें आकर भूमि को हानि पहुँचाती है।

(२) जंगलों के नष्ट हो जाने से उस प्रदेश की वर्षा की मात्रा मे भी कमी हो जाती है और जलवायु धीरे-धीरे शुष्क हो जाता है।

(३) समस्त पानी के जोर से बह जाने के कारण निम्न स्थानों के कुओ का जल-तल अधिक नीचा हो जाता है।

(४) नदियो का तल ऊँचा हो जाता है जिसके फलस्वरूप नदियो के प्रवाह मार्गों मे परिवर्तन होकर बहुत-सी भूमि बेकार हो जाती है।

(५) धरातल के ऊपर की उपजाऊ भूमि के बह कर चले जाने के कारण पैदावार मे कमी होने लगती है।

(६) नालों और बीहड़ों के कारण सैकड़ों एकड़ भूमि कृषि के अयोग्य हो जाती है।

बहुत बढ सकती है और देश सम्पन्न तथा समृद्धिशाली हो सकता है। इस भयंकर भूल को शीघ्र ही सुधारा जाना चाहिए।

(२) हरी खाद (Green Manures)—हरी खाद की विधि हमारे देश में पुराने जमाने से प्रचलित है। इसके अनुसार कुछ विशेष प्रकार की जल्द उगने वाली फसलो और कन्दो—उदाहरणार्थ ढैंचा, शल्जम, रजका, चुकन्दर, सनई, ग्वार इत्यादि के बीज खेतो मे बो दिए जाते है। जब इनके पौधे काफी बढ जाते है तो उन्हे खेत में ही जोत दिया जाता है। इस प्रकार यह पौधे मूसला जड वाले है और इनकी जड मे विशेष प्रकार के कीटाणु पैदा हो जाते है जो नाइट्रोजन उत्पन्न करते है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि एक एकड़ भूमि मे इन पौधो के द्वारा मिट्टी को एक मन नाइट्रोजन प्राप्त होता है।

(३) खली की खाद (Oil Cakes)—खली की खाद एक उत्तम प्रकार की खाद है जिससे मिट्टी को नाइट्रोजन प्राप्त होती है। यह खाद सरसो, तरा, दुआँ, अलसी अरड, महुवा, नीम, मूंगफली, तिलहन इत्यादि पदार्थो की खली से प्राप्त होती है। महुआ, नीम व अरड की खली सस्ती पडती है इसलिए इनका प्रयोग अधिकाधिक किया जाता है।

(४) हड्डी की खाद (Bone Meal)—जानवरों के मृत शरीरो से हड्डियाँ प्राप्त कर उन्हे मशीनो मे पीसा जाता है। इस चूरे का प्रयोग खाद की तरह किया जाता है। इसमे फासफोरस की मात्रा अधिक होती है। स० रा० अमेरिका, ब्राजील इङ्गलैंड व रूस मे इसका अधिक उपयोग होता है। हमारे देश मे हड्डी का चूरा बनाने के कई कारखाने है परन्तु इस चूरे का प्रयोग हमारे देश मे नही किया जाता क्योकि हमारे भारतीय किसान की धार्मिक भावना इसमे बाधा डालती है। यह चूरा विदेशो को भेज दिया जाता है।

(५) खून की खाद (Blood Meal)—भारत सदा से शाकाहारी देश रहा है। देश मे असख्य बूचडखाने हैं जहाँ हजारो की सख्या मे पशुओ का वध किया जाता है। बूचडखानो मे जहां लाखो पशु काटे जाते है खून को इकट्ठा करके सुखा लिया जाता है। इस शुष्क रुधिर को खाद की तरह प्रयोग मे लाया जाता है क्योकि इसमे नाइट्रोजन का अश काफी होता है। इस खाद का प्रचार भी हमारे देश में नही के बराबर है। इस प्रकार की खाद का प्रयोग स० रा० अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना इत्यादि देशों मे खाद्यान्न उत्पन्न करने मे किया जाता है।

(६) मछली की खाद (Fish Meal)—दवाओं के लिए मछली का तेल निकाला जाता है। तेल लेने के बाद मछली के शरीर का जो भाग शेष रह जाता है उसे सुखा लिया जाता है। यूरोप, कनाडा, स० रा० अमेरिका, जापान व चीन आदि देशों मे इस खाद का प्रयोग बहुत किया जाता है। भारत मे मछली के तेल के कारखाने मलाबार व मद्रास तट पर काफी है अत. वही से मछली की खाद प्राप्त होती हैं। इसका प्रयोग भी देश में कम होता है अधिकाश भाग विदेश को भेज दिया जाता है।

प्रश्न

१. तीन मुख्य प्रकार की मिट्टियों के गुणों और उनके वितरण पर टिप्पणियाँ लिखिए।
२. 'वन प्रदेशों' और घास के मैदानों में पाई जाने वाली मिट्टियों की क्या विशेषताएँ हैं? कृषि के लिए इनका क्या महत्व है?
३. भूमि की उर्वराशक्ति से आप क्या समझते हैं? यह किस प्रकार बढ़ाई जा सकती है?

भी नष्ट होना पड़ता है और इस क्रिया मे अधिक समय नही लगता।" इतिहास बताता है कि विश्व की अनेक पुरानी सस्कृतियों का ह्रास मिट्टी के कटाव के कारण ही हुआ है। "बेबीलोन का अंत, चीन का पतन, फारस की अधोगति इसी के सूचक है। मैसोपोटेमिया की नदियाँ, जो किसी समय सभ्यता को फला-फूला रही थी, आज कटाव की अधिकता के कारण अपनी घाटियों की सीमा का उल्लंघन कर भारी विनाश प्रस्तुत करती है।" ह्वागो की विनाशकारी बाढे तथा महानदी, दामोदर आदि की बाढे इसी विनाश के मुख्य उदाहरण हैं। अधिक कटाव के कारण मिट्टी के बनने और उसके कट जाने की क्रिया मे सतुलन नही रहता। अतः कटाव क्रमशः बढता जाता है और इसके फलस्वरूप कृषि उत्पादन मे कमी आ जाती है। "राष्ट्रीय जीवन-स्तर निम्न, अनिश्चित, अपूर्ण और संकटमय हो जाता है तथा आर्थिक और औद्योगिक सकटो से ग्रस्त होकर राष्ट्र का पतन हो जाता है। मिट्टी का कटाव मनुष्य के समाज और उसके वातावरण के साधनो के कुत्सित सम्बन्धो का आधुनिक प्रतीक है। यह जो धारणा मानव-समाज मे प्रचलित है कि रासायनिक खाद की बडी मात्रा मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने मे क्षम्य है वह अब गलत सिद्ध हो चुकी है क्योकि उपजाऊपन न केवल पौधो की भोजन-सामग्री की माग पूरी करने मे है वरन् यह मिट्टी के स्थायित्व से भी सबधित है। जो मिट्टी उपजाऊ तत्वो में दरिद्र हो जाती है वह अस्थाई मिट्टी होती है। प्रकृति के लिए इसका कोई उपयोग नही होता और यह इसे शारीरिक रूप से हटा देती है।" ८

भूमि क्षरण रोकने के सम्बन्ध मे अमरीका तथा अन्य देशो मे काफी प्रयोग किये गये है। अमरीका मे कृषि विभाग के अन्तर्गत भूमि क्षरण विभाग स्थापित किया गया है। जिला भूमि सरक्षण कानून (District Soil Conservation Act) के अन्तर्गत अमरीकी किसान अपनी भूमि को भूमि क्षरण से बचाने के लिये तथा उसमे आने वाली अन्य खराबियो को रोकने के लिये भूमि सरक्षण विभाग से काफी सहयोग करता है। **सर विलियम जे० जेन्किस** ने बताया है कि, "अमरीका मे भूमि सरक्षण से अभिप्राय केवल ढलुवा जमीन पर मेड बाधने या टेक लगाने (Terracing), संकटग्रस्त भूमि पर वन लगवाने, भूमि-क्षरण निरोधक तरीको को अपनाने और उसकी उपजाऊ शक्ति बढाने के लिये उपयुक्त फसले बोने, तल-क्षरण को और भूमि को जुताई, सिंचाई और खाद डालने की प्रणालियों मे सुधार करने से ही नही है। भूमि रक्षण मे इनके साथ ही अन्य सुधार भी शामिल है। परन्तु इसका सही अभिप्राय और अन्तिम लक्ष्य यह है कि प्रति एकड भूमि मे इसकी आवश्यकता के अनुकूल तरीके लागू किये जायें और प्रत्येक एकड भूमि का उपयोग उसकी उत्पादन शक्ति का पूरा लाभ उठाने के उद्देश्य से किया जाय।"

(१) भूमि के कटाव को वृक्षारोपण (Afforestation) करके रोका जा सकता है जिससे कि उस भूमि पर हवा और जल की विनाशकारी क्रियाओ का प्रभाव न पडे। यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि नदियो के ऊपरी भागो में (जहाँ वर्षा का जल नदियों मे आता है) जगलो के क्षेत्र बढाये जायँ और नीचे के जंगलो और गावो के जंगलो को उत्तम प्रबन्ध द्वारा पशुओ की चराई से सुरक्षित रखा जाय।

---

8. *Jacks & White*, **Rape of the Earth, p. 26.**

पकड़ने अथवा वनस्पति और पशुओं से प्राप्त होने वाली वस्तुओं को संचय करने में लगे है। ये मनुष्य विषुवत् रेखा से लगा कर ध्रुवी क्षेत्रों तक फैले है जिनके स्वभाव, कार्य पद्धति आदि सभी वातावरण से पूर्णत. सम्बन्धित- प्रतीत होते है। भोजन की उपलब्धि के लिए पुरुष या स्त्री को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करना पड़ता है। अत. प्राचीन निवासी जो शिकार करने या वस्तुओं का संचय करने में लगे हैं। प्राय भ्रमणकारी अथवा अर्द्ध रूप से भ्रमणकारी जीवन व्यतीत करते हैं। भोजन सामग्री बहुत ही कम समय के लिए नियमित होती है। कभी-कभी भोजन की अधिकता के पश्चात् एक लम्बी अवधि के लिए अकाल की सी स्थिति आजाती है। शिकार करने और वस्तुओं के संचय के लिए साधारणत. विस्तृत भू-क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि प्राचीन अर्थ-व्यवस्था में ५ वर्ग मील क्षेत्र में केवल १ से भी कम मनुष्य का भरण-पोषण हो सकता है। यह भ्रमणशील मनुष्य विश्व के कम घने बसे भागो मे मिलते हैं—टुंड्रा, विषुवत् रेखीय वन, मरुस्थलों के समीपवर्ती क्षेत्र आदि।

मुख्य रूप से शिकारी और संचय करने वाली जातियाँ ये हैं —

(१) अडमान द्वीप के अंडमानी, ओग, जरावास

(२) लका के वेद्दा (Veddahs)

(३) मलाया के सकाई (Sahais) और सेमांग (Semang)

(४) न्यूगिनी के टैपीरो (Tapiro) और पैपुआँ (Papuans)

(५) आस्ट्रेलिया के आदिवासी

(६) कालाहारी मरुस्थल के बुशमैन (Bushmen)

(७) दक्षिण अमरीका के धुर दक्षिण मे टैरा डेलफ्यूजीयन (Tierra de. Fuegians)

(८) अमेजन घाटी और निम्न कैलीफोर्निया के एमरिन्ड (Amerinds)

(९) ग्रीनलैंड और उत्तरी अमरीका के एस्कीमो (Eskimo), यूरेशिया के लैप्स (Lapps), समोयडी (Samoyedes), तुंगस (Tungus) तथा चुकिस (Tchukchis)

(१०) मलाया, पूर्वी द्वीप समूह तथा ओसीनिया के मलैनेशियन (Melanesians), पोलिनेशियन (Polynesian) और माइक्रोनेशियन (Micronesians),

(११) उत्तर अमरीका के होपी (Hopis) और यूमा (Yumas), इतूरी (Ituri), वेतवा (Betwa)।

(१२) कागो बेसीन के पिग्मी (Pygmies) तथा अफ्रीका के वनों के येरुबा (Yerubas) और बलोकी (Balokis)।

(१३) फिलीपाइन्स के एटू (Aetu), सुमात्रा के कूबू (Kubu) और सिलीबीज के तोला (Taolas)।

(१४) भारत और हिन्द चीन की कुछ आदि जातियाँ भील, टोडा, गोंड, सथाल, नागा आदि।

लिए इस प्रकार की मिट्टियों को कृत्रिम रूप से सिंचाई, खाद आदि देकर उपजाऊ बनाया जाता है।[9]

मिट्टी पौधों के भोजन का भंडार है। भिन्न-भिन्न वनस्पतियाँ मिट्टी से भिन्न-भिन्न तत्व लेती है तथा कुछ तत्व छोड़ भी जाती है। इसलिए निरन्तर एक ही प्रकार की वनस्पति एक क्षेत्र में उगने से मिट्टी कुछ विशेष तत्वो की दृष्टि से सर्वथा हीन हो जाती है। इन तत्वो मे से कुछ तो मिट्टी से, कुछ वायु से, कीडो से तथा कुछ वनस्पतियो से प्राप्त हो जाते है। वायु से मिट्टी को कार्बन, नेत्रजन तथा हाइड्रोजन तत्व मिलते हैं। वनस्पति से मिलने वाले तत्व पोटेशियम, सोडियम, कैलशियम, मैगनेशियम, सिलीकन, गधक, फास्फोरस, क्लोरीन और लोहा है। किन्तु इन सब प्राकृतिक साधनो से मिट्टी के नष्ट हो गये तत्वो की पूर्ति पूर्णतया नही होती फलतः कृषि-उत्पादन कम होता जाता है। इस उर्वरा-शक्ति को बनाये रखने के लिए निम्न उपाय काम मे लाये जाने चाहिए :—

(१) फसलो को हेर-फेर के साथ (Rotation of Crops) बोया जाय। इस प्रणाली के अन्तर्गत एक खेत पर बार बार एक ही प्रकार की फसलें पैदा नही की जाती वरन् एक वर्ष एक प्रकार की फसल बोई जाती है तो दूसरे वर्ष दूसरी। इससे जो फसल उपजाऊ तत्वो को नष्ट कर देती है वह दूसरी फसल द्वारा प्राप्त हो जाते है। गेहूँ के बाद कपास, दाल, सन, घासे, ढैंचा, गवार आदि की फसलें बोई जाती हैं जो जडो मे कीटाणुओ को एकत्रित कर उपजाऊ शक्ति को बढा देती है।

(२) किसी क्षेत्र की मिट्टी, जलवायु और वर्तमान उत्पादन शक्ति को दृष्टिगत रखते हुए कृषि प्रणाली निर्धारित की जाती है। मध्यम रूप से उपजाऊ मिट्टियो के लिए मिश्रित खेती (Mixed farming) तथा उपजाऊ क्षेत्रो के लिए अनाज की खेती (Grain farming) और शुष्क भागो मे सूखी खेती (Dry farming) या सिंचाई द्वारा खेती करने की प्रणाली अपनाई जाती है।

(३) वर्षा जल की अधिकता के कारण मिट्टी मे मिले खनिज तत्व भूमि के नीचे रिस जाते है अत उन्हे पुन ऊपरी तह तक लाने के लिए ऐसे हलों का उपयोग किया जाता है जो गहरी खुदाई कर मिट्टी को एकसा कर सकें।

(४) पौधो को उचित मात्रा मे और उचित समय पर्याप्त खाद दिया जाता है। उदाहरण के लिए गेहूँ और कहवा को फासफोरस की अधिक आवश्यकता होती है, गन्ने के लिए अमोनियम सल्फेट या ह्यूमस की, तम्बाकू के लिए पोटेसियम और फासफोरस की, मकई के लिए फासफोरस और नेत्रजन की, तथा चुकन्दर के लिए पोटेशियम और नेत्रजन की। अत यथाशक्ति प्राणिज अथवा रासायनिक खादो का उपयोग उत्पादन बढाने के लिए किया जाता है।

खाद

खाद मुख्यत. दो वर्गो मे बाँटी जा सकती है—

(क) **रासायनिक या अप्राणिज खाद** (Inorganic Fertilisers)

(ख) **अरासायनिक या प्राणिज खाद** (Organic Fertilisers)

---

9. *E. J. Russel*, **Soil Fertility.**

पशु पालन के फलस्वरूप मनुष्य शिकारी या चरवाहा (a herder or a pastoralist) बन गया है। यह आश्चर्यजनक बात है कि प्रागैतिहासिक काल से पालने वाले पशुओं की संख्या में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई है। पशु समुदाय की लगभग ३,५०० किस्मों में से मनुष्य ने केवल २४ जातियाँ, पक्षी समुदाय की लगभग १३,००० जातियों में से केवल ६ और ४,७०,००० कीटाणुओं की किस्मों में केवल दो को पालने के लिए चुना है। जिन ३० जातियों को मनुष्य ने पालने के लिए चुना है उनमें से १० जातियाँ चौपायों की, ४ जातियाँ ऊँटों की, घोड़े, बकरियाँ, हंस तथा मुर्गियों की प्रत्येक की दो-दो जातियाँ, कीड़े मकोड़ों में रेशम के कीड़े की दो, हिरण, सुअर, हंस, बिल्ली तथा कबूतर समुदाय में से प्रत्येक की १—१ जाति।[1]

पशुपालन दो प्रकार का किया जाता है। (क) खानाबदोश (Nomadic), तथा (ख) व्यापारिक रूप से किया गया पशुपालन।

(क) खानाबदोशी पशुपालन के अन्तर्गत चरवाहे अपने पशुओं को लेकर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र की घास तथा जल की तलाश में घूमते फिरते हैं। अधिकांश चरवाहे उन क्षेत्रों तक सीमित हैं जहाँ घास के मैदान हल्के हैं, निम्न किस्म के हैं तथा शीघ्र ही समाप्त हो जाने वाले हैं। अत: इनकी समाप्ति पर इन्हें विवशत: अन्यत्र प्रस्थान करना पड़ता है। अच्छे चरागाहों पर गाय, बैल, भैंस आदि तथा साधारण चरागाहों पर भेड़, बकरियाँ और शुष्क भागों में घोड़े, ऊँट तथा शीत-प्रदेशों में रेंडियर, कुत्ते, कैरिबो, पहाड़ी भागों में याक, लामा, अलपाका आदि विशेष रूप से पाले जाते हैं। अनुमानतः विश्व के १०% भाग पर खानाबदोश चरवाहे रहते हैं। इनकी जनसंख्या का औसत घनत्व प्रति वर्ग मील पीछे २ से ५ व्यक्तियों का होता है। कभी कभी तो यह घनत्व इससे भी कम का पाया जाता है।

पशुपालकों में आर्थिक स्थिति का ज्ञान उनके पास पशुओं की संख्या से लगाया जाता है। ये लोग इन्हें पशुओं से अपने लिए दूध, मांस, चमड़ा, खालें, बाल आदि प्राप्त करते हैं। इनकी सामाजिक संगठन-व्यवस्था बड़ी सीधी-सादी होती है। सामाजिक इकाई का रूप परिवार या अनेक छोटे-छोटे परिवार मिल कर बनता है। इन लोगों में पितृसत्ता (Patriarchy) का महत्व ही होता है। स्त्री पुरुषों में कार्य विभाजन बराबर का होता है। पशु पालना मनुष्यों का कार्य तथा उनके चमड़े को तैयार करना, तम्बू आदि गाड़ना और उखाड़ना तथा अन्यत्र ले जाना विशेष रूप से स्त्रियों के कार्य होते हैं। इनका जीवन बड़ा संघर्षमय होता है अत: कई बार भोजन सामग्री के अभाव में ये निकटवर्ती क्षेत्रों पर धावा बोल देते हैं। ये निडर साहसी, विनाशक होते हैं।

विश्व की प्रमुख पशुपालक जातियाँ ये हैं :—

(१) अरब के बदाघू (Bedouin) जो ऊँटों को पालते हैं।

(२) पूर्वी अफ्रीका के मसाई (Masai) जो चौपाये पालते हैं।

(३) द० अफ्रीका के काफिर (Kafirs) और बुशमेन।

(४) प० सूडान के फुलानी (Fulani)।

1. *E. Huntington, F. E., Williams and S. V. Valkenburg,* **Economic & Social Geography,** p. 401.

रासायनिक खादों की खपत विश्व के कुछ प्रमुख देशों में इस प्रकार है—

खादों की खपत (००० मैट्रिक टनों मे)

देश	नेत्रजन (N)		फास्फेट (P_2O_5)		पाटाश (K_2O)	
	१९५०-५१	१९६०-६१	१९५०-५१	१९५८-५९	१९५०-५१	१९६०-६१
संयुक्तराज्य अमरीका	११६६ ०	२३४६ ०	२०२८ ०	२२३०·२	१३११ ०	१८९२·०
फ्रास	२६२ १	४८०·८	४११ ६	७६३·३	३९०·२	७०५·४
जापान	४४२ ०	६८३·४	२३७ ७	३५८·८	९२·९	४३५·६
इगलैंड	२१८·८	३४४·०	३८०·३	२९९ ७	२३०·०	३७५·९
भारत	४६ ६	२५७ ०	१४ ०	३९ ०	४·०	१३·२
इटली	१५६·५	३०३ ०	१९ ०	२९३·८	३८६·०	८०·९

(४) **नेत्रजन (Nitrogen)**—नाइट्रोजन तत्व तीन पदार्थों से प्राप्त किया जाता है अर्थात् चिलियन शोरा (सोडियम नाइट्रेट), पोटेशियम नाइट्रेट और अमोनियम सल्फेट। सोडियम नाइट्रेट उत्तरी चिली के मरुस्थल से प्राप्त होता है। चिली मे इसके क्षेत्र ४५० मील की लम्बाई मे कोस्ट रेंज और एडीज पर्वतों के मध्य मे फैले हैं। यह समुद्र तल से लगभग २०० से ५,००० फीट ऊँचाई तक और १६ से ६० मील की दूरी तक फैले है। यह क्षेत्र संसार के शुष्कतम क्षेत्रों मे से है जहाँ एक बार भी वर्षा नही होती। इसका प्रयोग गन्ने की खेती मे किया जाता है। सिंद्री मे भारत सरकार ने इस खाद को बनाने के लिए करोड़ो रुपयों के व्यय से एक कारखाना लगाया है जो ३१ अक्टूबर १९५१ से चालू हो गया है।

पोटेशियम नाइट्रेट भारत मे उत्तर प्रदेश, पजाब तथा बिहार मे बनाया जाता है। *अमोनियम सल्फेट टाटा के लोहे के कारखाने से प्राप्त होता है।* यह कोयले को साफ करने की क्रिया मे अमोनिया सल्फेट बन जाता है। उसका प्रयोग चाय के बागो मे खूब किया जाता है। बिजली द्वारा हवा से नाइट्रोजन प्राप्त करने की नई विधि जर्मनी और नार्वे मे मालूम की गई परन्तु अभी भारत मे इसका अवलम्बन नही किया जा सकता क्योंकि इसमे बिजली बहुत खर्च होती है।

(ख) अरासायनिक खादें

(१) **पशुशाला की खाद**—यह खाद पशुशाला के गोबर, मूत्र व कूड़े-करकट से प्राप्त होती है। इनके साथ घर का अन्य कूड़ा-करकट भी गड्ढो में डालकर सड़ा लिया जाता है। भारत मे ईंधन की कमी के कारण इस प्रकार की खाद अधिकतर केवल वर्षा के दिनो मे ही इकट्ठी की जाती है जब कि गोबर के कन्डे (उपले) बनाने की सुविधा नही रहती। यह बडे दुर्भाग्य की बात है कि भारत मे प्रतिवर्ष ५६ करोड़ टन गोबर कडे बनाकर जला दिया जाता है और केवल एक तिहाई भाग अर्थात् २८ करोड टन खाद की तरह प्रयोग किया जाता है। ठीक ही कहा गया है कि "गोबर को जलाना देश की समृद्धि को जलाना है" क्योंकि उपले के रूप में जलाये जाने वाले गोबर को यदि खाद की जगह काम मे लाया जावे तो खेती की पैदावार

उत्तरी अमरीका में व्यापारिक पैमाने की चराई को Livestock Ranching कहा जाता है।

३. **मछली पकड़ना** (Fishing)—उष्ण और शीतोष्ण कटिबन्धीय महासागरों के तटीय भागों में आदिवासियों और सभ्य मानवों द्वारा अपने भोजन की पूर्ति के पुराने और आधुनिक यन्त्रों की सहायता से मछली पकड़ने का कार्य किया जाता है। खाने योग्य मछलियाँ उष्ण कटिबन्धीय समुद्रों तथा महासागरों की अपेक्षा समशीतोष्ण कटिबन्धों में अधिक पकड़ी जाती हैं जहाँ इनके लिए ये सुविधायें मिलती हैं: (१) समुद्र जलधाराओं तथा पछुवा हवाओं के प्रभाव से यह तट साल भर खुले रहते है, (२) सामुद्रिक तूफानों से बचने के लिए मछलियों को फियोर्ड और छोटी-छोटी खाड़ियों में सरलता से शरण मिल जाती है; (३) जल धारायें अपने साथ बहाकर अनेक प्रकार की घासें तथा सूक्ष्म जीव बहा लाती है, जिन पर मछलियाँ निर्वाह करती हैं, (४) सामुद्रिक किनारे कम गहरे हैं अत: मछलियों को भोजन पर्याप्त मात्रा में मिलता है। कुल पकड़ का ४८% प्रशान्त महासागर से, ४७% आंध्र महासागर से और ५% हिन्द महासागर में प्राप्त होता है। भोजन योग्य मछलियों में मुख्य सार्डीन, हैरिंग, कॉड, हैडक, मैकरेल, हलीबट आदि मुख्य हैं। मछलियाँ पकड़ने वाले मुख्य देश जापान, बेल्जियम, हालैंड, कनाडा, संयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन, नार्वे, स्वीडन, चीन, जापान, तथा द० पूर्वी एशिया के देश हैं। यह उद्योग विश्व के अनेक भागों में बिखरे हुए रूप में किया जाता है। मछली पकड़ने के मुख्य क्षेत्र इस प्रकार है—

(१) न्यूफाउडलैंड बैंक,

(२) उत्तरी सागर के निकटवर्ती महाद्वीपीय ढाल,

(३) कनाडा और संयुक्त राज्य अमरीका का उत्तरी प्रशान्त सागरीय तट।

(४) जापान तथा पूर्वी एशिया का तट।

मछलियों के अतिरिक्त तटीय भागों के निकट घोंघे, सीप, केंकड़े, लोबेस्टर, समुद्री ककड़ियाँ आदि जीव भी पकड़े जाते हैं।

व्यापारिक मछली उत्पादन के अतिरिक्त मछलियाँ पकड़ने का कार्य एस्कीमो, समोयडी, पोलीनेशिया तथा द० पूर्वी एशिया के द्वीपों के आदिवासियों द्वारा भी किया जाता है।

४. **लकड़ी काटना** (Forestry or Lumbering) विश्व के उन क्षेत्रों में जिनमें उपयोगी लकड़ियों के वन प्रदेश मिलते हैं तथा जहाँ इन्हें वनों से सामुद्रिक तटों अथवा औद्योगिक केन्द्रों तक लाने की सुविधायें पाई जाती है, उनमें न केवल आदिवासियों द्वारा ही वरन् सभ्य मानव भी लकड़ी काटने के व्यवसाय में लगे हैं।

लकड़ी काटने का उद्योग मुख्यतः इन प्रदेशों में होता है:—

(१) मानसून प्रदेशों के ग्रीष्म-कालीन पतझड़ वाले वनों में जहाँ सागवान, साखू, शीशम, साल आदि के सुन्दर, टिकाऊ और पुष्ट वृक्ष मिलते हैं।

अध्याय ११

मानव के व्यवसाय

(OCCUPATIONS OF MAN)

भूतल के प्रत्येक भाग मे प्राचीनकाल से ही ऐसी जातियाँ रहती थी जो अपने जीवन के लिए सर्वथा अपने भौगोलिक वातावरण के आधीन थी। ऐसी जातियों के मनुष्यो को जंगली मनुष्य या आदिवासी (Primitive People) कहा जाता है। इन की जनसख्या तथा आवश्यकतायें बहुत थोडी थी और वे जहाँ कही भी रहते थे, वहाँ इनको अपने भिन्न-भिन्न भौगोलिक वातावरणो के अनुसार अपना रहन-सहन, खान-पान, वेष-भूषा इत्यादि का भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रबन्ध करने के लिए बाध्य होना पडता था। ऐसी अवस्था मे न तो कोई उद्योग-व्यवसाय ही उन्नत थे और न व्यापार ही। कालान्तर मे जब मनुष्यों की सख्या क्रमश बढने लगी तब इनकी आवश्यकतायें भी बढी और उन्होंने यह अनुभव किया कि वह अपने जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के लिए बहुत कुछ प्रयास कर सकते है। अत. इन्होंने इन बढ़ती हुई आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए क्रातिकारी परिवर्तन करना आरम्भ कर दिया। यही सम्यता का श्रीगणेश था। जगली पशुओं को पालने की कला उन्होने सीखी और यह भी जाना कि कृषि द्वारा किस प्रकार अनाज तथा अन्य वस्तुयें उत्पन्न की जाती है। इस भावना से कृषि की उन्नति हुई। खनिज पदार्थों के ज्ञान से मानव ने शिकार करने के अच्छे-अच्छे औजार बनाये और बाद मे उद्योग-व्यापार की भी उन्नति हुई जिनके फलस्वरूप मानव अधिक उन्नतिशील, विचारवान, शक्तिशाली तथा सभ्य बनता गया। इन सभ्य जातियो ने भूतल के अच्छे-अच्छे उपजाऊ भागो को अपना निवास-स्थान बनाया और प्राचीन जातियो को वनों अथवा मरुस्थलों या निर्जन पर्वतो की ओर खदेड दिया जहाँ के भौगोलिक वातावरण ने उन्हे कठिन तथा कष्ट-मय जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य किया।

भूतल पर मानवों के विभिन्न उद्योग-धन्धो से मानव के औद्योगिक और सास्कृतिक-विकास क्रम का ज्ञान होता है। उदाहरणार्थ, जीवित रहने के लिये फल-फूल एकत्र करना सबसे सरल है। सभ्यता की दूसरी सीढी शिकार खेलना तथा मछली मारना है जिसमे अपेक्षाकृत अधिक चतुराई और बुद्धि की आवश्यकता पडती है। तृतीय अवस्था मे मानव ने पशु पालना आरम्भ किया। चौथी अवस्था मे उसने कृषि का आरम्भ किया। इसमे उसको अपनी आजीविका के लिए थोड़ा-सा परिश्रम करना पडता है और शेष समय वह ललित-कलाओ और कलाकौशल के विकास में लगा देता है। अन्तिम अवस्था वह है जिसमे खनिज पदार्थों को खान से निकालने और वाणिज्य व्यवसाय करने की क्रियायें सम्मिलित की जाती है। इस प्रकार मानव के जीवनोपायों का विस्तार क्रम ये है :—

१. शिकार करना तथा संचय करना (Hunting and Gathering)—पृथ्वी के अनेक भागों मे मनुष्य आज भी अपने भरण-पोषण के लिए शिकार करने, मछली

प्राचीन खेती के विस्तृत क्षेत्र ये हैं :—

(१) दक्षिण अमरीका में अमेज़ोनिया (Amazonia) और मध्यवर्ती अमरीका।

(२) भूमध्यरेखीय अफ्रीकी प्रदेश।

(३) मलाया से लगाकर प्रशान्त महासागर के द्वीपों तक।

इन क्षेत्रों में अधिक वर्षा होने के कारण धरातल की उपजाऊ मिट्टी रिस कर बह जाती है और लैटेराइट होने के कारण कृषि के लिए बहुत शीघ्र ही अनुपयुक्त हो जाती है। अत: पहली फसल काफी अच्छी होती है किन्तु दो-तीन वर्षों के बाद की फसलें बिगड़ने लगती हैं। फलस्वरूप ये लोग अन्य भागों को साफ कर उन्हें कृषि योग्य बना लेते हैं। इस प्रकार खेती का क्षेत्र स्थाई नहीं होता वरन् वह सरकता या बदलता रहता है। अत: इस प्रकार की खेती को सरकती हुई खेती अथवा खेत वन अर्थव्यवस्था (Shifting Cultivation or Field Forest Economy) कहा जाता है। इस प्रकार की खेती को भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है :—

मध्य अमरीका में मिल्पा (Milpa)

विषुवतीय अफ्रीका में फंग (Fang)

आसाम में झूम (Jhoom)

द० पठार में पोडू (Fodu)

ब्रह्मा में तुंग्या (Taungua)

लंका में चीना (Chena)

फिलीपाइन्स में केंगिन (Kaingin)

जावा में हूमा (Huma)

पूर्वी द्वीपों तथा मलाया में लदांग (Ladang)

थाईलैंड में तमराई (Tamrai)

सरकती हुई कृषि इन लोगों द्वारा की जाती है :—

(१) मध्यवर्ती विषुवतरेखीय अफ्रीका के फंग और गबून (Gabun) लोगों द्वारा।

(२) दक्षिणी अमरीका के उत्तरी भाग में डच-गायना के जूका (Djuka) अथवा बुशनीग्रो (Bush-Negroes) द्वारा।

(३) कांगो बेसीन में बकूबा (Bakuba) द्वारा।

(४) अमेज़ोनिया की बोरो (Boro) और अन्य एमरिण्ड जातियों द्वारा।

(५) भारत में बस्तर के गोंड, आसाम के नागा और लखर द्वारा तथा दक्षिण राजस्थान में भीलों द्वारा।

(६) अनाम में मोई (Moi) और फिलीपाइन, बोर्नियो, तथा पूर्वीद्वीप समूह में अन्य आदि जातियों द्वारा।

इन लोगों की रहन-सहन और आर्थिक क्रियायें अपने वातावरण से भली प्रकार समजित है। ये लोग न केवल पशुओ का शिकार ही करते है वरन् मछलियाँ भी पकडते हैं और पशुओं का सचय करते है। विषुवत् रेखीय वनो मे हाथी, स्लोथ, जैगुवार, घडियाल आदि का तथा टंड्रा प्रदेश मे सील, वालरस, ह्वेल, वेलूगा, आर्कटिक खरगोश, कैरीबो, कस्तूरी बैल, ध्रुवी भालू और अनेक प्रकार की चिडियो का शिकार किया जाता है। टैगा प्रदेश मे समूर के लिए लोमडी, भालू, बीवर, उदबिलाव आदि का शिकार होता है। शिकार के लिए तीर कमान, विष लगे या बिना विष लगे, भाले, फदे आदि का उपयोग किया जाता है। इन पशुओं से इन्हे भोजन सामग्री तथा कपडा बनाने के लिए खालें और रोऐं प्राप्त होते हैं। सेंटलुइस, सिएटल, टैकोमा विन्नीपेग, माण्ट्रियल, वैंकूवर, आदि स्थान अमरीका मे और कोपनहेगन, लिपजिग, लेनिनग्राड, सिलन, और ओमस्लो यूरोप मे रोएँ के बृहत् बिक्री केन्द्र हैं।

समूरदार पशुओ के लिए शीत प्रदेशो मे अनुकूल भौगोलिक अवस्थायें मिलती : (१) इन क्षेत्रों में दीर्घकालीन शीतकाल मे हिम वर्षा होती है तथा भयंकर शीत पड़ती है।

(२) इस ठंढ से रक्षा पाने के लिए प्रकृति ने यहाँ के पशुओं के शरीर पर घने बाल उत्पन्न कर दिये है।

(३) इस क्षेत्र मे लकडियो के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों का अभाव रहता है अत. ये पशु मास भोजी हो जाते है तथा स्वय यहाँ के निवासियो के शिकार बन जाते हैं।

इन खानाबदोश शिकारियो तथा संचयको के घर भी टिकाऊ नही होते। इनका जीवन स्तर बडा निम्न होता है और सभ्यता से ये कोसो दूर होते हैं।

२. पशुपालन (Herding or Nomadic Pastoralism)—घास के मैदानों विषुवत्रेखीय भागो आदि के निवासी मूलत शिकारी थे किन्तु जब उन्हे ज्ञान हुआ कि घास के मैदानो मे पशुपालन किया जा सकता है जिससे जीवन-निर्वाह मे और अधिक सुविधा हो सकती है। अत इन लोगो की शिकार करने की मनोवृति कम होने लगी और उन्होंने पशुपालन का श्रीगणेश किया। मानव शास्त्रियो के अनुसार व्यापक दृष्टि से पशुपालन का क्षेत्र मैसेपोटेमिया से लेकर चीनी तुर्किस्तान तक था। यह सभवत सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र था। अन्य क्षेत्र भी इसके अतिरिक्त थे किन्तु वे छोटे-छोटे थे। इन क्षेत्रो मे गाय-भैंस, भेड़ और बकरियाँ पाली जाती थी। अन्य पशु-ऊँट, घोड़े, कुत्ते आदि भी पाले जाते थे।

पशु पालन मे ऐसे पशुओ को सम्मिलित किया गया जिनसे मनुष्य की भोजन, वस्त्र आदि की माग पूरी हो सके तथा पशुओ का उपयोग बोझा ढोने के लिए किया जा सके। श्री हॉटिंगटन ने वस्तु प्रदान की दृष्टि से वे पशु पालने योग्य बताये है जो या तो पाचक तथा मीठा दूध दे सकें या खाने योग्य गोश्त, खालें, रेशें तथा अंडे। शारीरिक गुणो की दृष्टि से वे पशु उपयुक्त बताये गये हैं जिनमे शीघ्र ही जनन-क्रिया द्वारा अपनी वृद्धि की क्षमता हो या वह इतना बड़ा हो कि उसमे पर्याप्त मात्रा मे दूध मिल सकें या जो मनुष्यों और बोझ को ढो सकें तथा जिसके पैर मिट्टी मे भली भांति टिक सकें। ये पशु भयानक न हों तथा उनमे इतनी बुद्धि होनी चाहिए कि वे सामूहिक रूप से रह सकें।

कर ६८८० तक का है। जावा और भारत के कई स्थानों में तो यह इससे भी अधिक मिलता है। सम्पूर्ण विश्व की लगभग ½ जनसंख्या चावल पर ही निवास करती है, यद्यपि यह विश्व के केवल ८% भाग पर ही रहती है। चावल के अतिरिक्त अन्य प्रकार के अनाज भी इन भागों में पैदा किये जाते हैं। इन क्षेत्रों में खेती ढंग अभी भी पुराने ही हैं तथा खेती के औजार बहुत ही सीधे-सादे। इसलिए कभी-कभी पूर्वी देशों की खेती को 'Hoe-Culture' भी कहा जाता है।

डा० हंटिंगटन के अनुसार प्रगति के पथ पर बढ़ती हुई संस्कृतियाँ क्रमशः शिकारी, संचयकर्ता तथा खानाबदोश चरवाहे रहे हैं। इनके भी ऊपर चार प्रकार की संस्कृतियाँ मिलती हैं जो चार विभिन्न अनाजों पर आधारित हैं—अफ्रीका में टेफ़ अनाज की संस्कृति, कोलम्बस युग के पूर्व के अमरीका में मक्का; द० पूर्वी एशिया में चावल और द० प० यूरोप तथा अमरीका के मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में गेहूँ की संस्कृति।

यह बड़ी महत्वपूर्ण बात है कि अपने जन्म स्थान दक्षिण-पूर्वी एशिया से चावल की खेती पूर्वी द्वीपों और जावा से होती हुई उत्तर की ओर कोरिया तथा जापान तक पहुँच गई। जहाँ कहीं चावल की खेती की जाती है, वहाँ के कृषकों में सहकारी भावना का प्रादुर्भाव पाया जाता है क्योंकि सिंचाई आदि के लिए इन्हें मिल-जुलकर काम करना आवश्यक होता है। चावल का प्रति एकड़ उत्पादन अधिक होता है। ५० पौंड चावल के बीज से २५०० पौंड चावल प्राप्त किया जा सकता है। यह मात्रा पूरे वर्ष भर पाँच प्राणियों के लिए पर्याप्त मानी गई है। इस प्रकार प्रतिवर्ग मील पीछे २,००० व्यक्तियों का भरण-पोषण सम्भव है।

संक्षेप में, पूर्वी देशों की कृषि की विशेषतायें ये हैं "छोटे-छोटे बिखरे हुए खेत, गहरी खेती, यन्त्रों का बहुत ही कम उपयोग तथा मानव श्रम की अधिकता, चावल के अतिरिक्त अन्य खाद्यान्नों का अतिरिक्त उत्पादन कम जिनका विश्व-व्यापार में बहुत ही कम स्थान है।"

(ख) पश्चिमी देशों की खेती—इस प्रकार की खेती का उद्‌गम् स्थान भूमध्यसागर के पूर्वी देशों में माना जाता है जो निचली नील नदी की घाटी से लगाकर दजला-फरात की घाटियों तक फैला है। यहाँ स्थायी रूप से कृषि की जाती है। इसका प्रभाव पूर्व की ओर सिंधु घाटी तक तथा पश्चिम की ओर भूमध्यसागर के तटवर्ती भागों तक। ईसाई युग के बाद धीरे-धीरे यह प्रभाव भूमध्य सागरीय यूरोप के उत्तरी वन प्रदेशों की ओर भी पड़ने लगा और कालान्तर में सम्पूर्ण यूरोप से लगाकर नई दुनिया, आस्ट्रेलिया, उत्तरी एशिया, और द० अफ्रीका में भी स्थाई रूप से खेती की जाने लगी। इन देशों की संस्कृति को गेहूँ की संस्कृति (Wheat Culture) की संज्ञा दी गई है। गेहूँ के अतिरिक्त अब यहाँ जौ, राई, मक्का, जई, आलू, अलसी, सरसम, तम्बाकू आदि विस्तृत मात्रा में पैदा किये जाते हैं। खेती के साथ-साथ पशुपालन (Stock-raising) का धंधा भी बड़ा महत्वपूर्ण हो गया है। फसलों की विभिन्नता का मुख्य कारण नई किस्मों का विकास, उत्पादन में विशेषीकरण तथा यातायात के साधनों में प्रगति होना है। अतः इस प्रकार की खेती में व्यापार के लिए उत्पादन किया जाता है।

पश्चिमी देशों की खेती के निम्न वर्गीकरण किये जाते हैं:—

(१) स्वावलम्बी खेती;

(५) कैस्पियन सागर के पूर्वी भागों के घोड़े और भेड पालने वाले कज्जाक (Cossacks) तथा खिरगीज (Khirgiz)।

(६) रूस के थियान-शान-अल्टाई प्रदेश के खिरगीज।

(७) टूंडा प्रदेश के लैप्स, समोयडी, उत्तरी तुंगज (Tunguz) जो रेंडियर पालते हैं।

(८) मध्य एशियाई स्टैपी प्रदेश के उत्तर की ओर रहने वाले दक्षिणी तुंगज।

(९) मध्य एशियाई स्टैपी प्रदेश के दक्षिणी भागों के कालमुक (Kalmuk), बुरियत (Buriat), मंगोल (Mangols), तारांची (Taranchi) आदि।

(१०) पश्चिमी तुर्किस्तान के खुर्द (Kurds) और तुर्की (Turkis) आदि।

(११) भारत में पजाब, गुजरात और राजस्थान के गूजर, जाट रैबारी आदि।

यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि ये खानाबदोश चरवाहे अपने निश्चित क्षेत्रो को सामयिक रूप से लौट आते हैं। उदाहरणार्थ, बुद्दू लोग अपने ऊँटो और घोडों को लेकर विस्तृत क्षेत्रो में घूमते है। ये क्षेत्र शीतकाल मे यमन से लगाकर ग्रीष्म ऋतु मे काकेशस के ढालो तक फैले हैं। मसाई लोग पूर्वी अफ्रीका के बड़े क्षेत्र तक घूम आते है तथा अपने क्रॉल (Krall) घर को प्रति तीन-चार महीने बाद नये चरागाह पर ले जाते है। मंगोल और तुर्की भी इसी प्रकार घूमते हैं किन्तु एक एक निश्चित अवधि के बाद वे पुन अपने पहले स्थान पर लौट आते है। खिरगीज भी इसी जलवायु मे परिवर्तन होने के साथ-साथ घूमते हैं।

(ख) व्यापारिक पैमाने पर पशु-पालन का कार्य सभ्य मनुष्यो द्वारा विस्तृत रूप से घास के मैदानो मे किया जाता है। ये चरवाहे साधारणत एक ही स्थान पर टिक कर रहते है और इनके चरागाह एक बहुत बडे क्षेत्र तक सीमित होते हैं। इन पशुपालको के पास इतने बडे बडे झुण्ड या रेवड (Flocks) होते है कि उनमे एक-एक मे १ से २ लाख तक पशु होते हैं तथा एक रैंच ५ हजार एकड़ से लगाकर २० हजार एकड तक का होता है। कई रैंचे तो १ लाख एकड क्षेत्रफल से भी अधिक के होते हैं। ये रैंचें एक दूसरे से ५० से १०० मील दूर होती हैं अत इनकी रखवाली घोड़ो पर बैठ कर की जाती है। इन चरागाहो के निकट ही मास तैयार करने, ऊन और चमड़ा-खालें साफ करने के कारखाने होते हैं। ये चरागाह सभी सुविधाओ से सुसज्जित होते हैं। भेडो के ऐसे बडे चरागाहो को Spations कहते हैं। ये मुख्यतः आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड मे पाये जाते हैं और मैक्सिको में Haciendas।

व्यापारिक पैमाने पर पशुपालन निम्न क्षेत्रों मे किया जाता है :—

(१) उष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदानो मे जिन्हे दक्षिणी अमरीका मे कम्पास (Campos), अमरीका में लैनास (Llanos), क्वीन्सलैंड तथा उत्तरी आस्ट्रेलिया मे डाऊनलैंड (Downland) और अफ्रीका मे सवाना (Savannah) कहते हैं।

(२) शीतोष्ण-कटिबन्धीय घास के मैदान, जिन्हे उत्तरी अमरीका मे प्रेरी (Praries), दक्षिणी अफ्रीका मे वेल्ड (Velds) और द० अमरीका में पम्पास कहते हैं। इन घास के मैदानों मे लाखों चौपाये, भेड़, बकरियाँ ऊँट, खच्चर, घोड़े, बतख, मुर्गियाँ आदि पाले जाते हैं।

में पाया जाता है और विश्व व्यापार में आने वाली अधिकांश गोला गिरी यहीं से प्राप्त होती है।

(४) मारगीन (कृत्रिम घी) मे प्रयुक्त करने के लिये ताड़ के तेल के प्रमुख प्रदेश नाइजीरिया, फ्रांसीसी पश्चिमी अफ्रीका, सीरिया लियोन, बैल्जियन कांगो, फ्रांसीसी कैमरून और डच पूर्वी द्वीप समूह हैं।

(५) व्यापारिक पैमाने पर केले की खेती जमैका, हॉन्डुरास, मैक्सिको, मध्य अफ्रीका का पश्चिमी तट, कैनेरी द्वीप, कोलम्बिया, ग्वाटेमाला, क्यूबा, पनामा, कोस्टारिका और ब्राजील के तटीय भागो मे केन्द्रित है।

(६) जंजीबार और पैम्बा द्वीपो से लौंग का उत्पादन प्राप्त होता है।

(७) गन्ने के बगीचे जावा, सुमात्रा मैलागासी, फीजी व पश्चिमी द्वीप समूह मे पाये जाते है।

(८) चाय के बगीचे लंका इंडोनेशिया व आसाम मे पाये जाते हैं।

खानें खोदना (Mining)

खनिज पदार्थ—चाहे वे भवन निर्माण के लिए आवश्यक हों या उद्योगो के लिए—प्रायः भूगर्भ से सबंधित होते है। ये किसी विशिष्ट स्थान में ही मिलते हैं विशेषत पुराने पहाडी क्षेत्रो मे। खानें खोदने वाले भी मुख्य रूप से सयुक्त राज्य अमरीका, मैक्सिको तथा कनाडा के उच्च प्रदेशो मे, मध्यवर्ती एंडीज पर्वत, पूर्वी ब्राजील, द० पू० अफ्रीका के पठार, यूरोप तथा एशिया के अनेक भागों मे और आस्ट्रेलिया मे पाये जाते है।

जब किसी क्षेत्र मे नये खनिज पदार्थों का पता लगता है तो वहाँ अन्य भागों की ओर जनसख्या बडी मात्रा मे आकर बसने लगती है और नये खनिज नगरो का विकास हो जाता है जैसे मोंटाना मे ताँबे की खानो के निकट बूटे नगर का तथा तेल स्रोतो के निकट ओकलाहोमा मे **टुलसा** का अथवा आस्ट्रेलिया के मरुस्थल मे सोने की खानो के समीप कालगुर्ली और कूलगार्डी तथा कनाडा में **क्लान्डाइक** स्वर्ण क्षेत्र मे। न्यूमैक्सिको, यूराल और कोलोराडो मे १९५० मे यूरेनियम की प्राप्ति के फलस्वरूप भी जनसंख्या बडी तेजी से यहाँ बढ गई है। किन्तु जब खनिज पदार्थो की समाप्ति हो जाती है तो जनसंख्या भी घटने लगती है और बस्तियां उजड़ सी जाती हैं। इन्हे ही भूतो के कस्बे (Ghost towns) कहा जाता है।

यह एक बडी महत्वपूर्ण बात है कि जहाँ कोयला और लोहा समीपस्थ मिल जाता है वहीं उद्योगो के विकास के फलस्वरूप जनसख्या भी सघन हो जाती है। इंगलैंड का **काला देश**, जर्मनी की **रूर की घाटी**, पश्चिमी साइबेरिया और डोनेज के बेसीन मे पेंसिलविनिया और पश्चिमी वर्जीनिया क्षेत्र ऐसे भागो के प्रमुख उदाहरण हैं।

निर्माण उद्योग (Manufacturing Industries)

जिन क्षेत्रो मे खनिज पदार्थों और शक्ति के साधनो की प्राप्ति प्रचुरता से होती है उनमें जीविकोपार्जन के लिए विभिन्न प्रकार के निर्माण उद्योगो का विकास किया जाता है जिनके अंतर्गत कच्चे माल को पक्के माल के रूप मे बदला जाकर

(२) साधारण ग्रीष्म, प्रधान समशीतोष्ण वनों मे जहाँ यूकलीप्टस, मगनोलिया, ओक, आदि दीमको से नष्ट न होने वाले मजबूत वृक्ष मिलते है।

(३) साधारण शीत प्रधान समशीतोष्ण प्रदेशो मे जहाँ सुन्दर और टिकाऊ मेपिल, बर्च, बीच, लार्च, वलूत, पोपलर आदि वृक्षो की अधिकता होती है।

(४) कोणधारी वनो में जहाँ कागज की लुब्दी, कागज, दियासलाई की सलाइयाँ, तारपीन तथा अन्य द्रव्य तेल, आदि के उपयुक्त चीड़, देवदार, स्प्रूस, फर आदि के मुलायम लकडी वाले वृक्ष मिलते है।

(५) भूमध्यरेखीय वनो मे जहाँ वनो की सघनता कम है और जहाँ नदियां उपलब्ध है, वहाँ महोगनी, इबोनी, रोजवुड, ग्रीनवुड, हार्डवुड, रबड आदि की मजबूत और टिकाऊ लकडियो के वृक्ष मिलते है।

इन प्रदेशो मे जो मनुष्य लकडियाँ काटने का कार्य करते है उनके जीवन मे स्थिरता नहीं पाई जाती क्योकि एक क्षेत्र के वन समाप्त हो जाने पर विवशत: दूसरे स्थान की ओर जाना पडता है। फलत ऐसे लोगो की जनसख्या का घनत्व प्रतिवर्ग मील पीछे बहुत कम होता है।

यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि दक्षिणी गोलार्द्ध मे कार्य-शील वन क्षेत्रो का क्षेत्रफल उत्तरी गोलार्द्ध की अपेक्षा न केवल कम है वरन् वे विश्व के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रो और बाजारो से भी दूर पडते हैं अत. इनकी अधिकाँश लकडिया विना काटे ही रह जाती है।

५. कृषि (Agriculture)—ज्यो-ज्यो मानव सभ्य होता गया उसके जीविकोपार्जन के साधन भी विस्तृत और अधिक सुदृढ होते गये। उसने अपने भोजन और वस्त्रो की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अधिक सुचारु और निश्चित ढगो को अपनाना आरभ किया जिसके लिए आरभ मे उसने पृथ्वी से कुछ उत्पन्न करने का विचार किया होगा और यहाँ-वहाँ वन क्षेत्रों को जलाकर तथा घास के मैदानो को साफ कर कृषि योग्य भूमि निकाली होगी और शनैं शनैं उस भूमि पर कुछ खाद्यान्न उत्पन्न करने लगा।

खेती को उसके करने के ढग के अनुसार मुख्यतः दो भागो मे विभाजित किया जाता है :—

(क) प्राचीन खेती

आधुनिक (ख) प्राचीन या सभ्य मनुष्यो की खेती

(क) प्राचीन खेती (Primitive Agriculture)—इस प्रकार की खेती मुख्यत. विश्व के अनेक भागो मे आदिवासियो द्वारा की जाती है। ये लोग पुराने ढग से तथा लकड़ी या पत्थरो के बने औजारो की सहायता से भूमि को खोद कर उस पर वर्षा होने पर कुछ अनाज पैदा कर लेते है। इसके लिए पहले एक निश्चित क्षेत्र की झाड़ियो, वन आदि को जला दिया जाता है। वर्षा ऋतु मे जब यह जली हुई भूमि तर हो जाती है तो इसमे मनीओक (manioc), शकरकंद, रतालू, मकई, केले, अथवा ताड के वृक्ष लगा दिये जाते है। अमेजन नदी की घाटी के आदिवासी न केवल रतालू और कुछ चावल पैदा करते है वरन् नारियल, केला, ब्रैडफ्रूट (bread fruit) भी। अफ्रीकी वनो मे रतालू, मिलेट्स और केला पैदा किया जाता है।

अध्याय १२

मत्स्य पालन उद्योग

(THE FISHING INDUSTRY)

मछली मानव के भोजन का महत्वपूर्ण पदार्थ है। विश्व के कुछ भागो में भोज्य पदार्थों की कमी मास से पूर्ण की जाती है, किन्तु विभिन्न देशों में इसकी खपत अलग-अलग है। मनुष्य द्वारा खाये जाने वाले पशु पदार्थों मे से ३% मछली से प्राप्त होता है। किन्तु नार्वे, स्वीडेन, न्यूफाऊडलैंड, आइसलैंड और जापान मे भोज्य पदार्थ का १०% मछली से प्राप्त होता है।[1] मछली की खपत मुख्यत: स्थानीय रिवाजो, धर्म और मछली पकड़ने की सुविधा पर निर्भर करती है।

मछली पकडना मानव का सबसे पुराना धधा रहा है। इस धधे मे मनुष्य को कृषि की भाँति न तो भूमि जोतनी पडती है और न फसल पकने तक की प्रतीक्षा ही करनी पडती है। केवल जाल लेकर भील या समुद्र मे डाल देना और थोड़ी देर प्रतीक्षा करनी पड़ती है। मछली की उत्पादन शक्ति बडी विचित्र होती है। एक बार में एक-एक मछली ५० लाख से लगाकर २ करोड़ तक अडे देती है। उदाहरण के लिए, लिंग (Ling) मछली प्रति वर्ष १८५ लाख तक अंडे देती है; टरबट (Turbot) ८० लाख; कॉड (Cod) ४५ लाख, प्लेस (Plaice) ३ लाख और हैरिंग (Herring) ३२ हजार अंडे प्रति वर्ष देती है।[2] अत यदि मछलियो के पकड़ने मे सावधानी बरती जाये तो मानव भोजन का भडार कभी समाप्त नही हो सकता।

मछली पकड़ने का उद्योग विश्व का न केवल प्रमुख वरन् एक वृहत उद्योग भी है। विश्व के प्राय सभी बसे हुये तटो, बड़ी-बड़ी आन्तरिक भीलो तथा विशिष्ट नदियो मे से मछलियाँ पकडी जाती है।

मछलियाँ पकडने का धधा भूतल के लगभग ७२% जल भाग में किया जाता है—जो सम्पूर्ण विश्व के १९६ करोड़ वर्गमील मे से १४० करोड वर्गमील क्षेत्र मे फैले हैं।[3] ये जल भाग (१) प्राय सभी बड़े महासागर है जिनका क्षेत्रफल इस प्रकार है:—

प्रशान्त	६३,९८५,००० वर्गमील
आध्र	३१,५२९,००० ,,
भारतीय	२८,३५७,००० ,,
आर्कटिक	५,५४१,००० ,,

1. *E Huntington*, **Principles of Economic Geography**, pp. 3-2.
2. *Gibbs*, **Fishing Industry**, p. 32.
3. **Goode's World Atlas**, 1953, p. 161.

प्राचीन खेती, इन जातियों के अतिरिक्त, अफ्रीका के सवाना प्रदेश तथा प्रशान्त महासागर के द्वीप-वासियों द्वारा भी की जाती है, जो या तो पशुपालक तथा प्राचीन कृषक हैं अथवा जो स्थाई रूप से पुराने ढगो से खेती करते हैं। उदाहरणार्थ, केनिया उपनिवेश मे किकूयू (Kikuyu) तथा मध्यवर्ती सूडान में हॉसा (Hausas) जातियों द्वारा।

(ख) आधुनिक खेती (Modern Agriculture)—जब मनुष्य एक चरण और भी सभ्यता की ओर बढा तो उसके खेती करने के ढंग मे परिवर्तन हो गया। मानव-श्रम के स्थान पर यन्त्रो का उपयोग अपेक्षित हो गया। खेती करने के ढंग अधिक आधुनिक हो गये और यातायात के ढगों मे पूर्णत. विकास हो जाने के फलस्वरूप खेती का रूप भी बदल गया। पहले केवल पेट भरने के लिए ही खाद्यान्न उत्पन्न किये जाते थे किंतु अब खेती व्यापार के लिए और विस्तृत पैमाने पर की जाती है। क्षेत्र की आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात् शेष खाद्यान्न विदेशो को निर्यात् कर अन्य आवश्यकताओं की वस्तुओ का आयात किया जाता है। यह सारा परिवर्तन मुख्यत पुराने पत्थर युग से लगाकर नवीन पत्थर युग के बीच के काल मे ही हुए है। यह अनुमान लगाया गया है कि भूतल पर लगभग ३५०,००० विभिन्न जातियो के पौधे मिलते है, किंतु उनमे से जगली अवस्था मे आदिवासियो द्वारा शायद ३५०० जातियो का ही उपयोग किया गया है। इसमे से बोये जाने वाले पौधो की सख्या ६०० से अधिक नही है जिन्हे सभ्य मानव पैदा करता है। इनमें से भी केवल २५ पौधे ही आर्थिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण माने गये है। ये इस प्रकार है —

(i) अनाज (Cereals)—गेहूँ, जौ, जई, राई, मकई, चावल, मोटे अनाज (millets) जिन्हे 'Sevenfold Staff of Humanity' कहा जाता है।

(ii) गांठदार पौधे (Tubers)—आलू, मैनीऑक।

(iii) रेशेदार पौधे तथा घासें—कपास, जूट, सन, सनई, गन्ना।

(iv) वृक्ष और झाड़ियाँ (Trees & Bushes)—अंगूर, जैतून, रसदार फल, सेव, चाय, कहवा, केला ब्रैड-फ्रूट, नारियल, रबड़ और शहतूत।

आधुनिक कृषि को दो भागो मे विभक्त किया गया है प्रथम प्रकार की कृषि को **पूर्वी देशों की कृषि** (Oriental Agriculture) कहा जाता है और दूसरे प्रकार की कृषि को **पश्चिमी देशो की कृषि** (Occidental Agriculture)।

(क) **पूर्वी देशों की कृषि** के मुख्य क्षेत्र पूर्वी तथा द०पू० एशिया के देशो मे—भारत, लका, चीन, जापान, इडोचीन, इडोनेशिया, थाईलैंड, ब्रह्मा आदि की जाती है। इसके अन्तर्गत कृषि स्थाई होती है। विशेप क्षेत्रो मे विशेष अनाजो का उत्पादन किया जाता है, विशेषत चावल, जो इन प्रदेशो की मुख्य पैदावार है। इसका यहाँ के निवासियों के भोजन मे इतना महत्वपूर्ण स्थान है कि श्री हटिंगटन ने तो चावल खानेवाले देशो की सभ्यता को **चावल की सभ्यता** (Rice Culture) की ही संज्ञा दे दी है।[2] चावल उत्पादक क्षेत्रों मे ग्रामीण भागो मे प्रति वर्गमील पीछे जनसख्या का घनत्व बहुत अधिक पाया जाता है। निचली यांग्टसी घाटी में यह ९८० से लगा

2. *E. Huntington*, **Human Habita .**

मछलियों की पकड़
(००० मैट्रिक टनों में)

देश	१९५६	१९५७	१९५८
कनाडा	१,१०६	९९३	१,००३
सं० रा० अमरीका	२,९५६	२,७३२	२,६७१
चीन	२,६४०	२,९५०	—
भारत	१,०१२	१,२३३	१,०६४
जापान	४,७६३	५,३९९	५,५०५
नार्वे	२,२०१	१,७५५	१,४१६
इंगलैंड	१,०५०	१,०१४	९९९
रूस	२,६१६	२,५३१	२,६२१
समस्त विश्व	२९,७९०	३०,६००	२७,७२०

१९६१ में विश्व का मछली उत्पादन लगभग ४१:० लाख टन का था जिसमें से एशिया में ४०%; उत्तरी अमरीका में ११%, दक्षिण अमरीका में १५%; और यूरोप में २०%; अफ्रीका में ६% तथा रूस में ८% हुआ।[4]

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होगा कि मछलियाँ मुख्यतः शीतोष्ण प्रदेशों की उपज हैं।

शीतोष्ण कटिबन्ध में ही मछलियों का धन्धा अधिक केन्द्रित होने के निम्न कारण हैं—

(१) उष्ण कटिबन्ध में समुद्र का जल बहुत गर्म रहता है किन्तु शीतोष्ण कटिबन्ध में यह अपेक्षाकृत ठंडा रहता है। ठंडी जलवायु मछलियों के अनुकूल पड़ती है किन्तु बहुत ठंडी जलवायु प्रतिकूल पड़ती है। अतः शीत कटिबन्ध में भी मछलियाँ कम होती हैं।

(२) उष्ण कटिबन्ध में जो थोड़ी-मछलियाँ पाई जाती हैं (यह विशेष ध्यान देने योग्य है कि उष्ण कटिबन्ध के समुद्रों में मछलियों के लिये भोजन की कमी है) वे कई जातियों की होती है। अलग-अलग जाति की थोड़ी सी मछलियाँ पाई जाने के कारण उष्ण कटिबन्ध में उन्हें पकड़ने की सुविधा नहीं है। इसके विपरीत शीतोष्ण कटिबन्ध में पाई जाने वाली मछलियाँ केवल गिनी चुनी जातियों की होती हैं अर्थात् एक-एक जाति की बहुत-बहुत मछलियाँ होती हैं। इस सुविधा के कारण शीतोष्ण कटिबन्ध में मछलियाँ पकड़ने का धन्धा अधिक होता है।

(३) उष्ण कटिबन्ध में समुद्र अधिक गहरा है। छिछले समुद्र (जो १०० फैदम से कम गहरा हो) का भाग वहाँ बहुत कम है। अतः वहाँ गहरे समुद्र की मछलियाँ पाई जाती हैं जिनका पकड़ना कठिन होता है। इसके विरुद्ध शीतोष्ण कटिबन्ध में छिछले समुद्र का भाग अधिक है। उत्तरी गोलार्द्ध के सभी महाद्वीपों का

4. **Britannica Book of the Year,** 1963, p. 205.

जब विशिष्टीकरण सब्जियों के उत्पादन में होता है तो उसे Market Gardening कहते हैं और जब यह विशिष्टीकरण फलो मे होता है तो उसे Truck Gardening कहा जाता है। इन दोनों कार्यो के लिए कुशल मजदूर तथा खेती की आवश्यकता होती है।

गहरी खेती (Intensive Cultivation)—दक्षिणी और पूर्वी एशिया के घने बसे हुए देशो मे फसलो के पैदा करने के लिए भूमि को अनाज बोने के पहले कई बार जोता जाता है। आवश्यकतानुसार खाद मिलाया जाता है, बहुत से श्रमिक काम करने के लिये रखे जाते है और बोने के बाद अच्छी तरह नलाया जाता है। थोड़ी भूमि से अधिक पैदावार लेने के ढग को 'गहरी खेती' के नाम से पुकारा जाता है। जर्मनी, डेनमार्क, हालैंड, इंगलैण्ड आदि देशो में इस प्रकार की खेती मे महान् उन्नति हुई है। भारत, चीन, जापान आदि देशो मे बढती हुई जनसख्या को भोजन देने के लिए भूमि से अधिक से अधिक मात्रा में अनाज प्राप्त किया जाता है किन्तु कृषि के ढग बहुत पुराने है।

पौधवाली खेती (Plantation Agriculture) के अन्तर्गत केवल वही फसलें आती हैं जो विदेशी प्रबन्ध और विदेशी निरीक्षण मे और व्यापारिक पैमाने पर विशेष रूप से बिक्री के लिये धन वाली ऊँचे दर्जे की फसलें पैदा की जाती हैं। कभी-कभी तो इनमे श्रमिको की सख्या भी अधिकतर विदेशी ही होती है जैसे मलाया मे रबड के पैदा करने के लिये श्रमिक अधिकतर चीन और भारत से आये हुए है। घाना और ब्राजील मे छोटे पैमाने पर कोको की पैदावार आवश्यक रूप से आदिवासियों के हाथ ही मे है, ब्रिटिश, मलाया और डच पूर्वी द्वीप समूह मे बहुत से रबड के बाग देशी लोगो के अधिकार मे हो गये हैं। गोला (गरी) की पैदावार केवल देशी लोग ही करते है।

वर्षीले उष्ण प्रदेशो मे, जो अधिकतर यूरोप या अमरीका के उपनिवेश हैं, जो खेती होती है उसे 'पौधवाली खेती' का नाम दिया जाता है। यह बडे पैमाने की खेती का एक अग है जिसमे प्राय एक स्थान मे एक ही धन वाली फसल व्यापारिक रूप से प्रधानत बिक्री के लिये पैदा की जाती है। इस प्रकार की खेती का रूप अत्यन्त व्यवस्थित और वैज्ञानिक होता है। अतएव मशीनो, औजारों तथा इनकी अन्य आवश्यक सामग्रियो के लिए बहुत अधिक पूंजी की आवश्यकता पडती है। इसमे आधुनिक वैज्ञानिक विकासो से बराबर सम्पर्क रखना पडता है। इन प्रदेशो मे ससार भर की आवश्यकता की पूर्ति के लिये इन पदार्थों के उत्पादन मे विशेषता प्राप्त की जाती है जैसे सिंकोना, सनकर, चाय, कोको, केला और रबड।

(१) रबड़ की पौध प्रधानत दक्षिणी पूर्वी एशिया के तटीय भागों मे स्थित है। महत्व के अनुसार प्रमुख देश ये है—मलाया, जावा, सुमात्रा, लंका, बर्मा, भारत (धुर दक्षिणी—पश्चिमी पेटी), फ्रांसीसी हिन्द चीन और बोर्नियो। संसार की रबड़ की लगभग ९५ प्रतिशत पैदावार इन्ही देशो से प्राप्त होती है।

(२) कोको की पौध वाली खेती की पैदावार अधिकतर घाना, नाइजीरिया, दक्षिणी पूर्वी ब्राजील, ईक्वेडोर, कैमरून, वैनीजुएला, आइवरी तट, सैन डोमिंगो और त्रिनिदाद से आती है।

(३) गोले की खेती का सबसे अधिक विस्तार फिलीपाइन, डच पूर्वी द्वीप समूह, मलाया, लंका, न्यूगिनी, मोजम्बीक, फीजी, सोलेमन तथा जंजीबार द्वीपों

मछली प्रायः समुद्र की तलैटी में या ऊपरी सतह से थोड़ी दूर नीचे किनारों पर कम गहरे पानी में पाई जाती है। समुद्र की तलैटी के गहरे पानी में मिलने वाली मछलियों को ट्रालर (trawler) जहाजों की सहायता से पकड़ा जाता है। इन जहाजों में मछली पकड़ने का जाल पानी में लटका दिया जाता है और फिर समुद्र की तलैटी के सहारे से ६ मील फी घण्टे की रफ्तार से खींचते हैं। इस प्रकार उसमें मछलियाँ फंस जाती हैं और तब जाल को ट्रालर जहाज में ऊपर खींच लेते हैं।

कम गहरे पानी में ड्रिफ्टर (drifter) जहाज द्वारा मछलियाँ पकड़ी जाती है। इस जहाज में १० चालक तथा लगभग ६० जाल रहते हैं। इन जालों को ऊपर व नीचे से छोटी-छोटी रस्सियों द्वारा बाँध देते हैं। फिर जहाज से नीचे लटका कर पानी में हिलोरते हैं जिससे मछलियाँ इनमें फंस जाती हैं और जाल को ऊपर खींच लिया जाता है।

मछलियों के प्रकार (Kinds of Fisheries)

विशेषज्ञों का अनुमान है कि विश्व के जल मडलों मे लगभग ३०,००० किस्म (species) की मछलियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से कई केवल ताजा पानी में ही रहती हैं कुछ सामुद्रिक जल में और कुछ इन दोनों के बीच के क्षेत्रों में। विश्व के कई भागों में स्वच्छ जल की मछलियाँ, तटीय क्षेत्रों की मछलियाँ और खुले समुद्रों की मछलियाँ पकड़ने में कोई विशेष भेद नहीं किया जाता। किन्तु वस्तुत जीविकोपार्जन तथा व्यापारिक पैमाने पर मछलियाँ पकड़ने में बड़ा अन्तर है। समस्त संसार की दृष्टि से स्वच्छ जल की मछलियां, तटीय अथवा खुले समुद्रों की मछलियों की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है। साधारणत. तटीय भागों की मछलियाँ ही अधिक पकड़ी जाती है।

(१) स्वच्छ जल की व्यापारिक मछलियाँ
(Fresh Water Fisheries)

नदियों अथवा झीलों में पकड़ी जाने वाली मछलियों के दो प्रमुख भेद हैं। एक तो वे मछलियाँ जो अपने जीवन का अधिकांश जीवन खारे पानी में बिताती हैं और कुछ विशेष मौसम में ही स्वच्छ जल में आ जाती है। दूसरी वे जो अपना समस्त जीवन स्वच्छ जल में गुजारती हैं। स्वच्छ जल के महत्वपूर्ण मछली पकड़ने के केन्द्र घनी आबादी के समीप पाई जाने वाली झीलें, द० पू० यूरोप की नदियाँ, और समुद्र की मछलियां उत्तरी प्रशान्त में गिरने वाली नदियों की सालमन मछलियां तथा चीन व जापान के भीतर पकड़ी जाने वाली मछलियाँ हैं।

(क) महान झीलों की मछलियाँ (Lake fisheries)—जैसे ही महान झीलों के तटों के समीप नगर और शहर बढ़ते गये व्यापारिक पैमाने पर मछली पकड़ने का काम भी बढ़ता गया। इन बड़ी झीलों में अन्य नदियों और झीलों के समान बड़ी मात्रा में मछली पकड़ने पर भी मछलियों का शीघ्र ह्रास नहीं हुआ। वस्तुतः अत्यधिक मछली पकड़ने, शहरों व औद्योगिक केन्द्रों के समीप पानी के गंदा हो जाने तथा अपर्याप्त सुरक्षा के कारण ही मछलियों की मात्रा कम होती है। यद्यपि अभी महान् झीलों में लगभग ४० प्रकार की मछलियाँ पकड़ी जाती है किन्तु सात किस्में—**हेरिंग, ट्राउट, यल्लो, पाइक, वाईट, फिश, पर्च, ब्ल्यूपाईक, और कार्प**—विशेष महत्वपूर्ण हैं। मछलियों की कुल पकड़ में तीन चौथाई भाग इन्हीं मछलियों का होता है। अधिकतर मछलियाँ झीलों के बन्दरगाहों, छोटे मछली केन्द्रों व शहरी बाजारों के

उसकी रूप उपयोगिता बढ़ाई जाती है। कच्चा सामान दूरस्थ क्षेत्रो से प्राप्त किया जाता है तथा कारखानो मे यन्त्रों की सहायता से वृहत् उत्पादन किया जाता है।

निर्माण उद्योगो को दो श्रेणियो मे विभाजित किया जाता है : भारी उद्योग (Heavy Industries) जिसके अंतर्गत सभी प्रकार की भारी मशीनें, यंत्र उपकरण, उद्योग, कृषि, यातायात के के लिए आवश्यक यंत्र, विद्युतशक्ति, रासायनिक पदार्थ, धातु सबधी वस्तुयें तैयार किये जाते है। हल्के उद्योग (Light Industries) के अंतर्गत भोजन की वस्तुयें, कपडे, जूते, घर का सामान आदि वस्तुयें बनाई जाती है।

विश्व के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र ये है.—

(१) सयुक्त राज्य मे पिट्सबर्ग-क्लीवलैंड, न्यूयार्क, फिलाडेलफिया-बाल्टीमोर, द० न्यू इगलैंड, डिट्रायट, द० मिशीगन झील प्रदेश।

(२) यूरोप मे उत्तरी-पूर्वी इगलैड, यार्कशायर के वैस्ट राइडिंग, द० लकाशायर, मध्यवर्ती स्कॉटलैड, मिडलैंड, द० वेल्स, उत्तरी फ्रास, वेल्जियम, रूर प्रदेश, मध्य जर्मनी-बोहेमिया, साइलेमिया, उत्तरी इटली, आल्पस का अग्रभाग।

(३) एशिया मे चीन, भारत तथा जापान के औद्योगिक क्षेत्र।

व्यापार एवं अन्य सेवायें (Commerce & Services)

उपरोक्त उद्योगों के अतिरिक्त अनेक मनुष्य वस्तुओ के क्रय-विक्रय, उनके स्थानान्तरण तथा व्यापार विनिमय मे लगे है। उत्तरी पश्चिमी यूरोप के अधिकाश देश व्यापारिक जहाजी बेड़े के कारण बडे प्रमुख व्यापारिक देश बन गये है।

अन्य कुछ लोग गृह-विभाग का कार्य करते हैं, कुछ शिक्षक है, तो कुछ चिकित्सक, कुछ वकील अथवा कुछ शासन-सुरक्षा और देश के प्रबध के कार्य मे लगे हैं।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि शनैः शनैः मानव ने अपनी जीविका के साधनो का विकास किया है और उसी के फलस्वरूप संस्कृति मे भी विकास होता गया है।

कारणों से आजकल अधिकतर मछलियाँ समुद्र तटीय भागों में ही पकड़ी जाती हैं।

यद्यपि उत्तरी प्रशान्त महासागर में सामन की पकड़ में भारी कमी हो गई है किन्तु फिर भी यह क्षेत्र अभी भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आजकल सामन की अधिकतर पकड़ प्रशान्त तट पर ओरेगन से वाशिंगटन, ब्रिटिश कोलम्बिया, अलास्का, साइबेरिया, साखालिन व उत्तरी जापान के समीप होती है। इन भागों में सामन की अधिकतर पकड़ मई से अक्टूबर मास तक जब मछलियाँ अण्डे देने आती हैं, होती है। जाड़ो में समुद्र के खराब रहने व भीषण चक्रवात आने के कारण मछलियाँ पकड़ने में बड़ी बाधा उपस्थित होती है। वर्ष प्रति वर्ष इसकी पकड़ में कमी ज्यादा होती रहती है।

उत्तरी अमरीका से प्रति वर्ष बड़ी मात्रा में सामन मछली यूरोप को भेजी जाती है। यहाँ से निर्यात होने वाली मछलियाँ अधिकतर डिब्बों में बन्द करके भेजी जाती है। इसी प्रकार एशियाई तट से मछलियाँ ताजा ही जापान को भेजी जाती हैं। कुछ मछलियाँ नमक लगाकर व अच्छी छाँट कर भी भेजी जाती हैं। अब धीरे-धीरे डिब्बों में बन्द करने की प्रथा भी बढ़ती जा रही है। उत्तरी अमेरिका में सामन को डिब्बों में बन्द करने का कार्य बड़ी-बड़ी कम्पनियों के हाथ में है। एक कम्पनी के पास नावें, मछली मारने के विभिन्न उपकरण और आधुनिक मशीनों से सुसज्जित मछलियों को डिब्बों में बन्द करने का कारखाना होता है। ऐसे कारखाने साधारणतः ज्वार जल के निकट स्थित होते हैं। आधुनिक कारखाने मछलियों को छाँटने, साफ करने, नमक लगाने, डिब्बों में बन्द करने व पकाने आदि का समस्त कार्य करते हैं। इसके अनन्तर डिब्बे साफ किये जाते है, उन पर लेबल लगाया जाता है और फिर उन्हें कार्डबोर्ड के डिब्बों में बन्द किया जाता है। गर्मियों में ये स्थान चहल पहल के केन्द्र बने रहते है किन्तु जाड़ो में पुनः उजाड़ हो जाते हैं। यद्यपि ये कारखाने थोड़े समय के लिये ही कार्य करते हैं किन्तु फिर भी संयुक्त राज्य अमेरिका और अलास्का प्रति वर्ष कोई ७०० लाख डालर की मछलियाँ पकड़ते हैं।

ताजे जल की अन्य व्यापारिक मछलियाँ—कई स्थानों पर नदियों व छोटी झीलों में भी व्यापारिक आधार पर मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। किन्तु ऐसे स्थानों पर बड़े पैमाने पर मछलियाँ पकड़ने से थोड़े ही समय में मछलियाँ कम पड़ जाती हैं और वहाँ का व्यापारिक महत्व समाप्त हो जाता है। परन्तु चीन, जापान और कोरिया में व्यापारिक पैमाने पर बहुत ही अधिक ताजा पानी की मछलियाँ मिलती हैं। इन घने आबाद देशों में माँस वाले पशु बहुत ही कम हैं। अतः यहाँ लोग व्यापारिक पैमाने पर मछली पालन का कार्य करते हैं। यहाँ झील, तालाबों, नदियों, नहरों और दलदलों में बहुत ही बड़े पैमाने पर कार्प व अन्य मछलियाँ पालते हैं। झीलों व तालाबों में ताजा पानी रखा जाता है। मछलियों को भोजन दिया जाता है व मछलियों के भोजन के शीघ्र बढ़ने हेतु जल को उत्पादक बनाया जाता है। यहाँ से बराबर मछलियों को पकड़ कर अनेक रूपों में बेचा जाता है। पूर्व में इस प्रकार मछली पकड़ने का यह व्यवसाय बड़ा ही स्थाई और महत्वपूर्ण है।

(२) तटीय समुद्रों की मछलियाँ

(Coastal or Shallow-water Fisheries)

प्रायः हर आबाद तट के पास मछली पकड़ने का उद्यम किया जाता है। कहीं

(२) प्रायः सभी सागरों मे, जिनमें मुख्य ये है.—

भूमध्य सागर	१,१४५,०००	वर्गमील
बहरिंग सागर	८७८,०००	,,
कैरेबियन सागर	७५०,०००	,,
मैक्सिको की खाड़ी,	७००,०००	,,
ओखोटस्क सागर	५८२,०००	,,
पूर्वी चीन सागर	४८०,०००	,,
पीला सागर	४८०,००७	,,
हड्सन की खाडी	४७२,०००	,,
जापान सागर	४०५,०००	,,
उत्तरी खाडी	२२१,०००	,,
लाल सागर	१७८,०००	,,
कैस्पियन सागर	१६६,३८३	,,
काला सागर	१६८,५००	,,
वाल्टिक सागर	१५८,०००	,,

(३) झीलो और नदियों मे, जिनमें मुख्य ये हैं.—

झीलें—

सुपीरियर झील	३१,८१०	वर्गमील
विक्टोरिया झील	२६,८२८	,,
बेकाल झील	१३,१९७	,,
लाडोगा झील	७,०००	,,
इरी झील	३,७००	,,
टीटीकाका झील	३,२६१	,,

नदियाँ—

नील नदी	४,०००	मील लम्बी
मिस्सौरी-मिसीसिपी	३,९८८	,,
अमेजन	३,९००	,,
ओब	३,२००	,,
यांग्ट्सी	३,१००	,,
वोल्गा	२,३००	,,
डैन्यूब	१,७२५	,,

आगे की तालिका में समुद्रों से पकडी जाने वाली मछलियों का परिमाण बताया गया है :—

प्रातः जल्दी ही ठंडक के समय मछली पकड़ने निकलते हैं और दोपहर तक पुनः लौट आते हैं।

उष्ण समुद्रों में अनेक प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं। भिन्न-भिन्न स्थानीय क्षेत्रो मे विशेष प्रकार की मछली का ही बाहुल्य होता है अत. वहाँ उसी की पकड अधिक होती है। जैसे कैरीबियन सागर में रेड स्नैपर, मुलैट, शीपस हेड़, सी ट्राऊट, फलाईंग फिश, स्पेनिश मेकरेल, फ्लाउन्डर, ड्रम या रेडफिश और टर्टल्स मुख्य किस्में हैं। ऊँचे तापक्रमों और शीत भडारो की असुविधा के कारण यहाँ जो भी मछलियाँ पकडी जाती है उनका कुछ ही घण्टो मे उपभोग आवश्यक हो जाता है। अन्यथा वे सब खराब हो जाती हैं। यद्यपि इन भागो में ताजा मछलियो की बराबर माँग बनी रहती है फिर कुछ मछलियाँ सुखाई जाती हैं और नमक लगाया जाता है। शीतोष्ण भागो मे सूखी, नमकीन व डिब्बो में बन्द मछलियाँ बड़े ही सस्ते दामो पर प्राप्त हो जाती है अत बडी मात्रा में वहाँ से आयात की जाती है। इसके परिणाम स्वरूप इन भागो मे मछली व्यवसाय को व्यापारिक पैमाने पर उन्नत करने मे बडी-कठिनाइयाँ उपस्थित हो गई है। उष्ण समुद्रो मे भोजन योग्य मछलियाँ और उन्हें पकडने के तरीको के बारे मे काफी वैज्ञानिक अध्ययन किया जा चुका है किन्तु अभी इस ओर बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

स्पंज वाली मछलियाँ (Spong Fisheries)

मोटर तथा वानिश उद्योग में स्पज की बढती हुई माँग ने लोगों का ध्यान स्पंज एकत्रित करने की ओर आकर्षित किया। स्पज वैसे कई भागो मे प्राप्त होता है किन्तु ससार का अधिकतर स्पंज पश्चिमी द्वीपसमूह के चारो ओर के समुद्र, फ्लोरिडा के तट, पूर्वी भूमध्य सागर व लाल सागर से प्राप्त होता है। ससार का तीन चौथाई स्पज जिस क्षेत्र से आता है वह ७५° व ८५° पश्चिम देशान्तर और १९° और ३०° उत्तरी अक्षाशो के बीच स्थित है। बहामा द्वीप की प्रवालियो (Reefs) और फ्लोरिडा तथा पाईन व क्यूबा द्वीपों के बीच छिछला पानी स्पज के विकास के लिये आदर्श अवस्थायें प्रस्तुत करता है। स्पज के अन्य क्षेत्रो मे भी ऐसी ही अवस्थायें पाई जाती है। स्पज की कई किस्मे होती है किन्तु सुगठित, बड़ा, मुलायम और शीघ्र घुलनशील स्पज सबसे अच्छा होता है।

स्पज एकत्रित करने के दो तरीके है। साधारणत: बीस फीट से कम गहरे समुद्रो मे स्पज काँटो (Hooks) द्वारा प्राप्त किया जाता है। किन्तु आजकल गोता लगाकर स्पज प्राप्त करने की विधि सफल हुई है। इसी कारण आधे से अधिक स्पज गोता लगाने की विधि से ही प्राप्त होता है।

यद्यपि स्पज कुछ ही भागो से प्राप्त होता है किन्तु स्पज की किस्म में बडा अन्तर होता है। स्पंज एकत्रित करने की मात्रा उसकी माग पर निर्भर करती है न कि उसकी प्रचुरता और मछुवो की कुशलता पर। स्पज के अन्य कई उन्नत क्षेत्र खोज करने पर मालूम हो सकते है। जापान तथा ब्रिटिश सरकार के क्रमश. दक्षिणी प्रशान्त के द्वीपों तथा बहामा व ब्रिटिश हाडूरास में किये गये परीक्षणों में यह ज्ञात हो गया है कि स्पज खेती के आधार पर पैदा किया जा सकता है।

मोती देने वाली मछलियाँ (Pearl Fisheries)

मोती एक प्रकार की सीपों से प्राप्त होता है। आइस्टर (Oyster) और

अधिकतम विस्तार शीतोष्ण कटिबन्ध में ही हुआ है। अत. उनके तटों पर पाए जाने वाले छिछले समुद्रों मे बहुत अधिक मछलियाँ मिलती है।

(४) गरम देशों की मछलियाँ शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं। अत उनके व्यापार मे कठिनाई पडने के कारण उष्ण कटिबन्ध की मछलियों को पकड़ने के धन्धे ने कोई विशेष उन्नति नही की है। शीतोष्ण कटिबन्ध की मछलियाँ शीघ्र ही खराब नही होती क्योकि उस कटिबन्ध मे अपेक्षाकृत ठंडक रहती है। इस कारण उसका धन्धा सफलतापूर्वक चल सकता है। इसके अलावा यहाँ शीत भंडार की विधि भी बहुत प्रचलित है।

(५) शीतोष्ण कटिबन्ध के समुद्रो मे हजारो छोटी-बडी नदियाँ अपना ताजा पानी और मिट्टी लाकर डालती रहती है। इससे प्लैंकटन की बढवार खूब होती है और मछलियाँ भी खूब फलती हैं।

(६) ठंडे पानी मे खतरनाक तथा जहरीली मछलियाँ कम होती है और गर्म पानी मे विषैली मछलियो का ही बाहुल्य रहता है। इसलिये भी शीतोष्ण कटिबन्ध मे मछलियाँ पकड़ने का धन्धा बहुत होता है।

(७) शीतोष्ण कटिबन्ध के समुद्रों के समीपवर्ती भूभाग की भूमि या तो उपजाऊ नही है या आबादी बहुत घनी है इसलिये बहुत से लोग मछलियाँ पकड कर ही पेट पालते हैं।[5] कैथोलिक धर्म के मानने वालो के लिये माँस खाना वर्जित है इसलिये मछली इस प्रदेश के मनुष्यो के भोजन का मुख्य अग है।

(८) शीतोष्ण कटिबन्ध मे महाद्वीपो का किनारा अधिक कटा-फटा है इसमे यहाँ सुरक्षित बन्दरगाह बहुत हैं।

(९) शीतोष्ण कटिबन्धो के समुद्रो के समीप ही वन प्रदेश पाये जाते हैं जहाँ से नावे बनाने के लिये अच्छी लकडी मिल जाती है।

(१०) आजकल सभ्य देश शीतोष्ण कटिबन्ध में ही स्थित है। इन देशो मे नये-नये औजारो का उपयोग करके मछलियाँ पकडने का धन्धा उन्नति पर पहुँचा दिया गया है। यहाँ मछलियाँ केवल खाने के काम ही नही आती वरन् उनसे और बहुत-सी चीजे भी बनती है।

मछली पकड़ने के ढंग

मछली पकड़ने के लिये आरम्भ मे भाले का प्रयोग किया जाता था। यह अब भी उत्तरी ध्रुवीय तथा उष्ण कटिबन्धीय समुद्रो मे प्रयुक्त होता है। भाला मार कर मछली पकडी जाती है। कागो बेसिन के पिग्मी और ध्रुव प्रदेश के एस्कीमो इस विधि से मछली का शिकार करने मे बडे प्रवीण होते है। दूसरा तरीका है फन्दा डालना। फन्दा उथले (shallow) समुद्रों में डाला जाता है। तीसरा तरीका जाल डालना है। जाल विभिन्न प्रकार के होते हैं जिनमे से ट्रॉल (trawls), ड्रिफ्टिंग नेट्स (drifting nets) और सीनस (seines) मुख्य है। ससार की अधिकाश मछलियाँ आजकल जाल द्वारा ही पकडी जाती है। कही-कही हुको (hooks) द्वारा भी (जो एक प्रकार के काटे होते हैं) मछली को छेद कर पकडा जाता है। मछली के स्वभाव के अनुसार ही किसी विशेष तरीके का प्रयोग किया जाता है।

5. *Finch & Trewartha*, **Elements of Geography**, p. 318.

सीमा के भीतर ही अधिक मिलती हैं। खाडियों, मुहानो, लैगून तथा तटीय भागों में प्रचुर शैल मछलियाँ पाई जाती है। लगभग सभी प्रकार की शैल मछलियाँ बहुत ही छोटी परिधि मे रहती है अतएव उनके पकड़ने के तरीके स्वच्छ जल की मछलियों की अपेक्षा बिलकुल भिन्न है। मछुवे जब नावें ले जाते हैं तो तट से बहुत दूर नही जाते। यहाँ के समुद्रो मे आयस्टर, लोबस्टर, कामस्, श्रीम्प, कार्ब और स्केल आदि मछलियाँ बडी मात्रा मे पाई जाती हैं।

आयस्टर (Oyster)—यह एक अति महत्वपूर्ण मछली है। प्राचीन समय से ही इसका उपयोग होता रहा है। प्राचीन काल मे ग्रीक और रोमन लोग इसे बहुत पसन्द करते थे। आजकल प्रत्येक महाद्वीप के तटीय भागों के लोग इसे रुचि से खाते हैं। ओयस्टर के मुख्य क्षेत्र सयुक्त राज्य अमेरिका मे कोड अन्तरीप से रियोग्रेन्डी, पश्चिमी यूरोप मे शेल्ट के मुहाने से उत्तरी स्पेन, पूर्वी एशिया मे उत्तरी जापान से दक्षिणी चीन तक के भाग है। मध्य अटलान्टिक से कुल पकड का ३/५ भाग प्राप्त होता है इसमे से चेसपिक की खाड़ी से १/३ प्राप्त किया जाता है। दक्षिणी अटलांटिक और खाडी के तट से १/५ आयस्टर पकडी जाती है। सयुक्त राज्य मे सन् १९०० की अपेक्षा अब एक तिहाई मछलियाँ ही पकडी जाती है। आयस्टर सयुक्त राज्य अमेरिका की एक प्रमुख मछली है, जो कुल पकडी गई मछलियों को १/१० भाग होती है। चैसपिक की खाडी से १८८० से १८९० के बीच १२५ लाख बुशल आयस्टर मछलियाँ पकडी गई किन्तु १९५० में यह मात्रा केवल १ लाख बुशल ही रह गई।

धाराओ युक्त खाडियो मे चूँकि पानी कम खारा होता है अत इसमे आइस्टर अधिक पैदा होती है। यहाँ भोजन की प्रचुरता भी इनके बढने मे सहायक होती है। एक आयस्टर एक मौसम मे ६०० लाख अन्डे देती है। आयस्टर के बच्चे अपने जन्म स्थान से अधिक दूर नही भटकते। बच्चो को युवा होने मे उष्ण जल में २—३ वर्ष और ठढे जल में पाँच साल लगते हैं। आइस्टर एक विशेष प्रकार की बनी भीलो से पकडी जाती हैं और शीत भडारो मे बन्द करके दूरस्थ नगरो को भी भेजी जाती है।

लोबेस्टर (Lobester)—यह मध्य अक्षाशो मे ठढे समुद्रो के पथरीले तटों पर अधिक मिलती है। लोबेस्टर ४० से १५० फीट गहरे समुद्रो मे रहती है। यह मछली वर्ष भर ही पकडी जाती है किन्तु बसन्त और पतझड दो प्रमुख ऋतुयें है। यह उत्तरी अमेरिका मे न्यू फाउन्डलैंड से डेलावेयर और दक्षिणी अलास्का से उत्तरी मेक्सिको तक, पश्चिमी यूरोप मे शेटलेंड द्वीप से उत्तरी फ्रास तक, पूर्वी एशिया मे कामचटका से मध्य जापान तक और कुछ दक्षिणी गोलार्द्ध के भागों मे बडी मात्रा मे पकडी जाती है। वस्तुत. अधिकाश लोबेस्टर मछलियाँ मध्य अक्षाशो के चट्टानी तटो पर ठंडे जल मे मिलती हैं।

श्रीम्प (Shrimp) व कार्ब (Carb) मछलियाँ अधिकतर निम्न मध्य अक्षांशों के उष्ण जल मे रहती हैं। अर्ध उष्ण भागो मे जहाँ समुद्र की तली मुलायम व रेतीली होती है इनके लिये विशेष उपयुक्त स्थान है। ये मछलियाँ पूर्वी एशिया, पश्चिमी यूरोप भूमध्य सागर, संयुक्त राज्य में खाडी के तट आदि भागों मे भी पाई जाती है। श्रीम्प, पतझड़ में अधिक पकड़ी जाती है।

समीप तट से कुछ ही मीलो की दूरी तक पकडी जाती हैं। जाडों व पतझड में तूफानी मौसम व बर्फ के कारण मछली पकडना बन्द हो जाता है। ईरी, मिशीगन और ह्यूरिन झीलो से तीन चौथाई मछली पकड़ी जाती है।

मछली पकडने के अनेक साधन काम मे लाये जाते हैं। पेट्रोल से चलने वाली मोटर बोट तथा नौकायें दोनो का प्रयोग इस हेतु किया जाता है। एक बोट पर तीन से सात आदमी मिलकर समुद्र पर जाते हैं और कई प्रकार के जालों से मछली पकडने का काम करते हैं। किन्तु आधी से अधिक मछलिया गिल नैट (Gill Net) से ही पकडी जाती है। साधारणत. मछुवे दोपहर को समुद्र मे जालें लगा देते हैं और दूसरे दिन सुबह उन्हे खींच लेते हैं। बन्दरगाहों पर मछलिया साफ की जाती हैं तथा बर्फ मे दबाकर शहरो को भेज दी जाती है।

(ख) **दक्षिणी पूर्वी यूरोप में मत्स्याखेट**—दक्षिणी पूर्वी यूरोप मे डेन्यूब, नीपर, डोन वोल्गा व यूराल नदियो तथा काले, एजोव व कैस्पियन सागर मछली पकडने के महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ खारे पानी की व मीठे पानी की दोनों प्रकार की मछलियाँ पाई जाती है। खारे पानी की मछलियो मे **हैरिंग, स्टर्जन, सालमन, और बोवला** की कई किस्मे महत्वपूर्ण है। मीठे पानी की मछलियो मे मुख्य **ब्रीम, कार्प, ब्लीक, पर्च, और शीट** आदि का है। एक तिहाई मछलियाँ दूसरे वर्ग की ही पकड़ी जाती है। पर इस प्रकार मात्रा की दृष्टि से दक्षिणी यूरोप महान् झीलो से भी अधिक बढा चढा है। यहाँ अधिकतर मछलियाँ नदियो के निम्न भागो, डेल्टाओ और समीपीय छिछले समुद्रो मे पकडी जाती है। यद्यपि ये क्षेत्र अपेक्षातया छोटे हैं किन्तु यहाँ व्यापारिक दृष्टि से बडी मात्रा मे मछली पकडी जाती है।

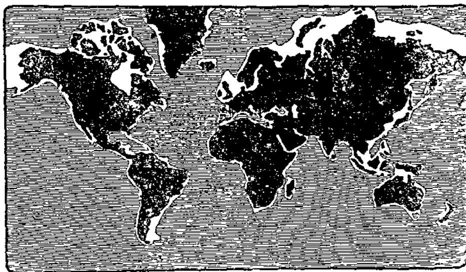
यहाँ के मत्स्य व्यवसाय का महत्व कई कारणो से है। पश्चिम और उत्तर मे बडी बडी नदी प्रणालियाँ वहाँ के उपजाऊ कृषि भागो से बडी मात्रा मे नाइट्रोजन पदार्थ अपने साथ बहाकर लाती है और डेल्टाओ मे तथा छिछले तटीय समुद्रों मे जमा कर देती है। इन भागो मे न तो बडी धारायें ही हैं और न प्रचण्ड ज्वार ही आते हैं अत प्लेंकटन (plankton) नामक पदार्थ वही जमा रहता है और बहुत दूर तक नही फैल पाता। डेल्टाओ के समीप विस्तृत छिछले सागर मिलते हैं। यहाँ पेंदे पर उष्ण तापक्रम, मुलायम कीचड और बडी मात्रा मे मछलियो का भोजन मिलता है फलत वहाँ अधिकता से मछलिया पनप जाती है। डेल्टाओ के समीप अनेक नगरों व शहरो मे आधी से अधिक जनसख्या मछली पकडने और उसे बाजार तक भेजने को तैयार करने मे ही सलग्न दिखाई पडती है। यहाँ लोग मछलियो को साफ करते हैं, सुखाते हैं, नमक लगाते है और डिब्बो मे बन्द करते हैं जो स्टीमरो व रेल द्वारा खपत के भीतरी केन्द्रो को पहुँचाई जाती है।

(ग) **उत्तरी प्रशान्त महासागर की सामन मछलियाँ**—उत्तरी अमरीका के उत्तरी-पश्चिमी भाग मे पिछले लगभग ८५ वर्षो से सामन मछली पकडने का उद्यम महत्वपूर्ण रहा है। प्रशान्त के एशियाई भाग मे इसका अभूतपूर्व विकास अभी हाल की घटना है। पूर्व काल मे सेन फ्रान्सिसको के उत्तर की लगभग तमाम नदियो मे बड़ी सख्या मे सामन के झुण्ड पाये जाते थे किन्तु अब इनकी संख्या कम पड़ गई है। इसका प्रमुख कारण सामन का अत्यधिक मात्रा मे पकड़ा जाना है। इसके अतिरिक्त नदियों पर बांध बँध जाने, कल कारखानो के कारण जल के गन्दा हो जाने और राजकीय प्रतिबन्धो के कारण भी इसमें कमी आयी है। इन सब

और चीन; यूरोपीय उत्तरी अटलांटिक में सभी तटीय देश, अमेरिका के अटलांटिक क्षेत्र में कनाडा, न्यूइंग्लैंड, न्यूफाउन्डलैंड और लेब्रेडोर आदि देश हैं। अन्तिम क्षेत्र में न केवल उत्तरी अमेरिका के मछुवे वरन् नार्वे, फ्रांस और पुर्तगाल आदि देशों के मछुए भी मछलियाँ पकड़ने आते हैं। उपरोक्त सब क्षेत्रों का महत्व अनेक भौतिक तथा आर्थिक कारणों से है।

(क) **भौतिक कारण**—मछली पकडने के क्षेत्रों की महत्ता अनेक भौतिक अवस्थाओं पर निर्भर करती है। जैसे निम्नतट का विस्तार तथा उस पर चौड़े चबूतरों (Banks) की संख्या व फैलाव, कटी फटी तट रेखा, जल की प्रकृति, प्रचुर प्लैंकटनों की मात्रा, उम्दा तथा अनेक प्रकार की मछलियाँ, जलवायु की अवस्थायें, वनों की समीपता और पहुँच और खाद्य उत्पादन की दृष्टि से भूमि की प्रकृति।

(१) **समुद्रों में मछली पकड़ने के चबूतरे** (The Fishing Banks)—तटरेखा के समीप समुद्र अपेक्षतया छिछले होते हैं। ये तटीय समुद्र जो ६०० फीट तक गहरे होते हैं निमग्न तटों पर फैले होते हैं। उत्तरी अटलांटिक और उत्तरी प्रशान्त में निमग्न तट बड़ा भारी क्षेत्र घेरे हुए हैं किन्तु इन पर सर्वत्र ही मछलियाँ नहीं पकड़ी जाती। मछलियाँ पकडने का कार्य मूलत निमग्न तटों के ऊपर कुछ ऊँचे उठे हुए चबूतरों (Banks) पर ही केन्द्रित है। अमेरिका के समीप अटलांटिक



चित्र ३६. महाद्वीपीय छिछले भाग

महासागर मे ऐसे चबूतरों का क्षेत्रफल १ लाख वर्गमील है। यूरोप के उत्तरी सागर तथा आइसलैंड, फैरो, व लोफोटन द्वीपों के चबूतरों का विस्तार लगभग ३ लाख वर्गमील है। इसी प्रकार पूर्वी एशिया में १ लाख वर्गमील क्षेत्र में ऐसे चबूतरे फैले हैं। ये चबूतरे बन्द ढालयुक्त, कोमल, तथा कीचड अथवा रेतीले तल वाले होते हैं। यह अवस्था मछली पकड़ने के लिये उत्तम होती है। कई चबूतरे भूमि के निकट ही स्थित होते हैं। जैसे डागर बैंक उत्तरी सागर के बीच में स्थित है और भूमि से

स्थानीय उपयोग की दृष्टि से और कहीं व्यापारिक दृष्टि से यह उद्योग चलाया जाता है। सब देशों के निश्चय अनुसार किसी भी देश के तट के निवासियों को तट रेखा से समुद्र में तीन मील की दूरी तक की मछलियाँ पकड़ने का अधिकार होता है। इस क्षेत्र में अन्य लोग मछली मारने नहीं आ सकते। विभिन्न समुद्र तटों के समीप भिन्न-भिन्न प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं। यहां उनके पकड़ने के तरीके और उनका उपयोग भी भिन्न होते हैं। खुले समुद्रों तथा सामन मछलियों की अपेक्षा तटीय समुद्रों में मछली पकड़ने का कार्य प्राय. छोटे पैमाने पर होता है। तटीय समुद्रों में मछली पकड़ने के कार्य की तीव्रता निम्न बातों पर आधारित होती है : (१) समीपीय भाग *की आबादी का घनत्व, (२) जीवन-यापन के अन्य साधन, (३) तटीय खाड़ियों की* स्थिति व संख्या, और (४) मछली साधनों की विविधता और महत्ता।

निम्न अक्षांश की तटीय मछलियाँ—निम्न अक्षांशों में भी अब मध्य अक्षांशों के ठंढे समुद्रों की भाँति व्यापारिक पैमाने पर मछलियाँ पकड़ने का व्यवसाय होता है। किन्तु यहाँ इसके व्यापारिक विकास में अनेक कठिनाइयाँ हैं। यह विश्वास किया जाता है कि उष्ण समुद्रों में ऐसे कीटाणु रहते हैं जो जल से कार्बनिक तत्वों को नष्ट कर देते हैं। फलस्वरूप इन समुद्रों में ठंढे समुद्रों की अपेक्षा **प्लैंकटन** (Plankton) की मात्रा बहुत कम होती है। निम्न अक्षांशों में भी ठंढी धाराओं व ऊपर उठते हुए ठंढे पानी के स्थानों में प्लैंकटन अधिक परिमाण में मिलते हैं। दूसरा कारण यह भी है कि इन अक्षांशों में चौड़े व विस्तृत निगमन तटों का अपेक्षतया अभाव है। इसके अतिरिक्त इन भागों में जो बड़ी-बड़ी नदियाँ समुद्रों में गिरती हैं उनमें भोजन की मात्रा कम होती है। दक्षिणी पूर्वी एशिया इसका अपवाद है। इन भागों में मछलियों की मात्रा के सम्बन्ध में भी बड़ा मतभेद है। यहाँ ठंढे समुद्रों के समान ही बड़ी मात्रा में मछलियाँ उपलब्ध हो सकती हैं किन्तु एक ही किस्म की यहाँ बहुत अधिक मछलियाँ नहीं मिलती। इसी प्रकार खाने योग्य किस्में भी यहाँ कम हैं। इन उष्ण भागों में ऊँचे तापक्रम और प्राकृतिक बर्फ के अभाव में मछलियों को सुरक्षित रखना बड़ा कठिन हो जाता है। इसी कारण यहाँ यह व्यवसाय ठंढे समुद्रों की भाँति उन्नत नहीं हो सकता।

भोजन के लिए मछली पकड़ना (Food Fisheries)

यद्यपि निम्न अक्षांशों में दूरस्थ स्थानों को मछली निर्यात करने के लिये विशाल पैमाने पर मछली पकड़ने का उद्यम नहीं किया जाता किन्तु दक्षिणी पूर्वी एशिया और उष्ण अमेरिका के तटों पर भोजन के लिए व्यापारिक दृष्टि से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। इससे तटीय गाँवों और नगरों को सदैव ताजा मछलियाँ प्राप्त होती हैं। *यही नहीं भीतरी बड़े शहरों को भी हमेशा ताजा मछलियाँ भेजी जाती हैं।* दक्षिणी पूर्वी एशिया में गंगा, सालविन, मिनाम और सिकाँग नदियों के डेल्टाओं और निकटवर्ती छिछले जल में वर्ष भर खूब मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

इन भागों में बड़े पैमाने पर मछली पकड़ने का कार्य बहुत कम होता है। साधारणत. दो से सात आदमी मिलकर मछली पकड़ने जाते हैं। ये लोग छोटी-छोटी नौकायें और शक्ति-चालित नावों का उपयोग भी करते हैं। यहाँ मध्य अक्षांशों की भाँति गिल (Gill), पर्स (Purse), ट्रैप (Trap) व पाउण्ड (Pound), जालों (Nets) का उपयोग नहीं करते। यहाँ अधिकतर खींचने वाली जालों (Haul Seines) अथवा अन्य साधारण जालों का तथा लकड़ी व लोहे के फन्दों का उपयोग करते हैं। मछुए

हैं जो निमग्न तटों के ऊपर जम जाते है। स्वच्छ जल मे नाइट्रोजन की उपस्थिति प्लैंकटन के लिये भोजन प्रदान करती है। जहाँ गर्म और ठढी धारायें आपस में मिलती हैं वहाँ भी कई प्रकार के प्लैंकटन एकत्रित हो जाते है। अधिक उत्तरी भागो मे हिम खण्डो से भोजन की प्राप्ति होती है। छिछले जल मे सूर्य की किरणें पेंदे तक पहुँच जाती हैं जो वहाँ समुद्री जीवन के विकास मे बडी सहायता करती हैं। निमग्न तटो के छिछले जल मे उपरोक्त सब अवस्थाओं के सामजस्य के कारण अनेक प्रकार के व बड़ी मात्रा मे प्लैंकटन पाये जाते हैं जो अन्यत्र नही पाये जाते।

(५) **मछली मारने के ढंग**—प्लैंकटन की प्रचुरता जल का उपयुक्त तापक्रम और निम्न आपेक्षिक घनत्व, प्रकाश की प्राप्ति और सतह की प्रकृति प्रति वर्ष मछलियो का छिछले समुद्रो मे अण्डे देने और पनपने को आकर्षित करती हैं। प्रतिवर्ष कोड, टरबोट, हैडोक, हेक आदि ५० से व १०० लाख अण्डे देती हैं। इसी प्रकार सोल, हैलीबट और मेकरल १ लाख से १० लाख तक अण्डे देती हैं।

विभिन्न प्रकार की मछलियाँ विभिन्न भागो मे अलग-अलग मौसम में पाई जाती है। बसन्त मे **हैरिंग** उत्तरी भागों मे दिखाई पडती है। उसके बाद वे दक्षिण मे चली जाती है। **कोड और हेडोक** हेरिंग का पीछा करती हुई चलती हैं। **प्लेस और सोल** छिछले सागरो को पसन्द करती है। **मैकरेल** बसन्त के आगमन पर दक्षिण मे दिखाई पडती है और फिर उत्तर की ओर छिछले चबूतरो पर अण्डे देन चली जाती हैं। छिछले सागरो मे भोजन की प्रचुरता होने से मछलियाँ अधिकतर वही अण्डे देती हैं। बडी मछलियाँ अधिक गहराई तक चली जाती है। प्रति वर्ष मछलियाँ एक ही मार्ग से और निश्चित तिथि पर नही आती। ये एक क्षेत्र मे एक मौसम मे अधिक और एक मे नितान्त ही कम हो सकती हैं। फिर प्राय. ये एक स्थान पर प्रचुर मात्रा मे डेढ महीने से दो महीने तक ही रहती है। मछुवे इनकी प्रकृति और गति के अनुसार ही अपना कार्य करते हैं।

इन क्षेत्रो मे गहरे जल की हेरिंग और मैकरेल किस्मे विशेष रूप से पाई जाती है। गहरे जल की इन मछलियो को पकड़ने में साधारणतः **स्कूनर्स और डीजल ट्रालर्स** का उपयोग ही अधिक किया जाता है। संसार के तीन बडे मछली क्षेत्रो मे से प्रत्येक हेरिंग के लिये प्रसिद्ध है। साधारणत. यहाँ पचास मील के भीतर ये मछलियाँ पाई जाती हैं। उत्तरी अमेरिका मे उत्तरी न्यूफाउन्डलैंड से दक्षिणी न्यू इगलैण्ड तक, यूरोप मे फेरो द्वीप से इंगलिश चैनल के दक्षिणी छोर तक और एशिया में उत्तरी साखालिन से मध्य जापान तक हेरिंग मछलियाँ खूब पकड़ी जाती हैं। उत्तरी समुद्रो मे हेरिंग मार्च से जून तक और दक्षिण मे जुलाई अगस्त तक पकड़ी जाती हैं। प्रतिवर्ष लगभग १० अरब हेरिंग पकडी जाती है।

हेरिंग के विपरीत मैकरेल इन क्षेत्रों मे अधिक दक्षिण की ओर पाई जाती हैं। इनके अतिरिक्त पश्चिमी भूमध्यसागर और पीले सागर मे भी मिलती हैं। दक्षिण मे अप्रैल और मई मे इनको पकडना प्रारम्भ करते हैं। कनाडा, नार्वे और साखालिन के पास ये अक्टूबर तक पकडी जाती हैं। ये मुख्यत. स्कूनर्स और ट्रालर्स द्वारा पकडी जाती हैं। प्रत्येक क्षेत्र मे इन मछलियो की पकड़ हर मौसम मे एक सी नही होती। ये मछलियाँ अधिकतर ताजा ही खाई जाती हैं।

उपरोक्त मछलियो के अतिरिक्त पेंदे पर रहने वाली **कोड, हेडोक, रॉजफिश, हेक, प्लेस,हैलीबट, स्केट, सोल, टरबट** और **फ्लाउन्डर** मछलियाँ भी खूब पकड़ी

मुसल्स (Mussels) मछलियों की अनेक किस्मे बहुमूल्य मोती पैदा करती हैं। मोती केवल उष्ण समुद्रो मे नहीं अपितु शीतोष्ण खारे व ताजे पानी के समुद्रो में भी मिलती है। मोती भी स्पंज की भाँति ही एकत्रित किये जाते हैं। मोती देने वाली मछलियां व मुख्यत. उत्तरी आस्ट्रेलिया, पूर्वी द्वीप समूह, लंका, फारस की खाडी, उत्तरी वेनेजुएला, पनामा और पश्चिमी मेक्सिको के उष्ण जल में मिलती हैं। मोती देने वाली आयस्टर मछली प्रवाली अनूपों के स्वच्छ व उष्ण जल में ३० से २०० फीट की गहराई पर कठोर धरातल पर रहती है।

मोती एकत्रित करने का कार्य मूलत गोताखोर करते हैं। फारस की खाड़ी, लका और वेनेजुएला मे गोताखोर बिना रबड की पोशाक पहने ही गोता लगाते हैं। ये गोताखोर प्राय ३० से ७० सैकड तक समुद्र मे रहते हैं और थैले में सीपो को भर लेते है। नाव पर एक और व्यक्ति रहता है जो उसे ऊपर खींच लेता है। मोती एकत्रित करने का मौसम एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में अलग-अलग होता है। वेनेजुएला मे जनवरी से अप्रेल तक, उत्तरी आस्ट्रेलिया व पूर्वी द्वीप समूह मे अप्रेल से सितम्बर तक मोती एकत्रित करने का काम होता है। आधुनिक गोताखोर गोता लगाने वाली पोशाक पहन कर गहरे समुद्रो मे गोता लगाते है और एक साथ दो घण्टे तक समुद्र मे रहते है। इनके साथ बड़े जहाज व छोटी नावें होती है। इन जहाजो के ऊपर ये लोग रहते है और सीपें एकत्रित करते हैं।

सीपें केवल मोती प्राप्त करने के लिये ही एकत्रित नही की जाती। मोती प्राप्त होने पर तो मछुवे अपने आपको बडा भाग्यशाली समझते है। मछुवे मुख्यत: सीपो के लिये ही गोता लगाते है। बटन, चाकू के दस्ते आदि अनेक कार्यों मे सीपो का उपयोग होता है। अत सीपो को अच्छी प्रकार ढूढ व छाँट कर बेच दी जाती है। बराबर सीपो को बटोरते रहने से महत्वपूर्ण क्षेत्र भी खाली हो जाते हैं किन्तु चार पाँच वर्ष बाद पुन: सीपें बढ जाती हैं।

चीन और जापान कई युगो से मोती इकट्ठा करने का कार्य कर रहे है। चीन व जापान ने इस उद्योग को वैज्ञानिक ढंग पर उन्नत किया है। बसन्त ऋतु मे यहाँ बडी मात्रा मे सीपें एकत्रित की जाती हैं। इन सीपो मे ये कोई ठोस वस्तु काँच अथवा पत्थर भरकर उनके मुँह को पुन बन्द कर देते है। ये सीपें लोहे अथवा बेंत की पेटियो मे भर कर पुन समुद्र मे रख देते है। तीन या छ साल बाद पुन: इन पेटियो को बाहर लाया जाता है और उनमे मोती ढूढे जाते है। लगभग ६०% सीपो मे मोती प्राप्त हो जाते है किन्तु उनमे से बहुत कम बहुमूल्य होते हैं।

निम्न मध्य अक्षांशों की तटीय मछलियाँ

निम्न मध्य अक्षाशो मे विभिन्न प्रकार की और बड़े परिमाण में मछलियाँ पाई जाती हैं। संयुक्त राज्य की कुल मछलियो का एक तिहाई भाग केलीफोर्निया और दक्षिणी आन्ध्र महासागर से ही प्राप्त होता है। यहाँ के कुछ क्षेत्रों मे मछलियों का व्यापारिक विकास पिछले कुछ समय मे ही हुआ है। किन्तु पूर्वी एशिया और दक्षिणी यूरोप के तटीय समुद्रों मे घने आबाद क्षेत्रों के समीप यह उद्योग शताब्दियों से चलाया जा रहा है।

(१) तटीय शैल मछलियाँ—समस्त मध्य अक्षासों मे खारे पानी की शैल मछलियाँ बहुत बड़ी मात्रा में पकड़ी जाती हैं क्योंकि ये समुद्र की तीन मील की

रूप में भूमि की प्रकृति मछली व्यवसाय पर बड़ा प्रभाव डालती है। कई स्थानों पर उच्च पहाड़ी भाग समुद्र में सीधे ऊपर उठे हुए होते हैं। इनके ऊपर हलकी मिट्टी की परत तथा शीतल आर्द्र और छोटी ग्रीष्म ऋतु खेती तथा पशुचारण में बड़ी बाधक होती है। फलस्वरूप लोग अधिकतर समुद्र पर ही आश्रित होते हैं। ऐसा उत्तर की ओर मुख्य मछली केन्द्रों के समीप अधिक देखा जाता है। विभिन्न देशों की भूमि की अवस्था किस प्रकार है यह इन आंकड़ों से स्पष्ट है। न्यू फाउण्डलैंड में केवल १ प्रतिशत भूमि में खेती की जाती है। यह औसत नार्वे में २३ प्रतिशत है और १३ प्रतिशत में चरागाह है। मेन में कृषि योग्य भूमि ७ ६६%; और चरागाह ८·२%; नोवास्कोशिया व न्यू ब्रिन्सविक में कृषि व चरागाह का औसत ११% है। इसी प्रकार जापान और स्कॉटलैंड में भी केवल ४५% भूमि पर खेती होती है। इस प्रकार भूमि की अवस्थायें भी तट के समीप रहने वालों को मछली उद्योग की ओर अधिक प्रेरित करती हैं।

(ख) आर्थिक अवस्थायें (Economic Conditions)—उपरोक्त समुद्रों में मछली उद्योग से सम्बन्धित कई आर्थिक समस्यायें भी हैं। उदाहरणत. यातायात, शीत भंडार की सुविधायें, उद्योग का संगठन, निवासियों की संख्या और चरित्र, खाद्यानों की पूर्ति और माँस की कीमत आदि।

खुले समुद्रों में चौड़े चबूतरों पर चलाये जाने वाले मछली उद्योग का संगठन भी बड़ा महत्व रखता है। आधुनिक संगठन इस बात का प्रयास करता है कि मछलियाँ दूर-दूर के बाजारों को पहुँच सकें और प्रति मछुवे पीछे अधिक मछलियाँ प्राप्त हो सकें। वर्तमान समय में मछलियाँ पकड़ने के लिये जहाज तथा बेड़े हजारों मील दूर समुद्रों में भेजे जाते हैं। इन बेड़ों की सुरक्षा के लिये रेडियो आदि उपकरण से सुसज्जित भ्रमणशील नावें रहती हैं जो बराबर मौसम आदि बातों की सूचना देती रहती हैं। मछलियों के झुण्डों की खोज में हवाई जहाजों की भी सहायता ली जाती है। हवाई जहाज बेड़ों को मछलियों के अण्डों का पता बताते रहते हैं। इन कम्पनियों के अपने कई जहाज हैं जो मछली पकड़ने का कार्य करते हैं। जहाजों को बनाना, उनकी मरम्मत करना और जोड़ना तथा मछलियों को उतारना कुछ ही बड़े आधुनिक बन्दरगाहों तक सीमित होता है। इसके अतिरिक्त ऐसे स्थानों पर आधुनिक गोदाम, डिब्बों में भरने वाले कारखाने, थोक बाजार और जल तथा थल मार्गों का भी समुचित प्रबन्ध होता है। फलस्वरूप प्रति वर्ष यहाँ से विशाल परिमाण में मछलियाँ वितरित की जाती हैं। मछलियों के अवशिष्ट भाग से कारखानों में तेल तथा खाद बनाया जाता है।

संसार के घने आबाद भागों में से तीन क्षेत्र इन मछली क्षेत्रों के पास हैं। जापान और चीन में समुद्र के पास के गाँवों में आबादी का घनत्व २००० व्यक्ति प्रति वर्ग मील पाया जाता है। जापान का घनत्व ५४२ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के भी कई घने आबाद भाग समुद्र के पास हैं। उदाहरणतः प्रति वर्गमील आबादी का घनत्व बेल्जियम में ७२६, इंगलैंड में ७६३; रोड द्वीप में ७४८ व्यक्ति है। इंगलैंड, बेल्स तथा रोड द्वीप में शहरी आबादी अधिक है। यूरोप और उत्तरी अमेरिका में लाखों व्यक्ति धार्मिक कारणों से विशेष दिनों को माँस के स्थान पर मछली का ही उपयोग करते हैं। इसी प्रकार चीन और जापान में मछली का उपयोग हजारों वर्षों से हो रहा है। फलस्वरूप उनके धर्म,

हैरिंग मछली के एक भुन्ड में ३ अरब 'मछलियाँ होती है। ऐसे कई भुण्ड आंध्र महासागर और उत्तरी सागर मे मिलते हैं। यहाँ प्रतिवर्ष लगभग १० अरब हैरिंग मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। इसके बाद आर्थिक दृष्टि से कॉड मछली का स्थान आता है। आध्र महासागर मे इनकी पकड़ ४० करोड़ की अनुमानित की गई है।[6]

तटवर्ती समुद्री मछलियाँ

समुद्र तटो के समीप कई प्रकार की मछलियाँ पकडी जाती हैं परन्तु कुछ किस्म ऐसी हैं जो बड़े परिमाण मे पकडी जाती है। इनमे से भी कुछ समुद्री सतह के समीप (Pelagic fish) रहती है और कुछ समुद्री पैंदे मे (Demer.al fish)। ये मछलियाँ कभी एक स्थान पर नही रहती, बल्कि भुण्ड मे घूमती रहती है। मछुवे प्रायः इनमे से एक ही प्रकार की मछलियो को पकडते है और इन मछलियो को पकड़ने के तरीके भी प्राय· भिन्न होते है।

टुना (Tuna) के समान कई मछलियाँ (एल्वाकोर, बल्यूफिश, की खाड़ी **बोनिटो, स्किपजोक और यलोफिश**, पूर्वी एशिया, जापान, पश्चिमी भूमध्य सागर, विरके और केलिफोर्निया के दक्षिण मे बडे परिमाण में पकडी जाती है। पूर्वी एशिया और जापान मे तो शताब्दियो से मछलियाँ पकडी जाती रही हैं। केलिफोर्निया मे हाल मे ही मछली पकडने का व्यवसायउ त्पन्न हुआ है किन्तु बहुत ही महत्वपूर्ण हो गया है। संयुक्त राज्य की प्राय· समस्त टुना मछली यहीं से पकडी जाती है। पूर्वी एशिया और भूमध्य सागर में टुना मछली ताजा ही काम मे लाई जाती है। केलिफोर्निया मे यह डिब्बों मे बन्द कर दूर बाजारो को भेजी जाती है।

चीन, जापान, पश्चिमी यूरोप, पश्चिमी उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट के समीप **सारडाइन, पिलचर्ड और एन्कोवी** मछलियाँ खूब पकडी जाती हैं। ये मछलियाँ बडी मात्रा में डिब्बों मे बन्द की जाती है और कुछ ताजा ही खाई जाती है। पूर्वी एशिया मे खाद के रूप मे भी इनका खूब प्रयोग किया जाता है।

(३) बैंक तथा खुले समुद्रों की मछलियाँ

(The Banks and Open Sea Fisheries)

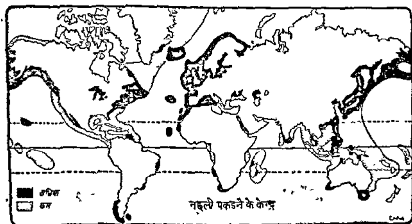
यद्यपि संसार के कई भागो में तटीय समुद्रो और ताजा जल मे बडी मात्रा में मछलियाँ पकड़ी जाती हैं किन्तु विशाल व्यापारिक पैमाने पर पकडी जाने वाली मछलियाँ उच्च मध्य अक्षाशो के उत्तरी महासागरो मे मिलती हैं। यहाँ मछली पकडने के तीन प्रमुख क्षेत्र ये हैं: (१) यूरोप का उत्तरी अटलाटिक महासागर जिसमे उत्तरी स्पेन से उत्तरी सागर तक का भाग है, (२) अमेरिका का उत्तरी अटलान्टिक महासागर जिसमे दक्षिणी न्युइग्लैंड से उत्तरी लेब्रेडार तक का भाग है, और (३) एशिया का प्रशान्त महासागर जिसमे दक्षिणी चीन से उत्तरी कामचकाटिका का भाग सम्मिलित हैं। इन सब भागों मे ३० लाख से अधिक व्यक्ति मछली पकडने के उद्योग मे लगे हुए हैं। इनसे भी कई गुने अधिक लोग मछली पकड़ने की नावें बनाने, उन्हें दुरुस्त करने तथा मछलियो को बेचने हेतु उन्हे तैयार करने और उनके वितरण मे लगे हुए हैं। बीस से अधिक देश इस उद्योग मे लगे हुए है। प्रशान्त महासागर मे जापान, रूस,

6 **Science Illustrated,** January, 1947, p. 33.

आबादी की अपेक्षा खेतिहर भूमि की अधिकता आदि ऐसे कारण हैं जिससे मछली पकड़ने का व्यापार उन्नत नहीं हो पाया है।

(i) जापान में मछली पकड़ने का धंधा (Japanese Fisheries)

विश्व के अन्य किसी भी भाग की अपेक्षा जापान में सबसे अधिक मछली पकड़ी और खाई जाती है। यह यहाँ के निवासियों का मुख्य उद्योग है। देश की कुल जनसंख्या के २० प्रतिशत से अधिक (२० लाख) इसी धन्धे में लगे हैं। यहाँ की मछली की वार्षिक पैदावार की मात्रा संयुक्तराज्य व इंगलैंड से चौगुनी और संसार की पैदावार की एक चौथाई है। जापानियों के भोजन में चावल के बाद मछली और मछली पदार्थों का ही स्थान है। मछली की प्रति मनुष्य वार्षिक खपत लगभग ६५ पौंड है। इसकी तुलना में जर्मनी में लगभग २४ पौंड, ब्रिटेन में ३० पौंड और कनाडा में १४ पौंड है। देश के निर्यात में कच्चे रेशम, सूत और सूती कपड़ों के बाद मछली और मछली-पदार्थों का ही स्थान है।



चित्र ३७. मछली पकड़ने के केन्द्र

जापान में मछली पकड़ने के धन्धे का इतना अधिक महत्व बहुत सी भौगोलिक दशाओं के कारण है जिनमें मुख्य यह है.—(१) देश की जनसंख्या की तुलना में प्राकृतिक साधनों का अभाव है जिसके कारण लोगों का समुद्र की ओर झुकाव स्वाभाविक रूप से हुआ है; (२) इसके आस-पास द्वीपों की भरमार होने के कारण समुद्र के उथले भागों की प्रचुरता है, (३) देश का तट साधारण रूप से लम्बा है; (४) गर्म (क्यूरोसीवो) और ठंडी (क्यूराइल) जल धाराओं के मिलने के कारण यहाँ विभिन्न प्रकार की मछलियाँ पाई जाती है, (५) गोश्त वाले जानवरों का अभाव होने के कारण तथा बौद्ध धर्म में माँस खाना त्याज्य होने के कारण जापानियों की अधिकतर रुचि मछली की ओर है, और (६) यह शीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित है जिसके कारण मछली अधिक दिनों तक सुरक्षित रखी जा सकती है।

जापान के निकटवर्ती समुद्रों में जल के तीन प्रकार के भंडार पाये जाते हैं

१०० मील ही दूर है। ग्रान्ड बैंक न्यूफाउण्डलैंड से १८० मील और बोस्टन पोर्टलैण्ड, व पारसाऊथ से १७० मील ही है। इसी प्रकार तट रेखा के समीप कई छोटे चबूतरे पाये जाते हैं।

(२) तट रेखा (Coastline)—इन बडे मछली क्षेत्रों को कटी फटी तट रेखा उद्योग का बहुत बडा आधार है। तट के ऊपर अनेक छोटी व बडी खाड़ियाँ पाई जाती हैं। इन खाडियो मे बाल्टिक सागर, श्वेत सागर और सैन्ट लारेन्स की खाड़ी को तो नही लिया जा सकता है किन्तु इनमे कई सौ मील से भी लम्बी होती हैं। छोटी बडी खाडियाँ उत्तम पोताश्रय को जन्म देती है तथा तूफान के समय बचाव के लिये बडी उपयुक्त होती है। लम्बी तट रेखा के कारण कई लोग समुद्र के सम्पर्क मे आते हैं। न्यूफाउन्डलैंड मे ३२० लोगो मे ६/१० व्यक्ति समुद्री किनारे पर बसते हैं। इसी प्रकार लेब्रेडोर मे समस्त आबादी गहरे फियोर्डों के सिर पर रहती है। जापानी द्वीपों मे प्रति दस एकड भूमि पीछे एक मील तट रेखा पडती है।

(३) जल की प्रकृति (Nature of Water)—निमग्न तटों के समुद्र की गहराई, जल की गति और तापक्रम आदि का मछलियो के प्रकार और प्रचुरता पर सीधा प्रभाव पडता है। पानी की गहराई किनारो के समीप कुछ फीट ही होती है किन्तु चौडे चबूतरों पर ८०० फीट होती है। मछली पकडने के प्रमुख केन्द्र ४० से ६०० फीट तक की गहराई के बीच होते हैं। हेलीबट मछली इसका अपवाद है। यह निमग्न तट के सिरे से २००० की गहराई तक मिलती है। संयुक्तराज्य के पूर्वी तट पर जार्ज बैंक के ऊपर समुद्र की गहराई ५० से १०० फीट ही है। कुछ स्थानों पर यह २० फीट भी पाई जाती है। ग्रान्ड बैंक के अधिकतर भाग की गहराई भी ३०० फीट से कम है। यूरोप मे डागर बैंक की गहराई ४० से १०० फीट ही है। नार्वे के पश्चिम मे लोफटन द्वीप को छोडकर, समुद्र की गहराई एक दम बढ जाती है। अत वहाँ मछलियाँ केवल सकरी तटीय पेटी मे ही पकड़ी जाती है।

बैंक्स (Banks) के ऊपर निरन्तर भिन्न तापक्रम और घनत्व का जल मिलता रहता है। प्रत्येक क्षेत्र मे ठढी व गर्म धारायें होती है। उत्तरी अमेरिका के भाग मे ठढी लेब्रेडोर की धारा और गर्म खाडी की धारा मिलती है। यूरोप की ओर खाडी की धारा चौडी हो जाती है और नार्वे तट तक चली जाती है। ध्रुवीय सागर से यहाँ नीचे से ठढी धारा का पानी मिलता रहता है। पूर्वी एशिया मे ठढी कम चटका धारा और गर्म जापानी धारायें है। इन सब क्षेत्रो मे अनेक नदियाँ ताजा पानी उड़ेलती है। ताजा पानी नाइट्रोजन युक्त होता है जो समुद्री जीवन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। लगभग सभी तटों पर धाराओं और ज्वार भाटा के कारण पानी मिलता रहता है फलत वहाँ मछली की मात्रा भी अधिक रहती है।

(४) प्लेंकटन (Planktons) मछलियाँ अपने आधारभूत भोजन की उपलब्धि पर ही जीवित रह सकती है। स्वच्छ जल मे भोजन की कमी रहती है अतः बिना किसी साधन के वहाँ जीवित रहना कठिन होता है। समुद्र मे असख्य छोटे-छोटे जीवाणु पानी मे तैरते हैं जैसे एल्गी, प्रोटोजोआ, ऐटीकर, मोलुस्का मछली के अण्डे आदि। ये सब मछलियो के लिए भोजन बनाते हैं। प्लेंकटन भी एक प्रमुख खाद्य है। कई मछलियाँ बडे-बडे पौधों, जन्तुओ और मछलियो को अपना आधार बनाती है। कई बडी नदियाँ समीपीय भागो से इन समुद्रो मे अपरिमित मात्रा मे स्वच्छ जल उडेलती हैं। इस स्वच्छ जल मे कई खनिज, नाइट्रोजनयुक्त पदार्थ और अन्य पदार्थ घुले रहते

गयी है, चीन के तटो, पूर्वी द्वीप समूह; न्यूगिनी और उत्तरी आस्ट्रेलिया के तटों के उथले जल से प्राप्त होती हैं। जापान में प्रति वर्ष लगभग ४,८०५ लाख येन के मूल्य की मछलियाँ पकडी जाती है। इनके अतिरिक्त मछलियों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं मे सूखी वोनीटो मछली, मछलियो का खाद, जिलेटीन आदि भी मुख्य हैं।

(ii) उत्तर पश्चिमी यूरोप का मछली उद्योग
(North European Fisheries)

खाने वाली मछली की एक बहुत बड़ी मात्रा उत्तरी अटलांटिक महासागर के पूर्वी तटो से-जो पुर्तगाल से लेकर श्वेत सागर तक फैले हुये हैं, पकडी जाती हैं। किन्तु यूरोप के मछली पकडने के मुख्य केन्द्र विशेष रूप से उत्तरी सागर, **डौगर बैंक** और **ग्रेट फिशर बैंक** मे स्थित है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के तटीय भागो में मछली पकडने का काम पूर्व-ऐतिहासिक काल से होता रहता है। किन्तु इस धन्धे का व्यापारिक महत्व सन् १४०० से आरम्भ होता है जबकि हालैंड वालो ने हैरिंग को सुरक्षित रखने के नये ढगो का आविष्कार किया था। हालैंड मे मछली पकडने की काफी सुविधा है। इसके एक ओर उत्तरी सागर है और दूसरी ओर राइन नदी। अतएव हालैंड की हैरिंग भूमध्य सागरीय देशो तक भेजी जाती है। वास्तव मे इस देश का निर्माण मछली से ही हुआ है।

ससार के मछली पकडने के केन्द्रो मे उत्तरी सागर सबसे बड़ा माना गया है क्योकि : (१) वह बहुत उथला है और उसमें बैंको की बहुतायत है। (२) वह घने आबाद देशो के—जैसे फ्रास, बेलजियम, हालैंड, ब्रिटेन, जर्मनी, डैनमार्क और नार्वे—आदि समीप होने के कारण इन देशो के लोगो को मछली पकडने का प्रोत्साहित करता है। इङ्गलैंड, जर्मनी, फ्रास आदि उन्नतिशील देशो के निकट होने के कारण इन भागो का महत्व न्यूफाउन्डलैंड बैंको से भी अधिक बढ गया है।[7] (३) ऑर्कनी और शैटलैण्ड द्वीपो के बीच आने वाली उत्तरी एटलांटिक धारा के गर्म पानी की एक शाखा उत्तरी सागर के ठडे जल से मिलकर ऐसी दशायें उपस्थित कर देती है जो मछलियो के विकास के लिये अत्यन्त अनुकूल है।

ब्रिटेन में मछली पकड़ना

उत्तरी सागर मे मछली पकडने मे ब्रिटेन का स्थान आजकल प्रथम है। ब्रिटिश द्वीप समूह के आस-पास वाले जलो मे उत्तरी सागर सबसे उथला है। पीटर हैड से जटलैंड को मिलाने वाली रेखा के दक्षिण मे इसकी गहराई १०० फैदम से भी कम है। इसके अतिरिक्त यहाँ अनेक बैक हैं, जिसमें डौगरबैंक सबसे बडा (२०० मील लम्बा) है। इसकी गहराई (६५ से ८० फुट) और भी कम है। अन्य बैंक ये है—(१) कैंट के तट के निकट **गुडविन बैंक**, (२) नॉर्फोक के तट के निकट **यारमाउथ-मौड बैंक**; (३) डौगर बैंक के निकट **सिल्वर पिट** तथा **वैलबैंक** (४) यरविक के निकट **मार बैंक** (५) **लौंगफार टीज**; (६) **हार्न-रीज** जो जटलैंड तक फैला है। फैरो द्वीप समूह, आयसलैंड और यूरोप के पश्चिमी तटो पर जल उथला ही है। अतएव इन सब भागो मे मछली पकड़ी जाती है किन्तु उत्तरी सागर और आइसलैंड

7. *E. Huntington*, **Principles of Economic Geography**, p. 316

जाती है। इनमे से कुछ मछलियाँ चट्टानी पेंदे, कुछ रेतीले पेंदे और कुछ कोमल कीचड़ युक्त पेंदे पर रहती हैं। ये मछलियाँ एक स्थान से दूसरे स्थान को शीघ्रता से नही जाती। इनके पकडने का ढग भी बिल्कुल भिन्न होता है। इनके पकड़ने के उपकरण भी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र मे भिन्न होते हैं किन्तु जहाज साधारणतया बडे और पूर्णरूप से साधन-युक्त होते हैं। बडी-बडी झालो को पकडने के लिये मशीनें भी काफी शक्तिशाली होती है। जहाज समुद्र मे काफी समय तक ठहरते है और एक से अधिक प्रकार की मछलियाँ पकडते है। कोड के अतिरिक्त जितनी भी मछलियाँ पकड़ी जाती है सब ताजा ही खाई जाती है। कोड मछली अधिकतर सुखा कर व नमक लगा कर समस्त ससार मे निर्यात की जाती है। कोड मुख्यत: आइसलैंड के किनारे और न्यूफाउण्डलैंड तथा लैब्रेडोर तट पर पकडी जाती है। उत्तरी प्रशान्त महासागर में भी ये मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

आधुनिक तरीके और साधनो के होते हुए भी खुले समुद्रों मे मछली पकडने मे अनेक कठिनाइयाँ है। मछुओ को मछलियो के झुण्ड ढूंढने मे कई दिन लग जाते हैं। मछली पकडने के मुख्यत केन्द्र बहुत ही व्यस्त समुद्री मार्गो पर पाये जाते हैं। इन क्षेत्रो मे भारी कोहरा छाया रहता है। फलस्वरूप कई जहाज आपस मे टकरा जाते है और कई नष्ट हो जाते है। चक्रवाती तूफानो और अशात जल मे कई बार मछुवे कई दिनो तक मछली पकडने में सफल नही होते।

(६) **शीतल जलवायु**—यद्यपि बैंक्स पर मछली पकडने मे कभी-कभी मौसम द्वारा भी बाधा पहुँचती है किन्तु साधारणतया जलवायु की अवस्थायें ही इस कार्य मे विशेष अवरोधक होती हैं। उत्तरी भागो मे नीचे तापक्रम और छोटी पैदावार की मौसम होने से सख्त अनाज, साग सब्जी और फल पैदा नही हो पाते। लम्बी ठंडी जाडे की ऋतु और बर्फ के कारण पशुओं के लिये घास की समस्या भी कठिन हो जाती है। फलस्वरूप उन्हें भी मांस पर जीवित रखना पड़ता है। इन अवस्थाओं मे वहाँ मछली की माँग बढ जाती है। इन भागो के ठढे जल मे उष्ण जल की अपेक्षा उम्दा किस्म की मछलियाँ होती है। ग्रीष्म मे हल्की धूप और ताप से मछलियो को सुखाने और उन पर नमक लगाने आदि कार्य मे बडी सहायता मिलती है। जाडो मे सस्ता प्राकृतिक बर्फ मछलियो को सुरक्षित रखने मे बड़ा उपयोगी और सहायक होता है।

(७) **जंगलों और मत्स्य व्यवसाय का सम्बन्ध**—ससार के अधिकतर बडे मछली क्षेत्र उन भागो के समीप है जहाँ उत्तम कोणधारी व मिश्रित जगल पाये जाते है। मछली पकडने के लिये जहाज व नावें अपरिहार्य साधन है। जगल इनके लिये लकडी प्रदान करते है। जिन भागों मे जगलो का अभाव है उन्हें समीप भागों से लकडी अथवा नावों का आयात करना पड़ता है जैसे आइसलैंड और फैरो द्वीप मे कई मछली पकडने वाले बन्दरगाहों पर जहाजो और नावों की मरम्मत करना मुख्य कार्य होता है। लम्बे जाडो मे लकडी द्वारा मकान गर्म रखे जाते है। इसके अतिरिक्त जंगलों से मछलियो को डिब्बो मे भरने आदि के लिये लकडी प्राप्त होती है।

(८) **भूमि की प्रकृति**—बैंक्स के समीप कटे फटे तट के होने पर वहाँ अनेक अच्छे पोताश्रय और सुरक्षित खाडियाँ मिलती हैं जो मछली व्यवसाय को बढ़ाने मे बडी सहायता देती है। यद्यपि इसमे कई अपवाद भी हैं फिर भी परोक्ष

नार्वे में मछली पकड़ना

नार्वे मे तट के सुरक्षित फिओर्ड मछली मकड़ने के उत्तम केन्द्र है। जापान की तरह नार्वे की उपज कम होने के कारण यहाँ के रहने वाले समुद्र के साधनों की ओर झुकने के लिये मजबूर हुए है। कॉड और हैरिंग नार्वे की दो प्रमुख मछलियाँ हैं। कॉड लोफोटन द्वीप के निकट और हैरिंग बरगन के निकट निचली खाड़ियों में पकड़ी जाती है। यह लोग अपनी घर की खपत के लिये ही मछली नही पकड़ते वरन् बाहर भेजने के लिये भी पकड़ते हैं जिनमे मुख्य नमकीन हैरिंग, कॉड मछली और काड लिवर आइल हैं। मछली यहाँ की सम्पत्ति का मुख्य साधन हैं। यहाँ प्रति वर्ष लगभग १० लाख टन मछली पकड़ी जाती है।

फ्रांस, हालैंड, स्पेन, पुर्तगाल और इटली की मुख्य मछलियाँ सार्डीन, एकवी और आयस्टर है। भूमध्य सागर में पाई जाने वाली मछली टनी और कैस्पियन सागर की स्टर्जियन है।

(iii) उत्तरी अमरीका का मछली उद्योग
(North American Fisheries)

कनाडा का मछली पकड़ने का व्यवसाय—कनाडा विश्व मे मछलियाँ पकड़ने वाले देशो मे प्रमुख है। यहाँ मछली पकड़ने के प्रमुख क्षेत्र अटलांटिक महासागर के तटवर्ती भाग, प्रशान्त महासागर के तटवर्ती क्षेत्र, बड़ी झीलें और देश की आंतरिक नदियाँ है। १० वर्ष पहले कनाडा मे ४५० लाख डालर के मूल्य की मछलियाँ पकड़ी गई थी। १९६१ मे इनका मूल्य २०,१००,००० डालर था। कनाडा के समस्त उत्पादन की $\frac{1}{3}$ पकड़ न्यूफाउंडलैंड से, $\frac{1}{3}$ पकड़ नोवास्कोशिया, प्रिंस एडवर्ड द्वीप, और क्यूबेक से तथा शेप $\frac{1}{3}$ ब्रिटिश कोलंबिया और देश के भीतरी जलाशयो से प्राप्त होती है। समस्त पकड़ का $\frac{2}{3}$ भाग कनाडा के पूर्वी तट से तथा $\frac{1}{3}$ पश्चिमी तट और भीतरी जलाशयो से प्राप्त होता है। कनाडा के पूर्वी समुद्रतट से गहरे पानी की मुख्य मछलियाँ—कॉड, लॉब्स्टर, हैडक, हैलीबट, हैरिंग, सारडाइन्स और मकरेल पकड़ी जाती हैं।

चित्र ३९. उत्तरी पूर्वी कनाडा मे मछली पकड़ने के क्षेत्र

इस व्यवसाय में ६५,००० व्यक्ति लगे हैं जिन्होंने १९६१ में २०,००० लाख पौंड मछलियाँ पकड़ीं। संसार के मछली पकड़ने के केन्द्रों मे न्यू-इङ्गलैंड और न्यूफाउंड-

विचार तथा रीति रिवाजो मे मछली का एक विशेष स्थान बन गया है। बौद्ध लोगों मे गाय व सुअर का माँस खाना वर्जित है अतः मछली का ही उपयोग अधिक होता है। इन देशों मे मछली लाखो व्यक्तियों का प्रमुख भोजन है।

यद्यपि इन भागो मे अनेक स्थानो पर अच्छे खेत और चरागाह पाये जाते है किन्तु जापान, नार्वे, स्कॉटलैंड, कनाडा का समुद्र तटीय भाग और न्यू इगलैंड मे खेतिहर भूमि की कमी और आबादी की अधिकता के कारण भोजन की बडी कमी रहती है। फलत: माँस भी बडा मँहगा मिलता है। पश्चिमी मध्य यूरोप, तथा पूर्वी मध्य उत्तरी अमेरिका ससार मे विभिन्न प्रकार के और सर्वाधिक मात्रा मे खाद्य पदार्थ आयात करने वाले भाग है। पश्चिमी यूरोप मे वैसे भेडें, सूअर व गाय आदि बडी सख्या में पाले जाते हैं और माँस का भी खूब उपयोग होता है किन्तु कुछ देशो में वह दूरस्थ स्थानो से आयात करना होता है। हॉलैंड, डेनमार्क, बेल्जियम और इंगलैंड मे जितनी मात्रा मे पशु भूमि पर पाले जा सकते है उससे भी अधिक पालते है फिर भी उन्हे अपने भोजन के लिये माँस व खाद्यान्न तथा उन पशुओं के लिये अनाज आदि का आयात करना पडता है। इसी प्रकार पूर्वी सयुक्त राज्य और पूर्वी कनाडा मे बडी मात्रा मे दूध देने वाली गाये और सूअर पाले जाते है फिर भी ये अपनी पूर्ति पश्चिमी खेतो से पूरी करते है। इन दो भागो मे आयात और वितरण का खर्च बढ जाने के कारण माँस सदा मँहगा रहता है। प्रति पौंड माँस की कीमत ३५ से ६०-सेन्ट होती है जबकि मछली की प्रति पौंड कीमत १० से ३५ सेन्ट ही होती है। इस कारण इन भागों का मजदूर वर्ग मछलियों का ही अधिक प्रयोग करता है। चीन और जापान मे भूमि की इतनी कमी है कि यहाँ माँस के लिये पशु पालन सभव नही है। साधारणत. एक पौंड सूअर के माँस के लिये पाँच पौंड मक्का तथा एक पौंड गाय के माँस के लिये १० पौंड मक्का और १० पौंड घास की आवश्यकता होती है। अतः लोगों को अपने भोजन के लिये गहरी खेती करनी पड़ती है।

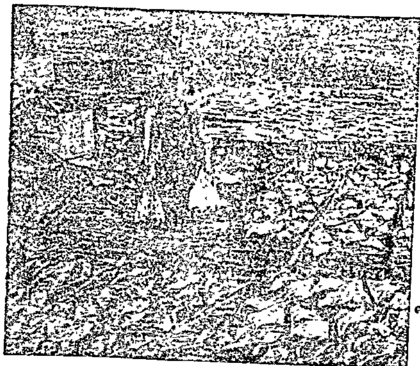
अन्य क्षेत्र

उपरोक्त क्षेत्रो के अतिरिक्त और भी कई छोटे-छोटे क्षेत्र है जहाँ छोटे पैमाने पर मछली पकडी जाती है। अमेरिका के प्रशान्त तट पर अलास्का और ब्रिटिश कोलम्बिया, दक्षिणी अमेरिका मे चिली तट तथा दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी आस्ट्रेलिया व न्यूजीलैंड के समीप भी मछलियाँ पकडी जाती है। अलास्का और ब्रिटिश कोलम्बिया मे कुछ मछलियो का ४/५ भाग हेरिंग और मैकरल का होता है। लेकिन धीरे-धीरे हैलीबट, कॉड व फ्लान्डर की मात्रा बढती जारही है। चूकि ये भाग बाजारो से बहुत ही दूर है अतएव मछलियो को कई तरह से तैयार किया जाता है। किन्तु हैलीबट और फ्लान्डर को बर्फ मे रख कर तेज रेलगाडियो द्वारा प्रिन्सरपर्ट, वेंकूवर और सियेटल नगरो को भेजी जाती है जहाँ से वे अधिक पूर्व के नगरो को भेजी जाती है।

दक्षिणी गोलार्द्ध के शीतोष्ण क्षेत्रो मे आबादी बहुत कम तथा छितरी पाई जाती है। कुछ ही स्थानो पर आबादी का घनत्व प्रति वर्ग मील १०० से अधिक मिलता है। इन भागो मे बडा सस्ता माँस पैदा किया जाता है जिससे केवल घरेलू आवश्यकता ही पूरी नही होती अपितु ससार के कई देशो को भी निर्यात किया जाता है। यहाँ केवल दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी पूर्वी भाग मे ही उपयुक्त छिछले निम्न तट वाले समुद्र है। जहाँ खूब मछलियाँ मिलती है। किन्तु यहाँ का सपाट समुद्री किनारा, बन्दरगाहों मे पोताश्रयों का अभाव, निकट ही जगलो का अभाव,

पोर्टलैंड, प्रिन्स रूपर्ट द्वीप, विक्टोरिया व सीएटल इस प्रदेश के सामन मछली पकडने के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है।

यहाँ अन्य मछलियाँ पिलकर्ड, ट्यूना, श्रीम्प, ह्वेल, क्लॉम और हैलीबट है। पिलकर्ड जाडो मे पकड़ी जाती है और ट्यूना गर्मियो मे। एलास्का और ब्रिटिश कोलम्बिया के गहरे जल हैलीबट के लिये प्रसिद्ध है।



चित्र ४० कनाडा मे मछलियाँ सुखाना

पिछले कुछ वर्षो से कनाडा के इस व्यवसाय मे मछली पकडने के तरीको, शीत भंडार (Cold Storage) की विधि आदि मे प्रगति हो जाने से बडा परिवर्तन हो गया है। दिन के निर्यात मे ताजी और बर्फ मे दबी मछलियो का भाग ४२% है।

भारत में मछली पकड़ने का धन्धा

भारत जैसे विशाल देश मे—जहाँ विस्तृत समुद्री किनारे, वर्ष भर पानी से भरी हुई नदियाँ और सिंचाई की नहरें तथा वर्षा जल से पूर्ण असंख्य तालाब और झीलें हैं—मछलियाँ पकडने के लिये विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक और भौगोलिक परिस्थितियाँ पाई जाती हैं। भारत के विभिन्न भागों में कई प्रकार की मछलियाँ पकडी जाती है। अब तक भारतीय समुद्रो मे १,५०० प्रकार की मछलियाँ ज्ञात हो चुकी हैं, किन्तु कुछ ही किस्म की मछलियाँ यहाँ पर्याप्त मात्रा मे पकड़ी जाती हैं।

जिनके अनुसार यहाँ मछली पकड़ने वाले क्षेत्रों को तीन भागों मे बाटा जा सकता है :—

(१) गर्म जल भंडार का क्षेत्र जापान सागर के दक्षिणी भाग, दक्षिणी और मध्य होंशू और शिकोकू तथा क्यूश्यू तट के समीप है। यहाँ का सामान्य तापक्रम ७३° फा० के लगभग रहता है। यहाँ सारडाइन, ट्यूना और मैकरेल मछलियाँ पकड़ी जाती है।

(२) ठंढे जल भंडार का क्षेत्र जापान सागर के उत्तरी भाग और होकेडो द्वीप के समीपवर्ती भाग मे है। यहाँ शीतकालीन तापक्रम ३०° फा० और ग्रीष्मकालीन तापक्रम ६५° तक रहता है। हेरिंग, सी-वीड, सामन और क्रैब मछलियाँ पकडी जाती है।

(३) मिश्रित जल भंडार का विस्तार उत्तरी होंशू के निकट है। यहाँ ठंढी और गर्म जल धारायें मिलती है। यहाँ कटल और स्किवड मछलियाँ पकडी जाती हैं।

पूर्वी एशिया मे तैवान (फार्मूसा) से लेकर कमचटका तक समुद्र उथला होने के कारण मछली के विकास के लिए अत्यन्त अनुकूल है। अतएव जापान मे मछली पकडने के केन्द्र निप्पन (मुख्य जापान) के अतिरिक्त फार्मूसा, रियूक्यू द्वीप समूह, कोरिया, सासालीन और क्यूराइल द्वीप समूह के उथले जल मे भी स्थित हैं। इन भागो मे लगभग ४०० प्रकार की मछलियाँ पकडी जाती है। इनमे से कुछ तो उत्तर के ठंढे जल में बहुतायत से मिलती है और कुछ अर्द्ध-उष्ण जल मे। होकेडो के उत्तर मे कॉड, हेरिंग, सामन, हैलीबट, सार्डीन विशेष व्यापारिक महत्व की हैं। यहाँ जापान की लगभग ⅓ मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यहाँ के मुख्य केन्द्र **होकेडो, वाक्काना, अबासीरी और ओतारु** है।

होंशू के उत्तरी पूर्वी तट पर आमोरी, हैचीनोहे, कामेशी, कैसेनुम और निगाता प्रमुख केन्द्र हैं। अर्द्ध-उष्ण भागो मे बोनीटो, ट्यूना मैकरेल, सी-ब्रीम, यलोटेल, कटल फिश, मर्लिन विशेष रूप से पकडी जाती है। यहाँ **श्रोबासी, शिमोनेसाकी, तोब्राता, फुकोका और नागासाकी** इस क्षेत्र के प्रमुख केन्द्र हैं। जापानी मछली को खाद के रूप मे भी प्रयुक्त करते है।

जापानियो के मछली पकडने के धन्धो मे पुराने और नये दोनों प्रकार के ढगो का मिश्रण है किन्तु इनके कुछ यन्त्र इतने आधुनिक है कि ऐसे अन्यत्र नही दिखाई पड़ते। इन्जन वाले ट्रौलर, मोटर बोट और मछलियो को सुखाने तथा डिब्बों मे भरने वाली फैक्ट्रियाँ सराहनीय है। तटीय मछुआ कर्म अलग-अलग गृहस्थियो या बहुत सी गृहस्थियो के पुरुषो के सामूहिक पुरुषार्थ के द्वारा पुराने ढर्रे पर होता है। किन्तु नये ढग का प्रचार तीव्र गति से बढ रहा है। जापानी मछुआ-कर्म दो भागो मे बाँटा जा सकता है—तटीय मछुआ-कर्म और गहरे पानी वाला मछुआ-कर्म। मुख्य जापान की मछलियो के मूल्य में से ६० प्रतिशत तटीय (सारडीन, सी वीड, सैमन, कटल मछली, शैल मछली आदि), २८ प्रतिशत गहरे पानी वाली (सारडीन, यलोटेल, मैकरेल, कॉड, बोनीटो, ट्राउट, डाग, सान, ट्यूना, टाइल आदि), ६ प्रतिशत मोती बनाने की क्रिया और शेष ६ प्रतिशत ह्वेल आदि के शिकार शामिल हैं।

ट्रिपाग, जोकि एक प्रकार की समुद्री ककड़ी (Sea-Cucumber) मानी

पट्टम, तूतोकोरिन, मछलीपट्टम, नैलोर, नागापट्टम, पाडिचेरी आदि प्रमुख केन्द्र हैं।

(२) **ताजे पानी की मछलियाँ**—समुद्री मछलियो के बाद ताजे पानी की मछलियाँ भी महत्वपूर्ण है। उत्तरी भारत की बडी नदियो मे वर्षा काल मे सामान्यतः मछली पकडने का कार्य अधिक नही होता। इन नदियो मे जब बाढ आना बन्द हो जाता है तो अक्टूबर से मछली पकडने का मौसम शुरू हो जाता है। गर्मी के महीनो मे मैदानो मे मछलियो की माँग कम रहती है। अतः ग्रीष्म और वर्षा ऋतु मे पंजाब के कुछ भागो, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश मे मछली पकडने का धन्धा सामान्यतः कमजोर पड जाता है। तालाबो मे जब पानी की सतह नीची हो जाती है उस समय उनमे मछलियाँ अच्छी तरह पकडी जाती हैं। मद्रास, आध्र तथा मध्य प्रदेश और बगाल मे तो तालाबो और झीलों मे ही अधिकाश मछलियाँ प्राप्त की जाती हैं। उन भागो मे अप्रैल से जुलाई तक मछलियाँ पकड़ी जाती है। ताजे जल मे पकडी जाने वाली मुख्य मछलियाँ कैट-फिश, साँ-फिस, हेरिंग और मैकरेल हैं।

(३) **नदियों के मुहाने मे पकड़ी जाने वाली मछलियाँ**—पुरी से हुगली के मुहाने तक महानदी, गङ्गा और ब्रह्मपुत्र नदियो के चौड़े मुख मे कॉक, अप, हिल्सा, पॉमफेट, प्रान, कटला, रोहू और कैटफिश वहुत पकडी जाती है। सबसे अधिक मछलियाँ बगाल के डेल्टे मे पकडी जाती है। यहाँ मछली पकडने का क्षेत्र ५,८०० वर्ग मील मे फैला हुआ है जिसमे अधिकाश भाग में दलदल, घने जंगल तथा नदियो और नालो का प्राचुर्य है। किन्तु गमनागमन के साधनो की कमी होने के कारण पकडी गई मछलियाँ ताजे रूप मे नही पहुँचाई जा सकती अतः बहुत सी मछलियाँ सड़ कर नष्ट हो जाती है।

(४) **मोती देने वाली मछलियाँ** (Pearl Fisheries)—भारतीय राष्ट्रीय योजना समिति के अनुसार मनार की खाडी, सौराष्ट्र के समुद्री किनारे तथा कच्छ की खाडी मे ओइस्टर मछलियो की अधिकता है जिनसे उत्तम बहुमूल्य मोती प्राप्त किये जा सकते हैं। मद्रास में कुमारी द्वीप (पानबन) मे ओइस्टर मछलियाँ पाई जाती हैं। इसी प्रकार की कुछ मछलियाँ बम्बई के निकट भी मिलती है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि भारतीय समुद्रो, नदियो, तालाबो और झीलो मे सैकडों किस्म की खाद्य मछलियाँ भरी पड़ी हैं किन्तु अभी तक इन साधनों का केवल ५-६% ही उपयोग मे लाया जा सका है। न्यूफाउन्डलैंड, आइसलैंड और नार्वे मे प्रति व्यक्ति के पीछे ६८० पौंड से ६,२२३ पौंड मछलियाँ प्रति वर्ष पकडी जाती हैं वहाँ भारत मे केवल ५ पौंड ही। इस नगण्य मात्रा के प्रतिकूल जापान मे प्रति व्यक्ति के पीछे वार्षिक उत्पत्ति १११ पौंड, कनाडा मे १०६ पौड, डेनमार्क मे ६३ पौ०, इगलैण्ड मे ४६ पौं०, पुर्तगाल में ३७ पौं०, स्पेन मे ३७ पौ०, सयुक्त राज्य-अमेरिका मे ३५ पौ०, जर्मनी मे २० पौ०, फ्रास मे २७ पौ० और रूस मे १८ पौ० हैं।

भारत में कुल मछली के उत्पादन का आधा भाग खाने मे काम आ जाता है, १/५ भाग नमक मे दाब कर काम लिया जाता है और १/५ भाग धूप मे सुखा कर उपयोग में लाया जाता है। केवल १०% खाद के काम में लिया जाता है।

सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है। ब्रिटेन में लगभग २२,००० मछुओं द्वारा १९ में ७·४६ लाख टन मछली पकड़ी गई जिसका मूल्य ४६० लाख पौंड था और देश की खपत के लिये १·५ लाख टन बाहर से मँगाई जाती है[8]।

ब्रिटेन में मछली पकड़ने का धन्धा कुछ बड़े बन्दरगाहों में केन्द्रित है। नीचे की तालिका में यह बताया गया है किन-किन बन्दरगाहों पर कौन-सी विशेष प्रकार की मछलियाँ पकड़ी जाती है :—

किस्म	प्रमुख बन्दरगाह	
१. श्वेत मछली (White fish),	ग्रिम्सबी, हल, फ्लीटवुड, मिलफोर्ड हैवेन, लाऊसटोफ	इंगलैंड और वेल्स
२ हैरिंग	ग्रेट यॉरमाऊथ, लाऊसटोफ	

किस्म	प्रमुख बन्दरगाह	
३. श्वेत मछली	एबरडीन, ग्रान्टन विशेषत. मोरे फॉर्थके मुहाने मे	स्कॉटलैंड
४. हैरिंग	पिटर हैड, फ्रेजरबर्ग, शटलैंड, क्लाइड और पश्चिमी तट पर	

ब्रिटेन की मछली दो प्रकार की है—धरातल वाली मछली (Pelagic) और पैंदे वाली (Demersal) मछली। ब्रिटेन के बन्दरगाहों से पकड़ी जाने वाली कुल मछली में से ३० प्रतिशत पैंदे वाली मछली है जिनमें हैडक, कॉड और हेक प्रमुख है। कॉड और हैलीबट आइसलैंड के जलों से; हैरिंग, कॉड, हैलीबट, पिलचर्ड, मैंकरेल उत्तरी सागर के उत्तरी और गहरे भागों से और हेक ब्रिटेन के पश्चिमी भागों से पकड़ी जाती है। यह साल भर तक बराबर पकड़ी जाती है तथा हल और ग्रिम्सबी के बन्दरगाहों पर उतारी जाती है। अकेला बैलिंग्सगेट प्रति दिन ६०० टन मछलियों में व्यापार करता है। धरातल वाली मछलियों में हैरिंग, मैकरेल, हैडैक और प्लेस प्रमुख है। हैरिंग विशेष रूप से निर्यात के लिये ही पकड़ी जाती है और इसे सुखाकर नमक लगाकर बाल्टिक और भूमध्य सागरीय देशों को भेजा जाता है। पैंदे वाली मछलियाँ अधिकतर घर की खपत के लिये रखी जाती हैं।



चित्र ३८. डोगर बैंक

8. **Britain,** 1963, p. 350.

दक्षिणी अमेरिका का दक्षिणी भाग तथा आस्ट्रेलिया का दक्षिणी भाग और न्यूजीलैंड।

(१) प्रथम क्षेत्र मे पैटेगोनिया और ग्रैहमलैण्ड के पश्चिम की ओर स्थित द्वीप समूह से लेकर पूर्व की ओर जमे हुए बर्फ की सीमा तक ह्वेल पकडी जाती है। यहाँ के मुख्य क्षेत्र ८०° पश्चिमी और २०° पूर्वी देशान्तर के मध्य तथा दक्षिणी जार्जिया, दक्षिणी आर्कनीज और दक्षिणी सैंडविच द्वीप समूह के चारो ओर विस्तृत है। दक्षिणी जार्जिया मे ह्वेल पकडने का समय सितम्बर के अन्त से मई के मध्य तक तथा दक्षिणी शटलैण्ड मे नवम्बर के उत्तरार्द्ध से अप्रैल के अन्त तक रहता है। अत चलती-फिरती फैक्टरियाँ (जो जहाजो पर रहती हैं) नार्वे से अगस्त के मध्य मे लेकर सितम्बर के अन्त तक प्रस्थान करती है और मई-जुलाई तक लौट आती हैं। (२) दूसरा क्षेत्र दक्षिण मे रॉस सागर और बैलेनी द्वीप समूह के चारो ओर का समुद्र है।

वर्तमान समय मे अधिक ह्वेल पकडी जाने तथा पवनो और धाराओ द्वारा उनके प्लैंक्टन आदि पदार्थ गहरे समुद्रों में ही ले जाये जाने के कारण पकड़ी जाने वाली ह्वेलो की सख्या दिन-प्रति-दिन घट रही है। १९३९ में अंटार्कटिक महासागर मे ह्वेल को कुल पकड का ८०% ब्लू ह्वेल का था किन्तु १९५१-५२ में यह प्रतिशत घटकर केवल २२ ही रह गया। अस्तु, ह्वेलिंग जहाजों को और भी बड़ा बनाने की आवश्यकता पड रही है जो समुद्र पर चलने मे समर्थ हों। ह्वेल का पूर्ण विनाश रोकने की दृष्टि से ह्वेल मारने पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं और प्रत्येक देश मे ह्वेल मारने वाले जहाजो की सख्या इस प्रकार नियत करदी गई है। नार्वे ६, जापान २; रूस १, इगलैंड ३, हालैंड १, और दक्षिण अफ्रीका १। १९४८ मे ह्वेल-मछली-पकडने वाले प्रमुख राष्ट्रों—आस्ट्रेलिया, ब्राजील, कनाडा, डेनमार्क, फ्रांस, जापान, मैक्सिको, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड, नार्वे, पनामा, स्वीडेन, दक्षिणी अफ्रीका संघ, सयुक्त राज्य और इंगलैंड ने मिलकर एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौते पर हस्ताक्षर किये जिसका मुख्य उद्देश्य ह्वेल मछलियों का नियमित रूप से पकडने और भविष्य के लिए सरक्षित करना है।

ह्वेल मछली की पकड इस प्रकार रही है :—

	१९५७	१९६१
अंटार्कटिक महासागर	३६,०००	४०,०००
उत्तरी आंध्र महासागर	९७९	८६०
उ० प्रशान्त महासागर	८९५	१,३२५
जापान	३,१०९	३,६४४
विश्व का योग	५९,०५९	६४,५८६

जब ह्वेल को मारा जाता है तो तुरन्त ही उसे काटकर व्यापारिक वस्तुएँ प्राप्त कर ली जाती हैं क्योकि समय बीतने पर मछलियाँ नष्ट हो जाती हैं। अतएव

लैंड के पास वाले बैंको का बडा महत्वपूर्ण स्थान है। यह न्यूफाउन्डलैंड के पूर्वी किनारो पर १,१०० मील की दूरी मे नोवोस्कोशिया के पश्चिमी छोर से लगाकर न्यूफाउन्डलैंड के दक्षिण तक फैले हुए हैं और इनकी चौडाई २५ मील से लेकर २५० मील तक है और यहाँ जल की गहराई १० से १५० फैदम तक ही है। इनमे सबसे महत्वपूर्ण यह हैं (१) न्यूफाउन्डलैंड के दक्षिण-पूर्व मे ग्रान्ड बैंक जिसका क्षेत्रफल ३७,००० वर्गमील है, (२) नोवास्कोशिया के दक्षिण-पूर्व मे सेविल द्वीप बैंक जिसका क्षेत्रफल ७,००० वर्गमील है, और (३) कॉड अन्तरीप के पास जार्ज बैंक जिसका क्षेत्रफल ८,५०० वर्गमील है। अन्य बैंको का क्षेत्रफल १७,५०० वर्गमील है। कॉड और हैडक मछलियो के लिये यह संसार मे सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रदेश है। इस प्रदेश मे पकडी जाने वाली अन्य मछलियाँ हैरिंग, हैडक, सामन, हैलीवट, हेक, सारडाइन और मैकैरल है। कनाडा का पूर्वी तट लाब्सटरो, स्मैल्टस और कॉड के लिए संसार मे सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यहाँ ट्रालरो द्वारा मछली पकडी जाती है।

लैब्रेडोर और न्यूफाउन्डलैंड के लोगो का मुख्य आहार मछली है क्योंकि (१) इन प्रदेशो की जलवायु खेती के लिये बहुत ठंडी और आर्द्र है; (२) इसके अतिरिक्त भूमि के अन्य साधन जैसे खानें और जल आदि भी अत्यन्त सीमित है। (३) यहाँ नदियों, खाडियो और छिछले जल के क्षेत्रो की भरमार है (४) यहाँ लैब्रेडोर की ठंडी धारा मे प्लैंकटन बहुत बड़ी मात्रा मे चले आते हैं जिन पर मछलियाँ रहती हैं। न्यूफाउन्डलैंड से प्रतिवर्ष कॉड मछली और उसका तेल काफी मात्रा मे ब्राजील, स्पेन, पुर्तगाल और भूमध्य सागरीय देशो को निर्यात किया जाता है जहाँ वर्ष के कुछ समय मे मास खाना निषिद्ध है। प्रति वर्ष लगभग ११३ करोड़ डालर के मूल्य की मछलियाँ निर्यात की जाती है।

कनाडा के पश्चिमी भाग मे ब्रिटिश कोलम्बिया मे सामन, हैरिंग और अन्य कई प्रकार की मछलियाँ अधिक पकडी जाती है। ताजे पानी वाली मछलियों मे मुख्यत- ट्राउट, पिकरैल, श्वेत मछली, टलीवी, सीजर और पाइक आदि की पकड का लगभग आधा भाग ओन्टेरियो झील, $\frac{1}{3}$ मानीटोवा और शेष क्यूबेक, न्यू ब्रान्सविक, ससकेचवान, एलवर्टा, यूकन और उ० प्र० प्रान्तो से प्राप्त होता है।

उत्तरी-पश्चिमी कनाडा—उत्तरी अमेरिका के मछली पकड़ने के अन्य क्षेत्र प्रशान्त सागर के तटीय भाग है जो कैलीफोर्निया और बैरिंग सागर के बीच में स्थित हैं। इस भाग मे अलास्का, ब्रिटिश कोलम्बिया, ओरगन, वाशिंगटन और कैलीफोर्निया के तट सम्मिलित हैं। इस प्रदेश मे पकडी जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण मछली सामन और ट्राउट है। यह प्रदेश ससार को टीन में भरकर वाहर भेजी जाने वाली सामन मछली का भी सबसे बडा स्रोत है। सामन मछली की एक विशेष आदत होती है। इसका जन्म झीलो और नदियो के मीठे जलों के रेतीले पैंदो मे होता है। जब यह उँगली के बराबर मोटी हो जाती है तो झीलो और नदियों को छोड कर समुद्र मे चली जाती है जहाँ वह अपने जीवन का अधिकतर भाग समुद्रो के खारे जलो मे ही बिताती है, किन्तु लगभग तीन साल वाद ढलती हुई उम्र मे यह नदियो के उन्ही मीठे जल मे आ जाती है जहाँ उसका जन्म हुआ था। अडे देने के बाद यह बूढी मछलियाँ मर जाती हैं। बसन्त और गर्मियो मे जो कि इनके अडे देने के मौसम हैं अधेड सामन मछलियो की बहुत बडी सख्या समुद्र से नदियों की ओर चढती हुई देखी जाती है। अतएव सामन पकड़ने के यही दो विशेष मौसम है। वैंकूवर,

वैज्ञानिक विधियों की सुविधा के सहारे तथा सामान भेजने के ढंगों में सुधार हो जाने से थोड़ी-बहुत मछलियाँ पकड़ने वाले केन्द्रों से बाहर भेजी जाती हैं। न्यूफाउण्डलैण्ड, लैब्रोडोर, कनाडा, नार्वे आदि भागो से कम आबादी होने के कारण मछलियाँ डिब्बों में बन्द कर यूरोप के देशों को भेजी जाती है। मुख्य आयात करने वाले देश ब्रिटेन, सं० रा० अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, इटली, स्पेन, चीन और पुर्तगाल हैं।

मछली और उनसे प्राप्त होने वाली वस्तुओं का मूल्य १ अरब रुपये से भी अधिक का कूता गया है। इनका मूल्य विश्व में पैदा होने वाले रबड़ के मूल्य का दुगना अथवा चाय, कहवा, कोको, तम्बाकू और शराब के मूल्य के बराबर होता है।

मांस की अपेक्षा मछली शीघ्र नष्ट हो जाने वाली वस्तु है अतः शीत भंडार की विधि के कारण अब मछलियों को बर्फ में दबाकर भेजने से मछली पकड़ने के व्यवसाय में बड़ी प्रगति हुई है। इसी के परिणामस्वरूप दूर-दूर के देशों को अब मछलियाँ मिलने लगी है। स्टीमरों, जालों तथा अन्य यान्त्रिक उपकरणों का प्रयोग बढ़ जाने से भी तथा इस व्यवसाय से प्राप्त होने वाली वस्तुओं के असख्य नवीन प्रयोगों के आविष्कार से इस शताब्दी में मछली पकड़ने के व्यवसाय में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है।

मछली केवल खाने के काम में ही नही आती किन्तु अब इससे व्यापार के काम की वस्तुएँ भी प्राप्त होती हैं। इसका खाद बहुमूल्य होता है। इसका तेल औषधियाँ, मशीनो को चिकना करने, चमड़ा रंगने, साबुन बनाने तथा इस्पात को चमकाने के काम में आता है। मछली से जिलेटीन तथा दांत प्राप्त होते है और मछली की खाल उत्तम चमड़ा बनाने मे काम आती है। मछलियाँ अधिक दूध देने के निमित्त गायों को भी खिलाई जाती हैं। मुर्गियों को खिलाकर अधिक अण्डे प्राप्त किये जाते हैं।

१९६१ में जितनी मछलियाँ पकड़ी गईं उनमे से ३८% ताजा रूप मे, ९% जमा कर, १८% नमक में सुखा कर और ९% डिब्बों मे बंद कर बाजारो में बेची गई।

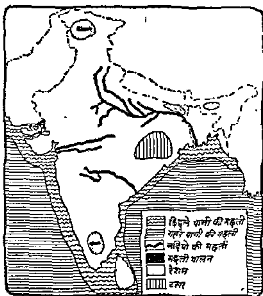
मछली व्यवसाय का भविष्य—यद्यपि यह सत्य है कि प्रति वर्ष तटीय, गहरे समुद्रों और पेंदे वाली कई अरब पौंड मछलियाँ पकड़ी जाती है किन्तु यह एक निरन्तर क्षीण होने वाला व्यवसाय है। साधारणतः संसार के किसी भी क्षेत्र में वर्षों तक खूब मछलियाँ पकड़ने के उपरान्त कमी अनुभव होने लगती है। अस्तु मछुओ को अधिक अच्छे तरीको और द्रुतगामी नावो का उपयोग करना पड़ता है और समुद्रों में दूर-दूर जाना पड़ता है। उत्तरी अमेरिका के प्रशान्त सागर और दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी भाग में अब प्रचुर मछलियाँ पकड़ी जाने लगी हैं। उत्तरी अमेरिका और यूरेशिया के उत्तर मे ऐसे कई उपजाऊ क्षेत्र अभी हैं जो अभी तक अछूते है। किन्तु चूँकि ये बाजारो से काफी दूर हैं और ये समुद्र कुछ ही महीने खुले रहते है अतः यहाँ मछली पकड़ना काफी खर्चीला होता है।

माँग के अनुसार मछलियो की पूर्ति को बराबर बनाये रखने के लिये मनुष्य द्वारा बहुत कम प्रयत्न किये गए हैं। केवल तटीय भागो और ताजा पानी की मछलियो के सम्बन्ध मे ऐसे कुछ प्रयत्न हुए है। किन्तु फिर भी अब लोगो की प्रवृत्ति बदलती जा रही है। आजकल नार्वे, ब्रिटेन, जापान, संयुक्त राज्य व कनाडा आदि

भारत में मछलियाँ पकड़ने के मुख्य क्षेत्र समुद्र तटीय सीमायें है। इनके अतिरिक्त नदियों के मुहाने, नदियाँ, सिंचाई की नहरें, बाढवर्ती क्षेत्र, झीलें आदि भी मछली पकडने के मुख्य क्षेत्र है। भारत की समुद्र तटीय रेखा लगभग ३,५३५ मील लम्बी है और उस समुद्र का क्षेत्रफल, जो १०० फैदम गहरा है लगभग १,१५,००० वर्ग मील है। किन्तु इस क्षेत्रफल का बहुत थोडा भाग ही काम में आता है। ऐसा अनुमान किया गया है कि अभी तक तट से ५-१० मील के क्षेत्र तक ही मछली पकडने के केन्द्र सीमित है। सम्पूर्ण समुद्री मछलियों के केवल ५-६% क्षेत्रफल में ही मछलियाँ पकडी जाती है। नदियों के मुहाने और नदियों में भी मछली पकडने का काम किया जाता है। इनसे देश के भीतर काफी परिमाण में मछलियों की पूर्ति हो जाती है।

मछली पकडने वाले देशों में भारत का स्थान ८ वां है। यहाँ १९६१ में १४ लाख टन मछली पकडी गई। तृतीय योजना के अन्त में यह मात्रा १८ लाख टन हो जाने का अनुमान है। मछली पकडने के उद्योग में १० लाख मनुष्य लगे हैं जो ८० हजार से अधिक नावों में मछलियाँ पकडते है।

(१) समुद्री मछलियाँ—समुद्री मछलियाँ पकडने के मुख्य क्षेत्र तटीय रेखा से ५-१० मील की सीमा तक ही सीमित हैं। समुद्री मछली के मुख्य क्षेत्र गुजरात, कनारा, मलाबार तट, कोरोमण्डल तट और मनार की खाड़ी हैं। पूर्वी और पश्चिमी किनारों पर पकड़ी जाने वाली मुख्य मछलियाँ—प्रॉन, ज्यू मछली, मेकरेल, मुलेट्स, सामन, पॉमफ्रेट, सीर, सारडाइन, रे, उड़ती मछली, चपटी मछली और शार्क है। ये सभी मछलियाँ खाने के काम में आती है। ये मछलियाँ सीमित मात्रा में ही पकडी जाती हैं क्योंकि गाँवों आदि में इनकी माँग बहुत ही कम है।



चित्र ४१. भरत मे मछली पकडने के क्षेत्र

सभी क्षेत्र एक समान उत्पादक नही है। पश्चिमी समुद्र तट लगभग १,१५० मील लम्बा है किन्तु यहाँ कुल उत्पादक की ६६% मछलियाँ पकडी जाती हैं, जब कि बंगाल की खाडी का तट, जो १,७७० मील से भी अधिक है, सम्पूर्ण भारत की १/३ ही मछलियाँ पकड़ता है। पश्चिमी तट पर ही कनारा और मलाबार के जिलों में कुल भारत की जोड़ का १/४ मछली पकडी जाती हैं। मद्रास, कालीकट, मंगलौर, विशाखा-

अध्याय १३

पशु-चारण उद्योग

(PASTORAL FARMING)

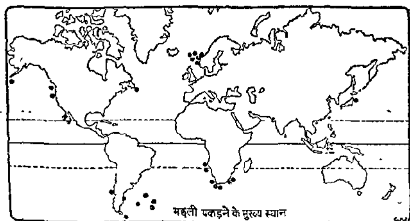
पशुपालन का इतिहास

मानव-शास्त्रियो का यह मत है कि कृषि का विकास पशुपालन से संबंधित रहा है। इस मत के अनुसार मिश्र, चीन और यूरोप मे कई ऐसे प्रमाण उपलब्ध हुए हैं जिससे स्पष्ट होता है कि कृषि और पशुपालन एक दूसरे के पूरक रहे हैं। श्री क्रोबर के अनुसार सभी फसलें एक निश्चित स्थान पर पैदा नही की गईं। जौ, गेहूँ अफगानिस्तान से अबीसीनिया तक पैदा किये जाते थे। इसी क्षेत्र से यूरोप की फसलें और पशु संबंधित हैं। दूसरा प्रमुख क्षेत्र दक्षिण-पूर्वी एशिया का माना जाता था जहाँ चावल, गन्ना, मुर्गियाँ और भैसे आदि आरभ मे पैदा किये गये या पाले गये।[1] कुछ मानव-शास्त्रियों के अनुसार पशुपालन विशेष रूप से उत्तर-पाषाणयुग (Neolithic Era) की देन है जिसका मैसोपोटेमिया से लगाकर चीनी तुर्किस्तान तक का क्षेत्र सभवत. सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र था। इसके अतिरिक्त अन्य कम महत्व वाले क्षेत्र भी थे। प्रथम क्षेत्र में गाय भैंस, सुअर, भेड तथा बकरियाँ अधिक पाली जाती थी और दूसरे क्षेत्रो में घोड़ा, ऊँट, कुत्ते आदि। मैसोपोटेमिया मिश्र और उत्तर-पश्चिमी भारत मे चौपाये तथा अन्य पशु ईसा के ३००० वर्ष पूर्व भी काम में लाये जाते थे। यह निश्चित रूप से माना जाता है कि पशु पालने का कार्य सबसे पहले कृषको द्वारा ही किया गया। सबसे पहले कुत्ता ही पाला गया। बाल्टिक प्रदेश मे १०,००० वर्ष पूर्व के इसके प्रमाण मिले हैं। यह सम्भवतः आर्कटिक भालू से संबंधित रहा है। वर्तमान गधा उत्तरी अफ्रीकी जंगली गधे का ही परिवर्तित रूप माना जाता है। चौपायो की मातृभूमि दक्षिण पश्चिमी एशिया को माना जाता है। जेबू अथवा कूबड़दार चौपाये और भैसे भारत मे पाले जाते थे। भेडें और बकरियाँ पश्चिमी एशिया के अनातोलिया पठार से लगाकर हिंदुकुश तक के क्षेत्र मे सबसे पहले पाली गई जहाँ आज भी ये जंगली अवस्था में मिलती हैं। इनका आदि-स्थान मध्य एशिया के घास के मैदान माने जाते हैं। सुअर मिश्र और चीन मे उत्तर-पाषाण युग मे ही पाले गये थे। घोडो की प्राचीन मातृभूमि भी मध्य एशिया के मैदान ही हैं। ताम्रयुग मे इनका उपयोग रथ खीचने, बोझा ढोने और बलि चढाने के लिए किया जाता था। मुर्गे-मुर्गियो का भारत से आरम्भ हुआ माना जाता है और यहीं से ये दक्षिणी पूर्वी तथा पश्चिमी एशिया मे फैले। यूरोप मे सबसे पहले इनको इटली मे ईसा के ७०० वर्ष पूर्व ले जाया गया। प्राचीनकाल में इनका उपयोग बलि देने के लिए तथा मुर्गो की कुश्तियाँ कराने के लिए किया जाता था। आज इनका महत्व अडो के लिए अधिक है। इन पशुओ के अतिरिक्त अनेक प्रकार की चिडियो तथा दो कीडो (शहद की मक्खी और

1. *A. L. Krober*, **Anthropology**, p. 691

ह्वेल मछली का शिकार—गहरे समुद्री जन्तुओं में ह्वेल ही ऐसी है जो तट से काफी दूरी पर पकडी जाती हैं। ह्वेल का शिकार मुख्यत. एक प्राचीन उद्योग है। उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे न्यू इगलैंड का यह महत्वपूर्ण उद्योग था। उस समय ह्वेल के तेल से घरो मे दीपक जलाये जाते थे। ह्वेल मछलियों की निरन्तर कमी और पेट्रोल के उत्पादन मे उत्तरोत्तर वृद्धि से यह उद्योग अवनत होता गया। फिर भी द्वितीय महायुद्ध के पूर्व (१६३५–३६) तक एक अरब पौंड ह्वेल के तेल का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हुआ जो समस्त संसार के तेल और चर्बी के व्यापार का १०% था। युद्ध के समय ह्वेल के शिकार मे भारी कमी हो जाने से उत्पादन काफी कम हो गया युद्ध के बाद तेल का उत्पादन पुनः ८ करोड पौंड पहुँच गया।

आजकल ह्वेल की पकड का ६/१० भाग दक्षिणी ध्रुव सागर में न्यूजीलैंड और दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी भाग से प्राप्त होता है। ह्वेल के शिकार मे वैसे २०से अधिक देश भाग लेते है किन्तु प्रमुख स्थान नार्वे, ब्रिटेन, जापान और रूस का है। इन देशो के बडे जहाजी बेडे ६/१० भाग से अधिक ह्वेल पकडते हैं। नार्वे अकेला आधी से अधिक ह्वेल पकड़ता है। पूर्व समय मे ह्वेल की कई किस्में पकडी जाती थी किन्तु आजकल नीली, फिन, और कुबड़ वाली ह्वेल ही अधिक पकडी जाती हैं। ह्वेल को पकडने के तरीके अन्य मछलियो से बिल्कुल भिन्न होते है। दक्षिणी जार्जिया, दक्षिणी आर्कनी और दक्षिणी शेटलैंड द्वीप में कई बडे-बडे ह्वेल पकड़ने के लिये स्टेशन बना दिये गये है। इन स्टेशनो के अतिरिक्त कई तैरने वाले कारखाने भी रहते है। प्रत्येक ऐसे कारखाने के साथ अनेक छोटे-छोटे स्टीमर रहते हैं जो ह्वेल की खोज करते है और उन्हे मारकर खीच लाते हैं। कारखाने मे ह्वेल से तेल, मॉस और खाद तैयार किया जाता है।



चित्र ४२. ह्वेल पकडने के क्षेत्र

आर्थिक दृष्टिकोण से ह्वेल मछली का शिकार करना बड़ा महत्वपूर्ण है। यह खुली जगह का जन्तु है। उत्तरी गोलार्द्ध मे तो अब यह जन्तु नाममात्र के लिये ही रह गई है, किन्तु दक्षिणी जलों मे प्रधानत पकडी जाती है। ब्रिटेन, नार्वे, जर्मनी और जापानी लोग ह्वेल का शिकार करते हैं। इसके पकड़ने के दो मुख्य क्षेत्र है—

(ग) सूअर की जाति	सूअर	यूरोप, एशिया
(घ) हिरण की जाति	रेंडियर	आर्कटिक प्रदेश
(ङ) ऊँट की जाति	एक कुवड वाला ऊँट	अरब
	दो कुवड़ वाला ऊँट	मध्य एशिया
	लामा	पीरू
	अल्पाका	ऐंडिज
अन्य पशु	कुत्ता	जन्मस्थान अनिश्चित
	बिल्ली	संभवत. उत्तरी अफ्रीका
	नेवला	भारत
	खरगोश	प० भूमध्य सागरीय देश
चिडियायें	मुर्गी	भारत
	टर्की	मेक्सिको
	गिनी फाऊल	सभवत: प० अफ्रीका
	पी-फाऊल	भारत
	बतख	उत्तरी अमरीका, एशिया
	हस	उत्तरी यूरोप(?)
	स्वान	मध्य यूरोप, मध्य एशिया
	कबूतर	भूमध्यसागरीय प्रदेश से चीन तक
	शुतुर्मुर्ग	उत्तरी अफ्रीका
कीडे	रेशम का कीडा	चीन
	शहद की मक्खी	भूमध्यसागरीय प्रदेप (?)

निम्न तालिका मे पालतू पशुओ की सख्या बताई गई है :—

पृथ्वी पर पालतू पशुओ की सख्या (१९६१)

भेड	९० करोड़	ऊँट	६० लाख
गाय-बैल	८६ ,,	रेंडियर	२० ,,
सूअर	३९ ,,	लामा और अल्पाका	२० ,,
बकरी	११ ,,	मुर्गियाँ	१ अरब ९० करोड
घोड़े	७ करोड ३२ लाख	बत्तकें	११ करोड
गदहे	३ करोड ५६ लाख	हस	७ करोड ५ लाख
खच्चर	१ करोड ८४ लाख	टर्की	२ करोड ३० लाख
भैंस	७ करोड ३० लाख		

पशुओं का मानव के लिए महत्व

मानव जीवन के लिए पशुओ का कितना महत्व है यह इन तथ्यो से स्पष्ट होता है [५] :—

5. *E. B. Shaw*, **World Economic Geography**, pp. 170-171.

इस कार्य के लिये फैक्टरियाँ बनी हुई हैं जो या तो बड़े-बड़े जहाजों पर ही रहती हैं या ह्वेल पकड़ने के क्षेत्रों के निकट स्थल की फैक्टरियों में मास को उबालकर सुखा लेते हैं। हड्डी का चूर्ण बनाकर खाद तथा पशुओं का भोजन प्राप्त किया जाता है। इससे मछली का तेल, मारगरीन, ग्लिसरीन, वार्निश, गोंद, मशीन को चिकना करने



चित्र ४३ मोती की सीपी

वाला तेल आदि बनाया जाता है। एटार्कटिका में दक्षिणी जार्जिया में एक ८६ फुट लम्बी ह्वेल का शिकार किया गया जिससे १,२४,४३६ पौंड मास, ५६,५५० पौंड ब्लबर, ४६,६०८ पौंड हड्डियाँ, ६,६६२ पौंड जीभ, २,७०३ पौंड फेफड़े और १,३६१ पौंड हृदय मिला।[९]

सील (Seal)—सील मछली अपने रूएदार बालों के लिये ही पकड़ी जाती है। एलास्का के तट से कुछ दूर प्रिबीलोफ द्वीपसमूह सील के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। यह दक्षिणी गोलार्द्ध में हार्न अन्तरीप, द० अफ्रीका, द० आस्ट्रेलिया व न्यूजीलैण्ड में भी मिलती है। प्रमुख पकड़ने वाले देश ब्रिटेन, कनाडा, रूस, जापान और सं० रा० अमेरिका है।

मछली का व्यापार व उपभोग

मछली का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार केवल नाममात्र के लिये है क्योंकि अधिकतर मछलियाँ स्थानीय उपभोग के लिये ही पकड़ी जाती है। अब शीत भंडार की

9. *E. B. Shaw*, **World Economic Geography**, p. 212.

पालने योग्य हैं जो या तो पाचक या मीठा दूध दे सकें या खाने योग्य गोश्त अथवा वस्त्रादि या अन्य उपयोगो के लिए खाले, चमड़ा, रेशे आदि दे सकें। उन्ही के अनुसार ऐसे पशुओ मे ये गुण होने चाहिए :—

(१) उनमे जनन-क्रिया द्वारा बहुत ही जल्दी वृद्धि होने की क्षमता हो। उनके बच्चे जल्दी-जल्दी, अधिक सख्या मे उत्पन्न हों और वे शीघ्र बढ़ें।

(२) वे घास पर अथवा साधारण वस्तुओ पर जीवित रह सकें, जो सामान्यतः सभी जगह मिल सके।

(३) वह इतना बडा हो जिससे पर्याप्त मात्रा मे दूध अथवा मास मिल सके या जो माल ले जाने के उपयुक्त हो।

(४) यह पशु भयानक न हो उनकी देखभाल सरलता से हो सके। वह झुंड मे रहना पसद करे तथा उसके पालने मे कम व्यय और सुविधा हो।

(५) इनमे इतनी बुद्धि हो कि वे मनुष्यो द्वारा दी जाने वाली सीख को समझ सकें।

इन गुणों के अनुसार जो पशु पाले गए है वे इस प्रकार हैं :—कुत्ता, हाथी, गदहा, घोड़ा, चौपाये, रेंडियर, ऊँट, लामा, भेड, बकरियाँ, सूअर, अलपाका।

विश्व मे पाये जाने वाले पशुओ को दो वर्गों में रक्खा जा सकता है.—(१) चौपाये (Cattle)—गाय, भैंस, भेड, बकरी, सूअर और मुर्गी जो कि मनुष्य के भोजन के साधन हैं, और (२) लद्दू जानवर (Draught animals)—घोड़े, खच्चर, गधे, बैल, रेंडियर, याक, लामा, ऊँट और हाथी जो मनुष्यों की सवारी और बोझा लादने के काम मे लाये जाते है।

पशु-पालन के लिए आवश्यक बातें

(१) सम जलवायु वाले स्थानो मे जहाँ तापक्रम ६०° से ९०° फा० तक और वर्षा २०" से ३०" तक होती हो पशुपालन का व्यवसाय सुगमता से चल सकता है क्योंकि ऐसे स्थानों में पशुओ के लिए रहने के मकानो की आवश्यकता नही होती। अत स्टैपी और रूमसागरीय समशीतोष्ण प्रदेश इस व्यवसाय के लिये आदर्श क्षेत्र हैं।

(२) पशुओ को चराने के लिये विस्तृत चरागाह होने चाहिये जिससें सस्ता चारा प्राप्त हो सके। इसी से उत्तरी अमेरिका के 'प्रेरीज', यूरेशिया के 'स्टैपी' अफ्रीका के 'वेल्ड' तथा 'सवाना', दक्षिणी अमेरिका के 'लानोस', 'पेम्पास' तथा 'कम्पास' और आस्ट्रेलिया के 'डार्लिंग डाउन्स' पशु चराने के लिये विश्व विख्यात हैं।

(३) स्वास्थ्यप्रद वातावरण हो जिससे पशुओं मे रोग न फैले। उष्ण प्रदेशों मे अनेक जहरीले कीडे होते हैं जिनके काटने से पशु रोगी हो जाते हैं, उदाहरणार्थ ब्राजील की बरनी मक्खी (Berny Fly) या अफ्रीका की टीसीटीसी मक्खी जिनके काटने से पशुओ को नीद की बीमारी लग जाती है।

(४) पीने को स्वच्छ पानी उपलब्ध हो।

समशीतोष्ण कटिबन्धीय पशु उष्ण कटिबन्धीय भागों की अपेक्षा सुडौल तथा स्वस्थ होते हैं। गोश्त के लिए काटे जाने वाले पशुओ का औसत भार लगभग

देश मछलियों का अध्ययन करने के लिये विशेषज्ञ रखते हैं। कई देश विशाल मात्रा में मछलियों को तटीय समुद्रों में भीतरी जलाशयों मे जमा रखते हैं। वहाँ उनको पैदा भी करते हैं। ऐसे भागो मे मछलियो का उद्योग कृषि के आधार पर चलाया जाता है। छोटे-छोटे तालावों, नदियो और तटीय समुद्रों में आयस्टर व अन्य मछलियो को रखकर प्रति वर्ष उनकी उम्दा फसल की जाती है। किन्तु यदि मछली व्यवसाय को एक महत्वपूर्ण उद्योग बनाये रखना है तो अभी बहुत कुछ करना पड़ेगा। वैज्ञानिक आधार पर मछलियों की आदत और उनके 'जीवन इतिहास' की खोज, ऐसे सरकारी नियम जो मछलियो को पर्याप्त संख्या मे बढ़ने में योग दे सकें, बड़े खानों वाली जाली जिससे छोटी मछलियाँ सुरक्षित रह सकें, मछलियो के पकडने की निर्धारित मात्रा जिससे माँग से अधिक न पकडी जा सकें और उनकी कीमत बहुत अधिक न गिर सके आदि बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

प्रश्न

१. विश्व में मछली पकडने का भौगोलिक आधार क्या है ? इस सम्बन्ध में न्यूफाउन्डलैण्ड के निकट मछली पकड़ने के लिये जो सविधायें पाई जाती हैं उनका वर्णन करिये।

२. उत्तरी अटलान्टिक के मछली पकड़ने वाले क्षेत्र का महत्व बताइये।

३. क्या कारण है कि मछली पकड़ने के केन्द्र शीतोष्ण कटिबन्ध में ही पाये जाते हैं ?

४. "संसार के तटीय देशों के लोगों के भोजन में मछली का स्थान मुख्य है।" इस कथन की पुष्टि करते हुए संसार के प्रमुख मछली पकड़ने वाले केन्द्रों को बताइये।

५. समुद्र से कौन-कौन से व्यापारिक पदार्थ मिलते है ? संक्षेप में उन पर अवलंबित उद्योगों का भी वर्णन करिये।

६. संसार के मछली व्यवसाय के मुख्य केन्द्रों का वर्णन करिये और उनके स्थानीयकरण के कारण भी बताइये। मछली पर आधारित मुख्य उपयोग क्या है ?

७. भारत में मछली व्यवसाय इतना पिछड़ी दशा में क्यों है ? इस उद्योग के लिये आजकल क्या किया जा रहा है ?

८. संसार में मछली व्यवसाय के केन्द्रों का कारण सहित वर्णन करिये। मछली से क्या-क्या वस्तुऐं मिलती हैं ? अपनी खाद्यान्न समस्या को सुलझाने के लिये भारत ने इस उद्योग के विकास हेतु क्या किया है ?

चौपायों का वितरण (लाख मे)

देश	१९३६–४०	१९६०	देश	१९३६–४०	१९६०
भारत	—	१२८६	जर्मनी	१६१	१५३
स० रा० अमेरिका	६६७	९६८	फ्रास	१५५	१७६
ब्राजील	४०७	६३६	आस्ट्रेलिया	१३३	२७५
रूस	५९८	६७०	द० अफ्रीका	११६	१२०
अर्जेन्टाइना	३३८	४५४	मैक्सिको	११७	२०५
यूरेग्वे	६४३	—	कनाडा	—	९७
चीन	२४०	—	योग (विश्व)	७३३४	८६००

(२) दुग्ध उत्पादन के लिये उत्तम जलवायु वह है जिसमे शीतकाल मे तापक्रम हिमांक विन्दु से नीचे नही जाता तथा ग्रीष्म-कालीन तापक्रम ८०° फा० से ऊँचा नही होता—औसत तौर पर यह ६५° फा० होना चाहिये । इस प्रदेश के न्यून तापक्रम दुग्ध तथा उससे बनी अन्य वस्तुओ को बहुत समय तक बिगड़ने नही देते ।[7]

(३) दूध का धन्धा सामुद्रिक जलवायु मे सर्वाधिक उन्नत है क्योकि वहाँ ठंढ अधिक नही पडती है और इसीलिये पशुओ की ठढक से रक्षा करने मे व्यय नही करना पडता है । वहाँ के पशु वर्ष भर खुले मैदान मे रहते हैं, केवल उनकी रक्षा के निमित्त घर बनाने पड़ते है ।

(४) पशुओ की देखभाल करने को अधिक श्रम की आवश्यकता पडती है अत उत्पादन का धन्धा वहीं किया जाता है जहाँ जनसंख्या अधिक होती है । घने बसे देशो मे यह गहरी खेती के साथ किया जाता है ।

(५) हरे घास के अतिरिक्त पशुओ के लिये चारा, भूसा, अनाज आदि भी विस्तृत मात्रा मे पैदा किया जाना चाहिये ।

दुग्ध उत्पादन—दुग्ध आमतौर पर तीन रूप मे मिलता है—दूध (ताजा या पाउडर), मक्खन और पनीर । ताजा दूध अधिकतर आबादी के बड़े केन्द्रो पर ही मिलता है । गाढा दूध (जो कि ताजे दूध को उबाल कर रबड़ी की भाँति गाढा किया जाता है और बाद मे कुछ चीनी भी मिला दी जाती है) आस्ट्रेलिया, हॉलैण्ड, बेल्जियम, फ्रास और नार्वे से प्राप्त होता है । दूध पाउडर के रूप मे भी आता है ।

एक औसत गाय प्रतिवर्ष ३,००० से ४,००० पौंड; बकरी ५०० से १,००० पौंड और भेड़ १०० पौंड से भी कम दूध देती है ।[8]

१९६० मे विश्व मे २,५३,२०० हजार मैट्रिक टन दूध का उत्पादन हुआ था,

7. *E Huntington*, **Principles of Economic Geography**, p. 281.
8. *E. B. Shaw*, **World Economic Geography**, p. 193.

रेशम का कीड़ा) को भी पाला गया है। रेशम का कीडा पहले चीन में पाया गया, वहाँ से इसे भारत, ईरान, और अन्ततः भूमध्य सागरीय देशो को लेजाया गया। इगलैड, मैक्सिको तथा वरजीनिया मे भी इसे ले जाने के प्रयास किये गये। बतखो और हंसो का जन्मस्थान मिश्र तथा चीन को माना जाता है। दक्षिण अमरीका तथा उत्तरी अमरीका मे लामा, अलपाका, विकूना, गिन्नी-सुअर तथा मस्कोवी-डक (Muscovy duck) पीरु मे; टर्की (Turkey) मैक्सिको और दक्षिणी-पश्चिमी भाग मे; न काटने वाली अमरीकी मक्खी मैक्सिको और मध्य अमरीका मे पालने के प्रयास किये गये हैं।[2] यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि ज्यो-ज्यो अनाजो और पशुओ की जातियाँ बढती गईं त्यों-त्यो उनमे परिवर्तन होते गये। इसका प्रमाण चीन और संयुक्त राज्य अमरीका मे पाई जाने वाली अनाजो और पशुओ की जातियो से मिलता है। पशुओं और अनाजो की जातियो मे मिश्रण भी हुआ है। इससे जो वर्णशकर जातियाँ निकली है वे बडी अच्छी मानी गई है।

प्रो० ब्रुह्स के अनुसार कृषि तथा पशुपालन मिश्र और चीन जैसी प्राचीन सभ्यताओ से भी अधिक प्राचीन है। किन्तु आश्चर्यजनक बात तो यह है कि प्राचीन युग मे मानव ने जिन अनाजो और पशुओं को अपने उपयोग के लिए पाला था, उनकी संख्या मे वर्तमान सभ्य मानव ने कोई विशेष सख्या-वृद्धि नही की। अब तक मानव ने बहुत ही थोडे पशुओ को पालतू बनाया है। धरातल पर ३,५०० प्रकार के स्तनपोषी पशुओ मे से केवल १९ पशु, १३,००० प्रकार की चिडियो मे से केवल ६, और ४,७०,००० कीडो मे से केवल दो प्रकार के कीडो को ही पालतू बनाया है। रेंगने वाले पशुओ की ३,५०० जातियाँ, एम्फीबिया की १४०० जातियाँ और मछलियो की १३,००० जातियो मे से एक को भी पालतू नही बनाया गया है।[3]

पाले गए पशुओ की मुख्य जातियाँ और उनके जन्मस्थान इस प्रकार हैं।[4]:—

विश्व के पालतू पशु

स्तनपोषी (mamals)

(क) घोडे की जाति	घोड़ा	मध्य एशिया
	गदहा	उत्तरी अफ्रीका
(ख) चौपायो की जाति	साधारण चौपाये	यूरोप
	कुबडदार जेबू और गला	भारत, अफ्रीका
	गयाल	भारत
	जावा के चौपाये	पूर्वी द्वीप समूह
	याक	तिब्बत-हिमालय
	भैंसा	भारत
	भेड	पश्चिमी एशिया
	बकरी	,,

2. *R. L. Beals and H. Hoijer*, **An Introduction to Anthropology**, 1959, pp. 354-357.

3. *E. Huntington, F. E Williams and S. V. Valkenburg*, **Economic and Social Geography**, 1933, p. 400.

4. *Huntington, Williams and Valkenburg*, **Op. Cit.**, p. 401.

प० जर्मनी	२६०	४०३
ब्रिटेन	९७	२२
कनाडा	४१	१५३
आस्ट्रेलिया	३५	२०५
नीदरलैण्ड	१३०	६२
डेनमार्क	१०७	१५७
स्वीडेन	५१	८६
न्यूजीलैंड	१८०	२२०

उत्पादन के क्षेत्र—दूध का धन्धा विश्व के तीन क्षेत्रों में अधिक विकसित है—(i) उत्तरी अमेरिका के पूर्वी समुद्र तट के समीप, (ii) पश्चिमी यूरोप, (आयरलैंड, इङ्गलैण्ड, डेनमार्क, बेल्जियम, उत्तरी फ्रांस, हॉलैण्ड तथा जर्मनी), और (iii) दक्षिणी पूर्वी आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड।



चित्र ४५. प्रमुख देशों में चौपायों का सापेक्षिक महत्त्व

दूध के लिए पशुपालक क्षेत्र (क) उत्तरी अमेरिका

(१) कनाडा—कनाडा का पूर्वी भाग—जिसमें न्यूब्रंसविक, नोवास्कोशिया, प्रिंस-एडवर्ड द्वीप, ऑन्टेरियो तथा क्यूबेक के प्रान्त सम्मिलित हैं—पहाड़ी होने के कारण खेती के लिये अनुपयुक्त है किन्तु जलवायु दूध के पशु पालने के अनुकूल है। अतएव आरम्भ से ही यहाँ के किसान दूध उत्पादन का धंधा करते आये हैं। पूर्वी कनाडा में बड़े-बड़े औद्योगिक केन्द्र न होने के कारण ताजे दूध की अधिक खपत नहीं है। इसके विपरीत इस प्रदेश में बहुत अधिक राशि में दूध उत्पन्न होता है। अस्तु, आवश्यकता से अधिक दूध का पनीर बनाया जाता है। क्यूबेक तथा ऑन्टेरियो में चार हजार के लगभग पनीर बनाने के कारखाने हैं। कनाडा का पनीर अधिकतर ब्रिटेन को भेजा जाता है। यहाँ का पनीर बहुत अच्छा होता है। यह ब्रिटेन की मक्खन की माँग का ३% और पनीर की माँग का ३२% पूरा करता है।

कनाडा में १९६१ में दूध, मक्खन, और पनीर आदि ५,००० लाख डालर के मूल्य के उत्पन्न किये गये। इस वर्ष कनाडा में १७३० करोड़ पौंड दूध, ३१ करोड़ पौंड मक्खन और ८ करोड़ पौंड पनीर पैदा किया गया।

(२) संयुक्त-राज्य—संयुक्त राज्य अमेरिका की उत्तर-पूर्वी रियासतों में भी दूध का धन्धा बहुत उन्नत दशा में है। न्यू इङ्गलैण्ड और पैन्सिलवानिया से बड़े-बड़े

पशुओं से प्राप्त होने वाले भोज्य-पदार्थों का महत्व वनस्पति से प्राप्त मानव-भोजन का एक तिहाई है।

प्रतिवर्ष यातायात के लिए जितने पशु काम मे लाये जाते है उनका मूल्य २ अरब डालर आका गया है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, तथा न्यूजीलैंड और संयुक्त राज्य अमरीका को छोड़ कर विश्व के अन्य भागों मे लगभग २ अरब मनुष्य अपने यातायात तथा बोझा ढोने के लिए घोड़े, खच्चर, बैल और ऊंट आदि पशुओं पर ही निर्भर हैं।

पशुओ से प्राप्त होने वाले ऊन और चमड़े का वार्षिक मूल्य १ करोड डालर माना गया है। इसके अतिरिक्त पशुओ से मास, दूध, दही, पनीर, मक्खन, अडे और मछलियाँ आदि के रूप मे जो भोजन-सामग्री मिलती है, वह अपार है।

पशुओं से प्राप्त वस्तुयें गौण हैं परन्तु वे छोटे-छोटे उद्योगो में प्रयोग की जाती हैं। ये वस्तुयें हड्डी, सींग, खाल, चर्बी, खुर, समूर आदि है। हड्डियों से बटन, कघे और श्रृङ्गार की वस्तुयें बनती हैं। चमड़े व खाल से मनुष्य के काम की बहुत सी चीजें बनती है। जूतो के अतिरिक्त चमड़े के थैले, सन्दूक, सूटकेस, घोडों की जीनें, लगाम इत्यादि साज, कुर्सियाँ, मशीनों के पट्टे, मोटर की सीटें, बन्दूक के केस तथा अन्य आवश्यक चीजें बनाई जाती हैं। इसलिये चमड़े की माँग बराबर बढ़ती ही जा रही है। खाल और चमड़ा अधिकतर गाय, भैंस, घोडे, भेड़ और बकरियो से प्राप्त होता है। अर्जेन्टाइना, युरूग्वे, मध्य अमरीका, रूस, कनाडा और दक्षिणी अफ्रीका से विश्व में खालों की माँग की पूर्ति होती है। जर्मनी और संयुक्त राज्य में चमडा साफ करने और कमाने का काम होता है। यह चमडा गाय, बैल, भैंस की खाल से तैयार होता है। भारत, चीन, स्पेन और ब्राजील में बकरी की खालें मिलती हैं। इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये गौण वस्तुयें उन देशो मे अधिकतर होती है जहाँ मास का व्यवसाय होता है। ठढे शीतोष्ण प्रदेशों में बड़े बाल वाली लोमड़ियों, गिलहरियो और ऊदबिलावों से समूर या फरदार खालें प्राप्त होती हैं।

सच तो यह है कि पशु हमारे बहुत काम आते हैं। वे बोझा ढोते है और गाड़ी खींचते है। दलदली भूमि पर हाथी, पहाड़ी भूमि पर घोड़ा और याक तथा मरुस्थली भूमि पर ऊँट मनुष्य का बोझा ढोता है और सवारी के काम भी आता है। वर्तमान काल में यान्त्रिक साधनों की उन्नति के साथ-साथ पशुओं से बोझा ढोने का काम कम लिया जाता है फिर भी बहुत से प्रदेशों में यातायात व गमनागमन के लिये मनुष्य का एक मात्र सहारा पशु ही है। ध्रुव प्रदेशो मे रेनडियर व कुत्ते और कैरिबो ही बोझा ढोने के अतिरिक्त गमनागमन के एक मात्र साधन हैं। इसी प्रकार मरुस्थलो, भूमध्य-रेखीय घने जंगलों और पहाडी प्रदेशों में मनुष्य का एक मात्र सहारा पशु ही है। भारत और अन्य एशियाई कृषि प्रधान देशों मे जुताई से लेकर सभी खेती का काम पशुओ से ही लिया जाता है। यूरोप और अमेरिका मे वैज्ञानिक रीति से खेती की जाती है परन्तु फिर भी घोड़े खेती का एक विशेष सहारा हैं।

पालने योग्य पशु

पशु पालन मे मनुष्य ने उन्ही पशुओ को सम्मिलित किया है जिनमे उसे या तो भोजन मिल सके या जो माल लादने के काम आ सकें अथवा जिनसे अन्य उपयोगी वस्तुयें मिल सकें। श्री हटिंगटन के मतानुसार वस्तु-उत्पादन की दृष्टि से वे पशु

पश्चिमी फ्रास, हॉलैण्ड, डेनमार्क, स्वीडेन और रूस तक फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त आयरलैंड भी बहुत अधिक मक्खन बनाता है। उत्तरी फ्रास मे बहुत अच्छा मक्खन तैयार होता है जो लन्दन और पैरिस को जाता है। फ्रास मे लगभग १५० लाख पशु है जिनके दूध से पोर्ट-सेलूट, ग्रूयीर तथा कैमबर्ट नामक उत्तम प्रकार का मक्खन बनाया जाता है। इङ्गलिश चैनल के द्वीपो का मुख्य धन्धा मक्खन बनाना है। हॉलैण्ड तो बहुत प्राचीन काल से दूध के पशुओ के लिए प्रसिद्ध है। हॉलैण्ड के बहुत नम मैदान जिन पर बहुत अच्छी मिट्टी बिछी हुई है खेती के योग्य नही है किन्तु उन पर बहुत अच्छा चारा और घास उत्पन्न होती है। इन्ही उपजाऊ घास के मैदानों पर डच किसान अपनी गायो को चराता है। यहाँ होलस्टीन और फ्रीजीयन जाति की उत्तम गायो से बहुत अधिक दूध प्राप्त होता है।

डेनमार्क मक्खन बनाने मे ससार मे सर्वश्रेष्ठ है। डेनमार्क के मक्खन की प्रसिद्धि ससारव्यापी है। ऐसा कोई देश नही है जहाँ गृहस्थों के भोजन-गृह में डेनमार्क का मक्खन काम में न लाया जाता हो। सच तो यह है कि समस्त डेनमार्क एक विशाल गऊशाला है। दूध उत्पन्न करना डेनमार्क के किसानो का मुख्य धन्धा है। मक्खन के धन्धे की आशातीत उन्नति होने के कारण डेनमार्क में अधिकाश भूमि चारा उत्पन्न करने के काम आती है और डेनमार्क अनाज बाहर से मँगाता है। डेनमार्क मे मक्खन बनाने के एक हजार से अधिक कारखाने हैं। डेनमार्क की दुग्धशालाओं की विशेष महत्ता निम्नाकित कारणों से है :—

(१) यहाँ न तो कोयला और लोहा पाया जाता है और न हो जलशक्ति तथा कच्चा सामान ही उत्पन्न होता है।

(२) यहाँ की जलवायु घास इत्यादि की उत्पत्ति के लिए विशेष रूप से अनुकूल है।

(३) यहाँ के अधिकाश खेत बहुत छोटे है जिनकी प्रत्येक कुटुम्ब को छोटे-छोटे खेतों से ही अधिक मात्रा मे उपज प्राप्त करना अनिवार्य होता है।

(४) यहाँ कृषि योग्य भूमि को खेती की अपेक्षा पशुओ को चारा उगाने के उपयोग मे लाने की पूर्ण व्यवस्था करली गई है। इस प्रकार घास के मैदानों के उतने ही क्षेत्रफल मे अधिक पशुओ का निर्वाह हो सकता है।

(५) यहाँ की दुग्धशालाओ मे से ८८% का संचालन तथा ९२% दूध का काम सहकारी समितियों द्वारा ही होता है। यही समितियाँ अपने सदस्यों की वस्तुओ को उच्चतम मूल्य पर श्रेष्ठतम श्रेणी की वस्तुएँ बिकवाती है। इस समय सारे देश मे लगभग ९½ हजार समितियाँ कार्य कर रही है। ८०% दूध का मक्खन तथा १०% का पनीर और गाढा दूध बनाया जाता है तथा शेष दूध घरेलू उपभोग मे लाया जाता है।

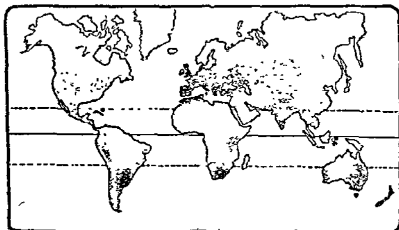
इसके अतिरिक्त स्वीडेन, उत्तर-पश्चिम जर्मनी, स्विट्जरलैण्ड तथा रूस मे भी दूध और मक्खन का धन्धा महत्वपूर्ण है। स्विट्जरलैण्ड मे पहाडी ढालो के घास पर बहुत गाये पाली जाती है जिनसे दूध, मक्खन, पनीर, सूखा दूध और दूध के चाकलेट प्राप्त कर विश्व के देशों को निर्यात किया जाता है।

यूरोप तथा अमेरिका मे दूध के पशु की नस्ल को बहुत अच्छा बनाने का प्रयत्न किया गया है। हॉलैण्ड और डेनमार्क मे १६ सेर से कम प्रतिदिन दूध देने

९०० पौंड होता है परन्तु शुष्क भागों मे यह कम होते-होते ४५० पौंड तक ही रह जाता है।[6]

चौपाये (Cattle)

'चौपाये' शब्द शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में पाले जाने वाले पशुओं के लिए प्रयुक्त किया जाता है किन्तु उनका सबसे अच्छा विकास उष्ण और अर्द्ध-उष्ण भागों के सूखे प्रदेशों मे माना गया है जैसे भारत का पश्चिमी भाग, सूडान और पूर्वी अफ्रीका। चौपाये साधारणतया या तो दुग्ध पदार्थों (*Dairy Products*) के लिये या गोश्त के लिये पाले जाते हैं। दूध देने वाले जानवर घनी आबादी वाले केन्द्रों



चित्र ४४. विश्व मे चौपायो का वितरण

के पास ही पाले जाते हैं क्योंकि दुग्ध पदार्थ शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। यातायात के आधुनिक साधनों की सुविधा और शीत भंडारों के प्रचलित होने के कारण दुग्ध-पदार्थ अब खपत केन्द्रों से दूरस्थ स्थानों में भी पैदा किये जाने लगे है। किन्तु गोश्त देने वाले जानवर नये देशो मे खुले हुए घास के मैदानो मे पाले जाते हैं क्योंकि ये मैदान खेती के लिये उपयुक्त नही होते। एशिया में तो अधिकाश पशु बोझा ढोने के लिये ही पाले जाते है जबकि इङ्गलैण्ड, डेनमार्क, नार्वे, संयुक्त राष्ट्र के पूर्वी भागों और न्यूजीलैण्ड के चौपाये दूध देने के लिये और कनाडा, अर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया आदि देशो मे गोश्त के लिये ही मुख्यतः पाले जाते हैं। अगले पृष्ठ की तालिका मे पशुओ का वितरण दिया गया है :—

दुग्ध उत्पादन की अवस्थायें

(१) दुग्ध-व्यवसाय विश्व के शीतल शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो में ही होता है। साधारणतया दूध देने वाले पशु शीतल शीतोष्ण कटिबंधीय भूमियो की आर्द्र जलवायु मे अधिक हृष्ट-पुष्ट रहते है, क्योंकि वहाँ की जलवायु घास के उगने मे अधिक सहायक होती है।

6 *E. Huntington*, **Principles of Economic Geography**, p. 278.

(घ) भारतवर्ष

भारत की प्रमुख पशु-पट्टी भारतीय मरुस्थल के चारों ओर—जहाँ वर्षा की मात्रा में अपेक्षाकृत कमी होती है—फैली हुई है। भारत मे पशु-पालन के ये क्षेत्र अन्य देशों की स्थिति के बिल्कुल समान ही हैं। पशु-पालन घास के उन मैदानो में होता है जो या तो मरुस्थलो की बाहरी सीमा पर स्थित है अथवा उन शुष्क भागो मे जहाँ प्रतिकूल प्राकृतिक रचना के कारण कृषि का विकास कठिन है। भारत के मुख्य पशु-पालन राज्य पंजाब, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि है। इन भागो मे वर्षा की मात्रा इतनी अधिक नही होती कि उत्तम घास पैदा हो सके। अत: चरवाहे अपने पशुओ के लिए खेतों में ऐसी फसल उगाते हैं जिनके डंठल पशुओं की चराई के काम आ सकें। किन्तु जिन भागों मे वर्षा पर्याप्त मात्रा मे होती है अथवा जहाँ सिंचाई के उत्तम साधन उपस्थित है वहाँ उत्तम पशु-पालन नही किया जाता। अत आसाम, पश्चिमी बंगाल, बिहार, उडीसा, केरल और मद्रास मे उत्तम श्रेणी के पशु नही पाये जाते। इन भागो के पशु दुबले-पतले, रोगी और कम दूध देने वाले होते हैं। यही कारण है कि अधिक आर्द्र भागों मे शुष्क भागो की अपेक्षा उतना ही दूध प्राप्त करने के लिये अपेक्षाकृत अधिक पशु पालने पड़ते है।

भारत मे गायो, बैलो और भैंसो की कई उत्तम नस्लें पाई जाती हैं, जैसे —

(क) गायों की नस्लें :—

(१) मद्रास मे आम्लवादी, बरगूर, ओंग्ल और कंग्याम।

(२) गुजरात मे गिर, किलारी, ककरेज।

(३) राजस्थान मे मालवी, मेवाती, रथ और थारपरकर।

(४) मध्य प्रदेश मे गोली, निमारी।

(५) पंजाब मे शाहीवाल, मोंटगोमरी।

(६) बंगाल मे सीरी।

(७) उत्तर प्रदेश मे केवारिया।

(८) मैसूर मे हल्लीकर।

(९) आंध्र मे देवानी।

(ख) बैलों की नस्लें :—

(१) मद्रास मे नैलोर और कंग्याम

(२) मैसूर मे अमृतमहल।

(३) गुजरात मे ककरेज, डागी और निमाड।

(४) उत्तर प्रदेश मे खैरीगढ।

(५) पंजाब में डागी, हिसार और हरियाना।

---

10 *C. B. Mamoria*, **Agricultural Problems of India**, 1963, pp. 129-130.

इसमें से २,२५,२०० हजार टन गाय; ७,७०० हु० टन बकरी, ४,८०० हु० टन भेड; तथा १५,५०० हजार टन भैस का दूध था। इङ्गलैण्ड मे जितना दूध पैदा होता है उसका ८०% ताजे दूध के रूप में वेचा जाता है। १५% का मक्खन और ५% का पनीर बनाया जाता है।

मक्खन (Butter) का उत्पादन अधिकाशत डेनमार्क, फ्रास, हॉलैंड, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड मे होता है। मक्खन का मुख्य निर्यात अमरीका को पश्चिमी यूरोपीय देशों से किया जाता है। शीत भडारो की सुविधा मे विकास होने से मक्खन, पनीर और दूध के व्यापार मे बड़ी उन्नति हुई है।

पनीर (Cheese)—अध-जमी दही की जमी हुई शक्ल की जैसी होती जिसके सबसे बड़े निर्यातक कनाडा, न्यूजीलैंड, इटली, स्विट्जरलैंड और हॉलैंड है।

आगे की तालिकाओ मे दूध, पनीर, मक्खन तथा जमे हुए दूध का उत्पादन बताया गया है :—

विश्व के प्रमुख देशो मे दूध का उत्पादन (००० मैट्रिक टनों मे)

देश	१९४२-५२	१९५८
भारत	१७,४९१	१७,८५६
सं० रा० अमरीका	५२,४५५	५६,८०८
कनाडा	७,०५१	८,१९८
इंगलैंड	९,९२०	११,६८०
नार्वे	१,५४८	१,६५५
डेनमार्क	४,९१५	५,१४९
स्वीडेन	४,६०९	३,९२७
नीदरलैंड	५,४४१	६,२४०
इटली	५,७२१	७,५००
पोलैंड	८ ३४३	११,८७१
न्यूजीलैंड	४,७३२	५,१००

विश्व मे मक्खन और पनीर का उत्पादन

(००० मैट्रिक टनो मे)

देश	पनीर १९५९-६०	मक्खन १९५९-६०
संयुक्त राज्य	७००	६४९
फ्रांस+इटली	७०५	४०७

मक्खन और पनीर का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार १२

(१० लाख पौंड में)

निर्यातक देश			आयातक देश		
देश	मक्खन	पनीर	देश	मक्खन	पनीर
नार्वे	४	—	बेल्जियम	५९	७१
आस्ट्रेलिया	७३	५७	फ्रांस	३३	३७
न्यूजीलैंड	३६०	२०६	जर्मनी	२०	९०
कनाडा	—	—	इटली	४१	३०
डेनमार्क	२५१	११९	स्विट्जरलैंड	१६	—
फिनलैंड	९	२९	ब्रिटेन	५८१	३०७
फ्रांस	—	३९	संयुक्त राष्ट्र	—	४९
नीदरलैण्ड्स	११०	१७२	कनाडा	—	१२
इटली	—	४०			
स्विट्जरलैण्ड	२१	—			
स्वीडन	—	—			

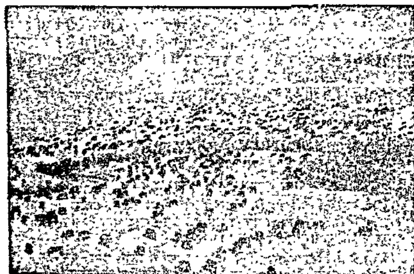
मांस का उद्योग (Meat Industry)

ठढे देशों मे मास मनुष्य के भोजन के लिए आवश्यक पदार्थ है। लाभ की अपेक्षा यह साधारणतया स्वाद के लिए ही खाया जाता है। पश्चिमी देशो मे इसकी खपत बहुत अधिक है। इसके विपरीत दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में इसकी खपत नाममात्र की है।

विश्व में गोश्त वाले चौपायो का वितरण एक सा नही है। जापान मे, जहाँ कि अधिकतर भूमि पहाडी है, जनसख्या के अनुसार जानवरों की संख्या बहुत ही कम है। यहाँ जनसंख्या का घनत्व ४०० से ५०० व्यक्ति प्रति वर्गमील है किन्तु ४० आदमियो के बीच मे सिर्फ एक गाय पडती है। दक्षिणी गोलार्द्ध के कम बसे हुये देशो मे—जैसे न्यूजीलैण्ड, अर्जेन्टाइना और आस्ट्रेलिया—जनसख्या के अनुसार चौपायो का अनुपात बहुत ऊँचा है। आस्ट्रेलिया में जनसख्या का घनत्व केवल १'८ मनुष्य प्रतिवर्ग मील है और वहाँ प्रति व्यक्ति २'९ चौपायों का औसत है। न्यूजीलैण्ड मे जन-सख्या १५ मनुष्य प्रति वर्ग मील है और प्रति व्यक्ति २'६ चौपाये है। भारतवर्ष मे दो व्यक्तियो के पीछे एक पशु आता है। किन्तु हमारे यहाँ गोश्त के लिये जानवर

12. *U. S. A. Deptt. of Agriculture*, **Agricultural Statistics**, 1953, pp. 432-36.

नगरों को तथा द० पू० विसकान्सिन और उ० इलीनास से शिकागो को दूध भेजा जाता है। विशेषकर न्यूयार्क और विसकान्सिन रियासतों में दूध तथा पनीर बहुत उत्पन्न होता है। उत्तर पूर्व की रियासतों की भूमि इतनी उपजाऊ नहीं है जितनी पश्चिमी रियासतों की। अस्तु, पश्चिमी भाग की तुलना में यहाँ खेती में लाभ कम है। इस कारण किसान दूध का धन्धा अधिक करता है। यद्यपि इस भाग में बड़े-बड़े औद्योगिक केन्द्र है और बहुत-सा दूध उनमें खप जाता है फिर भी दूध आवश्यकता से अधिक उत्पन्न होता है। उस दूध का पनीर बनाया जाता है। फिर भी सं० राष्ट्र अमेरिका पनीर बाहर से मँगाता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में नगरों की वृद्धि हो जाने से शहरी जनता में दूध की माँग अधिक बढ़ गई है। कुल दूध की उत्पत्ति का ४५% दूध द्रव के रूप में, ३५% मक्खन के रूप में, ५% सूखे दूध के रूप में, ६% पनीर के रूप में और ३% मलाई के बर्फ के रूप में प्रयुक्त होता है। कुछ दूध जानवरों को पिलाया जाता है और कुछ नष्ट हो जाता है।



चित्र ४६. सं० रा० अमेरिका में चौपायों का पालना

(ख) यूरोपीय देश

उत्तर-पश्चिम यूरोप में दूध के धन्धे के लिये बहुत ही अनुकूल स्थिति है। यहाँ की मिट्टी अच्छी है। जलवायु नम और ठंढी है जिसमें घास खूब उत्पन्न होती है और जनसंख्या भी घनी है। दूध के धन्धे के लिये यह आदर्श स्थिति है। इन देशों में कृषि इतनी महत्वपूर्ण नहीं कि वह आस्ट्रेलिया और अमेरिका की नई भूमि से प्रतिस्पर्धा कर सके। उत्तर-पश्चिमी यूरोप में दूध और मक्खन उत्पादक क्षेत्र

दक्षिणी अमेरिका—अर्जेन्टाइना, यूरेग्वे, पैरेग्वे तथा ब्राजील में मांस का धन्धा मुख्य है। यहाँ आरम्भ में पशुपालन इस कारण बढ गया कि यहाँ विस्तृत मैदानो पर अत्यन्त पौष्टिक घास उत्पन्न होती थी। यहाँ जाड़ा साधारण होता है। अत. यहाँ वर्ष भर पशुओ को खुले मे चराया जा सकता है। इस कारण भी यह धन्धा यहाँ केन्द्रित हो गया। इन घासों के अतिरिक्त अल्फाफा घास यहाँ खेतों पर बहुत अधिक उत्पन्न की जाती है जिसके कारण यहाँ अच्छे चारे की बहुतायत है। अर्जेन्टाइना तथा यूरेग्वे की जनसख्या बहुत कम होने के कारण यहाँ से मास यूरोप को बहुत अधिक भेजा जाता है। पम्पास के मैदान मे धूप मे सुखाया हुआ मांस (Jerked beef) रायोडी, सप्लाटा मे साजो (Tasago) और ब्राजील मे चार्क (Charque) कहलाता है। यह दूर-दूर के देशों को भेजा जाता है।

आस्ट्रेलिया—आस्ट्रेलिया मे यह उद्योग क्वीन्सलैन्ड तथा उत्तर-पश्चिमी आस्ट्रेलिया के अर्ध शुष्क प्रदेशो मे केन्द्रित है। आस्ट्रेलिया मे जनसंख्या बहुत कम है। इस कारण अधिकाश मास विदेशो (विशेषकर यूरोप) को भेजा जाता है। मास जमाकर भेजा जाता है क्योकि एक तो दूरी बहुत है दूसरे गर्म प्रदेश मे से होकर जाता है। न्यूजीलैन्ड से भी बहुत-सा गो-मास यूरोप भेजा जाता है।

यूरोप—यद्यपि यूरोप मे गाय-बैल बहुत है किन्तु वहाँ ब्रिटेन, रूस, स्पेन, फ्रास, इटली, जर्मनी और आयरलैण्ड के कुछ भागो को छोडकर इन पशुओं को मास के लिये नही पाला जाता। इनका उपयोग खेती के लिये अथवा दूध के लिये होता है। यद्यपि प्रत्येक यूरोपीय देश मे कुछ सीमा तक यह धन्धा होता है परन्तु जनसख्या बहुत अधिक होने के कारण यहाँ बाहर से बहुत मास मँगवाना पडता है।

मांस का व्यापार

अर्जेन्टाइना ससार मे सबसे अधिक गोश्त भेजने वाला देश है। इसके बाद न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क और सयुक्त राष्ट्र का स्थान है। दक्षिणी अमेरिका गोश्त के सारे निर्यात का ४०%, यूरोप २५% और उत्तरी अमरीका २५% गोश्त निर्यात करता है। ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रास और इटली मुख्य आयात करने वाले देश हैं। कुल आयात का ६०% यूरोप को आता है जिसमें से ६०% अकेला ब्रिटेन मंगा लेता है। विश्व के बाजारो मे जितना मास आता है उसका ½ गाय का (Beef), ⅓ सूअर का (Pork) और शेष भेड तथा मेमनों का (Mutton) होता है।

मास का अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय दोनों प्रकार का व्यापार शीत भण्डार के प्रचलन हो जाने से अधिक उन्नत हो गया है। शीत-भण्डार (Refrigeration) द्वारा मास दो दशाओ मे भेजा जाता है: (i) स्थानीय मास बर्फ मे रख लिया जाता है और माग होने पर निकाला जाता है, (ii) दूरवर्ती स्थानों को यातायात करने के लिये इसे उत्तमतर रीति से ठढा किया जाता है। शीत-भण्डार के प्रादुर्भाव ने दूरस्थ देशो (अर्जेन्टाइना, न्यूजीलैण्ड तथा सयुक्त-राज्य) को यूरोप के लिये मास उत्पन्न करने योग्य बना दिया है। इसके अतिरिक्त पहले पशुओ के जो भाग नष्ट हो जाते थे वह भी अब उपयोग मे आने लगे हैं। ऐसे भाग पशुओ के हृदय, मस्तिष्क, लिवर आदि हैं। जिन स्थानो मे मास को पेटियो मे बन्द करके रखा जाता है वहाँ भी अब पहले होने वाली हानि मे बचाव हो गया है। प्रति १०० पौंड भार वाले चौपाये, सुअर और भेड़ पीछे क्रमश. ५५ पौड (Beef), ७० पौंड (Hork) तथा ५० पौंड

वाली गायो को आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नही समझा जाता है। यहाँ की गायों का औसत उत्पादन १६ सेर से १८ सेर प्रतिदिन और किसी-किसी जाति की गाय का प्रतिदिन का औसत २० सेर भी होता है। उसकी तुलना मे भारत की गाय के दूध का औसत एक सेर प्रतिदिन है।[६] इसलिये भारतीय गायो को 'Tea Cup Cows' कहते हैं। -

(ग) आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड

आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड मक्खन और पनीर मँगाने वाले यूरोपीय देशों से बहुत दूर है परन्तु फिर भी यहाँ शीत भण्डार रीति के आविष्कार से घी-दूध का धन्धा पनप उठा है। आस्ट्रेलिया का पूर्वी तथा दक्षिणी समुद्र-तट, जो उत्तरी ब्रिस्बेन से लगाकर साउथ वेल्स होता हुआ विक्टोरिया तक है, इसके लिए प्रसिद्ध है। यहाँ ४०" तक वर्षा हो जाती है। यहाँ पशुओ के लिये चारा और भूसा बहुत उत्पन्न किया जाता है। यहाँ मक्खन तथा पनीर बनाने के कारखाने सर्वत्र पशु-पालन क्षेत्र में बिखरे हैं। यहाँ अच्छी जाति का मक्खन बनाये जाने का मुख्य कारण चमकीली धूप और खुली वायु में वर्ष भर ही गायों को चराने के लिये उत्तम घास मिल जाना है। यहाँ दूध देने वाली गायो की संख्या लगभग ५० लाख है। इनसे १९५०-५१ मे लगभग १,६५,००० टन मक्खन और ४४,५०० टन पनीर प्राप्त हुआ है तथा १९५५-५६ में १४,०५० लाख गैलन दूध प्राप्त हुआ। इसमें से ६८.८% मक्खन बनाने मे, ५.९% पनीर और ५.२% सुखाने मे तथा २०% द्रव्य-दूध के रूप मे काम मे लिया गया।

न्यूजीलैण्ड विशेषकर दूध के धन्धे में अधिक उन्नति कर गया है। न्यूजीलैंड का अधिकतर प्रदेश पहाडी होने के कारण वहाँ खेती अधिक नही हो सकती। अतएव न्यूजीलैण्ड के लिए दूध के धन्धे की उन्नति करना आवश्यक है। न्यूजीलैण्ड मे पानी बहुत बरसता है। इस कारण वहाँ अच्छी घास की बहुतायत है। न्यूजीलैण्ड सरकार ने मक्खन के धन्धे को बहुत प्रोत्साहन दिया है। इस कारण न्यूजीलैण्ड का मक्खन ब्रिटेन तथा अन्य यूरोपीय देशो में बहुत बिकता है। न्यूजीलैण्ड मे मुख्य दुग्ध उत्पादक क्षेत्र तराकी के मैदान तथा थेम्स और मध्यवर्ती बोकोटो के मैदान और आकलैण्ड प्राय-द्वीप मे फैला है। यहाँ गायो को मशीनों द्वारा ही दुहा जाता है। अत २-३ घण्टे मे दो-या तीन व्यक्तियों के सहयोग से ही १०० गायें दुह ली जाती है। दूध को मशीनो द्वारा ही शीशियो मे बन्द कर दिया जाता है। अवशेष दूध सूअर तथा बछड़ों को पिला दिया जाता है। उत्तम जलवायु के कारण यहाँ वर्ष भर ही पशु खुले मे चरते हैं। अत उनके लिए बाड़े आदि बनाने की आवश्यकता नही पडती। न्यूजीलैण्ड ने मक्खन बनाने मे इतनी अधिक उन्नति करली है कि डेनमार्क के बाद मक्खन बनाने वाले देशो मे उसका सबसे ऊँचा स्थान है। केवल मक्खन ही नही न्यूजीलैण्ड में पनीर भी बहुत तैयार होता है। प्रतिवर्ष न्यूजीलैण्ड से अधिकाधिक मक्खन और पनीर बाहर भेजा जाता है। इसके अतिरिक्त जमा हुआ दूध भी न्यूजीलैण्ड से बाहर भेजा जाता है। 'Glaxo' न्यूजीलैण्ड की ही उपज है।

---

६. प्रति गाय पीछे नीदरलैण्ड में ३८९० किलोग्राम; डेनमार्क में ३५६०, बेल्जियम और लक्समबर्ग में ३७६०; फ्रांस में २०५०; स्विट्जरलैंड में ३१४०; न्यूजीलैण्ड में २,८०, संयुक्त राष्ट्र में २५००, ब्रिटेन में २९०० किलोग्राम है।

ऊन दोनो उत्पन्न करती हैं। मांस उत्पन्न करने वाले देशो मे न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया अर्जेन्टाइना तथा यूरेग्वे मुख्य हैं।



चित्र ४७ आस्ट्रेलिया मे भेडो की चराई

भेड उन प्रदेशो मे नही पाली जाती जहाँ जनसख्या घनी है। इसका मुख्य कारण यह है कि (१) भेड, घोडा तथा गाय-बैलो को अपेक्षा अधिक सूखे तथा कम उपजाऊ और बीहड प्रदेशो मे जीवन निर्वाह कर सकती है। (२) भेड इतनी छोटी घास पर रह सकती है जिसको अन्य पशु कुतर भी नही सकते। (३) भेड पहाडो के ढालो पर बडी सरलता से चढ सकती है। बकरी को छोड़कर कोई अन्य ऐसा पशु नही जो पहाड़ो के ढालो पर इतनी सुविधा से चर सके। (४) भेड के लिये चारा ही यथेष्ट होता है, उसे दाने के रूप मे अनाज नही खिलाना पडता जैसा कि अन्य पशुओ को खिलाना पडता है। (५) इसके अतिरिक्त ऊन पशुओ द्वारा उत्पन्न की जाने वाली अन्य वस्तुओं (मास, दूध, मक्खन इत्यादि) की तुलना मे बहुत सरलता से एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजा जा सकता है। (६) भेडो को पालने मे एक बडी सुविधा यह है कि बहुत थोडे आदमी बहुत अधिक सख्या मे भेडो की देखभाल कर सकते है। (७) भेड एक ऐसा पशु है जो कठिन परिस्थिति मे भी रह सकता है। यही कारण है कि बहुत से द्वीप तथा प्रदेश, जहाँ खेती-बारी तथा दूसरे धन्धो के लिये परिस्थिति अनुकूल नही है, भेड पाल कर ऊन बाहर भेजते हैं। कुछ प्रदेश तो ऐसे है कि जहाँ भेड़ पालने के अतिरिक्त और कोई धन्धा ही नही होता। फाकलैण्ड तथा आइसलैंड के निवासियो का भेड़ चराना ही एकमात्र धन्धा है।

विश्व मे भेडों का वितरण आगे के पृष्ठ पर दिया गया है :—

(ग) भैंस की नस्लें :—

(१) पंजाब में मुर्रा।
(२) गुजरात में महसाना, जाफराबादी, पंढारपुरी और सूरती।
(३) मद्रास और आन्ध्र में टोडा, तेलंगाना, परलाकीमेदी।
(४) मध्य प्रदेश में नीली।
(५) आसाम में शाहधारी।

भारत में दूध का उत्पादन और उपभोग बहुत ही कम है। यह बड़े दुःख का विषय है कि भारत में सबसे अधिक पशु मिलते हैं किन्तु दूध देने वाले पशुओं की दूध देने की क्षमता बहुत ही कम है। भारत में अभी तक दुग्ध और घी व्यवसाय की अधिक उन्नति नहीं हो पाई है। यद्यपि कुछ बड़े पैमाने पर काम करने वाली दुग्ध-शालायें अलीगढ़ (Keventers), आगरा (राधास्वामी संस्था), आनन्द (पोलसन), ऐरे (बम्बई), और रायनकेरा (मैसूर) में स्थित हैं। सरकारी डेयरी फार्म कानपुर, मेरठ, अम्बाला और इलाहाबाद में हैं।

भारत में घी-दूध के धन्धे पूर्ण रूप से विकसित न होने के कई कारण हैं :—

(१) भारत के पशु साधारणतया छोटे, दुर्बल व क्षीणकाय होते हैं। उनकी दूध देने की क्षमता कम है। वे अल्पजीवी भी होते हैं। (२) भारत में उत्तम नस्ल के पशु केन्द्रों तथा वैज्ञानिक पशु सन्तति विज्ञान का सर्वथा अभाव है। (३) पशुओं के लिये उपयुक्त तथा पौष्टिक चारे की कमी है। अधिकांश भागों में घास पर्याप्त नहीं होती। उत्तरी भारत में खेती की अधिकता के कारण चरागाहों की कमी है। थोड़ी बहुत घास केवल वर्षाऋतु में ही होती है, किन्तु उस समय भी बहुत-सी भूमि जल-मग्न होने के कारण व्यर्थ हो जाती है। हमारे यहाँ सूखी घास खिलाने की प्रथा नहीं है। (४) भारत के अधिकांश पशुओं की मृत्यु खुर तथा जबाड़ों के रोगों के कारण होती है। ये रोग अधिकतर नम भागों में होते हैं—किन्तु हमारे यहाँ न तो समुचित पशुशालायें ही हैं जिसमें रोगी पशुओं को पृथक् रखा जा सके और न चिकित्सा का ही यथोचित प्रबन्ध है।

दुग्ध वस्तुओं का व्यापार—संसार में सबसे अधिक दूध निर्यात करने वाले देश नीदरलैण्ड्स (हॉलैण्ड), कनाडा, स्विट्जरलैण्ड, डेनमार्क, फ्रांस, नार्वे, आस्ट्रेलिया, आयरलैंड और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका हैं तथा मुख्य आयात करने वाले देश इंगलैंड, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, जर्मनी, पूर्वी द्वीप समूह, क्यूबा, स्विट्जरलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका और जापान हैं।

प्रति वर्ष ६,००,००,००० पौंड के मक्खन का व्यापार होता है।[११] मक्खन निर्यात करने वाले प्रमुख देश नीदरलैंड्स, आस्ट्रेलिया, आयरलैण्ड, अर्जेन्टाइना, रूस और इटली हैं। मुख्य आयातकर्ता अमरीकी प्रदेश, पश्चिमी यूरोप, इंगलैण्ड तथा जर्मनी हैं।

पनीर मुख्यतः नीदरलैंड्स, न्यूजीलैंड, कनाडा, फ्रांस, डेनमार्क और स्विट्जरलैंड से निर्यात किया जाता है और जर्मनी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और इंगलैंड मुख्य आयात करने वाले देश हैं।

११. १९६१-६२ में १०८ करोड़ पौंड मक्खन तथा ७२ करोड़ पौंड पनीर का उत्पादन हुआ था।

वर्ती और पूर्वी ओहियो के पहाड़ी ढालों पर और मध्यवर्ती पश्चिम में पाई जाती हैं जिनसे ऊन और गोश्त दोनों ही चीजें प्राप्त होते हैं।



चित्र ४९. प्रमुख देशों में भेड़ों का सापेक्षिक महत्व

सूअर (Pigs)

सूअर विभिन्न प्रकार की जलवायु में पाले जा सकते हैं। नीचे की तालिका उनकी संख्या दिखाई गई है —

इसका गोश्त और चर्बी दोनों ही काम में आते हैं। सूअर बड़ी सरलता और शीघ्रता से बढ़ते हैं। ये उन सड़ी-गली, रद्दी और गन्दी चीजों पर पाले जाते हैं जो अन्य पालतू जानवरों के काम की नहीं होती जैसे मक्का, आलू, गोभी, जौ और मक्खन निकला दूध।

संसार में सूअरों की संख्या (००० में)

देश	१९४७-४८	१९५३–१९५४	१९५८
संयुक्त राज्य	५६,८१८	४८,५६०	५०,०००
चीन (२२ प्रान्त)	—	५६,५१०	६०,०००
रूस	—	४७,६००	५०,०००
ब्राजील	२४,८७९	३२,७२१	३४,०००
जर्मनी	१३,८६७	२०,६५६	२४,०००
फ्रांस	६,५८२	७,३२८	८,०००
कनाडा	५,२६६	४,७२३	५,०००

सूअरों का पालना विश्व में केवल चार प्रदेशों तक ही सीमित है:

(१) चीन में यह हर जगह पाये जाते हैं जहाँ ये कूड़ा-करकट और विष्टा पर रहते हैं। इसके अतिरिक्त घनी जनसंख्या होने से एक छोटे खेत पर बहुधा ५-६ चीनी किसान व उनके कुटुम्ब निर्भर रहते हैं। सूअरों को पालने से उनसे एक ही बार में बहुत से बच्चे मिल जाते हैं जो खाद्य समस्या को कुछ सीमा तक पूरी कर देते हैं।









चित्र ५०. प्रमुख देशों में सूअरों का साक्षेपिक महत्व

नहीं पाले जाते हैं बल्कि वह खेतों को जोतने और अधिक से अधिक माल ढोने के काम मे लाये जाते है। नीचे की तालिका मे मांस का उत्पादन दिया गया है—

विश्व के प्रमुख देशों में मांस का उत्पादन (००० मैट्रिक टनों में)[13]

देश	१९४८-५२	१९५८
भारत	७६१	—
सं० रा० अमरीका	१२,८२०	२७,६१७
कनाडा	१,९७५	२,५९३
इगलैंड	१,३४३	३,८०२
नार्वे	१०३	१२०
डेनमार्क	९३५	१,५८४
स्वीडेन	६१२	७४८
नीदरलैंड्स	६२८	१,००४
इटली	१३७६	१,३४०
पोलैंड	९९०	३,३६७
न्यूजीलैंड	५८०	७०८
दक्षिणी अफ्रीका सघ	३७२	३८६
ब्राजील	१०२४	१२१५
अर्जेन्टाइना	२३२४	१५२३
आस्ट्रेलिया	५५०	५७३

मास के उद्योग के क्षेत्र

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका—सयुक्त राष्ट्र अमेरिका में गाय-बैल के मास का उद्योग बहुत उन्नतावस्था मे है। इस उद्योग का मुख्य केन्द्र शिकागो है। यहाँ शिकागो के पश्चिमी प्रेरीज की पथरीली भूमि मे (जो खेती के अनुपयुक्त है) मास के लिये पशु अधिक पाले जाते हैं। इनको मक्का खिलाई जाती है। अन्य महत्वपूर्ण केन्द्र ये हैं—**सेन्ट-पाल, ओमाहा, सेन्ट लुईस, कन्सास सिटी, सेन्ट जोसेफ, इन्डियानापोलिस, फोर्टवर्थ, मिलवाकी, डेनवर तथा औक्लोहामा सिटी**। संयुक्त-राष्ट्र मे मांस की खपत है इस कारण वहाँ से विदेशो को अधिक मास नही भेजा जाता। जो कुछ भी मास यहाँ से बाहर भेजा जाता है वह अधिकतर हवाई द्वीप, पोर्टोरिको तथा अलास्का को जाता है।

---

13. *Russel Smith, Phillips and Smith,* **Industrial and Commercial Geography,** 1955, p. 209, **Food & Agriculture Year Book,** 1957; **U. N. Monthly Bulletin of Statistics,** June, 1959.

वस्तु है। किन्तु अब तो शीत भंडार प्रणाली (Cold storage) की वैज्ञानिक विधि तथा सामान बाहर भेजने के उन्नत तरीकों द्वारा यह बाधा दूर हो गई है। इसलिए अण्डो का व्यापार भी बढ रहा है। बहुधा घर-घर या प्रत्येक फार्म पर थोड़ी बहुत मुर्गियाँ रखली जाती है और आस-पास की सड़ी-गली वस्तुओ से पेट भर कर वे अण्डे देती है। किन्तु वास्तव मे यह धन्धा ऐसा है कि जिसमे बड़ी देखभाल और सावधानी की आवश्यकता पडती है। अब कुछ देशो मे इस धन्धे की व्यवस्था अच्छी हो चली है और वैज्ञानिक मुर्गीशालाओ मे ३०,००० तक अण्डो की देख-रेख एक ही आदमी कर सकता है। यन्त्रो (Incubators) द्वारा अपेक्षित मात्रा मे ताप उत्पन्न कर लिया जाता है और अण्डों से बच्चे बिना मुर्गी की सहायता के निकाले जा सकते है। ऐसी दशा मे मुर्गी केवल अण्डे देने का कार्य करती है और वर्ष भर मे एक मुर्गी से १०० बच्चे तक प्राप्त किये जा सकते हैं।

विश्व मे अंडो का उत्पादन इस प्रकार है —

स० रा० अमरीका	७,१९२ करोड़	प० जर्मनी	६२१ करोड	नीदरलैंड्स	३५४ करोड
इंगलैंड	९२७ "	इटली	५७५ "	ब्राजील	४३० "
कनाडा	४७१ "	जापान	६१३ "	फिलीपाइन्स	१०५ "

मुर्गी पालने का धन्धा उन्ही देशों मे अधिक किया जाता है जहाँ जनसंख्या घनी है और गहरी खेती की जाती है। सयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा मे अधिक मुर्गियाँ पाली जाती है—विशेषकर मक्का उत्पन्न करने वाले क्षेत्रो में। चीन मे भी अधिक मुर्गियाँ पाली जाती हैं—यूरोप मे डेनमार्क, हॉलैंड, आयरलैंड, पोलैंड और बेल्जियम मे मुर्गी पालने का धन्धा बडी उन्नति पर है।

ब्रिटेन और जर्मनी बडी मात्रा मे अण्डो का आयात करते हैं। प्रमुख निर्यातक सयुक्त राज्य, हॉलैंड, रूमानिया, चीन, कनाडा, डेनमार्क आदि हैं।

शहद की मक्खी पालना (Bee Keeping)

यह धन्धा मनुष्य के प्रारम्भिक व्यवसायो मे से है। इसमे मनुष्य को अत्यन्त पौष्टिक तथा उपयोगी खाद्य पदार्थ शहद प्राप्त होता है। पहले लोग वनों मे जगली मक्खियो के छत्तो को तोडकर शहद तथा मोम इकट्ठा कर लिया करते थे किन्तु अब यह धन्धा वैज्ञानिक विधि द्वारा किया जाता है। शहद की मक्खी को पालने का यह अर्वाचीन व्यवसाय बहुत कुछ मनुष्य के प्रयत्नो पर निर्भर है किन्तु इसके लिए उपयुक्त स्थान वही हो सकते हैं जहाँ मधु से युक्त पुष्पो की प्रचुरता हो।

उष्ण कटिबन्धीय वनो के वृक्षो पर मधु से युक्त पुष्पो की बहुलता रहती है क्योकि वहाँ पर्याप्त वर्षा तथा ताप के अतिरिक्त उन्मुक्त सूर्य प्रकाश खूब प्राप्त होता है। इन प्रदेशों मे सभ्य जातियों के लोगो ने शहद की मक्खी पालने का कार्य बहुत विकसित रूप मे जारी किया है। इस कार्य के लिए ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका, पुर्त्तगाली अफ्रीका, सूडान, अबीसीनिया, भारत तथा ब्राजील प्रसिद्ध हैं। सयुक्त राज्य तथा यूरोप के गर्म भागो और आस्ट्रेलिया मे भी यह धन्धा प्रचलित है किन्तु यहाँ इसका विस्तार नही किया जा सकता है क्योकि मधु-युक्त पुष्पों की प्रचुरता प्रकृति पर निर्भर है।

मास (Lard) मिलता है। अब इनके अतिरिक्त बचे खुचे भाग से दवाइयाँ, रासायनिक पदार्थ, खाद और पशुओ का भोजन प्राप्त किया जाने लगा है।[14] ठंढा करने के ढंग मे बहुत सुधार किये गये हैं जिससे मास बिना बिगड़े बाजारों में पहुँच जाय। मास के व्यापार में ठंढा करने के दो विशेष ढंग है—'जमा देना' (Chill) और 'ठंढा करना' (Freeze)। इनका प्रचलन कुछ समय पूर्व से आरम्भ हुआ है। जमा हुआ मास लोग अधिक पसन्द नही करते क्योंकि वह देखने मे अच्छा नही लगता। ठंढे मांस मे ये अनभिष्ट बातें नहीं होती अत: उसका उपयोग अधिक होता है। ठंढा करने के लिये तापक्रम को २८° फा० तक नीचा कर देने की आवश्यकता पड़ती है और जमने मे लगभग १५° फा० की। चारो ओर हवा के कीटाणुओ को नष्ट करने के लिये भी १५° फा० तापमान होना चाहिये।

मांस उद्योग के गौण-पदार्थ (By-products of Meat Industry)

'गौण-पदार्थ' उन वस्तुओं को कहते है जो मुख्य वस्तुओ के निर्माण के पश्चात् बचे हुए कच्चे माल से (जिसे अब से पूर्व व्यर्थ समझ कर फेंक दिया जाता था) निर्मित की जाती है। इस प्रकार की वस्तुएँ केवल विशाल पैमाने पर किये गये उत्पादन द्वारा ही निर्मित की जा सकती है। मास उद्योग मे निम्नांकित गौण-पदार्थों की प्राप्ति होती है—

(१) पशुओ के रक्त से स्याही, रंग और खाद तैयार किये जाते हैं।

(२) मृतक पशुओ के अवशिष्ट भागो से खाद प्राप्त की जाती है।

(३) सूअर के बालों से ब्रुश तथा पशुओ की हड्डियों से बटन, पिनें, चाकुओं के दस्ते और कघे आदि बनाये जाते हैं।

(४) पशुओ की खालो से अनेक प्रकार की चमड़े की वस्तुएँ बनाई जाती हैं।

(५) इनकी चर्बी, जिलेटीन, सरेस और सूखा हुआ खून आदि उद्योगो में काम आता है।

भेड़ पालने का उद्योग (Sheep Rearing)

भेडें ऊन और गोश्त दोनों के लिये ही पाली जाती हैं। इन दोनों कामो के लिये पाली जाने वाली भेडो की किस्म अलग-अलग होती है। भेड शीतोष्ण प्रदेश में अच्छी पनपती है। ऊनवाली भेड़ें अधिकतर ठंढी, शुष्क और सम तापक्रम वाले प्रदेशों मे पाली जाती है तथा गोश्त वाली भेडें शीतोष्ण प्रदेशो की नम जलवायु मे। ३०" से अधिक वर्षा वाले प्रदेश भेडो के लिये अनुपयुक्त होते है अन्यथा उनको खुर की बीमारी हो जाती है। भेड ससार की कम जनसख्या वाले ऊबड़-खाबड़, शुष्क और चौड़े भागो में ही अधिक पाली जाती है।

भेड का मास गाय और बैल के मास तथा सूअर के मांस से कम महत्वपूर्ण है। भेड के सम्बन्ध मे एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि जो जाति अच्छा मास उत्पन्न करती है वह ऊन नही पैदा करती और जिसका ऊन अच्छा होता है उसका मास अच्छा नहीं होता। अब कुछ ऐसी नस्ल उत्पन्न की गई है कि जो मास और

---

14. *E B. Shaw*, **Op. Cit.**, p. 184.

दाना न मिले तो वह काम नही देता है, परन्तु गदहा भोजन न मिलने पर भी मेहनत कर सकता है। यद्यपि गदहा सब प्रकार से घोडे से श्रेष्ठ पशु है परन्तु मनुष्य ने उसका कभी आदर नही किया।

भारत, चीन तथा टर्की मे ससार के दो तिहाई गदहे मिलते हैं। इनके अतिरिक्त स्पेन, इटली, मिश्र और मोरक्को में संसार के लगभग एक चौथाई गदहे पाये जाते हैं। खच्चर दक्षिणी फ्रास और स्पेन में भी मिलता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण के एन्डीज पर्वतीय प्रदेश तथा चीन और मचूरिया में खच्चर बहुत पाये जाते हैं। पहाडी प्रदेशो मे बोझा ढोने के लिये तथा फौज का सामान ढोने के लिये खच्चरों का बहुत उपयोग होता है।

ऊँट (Camel)

ऊँट गरम देश मे रहने वाला पशु है। रेगिस्तानों तथा पर्वतीय देशो में जहाँ सघन वन हों वहाँ उसका उपयोग सवारी तथा बोझा ढोने के लिये होता है। मध्य अफ्रीका के सहारा रेगिस्तान से लेकर अरब, फारस, तुर्किस्तान तथा मध्य एशिया होता हुआ जो गरम और सूखा प्रदेश मंगोलिया तक जाता है उसमें मुख्य ऊँट का ही उपयोग होता है। अफ्रीका तथा एशिया के रेगिस्तानों मे ऊँट न हो तो वहाँ मनुष्य निवास ही नही कर सकता। भारत के पश्चिमी भाग में ऊँट का बहुत उपयोग होता है। अब आस्ट्रेलिया के रेगिस्तानो में भी ऊँट पहुँच गया है। यह रेगिस्तान में सूखी घास तथा काँटेदार भाडियों को खाकर ७-८ दिन तक रह सकता है। इसी कारण जल रहित प्रदेशो मे इसका इतना महत्व है।

अन्य पशु

हाथी—यह सबसे बडा पशु है। अब इसका उपयोग अधिक नही होता है क्योंकि इसके पालने मे खर्च बहुत अधिक होता है। हाथी सघन वनों मे मिलता है। मध्य अफ्रीका, बर्मा तथा थाईलैंड के वनो मे हाथी बहुत पाया जाता है। हाथी की हड्डी तथा दाँत बहुमूल्य व्यापारिक वस्तुएँ हैं। बर्मा तथा थाईलैंड के पहाड़ी प्रदेशो में यह लकडी के ढोने के काम मे आता है।

इसके अतिरिक्त रेनडियर (Reindeer) उत्तरी ध्रुव के समीपवर्ती अत्यन्त ठंढे प्रदेश का मुख्य पशु है। शीत प्रदेश मे उत्पन्न होने वाली भाडियाँ, थोडी घास और बर्फ पर उत्पन्न होने वाली काई तक पर वह निर्वाह कर लेता है। नार्वे से लेकर बेरिंग स्ट्रेट तक यूरेशिया मे तथा उत्तरी कनाडा मे यह बहुत पाया जाता है।

हिमालय के प्रदेश में याक (Yak) नामक बैल, जो बर्फ पर चल सकता है, बोझा ढोने के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यह भी बहुत थोड़े भोजन पर निर्वाह कर सकता है।

दक्षिण अमेरिका के एन्डीज पहाडी प्रदेश में लामा (Lama) नामक पशु भी माल ढोने के बहुत काम में आता है।

प्रश्न

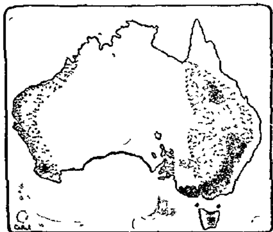
१. यूरोप के किन देशों में दूध के लिए पशु पाले जाते हैं? किन भौगोलिक और आर्थिक कारणों से इन देशों में यह अधिक पाले जाते हैं?

विश्व में भेड़ों का वितरण (००० में)

देश	१९४८-५२	१९५७-५८	१९५८-५९
इंगलैंड	२०,०००	२६,०००	२८,०००
रूमानिया	११,०००	१०,०००	११,०००
यूगोस्लाविया	१०,०००	११,६००	११,२००
रूस	७६,६००	१२०,२००	१२९,६००
सं० रा० अमरीका	३२,०००	३१,३००	३३,०००
अर्जेन्टाइना	४७,०००	४७,०००	—
ब्राजील	१४,०००	२०,०००	—
यूरेग्वे	२३,०००	—	१९,०००
चीन	२६,०००	५३,०००	६१,०००
टर्की	२४,०००	२६,०००	३१,०००
भारत	३७,०००	३९,०००	—
आस्ट्रेलिया	१,४५,०००	१९५,०००	१९९,०००
विश्व का योग	७७८,०००	९४०,०००	—

दक्षिणी गोलार्द्ध के शीतोष्ण भागों में भेड़ें सबसे अधिक पाली जाती है क्योंकि : (१) ये प्रदेश बड़े बाजारों से दूर हैं जहाँ घनी जनसख्या भेड़ों के बढने में बाधक नही होती। (२) यह भाग अधिकतर अर्द्ध-शुष्क हैं।

विश्व मे भेड़ें पालने वाले देशों में आस्ट्रेलिया (न्यूसाउथ वेल्स, क्वीन्सलैंण्ड और विक्टोरिया) प्रमुख हैं। यहाँ की भेड़ो से ऊन और गोश्त दोनो प्राप्त किये जाते हैं। न्यूजीलैण्ड मे केन्टरबरी के मैदान मे भेड़ें अधिक पाली जाती हैं। इनसे उत्तम गोश्त प्राप्त किया जाता है। अन्य भेड़ें पालने वाले देश अर्जेन्टाइना, यूरेग्वे, दक्षिणी अफ्रीका, बाल्कन प्रायद्वीप के देश, दक्षिणी इटली, सिसली, ब्रिटेन और भारत में काश्मीर और राजस्थान हैं। संयुक्त राज्य मे भेड़ें दक्षिणी मिशीगन, मध्य-


चित्र ४८. आस्ट्रेलिया में भेड़ो के चरागाह

अध्याय १४

वनों से संबंधित उद्योग

(FORESTRY)

वन क्षेत्रों का विस्तार (Extent of Forests)

संयुक्त राज्य अमरीका की वन-सेवा प्रशासन के अनुसार विश्व के वनों का क्षेत्रफल ९०,००० लाख एकड़ है। यह क्षेत्रफल विभिन्न देशों में इस प्रकार है :—[1]

क्षेत्र	विश्व का प्रतिशत
संयुक्त राज्य और अलास्का	८ १
कनाडा-न्यूफाउंडलैंड	९·३
मैक्सिको, मध्य अमरीका, पश्चिमी द्वीप समूह	२·४
दक्षिणी अफ्रीका	२०·०
रूस, यूरोप और एशिया	२६·२
उत्तरी यूरोप	१·५
पश्चिमी और मध्य यूरोप	०·७
रूस को छोड कर पूर्वी यूरोप	०·८
दक्षिणी यूरोप	०·६
मध्य पूर्व और अफ्रीका	१·१
मध्य और दक्षिणी अफ्रीका	१४·१
पूर्वी द्वीप समूह और फिलीपाइन द्वीप	५·१
मध्यपूर्व और रूस को छोड़कर एशिया	८·६
आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, प्रशान्त महासागरीय द्वीप, न्यूगिनी	१·५
कुल क्षेत्रफल ९०,००० लाख एकड	=१००·००

ऐसा अनुमान किया गया है कि पृथ्वी के जितने क्षेत्रफल पर वन-प्रदेश हैं उसका आधे भाग के लगभग (४९%) सदा हरे-भरे रहने वाले उष्ण कटिबन्ध के वनों से आच्छादित हैं। लगभग ३५% क्षेत्रफल पर शीतोष्ण कटिबन्ध के नुकीली पत्ती

1. Quoted by *Freeman & Raup*, **Op. Cit.**, p. 198.

(२) संयुक्त राष्ट्र में आयोवा, इलीनियाँस, इंडियाना, ओहियो, कन्सास, नैबरास्का आदि राज्य में मक्का पैदा करने वाले क्षेत्रों में बहुत पाले जाते है। शिकागो, कन्सास सिटी, ओहियो और मिलवाकी सूअर के मांस की बड़ी मंडियाँ हैं। यहाँ इनको मक्का खिलाकर खूब मोटा किया जाता है और फिर चर्बी बढ जाने पर उन्हें काट कर विश्व के उत्पादन का ५०% सूअर का मास प्राप्त किया जाता है।

(३) यूरोप में फास, रूस, डेनमार्क, हॉलैण्ड, बेल्जियम और पश्चिमी जर्मनी में जहाँ इनको खिलाने के लिए आलू और मक्खन निकाला दूध मिल जाता है।

(४) ब्राजील और अर्जेन्टाइना में। धार्मिक कारणों से सूअर एशिया और अफ्रीका के मुसलमानी देशो मे बिल्कुल नहीं पाले जाते। अर्जेन्टाइना, डेनमार्क, हॉलैण्ड, कनाडा, सयुक्त राष्ट्र अमेरिका और आयरलैंड सूअर के गोश्त और चीन तथा रूस सूअर के बालों के निर्यात करने वाले महत्वपूर्ण देश हैं। इंगलैंड, जर्मनी, क्यूबा और फ्रास सूअर के मास के प्रमुख खरीदार हैं।

मुर्गी पालना (Poultry Farming)

मुर्गी पालने का काम विश्व-व्यापक और बहुत विस्तृत है। इसके अन्तर्गत मुर्गी, अंडे देते समय, औसत तापक्रम ४०° फा० से ६५° फा० तक होना चाहिए। अधिक ठंडे भागो में प्रकाश तथा गर्मी के कारण अंडे बढते नहीं है और शीत से बच्चे भी मर जाते है। बतख, हस आदि पाले जाते है। ये सभी विभिन्न जलवायु और भोजनो पर पाली जा सकती हैं। यह सभी प्रकार की वस्तुएं खा सकती है। यह घर का कूड़ा-करकट खाकर ही पल जाती है। यह अंडा जैसा उपयोगी खाद्य पदार्थ देती है।

मुर्गियाँ (१९५८)

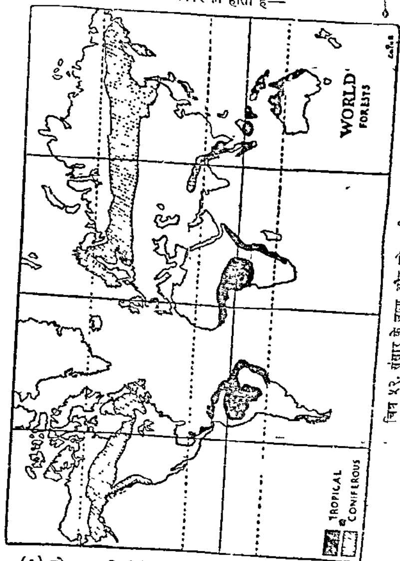
(लाख में)

देश	सख्या	देश	सख्या
संयुक्त राज्य	४,४७८	टर्की	२२४
चीन	२,६१५	कनाडा	७१९
रूस	२३०	जापान	४१८
प० जर्मनी	२५८	मिश्र	१९८
ग्रेट ब्रिटेन	८३	फिलीपाइन्स	४३३
ब्राजील	१,३४५	आस्ट्रेलिया	१६५
मैक्सिको	५५०	इटली	६३०
यूगोस्लाविया	२४४	आयरलैंड	१६३

मुर्गी पालने का व्यवसाय पुराना होते हुए भी शताब्दियों तक विशेष महत्व न प्राप्त कर सका। इसके कई कारण हैं। प्रथम तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मे अंडों के व्यापार का कोई उल्लेखनीय स्थान न रहा था क्योकि यह शीघ्र खराब हो जाने वाली

विश्व की प्रमुख लकड़ियों के स्रोत (Resources of Timber)

वनों से कई कच्चे पदार्थ मिलते हैं जिन पर आधुनिक काल के प्रमुख उद्योग आश्रित रहते हैं। वनो से प्राप्त होने वाले पदार्थों में से इमारती लकड़ी का प्रमुख स्थान है। इमारती लकड़ियाँ दो प्रकार की होती हैं—



चित्र ५१. संसार के उष्ण और कोणधारी वन

(१) कोमल लकड़ियाँ (Soft Woods)—जो शीतोष्ण कटिबन्धों के नुकीले वृक्षों से प्राप्त होती हैं। मुलायम लकड़ियो मे सबसे कीमती पेड चीड़ का है जिससे बढ़िया किस्म की लकडी प्राप्त होती है। व्यापारिक महत्व रखने वाले अन्य मुलायम

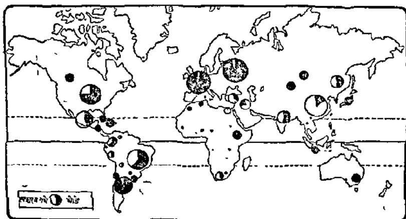
घोड़ा (Horses)

घोड़ा बहुत उपयोगी पशु है। मानव-समाज के लिये यदि गाय और बैल को छोडकर कोई अन्य महत्वपूर्ण पशु है तो वह घोड़ा ही है। पश्चिमी प्रदेशो मे बैल खेती-बारी के काम के लिए इतना उपयोगी नही है जितना घोडा। घोड़े के लिये शीतोष्ण कटिबन्ध की जलवायु बहुत अनुकूल है। घोड़ा मरुभूमि, उष्ण कटिबन्ध के सूखे प्रदेशों में बहुत पाया जाता है, किन्तु जहाँ वर्षा बहुत होती है वहाँ यह नही होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका (मक्का की पेटी मे), कनाडा (दक्षिणी गेहूँ पैदा करने वाले मध्य भाग मे), यूरोप के सब देशो (मध्य और पश्चिमी देशों मे), *एशियाटिक रूस तथा पश्चिमी एशिया मे घोडे बहुत पाले जाते है।* पम्पास मे ग्वाको और स्टेपी मे कज्जाक लोग बड़े अच्छे घुड़सवार होते है।

अरबी घोडा संसार मे अपनी तेजी के लिए प्रसिद्ध है। यह सवारी के काम मे आता है, किन्तु बोझा ढोने के काम मे इसका उपयोग नही होता। यूरोप तथा विशेषकर ब्रिटेन की भिन्न-भिन्न घोड़ो की जातियाँ अरबी घोड़ो के संसर्ग से ही उत्पन्न हुई है। जर्मनी, फ्रास, बेल्जियम तथा मध्य यूरोप में घोडे पालने का धन्धा बहुत उन्नति कर गया है। आस्ट्रेलिया के वैलर जाति के घोड़े प्रसिद्ध हैं किन्तु ये सवारी के काम के नही है। ये अधिकतर विक्टोरिया, न्यूसाउथ वेल्स और क्वीन्सलैंड मे तथा दक्षिणी अमेरिका मे, अर्जेन्टाइना, ब्राजील, यूरेग्वे, पैरेग्वे, और कोलम्बिया मे पाये जाते है। *ये मन्चूरिया मे भी खूब मिलते है। उत्तरी चीन, जापान, सयुक्त राज्य अमेरिका में* भी अच्छी जाति के घोडे पाले जाते हैं। भारत मे सौराष्ट्र के घोडे प्रसिद्ध हैं।

खच्चर और गधा (Mule & Donkey)

खच्चर गदहे और घोडे के ससर्ग से उत्पन्न हुआ पशु है। इसमे एक विशेषता है कि यह बुरे-से-बुरा चारा पाकर भी खूब परिश्रम कर सकता है। बोझा ढोने की



चित्र ५१. घोडे, गदहे व खच्चरों का वितरण

तो उसमें अकथनीय शक्ति होती है। यदि घोडे को एक दिन भी अच्छा चारा तथा

ईंधन	६४००	लाख मैट्रिक टन	५४·०%
इमारती काम	४०००	,,	३३·०%
कागज	६००	,,	५·०%
स्लीपर	२५०	,,	२·०%
खानो मे	२००	,,	१·६%
रेयन सिल्क मे	५०	,,	०·४%
अन्य	५००	,,	४·०%
योग	१२,०००	लाख मैट्रिक टन	१००%

विश्व मे मुलायम लकडियो की माँग सबसे अधिक रहती है क्योंकि यह लकडी अपने हल्केपन, मजबूती, टिकाऊपन, मुडने, झुकने और दरार होने तथा सिकुड़ने से दूरी और सरलतापूर्वक काम मे ली जाने के लिए प्रसिद्ध है। इमारती लकडी के सबसे बड़े व्यापारी देश वे है जिनमे सेई जाने वाली नदियों की सुविधायें हैं तथा लकड़ी चीरने के लिए मशीनो को चलाने के लिए जल शक्ति प्राप्त होती है।

नर्म लकड़ी के या नुकीले वन (Coniferous Forests)

उत्तरी गोलार्द्ध मे मुलायम लकडी के कोणधारी वन उत्तरी अमेरिका और यूरेशिया के उत्तरी भाग मे फैले हुए है। एशिया मे इस वन-प्रदेश की सीमा ५५° अक्षाश तक है। उत्तर-पश्चिम यूरोप मे इस वन प्रदेश की दक्षिणी सीमा ६०° अक्षाश तक है। उत्तरी अमेरिका के पूर्व मे ये वन ४०° अक्षाश तक मिलते है। दक्षिणी गोलार्द्ध मे कोणधारी वन इतने विस्तृत नही है जितने उत्तरी गोलार्द्ध मे। कोणधारी वन इन देशो मे पाये जाते है—कनाडा, सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, मेक्सिको, यूरोप, एशियाई रूस, मचूको, उत्तरी जापान, न्यूजीलैंड, ब्राजील, अर्जेनटाइना और चिली। ये वन प्रदेश उन भूभागो मे है जहाँ ठढ के मौसम मे ठढ बहुत पडती है और गरमियों मे गरमी पडती है। इन प्रदेशो मे वर्षा अधिक नही होती किन्तु वर्षा वर्ष भर लगातार होती रहती है। इन वनो मे बहुमूल्य लकड़ी उत्पन्न होती है।

इन्ही वनो की लकडी से तारपीन का तेल (पाइन वृक्ष से), बीरोजा तथा अन्य पदार्थ बनाये जाते है। लकडी की लुब्दी बनाई जाती है जिससे कागज तैयार किया जाता है। इमारतों तथा फर्नीचर के लिए लकड़ी प्राप्त होती है। कोणधारी वन औद्योगिक दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण हैं।

कठोर लकड़ी या पतझड़ के वन (Deciduous Forests)

पतझड के वन मध्य तथा दक्षिणी यूरोप मे बहुत फैले हुये हैं। पश्चिमी यूरोप तथा मध्य रूस मे भी कठोर लकडी के वन हैं। उत्तरी चीन, जापान, अपलेशियन पहाड़ के दोनो ओर, मिसीसिपी नदी के पश्चिम मे, पैटेगोनिया तथा दक्षिणी चिली मे ये वन खड़े हुए है, किन्तु अफ्रीका या आस्ट्रेलिया मे ये नही मिलते।

२. दक्षिणी गोलार्द्ध में किन कारणों से पशुपालन का धन्धा अधिक किया जाता है ? आस्ट्रेलिया में भेड़ें चराने और न्यूज़ीलैंड में पशु चराने के बारे में संक्षिप्त रूप में अपने विचार प्रकट करिये।

३. आस्ट्रेलिया में भेड़ें चराने के धन्धे की तुलना द० अफ्रीका या अर्जेन्टाइना से करिये।

४. आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड से होने वाले दूध के व्यापार पर अपने विचार प्रकट करिये और यह भी बताइये कि यह वस्तुएँ किन देशों को निर्यात की जाती हैं।

५. चित्र की सहायता से बताइये कि उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड में भेड़ें चराने का धंधा क्यों किया जाता है ? उनके व्यापारिक केन्द्रों का वर्णन करिये।

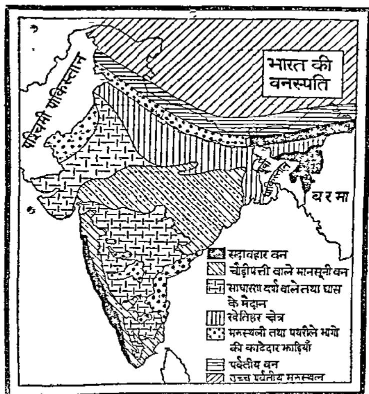
६. शीतोष्ण कटिबन्ध के देशों में कौन-कौन से पालतू जानवर पाये जाते हैं ? उनका आर्थिक महत्व बताइये ?

७. वर्तमान युग में मांस का व्यवसाय और दूध का धन्धा अधिकतर वैज्ञानिक आविष्कारों पर ही निर्भर क्यों रहता है ? मांस व्यवसाय के प्रमुख गौण उत्पादन क्या हैं ?

भारत के वन (Forests of India)

भारत में पाये जाने वाले वनों को निम्न भागों में बांटा जा सकता है:—

(१) सदा हरे रहने वाले वन (Evergreen Forests)—ये क्रमशः दक्षिण में पश्चिमी घाट के ढाल पर महाराष्ट्र से लगाकर उत्तरी व दक्षिणी कनारा, तिरूनलवेली, मैसूर, कोयम्बटूर, केरल और अडमान तक और उत्तर में हिमालय की तराई, पूर्वी हिमालय और आसाम तक फैले हैं। यहाँ के वन सदा हरे-भरे रहते हैं और इनके पेड़ों की ऊँचाई १५० फीट से भी अधिक होती है। इन वनों में अधिकतर रबड, महोगनी, एबोनी, लौहकाष्ठ, जंगली आम, तून, ताड़, बांस और कई प्रकार की लतायें अधिक उगती हैं।



चित्र ५४. भारत के वन

(२) पतझड़ वाले वन या मानसूनी वन (Monsoon Forests)—इस प्रकार के वन पंजाब से आसाम तक हिमालय के बाहरी व निचले ढालों पर मिलते हैं और उत्तर की इसी सीमा से लेकर उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, पश्चिमी घाट के पूर्व से लगाकर मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मद्रास,

वाले वन और शेष १६% पर पतझड़ वाले वन खड़े हैं। नीचे की तालिका में पृथ्वी पर वनो का विस्तार बतलाया गया है :—[2]

महाद्वीप	(लाख एकड़ में)	समस्त भूमि की तुलना%में	प्रति व्यक्ति पीछे वन प्रदेश (एकड़ में)	पृथ्वी के समस्त वन प्रदेश का प्रतिशत
१. एशिया	२०९६	२२	२·४	२८%
२. द० अमेरिका	२०९२	४४	३२·०	२८%
३. उत्तरी अमेरिका	१४४३	२७	१०·०	१९%
४. अफ्रीका	८७९	११	६·०	११%
५. यूरोप	८७४	३१	१·७	१०%
६. आस्ट्रेलिया	२८३	१५	३५·०	४%

पृथ्वी के धरातल पर विभिन्न प्रकार के वनो का विस्तार इस प्रकार है :—[3]

महाद्वीप	नुकीले वन	पतझड़ वन	उष्ण कटिबन्धीय कठोर लकड़ी के वन
	(लाख एकड़ मे)		
यूरोप	५७९०	१९५०	नहीं हैं
एशिया	८८९०	५७२०	६३५०
अफ्रीका	७०	१७०	७७३०
आस्ट्रेलिया	१५०	१५०	२५३०
उत्तरी अमेरिका	१०४६०	२९००	१०८०
दक्षिणी अमेरिका	१०९०	११५०	१८६९०
पृथ्वी	२३,४५०(३५%)	१२,०४०(१९%)	३६,३८०(४९%)

उपरोक्त तालिका का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से ज्ञात होगा कि यद्यपि उष्ण कटिबन्धीय वनों का विस्तार अधिक है किन्तु व्यापारिक दृष्टि से उनका महत्व बहुत कम है। व्यापारिक दृष्टि से नुकीली पत्ती वाले वन ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि वनों से प्राप्त होने वाले पदार्थों का ८० प्रतिशत इन जगलो से मिलता है।

---

2. *Zon Sparhawk*, **Forest Resources of the World**, 1923, Vol I, p. 14.

3. *Huntington, Williams and Valkenburg*, **Economic and Social Geography**, p. 436.

और देवदार के वृक्ष अधिक पाए जाते हैं। ६,००० से १२,००० फीट की ऊँचाई तक ओक, लारेल, मेपल, चीड, साईप्रस, जूनीपर, वर्च, एल्डर, आलु बुखारा, अंगूर आदि के पेड अधिक होते है। कुछ जूनीपर, घास और दवाई की जडी-बूटियाँ भी पाई जाती है। इससे ऊपर हिम-रेखा आरम्भ हो जाती है। भारतीय वनो में अनेक प्रकार के कच्चे पदार्थ मिलते है जैसे, लाख, हरड-बहेडा-आवला, गोद, मुञ और घासें, बेंत, बास, कदमूल फलादि।

भारत में लकडी काटने के धन्धे के पिछड़े होने के कारण—यद्यपि भारतवर्ष वनो की दृष्टि से धनी देश है और यहाँ २,५०० प्रकार की लकडियाँ मिलती हैं जिनमे से ४५० व्यावसायिक मूल्य की होती है और तरह-तरह की अन्य वस्तुयें भी वनो से प्राप्त होती हैं, किन्तु अभी तक भारत मे अन्य देशो की तरह वनो से प्राप्त सम्पत्ति का पूर्ण उपभोग नही किया जा सका है। इसके निम्नलिखित कारण है:—

(१) किसी भी देश की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि कुल भूमि के कम से कम चौथाई भाग मे वन अवश्य हो। किन्तु हमारे यहाँ वनो का विस्तार न तो समान ही है और न पर्याप्त ही।

(२) भारतवर्ष के अधिकाश वन-प्रदेश अधिक ऊँचाई पर स्थित है कि जहाँ पहुँचना कठिन है फिर वहाँ से लकडिया काट कर लाना तो और भी असम्भव है। हिमालय के पूर्वी वन और पश्चिमी घाट के कई भागो के वन तो अभी तक छुए भी नही गए हैं।

(३) आवागमन के साधनो की बडी कमी है। भारत में लकडी को पहाड से मैदान मे लाने की सुविधायें बहुत कम हैं क्योकि पश्चिमी देशो की भाँति न तो यहाँ अधिकाश नदियाँ ही लट्ठो के बहाने के काम मे ली जाती हैं (केवल हिमालय प्रदेश, सुन्दरवन या उडीसा के बाँस के जगलो को छोडकर) और न मशीनें ही इस काम मे ली जाती है। हमारे यहाँ अधिकतर मजदूर या मैसूर व अंडमान में हाथी और भैंसे आदि जानवर ही लकडियाँ ढोने के काम मे लिये जाते हैं। आसाम के गोपाल-पाडा जिले तथा पंजाब के चगामगा मे ट्रामवे (Tram-way) तथा हिमालय के विभिन्न भागो मे रोप-वे (Rope-way) जो मुख्यत आकर्षण शक्ति द्वारा कार्यान्वित होते हैं आदि भी व्यवहृत किए जाते हैं।

(४) देश मे लोगो के रहन-सहन का दर्जा बहुत ही नीचा है अतः हमारे यहाँ उत्तम लकडी की आवश्यकता भी अभी तक नहीं हुई है। यहाँ के निवासी बहुत ही कम फर्नीचर काम मे लाते हैं। अशिक्षा के कारण लकडी का प्रयोग कागज बनाने मे भी कम होता है। डा० ग्लेजिगर के अनुसार भारत मे प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष २५ पौंड औद्योगिक लकडी का उपयोग होता है जबकि यूरोप मे यह १,००० पौड और संयुक्त राज्य मे २,५०० है। लुग्दी का उपभोग भारत मे प्रति व्यक्ति पीछे प्रति वर्ष लगभग २ पौंड, इङ्गलैण्ड मे ६० पौंड और उत्तरी अमेरिका मे २२५ पौड है।

(५) भारत मे एक ही प्रकार के वृक्ष विशाल क्षेत्र में इकट्ठे नहीं मिलते, बल्कि एक ही प्रकार के वृक्ष काफी छितराये हुए मिलते हैं। अतः अमुक प्रकार के

लकडियो वाले पेड—फर, लार्च, सीडर, स्प्रूस, हेमलाक, रेडवुड और चीड़ हैं। विश्व का ५०% इन्ही लकडियो द्वारा प्राप्त होता है। यह पौलैंड, आस्ट्रिया, रूमानिया, क्यूबा, जर्मनी, स्विट्जरलैंड बहामा द्वीप, साइबेरिया, रूस, कनाडा, नार्वे, स्वीडेन, फिनलैण्ड, टस्मानिया, न्यूजीलैंड और दक्षिणी चिली मे पाई जाती हैं।

(२) **कठोर लकड़ियां** (Hard Woods)—इन्हे सुविधानुसार दो भागो में बांटा जा सकता है—

(क) **शीतोष्ण कठोर लकडियाँ** (Temperate Hard Woods)—जो शीतोष्ण कटिबन्ध के पतझड वाले चौडी पत्ती वाले पेडों से प्राप्त होती है, जैसे, वर्च, मेपल, बलूत, पोपलर, एल्म, ऐश, चेस्टनट कॉरीगम, यूकलिप्टस आदि। विश्व मे काटी गई लकडियो का ४०% शीतोष्ण कटिबन्ध की कठोर लकडियाँ होती हैं। ये प्राय आल्पस, पिरेनीज, मध्यवर्ती रूस द० साइबेरिया, मचूरिया, चीन, यूगोस्लाविया, कोरिया, जापान, एपेलेशियन प्रदेश, पेटेगोनिया, दक्षिणी चिली और आस्ट्रेलिया से प्राप्त की जाती हैं।

(ख) **उष्ण कटिबन्धीय कठोर लकडियाँ** (Tropical Hard Woods)—जो विषुवत् रेखीय प्रदेशो से प्राप्त की जाती हैं, जैसे एबोनी, महोगनी, खड़, सागवान देवदार, रोजवुड, लोह-काष्ठ आदि।

नीचे की तालिका मे विश्व के प्रमुख देशो मे राउन्ड वुड (Round Wood) का उत्पादन १० लाख घन मीटरो मे बताया गया है.—

देश	१९५६	१९५७	१९६१
कनाडा	९८	९०	८६
संयुक्त राज्य अमरीका	३२०	२९८	२९०
रूस	३४२	३६१	३७६
जापान	६४	६५	६२
भारत	१४	२५	३०
फिनलैंड	४०	४०	३०
स्वीडेन	४२	४१	४१
विश्व का उत्पादन	१,६५८	१,६६३	१,६६४

कनाडा, स० रा० अमेरिका, स्वीडेन, फिनलैंड, जर्मनी और जापान आदि देशों से विश्व की ७५% लकडी प्राप्त होती है। उत्तरी अमेरिका, यूरोप और ओशिनिया मे ससार की २४% जनसख्या पाई जाती है जब कि इनमे लकडी का उपयोग ७०% है और शेष ७६% जनसख्या ३०% लकडी का उपभोग करती है। नीचे लकडी का विभिन्न उपयोग बताया गया है[4] .—

4. *Simon and Schuster*, **The Coming Age of Wood, 1949.**

१२६६ बिलिअन बोर्ड फीट मुलायम लकड़ी और ३०५ बिलिअन बोर्ड फीट कठोर लकड़ी का है। १६४५ में ३४ बिलिअन बोर्ड फुट लकड़ी काटी गई। सभी प्रकार की लकड़ियों का व्यय १३,६६१ बिलिअन घन फीट था। इसमें से ५०% लकड़ियां काटी गई, १६% ईंधन के रूप में, १०% लुग्दी के रूप में; १५% खम्भों आदि के कार्यों में; ३% आग से नष्ट और ६% कीड़ों तथा रोगों से नष्ट हुई[6]। संयुक्त राज्य के वनों में १५०० विभिन्न प्रकार के वृक्ष मिलते हैं जिनमें १५० व्यापारिक महत्व के हैं तथा जिनसे लुग्दी, प्लाईवुड और तख्ते प्राप्त किये जाते हैं। संयुक्त राज्य में लगभग ६४,००० कम्पनियां हैं जो लकड़ी और अन्य वस्तुयें प्राप्त करने में लगी हैं। जंगलों को काटने और उपज प्राप्त करने में १० लाख से भी अधिक व्यक्ति लगे हैं। लकड़ी का वार्षिक उत्पादन ३६ बिलिअन बोर्ड फुट, लुग्दी का उत्पादन १५ लाख टन तथा न्यूज प्रिंट का १० लाख टन है। दक्षिणी वनों से प्रति वर्ष तारपीन के ५५६,४२० पीपे और बीरोजा के १७ लाख ढोल प्राप्त होते हैं। वन-सेवा विभाग के अनुसार वर्तमान गति से जंगलों के काटे जाने की रफ्तार से संयुक्त राज्य के वन देश की ७१% मांग को पूरा करते हैं, अतः यह आवश्यक माना गया है कि देश की वन सम्पत्ति का अधिक उत्तम रूप से विकास किया जाय।

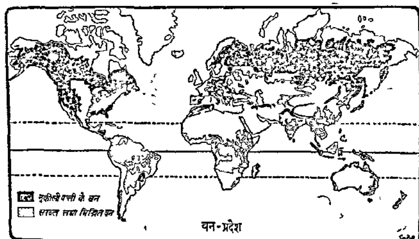
संयुक्त राज्य अमेरिका में लकड़ी काटने के निम्न सात मुख्य क्षेत्र हैं जहाँ के वनों से लकड़ी प्राप्त होती है। १६६० में संयुक्त राज्य के वनों से ६६० लाख घन फीट मुलायम लकड़ी प्राप्त हुई। इसी वर्ष यहां १३४ लाख मीट्रिक टन लुग्दी भी तैयार हुई। संसार की ४०% लुग्दी और ६०% मुलायम लकड़ी और ६०% कागज सं० रा० अमेरिका से ही प्राप्त होती है।

(१) **उत्तर-पूर्व का वन-प्रान्त**—इस क्षेत्र में न्यू इङ्गलैण्ड तथा ऐडिरानडक के वन सम्मिलित हैं। यहाँ का प्रदेश ऊँचा है और ठंड की अधिकता होने के कारण यह खेती के अनुपयुक्त है। इस पहाड़ी प्रदेश में मार्गों की सुविधा न होने के कारण यहाँ रेलें इत्यादि नहीं हैं परन्तु जाड़ों में बर्फ जम जाती है। अतएव लकड़ी के लट्ठे घोड़ों द्वारा बर्फ पर आसानी से खींचे जाते हैं। जब लकड़ी के बड़े-बड़े ढेर नदी पर आ जाते हैं और नदी का बर्फ पिघलता है तो लकड़ी के लट्ठे उसमें बहकर शहरों के समीप पहुँच जाते हैं। लकड़ी को शहरों के समीप तक लाने की सुविधा के कारण ही प्रान्त में लकड़ी का धन्धा पनप उठा है। इस वन प्रदेश में सीडर, पाइन, स्प्रूस, बलसम, और हैमलाक आदि नुकीली पत्ती वाले मुलायम लकड़ी के वृक्ष तथा बीच, मैपल, ओक, बर्च, एल्म, एश, हिकौरी, पोपलर और वालनट आदि कठोर लकड़ी के वृक्ष मिलते हैं।

(२) **झीलों के समीपवर्ती वन-प्रदेश**—इसमें विसकान्सिन, मिशिगन तथा मिनसोटा के वन-प्रदेश सम्मिलित हैं। इन वनों में सफेद पाइन, स्प्रूस और हैमलाक मिलता है। किन्तु यहाँ के वन बहुत कुछ समाप्त हो गये हैं इस कारण उनका महत्व कम हो गया है। झीलों के जल-मार्ग तथा बर्फ के जमने से लकड़ी को लाने में सुविधा भी है।

6. *Freeman and Raup*, **Essentials of Geography, p. 189.**

इन वनों की लकडी इमारते तथा फर्नीचर बनाने के काम अधिक आती है। पतझड वाले वनो की लकड़ी नरम नहीं होती वरन् कठोर होती है। ये वन उपजाऊ भूमि पर खडे हुए हैं। इस कारण पूर्व काल मे इनको साफ करके भूमि पर खेती करने का क्रम लगातार जारी रहा किन्तु अब यूरोपीय देशो की सरकारें इनकी सतर्कतापूर्वक रक्षा करती है।



चित्र ५३. विश्व मे नर्म व कठोर लकड़ी के वन

उष्ण कटिबन्धीय सदा हरे रहने वाले वन (Tropical Forests)

उष्ण कटिबन्ध के सदा हरे रहने वाले वन मुख्यत. दक्षिणी अमेरिका, मध्य अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिण-पूर्व एशिया तथा पूर्वी द्वीप समूह मे पाये जाते हैं। इन वनो मे देवदार, महोगनी और बाँस अधिक पाया जाता है। लकडी की अपेक्षा ये वन लाख, गोद व भिन्न-भिन्न प्रकार की औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण घासों तथा रग पैदा करने वाली वस्तुओ को अधिक उत्पन्न करते हैं। ये वस्तुयें वनो से आसानी से इकट्ठी की जा सकती है क्योकि मार्गों की सुविधा न होने पर भी इन्हे इकट्ठा करने मे कठिनाई नही होती।

पूर्वी एशिया के वन (Forests in S. E. Asia)

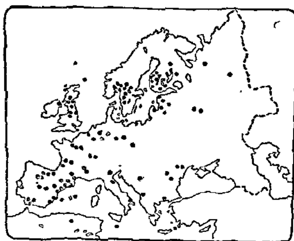
पूर्वी एशिया में जापान, कोरिया, मंचूरिया, थाईलैंड, इन्डोचीन, बर्मा, फारमोसा तथा चीन के वन सम्मिलित है। जापान के वनो मे बाँस, कपूर, लेक्वेर के वृक्ष व्यापारिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। फारमोसा से ही कपूर निर्यात किया जाता है। चीन के फूकेन प्रात, जापान के शिकोकू और क्यूस्यू द्वीप तथा सुमात्रा, जावा और बोर्नियो मे भी कपूर के वृक्ष पैदा होते हैं। जापान मे ४८% भूमि पर वन हैं।

३४० फीट ऊँची और १० फीट मोटी होती है। यह नावें बनाने और खुदाई करने के लिए काम में ली जाती है।[८] इतने भारी वृक्षों को लकड़ी के कारखानों तक पहुँचाना कठिन है। इस कारण बहुत-सी लकड़ी खड़े-खड़े ही नष्ट हो जाती है। साधारण गाड़ियों में ये लकड़ियाँ नहीं लाई जा सकती। इस कारण डंकी-एंजिनों से लकड़ी के लट्ठों को खिंचवाया जाता है। प्रशान्त महासागर के तटीय प्रदेशों के वनों से बहुत लकड़ी पूर्व की तरफ भेजी जाती है।

यूरोप के वन (Forests in Europe)

यूरोप का लगभग एक तिहाई वन प्रदेशों के अन्तर्गत है। यहाँ से विश्व की १०% लकड़ियाँ प्राप्त की जाती हैं। स्कैंडीनेविया, फिनलैंड, बाल्टिक प्रदेश तथा उत्तरी रूस में मुलायम लकड़ियों के वन मिलते हैं। यहाँ से तख्ते, खानों में काम में लाये जाने वाले लकड़ी स्तम्भ, लुग्दी आदि का निर्यात किया जाता है।

नार्वे तथा स्वीडेन देश पहाड़ी हैं तथा अधिकांश भाग खेती के लिए अनुपयुक्त है। नार्वे का ७१% भाग अनुपजाऊ है, २४.७% भाग पर वन हैं और केवल ३.५ पर खेती होती है। देश के निर्यात का २५% वनों की उपज होती है। स्वीडेन



चित्र ५५. यूरोप में लकड़ी चीरने के केन्द्र

की ५६.६% भूमि पर वन पाये जाते हैं, उस पर वनों के अतिरिक्त और कुछ उत्पन्न नहीं होता। स्वीडेन में लकड़ी के भण्डार २१,००० लाख घन मीटर के कूते गये

8. *D. H. Campbell*, **Outlines of Plant Geography,** 1926, p. 128.

केरल, मैसूर के सूखे भागो मे और दक्षिण मे कुमारी अन्तरीप तक मिलते है। इन जंगलो मे बहुमूल्य लड़कियां जैसे टीक, शाल, साखू, सागवान, लाल चन्दन आदि होती हैं। यहाँ शहतूत, बाँस, कत्था, बैंइन, आम, इमली, शीशम और आँवला के भी वृक्ष पाये जाते है।

(३) **कटीले वन** (Scrub Forests)—पश्चिमी राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दक्षिणी पूर्वी पंजाब, मध्य प्रदेश और दक्षिण के शुष्क भागो मे मैसूर, आंध्र आदि स्थानो मे वर्षा की कमी के कारण पेड भली भाँति नही उग सकते। इन जगलों मे छोटी-छोटी झाड़ियाँ पाई जाती हैं—जैसे नागफनी, खजूर, बबूल, खेजडा और केर आदि।

(४) **ज्वार प्रदेश के वन** (Tidal or Mangrove Forests)—इस प्रकार के जङ्गल उन भागो मे पाये जाते है जहाँ कि मिट्टी बार-बार ज्वार-भाटा आने के कारण उपजाऊ हो गई है। इन जगलों में घास बिल्कुल ही नहीं उगती क्योंकि सदैव जडो मे पानी भरे रहने के कारण घास का उगना प्राय असंभव ही होता है। बगाल के गङ्गा के डेल्टा के सुन्दर वन, मद्रास के उत्तरी तट के जिलो, महानदी, कृष्णा, गोदावरी और ब्रह्मपुत्र नदी के डेल्टा मे इस प्रकार के वन पाये जाते है। सुन्दरी यहाँ का मुख्य पेड है। इस्चुरी के निकट ताड, सुपारी, केवडा और नारियल के वृक्ष अधिक होते हैं।

(५) **नदी तट के वन** (Riverian Forests)—बरसात के मौसम में नदियो की बाढ का पानी जितने भागो मे फैल जाता है वहा तक पेड उग आते हैं। इन पेडो मे जो नदियो के पास होते हैं वह अपनी लम्बी-लम्बी जडो द्वारा नदी के पानी को खींच खींच कर बड़े ऊँचे और मजबूत बन जाते है, किन्तु जो पेड नदी तट से दूर होते है। वह प्रायः छोटे और कमजोर ही रह जाते है। इन जङ्गलो मे बबूल, पीपल, शीशम आदि वृक्ष बहुत पाये जाते हैं। चूंकि नदियों के किनारे की भूमि मे खेती भी अधिक होती है इसलिये कई स्थानो पर इन्हे काट डाला गया है। पंजाब से लगाकर आसाम तक इसी प्रकार के जगल मिलते है।

(६) **पहाड़ी वन** (Alpine Forests)—पहाड़ो की ऊँचाई के अनुसार भिन्न-भिन्न होते है। हिमालय प्रदेश के पूर्वी भागो मे जहाँ वर्षा घनी है पश्चिमी भागो की अपेक्षा जहाँ वर्षा कम होती है घने और विविध प्रकार के जगल पाये जाते है। हिमालय के जगलो को दो भागो मे बांटा जा सकता है—

(i) **पूर्वी हिमालय के वन**—पहाड की तलहटी से ७,००० फीट तक सेमल, तून और रबड के वृक्ष अधिक पाये जाते है। इसके अतिरिक्त घास, ताड, बाँस, बेंत, और मगनोलिया तथा लतायें भी बहुत पैदा होती हैं। ७,००० से १२,००० फीट तक मगनोलिया, सफेद ओक, लारेल, मेपल, भोजपत्र, लार्च और साईप्रस आदि के वृक्ष पाये जाते हैं। १२,००० से १६,००० फीट तक की ऊँचाई पर भोजपत्र, देवदार, लिचन, रोडोडेन्ड्रन्स, सिल्वर फर, ब्लूपाइन तथा जूनीपर के वृक्ष होते है और १६,००० फीट से अधिक ऊँचाई पर हिम-रेखा आ जाती है।

(ii) **पश्चिमी हिमालय के** बन अधिक घने नही है। तलहटी से ६,००० फीट की ऊँचाई तक सेमल, पलाश, चीड़, झाऊ, शीशम, ताड़, बाँस, अनार

वन प्रदेश है। यहाँ वृक्षो की वार्षिक उत्पति और उनके वार्षिक उपभोग में अनुकूल सन्तुलन रहता है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होगा :—

	वार्षिक उत्पति	वार्षिक उपभोग
रूस	७००	६००
सं० राज्य	३४५	२८३
ब्रिटेन	२ ७५	३'३७
फ्रांस	२५'३०	२५'४७
जर्मनी	२२ १०	३९'०
स्वीडेन	५३ ०	३६'६०
कनाडा	८० ०	६४'६६
चीन	४४ ०	१०'००
आस्ट्रेलिया	४० ०	६० ००
जापान	८ ०	८'०

इस तालिका से यह ज्ञात होता है कि इङ्गलैंड, जर्मनी, कनाडा, जापान और न्यूजीलैंड अपने वार्षिक उत्पादन से अधिक वनो का उपभोग कर रहे हैं। रूस के उत्तरी वन प्रान्त कोणधारी वृक्षों से भरे हुए है जिनमें स्प्रूस, फर, लार्च और पाईन वृक्ष पाये जाते है। उनकी लकडी कागज, लुग्दी तथा सैलूलोज बनाने के काम आती है। मध्यवर्ती भाग मे मिश्रित वृक्ष हैं और दक्षिण मे केवल पतझड वाले वृक्ष ही पाये जाते हैं। उत्तर के कोणधारी वन बाल्टिक समुद्र से सुदूर-पूर्व मे ओखोट्स्क तक फैले हुए हैं। ससार मे इन वनो के बराबर बहुमूल्य लकडी कही भी नही है। वास्तव में देखा जाय तो यूरोप तथा एशिया निवासियो के लिये यहाँ प्रकृति ने लकडी का अटूट भण्डार भर रखा है जो बहुत ही कम व्यवहृत हुआ है। वैसे तो सारे रूस मे लकडी का धन्धा होता है परन्तु पश्चिम मे जहाँ बड़े-बड़े नगर हैं यह विशेष रूप से केन्द्रित है। उत्तर मे डाइना नदी के समीप यह धन्धा तेजी से बढ रहा है। मरमान्स्क, मेजेन, इगरका और आरकेंजल लकडी के धन्धे के मुख्य केन्द्र है। सोवियत रूस... ...तंत्र संघ मे यद्यपि वन प्रदेश ससार मे सबसे अधिक है परन्तु उत्तर में अत्यन्त शीत प्रधान बर्फीले प्रदेश तथा दलदलो के बन व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नही है। वनो के भौगोलिक वितरण की विषमता, यातायात व्यवस्था का अपर्याप्त विकास, स्थानीय तथा विदेशी उपभोग के स्थानो की दूरी तथा मजदूरो की कमी रूस की बाधायें है। अगले पृष्ठ की तालिका मे सोवियत रूस के वन प्रदेशो का वितरण और लकडी का उत्पादन बताया गया है।

सबसे अधिक बनक्षेत्र एशियाई रूस मे ५१'५ करोड हैक्टेअर है; १ ५ करोड हैक्टेअर उत्तरी सागर के तट पर, २ ५ करोड हैक्टेअर यूराल में तथा १ ८ करोड़ हैक्टेअर उत्तर-पश्चिमी भाग में है। उत्तरी रूस मे उपयोग में आने वाली लकडियों की वृत्त ५'१ करोड घन मीटर की होती है, जबकि ४ से ४ ५ करोड घन मीटर लकडी वास्तविक रूप से काम में लाई जाती है। सब मिलाकर रूस का राउन्ड-वुड का उत्पादन ४० करोड़ घन मीटर का अनुमानित किया गया है।

वृक्ष की लकड़ी को एकत्रित करने मे समय भी अधिक लगता है और खर्चा भी खूब पड़ता है।

(६) हमारे यहाँ लकडी काटने के तरीके भी पुराने ही हैं, इससे बहुत सी लकड़ी तो व्यर्थ मे ही नष्ट हो जाती है।

संयुक्त राज्य अमरीका के वन (Forests in U.S.A.)

संयुक्त राज्य अमरीका की एक-तिहाई भूमि (६,२४० लाख एकड)पर वन प्रदेश पाये जाते है। इस क्षेत्र मे से ४,६१० लाख एकड भूमि के वन व्यापारिक लकडियाँ प्रदान करते है और शेष १,६३० लाख वन-क्षेत्र व्यापार के लायक नही है क्योकि यह पर्वतीय भागो, मरुस्थल के किनारो और अन्य भागो मे पाये जाते है। व्यापारिक वन प्रदेश मे से २,०५० लाख एकड भूमि पर काटने की लकडी के विस्तृत भण्डार भरे हैं। इसमे से ½ भाग बिल्कुल अछूती लकडियाँ है और ½ भाग दुबारा लगाई गई लकडियो का है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे व्यापारिक वनो का ३,४५० लाख एकड (७५%) निजी सम्पत्ति है और १,१६० लाख एकड (२५%) सार्वजनिक सम्पत्ति है। निजी सम्पत्ति के अन्तर्गत जो वन-क्षेत्र हैं उनमे से ¾ भाग की लकडियाँ काटने योग्य हैं किन्तु सार्वजनिक क्षेत्रो के वन अनुपलब्ध होने तथा उत्तम प्रकार की लकडियो के अभाव मे व्यापार के लिए उपयुक्त नही है।

व्यापारिक महत्व की लकडियो के कुल क्षेत्र का ३९ ८% दक्षिणी संयुक्त राज्य अमेरिका मे है क्योकि वहाँ उत्तम जलवायु के कारण वन शीघ्र ही पैदा हो जाते हैं। मध्यवर्ती अटलांटिक राज्य तथा उत्तर पूर्वी भागो मे कुल का १५·७%, तीन झील के राज्य (मिशीगन, विस्कॉनसिन और मिनेसोटा) ११%, मध्यवर्ती राज्य (अयोवा, मिस्सौरी, इण्डियाना, इलीनियोस और कैनटकी) ६·६%, दक्षिणी रॉकीज ३·४%; उत्तरी राकीज ६ ३%, कैलीफोर्निया ३·५% और पैसीफिक उत्तर पश्चिमी भागों मे १०% वन है।

लकडी की मात्रा के अनुसार पश्चिमी भाग मे कुल देश की काटने योग्य मुलायम लकडी का ६४% (या १,०३७० लाख बोर्ड फीट)[५] पाया जाता है। दक्षिणी भागों मे पीली पाइन ११%, और झीलवर्ती भागो मे ४%, बडे मैदान के पूर्वी भागो मे कठोर लकडी का १८%; उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त महासागर के किनारो पर २७% डगलस फर और ११·०५% पीलीपाइन के क्षेत्र है। संयुक्त राज्य मे १५३ राष्ट्रीय वन है जो २१८ लाख एकड भूमि पर फैले है। इनमे से ७० लाख एकड पर चरागाह हैं।

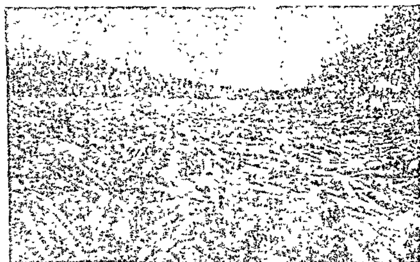
संयुक्त राज्य के वन-विभाग के अनुसधान द्वारा ज्ञात हुआ है कि यहाँ १,९६८ बिलियन घन फीट लकडी के क्षेत्र वर्तमान हैं जिनमे से २८% दक्षिण मे, २१% उत्तर और उत्तरी पूर्वी राज्यो मे; ५१% पश्चिमी भागो मे (३१% प्रशान्त महासागर के पश्चिमी तट पर; १०% कैलीफोर्निया और १०% राकी पर्वतो मे) है। चीरने योग्य लकडी (Saw timber) का भण्डार १६०१ बिलियन बोर्ड फीट था जिसमे से

---

५. १ बोर्ड फीट=१ फुट लम्बा, १ फुट चौडा और १" मोटा टुकडा।

साइबेरिया के वन—वन कटिबन्ध लगभग सम्पूर्ण साइबेरिया में यूराल से लेकर प्रशान्त महासागर तक तथा उत्तरी ध्रुववृत्त के आगे तक फैला हुआ है, अपवाद क्षेत्र केवल ये है—उत्तर में टुन्ड्रा, दक्षिण-पश्चिम में स्टेपी तथा बैकाल झील, यनेसी एवं इर्कुटस्क इत्यादि के निकट के छोटे-छोटे क्षेत्र। विश्व की लकड़ियों के भण्डार का २१% साइबेरिया से प्राप्त होता है। यहाँ १,५२७,३००,००० एकड भूमि पर वन पाये जाते हैं।[11] साइबेरिया का वह उत्तरी भाग जो उत्तरी ध्रुव के अन्दर आता है वाणिज्यिक वनो से रहित है। वहाँ झाडियाँ या छोटे-छोटे वृक्ष ही पाये जाते हैं। थोड़े से स्थान में जो उत्तरी पवनों से सुरक्षित है कुछ छोटे वन-क्षेत्र भी हैं।

साइबेरिया के वन टैगा नाम से विख्यात है। वे एक शृंखला-बद्ध वन-क्षेत्र नही बनाते। उनके बीच में असख्य नदियाँ आ गई है। इन नदियो की घाटी में दलदल या चरागाह है और यत्र-तत्र एक-आध वन-क्षेत्र भी हैं। वन साधारण तथा



चित्र ५६. साइबेरिया मे लकड़ियो का यातायात

नदियो की घाटियो मे नही है अपितु जल विभाजक से सम्बद्ध ऊँची भूमि पर हैं क्योकि वहाँ की मिट्टी अधिक नम नही होती। टैगा के वृक्षो की अधिकाश जातियाँ नुकीली पत्ती वाली हैं और ये ही अधिक महत्वपूर्ण भी है। इनमे पाइन या स्प्रूस और सेडार मुख्य है। पतझड वृक्षो के प्रतिनिधि मुख्यत बर्च तथा ऐस्पेन हैं।

कनाडा के वन (Forests in Canada)

कनाडा की १,६२०,३२० वर्गमील भूमि पर (देश के ४५% भाग पर) वन प्रदेश है। इस वन प्रदेश का ७% व्यक्तिगत और ९३% सरकारी है। ये व्यक्तिगत वन पश्चिम से पूर्व की ओर ६०० से १००० मील चौडी पट्टी मे समस्त देश के १/३

11. *C. B. Cressy*, **Asia's Land and Peoples**, 1951, p. 325.

(३) **एपलेशियन पहाड़ी प्रदेश के वन**—एपलेशियन पहाड़ी प्रदेश के वन दक्षिणी न्यूयार्क से ज्योजिया, अलबामा और उत्तरी भाग तक फैले हुये है। इस प्रदेश मे हैमलाक बहुत मिलता है। स्प्रूस तथा पीला और सफेद पाइन भी इन वनों मे अधिकता से पाया जाता है। इस वन प्रदेश मे पहाडो का अत्यधिक ढाल तथा वर्फ की कमी के कारण स्लेज (एक प्रकार की गाडी जो वर्फ पर चलती है) का उपयोग नही हो सकता इस कारण लकडी को लोहे के वडे-वडे वैगनों मे भर कर नीचे ले जाते है।

(४) **मध्यवर्ती क्षेत्र**—सयुक्त राज्य अमेरिका मे कठोर लकडियो के वन मध्य मे स्थित है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत एपलेशियन के पूर्व मे पीडमाट क्षेत्र है जो ओहियो से लगा कर दक्षिणी झील प्रदेश होते हुए आयोवा, उत्तरी अलवामा और दक्षिणी मिस्सौरी, अरकनसास तथा पूर्वी ओकलोहामा तक फैला है। इनमे ओक, एश, एल्म, चैरी, वॉसवन्ड मावकमूर, हिकारी, चेस्टनट, ट्यूलिप, काला वालनट तथा ऐश मिलते है। अरकनसास, टेनसी, पश्चिम वरजीनिया, मिशिगन और विस-कंसिन रियासते सबसे अधिक लकडी उत्पन्न करती है। **इण्डियाना, ईवेन्सविली तथा मैमफिस** लकडी की प्रमिद्ध मडियाँ है। मैमफिस कठोर लकडी की ससार मे सबसे बडी मंडी है।

(५) **दक्षिण पाइन के वन**—ये वन अटलाटिक समुद्र तट के समीपवर्ती तटीय मैदान मे न्यूजर्सी से टैक्सास रियासत तक फैले है। इन प्रदेशों मे सबसे अधिक महत्वपूर्ण वृक्ष पीला पाइन है। यह कठोर और बहुत मजबूत होता है। इसके अति-रिक्त लागलीफ, लालगोंद, साइप्रस स्लैश, लॉबलोली, कॉटनवड, एल्म आदि वृक्ष भी खूब मिलते हैं। इन वन प्रदेश की भूमि समतल तथा रेतीली है। इस कारण वनो से विशेषकर न्यूआर्लियन्स से लकडी काटकर लाने मे तनिक भी कठिनाई नही होती। अटलाटिक महासागर के बन्दरगाहो से यह लकडी विदेशो को जाती है।

(६) **पश्चिमी मिसिसिपी तथा राकी पर्वत के वन**—मिसिसिपी वन प्रदेश मे भी ओक, मैपिल हिकारी तथा ऐश इत्यादि वन मिलते है किन्तु राकी पर्वत पर कोणधारी वन है। वहा पाइन, स्प्रूस, पैंडोसा, लॉजपोल, सीडर, लार्च और फर बहुत मिलता है।

(७) **प्रशान्त महासागर के ढाल के वन**—उत्तरी कैलीफोर्निया, ओरेगन, वाशिंगटन, ब्रिटिश कोलम्बिया और अलास्का मे फैले है। ये वन ससार मे सबसे अधिक लकडी उत्पन्न करते हैं। कैलीफोर्निया के वन तो प्रसिद्ध ही हैं। लाल लकडी, डगलस, फर मुख्य वृक्ष हैं। इन वृक्षो की ऊँचाई सौ फुट से भी अधिक होती है और उनके तने की मोटाई ८ से १० फीट तक होती है। डगलस वृक्ष साधारणतः १७५ से २०० फीट तक ऊँचा और ३ से ६ फीट तक मोटा होता है। कोई-कोई वृक्ष तो २५० फीट से भी अधिक ऊँचे होते हैं। इन वृक्षो की इतनी अधिक ऊँचाई का मुख्य कारण साधारण उत्तम जलवायु, ग्लेशियरों द्वारा लाई गई उपजाऊ मिट्टी और वृक्ष का कीडे-मकोडे द्वारा न खाया जाना है।[7] लाल लकड़ी (Red Wood) साधारणतः

---

7. *E. C. Case*, **College Geography,** 1954, pp. 389-391

(२) अखबार के लिए न्यूजप्रिंट कागज बनाना—लगभग ७०%

(३) अन्य प्रकार का कागज—बैंक और नोट पेपर आदि।

(४) पुट्ठा या दफ्ती कागज—लगभग १७%।

इन कारखानों के उत्पादन में ८०% भाग लुब्दी और न्यूजप्रिंट कागज का होता है तथा २०% भाग अन्य प्रकार के कागजों का होता है।

ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कनाडा में प्रतिवर्ष ३,५१५,०००,००० घनफीट लकड़ी का प्रयोग होता है। इसमें से २,७७६,००० ००० घनफीट लकड़ी उपयोग में आती है और शेष अग्नि, कीड़ों और रोगों द्वारा नष्ट हो जाती है। अतः यदि कनाडा में वनों का समुचित लाभ उठाना है तो यह आवश्यक प्रतीत होता है कि नष्ट होती हुई वन-सम्पत्ति को और नष्ट होने से बचाया जाय। इसी हेतु कनाडा की सरकार अब वन-प्रदेशों का अधिक संरक्षण करने लगी है। बिना सरकार की आज्ञा के कोई वन नहीं काट सकता और छोटे पेड़ तो काटे ही नहीं जा सकते। [illegible] रक्षा के लिए वनों के बीच में जगह-जगह ऊँची चौकियाँ बनाई गई हैं जिन पर चौकीदार रहते हैं।



चित्र ५८ कनाडा में बर्फ पर लकड़ियाँ फिसलाई जा रही हैं

कनाडा की वन-सम्पत्ति का ३१% लट्ठों के रूप में प्रयोग होता है, ३१% अग्नि, रोग या कीड़ों द्वारा नष्ट होता है, ११% ईंधन के रूप में, २०% लुब्दी और कागज बनाने तथा शेष ७% अन्य कामों में होता है।

वनों की उपज

(Forest Produce)

वनों से प्राप्त होने वाले मुख्य पदार्थ ये है—

है । यहाँ मे कागज, खिडकियो के चौखटें, दियासलाई, लुब्दी, और प्लाईवुड निर्यात की जाती है । वास्तव में नार्वे, स्वीडेन तथा बाल्टिक प्रदेश के वन फिनलैण्ड और रूस-मे होते हुये साइबेरिया तक फैले हुए हैं । इन प्रदेशो मे पाइन, लार्च और स्प्रूस खूब होता है ।

जब बसन्त में फिनलैण्ड और स्वीडेन की नदियों की बर्फ पिघलने लगती है तो ये नदियाँ अनन्त राशि मे लकडी को बहाकर बाल्टिक समुद्र के कारखानो मे ले जाती है, जहाँ उनके लट्ठे, कागज की लुब्दी तथा कागज तैयार करके बाहर भेजा जाता है । फिनलैण्ड का वन उद्योग वहाँ की अर्थ व्यवस्था मे अत्यन्त महत्वपूर्ण है। देश के कुल निर्यात में से ८०% निर्यात वन उद्योग पर ही निर्भर है । इस उद्योग के कुल उत्पादन का ८०% विदेशो को भेजा जाता है । फिनलैण्ड ने पिछले वर्षों मे ससार के कुल उत्पादन मे से २०% लुब्दी और सैलूलोज, १५% आरे से कटा हुआ लकडी का सामान और ६०% प्लाइवुड विश्व की मन्डियो में भेजा है । न्यूज-प्रिंट एव वुड फाइबर बोर्ड के निर्यात मे फिनलैण्ड दूसरे स्थान पर है । यहाँ १०० ऐसे लकडी चीरने के कारखाने हैं जिनमे निर्यात के लिए कार्य होता है । वैसे सब मिलाकर ८०० के लगभग कारखाने हैं । १८ प्लाईवुड, २७ सैलूलोज और ४ बाबिन के कारखाने हैं । कागज बनाने वाले कारखानो मे ८ न्यूजप्रिंट, १५ कार्ड बोर्ड और १६ अन्य कागज बनाने के कारखाने है ।

नार्वे मे केवल १/४ भाग पर वन मिलते हैं । यहाँ कई प्रकार की लकडियों के वृक्ष पाये जाते है । ६०°-७०° उत्तरी अक्षाशो तक चीड के वन पाये जाते है जिनका आर्थिक महत्व बहुत है । सब मिलाकर यह लकडी का भडार १२० से १४० बिलिअन बोर्ड फीट कूता जाता है जिसका मूल्य सम्भवत २५ करोड डालर आँका गया है । यहाँ के वनो मे ५०% फर, ३०% चीड और शेष मे बीच, ओक और एस्पैन पाई जाती है ।[9] यहाँ से लकडियो का निर्यात नही किया जाता किन्तु उन पर आधारित अखबारी कागज, लुब्दी, सैलूलोज, कार्डबोर्ड, दियासलाई तथा कागज उद्योग स्थापित किये गये हैं । चूँकि नार्वे का तट वर्ष भर खुला रहता है अतः इन वस्तुओ का निर्यात सरलतापूर्वक किया जाता है ।

[illegible] में फ्रास (२२% वन), आल्पस पर्वतीय प्रदेश मे स्विट्जरलैंड ([illegible]), [illegible], उत्तर जर्मनी (२७%), जेकोस्लोवाकिया तथा पोलैंड के वन हैं जो वास्तव मे एक दूसरे से मिले हुए हैं । इन देशों मे बडी सतर्कतापूर्वक वनों की देखभाल की जाती है तथा उनकी उन्नति भी खूब की गई है । इनमे अधिकाश वनों को तो लगाया गया है क्योंकि यूरोप मे लकडी की कमी है । ब्रिटेन ही केवल एक ऐसा देश है जहाँ वन प्राय हैं ही नही, केवल ४% भूमि पर वन खड़े हैं और नीदरलैंड मे केवल ७% भूमि पर ।

रूस के वन—रूस में समस्त संसार के एक-तिहाई से भी अधिक वन पाये जाते हैं । रूस मे ७० करोड हैक्टेयर पर वन पाये जाते हैं । प्रतिवर्ष इनमे ७० से ८० करोड घन मीटर की लकडी की वृद्धि होती है ।[10] रूस मे विश्व मे सबसे अधिक

9. *Case and Bergsmark*, **College Geography,** 1954, p. 401.
10. **U. S. S. R. Reference Book,** 1957, p. 16.

पूर्वक रवड की पौध लग गई। सन् १६०० ई० मे पौध वाली रबड (Plantation Rubber) का उत्पादन केवल ४ टन था जबकि जगली रबड का उत्पादन ४४ हजार टन हुआ। सन् १६१३ ई० मे दोनों ही प्रकार की रबड का उत्पादन प्राय बराबर हो गया किन्तु सन् १६२२ ई० मे पौध वाली रबड का उत्पादन बढकर ३४० हजार टन हो गया जब कि जगली रबड का उत्पादन केवल २३,००० हजार टन ही रहा क्योकि सन् १६१८ ई० में बाजार मे रबड की मात्रा अधिक होने से उसका मूल्य घट गया। इस प्रकार अमेजन की घाटी से जिन कुछ बीजो को ले जाकर पूर्वी देशों मे उगाया गया, वहाँ सन् १६३६ ई० में ७० लाख एकड भूमि पर ५,००० लाख वृक्षो द्वारा विश्व की रवड की माँग का ६६% रवड़ प्राप्त हुआ। पिछले कुछ वर्षों से लका और सिंगापुर से रबड़ के पौधे के बीज पुन. अमेरिका मे भेजे गये हैं।

दक्षिणी भारत मे रबड के बीज और पौवे लका से लाये गये। रबड़ की पैदावार में केवल सन् १६१२-१३ ई० से ही गहरा वृद्धि हुई है जबसे कि पूर्वी देशों मे पौध वाली रबड के पौधो से रबड़ प्राप्त किया जाने लगा। रबड का सबसे अच्छा समय सन् १६१६ तक रहा है। इसके बाद सन् १६२० मे अत्यधिक पैदावार के कारण ससार मे रबड के दाम कम हो गये। अतएव सन् १६२२ ई० मे रबड के उत्पादन को नियन्त्रण मे रखने के लिये स्टीवेन्सन योजना (Stevenson Seheme) लागू की गई। यह योजना सन् १६२८ तक चली। इसके अनुसार अंग्रेजों के निरीक्षण में रबड पैदा करने वाले देशो—लका, मलाया, दक्षिणी भारत, ब्रह्मा—ने गिरे हुये दामो को ऊँचा करने के लिये अपनी पैदावार को सीमित रखा, किन्तु यह योजना दामों को ऊँचा करने के उद्देश्य मे सफल न हो सकी क्योकि जिस समय अंग्रेज पैदा करने वालो ने अपने उत्पादन को सीमित रखा वहाँ डच पूर्वी देशो ने और अन्य देशो ने, जिन पर यह योजना लागू नही थी, उत्पादन को खूब बढाया। इसका परिणाम यह हुआ कि जब सन् १६२६ मे यह योजना हटाली गई तो अत्यधिक पैदावार के कारण रबड़ के मूल्य मे बहुत अधिक कमी आ गई। इसके बाद पहली अप्रैल सन् १६३४ ई० मे एक अन्तर्राष्ट्रीय रबड़ व्यवस्था कमेटी बिठाई गई जिसमें दक्षिणी-पूर्वी एशिया के सभी रबड उत्पादक देश सम्मिलित हुए। इनका मुख्य उद्देश्य रबड की पैदावार को सीमित तथा रबड के निर्यात को इस प्रकार नियमित करना था कि इकट्ठा हुआ ढेर साफ हो जाय, मूल्य की उचित दर स्थिर हो जाय और उत्पादको को उचित लाभ मिल सके अतएव निर्धारित सीमा से ऊपर उत्पादन व निर्यात करने पर प्रतिबन्ध लगा दिये गये, किन्तु सन् १६३६ ई० मे द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ हो जाने से रबड की पैदावार और निर्यात की स्थिति मे काफी परिवर्तन हो गया।

पौध वाली रबड न केवल दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशो मे ही लगाई गई, किन्तु अमेजन नदी की घाटी मे भी सयुक्त-राज्य अमेरिका द्वारा लगाने के प्रयत्न किए गये। इसी सम्बन्ध मे सन् १६२३-२४ ई० मे संयुक्त राज्य के वाणिज्य विभाग ने रबड़ की स्थितियो की जाँच करने के लिए एक दल भेजा। कुछ वर्ष पीछे फोर्ड मोटर कम्पनी ने पारा मे एक रबड़ उपवन की स्थापना के लिये भूमि प्राप्त की। सबसे पहले इस कम्पनी ने ब्राजील मे तापाजोज नदी पर बोआविस्ता मे लगभग २५ लाख एकड भूमि का पट्टा प्राप्त किया। इसका नाम फोर्डलैंडिया (Fordlandia) रखा गया। भूमि को रबड़ की पैदावार के उपयुक्त बनाने के लिये कई कठिनाइयाँ उठानी पड़ी, जैसे—

प्रदेश	क्षेत्रफल (सम्पूर्ण का %)	लकड़ी (सम्पूर्ण का %)	प्रदेश	क्षेत्रफल (सम्पूर्ण का %)	लकड़ी (सम्पूर्ण का %)
साइबेरिया तथा सुदूरपूर्व	७५	३३	काकेशस	२	२
यूरोपीय रूस का उत्तरी प्रदेश	१२	२२	दक्षिणी प्रदेश (यूक्रेन व श्वेत रूस)	१	६
वोल्गा प्रदेश	८	२१	प्राचीन औद्योगिक प्रदेश (मास्को, कालोनिन और लैनिनग्राड)	२	१५

आसाम रबड (Ficus Elastica); और (घ) अफ्रीकी रबड (Landloptia)। इसमें सबसे अच्छी रबड़ ब्राज़ील की होती है। प्राकृतिक रूप से इस पेड़ का विकास अमेजन नदी की निचली घाटी मे हुआ है। पौधे वाली रबड (Plantation Rubber) के पहिले ससार की सारी रबड इस प्रदेश के जगली पेडो मे प्राप्त होती थी। ब्राज़ील की रबड का बीज ले जाकर ही अन्य जगहो पर रबड के पौधे लगाये गये हैं।

रबड भूमध्यरेखीय प्रदेशो की मुख्य देन है। इसके वृक्ष २०° उत्तरी अक्षास और २८° दक्षिणी अक्षास मोटे तौर पर रबड उत्पादन की सीमा बनाते है। उत्पादन के मुख्य क्षेत्र मध्य और दक्षिणी अमरीका, उष्ण कटिबन्धीय अफ्रीका और दक्षिणी-पूर्वी एशिया है।

रबड के लिए गरम और तर जलवायु की आवश्यकता होती है। औसत तापक्रम ८०° फा० का उपयुक्त माना जाता है किन्तु यदि किसी एक महीने मे भी तापक्रम ७०° फा० मे नीचे चला जाता है तो वहाँ इसका उत्पादन नही होता। यह घोर वर्षा वाले क्षेत्रो मे अच्छा पनपता है। वार्षिक औसत १००" का पर्याप्त माना जाता है। यदि किसी महीने मे वर्षा की मात्रा मे २ या ३ इच की कमी हो जाती है तो दूध की मात्रा मे भी कमी हो जाती है और यदि काफी लम्बे समय तक सूखा पडे तो वृक्ष के बडे होने मे दो वर्ष की देर हो जाती है। थोड़े-थोडे समय के लिए छोटा सूखा मौसम लाभदायक हो सकता है। ब्राज़ील मे द० पू० एशिया की अपेक्षा अधिक सूखा पडता है इसीलिए दक्षिणी पूर्वी एशिया रबड उत्पादन के लिए अधिक उपयुक्त ठहरता है।

रबड के वृक्ष समतल भूमि अथवा तेज ढाल वाले भागो की अपेक्षा हल्के ढलुआ भागो पर अच्छी प्रकार लगते है। समतल भाग शीघ्र ही दलदली हो जाते हैं अतएव ढालू भाग ठीक रहते हैं। दलदली भागो मे नमी और छोटे-छोटे कीडे (root rot और fungus) पेडो को नष्ट कर देते हैं अतएव, अधिकाश वृक्ष २०००' की ऊँचाई पर लगाये जाते है इससे अतिरिक्त जल बह कर चला जाता है। ये ढाल पवन मुखी होते हैं अत वर्ष भर ही वर्षा प्राप्त करते है।

रबड के वृक्ष के लिए उपजाऊ मिट्टी अपेक्षित है जिसमे वनस्पति के सड़े-गले अश मिले हो। इसके लिए गहरी ज्वालामुखी मिट्टियाँ आदर्श होती है।

वनो से दूध तथा रबड लाने के लिए यातायात के लिए नदियों का होना भी आवश्यक है। इस दृष्टि से द० पूर्वी एशिया के द्वीप और प्रायद्वीप, कैरेबियन सागर के तट और अमजेन नदी के क्षेत्र बडी उपयुक्त स्थिति मे है। ये क्षेत्र व्यापारिक मार्गो के मार्ग पर भी पडते है।

रबड़ के पेड एक दूसरे से १२ फीट की दूरी पर लगाये जाते है। एक वृक्ष पर लगभग ३०० बीज होते हैं। इन बीजो का प्रति एकड़ से १५० तक लगाते है पहले बीजो को नर्सरी मे लगाया जाता है फिर इन्हें खेतो मे रोप दिया जाता है। १ वर्ष बाद कलमे करने लायक हो जाते हैं। इन कलमो को १ वर्ष पुराने पौधो मे लगा देते हैं। कलमो का प्रयोग करने से १ एकड वृक्ष से ४०० पौंड तक रबड प्राप्त होता है।

बीज लगाने के बाद जब वृक्ष जड़ो से ३ फुट की ऊँचाई पर तनो मे १८"

भाग मे फैले हैं। यहाँ के वन क्षेत्र ब्रिटिश कोलम्बिया, उत्तरी प्रेरी प्रान्त, ओंटेरियो, क्यूबेक और न्यू ब्रंसविक मे है। इनमे से लगभग ५१% जगल व्यापार के काम के हैं। उत्पादक वन क्षेत्रो मे से ६५%मुलायम लकडी; २४%मिश्रित लकडी और ११% कठोर लकडियो का है। कनाडा मे १५० से भी अधिक किस्म की लकड़ियाँ मिलती हैं—जिनमे से ३१% नुकीली पत्ती वाले पेडो की हे। इन वनो मे कई प्रकार की बहुमूल्य लकडियाँ—स्प्रूस, वलसम, पाइन, डगलस, फर, हैमलोक, सीडर और पोपलर आदि—पाई जाती हैं। इनके अतिरिक्त बर्च, मेपल, एल्म और बॉसवुड भी बहुत मिलती है। इन लडकियो के सहारे कनाडा मे कई लकडी चीरने, कागज और लुब्दी तथा सैलूलोज बनाने, फर्नीचर बनाने, वस्त्रो के धागे और प्लास्टिक बनाने के कारखाने चलाए जाते है। इन वनो से प्राप्त होने वाली मुख्य वस्तु काष्ठ की लुब्दी है। प्रतिवर्ष लगभग १५८,००० वर्गमील भूमि के जगलो से लगभग ६०% लुब्दी प्राप्त की जाती है। लुब्दी के अतिरिक्त लकडी काटकर चीरना भी यहाँ का मुख्य व्यवसाय हो गया है। मुलायम लकडियो के सबसे बड़े क्षेत्र के कारण ही कनाडा को साम्राज्य का मुलायम लकडियो का भडार कहा गया है। कनाडा मे वनो द्वारा जितना उत्पादन प्राप्त होता है उसका ६५% लट्ठो, लुब्दी और ईंधन के रूप मे प्रयोग होता है। समस्त उत्पादन का १०% लट्ठा और ईंधन निर्यात किया जाता है।

कनाडा मे लकड़ी चीरने के कई कारखाने हैं जो मुख्यकर यूकन और उत्तर-पश्चिमी राज्यों तथा ब्रिटिश कोलम्बिया मे है। १९६० मे यहाँ ८,००० लकडी चीरने की मिलें (Saw mills) थी जिनमे ३५१,००० व्यक्ति काम करते थे। इन मिलो मे कुल उत्पादन २ अरब डालर का हुआ जिसमे से १·५ अरब डालर के मूल्य का निर्यात किया गया।



चित्र ५७ कनाडा के वन प्रदेश

कनाडा मे लुब्दी बनाने के १९६१ में १२५ कारखाने थे। इन कारखानो के स्थापन का मुख्य कारण निकटवर्ती क्षेत्रो मे वन क्षेत्रो की स्थिति, यातायात के साधनों की सुगमता और जल-विद्युत शक्ति का बाहुल्य है। इस वर्ष यहाँ १०१ लाख टन लुब्दी और ८० लाख टन कागज बनाया गया जिनमे से २४ लाख टन लुब्दी और ५७ लाख टन कागज विदेशो को निर्यात किया गया है।[12] इन कारखानो मे जो वस्तुएँ उत्पन्न की जाती है उनको ४ श्रेणियो में बाटा जा सकता है—

(१) लुब्दी (Wood Pulp) जिसका प्रयोग कागज बनाने, रेयोन सूत, फोटोफिल्म, सैलोफोन, नाइट्रो-सैलूलोज बनाने तथा प्लैस्टिक का सामान बनाने में होता है।

12. *Canada*, 1961 p 114.

फैक्ट्रियों में इसमें एसिटिक या फार्मिक एसिड मिला दिया जाता है। इससे ६ से १६ घंटों में यह जम जाता है और इसके साधारण रूप से टुकड़े बन जाते हैं। फिर इसका जल निचोड़ कर सुखा लेते हैं और छोटी-छोटी पट्टियों या चादरों में बाँध कर गाठ बनानी जाती हैं। इस प्रकार क्रेप (Crepe) बना कर निर्यात कर दिया जाता है।

पिछले कुछ वर्षों से पौध लगाने वालों ने रबड़ तैयार करने में बहुत से सुधार कर लिये हैं। अब दूध इकट्ठा करने के बाद नलों द्वारा सीधी जहाजों में भर दी जाती है। रबड़ की चादरें या पट्टियाँ बनाने का काम विभिन्न देशों की फैक्ट्रियों पर ही छोड़ दिया गया है। ऐसा करने से रबड़ का मूल्य काफी बढ़ गया है।

निम्नांकित तालिका में विश्व में विभिन्न प्रकार के रबड़ की उपज दी गई है—

संसार में रबड़ की उपज (००० मैट्रिक टन)

वर्ष	उपवन	पारा तथा जंगली
१६२७	६७७	४३
१६२८	६५६	३२
१६२६	८५२	३०
१६३०	६१६	३१
१६४८	१,५२०	४८०
१६५०	१,८६०	५४३
१६५३	१,७८८	६८६
१६५५	१,८६५	१,२८०
१६५६	१ ८८८	—
१६५७	१,६०३	—

विश्व की ६०% प्राकृतिक रबड़ द० पूर्वी एशिया में प्राप्त होती है। यहाँ इसका सबसे अधिक उत्पादन इन्डोनेशिया मलाया लंका भारत, ब्रह्मा, वियतनाम, कम्बोडिया, ब्रिटिश बोर्नियो और थाइलैंड में होता है। अन्य छोटे उत्पादक लाइबेरिया, बेल्जियन अफ्रीका, और फ्रांसीसी अफ्रीका आदि हैं। नीचे की तालिका में इसका उत्पादन बताया गया है :—

औसत	द० पूर्वी एशिया	अन्य देश (००० मैट्रिक टनों में)	योग
१६१५–१६	२०६	५१	२५७
१६३०–३४	८५३	१५	८६८
१६३५–३६	६३८	३२	६७०
१६४५–४८	७०७	६५	७७२
१६४८–५०	१,५४८	७५	१,६२५
१६५४–५५	१,७४३	१२७	१,७४३
१६५७	१,७४१	१५१	१,८६२
१६५६	१,८३५	१६५	२,१००
१६६१	१,६२५	२१५	२,१४०

(१) रबड़ (Rubber)

ऐतिहासिक खोज—यूरोपीय देशों में ५०० वर्ष पूर्व भी लोगों को पेंसिल आदि के निशानों को मिटाने के लिए होने वाले रबड़ के प्रयोग का ज्ञान था। किन्तु इस रूप में इसका प्रयोग सन् १७७० से ही किया गया और लगभग ८० वर्ष तक इसे पेन्सिल के निशानों को मिटाने के लिए ही काम में लेते रहे जिसके कारण इसकी खपत भी बहुत ही सीमित रही। सन १८२३ ई० में मैकिनतोश नामक एक स्कॉटलैंड निवासी ने यह ज्ञात किया कि इसका प्रयोग वाटर प्रूफ कपड़ों के बनाने में भी हो सकता है। किन्तु इससे भी रबड़ की खपत में कोई वृद्धि नहीं हुई क्योंकि यह पदार्थ अधिक टिकाऊ नहीं था और गर्मी से यह चिपचिपा और शीत ऋतु में कड़क जाता था। उसी समय से वैज्ञानिकों द्वारा रबड़ के प्रयोगों के सम्बन्ध में अनुसंधान होते रहे हैं। सन् १८४२ ई० में गुडइयर नामक अमेरिकी ने इस बात की खोज की कि रबड़ में गन्धक मिलाने से मैकिनतोश द्वारा चालू किये हुए वाटर प्रूफ के सारे अवगुण दूर हो जाते हैं। इस खोज से रबड़ और जूते के व्यवसाय को बहुत अधिक प्रोत्साहन मिला। रबड़ के बनाये गये कपड़े खानों में काम करने वाले, लकड़ी काटने वाले आदि मजदूरों के पहनने के काम भी आने लगे। सन् १८८८ में स्कॉटलैंडवासी जान बॉयड डनलप ने बेलफास्ट से हवादार टायर बनाने आरम्भ किये, इससे रबड़ की खपत में बहुत वृद्धि हुई और उसके कुछ साल ही बाद साइकिलों और मोटरों आदि का प्रचार होने के कारण रबड़ की पैदावार और खपत में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। सन् १९१५ ई० से १९२५ ई० तक मोटर आदि उद्योग का इतना विकास हुआ कि उसने रबड़ के उत्पादन में और उसकी खपत में बहुत ही अधिक वृद्धि हुई।[13] इसी के कुछ वर्ष पूर्व ही दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में पौध की रबड़ लग जाने से अधिकाधिक रबड़ प्राप्त होने लगा।

आरम्भ में बहुत समय तक संसार की रबड़ का अधिकांश भाग अमेजन नदी की घाटी में ब्राजील, बोलीविया, इक्वेडोर और कोलम्बिया के जंगलों में पैदा होने वाले रबड़ के जंगली पेड़ों से प्राप्त किया जाता था। किन्तु जंगली रबड़ की यह पूर्ति दुनिया की बढ़ती हुई मांग के साथ न बढ़ सकी इसलिये वहाँ के निवासियों ने इन पेड़ों को निर्दयतापूर्वक काटकर रबड़ प्राप्त करना आरम्भ किया। इतना सब करने पर भी सन् १९१२ में इन पेड़ों से ४००,००० हजार टन और सन् १९३९ में १६०,००० हजार टन से अधिक रबड़ प्राप्त नहीं किया जा सका, जब कि संसार में रबड़ की मांग मोटर व्यवसाय की प्राप्ति के साथ-साथ बढ़ रही थी। अतएव कुछ अँग्रेजों ने ब्राजील के जंगलों में पैदा होने वाले जंगली रबड़ के कुछ वृक्ष इङ्गलैण्ड में ले जाकर लगाने के प्रयास किये। सन् १८७६ में एक अँग्रेज वैज्ञानिक हैनरी विक्हम ने ब्राजील से हेविया (Para Rubber or Havea B. asilienis) के कुछ बीज इङ्गलैंड में क्यूकेरायल बोटेनिकल गार्डन में ले जा कर क्यारियों में लगाए और वहीं से सन् १८८१ में भारत और लंका को रबड़ के इन बीजों की पौध भेजी गई। लंका से यह पौधे फिर मलाया और पूर्वी द्वीप समूह के सभी भागों में से जाये गये। वहाँ सफलता-

१३. सन् १९०० तक ब्राजील से रबड़ का वार्षिक निर्यात, सन् १८८० की तुलना में दुगुना हो गया और इसके अतिरिक्त बेल्जियन कांगो से भी निर्यात की मात्रा १३५ टन से बढ़कर ५,५११ टन हो गई।

होती है वरन् यह असमान रूप से वितरित होती है और कभी-कभी तो सूखा भी पड़ जाता है। अतः शुष्क भागों में वृक्ष को पूर्ण वयस्कता प्राप्त करने में विलम्ब हो जाता है। (ख) इन भागों में प्रति मौसम में प्रति श्रमिक पौधे दूध का उत्पादन भी कम होता है। निचली अमेजन घाटी में यह मात्रा ४५० पौंड तक होती है, किन्तु दक्षिणी नदियों के ऊपरी भागों में यह मात्रा ८०० से २२०० पौण्ड तक होती है। मोटे तौर पर ब्राजील में यह उद्योग एक प्रकार से अनार्थिक कहा जा सकता है।

प्राकृतिक रबड़ का उत्पादन इस प्रकार है :—

देश	१९५८	१९६०	१९६१
		(००० मैट्रिक टनों में)	
मलाया	६७४	७१९	७५०
इन्डोनेशिया	६९९	६४०	७०२
थाईलैन्ड	१४०	१७०	१८५
कम्बोडिया तथा दक्षिणी वियतनाम	१०५	११४	१२१
लंका	१०२	९९	९७
नाईजीरिया	४२	६०	५६
सरावाक	४०	५१	४८
लाईबेरिया	४३	४२	४३
कांगो गणतन्त्र	३५	३६	३८
भारत	२५	२४	२७
उत्तरी बोर्नियो तथा ब्रूनी	२२	२५	२६
ब्राजील	२१	२३	२२
बर्मा	११	९	९
पैपुआन	५	४	४
कैमरून	४	४	५
विश्व का योग	१९७०	२,०३०	२,१४०

१९६२ में प्राकृतिक रबड़ का उत्पादन २,११०,००० टन होने का अनुमान था और इसका उपभोग २,१३८,००० टन का।

संसार की ९७% रबड़ दक्षिणी-पूर्वी एशिया की पौधों वाली रबड़ के देशों से प्राप्त होती है। यह देश रबड़ के उत्पादन-महत्व के अनुसार ये हैं—ब्रिटिश मलाया ४५% ; इन्डोनेशिया ३४% ; लंका ६% , थाइलैंड ६%, फ्रांसीसी हिन्दचीन ३% , सारावाक ३% , उत्तरी बोर्नियो ५% और दक्षिणी भारत १%।

मलाया में रबड़ उत्पादन—रबड़ मलाया का सबसे महत्वपूर्ण पदार्थ है। पिछले पचास वर्षों में रबड़ का महत्व इतना बढ़ गया है कि विश्व की कुल पैदावार की लगभग ५० प्रतिशत रबड़ यहीं से प्राप्त होती है। यहाँ की खेती के लिए उपयुक्त भूमि का कुल क्षेत्रफल ६० लाख एकड़ है जिसमें से लगभग ३५ लाख एकड़ केवल

15. Britannica Book of the Year, 1963, p. 434.

(क) इस भाग के वन कट जाने के कारण मिट्टी में अधिक कटाव हुआ था। अतएव मिट्टी की रक्षा करने वाली फसलों को उगाने के प्रयत्न किए गये।

(ख) तापाजोज नदी की घाटी में जलप्रवाह की उपयुक्त व्यवस्था नहीं थी अतएव उसे भी करना पड़ा।

(ग) यहाँ रबड़ के पौधे के कीड़े भी फैलने लगे। अतएव सन् १९३४ में कम्पनी ने अपना कार्य क्षेत्र बोआविस्ता से हटाकर बल्तयेरा में कर दिया जहाँ जलवायु सम्बन्धी लाभ तो है ही किन्तु तापाजोज नदी भी वर्ष भर नाव चलाने योग्य रहती है। इस उपवन में मजदूरों की पूर्ति नहीं हो सकी थी क्योंकि यहाँ ७६,००० एकड़ भूमि के लिये लगभग ११,००० अकेले रबड़ निकालने वालों की आवश्यकता पड़ती थी। यहाँ सन् १९४० ई० में केवल २७०० मजदूर काम करते थे। इसके अतिरिक्त यहाँ जुलाई से अक्टूबर तक सूखा मौसम होने के कारण रबड़ के पौधों को तैयार होने में १० वर्ष का समय लग जाता है। सन् १९४२ ई० में प्रतिदिन २,००० पौण्ड दूध इन पेड़ों से प्राप्त किया गया किन्तु अब यहाँ से दूध बन्द कर दिया गया है। मलाया की तुलना में यहाँ वर्षा की मात्रा में बड़ी अनियमितता पाई जाती है। यहाँ शुष्क मौसम जुलाई से अक्टूबर तक रहता है अतः रबड़ के वृक्षों को पूर्णतः बढ़ने में १० वर्ष तक लग जाते हैं जबकि मलाया में इसमें ५ से ७ वर्ष ही लगते हैं।

रबड़ के उत्पादन की दशाएँ

रबड़ विभिन्न जातियों के उष्ण कटिबन्धीय पेड़ों के रस (Latex) से तैयार किया जाता है।[१४] इनमें मुख्य हैं (क) ब्राजील की पारा रबड़ (Havea Braziliensis)



चित्र ५९. प्रमुख रबड उत्पादन क्षेत्र

(ख) मध्य अमेरिका की मेक्सिको रबड़ (Catilla Flastica); (ग) भारत की

१४. स्पेनवासी अन्वेषकों ने अमरीका में ऐसे वृक्षों को देखा जिनसे रस स्वतन्त्रतापूर्वक बहता हुआ पाया गया। अतः इन्होंने ऐसे वृक्षों को रोते हुए वृक्ष (weeping trees or caoutchoue) की संज्ञा दी गई।

है। युद्ध काल की अपेक्षा जावा की रबड़ की पैदावार आजकल बहुत गिर गई है। ब्रिटिश बोर्नियो का मुख्य पदार्थ रबड है। यहाँ की कुल निर्यात में ७० प्रतिशत रबड़ है और पैदावार ६०,००० टन है। हिन्दचीन के उपवन अधिकतर पूर्वी कोचीन और काम्बोडिया में हैं और पैदावार ४५,००० टन है। लका के उपवन दक्षिणी मध्यवर्ती भाग से दक्षिणी-पश्चिमी तट तक फैले हैं।

भारत में रबड के पेड अधिकतर घुर दक्षिणी-पश्चिमी भाग में हैं। भारत में विश्व का केवल १% रबड पैदा होती है। यहाँ लगभग २० हजार टन रबड पैदा होती है जिसमें से आधा-उत्तम प्रकार का होता है और आधा निम्न श्रेणी का। भारत में कुल उत्पादन का १०% मद्रास में, ७०% केरल और मैसूर में पैदा किया जाता है। भारत से अधिकांश रबड लका, इगलैंड, मलाया, जर्मनी और सयुक्त राज्य अमेरिका को निर्यात किया जाता है।

रबड़ मे विश्व व्यापार—रबड की लगभग सारी पैदावार व्यापार के लिए चली आती है। रबड़ पैदा करने वाले देशों में तो यह कम उपयोग हो पाती है क्योंकि रबड अधिकतर विदेशी पूंजी और दिलचस्पी के कारण पैदा होता है। दक्षिण-पूर्वी एशिया की पौध वाली रबड का तीन-चौथाई भाग अंग्रेजों के द्वारा पैदा होता है बाकी डच, फ्रांसीसी और बेल्जियन-वासियों के द्वारा। सयुक्त राज्य की रुचि विशेषतः ब्राजील और मैक्सिको की पौधों में है।

संसार में सबसे अधिक रबड़ मँगाने वाला देश सयुक्त राष्ट्र है। इसके बाद ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस और जापान का नम्बर आता है। सब रबड पैदा करने वाले देश ही रबड निर्यात करने वाले देश है। सिंगापुर और पिनांग के द्वारा ब्रिटिश मलाया की रबड भेजी जाती है। लका की कोलम्बो द्वारा तथा ब्राजील की पारा व मनौस द्वारा। अफ्रीका में रबड बाहर भेजने के कई छोटे-छोटे केन्द्र हैं। मलाया और सिंगापुर ५०%, इन्डोनेशिया से ३०%, तथा शेष थाइलैंड, हिन्दचीन और सारावाक से निर्यात की जाती है।

(२) लुब्दी (Paper Pulp)

कागज बनाने के लिए आजकल ६०% लकड़ी की लुब्दी काम में ली जाती है। लुब्दी अधिकतर मुलायम लकड़ियों से ही प्राप्त की जाती है। स्प्रूस इसके लिए सबसे अच्छी समझी जाती है किन्तु फर, चीड़, पोपलर और ऐस्पेन भी काम में ली जाती है। इन लकड़ियों से दो तरह की लुब्दी तैयार की जाती है—रासायनिक और भौतिक। रासायनिक लुब्दी बढ़िया किस्म के कागजों के लिए प्रयुक्त होती है किन्तु भौतिक लुब्दी निम्न कोटि की होने के कारण सस्ते कागज बनाने—अखबार वाला कागज या रैपिंग कागज—में प्रयोग में आती है। कागज बनाने के लिए लुब्दी उत्तरी अमेरिका, स्कैंडिनेविया, जर्मनी और जापान में अधिक प्राप्त की जाती है। लुब्दी बनाने के लिए अब एस्पर्टो, भाबर, सवाई, भँद, बाँस तथा हाथी-घास का भी प्रयोग किया जाने लगा है।

१९६१ में विश्व में ३५०,६०० हजार मैट्रिक टन लुब्दी तैयार की गई जब कि १९४५ में इसका उत्पादन केवल १७६,००० हजार टन ही का था। लकड़ी से लुब्दी बनाने वाले देश क्रमशः सं० राज्य, कनाडा, स्वीडेन, फिनलैंड, नार्वे, जापान, फ्रांस और आस्ट्रेलिया है।

अधिक कपूर प्राप्त हो सकता है। कारण अब वृक्षों को काटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। सबसे अधिक कपूर फारमोसा से बाहर भेजा जाता है। चीन का फूकीन प्रान्त, जापान के निकाऊ तथा क्यूशू द्वीप, भारत के कोचीन और दक्षिणी-पूर्वी एशिया के सुमात्रा, जावा और बोर्नियो में भी कपूर बाहर भेजा जाता है।

(७) गोंद (Gum)

उष्ण कटिबन्ध के वनों मे बहुत तरह के गोंद मिलते हैं। एक प्रकार का गोंद वह होता है जो पानी में घुल जाता है तथा यह चिपकाने के काम आता है। यह गोंद भारत, अफ्रीका सोमालीलैण्ड और आस्ट्रेलिया मे बाहर भेजा जाता है। दूसरे प्रकार का गोंद जिसे कोपाल (Copal) कहते हैं पानी मे नहीं घुलता है अतएव उसका उपयोग वार्निश में होता है। न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका तथा मलाया प्राय-द्वीप से यह कोपाल गोंद बहुत राशि मे बाहर जाता है।

(८) चमड़ा कमाने के पदार्थ (Tanning Materials)

वनों से चमडा कमाने के लिये छाल तथा फल भी मिलते हैं। हैमलाक तथा ओक की छाल इस काम मे बहुत आती है। स्प्रूस और लार्च भी उपयोग चमडा कमाने मे होता है। गैम्बियर जो एक भाडी की पत्तियो से निकाला जाता है चमड़ा कमाने के काम मे बहुत आता है। यह झाडी मलाया, जावा और सुमात्रा मे होती है। भारत के वनो मे बहेडा नामक वृक्ष का फल भी चमडा कमाने के उपयोग मे आता है। सिसीलियन भाडी (Sicilian Shrub) तथा उसकी तरह के अन्य पौधो की टहनियो से भी एक पदार्थ सुमच (Sumach) बनाया जाता है जिसका उपयोग चमडा कमाने मे होता है।

(९) कार्क (Cork)

कार्क एक प्रकार के ओक वृक्ष के बाहरी मोटी छाल को कहते है। कार्क का वृक्ष पुर्तगाल, स्पेन दक्षिणी फ्रांस तथा अफ्रीका के उत्तरी पहाड़ी प्रदेश, मोरक्को, ट्यूनिस और अलजीरिया मे पाया जाता है। इन्ही देशो से कार्क बाहर भेजा जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में भी इस वृक्ष को लगाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

वन-वस्तुओं का व्यापार

विश्व का कुल व्यापार के मूल्य का लगभग ६% वन-सम्पत्ति के व्यापार का होता है। इस व्यापार मे मुख्यत: लकड़िया (Timbers), लट्ठे, रबड, गोंद तथा अन्य चिप-चिपे पदार्थ, कागज की लकडी, सैलूलोज, कागज आदि होती हैं। इन सबमे इमारती लकड़ियाँ है। ये मुख्यत: मध्य और दक्षिणी अमरीका से आती हैं। क्यूबा, जेमका, मैक्सिको, भारत, ब्रटिश होंडूरास, हेटी आदि से मेहागनी का निर्यात किया जाता है। टीक या सागवान ब्रह्मा, भारत और थाइलैण्ड से आती है। यह निर्यात मुख्यत: संयुक्त राज्य और यूरोप के लिए होता है। फर, चीड, स्प्रूस आदि मुलायम लकडियां कनाडा, स्वीडेन, रूस, नार्वे और फिनलैंड से निर्यात की जाती हैं।

पिछले १० वर्षों में अफ्रीका में रबड़ का उत्पादन ३% से बढ़ कर ६% हो गया है।

जंगली रबड़ से दुनियाँ की कुल पैदावार को केवल १.८% रबड़ प्राप्त होती है। यह विशेष रूप से अफ्रीका (लाइबेरिया, बैलजियन कांगो, नाइजीरिया, कैमरून;) कैंपीरो (मैक्सिको), मध्य अमेरिका और दक्षिणी अमेरिका (ब्राजील, इक्वेडोर, वैनेजुएला, कोलम्बिया आदि) से मिलती है।

ब्राजील में रबड़ उत्पादन

अमेजन नदी के बेसीन में विश्व का सबसे उत्तम रबड़ प्राप्त किया जाता है। इसे **पारा रबड़** (Para Rubber) कहते है। इसके प्राकृतिक उत्पादन क्षेत्र अमेजन नदी के दक्षिणी भाग तक सीमित है। अमेजन और उसकी सहायक नदियों के किनारे कॉप मिट्टी के क्षेत्रों मे असख्य रबड के वृक्ष फैले हैं। नदी के मुहाने के निकट ये वृक्ष ज्वार की सीमा से ऊपरी क्षेत्र मे पैदा होते हैं। पारा रबड का सबसे अधिक उत्पादन पारा राज्य मे होता है, जबकि **सीरा रबड़** (Ceara Rubber) के वृक्ष अमेजन नदी के उत्तरी किनारे पर पाये जाते है, नदी के दक्षिणवर्ती किनारे पर नही।

नीग्रो नदी के उत्तर और ब्रैंको नदी के पश्चिम मे यद्यपि रबड के क्षेत्र पाये जाते हैं किन्तु इनका अभी तक विदोहन नही किया गया है। इसी प्रकार बहुत से वृक्ष द० अमेजिन, पारा और उत्तरी मोटोग्रासो के मैदान में भी अछूते पड़े है। विदोहन बेनी, अबूना और मदीना नदियों के ऊपरी भागों मे अमेजन के निचले क्षेत्र मे हुआ है। इनमे जलवायु सम्बन्धी अवस्थायें रबड उत्पादन के लिये विशेष रूप से अनुकूल हैं। जगली रबड के पेड सबसे अधिक ब्राजील मे पैदा होते है क्योंकि—

(१) रबड की पैदावार के लिए भूमध्य रेखा की जलवायु बहुत ही लाभदायक होती है। इसके पेडों के लिए साल भर ही बहुत अधिक तापक्रम (७५° से ९०° फा० तक) की आवश्यकता होती है। ब्राजील मे, जो विषुवत् रेखा पर स्थित है, रबड़ के लिए उपयुक्त जलवायु मिलता है।

(२) अधिक गर्मी के साथ साथ इसके लिए वर्षा की भी आवश्यकता होती है। अमेजन की घाटी मे वर्षा का औसत ८०'' से भी ऊपर होता है। यह बात ध्यान रखने योग्य है कि अधिक लम्बा और सूखा मौसम रबड के पेड़ों के लिए हानिकारक होता है।

(३) रबड़ की पैदावार के लिए मिट्टी उपजाऊ और ढालू होनी चाहिए। यही कारण है कि ब्राजील मे भूमि को ढालू रखने के लिए रबड़ के पेड़ प्राय: २,००० फीट ऊँचे ढालों पर लगाए जाते हैं।

(४) रबड से दूध निकालने के लिए काफी सस्ते और चतुर मजदूरों की आवश्यकता होती है। अमेजन की घाटी के निवासी पेड़ों से दूध प्राप्त करने के लिए बहुत बड़ी सख्या में मिल जाते है।

किन्तु इन सुविधाओं के अतिरिक्त ब्राजील को कुछ असुविधाओं का भी सामना करना पड़ता है जैसे (क) दक्षिणी क्षेत्रों की अपेक्षा यहाँ वर्षा न केवल कम

ऊपर लिखी हुई सुविधाओ के कारण शीतोष्ण कटिबन्ध में वन-प्रदेशों की लकड़ी का खूब उपयोग होता है और वनों से सम्बन्धित धन्धे बहुत उन्नति कर गये हैं।

(ख) उष्ण कटिबन्ध में—इसके विपरीत उष्ण कटिबन्धीय भागो में लकड़ी काटने के व्यवसाय में निम्नलिखित बाधायें उपस्थित होती है :—

(१) छोटी-छोटी घनी झाड़ियाँ, पौधे तथा बेलें वन को इस तरह ढँके रहते हैं कि वनो मे चलना और लकडी को कटकर लाना कठिन हो जाता है। अत्यधिक वर्षा के कारण बहुधा दलदल हो जाता है जिसको पार करना कठिन होता है।

(२) अधिकाश वनों की जलवायु खराब होती है जिससे वनों मे काम करने के लिये अधिक संख्या मे मजदूर तैयार नहीं होते।

(३) इन वनो मे भिन्न-भिन्न तरह के वृक्ष एक साथ उगे होते हैं, इस कारण उनको काटने और अलग-अलग रखने में बडी कठिनाई होती है। उदाहरण के लिये मगोहनी को काटना हो तो भिन्न-भिन्न स्थानो पर वह खडी मिलती है तथा उसको सघन वन मे ढूंढने मे बहुत समय और परिश्रम नष्ट होता है।

(४) उष्ण कटिबन्ध के वनो को न शक्ति की सुविधा है और न समीपवर्ती प्रदेश औद्योगिक तथा कृषि की दृष्टि से उन्नत दशा मे ही है।

इन वनों में असुविधायें होते हुए भी कुछ सुविधायें हैं। एक तो बडी-बड़ी नदियाँ होने के कारण लकडी को वहा लाने मे सुविधा होती है। दूसरे ये पिछड़े प्रदेश हैं इस कारण मजदूरी सस्ती है। इसके अतिरिक्त इन प्रदेशो मे महोगनी, देवदार और एबोनी जैसी सुन्दर, मजबूत और मूल्यवान लकडी मिलती है जिसकी ससार मे बड़ी माँग रहती है।

प्रश्न

१. किसी देश में वन-उद्योग के विकास में किन बातों का प्रभाव पड़ता है? मानसूनी वनों की अपेक्षा बाल्टिक के वन प्रदेश अधिक विकसित क्यों हैं? इन वनों से व्यापार के लिए कौनसी वस्तुएँ प्राप्त होती हैं?

२. विश्व के किन भागों में रबड का उत्पादन किया जाता है? रबड पैदा करने के लिए किन-किन भौगोलिक अवस्थाओं की आवश्यकता होती है? एशिया के प्रमुख रबड उत्पादन क्षेत्रों को बताइये। किन-किन देशों को रबड निर्यात किया जाता है?

३. नीचे लिखे शीर्षक पर रबड के लिए सम्पूर्ण वर्णन दीजिए :—

(i) उत्पत्ति स्थान (ii) उपयोग (iii) व्यापार।

४. वनों से इमारती लकड़ियों के अतिरिक्त क्या-क्या वस्तुएँ प्राप्त होती है? उन पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए।

५. साइबेरिया की वन-सम्पत्ति का वर्णन करते हुए उनके भविष्य की उन्नति पर प्रकाश डालिये।

अध्याय १५

कृषि और उसके रूप

(AGRICULTURE & ITS TYPE)

कृषि एक अत्यन्त ही व्यापक शब्द है जिसके अन्तर्गत मानव साधारण से लगाकर अत्यन्त जटिल क्रियाओ द्वारा भूमि का उपयोग अपने लाभ के लिए खाद्यान्न और कच्चा माल तैयार करता है। कृषि-क्रिया इस बात का उदाहरण है कि किस प्रकार मानव अपने वातावरण को अपने अनुकूल बनाता है। कृषि का मुख्य उद्देश्य मानव के लिए भोजन और कच्चे माल का उत्पादन करना है। भूमि का उपयोग अनेक बातों पर निर्भर करता है। इन कारणो मे भौतिक, आर्थिक एव सामाजिक कारण प्रमुख माने जाते है। इन्ही कारणो की अनुकूलता या प्रतिकूलता के फलस्वरूप धरातल पर किन्ही क्षेत्रो मे एक फसल, किन्ही म दो और किन्ही मे तीन या चार फसले प्राप्त की जाती है।

(क) प्राकृतिक या भौतिक कारण (Physical factors)

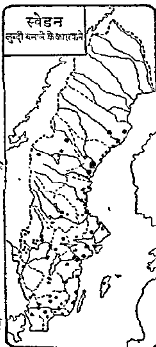
इनके अन्तर्गत कृषि पर प्रभाव डालने वाले कारक भूमि की प्रकृति, मिट्टी के गुण, तापक्रम तथा वर्षा की मात्रा है। इनमे से कई कारकों मे मानव ने अपने प्रयास से परिवर्तन किये हैं। जिन भूभागो मे जल का अभाव पाया जाता है वहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध किये गये हैं, जहाँ मिट्टी की उर्वरा शक्ति समाप्त हो गई है वहाँ खाद आदि देकर उसे पुन उर्वर किया गया है किन्तु जिन क्षेत्रो में ऐसा सम्भव नहीं हो पाया है वहाँ उसने कृषि को ही बदल दिया है जैसे अत्यन्त शीत प्रदेशो में शीघ्र उगने और पकने वाली फसलो का आविष्कार किया गया है।

(१) **जलवायु दशायें**—कृषि कार्यो पर सबसे अधिक प्रभाव तापक्रम और वर्षा का पडता है। पौधो के बढने के लिये एक निश्चित तापक्रम की आवश्यकता होती है। उससे कम मे अकुर निकलना सम्भव नही होता, अस्तु जिन क्षेत्रो मे ताप कम होता है वहाँ कृषि भी कम की जाती है। जलवायु पर अभी तक मानव सपूर्ण रूप से आधिपत्य स्थापित नही कर सका है और इस सम्बन्ध मे उसे प्रकृति पर ही निर्भर रहना पडता है। साधारणत जिन भूभागो मे गरम महीनो का औसत तापक्रम ५० फा० से कम मिलता है वहाँ खेती नही की जा सकती। पौधे गरमी मे ही बढते है इसलिए लम्बे ग्रीष्म ऋतु की आवश्यकता होती है। ऊँचे अक्षाशो मे गरम ऋतु छोटी होती है किन्तु दिन की लम्बाई अधिक होने से गरमी की मात्रा पर्याप्त उपलब्ध हो जाती है। निम्न अक्षाशो मे जहाँ ठढी ऋतु कठोर नही होती वहाँ वर्ष भर ही कृषि-कार्य चलता रहता है। यह वर्षा की मात्रा के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। उत्तरी देशो मे पाले से बचने के लिये ऐसी फसलो का उत्पादन किया जाने लगा है जो थोडे ही समय में पक जाती है।

फसलो के उत्पादन पर वर्षा की मात्रा का भी बड़ा प्रभाव पडता है। ऊँचे

(३) लाख (Lac)

लाख एक प्रकार का गोंद है जो विशेष प्रकार के जंगली वृक्षों के ऊपर रहने वाले छोटे-छोटे कीडे (Laccifer lacca) की देन है। ये कीडे बबूल, पलास, ढाक, खैर, सिस्मू और शिरीष आदि वृक्षों की डालों पर रहते हैं। इन्हीं डालों को खुरच कर लाख उत्पन्न की जाती है। लाख उत्पादन करने वाले देशों मे भारत का स्थान प्रथम है। अन्य देश थाइलैंड और इन्डोचीन हैं जहाँ लाख पैदा की जाती है।



चित्र ६२. लुग्दी बनाने के कारखाने

(४) गट्टापारचा (Gutta Parcha)

यह एक पेड का रस है जो रबड की भाँति निकाला जाता है। बिजली के तार के ऊपर जो खोल रहता है उसके बनाने मे इसका उपयोग होता है। बिजली के अधिक प्रचार के साथ-साथ इस कार्य मे गट्टापार्चा का उपयोग बढ गया है। गट्टापार्चा के खिलौने बहुत सुन्दर बनते हैं। अब तो गट्टापार्चा की अनेकों वस्तुयें बनाई जाने लगी हैं। आज ऐसी कोई बिसायतखाने की दूकान नही मिल सकती जिसमें गट्टापार्चा का सामान न हो। गट्टापार्चा अधिकतर मलाया प्रायद्वीप, पूर्वीद्वीप समूह तथा उष्ण कटिबन्ध के अन्य प्रदेशों मे उत्पन्न होता है और यहीं से विदेशों को जाता है। रबड की तरह गट्टापार्चा के उपवन भी लगाये गये हैं। आरम्भ मे भूल से इस पेड को नष्ट कर डाला गया था किन्तु अब तो इसको सावधानी से लगाया गया है।

(५) तारपीन का तेल (Turpentine Oil)

पाइन के वृक्ष से तारपीन का तेल तथा बीरोजा (Resin) निकाला जाता है। पाइन वृक्षों को काट कर उनसे गाढा-गाढा दूध और गोंद इकट्ठा किया जाता है। इससे तारपीन का तेल निकाल लिया जाता है और बीरोजा बच रहता है। इस तेल का उपयोग पेन्ट, वार्निश तथा साबुन बनाने मे किया जाता है। तारपीन का तेल संयुक्त राज्य अमेरिका, फिनलैंड, रूस, फ्रांस और भारत मे बनाया जाता है। रूस और स्वीडेन मे इन्हीं वृक्षों की लकडी से वुडटार (Wood-tar) बनाया जाता है।

(६) कपूर (Camphor)

कपूर के वृक्ष से कपूर तैयार किया जाता है। आरम्भ मे वृक्ष को काट कर उसकी लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े करके उसको पानी के साथ गरम करके कपूर निकाला जाता था किन्तु अब ज्ञात हुआ है कि पत्तियों तथा डालों मे तनो, से भी

अक्षांशों मे गर्मियां अधिक कठोर नही होती अत पौधो मे नमी की अधिक मात्रा नही उड पाती और न ही वायु इतनी सूखी होती है कि वे पौधो की नमी को सुखा सके अत शीतोष्ण कटिबन्धीय भागो में उष्ण कटिबन्धों की अपेक्षा कम जल मात्रा की आवश्यकता पडती है। साधारणत शीतोष्ण प्रदेशो मे फसलो के लिए कम से कम १५" से २०" वर्षा पर्याप्त मानी जाती है जबकि उष्ण-प्रदेशों मे ३०" से ४०"। इससे कम मात्रा मिलने पर सिंचाई करना आवश्यक हो जाता है। उत्तरी अमरीका तथा रूस मे ग्रीष्म ऋतु मे बर्फ पिघलने पर आवश्यक नमी मिल जाती है जो खेती के लिए पर्याप्त होती है।

पिछले पृष्ठ की तालिका मे विभिन्न फसलो का तापक्रम और वर्षा सम्बन्धी आवश्यकतायें बताई गई हैं।

(२) भूमि की प्रकृति—खेती उन्ही भूभागो मे की जा सकती है जहां हल चलाने के लिए समतल भूमि मिलती है। ऐसे भागो मे ही यत्रों का उपयोग किया जा सकता है तथा फसलो को ढोने की सुविधायें मिलती है। वस्तुत नदी घाटियो मे, पहाडी ढालो पर, उपजाऊ समतल भागो मे, समुद्रतटीय मैदानो म ही कृषि की जाती है। किन्तु यदि भूमि पर जनसख्या का भार अधिक होता है—जैसे चीन, जापान अथवा भारत मे—तो खेती पहाडो के ढालो पर भूमि को छोटे-छोटे टुकडो या सीढियो के आकार मे काट कर की जाती है। ऐसे पहाडी ढाल हजारो फीट की ऊँचाई तक पाये जाते है। अधिक से अधिक ४५° अश के ढालो पर सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। अधिक जनसख्या वाले क्षेत्रो मे खेत न केवल छोटे-छोटे वरन् बिखरे हुए भी होते है जबकि नये बसे देशो मे औसत खेत १५० एकड से भी बडा होता है।

(३) उपजाऊ मिट्टी—फसलो के लिए उपजाऊ मिट्टी का मिलना भी आवश्यक है। कम उपजाऊ भागो मे मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढाने के लिए प्राणिज अथवा रासायनिक खादो का उपयोग बढाया जाता है। विश्व मे खेती की दृष्टि से कांप, कछार या दोमट मिट्टियां सबसे महत्वपूर्ण है। बलुई, नमकीन या दलदली मिट्टी कृषि के उपयुक्त नही होती इसी कारण मरुस्थलो मे, अथवा नदियो के दलदली भागों मे कृषि क्रिया का अभाव पाया जाता है।

(ख) आर्थिक कारण (Economic factors)

इन कारणो मे बाजारो की निकटता, यातायात के साधनो की उन्नति, श्रमिकों की उपलब्धता, पूँजी और सरकारी नीति का स्थान मुख्य है।

(१) बाजार—कोई क्षेत्र उपयोग के केन्द्रों से कितनी दूर है यह बात भी खेती को प्रभावित करती है। साग, सब्जियां, शीघ्र नष्ट होने वाले फल-आदि सामान्यत घनी जनसख्या के क्षेत्रो के निकट ही पैदा की जाती हैं, किन्तु खाद्यान्न, उद्योगो के लिए कच्चा माल आदि दूर-दूर स्थित ग्रामीण क्षेत्रो मे। उदाहरण के लिए, फ्रास, ब्रिटैनी क्षेत्र अँग्रेजी बाजारो के लिए सब्जियां तथा फ्लोरिडा का दक्षिणी-पूर्वी भाग सयुक्त राज्य अमरीका के उत्तरी-पूर्वी नगरो के लिए सब्जियां और फल पैदा करते है।

(२) यातायात के साधन—व्यापारिक ढग से कृषि तभी सभव है जबकि कृषि उत्पादन क्षेत्रों का सबध उपभोग के क्षेत्रो से सभव हो। आजकल तो शीत भडारो की प्रगति हो जाने से हजारो मील दूर पैदा किये गए अडे, दूध, मक्खन

वनों का विदोहन (Exploitation of Forests)

(क) शीतोष्ण कटिबन्ध में—वन सम्बन्धी धन्धों (Forestry) की दृष्टि से शीतोष्ण कटिबन्ध के वन अधिक महत्वपूर्ण है। इसके कई कारण है—

(१) इन वनो मे नरम तथा कम कठोर लकडी मिलती है जो व्यापारिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

(२) इन वनो मे झाडी तथा छोटे-छोटे पौधे और लतायें नही होती इस कारण लकडी के बडे-बडे लट्ठो को वनो मे लाने में कठिनाई नही होती। नरम लकडी के वन अधिकतर शीतप्रधान देशों मे है। अस्तु जाडे मे जब वर्फ गिरकर जम जाती है तो लकडी को वनो मे लाने के लिये सुगम मार्ग बन जाता है। घोडो द्वारा वनो मे इकट्ठी की हुई लकडी जमी हुई नदियो तक ले जाई जाती है। जब नदियाँ पिघलती है तो लकडियाँ नीचे पहुँच जाती है और चीरने के कारखानो मे इनको चीरा जाता है। वर्फ तथा पानी के द्वारा इन वनो से लकडी बहुत कम खर्च से कारखानो मे पहुँचाई जाती है।

(३) अधिकाश नरम लकडी के वन प्रदेशो मे जाडो मे इतनी अधिक ठंडक होती है कि खेती नही हो सकती। इस कारण उन दिनो मे खेती मे लगे हुए लोग वनो मे लकडी काटने का काम करते है। अतः मजदूरी भी कम देनी पडती है।

(४) शीतोष्ण कटिबन्ध के वनो मे कुछ पेड बहुत विस्तृत क्षेत्रो मे पाये जाते है। उदाहरण के लिए यदि कही पाइन मिलता है तो मीलो तक पाइन के पेड दिखाई देते हैं। बहुत बडे क्षेत्रफल मे एक जाति के ही वृक्ष मिलने से उनको काटने मे सुविधा होती है।

(५) यदि वन-प्रदेशो मे जल-प्रपात होते है तो लकडी चीरने के लिये जल-शक्ति का उपयोग सरलता से हो सकता है। विशेष कर कागज तैयार करने के लिए लुब्दी बनाने मे तो जल-शक्ति का बहुत उपयोग होता है। बात यह है कि लकडी बहुत मूल्यवान चीज तो है नही कि इस पर बहुत खर्च किया जा सके। अतएव उसको वनो से लाने मे तथा चीरने और उसकी लुब्दी बनाने मे जल-शक्ति का उपयोग आवश्यक हो जाता है क्योकि जल शक्ति बहुत सस्ती है। कनाडा और नार्वे मे जल-शक्ति की अधिकता से वहाँ लकडी काटने का धन्धा अधिक पनप उठा है। एक बात और भी है जिससे सस्ती शक्ति का महत्व बढ जाता है। लकडी चीरने के कारखानो (Saw Mills) मे बहुत सी लकडी व्यर्थ नष्ट हो जाती है। उदाहरण के लिये कारखानो मे एक लट्ठे को साफ करके लकडी बनाने मे ५३% लकडी नष्ट हो जाती है। यदि वहाँ शक्ति सस्ते दामो पर मिल सके तो उस लकडी को लुब्दी तथा अन्य पदार्थो मे परिणत करके बाहर भेजा जा सकता है अन्यथा उस लकडी का कोई उपयोग नही हो सकता।

(६) लकडी भारी चीज है इस कारण वह अधिक भाडा सहन नही कर सकती। अस्तु, लकडी के उत्पन्न होने के स्थान समीपवर्ती प्रदेश मे ही यदि उसकी माँग हो तो धन्धा बहुत उन्नति कर सकता है। शीतोष्ण कटिबन्ध मे वन प्रदेशो के समीप ही औद्योगिक केन्द्र है तथा उसके समीप ही उपजाऊ और घने आबाद प्रदेश है। अतएव लकडी की खपत वही हो जाती है।

तथा दालें, शीतोष्ण देशो मे दूध, मक्खन, रोटी, फल-तरकारियाँ और शराब आदि अधिक काम मे ली जाती है। फलत यहाँ इन्ही वस्तुओ का उत्पादन किया जाता है। चीन मे तो चावल भोजन का मुख्य अनाज है, जबकि भारत मे दक्षिण के पठार के निवासियों का मुख्य खाद्यान्न ज्वार-बाजरा, सरधम और उत्तरी भारत का गेहूँ है। फ्रांसीसी जहाँ भी भूमि मिल जाती है वहाँ अन्य अनाजो की अपेक्षा गेहूँ भी बोना पसंद करते है। भूमध्य सागरीय प्रदेश में अंगूरो की अधिकता के कारण ही शराब पीने का रिवाज हुआ है। चीन तथा तिब्बत में बुद्ध धर्मावलम्बियो द्वारा मास खाना वर्जित है अत यहाँ मछलियां अधिक खाई जाती है। इसी प्रकार पशुओ को मारना वर्जित होने के कारण रेशम के कोयो को कृत्रिम रीति मे गर्म करने की क्रिया का चीनी लोग विरोध करते है और इसीलिए उपयुक्त जलवायु होने पर भी यहाँ रेशम के कीड़े पालने का उद्योग अधिक विकसित नहीं हुआ है।[2]

(२) आधुनिक कृषि को व्यापारिक चक्रों (Business Cycles) तथा युद्धो आदि का उतना ही डर रहता है जितना कि प्राचीन कृषि को अनुपस्थित जमींदारो. ओलो, बाढो तथा अकालो का डर रहता था।[3] भारतीय कृषक आज भी मानसूनों की अनिश्चितता से डरता है और उसी के कारण वह भाग्यवादी बना है। वह अपनी फसल को मानसून का जूआ मानता है।

कृषि का विकास

मानव शास्त्रियों का अनुमान है कि कृषि का विकास सभवत चार क्षेत्रों में हुआ है. **प्रथम क्षेत्र** के अतर्गत ईथोपिया के उच्च-स्थल, अनातोलिया, ईरान, अफगानिस्तान सम्मिलित किये जाते हैं। **दूसरे क्षेत्र** मे दक्षिणी और दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देश आते हैं। **तीसरे क्षेत्र** में नई दुनिया और **चौथे क्षेत्र** मे पुरानी दुनिया के उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र।

पुरानी दुनिया मे अनाजो और कृषि की अन्य वस्तुओं का उत्पादन इस प्रकार अनुमानित किया जाता है[4] .—

(१) दक्षिण-पश्चिम एशिया मे प० पाकिस्तान एव सिंधु नदी की घाटी, अफगानिस्तान, ईरान, ट्रास काकेशिया, और पूर्वी तथा मध्य अनातोलिया को मुलायम गेहूँ, राई, छोटे दानेवाली अलसी, छोटे दाने वाली मटर, मसूर, सेब, नासपाती, बेर और अनेक शीतोष्ण कटिबधीय फलो का घर माना जाता है। यहाँ अनेक जलपूर्ण पहाडी घाटियाँ पाई जाती है जिनका जलवायु समय तथा तापक्रम शीतोष्ण होता है। भूमि इतनी उपजाऊ है कि जरा भी प्रयत्न करने पर फल मिलना सरल है।

(२) भूमध्यसागरीय क्षेत्र जिसे जैतून, अजीर और चौडी फलियों का घर माना जाता है।

(३) इथोपिया मे सबसे पहले कठोर गेहूँ, जौ तथा बड़े दाने वाले मटर का पौधा बोया गया।

---

2. *J. Brunhes*, **Human Geography**, p. 306.
3. *Zimmermann*, **World Resources and Industries**, 1951.
4. *R. L. Beals & H. Hoyer*, **Op. Cit.**, pp. 346-347.

६. वनों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं (विशेषकर लकड़ी चीरने के व्यवसाय) के आर्थिक महत्व को समझाइये। स० रा० अमेरिका के उत्तरी भागों की अपेक्षा दक्षिणी भागों में लकड़ी चीरने के व्यवसाय के लिये क्या विशेष सुविधायें पाई जाती हैं ?

७. यूरोपीय रूस की वन सम्पत्ति का वर्णन करिये। किन कारणों से इनका विकास हुआ है ?

८. रबड़ उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र कौन-कौन से हैं ? अमेजन बेसिन रबड़ उत्पादन में क्यों पिछड़ रहा है ? भारत में पौध वाली रबड़ का भविष्य क्या है ?

९. "यद्यपि उष्ण कटिबन्ध वनों में लकड़ियों के भण्डार शीतोष्ण कटिबन्धीय भागों की अपेक्षा अधिक हैं किन्तु उनका उपयोग नहीं हुआ है।" इसका क्या कारण है ?

०. "वन राष्ट्र की सम्पत्ति है। नदी-प्रणालियों की भांति वन भी बहुमूल्य धन्धों के स्रोत हैं।" इस कथन की पुष्टि में यूरोप अथवा उत्तरी अमरीका के वन प्रदेशों का वर्णन करिये।

नीचे के मानचित्र में कुछ प्रमुख कृषि उत्पादनों के सम्भावित जन्म स्थान बताये गये हैं :—



चित्र ६३ कुछ प्रमुख वस्तुओं के सम्भावित जन्म-स्थान

उपज	सीमा रेखा	जलवायु सम्बन्धी आवश्यकतायें		जलवायु
		तापक्रम (डिग्री मे)	वर्षा	
गेहूँ	२०—६०° उ० व दक्षिण अक्षांश	३९-६८ फा०	२०-४०″	ठण्डी और तर
चावल	४०° उ० व दक्षिण अक्षांश	७५-९० फा०	६०-१००″	गर्म, तर
मकई	४०—४५° उ० व दक्षिण अक्षांश	५५-८३ फा०	४०- ८०″	गर्म, तर
जई		२८-६८ फा०	२०- ४०″	ठण्डी और आर्द्र
कपास	३०—४०° उ० व दक्षिण अक्षांश	६८-८७ फा०	२०- ४०″	गर्म, तर, आर्द्र
गन्ना	३०° उ० व दक्षिण अक्षांश	६५-८८ फा०	६०- ८०″	गर्म, तर
चाय	५—३५° उ० व दक्षिण अक्षांश	७५-८५ फा०	६०-१००″	गर्म, तर
कहवा	२८—३८° उ० व दक्षिण अक्षांश	५०-७५ फा०	६०-१००″	गर्म, तर
रबड	विषुवत् रेखा के ५° उ० व द०	७५-८० फ.०	६०-१००″	गर्म, तर
कोको	विषुवत् रेखा के १५° उ० व द०	७५-८० फा०	७५-१००″	गर्म, तर

विश्व की प्रमुख नदियों में बहने वाली जल की मात्रा इस प्रकार अनुमानित की गई है :—[5]

नदी	वार्षिक औसत बहाव (अरब घन मीटरों में)
मायूसीप्पाग	६२०
गगा	४००
कोलम्बिया (स० राज्य)	२४०
वोल्गा	२३०
सिंधु	२००
नील	८४
दजला	४०
ऑरेंज	१०
मरे	८
थेम्स	२½
जार्डन	१

सिंचाई के साधनों तथा धरातल की बनावट का गहरा सम्बन्ध है। यदि भूमि पथरीली हो और प्रदेश पहाड़ी हो तो नहरें नहीं खोदी जा सकतीं क्योंकि नहरें खोदने में बहुत अधिक व्यय पड़ेगा। साथ ही नहरें उन्हीं नदियों से निकाली जा सकती हैं जिनमें बराबर पानी रहता हो। भारत में केवल उन्हीं नदियों से नहरें निकाली गई हैं जो बर्फीली पहाड़ों से निकलती है। तालाब और झील बनाने में अधिक व्यय नहीं होता क्योंकि केवल उनमें बाध बनाकर पानी को रोकना पड़ता है। किन्तु भूमि पथरीली होने पर कुओं का खोदना तथा विशेषकर पाताल-तोड़ कुओं (Artesian wells) का बनाना बहुत कष्टसाध्य तथा खर्चीला होता है। आस्ट्रेलिया में सबसे अधिक पाताल तोड़ कुएं पाए जाते हैं।

सिंचाई का अभ्यास आज-कल तर खेती के क्षेत्रों में बहुत सामान्य रूप से होने लगा है क्योंकि वहाँ पर होने वाली जलवर्षा पर फसलें इतनी निर्भर नहीं रह सकतीं जितनी सिंचाई पर। जलवर्षा द्वारा जो नमी फसलों को पहुँचती है वह व्यवस्थित रूप से नहीं पहुँचती है। साधारण दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि यदि किसी पक्ष में एक इंच से कम वृष्टि हो तो फसलों की हानि पहुँचेगी। इस अनुमान के अनुसार सिंचाई की आवश्यकता उन क्षेत्रों में भी पड़ जाती है जिनकी औसत वार्षिक जल वर्षा काफी ऊँची रहती है।

5. *H. Addison*, **Land, Water and Food**, 1961, p. 19.

सब्जियाँ, फल आदि भी शीघ्रता के साथ उपभोग केन्द्रों को पहुँचाई जा सकती है। यातायात की प्रगति होने से ही क्षेत्र विशेषों में फसलों का विशेषीकरण सम्भव हो सका है जिसके फलस्वरूप वहाँ की भूमि और जलवायु के साधनों का पूरा-पूरा उपयोग सम्भव हो सका है। भूमध्यसागरीय प्रदेशों में रसदार तथा सूखे फल,आस्ट्रेलिया में मक्खन तथा दूध और कनाडा एवं संयुक्त राज्य में फलों का उत्पादन इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

(३) **श्रमिक**—किसी भी प्रकार की कृषि करने के लिए कम अधिक मात्रा में श्रमिकों की उपलब्धि आवश्यक है। ये निपुण और सस्ते दोनों ही होना आवश्यक है। श्रमिकों की अधिकता के कारण ही द० पूर्वी एशियाई देशों में चावल और चाय की खेती, ओशीनिया महासागर के द्वीपों में गन्ना और नारियल की खेती की जाती है किन्तु जहाँ मानव श्रम अधिक मँहगा होता है वहाँ यन्त्रों के द्वारा ही खेती की जाती है—विशेषत रूस और संयुक्त राज्य अमरीका में।

(४) **पूँजी**—पूँजी की उपलब्धि भी कृषि के लिए आवश्यक तत्व है। इसी के द्वारा न केवल उत्तम बीज, खाद और वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग सम्भव है वरन् मशीनों का प्रयोग, सिंचाई के साधनों का विकास और उत्पादित वस्तुओं को बाजारों तक लाने और उन्हें आवश्यकता पडने तक संग्राहकों में एकत्रित करने के लिए भी पूँजी की आवश्यकता पडती है। भारतीय किसान दरिद्र होने के कारण इन साधनों का उपयोग करने में पिछडा हुआ है और इसीलिए प्रति एकड उत्पादन, विश्व के कृषि प्रधान देशों की अपेक्षा कम होना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं।

(५) **राज्य की नीति**—किसी देश की सरकार की कृषि-नीति भी कृषि को बढाने अथवा घटाने में सहायक होती है। भारत सरकार के समक्ष इसकी बढती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न प्राप्त करने की समस्या के कारण ही प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि को प्राथमिकता दी गई है। श्री टेलर के अनुसार "जब नई दुनिया से खाद्यान्नों ने यूरोपीय बाजार को पाट दिया तो विवशतः इंगलैंड सरकार को अपनी कृषि के स्थान पर उद्योगों को विकसित करने की नीति को अपनाना पडा। फ्रांस और जर्मनी ने इस समस्या का सामना संरक्षण कर लगा कर किया। डेनमार्क ने स्वतंत्र व्यापार को ही अपनाया और विदेशों से प्राप्त सस्ते खाद्यान्नों पर ही अपने छोटे-छोटे खेतों में दुग्ध उद्योग को अपनाया।"[1] संयुक्त राज्य और कनाडा में भी जब अधिक गेहूँ के उत्पादन के कारण तथा ब्राजील में कहवा के कारण, विश्व के बाजारों में माग की अपेक्षा पूर्ति अधिक हुई तो इनके मूल्य गिर गये। इसलिए इन देशों ने अपनी करोडों टन फसल समुद्र के गर्भ में विलीन करदी अथवा उसे जला डाला गया।

(ग) सामाजिक कारण (Social factors)

इसके अंतर्गत निम्न कारण सम्मिलित किये जाते हैं —

(१) **मानव की भोजन रुचि**—विभिन्न देशों और जलवायु प्रदेशों में मनुष्य की भोजन रुचि भिन्न-भिन्न पाई जाती है। मानसूनी देशों में चावल और मछली

---

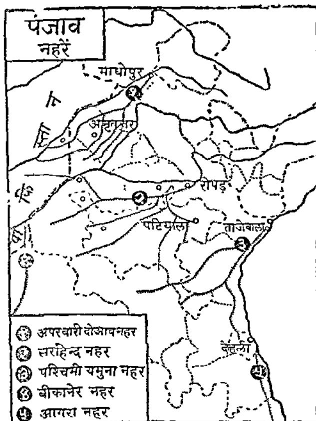
1. *G. Taylor*, **Geography in the Twentieth Century,** p. 149

(१) यह भाग समतल है। इन भागों की भूमि का ढाल इतना धीमा है कि नदियों के ऊपरी भागों में निकाली हुई नहरों का पानी सरलता से ही सारे मैदान में फैल जाता है।

(२) उत्तरी भारत और डेल्टाओं की भूमि अधिकतर में नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से बनी है जो बड़ा उपजाऊ है। अतः यहाँ सिंचाई प्राप्त करने पर उनमें फसलें पैदा हो सकती हैं।

(३) इन भागों में चट्टानें बहुत कम हैं तथा मिट्टी मुलायम है इसलिये नहरें खोदने में बड़ी सरलता होती है और खर्चा भी अधिक नहीं होता।

(४) उत्तरी भारत के मैदानों में हिमालय पर्वत की बर्फ से ढकी चोटियों से निकली हुई बड़ी-बड़ी नदियाँ बहती हैं जिनमें अथाह पानी भरा रहता है और जो कभी नहीं सूखती। अतः इनसे जो नहरें निकाली जाती हैं वे भी साल भर तक पानी से भरी रहती हैं।



चित्र ६५. पंजाब की नहरें

(५) देश की अधिकांश जनसंख्या खेती करने में संलग्न है। अतः खेती के लिये सिंचाई की माँग अधिक है।

(४) पर्वतीय चीन और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों को मिलेट्स, सोयाफली, अनेक प्रकार की जड़ी बूटियाँ, तथा सनई का उत्पन्न किया जाना माना जाता है।

(५) मध्यवर्ती तथा दक्षिणी भारत, ब्रह्मा, इंडोचीन आदि देश गन्ना, चावल और एशियाई कपास के उत्पत्ति स्थान हैं।

केला, नारियल, रतालू आदि के उत्पत्ति स्थान भी दक्षिण-पूर्वी एशिया के देश अनुमानित किये जाते है।

(६) नई दुनिया ने भी विश्व को अनेक अनाज तथा अन्य पौधे भेंट किये है। ऐसा अनुमान है कि कोलम्बस के पूर्व के यूरोप मे आज के कृषि-पौधों की संख्या का लगभग तीन-चौथाई अज्ञात है। नई दुनिया मे कृषि के प्रारंभिक स्थल मध्य अमरीका और दक्षिणी अमरीका के उत्तरी भाग माने जाते है। इन भागों से विश्व को ये पौधे मिले है :—

अरारोट, कोको, कपास, सीताफल, अमरूद, शमीधान (Lupine), मकई, पपीता, मूगफली, अनन्नास खीरा, लौकी, आलू, टमाटर, तम्बाकू, शकरकंद आदि।

इन वस्तुओं का उत्पादन पूर्वी स० राज्य अमरीका, उत्तर-पश्चिमी मैक्सिको, एरीजोना, मध्य मैक्सिको, पीरू, चिली, ब्राजील, पैरेग्वे, वेनेजुएला, इक्वेडोर, कोलंबिया, एटीलीज, मध्य अमरीका और ग्वाटेमाला मे होता था।

वर्तमान काल मे विश्व मे दो बड़े कृषि क्षेत्र बताये गये है :—

एक वे जिनमें गेहूँ प्रमुख अन्न है। ऐसे क्षेत्र यूरोप से लगाकर उत्तरी अफ्रीका, निकट पूर्व होते हुए मध्य एशिया से उत्तरी चीन तक फैले है। इन क्षेत्रों मे गेहूँ के साथ-साथ अनेक प्रकार के अनाज भी पैदा किये जाते है, विशेषत जौ, राई और इनके साथ ही चौपाये, भेडे, बकरियां, घोडे तथा सुअर भी पाले जाते है।

दूसरे क्षेत्र वे हैं जिनमे चावल प्रमुख अनाज है। ये क्षेत्र जापान, दक्षिणी चीन, द० पूर्वी एशिया, इन्डोनेशिया, और भारत मे फैले है। इनमे भी चावल के अतिरिक्त मोटे अनाज तथा भैंसे मिलते है।

विज्ञान के विकास ने कृषि को पूर्णतया परिवर्तित कर दिया है। विभिन्न शासन-प्रणालियाँ, राजनीतियाँ और लोगों के रहन-सहन के ढंग में अन्तरों के कारण विभिन्न देशों के खेती करने के ढंगों मे भी अन्तर पाया जाता है। किन्तु कुछ देशों मे कुछ सीमा तक खेती करने के तरीकों मे समानता भी पाई जाती है। उष्ण कटिबन्धीय वर्षीले वनों मे खेती करने का ढंग लगभग एक-सा है। दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में खेती के ढंगों मे समानता पाई जाती है। भारत, बर्मा, चीन और जापान के खेतों के स्वरूप में भीतरी अन्तर नहीं पाया जाता। पहले तीन देशों की अपेक्षा जापान की खेती में वैज्ञानिक पुट अधिक है। जावा, क्यूबा, ब्राजील, मलाया आदि देशों की फसलों में अन्तर है किन्तु कृषि का ढंग एक ही है।

कृषि का वर्गीकरण

कृषि अनेक प्रकार की हो सकती है। इसका वर्गीकरण मुख्यतः दो आधारों पर किया जा सकता है। (क) कृषि करने के ढंगों की विभिन्नता और समानता के आधार पर, तथा (ख) जल प्राप्ति की मात्रा के आधार पर।

भारत मे नदियो के डेल्टा प्रदेशो मे पाई जाती हैं। अनित्यवाही नहरो मे केवल बाढ के समय तथा नित्यवाही नहरो मे वर्ष भर मे सिंचाई के लिए जल मिलता रहता है। नहरो की सिंचाई की दृष्टि से पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एव मद्रास राज्य मुख्य हैं।

सिंचाई की नहरो का सापेक्षिक महत्व अगले पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट होगा।[7]

तालाबों द्वारा सिंचाई मुख्यत. मद्रास, मैसूर, आंध्र, द० पूर्वी राजस्थान और मध्यप्रदेश के कुछ भागो मे की जाती है। इनमे नहरें निकाल कर भूमि को सींचते हैं।

कुएँ दो प्रकार के होते हे। साधारण कुओं द्वारा सींचे जाने वाले मुख्य भाग ये है (१) मद्रास में दक्षिणी भाग, नीलगिरी और इलाइची पहाडियो का पूर्वी भाग जो गंतूर कोयम्बतूर होता हुआ तिरुनलवेली तक फैला है। (२) महाराष्ट्र के दक्षिणी पठार से लगाकर पश्चिमी घाट के पूर्वी भाग, (३) उत्तर प्रदेश, उत्तरी राजस्थान एवं बिहार।

नलकूपों द्वारा सिंचाई प्राप्त करने वाले दो क्षेत्र हैं (१) गंगा के पूर्व की ओर का भाग जिसमे बिजनौर, मुरादाबाद और बदायूं जिले सम्मिलित हैं। (२) गंगा के पश्चिम की ओर का भाग जिसमे सहारनपुर, मेरठ बुलन्दशहर, मुजफ्फरनगर और अलीगढ़ के जिले सम्मिलित हैं।

पाकिस्तान मे सिंचाई

पाकिस्तान का नहर सिंचाई के दृष्टिकोण से ससार मे दूसरा स्थान है। पश्चिमी पाकिस्तान की ३४% भूमि सींची जाती है। पाकिस्तान में जितनी भूमि मे खेती होती है उसके एक तिहाई से भी अधिक भाग मे नहरो द्वारा सिंचाई होती है।

पाकिस्तान की मुख्य नहरें निम्नलिखित हैं :—

(१) **निचली झेलम नहर**—इस नहर के बनाने का का कार्य सन् १९०१ में आरम्भ हुआ। यह नहर झेलम नदी से काश्मीर की सीमा पर रसूल नामक स्थान से निकाली गई है। यह ९३० कि० मी० लम्बी है और इस नहर द्वारा गुजरात, शाहपुर तथा भाग आदि जिलो मे सिंचाई होती है।

(२) **निचली चिनाव नहर**—यह पाकिस्तान की सबसे बडी नहर है और सन् १८९२ मे बन कर तैयार हुई। यह चिनाव नदी से वजीराबाद के निकट खानकी नामक स्थान से निकाली गई। इसके बन जाने से लायलपुर व शेखपुरा के आसपास का प्रदेश बहुत उपजाऊ हो गया है। जिस क्षेत्र मे लायलपुर स्थित है वहाँ आबादी का घनत्व जो १८९१ मे १७ प्रति वर्गमील था सन् १९५१ मे बढ़ कर ६१२ हो गया। नहर की लम्बाई २३ हजार मील है।

(३) **ऊपरी झेलम नहर**—काश्मीर में मगला नामक स्थान पर झेलम से निकाली गई है और ऊपरी झेलम व ऊपरी चिनाव नदियो के बीच मे स्थित गुजरात प्रदेश को सींचती है।

(४) **ऊपरी चिनाव नहर**—काश्मीर मे मराला नामक स्थान के निकलती

7: **India 1963**, pp. 246-47.

(क) कृषि के ढंग के अनुसार—कृषि करने के ढंगों की विभिन्नता और समानता के विचार से यह निम्न प्रकार की हो सकती है —

१. प्राचीन खेती	३. गहरी खेती
२. विस्तृत खेती	४. पौध वाली खेती

इनका वर्णन 'मानव के व्यवसाय' नामक अध्याय में किया जा चुका है।

(ख) जल प्राप्ति के अनुसार—इस प्रकार की खेती निम्न प्रकार की हो सकती है :—

१. तर खेती	४. सिंचाई द्वारा खेती
२. आर्द्र खेती	५. पहाड़ी खेती
३. सूखी खेती	६. मिश्रित खेती

(१) तर खेती (Wet Cultivation)—विशेषत काँप मिट्टी के उन भागों मे की जाती है जहाँ साधारणतया वर्षा ८०" से ऊपर होती है यथा—भारत में मध्य और पूर्वी हिमालय प्रदेश, दक्षिणी बंगाल, मलाबार तट आदि में। यहाँ बिना सिंचाई के ही खेती द्वारा गन्ना चावल, आदि उपजें उत्पन्न की जाती है। विश्व के अन्य देशों मे आर्द्र खेती मुख्यत उत्तर-पश्चिमी यूरोप, उत्तरी-पूर्वी दक्षिणी अमेरिका, जावा, लंका, मलाया आदि दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में होती है। ऐसी खेती द्वारा पैदा किये जाने वाले पदार्थ सस्ते होते है क्योंकि फसलों को जल देने की आवश्यकता नही रहती।

(२) आर्द्र खेती (Humid Farming)—विश्व की कृषि योग्य भूमि की सबसे अधिक भाग इस प्रकार की खेती के अन्तर्गत है। यूरोप, अमरीका और एशिया के विस्तृत कृषि भागों में इस प्रकार की खेती ही होती है। भारत मे विशेषकर काँप मिट्टी और काली मिट्टी के प्रदेशों मे की जाती है जहाँ वर्षा ४०" से ८०" के बीच मे हो जाती है। ऐसे भाग मध्यवर्ती गंगा का मैदान, दक्षिण और मध्य प्रदेश है। यहाँ प्राय दो फसलें उत्पन्न की जाती है।

(३) सिंचाई द्वारा खेती (Irrigation Farming)—विश्व के मानसूनी अथवा अर्द्ध-शुष्क प्रदेश मे की जाती है जिसमें २०" से ४०" तक वर्षा हो जाती है। जहाँ की मात्रा अनिश्चित, कम अथवा मौसम विशेष मे ही होती है और जहाँ वर्ष भर ही तापक्रम कृषि उत्पादन के उपयुक्त रहते है। ऐसे भाग भारत मे गङ्गा का पश्चिमी मैदान, उत्तरी मद्रास और दक्षिणी भारत की नदियो के डेल्टा-प्रदेशों मे है। संसार के अन्य देशो यथा—मिस्र, चीन, फारस, संयुक्त राज्य अमेरिका और मैक्सिको मे भी सिंचाई द्वारा खेती की जाती है। भारत मे सिंचाई के सहारे गेहूँ, चावल, गन्ना कपास आदि फसलें की जाती हैं।

सिंचाई के निम्नलिखित तीन साधन हैं : (१) नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है इसके लिए नदियाँ ऐसी होनी चाहिए जिनमें सदैव पानी भरा रहता है। (२) तालाब अथवा झील मे वर्षा का पानी इकट्ठा कर लिया जाता है और फिर सूखे मौसम में उसका उपयोग सिंचाई के लिये होता है। (३) पृथ्वी के अन्दर बहते हुये पानी को कुएँ खोद कर सिंचाई के काम मे लाया जाता है।

सिंचित भूमि का सबसे बड़ा क्षेत्रफल भारत मे है जहाँ सिंचाई के संसार के बडे-बडे प्रबन्ध पाये जाते है। भारत मे लगभग ५८ करोड एकड भूमि मे सिंचाई होती है। उसमे लगभग ३७ करोड एकड भूमि पर खाद्य पदार्थ पैदा किये जाते है। भारत मे ससार के सभी देशो की अपेक्षा अधिक सिंचाई की जाती है। जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा —



चित्र ९४ आस्ट्रेलिया मे पाताल तोड कुएँ

देश	सिंचित क्षेत्रफल (००० हैक्टेअर्स मे)	कृषि भूमि का प्रतिशत
भारत	२२,५३३	१४·१
जापान	२,८५२	५६ १
स० रा० अमरीका	११,९५६	६ ४
इटली	१३४	० ८
कनाडा	२५४	०·७
फ्रास	२७	० १
ब्रह्मा	५४०	७ ३
लका	२६५	१७ ४
पाकिस्तान	१०,०५१	४० ८
सूडान	२,४०६	३९ ३
मिस्र	[illegible]	[illegible]
ईराक	२,८००	५१ ३
ईरान	१,६००	९ ६
चीन	३१,०००	४६·०

भारतवर्ष ससार मे अपनी नहरो के लिये प्रख्यात है। दुनिया मे सबसे अधिक सिंचित क्षेत्र हमारे देश मे ही है। नहरें खोदने के लिये सबसे अच्छे भाग उत्तरी भारत मे गंगा यमुना के मैदान और दक्षिणी भारत मे पूर्वी किनारे की नदियो के डेल्टा है, क्योंकि—

रसूल नल कूप योजना—इसमें १,८६० नलकूप लगाने की योजना थी, जिनकी शक्ति रसूल जल विद्युत केन्द्र से मिलती लेकिन १९७५ तक केवल १३७३ नल कूप लगाये गये जिनमें आसपास के क्षेत्रों की सिंचाई होती है।

वारसाक बहुमुखी योजना—यह एक बहुमुखी योजना है। इसमें काबुल नदी पर एक बाँध बनाया गया है जो कराची से लगभग १,००० मील दूर और पेशावर से उत्तर पश्चिम में १८ मील दूर है। इस पर सन् १९५६ के आरम्भ में कार्य आरम्भ हुआ तथा सन् १९६० के अन्त में पूरा हुआ। इस बाँध की लम्बाई ६५० फीट तथा ऊँचाई २५० फीट है। इससे १ लाख २० हजार एकड़-भूमि की सिंचाई होगी तथा आरम्भ में १,६०,००० K. W. जल विद्युत उत्पन्न होगी तथा बाद में इसकी क्षमता २४०,००० K. W. हो जायेगी जब इसका दूसरा चरण पूरा हो जायगा। जलाशय के बायें तथा दाहिने किनारे से नहरें निकाली जायेंगी। दाहिनी ओर की नहरों से लगभग १,१०,००० एकड़ भूमि की तथा बायीं ओर की नहर से ११,००० एकड़ भूमि की सिंचाई होगी।

इस योजना का मुख्य उद्देश्य सस्ती जल विद्युत उत्पन्न करना है जिससे पश्चिमी पाकिस्तान में औद्योगिक उन्नति हो सके।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सिंचाई

संयुक्त राज्य में जिस भूमि में सिंचाई होती है और जिस भूमि में अन्न उपजाने के लिये सिंचाई की आवश्यकता है उन्हें डेविस (Davis) ने तीन भागों में विभाजित किया है

(१) नई मिट्टी का क्षेत्र या दलदल जो मिसीसिपी और उसकी सहायक नदियों की तलैटी में है।

(२) उत्तर-पूर्व के हिम-प्रदेश की भूमि जहाँ सिंचाई के अच्छे साधन नहीं हैं तथा वे क्षेत्र जो गड्ढे हैं और जहाँ से पानी निकालने का कोई मार्ग नहीं है।

(३) तटीय दलदल और नमी युक्त भूमि जो आन्ध्र और प्रशान्त महासागर के तट पर और खाड़ी तट पर हैं।

संयुक्त राज्य में सिंचाई उन्हीं क्षेत्रों में की जाती है जहाँ पानी लाना कठिन कार्य नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में सिंचाई के सहारे लगभग २०० लाख एकड़ भूमि में फसलें उत्पन्न की जाती हैं और इनके निर्माण में एक बिलियन डालर से भी अधिक की धनराशि व्यय हुई है। इस धनराशि से १६८ स्टोरेज और डाइवरशन बाँध, १८४६८ मील लम्बी नहरें, और १२,६०२ पुल बनाने पड़े हैं। सिंचाई के महत्व के अनुसार प्रमुख राज्य ये हैं—कैलीफोर्निया, कोलोराडो, इडाहो, मोनटाना, यूटाहा और व्योमिंग जिनमें ६० लाख से भी अधिक एकड़ पर सिंचाई होती है। एरीजोना, नैब्रास्का, नेवाडा, न्यू-मैक्सिको, ओरेगन, टैक्साज और वाशिंगटन में भी सिंचाई की व्यवस्था पाई जाती है।

संयुक्त राष्ट्र के उन भागों में जहाँ बंजर भूमि थी अथवा जहाँ दलदल थे और जिन्हें कृषि योग्य बनाने में लाखों करोड़ों रुपयों के व्यय की आवश्यकता थी

इस बाँध से इतनी विद्युत शक्ति निर्माण की जाती है कि जिससे इस योजना का आधा खर्च निकाला जाता है। इस शक्ति का प्रयोग स्कारमेंटो नदी की घाटी से अतिरिक्त जल को पम्प करने मे किया जाता है। इससे सिंचित क्षेत्रफल मध्य कैलीफोर्निया तक विस्तृत हो गया है।

बोल्डर बाँध या हूवर बाँध (Boulder Dam or Hoover Dam)— कोलोरेडो नदी पर बोल्डर बाँध बनाया गया है जो अधिकाश रूप मे व्यवहार मे लाया जाने लगा है। कोलोरेडो नदी का प्रवाह नियमित करने के लिए कुछ परस्पर सम्बन्धित योजनायें है। बोल्डर बाँध भी उनमे से एक है, किन्तु यह सर्व प्रमुख है। इन योजनाओं के सम्मुख चार उद्देश्य है (अ) बाढो पर नियन्त्रण, (ब) पानी देना और सिंचाई करना, (स) बिजली बनाना, तथा (द) नावें चलाना। बोल्डर बाँध की योजना मे नाव चलाने का कोई विचार नही रखा गया है। इस जल-संग्रह मे कोलोरेडो नदी का दो वर्ष का सम्पूर्ण प्रवाह रहता है। इससे जो जल-विद्युत निकलती है वह रूस के नीप्रोस्ट्राय की शक्ति से दो गुणी तथा नियाग्रा के अमरीकी भाग की शक्ति से चार गुणी है।

यह योजना संयुक्त राज्य अमेरिका मे सिंचाई की सब मे बडी योजना है। यहाँ पर जल-विद्युत भी उत्पन्न की जायगी। इसका लक्ष्य है वाशिंगटन-राज्य मे स्नेक नदी के उत्तर मे तथा कोलम्बिया नदी के पूर्व मे स्थित भूमि एव उसके आस-पास की भूमि—जो मिलकर लाखो एकड होगी—की सिंचाई करना। कास्केड पर्वत की वृष्टिछाया मे रहने के कारण इस क्षेत्र मे वर्ष भर मे १०" से कम वर्षा होती है। कोलम्बिया नदी मे दक्षिण पश्चिम मे एक कृत्रिम झील बनाई जा रही है। इसके लिए कोलम्बिया नदी मे एक बाध बनाया गया है। इस झील से लगभग ८०० फुट ऊँचाई पर स्थित लावा के पठार मे एक संकरी घाटी मे बाँध बनाकर दूसरी झील बनाई जायगी जो लगभग १५१ मील लम्बी होगी। कोलम्बिया नदी पर बने हुए बाँध जनित शक्ति से इसमे पम्पो द्वारा पानी पहुँचाया जायगा। इस झील से निकलने वाली नहरे प्राय सिमेन्ट से बनाई जायेंगी।

रॉकी पर्वतो तथा कैलीफोर्निया की खाडी के मध्य मे यह नदी विभिन्न चट्टानों के प्रदेशों को पार करती हुई ग्रेट बेसिन मे प्रवेश करती है। वहाँ से चट्टानो के टूट कर पृथक् हो जाने से इसकी घाटी अपने ही ढग की बन गई है जिससे छोटी-छोटी पहाडियाँ अधिक हैं। ग्राड केनियन से होकर इसका जो मार्ग गया है उसके समाप्त हो जाने पर कोलोरेडो नदी एक ऐसे क्षेत्र को पार करती है जहाँ एकान्त रूप से संकीर्ण मार्गो के दोनों ओर कठोर चट्टानो की शिलायें खडी है। खुले प्रदेश मुलायम तलछट के घिस जाने से बने हैं। ग्राण्ड केनियन नेवादा को एरीजोना से ठीक उस स्थान पर पृथक् करती है जहाँ यह नदी अपना अन्तिम मोड खाकर दक्षिण की ओर कैलीफोर्निया की खाडी मे चल देती है। इस स्थान पर मुख्य बाँध बनाया जा सकता था।

सिंचाई के लिये नियमित रूप से जल प्राप्त करने के निमित्त तथा शक्ति उत्पादन के लिए एक उपयुक्त बाँध बनने की आवश्यकता पड़ी। उसके लिये एक कृत्रिम झील बनाई गई जो २२७ वर्गमील घेरे में है। इसमें नदी के दो वर्ष के औसत प्रवाह का जल लगभग ३,०५,००,००० एकड फीट संरक्षित रहता है। इसके लिए नदीतल से नीव समेत ७२७ फीट ऊँचा बाँध बनाया गया है जिसमें ५८४ फीट

नहरें	विकास और निर्माण समाप्ति काल	निर्माण व्यय (लाख रु०)	सिंचित क्षेत्रफल (एकड)
पंजाब:			
१—पश्चिमी जमुनानहर	जमुना से तेजावाला के निकट, १८८६ मे।	४७३	रोहतक, हिसार पटियाला और जिन्द जिलो की १०,१८,००० एकड क्षेत्र मे—शाखाओं सहित १६०० मील लम्बाई।
२—ऊपरी बारी दोआब नहर	रावी नदी मे माधोपुर के निकट, १८७८-७९ मे	२,२७	गुरुदासपुर, अमृतसर जिलो की ८,२८,००० एकड क्षेत्र मे—शाखाओ सहित १८०० मील लम्बी।
३—सरहिंद नहर	सतलज नदी से रूपड स्थान पर, १८८६-८७ मे	६७०	लुधियाना, फिरोजपुर, हिसार, पटियाला की १४,८३,००० एकड भूमि की सिचाई। शाखाओ सहित ३,८०० मील लम्बी।
४—नागल बैरेज	१९५४ मे	३९५	पंजाब की २७,५०,००० एकड भूमि।
उत्तर प्रदेश.			
१—ऊपरी गंगा नहर	गगा से हरिद्वार के निकट, १८९१ मे	४,६५	गगा जमुना दोआब के सहारनपुर, मेरठ, एटा, इटावा, कानपुर, मैनपुरी, मुजफ्फरनगर बुलन्दशहर, फतहपुर और फुररूखाबाद जिलो की १७,२७,००० एकड भूमि। शाखाओ सहित ३,८८८ मील।

मिस्र मे सिचाई

मिस्र मे भी सिचाई का महत्व अधिक है क्योंकि यहां सिचाई के सहारे ही मानव ६,००० वर्ष मे भी अधिक समय से खेती कर रहा है। ग्रीष्म के आरम्भ मे एथोपिया मे अधिक वर्षा होने से एटबारा और नीली नील नदियो मे बाढ आ जाती है। इनका पानी मिस्र मे जुलाई और सितम्बर तक पहुँचता है। मिस्र मे सिचाई बेसीन पद्धति (Basin System) द्वारा की जाती है। खेतो मे छोटी-छोटी पालें बनाकर नदी का पानी तब तक रोक लेते हैं जब तक खेत अच्छी प्रकार नम नही हो जाते और तब शेष जल को खेत मे बहा कर उसमे खेती की जाती है। इन खेतो के अन्तर्गत अनाज, फलियाँ, प्याज, चरी आदि उगाई जाती हैं।

नील नदी के जल का वार्षिक प्रवाह १५१,००० से ४२०,००० लाख घन मीटर तक होता है किन्तु मिस्र मे प्रतिवर्ष सिचाई के लिये ५५०,००० लाख घन मीटर जल की आवश्यकता पड़ती है। अत जल प्राप्ति के लिए नील नदी का नियोजन दो प्रकार से किया गया है—(१) नील नदी के बाढ के जल को अस्वान बाँध, गेबल आलीया बाँध और सेनार बाँध बना कर रोका गया है। आवश्यकता के समय इस जल का उपयोग सिचाई के लिए किया जाता है। (२) जब नील नदी मे पानी की मात्रा कम पड जाती है तो बाँधो को ऊपर से भरा जाता है। इनके लिए १९५४ मे विक्टोरिया बाँध मिस्र और युगेन्डा की सरकार द्वारा निम्नलिखित रूप से बनाया गया। इसमे ६७०,००० घन मीटर पानी रोका जा सकता है। लेकिन अल्बर्ट बाँध अभी विचाराधीन है। यह ५३,००० घन मीटर पानी रोक सकेगा। अस्वान हाई **बाँध (अथवा सादेल आली बाँध)** वर्तमान अस्वान बाँध से ६ मील दक्षिण की ओर ११० मीटर ऊँचा बनाया जा रहा है। इसमे १३०,००० घन मीटर जल रोका जा सकेगा। इससे ८३,००० लाख किलोवाट जल शक्ति भी उत्पन्न की जायगी।[10] इस शक्ति का उपयोग न केवल जल निकालने के लिए वरन् मिस्र के औद्योगिक केन्द्रो को देने मे भी होगा तथा इसमे २० करोड पौंड रुपये खर्च होंगे। इसके बन जाने से मिस्र और सूडान को ७४० लाख मिलीयार्ड जल मिलने लगेगा। मिस्र मे लगभग ८०% खेती की जाने वाली भूमि पर सिचाई हो रही है। इसी सिचाई के कारण मिस्र को **'विश्व का उद्यान'** (Garden Spot of the World) कहते हैं।[11]

आस्ट्रेलिया में सिचाई

आस्ट्रेलिया मे भी लगभग १३५ लाख एकड भूमि पर सिचाई होती है जिनमे से आधा क्षेत्रफल विक्टोरिया राज्य मे पाया जाता है। यहाँ सिचाई का मुख्य साधन आर्टीजन कुए है जिनमे ग्रैवेटी द्वारा पानी निकाला जाता है। पूर्वी भाग मे एक बडा आर्टीजन क्षेत्र (Great Artisan Basin) स्थित है जिसमे जल की गहराई ७,००० फीट तक पाई जाती है। यह क्षेत्र क्वीन्सलैण्ड, न्यू साउथवेल्स, दक्षिणी आस्ट्रेलिया और पूर्वी राज्यो के ५५०,००० वर्गमील क्षेत्र मे फैला है। यहाँ ३००० से भी अधिक कुएँ खोदे गये हैं जिनमे प्रतिदिन ३५०० लाख गैलन पानी निकाला जाता है। यह पानी पशुओ के पानी के लिए तो ठीक है किन्तु फसलो के लिए उपयुक्त नही है, अत.

10. **Modern Review, Nov., 1956, p. 417.**
11. *D. H. Davis,* **Earth and Man,** p. 316.

तथा थोडा सा आगे बढकर रावी नदी पर यह निचली बारी दोआब नहर से जा मिलती है। इसके द्वारा स्यालकोट, गुजरावाला और शेखूपुर में सिंचाई होती है।

(५) **ऊपरी बारी दोआब नहर**—यह माधोपुर से निकलती है और भारत के अमृतसर जिले में होकर जाती है। इससे लाहौर और माण्टगोमरी जिलों की सिंचाई होती है।

(६) **हवेली योजना**—चिनाव और झेलम नदियों के सगम से २ मील नीचे की ओर दो नहरें निकाली गई है। इनके द्वारा मुल्तान, और झग जिलों की लगभग १३ लाख एकड भूमि की सिंचाई होती है।

(७) **सक्खर बाँध**—सिन्धु नदी पर एक बडा बाँध डेल्टा से २०० मील की दूरी पर सक्खर के स्थान पर है। यह सन् १९३२ में बनकर तैयार हुआ। सक्खर पर समस्त जल इकट्ठा करने के बाद फिर विभिन्न भागों में आवश्यकतानुसार उसका वितरण किया जाता है। यहाँ से ७ नहरें निकाली गई हैं। चार बायें किनारे से और तीन दाहिने किनारे से। आजकल इस बाँध से लगभग ३८ लाख एकड भूमि की सिंचाई होती है लेकिन सन् १९६२-६३ तक इससे ५४ लाख एकड भूमि की सिंचाई होने की सम्भावना है।

विभाजन के बाद की सिंचाई की नवीन योजनाएँ ये हैं —

थाल योजना—इस योजना पर कार्य सन् १९३९ से आरम्भ हुआ और १९५५ में पूरा हुआ। इसके अन्तर्गत सिन्धु नदी पर कालाबाघ नामक स्थान पर, जहाँ सिन्धु नदी नमक श्रेणियों से निकलती है, जिन्ना बाँध बनाया गया है। इसकी मुख्य नहरों की लम्बाई २३० मील तथा शाखाओं की १५३० मील है। इन नहरों से शाहपुरा, मियावाली व मुज्जफरगढ जिले में सिंचाई होती है। इससे लगभग ७ लाख से १० लाख एकड भूमि की सिंचाई होगी।

टोंसा बाँध योजना—यह एक बहुमुखी योजना है। इस में सिन्धु नदी पर डेरागाजीखान के पास एक बाँध बनाया गया है जिससे डेरागाजीखान तथा मुज्जफरगढ जिलों की बाढ की नहरों को नियतवाही नहरों में बदला जा सकेगा। इस योजना पर कार्य १९५३ में आरम्भ हुआ जिससे लगभग १४ लाख एकड भूमि पर सिंचाई हो रही है।

निचला सिन्ध बाँध योजना—इसका नाम गुलाम मुहम्मद बाँध भी है। यह बाँध सन् १९५५ में बन कर तैयार हुआ। यह सिन्ध नदी पर कोटरी से ४½ मील उत्तर में स्थित है। इससे लगभग २८ लाख एकड भूमि की सिंचाई हो रही है।

ऊपरी सिन्ध बाँध—यह सक्खर बाँध से ९० मील उत्तर में गुड्डू स्थान पर है। इस पर सन् १९५७ से कार्य आरम्भ हो गया है। इससे इस क्षेत्र की नहरों को नियतवाही नहरों में बदला जायेगा। एक फीडर बाँए किनारे पर तथा दो फीडर दाहिने किनारे पर बनाये जायेंगे। इस योजना के पूरा होने पर २६ लाख एकड भूमि की सिंचाई होगी जिसमें लगभग दस एकड भूमि पर अब भी होती है।

कुर्रम गढ़ी योजना—इसमें कुर्रम नदी पर बन्नू के पास एक बाँध बनाया जायेगा जिसके दोनों ओर नहरें निकाली जायेंगी जो बाढ की नहरों को पानी पहुँचाया करेंगी। यहाँ ४००० K. W. का एक शक्ति गृह बनाने की योजना है।

गया। इस नहर के द्वारा जाड़े की ऋतु में फरात नदी में पानी लाकर मिलाया जाता है ताकि इस ऋतु की सिंचाई की आवश्यकता पूरी की जा सके। सन् १९५१ में यारार के स्थान पर एक रेगुलेटर का निर्माण पूरा किया गया। इस प्रकार इस समस्त योजना के सम्पूर्ण होने से फरात नदी की भयकर बाढ़ पर पूर्ण रूप से नियन्त्रण रखा जा सकता है।

नदी पर पूरी तरह से नियन्त्रण रखने के लिए ममादी बाँध का मार्च सन् १९५१ में निर्माण कार्य प्रारम्भ किया गया और सन् १९५६ में यह काम पूरा हो गया। इस बाँध की लम्बाई २०९ मीटर है और इसमें २४ फाटक हैं जिनकी चौड़ाई ७ फीट है। इस बाध के पूरा हो जाने से हबानियाह भील में पानी की सतह को ४६५ मीटर से ५१ मीटर तक अर्थात् १५ मीटर ऊपर उठाया गया है। हबानियाह भील के चारों ओर के बांध को भी ऊँचा उठा दिया गया है। इस प्रकार भील में पानी एकत्रित करने की शक्ति पहले से दुगनी हो गई है, इसमें अब सिंचाई होती है।

(३) **डोकन बांध योजना**—इसके अन्तर्गत लघुजैब नदी पर गुरुत्ववार कंक्रीट का बाँध डोकन घाटी पर बनाना है। यह बाध सुलेमानिया से ४० मील उत्तर पश्चिम में है। यह बाँध ३२५ मीटर लम्बा, १०८ मीटर ऊँचा तथा नीचे ५० मीटर चौड़ा और ऊपर सिरे पर ६ मीटर चौड़ा होगा। इस बाँध से नदी की ग्रीष्म ऋतु का जल सतह ६० मीटर ऊँचा हो जायेगा। इसमें एक भील जो लगभग १००० वर्गमील की होगी, बन जायगी। इससे रानिया प्लेन के बहुत से हिस्से में पानी पहुँचेगा। इसमें आरबिल किरकुक और रिपाला मैदान में सिंचाई होगी। इस योजना पर मार्च सन् १९५४ से कार्य आरम्भ हो चुका है। इससे १४ लाख किलोवाट विद्युत शक्ति भी उत्पादित की जायेगी।

सिंचाई के लाभ

(१) मरुभूमियों में जल वर्षा की कमी के कारण धरातल की उपजाऊ मिट्टी पानी के साथ बह कर नहीं जाती। इस मिट्टी में वनस्पति के लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन रहता है किन्तु जल की कमी रहती है, अतः सिंचाई के द्वारा यह उपजाऊ होकर अनाज पैदा करने योग्य हो जाती है।

(२) सिंचाई के द्वारा फसलों को नियमित रूप से निश्चित मात्रा में जल प्राप्त होता है अतः फसलों को वर्षा की कमी अथवा अधिकता के कारण हानि नहीं उठानी पड़ती।

(३) कभी-कभी सिंचाई के जल के साथ नदियों की बारीक काँप मिट्टियाँ भी बहकर चली आती है। यह खेतों में बिछ कर उन्हें उपजाऊ बना देती है।

(४) सिंचाई की जाने वाली फसलों की प्रति एकड़ भूमि पैदावार असिंचित क्षेत्र की अपेक्षा अधिक होती है। अतः इन भागों में जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है। स्पेन के मरसिया प्रान्त में इब्रो और टैगस नदियों की घाटी में प्रति वर्ग मील पीछे १,७०० व्यक्ति रहते हैं जबकि स्पेन के सूखे भागों में प्रतिवर्ग मील पीछे केवल १३६। पंजाब में भी जनसंख्या का घनत्व अधिक है।

(५) सिंचाई के द्वारा, कई प्रदेशों में जहाँ तापक्रम ऊँचा रहता है, साल भर

वहाँ १६०२ से ही संयुक्त राष्ट्र की सरकार ने १५ पश्चिमी राज्यों में लगभग ३० बड़ी-बड़ी सिंचाई की योजनायें कार्यान्वित की है। इन योजनाओं के सहारे अब हजारों कृषक-परिवारों-का जीवन निर्वाह हो रहा है। इन राज्यों में सिंचित भूमि का क्षेत्रफल १८,६४१,००० एकड है। ५१,४५,००० एकड भूमि पर सिंचाई की सम्भावनायें वर्तमान है। नदियों के प्रवाह-क्षेत्रों के अनुसार स० राष्ट्र में सिंचाई का वितरण इस प्रकार है।[8]

नदियों का प्रवाह	कुल सिंचित क्षेत्रफल का %	कुल सिंचित क्षेत्रफल का % जिस पर सिंचाई की जा सकती है।
उत्तरी पैसिफिक बेसिन	१६.१८	१६.७४
द० पैसिफिक और ग्रेट बेसिन	३१.७७	३५.१६
कालोराडो नदी बेसिन	१३.३६	१४.२३
पं० खाडी प्रवाह प्रदेश	६.४३	६.६३
द० प० मिसीसिपी प्रवाह प्रदेश	३.६१	३.३६
मिस्सौरी प्रवाह प्रदेश	२२.३३	२०.५२
योग (१८,६४१ ००० एकड)	१००.००	१००.००
	(५१,४५६,००० एकड)	

सं० राज्य मे सिंचाई के लिए उपलब्ध जल मे से ८०% धरातलीय जल, १०% भूगर्भीय जल और शेष दोनों का योग होता है। १६५० मे २५० लाख एकड भूमि की सिंचाई की गई। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि सिंचित क्षेत्रफल को ४,५०,५०० लाख एकड तक बढ़ाया जा सकता है।[9]

ग्रांड कूली बाँध—नदियों के मार्गो मे उपयुक्त स्थानो पर जल को बड़े-बड़े बाँध बनाकर रोका गया है। कोलम्बिया नदी पर ग्रांड कूली बाँध (Grand Coolie Dam) बनाया गया है जो ४,३०० फीट लम्बा और ७२६ फीट ऊँचा है। इसके अन्तर्गत १५० मील लम्बी भील बन गई है।

मध्य घाटी मे ऊपरी स्कारमैंटो नदी के ऊपर भी एक बाँध बनाया गया है जिसे **शस्ता बाँध** (Shasta Dam) कहते है। यह ५०० फीट लम्बा है। इसमे ४,५००,००० एकड फीट जल जमा होता है। इसमे इतना अधिक पानी रोका जाता है कि जिससे पिट और मैक्लाउड नदियो के कैनियन भी भर जाते है। जब ग्रीष्मकाल मे इससे जल छोडा जाता है तो ६ फीट की एक मध्य-नहर १०० मील की दूरी तक बहती हुई डेल्टा तक चली जाती है। इस बाँध के बन जाने से सैन फ्रांसिसको की खाडी का नमकीन जल रुक गया है। इसमे बाढो का डर भी जाता रहा है।

8. *D. H Davis*, **Earth and Man**, p 217

9. *J. Russel*, **World Population and Food Supplies**, 1956, p. 365.

जाती है कि उसमें खेती की जा सके। सूखी खेती की जाने वाली भूमि साधारणतः बलुई अथवा चिकनी दोमट होती है। वर्षा अधिक न होने से इसकी उर्वरा शक्ति नष्ट न हो पाती।

साधारणतः अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में सूखी खेती की तीन प्रणालियाँ काम में लाई जाती हैं :

(१) गहरी जुताई और गर्मी में परती छोड़ने की प्रथा जिससे जंगली घास-फूस तथा पौधे आदि नष्ट हो जाते हैं तथा धरातल टीला बन जाता है और जल संचय होता है। अन्यथा दूसरे वर्ष में यहाँ अच्छी फसल होती है।

(२) जहाँ की मिट्टी हल्की और भुरभुरी है वहाँ शुष्क खेती की जाती है, परन्तु इसके लिए शुष्कता सहन करने वाले पौधे लगाए जाते हैं। ज्वार-बाजरा, सोरघम और सूडान घास मुख्यतः पैदा की जाती है।

(३) तीसरी प्रणाली शुष्क खेती की वह है जिसमें जल को किसी विशेष स्थान में एकत्रित किया जाता है। भूमि में बड़ी-बड़ी सुरागें बनाकर उनमें सूक्ष्म और नम तथा उपजाऊ मिट्टी भर देते हैं। इनमें जैतून या जौ के पौधे लगाये जाते हैं।

सूखी खेती के अन्तर्गत कृषि में अधिक व्यय पड़ता है अतः उन्हीं फसलों का उत्पादन किया जाता है जो शुष्कता सहन करने वाली हों, या जिनमें कीड़े अथवा बीमारियाँ न लग सकें अथवा जिनका उत्पादन आर्थिक रूप में लाभदायक होता है। गेहूँ, जई, जौ, राई, सोरघम, फलियाँ अथवा चारा आदि ही अधिक पैदा किया जाता है।

सूखी खेती के मुख्य क्षेत्र संयुक्त राज्य अमरीका (जहाँ ग्रेट बेसीन, कोलम्बिया नदी और स्नेक नदी बेसीन प्रमुख हैं), आस्ट्रेलिया, कनाडा, पश्चिमी एशिया, दक्षिणी अफ्रीका और भारत (पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान और गुजरात) हैं।

(५) पहाड़ी खेती (Terrace or Hill Cultivation)

पहाड़ी भागों में उनके ढालों को पहले सीढ़ियों या चबूतरों के रूप में काट लिया जाता है और उनमें खेती की जाती है। ढालों को पतली-पतली क्यारियों के रूप में बाँट दिया जाता है और ऐसा प्रबन्ध किया जाता है कि ऊपरी भागों का वर्षा जल सब क्यारियों को सींच दे पर मिट्टी को न बहा सके। इस भूमि की उर्वरा शक्ति गोबर तथा सड़ी पत्तियों की खाद से बढ़ाई जाती है। इस प्रकार की खेती में मिट्टी के कटने का डर नहीं रहता। विश्व के निम्न भागों में इस प्रकार खेती की जाती है :—

(१) जर्मनी में राइन और मासेल नदी की घाटियों में पहाड़ी ढालों पर अंगूर की खेती की जाती है।

(२) आल्पस, वासेजेज, ब्लैक फोरेस्ट तथा स्काविंयन जूरा पर्वतों पर भी इसका प्रचलन है। इटली में आल्पस और एपिनाइन पर्वतों के ढालों पर अंगूर, अंजीर, मक्का, राई, सनई, जैतून, पिस्ता, काजू और पटसन आदि फसलें उगाई जाती हैं।

गहरा पानी मीड़ भील के रूप मे इकट्ठा हो जाता है। इस रीति से बोल्डर बाँध संसार में सर्वोच्च बाँध है। द्वितीय स्थान फ्रास के ग्रूडेट बाँध (४४६ फीट) का है।

कोलोरेडो जैसी नदी का मार्ग में इतने बडे आकार का बाँध खड़ा करने में इन्जीनियरिंग कला की विजय हुई। जल के तल से १२६ फीट नीचे नदी तल में नीव डालने से पहले समस्त प्रवाह को कैनियन के बाहर मोड़ देना पड़ा था। यह कार्य चार ५० फीट वाली सुरगें खोदकर किया गया था। इनकी यौगिक लम्बाई ३ मील थी। जिस स्थान पर बाँध बनने को था उससे पहले ये सुरगें बनी थी। इस विधि से पानी बाँध के दोनो ओर बह जाता था और नीचे आकर कुछ दूरी के अन्तर पर नदी मे फिर मिल जाता था। जल का मुख-परिवर्तन सफलतापूर्वक १३ नवम्बर सन् १९३२ को पूर्ण हुआ था और कैनियन को रिक्त करने का कार्य भी तभी आरम्भ कर दिया गया था। बाँध निर्माण के स्थान को उपर्युक्त विधि से सुखा दिया गया।

अन्तत: यह भील बाध से ११५ मील की दूरी तक पहुँच जायगी और बर्जित नदी से ३५ मील अलग रहेगी। जल की लाल-भूरी मिट्टी इस भील में बैठ जायगी तो बिजली की मशीनो तक पानी निर्मल अवस्था मे पहुँचेगा।

कैलिफोर्निया के राज्य को इसका निर्माण पूर्ण होते ही जो लाभ पहुँचेगा वह स्पष्ट ही है। इससे प्रत्यक्ष लाभ इम्पीरियल घाटी (Imperial Valley) के क्षेत्र को पहुँचेगा। इस घाटी तक ८० मील लम्बी नहर द्वारा पानी जायगा। इस प्रकार इस मूल्यवान फलोत्पादक क्षेत्र का कृषि योग क्षेत्रफल तीन गुणा हो जायगा। इसके द्वारा लैटूस, ककडियाँ और सब्जी के ८५,००० एकड भूमि की सिंचाई हो रही है और २००,००० एकड पर घास उगाया जा रहा है। प्रारम्भिक खोज द्वारा ज्ञात होता है कि सींचने योग्य २० लाख एकड भूमि का अनुपात इस प्रकार वितरित रहेगा :— नेवादा १, एरीज़ोना ५३, कैलीफोर्निया ८०। अभी १८ लाख अश्व शक्ति का भी उत्पादन किया जा रहा है जिसका उपयोग कालोराडो नदी का जल पंप द्वारा निकाल कर लॉस ऐंजिल्स मे भेजने के लिए किया जाता है।

कैलीफोर्निया राज्य मे फैदर नदी पर ओरोविले के निकट एक बडा बाँध बनाया जा रहा है जो ७३० फुट ऊँचा होगा। यह बाँध हूवर बाँध से तीन फुट अधिक ऊँचा तथा ग्राड कूली बाँध से २५०० फुट अधिक लबा होगा। यह विश्व का सबसे बडा कक्रीट का बाँध होगा जिस पर १.५ बिलीयन डॉलर खर्च होंगे जो १९७० तक बन कर पूरा होगा। इसके अन्तर्गत बने जलाशय मे ५४०० वर्गमील क्षेत्र का जल एकत्रित होगा। यह जल सैन जवकीन घाटी के पश्चिमी भाग को तथा दक्षिणी कैलीफोर्निया मे सैनडिगो को दिया जायेगा।

सयुक्त राज्य अमरीका के भूमि पुनरुद्धार ब्यूरो ने १९०२ से अब तक १७ पश्चिमी राज्यो मे १०० जल संचय बाँध (Storage Dam) बनाये है। इनमें से सबसे पहला बाँध १९१० मे व्योमिंग राज्य मे शोशोन बाँध बन कर तैयार हुआ। यह ३२८ फीट ऊँचा है। अन्य बाँध—एरीजोना मे साल्ट नदी पर **रुजवेल्ट बाँध** रायोग्रांडो के आर-पार **एलीफैंट बूटे बाँध**, बायस के निकट **एरोरॉक बाँध** सिचाई के काम मे लाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी बाँध हैं जिनके द्वारा सिचाई और विद्युत उत्पादन दोनों ही होते हैं—मोटाना में **हंगरी हार्स बाँध** इसका मुख्य उदाहरण है।

देश	बोई गई भूमि का क्षेत्रफल (१००० एकड़ में)	देश की सम्पूर्ण भूमि में कृषि भूमि का प्रतिशत	प्रति व्यक्ति पीछे बोई गई भूमि (एकड़ में)	समस्त संसार की कृषि भूमि का प्रतिशत
स० रा० अमेरिका	४३५ ०००	२२ ८	३ १३	१७·६
रूस	४१६,०००	७·६	२·४३	१६·८
भारतवर्ष	३८२,६१०	३७ ६	६८	१५·५
चीन (२२ प्रान्त)	१७७,७१८	१३ ८	·२६	८·२
अर्जेन्टाइना	६४,३६५	६·३	४·५६	२·६
कनाडा	६३,३७५	२·६	५ ७६	२·५
जर्मनी	४६,६१८	४२ ६	७२	२·०
फ्रांस	४६ ३३६	३६ ३	१ २२	१·६
पोलैंड	४७,२१६	४६ ०	१ ४७	१·६
स्पेन	४४,५५६	३५ ६	१ ६५	१ ८
ईरान	४०,७६५	१० २	२ ४७	१·६
मंचूरिया, जेहोल	३८,२८६	११ ६	·८६	१·५
इटली	३५,६१०	४६·६	७७	१·४
आस्ट्रेलिया	३४,८६५	१·७	४ ७१	१·४
विश्व का योग	१,८७७,७६५			७५·८%

नीचे लिखी तालिका में प्रमुख महाद्वीपों में भूमि का उपयोग बताया गया है —

महाद्वीपों में भूमि का उपयोग
(००० हैक्टेअर्स में)

	कुल क्षेत्रफल	कृषि भूमि	चरागाह	वन भूमि
यूरोप	४६४,०००	१५१,०००	८३,०००	१३५,०००
रूस	२,२२७,०००	२२,५००	१२४,०००	६२०,०००
उत्तरी और मध्य अमेरिका	२,४२३,०००	२६०,०००	३५६,०००	७३४,०००
दक्षिणी अमरीका	१,७८१,०००	६५,०००	३३०,०००	८३०,०००
एशिया	२ ७०२,०००	३७६,०००	४७३,०००	५००,०००
अफ्रीका	३,०२१,०००	२४७,०००	६१५,०००	६२,०००
ओसीनिया	८५५,०००	२५,०००	३७७,०००	७६५,०००

इसके सहारे कड़ी घास पैदा की जाती है। किन्तु कई कुएँ अब सूख रहे हैं। उप-आर्टीजन कुएँ भी बहुत पाये जाते है—२००,००० से भी अधिक। अन्य आर्टीजन बेसिन ये है :—

(१) मुर्रे बेसिन—बड़े बेसिन के दक्षिण मे।
(२) यूकला बेसिन—पश्चिमी आस्ट्रेलिया मे (नलरबार मैदान)।
(३) मरुस्थल बेसिन—पश्चिमी आस्ट्रेलिया के उत्तर भाग मे।
(४) पश्चिमी आस्ट्रेलिया मे दो।
मरे नदी द्वारा आस्ट्रेलिया की ६०%भूमि पर सिंचाई होती है।

ईराक में सिंचाई[१२]

दजला तथा फरात नदियों मे पर्याप्त जल तथा समतल भूमि दोनों ही सिंचाई के लिए सहायक है परन्तु इन सब बातों के होते हुए भी कुल कृषि भूमि के केवल १५·६% भाग मे ही सिंचाई की जाती है।

प्राचीन काल मे नदियों के जल का नियन्त्रण करने के लिए नहरों की व्यवस्था की गई थी। दजला नदी के दोनों ओर तिकरित के दक्षिण मे कई नहरे बनाई गई थी। इसी प्रकार फरात नदी के जल को दजला मे ले आने के लिए पाच नहरें बनाई गई थी। प्राचीन काल मे यहाँ सिंचाई के अनेक साधन थे जो ८५० से १००० ई० के आरम्भ मे अपनी चरम सीमा को पहुँच गये। उस समय के पश्चात् विदेशियों के आक्रमण के फलस्वरूप इनको बड़ी क्षति पहुँची और पतन प्रारम्भ हो गया। सन् १८८० से प्राचीन नहरों को फिर से ठीक करने का प्रयत्न किया जा रहा है। कृषि की उन्नति के लिए यहाँ बहुत सी नदी घाटी योजनाएँ बनाई है जिससे सिंचाई होगी तथा बाढ नियन्त्रण भी होगा, जैसे.—

(१) **वादी थार थार योजना**—इस योजना का लक्ष्य दजला नदी की भयंकर बाढो का नियन्त्रण करने के लिये है। समारा के उत्तर मे दजला नदी पर एक बाँध बनाया गया है जिससे नदी का तल ऊँचा हो गया है। एक जल विद्युत केन्द्र भी यहाँ बनाया गया है। यह योजना सन् १९५८ मे पूरी हो गयी है।

(२) **हबा नियाह योजना**—रामादी के दक्षिण पूर्व मे स्थित हबानियाह झील का उपयोग फरात नदी के बाढ के जल को एकत्रित करने के लिए किया जाता है। सन् १९५२ के पूर्व नदी के इस अतिरिक्त जल को झील तक पहुँचाने का एकमात्र साधन यह था कि रामादी से ऊपर की ओर वारार के समीप नदी के किनारे को तोड़ दिया जाय ताकि पानी स्वय उस उथले गर्त मे एकत्रित हो जाय। परन्तु सन् १९५२ मे इस जल को झील तक ले जाने के लिए वारार चैनल बना दी गई। परन्तु यह चैनल भी इतनी बड़ी न थी कि नदी के तमाम अतिरिक्त पानी को ले जा सके। इस प्रकार प्रतिवर्ष बाढ से बहुत हानि होती थी और बहुत सा जल व्यर्थ नष्ट होता था। अब हबानियाह झील मे बाढ के समय आया हुआ अतिरिक्त पानी एक नहर के द्वारा आबू दिबिस झील मे ले जाया जाता है। यह नहर ८२० कि० मी० लम्बी है। सन् १९४६ मे इस योजना के अन्तर्गत धीबन नहर का निर्माण किया

---

१२. लेखक की पुस्तक 'एशिया' (प्रकाशनाधीन) के आधार पर।

उन्हे कुछ बडा होने पर खेतों मे लगा दिया जाता है। इस प्रणाली को (Vernalisation) कहा जाता है। इससे खेतों मे फसलों के पकने के समय जलवायु के अनुकूल बनाया जा सकता है। रूस और कनाडा के ऊँचे अक्षांशो मे इसी प्रणाली द्वारा गेहूँ का उत्पादन सम्भव किया जा सका है।

खाद्यान्नों का उत्पादन बढाने के लिए निम्न उपायों का सहारा लिया जाता है :—

(१) विश्व की जनसंख्या प्रति वर्ष १.८% की गति से बढ रही है, किन्तु कृषि क्षेत्रफल मे इसी अनुपात मे वृद्धि नही हो रही है, अतः खादों के उपयोग से प्रति एकड उत्पादन बढाया जाता है। १९५५-५६ और १९६१-६२ के बीच की अवधि में खादो का उत्पादन और उपभोग दोनों ही बढे हैं। नेत्रजन, फास्फेट तथा पोटाश तीनों खादों का सम्मिलित उत्पादन २८,१००,००० मैट्रिक टन था, जबकि उपभोग २७,१३०,००० मैट्रिक टन। विभिन्न देशों में इन खादों का उपभोग अलग-अलग है। उदाहरणार्थ, एशिया के सिंचित चावलों के खेतों मे नेत्रजन का उपयोग किया जाता है जबकि ओसीनिया मे फास्फेट का। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमरीका मे खाद को द्रव रूप मे खेतों में मिलाया जाता है जबकि ओसीनिया मे हवाई जहाजो द्वारा खाद खेतों पर डाला जाता है। नीचे तालिका में विश्व के महाद्वीपों में खादों का उत्पादन और उपयोग बताया गया है[13] —

खादों का उत्पादन और उपयोग (% में) (१९६१-६२)

महाद्वीप	नेत्रजन	फास्फेट	पोटाश
उत्पादन			
यूरोप	५२.२	४६.६	६९.८
उत्तरी मध्य अमरीका	३०.६	३३.२	२९.०
दक्षिणी अमरीका	३.२	०.९	०.२
अफ्रीका	०.६	३.२	—
एशिया	१३.१	५.२	१.०
ओसीनिया	०.३	७.८	—
उपभोग			
यूरोप	४४.६	४९.१	६०.०
उत्तरी+मध्य अमरीका	३२.४	३०.१	२८.७
द० अमरीका	१.५	१.८	१.३
अफ्रीका	३.५	३.३	१.२
एशिया	१७.५	७.४	७.७
ओसीनिया	०.८	८.३	१.१

13 *F. A. O.*, **An Annual Review of World, Production, Consumption and Trade of Fertilizers**, 1962.

ही फसलें पैदा की जा सकती है। द० कैलीफोर्निया और पश्चिमी एरीजोना मे साल के किसी भी महीने मे फसलें बोई जा सकती है। यहाँ कई खेतो से तो एलफाफा घास की ५ फसलें प्राप्त की जाती है। एल्जीरिया मे सिचाई के सहारे वर्ष में आलू की तीन फसलें सफलता के साथ बोई जाती हैं। भारत में भी सिंचाई के सहारे चावल की तीन फसलें तक प्राप्त की जाती हैं।

(६) सिंचाई के कारण ही वीरान क्षेत्र लहलहाते हरे-भरे खेतों के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। दजला-फरात के कारण मैसोपोटेमिया, पंजाब की नहरो के कारण प० पाकिस्तान और पूर्वी पंजाब तथा नील के कारण मिस्र आदि देश बहुत ही उपजाऊ बन गए है। सिंचाई के सहारे अब मिस्र में कपास, गेहूँ, और चावल, भारत मे जूट, गन्ना, कपास और गेहूँ; सं० राज्य में चावल, अगूर, चैरी, नास्पाती, अल्फाफा और सेब, चीन जापान से चावल तथा आस्ट्रेलिया में गन्ना, अनाज, चारा, अंगूर, फल आदि पैदा किए जाते है।

सिंचाई से हानियाँ

किन्तु सिंचाई के कुछ दोष भी है, यथा—(१) नहरो द्वारा सिंचित क्षेत्र में भूमि इतनी सपृक्त हो जाती है कि उसमे हर समय पानी रहता है (Water-logging) तथा दलदल हो जाता है। इससे मच्छर आदि बहुत पैदा हो जाते है। संयुक्त राज्य की स्कारमैंटो और सैन जुआन नदियो की घाटियों तथा मैक्सिको मे भी यही समस्या उठ खड़ी हुई है।

(२) अधिक सिंचाई के कारण भूमि पर क्षार फैल जाता है जिससे भूमि कृषि के अयोग्य हो जाती है। पाकिस्तान मे १½ लाख एकड़ और महाराष्ट्र में नीरा घाटी की ५०,००० एकड़ भूमि पृथ्वी पर क्षार फैल जाने के कारण खेती के अयोग्य हो गई है। कई बार इस दोष को दूर करने के निमित्त बाढ़ की सिंचाई की जाती है जिससे भूमि पर फैला नमक घुलकर बह जाता है।

(३) अधिक सिंचाई के कारण भूमि से इतनी अधिक फसलें प्राप्त हो जाती है कि कृषक को उनका उचित मूल्य नही मिलता क्योंकि बाजार में फसलो की मात्रा अधिक हो जाने से उनका मूल्य घट जाता है।

(४) यदि बाढ़ की सिंचाई की नहरो का स्रोत बाँध आदि होता है तो ग्रीष्मकाल मे जल की कमी पड़ जाने के कारण सिंचित क्षेत्रफल मे भी कमी हो जाती है।

(४) सूखी खेती (Dry Farming)

विश्व के जिन भागों में २०'' से भी कम वर्षा होती है वहाँ शुष्कता खेती के लिए एक अभिशाप बन जाती है। इस पर नियन्त्रण पाने के लिये सूखी खेती की प्रणाली अपनाई गई है। इस खेती के अन्तर्गत भूमि की गहरी जुताई (६'' से १०'' तक) की जाती है जिससे जो भी जल भूमि पर बरसे वह उसी में समा जाये। प्रातः काल इस जोती हुई भूमि को छोटे-छोटे पत्थरो से ढक दिया जाता है अथवा पटला फेर दिया जाता है जिससे सूर्य की गर्मी के कारण भूमि से जल का वाष्पीकरण क्रिया न हो। पुनः पत्थरों को हटा दिया जाता है जिससे भूमि को ओस-बिन्दु और बर्फ का लाभ हो सके। इस क्रिया को निरन्तर करने से भूमि मे इतनी नमी प्राप्त हो

(३) कृषि का शत्रुओं और बीमारियों से बचाव—कृषि के अनेक शत्रु हैं। अत्यधिक शीत, पाला, सूखा, बाढ़ें तो कृषि का विनाश करती ही है किन्तु अनेक प्रकार के जीव-जन्तु और बीमारियों के कारण भी फसलो का एक बहुत बडा भाग नष्ट हो जाता है।

टिड्डियो (Locusts) के दल के दल प्रति वर्ष अदन, अरब, टँगेनिका, युगँडा, उत्तरी रोडेशिया, नाइजीरिया, घाना (गोल्ड कोस्ट) सियरालियोन, गैम्बिया, साइप्रस, स० राज्य अमेरिका, पाकिस्तान, भारत आदि देशों में आक्रमण करते हैं। ये पौधों पर बैठ जाती है और रात भर में उनको साफ कर देती हैं। अब इनको नष्ट करने के लिए इन भागो में F A O. की सहायता से प्रयत्न किये जा रहे हैं। इनके अण्डो पर या तो सोडियम—आर्सेनाइट का चूर्ण छिड़क दिया जाता है अथवा हवाई जहाजो द्वारा इनके झुण्डों पर कीटाणु नाशक चूर्ण (DNOC—Dinitro—Ortho—Cresol) छिडक दिया जाता है जिनसे ये मर जाती है।

दीमक या चीटियाँ भी फसल की बडी शत्रु हैं। ये न केवल पौधो को ही चाट जाती है वरन ये कीडो को एक पौधे से दूसरे पौधे तक पहुँचा कर उसे भी नष्ट कर देती है। Leaf Cutting Ants इसी प्रकार पौधे का विनाश करती हैं। Coffee Mealy Bung कनिया में चीटियो द्वारा ही उत्पन्न किया जाता है जो पौधो की पत्तियो में पहुँच कर फसल को नष्ट कर देता है। अत पौधो पर चिकनाई लगा कर इन कीडो को पत्तियो मे घुसने से रोका जाता है। चीटियो के द्वारा ही पश्चिमी अफ्रीका में कोको वृक्ष की Swollen Shoot बीमारी तथा जंजीबार मे लोंग के वृक्षो की Sudden Death बीमारी फैली है। इनको रोकने के लिए निरंतर प्रयास जारी है।

कपास के डोडो को नष्ट करने वाले कीडे Boll Weevil तथा Boll Worm होते है, जिन्हे नष्ट करने के लिये संखिया मिली हुई दवाइयाँ काम मे लाई जाती है। इसके अतिरिक्त DDT, BHC का चूर्ण भी अब भी बहुत काम मे लाया जाने लगा है। इससे कीडो की वृद्धि रुक जाती है।

गन्ने की फसल को नष्ट करने मे दो कीडो का मुख्य हाथ रहता है। ये क्रमशः Sugar Cane borer और Frog hopper है। पहला कीडा मुख्यतः पश्चिमी द्वीप समूह में अधिक विनाशकारी है। इसके लिए एक अन्य प्रकार का पराजीवी कीडा (Trichogramma) पाला जाता है जो इसको खा जाता है। दूसरा कीडा ट्रिनिडाड और ब्रिटिश गायना में अधिक हानि करता है।

इसी प्रकार कहवा का Coffee Bettle और केले की Leaf-Spot तथा Panama Disease के कारण भी इनकी अधिक हानि होती है। इनको नष्ट करने के लिए या तो बीमारी-रहित जाति भी पैदा की जाने लगी है अथवा रासायनिक चूर्णों को छिड़क कर इन्हे समाप्त कर दिया जाता है।

इन उपायो के फलस्वरूप अब कृषि उपजो को कीडो या बीमारियो से अधिक हानि नही उठानी पडती। आस्ट्रेलिया में खरगोश तथा भारत मे बंदर, जंगली जीव, हाथी आदि भी खड़ी फसलो को नष्ट कर देते है।

(३) हिमालय पर्वतों के ढालो पर भी विस्तृत रूप से सीढ़ीदार खेती की जाती है। काश्मीर की सुरम्य घाटी में, शिमला की पहाड़ियो पर, काठगोदाम से गढ़वाल और नैनीताल तक के क्षेत्र के अन्तर्गत आलू, गेहूँ और मिर्ची का उत्पादन किया जाता है। मैसूर मे शहतूत, नीलगिरी की पहाड़ियो पर कहवा और आसाम तथा बगाल के ढालू और पहाड़ी भागो मे चाय की खेती की जाती है।

(४) हिमालय के उत्तर में लद्दाख और पश्चिमी तिब्बत की सीढ़ीदार खेती का रिवाज है। चीन मे जेच्वान प्रदेश, यागसी की घाटी और शैंसी प्रदेश मे गेहूँ और अन्य अनाजो की खेती की जाती है।

(५) दक्षिण पूर्वी एशिया के पहाड़ी भागो मे इस प्रकार की खेती का बडा प्रचलन है। जापान, लका, सुमात्रा, बोर्नियो में यह अधिक महत्वपूर्ण है। सुमात्रा मे चावल अधिक पैदा किया जाता है। जावा मे इस प्रकार की खेती १००० फीट की ऊँचाई के ऊपर और जापान मे २,००० फीट के ऊपर की जाती है।

(६) मिश्रित खेती (Mixed Farming

जब फसले और चौपाये एक ही खेत पर रखे जाते है तो इस प्रकार के खेती के तरीके को 'मिश्रित खेती' कहते हैं। इसमे कुछ फसल जानवरो के प्रयोग के लिये पैदा की जाती है और कुछ मनुष्यो के लिये। कुछ फसले धन देने वाली होती है जैसे गन्ना, कपास आदि। खेती आदि के आधुनिक तरीकों मे मिश्रित खेती का आम रिवाज है क्योंकि फसलो के साथ-साथ जानवरो का पालन भी अत्यन्त आवश्यक है। अत कृषि कार्य के साथ-साथ दुग्ध उद्योग, मुर्गी पालना भेड-बकरी पालना, रेशम के कीडे पालना आदि धन्धे भी किये जाते है।

विश्व की खाद्य स्थिति

सारे ससार के लिये खाद्यान्न और उद्योग-धन्धो के लिए कृषि से कच्चा माल प्राप्त करने के लिए पृथ्वी के धरातल का केवल ७.५% भाग ही उपयोग में लाया जाता है। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि सम्पूर्ण पृथ्वी की कृषि योग्य भूमि का ¾ भाग उन १५ देशो में स्थित है जहाँ विश्व की लगभग ६२% जनसख्या रहती है। अगले पृष्ठ की तालिका मे इन १५ देशो में कृषि योग्य भूमि का वितरण बताया गया है :—

अनुमानत पृथ्वी के ५६० लाख वर्गमील क्षेत्र मे से २३० लाख वर्गमील क्षेत्र कृषि के अयोग्य है. अर्थात् विश्व का केवल ५५% भाग खेती के लिये उपयुक्त है और शेष ४५% खेती के अनुपयुक्त है। खेती योग्य भाग पर समान रूप से कृषि नहीं की जाती। इसके अतिरिक्त इस भूमि का कुछ भाग उद्योग-धन्धो के लिए कच्चा सामान पैदा करने के लिए भी छोडना पडता है तथा कुछ भाग पर मकान आदि बनाने के लिए भूमि का उपयोग किया जाता है। अतएव इस समय जो क्षेत्र खेती के लिए काम मे नही आ रहे है उनमे मुख्य ये है—साइबेरिया, रूस, कनाडा के वे भाग जो उत्तरी वन क्षेत्रो के निकट हैं और जहाँ तापक्रम ३२° फा० से भी कम रहता है तथा एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिणी अमेरिका के सूखे भाग जहाँ तापक्रम की अधिकता और जल की कमी के कारण खाद्य पदार्थ उत्पन्न नही किये जा सकते हैं।

१९६०-६१ मे प्रमुख अनाजो का उत्पादन इस प्रकार था .—१५

गेहूँ	२,५५० लाख टन	आलू	२,८९६ लाख टन
राई	३७२ ,,	मोटे अनाज	७१६ ,,
जौ	९३० ,,	कपास	४७५ लाख गाँठें
जई	६०४ ,,	चाय	१,०३१ हजार टन
मकई	२,२४२ ,,	कोको	१,१५० ,,
चावल	२,३९५ ,,	तम्बाकू	३८ लाख टन

कृषि-उत्पादन

मानव ने अपने उपयोग के लिए जिन अनाजो का सहारा लिया है उनमें गेहूँ, जौ, राई, जई, मकई, चावल और मिलेट्स मुख्य हैं। इन्हें जीवन का स्तंभ (Staffs of Life) कहा जाता है।

प्रस्तुत चित्र में प्रमुख फसलो के उत्पादन में विभिन्न महाद्वीपो का भाग प्रतिशत में बताया गया है। चावल और मोटे अनाजो को छोड कर प्राय सभी अनाज और आलूओ का सबसे अधिक उत्पादन मध्य अक्षांशों में (यूरोप व अमरीका में) किया जाता है। ये दोनो महाद्वीप मिलकर विश्व के उत्पादन का ८३% गेहूँ, ८०% जौ, समस्त राई, ९९% जई, ८७% मक्का, ९९%आलू पैदा करते हैं।

भूमि से पैदा होने वाली उपजों को दो भागो में बाँटा जा सकता है:—

(क) भोजन पदार्थ (Food Crops)—इनके अन्तर्गत उष्ण कटिबन्ध में पैदा होने वाले अनाज आते हैं जिनमें मुख्य चावल, मकई और मोटे अनाज हैं। इनके अतिरिक्त शीतोष्ण कटिबंधों में गेहूँ, जौ, राई, जई आदि भी पैदा किये जाते हैं।

(ii) पेय पदार्थ (Beverages)—इनके अन्तर्गत चाय, कहवा, काफी और तम्बाकू आते हैं।

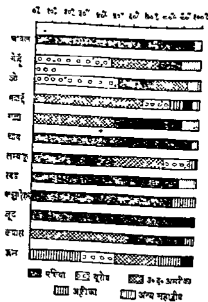
(iii) व्यावसायिक पदार्थ (Cash Crops)—इनके अन्तर्गत गन्ना, चुकन्दर, मसाले, तिलहन, सोयाफली, और सब्जियाँ फल आते हैं।

(ख) अभोज्य पदार्थ (Non-Food Crops)—यह पदार्थ उद्योग-धन्धो के लिए कच्चे सामान की तरह काम में लाये जाते हैं। जैसे :—

(१) तिलहन—अलसी, तिल, मूंगफली, बिनोली, गरी जैंतून, आदि।

(२) रेशेदार पदार्थ —कपास, जूट, सन, रेशम, सनई, मलीना हैम्प।

(३) घासें



चित्र ९७ फसलों के उत्पादन में विभिन्न महाद्वीपो का भाग

15 **World Agricultural Production & Trade Statistical Report**, June 1963, Deptt. of U. S. A Agriculture.

पिछले कुछ वर्षों से संसार की जनसंख्या में वृद्धि होने के कारण भोजन की मात्रा में कमी हुई है। सन् १७५० में विश्व की जनसंख्या ७२८० लाख थी, १६०० में यह १६०८० लाख थी और १६४० में २२,४६० लाख तथा १६६० में ३०,००० लाख थी। इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए पहले की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है। युद्ध के पहले की अपेक्षा इस बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए २१% अधिक अन्न, ४६% अधिक मांस और १००% अधिक दूध चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समय संसार में पहले की अपेक्षा ४% अधिक अन्न उपजता है, किन्तु खाने वालों की संख्या पहले की अपेक्षा १३% से भी अधिक है। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि जनसंख्या की वृद्धि उन्हीं देशों में अधिक हो रही है जिनमें पहले से ही जनसंख्या अधिक थी और जहां भोजन की समस्या पहले से ही कठिन थी, ऐसे देश चीन, जापान, भारत और दक्षिणी पूर्वी एशिया के अन्य देश हैं। किन्तु कुछ समय से इन देशों में पहले की अपेक्षा अधिक अन्न उत्पन्न किया जाने लगा है और अब यह देश खाद्य पदार्थों में प्रायः आत्म-निर्भर से हैं।

डा० राबर्ट स्लैटर के अनुसार पृथ्वी का ४८% भाग खेती के लिये बिल्कुल अनुपयुक्त है किन्तु ५२% ऐसा है जिनमें खेती की वृद्धि के लिये काफी संभावनायें हैं। उनके विचार से यदि संसार की अनुपजाऊ पोडसोल मिट्टी का केवल १०% (३० करोड़ एकड़) और उष्ण कटिबन्ध की अनुपजाऊ लाल मिट्टी का केवल २०% (१०० करोड़ एकड़) फिनलैंड और फिलिपाइन्स की आधुनिक प्रथाओं के अनुसार ही जोता जाय तो खेती की उपज इतनी बढ़ जायगी कि इस समय जितना भोजन हमको मिलता है।

खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि

विश्व के विभिन्न देशों में जितना खाद्यान्न उत्पन्न होता है वह एक वैज्ञानिक के अनुसार २ अरब मनुष्यों के लिए भी पर्याप्त नहीं है जबकि वर्तमान जनसंख्या ३ अरब के निकट है। स्पष्ट है कि शेष व्यक्तियों को भोजन प्राप्त करने के लिए अधिक अन्न उपजाने की आवश्यकता है। खाद्यान्नों का उत्पादन दो प्रकार से बढ़ाया जा सकता है,

(१) प्रथम नई भूमि को कृषि के अन्तर्गत लाया जाय, और

(२) वर्तमान कृषि भूमि पर वैज्ञानिक उपायों का अवलम्बन किया जाय।

अभी भी विश्व के ४५% भाग पर अनेक कारणों से खेती नहीं की जाती है। और खेती के अन्तर्गत जो क्षेत्र है भी, उनपर खाद्यान्नों के अतिरिक्त व्यवसायिक फसलें भी बोई जाती हैं। *अतः नये क्षेत्रों को कृषि के अन्तर्गत लाना आवश्यक है।* ये क्षेत्र साइबेरिया, रूस, कनाडा आदि देशों में है जो उत्तरी वनों के समीपवर्ती भागों में फैले है। इनके अतिरिक्त एशिया, अफ्रीका, दक्षिण अमरीका और आस्ट्रेलिया में शुष्क प्रदेशों में भी ऐसी भूमि उपलब्ध है। इन क्षेत्रों के विकास के लिए न केवल अधिक मात्रा में पूंजी ही वरन् अन्य देशों से आने वाले मनुष्यों की भी आवश्यकता होगी। ये दोनों ही कार्य आरम्भ में कुछ कठिन होंगे अस्तु, सर्वप्रथम कृषि की वर्तमान भूमि पर ही गहरी खेती तथा वैज्ञानिक साधनों द्वारा उत्पादन बढ़ाना अपेक्षित होगा। अत्यन्त शीत-प्रधान क्षेत्रों में जलवायु की कठोरता को कम करने के लिए पहले बीजों को कुछ सप्ताह तक प्रयोगशालाओं में अंकुर निकलने देते हैं और फिर

इस अनाज पर विश्व की लगभग आधी जनसंख्या निर्भर रहती है। दक्षिणी और दक्षिणी पूर्वी एशिया का तो चावल सबसे मुख्य भोजन है।[29] विकिजर तथा बैनेट अनुसार संसार के निवासियों में ५ में से ४ प्रधानतः चावल या गेहूँ खाना पसन्द करते हैं।[30] यदि सम्भव हो तो अन्य बचे लोग भी चावल या गेहूँ खाना पसन्द करेंगे। चावल और गेहूँ में से खाद्यान्नों में किसका महत्व अधिक है यह निर्णय देना कठिन है किन्तु मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि दोनों ही विश्व के प्रमुख खाद्यान्न हैं। दोनों खाद्यान्नों में कुछ विपरीतता पाई जाती है जैसे :—[31]



चित्र ७४. चावल का पौधा

(१) अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में गेहूँ का उत्पादन होता है। यह विस्तृत खेती का प्रमुख उदाहरण है जबकि चावल की खेती विशेषतः मानसूनी प्रदेशों तक ही सीमित है। इसका उत्पादन गहरी खेती का उदाहरण है।

(२) गेहूँ अधिकतर कम जनसंख्या वाले क्षेत्रों में बोया जाता है जहाँ भूमि काफी होती है किन्तु श्रम महँगा होता है, जबकि चावल का उत्पादन मुख्यतः घनी जनसंख्या वाले देशों में किया जाता है जहाँ जनसंख्या के भार के कारण भूमि का अभाव होता है किन्तु श्रम बड़ा सस्ता होता है।

(३) गेहूँ प्रायः सैकड़ों एकड़ वाले खेतों में बोया जाता है किन्तु चावल छोटी-छोटी क्यारियों में ही उगाये जाते हैं।

(४) गेहूँ का प्रति एकड़ उत्पादन कम किन्तु प्रति व्यक्ति उत्पादन अधिक होता है जबकि चावल का प्रति एकड़ उत्पादन अधिक किन्तु प्रति व्यक्ति उत्पादन कम होता है।

(५) गेहूँ की खेती अधिकतर मशीनों द्वारा की जाती है किन्तु चावल की खेती बुवाई से लगाकर कटाई तक सभी हाथ से की जाती है।

(६) अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में गेहूँ का व्यापार मुद्रा के लिए अधिक होता है किन्तु चावल का व्यापार बहुत कम होता है। यह उत्पादक देशों में घरेलू उपभोग में ही अधिक प्रयुक्त किया जाता है।

चावल का उत्पत्ति स्थान भारत माना जाता है यहाँ इसकी खेती ३००० वर्ष पूर्व भी की जाती थी। इस देश में यही ऐसा अनाज है जो कि अब भी जंगली रूप में उगता है। कई लोगों का विश्वास है कि चीन में इसकी खेती ईसाई युग के २८०० वर्ष पूर्व ही प्रचारित हो गई थी। दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों से ही चावल १४६८ ई० में यूरोप और १४६४ ई० अमेरिका में ले जाया गया। चीन और भारत से ही

29. *Ekblaw and Mulkerne,* **Op. Cit.,** p. 123.
30. *V. D. Wickizer and M. K. Benett,* **The Rice Economy of Monsoon Asia,** 1941, pp. 2-4.
31. *Jones & Drakenwald,* **Economic Geography,** p. 254.

(२) कृषि का यन्त्रीकरण—भूमि से कम श्रमिको की सहायता से किन्तु अधिक से अधिक यन्त्रों का उपयोग कर प्रति एकड उत्पादन बढाने के उपाय भी किये गये है। सयुक्त राज्य अमरीका तथा रूस मे जहाँ मानव श्रम अधिक मँहगा है, जहाँ खेती मे मशीनो का उपयोग बहुत बढ गया है। ट्रैक्टर, बोने तथा फसल काटने की मशीनें, हवाई जहाज आदि का प्रयोग किया जाता है। कई भागो में हवाई जहाजो से ही खेतों मे बीज डाल दिये जाते है। शुष्क भागो मे ऐसे हवाई जहाज काम मे लाये जाते है जिनमे विशेष प्रकार के यन्त्र लगे होते है जो नमी को खेतो पर छोडते जाते है। इसी नमी मे बीज बो दिये जाते है। कृषि के यात्रिकरण की दृष्टि से रूस का महत्व सबसे अधिक है। यहाँ खेतो का औसत क्षेत्रफल १००० एकड से भी अधिक का होता है। खेती सामूहिक रूप मे की जाती है। जलवायु, मिट्टी तथा यन्त्रो की उपलब्धता ने यानिकरण को विया को अधिक लाभान्वित किया है। इजरायल मे भी १०,००० के लगभग यानिक-खेत है। अन्य देशो मे इस दिशा मे अधिक प्रगति नही हो पायी है। अर्जेन्टाइना मे शक्ति के अभाव मे घोडो से खेती की जाती है। आस्ट्रेलिया मे भेड पालने के साथ-साथ खेती भी की जाती है। यूरोप, एशिया तथा भारत मे खेत इतने छोटे और बिखरे है कि मशीनो का उपयोग लाभ-दायक नही होता।

विश्व के प्रमुख देशों में कृषि में मशीनों का उपयोग[14]

देश	ट्रैक्टर्स (सख्या मे)		प्रति ट्रैक्टर पीछे ट्रैक्टर्स का उपयोग	कम्बाइन हारवेस्टर	
	१९५१	१९५८	१९५८	१९५१	१९५८
भारत	—	१८	६,५६७	—	—
जापान	—	०७	८,६६६	—	—
स० रा० अमरीका	—	४,७५०	९४	८८७,०००	१०६०,०००
अर्जेन्टाइना	—	८२	१७४६	३६८०५	३४,१९१
इलैण्ड	३२५	४३४	४५	१७,२७०	४३,२५०
फास	१३५	५५९	५२	६,२३४	३७,९००
जर्मनी	१३८	६५३	- २१	—	२९,०००
इटली	६६	२०७	१०१	—	२,६१६
नीदरलैंडस	१९	६७	३५	—	—
रूस	—	९९६	५९३	—	—
पोलैण्ड	२२*	५८	३४९	—	५००,२००
मिश्र	—	१२	२१६	—	—
आस्ट्रेलिया	—	२२५	२०७६	५८,४९४	६५,७०६
न्यूजीलैण्ड	—	७४	१८७	—	—
विश्व का योग	६,१३०	१०,१७४	३८९	—	—

14. F. A. O. Production Yearbook 1959.

को पकने के लिए कुल तापक्रम २,५००° से ४,०००° फा० तक रहता है। चीन में यह परिवर्तन ३,५००°फा० पर दृष्टिगोचर होता है। मद्रास में मलाबार के तीन महीने की फसल के लिये ७५००°फा० और तन्जौर की ६ महीने की फसल के लिये१६८०° फा० पर बदलता रहता है। इससे यह सिद्ध होता कि विभिन्न किस्मों के लिये हर स्थान पर समान तापक्रम की आवश्यकता नहीं होती।

चावल को प्रचुर मात्रा में सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है। किसी भी जगह अधिक लम्बा मेघाच्छन्न मौसम इसके लिये हानिकारक होता है और पौधे के जड़ पकड़ने के बाद हर स्थिति में विकास के मार्ग में अड़चन डालने वाला होता है। तेज हवा भी पौधों के लिये हानिप्रद है इससे खेती के बांध टूट जाते हैं और पकती हुई फसल को हानि पहुँचती है।

चावल के लिए तापक्रम से भी अधिक आवश्यकता पर्याप्त मात्रा में (४५" से ६५" तक) जल की आवश्यकता होती है। वर्षा साल भर ही समानरूप से वितरित हो तो अच्छा है। विशेषत चावल बोने के बाद यह बड़ी लाभदायक रहती है। द० पूर्वी एशिया के पू० पाकिस्तान, मलाबार तट, जावा, थाईलैंड, इन्डोचीन, लंका इरावदी, मीनाम, यांग्सी, मिकांग नदियों के डेल्टों में वर्षा की यह आवश्यक मात्रा दक्षिण पश्चिमी मानसूनों द्वारा प्राप्त हो जाती है तथा बाढ़ें भी आती हैं। किन्तु जापान, कोरिया और चीन में वर्षा कम होने के कारण सिंचाई का प्रबन्ध किया जाता है। सं० राज्य अमरीका में लूसियाना में वर्षा की मात्रा केवल २०" होती है चावल को सिंचाई द्वारा २५" से ३०" तक और पानी दिया जाता है। किन्तु यह बात ध्यान रखने योग्य है कि चावल को अधिक आर्द्रता की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि यह नील, पो और स्कारमेंटो नदियों की घाटी में सूखी गर्मी में भी पैदा किया जाता है। वस्तुतः विश्व का अधिकांश चावल ४०" वर्षा वाले प्रदेश में पैदा होता है। आरम्भ में चावल को बोते समय और पौधे को उगाते समय बहुत ही अधिक मात्रा में पानी चाहिए। इसलिए प्रारम्भिक अवस्था में खेत ६" की ऊँचाई तक पानी भरा रखा जाता है। खेतों में पानी की यह मात्रा कम से कम ७५ दिनों तक भरी रहनी चाहिए।[३५] लेकिन फसल पकने के समय अधिक वर्षा या पानी की अधिकता फसल को नष्ट कर देती है। पानी की सुगमता की दृष्टि से नदियों के डेल्टे और कच्छारी मैदान जहाँ पर प्रचुर मात्रा में नमी रहती है चावल की फसल के लिए आदर्श खेत प्रस्तुत करते हैं।

मिट्टी—चावल के लिये चिकनी मिट्टी अथवा गहरी चिकनी दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त होती है क्योंकि इसमें पानी बहुत अधिक समय तक टिका रह सकता है और इस तरह भूमि में सदा नमी बनी रहती है लेकिन जब भूमि रेतीली होती है तो फसल का पैदा करना कठिन ही नहीं किन्तु बिल्कुल ही असम्भव हो जाता है। भारी मिट्टी के प्रदेशों में कुछ मिट्टी की ऐसी पुरानी किस्मे पाई जाती हैं कि उनको खाद न देने पर भी अच्छी फसल पैदा करती हैं। चावल भूमि की सारी उर्वरा शक्ति

---

35. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 95.

36. *M. N. Basu*, **Short Studies in Economic & Commercial Geography, p. 114.**

नीचे की तालिका में विश्व में प्रमुख फसलों का उत्पादन बताया गया है :—

विश्व में प्रमुख फसलों का उत्पादन

उपज	इकाई	१९३५–३९ औसत	१९५०–५४ औसत	१९५६–१९५७	१९५७–१९५८	१९५८–१९५९
गेहूं	दस लाख बुशल	६,१०२	६,७६०	७७६०	७६४०	८७१०
राई	दस लाख बुशल	१,७३२	१,४५५	१४०५	१४१५	१४७०
चावल	दस लाख हन्डरवेट	३,७०६	३,९४०	४३९७	४२४८	४७१२
गन्ना	दस लाख शार्ट टन	२८५	३९१	४५८	४९७	५२२
मक्का	दस लाख बुशल	४,७७५	५,६५०	६५५०	६५०	७१००
जई	दस लाख बुशल	४३६४	४,१५५	४२५५	३९९५	४१६०
जौ	दस लाख बुशल	२३७७	२,६६०	३३७०	३१५५	३२३०
फलियाँ	दस लाख हण्डरवेट	६०९	७५५	८८५	६७६	९२.२
आलू	दस लाख हण्डरवेट	२,३८२	३३०६	३६९८	३५२४	३३७५
सेव+नासपाती	दस लाख बुशल	५७९	४७८	५१५	३६७	५६५
रसदार फल	दस लाख शार्ट टन	९८	१४७	१५.१	१४७	१५२
अलसी	दस लाख बुशल	१३५	१२१	१८६	१२७	१४०
सोयाफली	दस लाख बुशल	४६४	६९२	८४९	८७७	९८४
मटर	दस लाख शार्ट टन	९६	११६	१४	१४७	१५५
विनौला	दस लाख शार्ट टन	१५३	१७९	२०	१२०	२०८
जैतून का तेल	दस लाख शार्ट टन	९७५	१०७९	१७७८	१०१	१०९५
कपास	दस लाख गाँठ	३१७	३७२	४१.३	४०२	४२३
तम्बाकू	दस लाख पौंड	६,६१९	७८११	८६७८	८६०८	८२६३
जूट	दस लाख पौंड	३४२२	३८८५	४८१९	४२२५	४४३०
कहवा		४१६	४१	४५२	५३४	५९.२
चाय	दस लाख पौंड	९९४	१३१८	१४२४	१५६७	१६१२

है।[38] ऊँचे अक्षांशों वाले देश में चावल १०० ही दिनों में पक जाते हैं जबकि अन्यत्र इसे पकने में १५० दिन लगते हैं। इसके अतिरिक्त ऊँचे अक्षांशों में चावल की किस्म भिन्न होती है—जैपोनिका (Japonica)—जबकि निम्न अक्षांशों में इंडिका (Indica) किस्म बोई जाती है। चावल की प्रति एकड़ पैदावार एक देश से दूसरे देश में कितनी भिन्न होती है यह बात आगे की तालिका से स्पष्ट हो जाती है।

(प्रति एकड़ पीछे उपज—पौंडों में)

जैपोनिका		इंडिका	
		जावा	१,०३४
जापान	२,३५२	थाईलैंड	८८८
मिश्र	१,८९०	ब्रह्मा	८४३
कोरिया	१,५६३	भारत	७७२
चीन	१,५४६	इन्डोचीन	७१६
संयुक्त राज्य अमेरिका	१ ३९०	फिलीपाइन्स	७०३

इससे यह स्पष्ट है कि भारत की पैदावार दक्षिणी पूर्वी एशिया के दूसरे देशों की तुलना में बहुत ही कम है व भूमध्यसागरीय प्रदेशों की तुलना में भी भारत की प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम है क्योंकि इन देशों की भूमि बहुत उपजाऊ है और यहाँ कई प्रकार का बनावटी खाद जैसे नाइट्रोजन ६० से ८० पौंड फासफोरिक एसिड ५० से ६० पौंड तक प्रति एकड़ प्रयोग में लाया जाता है। लेकिन ये खादें मँहगी होने के कारण भारतीय किसान इनका प्रयोग नहीं कर पाता।

उत्पादन-क्षेत्र

एशिया के द० पूर्वी मानसूनी प्रदेश विश्व के उत्पादन का लगभग ६०% चावल उत्पन्न करते हैं। इस क्षेत्र के मुख्य चावल उत्पादक देश भारत, चीन, जापान, वर्मा, थाईलैंड, इन्डोनेशिया, हिन्दचीन, फिलीपाइन, कोरिया, पाकिस्तान तथा लंका है। यहाँ अधिक चावल उत्पन्न होने के मुख्य कारण ये हैं :—

(१) इन देशों में अधिकांश चावल नदियों के डेल्टों में ही बोया जाता है जहाँ प्रति वर्ष नदियाँ बाढ़ की मिट्टी लाकर बिछाती रहती हैं। अतः बनावटी तौर पर भूमि में खाद देने की आवश्यकता नहीं पड़ती और भूमि स्वतः ही उर्वरा हो जाती है।

(२) इन प्रदेशों में द० प० मानसूनों द्वारा उसी समय वर्षा होती है जब फसल को पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है।

(३) इन देशों की जनसंख्या घनी होने के कारण सस्ते मजदूर अधिक मिल जाते हैं।

38. *E. Huntington, S. W. Cushing and E. B. Shaw*, **Principles of Human Geography**, 1947, p 470.

(४) गेहूँ और जौ को छोड़कर कोई भी अनाज ऐसी भिन्न-भिन्न जलवायु में पैदा नहीं हो सकता। इसकी सत्यता का प्रणाम यही है कि यह पतझड़ और बसन्त दोनो ऋतुओं में बोया जा सकता है। इसलिए आजकल इसकी कई नई किस्में, जो कि काफी ठंडे जलवायु और अनुपयुक्त भूमि मे पैदा हो सकती हैं, निकाली गई हैं। जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका मे फल्कास्टर (Fulcaster), होप (Hope), मारक्वीलो (Marquillo) आदि।

(५) गेहूँ इतना कठोर और तेल रहित होता है कि दूसरे खाद्यानों की अपेक्षा यह काफी समय तक अच्छी तरह टिक सकता है।

(६) इसकी अन्य विशेषता यह है कि आर्थिक दृष्टि से भी इसकी पैदावार मे कम खर्च होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि जहाँ से इसकी बुवाई आरम्भ होती है वहाँ से फसल काटने तक सब काम मशीनो से होता है।

(७) गेहूँ को आटे के रूप मे या वैसे भी काफी लम्बे समय तक रख सकते हैं। इस कारण दूसरे अनाजो से यह ज्यादा अच्छा है।

गेहूँ मनुष्य का मुख्य भोज्य पदार्थ होते हुए भी जानवरो के लिए एक अमूल्य भोजन है। यह मुर्गी पालने के सहयोगी धन्धे को सहायता देता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और कनाडा में यह पशुओ और सूअरो को खिलाने के काम में लाया जाता है। इटली और दक्षिणी फ्रांस में इसके आटे से "मारकौनी" (Marconi) नामक दलिया तैयार किया जाता है। इसी के अनुसार "वारनीसीली" (Vernicelli) भी तैयार की जाती है। ये दोनो किस्में सख्त गेहूँ से तैयार की जाती हैं। इटली मे आटे से कई तरह के दलिये (Pastes) बनाये जाते हैं जबकि सयुक्त राज्य व कनाडा में भी इससे कई चीजें तैयार कर Force और Grape Nuts आदि व्यापारिक नामो से बेची जाती हैं। गेहूँ से कई प्रकार की पकाई हुई या तैयार की हुई भोज्य सामग्रियो का भी व्यापार होता है जैसे बिस्कुट और डबल रोटियाँ आदि। चीन मे गेहूँ का उपयोग पका कर 'Noodles' और 'Dumplings' के रूप में किया जाता है।[२८]

(२) चावल (Rice—*Oryza Sativa*)

क्षेत्र और विशेषता

चावल उष्ण और अर्द्ध उष्ण-कटिबन्धो की उपज है। संसार में चावल की खेती के क्षेत्र ४५° उत्तरी अक्षांश और ३०° दक्षिणी अक्षांशों के बीच फैले हैं। उत्तरी जापान, और मचूरिया में ३५° उत्तरी अक्षांश; इटली मे ४५° अक्षांश, मैलेगासी मे २०° दक्षिणी और दक्षिणी अमेरिका में ३०° दक्षिण तक बोया जाता है। लेकिन यह उष्ण कटिबन्ध के मानसूनी प्रदेशों के लिये विशेष अनुकूल है। यद्यपि दुनिया में गेहूँ का उपयोग अधिक है लेकिन सत्य बात तो यह है कि शीतोष्ण प्रदेश के निवासियो के लिये गेहूँ जितना उपयोगी और आवश्यक है चावल भी उष्णकटिबन्ध के निवासियों के लिये उतना ही महत्वपूर्ण है।

---

28. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, pp. 88-89.

दक्षिणी कोरिया	१०५०	११३०	२६२४	३७२५
पाकिस्तान	६००३	१०,०३८	१२,३६६	१६११८
फिलीपाईन्स	२३५०	३११८	२७६७	३६६२
थाईलैंड	५२११	५६७७	६८४६	७७००
ब्राजील	१६२७	३१७६	३०२५	५२१३
मिश्र	२५६	२६७	६७१	११४२
इटली	१४६	१२६	७२३	६७४
संयुक्त राज्य अमेरिका	७५२	६४५	१६२५	२४३३
विश्व का योग	१,०२,५००	१,१६,५००	१,६४,७००	२,३६,५००

जापान—जापान चावल पैदा करने वाला तीसरा बड़ा देश है। ऐसा माना जाता है कि यहाँ चावल की ४,००० किस्में बोई जाती हैं। जापान की कुल खेती की जाने वाली भूमि की ५५ प्रतिशत भूमि चावल की खेती के लिए उपयोग में लाई जाती है। जापान के उत्पादन का ⅙ अनेले क्वाटों के मैदान से प्राप्त होता है। जापानियों के लिए यही एक मुख्य भोज्य पदार्थ है जिस पर लाखों आदमी निर्भर रहते है। सामान्य तौर पर चावल का कलेवा, दोपहर का नाश्ता और संध्या का भोजन आदि सभी समयों पर प्रयोग किया जाता है। यहाँ पर दलदली चावल को हा (Ha) और पर्वतीय चावल को होटा (Hota) कहते हैं। जापान मे चावल का उत्पादन उत्तरी होकेंडो के कई भागो में किया जाता है। दक्षिणी द्वीपों में भी बोयी जाने वाली फसलों मे चावल का स्थान सर्वोपरि है। "वास्तव मे इसका महत्व कृषि मे इतना अधिक है कि जहाँ कहीं भी सम्भव होता है तथा जब कभी सम्भव हो, चावल ही बोया जाता है। अत गेहूँ जौ, राई, आलू तथा अन्य अनाजों का उत्पादन चावल की पूर्ति करने के लिए ही किया जाता है। जिस भूमि पर थोड़े या दीर्घ काल के लिए चावल बोना लाभदायक नही होता, वहीं ये अनाज बोये जाते हैं। होंशू, कियूश्यू और शिकोकू प्रमुख उत्पादन क्षेत्र है। होंशू के स्टोची प्रदेश में इतना चावल पैदा होता है कि इसे जापान का **चावल का कटोरा** कहा जाता है। यहाँ प्रति एकड उपज भी अधिक होती है।"[39] यहाँ चावल का उपयोग अधिक होने से ब्रह्मा, इण्डोचीन और थाईलैंड से चावल आयात किया जाता है।

चीन—चीन संसार मे सबसे अधिक विश्व के उत्पादन का ३५ से ४०% चावल पैदा करने वाला देश है। यहाँ इसकी खेती २०° उत्तरी अक्षाशो से से ३३° उत्तरी अक्षाशो के बीच की जाती है। चावल का उत्पादन करने वाले मुख्य क्षेत्र सीक्याग नदी की घाटी व डेल्टा, याग्टीसीक्याग की घाटी का निचला भाग और डेल्टा तथा जीचुआन बेसिन हैं। यहाँ चावल सिंचाई के सहारे पैदा किया जाता है। याग्टीसी नदी के बेसिन मे कृषि भूमि के ५८% भाग पर दक्षिणी चीन मे ३७% भाग पर, चुनकिंग के निकटवर्ती भागों में लाल बेसिन मे ४१% भाग पर तथा दक्षिणी चीन मे ६% भाग पर चावल पैदा किया जाता है। इस सारे प्रदेश को

39. *Davis*, **The Earth and Man,** p. 421

यह मिश्र और उत्तरी अफ्रीका को ले जाया गया और अब तो यह दक्षिणी अमरीका के अनेक देशों में तथा संयुक्त राज्य में भी अनेक स्थानों पर पैदा किया जाने लगा है।

किस्में

चावल की कई किस्में है और ऐसा माना जाता है कि इसकी कुल किस्में गेहूँ की किस्मो से भी अधिक होती है। लेकिन मुख्य रूप से इसकी दो किस्में हैं—एक तो निम्न भूमि मे उत्पन्न होने वाला या दलदली चावल (जिसे स्वा या पेडी) भी कहते है और दूसरा उच्च भूमि पर उगने वाला या पहाड़ी चावल (जो सूखी किस्म का होता है)।

(क) निम्न भूमि का चावल (Swamp or Lowland Rice)—सभावित तौर पर ऐसा माना जाता है कि दुनिया मे पैदा होने वाले चावल का ७५ प्रतिशत चावल तर भूमियो का चावल होता है।[32] यह प्राय. समतल और बाँध बँधे हुए खेतो मे बोया जाता है जहाँ पर पानी लम्बे समय तक ठहर सकता है और इस तरह बहुत सारा घास व कूडा नष्ट हो जाता है। चावल की यह किस्म पूर्णतया सुरक्षित होती है। इस प्रकार चावल की फसल काटने और इसको इकट्ठा करने के लिए अधिक मजदूरो की आवश्यकता होती है। अत चीन, जापान, भारत आदि देशो मे इसकी खेती अधिक की जाती है।

(ख) पहाड़ी चावल (Upland or Hill Rice)—इसके विपरीत पहाड़ी चावल साधारणतया पहाडियो की ढालो पर सीढीदार खेतो के रूप मे बोया जाता है। वर्षा से इन ढालो पर तालाबो या झरनो द्वारा पर्याप्त जल प्राप्त हो जाता है। भारत मे पहाडी चावल की खेती की जाती है। हिमालय पहाड के ढालो पर इसकी खेती ८,००० फीट की ऊँचाई तक होती है। लेकिन चावल के उत्पादन की सीमा ३,००० से ४,००० फीट की ऊँचाई तक सीमित होती है अतः यह मँहगा होता है और इसलिए यह बहुत कम बोया जाता है। कोरिया मे केवल २% और जावा में १०% उत्पादन पहाडी चावल का होता है।

जलवायु सम्बन्धी अवस्थाएँ

चावल उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशो की फसल है। अत. यह स्पष्ट है कि उसकी पैदावार के लिए काफी ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता है। श्री एकमायन के अनुसार तो इसके पौधो की जमने के लिए कम से कम ५०° फा० से ५५° फा० का तापक्रम आवश्यक है और फसल पकने के लिये अधिक से अधिक १०४° फा० या औसतन ८६° फा० से ६५° फा० तक तापक्रम रहना आवश्यक है। उत्तरी गोलार्द्ध मे जुलाई को ७५° समरेखा इसकी उत्तरी सीमा निर्धारित करती है और दक्षिणी गोलार्द्ध मे ७५° जनवरी की समताप रेखा।[34] फ्रांस और इटली मे चावल की कई किस्मो

---

32. *Williams and Huntington*, **Economic & Social Geography**, p. 348.
33. *G. F. Chamberlane*, **Geography**, p. 299.
34. *Stamp*, **A Commercial Geography**, p. 134.

की $\frac{2}{3}$ फसल पैदा की जाती है। फिर भीतरी उच्च प्रदेशो मे यह अंतर-पठारी घाटी व ढालू जगहो पर भी बोया जाता है।

अन्य क्षेत्र—चावल का थोडा उत्पादन पश्चिमी द्वीपसमूह व मध्य अमेरिका से फ्लोरिडा तक और खाडी के समीपीय भागो (टेक्सास, लूसियाना, अर्कनसास राज्यो) और मिसीसीपी नदी की नीचे की घाटी मे होती है। यहाँ जलवायु व भूमि सम्बन्धी सभी अवस्थाएँ चावल की खेती के उपयुक्त पाई जाती है। खाडी के चारो ओर प्रदेशो मे तो समुचित रूप से खेतो को पानी पहुँचाने के लिए कुएँ खोदे गये हैं तथा पानी को ऊपरी खेतो मे पहुँचाने के लिए पम्प लगाये गये हैं। इन खेतों मे चावल मशीनो द्वारा बोया व काटा जाता है। अफ्रीका मे मैडागास्कर, टैंगनिका झील की ओर दक्षिणी जैंजीबार का समुद्री प्रदेश, नाइजर की घाटी व मिश्र के डेल्टा में (जहाँ पर नील नदी की बाढ तमाम प्रदेश पर उपजाऊ कीचड बिछा देती है) चावल पैदा किया जाता है।

भूमध्य सागरीय प्रदेशो में भी चावल पैदा किया जाता है। उत्तरी इटली की पो नदी की नीची भूमि, पीडमान्ट, लम्बार्डी, वैनीसिया, और टस्कैनी में बोया जाता है। कुछ फसल स्पेन मे भी पैदा की जाती है। दक्षिणी अमेरिका में ब्राज़ील, गायना, कोलम्बिया, इक्वेडोर और पीरू के समुद्र तटीय भागो में भी चावल बोया जाता पिछले कुछ समय से थोडा चावल रूस के अजरबैजान, उत्तरी काकेशिया, कज्जाक और सुदूरपूर्व के भागो में भी पैदा किया जाने लगा है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

चूंकि चावल की अधिकाश पैदावार घरेलू उपभोग के लिये ही पैदा की जाती है अत दुनिया के व्यापार में इसकी बहुत कम मात्रा पहुँच पाती है—अन्तर्राष्ट्रीय जगत का चावल १० प्रतिशत व्यापार होता है जबकि गेहूँ का व्यापार २०% से भी अधिक होता है। अधिकाश व्यापार एशिया के बीच ही होता है जहाँ चावल खाने वाली जनसख्या रहती है और शेष व्यापार चावल निर्यात करने वाले देशो व चावल आयात करने वाले यूरोपीय देशो के बीच होता है।

चावल निर्यात करने वाले प्रमुख देश थाईलैंड, बर्मा और फ्रासीसी हिन्दचीन हैं। इन देशों मे चावल उपभोग के उपरान्त भी अधिक बच जाता है। अत भारत, चीन, जापान, मलाया, लका, फ्रास इन्डोनेशिया और क्यूबा को निर्यात किया जाता है। इन देशो में चावल की खपत तो बहुत होती है किन्तु उपज कम। इन देशो में चावल का प्रति व्यक्ति उपयोग ३०० पौण्ड होता है।

उपयोग

भोजन की दृष्टि मे चावल का महत्व गेहूँ से बहुत कम है क्योंकि इसकी गेहूँ के समान रोटी नही बनाई जा सकती। चावल के आटे मे लोच (gluten) नहीं होता अत इसकी रोटी ठीक प्रकार नही बन सकती परन्तु यह बहुत जल्दी उबाले जा सकते है। भारत में इसको उबाल कर कढी के साथ खाते है। चूँकि इसमें स्टार्च बहुत पाया जाता है अत पश्चिम मे यह आलू व रोटी के स्थान पर काम में लाया जाता है। चीन व जापान में चावल मछलियो के साथ खाया जाता है। चावल मे कार्बोहाइड्रेट काफी मात्रा में पाया जाता है, इस कारण इसमें बहुत बडी मात्रा में

नष्ट कर देता है। अत. भूमि मे बहुत से पदार्थों व उपजाऊ तत्वो की कमी पड जाती है। इस कारण भूमि में हरी खाद देना आवश्यक हो जाता है जिससे उसकी खोई हुई उपजाऊ शक्ति लौट आवे। एक एकड़ भूमि में चावल की फसल से ३,००० पौंड अनाज मिलता है और लगभग उतना ही भूसा प्राप्त होता है। अत चावल की फसल एक समय मे भूमि से ४८ पौंड पोटाश खीच लेती है जिसकी कमी की पूर्ति वापस खाद देकर पूरा करनी पडती है। बनावटी खाद देने से चावल के खेतो की उर्वरा शक्ति सुधर जाती है। चावल के लिए सबसे उपयुक्त खाद हड्डियाँ, सुपरफॉस्फेट एमोनिया और साइनाइड का मिला हुआ खाद होता है।[37] इन रासायनिक खादों के अतिरिक्त जापानी लोग पेड़ पौधे की पत्तियो, उनकी शाखायें व टहनियाँ, घास और दूसरे सड़े-गले पदार्थ और राख आदि खेतो को उपजाऊ बनाने के लिए उपयोग मे लाते हैं।

श्रम—धान की खेती के लिए बहुत बडी संख्या मे सस्ते मजदूरो की भी आवश्यकता होती है। अतः जिन देशों मे जनसख्या अधिक होती है वहाँ सस्ते मजदूर बहुत मिल जाते हैं। किन्तु सयुक्त राज्य अमेरिका मे जहाँ धान की खेती मशीनों द्वारा की जाती है इतने मजदूरो की आवश्यकता नही पडती। कैलीफोर्निया और लूसीयाना में कम्बाइन हारवेस्टर की सहायता से १० मानव श्रम के घन्टो मे प्रति एकड़ से ३,५०० पौंड चावल प्राप्त किया जाता है जबकि पूर्वी देशों मे इतना चावल पैदा करने में सैकडों घण्टे लग जाते हैं। मशीनों से अधिक व्यवहृत होने के कारण सं० रा० में चावल का क्षेत्र १९३० मे १० लाख एकड़ से १९६१ मे २४ लाख एकड़ हो गया है।

अगर चावल की पैदावार के लिए जलवायु व भूमि अवस्थायें अनुकूल हुई तो अनाज बहुत शीघ्रता से पकता है। यहाँ के एक खेत से साल भर मे पांच-पांच फसलें तक ली जाती हैं किन्तु साधारणतया साल भर मे दो फसलें तो सभी जगह प्राप्त हो जाती है।

उत्पादन विधि—चावल पहले उत्पत्ति स्थानो (Nurseries) में बोये जाते है। वहाँ जब पौधे ३″ बडे हो जाते है तो उन्हे खेतो मे थोडी-थोडी दूर पर कतार में हाथो से रोप देते है और फिर खेतो मे काफी पानी भर देते है क्योकि पौधों की शीघ्र वृद्धि के लिए खेतो मे अधिक जल का भरा रहना लाभप्रद होता है किन्तु फसल पकने के समय पानी को खेतों से पूरी तरह निकाल देते है। धान की पैदावार कम अथवा अधिक होना कई बातो पर निर्भर करता है इनमे भूमि की बनावट या प्रकृति, जलवायु की अवस्था, खाद का उपयोग और कीडे व बीमारियो आदि से पौधे की मुक्ति ऐसी मुख्य बातें है जो प्रति एकड पैदावार पर प्रभाव डालती है। साधारणतया ग्रीष्म ऋतु मे चावल की पैदावार बहुत होती है जबकि पतझड की फसल में पैदावार बहुत ही कम होती है। इसी तरह सिंचाई द्वारा पैदा किए गए क्षेत्रो मे प्रति एकड पैदावार असिंचित क्षेत्रों की अपेक्षा कम होती है। यह भी स्मरणीय है कि चावल की प्रति एकड उपज ऊँचे अक्षाशों वाले देशो में विषुवत् रेखीय और उष्ण कटिबन्ध भागों की अपेक्षा अधिक होती है। प्रो० हंटिंगटन का अनुमान है कि १०° अक्षाशो के बीच ३०-४०° अक्षांशो की अपेक्षा चावल की उपज ४०% ही होती

---

37. *L. D. Stamp*, **A Commercial Geography**, p. 55.

जलवायु सम्बन्धी अवस्थाएँ

खेती किये जाने वाले अनाजों में जौ सबसे मस्त होता है। दूसरे भोज्य पदार्थों की अपेक्षा ससार में इसकी बहुत अधिक खेती की जाती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी फसल बहुत जल्दी पक जाती है। इस कारण काफी निम्न तापक्रमों वाले स्थानो पर भी बड़ा आसानी से इसे उगाया जा सकता है। दूसरे, इसे अधिक वर्षा व उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नही होती। यह बहुत साधारण भूमि पर भी अच्छी फसल देता है। इस तरह इसकी खेती काफी दूर उत्तर में नार्वे में ७०° उत्तरी अक्षाश तक होती है और दक्षिण में १०° अक्षाशों के बीच लाइबेरियां तक जाती है।[४२] इस तरह जौ स्लेज खीचने वाले रेंडियर और रेगिस्तान को पार करने वाले ऊट दोनों का साथी व पडौसी है। हिमालय-पर्वत पर यह १४,००० फीट की ऊँचाई तक बोया जाता है।[४३]

यदि जौ और गेहूँ के लिए समान अवस्थाएँ हों तो स्वभावत ही जौ की प्रति एकड पैदावार गेहूँ से अधिक होगी और साथ-साथ बोई जाने वाली भूमि का क्षेत्र भी अधिक होगा। जो भूमि व जलवायु गेहूँ के लिए उपयुक्त है वह जौ के लिए भी अनुकूल ही होगी। वस्तुत ऐसी जलवायु मे तो इसकी और अधिक उत्तम फसल होती है। गेहूँ की अपेक्षा यह क्षार-युक्त भूमि पर भी अधिक बोया जाता है। अतः प्रति एकड और करीब ५० प्रतिशत अधिक फसल देता है।[४४]

क्योंकि यह काफी निम्न तापक्रमो मे भी बहुत जल्द पक जाता है इस कारण उत्तर की अल्पकालीन ग्रीष्म ऋतु व पहाडी घाटियो की मनमोहक गर्म ऋतु में भी सरलता से पैदा कर लिया जाता है।[४५] इसकी कुछ किस्में तो इतनी जल्दी पकने वाली हैं कि ६० दिन की अवधि में ही तैयार हो जाती हैं। साधारण तौर पर जौ हिमालय उत्तरी नार्वे और स्वीडेन व आर्कटिक वृक्ष के परे ७०° अक्षाश के बीच पैदा किया जाता है।[४६] इसकी लगभग ९८% खेती उत्तरी गोलार्द्ध तक ही सीमित है। फिनलैण्ड, उत्तरी रूस व आर्कटिक समुद्र के पास तो यह बराबर पैदा किया जाता है। यह सूखा व गर्मी को सहन करने के कारण ही नील की घाटी, एबीसीनिया और विपुवत् रेखा के निकट पूर्वी अफ्रीका के भागो में बोया जाता है। यह गर्म व सूखी जलवायु वाले स्थानो में भी बोया जाता है। इस कारण भूमध्य-सागरीय प्रदेशों की यह मुख्य फसल है। चूंकि यह गेहूँ की अपेक्षा अधिक तरी को सहन नही कर सकता इस कारण इसकी खेती शीतोष्ण प्रदेशों में ब्रिटेन जैसे ठंडे व तर स्थानो पर नही की जा सकती है।

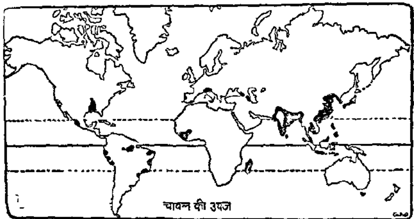
उत्पादन क्षेत्र

जौ उन प्रदेशों में अधिक होता है जो सूखे हैं और जहाँ वर्षा ऋतु छोटी है जहाँ कुल उपज का लगभग आधा होता है। जौ पैदा करने में रूस ही एक ऐसा

---

42. *J. F Macferlane*, **Economic Geography**, p. 199.
43. *Russel Smith, Phillips and Smith* **Op. Cit.**, p. 120.
44. *Whitback and Finch*, **Economic Geography**, p. 58.
45. *Stamp*, **A Commercial Geography**, p. 47.
46. *Huntington and Williams*, **Op. Cit**, p. 199.

(४) इन प्रदेशों में अधिक तापक्रम और पर्याप्त नमी पाई जाती है जो दोनों ही बातें चावल की उपज के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं।



चित्र ७५ चावल उत्पादन क्षेत्र

शेष १० प्रतिशत चावल दुनिया के अन्य भागों में विशेषतः मैक्सिको, ब्राजील, संयुक्त राज्य अमेरिका और मैलेगासी (मैडेगास्कर) तथा उत्तर पूर्वी आस्ट्रेलिया में पैदा किया जाता है जहाँ मानसूनी जलवायु के सदृश ही जलवायु मिलती है और केवल थोड़ा सा चावल भूमध्य सागर के प्रदेशों में इटली, स्पेन और मिश्र में, जहाँ गर्मियाँ तेज और सूखी तथा सर्दियाँ आर्द्र और तर होती हैं, पैदा किया जाता है। निम्न तालिका में चावल का उत्पादन बताया गया है :—

चावल का उत्पादन

देश	क्षेत्रफल (००० हैक्टेअर)		उत्पादन (०००मैट्रिक टन)	
	१९५८-५२	१९६१	१९४८-५२	१९६१
वियतनाम	—	—	२,४६९	४,७००
ब्रह्मा	३,७५८	४,१९७	५,४८१	६,५५६
लंका	३७३	४६७	५७०	८७६
चीन	२६,८१९	३१,५००	५८,१८८	८५,०००
तैवा	७६२	७६६	१,६८२	२,३७८
भारत	३०,११५	३३,७३४	३४,०११	५१,२२३
इण्डोनेशिया	५,८७६	७,२८९	९,४११	१२,८८०
जापान	२,९९६	३,३०८	११,९९१	१५,५२४

उत्तरी-पश्चिमी यूरोपीय देशों मे गहन-खेती वाले क्षेत्रों मे जौ का प्रति एकड़ उत्पादन अधिक होता है। डेनमार्क मे यह २६५६ पौंड होता है जब कि फ्रांस, हंगरी, चीन, संयुक्त राज्य, कनाडा और पोलैंड में यह १००० से १२०० पौंड तक ही होता है। रूस, भारत और रूमानिया में तो यह उत्पादन ५०० से ८०० पौंड का ही होता है। उपज में अन्तर होने का मुख्य कारण भूमि की उर्वरा शक्ति में भिन्नता, वर्षा कमी तथा उत्तम बीजों का अभाव है।

व्यापार

यद्यपि यूरोपीय महाद्वीप में जौ काफी मात्रा में उत्पन्न किया जाता है फिर भी उपयोग अधिक होने से बहुत सा अनाज बाहर से मँगवाना पड़ता है। इनमें संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और रूस मुख्य हैं। रूस, अर्जेन्टाइना, पोलैंड, कनाडा, संयुक्त रा० अमेरिका, रूमानिया और उत्तरी अफ्रीका प्रमुख निर्यातक है। ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस डेनमार्क, बेल्जियम और हालैण्ड प्रमुख आयात करने वाले देश हैं। आयात करने वाले देशों में प्रमुख रूप में यूरोप के जौ से बनी शराब पीने वाले देश हैं।

उपयोग

यों तो जौ के कई उपयोग हो सकते हैं परन्तु इसका प्रमुख उपयोग भोजन के लिए किया जाता है। जौ की रोटी स्कैंडिनेविया, रूस, जर्मनी, भारत व उत्तरी अमेरिका के गरीब लोगों के भोजन की मुख्य वस्तु है। दक्षिणी योरप में भी इसका उपयोग किया जाता है परन्तु बहुत कम मात्रा में ही। जौ का आटा अच्छी तरह सनाया नहीं जा सकता और न अच्छी नर्म रोटी ही बनाई जा सकती है, अतः इसका उपयोग अधिकतर ऊँचे रहन-सहन वाले देशों—जैसे जर्मनी इंग्लैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका—में शराब के लिए सत्व निकालने के लिए होता है। गेहूँ और दूसरे खाद्यान्नों की अपेक्षा जौ की पदावारें कम होती है इस कारण इसका महत्व अपने आप घट गया है। आजकल जौ असभ्य मनुष्यों या निम्न श्रेणी के लोगों का भोजन समझा जाता है। वर्तमान जगत के सभ्य कहलाने वाले देशों में कनाडा, यूरोप के उत्तरी आल्पस व संयुक्त-राज्य के प्रशान्त वाले टाटों पर इसका उपयोग सुअर घोड़ों और चौपायों को खिलाने के लिये किया जाता है। जौ से बीयर (Beer) और ह्विस्की (Whisky) नामक शराब भी बनाई जाती है। इससे बिस्कुट तथा पौष्टिक माल्ट भी बनाया जाता है।

(४) मक्का (Maize or Indian Corn)

ऐसा विश्वास किया जाता है कि मक्का या भारतीय नाज (जैसा कि नाम से विदित होता है) एक ऐसी प्रमुख अनाज की फसल थी जो अमेरिका मे वहाँ के आदि निवासियों द्वारा यूरोपीय लोगों के पहुँचने से पूर्व पैदा की जाती थी। यही एक ऐसा खाद्यान्न फसल है जो कि नई दुनिया से पुरानी दुनिया को लाई गई है।[४८] आधुनिक सभ्यता को अमरीका की सबसे बड़ी देन मक्का ही है।[४९] मक्का का प्रयोग

48. *Stamp & Glimour*, **Op. Cit**, p. 127.
49. *Chamberlain*, **Geography**, p. 387.

चीन का चावल का कटोरा (Rice Bawl) कहा जाता है। मोटे तौर पर चीन में प्रति ४ एकड़ कृषिभूमि पीछे १ एकड़ पर चावल बोया जाता है। अधिक वर्षा वाले स्थानों मे तीन और अन्यत्र दो फसलें प्राप्त की जाती है। किन्तु जनसंख्या की अधिकता से पैदावार देश की खपत के लिए कम पड़ती है अत. यहाँ थाईलैंड और हिन्दचीन से चावल आयात किया जाता है।

भारत—चाय के बाद भारत संसार में सबसे अधिक चावल पैदा करता है। यहाँ चावल पश्चिमी बगाल (जलपाईगुरी, बाँकुड़ा, मिदनापुर, दिनाजपुर और बर्दवान), मद्रास-आन्ध्र (कर्नूल, कडुप्पा, चिंगलपुट, तजौर और पश्चिमी गोदावरी के जिले), आसाम (गोलपारा और कामरूप जिले) तथा उड़ीसा (कटक सम्बलपुर और पुरी) और बिहार (गया, मुंधेर तथा भागलपुर) मे पैदा किया जाता है। किन्तु सब से अधिक पैदावार प० बगाल मे होती है। यहाँ वर्ष मे तीन फसलें प्राप्त की जाती है। बसंतऋतु मे काटी जाने वाली आँस (Aus), सर्दी मे काटी जाने वाली अमन (Aman) और गर्मी मे काटी जाने वाली बोरो (Boro) कहलाती है। मध्य प्रदेश में एक तथा मद्रास मे दो फसलें प्राप्त की जाती हैं। जनसख्या अधिक होने से वर्मा, थाइलैंड, मिश्र और चीन से चावल आयात किया जाता है।

हिंदचीन—फ्रासीसी हिंदचीन भी चावल उत्पादन मे प्रमुख देश है। यहाँ की समतल भूमि, कछारी मिट्टी, ऊँचा तापक्रम और पौधे के उगते समय खूब वर्षा का होना कुछ ऐसी बातें हैं जिनके कारण पूर्वी देशो मे यह चावल की खेती के लिए विशेष महत्वपूर्ण होगा।[40] यहाँ चावल मीकांग नदी की घाटी में उत्तरी वियतनाम मे टाँगकिंग की घाटी मे, अनाम के तटीय भाग और कोचीन, चीन मे पैदा किया जाता है। उत्पादन का लगभग ⅓ भाग सेगाव द्वारा निर्यात कर दिया जाता है।

थाइलैंड—थाइलैंड मे चावल राष्ट्र का प्राण ही है—इसी पर राष्ट्र की मुख्य आय निर्भर है क्योंकि यहाँ की खेतिहर भूमि का लगभग ६५% भाग चावल मीनाम नदी की घाटी मे पैदा किया जाता है और बैंकाक द्वारा इंडोनेशिया, मलाया, भारत, सिंगापुर,चीन और क्यूबा को निर्यात कर दिया जाता है।

ब्रह्मा मे कृषि भूमि के तिहाई भाग मे चावल बोया जाता है। इसके मुख्य उत्पादन क्षेत्र मध्य और निचली इरावदी की घाटी तथा डेल्टा प्रदेश हैं। मध्य ब्रह्मा मे वर्षा ४०" से कम होने के कारण सिंचाई के सहारे चावल पैदा किया जाता है। रंगून द्वारा यह निर्यात होता है।

इंडोनेशिया मे चावल की फसल के लिए जावा के कई जिलों मे वर्षा जरूरत से कम और असामयिक होती है—अत. यहाँ इसका सब चावल सिंचाई द्वारा पैदा किया जाता है। यहाँ चावल समतल मैदानो के अतिरिक्त सीढीदार खेतों मे भी बोया जाता है।

फिलीपाइन द्वीप मे उगने वाली फसलों मे चावल की ही अधिक पैदावार होती है। यद्यपि यह द्वीप के अधिकतर भागो मे बोया जाता है लेकिन मुख्यतः पैदावार लूजन के मध्य मैदानो मे ही केन्द्रित है जहाँ घरेलू काम मे आने वाली फसल

---

40 *Bergsmark*, **Economic Geography of Asia.**

होती है। इसकी फसल गर्म भागों में ५८° उत्तरी अक्षांश से ४०° दक्षिण अक्षांश तक फैली हुई है। वास्तव में मक्का समुद्रतल से निम्न—कैस्पीयन सागर के निकटवर्ती भागों और पीरू में ११,००० फीट की ऊँचाई तक भी बोई जाती है। मक्का की मुख्यत दो किस्में होती हैं। बौना किस्म (Dwarf) जो साधारणत. २ फुट ऊँची होती है, यह ६०-७० दिन में तैयार हो जाती है। दूसरी किस्म २० फीट से भी ऊँची होती है। इसे तैयार होने मे १० से ११ महीने लग जाते है।"[५२] सूखा सहने वाली किस्म एरीजोना और न्यू मैक्सिको मे बोई जाती है।

जलवायु के इन उपकरणो के अलावा इसके लिए अच्छी उपजाऊ जलयुक्त चिकनी (Loams) भूमि की आवश्यकता होती है। पक जाने के बाद मक्का काटने के लिए या तो दातली का उपयोग किया जाता है अथवा ट्रैक्टर से चलने वाली मशीनों का। उनके द्वारा १ दिन मे १० एकड की फसल काटी जा सकती है।

इसका प्रति एकड उत्पादन ४५ से ५५ बुशल तक होता है किन्तु अधिक उपजाऊ भूमि मे यह १०० बुशल तक पहुँच जाता है।

इसका पौधा १० से १२ फीट ऊँचा होता है। बांस की तरह इसके तने में से भुट्टे निकलते है। स० राज्य में मक्का का औसत खेत १६० एकड का होता है।

उत्पादन क्षेत्र

संसार की पैदावार की लगभग दो-तिहाई मक्का केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही पैदा की जाती है जहाँ इसकी सारी पैदावार मिसीसिपी नदी की ऊपरी घाटी में केन्द्रित है। यहाँ पर मैक्सिको की खाडी से लेकर बडी झीलो तक और एटलान्टिक सागर के पश्चिमी टैक्साज तक पैदा की जाती है। लेकिन पैदावार का प्रमुख क्षेत्र जिसे अमेरिका के अनाज की पेटी (Amercian Corn Belt) कहते हैं—मध्य ओहियो से मध्य टैक्साज और कैंटकी से विस्कोसिन तक पहुँचता है। इसमें आयोवा, मिसोरी, इलयीनास, इन्डियाना और ओहियो की स्टेटो तथा नेब्रास्का के लगभग आधे भाग सम्मिलित हो जाते है। इस प्रदेश की भूमि उपजाऊ और कंकड पत्थर से रहित है। अनाज की इस पेटी में सूखा बहुत कम पडता है। यहाँ ग्रीष्म की अति वर्षा फव्वारो व बौछारो के रूप में होती है जो फसल को नुकसान नही पहुँचाती और अनाज की अच्छी फसल के लिए काफी मात्रा में गर्मी बनी रहती है। यहाँ ग्रीष्म का औसत तापक्रम ७०°-८०° फा० और रात का तापक्रम ५८° फा० से अधिक रहता है तथा १४० दिन तक कोहरा नही गिरता। वर्षा २५" से ५०" तक हो जाती है। अमेरिका के यह भाग विश्व के उत्पादन का ५० से ६०% पैदा करते हैं।

यहाँ इस अनाज का अधिकांश भाग सुअरो और खेतिहर जानवरो को खिलाया जाता है जो गोश्त आदि पदार्थों के लिए विशेष रूप से पाले जाते है। ५५% पशुओ को खिला दिया जाता है, १४% अन्य उपयोगो में आता है और १७% का निर्यात कर दिया जाता है।[५३]

52. *Smith, Phillips and Smith,* **Op. Cit.**, p. 266

53. *Ekblaw and Mulkerne,* **Op. Cit.**, p. 248.

स्टार्च तैयार किया जाता है। जापान में मशहूर पेय सेक (Sakes) इसी से तैयार किया जाता है। दूसरी जगह इसमें दूसरे प्रकार के शराब बनाये जाते है। इसका भूसा भी अच्छी घास का काम देता है। कागज, टोप, चटाइये, चप्पल, रस्से, मेजें व वर्षाती कोट, जूते और भाड़ू आदि बनाने में इस भूसे का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसका छिलका तकिये भरने व पैंकिंग के काम आता है। यह मकानों की शब्द-अभेद्य दीवारें (Sound proof) बनाने के लिए भी सीमेन्ट के साथ मिलाया जाता है। इसके डठलों को खाद के रूप में उपयोग मे लाया जाता है।

नीचे की तालिका में चावल के निर्यात व आयात सम्बन्धी आँकडे प्रस्तुत किये गये है :—

चावल का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

निर्यातक	१६४८-५०	१६६१ (००० टन)	आयातक	१६४८-५०	१६६१ (००० टन)
थाइलैंड	१,१७८	१,०१८	भारत	६७३	६१२
ब्रह्मा	१,२०६	१,४६१	मलाया	४८३	३२१
स० रा० अ०	४६७	५५६	लंका	४३६	४०२
कम्बोडिया	१४०	३५५	इन्डोनेशिया	२४६	२५६
इटली	१३७	१६७	जापान	२८६	१,४३२
विश्व-योग	४,०५०	४,६००	विश्व-योग	३,६५१	४,५००

(३) जौ (Barley)

खाद्यान्नों में केवल जौ एक ऐसा अनाज है जो संसार के अधिकतर भागों में पैदा किया जाता है। चूंकि यह कम वर्षा व काफी निम्न तापक्रम मे भी उग सकने वाला पौधा है अतः इसका क्षेत्र आजकल काफी विस्तृत हो गया है। कई विद्वानों का कथन है कि खेती किए जाने वाले अनाजों मे जौ ही सबसे पुराना है।[41] हैब्रिड, रोमन और यूनानी लोगों का यह प्रधान खाद्यान्न था। प्राचीन मिश्र की खुदाई में जो जौ के दाने मिले है वे ५-६ हजार वर्ष पूर्व उत्तरी अफ्रीका और दक्षिणी पश्चिमी एशिया में पैदा किये जाने वाले अनाज से मिलते-जुलते पाये गए हैं। जौ गेहूँ की एक किस्म है जिसकी सबसे पहले उत्पत्ति उत्तरी गोलार्द्ध की दक्षिण पश्चिम की सूखी भूमियों पर हुई थी। इस कारण इसे मुख्यतः दक्षिण पश्चिमी एशिया की ही पैदावार मानते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार दो बालियों वाला जौ लाल सागर और काकेकश पर्वत के बीच के क्षेत्र की मूल उपज है जबकि छः बालियों वाला जौ कुर्दिस्तान पर्वत का मूल पौधा है।

41. *Stamp & Glimour*, **Op. Cit.**, p. 325.

निया, बल्गेरिया और रूस हैं। इसके विपरीत इगलैण्ड, हालैंड और फ्रांस मुख्य आयात करने वाले देश हैं जो इसे भोजन-सामग्री बनाने के उपयोग मे लेते हैं।

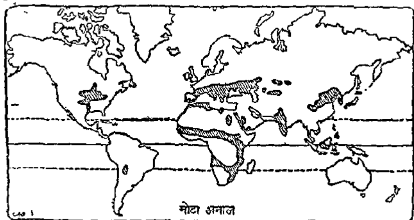
मकई उत्पादक-क्षेत्र (१९५४ और १९६१ में)

देश	१९५४ क्षेत्र (०००हेक्टेअर मे)	१९५४ उत्पादन (००० टनो मे)	१९६१ क्षेत्र (०००हेक्टेअर में)	१९६१ उत्पादन (००० मैट्रिक टन)
संयुक्त-राज्य	३२५२४	७६४६३	३२७६३	९२०६१
अर्जेन्टाइना	१८६३	२५४६	२७४४	५२००
ब्राजील	४६९८	६०६३	६७८६	८९९६
यूगोस्लाविया	२४६०	३००४	२५७०	४५००
इटली	१२७४	२९१४	११९०	३९४०
दक्षिणी अफ्रीका संघ	३४४०	३३१८	३८१३	५५३१
भारत	३७७४	२९९१	४३५४	४०६४
मैक्सिको	४४००	४०००	५५५०	५५००
रूस	४३८५	६००१	११२३९	२४,०६२
विश्व उत्पादन	८६९००	१३७३००	११६,६००	२११,३००

उपयोग—ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि संयुक्त-राज्य अमेरिका मे पैदा होने वाली मक्का का तीन-चौथाई भाग विशिष्ट तौर से जानवरो (जैसे सुअर, घोड़ो और कुक्कुटो) आदि के भोजन के लिये उपभोग मे लाया जाता है। यही कारण है कि संयुक्त-राज्य की अनाज की पेटी मे इतनी बड़ी संख्या में सुअर पाले जाते है और मांस का इतने बड़े पैमाने पर व्यापार होता है। प्रो० जेकिन्स के अनुसार मक्का अमेरिकन कृषि का मेरुदण्ड (Backbone of American Agriculture) है। इसके विपरीत ब्रिटिश द्वीपसमूह व उत्तरी-पश्चिमी यूरोप मे मक्का का अभाव इस बात को स्पष्ट करता है कि यहाँ पर थोड़ी मात्रा में सुअर पालने का धन्धा अपनाया गया है। इस अन्न का भूसा, उन्ठल, पत्ते और छिलका जानवरो के लिए अच्छा खाद्य-पदार्थ उपस्थित करते है।

-जानवरो के खाद्य-पदार्थ होते हुए भी यह प्राणी-मात्र के लिये भी एक मुख्य भोज्य पदार्थ है। इगलैण्ड में अन्न का आटा पीसकर रोटी बनाने के उपयोग में लाया जाता है। चूंकि इसकी उत्तम रोटी नहीं बन पाती इससे दक्षिणी अफ्रीका में यह राबड़ी (Mealie Pap or Maize Gruel) के रूप में काम में लाई जाती है। भारत व संयुक्त-राष्ट्र में हरी मक्का का भुट्टा एक अच्छी सब्जी का काम देता है। अमेरिका व भारत में मक्का के दाने मटर के दानो के समान भून कर खाये जाते हैं।

देश है जो कुल उपज का लगभग एक तिहाई से कुछ अधिक पैदा करता है।[४७] इसके अतिरिक्त प्रमुख रूप से जौ उत्पन्न करने वाले देश संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, कनाडा, रूमानिया, स्पेन, जापान, टर्की, इगलैण्ड, चीन, भारत पोलैण्ड और चेकोस्लोवाकिया हैं। रूस मे इसका उत्पादन यूक्रेन, उत्तरी काकेशस और दक्षिणी अजोव तथा कैस्पीयन सागर के बीच वाले क्षेत्र मे होता है। स० राज्य मे मिनेसोटा, डकोटा और कैलीफोर्निया मे तथा कनाडा मे मानीटोबा और ओंटेरियो मुख्य उत्पादक हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध मे तो इसकी बहुत कम पैदावार होती है। यहाँ विश्व की कुल उपज का २% जौ पैदा किया जाता है।



चित्र ७६ मोटे अनाज के क्षेत्र

नीचे की तालिका मे विश्व में जौ की उत्पत्ति बताई गई है —

विश्व के जौ उत्पादक देश

देश	क्षेत्रफल (००० हैक्टेअरो मे) १९५४	उपज (००० मैट्रिक टनों में) १९५४	क्षेत्रफल (००० हैक्टर) १९६१	उत्पादन (००० मैट्रिक टन) १९६१
डेनमार्क	६०९	२,०४५	७५६	२८०८
जापान	१,०१२	२,३४०	८३८	१९७६
चीन	६,२६५	६,९६७	—	१६५००
संयुक्त-राज्य	५,३३५	८,११०	५६४१	८५६५
इंगलैंड	८३५	२,८४२	१३६६	५०५४
कनाडा	३,१७०	५ ८५८	२९७८	२४५२
तुर्की	२,५००	२,९००	२८३६	२९४८
भारत	३,५२९	२ ७९३	३३७७	२७७८
सम्पूर्ण विश्व	४४,३००	५५,६००	६२,८००	८७,९००

47. *Stamp*, **Op. Cit.**, pp. 46-47.

सन्तोषजनक पैदावार हो जाती है। [57] सब से अधिक प्रति एकड़ पैदावार भारी दुमट मिट्टी मे होती है।

उत्पादन क्षेत्र

इसके उत्पादन के प्रमुख केन्द्र हैं उत्तरी-पश्चिमी यूरोप—जहाँ पर गर्मियाँ शीतल और तर होती हैं—उत्तरी-पूर्वी सयुक्त राष्ट्र अमेरिका और दक्षिणी कनाडा

जई का उत्पादन

	१९५४ क्षेत्र (००० हैक्टेअर मे)	१९५४ उत्पादन (००० मैट्रिक टन मे)	१९६१ क्षेत्र (००० हैक्टेअर में)	१९६१ उत्पादन (००० मैट्रिक (टन मे
फ्रास	२१५४	३५७४	१४२७	२५६१
इगलैंड	१०४७	२४७६	८०१	१८४३
कनाडा	४११७	४७३१	४५११	४३७६
सं० राज्य अमेरिका	१७११४	२१७३०	१०७४६	१४७०२
आस्ट्रेलिया	१०४०	५६०	१४५७	११०७
विश्व का योग	३७२००	४६४००	४३६००	५४५००

मे—जहाँ पर जलवायु साधारणतया समान पाई जाती हैं परन्तु सिर्फ ग्रीष्म ऋतु अधिक गर्म और सद ऋतु अधिक ठढी होती है। जई की खेती उन्ही स्थानो मे महत्वपूर्ण है जहा जलवायु ठढी और तर होती है। यही कारण है कि आयरलैंड, स्काटलैंड स्वीडेन नार्वे, डेनमार्क, बेल्जियम और नीदरलैंड मे उपयुक्त जलवायु होने से जई की खेती बड़े पैमाने पर होती है। भूमध्यसागरीय जलवायु मे नमी की न्यूनता होने से जई पैदा नही की जा सकती। विषुवत् रेखा के दक्षिण मे चिली और अर्जेन्टाइना ही मुख्य जई पैदा करने वाले देश हैं।

यह अभी भी एक विवादास्पद प्रश्न है कि प्रमुख रूप से सबसे अधिक जई उत्पन्न करने वाला देश कौनसा है। चूकि भिन्न-भिन्न लेखक भिन्न-भिन्न अको के आधार पर अपना मत प्रकट करते हैं इसी कारण कोई भी अभी इस बात पर एक मत नहीं हो पाये हैं। डा० स्टाम्प के अनुसार यूरोप सबसे अधिक जई उत्पन्न करने वाला देश है। परन्तु श्री रसल स्मिथ और श्री जे० एफ० चेम्बरेलन का कहना है कि संयुक्त राज्य अमेरिका का इस दृष्टि से पहला स्थान है और ये दोनो दुनिया की करीब एक तिहाई फसल पैदा करते हैं।

व्यापार

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि से जई का महत्व नही के बराबर है। जई की कुल पैदावार मे सिर्फ ४ प्रतिशत का ही व्यापार होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि चिली और अर्जेन्टाइना को छोड़कर दूसरे देशों मे इनकी पैदावार या तो स्वयं के उपयोग के लिए ही होती है या अधिक समय तक टिक नही सकने के कारण जहाजों द्वारा बाहर नही भेजी जा सकती है। इस तरह यह अनाज व्यापार

57. *Whitbeck and Finch*, **Op. Cit.**, p. 58.

कालम्बस क पूर्व कई वर्षो तक माया, इका, एजट्रैक आदि निवासियों द्वारा किया जाता था। नई दुनिया मे प्रागैतिहासिक युग में की गई खुदाई से पता लगा है कि मक्का की कई किस्मे ऐंडीज पर्वत, मध्य और दक्षिणी अमेरिका के तर निम्न भागों, मैक्सिको तथा सं० राज्य अमेरिका के सूखे ऊँचे भागों और तटीय खाडी प्रदेश तथा अटलांटिक सागर के तटीय प्रदेश में बोयी जाती थी। यूरोप मे यह पहले-पहल कोलम्बस द्वारा लाई गई थी।[50] माना तो यह जाता है कि यह मध्य अमेरिका या मैक्सिको की आदि फसल है लेकिन इसका क्षेत्र बहुत जल्दी ही उष्ण कटिबन्ध व पुरानी दुनिया के अफ्रीका व एशिया महाद्वीपो के कुछ गर्म शीतोष्ण भागो मे फैल गया। इससे यह सिद्ध होता है कि यद्यपि यह प्रमुख रूप से अर्द्ध-उष्ण कटिबन्ध की फसल है फिर भी यह उष्ण कटिबन्ध के गर्म भागों और अयनवृत्तो के समीप आसानी से पैदा की जाती है। मक्का का उत्पादन कनाडा और रूस मे ५८° उत्तरी अक्षांश और दक्षिणी गोलार्द्ध मे ४०° अक्षांश तक होता है।



चित्र ७७. मक्का

जलवायु सम्बन्धी दशायें

मक्का गर्म जलवायु की फसल है अत इसके लिए ४½ से ७ मास की ग्रीष्म ऋतु बहुत लाभदायक होती है। लेकिन इस अवधि के बीच आकाश साफ व चमकीला होना चाहिए और पाला न पडना चाहिए। फसल को जल्दी पकने के लिए समय-समय पर सन्तोषजनक वर्षा हो जाना भी बहुत आवश्यक है जिससे भूमि बिना सिंचे ही अच्छी मात्रा मे तर बनी रहे।[51] जिन स्थानो मे मकई की अच्छी फसल होती है वहाँ वार्षिक वर्षा २५" से ५०" तक होती है। जिसमे से कम से कम १० या १२ इच आरम्भ के उगने वाले ग्रीष्म के तीन महीनो मे होती है।

मक्का की फसल को पैदा होने मे १३५ से २१० दिन तक लग जाते हैं और इस सम्पूर्ण लम्बी अवधि मे तापक्रम बिना किसी हेर-फेर से ऊँचा और सूर्य की रोशनी काफी मात्रा मे रहनी चाहिए जिससे फसल का विकास अच्छी प्रकार हो सके। औसत तौर पर जहाँ ग्रीष्मकाल का तापक्रम ६६° फा० से कम होता हो, बोने के समय तापक्रम ऊँचा रहे (७०° से ८०° फा०) और बाद मे अच्छी मात्रा मे वर्षा हो जाय तो पौधा अपने आपको अच्छी तरह बढा पाता है। इस तरह से उन भागो मे जहाँ गर्मियाँ ठडी रहती हैं— जैसे इग्लैंड, स्काटलैंड, उत्तरी यूरोप और ४४° उत्तरी अक्षांशों के परे उत्तर न्यू इग्लैंड के बहुत से भागो और कनाडा मे—मक्का की अच्छी फसल पैदा नही हो सकती। इसे रात और दिन बराबर गर्मी की आवश्यकता होती है। इस कारण उन सूखे प्रदेशो मे जहाँ पर दिन मे बहुत गर्मी रहती है परन्तु रातें ठंडी होती है अच्छी फसल पैदा नही की जा सकती। लेकिन पतझड के आरम्भ होने के समय ठंडा मौसम बडा अच्छा सिद्ध होता है। इससे फसल की पैदावार गर्म भागों व अयन रेखाओ की अपेक्षा मध्य शीतोष्ण प्रदेशो मे अक्षांशो मे कही ज्यादा

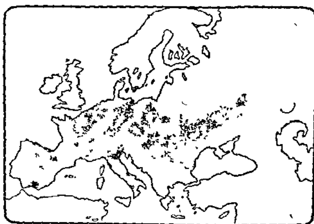
50. *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 246.

51. *Whitbeck and Finch*, **Economic Geography**, p. 64.

मे बहुतायत से होती है। नार्वे मे गर्म धारा के प्रभाव के कारण यह आर्कटिक वृत के समीप भी पैदा की जाती है।[61] इसके अतिरिक्त यह यूरोप के बड़े मैदान की दलदली व रेतीली भूमियो पर भी उगाई जाती है। फ्रास के मध्य पठार और थाईलैंड के उत्तर-पश्चिमी उच्च प्रदेशो पर भी यह बोई जाती है।

उत्पादन के क्षेत्र

ससार मे सबसे अधिक राई उत्पन्न करने वाला प्रदेश यूरोप का निचला मैदान है जो इग्लिश चेनल से हालैण्ड, बेलजियम, जर्मनी, डेन्मार्क और रूस होता हुआ यूराल पहाड तक फैला हुआ है। ससार की कुल पैदावार का ९५% यूरोप और एशिया मे फैले हुए रूस मे होती है।[62] अकेला रूस ही दुनिया की आधी से अधिक राई की फसल यूक्रेन, वाइलोरूस, ट्रास काकेशिया और कज्जाक में पैदा करता है। जर्मनी एक चौथाई से अधिक, आस्ट्रेलिया और हगरी दसवे भाग से अधिक और सयुक्त-राज्य अमरिका पाचवे भाग से कम पैदा करते हैं।[63] दूसरे मुख्य उत्पादक कनाडा और जापान है। ब्रिटिश द्वीप में बोये जाने वाले अनाजो में राई ही सबसे कम परिचित और प्रचलित है। जैकोस्लोवाकिया, फ्रास, स्पेन, अर्जेन्टाइना और टर्की में भी कुछ राई पैदा की जाती है।



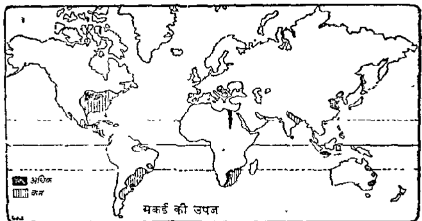
चित्र ८०. रूस मे राई का उत्पादन

व्यापार

राई मुख्यत घरेलू उपभोग के लिए ही पैदा की जाती है। इस कारण अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे राई का व्यापार बिल्कुल महत्वहीन है। यद्यपि इसका कुछ व्यापार यूरोप के राई उपभोग करने वाले देशो मे होता है। राई निर्यात करने वाले मुख्य देश-पौलैण्ड, रूस, जर्मनी और हगरी है तथा आयातक बेल्जियम, नार्वे, डेनमार्क हालैण्ड व फिनलैण्ड है।

61. *J. F Chamberlane*, **Ibid**, p. 147.
62. *Huntington and Williams*, **Ibid**, p. 344
63. *Smith, Phillips and Smith*, **Ibid**, p. 117.

मैक्सिको में यह काफी मात्रा में पैदा की जाती है। दक्षिणी अमेरिका मे ब्राजील (यहाँ की ३/४ फसल मीनास,-गिरास, साओ पालो, रोआग्रान्डे डसूल से प्राप्त होती है) और अर्जेन्टाइना (यहाँ २५,००० वर्गमील क्षेत्र में पराना नदी की निचली घाटी में मक्का होती है) में भी इसकी पैदावार कम नहीं है। यूरोप में यह



चित्र ७८. मक्का का उत्पादन क्षेत्र

डेन्यूब की निचली घाटी में गर्म तर स्थानों और दक्षिणी-पूर्वी यूरोप के काले सागर के समीप जिलो में बोई जाती है। डेन्यूब की निचली घाटी मे मक्का हगरी, रूमानियाँ, व बलगेरिया के उपजाऊ मैदानो मे काले सागर के निकट रूसी भूमि में पैदा किया जाता है।

भूमध्यसागरीय प्रदेश का बहुत सारा क्षेत्र (केवल कुछ नीचे जाने वाले भाग को छोडकर) ग्रीष्म मे बहुत सूखा रहता है। इस कारण यहाँ इसकी खेती नही होती। इटली, स्पेन व दक्षिणी फ्रास प्रमुख उत्पादक हैं।

अफ्रीका में तो यह खाद्यान्नों की फसलो मे से मुख्य फसल मानी जाती है। अब पैदावार अधिक होने लगी है विशेषकर दक्षिण अफ्रीका राष्ट्र और रोडेशिया मे। एशिया मे भारत व चीन मे यह सहायक फसल के रूप मे बोई जाती है। चीन में इसका उत्पादन दक्षिणी मचूरिया से लगा कर चीन के बड़े मैदान तक होता है। कुछ मक्का आस्ट्रेलिया मे भी पैदा की जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

मक्का की पैदावार होती तो बहुत कम है किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि से इसका महत्व बिल्कुल नही के बराबर है। इसका ससार मे केवल ६% व्यापार ही होता है।

यद्यपि सयुक्त-राज्य अमेरिका मे इसकी प्रचुर मात्रा में फसल होती है लेकिन वहाँ इसका उपभोग पालतू जानवरो के लिये होता है अत. निर्यात बहुत ही कम किया जाता है। अर्जेन्टाइना ही सिर्फ एक ऐसा देश है जो कि अपनी पैदावार का ७२% निर्यात करता है। दूसरे प्रमुख निर्यात करने वाले देश दक्षिणी अफ्रीका, हगरी, रूमा-

अमेरिका में इससे होमिनी (Hominy) नामक पदार्थ तैयार किया जाता है जो वहाँ के निवासियों द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है। मैक्सिको में तो यह अब भी वहाँ के आदिवासियों का मुख्य भोजन बना हुआ है। वहाँ इसकी मीठी रोटी—जो टॉर्टिलास (Tortlas) के नाम से प्रसिद्ध है—तैयार की जाती है और गर्म-गर्म खाई जाती है। इटली में इसके **पोलेन्टा** (Polenta) और रूमानिया में **मेमालिगा** (Mamalga) आदि दूसरे मुख्य भोज्य-पदार्थ बनाये जाते हैं।

भोज्य-सामग्रियों के अतिरिक्त इससे माँडी (स्टार्च), शराब, मद्य-पदार्थ, शक्कर, डेक्स्ट्राईन, कार्न आइल और सिल्यूलोज आदि दूसरी मुख्य वस्तुएँ तैयार की जाती है। इसकी पत्तियों से एक सस्ते किस्म का कागज भी तैयार किया जाता है। इसके छिलके गद्दे भरने के काम देते हैं और डन्ठल ईंधन के रूप में जलाये जाते हैं।

यूरोप में मक्का को **टर्किश गेहूँ** (Turkish Wheat), अमेरिका कार्न (Corn) और **मीलीज** (Mealies) तथा इंगलैण्ड में भारतीय अनाज (Indian Corn) भी कहते हैं।

(५) जई (Oats)

इसका पौधा ६-४ फीट ऊँचा होता है किन्तु इसके सिरे पर गेहूँ या जौ की तरह घनापन नहीं होता। गेहूँ या जौ की तरह जई की खेती प्राचीन नहीं है। इसका मूल-स्थान एशिया माइनर माना जाता है। चौथी शताब्दी पूर्व यूनानी लोगों का यह मुख्य खाद्यान्न था।

जलवायु सम्बन्धी अवस्थाएँ

जई ठंढे प्रदेशों का पौधा है। साधारण तौर पर जई की पैदावार के लिये वही जलवायु उपयुक्त होती है जो कि गेहूँ व जौ के लिये होती है। लेकिन चूँकि पकने में काफी समय लगता है इस कारण अधिक वर्षा और गर्मी इसके लिए आवश्यक होता है।[५४] यह ठंढी जलवायु में भी पैदा हो सकता है। इस तरह नम और ठंढी गर्मियाँ हीं इसकी पैदावार के लिये आदर्श जलवायु है। अमरीका के विशाल मैदानों क्षेत्र और भूमध्य सागरीय देशों में **लाल जई** (Red oat) या **स्टेरिलिस** (Sterilis) की खेती की जाती है जो अधिक तापक्रम में भी उग सकती है। इसके लिए कम से कम ४०° फा० और अधिक से अधिक ७०° फा० तापक्रम की आवश्यकता होती है। वर्षा का औसत महीने में २″ से ४″ तक होना अच्छा है।

ऐसी जलवायु में अनाज अच्छी किस्म का होता है और प्रति एकड़ पैदावार भी अधिक होती है। कहीं-कहीं पर इसकी पैदावार ५० पौण्ड प्रति एकड़ तक देखी जाती है, जबकि दूसरे स्थानों पर २६ पौण्ड प्रति एकड़ हो जाती है।[५५] यद्यपि जई की पैदावार के लिए उपजाऊ भूमि चाहिये फिर भी यह कई किस्म की भूमियों पर भी अच्छी तरह पैदा होता है।[५६] काफी कम उपजाऊ भूमि से भी इसकी

---

54. *Smith, Phillips and Smith*, **Industrial and Commercial Geography**, p. 118.
55. *Stamp and Glimour*, **Op. Cit.**, p. 134.
56 **Ibid**, p. 134

पेय पदार्थ

(BEVERAGES)

चाय, कहवा कोको (या चाक्लेट) और कोला आदि पेय तथा तम्बाकू आदि सभी अपने स्वाद सु-दर और उत्तेजक गुणों के कारण आधुनिक युग में सभ्य जगत में एक विशेष स्थान पा गये हैं। इनमें से केवल कोको का ही खाद्य महत्त्व है अन्य तो केवल क्षणिक उत्तेजना देने के निमित्त उपयोग में लाये जाते हैं। चाय, कहवा और कोको पेय में जो उत्तेजनात्मक गुण पाये जाते हैं वे क्रमशः कैफीन (Caffein); थियोब्रोमाइन (Theobromine) और तम्बाकू में निकोटिन (Nicotine) प्राप्त होता है।

(१) चाय (Tea)

जिस प्रकार कहवा और कोको मुख्यतः विषुवतरेखीय उपज है—उस प्रकार चाय की पैदावार के लिये कोई निश्चित रेखा नहीं है। चाय उष्ण कटिबन्धीय और गर्म शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में समान रूप में पैदा की जा सकती है। चाय दक्षिणी-पूर्वी एशिया का आदि पौधा है और ऐसा अनुमान किया जाता है कि यह चीन की उच्च भूमियों, हिन्दचीन या भारत के वनों में उत्पन्न हुआ है। चीन में चाय का उत्पादन २७०० वर्ष पूर्व भी होता था। पहले इसकी पत्तियों का उपयोग पीने की अपेक्षा औषधि के रूप में ही किया जाता था। कई शताब्दियों पूर्व इसे मुद्रा की तरह काम में लाया जाता था। चीनी लोग अपने जल में इसकी पत्तियाँ मिलाकर दिया करते थे। स्वादिष्ट होने के कारण इसका प्रयोग बढ़ता गया और आज यह वहाँ राष्ट्रीय-पेय बन गया है। १४ वीं १५ वीं शताब्दी में व्यापारियों द्वारा यह यूरोपीय देशों को लाई गई और तभी से इसका उपयोग सर्वत्र बढ़ गया है।[1] कुछ विद्वानों के अनुसार यह उष्ण कटिबन्ध का पौधा है परन्तु जलवायु की दृष्टि से ऐसा माना जाता है कि यह निम्न अक्षांश देशों की ही उपज है, जहाँ ऊँचा तापक्रम, लम्बी पैदावार की मौसम और समयानुकूल पर्याप्त जलवृष्टि होती है।



चित्र ८१ चाय का पौधा

1. *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 115.

जगत् में आ नहीं पाता।[58] आयात करने वाले मुख्य देश ग्रेट ब्रिटेन, स्विटजरलैंड, बेल्जियम, इटली, हालैण्ड, आस्ट्रेलिया और डेन्मार्क है जो कि बहुत बड़े पैमाने पर गाय-भैंस पालने का धन्धा अपनाये हुए हैं। जई निर्यात करने वाले मुख्य देश चिली, अर्जेन्टाइना, रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा है।

उपयोग

जई मनुष्य के भोजन के लिए एक अच्छा भोज्य पदार्थ है। स्काटलैंड, आयरलैंड व स्केन्डीनेविया में तो यह प्रमुख भोजन रूप में काम में लाई जाती है। दूसरी जगह भी यह दलिया और रोटी के रूप में प्रयोग की जाती है। स्कॉट लोग इससे रोटी और हलवा आदि स्वादिष्ट पदार्थ बनाते हैं। डा० जानसन के अनुसार "जई स्कॉटलैंड में मनुष्यों का और इंगलैंड में घोड़ों का मुख्य भोजन है।" कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन की अधिक मात्रा के कारण अन्य अनाजों की अपेक्षा जई अधिक अच्छा अनाज है। यह गाय, भैंस व घोड़ों को भी खिलाई जाती है।

(६) राई (Rye)

राई को गेहूँ का करीब साथी कहा गया है।[59] राई गेहूँ की जाति का अनाज है परन्तु यह गेहूँ से कुछ छोटा और काला होता है। इसका पौधा ५ से ६ फीट ऊँचा होता है। यह भी एशिया माइनर की मूल उपज मानी जाती है। पौष्टिक तत्वों की दृष्टि से इसका स्थान गेहूँ के बाद दूसरा है।

जलवायु सम्बन्धी अवस्थाएँ



चित्र ७९ राई का पौधा

यह गेहूँ के समान जलवायु में पैदा होती है। लेकिन इसका पौधा गेहूँ से अधिक कठोर होता है। यह एक ऐसा अनाज है जो अपने आपको भूमि और जलवायु की दशा के अनुकूल बना लेता है। इसके पौधे को गेहूँ की अपेक्षा पानी की आवश्यकता होती है। यह निम्न तापक्रम में भी उग सकता है। नार्वे में यह ६९° उत्तरी अक्षांश तक पैदा होता है। जिन स्थानों पर सर्दी का औसत तापक्रम ४०° फा० रहता है तथा ४०° फा० से भी नीचे चला जाता है वहाँ भी इसकी खेती की जाती है। राई की मुख्य विशेषता यह है कि इसका पौधा कैसी भी अनुपजाऊ भूमि में जहाँ कि कोई दूसरा अनाज पैदा नहीं हो सकता, अच्छी तरह बड़ा हो जाता है। यूरोप में जहाँ यह काफी मात्रा में पैदा की जाती है यह साधारण भूमि पर होती है। इसकी खेती मुख्यतः बालू और पतली मिट्टी में होती है। यही इसके लिये आदर्श मिट्टी है।[60] यहाँ की भूमि हल्के रंग की और रासायनिक-पदार्थों और चूने से बहुत कम युक्त होती है। इन सब कारणों से यह ऊँचे अक्षांशों और उच्च स्थानों पर पैदा की जाती है। रूस में तो इसकी पैदावार काली मिट्टी वाले भागों के दूर उत्तर

58. *Huntington and Williams.*, **Op. Cit.,** p. 343.
59. *Stamp*, **Op. Cit.,** p. 50.
60. *Case and Bergsmark*, **Ibid,** p. 446.

मिट्टी चाय अच्छी पैदा करती है। यदि उसमें प्राणीज अथवा रासायनिक तत्वों का आधिक्य हो। आसाम के उद्यानों में चाय की झाड़ियों से जो टहनियाँ गिरती हैं उन्हें भी भूमि में गाड़ दिया जाता है। इससे मिट्टी को प्रतिवर्ष वनस्पति तत्व उपलब्ध होते रहते हैं। दार्जिलिंग की चाय इसलिए सुगन्धित होती है कि वहाँ की मिट्टी में पोटाश और फास्फोरस अधिक मात्रा में विद्यमान रहते हैं। चाय की भूमि को खाद देने की अधिक आवश्यकता पड़ती है क्योंकि प्रति एकड़ भूमि से एक बार में एक हजार पौंड चाय की फसल लगभग ५५ पौंड नत्रजन लेती है अतः मिट्टी उपजाऊ हो जाती है। इसके लिए अमोनियम सल्फेट, हड्डी की खाद अथवा हरी खाद का उपयोग किया जाता है। जापान में फलियों का खाद दिया जाता है।

चाय के अधिकतर बगीचे ऐसी भूमि पर स्थित होते हैं जिसमें प्राकृतिक रूप से बहुत श्रम चन की मात्रा होती है। चाय की पैदावार या तो निम्न भूमियों पर या पहाड़ी ढालों पर ही की जा सकती है। जब चाय की खेती नीची भूमियों पर की जाय तो सावधानी से पानी देने की आवश्यकता होती है क्योंकि चिकनी और भारी मिट्टी से जड़ों में काफी पानी जमा हो जाता है जो इसकी पैदावार के लिये बहुत हानिकारक होता है। लेकिन चाय की खेती पहाड़ी ढालों पर ही अच्छी होती है क्योंकि वहाँ पर अधिक पानी जड़ों में ठहरने नहीं पाता बल्कि वह प्राकृतिक रूप से बह जाती है। इस कारण मानसूनी प्रदेशों में चाय की खेती के लिये प्रायः पहाड़ी ढाल ही अपनाये गये हैं। इसके विपरीत आजकल मैदानों में भी काफी चाय पैदा की जाने लगी है। अतः मैदानों व पहाड़ी फसलों में अपनी उत्तमता व उत्पादन के लिये काफी स्पर्द्धा रहती है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि मैदानों पर पैदा की जाने वाली चाय की पत्तियाँ बहुत जल्द बढ़ती हैं जबकि पहाड़ियों पर होने वाली चाय (जैसा कि भारत में दार्जिलिंग व लंका में २,५०० फीट की ऊँचाई पर होता है) की कोमल पत्तियाँ साधारणतः धीरे-धीरे बढ़ती है। किन्तु इन पत्तियों से बनने वाली चाय परिमाण व स्वाद दोनों ही दृष्टियों से सर्वप्रिय होती है।

श्रम—चाय की पैदावार को सँभालने व पत्तियाँ चुनने, गर्म करने, सुखाने और डिब्बों में भरकर भेजने के लिए सस्ते और निपुण मजदूरों की आवश्यकता होती है। इस कारण चाय की खेती सफलतापूर्वक वहीं की जा सकती है जहाँ मजदूर सस्ते तथा काफी मात्रा में मिल सकते हों। अतः इसकी खेती कुछ ही देशों तक सीमित होगई है। इस समस्या के कारण ही चाय का व्यवसाय दक्षिण-पूर्वी एशिया और पूर्वी द्वीप समूह को छोड़कर कहीं भी अच्छी तरह नहीं बढ़ पाया है। इसका कारण यह है कि कहीं भी ऐसे मजदूर नहीं मिल पाते जो चाय के खेतों पर धैर्य और साहस के साथ चाय की पत्तियों को चुनने के कठिन कार्य को धीरे-धीरे पूरा कर सकें। मानसूनी प्रदेशों में मजदूर मेहनती, सस्ते व काफी मात्रा में मिल जाते हैं। परन्तु यूरोप, संयुक्त राज्य व कनाडा आदि पश्चिमी देशों में इतने सस्ते मजदूर नहीं मिल सकते हैं क्योंकि वहाँ पर साधारण व्यक्ति के जीवन मान का स्तर भी बहुत ऊँचा है। दूसरे पत्तियाँ चुनने का काम भी बहुत बारीकी का है। अतः यह कार्य तभी अच्छी प्रकार पूरा हो सकता है जबकि चुनने वालों की उँगलियाँ पतली व कोमल हों। भारतीय चाय के बागों में स्त्री मजदूरों में (विशेषतः आसामियों में) यह विशेषता पाई जाती है। यद्यपि संयुक्त राज्य में भी इसके अनुकूल जलवायु व सस्ते नीग्रो मजदूर प्राप्त किये जा सकते हैं फिर भी वहाँ चाय की खेती सम्भव नहीं

राई का उत्पादन

देश	क्षेत्रफल (००० हैक्टेअर में)		उत्पादन (००० मैट्रिक टन में)	
	१९४८-५२	१९६१	१९४८-५२	१९६१
पश्चिमी जर्मनी	२६६७	१३१६	५८३२	२१२६
पोलैंड	५०६३	५१२२	६३७४	८३७६
रूस	२३५४४	१६७००	१७९६०	१६३२४
उ० अमरीका	१२४०	६००	९९०	८५८
द० अमरीका	७६०	७३३	५६०	५५७
एशिया	५४०	६५७	५३०	५७५
विश्व का योग	१४८००	२१११२०	१९६००	३६३१०

राई का प्रति एकड़ उत्पादन कनाडा में ८ हंडरवेट है जबकि पोलैंड में यह १२ हंडरवेट, चैकोस्लोवाकिया में १५ हं० जर्मनी में १७ हं० और नीदरलैंड्स में २२ हं० है।

उपयोग

राई को गरीबी का अनाज (Grain of Poverty) कहा गया है।[64] और शायद इस कथन में कोई अत्युक्ति भी नहीं क्योंकि यह यूरोप के अधिकांश किसानों (मध्यवर्ती, उत्तरी और पूर्वी भाग) का मुख्य भोजन है। राई की रोटी वजनी, खट्टी और काले रंग की होती है। इस कारण इसका प्रयोग गरीब लोग ही करते हैं। इसका भूसा मज़बूत व लम्बा होता है इसलिए यह टोप, चटाइयाँ, रस्से, कुछ सस्ते पैकिंग कागज और पेस्टबोर्ड बनाने के काम आता है। इससे जिन (Gin), सरबती शराब (Rye whisky) और वोड्का (Vodka) नामक शराब भी बनाई जाती है। आजकल इसका उपयोग जानवरों के चारे के रूप में बढ़ रहा है।

(७) ज्वार-बाजरा (Millets)

यह बहुत पुराने अनाज हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि ज्वार-बाजरा मनुष्य के भोजन में सबसे अधिक प्रयोग में आता है। चीन में लिखित इतिहास से भी प्राचीन काल से (२००० वर्ष पूर्व) इसकी खेती होती थी। स्विट्जरलैंड की भीलों के निकटवर्ती क्षेत्रों में प्राय: ऐतिहासिक युग में भी इसकी खेती होती थी। भारत में भी यह बहुत प्राचीन काल से बोया जाता है। यहाँ से यह मिश्र में ले जाया गया। इसकी खेती का प्राचीनतम प्रमाण मिश्र में मिलता है।

64. *Case and Bergsmark*, **College Geography,** p. 446.

गई पत्तियाँ बहुत ही निकृष्ट होती हैं। यह चुनाई अगस्त से सितम्बर तक की जाती है। पत्तियों की चुनाई ७ से १४ दिन के अन्तर से की जाती है।

चाय की किस्में

वाणिज्य की दृष्टि से चाय दो प्रकार की होती है—काली (Black Tea) और हरी चाय (Green Tea)। इन दोनो प्रकारो की चायो मे भेद केवल पत्ती के तैयार करने की विधि मे ही है। काली चाय (Black Tea) उन पत्तियों से तैयार होती है जिन्हे तोडकर एक निश्चित समय तक कुम्हलाने और खमीर उठाने के लिये सूय की धूप मे छोड दिया जाता है। इसके पश्चात् उन्हे आग पर चढाया जाता है और उन पर बेलन घुमाया जाता है। पत्तियों के पूरी तरह सूख जाने पर उनको चलनियो से छानकर छोटी-छोटी पत्तियों के रूप मे अलग कर लिया जाता है और डिब्बो में भरकर बाजारो मे भेज दिया जाता है।

हरी चाय (Green Tea) बनाने के लिये पत्तियों को तोडकर तत्क्षण कडी गर्मी मे कुछ देर के लिए रखा जाता है जिससे उनमे खमीर न उठ सके। पत्तियो के सूख जाने पर उन्हे चलनियो द्वारा भिन्न-भिन्न श्रेणियो मे विभक्त कर लिया जाता है। इस विधि से पत्ती का मौलिक रंग तथा स्वाद वैसा ही बना रहता है।

भारत, लका, इण्डोनेशिया मे केवल काली चाय तैयार होती है। जापान में सारी चाय हरी तैयार होती है तथा चीन मे काली और हरी चाय दोनों ही बनाई जाती है।

उत्पादन क्षेत्र

चाय का व्यापारिक उत्पादन क्षेत्र जापान मे ३८° उ० अक्षास से परे और चीन मे ३५° उ० अक्षास तक होता है किन्तु इनकी पत्तियाँ कम ही बार चुनी जा सकती हैं तथा अत्यन्त शीत होने के कारण उत्पादन भी कम होता है और चाय की किस्म भी निम्न श्रेणी मे की जाती है। विशाल परिमाण पर चाय का उत्पादन एशिया मे ही होता है। भारत, पाकिस्तान, लङ्का, इण्डोनेशिया, फारमोसा और जापान चाय उत्पन्न करने वाले मुख्य देश माने जाते है। भारत विश्व की ५३ प्रतिशत, लङ्का २७ प्रतिशत इण्डोनेशिया व जापान ११ प्रतिशत चाय पैदा करते हैं। बहुत थोड़ी मात्रा में चाय ब्राजील, जमेका और नेटाल म भी पैदा की जाती है। कुछ समय से पूर्वी अफ्रीका (केनिया, युगंडा, टैंगेनिका और न्यासालैंड), रूस (ट्रास काकेशिया) व ईरान (कैस्पीयन सागर के तट पर) मे भी चाय की खेती बढ़ाई जा रही है तथा दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया के कुछ भागों म इसे पैदा करने के परीक्षण किये जा रहे हैं। अन्य चाय उत्पादक देश ये हैं—दक्षिणी ब्रह्मा, फीजी द्वीप मलाया और हिन्द चीन। आगे की तालिका में ससार के मुख्य देशो मे चाय का उत्पादन बताया गया है :—

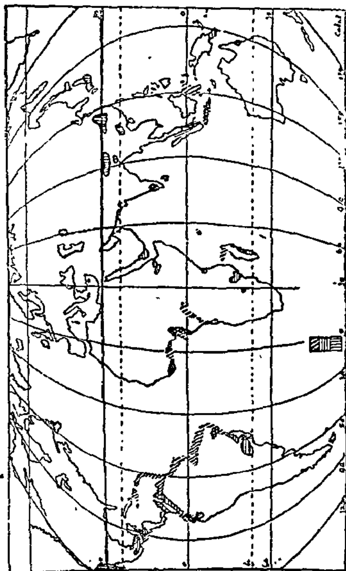
चीन—चाय का व्यवसाय सर्वप्रथम चीन मे ही आरम्भ हुआ था और १९ वीं शताब्दी के अन्त तक वही एक मात्र चाय पैदा करने वाला और निर्यात करने वाला देश था। चीन मे चाय का व्यवसाय एक घरेलू उद्योग के रूप मे किया जाता है। अपने उत्कर्ष काल मे चीन में प्रति वर्ष २३ लाख टन चाय का

यूरोप में भूमध्यसागरीय प्रदेश इस अनाज के लिए प्रसिद्ध है। रूस, यूगोस्लाविया और हँगरी में भी ज्वार-बाजरा उत्पन्न किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में ग्रेट प्लेन के पूर्वी भागों में यह अन्न उगाये जाते हैं। कन्सास, ओक्लाहोमा और टैक्साज रियासतें इसके लिए प्रसिद्ध हैं। यह अनाज टैक्साज में सबसे अधिक उत्पन्न होता है। यहाँ इसका प्रयोग भोजन और पशुओं को खिलाने में होता है।

व्यापार इसका उत्पादन सभी देशों में स्थानीय माँग की पूर्ति के लिए ही होता है अत इनका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नहीं के बराबर है।

शायद ही कभी बाहर निर्यात की जाती है। इससे बाद की चुनी हुई कुछ घटिया किस्म की होती है और प्रायः बाहर भेज दी जाती है। यह चाय हरी चाय (Green Tea) के नाम से प्रसिद्ध है। हरी चाय का उत्पादन यहां पिंगसुई और लुगसिंग मे होता है जो दोनो ही चेकियांग जिले मे है। अब हरी चाय की जगह काली चाय का क्षेत्र बढाया जा रहा है। इसका निर्यात रूस और पूर्वी यूरोपीय देशो को किया



चित्र ८३. संसार के पेय पदार्थ उत्पन्न करने वाले भाग

[टेढ़ी रेखाओं द्वारा कहवा क उत्पादन; आड़ी रेखाओं द्वारा कोको और खड़ी रेखाओं द्वारा चाय का उत्पादन बताया गया है]

ऐसी जलवायु पैदावार को घनी और कोमल टहनियों को निरन्तर शीघ्रता के साथ बढ़ाने मे सहायक होती है। जलवायु की ऐसी अवस्थाएँ दक्षिण भारत, लंका और इन्डोनेशिया के मानसूनी प्रदेशों में पाई जाती हैं। यह अवस्था चाय की पैदावार और पत्तियों के निरन्तर साल भर चुनने मे हानिकारक नहीं होती। चाय का पौधा अर्ध-उष्ण कटिबन्ध के पौधों मे सबसे कठोर पौधा है इस कारण यह अनुपयुक्त अवस्थाओं में पैदा नहीं किया जा सकता।

पेय पदार्थों मे सबसे अधिक महत्व चाय का ही है जैसा कि नीचे दिए उत्पादन के आँकड़ों से स्पष्ट होगा :—

उपज	मात्रा	युद्ध-पूर्व	१९५०-५४	१९५८-५९
चाय	दस लाख पौंड	८८२	१३१८	१६१२
काफी	दस लाख बोरे (१३२ पौंड)	४१·६	४१	५९
तम्बाकू	१० लाख पौंड	६,५२०	७,८११	८२६३

जलवायु सम्बन्धी दशाएँ

चाय उत्पादन के लिए आर्द्र जलवायु उपयुक्त माना जाता है। वर्ष के किसी भी भाग में इसका पौधा सूखा नहीं रह सकता। वर्षा का समान रूप मे वितरण पौधे के लिए आवश्यक है। यदि वर्षा बसन्त एवं शीत ऋतु मे हो जाय तो चाय की पत्तियों को वर्ष में ४-५ बार तक तोड़ा जा सकता है। साधारणतः वर्षा का औसत ६०" होना चाहिए। आसाम के पहाड़ी भागों में यह ५०" से १५०" तक वर्षा वाले क्षेत्रों में और हरिद्वार व दार्जिलिंग में १००" से २००" तक वर्षा होती है। दक्षिणी भारत के चाय क्षेत्रों में तो इससे भी अधिक वर्षा होती है। चाय के पौधे के विकास के लिए जड़ों में पानी का एकत्रित होना हानिकारक होता है। इसलिए चाय के उद्यान समुद्र-तल से २,००० से ६,००० फीट ऊँचे पहाड़ों की ढाल पर भी मिलते हैं। हिमालय का दक्षिणी ढाल सूर्योन्मुखी है और अधिक ताप एवं जलवृष्टि दोनों ही करता है। इसके अतिरिक्त यह ढाल हिमालय के कारण ध्रुवों की शीतल हवाओं से भी सुरक्षित रहता है।

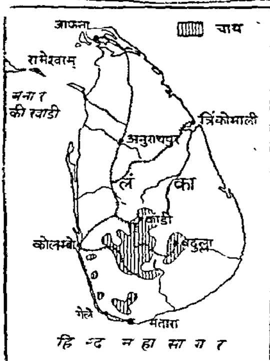
तापक्रम—चाय छाया-प्रिय पौधा है जो हल्की छाया मे बड़ी तीव्र गति से बढ़ता है। मासिक तापक्रम ७०° से ८०° फा० के बीच उपयुक्त माने गये है जब अधिक तापक्रम छाया में ७५° फा० से नीचे गिर जाते है या औसत न्यूनतम तापक्रम ६५° से नीचे हो जाते है तो उसकी वृद्धि रुक जाती है। आसाम में तो ९८° फा० तापक्रम वाले भागों में भी छाया में चाय का उत्पादन किया जाता है। ठंडी हवा और ओले चाय के लिए हानिकारक होते हैं।

भारत के कुछ सर्वोत्तम चाय के उद्यान आसाम मे समुद्रतल के धरातल से ५० से ४०० फीट की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। साधारणत मिट्टी गहरी और थोड़ा फास्फोरस, गंधक वाली होनी चाहिए। बहुधा जंगलों को साफ की गई भूमि चाय के के लिए अच्छी मानी जाती है। उपजाऊ मुलायम, बलुही मिट्टी या हल्की दोमट

मुख्यत प्रस्तरीभूत चट्टानो व फ्यूजीयामा के लावा मे बनी हैं जो कि चाय की खेती के लिए अति उत्तम सिद्ध हुई है। जापान मे घरेलू उपयोग के लिए अभी चाय पुराने ढग पर ही तैयार की जाती है। किन्तु निर्यात के लिए सारी चाय मशीनो द्वारा ही तैयार की जाती है। यहाँ की चाय हरी चाय होती है जो याकोहामा के बन्दरगाहों से संयुक्त राष्ट्र को निर्यात की जाती है।

इंडोनेशिया—यहाँ भी बहुत बडी मात्रा मे चाय की खेती की जाती है। यह तीसरा बड़ा चाय का निर्यात करने वाला देश है। इनमे जावा द्वीप ही मुख्य है और लगभग २२५,००० एकड में चाय बोई जाती है। चाय के खेत अधिकतर द्वीप के पश्चिमी ज्वालामुखी उच्च प्रदेशो मे ही स्थित हैं जो सामुद्रिक घरातल से २,५०० से ५,००० फीट तक ऊँचे हैं। यहाँ सबसे बडी विशेषता समान रूप से विपरीत वर्षा (१५० से २०० इन्च) और ऊँचे तापक्रमो का उचित समन्वय है जिससे कि लगातार सालभर चाय तोड़ने का मौसम बना रहता है। यहाँ के उच्च प्रदेशों के ढालो मे काली गहरी दोमट मिट्टी भी पाई जाती है जो वर्षा के कारण पानी से पूर्ण प्लावित रहती है। अति वर्षा के कारण यहाँ मिट्टी का कटाव बहुत तेज होता है। अतः इसके बचाव के फलस्वरूप खेती सीढीदार खेतो के रूप मे अपनाई जाती है।

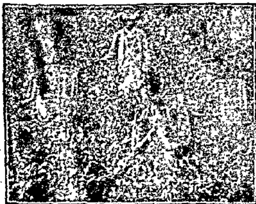
अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मे जावा की चाय लका, उत्तरी बगाल व ब्रह्मपुत्र की घाटी की चाय से काफी घटिया किस्म की समझी जाती है। जावा के मध्यम किस्म की का अधिकतर क्षेत्र वहाँ के आदमियो के हाथ मे ही है जो उस पर जावा की चाय की रियासतो (Javanese Tea Estates) के समान वैज्ञानिक ढङ्ग से खेती नही करते। सुमात्रा मे भी चाय की खेती बढाई जा रही है।



चित्र ८४ लंका मे चाय का क्षेत्र

लंका—लका की उच्च भूमि तथा वहाँ कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उपस्थित हैं जिसके कारण चाय का व्यवसाय ही वहाँ पर प्राकृतिक रूप से उपयुक्त बन गया है। ऊँचा तापक्रम (६०° से ७५° फा० तक) पैदावार की लम्बी मौसम, प्रचुर मात्रा मे समवितरित वर्षा (१०० से २००" वार्षिक) आदि सुविधायें भी मौजूद हैं कि

है। क्योकि नीग्रो लोगो की अँगुलियाँ मोटी और खुरदरी होती है जो चाय की पत्तियाँ चुनने के लिए कदाचित ही उपयोगी हो सकती है। अब भारत, लंका और इण्डोनेशिया की पौधे वाली खेती मे मशीनो का उपयोग किये जाने लगा है।



चित्र ८२ आसाम मे चाय की पत्तियों का चुनना

चाय के बीज पहले क्यारियो मे बिखेर कर बोये जाते हैं। बुआई अक्टूबर से मार्च तक चलती है। जब पौधे साधारणत ६" बडे हो जाते हैं उन्हे अन्य साधनों से रोप दिया जाता है। प्रति एक मन बीज का पौधा ३ से ५ एकड क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है। समतल भूमि पर चाय का पौधा चतुष्कोण अथवा वर्ग के आकार की क्यारियों मे और ऊँचे भागो मे कटूर के समानान्तर लगाया जाता है। पौधे को तेज हवा और धूप से बचाने के लिए दालो वाले पौधे भी लगाए जाते हैं।

चाय की भाडी ५ से ६ फीट से अधिक नही बढने दी जाती इससे पत्तियाँ चुनने मे बड़ी आसानी रहती है। साधारणत ३ साल के बाद पत्तियाँ चुनी जाती है और ४० वर्ष तक पौधे से पत्तियाँ प्राप्त होती रहती है। प्रतिवर्ष गर्मी वर्षा और शरद ऋतु मे तीन बार पत्तियाँ चुनी जाती हैं। प्रथम बार अप्रैल-मई मे, दूसरी बार जुलाई अगस्त मे और तीसरी बार अक्टूबर नवम्बर मे। यदि शीतकाल और और बसन्त ऋतु मे वर्षा हो जाय तो पत्तियो की चुनाई सभव हो जाती है। ऊपरी भाग की चाय तनो की अपेक्षा अच्छी होती है। एक भाडी मे एक बार मे लगभग २ पौण्ड हरी पत्तियाँ मिल जाती है। और प्रति एकड पीछे लगभग १०४० पौण्ड। उत्तम मिट्टी उत्पादन कला मे वृद्धि होने से एक भाडी से ४½ पौण्ड अथवा एक एकड भूमि से २५०० पौण्ड तक की चाय की पत्तियाँ प्राप्त की जा सकती है। भिन्न-भिन्न जाति की भाडियो की पत्तियाँ भिन्न-भिन्न लम्बाई की होती है।

चीन मे चाय की चुनाई तीन विभिन्न समयो मे की जाती है। बसत-ऋतु मे वर्षा होने पर पहली बार मुलायम और ताजा पत्तियाँ मार्च-अप्रैल मे तोडी जाती है। यह सबसे अच्छी चाय होती है इसे Peal tea कहते है। दूसरी बार चुनाई मई-जून मे की जाती है किन्तु पत्तियां मध्यम श्रेणी की होती हैं। तीसरी बार तोड़ी

चाय के प्रमुख आयातक
(दस लाख पौंड मे)

देश	१९३८	१९५९	१९६०
संयुक्त राज्य	४३२	४८०	४८७
संयुक्त राज्य	८१	१०८	११४
रूस	३७	६४	६२
मिश्र	१७	४३	४५
कनाडा	३७	४५	४३
ईरान	७	३४	३९
द० अफ्रीका सघ	१५	२८	३१
मोरक्को	२१	२१	२७
आयर-प्रजातंत्र	२३	२२	२२
नीदरलैंड्स	२४	२०	२०
जर्मनी	१२	१४	१४
सूडान	६	२१	—
इराक	१६	—	—

(Source : International Tea Committee)

चाय के प्रमुख निर्यातक
(दस लाख पौंड में)

देश	१९३८	१९५९	१९६०
भारत	३५८	४७१	४२६
पाकिस्तान	—	१३	४
लंका	२३६	३८३	४१०
इन्डोनेशिया	१५९	७१	८०
चीन	९२	१०२	१०५
तैवाँ	२४	३२	२६
हिन्दचीन	४	२	४
जापान	३७	१७	२२
मलाया सघ	०·७	४	४
केनिया	९	२३	२६
यूगैंडा	०·१	७	९
टँगेनिका	०·३	६	७
न्यासालैंड	१०	२२	२४
द० रोडेशिया	० ०४	—	८
मोजेम्बिक	१	१८	१८
ब्राजील	०·०२	२	२
अन्य देश	०·०५	४	८
योग	९३१	१,१८५	१,१८१

उत्पादन किया जाता था किन्तु अब इसका स्थान भारत और लंका ने ले लिया है।[2]

चाय का उत्पादन

(१० लाख पौंड मे)

देश	१९३८	१९५९	१९६०
भारत	४५२ ०	७१६	७०५ ०
पाकिस्तान	—	५७.०	४२'०
लंका	२४७ ०	४१३ ०	४३५'०
इन्डोनेशिया	१७८'०	६ ८०	१००'०
तैवाँ	२७'०	३६'०	४०'०
जापान	१२१'०	१७५'०	१७१'०
मलाया संघ	१	५०	५'०
केनिया	११ ०	२८ ०	३० ०
युगैंडा	० ५	१० ०	१०.०
टैंगेनिका	० ५	८०	४ ०
न्यासालैंड	११ ८	२३०	२७ ०
द० रोडेशिया	०'२	२ ०	२'०
मारीशस	०'१	००	—
मोजेम्बिक	१ ०	१८'०	—
ईरान	—	१५०	१३ ०
रूस	१९'०	७४ ०	८३'०

१९६२ मे चाय का कुल उत्पादन १७,८०० लाख पौंड का था, जिसमे मे भारत मे ७६० लाख पौण्ड, लंका मे ४६० लाख पौण्ड, जापान मे १८० लाख पौण्ड, इडोनेशिया मे ९५ लाख पौण्ड, पाकिस्तान मे ५० लाख पौण्ड, पूर्वी अफ्रीका मे ६५ लाख पौण्ड, लैवाँ मे ४० लाख पौण्ड तथा अन्य देशो मे १३० लाख पौण्ड।

(Source : International Tea Committce)

यहाँ यह व्यवसाय अच्छे व्यवस्थित और बड़े पैमाने पर नही होता। चीन मे चाय के छोटे-छोटे बगीचे होते हैं जिनकी उचित देखभाल नही होती। यहाँ पर अधिकतर चाय यागटिसीक्याग की घाटी और दक्षिणी पूर्वी पहाडियो पर ऐनहिवी, हूपेह, हुनान, क्यांगसी और फूकेन (Fukain) की उपजाऊ मिट्टी पर पैदा की जाती है। सामान्यतः यहाँ पर चाय चुनने को चार मौसम हुआ करती है। पहली बार अप्रैल मे, दूसरी बार मई मे, तीसरी बार जुलाई मे और अगस्त मे और चौथी बार सितम्बर मास मे चुनी जाती है। पहली चुनाव की पत्तियाँ सबसे उत्तम चाय प्रस्तुत करती हैं और चीन मे इसे बहुत पसन्द किया जाता है। अत. यह चाय

2. *Shahbad*, **China's Changing Map,** 1956, p. 75.

चाय के अन्य प्रतिस्पर्धी

चाय की झाड़ी की पत्तियों के अतिरिक्त दुनिया के कई भागों में अन्य पौधों की पत्तियाँ भी चाय की तरह काम में ली जाती हैं। उदाहरण के लिए दक्षिणी ब्राजील, उत्तरी अर्जेन्टाइना, द० पूर्वी बोलिविया और पैरेग्वे में जंगली रूप में पैदा होने वाले वृक्ष यरबा माटे (Yerba Mate) की पत्तियाँ विशेष रूप से यूरेग्वे, ब्राजील, पैरेग्वे और अर्जेन्टाइना में यरबा चाय या पैरेग्वे चाय के नाम से व्यवहृत की जाती है। आस्ट्रेलिया में यूकलिप्टस वृक्ष की पत्तियाँ, दक्षिणी अफ्रीका तथा रियूनियन द्वीप में 'Bushman Tea' भारत में 'Lemon Grass Tea' और स० रा० अमेरिका में यूपोन (Yupon or Black Drink) आदि चाय की तरह ही पी जाती है।

(२) कहवा या काफी (Coffee)

कहवा एक हरी झाड़ी का बीज है जिसकी उत्पत्ति स्थान अफ्रीका की उच्च भूमि प्रधानतः इथोपिया अथवा एबीसीनिया है। ११ वीं शताब्दी में अफ्रीका में ही यह दक्षिणी अरब ले जाया गया। अरब में काफी १५ वीं ईसवी तक पी जाती थी। मिश्र में भी कहवा यहीं से पहुंचा। पश्चिमी यूरोपीय देशों में इसका पिया जाना १७ वीं शताब्दी से ही प्रारम्भ हुआ, जबकि वेनेशियन व्यापारियों ने इसे यूरोप के बाजारों में पहुँचाया।[6] यह पौधा उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों का पौधा है जो विषुवत



चित्र ८५. कहवा का पौधा और फल

रेखा के दोनों ओर २८° उत्तरी और ३८° दक्षिणी अक्षांशों के बीच सुगमता से पैदा किया जाता है। व्यापारिक दृष्टि से इसकी पैदावार विषुवत रेखा के १५° अक्षांश

6 *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 113.

जाता है। चाय का कुल निर्यात श्रधाई बन्दरगाह से किया जाता है। चाय के घरेलू बाजार की दृष्टि के हाको (Hankow) सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है।

तिब्बत को भी यहाँ से बहुत बडी मात्रा मे चाय ईटों (Brick Tea) के रूप में निर्यात की जाती है। चाय की यह किस्म एक विशेष तरीके से तैयार की जाती है। चाय के पौधों से १२" लम्बे तिनके काट कर धूप मे सुखा दिये जाते हैं और फिर इनको चावल के माड मे मिलाकर चिपचिपी बना लेते हैं और मशीनों से दबाकर चाय की ईटें तैयार कर लेते हैं। तिब्बत को यह चाय याक, ऊँट और कुलियों के सिर पर निर्यात करदी जाती है।

भारत—चाय पैदा करने वाले प्रदेशो मे १९ वी शताब्दी के अन्त तक चीन ही विश्व मे सबसे अधिक चाय निर्यात करने वाला देश था किन्तु जब एशिया के दूसरे देशो में अँग्रेजो द्वारा व्यवस्थित रूप से चाय की खेती की जाने लगी तो चीन के चाय निर्यात को बड़ा धक्का लगा। यह सन् १८८६ में २६५० लाख पौंड से घटकर १९०९-१३ मे केवल १९९० लाख पौंड ही रह गई और सन् १९३५-३९ में केवल ८०० पौंड। अब यहाँ की निर्यात मात्रा २००-२५० लाख पौंड से अधिक नही है। *यहाँ के उत्तरी-पूर्वी भाग मे चाय की फसल मौसमी फसल होती है। पत्तियाँ चुनने* का मौसम सिर्फ अप्रैल से नवम्बर तक रहता है। इसमें सितम्बर और अक्टूबर मास मे सबसे अधिक चाय तोडी जाती है। भारत की चाय के कुल उत्पादन का ८३% ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी मे धराग, शिवसागर, लखीमपुर जिले तथा, सुरमा घाटी के कछार मे होती है। पश्चिमी बगाल में चाय दार्जिलिंग और जलपाईगुरी जिले मे बिहार में पूर्णिया व रांची जिले, उत्तर प्रदेश में कांगड़ा, गढ़वाल, अल्मोड़ा देहरादून जिले तथा दक्षिणी भारत में केरल, मद्रास, मैसूर और महाराष्ट्र (सतारा जिले) में पैदा की जाती है। उत्तरी भारत मे चाय ३५०० फीट और दक्षिण मे नीलगिरी की पहाड़ियों मे ४,८०० से ५,६०० फीट की ऊँचाई तक बोई जाती है। यहाँ चाय के बाग १०० एकड से लेकर ६००० एकड़ तक के होते है। चाय का अधिकतर निर्यात कलकत्ता और मद्रास बन्दरगाह से होता है।

जापान—जापान की भौतिक परिस्थितियो मे भी इसकी पैदावार के लिये अनुकूल अवस्थाएँ प्राप्त हो जाती है। अत जापान भी इसके व्यापार में महत्वपूर्ण *भाग लेने वाला देश हो गया है यद्यपि चीन, भारत, लका और इन्डोनेशिया मे बहुत* अधिक मात्रा मे चाय बोई जाती है और पैदा भी की जाती है परन्तु इन सबकी अपेक्षा जापान की प्रति एकड पैदावार सबसे अधिक है। यहाँ चाय भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ो (करीब एक चौथाई एकड़ के) में पैदा की जाती है परन्तु बहुत ही व्यवस्थित ढग से पैदा की जाती है।

यहाँ पैदावार के सबसे बडे केन्द्र द्वीप के दक्षिणी और दक्षिणी पूर्वी भागों मे प्रशात तट पर स्थित है। सिज्युका (Shizuoaka) और ऊजी (Uji) सबसे उत्तम चाय पैदा करने वाले क्षेत्र हैं। यह देश को आधी फसल पैदा करता है। जापान में चाय की अधिकतर खेती प्रशान्त महासागर की ओर ही केन्द्रित है। चूंकि इस ओर धूप और बर्फ कम गिरती है तथा घनी वर्षा (करीब ६०" प्रति वर्ष) और पैदावार की मौसम लम्बी होती है व सरदी का तापक्रम इसके विपरीत जिलो से जो कि महाद्वीप के सामने स्थित हैं कम रहता है। अतः जापान के पूर्वी भागों का चाय के व्यवसाय का केन्द्र होना स्वाभाविक ही है। यहाँ की पहाडियाँ व भूमि

दार कहवे के पेड पहाडी ढालों मे ही पैदा किये जाते हैं जहाँ वर्षा का अतिरिक्त जल ढालो से वह जाता है और जहाँ यातायात के साधनों की विशेष सुविधा होती है। इसके उपरान्त भूमि बिल्कुल अनुत्पादक हो जाती है। कहवे के कई चालीस व तीस वर्ष पुराने पेड भूमि की उपजाऊ शक्ति नष्ट हो जाने के कारण ऐसे ही छोड जाने पर अब बडे जगल के अन्य भागों से बिल्कुल ही नही पहचाने जाते।

ब्राजील मे यह १,५०० फीट से ३,००० फीट जावा मे १,५०० से ५,००० फीट और भारत मे १५,००० फीट से ३,५०० फीट के ऊँचे पहाडी ढालो पर बोया जाता है। किन्तु इसकी खेती सबसे उम्दा किस्म २,५०० से ६,००० फीट की ऊँचाई पर होती है। कहवा की किस्म पर ऊँचाई का कितना प्रभाव पडता है, यह निम्न तालिका से स्पष्ट होगा :—[९]

उत्तम कठोर फलियाँ	५,००० फीट की ऊँचाई मे
पूर्णत. कठोर फलियाँ	४,००० से ५,००० फीट
कठोर फलियाँ	४,००० से ४,५०० फीट
अर्द्ध-कठोर फलियाँ	३,८०० से ४,००० फीट
फैसी मुख्यत. धुली हुई	३,५०० फीट की ऊँचाई से
मुख्यत धुली हुई	३,०००—३,५००
अति उत्तम धुली हुई	२,८००—३,०००
अच्छी धुली हुई	२,५००—२,५००
साधारण धुली हुई	२ ०००—२,५००

कहवे के अधिकतर बगीचे समुद्र के समीप ही पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि समुद्र के प्रभाव के कारण तापक्रम हमेशा समान रहता है और वर्षा की बौछारो के कारण वर्षा का वितरण भी सम होता है। इससे इसकी पैदावार को काफी लाभ पहुँचता है और प्राकृतिक रूप से दोपहर के समय समुद्री धुन्धो द्वारा भी पौधो की रक्षा हो जाती है।

इस फसल की उन्नति मे यदि सबसे बडी कोई बाधा है तो वह कीडे लगने को है। इसका सबसे बडी शत्रु कॉफी बिटल (Coffe Beetle) नामक कीडा होता है। यह इसके फल के अन्दर घुस कर उसे बिल्कुल खोखला कर देता है। असामयिक जलवृष्टि एक-दूसरी समस्या उपस्थित करती है। कहवे के पौधे मे प्रतिवर्ष सितम्बर से दिसम्बर तक फूल होते है। ये फूल चार दिनो तक रहते हैं। यदि इन चार दिनो मे वर्षा हो गई, तो फूल गिर जाते हैं और फिर कोई फल नही होता।

इसके पौधे वर्षा ऋतु मे नवम्बर से फरवरी तक लगाये जाते है। बाद मे उनकी बढवार के समय काफी सतर्कता रखने की आवश्यकता होती है। कही-कही इसकी सुरक्षा के हेतु बहुत बड़े-बाँसो के ऊपर जाल भी बाँधा जाता है। परन्तु बहुत सी जगह इस कार्य के लिये छायादार वृक्ष ही लगाये जाते हैं। इन पेडों मे खास

9. *E. B Shaw*, **World Economic Geography** quoted : **Agriculture in Guatemala, 1944,** p. 51.

जिससे चाय की पैदावार निरन्तर तीव्र गति के साथ बढ़ती ही जाती है। यहाँ पत्तियों का चुनना साल भर होता रहता है। लंका की चाय काले रंग की होती है प्रति एकड़ पैदावार ८०० पौण्ड विश्व के सब देशों से अधिक होता है।

लंका में लगभग २½ लाख एकड़ भूमि से भी अधिक में चाय बोई जाती है। इसमें आधे से अधिक वहाँ की निगम के अन्तर्गत है जो सब अंग्रेज अधिकारियों की व्यवस्था में है। वहाँ चाय के क्षेत्र का औसत १०० एकड़ का होता है। लगभग ३५० बाग ५०० एकड़ में भी बड़े हैं किन्तु चाय के बागों का ⅔ भाग १० से १०० एकड़ तक का है।[3] वहाँ चाय के बगीचों में काम करने के लिए दक्षिणी भारत के तामिल कुलियों से काम लिया जाता है।

व्यापार

चाय का अधिकांश व्यापार ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के देशों के मध्य होता है। इन्हें छोड़कर केवल इन्डोनेशिया ही बड़े परिमाण पर निर्यात करने वाला और केवल अमेरिका बड़े परिमाण पर आयात करने वाला देश है। ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के निर्यातक देशों का सबसे अधिक माल ब्रिटेन लेता है। यह भारत और पाकिस्तान का दो-तिहाई और लंका का एक-तिहाई माल लेता है परन्तु १९३८ में उत्पादक देशों से खपत वाले देशों को सीधा माल भेजने की प्रथा चालू हो जाने और ब्रिटेन से पुनर्निर्यात के व्यापार पर प्रतिबन्ध (अक्तूबर १९५२ तक) लग जाने के कारण इसमें कमी हो गई है।[4] अब भारत और लंका से काफी परिमाण में चाय सीधी अमेरिका, कनाडा और आयर को भेजी जाने लगी है। आस्ट्रेलिया, ईरान और मिश्र को भी पहले से अधिक परिमाण में चाय सीधी उत्पादक देशों से भेजी जा रही है। एक समय था जब ये देश मुख्यतः इण्डोनेशिया से ही चाय लेते थे। भारत और लंका दोनों के ही लिये अब उत्तरी अफ्रीका और मध्य पूर्व के बाजार पहले से अधिक महत्वपूर्ण हो गये है। ब्रिटिश पूर्वी अफ्रीका और न्यासालैंड का निर्यात मुख्यतः ब्रिटेन को ही होता है यद्यपि चाय कनाडा और अमेरिका को भेजी जाता है।

इण्डोनेशिया की अधिकांश चाय नीदरलैंड में ही खपती है। दूसरा स्थान ब्रिटेन का रहता है। आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, मिश्र और ईरान युद्ध से पहले की अपेक्षा इण्डोनेशिया से कम चाय लेता है। जापान से निर्यात हुई चाय का आधा भाग अल्जीरिया और मोरक्को को और शेष आधा अमेरिका और सुदूर पूर्व के देशों को जाता है। फारमूसा की चाय का अमेरिका को जाना बराबर गिरता गया है परन्तु उसकी पूरी चाय उत्तरी अफ्रीका में खपने लगी है।

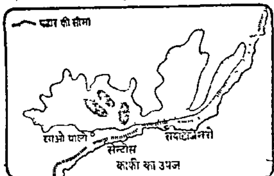
चाय का आयात करने वाले मुख्य देश इगलैंड, सं० रा० अमेरिका, कनाडा, मिश्र, फ्रांस, हॉलैण्ड, ईराक और दक्षिणी अफ्रीका संघ है।

अगले पृष्ठ की तालिका में चाय के आयात और निर्यात आंकड़े प्रस्तुत किये गये हैं :—

3 *International Bank for Reconstruction and Development*, **The Economic Development of Ceylon**, 1953, pp. 227-235.

४. १९६१ में ब्रिटेन के आयात में भारत का भाग ७१%; लंका का २४%; रोडेशिया का ·४% और पाकिस्तान का ·५% था।

ब्राजील समस्त विश्व की २/३ पैदावार उत्पन्न करता है। यद्यपि ब्राजील के प्रत्येक राज्य मे कहवा उत्पन्न होता है, किन्तु इसका उत्पादन साओपालो, राज्य मे ही मुख्यत. केन्द्रित है। यही कहवा के उत्पादन का हृदय-स्थल (Heart of the Coffee Region) उत्तर की ओर कहवा क्षेत्र गॉडलैंड की सीमा के निकट और पश्चिम मे पैराना की सहायकों के बीच प्लेकाऊ तक फैला है। ब्राजील की ६०% पैदावार मध्य और दक्षिणी साओपालो, रियोडिजिनिरो के पूर्वी जिलो और मिनास-जिरास, एस्पिरिटो सैंटो के प्रान्तों से प्राप्त होती है जो अपनी प्राकृतिक भूमि के कारण इसकी पैदावार के लिए बहुत ही प्रख्यात हो गये हैं। साओपालो के उत्तरी भाग से ब्राजील को ४०-५०% पैदावार, मिनास-जिरास के दक्षिणी भाग से २५-३०% और रियोडिजिनिरो से १०% कहवा प्राप्त किया जाता है। ब्राजील मे कहवे के खेत फजेंडा (Fazenda) कहलाते हैं। साओपालो मे कहवे के बगीचों मे ३० लाख से ४० लाख तक के पेड पाये जाते हैं, परन्तु कही कही यह सख्या ८० लाख से भी अधिक पहुंच गई है। कहवे के बागो का क्षेत्रफल ६५ लाख एकड से भी अधिक है। ब्राजील के कुछ बाग तो इतने बडे हैं कि उनकी पैदावार ढोने के लिए निजी रेल मार्ग आदि भी बनाये गये हैं। ब्राजील मे हर २,००० पेडो के पीछे एक मजदूर की आवश्यकता होती है जिसमे फसल इकट्ठा करने वाले, गाडी चलाने वाले, मोटर ड्राइवर्स और नीचे भूमि पर काम करने के लिए मजदूर भी सम्मिलित होते है।



चित्र ८६. ब्राजील मे कहवा प्रदेश

ब्राजील मे यह उद्योग १८७० ई० के आस पास शुरू हुआ था। सर्व प्रथम रियोडिजिनीरो के समीप किनारे की निम्न भूमियो मे इसकी जाँच करने के हेतु फसल बोई गई। जब इसमे पूर्ण सफलता मिली तो फिर किनारे की श्रेणी के पीछे की ओर इसके सहारे-सहारे रियो पेराहिबो की घाटी मे समुद्र की सतह से २,५७० से ५ ००० फीट की ऊँचाई वाले ढालो पर इस प्रदेश के मध्य मे भी खेती की जाने लगी। इसके फलस्वरूप जहा १८०० मे ब्राजील से केवल १३ बोरे कहवे का निर्यात हुआ था, वहाँ १८४० में १० लाख से भी अधिक बोरे निर्यात हुए। १८५० मे विश्व के कुल उत्पादन का ३/४ अकेले ब्राजील से ही प्राप्त हुआ था। १९३४ मे ब्राजील की पैदावार चरम सीमा तक पहुँच गई—२९,५०,००० बोरे। आजकल यह मात्रा २० लाख बोरे ही है।[10] १९५९ मे ३,७०,००० हैक्टेअर भूमि पर कहवा बोया गया जिसका उत्पादन १,५१,६१८ मैट्रिक टन था। साओपालो प्रदेश मे इसकी खेती के इतना जल्दी बढने के निम्नलिखित कारण है—[11]

१०. १ बोरा=१३२ पौंड कॉफी।

11. *E W Shanon*, **South America : Economic and Regional Geography, 1942.**

चीन को छोड़ कर विश्व में उत्पन्न होने वाली चाय का अधिकांश भाग ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल के देशो मे खपता है। ब्रिटेन में चाय बहुत पी जाती है और भारत की जनसंख्या बहुत अधिक है अतः इन देशों में चाय की खपत अच्छी होती है। ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल से बाहर हॉलैण्ड, दक्षिणी अमरीका और रूस में चाय की अच्छी खपत होती है। परन्तु इतने पर भी वहाँ प्रति व्यक्ति पीछे चाय की खपत का औसत कम रहता है।

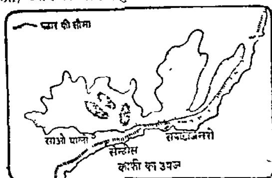
नीचे की तालिका मे प्रति व्यक्ति पीछे चाय की खपत के आँकड़े दिखाये गये हैं :—[5]

देश	उपयोग	देश	उपभोग
	(पौंडो मे)		(पौंडो मे)
ब्रिटेन	९·९	फ्रांसीसी मोरक्को	३·२
आस्ट्रेलिया	८ ६	नीदरलैंड	७·७
न्यूजीलैंड	७·६	मिश्र	२·१
कनाडा	३ ०	सयुक्त राज्य अमेरिका	०·७
भारत और पाकिस्तान	०·५	फ्रास	०·०७
लका	१ ८	जर्मनी	·१७
आयर	५·५	रूस	·२१

सन् १९२९ की आर्थिक मन्दी युग के पश्चात् चाय का उत्पादन अत्यधिक मात्रा मे हो जाने से मण्डियो में इसका मूल्य गिर गया जिससे बड़े-बड़े व्यापारियो को बड़ी हानि उठानी पड़ी। अत १९३२ मे चाय के उत्पादन और निर्यात की मात्रा पर नियंत्रण करने के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय योजना बनाई गई जो १९३३ से १९३६ तक लागू रही। १९३८ मे दूसरी पंचवर्षीय योजना चालू की गई। प्रथम समझौता भारत, जावा और लंका के बीच इस उद्देश्य से हुआ कि— (१) निर्यातक देशों से चाय की निर्यात की मात्रा पर नियंत्रण रखा जाय ताकि माग व पूर्ति में सामजस्य हो सके; (२) निर्धारित-मात्रा से अधिक निर्यात पर विभिन्न सरकारें नियन्त्रण लगादें, और (३) समझौते की अवधि ५ वर्ष होगी जिसमें कोई भी देश चाय की खेती नही बढा सकेगा। इस समझौते के अनुसार भारत की निर्धारित निर्यात मात्रा ३८०० लाख पौंड थी किन्तु १९३९ में द्वितीय महायुद्ध आरम्भ होने पर भारत की निर्यात मात्रा युद्धकालीन माग की पूर्ति करने के लिये बढा दी गई। सन् १९४८ में एक और अन्तर्राष्ट्रीय चाय समझौता भारत, पाकिस्तान, लका व इन्डोनेशिया देशों के बीच दो साल के लिये हुआ। १९५२ में भारत ने अपनी सदस्यता हटाली। १९५३ में भारत, लका, स० राज्य अमरीका और इन्डोनेशिया के बीच सयुक्त राज्य में चाय के उपभोग को बढाने सम्बन्धी समझौता किया गया। इसके फलस्वरूप अब वहाँ एक चाय परिषद् (Tea Council of U. S A.) की स्थापना की गई है।

5. *Smith, Phillips and Smith,* **Op. Cit.,** p. 192.

ब्राजील समस्त विश्व की २/३ पैदावार उत्पन्न करता है। यद्यपि ब्राजील के प्रत्येक राज्य मे कहवा उत्पन्न होता है, किन्तु इसका उत्पादन साओपालो राज्य मे ही मुख्यत. केन्द्रित है। यही कहवा के उत्पादन का हृदय-स्थल (Heart of the Coffee Region) उत्तर की ओर कहवा क्षेत्र गॉडलैंड की सीमा के निकट और पश्चिम मे पैराना की सहायको के बीच प्लेकाऊ तक फैला है। ब्राजील की ६०% पैदावार मध्य और दक्षिणी साओपालो, रियोडिजिनिरो के पूर्वी जिलो और मिनास-जिरास, एस्पिरिटा सैंटो के प्रान्तो से प्राप्त होती है जो अपनी प्राकृतिक भूमि के कारण इसको पैदावार के लिए बहुत ही प्रख्यात हो गये हैं। साओपालो के उत्तरी



चित्र ८६. ब्राजील मे कहवा प्रदेश

भाग से ब्राजील को ४०-५०% पैदावार, मिनास-जिराम के दक्षिणी भाग मे २५-३०% और रियोडिजिनिरो से १०% कहवा प्राप्त किया जाता है। ब्राजील मे कहवे के खेत फजेंडा (Fazenda) कहलाते हैं। साओपालो मे कहवे के बगीचों मे ३० लाख से ४० लाख तक के पेड पाये जाते हैं, परन्तु कही कही यह सख्या ८० लाख से भी अधिक पहुँच गई है। कहवे के बागो का क्षेत्रफल ६५ लाख एकड से भी अधिक है। ब्राजील के कुछ बाग तो इतने बडे हैं कि उनकी पैदावार ढोने के लिए निजी रेल मार्ग आदि भी बनाये गये हैं। ब्राजील मे हर २,००० पेडो के पीछे एक मजदूर की आवश्यकता होती है जिसमे फसल इकट्ठा करने वाले, गाडी चलाने वाले, मोटर ड्राइवर्स और नीचे भूमि पर काम करने के लिए मजदूर भी सम्मिलित होते हैं।

ब्राजील मे यह उद्योग १८७० ई० के आस पास शुरू हुआ था। सर्व प्रथम रियोडिजिनीरो के समीप किनारे की निम्न भूमियो मे इसकी जाँच करने के हेतु फसल बोई गई। जब इसमे पूर्ण सफलता मिली तो फिर किनारे की श्रेणी के पीछे की ओर इसके सहारे-सहारे रियो पेराहिबो की घाटी मे समुद्र की सतह से २,५७० से ५,००० फीट की ऊँचाई वाले ढालो पर इस प्रदेश के मध्य मे भी खेती की जाने लगी। इसके फलस्वरूप जहां १८०० मे ब्राजील से केवल १३ बोरे कहवे का निर्यात हुआ था, वहाँ १८४० में १० लाख से भी अधिक बोरे निर्यात हुए। १८५० मे विश्व के कुल उत्पादन का ३/४ अकेले ब्राजील से ही प्राप्त हुआ था। १९३४ मे ब्राजील की पैदावार चरम सीमा तक पहुँच गई—२९,५०,००० बोरे। आजकल यह मात्रा २० लाख बोरे ही है।[१०] १९५९ मे ३,७०,००० हैक्टेअर भूमि पर कहवा बोया गया जिसका उत्पादन १,५१,६१८ मैट्रिक टन था। साओपालो प्रदेश में इसकी खेती के इतना जल्दी बढने के निम्नलिखित कारण है—[११]

१०. १ बोरा=१३२ पौंड काफी।

11. *E. W Shanon*, **South America · Economic and Regional Geography, 1942.**

तक ही सीमित है जो कि समुद्र के धरातल से १,५०० फीट से ४,००० फीट तक की ऊँचाई वाले पठारों पर बोई जाती है। श्री स्मिथ, फिलिप्स और स्मिथ के अनुसार विश्व की काफी के ६ बिलियन वृक्ष विषुवत् रेखा के २०-२५° अक्षांशों के बीच उच्च भागों में पाये जाते हैं। कहवे का मूल्य इसके बीजों के कारण होता है जो इसके गूदेदार फलों में पाये जाते हैं। इसके फलों में प्राय दो बीज होते हैं। फलों को इकट्ठा करने के बाद गूदे को अलग कर दिया जाता है और बीजों को निकाल कर धूप में सुखा लेने के बाद उनको तलकर पीस लेते हैं। यही बाजारों में बिकने वाला कहवा है।

जलवायु सम्बन्धी आवश्यकताएँ—

कहवे के लिये उष्णतर जलवायु की आवश्यकता होती है। इसके लिए पूर्ण रूप से आदर्श जलवायु यमन (Yemen) में पाई जाती है। सूर्य की सीधी किरणें इस पौधे के लिये तेज हानिकारक होती है। इसलिए अच्छे बड़े हुए पौधों को उष्ण प्रदेशों में चमकने वाले सूर्य किरणों से बचाव के लिये प्राय. केले आलू, मकई, रबड़, सिंकोना और बड़े-बड़े मटर अथवा अन्य छायादार वृक्षों के नीचे बोया जाता है। दक्षिणी पूर्वी अरब के तटीय भागों के पौधों की रक्षा प्राकृतिक रूप से दोपहर के समय के समुद्री धुन्धों से होता है

(१) इसका पौधा न तो सूखा ही सहन कर सकता है और न पाला ही। इसलिए यह उष्ण प्रदेशों के ठंडे भागों में ही पैदा हो सकता है। इस कारण अधिकतर पैदा करने वाले देशों में ठंडे ऋतु का औसत तापक्रम ५२° फा० और ग्रीष्म का औसत तापक्रम ४२.५° फा० होता है। इसके लिए वार्षिक तापक्रम ६३° फा० से ७७° फा० तक उत्तम रहता है। ८०° से अधिक तापक्रम में इसकी उपज कम हो जाती है और फिर लम्बी गर्मियाँ भी यह सहन नहीं कर सकता।

(२) कहवे के लिए घनी वर्षा (६०" से ७५") की आवश्यकता होती है। जहाँ इतनी वर्षा नहीं होती वहाँ सिंचाई द्वारा कमी पूरी की जाती है और जहाँ आवश्यकता से अधिक पानी गिरता है वहाँ पानी के निकास का प्रबन्ध करना पड़ता है।

(३) कहवे के लिए उपजाऊ और ढालू तथा जल से सिंचित भूमि की आवश्यकता होती है। इसके लिये सबसे अधिक उपयुक्त जंगलों को काट कर साफ की हुई भूमि में समझी जाती है जो वनस्पति के सड़े-गले अंशों और लोहे के अंशों के मिले होने के कारण काफी उपजाऊ होती है। इण्डोनेशिया और लैटिन अमेरिका में यह ज्वालामुखी पर्वतों की लावा मिट्टी वाली भूमि में अच्छा पैदा होता है।

(४) कहवे के लिए सस्ते मजदूरों की भी आवश्यकता होती है जो पेड़ पर से इसके फल चुन सकें। कहवे की खेती क्रमशः विभिन्न देशों में घटती-बढ़ती रही है। सबसे पहले अरब कहवे का मुख्य उत्पादक था। फिर बदलकर पश्चिमी द्वीप हुए, इसके बाद जावा और आजकल ब्राजील सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है।[7]

इसका पौधा ५ से ७ साल तक फल देने योग्य हो जाता है किन्तु व्यावसायिक रूप से ७ साल के उपरान्त ही पूर्ण रूप से फसल देने योग्य होता है और निरन्तर २०-३० वर्ष तक तीव्र गति से फल-फूल देता रहता है।[8] सबसे उत्तम और खुशबू-

7. *Smith, Phillips and Smith*, **Ibid**, p. 184.
8. *W. H. Ukers*, **All About Coffee.**, 1935.

गोदामो मे इकट्ठा कर लिया गया लेकिन सरकार को इसमे असफलता मिली। अतः उन्हे बहुत बड़ी मात्रा मे कहवा या तो भूमि मे गाड़ देना पड़ा, या जला देना पड़ा या समुद्र मे फेंक देना पड़ा। द्वितीय महायुद्ध के पूर्व वाली शताब्दी में ब्राजील मे ६८० लाख बोरे जलाये गये। यह मात्रा इतनी अधिक थी कि समस्त विश्व को २½ साल तक कहवा मिल सकता था।[13] जब सरकार अपनी इस योजना (Valorization Scheme) मे पूर्ण रूप से असफल रही तो उसने कहवा की दर को बराबर बनाए रखने के लिये किसानों पर यह पाबन्दी लगा दी कि वे अपनी फसल का ४० प्रतिशत ही बेच सकते हैं। इस तरह कहवा पैदा करने वाले जो पहले अपनी इस व्यापारिक फसल पर ही निर्भर रहते थे अब दूसरी फसलों पर भी परीक्षण करने लगे हैं।

कहवा बाहर भेजने के लिए बन्दरगाह पास ही है। कहवा निर्यात करने का सबसे बड़ा बन्दरगाह सैंटोस मे केवल २५० मील दूर है। रायोडिजिनरो और विक्टोरिया द्वारा भी कहवा बाहर भेजा जाता है।

(६) इन उपर्युक्त कारणो के अतिरिक्त साओपालो को दूसरी सुविधा यह है कि वह चारो ओर से रेलों द्वारा जुड़ा हुआ है। अतः यहाँ से फसल को इकट्ठा करना व उसको वहां से बाहर भेजना आसान होता है। इसके अतिरिक्त बिजली के द्वारा कहवे के बोरों को पहाड़ी प्रदेशो से सैंटोस के कारण बन्दरगाह तक लाने की अन्य सुविधायें भी हैं। ऊँचाई पर होने के कारण कहवा उत्पादक रियासतो से सैंटोस बंदरगाह तक ऊपर बँधे हुए तारो से लटका कर कहवा के बोरे आसानी से भेजे जाते हैं। कहवे से भरी हुई डोलचियाँ तार की रस्सी पर फिसलती हुई नीचे आ जाती है क्योंकि आकर्षण शक्ति उन्हें ढाल के सहारे-सहारे नीचे ले आती है। भरी हुई डोलचियो के सैंटोस की ओर फिसलने से खाली डोलचियाँ पठार के सिरो की ओर ऊपर को खिंच आती है इससे यातायात व्यय कम हो जाता है।

दुनिया मे काफी पैदा करने वाले देशो मे ब्राजील सबसे महत्वपूर्ण है और प्रथम स्थित भी रखता है परन्तु वह उम्दा किस्म की कॉफी पैदा नही करता। ब्राजील में प्रति पेड पैदावार भी सिर्फ एक पौण्ड या आधा पौण्ड ही होती है लेकिन पेडो के पांच या छः वर्ष हो जाने पर पैदावार भी बढ जाती है। यह औसतन प्रति पेड पांच या छः पौंड होती है। अब ब्राजील मे कहवा पैदा करने के लिए अन्य क्षेत्र भी उपलब्ध हो रहे हैं—यथा उत्तरी पराना, पूर्वी मिनासा जिरास, मध्यवर्ती और उत्तरी पराना, पूर्वी मिनासा जिरास, मध्यवर्ती और उत्तरी एस्पीरीटो सैंटो और गाँयाज आदि।[14]

अब ब्राजील के कहवा के खेतो को कीटाणुओं और कीडों मकोडों द्वारा काफी क्षति पहुँच रही है। चिड़ियाओं, चूहों, पक्षियों की अपेक्षा काफी का कीडा सबसे अधिक हानि पहुँचाता है। दूसरे यहाँ वर्षा बडे असमय होती है। पौधे मे फूल सितम्बर से दिसम्बर तक आते हैं और उस समय चुनते वक्त वर्षा हो जाने से फूल गिर कर नष्ट हो जाते है और उनसे कहवा प्राप्त नही होता। ब्राजील से विश्व के

13. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 190.
14. *G White, R. A. White and H. N. Mihoff*, **Brazil—An Expanding Economy**, 1949, pp 67-68

कर जंगली ढेम ही अधिक पसन्द की जाती है—चूँकि यह पशुओं के लिए अच्छा भोजन भी देती है और जब सूख कर नीचे गिर जाती है तो भूमि को भी उपजाऊ बनाती है। जब पौधे लगभग १८ वड़े हो जाते है तो उन्हे दूसरे क्षेत्रो मे १२ से १५ फीट की ही दूरी पर लगा दिया जाता है। पौधो के बेरो (berry) को पकाने मे ६-७ महीने लग जाते है। प्राकृतिक रूप मे पैदा होने वाले कहवे के वृक्ष २५ से ४० फीट तक ऊँचे होते है, परन्तु व्यापारिक दृष्टि से उत्पन्न किये गये पौधो को ५ से १२ फीट से अधिक नही बढने दिया जाता ताकि मजदूर लोग जमीन पर खडे रहकर ही इसके फलो को सरलतापूर्वक चुन सकें। कहवे की उपज साल मे दो बार उतारी जाती है—शीतकाल और बसन्त ऋतु मे। सबसे अधिक फसल अक्तूबर १ नवम्बर और दिसम्बर के महीनो मे और सबसे कम अप्रैल, मई व जून के महीनो में प्राप्त होती है।

उत्पादन क्षेत्र

विश्व मे कहवा पैदा करने वाले मुख्य देश, ब्राजील पश्चिमी द्वीप समूह (जमैका, हेटी, क्यूबा), मध्य अमेरिका (पोर्टोरीको, डोमीनिको, निकारागुआ, ग्वाटेमाला, साल्वेडोर, कास्टोरिका), दक्षिणी अमेरिका (वैनेजुएला, इक्वेडोर, कोलंबिया, एण्डीज के पठार), दक्षिणी भारत, लका, इडोनेशिया, अरब, अफ्रीका (केनिया टैनेनिका, युगडा, बेलजियन कांगो, अंगोला, नाइजीरिया और घाना है)। महत्व की दृष्टि से उत्पादक ये है —

(१) दक्षिणी अमरीका—जहाँ से विश्व उत्पादन का ७४% मिलता है। (२) कैरेबियन प्रदेश १३%। (३) अफ्रीका। (४) दक्षिणी पूर्वी एशिया।

१९६२-६३ मे कहवे का विश्व उत्पादन ७६० लाख हंडरेडवाट अनुमानित किया गया था। इसमे से ३३१ लाख हड० ब्राजील मे, ६२ लाख हड० कोलंबिया में, १५१ लाख हड० अन्य लेटिन अमरीकी देशों मे ३७ लाख हंड० पूर्वी अफ्रीका मे तथा १३४ लाख हंड० अफ्रीका के अन्य देशो मे पैदा किया गया।

नीचे की तालिका मे प्रमुख देशो का उत्पादन और प्रति एकड पैदावार दिखाई गई है।

कहवा का उत्पादन (१००० मैट्रिक टनों में)

देश	१९३४-१९३८	१९५४	१९६०-६१	प्रति एकड पीछे उपज (पौण्ड मे)
ब्राजील	१४४६	१०३७०	१०३७	३६५.८
कोलम्बिया	७५१	३९००	४२०	५६२.१
क्यूबा	३२	३८५	—	४४६.१
सालवेडोर	६४	७५९	८०	५५३
ग्वाटेमाला	६६	—	७४	४४६.१
इण्डोनेशिया	६८	—	११३	४७२.८
मैक्सिको	५६	९६०	१०१	४१९.३
वैनीज्वैला	५८	५३४	४८	५१.७
भारत	१६३	२४.६	३८४९	१९९
सम्पूर्ण विश्व	२४२०	२४६०	२८५०	—

इसका स्वाद बहुत अच्छा होता है। पोर्टोरिका, डोमीनिकन रिपब्लिक, क्यूबा, हेटी आदि द्वीप भी उत्तम कहवा पैदा करते हैं।

जावा में कहवा की खेती समुद्रतल से २,००० से ८,००० फीट ऊँचाई वाले पहाड़ों पर की जाती है। यहाँ कहवा का उत्पादन व्यक्तिगत रूप में ही अधिक किया जाता है।

भारत में कहवा केवल मैसूर (२३%), केरल (३३%) मद्रास (३०%) में ही पैदा किया जाता है। पश्चिमी घाट के सुरक्षित पूर्वी ढाल इसके लिए बहुत उपयुक्त स्थान हैं। यहाँ कहवा के खेत २,५०० से ३,००० फीट ऊँचाई वाले पहाड़ों के ढालों पर पाये जाते हैं। १९६१ में भारत में ४३,००० टन कहवा प्राप्त किया गया।

इसके अतिरिक्त अफ्रीका में केनिया, युगान्डा, टैंगेनिका, अंगोला, घाना और बेलजियन कांगो आदि भी कहवा उत्पन्न करने वाले देश हैं।

अरब में होने वाला मोचा कहवा (Mocha Coffee) संसार में श्रेष्ठतम मानी जाती है। यह अपनी बहुत ही उम्दा किस्म, स्वाद और सुगन्ध के लिये जगत प्रसिद्ध है। कहवा पैदा होने के लिए यहाँ अनुकूल परिस्थितियाँ ये हैं :—

(१) ढलवाँ भूमि जिससे कि हवा व जल ठीक रूप में संचालित होता रहता है। यहाँ जलवायु अति गरम और शुष्क होने के कारण कहवा की उपज के लिये अनुकूल दिशायें केवल यमन प्रान्त में ही पाई जाती हैं। यह प्रान्त पहाड़ी और शीतोष्ण जलवायु वाला है। यहाँ २ से ६½ हजार फीट की ऊँचाई तक पर्वतीय ढालों पर कहवा की खेती की जाती है।

(२) भूमि उपजाऊ है, और

(३) घना कुहरा जो ग्रीष्म के तूफानों को आगे बढ़ाते हैं। इसमें आवश्यकतानुसार नमी प्राप्त हो जाती है। ग्रीष्म के दिनों में कुहरा तापक्रम को भी परिमित कर देता है किन्तु सिंचाई की कठिनाई, खराब सड़कों, भारी राजकीय करों और राज्य प्रबन्ध के कारण प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम है। अदन बन्दरगाह से बहुत बड़ी मात्रा में मोचा कॉफी निर्यात की जाती है।

व्यापार

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में कहवा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। आनन्द, विलास और शौक की वस्तुओं के व्यापार में चाय, तम्बाकू, शराब आदि मादक वस्तुओं की अपेक्षा कहवा का महत्व अधिक है। पिछले दो महायुद्धों के मध्यकाल में कहवे के उत्पादन और विक्रय को अधिक उपज होने के कारण बड़ा धक्का पहुँचा। इस परिस्थिति को रोकने के लिए अनेक प्रयास किये गये हैं। सन् १९४१ में अमरीकी देशों के बीच एक समझौता हुआ जिसके अनुसार अमरीका के कहवा उत्पादक देशों को संयुक्त राष्ट्र के बजार में नियमित व समान रूप से क्रय-विक्रय की सुविधा प्रदान करने का आश्वासन दिया गया। सन् १९४३ में अखिल अमरीकी कहवा बोर्ड ने अपने सदस्यों से आग्रह किया कि वे युद्धकालीन प्रभाव से पीड़ित देशों के लोगों में कहवा प्रचार बढ़ाने की चेष्टा करें। सन् १९४६ में कहवा बोर्ड ने अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने के लिए विश्वव्यापी कहवा स्थिति की जाँच की। १९६१ में ३२ निर्यातक और २२ आयातक देशों ने मिल कर कहवा उत्पादन के लक्ष्य और निर्यात की मात्रा निश्चित करने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय कहवा समझौते पर हस्ताक्षर किए थे।

(१) यहाँ की भूमि लोहे से परिपूर्ण है जो कहवे की पैदावार बढ़ाने मे आवश्यक-पदार्थ होता है। यहाँ गहरी लाल रग की मिट्टी, जो कि टेरो रोक्सा (Terra Roxa) के नाम से जानी जाती है, पाई जाती है। यहाँ पर काली मिट्टी भी पाई जाती है जिसमे लोहे और पोटाश का अंश अधिक होता है। ये कहवे के लिए अधिक उपयोगी होती है।

(२) उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो के उत्तम जलवायु (ग्रीष्म में तापक्रम कदाचित कभी ७०° फा० से ऊँचा जाता हो और सर्दी का तापक्रम ६३° फा० से कभी नीचे होता हो और सर्दी के महीने पाला रहित होते हैं) के कारण कहवे के सबसे अधिक सफल प्रदेश उष्ण कटिबन्ध के बाहरी किनारो पर १६° से २३½° दक्षिणी अक्षाशो मे स्थित हैं। इस कहवे के अधिकतर पेड पहाडियो की चोटियो पर ३,००० की ऊँचाई पर ढालो पर भी उगाये जाते है।

दक्षिणी-पूर्वी व्यापारिक हवाओं से निश्चित वर्षा भी होती रहती है (औसत ४०"–६०")। इसकी फसल ग्रीष्म के महीनो (नवम्बर, जनवरी) मे ही काटी जाती है। इसके साथ-साथ सर्दी की मौसम सूखी और चमकीली होती है और सर्दी के तीन महीनो मे औसत वर्षा ८" से कम होती है। मौसम की इस अनुकूलता के कारण कहवे के बेर एक मौसम में ही अच्छे पक जाते है और फसल को सुखाने मे भी आसानी रहती है। कभी-कभी हल्का पानी भी गिरता है लेकिन वह फसल के लिए उतना हानिकारक नही होता।

(३) कहवे के बगीचो में मजदूरों की बहुत आवश्यकता होती है क्योकि बेरों को चुनने का काम हाथों से ही करना पड़ता है। कभी-कभी तो एक ही खेत में ५०० से भी अधिक श्रमिक काम करते हैं। अत. मजदूरो की इस समस्या को हल करने के लिये उत्तरी इटली निवासियो को इनके बगीचो में काम करने के लिये इसी प्रदेश में बस जाने को उकसाया गया। यहाँ इटली के मजदूरो की इतनी अधिक माँग रहने लगी कि सॉओपालो की रियासत ने वहाँ के मजदूरो को कहवे के बगीचो में काम करने को उत्साहित करने के प्रचार में बहुत बडी राशि में धन खर्च किया।

(४) यहाँ हर-एक पेड पर बेर एक ही साथ पकते हैं। अतः फसल को एक ही साथ आसानी से इकट्ठा कर लिया जाता है, परन्तु ऐसी सुविधा अन्य जगह नही पाई जाती। अत फसल को कई बार में इकट्ठा करना पड़ता है।

(५) ब्राजील में सॉओपालो व अन्य जगहो पर कहवा का उद्योग कई विकास योजनाओ के द्वारा इतनी जल्दी बढ गया कि जब गत अर्ध-शताब्दी मे कहवा का उपयोग अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया तो वहाँ की पैदावार अपनी अनुकूल अवस्थाओ के कारण इसकी खपत से भी अधिक होने लगी। १९२० से तो ब्राजील में इतनी बढ़िया फसल होने लग गई कि जल्दी ही उसकी पूर्ति से बाजार भर गये और अन्त मे कीमतो मे भारी गिरावट आ गई।[१२] अत सरकार ने कहवा के दामो को उचित स्तर पर लाने के लिये प्रतिवर्ष जितना भी कहवा बचत मे होता उसे खरीदने लगी और इस आशा से कि बाद मे इसे अच्छी कीमत पर बेचा जा सकेगा उसे

---

१२. सन् १९२८ में कहवे का उत्पादन २७० लाख बोरे था। यह १९३२ में ३८० बोरे तथा १९३४ में १९५ लाख बोरे हो गया।

कहवे की निर्यात और यातायात मात्रा इस प्रकार है—

देश	निर्यात् (१९६०-६१) (००० टनों में)	देश	आयात (००० टनों में)
साल्वेडोर	७०	फ्रांस	१७०
ग्वाटेमाला	९८	इटली	७५
ब्राजील	१४०८	स्वीडेन	४०
कोलम्बिया	४००	इंगलैंड	१८०
वेनेजुएला	२५	प० जर्मनी	१८०
इंडोनेशिया	५७	कनाडा	५०
अंगोला	८३	सं० रा० अमरीका	१५३०
कांगो	५०	अर्जेन्टाइना	३०
इथोपिया	३०		
फ्रांसीसी प० अफ्रीका	१३०		
विश्व का योग	२,६०२		२९३५

(३) कोको (Coco or Cocoa)

कोको एक पेड का सुखाया हुआ बीज होता है जिसको पीस कर कोको और चाक्लेट बनाई जाती हैं। कोको दक्षिणी अमेरिका, ओरीनिको और अमेजन नदी की घाटियों के जंगलों का आदि पौधा है जहाँ से वह भूमध्य रेखीय आद्र प्रदेशों में ले जाया गया है। यह जंगली अवस्था में मैक्सिको के निचले मैदान, अमेजन की घाटी और ओरीनिको की घाटी में ४,००० फुट की ऊँचाई तक उगता है। अमेरिका की खोज के समय यह पनामा से मैक्सिको तक उगता था और वहाँ के निवासी इसके सूखे बीजों को मुद्रा के रूप में प्रयोग में लाते थे। १७ वीं और १८ वीं शताब्दी मे यह स्पेन व्यापारियों द्वारा यूरोप को लाया गया। इगलैंड में सबसे पहले कोको की केक १६५७ में आयात की गई। इसका स्वाद इतना अच्छा था कि यह प्रति पौंड ५ डालर पर बेची गई।[१५]

जलवायु सम्बन्धी आवश्यकताएँ

संसार में जिन क्षेत्रों में कोको पैदा किया जाता है वह सब २०° उत्तरी और दक्षिणी अक्षांशों के बीच ही स्थित हैं। चूंकि यह एक उष्ण कटिबन्धीय पौधा है अत: इसके लिए औसत तापक्रम ८०° फा० की आवश्यकता होती है। समान उच्च तापक्रम व तर जलवायु इसके लिए विशेष उपयुक्त है, इसके अलावा इसे ८०" वार्षिक वर्षा की भी आवश्यकता होती है। वर्षा का साल भर क्रमशः उचित रूप

15. *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 106.

(१) यहाँ की भूमि लोहे से परिपूर्ण है जो कहवे की पैदावार बढ़ाने में आवश्यक पदार्थ होता है। यहाँ गहरी लाल रंग की मिट्टी, जो कि **टेरो रोक्सा** (Terra Roxa) के नाम से जानी जाती है, पाई जाती है। यहाँ पर काली मिट्टी भी पाई जाती है जिसमें लोहे और पोटाश का अंश अधिक होता है। ये कहवे के लिए अधिक उपयोगी होती हैं।

(२) उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों के उत्तम जलवायु (ग्रीष्म में तापक्रम कदाचित कभी ७०° फा० से ऊँचा जाता हो और सर्दी का तापक्रम ६३° फा० से कभी नीचे होता हो और सर्दी के महीने पाला रहित होते हैं) के कारण कहवे के सबसे अधिक सफल प्रदेश उष्ण कटिबन्ध के बाहरी किनारों पर १९° से २३½° दक्षिणी अक्षांशों में स्थित हैं। इस कहवे के अधिकतर पेड़ पहाड़ियों की चोटियों पर ३,००० की ऊँचाई पर ढालों पर भी उगाये जाते हैं।

दक्षिणी-पूर्वी व्यापारिक हवाओं से निश्चित वर्षा भी होती रहती है (औसत ४०"–६०")। इसकी फसल ग्रीष्म के महीनों (नवम्बर, जनवरी) में ही काटी जाती है। इसके साथ-साथ सर्दी की मौसम सूखी और चमकीली होती है और सर्दी के तीन महीनों में औसत वर्षा ८" से कम होती है। मौसम की इस अनुकूलता के कारण कहवे के बेर एक मौसम में ही अच्छे पक जाते हैं और फसल को सुखाने में भी आसानी रहती है। कभी-कभी हल्का पानी भी गिरता है लेकिन वह फसल के लिए उतना हानिकारक नहीं होता।

(३) कहवे के बगीचों में मजदूरों की बहुत आवश्यकता होती है क्योंकि बेरों को चुनने का काम हाथों से ही करना पडता है। कभी-कभी तो एक ही खेत में ५०० से भी अधिक श्रमिक काम करते हैं। अतः मजदूरों की इस समस्या को हल करने के लिये उत्तरी इटली निवासियों को इनके बगीचों में काम करने के लिये इसी प्रदेश में बस जाने को उकसाया गया। यहाँ इटली के मजदूरों की इतनी अधिक माँग रहने लगी कि साँओपालो की रियासत ने वहाँ के मजदूरों को कहवे के बगीचों में काम करने को उत्साहित करने के प्रचार में बहुत बड़ी राशि में धन खर्च किया।

(४) यहाँ हर-एक पेड़ पर बेर एक ही साथ पकते हैं। अत. फसल को एक ही साथ आसानी से इकट्ठा कर लिया जाता है, परन्तु ऐसी सुविधा अन्य जगह नहीं पाई जाती। अत फसल को कई बार में इकट्ठा करना पड़ता है।

(५) ब्राजील में साँओपालो व अन्य जगहों पर कहवा का उद्योग कई विकास योजनाओं के द्वारा इतनी जल्दी बढ़ गया कि जब गत अर्ध-शताब्दी में कहवा का उपयोग अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया तो वहाँ की पैदावार अपनी अनुकूल अवस्थाओं के कारण इसकी खपत से भी अधिक होने लगी। १९२० से तो ब्राजील में इतनी बढ़िया फसल होने लग गई कि जल्दी ही उसकी पूर्ति से बाजार भर गये और अन्त में कीमतों में भारी गिरावट आ गई।[१२] अत. सरकार ने कहवा के दामों को उचित स्तर पर लाने के लिये प्रतिवर्ष जितना भी कहवा बचत में होता उसे खरीदने लगी और इस आशा से कि बाद में इसे अच्छी कीमत पर बेचा जा सकेगा उसे

---

१२. सन् १९०८ में कहवे का उत्पादन ७७० लाख बोरे था। यह १९२९ में ७८० बोरे तथा १९३४ में १६५ लाख बोरे हो गया।

महीनो मे और दूसरी साल के पूर्व के महीनो मे। ट्रिनीडाड मे मुख्यत साल के शुरू महीनो मे और गोल्डकोस्ट मे फल मध्य अक्टूबर से मध्य जनवरी तक चुने जाते हैं।

फसल काटने के समय नीग्रो लोग पेड के तने व उसकी नीची-नीची डालियो से पकी हुई फलियाँ तोड लेते है। वे एक पेड से दूसरे पेड पर फलियों को तोड़ने के लिये बढते रहते है और लडकियाँ नीचे पडी हुई फलियो को चुन कर अपनी टोकरियो में इकट्ठा करती रहती हैं। जब टोकरियाँ भर जाती हैं तो वे बगीचे में अलग-अलग जगहो पर ढेर लगा कर इकट्ठा कर देती है जहाँ तेज चाकुओं द्वारा फलियो के कडे छिलके हटाकर उसे दो भागो मे कर देते है। इन खुली हुई फलियो को छील कर औरते उनमे से बीज (Beans) निकाल लेती है। गूदे से ढकी हुई फलियाँ केले के पत्तो पर इकट्ठी की जाती है और उन पर बहुत सारे पत्ते ढक दिये जाते हैं या सन्दूको मे खमीर उठाने के लिए भर दी जाती है। खमीर उठाने पर फलियो को धूप में सुखा लेते हैं। जब फलियाँ बिल्कुल सूख जाती हैं तो उन्हे थैलो में भर कर कारखानो को ले जाया जाता है। ट्रिनिडाड में प्राय खच्चर की गाडियों और इक्वेडोर में मोटर द्वारा इनको पहुँचाया जाता है। कारखानों में यह फलियाँ भिन्न-भिन्न श्रेणियों मे छाँट ली जाती है। इन्हे गिरी निकाल कर बेलनो द्वारा पीसा जाता है और चूरा बना लेते हैं। इस चूरे म अर्द्ध-शुष्क पदार्थ (Paste) बनाते हैं इसमें ५०% चर्बी होती है जिसे कोको बटर (Coco Butter) कहते हैं। कोको बनाने के लिए इसमें से कुछ चर्बी निकाल दी जाती है। किन्तु जब चॉकलेट बनाई जाती है तो इसे रहने दिया जाता है।

उत्पादन क्षेत्र

कोको नई दुनिया से उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो में प्रचारित किया गया है। इसके आदर्श उत्पादन क्षेत्र विषुवत् रेखा के २०° उत्तर-दक्षिण अक्षाशों तक ही केन्द्रित हैं।



चित्र ८९ कोको उत्पादक क्षेत्र

दक्षिणी अमेरिका के ब्राजील, इक्वेडोर, वेनेजुएला, ट्रिनीडाड, डोमिनीकन, और पश्चिमी द्वीपो मे भी यह बाद में पैदा किया गया है। कोको अब घाना, नाइजीरिया, फ्रासीसी पश्चिमी अफ्रीका और आइवरी कोस्ट के विस्तृत क्षेत्रों में भी पैदा किया जाता है। सचमुच यह बहुत ही आश्चर्यजनक है कि सन् १८०८ मे जहाँ एक भी कोको का पेड न था वहाँ अब १८ लाख पेड लहलहाते हैं। यह अकेला प्रदेश ही दुनिया का लगभग आधा कहवा पैदा करता है। पश्चिमी अफ्रीका में कोको की बहुत उपज होती है। यद्यपि यहाँ भूमि व जलवायु अन्य दोनो की तरह ही है परन्तु भूमि के कुशल प्रयोग

व्यापार का ५०% प्राप्त होता है। ब्राजील की कुल पैदावार सेन्टोस, रायोडि जिनोरो या विक्टोरिया बन्दरगाह को भेज दी जाती है जो क्रमश ब्राजील की कॉफी का का ६०, ३० और १० प्रतिशत निर्यात व्यापार करते है। सेन्टोस के निवासियों का



चित्र ८७ ब्राजील मे कहवा सुखाना

जीवन पूर्णतः कहवा के व्यापार द्वारा ही प्रभावित है। ब्राजील से ६०% कहवा संयुक्त राज्य और १०% जर्मनी व फ्रास को भेजा जाता है। १९६१ मे ब्राजील से २०० लाख हंडरेडवेट कहवा निर्यात किया गया।

कोलम्बिया—कहवा के उत्पादन मे इसका स्थान दूसरा है। यहाँ उत्तम जलवायु, मिट्टी और पर्याप्त वर्षा के कारण कहवे के भाग मध्यवर्ती श्रेणियो के पूर्वी और पश्चिमी ढालो पर—जहाँ ज्वालामुखी मिट्टी पाई जाती है—४५०० से ७,००० फीट तक पाये जाते है। यहाँ का अधिकतर कहवा बोगोटा के पश्चिम मे मैग्डेलना और दक्षिण मे मैडेलीन नदियो के समीपवर्ती प्रदेशो से प्राप्त होता है। कोलम्बिया मे कुल मिलाकर ४५ करोड वृक्ष हैं और प्रति पेड पीछे प्रति वर्ष १ पौंड कहवा प्राप्त होता है। यहाँ कहवे के खेत साधारणत. छोटे है। यहाँ कहवा उच्चकोटि का, उत्तम स्वाद और सुगध वाला होता है। कहवा की किस्म अच्छी बनाने के लिए उनके बीच मे ग्वामो नामक छायादार पौधे लगाये जाते है। यहाँ के आर्थिक जीवन मे कहवे का इतना स्थान है कि कुल बोई गई भूमि के १/३ भाग पर कहवा पैदा किया जाता है। यहाँ के खेत ब्राजील की अपेक्षा छोटे है। यहाँ से १९०२-१३ मे विश्व के निर्यात का ४०%, १९३५-३९ मे १४% और १९५०-५२ मे ५६% और १९६१ मे ६८% कहवा प्राप्त हुआ।

मध्य अमरीका और पश्चिमी द्वीप समूह मे भी काफी कहवा उत्पन्न किया जाता है। अमेरिका में ब्लू माउन्टेन कहवा (Blue Mountain Coffee) विश्व का सबसे उत्तम कोटि का कहवा होता है। वर्ष भर की वर्षा और उत्तम चमकीली धूप के कारण

कोको आयात करने वाले प्रमुख देश उत्तरी-पश्चिमी यूरोप और अमेरिका के शीतोष्ण कटिबन्धीय देश हैं। सयुक्त राज्य अमेरिका संसार की समस्त उपज का ४०% लेता है और शेष उपज ब्रिटेन (२०%), स्पेन, और फ्रास (१०%), जर्मनी औ रहालैंड (८%)को जाती है। स्विट्जरलैंड और हालैंड मे कोको का आयात चाकलेट बनाने के लिए किया जाता है। कोको का आयात इस प्रकार है (१९६१ मे):—

सयुक्त राज्य अमेरिका	१८२,५०० टन
जर्मनी	८६,५०० ,,
ग्रेट ब्रिटेन	६४,००० ,,
फ्रास	४७,००० ,,
हालैंड	७३,८०० ,,
बेल्जियम	७,७०० ,,

कोको का विश्व के विभिन्न देशो मे प्रति व्यक्ति पीछे उपभोग इस प्रकार है —

नीदरलैंड्स १५ पौं०, इगलैंड ५ पौं०, स्विट्जरलैण्ड ४ पौ० सयुक्त राज्य अमरीका ३·६ पौ०, कनाडा ३·६ पौ०, जर्मनी ३ पौ०, बेल्जियम २·५ पौं०; फ्रास २·४ पौं०।

(४) तम्बाकू (Tobacco)

तम्बाकू उत्तरी अमेरिका के उष्ण कटिबन्धीय भागो का आदि पौधा है। सन् १७४२ मे जब कोलम्बस अमेरिका पहुँचा तो इसने इसका प्रयोग वहाँ के निवासियो को—अग्रेजी के वाइ (Y) शब्द के आकार की नली पीते हुए देखा था—को करते देखा। वहाँ से १६ वी शताब्दी मे स्पेन निवासी इसको यूरोप लाये और बाद मे इसका प्रचार दुनिया के दूसरे देशो मे भी बड़ी तेजी के साथ हुआ। इसकी पत्तियाँ खाने, सूंघने और धूम्रपान करने मे तो काम आती ही हैं, इसके पौधे के बचे-खुचे भाग कीड़ मारने और खाद देने के काम आते है।

जलवायु सम्बन्धी

यह ५२° उत्तरी और ४०° दक्षिणी अक्षाशो के बीच पैदा की जाती है। तम्बाकू का पैदावार का क्षेत्र काफी विस्तृत है। यो तो यह विषुवत् रेखा और उष्ण कटिबन्ध की उपज है परन्तु शीतोष्ण कटिबन्ध मे भी यह आसानी से पैदा की जा सकती है। इसी कारण यह उत्तर मे कनाडा, स्कॉटलैंड और उत्तरी पोलैंड आदि दूर-दूर भागो मे पूर्ण सफलता के साथ बोई जा सकती है। तम्बाकू की पैदावार के लिए पाला और ओले सबसे अधिक हानिकारक हैं और यही कारण है कि इसको पहले छोटी-छोटी क्यारियो मे बोया जाता है और फिर पौधों को बड़े-बड़े खेतों मे रोप दिया जाता है।



चित्र ९०. तम्बाकू का पौधा

कहवा उद्योग को दूसरा धक्का द्वितीय महायुद्ध के कारण लगा जब कि ब्राजील मे २५ लाख एकड भूमि कहवा की खेती के लिए बेकार होगई। पूर्वी द्वीप समूह पर जापानियो का अधिकार हो जाने से भी हानि हुई और अफ्रीका व एबीसीनिया जैसे देशो में मजदूरी की समस्या मे भी इस उद्योग को हानि पहुँची। अब यह समस्यायें समाप्त हो चुकी हैं। किन्तु नई समस्यायें कहवे के उपयोग के विकास और विकास से सम्बन्धित है। जैसे—

(१) करोड़ों मनुष्यो के रहन-सहन के नीचे स्तर के कारण उनकी क्रय-शक्ति में ह्रास हो गया है।

(२) विनिमय दर और मुद्रा की अस्थिरता के कारण अनेक योरोपीय देशों मे आर्थिक सतुलन बिगड़ गया है।

(३) चाय जैसी अन्य मादक वस्तुओ की प्रतिस्पर्धा से भी कहवा को हानि हुई है।

(४) विभिन्न देशो मे, विशेष कर यूरोप में आयात के नियत भागों मे सरकारी विधेयक नीति, चुगी और देशी करो के कारण कहवे के आयात, वितरण और उपभोग को विशेष धक्का पहुँचा है।

कहवा उन्ही देशो से निर्यात किया जाता है जहाँ इसकी पैदावार बहुत होती है। अत: विश्व की माँग का ५०% कहवा ब्राजील और शेष कोलम्बिया, इन्डोनेशिया, साल्वेडोर और ग्वाटेमाला तथा भारत से निर्यात किया जाता है। कहवा आयात करने वाले प्रमुख देश वे हैं जहाँ अग्रेजी रीति-रिवाजो का प्रचलन नही है। इन्ही देशो मे उपभोग भी अधिक होता है। मुख्य आयातक सयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, कनाडा, जर्मनी, फास, बेलजियम, स्वीडेन, स्विट्जरलैंड और नार्वे हैं।

निम्न तालिका में विभिन्न देशों मे प्रति व्यक्ति के पीछे कहवे का उपभोग बताया गया है (१९६१) :—[14]

स० रा० अमेरिका	१६ ७ पौंड	फ्रास	६'६ पौंड
स्वीडेन	१५'८ पौंड	नीदरलैंड	५ ६ पौंड
डेनमार्क	११'६ पौंड	स्विट्जरलैंड	८'८ पौंड
नार्वे	१३ ७ पौंड	जर्मनी	३'८ पौंड
बेलजियम	११ ३ पौंड	इगलैण्ड	१'३ पौंड
फिनलैण्ड	१२'३ पौंड	कनाडा	७ १ पौंड
		ब्राजील	१३ २ पौंड

ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि यदि विश्व के सभी मनुष्य स० रा० अमरीका या स्वीडेन के निवासियो जितने कहवे का उपभोग करने लगें तो माग की पूर्ति के लिए ७ से ८ गुना उत्पादन अधिक बढ़ाना पड़ेगा। इसके लिये आधे से अधिक नई भूमि काम में लानी पड़ेगी।

14. **Tea and Coffee Trade Journal New York.**

लेकिन जब भूमि सख्त व तापक्रम ऊँचा होता है तो पत्तियाँ जाड़ी व तेज स्वाद वाली होती हैं।

उत्पादन क्षेत्र

यद्यपि तम्बाकू की खेती विश्व के ६० से अधिक देशों में होती है किन्तु ५०% से अधिक तम्बाकू तो सं० रा० अमेरिका, चीन और भारत से ही प्राप्त होती है। अन्य उत्पादक देश रूस, जापान, ब्राजील और टर्की हैं।

संसार में संयुक्त राज्य अमेरिका ही एक ऐसा देश है जहाँ कि कुल पैदावार का ४०% तम्बाकू पैदा होता है। संयुक्त राज्य में तम्बाकू का क्षेत्र मेरीलैंड स्टेट्स में होता हुआ वर्जीनिया व उत्तरी केरोलीना तक फैला हुआ है। वैसे संयुक्त राज्य की ९० प्रतिशत तम्बाकू छ स्टेट्स से ही पैदा की जाती है जो क्रमशः केन्टकी, उत्तरी केरोलीना, वर्जीनिया, टिनेसी, दक्षिणी केरोलिना और ओहियो हैं। विल्सन, रिचमंड, पीटर्सबर्ग और डरहम नगर तम्बाकू के प्रसिद्ध केन्द्र हैं। इन स्थानों में खाने का तम्बाकू, सुंघनी (Snuff) और सिगरेट बनाने के बड़े-बड़े कारखाने हैं। दूसरा प्रधान क्षेत्र केंटकी है। इस क्षेत्र में लेक्सिंगटन और लुईस्विले नगरों में तम्बाकू के कारखाने हैं। केंटकी नगर विश्व में तम्बाकू की पत्तियों की सबसे बड़ी मण्डी है। वर्जीनिया से बनने वाली सिगरेट वर्जीनिया सिगरेट के नाम से संसार भर में प्रसिद्ध है।

क्यूबा—क्यूबा की तम्बाकू अपने उत्तम स्वाद के लिये बहुत प्रसिद्ध है लेकिन सच बात तो यह है कि अब वहाँ पर वैसी किस्म पैदा नहीं होती। वहाँ विशेषकर



चित्र ९२. क्यूबा में तम्बाकू का खेत

तम्बाकू पाईनर डेल रिया (Pinar del Rio) जिले से ही आती है। यहाँ क्यूबा के

से होते रहना बहुत लाभदायक होता है। लेकिन वर्षा की यह मात्रा मिट्टी की मोटाई व उसके गुण और वायु की नमी आदि पर घटती-बढ़ती रहती है जहाँ सिंचाई की व्यवस्था होती है वहाँ बहुत कम वर्षा होने पर भी काम चल जाता है।

कोको का पेड़ तेज हवा व अधिक गर्मी सहन नहीं कर सकता। अतः तेज हवा व प्रचण्ड गर्मी से इसकी रक्षा करने के लिए यह उत्तरी क्षेत्रों में बोया जाता है जहाँ हवा हल्की या बिल्कुल ही नहीं होती जिससे कि फल के डोडे टूट न सकें। कोको की कुछ उत्तम किस्में समुद्र की सतह से सैकड़ों फीट ऊँचाई पर नदियों की घटियों के ढालों पर पैदा की जाती है। पौधे को गर्मी से बचाने के लिए केले आदि अन्य छायादार वृक्षों की ओर लगाया जाता है। लेकिन कई स्थानों में कोको के पेड़ समानान्तर इस रीति से लगाये जाते हैं कि जिससे उनके फल उन्हीं की छाया में धूप से बच सकें।

इसकी पैदावार के लिये उपजाऊ व गहरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। ऐसी मिट्टी नदियों से बनाये गये मैदानों या समुद्रतटीय निचले भागों में पाई जाती है। इसके पेड़ २५ से ४० फीट की ऊँचाई तक होते हैं जो कि तीन वर्ष



चित्र ८८. ट्रिनीडाड में कोको के फल एकत्रित कर सुखाना

बाद फल देने लगते हैं। लेकिन पूरी फसल तो १०-१२ वर्ष से पूर्व किसी प्रकार प्राप्त नहीं की जा सकती है। एक पेड़ से ३०-४० साल तक लगातार फसल मिल सकती है। एक पेड़ पर ३० से ६० तक फलियाँ लगती हैं।

इसके पेड़ की डालियों में फूल के गुच्छे खिलते हैं। इन फूलों की पंखड़ियाँ खिलने पर उनमें से डोडियाँ फूट निकलती हैं जो जल्दी ही ७ से १२ इन्च तक लम्बी बढ़ जाती हैं। हरेक डोडी में सफेद गूदे से परिवेष्ठित बीस से चालीस तक लाल फलियें होती है। अधिकतर देशों में फल दो बार काटे जाते है। एक साल के अन्तिम

तम्बाकू, अधिकतर सिगरेटों में सम्मिश्रण के लिये तथा पाइप और पंग में सम्मिश्रण के लिए उपयोग किया जाता है। नाटूर(देशी) तम्बाकू किसी खास जगह में 'चुट्ट' नाम के प्रसिद्ध छोटे तथा हाथ के लपेटे जाने वाले चुरटों को बनाने के काम आता है। इन तम्बाकू की हल्की तथा भूरे रंग की पत्तियाँ सस्ते ब्रैंड के सिगरेटों के निर्माण के लिए उपयोग की जाती हैं। गहरे भूरे रंग की पत्तियाँ, पाइप तम्बाकू को विभिन्न ब्रैंडो को तैयार करने के लिये ब्रिटेन को निर्यात की जाती है। दक्षिण मद्रास मे डिंडीगल, तिरुचिरापल्ली और कोयम्बतूर जिलो मे उगाया गया प्रमुख जाति का तम्बाकू चुरट, और सिगार के बनाने मे तथा खाने वाले तम्बाकू के तैयार करने मे उपयोग किया जाता है। भरने वाला तम्बाकू नाना प्रकार के तम्बाकू के सकरण मे उगाया जाता है। इस सकरण का अनुपात तो सिगार के वांछित गुण पर आधारित रहता है। डिंडीगल प्रदेश मे लपेटी जाने वाली तथा भरने वाली तम्बाकू पत्ती कुछ सीमित परिमाण मे ही उगाई जाती है।

ब्राजील—ब्राजील अपनी घरेलू मांग की पूर्ति के लिए काफी तम्बाकू पैदा करता है। तम्बाकू की खेती इसके पूर्वी तटीय भागो में की जाती है। यह देश निर्यात करने के लिए ६ करोड पौंड तम्बाकू उगाता है और इसका स्थान तम्बाकू के निर्यात मे ससार मे छठा है। ६० प्रतिशत निर्यात बाहिया बन्दरगाह से होता है। यहाँ के तम्बाकू उगाने वालो को विदेशी व्यापार कम्पनियो द्वारा पूँजी की सहायता दी जाती है। यहा छोटे-छोटे किसानो के परिवारो द्वारा तम्बाकू उगाया जाता है जो प्रति एकड केवल ३०० पौंड का उत्पादन करते। हैं

सुमात्रा—सुमात्रा का तम्बाकू क्यूबा के तम्बाकू की तरह बहुत ऊँची कीमत का होता है। यह बहुत पतली पत्ती वाला और लोचदार होता है। अतः इसका सबसे अधिक प्रयोग सिगार बनाने मे किया जाता है। सुमात्रा में लपेटने का तम्बाकू (Wrapper tobacco) डच पूँजी द्वारा बडे पैमाने पर उगाया जाता है। एक डच कम्पनी अकेली ही १६,००० चीनी मजदूरों के २०० यूरोपीय प्रबन्धकों द्वारा काम करवाती है। सुमात्रा मे अधिकाश तम्बाकू की खेती पूर्वी मैदानो में आदिम जातियो से प्राप्त की गई भूमि पर की जा रही है। तम्बाकू मे उत्तम गुणो के लिए भूमध्यरेखीय नमी और आँधी की अनुपस्थिति होनी चाहिए। यहाँ की तम्बाकू उगाने वाली कम्पनियों के प्रधान कार्यालय अधिकतर एम्सटरडम में स्थित हैं। डच पूर्वी द्वीप समूह की सारी उपज एम्सटरडम को भेजी जाती है। यहाँ से तम्बाकू का निर्यात दूसरे देशो को किया जाता है। यहाँ दक्षिणी यूरोप का तम्बाकू भी इकट्ठा किया जाता है।

फिलीपाइन द्वीप—यहाँ के तम्बाकू का पूर्वी देशो मे उतना ही महत्व है जितना कि क्यूबा के तम्बाकू का पश्चिमी देशो मे है। यहाँ निर्यात क्यूबा के बराबर ही है। सबसे उत्तम प्रकार का तम्बाकू उत्तरी लूजोन प्रात को कागायिन नदी की घाटी में उगाया जाता है। यहाँ हर साल इस नदी द्वारा नई मिट्टी की तह जमा दी जाती है। यहाँ से तम्बाकू अपारी बन्दरगाह द्वारा मनीला को भेजा जाता है जहाँ जगत प्रसिद्ध मनीला सिगार बनाया जाता है। दक्षिणी फिलीपाइन का घटिया तम्बाकू स्पेन को भेज दिया जाता है।

चीन—इस देश मे तम्बाकू दक्षिणी और मध्यवर्ती उपजाऊ बाढ़ वाले मैदानो मे उगाया जाता है। यहाँ भारत के समान ही उत्पादन होता है। यहाँ देश की

और अंग्रेजो के अनुभवी प्रबन्ध के कारण यह अन्य देशो की अपेक्षा विशेष महत्वपूर्ण हो गया है। यहाँ कोको अधिक उत्पन्न होने के मुख्य कारण इसका समुद्री मार्ग पर स्थित होना और उपज के क्षेत्रों व बन्दरगाहों के बीच यातायात की सुविधाओ का पाया जाना है। यहाँ कोको के बाग आदि-निवासियो के अधिकार में हैं।

नीचे की तालिका में विश्व में कोको का उत्पादन दिखलाया गया है—

कोको का उत्पादन (हजार मैट्रिक टनों में)

देश	१९३४-३८	१९५६-५७	१९५७-५८	१९५८-५९
घाना	२६६	२६७·८	२१०·४	२४५
नाईजीरिया	९१	१३७ २	८९ ८	१३८
फ्रांसीसी प० अफ्रीका	४७	७३ ०	४५ ५	४६
कैमरून	२५	५९ ९	६५ २	५७
ब्राजील	१२४	१६० ९	१६२	१६५
कोलम्बिया	—	१५ ४	१५ २	१६
इक्वेडोर	२०	२६ ३	२५	२८
वैनेजुएला	१७	१५ २	१६ ८	१४
डोमीनीकन	२३	३३ २	३५ ४	३०
मैक्सिको	—	१४ १	१५ ३	१६
एशिया (लंका, इंडोनेशिया, फिलिपाइन्स)	—	५ ८	५ २	५·६
ओसीनिया (न्यूगिनी पैपुआ, न्यू हैब्रेडीज, प० समाओ)	—	६ ७	७·९	९·४
विश्व का योग	२९९	—	७७५	८५५

१९६१–६२ मे कोको का कुल उत्पादन १,१३४,००० टन का था। इसमें से घाना मे ४ १ ला० टन, ब्राजील मे १ ४ लाख टन, नाईजीरिया मे १·९ ला० टन; फ्रासीसी अफ्रीका में १ ७ ला० टन और अन्य देशों मे २·२ लाख टन उत्पादन था।

व्यापार—ससार का सारा कोको भूमध्यरेखीय प्रदेशो से ही प्राप्त होता है क्योंकि इन प्रदेशो की जलवायु उष्ण के कारण घरेलू खपत थोड़ी ही होती है। अस्तु कोको उत्पन्न करने वाले देशो से ही बड़ी मात्रा मे निर्यात किया जाता है। मुख्य निर्यातक—घाना, ब्राजील और नाईजीरिया हैं जो कुल निर्यात का ७५% बाहर भेजते हैं। शेष कोको डोमीनिका, फ्रासीसी कैमरून और पश्चिमी अफ्रीका, टोगोलैंड, वेनेजुएला, इक्वेडोर, कोलम्बिया आदि से भेजा जाता है। नीचे की तालिका मे कोको का निर्यात बताया गया है :—

(१९६१)

घाना	२४०,००० टन	फ्रासीसी कैमरून	८०,००० टन
ब्राजील	१५०,००० "	वेनेजुएला	२०,००० टन
नाईजीरिया	१२०,००० "	इक्वेडोर	३५,००० टन
डोमीनिका	१८,००० "		

और टर्की आदि देशों में आती है। जर्मनी अपने यहाँ तम्बाकू अमेरिका, तुर्की, बाल्कन राष्ट्र, इण्डोनेशिया और लेटिन अमरीकी देशों से मँगवाता है। कनाडा यद्यपि अपनी तम्बाकू निर्यात करता है—किन्तु सिगार की पत्ती

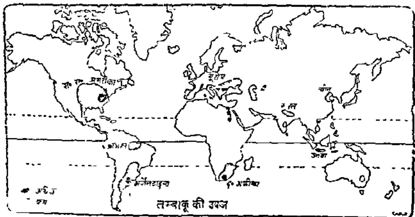
देश	१९३४-३८ (००० मै० टनों में)	१९६१ (००० मै० टनों में)	उपज प्रति १००० हैक्टेअर
भारत	२४३ ०	२६०·१	७ २
कनाडा	२८ ५	८३ ८	१५·८
दक्षिणी रोडेशिया	१० ५	५५·१	७·९
न्यासालैंड	८·०	१२·०	—
अमेरिका	५९०·०	१०१७ ८	१५·१
चीन	६५०·०	६०७ ८	१० ७
ब्राजील	९२ ७	१४९·७	८·०
इण्डोनेशिया	१११ २	—	—
जापान	६३ ५	११३·०	१६·०
तुर्की	५५ ४	९८·०	६·३
इटली	४२ ५	६६·१	१४ २
फ्रांस	३५ ७	५६·९	१९·४
बर्मा	४५ २	४८·३	९ ०
मैक्सिको	१५·४	३७·६	१०·१
बल्गेरिया	३१ २	२९·५	११·२
क्यूबा	२१·९	४७·५	७ ७
अर्जेन्टाइना	१३·३	२८·२	८·८
दक्षिणी अफ्रीका	९·१	१५·६	—
अल्जीरिया	१९.१	२०·१	६·४
फिलीपाइन	३४·७	३०·०	—
जर्मनी	३१·३	—	—
बेल्जियम	६·३	४·१	२३·५
स्पेन	७·१	३०·०	१३·०
पाकिस्तान	१५१·४	९२·५	११·४
विश्व का योग	२७२०	३५१०	१०·०

ऐसा करने का उद्देश्य यह है कि छोटी-छोटी क्यारियो मे पौधो को सूखी पत्तियो व ऐसे ही हल्के पदार्थो से ढक दिया जाता है जिससे पौधे पर पाले का विनाशकारी प्रभाव न पड सके। इसकी पैदावार की मौसम बहुत छोटी होती है। इसको प्रचुर मात्रा मे तरी की आवश्यकता होती है और पकने के लिए कम से कम १८० दिन पाले रहित होने चाहिए। पौधे के पूर्ण विकास के लिए ६०° से १०५° फा० तक का तापक्रम तथा २०'' से ४०'' तक की वर्षा पर्याप्त होती है किन्तु जड़ो में पानी नहीं जमना चाहिए। चूंकि तम्बाकू का पौधा भूमि की उर्वरा शक्ति को बहुत जल्दी नष्ट कर देते है अत इसको ऐसी भूमि की आवश्यकता होती है जो चूना, पोटाश, ह्यूमस व उपजाऊ तत्वो में धनी हो। इसकी पैदावार भूमि की उर्वरा शक्ति को तीन या चार साल में पूर्णत नष्ट कर देती है। अत काफी खाद की आवश्यकता पड़ती है। तम्बाकू की पौध लगाने, काटने, पत्तियो के सुखाने और तैयार करने में बहुत से सस्ते मजदूरो की आवश्यकता पड़ती है। इस कारण तम्बाकू की खेती गहरी खेती के रूप मे की जाती है और सिर्फ उन्ही देशो मे की जा सकती है जहाँ काफी मात्रा मे सस्ते मजदूर मिलते हो। अब सयुक्त राज्य मे इसकी खेती मशीनो द्वारा की जाने लगी है। इसकी खेती समुद्र तल में लगा कर ४,००० फुट की ऊँचाई तक भी की जा सकती है।

पहले तम्बाकू के पौधो को नर्सरी मे लगाया जाता है और जब यह ६'' बडा हो जाता है तो इसे अन्यत्र रोपा जाता है। साधारणत इसका पौधा ४ से ५ फीट ऊँचा होता है।

किस्में

तम्बाकू का कई किस्में होती हैं, लेकिन पौधे की किस्म पर ही इसकी किस्म निर्भर करती है। इसकी किस्म मिट्टी, अपने रग, वजन व खाद आदि पर भी निर्भर करती है। मौसम मे हल्के परिवर्तन व पत्तियो की छँटनी व सफाई का भी इसकी



चित्र ६१. तम्बाकू के क्षेत्र

किस्म पर बडा प्रभाव पड़ता है। वस्तुत. यह कहा जा सकता है कि ठंडी, नम ग्रीष्म ऋतु व हल्की नरम भूमि होने पर पत्तियाँ अच्छे रेशे वाली व कम तेज होती हैं,।

अध्याय

फल, तिलहन एवं मसाले

(FRUITS, OILSEEDS & SPICES)

फल (Fruits)

व्यापारिक पैमाने पर फलों की पैदावार के लिये भौगोलिक दशाओं की अपेक्षा आर्थिक तथा अन्य दशाओं का महत्व अधिक होता है। अतः फलों की पैदावार और उनका व्यापार अत्यन्त स्थानीय होता है। शीत-भण्डारों (Refrigerator) के विकास और सुलभ समुद्री यातायात के साधनों की सुविधा के कारण अब फलों का व्यापार घरेलू स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। फलों को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है —

(क) उष्ण कटिबन्धीय फल (Tropical Fruits)—इन प्रदेशों के फलों में केला, अनन्नास, आम, खजूर अमरूद और खरबूजा आदि फल सम्मिलित किये जाते हैं।

(१) केला (Banana)—दक्षिण-पूर्वी एशिया के 'उष्ण कटिबन्धीय' प्रदेशों का प्रमुख फल है। भारत और दक्षिणी चीन इसके उत्पत्ति स्थान माने गये हैं। यह १५१६ ई० में पश्चिमी द्वीप समूहों में ले जाकर लगाया गया जहाँ जलवायु दशायें द० पूर्वी एशिया से मिलती-जुलती थी। वहाँ से इसकी खेती पश्चिमी गोलार्द्ध के उष्ण कटिबन्धीय भागों में फैल गई। सन् १९०० ई० के बाद से तो इसके उत्पादन, यातायात तथा व्यापार में अनेकों बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ लगी हैं और केले का व्यापार यूरोप, संयुक्त राज्य अमरीका, जापान तथा अर्जेन्टाइना जैसे देशों में बढ़ गया है और इसके लिए केले के उद्यान दक्षिणी अमरीका के मध्यवर्ती भागों में, मध्य अमरीका और अफ्रीका के मध्यवर्ती क्षेत्रों में भी लगाये गये है।[1]

इनके लिए लम्बी गर्मी और अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है। इसके लिए ७५° से ८५° फा० तक की गर्मी पर्याप्त होती है किन्तु ५०°फा० से कम गर्मी में यह नहीं पनपता। वर्षा की मात्रा ७२" के लगभग आवश्यक होती है। किसी भी महीने में औसत वर्षा २" से कम न होनी चाहिए। चूँकि एक पौधे पर ५० से ६० पौंड केले लगते हैं, अतः तेज हवायें इसके लिए प्रतिकूल रहती हैं। पर्याप्त धूप से केले के फल में स्टार्च पैदा होता है जो अन्ततः शक्कर या मिठास में बदल जाता है। यह निम्न ढालू भूमि पर, जहाँ जल का निकास अच्छी तरह होता है, अच्छी प्रकार उगता है। इसके लिए गहरी उपजाऊ मिट्टी जिसमें २० से ४०% चिकनी मिट्टी का मिश्रण हो बहुत ही उपयुक्त होती है। सूखा मौसम, बाढ़ें या तूफान आने पर फसल नष्ट हो जाती है।

---

1. *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 105.

मियरा डी लॉस पर्वतो के ढालो पर भी तम्बाकू पैदा की जाती है। अब वहाँ तम्बाकू बहुत बडी मात्रा मे बाहर से मँगवाई जाती है जो सिगरेट बनाने के काम मे लाई जाती है। हवाना बन्दरगाह से उनका निर्यात होने के कारण इनका नाम ही हेवेना सिगरेट पड़ गया है।

भारत—भारत मे तम्बाकू का उत्पादन छ विभिन्न प्रदेशो मे केन्द्रीकृत है:—

(१) गुंटूर प्रदेश—इसमे आध्र के गुटूर, कृष्णा, पूर्वी गोदावरी, तथा पश्चिमी गोदावरी जिले, और विशाखापट्टनम जिले सम्मिलित हैं। इस प्रदेश मे अधिकतर गर्म हवा से सिझाये गये तथा सूर्य की धूप से सिझाये गये विभिन्न प्रकार के **वर्जीनिया तम्बाकू** तथा **नाटु** (देशी) तम्बाकू भी उगाये जाते है। लका नामक जिला विशेष का तम्बाकू तो पूर्वी गोदावरी तथा कृष्णा जिलों मे उगाया जाता है और यह मुख्यत छोटी पेंसिल के माफिक हाथ से लपेटी जाने वाली चुरटो के बनाने मे उपयोग किया जाता है।

(२) उत्तर बिहार और बंगाल प्रदेश—इसमे बिहार के मुजफ्फरपुर, दरभगा, मुघेर और पुर्निया जिले तथा पश्चिमी बगाल के जलपाइगुडी, माल्दा, हुगली, कूच बिहार, बरहमपुर और दिनाजपुर जिले सम्मिलित है। इस प्रदेश मे हुक्का के लिए उपयोगी **एन टबैकम** और **एन रस्टिका** की विविध किस्मे उगाई जाती है। उनके स्थानीय नाम ये हैं—(१) विलायती, (२) मोतिहारी, और (३) जाति। गंगा के ढालू मैदान की उपजाऊ मिट्टी इसकी कृषि के लिए आदर्श है।

(३) उत्तर प्रदेश और पजाब प्रदेश—इसमे उत्तर प्रदेश के बनारस, मेरठ, बुलन्दशहर, मैनपुरी, सहारनपुर और फर्रुखाबाद जिले, पजाब के जालधर, गुरदासपुर, अमृतसर और फिरोजपुर जिले सम्मिलित है। इस प्रदेश मे हुक्का के लिए तथा खाने के लिए उपयोगी कलकतिया किस्म का तम्बाकू उगाया जाता है।

(४) चरोतार प्रदेश—इसमे गुजरात राज्य के कैरा जिले के आनन्द, बोरसद, पेटलाद, नाडियाद तालुक सम्मिलित है। इस प्रदेश की विविध किस्मो का बीडी का तम्बाकू उगाया जाता है। यहाँ वर्जीनिया तम्बाकू भी उगाने के लिए कोशिशें की जा रही है। यहाँ इसकी कृषि रेतीली मिट्टी मे होती है।

(५) निपानी प्रदेश—महाराष्ट्र मे कोल्हापुर, सागली, मिराज, बेलगाव तथा सतारा जिले सम्मिलित हैं। इस प्रदेश मे मुख्यत बीडी का तम्बाकू उगाया जाता है यहाँ यह गहरी काली और गहरे लाल रग की मिट्टी बोई जाती है।

(६) दक्षिण मद्रास—इसमें मद्रास राज्य के मदुराई और कोयम्बतूर जिले सम्मिलित है। इस प्रदेश मे सिगार भरने वाला, लपेटे जाने वाला तथा खाने वाला तम्बाकू अधिकतर उगाया जाता है।

तम्बाकू की किस्म—*एन रस्टिका* (En Rustica) किस्म का अधिकाश भाग हुक्का के लिए उपयोग किया जाता है।

एन टबैकम (En Tobacum) किस्म का तम्बाकू तो सिगरेट, बीड़ी, सूँघनी और खानी तम्बाकू को बनाने के काम आता है।

वर्जीनिया तम्बाकू, जो अधिकतर आन्ध्र राज्य मे उगाया जाता है और सिगरेट बनाने के काम आता है, व्यापार की दृष्टि से अत्यन्त प्रधान है। **बर्ली**

अधिक न बहुत कम वर्षा होती है। यह अधिकतर भारत में पैदा होता है। आम भारत का प्रमुख फल है। यह देश के प्रायः सभी भागों में पैदा किया जाता है। किन्तु वर्षा काफी होने के कारण एवं उपजाऊ और चिकनी मिट्टी होने के कारण गंगा-यमुना के मैदानों में आम बहुत होता है। उत्तरी भारत में आम पकने का मौसम जून से अगस्त तक और दक्षिणी भारत में इससे पहले ही शुरू हो जाता है। भारत में आम पैदा करने वाले मुख्य राज्य बिहार, मध्य मद्रास, उत्तर प्रदेश, दक्षिणी पूर्वी राजस्थान और महाराष्ट्र हैं।

(४) खजूर (Date Palm)—इसका आदि स्थान मरुस्थल माने जाते हैं। ६००० वर्ष पूर्व इसका उत्पादन बैबीलोनिया में किया जाता था। इसका फल कच्चा ही या सुखा कर खाया जाता है। इससे शराब, रोटी, सब्जी आदि भी बनाई जाती है। जब खजूर का वृक्ष बहुत पुराना हो जाता है तो इसके ऊपरी भाग को, जिसे 'गोभी' कहा जाता है, हटाकर पका लेते हैं और बहुत ही स्वादिष्ट भोजन बना लेते हैं। इसके तनों की लकड़ियों से फर्नीचर तथा अन्य टिकाऊ सामान बनाया जाता है। पत्तियाँ पशुओं को खिलाने, चटाइयाँ तथा परदे बनाने और छतों पर छाने के लिए प्रयुक्त की जाती है। इसके बीज जलाकर धातु गलाने के लिए ईंधन की तरह काम में लाये जाते हैं। यह मरुस्थल निवासियों के लिए एक प्रकार से कल्प वृक्ष ही है।

यह मुख्यतः उष्ण कटिबन्धीय गर्म और शुष्क भागों में ही पैदा की जाती है। यदि इसकी जड़ों में जल रहे तथा इसका ऊपरी भाग धूप में रहे तो यह आदर्श जलवायु कहा जा सकता है।

इसका सबसे अधिक उत्पादन फारस की खाड़ी से १०० मील दूर शतुल-अरब नदी के दोनों ओर २ मील चौड़ी पट्टी में किया जाता है। यहाँ बगदाद और बसरा दोनों ही खजूर के व्यापार के मुख्य केन्द्र हैं। अरब, ईरान, उत्तरी अफ्रीका के अनेकों मरुस्थान (जो नील नदी से लगाकर अटलांटिक महासागर तक फैले हैं) विशेषकर अल्जीरिया और सहारा में, तथा एरीजोना और कैलीफोर्निया में भी खजूर पैदा किया जाता है। इन्हीं देशों से इसका निर्यात किया जाता है।

(ख) शीतोष्ण कटिबन्धीय फल (Temperate Fruits)

शीतोष्ण कटि- बन्धीय फल दो भागों में बाँटे जा सकते हैं—(१) समशीतोष्णीय फल, (२) शीत शीतोष्णीय फल।

समशीतोष्ण फल (Warm Temperate Fruits)—ये फल उन प्रदेशों में पैदा किये जाते हैं जिनमें या तो भूमध्यसागरीय जलवायु या चीनी जलवायु पाई जाती है। इस कोटि के मुख्य फल ये हैं - रसीले फल (Citurs fruits)—नारंगी, सन्तरा, नींबू, चकोत्रा, खट्टा अंगूर, अंजीर, बादाम, आड़ू, खुबानी, शफ्तालू आदि। ये सब भूमध्य सागरीय जलवायु में पैदा किये जाते हैं।

ये फल अधिकतर भारी होते हैं अतः इनका यातायात व्यय अधिक होता है। इसलिए इनका उत्पादन अर्द्ध-उष्ण-कटिबन्धीय उन क्षेत्रों में होता है जो बड़े बाजारों के निकट हैं। स० रा० अमेरिका में ऐसे क्षेत्र फ्लोरिडा, कैलीफोर्निया, टैक्सास और एरीजोना हैं। यूरोप में ये प्रदेश भूमध्य सागर के किनारे स्थित हैं। ये दोनों क्षेत्र मिलकर विश्व के उत्पादन की ७०% नारंगी; ८५% नींबू और ९३% अंगूर पैदा करते हैं।

भीतरी मांग अधिक होने के कारण निर्यात बिल्कुल भी नहीं किया जाता है। यहाँ के उत्पादन से देश की भीतरी माग भी पूरी नही हो पाती है।

यूरोप—तम्बाकू का उत्पादन इस महाद्वीप पर फ्रास, जर्मनी, इटली इत्यादि देशो मे होता है। आबादी घनी होने के कारण उत्पादन की मात्रा घरेलू माँग की पूर्ति मे अपर्याप्त रहती है। जर्मनी की प्रति एकड सयुक्त राज्य की उपज से दुगुनी होती है। डेन्यूब नदी के बेसिन के देश और बाल्कान प्रायद्वीपीय सभी देश तम्बाकू का उत्पादन करते हैं। हगरी, बलगारिया, रूमानिया, युगोस्लाविया और यूनान मे यह एक प्रमुख फसल समझी जाती है। यूगोस्लाविया मे टर्की जाति का तम्बाकू उगाया जाता है। ग्रीस एक महत्वपूर्ण निर्यात करने वाला देश है। यहाँ थेसीला के मैदान मे उगाया जाने वाला तम्बाकू जर्मनी, सयुक्त-राज्य और मिश्र को सिगरेट बनाने के लिए भेजा जाता है। मिस्र मे सिगरेट इसी तम्बाकू से बनाई जाती है। फ्रासीसी पूँजीपतियो के निरीक्षण में अलजीरिया मे तम्बाकू की खेती बढाई जा रही है। काहिरा नगर के सिगरेट उद्योग के लिये यूनान से तम्बाकू आयात किया जाता है।

अन्य देश—ब्राजील के अतिरिक्त दक्षिणी अमेरिका मे कोलम्बिया, पैरेग्वे और अर्जेन्टाइना में भी तम्बाकू उगाया जाता है। प्रथम दो देशो मे तम्बाकू का निर्यात यथेष्ट मात्रा मे किया जाता है।

तम्बाकू की प्रति एकड उपज भूमि की किस्म अन्य अवस्थाओ के अनुसार अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। गहरी खेती वाले पश्चिमी यूरोप के कुछ देशों में प्रति एकड उत्पादन २ हजार पौड तक रहा है। उत्तरी अमेरिका मे गत १५ वर्षो मे खेत की प्रणाली मे सुधार हो जाने से प्रति एकड उत्पादन १३,००० पौंड है। दक्षिणी रोडेशिया में यह केवल ७०० पौंड प्रति एकड है। एशिया और जापान मे प्रति एकड उत्पादन लगभग १,३०० पौंड और भारत मे ७०० पौंड है। जिन देशों में विशाल परिमाण पर रासायनिक खाद का प्रयोग आरम्भ नही हुआ है वहाँ उपज का औसत कम है।

अगले पृष्ठ की तालिका में तम्बाकू का उत्पादन क्षेत्र बताया गया है :—

व्यापार

तम्बाकू के कुल उत्पादन का प्राय. $\frac{1}{2}$ वाँ भाग ही विश्व व्यापार मे आता है। अमेरिका, भारत, चीन और रूस आदि विशाल उत्पादक देशो मे उपजने वाली अधिकाश तम्बाकू वही खप जाती है। टर्की अपने यहाँ से तम्बाकू जर्मनी और पूर्वी-यूरोप के देशों को भेजता है। अमेरिका से तम्बाकू ससार के प्राय सभी मुख्य देशों को भेजी जाती है किन्तु ब्रिटेन, फिलीपाईन, इण्डोनेशिया, जर्मनी, बेल्जियम, हालैण्ड, स्वीडन, नार्वे, स्विटजरलैंड आदि देश मुख्यत अमेरिका से प्राप्त करते हैं। दक्षिण रोडेशिया से तम्बाकू आस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, नीदरलैंड और जर्मनी को तथा न्यासालैंड से ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया और ब्रिटिश केरेबियन द्वीप को भेजी जाती है।

तम्बाकू के आयात करने वाले मुख्य देश शीतोष्ण कटिबन्ध के देश ही हैं। ब्रिटेन अब भी ससार भर के सब देशो मे सब से अधिक तम्बाकू का आयात करता है परन्तु यह आयात की हुई तम्बाकू का पाँचवां भाग निर्मित अवस्था मे फिर निर्यात कर देता है। ब्रिटेन मे तम्बाकू अमेरिका, भारत, रोडेशिया, ब्राजील,

बहुत नारंगियाँ उत्पन्न करती है। पश्चिमी द्वीप समूह में भी नारंगियो की पैदावार होती है किन्तु विदेशो को यहाँ से नारंगियाँ नहीं भेजी जाती। केलीफोर्निया की रियासत मे भी नीबू नारंगी के बहुत बाग हैं। एशिया में नारंगी की पैदावार बहुत कम होती है। चीन, जापान और भारत मे भी थोड़ी-सी नारगी उत्पन्न होती है। इटली मे नारगी का उत्पादन जिनोआ के चारो ओर तथा गार्डा के किनारे होता है।

इसके अतिरिक्त अलजीरिया, सीरिया, मिश्र, ग्रीस, ट्यूनीसिया, पैलेस्टाइन, टर्की और साइप्रस मे भी नारगी अधिक उत्पन्न होती है। भारत मे नारगी और मन्तरे की कई किस्मे पैदा की जाती है। यहाँ आसाम, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र मुख्य उत्पादक है। आसाम मे ब्रह्मपुत्र की घाटी का सिलहट सन्तरा मशहूर है। हिमालय के पूर्वी भाग मे भूटान, सिक्किम और नैपाल मे भी काफी नारगी पैदा की जाती है। नागपुर के सन्तरे तो भारत भर मे प्रसिद्ध हैं। यहाँ सन्तरों के अनेको बाग है। **मौसमी** बम्बई के नासिक और पूना जिलो मे खूब पैदा होती है।

नीबू (Lemons)—यह भी चौडी पत्ती वाला सदा हराभरा रहने वाला वृक्ष है। इसका उत्पत्ति स्थान एशिया है। इसके लिए सूखी गर्मियाँ आदर्श जलवायु मानी जाती है। पौधे से वर्ष में १०-१२ बार फल प्राप्त किये जाते है। इनका आकार २½ मे २½" व्यास का होता है। रसदार फलो मे नीबू का भाग ८% होता है। नीबू के लिए उर्वरा भूमि, यथेष्ट जल, धूप तथा सम शीतोष्ण (Mild) जलवायु उपयुक्त है। इसको पाले और कीडे से बहुत हानि पहुँचती है। केलीफोर्निया मे तो बागों को गर्मी पहुँचाई जाती है जिससे पाला हानि न पहुँचा सके और कीडो की रक्षा का विशेष उपाय किया जाता है। उत्तरी इटली मे नीबू के बाग लिगूरियन तट पर केन्द्रित है जहाँ एपीनाइन पर्वतो के कारण सरद-हवाओ से इन्हे हानि नही पहुँचती। इसी प्रकार इटली के आल्पस पर्वतो द्वारा गार्डा झीलो के निकटवर्ती बाग भी पाले से बच जाते है। ट्रांसवाल मे भी उत्तरी पहाडी भागों के मध्य मे इसके बाग मिलते हैं।

नीबू अधिकतर सिसली, इटली, स्पेन, पुर्तगाल, कैलीफोर्निया, फ्लोरिडा और नैटाल तथा क्वीन्सलैंड मे बाहर भेजा जाता है। मोटे छिलके वाला खट्टा (Citron) भूमध्यसागर के समीपवर्ती प्रदेशो, जापान और भारत भेजा जाता है। इसकी पैदावार अब घट रही है तथा नीबू इसका स्थान ले रहा है।

विश्व मे सबसे अधिक नीबू इटली मे (१ करोड २० लाख बाक्स) उत्पन्न होता है। इसकी ६०% पैदावार इटली के सिसली द्वीप मे होती है। नीबू उत्पन्न करने मे दूसरा स्थान सयुक्त राज्य अमेरिका का है जहाँ लगभग १ करोड बॉक्स (एक बाक्स मे ७६ पौंड नीबू होने है) नीबू वार्षिक उत्पन्न होते है। सयुक्त राज्य अमेरिका का अधिकाश नीबू कैलीफोर्निया मे उत्पन्न होता है। तीसरा स्थान स्पेन का है जहाँ १५ लाख बाक्स नीबू उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त भूमध्य सागर के समीपवर्ती सभी प्रदेशो मे नीबू उत्पन्न होते हैं मुख्यत मिश्र मे। इसके अतिरिक्त दक्षिणी अफ्रीका, फ्लोरिडा, आस्ट्रेलिया तथा स्पेन मैक्सिको मे भी नीबू की अच्छी पैदावार होती है। इटली, कैलीफोर्निया तथा स्पेन के अतिरिक्त थोडा सा नीबू पैलेस्टाइन, सीरिया और मैक्सिको से भी विदेशो को भेजा जाता है, किन्तु पहले तीन देश ही नीबू का निर्यात करते है।

वाली तथा पूर्वी देशों की अन्य प्रकार की तम्बाकू कुछ परिमाण में मँगाता है। फ्रांस में तम्बाकू अलजीरिया, यूनान और यूगोस्लाविया से; स्पेन में लेटिन अमेरिकन देशों, फिलीपाइन्स और अमरीका से और अमेरिका में यूनान और तुर्की से, क्यूबा और पोर्टोरीको से सिगरेट में भरने का उत्तम तम्बाकू, और इन्डोनेशिया से सिगार पर लपेटने की पत्ती का तम्बाकू आता है।

नीचे की तालिका में तम्बाकू के आयात-निर्यात सम्बन्धी आंकड़े दिये गये हैं :—

निर्यात (००० मैट्रिक टन)		आयात (००० मैट्रिक टन)	
		१९६०-६१	
यूनान	२३९	जर्मनी	७८
सं० रा० अमरीका	३१	इंगलैंड	१४४
ब्राजील	५०	फ्रांस	३१
भारत	६७	सं० रा० अमरीका	६३
टर्की	६५	नीदरलैंड	३५
रोडेशिया	६५	बेल्जियम	२६
विश्व का योग	६५०	विश्व का योग	२१६

उपभोग—तम्बाकू के विभिन्न उत्पादनों में सिगरेटों की खपत पिछले कुछ वर्षों से बहुत बढ़ी है। अमेरिका, कनाडा, स्वीडेन और डेन्मार्क में सिगरेटों की बिक्री युद्ध से पहले की अपेक्षा दुगनी हो गई है। अन्य देशों में भी ५०% खपत है। दूसरी ओर अधिकांश देशों—अमरीका में पाइप की तम्बाकू और सुंघनी की खपत घट गई है। नीदरलैंड और डेनमार्क में सिगार की खपत घट रही है।

फ्रांस, इटली, दक्षिणी रूस, एल्जीरिया, ग्रीस, और एशिया के पश्चिमी भाग प्रमुख अंगूर पैदा करने वाले भाग हैं। इनके अतिरिक्त कुछ कम महत्व वाले भाग यह हैं—कैलीफोर्निया, संयुक्त राज्य में झीलों के आसपास वाले भाग, अर्जेन्टाइना, चिली, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका के कुछ भाग।

विदेशी व्यापार में सूखे अंगूर बहुत महत्व के हैं। सूखे अंगूरों की खास किस्में किसमिश (Raisins) और मुनक्का (Currants) हैं। सुल्ताना किसमिश बिना बीज वाले अंगूरों की सूखी किस्म होती है जो कि व्यापारिक पैमाने पर एशिया माइनर और एजियन द्वीप समूह और कैलीफोर्निया में पैदा की जाती है। इसके मुख्य उत्पादन क्षेत्र चार हैं : (१) कैलीफोर्निया की बड़ी घाटी, (२) दक्षिणी स्पेन, (३) यूनान, और (४) पश्चिमी टर्की। विश्व की तिहाई किसमिश कैलीफोर्निया की सैन जुआन घाटी के फैस्नो केन्द्र से प्राप्त की जाती है। मुनक्का भी अंगूरों को सूखी शक्ल होती है। किन्तु इस प्रकार के अंगूर बड़े और बीजों वाले होते हैं। यूनान में मुनक्का तैयार करने का एकाधिकार है। अब आस्ट्रेलिया यूनान का सबसे बड़ा प्रतिद्वन्दी खड़ा हो गया है।

भारत में सबसे अधिक अंगूर महाराष्ट्र, मद्रास और मैसूर में होते हैं। महाराष्ट्र में नासिक जिला, काश्मीर में श्रीनगर तथा मद्रास में मदुराई, सलेम और अनन्तपुर जिले अंगूरों के मुख्य उत्पादक हैं।

अंजीर (Fig)—इसका पौधा १८ से २० फीट ऊँचा होता है। यह शुष्क ग्रीष्म ऋतु के अर्द्ध उष्ण कटिबन्धीय भागों में अच्छा पैदा होता है। मरुस्थलीय भागों में भी इसका उत्पादन किया जाता है। यह काफी समय तक सूखा सह सकता है तथा अंगूर और नारंगी की तरह यह पाले से भी नष्ट नहीं होता। वर्षा में २ । ३ बार फल प्राप्त किये जाते हैं। ये ताजे और सूखे दोनों ही रूप में खाये जाते । इनका उत्पादन कैलीफोर्निया और टैक्सास में १६०० से ही किया जा रहा है।

इसके मुख्य उत्पादक स्मर्ना (टर्की में), द० टैक्सास और कैलीफोर्निया हैं। भूमध्यसागरीय प्रदेशों में इटली, स्पेन, यूनान आदि अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक हैं। स्पेन, इटली, एशिया माइनर, ग्रीस, एलजीरिया और टर्की से यह अधिकतर विदेशों को भेजा जाता है। स्मर्ना अंजीर के व्यापार का मुख्य केन्द्र है।

(ग) शीत-शीतोष्ण कटिबन्धीय फल

सेब (Apple)—यह फल यूरोप और एशिया का आदि पौधा है। प्राचीन निवासियों द्वारा यहाँ से यह अमेरिका ले जाया गया। यह उन क्षेत्रों में अच्छा पैदा होता है जहाँ शीतकालीन तापक्रम २५° से ३५° फा० तक रहते हैं तथा कठोर पालों का अभाव रहता है। आदर्श जलवायु ठंडी गर्मियाँ होती हैं। प्रति महीने औसत वर्षा २" से ४" तक पर्याप्त होती है। समतल भूमि पर ही इसकी फसल अच्छी होती है। ढालू भागों पर पाले का डर रहता है। यह फल शीतोष्ण कटिबन्ध में बहुत उत्पन्न होता है। सेब का वृक्ष बड़ा होता है और फसल में एक से डेढ़ मन तक फल उत्पन्न करता है। यह ऐसा फल है जो बहुत ऊँचे स्थान पर तथा ६५° उत्तर अक्षांश रेखाओं तक उत्पन्न किया जा सकता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सेब बहुतायात से उत्पन्न होता है। संयुक्त राज्य में इसका उत्पादन व्यापारिक पैमाने पर तीन क्षेत्रों से किया जाता है. (१) बड़ी

केले का वृक्ष १० से १५ फीट ऊँचा होता है। पौध लगाने के ११ से १४ महीने बाद इसमें फूल आने लगते हैं और यह फूल ३-४ महीने बाद फलों में बदल जाते हैं। दूसरी बार फसल प्राप्त करने के लिए पौधे को काट दिया जाता है और इससे १२ से १५ महीने बाद फल मिल जाते हैं। ४ या ५ वर्षों पुराने वृक्ष से साधारणतः एक एकड पीछे २५० केले तक लगते हैं। चूंकि केला भूमि के उपजाऊ तत्व खींच लेता है अतः १०-१५ वर्षों बाद उस भूमि में दूसरी फसल बो दी जाती है। बाजारों में भेजने के लिए केलों को कच्चा ही काटा जाता है और फिर उन्हें गाडियों या जहाजों के शीत भण्डारों में रख कर बाजारों को भेज दिया जाता है।

केला विस्तृत रूप से जैमिका, कोस्टारिका, कोलम्बिया, मैक्सिको, फिलीपाइन्स, पूर्वी द्वीप समूह, मध्य अमेरिका, ग्वाटेमाला, होंडूरास, निकारग्वेआ, पनामा, कैनेरी द्वीप, हवाई द्वीप समूह और दक्षिणी भारत में पैदा किया जाकर संयुक्त राज्य, ब्रिटेन और दूसरे यूरोपीय देशों को निर्यात कर दिया जाता है।

सबसे उत्तम केला दक्षिणी भारत में पैदा होता है। केला पैदा करने वाले मुख्य राज्य मद्रास, महाराष्ट्र, आसाम, बिहार तथा मैसूर राज्य हैं। यह राज्य कुल पैदावार का ६०% उत्पन्न करते हैं। भारत से बहुत थोडा केला ही बाहर भेजा जाता है। सारा उत्पादन भारत में ही खप जाता है।

१९६१ में विश्व में १२० लाख टन केलों का उत्पादन हुआ जिसमें से ४०% अकेले ब्राजील में पैदा किये गये। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आने वाले केलों में से ६० प्रतिशत कोलम्बिया, होंडूरास, इक्वेडोर और कोस्टारिका से प्राप्त होता है और शेष अफ्रीका से। इसमें से ५०% सं० रा० अमेरिका और ४०% यूरोप में उपभोग में आते हैं।

(२) अनन्नास (Pine-apple)—इसका उत्पत्ति स्थान अमरीका के उष्ण कटिबन्धीय मध्यवर्ती क्षेत्र माने जाते हैं। इसकी पत्तियाँ मोटी, चौड़ी और मोमिया होती हैं जो नमी को नहीं निकलने देतीं, अतः इसका उत्पादन उष्ण कटिबन्धीय अर्द्ध-शुष्क तथा आर्द्र भागों में भी हो सकता है किन्तु यह पाला नहीं सह सकता। इसके लिए १८ से २० महीने तक का उपज-काल आवश्यक है। पौधे वर्षा ऋतु में लगाये जाते हैं तथा दूसरी वर्षा ऋतु में फल प्राप्त किये जाते हैं। एक बार का बोया गया पौधा ३-४ फसलें दे देता है।

इसके लिए सम-उष्ण तापक्रम, अधिक वर्षा और हल्की या रेतीली मिट्टी अच्छी रहती है। समुद्री किनारे की हवायें इसकी शीघ्र वृद्धि करती हैं। अधिक उत्पादन हवाई द्वीप से प्राप्त होता है। अन्य उत्पादक पश्चिमी द्वीप समूह, कैनेरी, क्यूबा, पूर्वी द्वीप समूह, नैटाल, पूर्वी अफ्रीका, अर्जोर्स द्वीप, मैक्सिको, फिलिपाइन्स, मलाया, फारमूसा, क्वीन्सलैंड, थाईलैंड और फ्लोरिडा है। इन देशों से डिब्बों में बन्द कर यह यूरोप और अमेरिका को भेजा जाता है। १९६१ में २० लाख टन अनन्नास पैदा किया गया। इसमें ६१,००० टन क्यूबा में; १,२४,००० टन मैक्सिको में, ६३,००० टन फिलीपाइन्स में, ६६,००० टन मलाया में, ७६००० टन दक्षिणी अफ्रीका में, ६०,००० टन अर्जेन्टाइना में, और ७,७२,००० टन हवाई में पैदा किया गया।

(३) आम (Mango)—उन प्रदेशों में बहुतायत में होता है जिनमें न

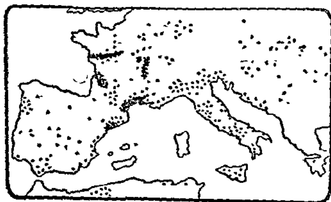
पहाड़ी प्रान्त सेव उत्पन्न करने के लिए प्रसिद्ध हैं। बर्लिन, पेरिस और लन्दन सेव की यूरोप में मुख्य मण्डियाँ हैं जहाँ आस-पास के प्रदेशों से सेव आता है।

एशिया में जापान, चीन और कोरिया में सेव बहुत उत्पन्न होता है। इनके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, चिली और टसमानिया में भी सेव की पैदावार बहुत होती है। सेव यदि सावधानी से रक्खा जावे तो बहुत दिनों तक खराब नहीं होता।

सेव के प्रमुख निर्यातक देश संयुक्त राज्य अमरीका (जहाँ से लगभग ५०% निर्यात किया जाता है), कनाडा, आस्ट्रेलिया, फ्रांस और इटली है। विश्व का निर्यात का लगभग ९०% इन्हीं देशों से प्राप्त होता है।

सेव का आयात मुख्यतः इंगलैण्ड और जर्मनी में किया जाता है। विश्व के आयात का लगभग ९०% इन्हीं दो देशों द्वारा लिया जाता है।

शराब (Wine)—शराब का सबसे अधिक उत्पादन भूमध्य सागरीय देशों में होता है। यूरोप के बाद उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया का स्थान आता है। व्यक्तिगत देशों में फ्रांस की पैदावार सबसे अधिक है और इटली का उत्पादन इससे कुछ ही कम है। स्पेन, एलजीरिया, संयुक्त राज्य, अर्जेन्टाइना और पुर्तगाल का उत्पादन कुछ सतोषजनक है। अन्य देशों का उत्पादन, जिनमें रूमानिया, ग्रीस, युगोस्लेविया, दक्षिणी अफ्रीका, चिली, हंगरी, आस्ट्रेलिया, बलगेरिया और आस्ट्रिया प्रमुख है अत्यन्त साधारण है। इनमें कुछ स्थानीय महत्व के है। इनमे से विशेष रूप से दक्षिणी अफ्रीका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि में भी महत्वपूर्ण है।



चित्र ९४. यूरोप में शराब का उत्पादन

फ्रांस—यह संसार में सबसे अधिक शराब पैदा करने वाला देश है। विश्व का कुल उत्पादन का २५% शराब फ्रांस से ही प्राप्त होती है। यहाँ शराब की प्रतिवर्ष प्रति मनुष्य खपत ३५ गैलन के लगभग है। अंगूर की पैदावार के प्रमुख क्षेत्र लेंग्वेडक (दक्षिणी-पश्चिमी भूमध्य सागरीय तट पर) और गारोन की घाटी है। इसके अतिरिक्त रोन और लोयर नदी की घाटियों में भी अंगूर की पैदावार कुछ केन्द्रित है।

नारंगी (Oranges)—नारंगी का मूल द० पूर्वी एशिया के अर्द्ध-उष्णकटिबंधीय गर्म देश हैं जहाँ से १५वीं शताब्दी मे इसका पौधा पूर्व मे जापान और पश्चिम मे यूरोप को ले जाया गया। मूर-निवासी इसे स्पेन मे ले गये और १६ वी शताब्दी मे स्पेनीश अनवेष्को ने इसे फ्लोरिडा, मैक्सिको और कैलिफोर्निया पहुँचाया। इसका पौधा सदा हरा भरा रहता है। इसके लिए उत्पादक काल ३६५ दिनो का माना गया है। यह ४३° फा० से ८६° फा० के तापक्रम मे अच्छी प्रकार पैदा होता है। पाले से पौधे को बचाने के लिए कई बार हीटरो (Stack-heaters) का उपयोग किया जाता है तथा पहले से गरम हुई हवा को हटाने के लिए पंखे भी काम मे लाये जाते हैं। यह अधिक नमी चाहने वाला पौधा है। यह भी वर्षा जल या सिंचाई द्वारा प्राप्त की जाती है। वर्षा का औसत ५०″ से ५५″ तक पर्याप्त होता है। इसके लिए बलुही दोमट मिट्टी, जो उपजाऊ होती है, अच्छी रहती है। पाले से बचाने के लिए पौधा ढालो पर लगाया जाता है। फ्लोरिडा मे इसके वृक्ष झील के दक्षिणी और पूर्वी भागों मे ही अधिक पाये जाते है क्योंकि उत्तर या उत्तर-पश्चिम से आने वाली ठंडी हवा झील के ऊपर होकर आने से गर्म हो जाती है अत. पाले की आशंका मिट जाती है।

अनेक प्रकार की नारंगियो का उत्पादन होता है, जैसे —

(क) संयुक्त राज्य अमेरिका मे नेवल (Navel)।

(ख) स्पेन में वैलेंशिया (Valencia)।

(ग) पूर्वी एशिया मे सतसुमा (Satsuma)।

(घ) कैलिफोर्निया मे नैवले और वैलेंशिया।

(ङ) फ्लोरिडा मे तीनो ही प्रकार की नारंगियाँ।

नारंगी का पौधा अधिक ऊँचा नहीं बढ़ने दिया जाता है। इसकी औसत ऊँचाई १० से १५ फीट होती है। कभी कभी यह ऊँचाई २० से २५ फीट तक पहुँच जाती है। ४ या ५ वर्षो बाद फल मिलने आरम्भ हो जाते हैं। नारंगी का व्यापार इतना अधिक नही होता जितना और फलों का क्योंकि यह शीघ्र नष्ट हो जाती है तथा दूर भेजने में अड़चन पड़ती है। यद्यपि नारगी का उत्पादन उष्ण कटिबन्धीय और अर्द्ध-उष्ण कटिबन्धीय भागों मे भी होता है किन्तु इनका उत्पादन विशेषरूप से भूमध्यसागरीय देशो में होता है जहाँ सूखी गर्मियाँ और स्वच्छ आकाश फल मे रस अधिक बढ़ाते हैं। यहाँ फसल को पाले का डर भी नही रहता। यूरोप मे स्पेन, इटली, सिसली, माल्टा, फ्रांस तथा यूनान मे इसकी पैदावार अधिक होती है। संयुक्त राज्य मे इसका उत्पादन फ्लोरिडा, अरीजोना, कैलीफोर्निया, लूसीयाना और टैक्सास मे किया जाता है।

स्पेन संसार मे सबसे अधिक नारंगियाँ विदेशो को भेजता है। स्पेन के तटीय भागो मे पूर्व की ओर मर्सिया और वैलेंशिया जिले नारंगी उत्पन्न करने में मुख्य हैं। स्पेन से अधिकतर नारंगी फ्रास, बेलजियम, डेनमार्क, नार्वे तथा स्वीडन को जाती है। स्पेन की नारगी की कुल पैदावार ४ करोड़ बक्सों (७० पौंड प्रति बक्स) के लगभग प्रतिवर्ष होती है।

दक्षिण अमेरिका में ब्राजील और पेरग्वे में इसकी बहुत पैदावार होती है किन्तु इसका व्यापार नही होता। संयुक्त राज्य अमेरिका की फ्लोरिडा नामक रियासत

अफ्रीका मे शराब अधिकतर उसके केप प्रान्त मे ही तैयार होती है। इंगलैंड मे दक्षिणी अफ्रीका की होक (Hock), क्लैरेट (Claret) और बरगण्डी (Burgandy) शराब बहुत प्रसिद्ध है।

आस्ट्रेलिया मे शराब अधिकतर दक्षिणी आस्ट्रेलिया, न्यू साउथवेल्स और विक्टोरिया की रियासतों मे तैयार की जाती है। आस्ट्रेलिया की बरगन्डी और पोर्टो शराब देशी बाजारो मे काफी प्रसिद्ध है।

दक्षिणी अमेरिका मे शराब चिली की बडी मध्य घाटी मे, अर्जेन्टाइना के सिंचित भागो मे (मण्डोजा और सैन ज्वान) और ब्राजील से तैयार होती है। कुछ थोडी बहुत शराब स्थानीय मांगों की पूर्ति के लिये यूरुग्वे और पीरू मे भी बनती है।

नीचे की तालिका मे विश्व मे शराब का उत्पादन दर्शाया गया है [2] :—

शराब की वार्षिक उपज (१००० मैट्रिक टन में)

देश	सन १९३८	सन् १९५७	१९६२
फ्रांस	६२६४	६०८६	७३,०००
जर्मनी	२७०	२८५	३५४०
ग्रीस	३७४	४२३	४७२०
इटली	३८२५	५०१३	६२,०००
पुर्तगाल	७८९	१२१८	६५००
रोमानियाँ	९२९	४१०	६०००
स्पेन	१९७६	१७५०	२१५२०
अलजीरिया	१७८८	१९२५	११०००
फ्रा० मोरक्को	५४	१९१	२२३२
ट्यूनिशिया	१६५	१०५	१७९७
दक्षिणी अफ्रीका संघ	१३३	२५५	३१५०
संयुक्त राज्य	५०३	८३२	६२००
आस्ट्रेलिया	७९	१२०	१८६४
योग	१९५००	२१७००	२५३,०००

१९६२ के अंक हजार हैक्टोलीटरों मे हैं (१ हैक्टोलीटर=२१·९९ गैलन)

तिलहन (Oil seeds)

तिलहन और वनस्पति तेल अधिकतर विभिन्न प्रकार के पौधो के बीज या फलो से प्राप्त होता है जो प्राय: उष्ण कटिबन्ध मे ही पैदा होता है। यह तेल खाने तथा अन्य व्यवसायों—वार्निश बनाने, मशीन के पुर्जों को ढीला करने, मोमबत्तियाँ बनाने, साबुन, इत्र और दवा बनाने के काम आते है।

2. *Stamp & Glimour*, **Chisholm's Handbook of Commercial Geography**, p. 147.

अंगूर (Grapes)—इसका उत्पादन अनेकों शताब्दियों से किया जा रहा है। बैबीलोनिया और फिलीस्तीन में तो यह अत्यंत प्राचीन काल से पैदा किया जा रहा है। स्पेन, रोम और यूनान में इसकी खेती फोनिशियन व्यापारियों द्वारा आरंभ की गई। रोमन लोग इसे पश्चिमी यूरोप और फिर जर्मनी तथा फ्रांस में ले गये। १६१६ ई० में लार्ड बाल्टीमोर द्वारा यह अमरीका ले जाया गया और स्पेन-धर्मावलंबियों द्वारा यह दक्षिणी कैलीफोर्निया के शुष्क उष्णकटिबन्धीय भागों में लगाया गया, जहां इसके लिए आदर्श जलवायु मिलती है।

अंगूर बेलों पर लगते हैं और एक गुच्छे में १०० से १५० तक अंगूर रहते हैं। अंगूर अपने आकार, स्वाद, मीठेपन, तथा मौसम और कीड़ों से संघर्ष करने की शक्ति में भिन्नता रखते हैं। इसके उत्पादन के लिए ५५° फा० का औसत तापक्रम अच्छा रहता है। यही तापक्रम की मात्रा अप्रैल, मई, जून तक रहनी चाहिए। इसी मौसम में इसमें फल लगने हैं। किन्तु आदर्श तापक्रम ६५° से ७०° फा० तक अच्छे रहते हैं जबकि जुलाई, अगस्त और सितम्बर में अंगूर पकने लगते हैं। शीतकाल में वर्षा हो जाने से इसकी नवी जड़ों में शुष्क ग्रीष्मऋतु के लिए पर्याप्त नमी एकत्रित हो जाती है। पकने के समय अधिक वर्षा होने से फल में जल की मात्रा अधिक हो जाती है किन्तु चमकीली धूप से इसमें शक्कर की मात्रा बढ़ जाती है। व्यापारिक उत्पादन के लिए अंगूर मुख्यतः धूप का लाभ उठाने के लिए दक्षिणी या पूर्वी ढालू भागों पर पैदा किये जाते हैं। इसके लिए बलुही छिद्रमय मिट्टी जिसमें चूना मिला हो अच्छी होती है।

इसके बीज पहले नर्सरी में लगाये जाते हैं फिर, जब पौधा बड़ा हो जाता है तो क्यारियों में रोप देते हैं और बेलों को सहारा देने के लिए लकड़ियाँ रोप देते हैं। बाजारों में भेजने के लिए अधपके अंगूर उतार लिये जाते हैं और उन्हें टोकरियों में बंद कर भेज दिया जाता है।

अंगूरों का उत्पादन

देश	क्षेत्रफल (००० हैक्टेअर)			उत्पादन (००० मैट्रिक टन)		
	१९४८-५२	१९५८	१९५९	१९४८-५२	१९५८	१९५९
फ्रांस	१,५६७	१,४०२	—	७,९९५	७,३४८	—
इटली	१,७३८	१,७७७	१,७९३	७,०७४	१०,६०३	१०,१५७
पुर्तगाल	—	—	—	१,१८९	१,२७९	१,०७१
स्पेन	१,५९५	१,६७०	१,५८२	२,५४०	३,२०७	२,७७५
सं० राज्य	—	—	—	२,७०१	२,७४४	२,८४५
अर्जेन्टाइना	—	—	—	१,६५७	२,१००	२,०६०
टर्की	—	—	७८३	१,५००	२,९९२	३,२२०
अल्जीरिया	—	—	—	१,७३८	१,७७	२,३८१
विश्व का योग	८,५००	८,७००	८,८००	३३,७००	४२,१००	४३,१००

मुख्यत: अनाज के रूप में खाई जाती है। तिल को गजक, रेवड़ियाँ, लड्डू बनाने तथा अन्य कई देशो मे विनौला बड़े परिमाण में तेल निकालने के काम में ही लाया जाता है परन्तु भारत, चीन तथा अन्य देशो मे इसे जलाने तथा पशुओं को खिलाने के काम में लाया जाता है। अनुमान लगाया गया है कि विश्व के तिलहनों के उत्पादन मे से बीज तथा सीधा मनुष्यो तथा पशुओं द्वारा खाने के लिए निम्न अनुपात मे प्रयुक्त होता है—मूँगफली ३५-४५%, सोयाबीन ३०-३५%, विनौला २५%, तिल १५-२५%, तोरिया, अलसी १०% और अण्डी ५%।

नीचे की तालिका मे विभिन्न तेल बीजो का उत्पादन बताया गया है:—

तैल बीज	१९५७	१९६१
	(००० मैट्रिक टनो मे)	
सोयाफली	—	
मूँगफली	२४,७००	२७,८००
विनौले	१३,६००	१३,२००
अलसी	१४,७००	१७,६००
सरसो	२,५००	२,७००
तिल	३,८००	३,५००
खोपरा	१,३००	१,५००
सूर्यमुखी	१,३६८	९८३
	१,८५०	२,०५०

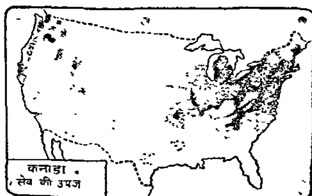
नीचे की तालिका में वनस्पति तैलो का विश्व उत्पादन दिया गया है:—

वनस्पति तैलों का उत्पादन

(हजार मैट्रिक टनों में)

तेल	युद्ध पूर्व	१९५७	१९६१
खाद्योपयोगी (Edible Oils)—			
मूँगफली			
विनौला	१,७५५	२,५४५	२,९५५
सोयाबीन	१,४५३	१,८७५	२,१४०
सन फ्लावर के बीज	१,२६३	३,०८५	३,७३०
तिल	४३५	१,४००	१,१७५
जैतून का तेल	५६३	४४०	४५०
सरसो	९५०	१,१५०	१,११०
गरी का गोला	१,२७३	१,१२०	१,१३५
ताड़ की गिरी	१,६३३	२,१६५	१,७३०
ताड़ का तेल	३५५	४०५	४३५
	६४४	१,०२५	१,०३०

झीलों के चारों ओर, जहाँ जल का प्रभाव अनुकूल पड़ता है। (२) न्यू इंगलैंड, एप्पेलेशियन पर्वतों तथा ओजार्क उच्च प्रदेशों में जहाँ हवा निकलने के लिए पर्याप्त सुविधायें मिलती हैं, और (३) प्रशान्त महासागरीय तट पर इडाहो और कैलीफोर्निया के सिंचित भागों में। वैसे तो ऐसी कोई रियासत नहीं जिनमें सेव की पैदावार न होती हो किन्तु न्यूयार्क, पेंनसिलवेनिया, ओहियो तथा मिशिगन रियासत सेव उत्पन्न करने के लिए विशेष प्रसिद्ध है। सयुक्त राज्य के पश्चिमी भाग और कैलीफोर्निया में भी सेव बहुतायत से उत्पन्न होता है।



चित्र ९३ स० राज्य में सेव का उत्पादन

सेव का उत्पादन

(००० मैट्रिक टनों में)

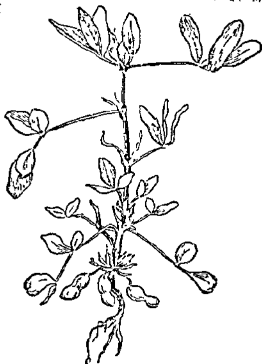
देश	१९४८-५२	१९५८-५९
फ्रांस	३,५७०	५,०००
प० जर्मनी	१,१४८	२,३०६
सं० राज्य अमेरिका	२,३९९	२,७५०
विश्व का योग	१३,५००	१३,४००

कनाडा में भी सेव बहुत उत्पन्न होता है। नोवास्कोशिया तथा ईरी और अन्टोरिया झीलों के समीपवर्ती मैदान और पश्चिम की ओर राकी पर्वत माला में भी सेव बहुत उत्पन्न होता है। ब्रिटिश कोलम्बिया तो सेव का घर है। यहाँ से इनका निर्यात ब्रिटेन को किया जाता है।

सेव का मूल-स्थान यूरेशिया है। स्पेन से लेकर जापान तक सेव उत्पन्न होता है। इंग्लैंड, स्विट्जरलैंड, जर्मनी का दक्षिणी भाग तथा आस्ट्रेलिया का

इसकी उत्पत्ति के लिये लम्बे और गर्म मौसम की आवश्यकता होती है—किन्तु इसे पानी की थोडी मात्रा की जरूरत पडती है। यह उन भागो में पैदा की जाती है जहाँ ३०" से ४०" तक वर्षा होती है। इससे कम वर्षा वाले भागो मे सिंचाई की आवश्यकता पडती है। पकने के समय ७० डिग्री से ८० डिग्री तक का तापक्रम इसकी बढ़वार के लिए बहुत अच्छा रहना है। किन्तु पाला फसल के लिए हानिकारक होना है। यह हल्की मिट्टी मे अच्छी पैदा होती है। प्राणिज भूमि इसके लिए बहुत ही उपयुक्त है। हल्की बलुही मिट्टी म कठोर चिकनी मिट्टी की अपेक्षा अधिक फलियाँ लगती हैं।

इसका उत्पादन भारत, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, द० पूर्वी द्वीप समूह (जावा और मदुरा) ब्रह्मा, अर्जेन्टाइना और अफ्रीका, मे पश्चिमी फ्रासीमी अफ्रीका, केनिया और नाइजीरिया मे होती है। भारत मे इसकी पैदावार मद्रास और महाराष्ट्र राज्यो मे काले मिट्टी के क्षेत्र तथा दक्षिणी पठार के लाल मिट्टी भागो मे होती है।



चित्र ९६. मूगफली का पौधा

विश्व मे मूँगफली का उत्पादन १९६१ मे इस प्रकार था (१००० मैट्रिक टनो मे)।

अर्जेन्टाइना	११८	इन्डोनेशिया	४४८
भारत	४७१७	चीन—(२२ प्रान्त)	२२६८
सं० रा० अमेरिका	७२७	नाइजीरिया	१०५०
कांगो	१६६	फ्रा० प० अफ्रीका	११७९
		विश्व का योग	१३,२००

मूँगफली के तेल से घी और मशीनो से तेल बनाया जाता है। यह खाने के काम मे भी आती है।

मूँगफली का सबसे अधिक निर्यात नाइजीरिया से किया जाता है। प्रमुख आयातक फ्रांस, जर्मनी और इंगलैंड हैं।

साधारणतः देश की कुल शराब की पैदावार की एक तिहाई केवल लैंग्वेडक क्षेत्र से प्राप्त होती है।

शराब का औसत उत्पादन लगभग १६,००० लाख गैलन है। भौगोलिक और आर्थिक दशाओं में अन्तर होने के कारण शराब के स्वाद और गन्ध में भी अन्तर आ जाता है। अतएव इन दिशाओं की विषमताओं के कारण कुछ प्रकार की शराबें अत्यन्त स्थानीय हो गई हैं जैसे **शैम्पेन** (Champagne) केवल पेरिस बेसिन की चाक की पहाड़ियों से प्राप्त होती है, **क्लैरेट** (Claret) या **बोर्डो** (*Bordeaux*) गैरोन की घाटी से आती है और **बर्गन्डी** (Burgandy) शराब कोटे-डी-ओर (Cote-de-or) के ढालों से। यह फ्रांस की प्रसिद्ध शराबें है।

शराब का सबसे अधिक निर्यात फ्रान्स से ही होता है। फ्रान्सीसी शराब की माँग स्थानीय प्रयोग के लिए इतनी अधिक है कि देश की पैदावार की कमी की पूर्ति के लिये प्रतिवर्ष लाखों गैलन शराब इटली स्पेन और एलजीरिया से मँगानी पड़ती है। कभी-कभी फ्रांसीसी अपनी महँगी शराबों को पूर्णतया बेच देते है और घरेलू खपत के लिए इटली और स्पेन की सस्ती शराबों को मगाकर प्रयोग करते हैं।

इटली—विश्व के देशों में इटली का पहला स्थान है जहाँ अंगूर की खेती के अन्तर्गत भूमि का सबसे अधिक भाग पाया जाता है। वहाँ चूने की ऊँचे-नीचे विस्तृत और पथरीली भाग, चमकती धूप, हल्की वर्षा और सस्ती मजदूरी आदि दशायें अंगूर की खेती के लिये अति अनुकूल हैं। ससार में ऐसा कोई देश नहीं है जो अंगूर की शराब के उत्पादन पर इतना अधिक निर्भर रहता हो जितना कि इटली। किन्तु इटली की शराब इतनी अच्छी और मूल्यवान नहीं होती जितनी कि और देशों की। फिर भी यहा की शराब की निर्यात मात्रा बहुत अधिक होती है।

इटली की शराब का प्रति वर्ष औसत उत्पादन एक खरब गैलन है—प्रति मनुष्य २०० गैलन से अधिक। इटली की **कियाण्टी** (*Chianti*) शराब, जो कि टस्कैनी से प्राप्त होती है, विदेशों में बड़े आदर के साथ देखी जाती है।

स्पेन—ससार में शराब तैयार करने वाले देशों में स्पेन का तीसरा स्थान है। यहाँ की सबसे उत्तम शराब **शेरी** (Sherry) है जो दक्षिण की ओर कैडिज के पास जेरेट डीला और फ्रन्टेरा से प्राप्त होती है। स्पेन की शराब विशेषतः ब्रिटेन को भेजी जाती है।

पुर्त्तगाल की सबसे प्रसिद्ध शराब पोर्ट-वाइन (Port wine) है जो कि डयूरो घाटी से प्राप्त होती है। स्पेन की भाँति यहाँ की शराब भी अधिकतर ब्रिटेन को भेजी जाती है और देश की निर्यात का लगभग ⅕ भाग ब्राजील को भेजा जाता है।

जर्मनी में अंगूर राइन तथा उसकी सहायक नदियों नैकर और मुजेल और झुकने वाले पहाड़ी प्रदेशों पर पैदा किया जाता है।

संयुक्त राज्य में शराब का धन्धा अधिकतर पश्चिम में केलीफोर्निया में और पूर्व में न्यूयार्क में ही केन्द्रित है। कनाडा में शराब बहुत कम तैयार की जाती है और जो कुछ पैदा हो जाती है वह उसके दक्षिणी पूर्वी समुद्री प्रान्तों तक ही सीमित है।

यहां से अधिकांश उपज इंगलैंड, बेलजियम, फ्रांस और जर्मनी को निर्यात करदी जाती है।

(५) अलसी (Linseed)—अलसी के लिए ठंडे जलवायु की आवश्यकता होती है। अतः जिन भागों में गेहूँ की पैदावार हो सकती हैं उन्हीं भागों में अलसी भी पैदा की जाती है। उष्ण कटिबन्धों में इसकी पैदावार बीज प्राप्त करने के लिए की जाती है। अलसी सभी प्रकार की मिट्टी में पैदा हो सकती है यदि वहाँ वर्षा ३०" से ४०" तक हो। विश्व के उत्पादन का ५०% सं० राज्य अमरीका से, १८% रूस से १८% अर्जेन्टाइना से, १६% भारत से, १०% कनाडा से और ३% यूरेग्वे से प्राप्त होता है। १९६१ में अलसी की कुल पैदावार ३१०० हजार मैट्रिक टन की थी, जिसमें से ७७२ हजार टन अर्जेन्टाइना, ४३७ हजार टन भारत, ९८० हजार टन संयुक्त राज्य अमरीका से, ५७८ हजार टन कनाडा और लगभग ७०० हजार टन रूस से प्राप्त हुआ।



चित्र ९८. अलसी का पौधा

अलसी का उपयोग इसका तेल बनाने में होता है। यह तेल, वार्निश, रंग, साबुन, तेलिया कपड़ा और पेटेन्ट चमड़ा बनाने के काम में आता है।

नारियल (Coconuts)—उष्ण कटिबन्धीय ताड़ों में नारियल का महत्व सबसे अधिक है। इसका आदिस्थान भूमध्यरेखीय प्रदेश के पूर्वी भाग हैं। इसका वृक्ष ८०' से भी अधिक लंबा हो जाता है तथा १०० वर्षों तक फल देता रहता है। ७ से १० वर्ष की अवस्था में ही फल मिलना आरम्भ हो जाता है। साधारणतया वर्ष में एक पेड़ से २०० नारियल तक मिल जाते हैं और प्रति एकड़ भूमि में ४ या ५ हजार नारियल।

जलवायु सम्बंधी आवश्यकताओं के अनुसार इसका उत्पादन विषुवत् रेखा के दोनों ओर २०° अक्षांशों तक सीमित है। प्रशांत के दक्षिणी द्वीप और फिलीपाइन्स, पूर्वी द्वीप समूह, और लंका तो इसके आदर्श उत्पादक क्षेत्र हैं।

नारियल का उपयोग सबसे अधिक रूप में होता है। इसके वृक्ष से खोपरा, नारियल या गिरी का तेल, जाली जटायें, लकड़ी आदि प्राप्त होते हैं। तने से साही लकड़ी मिलती है जो नावें बनाने तथा इमारती कार्यों में प्रयुक्त की जाती है। फूलों से ताड़ी पेय बनाया जाता है। गुड़, शक्कर, सिरका आदि भी बनाये जाते हैं और जटा से रस्से, चटाइयाँ, दरी, पंखे, ब्रुश, झाड़ू आदि बनाये जाते हैं। खोपरा की लकड़ी से बटन, प्याले, बर्तन, चम्मच आदि भी बनाये जाते हैं। इसके इतने अधिक उपयोग होने के कारण ही यह 'कल्प वृक्ष' (wish-granting tree) कहलाता है। इसका जल पीने के काम में आता है। इसकी पैदावार विशेष कर पूर्वी द्वीप समूह, लंका, मलाया, फिलीपाइन, प्रशान्त महासागर के द्वीप, घाना, मारीशस और केनिया में होती है। भारत में समुद्र तटीय भागों में लगभग ५० लाख एकड़ भूमि में इसकी पैदावार होती है। यहाँ पूर्वी गोदावरी डेल्टा, मलाबार और दक्षिणी कनारा के जिले,

युद्धोत्तरकाल मे कई तिलहनो के उत्पादन में युद्ध से पूर्व के वर्षों की अपेक्षा वृद्धि हुई। इसका प्रमुख कारण पश्चिमी गोलार्द्ध मे (विशेषतः अमेरिका मे) इन फसलों की खेती मे उल्लेखनीय विस्तार होना था। विश्व के सोयाबीन तथा मूंगफली के उत्पादन मे १९३४-३८ के औसत उत्पादन की अपेक्षा वृद्धि हुई। इसका कारण महत्वपूर्ण उत्पादक देशो मे इनकी खेती फिर होने लगना तथा दक्षिण व उत्तरी अमेरिका मे इनका उत्पादन बढ जाना है। इसी प्रकार सन फ्लावर की खेती सोवियत-सघ मे फिर से चालू की गई तथा अर्जेन्टाइना, उरुग्वे व अन्य छोटे उत्पादक क्षेत्रो मे उसमे विस्तार किया गया। युद्धोत्तरकाल मे बिनौले का उत्पादन भी काफी बढा क्योंकि इसकी खेती मे पर्याप्त विस्तार हुआ है। तिल मे भी थोडी वृद्धि हुई है। इसका उत्पादन अधिकतर उन देशो मे होता है जो खेती के नये तरीको से पिछडे हुए हैं। युद्ध से बाद के वर्षो मे पश्चिमी यूरोप मे तोरिया की खेती निरन्तर बढती रही लेकिन हाल की फसलों मे यह स्थिति बदल गई। यह परिवर्तन मुख्यतः अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर माल आराम से उपलब्ध होने तथा भाव गिर जाने से हुआ। १९४८-४९ मे अलसी का उत्पादन चरम सीमा पर था। लेकिन बाद के वर्षो मे अर्जेन्टाइना, अमेरिका तथा भारत मे फसल के बिगड जाने से विश्व का असली उत्पादन तेजी से घटता गया। सुखाने के बदले अन्य तथा रासायनिक वस्तुएँ काम मे लाई जाने लगी।



चित्र ९५ बनस्पतिक तेल बीज क्षेत्र

विभिन्न तिलहनो का तेल-परिमाण भी अलग-अलग होता है। उदाहरण के लिए सोयाफली मे तेल की मात्रा १५%, मूंगफली मे ३६% बिनौले मे १८%; अलसी मे ३०%; राई मे ३५%, तिल मे ४५%, सूर्यमुखी मे ३०% और खोपरा मे ६३% होती है।

तिलहनों को बीज के अतिरिक्त एक बड़े परिमाण मे बिना पेराई किये खाने तथा खाद्य-वस्तुऐं बनाने के काम मे भी लाया जाता है। उदाहरण के लिए मूंगफली को लीजिये, जिन देशों मे मूंगफली का अधिक उत्पादन होता है, वहाँ लोग इसे पेरे बिना ही बहुत खाते है। चीन (मंचूरिया को छोडकर) तथा अन्य देशो में सोयाबीन

(९) जैतून Olive)—यह एशिया माइनर का आदि पौधा है। यहाँ से यह फोनशियनों द्वारा यूनान, इटली, स्पेन और उत्तरी अफ्रीका को ले जाया गया। स्पेनवासी इसे मैक्सिको और कैलीफोर्निया को ले गये और अब इसका उत्पादन टर्की, अर्जेन्टाइना, और दक्षिणी आस्ट्रेलिया मे भी किया जाता है। स्पेन और इटली दोनो मिलकर विश्व के उत्पादन का ८०% जैतून पैदा करते हैं और शेष २०% अल्जीरया साइप्रस अर्जेन्टाइना, यूनान, जोर्डन, लिबिया, सीरिया, तथा सयुक्त राज्य अमरीका से प्राप्त किया जाता है। १९६१ मे जैतून का विश्व उत्पादन ६००,००० मैट्रिक टन का था। इससे १०३ ००० ००० टन तेल प्राप्त किया गया।

जैतून का उत्पादन भूमध्यसागरीय देशो मे ही विशेष रूप से किया जाता है, जहाँ गर्मियां सूखी बीतती है। इसका पौधा कठोर, सदा बहार तथा धीरे-धीरे बढ़ने वाला होता है। ८ वर्ष के बाद फसल मिलने लगती है और १५ वर्षों के बाद तो पूरी प्रकार से फसल प्राप्त होती है। अधिकतर १०० वर्षो तक जैतून एक ही वृक्ष से मिलते रहते है।

जैतून का महत्व उससे प्राप्त होने वाले तेल के कारण होता है। जैतून का तेल मक्खन के स्थान पर तथा सलाद मिश्रित भोज्य पदार्थ बनाने और सारडीन मछलियो को पैक करने मे काम मे लाया जाता है। निम्न श्रेणी के तेल से मोमबत्ती, साबुन, रासायनिक पदार्थ तथा चमडा साफ किया जाता है। विश्व के इस तेल उत्पादन का लगभग ५०% स्पेन से, २५% इटली से, और १३% यूनान से प्राप्त किया जाता है। आधे से अधिक तेल का निर्यात संयुक्त राज्य अमरीका और अर्जेन्टाइना को किया जाता है।

(१०) **सोयाफली** (Soyabeans)—इसका उत्पादन प्राय. शीतोष्ण देशों मे किया जाता है जहाँ उपजाऊ दोमट मिट्टी मिलती है। यह गर्मी मे बोई जाती है और सर्दी में काट ली जाती है। इसका उपयोग तेल निकालने के अतिरिक्त खाने (रोटी. दूध, दलिया मिठाई डबलरोटी के रूप मे), सब्जी बनाने, सलाद बनाने, तथा सुखा कर काफी मे मिलाने और वनस्पति दूध बनाने मे भी किया जाता है। औद्योगिक रूप से इसका उपयोग ग्लिसरीन बनाने, वार्निश, लिनोलियम, सैलूलाइड चिकना करने का तेल, मोमबत्तियाँ, तथा रबड के स्थापन के रूप मे होता है।

इसके प्रमुख उत्पादक सयुक्त राज्य अमरीका, चीन, मचूरिया और रूस हैं। १९६० मे विश्व का उत्पादन २८० लाख टन का था। जापान और इडोनेशिया मे भी यह पैदा की जाती है। किन्तु स० राज्य अमरीका और चीन से विश्व के उत्पादन का ६०% प्राप्त किया जाता है। सारा ही उत्पादन जापान, जर्मनी और कनाडा को निर्यात कर दिया जाता है। स० रा० अमरीका सबसे बडा निर्यातक देश है।

मसाले (Spices)

मसाले प्रधानत. उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो मे अधिक पैदा होते है जहाँ वर्ष भर उच्च तापक्रम और भारी वर्षा होती है। इडोनेशिया मे इनकी पैदावार बहुत होती है। मुख्य मसाले निम्नलिखित है—

(१) **काली मिर्च** (Pepper)—यह एक लता का बीज है। इसका जन्म स्थान केरल के वन-प्रदेश माने जाते हैं। भारत में इसका उत्पादन अति प्राचीन काल से होता रहा है।

औद्योगिक (Industrial Type) —			
अलसी	१,०४०	१,१००	१,०१५
अरण्ड	१७८	२४०	२३५
तुङ्ग तेल	१२१	१२५	१३०
अन्य प्रकार के वनस्पति तेल	२११	२५०	२६०

तैल बीज तथा तेलो का उत्पादन मुख्यत उष्ण कटिबन्धीय तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो में होता है।

विभिन्न देशों में तेल और चिकनाई वाले पदार्थों का उत्पादन

(००० मैट्रिक टनों में)

	१९४८-५२	१९६१
स० राज्य	५२१७	७३३४
कनाडा	३२९	५९१
अर्जेन्टाइना	६७६	६५९
ब्राजील	४४९	५६१
चीन	२३५३	२८४४
भारत	१९३०	२३९६
इन्डोनेशिया	६०९	६१७
पाकिस्तान	२६४	२९१
नाइजीरिया	६७४	९१५
प. यूरोप	३०९०	३८१४
पू यूरोप	७२६	१२३४
रूस	१३६३	३१२८
ओसीनिया	५५६	७७९
विश्व का योग	२२,२७२	३०,२१६

मुख्य तिलहन ये है —

(१) मूंगफली (Groundnuts)

इसका जन्म स्थान ब्राजील माना जाता है किन्तु व्यावसायिक पैमाने पर इसकी खेती का विस्तार पश्चिमी अफ्रीका से हुआ है। फ्रांसीसी उद्योगपतियो ने इसे फ्रांसीसी उपनिवेशों में पहुँचाया और वहाँ से यह विश्व के अन्य भागों में ले जाया गया।

(२) सौंठ (Ginger)—व्यापार क्षेत्र में जिसे सौंठ कहा जाता है वह एक पौधे को हरे भूमि गत तत्वों या मूलों को सुखाकर तैयार किया जाता है। यह पौधा उष्ण कटिबन्ध के देशों में बहुत अधिक उगाया जाता है। इन देशों की वार्षिक पैदावार का अधिकांश अदरक के रूप में वहीं खप जाता है और थोड़ा सा भाग ही व्यापार के लिए सुखाकर सौंठ बनाया जाता है। अदरक पैदा करने वाले मुख्य देश जमैका, (प० हिन्द द्वीप समूह), सियरा लियोन (प० अफ्रीका) और भारत हैं। जमैका में इसका वार्षिक औसत उत्पादन १,००० से १,५०० टन तक तथा सियरा लियोन में १,५०० से २,५०० टन तक का होता है। भारत का वार्षिक उत्पादन १०,००० से १५,००० टन का होने से यही विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक है। सभी देशों को मिलाकर इसका औसत उत्पादन १२,५०० टन से १४,००० टन का होता है।

अदरक या सौंठ मुख्यत अधिक वर्षा वाले भागों में पैदा किया जाता है। यह बलुही अथवा चिकनी दोमट मिट्टी में या लाल दोमट मिट्टी में अच्छी पैदा होती है। इसकी खेती समुद्रतल से लगाकर ३००० फीट तक (जैसे मैसूर में) और हिमालय के ढालों पर ५०००फीट तक होती है। इसके लिए पश्चिमी घाट के ढाल सर्वोत्तम माने जाते हैं। यह अधिक गर्मी और तरी चाहने वाला पौधा है।

इसका पौधा बारहमासी होता है। इसे पकने में ६ से १० महीने तक लगते है। यह मई के अन्त में बोया जाता है और दिसम्बर-जनवरी तक तैयार हो जाता है। भारत में इसका उत्पादन केरल राज्य में विशेषत मलाबार तथा उत्तर प्रदेश, मद्रास, आन्ध्र और महाराष्ट्र में किया जाता है।

(३) दालचीनी (Cinnamon)—यह एक पेड की छाल होती है जिसका उपयोग सुखाकर भोजन को सुगंधित करने, दवाई तथा तेल निकालने में किया जाता है। इसका पौधा लका और दक्षिणी भारत, ब्रह्मा तथा मलाया प्रायद्वीप का आदि पौधा है। इस समय इसका सबसे अधिक उत्पादन लका, भारत, जमैका, सैयीन, साई चेली, पश्चिमी अफ्रीका, पश्चिमी द्वीप समूह और ब्राजील में होता है। किन्तु भारत की अपेक्षा लका की दालचीनी अधिक उत्तम मानी जाती है।

इसका पौधा अधिकतर कांप, बलुही मिट्टी में आर्द्र-गर्म भागों में पैदा होता है जहाँ वर्षा लगभग ८०" तक होती है। नीलगिरी पहाड़ियों के ढालों पर यह २,५०० फीट तक पैदा किया जाता है। वर्षा ऋतु में वृक्ष से छाल प्राप्त की जाती है। वृक्ष से ३-४ वर्ष बाद पहली बार छाल प्राप्त की जाती है और प्रति एकड़ से ५० से ६० पौंड तक छाल मिल जाती है। १० वर्ष के बाद तो वृक्ष का इतना विकास हो जाता है कि प्रति एकड से १५० से २०० पौंड तक दाल चीनी मिलती है। इसका प्रयोग भोजन को सुगंधित बनाने तथा दवा और तेल बनाने में होता है।

(४) जायफल और जावित्री (Nutmag & Mace)—इसका आदि स्थान मलक्का द्वीप माने जाते है तथा इसका अधिकतम उत्पादन बन्दा द्वीप, अम्बोया, गिलोलो और पश्चिमी न्यूगिनी में होता है। भारत में यह १८ वीं शताब्दी में लाया गया किन्तु तब से अभी तक इसके उत्पादन में प्रगति नहीं हुई है।

जायफल एक पेड विशेष (Myristica Fragrans) का फल होता है। पक जाने पर फल फूट जाता है। इसके फल के ऊपर का छिलका होता है। यहीं जावित्री

(२) तिल—तिल की मातृभूमि दक्षिणी तथा दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका बताई जाती है। वहाँ से इसका प्रसार अबीसीनिया, भारत, इण्डोचीन, चीन को होता हुआ जापान तक और उधर उत्तरी अफ्रीका होता हुआ भूमध्यसागरीय देशों तक हुआ है। किन्तु वैदिक यज्ञों में तिल का वर्णन आया है, अतएव सम्भवतः यह यहीं का पौधा रहा होगा और बाद में दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका में जाकर ख्याति प्राप्त की होगी। प्रारम्भ में इसकी उत्पत्ति कहीं भी हुई रही हो, आज भारत विश्व में तिल का सबसे बड़ा उत्पादक है और वह इस देश का व्यावसायिक एवं भोज्य तिलहन है। तिल दो प्रकार का होता है, सफेद और काला।

तिल की पैदावार के लिये पानी अच्छी तरह सोखने वाली उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। यह सभी प्रकार की जलवायु में बोया जा सकता है। इसकी खेती मैदानी भागों में तथा ४००० फीट ऊँचे भागों में भी की जाती है। इसके लिए ७५° फा० का तापक्रम और २०" के लगभग वर्षा पर्याप्त होती है। इसकी विस्तृत खेती भारत, ब्रह्मा, लंका, मैक्सिको, पाकिस्तान, चीन, टर्की और सूडान जैसे अर्द्ध-उष्ण कटिबन्धीय भागों में होती है। इन देशों से इसका निर्यात इंगलैंड, जापान, फ्रांस और मिश्र में किया जाता है। इसका उपयोग खाने और रोशनी के लिए जलाने में काम आता है।

(३) रेंडी (Caster seed)—रेंडी उत्पन्न करने वाले देशों में भारत का स्थान दूसरा है। अन्य मुख्य उत्पादक थाईलैंड, दक्षिणी अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका, इण्डोचीन, ब्राजील और जावा हैं। भारत में सबसे अधिक रेंडी मद्रास, महाराष्ट्र, आन्ध्र और मध्य प्रदेश में होती है। सन् १९६१ में ६००,००० टन रेंडी पैदा हुई। इसका ५५ से ६५ प्रतिशत भारत और ब्राजील से प्राप्त होता है।



चित्र ९७. रेंडी का पौधा

इसकी फसल तो गर्म भागों में वर्ष के सभी महीनों में की जाती है किन्तु पहाड़ी अथवा ठंढे जलवायु में इसकी एक ही फसल बोई जाती है। यह सभी प्रकार की मिट्टियों—विशेषकर दुमट मिट्टी—में उत्पन्न की जा सकती है। इसका उपयोग औषधि, तेल, मशीनों का तेल और साबुन बनाने में होता है। ब्राजील और भारत इसके मुख्य निर्यातक और यूरोप के देश (इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम) तथा संयुक्त राज्य अमेरिका इसके मुख्य आयात करने वाले देश हैं।

(४) राई और सरसों (Rape and Mustard)—सरसों और राई दोनों ही गेहूँ और जौ आदि फसलों के साथ मिलकर बोये जाते हैं। अतः इनके लिये भी वैसा ही जलवायु और मिट्टी चाहिए, जैसा गेहूँ या जौ के लिये किन्तु पानी की अधिकता इनके पौधों को नष्ट कर देती है। यह भारत में अधिक पैदा होती है।

सूखे लौंग प्राप्त होते हैं। फलो के तोडने के बाद उन्हे सूखने के लिए या तो धूप में डाल देते हैं अथवा आग पर जस्ते की बडी-बड़ी रकाबियो मे इन्हे भूना जाता है। प्रथम क्रिया से लौग ४-५ दिन मे और दूसरी क्रिया से लगभग ४ घन्टे में ही सूख जाते है। लौग का उपयोग मसाले के रूप मे खाने मे तथा तेल निकालने मे किया जाता हैं।

भारत मे लौंग की खेती दक्षिणी भारत तक ही सीमित हैं। यहाँ लगभग ८०० एकड भूमि पर की जाती है। मद्रास मे नीलगिरि और तैंकसी की पहाड़ियों तथा कन्याकुमारी जिले में और केरल के कोट्टायम तथा क्विलोन जिले में इसका उत्पादन किया जाता है।

(६) इलायची (Cardamoms)—इसका फल तिकोने आकार का एक गोली (Capsule) की भाँति होता है जिसमे १० से १५ काले छोटे-छोटे बीज होते है। छिलका उतारने पर इन्ही बीजो का उपयोग पान के साथ खाने मे, मसाले मे तथा बिस्कुट और डबल रोटियो मे तथा मद्य और औषधि बनाने मे किया जाता है।

विश्व मे इसका उत्पादन भारत, लका इंडोचीन, सिक्किम, मध्य अमेरिका, जावा, तथा नैपाल मे किया जाता है किन्तु विश्व के बाजारो मे भारतीय इलाइची की माँग अधिक रहती है। युद्ध के पूर्व भारत का निर्यात ७१६ टन, युद्ध के पश्चात् काल मे ६१७ टन और १६६१ मे २००० टन का हुआ। यह अधिकतर स्वीडेन, सऊदी अरब, कुवैत, सयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन आदि देशो को होता है।

इसका उत्पादन भारत मे विशेषत: पश्चिम घाटो के अनेक भागो मे जंगली और पौधा लगाकर दोनो ही अवस्था मे होता है। यह २,५०० से ५,००० फीट तक की ऊँचाई पर भी पैदा की जाती है। इसके लिए ऊँचे तापक्रम ५०° से ६५° फा० तक और अधिक वर्षा ६०″ तक जो नियमित रूप से होती रहे—विशेष उपयुक्त है। इसे धूप से बचाने के लिए अन्य वृक्षो का सहारा लिया जाता है।

इसका वृक्ष बडा लवा होता है जिसके कई टहनियाँ फूटती रहती है। साधारणत: इसे फरवरी-मार्च में बोया जाता है और प्राय. अगस्त से सितम्बर तक फली की चुनाई आरम्भ होकर जनवरी से अप्रेल तक चलती रहती है। प्राय तीसरे वर्ष से फल मिलता रहता है किन्तु चूंकि सभी फल एक साथ नही फलते अत: इसकी चुनाई काफी समय तक चलती रहती है। ३० से ४० दिन के अन्तर पर फल चुने जाते हैं और पूर्णत चुनाई ६ बार मे समाप्त हो पाती है। पहली चुनाई से औसतन प्रति एकड प्रीछे- २० पौंड तक इलाइची मिलती है किन्तु चौथी वर्ष की चुनाई के बाद ३० से ४० पौंड और पाँचवे वर्ष के बाद ६० से ७० पौंड तक फल मिलने लगते है। फलो को तोडकर धूप मे या विशेष प्रकार से बनाये गये सुखाने के कमरो मे कृत्रिम आंच द्वारा इन्हे सुखाया जाता है।

भारत मे इसका सबसे अधिक उत्पादन केरल राज्य मे होता है। यहाँ इसके उद्यान इलाइची की पहाड़ियो में ५० से २०० एकड़ के पाये जाते हैं। मैसूर राज्य मे हसन जिले के मुजराबाद तालुक मे भी इलाइची पैदा होती है। कुर्ग जिले मे इसका उत्पादन वृक्षों को साफ कर पहाडी ढालों पर किया जाता है। अन्य उत्पादक मलाबार तट व जिला, नीलगिरी और उत्तरी कनारा तथा मदुराई जिले हैं।

इलाइची का वार्षिक उत्पादन १,४०० से १,४५० टन तक का होता है।

मध्यवर्ती और पश्चिमी समुद्र-तटीय भागो मे तथा हूमन तजौर, कादूर और चितल-



चित्र ९९ लका मे नारियल के वृक्ष

द्रुग और महाराष्ट्र मे रत्नगिरी और कनारा जिलो मे अधिक नारियल पैदा किया जाता है।

यद्यपि इसे समुद्री हवा की आवश्यकता होती है लेकिन यह समुद्र से दूर के स्थानो मे भी पैदा होने लगा है। अब तो यह उन कई स्थानो मे अधिक होता है जहाँ तापक्रम ७५° फा० से ८०° फा० और वर्षा ८०" से ऊपर होती है। यह सूखा नही सह सकता। इसके लिये ऐसी मिट्टी की आवश्यकता होती है जिसमे वनस्पति का अश ज्यादा हो तथा जो खुली हो।

१९६१ मे खोपरे का उत्पादन ३० लाख टन था जिसमे से १० लाख टन फिलीपाइन्स से, ८६ ००० टन इडोनेशिया से और २,२२ ००० टन लका से प्राप्त किया गया। इसका निर्यात अफ्रीका, इडोनेशिया, लका, फिलीपाइन्स आदि देशो से ब्रिटेन, जर्मनी, स० रा० अमरीका नीदरलैंड आदि देशो को किया गया।

(७) **बिनौला** (Cotton seeds)—मिश्र, भारत, युगडा और सयुक्त राज्य अमेरिका मे, जहाँ कपास अधिक पैदा की जाती है, बिनौला प्राप्त होता है। सयुक्त राज्य अमेरिका को छोड कर बाकी सभी देशो से इसका निर्यात यूरोप के देशो को होता है। इसका उपयोग तेल बनाने और इसकी खली जानवरो को खिलाने तथा खेती के लिये खाद के रूप मे प्रयोग की जाती है।

(८) **ताड़** (Palm)—यह वृक्ष अधिकतर उष्ण कटिबन्धीय देशो मे पैदा होता है अत. पश्चिमी अफ्रीका पूर्वी द्वीप समूह, कांगो गणतन्त्र, नाइजीरिया और फ्रासीसी अफ्रीका मे ताड का तेल अधिक प्राप्त किया जाता है।

६० दिन बाद इसमें अकुर निकल आते है और जब पौधे मे २-२ पत्तियाँ निकल आती हैं तो इन्हे अन्यत्र लगा देते हैं। दक्षिणी भागो म अक्टूबर से दिसम्बर तक तथा पौधो का रोपण मई-जून मे सितम्बर अक्तूबर तक किया जाता है। ८ वर्ष के बाद सुपारी मिलने लग जाती है। सुपाई कई आकार और आकृतियो की होती हैं—गोल लबी या चपटी। ये वृक्ष पर गुच्छो के रूप मे लगती है। साधारणत एक गुच्छे पर १५० से ५५० सुपारियाँ तक लगती है। इनका रग कच्ची अवस्था मे हरा और पक जाने पर भूरा हो जाता है। दक्षिणी और उत्तरी कनारा तथा केरल के कुछ भागो में इन्हे सुखाकर सुपारी बनाई जाती है। य अक्टूबर में माच तक तोडी जाती है। सिंचित भागो मे सुपारी की उपज वर्षा से पैदा किये जाने वाले पौधे की अपेक्षा अधिक होती है। प्रारम्भिक अवस्था में एक एकड मे ६०० से ८०० पौंड सुपारी और पूरी पक जाने पर १,४०० से १,५०० पौण्ड तक प्राप्त की जाती है।

सुपारी का उत्पादन क्षेत्र दक्षिणी भारत मे अधिक वर्षा वाले भागो तक सीमित है। दक्षिणी और उत्तरी कनारा जिले, कुर्ग, मैसूर के मालनद जिले, बगाल और आसाम इसके मुख्य उत्पादक हैं।

(६) काजू (Cashewnut)—काजू का उत्पादन विश्व मे केवल ब्राजील, पूर्वी अफ्रीका और भारत मे होता है। इसका पौधा भारत मे १६ वी शताब्दी मे भूमि का कटाव रोकने के लिए ब्राजील से लाकर लगाया गया। धीरे-धीरे वहा की जलवायु इसके उपयुक्त होने के कारण इसका विकास तेजी से होता गया। इस समय इसकी खेती यद्यपि पूर्वी अफ्रीका और ब्राजील मे भी होती है किन्तु विश्व की ९०% माग भारत से ही पूरी होती है और शेष ब्राजील से।

इसका पौधा उष्ण और अर्द्ध-उष्ण कटिबन्धीय जलवायु के क्षेत्रो मे अच्छा पनपता है। उद्यानों में यह २० से २५ फुट ऊँचा होता है, किन्तु जगली अवस्था मे इससे भी अधिक ऊँचा बढ जाता है। इसमे जडो का विकास अधिक होने के कारण यह कम उपजाऊ अथवा चट्टानी भूमि मे भी पैदा हो जाता है। साधारणत लेटेराइट मिट्टी मे, जहाँ १२०" मे अधिक वर्षा होती है, यह पैदा किया जाता है जैसे पश्चिमी तट पर किन्तु ३५" से कम वर्षा वाले भागो मे भी इसकी खेती समान रूप से की जाती है। जैसे पूर्वी तट पर मद्रास मे। यह सूखा सह सकता है किन्तु पाला इसके लिए हानिकारक है।

इसका वृक्ष दक्षिणी भारत मे उद्यानो मे आम, नारियल, सुपारी आदि वृक्षो के साथ अथवा अन्य क्षेत्रो मे घरो के कोनों पर लगाया जाता है। पौधो से साधारणतः ३-४ वर्ष बाद फल मिलने लगता है। १० वें वर्ष तक उपज निम्न श्रेणी की रहती है किन्तु इसके बाद अच्छी होने लगती है। अधिकतम उपज ७ से १० वर्ष के बीच के काल मे प्राप्त होती है। फलोत्पादन ३५ से ४० वर्षो तक होता रहता है। पौधे मे दिसम्बर से जनवरी तक फूल आने लगते है। इस समय साधारण वर्षा इसके लिए लाभदायक सिद्ध होती है किन्तु लंबे समय तक मेघाच्छन्न अवस्था उपज को गिरा देती है। उद्यानो मे यदि वृक्ष पास-पास लगाये जाते हैं तो प्रति वृक्ष पीछे ६ पौण्ड सूखा काजू प्राप्त होता है किन्तु यदि एक एकड मे केवल ६० से ७० वृक्ष तक हों तो प्रतिवृक्ष पीछे ४० से ५० पौण्ड तक काजू मिल जाता है। केरल मे कोट्टारकारा तथा क्वीलोन जिलो मे प्रति एकड मे ५० से २०० वृक्ष लगाये जाते है किन्तु त्रिचूर के कई भागो में १,००० से भी अधिक। मैसूर राज्य मे ७५ से १०० वृक्ष तक पाये

जलवायु सम्बन्धी दिशायें—काली मिर्च की लता सदाबहार लता है जो एक बार लगाने पर लगभग २५ से ३० वर्षों तक जीवित रहती है। कहीं-कहीं इसकी लता ६० वर्ष तक भी जीवित रहती है। इसका उत्पादन समुद्र-तल के धरातल से लगाकर ३,५०० फीट की ऊँचाई तक होता है। यह अधिक चिकनी दोमट मिट्टी में अच्छी पैदा होती है किन्तु लाल दोमट और बलुही दोमट में भी यह अच्छी पैदा की जा सकती है।



चित्र १००. काली मिर्च

इसके पौधों को सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह अधिकतर आर्द्र और तर जलवायु में पनपता है। इसके लिए न्यूनतम तापक्रम ५०° फॉरेनहीट और अधिकतम तापक्रम १०४° फा० तक पर्याप्त होता है। ५०" से कम वर्षा वाले भागों में यह पैदा नहीं की जा सकती।

इसकी लता साधारणतः ३० फीट तक ऊँची बढ़ जाती है। किन्तु फल को सुविधापूर्वक तोड़ने के उद्देश्य से इसे २० फीट से ऊँचा नहीं बढ़ने दिया जाता है। सहारे के लिए सुपारी, मरूकू आदि के वृक्ष लगाये जाते है। लता में जुलाई के मध्य में फूल आने लगते हैं तथा फल जनवरी के मार्च तक पक कर तैयार हो जाते हैं। पकने पर फलों का रंग भूरा हो जाता है। तीन वर्ष बाद फल मिलने लगता है। किन्तु पहले वर्ष की फसल अच्छी नहीं होती। छठे वर्ष बाद अच्छी फसल मिलने लगती है और अधिकतम उत्पादन ७ वें वर्ष से आरम्भ होता है।

यह मिर्च दो प्रकार की होती है—काली और सफेद गुच्छियाँ। साधारणतः जब हरी होती हैं उन्हें तोड़ लिया जाता है और इनमें पक्के फलों को अलग कर ७-८ दिन तक पानी में डाल देते हैं। जब इनका गूदा मुलायम पड़ जाता है तो उसे मसल डालते हैं जिससे उसके भीतर से गुठलियाँ निकल आती है। यही सूखने पर सफेद मिर्च कहलाती है। काली मिर्च बनाने के लिए सब प्रकार की गुच्छियों का ढेर लगा दिया जाता है और उन्हें धूप में सूखने के लिये ५-६ दिनों तक पड़ा रहने दिया जाता है। जब यह सूखकर कड़ी और काली पड़ जाती है तो यह मुरझा जाती है। इन्हीं को काली मिर्च कहते है। अधिकांश देशों मे काली मिर्च की दो फसलें होती हैं। इनमे बड़ी फसल अगस्त-सितम्बर में और छोटी मार्च-अप्रैल में होती है किन्तु मिर्च तैयार करने का काम साल भर चलता रहता है।

इसके मुख्य निर्यातक देश पश्चिमी द्वीप समूह, सारावाक, इंडोनेशिया, मलाया, हिन्दचीन और मैलेगासी हैं। मुख्य आयातक रूस, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, मलाया, चीन और संयुक्त राज्य अमरीका हैं।

यह सुमात्रा, जावा, बोर्नियो, इण्डोचीन, थाईलैंड और मलाका द्वीप और सारावाक में पैदा होती है। भारत मे यह मद्रास, महाराष्ट्र और बंगाल के तटीय भागों मे होती है। कुल उत्पत्ति का ८५·७% इन्डोनेशिया, ६.५% इन्डोचीन; ४४% सारावाक, २७% भारत, और ३% थाईलैंड से प्राप्त होता है।

देने वाला पौधा है। सन की व्यापारिक पैदावार उन्ही प्रदेशो तक सीमित है जिनमें सस्ते मजदूरो की बहुतायत हैं। बीज प्राप्त करने के लिये पौधो को जड से उखाड़ने तथा तने से रेशा अलग करने के लिये काफी मजदूरों की आवश्यकता होती है। पौधे से रेशा प्राप्त करने के लिए पौधो को कई दिनों तक पानी में सड़ाया जाता है और फिर रेशे के लिये उसे पछाड़ा जाता है। इसके रेशे बहुत मुलायम, चमकीले और मजबूत तथा टिकाऊ होते है। ये साधारणत ८ से ५० इच लम्बे होते हैं।

उत्पादन क्षेत्र

सन के बीज या अलसी पैदा करने वाले प्रमुख देश है—अर्जेन्टाइना और यूरुग्वे के कम्पास जिले, भारत, सयुक्त राज्य अमेरिका के मोन्टाना, मिनेसौटा और डकोटा रियासतें और रूस। अलसी के निर्यात करने वाले देशो मे अर्जेन्टाइना और भारतवर्ष ही मुख्य है। इसके आयात करने वाले देश सयुक्त राज्य, हालैंड, जर्मनी, ब्रिटेन और फ्रास है। अलसी का तेल निर्यात करने वाले देशो मे केवल हालैंड ही अग्रगण्य है।

रेशे के लिए ससार का लगभग सारा सन यूरोप मे पैदा होता है। इन देशो मे रूस की सन की पैदावार सबसे अधिक है। यहाँ से विश्व के कुल उत्पादन का ६०% सन प्राप्त होता है। रूस मे रेशे वाला सन अधिकतर दक्षिण की काली मिट्टियों से लेकर उत्तर के नुकीली पत्ती वाले वनो तक पैदा किया जाता है। रूस मे इसकी खेती मुख्यत उत्तरी भागो मे कैलीनेत, स्मोलैंस्क और लैनिनग्राड मे होती है। अन्य उत्पादक क्षेत्र वायलोरस, किरोच आदि है। यहाँ इसकी खेती मशीनो द्वारा की जाती है। रूस के अतिरिक्त अन्य उत्पादक देश ये है—पोलैंड, वेल्जियम, फ्रास, लिथुएनिया, जर्मनी, हालैण्ड, बटेविया, यूगोस्लाविया, एस्टोनिया और रूमानिया। सयुक्तराज्य मे इसकी खेती डकोटा मे होती है। अन्य उत्पादक अर्जेन्टाइना, अल्जीरिया, इटली, स्वीडेन तथा स्काटलैंड है। रेशे वाले सन का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नही के बराबर है। रूस और पोलैंड मे यह वही खप जाता है किन्तु लिनेन पैदा करने वाले मुख्य केन्द्र वेल्जियम, उत्तरी फ्रास और आयरलैण्ड के वेलफास्ट जिले है। इसका निर्यात प्रधानत रूस से होता है।

(४) पाट (Hemp)

सन की अपेक्षा पाट अधिक मोटा और अधिक मजबूत रेशा है। इसका उत्पत्ति का स्थान मध्य एशिया बताया जाता है। यह रस्से और मोमजामे बनाने के काम आता है। इसका पौधा विभिन्न प्रकार की जलवायु मे पैदा किया जा सकता है।

विश्व मे पाट का उत्पादन लगभग ३ लाख टन होता है जिसका ५२% रूस, १२% इटली, ८% यूगोस्लाविया, और ५% रूमानिया उत्पन्न करता है। अन्य उत्पादक देश पोलैंड, भारत और स० राज्य अमरीका हैं।

पाट की खेती और रेशे को तैयार करने का ढग सन जैसा ही है। रूस सबसे अधिक पाट पैदा करने वाला देश है किन्तु सबसे बढ़िया और सबसे महीन पाट इटली से प्राप्त होता है। रूस के कुर्स्क, ओबलास्क, यूक्रेन और मारजोविया क्षेत्र अधिक प्रसिद्ध है। यूरोप मे रूमानिया और यूगोस्लाविया पाट पैदा करने वाले अन्य

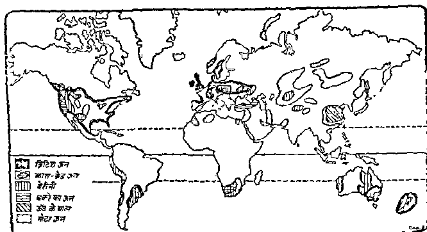
ती है। इसे हटाकर भीतर का भाग निकाल लिया जाता है। सूख जाने पर यह टक जाता है और तब बीज (जायफल) निकाल लेते है। इसका उत्पादन आर्द्र और तर भागो मे ही अधिक किया जाता है। इसकी खेती समुद्र के धरातल से लगभग २,५०० फीट तक की जाती है। जहाँ वर्षा की वार्षिक मात्रा ६०" से १२०" तक होती है तथा औसत तापक्रम ५०° से १००° फा० तक। लेटेराईट तथा पीली दुमट मिट्टी इसके लिये बडी उपयुक्त होती है। अधिक नमी या अधिक सूखा इसके लिए हानिकारक है। इसके प्रति वृक्ष पोछे ५० से १०० पौड पशुओ के मलमूत्र का खाद दिया जाता है। वृक्ष ८ से १० वर्षो बाद फल देना आरम्भ करता है। तथा १०० वर्षो तक फल देता रहता है। फल को पकने मे ६ महीने तक लग जाते है। इनकी चुनाई मुख्यत. जून से अक्टूबर तक की जाती है। नीलगिरी मे प्रति मादा वृक्ष पीछे २० पौड जायफल और १ पौड जावित्री प्राप्त होती है। इसका उपयोग मसाले तथा औषधि के रूप मे किया जाता है। भारत मे इसका उत्पादन मुख्यतः दक्षिणी भारत तक ही सीमित है। यहाँ केरल राज्य के तटीय क्षेत्रों मे तथा नीलगिरि और तेनकासी पहाडियो मे पैदा किया जाता है। कुछ उत्पादन मैसूर और बंगाल मे भी प्राप्त होता है। किन्तु इसका क्षेत्र ३०० एकड से अधिक नही है। विश्व का आधा उत्पादन इंडोनेशिया और आधा पश्चिमी द्वीप समूह से प्राप्त होता है।

(५) लौंग (Cloves) —यह एक वृक्ष (Euglnia caryo phyllauta) के सूखे फल है जो मलक्का द्वीपो का आदि वृक्ष है। अब इसका उत्पादन जजीबार, मसाले के द्वीपो, सुमात्रा, जावा, लका और मैलेगासी तथा भारत मे भी किया जाने लगा है।

चित्र १०१. लौंग का पौधा

इसे नम तथा गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। भारत मे इसका उत्पादन समुद्र तटीय भागो से लेकर ३०० फीट की ऊँचाई तक किया जाता है। जहाँ वार्षिक वर्षा ६०" से १००" तक होती है। यह गहरी दुमट अथवा गहरी पीली मिट्टी मे अधिक अच्छा पैदा होता है। भारत के तटीय भागो मे इसकी खेती बलुही भूमि मे और केरल मे लेटेराइट मिट्टी मे की जाती है। जडो मे पानी जमा हो जाने से यह नष्ट हो जाता है। पौधो मे घास-फूस, नदी की मिट्टी और अमोनियम सल्फेट का भी खाद दिया जाता है।

लौंग के बीजो को पहले नर्सरी मे बोया जाता है। जब पौधे लगभग ६" बडे हो जाते है तो उन्हे अन्यत्र रोपा जाता है। लगभग ४-५ वर्ष बाद पौधे मे फूल आने लगते हैं। अनुपजाऊ भूमि मे फूल ६ से ८ वर्ष बाद तक आते है। नीलगिरि पहाड़ियों मे दिसम्बर जनवरी मे फूल खिलने लगते है तथा अप्रेल तक फल तैयार हो जाते है। तेनकसी पहाड़ियो मे फूलो का खिलना लगभग ३० से ५० दिन बाद होता है। तटीय भागो मे ये दिसम्बर मे फूलते है और दिसम्बर जनवरी तक फल पक जाता है। औसत एक वृक्ष से प्रति वर्ष ५ पौंड सूखे लौंग प्राप्त होते हैं। यदि १ एकड भूमि मे १०० वृक्षो का औसत माना जाये तो प्रति एकड पीछे ३७५ पौंड तक



चित्र १०६. ऊन की किस्में

(४) दोगली भेड़ की ऊन (Cross-Bred Wool)—अधिकतर अँग्रेजी और मैरीनो भेड की नस्लो के मिश्रण से पैदा होने वाली भेडो से प्राप्त होता है। इस ऊन का उत्पादन ससार के ऊन उत्पादन का ४३% होता है। १९६१-६२ मे १३७ करोड़ पौंड ऐसी ऊन पैदा की गई।

नीचे की तालिका मे विभिन्न प्रकार की ऊनो का उत्पादन बताया गया है ७ :—

विभिन्न किस्म की ऊन का उत्पादन

(००० हजार टनो मे)

ऊन की किस्म	१६३४-३८	%	१६४८-४६	%
मैरीनो	६४५	३७	५६५	३४
दोगली	६८२	४०	७४१	४३
कारपेट	३८८	२३	३८८	२३
योग	१७१५	१००	१७२४	१००

उत्पादन की अवस्था

ऊन देने वाली भेड़ अधिकतर ठंढी, खुश्क और सम जलवायु मे पाई जाती है। अत. संसार के भेड़ पाले जाने वाले प्रदेशो का औसत तापक्रम सर्दियों मे ५०° फा० और गर्मियो मे ७५°फा० के लगभग होना चाहिये और वर्षा २०" से ३०" तक ठीक रहती है क्योंकि १०" से कम वर्षा होने पर घास कम होती है और ३०" से

7. *U. N. O.*, **Fibres**, 1949, p. 44.

(७) **हल्दी (Turmeric)**—हल्दी उष्ण कटिबन्ध में पैदा होने वाली वस्तु है। यह भारत, हिन्द चीन, पूर्वी द्वीप समूह से लगाकर चीन मे पैदा की जाती है।

इसका उत्पादन समुद्र तल से लगाकर ४,००० फीट की ऊँचाई तक किया जाता है। पश्चिमी और पूर्वी घाट में यह जगली अवस्था में पैदा होती है। यह चिकनी दुमट अथवा बलुही मिट्टी मे अच्छी पनपती है किन्तु नमकीन मिट्टी या जडो मे पानी भर जाने से पौधा नष्ट हो जाता है। यह सिंचाई के सहारे भी बोई जाती है। पश्चिमी तट पर वर्षा के साथ ही इसका उत्पादन किया जाता है।

हल्दी की ऐसी कोई किस्म नही है जो अपने आप पहिचानी जा सके फिर भी जिन इलाको मे पैदा होती है, उसके आधार पर व्यापारियो ने इसके कुछ नाम रख लिये हैं। व्यापारियो मे हल्दी की किस्मो के दो नाम चलते है—एक गठीली (Bulb) और दूसरी लम्बी (Finger)। उडीसा मे पैदा होने वाली ७५% हल्दी तथा मद्रास में होने वाली २०% हल्दी 'लम्बी' किस्म की होती है। शेष हल्दी 'गठिया' किस्म की होती है। लबी हल्दी अच्छी समझी जाती है इसलिए इसके दाम अधिक मिलते हैं।

हल्दी के मुख्य उत्पादक आन्ध्र प्रदेश और उडीसा राज्यो के पूर्वी तट है। आन्ध्र में इसका सबसे अधिक उत्पादन गतूर जिले मे और कडुप्पा, कृष्णा तथा पूर्वी और पश्चिमी गोदावरी जिलो में किया जाता है। मद्रास राज्य के सलेम, कोयम्बटूर और तिरुचिरापल्ली जिलो में भी इसका उत्पादन होता है।

उडीसा राज्य मे गजाम, फूलबानी और कोरापुट जिले मे तथा महाराष्ट्र में थाना, खानदेश, सागली और कोल्हापुर इलाकों मे भी हल्दी पैदा होती है।

(८) **सुपारी (Arecanut)**—यह भी उष्ण कटिबन्धीय पौधा है जो अधिकाशत दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों—भारत, पाकिस्तान, लका, मलाया और फिलीपाइन्स मे होती है।

सुपारी का वृक्ष ताड की भाँति ६० फीट से भी अधिक लंबा होता है। इसका उत्पादन समुद्रतट से लगाकर ३,००० फीट की ऊँचाई तक किया जाता है। किन्तु अधिक ऊँचाई पर उत्पादन अधिक प्राप्त नही होता है। कुर्ग जिले और वाइनाड जिले मे अधिक ऊँचाई पर होने के कारण फल अधिक कठोर नही होता क्योकि तापक्रम पकने के समय अधिक ऊँचे नही रहते। यह ६०° फा० से १००° फा० के तापक्रम मे अच्छी पनपती है। इसके लिए अधिक वर्षा, नमी, शीत वायुमडल की आवश्यकता होती है। केरल के कई भागो में यह केवल वर्षा के सहारे ही पैदा की जाती है, अन्य भागो मे दिसम्बर से मई तक इसकी सिंचाई की जाती है। ८०" से १५०" की वर्षा इसके लिए उपयुक्त मानी जाती है।

सुपारी का वृक्ष कई प्रकार की मिट्टियो मे पैदा किया जाता है—लैटराइट, लाल दुमट मिट्टी, तथा कछारी मिट्टी मे किन्तु अधिकाशत. उत्पादन लेटेराइट मिट्टी के क्षेत्रो में किया जाता है। इसके पौधो की जडो मे जल न भरा रहना चाहिये तथा जल का बहाव होना आवश्यक है।

सुपारी को पहले ४-४ इच की दूरी पर क्यारियो मे बोते है फिर ४० से

ऊन का उत्पादन

(१० लाख पौंड में)

देश	१९६१-६२	१९५८-५९	१९५७-५८	१९५६-५७	१९३५-३७ औसत
आस्ट्रेलिया	१७०३	१,३८६	१,४२८	१,५९५	१०१८
न्यूजीलैंड	६०५	५०५	४६७	४९१	३०८
द० अफ्रीका	३३१	३१५	३१०	३२१	२४६
अर्जेन्टाइना	३८०	४०८	४०९	३९२	३८९
यूरेग्वे	१८५	२१०	२०९	१८९	१२१
इगलैण्ड	१२७	११५	११२	१०५	१०८
संयुक्त राज्य अमरीका	३०६	२७२	२६९	२७९	४२४
अन्य देश	२०२४	१,७०६	१,६६६	१,६४३	१,१९०
विश्व का योग	५६६५	४,९१७	४,९००	४,९८५	३,८०४

आस्ट्रेलिया—ससार का सबसे अधिक ऊन आस्ट्रेलिया मे उत्पन्न होता है। यहा की ऊन मैरीनो भेड़ों से प्राप्त होती है जो यहाँ १८ वी शताब्दी मे यूरोप से लाई गई थी। भेड पालने का धन्धा न्यू-साउथ वेल्स (५०%), क्वीन्सलैंड (२०%) और विक्टोरिया प्रान्त (१५%) की उच्चतम भूमि मे जहाँ लगभग ३०" वर्षा होती है, मे किया जाता है। पश्चिमी भाग मे (१०%) भी ऊन के लिये भेड़े बहुत पाली जाती है। आस्ट्रेलिया मे १०" से कम वर्षा वाले भागो मे प्रति वर्गमील पीछे ५० से ७० भेडें और तर भूमि मे दक्षिणी पूर्वी भागो मे २०० से ६०० भेड तक मिलती हैं। यहाँ ऊन इकट्ठा करने वाले केन्द्र सिडनी, मेलबार्न, अलबरी, डिलाग, ब्रिस्बेन और बैलेरेट है। आस्ट्रेलिया की विशाल मरुभूमि मे भेडें चराने की सुविधा नहीं है क्योंकि वहाँ पानी नहीं है। साथ ही वहाँ गरमी भी बहुत पडती है। इस कारण वहाँ भेड़ें नही पाली जाती। आस्ट्रेलिया के भेड चराने वालों को कुछ भागो मे भेडों की बीमारियों का तथा जगली कुत्तो और टिक नामक कीडों का सामना करना पडता है। इन बीमारियो के कारण कहीं-कहीं भेड पालने मे कठिनाई उत्पन्न हो गई है। आस्ट्रेलिया मे एक प्रकार की कॉंटेदार वनस्पति (Prickly Pear) होती है जो भेड के ऊन मे चिपट जाती है और ऊन को खराब कर देती है। आस्ट्रेलिया के पूर्वी तट पर पहाड की एक ऊँची और लम्बी दीवार खडी है। यह दीवार पानी की हवाओं को रोक लेती है। अतएव पहाड के बीच पहली पट्टी मे खेती के लिये यथेष्ट पानी बरसता है। किन्तु पहाड के पश्चिम की ओर पानी बहुत कम होता है अस्तु वहाँ केवल घास ही उत्पन्न हो सकती है। ये घास के मैदान प्रसिद्ध भेड चराने के मैदान हैं। किन्तु जहाँ वर्षा बहुत कम होती है वहाँ भेडें कम पाली जा सकती है। अस्तु भेडों का पालना वर्षा के ऊपर निर्भर करता है। जहाँ बहुत अधिक

8. *Source*, **United States Department of Agriculture.**

देश जर्मनी, स० राज्य, इंगलैंड, कनाडा, फ्रांस, जापान, अफ्रीका, इटली और अर्जेन-टाइना है।

वर्तमान समय मे जूट के उत्पादन को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। कई देशों मे अन्य किस्म के रेशे का प्रचार बढ़ रहा है। उदाहरण के लिए न्यूजीलैण्ड में टिनेक्स (Tenax) नामक रेशे के बोरे मे ऊन भरा जाता है। रूस और अर्जेन्टाइना मे अलसी के रेशे बोरे बनाने मे व्यवहृत किये जाते हैं। कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया मे कागज और कपड़े के बोरे ही काम मे लिये जाने लगे हैं। पूर्वी अफ्रीका मे सीसल (Sisal), मैक्सिको मे हैनेक्वीन (Henequin), कोलम्बिया मे फिक (Fique), ब्राजील मे करोआ (Caroa), स्पेन मे एस्पर्टो घास, इटली मे जूलीटल (Julital), जावा में रोसेला (Rosella) और दक्षिणी अफ्रीका मे जगली स्टोकरूस (Stockroos) नामक विभिन्न प्रकार के पौधो के रेशो से बोरे बनाये जाने लगे है। किन्तु अभी तक भारत मे जूट के बने बोरो से किसी भी अन्य प्रकार के बोरे लाभदायक सिद्ध नही हुए है। कई देशो में जूट ही उत्पन्न किया जाने लगा है किन्तु फिर भी विश्व के प्रमुख कृषि उत्पादक देशो मे भारतीय जूट के बोरो की माँग ही अधिक है। इन विभिन्न रेशे वाले पौधों की उत्पत्ति के साथ-साथ कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका मे फसलो को इकट्ठा करने के लिए यांत्रिक तरीके (Elevators) काम मे लाये जा रहे हैं तथा यातायात और बन्दरगाहो पर ढेरो के रूप मे माल इकट्ठा किया जाने लगा है जिसमे बोरो की आवश्यकता नही पड़ती। अतः यह आवश्यक हो गया है कि जूट और जूट के सामानों के नये प्रयोग निकाले जावें। जूट का उपयोग टाट का कपड़ा (Hessienn), बोरे और बोरियो, गलीचे, दरियाँ, टाट-पट्टियाँ, कम्बल, रस्से-रस्सियाँ, तिरपाल और अभेद्य दीवारें बनाने मे किया जाता है।

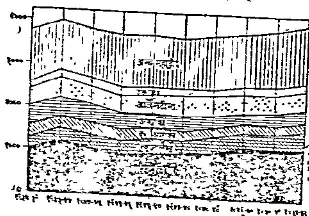
(३) सन (Flex)

अठाहरवीं शताब्दी तक इसका उपयोग कपड़ा बुनने के लिए किया जाता था और उस समय इसका उत्पादन रूस और अमेरिका मे होता था। किन्तु जब से सूती कपड़े के उद्योग का विकास हुआ है इसका महत्व कुछ घट गया है। सन अपने बीज (अलसी) और रेशे दोनो के लिए बोया जाता है। इसके बीजो से एक प्रकार का तेल निकाला जाता है (अलसी का तेल)जो कि रग और रोगन तथा वार्निश बनाने मे काम मे लाया जाता है। खली जानवरो के खिलाने के काम मे आती है तथा रेशा वस्त्र बनाने के काम आता है। इसके मोटे रेशे से मोमजामा, रस्से आदि बनाते हैं और इसके चिथड़े से कागज बनाया जाता है। रेशे से रूमाल, मेजपोश तथा चद्दरें बनाई जाती हैं। लिनेन के कपडे पर चित्रकारी भी अच्छी होती है। सूतली, रस्से, धागा और सूत भी इससे प्राप्त किये जाते है।

जलवायु सम्बन्धी अवस्थाएँ

सन कई प्रकार की जलवायु मे पैदा किया जा सकता है। विशेष रूप से रेशा प्राप्त करने वाले पौधो के लिये शीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है। किन्तु बीज प्राप्त करने के लिये भारत जैसी उष्ण और अर्द्ध-उष्ण जलवायु चाहिए। इसके लिये उपजाऊ मिट्टी की जरूरत होती है क्योंकि सन मिट्टी का उपजाऊपन नष्ट कर

प्राप्त होती है। किन्तु इङ्गलैण्ड, हालैंड और आस्ट्रेलिया की दूसरी मजबूत नस्लें भी यहाँ प्रचलित कर दी गई हैं। यूनियन की ऊन अधिकतर बाहर जाने के लिये ही पैदा की जाती है। ऊन की प्रतिवर्ष निर्यात ३०० पौण्ड के लगभग है। ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी दक्षिणी अफ्रीका की ऊन के सबसे बड़े ग्राहक हैं।



चित्र ११० भेड़ों की संख्या

अर्जेन्टाइना—संसार के ऊन पैदा करने वाले देशों में अर्जेन्टाइना का दूसरा स्थान है। यहाँ ५०० लाख भेड़ें पाई जाती हैं। इनकी भेड़ें अधिकतर पराना की घाटियों में पाई जाती हैं। यहाँ भेड़ें मुख्यतः दो क्षेत्रों में पाली जाती हैं—(१) ब्यूनेस आयरस प्रान्त में जहाँ गर्मियाँ ठंडी और तर रहती है तथा (२) पैटेगोनिया के पठार तथा टैरा डैलफ्यूगो के द्वीप में। वहाँ बड़े-बड़े बाड़े बनाकर ६,००० भेड़ें तक एक-एक बाड़े में पाली जाती हैं। भेड़ें विशेष रूप से इंगलैंड और स्काटलैंड के लोगों के द्वारा पाली जाती हैं। मैरीनो भेड़ों से सबसे अच्छी ऊन प्राप्त होती है किन्तु यहाँ अन्य किस्में भी प्रचलित हैं। इसकी ऊन का निर्यात विशेष रूप से बेल्जियम, फ्रांस और जर्मनी को होता है।

यूरेग्वे—यह दक्षिणी अमेरिका का दूसरा ऊन पैदा करने और बाहर भेजने वाला महत्वपूर्ण देश है। बाहर भेजने वाले पदार्थ में अकेली ऊन का भाग लगभग ४० प्रतिशत होता है। यूरेग्वे में ऊन और गोश्त के लिये भेड़ों के वितरण और विस्तार की बहुत अधिक सम्भावना है। इसकी ऊन की निर्यात भी प्रधानतः फ्रांस, बेल्जियम और जर्मनी को होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका—यह ऊन हर जगह पैदा की जाती है किन्तु ऊन पैदा करने का सबसे बड़ा केन्द्र रॉकी पर्वतों का ढालू प्रदेश है। स० राज्य में भेड़ों की संख्या का ८२% भाग मिसीसिपी नदी के पश्चिमी राज्यों में पाया जाता है। टैक्सास में ६६ लाख, व्योमिंग में ३१ लाख, कैलीफोर्निया में २० लाख; कोलोराडो में १८ लाख; मोंटाना में १७ लाख, यूटाह में १४ लाख; न्यूमैक्सिको १४ लाख, आयोवा में १२ लाख, इडाहो में १० लाख, मिसौरी में ११ लाख और दक्षिणी डकोटा में १० लाख भेड़ें पाई जाती हैं। यहाँ की अधिकतर ऊन मोटे किस्म की होती है जो कि अंग्रेजी नस्ल की मोटी ऊन देने वाली भेड़ से प्राप्त हो जाती है। बढ़िया किस्म

देश है। भारतवर्ष अपने बीजों और रेशों दोनो के लिए काफी मात्रा मे पाट पैदा करता है। भारत मे इसका उत्पादन मद्रास, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र मे किया जाता है। एशिया मे जापान और कोरिया भी कुछ मात्रा मे पाट पैदा करते हैं। सयुक्त राज्य मे पाट की पैदावार धीरे-धीरे बढ रही है। यहाँ ओहियो, विस्कोसिन और केनेकी के राज्यो मे यह पैदा किया जाता है।

पाट के अन्तर्गत अन्य कई रेशे आते है जिनमे मुख्य ये है :—

(i) **मनीला पाट या अबाका** (Manila Hemp or Abaca)—यह एक उष्ण जलवायु का पौधा है और केवल फिलीपाइन द्वीप समूह मे बोया जाता है। इसके रेशे ८ से १० फीट लम्बे होते हैं। इसके लिए उपजाऊ मिट्टी, तर जलवायु चाहिए किन्तु यह पौधा हवा नही सह सकता। सूखा भी पौधे के लिए हानिकारक है। यह काफी मजबूत होता है तथा लचकदार भी। इसलिए यह रस्सों और जहाज के पाल के रस्सो के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यह रस्से जब गल जाते है तो मोटे कागजो के लिये इस्तेमाल मे लाये जाते हैं। इसका निर्यात फिलीपाइन द्वीप की राजधानी मनीला से किया जाता है, विशेषकर सयुक्त रा० अमेरिका को।

(ii) **सीसल पाट** (Sisal Hemp)—यह एक लम्बा, मजबूत, मोटा और सस्ता रेशा है जो कि एक पौधे की मोटी पत्तियो से प्राप्त होता है। यह रस्सी आदि बनाने मे काम आता है। यह मेक्सिको, मध्य अमेरिका, केनिया, टैंगेनिका, न्यासालैंड, क्वीन्सलैंड, पश्चिमी द्वीप समूह, ब्राजील हेटी द्वीप और हवाई द्वीप समूह मे बोया जाता है। यह अधिकतर अनुपजाऊ मिट्टी और सूखी जलवायु मे पैदा होता है।

(iii) **न्यूजीलेंड पाट** (New Zealand Hemp)—यह एक पौधे की लम्बी सकरी पत्तियों से प्राप्त होता है जो न्यूजीलैंड की दलदली मिट्टियों मे बहुतायात के साथ पाया जाता है। रेशे के लिये इसका प्रयोग बहुत ही सीमित है।

(५) ऊन (Wool)

ऊन का महत्व पशुओ से प्राप्त होने वाले रेशो मे सबसे अधिक है। भिन्न-भिन्न प्रकार की भेडो से प्राप्त होने के कारण ऊन भी कई प्रकार की होती है। मुख्य प्रकार की ऊनें ये है—

(१) **मेरीनो भेड़ की ऊन** (Marino Wool)—टर्की, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और भूमध्यसागरीय प्रदेशो से प्राप्त की जाती है। यह ऊन महीन, मजबूत और लम्बे रेशो वाली होती है। १९६१-६२ मे १२७ करोड़ पौंड ऐसी ऊन प्राप्त की गई।

(२) **अंग्रेजी भेड़ की ऊन** (English Wool)—विशेषकर लिंकन और लिसेस्टर भेडो से इङ्गलैण्ड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और दक्षिणी अफ्रीका मे प्राप्त की जाती है। इसका रेशा अधिक लम्बा होता है और यह बढ़िया ऊनी कपड़े बनाने के काम मे आती है।

(३) **एशियाई भेड़ की ऊन** (Asian Wool)—एशिया मे ईरान, अफगानिस्तान, तिब्बत, चीन और भारत देशो की भेडों से प्राप्त की जाती है। यह ऊन खुरदरी और छोटे रेशे वाली होती है तथा इसका उपयोग कालीन, कम्बल और रग आदि बनाने मे होता है।

आस्ट्रेलिया में प्रति भेड़ ७½ पौंड ऊन प्रति वर्ष देती है। भारत में प्रति वर्ष कुल ऊन लगभग ६० करोड़ पौंड होती है।

विश्व व्यापार—ऊन भेजने वाले मुख्य देश आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अर्जेन्टाइना, दक्षिणी अफ्रीका, यूरेग्वे, भारत, चीन और अल्जीरिया हैं। ऊन आयात करने वाले मुख्य देश ब्रिटेन, फ्रांस, संयुक्त राज्य, जर्मनी, जापान, बेल्जियम, रूस और इटली हैं।

दूसरे महायुद्ध के बाद में ऊन का विश्व उपभोग १०-१५ प्रतिशत बढ़ गया है और इसी कारण उत्तम श्रेणी का ऊन कम मिलता है। परन्तु हाल ही में कुछ नई खोजें हुई हैं उनमें से विशेष उल्लेखनीय खोज यह की गई है कि मध्य व निम्न श्रेणी के ऊन की उपयोगिता किस प्रकार बढ़ाई जावे। इस खोज के फलस्वरूप आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका, और संयुक्त राज्य में ऊन के उत्पादन की दशा बहुत सुधर गई है।

भेड़ों के अतिरिक्त बकरियों और ऊँटों से भी ऊन प्राप्त होता है—

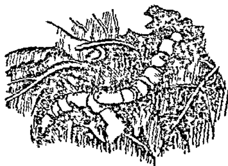
(१) ईरान, अरब, एशिया माइनर, अफ्रीका और मध्य एशिया में ऊँट के ऊन (Camel's wool) का बड़ा महत्व है। ऊँट की गर्दन और कूबड़ से बाल मिलते हैं।

(२) भेड़ों के अलावा अंगोरा बकरियों, तिब्बत की याक, अल्पाका, और लामा पशुओं से भी ऊन प्राप्त होती है। दक्षिणी अफ्रीका की बकरियों से प्राप्त ऊन को मोहर (Mohair) कहते हैं। तिब्बत की बकरियों का ऊन बड़ा मुलायम होता है और इनकी ऊन से काश्मीरी शाल, दुशाले बनाये जाते हैं। यह तिब्बती बकरियां तिब्बत, काश्मीर और दक्षिणी चीन में पाई जाती हैं।

(३) दक्षिणी अमेरिका के पीरू और बोलीविया राज्यों में अल्पाका, विकूना, और लामा नामक पशुओं से अल्पाका ऊन प्राप्त होता है। इसका उपयोग अस्तर गोटे, फीता लगाने तथा मामूली वस्त्र बनाने में होता है।

(६) रेशम (Silk)

रेशम एक कीड़े के कोये से प्राप्त होता है। यह कीड़ा विशेषकर शहतूत के वृक्ष की पत्तियों को खाकर जीवित रहता है। चेस, साल, लॉरेल, अण्डी, शाहबलूत नारंगी इत्यादि वृक्षों की पत्तियां भी रेशम के कीड़े को खिलाई जा सकती हैं। रेशम का कीड़ा सबसे पहले चीन में पाला गया और यहीं से जापान, भारत, फारस तथा भूमध्यसागरीय देशों को ले जाया गया।


चित्र ११३. रेशम का कीड़ा

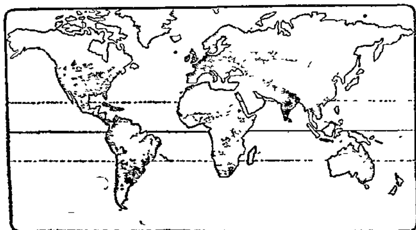
जलवायु संबंधी दशायें

शहतूत का वृक्ष गर्म शीतोष्ण प्रदेशों में तथा उपोष्ण क्षेत्रों में खूब उगता है। उष्ण कटिबन्धीय भागों के पहाड़ी प्रदेशों में भी शहतूत पैदा होता है। इस प्रकार इस वृक्ष के उगने के क्षेत्र

अधिक होने पर भेडो को खुर की बीमारी हो जाती है। इस प्रकार की उत्तम जलवायु आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, द० अमरीका व न्यूजीलैण्ड में पाई जाती है।

उत्पादन क्षेत्र

संसार के कुल उत्पादन का लगभग ३० प्रतिशत ऊन अकेले आस्ट्रेलिया से ही प्राप्त हो जाता है। अन्य ऊन उत्पादक देश ये हैं—अर्जेन्टाइना १४ प्रतिशत, न्यूजीलैण्ड १० प्रतिशत, सयुक्त राज्य ७ प्रतिशत, दक्षिणी अफ्रीका ६ प्रतिशत; ब्रिटेन २.५ प्रतिशत और स्पेन २ प्रतिशत। आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना, न्यूजीलैण्ड,



चित्र ११०. भेडों का वितरण

द० अफ्रीका संघ और यूरेग्वे पाँचों देश मिला कर विश्व का आधा ऊन उत्पादन—३/४ एपेरेल ऊन और ४/५ ऊन—का निर्यात करते हैं। इन देशों से अधिकतर कारपेट ऊन (Carpet Wool) प्राप्त होता है। इसका उत्पादन उत्तरी अफ्रीका से लगाकर द० यूरोप, उत्तरी भारत और पश्चिमी चीन, अर्जेन्टाइना तथा यूरेग्वे से प्राप्त होता है। कम महत्व वाले देश भारत, चीन, टर्की, फ्रास, इटली आदि है। सबसे अधिक ऊन दक्षिणी गोलार्द्ध से ही प्राप्त होता है क्योकि (१) इन भागों मे अर्ध शुष्क प्रदेशो की अधिकता है जिससे यहाँ विस्तृत चरागाह बन गये हैं। (२) ससार के बडे-बडे बाजारो से दूर होने के कारण इन देशो को हल्के और कीमत पदार्थों के पैदा करने की अधिक सुविधा रहती है, तथा (३) जनसंख्या कम होने के कारण भूमि का अधिकाश भाग चरागाहो के लिये खाली ही मिल जाता है। अगले पृष्ठ की तालिका मे ऊन का उत्पादन बताया गया है।

१९६१ मे आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, यूरेग्वे और न्यूजीलैण्ड देशो से कुल १५०० हजार मैट्रिक टन का निर्यात किया गया। इसका ४५% सं० राज्य अमरीका को, २२% इङ्गलैण्ड को, ९% फ्रास को और ५% जापान तथा बेल्जियम को गया।

साल भर ताजा पत्तियाँ मिलती रहती है और इसलिए इन देशों मे रेशम के कीड़े पालने के व्यवसाय में अधिक उन्नति मे हुई है।

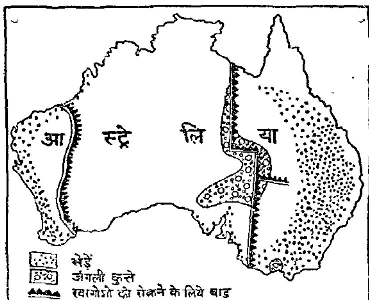
रेशम के कीडो को दो प्रकार से पाला जाता है—बाहर पेडो पर तथा मकान के अन्दर के पत्तियो पर। बाहर पेडो पर जब बीज पालन होता है तो रेशम के कीडों का बीज व्यापारियो से मोल ले लिया जाता है। रेशम का कीडा जब सो जाता है और अपने चारो तरफ एक रेशम की झिल्ली (Socoon) पैदा कर लेता है तब उसे मौथ (Moth) या रेशम के कीडे का बीज कहते हैं। यह बीज मौसम आने पर अपनी झिल्ली से बाहर निकल आता है और थोडे समय मे इससे हजारो अण्डे के कीडे पैदा हो जाते है। इन अण्डो को पत्तियो पर रख देते है। नवें दिन जब इन अण्डो से बच्चे निकलते हैं तो उनको शहतूत की पत्तियो पर रख दिया जाता है। इन कीडो को पालने वाले इनकी बडी रक्षा करते है, नही तो चिडियाँ और चीटियाँ इन कीडो को खा जायें। पेडो के तने को हर समय साफ रखना पडता है ताकि इन पर और कोई कीड़े इत्यादि नहीं चढ सकें। जब ये एक पेड की पत्तियो को खा जाते है तो इन पेडो की डालियो जिन पर ये कीडे होते है काट डाली जाती है। अब ये लोग काटी हुई डालियो को नये पेडो पर बाँध देते हैं ताकि इन डालियो के कीडे इन पर से नयें पत्तो पर रेंग कर पहुँच जायें। इस प्रकार एक पेड के बाद दूसरे पेड पर इनको तब तक बदलते रहते है जब तक कि रेशम का कीडा कूकून नही बना लेता। रेशम के कीड़े बडे होने पर अपने चारो पर अपने ही मुँह से निकाला हुआ धागा लपेटने लगते हैं। यह धागा कीडा अपने चारो ओर लपेट लेता है तो यह सो जाता है। प्रत्येक कीडा लगभग ४,००० गज रेशम की झिल्ली तैयार करता है।

जब रेशम के कीडे को कमरे मे पाला जाता है तो मौथ को प्राय. बाँस की चटाइयो पर रखा जाता है। बाहर पाले जाने वाले कीडो की भाँति ये कीडे भी अपनी झिल्ली से ६-१० दिन में बाहर निकलते हैं और ८-६ दिन बाद ही हजारो अण्डे पैदा कर देते है। तब कीडों को शहतूत के पत्तो को डाल दिया जाता है। कीडो को पालने वाले लोगो को इस बात का बडा ख्याल रखना पडता है कि हर समय खाई हुई पत्तियों को वे हटालें और उनकी जगह नई पत्तियाँ रख दें। जिन मकानो मे ये कीडे पाले जाते है वहाँ रोशनी तथा हवा का भी पूरा-पूरा प्रबन्ध होना आवश्यक है नही तो कीडों को बीमारी लग जाने का बडा डर रहता है। जब रेशम के कीडे रेशम उगलने लगते है तो वे बडे बैचेन हो जाते हैं। तब इन कीडो को वहाँ से हटा कर पर्दे पर रख दिया जाता है। जब कीडे ३ से ३½" लम्बे हो जाते है तो कूकून बनना आरम्भ होता है। इन कूकूनो को इकट्ठा कर बेच दिया जाता है।

उत्पादन क्षेत्र

रेशम के कीडे पालने का धन्धा चीन का प्राचीन व्यवसाय है। वहाँ से यह व्यवसाय जापान, ईरान, भारत तथा रूमसागरीय देशों मे फैला। इंगलैण्ड, अमेरिका मैक्सिको इत्यादि देशों मे भी इस धन्धे को चलाने के लिए प्रयत्न किये गये किन्तु इसमे विशेष सफलता न मिली। संयुक्त राज्य अमेरिका मे इस धन्धे के असफल होने का एकमात्र कारण सस्ते श्रमिकों का अभाव था। विश्व मे रेशम के उत्पादन के दो मुख्य क्षेत्र हैं :

वर्षा होती है वहाँ भी भेडे पाली जा सकती है। भेडो को सूखा प्रदेश चाहिए किन्तु ऐसा सूखा भी नही होना चाहिये कि घास ही उत्पन्न न हो सके। सच तो यह है कि



चित्र १११. आस्ट्रेलिया मे भेडो का क्षेत्र

आस्ट्रेलिया के पूर्व के अधिक वर्षा वाले भागो मे केवल मांस के लिये और पश्चिमी सूखे भागो मे ऊन के लिये भेडें पाली जाती हैं। आस्ट्रेलिया मे १६६० लाख भेडें हैं।

आस्ट्रेलिया की ऊन के सब से बडे ग्राहक ब्रिटेन, फ्रांस, बेल्जियम, स० रा० अमेरिका और जापान है।

न्यूजीलैण्ड मे ऊन प्राप्त करने के लिये भेड पालन एक बहुत महत्त्वपूर्ण व्यवसाय है। इन द्वीपो मे लगभग ३५ लाख भेडें है। प्राकृतिक दशा विभिन्न होने के कारण द्वीपो मे भेड की कितनी ही किस्मे हैं जिन्हे विभिन्न भौगोलिक दशाओ की आवश्यकता होती है। पश्चिमी तट के पहाडी चरागाहो मे बढिया किस्म की मैरीनो ऊन मे विशेषता प्राप्त की जाती है किन्तु पूर्व के केन्टरबरी के मैदानो से कौरीडेन नामक भेड की उत्तम ऊन प्राप्त होती है। द्वीपो के अन्य भागों मे भेड विशेष रूप से गोश्त के लिये पाली जाती है। यहाँ की ऊन अधिकतर निर्यात के लिये ही पैदा की जाती है। ब्रिटेन इसकी ऊन का सबसे बडा ग्राहक है।

ससार के ऊन पैदा करने वाले देशों में दक्षिणी अफ्रीका का स्थान चौथा नम्बर है। यहां ऊन के लिये भेड पालने का धन्धा सबसे पुराना और देश के सबसे महत्वपूर्ण धन्धो मे से है। दक्षिणी अफ्रीका में लगभग ४०० लाख भेड़ें है जो कि विशेष रूप से वैल्ड के पठारी भागो मे केन्द्रित हैं। यहाँ की सबसे बढिया ऊन मैरीनो भेड से

दक्षिणी और पूर्वी एशिया से विश्व के उत्पादन का ८०% रेशम मिलता है और शेष भूमध्यसागरीय प्रदेशों से। प्रथम क्षेत्र में चीन अग्रगण्य माना गया है यद्यपि इसके उत्पादन के विश्वसनीय आकडे प्राप्त नहीं है। जापान का स्थान चीन के बाद है किन्तु इस देश की रेशम की उत्पत्ति बहुत अधिक है। एशिया में तृतीय स्थान कोरिया का है। अन्य उत्पादक मंगोलिया, ईरान, भारत, और इण्डोचीन इत्यादि है।



चित्र ११५. संसार में ऊन और रेशम की उपज

यूरोपियन क्षेत्र में सर्व प्रथम स्थान इटली का है किन्तु संसार में इसका स्थान तीसरा है। अन्य उत्पादक फ्रांस, बलगेरिया, स्विट्जरलैंड, स्पेन और यूनान इत्यादि है।

चीन—कच्चे रेशम के उत्पादन में जापान के पहले चीन का स्थान आता है। कच्चे रेशम को उत्पन्न करने के यहाँ पर तीन क्षेत्र है :—(१) यांगटिसी की घाटी, (२) सीक्यांग नदी की घाटी, एवं (३) शान्तुग प्रायद्वीप। प्रथम दो क्षेत्रों में रेशम के कीड़ों को शहतूत के पौधो पर पाला जाता है तथा शान्तुग प्रायद्वीप में ओक के पत्ते प्रयोग में लाये जाते है। बलूत की पत्तियों के प्रयोग से प्राप्त रेशम निकृष्ट श्रेणी का होता है। चीन में सबसे अधिक कच्चा रेशम चुकियांग क्वान्टुंग तथा शेचवान प्रान्तो में उत्पन्न होता है। ताइहो झील के चारो ओर का प्रदेश रेशम का घर है। इस झील के चारों ओर १,००० वर्गमील के क्षेत्रफल में रेशम उत्पन्न करने का मुख्य व्यवसाय है। सीक्यांग की घाटी में एक बाधा यह है कि रेशम के कीडे उष्ण जलवायु में उचित रूप से नही पाले जा सकते क्योंकि ये रोगी हो जाते हैं तथा रेशम की मात्रा तथा गुण में बहुत कमी आ जाती हैं। इस रोग से क्वान्टुंग प्रान्तो के किसानों का रेशम उद्योग पनप नहीं पाया है। चीन संसार की १८%कच्ची रेशम उत्पन्न करता है। कूकून का उत्पादन ३·३ मिलियन पिकल होता है जिसका ४०% कियांगसू, चीक्यांग एवं आन्हवी से प्राप्त होता है। सन् १९६१ में यहाँ पर १ लाख मैट्रिक टन शहतूती रेशम उत्पन्न हुआ और ७१,७५० मैट्रिक टन टसर रेशम उत्पन्न हुआ।

की ऊन दक्षिण पश्चिम के शुष्क पठारो पर पाली जाने वाली मैरीनो भेडो से प्राप्त होती है। देश में ऊन की खपत के अनुसार उत्पादन बहुत कम है, इसलिये उसकी ऊन की माँग ७० प्रतिशत के लगभग बाहर से मँगाकर पूरी की जाती है। यहाँ का आयात विशेष रूप से आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका, अर्जेन्टाइना और यूरेग्वे से होती है। कालीन बनाने वाली मोटी ऊन भारतवर्ष और चीन से मँगाई जाती है।

अन्य देश—स्पेन, रूमानिया, फ्रास, जर्मनी, ब्रिटेन, इटली, टर्की और यूगोस्लाविया यूरोप में ऊन पैदा करने वाले महत्वपूर्ण देश है किन्तु उनका घरेलू उत्पादन इतना कम होता है कि उनके ऊन के उद्योग-धन्धे केवल विदेशो से मंगाई हुई ऊन पर ही चल सकते है। यूरोपीय देशो को ऊन भेजने वाले देश आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका और अर्जेन्टाइना है।

भारत—भारत मे भेडो का विस्तृत क्षेत्र २५" से ४०" वर्षा वाले भागो मे है—जहाँ चरागाह पाये जाते है—तथा पहाडी ढालो पर। भेडे अधिकतर पूर्वी पजाब, उत्तर प्रदेश मे गढवाल, अलमाड़ा और नैनीताल जिलो, मद्रास मे बलारी, कर्नूल व कोयम्बटूर जिलो, सौराष्ट्र, गुजरात तथा काश्मीर और पश्चिमी राजस्थान मे बीकानेर और जैसलमेर जिलो मे पाई जाती है। किन्तु भारतीय भेडो से जो ऊन प्राप्त होती है वह आस्ट्रेलिया के ऊन से निम्न श्रेणी की होती है। उत्तरी भारत की ऊन सफेद और लम्बे रेशे वाली होती है, इससे उत्तम कपड बनाये जाते हैं। किन्तु दक्षिणी भारत की ऊन भूरी, मोटी और छोटे रेशे वाली होती है। अत इससे उम्दा ऊनी कपडे नही बनाये जा सकते। यहाँ अधिकतर ऊन मरी भेडो से प्राप्त की जाती है। भारत की ऊन से अधिकतर पट्टू, कालीन, कम्बल तथा शाल-दुशाले खूब बनाये जाते है।

भारत में भेड़ों की मुख्य-मुख्य किस्में—भारत मे कई प्रकार की भेड़ें मिलती हैं जिनमें मुख्य निम्नलिखित है—

(१) **बीकानेरी** (B kanarc)—जो बीकानेर के सूखे डिवीजन मे पाई जाती है। इसके अन्य क्षेत्र रोहतक गुडगाँव, अम्बाला, फीरोजपुर और लुधियाना हैं। ये भेडें बडी मजबूत होती है और इनका ऊन लम्बा और खुरदरा होता है। यह अधिकतर गलीचे (Carpe) बनाने के काम आता है। यह ऊन अधिक मात्रा मे इग्लैंड और उत्तरी अमेरिका को भेज दिया जाता है।

(२) **लोही** (Lohi)—अधिकतर मुलतान, माँटगोमरी, शाहपुर, गुजरानवाला और अमृतसर के जिलो मे पाई जाती हैं। इसके ऊन से मोटे कपडे और कम्बल बनाये जाते हैं जिनका प्रयोग अधिकतर किसान लोग करते है।

(३) **दक्षिणी ऊन** (Deccarise)—अधिकतर महाराष्ट्र राज्य मे होता है। यह घटिया दर्जे का और काले रग का होता है।

(४) **नेलोर किस्म** (Nello-e Breed)—मद्रास राज्य मे विशेषकर नैलोर जिले मे पाई जाती है। इस तरह की नस्ल से अधिक मास (Mutton) मिलता है किन्तु ऊन बहुत कम प्राप्त होता है।

भारत की भेड़ों की नस्लें उतनी अच्छी नही होती जितनी कि आस्ट्रेलिया की भेडो की। यहाँ पर साल मे एक भेड़ से सिर्फ दो पौंड ऊन ही मिलती है जबकि

कारण न केवल शहतूत के वृक्षों की अधिकता है वरन् ग्रामीण जनसंख्या के अधिक होने के कारण सस्ता श्रम भी मिल जाता है। जापान में प्रतिवर्ष ४,००,००० टन कूकून उत्पन्न किये जाते हैं जिनका मूल्य लगभग ३१,६०,००,००० येन होता है। जापान कुल संसार के कूकून उत्पादन का लगभग ७०% भाग उत्पन्न करता है। इस उद्योग मे यहाँ पर लगभग २०,००,००० कुटम्ब या कुल कुटुम्बो को संख्या का ३७% कार्य करते हैं।

इटली—रेशम के धन्धे में तृतीय स्थान इटली का है। यह संसार का लगभग ८ प्रतिशत रेशम उत्पन्न करता है। यहीं से यूरोप का ६०% रेशम प्राप्त होता है। उत्तरी इटली में पो नदी का बेसिन इस धन्धे के लिये प्रसिद्ध है। मिलान नगर रेशम की प्रधान मण्डी है। यहाँ इस धन्धे की उन्नति के तीन कारण हैं—(१) जलवायु शहतूत के वृक्षों के लिये अनुकूल है, (२) श्रमिक सस्ते और काफी मिल जाते हैं, तथा (३) जल-विद्युत शक्ति की सुविधायें हैं।

अन्य उत्पादक—शेष उत्पादकों में कोरिया का स्थान प्रमुख है। यहाँ से संसार का ५०% रेशम प्राप्त होता है। फ्रांस में रोन नदी की घाटी (Rhone Valley) जिसमें लियोंस (Lyons) स्थित है, यूरोप का प्रसिद्ध रेशम-क्षेत्र है। सीरिया में दमिश्क नगर का निकटवर्ती क्षेत्र रेशम के लिये प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त ईरान, स्विट्जरलैंड, जैकोस्लोवेकिया, स्पेन, यूनान, टर्की, ब्रह्मा, भारत इत्यादि में भी रेशम का धन्धा प्रचलित है किन्तु इन देशों का उत्पादन बहुत कम है।

भारत—भारत में रेशम के प्रायः चार प्रकार के कीड़े पाये जाते हैं। शहतूत की पत्तियों पर पाला जाने वाला कीडा टसर, एण्डी और मूँगा है। रेशम का कीडा यहाँ दो प्रकार से पाला जाता है—एक बाहर पेडों पर और दूसरा मकानों में। अधिकांश कीडे शहतूत की पत्तियाँ ही खाते हैं। बंगाल, मैसूर और काश्मीर में तो शहतूत के बाग लगाये गये हैं किन्तु असम तथा हिमालय प्रदेश में यह जंगली अवस्था में ही उत्पन्न होता है।

भारत में रेशम के कीडे अधिकतर तीन भागों में पाले जाते हैं —(१) मैसूर के पठार का दक्षिणी भाग और मद्रास का कोयम्बटूर जिला; (२) बंगाल में पश्चिमी जिले और मालदा, मुर्शिदाबाद और बीरभूम जिला, तथा (३) पंजाब के कुछ जिले और काश्मीर तथा जम्मू में। इन क्षेत्रों के अतिरिक्त टसर कीडे छोटा नागपुर, उड़ीसा तथा मध्यप्रदेश में और मूँगा तथा एन्डी कीडे असम में पाले जाते है। इन कीडों से रेशम प्राप्त किया जाता है। सबसे अच्छा रेशम काश्मीर और असम में होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—रेशम की प्रमुख मंडियाँ फ्रांस, संयुक्त राज्य, जापान, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, कनाडा और भारत हैं। संयुक्त राज्य में संसार का कुल निर्यात का ६६ प्रतिशत आयात किया जाता है। फ्रांस में ७%, जापान में ६%, ब्रिटेन में ५% तथा भारत में ४% रेशम आयात किया जाता है। रेशम का निर्यात करने वाले मुख्य देश जापान, चीन, कोरिया, इटली और मंचूरिया है। जापान से ७३% रेशम निर्यात किया जाता है। चीन से १०%, कोरिया से ६%, इटली से ६%, और मंचूरिया से ४% रेशम निर्यात किया जाता है।

मुख्यत: १५° से ४०° अक्षांश तक भूमध्य रेखा के दोनो ओर स्थित है। यूरोप तथा पश्चिमी अमेरिका में ता ४५° उत्तरी अक्षांश तक ये वृक्ष मिलते हैं। इस वृक्ष के लिये कम से कम तीन महीने तक ६०° फा० औसत तापक्रम आवश्यक है। साथ ही कीड़ो की वृद्धि के मौसम मे काफी नमी चाहिए ताकि नई-नई पत्तियाँ प्राप्त होती रहें। एक पौण्ड कच्चा रेशम प्राप्त करने के लिये रेशम के कीडो को १०० से १५० पौण्ड पत्तियाँ खिलाने की आवश्यकता होती है। इतनी पौण्ड पत्तियों पर लगभग २५०० कीडे पाले जाते है जिनसे १ पौंड रेशम प्राप्त होता है।[10] रूम-नागरीय भागो मे उन दिनों सिंचाई की व्यवस्था करनी पडती है। चीन व जापान मे तो गर्मी की ऋतु मे वर्षा होती है इसलिए पत्तियाँ बहुतायत से मिलती रहती है।

कीडों के पालने के कार्य मे बडी मेहनत और सावधानी की आवश्यकता है। प्रतिदिन नवीन पत्तियाँ तोडना, कीडो को पालने की तश्तरियो को साफ करना, साधारणतया गर्म वायु पहुँचाते रहना इत्यादि ऐसे कार्य है जिनमे पर्याप्त सावधानी और नियमितता की आवश्यकता है। इसलिए मजदूर काफी चाहिए और वे चतुर, परिश्रमी, धैर्यवान तथा भरोसे के हो। साथ ही सस्ते भी हो ताकि उत्पादन व्यय बढ न सके।

अच्छी जलवायु तथा सस्ते मजदूरो के मिलने के कारण ही दक्षिणी पूर्वी एशिया में दुनिया मे सबसे अधिक रेशम के कीडे पालने का व्यवसाय होता है। यद्यपि शहतूत का पेड—जिन पर रेशम का कीडा रहता है—यूरोप इत्यादि देशों मे उगाया जा सकता है किन्तु चीन और जापान मे तो खास प्रकार के शहतूत के पेड उगाये जाते है जिनमें साल मे ६ बार नई पत्तियाँ लगती है और इस तरह कीडो के लिये



चित्र ११४. जापान मे रेशम के कीड़ो से रेशम निकालना

10. *Ekblaw and Mulkerne*, **Op. Cit.**, p. 188

१५. फल तथा साग-सब्जी के लिये किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत में इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र बतलाते हुये उद्योग के भविष्य का वर्णन कीजिये ।

१६. भारत के तीन मुख्य तिलहनों का उनके उत्पादन क्षेत्र सहित वर्णन कीजिये तथा उनके विभिन्न उपयोग बतलाइये ।

१७. गेहूँ की फसल की खेती के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भौगोलिक दशाएं बतलाते हुये इसके उत्पादन क्षेत्र बतलाइये ।

१८. चावल के उत्पादन के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत के मानचित्र पर इसका वितरण दिखाइये । क्या कारण है कि भारत में चावल का अधिक उत्पादन होने पर भी भारत को आयात करना पड़ता है ?

१९. भारत के मानचित्र पर गेहूँ, चावल तथा ज्वार-बाजरा का वितरण दिखलाइये । क्या कारण है कि वर्तमान समय में गेहूँ का अधिक आयात करना पड़ता है ?

२० गेहूँ के उत्पादन के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत के मानचित्र पर इसका वितरण दिखलाइये । क्या मछली उद्योग के विकास से भारत की खाद्य समस्या सुलझ सकती है ?

२१. भारत के मनुष्यों के वस्त्र निर्माण के हेतु प्रयोग किये जाने वाले तीन रेशेदार पदार्थ बतलाइये । उनके (अ) उत्पादन केन्द्र, (आ) निर्माण केन्द्र, और (इ) प्रमुख बाजारों का भी वर्णन कीजिये ।

२२. चावल तथा ज्वार-बाजरे के लिये किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है, भारत के मानचित्र पर उनका वितरण दिखलाइये ।

२३. गेहूं तथा चाय के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत के मानचित्र पर उनके उत्पादन केन्द्र दिखाइये ।

२४. कपास, गन्ना, जूट तथा नारियल का उत्पादन जलवायु की किन भौगोलिक दशाओं पर निर्भर है ? भारत में इनका अत्यधिक उत्पादन कहाँ होता है ? प्रत्येक पर कौन-कौन से उद्योग अवलम्बित हैं ?

२५. कपास को बड़े पैमाने पर उत्पादन करने के लिए किन भौगोलिक बातों की आवश्यकता पड़ती है ? विश्व के किन देशों में यह पैदा किया गया है ?

२६. उत्तरी अमेरिका में गेहूं के उत्पादन और निर्यात पर लेख लिखिये और यह बताइये कि किन भौगोलिक और आर्थिक कारणों से गेहूं की खेती में बाधा पड़ती है ? इनको किस प्रकार दूर किया जाता है ?

२७. विश्व के कौन से क्षेत्र चाय उत्पन्न करने के लिये प्रमुख माने जाते हैं ? उनमें से किसी एक क्षेत्र में कौन से भौगोलिक और आर्थिक आवश्यकताओं के कारण चाय का उत्पादन किया जाता है ?

२८. चाय, रबड़ और कच्चा रेशम पैदा करने के लिए किन बातों की आवश्यकता पड़ती है ? एशिया में इनके उत्पादन क्षेत्र कौन से हैं तथा यहाँ से किन देशों से यह निर्यात किये जाते हैं ?

२९. शराब बनाने के धंधे में किन कारणों से उन्नति होती है ? यूरोप के किन भागों में यह धंधा अधिक पनपा है ? उत्तरी अमेरिका में इस धंधे की उन्नति क्यों नहीं हुई है ?

३०. ब्राज़ील में किन भौगोलिक अवस्थाओं के कारण कहवा पैदा किया जाता है ? पहाड़ों के

(१) दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया।

(२) रूमसागरीय देश।

नीचे की तालिका मे विश्व के कच्चे रेशम का उत्पादन, आयात और निर्यात दर्शाया गया है :—

कच्चे रेशम का उत्पादन, उपभोग और निर्यात[11]

(मेट्रिक टनों मे)

	१९५३	१९५६	१९६१
उत्पादन			
जापान	१५,०४३	१८,७६७	१८,८८६
चीन	५,३६०	—	८,५००
भारत	८४६	१,०८०	१,१२२
कोरिया	५०६	६१४	५५०
इटली	१,४७८	९९६	७८९
अन्य देश	८,२२७	९,४४३	११,१५३
योग	२६,१००	३०,९००	३२,५००
उपभोग			
जापान	११,२७९	१३,९४४	१४,२७०
स० रा० अमरीका	२,४४३	३,४६३	२,६७५
पश्चिमी यूरोप	३,८४७	३,५९६	२,२७५
भारत	१,१४४	१,५८७	१,२७५
योग	१८,७१३	२२,५६०	२०,५४०
निर्यात			
जापान	३,७७३	४,६३५	४,३६७
भारत	९१०	१,१८२	१,०००
कोरिया	२०२	२४८	१२६
इटली	१६६	७५	६४
अन्य देश	२७५	५२८	४६८
योग	५,३२६	६,६२८	६,०२५

11. *F. A. O.*, **Monthly Bulletin of Agricultural Economics & Statisitcs.**

अध्याय २०

खानें खोदना

(MINING)

जो वस्तुएँ पृथ्वी के धरातल अथवा उसके गर्भ मे खोद कर निकाली जाती है उन्हे खनिज पदार्थ कहते है। खनिज पदार्थ वह प्राकृतिक रूप से निकलने वाली वस्तु है जिसकी अपनी भौतिक विशेषतायें होती है और जिनकी बनावट को रासायनिक गुणों द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।[1] जिन विशेष स्थानो से यह निकाले जाते है, उन्हे खदानें (Mines) कहते है। खनिज पदार्थ जिन कच्ची धातुओ मे मिलते हैं उन्हे अयस (Ore) कहते है।[2]

खनिज पदार्थों का महत्व

अति प्राचीन काल से ही मानव के प्रयासो पर खनिज पदार्थों के मिलने का बडा प्रभाव पडा है। इतिहास के आरम्भ से ही शिकारी के लिए चकमक पत्थर, कुम्हार के लिए चिकनी मिट्टी एव धनाढ्यों के लिए बहुमूल्य धातुओं का पता लगाया गया। जब जातियों और राष्ट्रों का अभ्युदय हुआ तो इन पदार्थों से धन की आय होने लगी वस्तुत. इससे उनकी शक्ति बढ़ी। सिकन्दर महान की विजय का एकमात्र कारण उसकी कार्य कुशलता ही नही थी वरन् इसका श्रेय उसकी बडी व्यवस्थित फौज को था जिसके निर्माण के लिए उसे अपने मैसेडोनिया के स्वर्ण क्षेत्रो से पर्याप्त मात्रा मे सोने की धातु की उपलब्धि हुई। इसके भी १३ शताब्दी बाद पवित्र रोम-साम्राज्य का उदय हुआ जिसका मूल कारण ९२० A. D. मे रैमलसबर्ग की चादी की खानों का पता लगना था। इनसे जो धातु मिली उसी का उपयोग हैनरी (Henry the Fowler) और ओटो (Otto the Great) ने अपने राजकीय कार्यों के लिए किया। खनिज सम्पत्ति के कारण ही प्राचीन मिस्र की शक्ति का विस्तार हुआ। फोनिशिया निवासियों, एथेंस वासियों तथा वेनिस के उत्थान मे भी खनिज सम्पत्ति का मुख्य हाथ रहा है।

---

1. A mineral is a naturally occurring chemical compound either constant in its compositon or varying within narrow limits"—*Stamp*, **A Commercial Geography**, pp. 104-5.

   "A mineral may be defined as a naturally occurring substance that has a distinctive set of physical properties and a composition expressible by a chemical 'formula'" *Longwell, Knopf and Flint*, **Physical Geology**, 1948.

2. "An ore is a mineral aggregate from which one or more minerals can be extracted at a profit." *Longwell, Knopf & Flint.*

जापान—जापान संसार मे कच्चे रेशम का सबसे बडा उत्पादक देश है। यहाँ संसार का ६० प्रतिशत कच्चा रेशम उत्पन्न होता है। जापान मे ११ लाख एकड भूमि मे शहतूत के वृक्ष हैं। लगभग ११% जापान की भूमि मे यह वृक्ष फैले हुए हैं। शहतूत के उत्पादन वैसे तो समस्त जापान मे होता है। परन्तु प्रमुख क्षेत्र निम्न है—

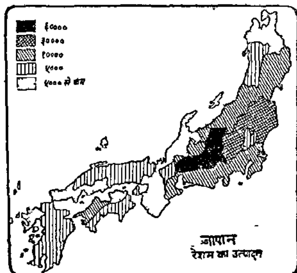
(१) पर्वतों के तलो की पहाडियों पर जहाँ पर अनुपजाऊ मिट्टी होती है और तटीय मैदानो मे।

(२) पर्वतीय घाटियों मे।

(३) विना सिंचाई की सीढ़ी वाली भूमि मे।

(४) तटीय मैदानो के आन्तरिक भागो मे नदियो के मैदानों की मिट्टियों में।

जापान के शहतूत के वृक्ष मध्य होन्शू मे ही अधिकाशत केन्द्रित हैं। जापान के कुल शहतूत का ११% क्षेत्रफल नागानो मे है। इस ऊँचे भाग के पाले से रहित छोटे काल में नागानो मे शहतूत जल्दी निकलने वाला, जल्दी पकने वाला तथा भाडियो की छोटी किस्म वाला पौधा है। परन्तु इस सुविधा के विपरीत असुविधा यह है कि यहाँ पत्तियो का उत्पादन कम होता है। टोकियो के मैदानों की भाडियों के मुकावले में यहाँ प्रति एकड क्षेत्रफल मे पत्तियों का उत्पादन ३०% कम होता है। टोकियो के मैदानो मे बड़ी देर मे पकने वाली अधिक उपजाऊ किस्मे उगाई जाती है। यहाँ बढने की ऋतु लम्बी होती है, वर्षा अधिक होती है तथा तापक्रम भी अधिक होता है। जापान मे कूकून की तीन फसले होती हैं—बसन्त, ग्रीष्म और शीत ऋतु की। बसन्त की फसल सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह जापान मे सबसे अच्छे रेशम का उत्पादन करती है तथा कुल जापान के रेशम की ५६% होती है। इसका मुख्य



चित्र ११६. जापान में रेशम का उत्पादन

पदार्थों के साथ—निकल, वैनेडियम, टंगस्टन, क्रोमीयम अधिक होता है। वास्तव मे यदि लोहे और इस्पात का प्रयोग करना बन्द कर दिया जाय तो हमारे कृषि, खनिज, वन, कलाकौशल और यातायात के उद्योग एक प्रकार से पगु हो जायेंगे।[४] इस सम्बन्ध मे **श्री ह्वाइट और रेनर** के शब्द उल्लेखनीय है। वे कहते है "आधुनिक मनुष्य जिन औजारो और यन्त्रो का उपयोग करता है वे सब उन खनिजो द्वारा बने हैं जो केवल पृथ्वी के गर्भ से निकाले जाते है। धातु खनिजों और जीव ईंधनो के अभाव मे आधुनिक मानव की दशा प्रस्तर युग के अपने पुरखो से अधिक अच्छी नही हो सकती। जैसा हमे ज्ञात है जब औजार आदि पत्थर, हड्डियो तथा लकड़ियो के बनाये जाते थे तो प्रगति का विकास रुक सा गया किन्तु जबसे मनुष्य ने कोयला और लोहा जैसे खनिजो का पता लगाया तब से सभ्यता की गति एक तेज बाढ़ की तरह हो गई है।"[५]

खनिज पदार्थ कहाँ मिलते हैं?

खनिज पदार्थों का वितरण भूतकालीन अवस्थाओ से सम्बन्ध रखता है। पृथ्वी के भीतरी परिवर्तनो से पदार्थ अपने स्थान पर सचित हो गये थे। अतः आधुनिक काल में या तो पहाडी क्षेत्रो मे या उन क्षेत्रो में मिलते हैं जहाँ पृथ्वी के गर्भ मे अधिक परिवर्तन होते रहे हैं और फलस्वरूप पृथ्वी के तल मे अधिक उथल-पुथल होते रहे हैं। चट्टानो के टूटने-फूटने, मुडने तथा जुडने का खनिज पदार्थो की प्राप्ति पर बडा प्रभाव पडता है। भूपृष्ठ के चिप्पड़ से टूटने-फूटने से इससे नीचे का द्रवित पदार्थ (Molten Magma) जिसमे खनिज मिले रहते है, पहाडो के मोड़ो तथा उनकी दरारो मे जमा हो जाते हैं। ज्योंही यह गर्म पदार्थ ऊपर उठता है और ठडा होता है उसमे मिले खनिज एक स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं अत. पर्वत निर्माण क्रिया मे जब द्रवित पदार्थ ऊपर की ओर बढता है तो उसके परिणामस्वरूप धरातल के निकटवर्ती भागो मे खनिज पदार्थों का जमाव हो जाता है। जिन क्षेत्रो मे उथल-पुथल कम हो पाई हो और चट्टानो के पर्त लगभग अछूते रह सकें वहाँ मुख्यत. पैट्रोलियम और कोयला आदि मिलते हैं। खनिज पदार्थ बहुधा आग्नेय और परिवर्तित चट्टानों मे सचित मिलते हैं जो पूर्व कैम्ब्रियन काल मे बनी हैं। इन चट्टानो मे सोना, चाँदी, सीसा, ताबा, लोहा, रागा, सीसा, पन्ना, हीरा आदि खनिज मिलते हैं।

इसके अतिरिक्त भूमि क्षरण की क्रिया द्वारा भी ऊँचे उठे भागों की तोड-फोड होने के फलस्वरूप खनिज पृथ्वी के धरातल पर जमा कर दिये जाते हैं। लाखों वर्षो से इस क्रिया द्वारा हजारों फुट मोटी चट्टानें काट-काट कर धरातल के अनेक भागो मे एकत्रित करदी गई है। यद्यपि खनिजो का बहुत बडा भाग जल द्वारा समुद्रो मे एकत्रित कर दिया गया है किन्तु इस क्रिया द्वारा अनेक चट्टानें उनके ऊपर की मिट्टी आदि कट जाने से धरातल पर विशिष्ट हो गई हैं जिससे खनिज निकालने की सुविधा हो जाती है। कभी-कभी ज्वालामुखी क्रियाओ से सम्बन्धित भू-भागो मे भी खनिजों का जमाव पाया जाता है। तृतीय युग मे बनी इस प्रकार की ज्वालामुखी चट्टानो से ही विश्व के महत्वपूर्ण बहुमूल्य खनिजो के भंडार—ताँबा, सीसा, जस्ता,

---

4 *Case & Bergsmark*, **Op. Cit.**, p. 613.

5. *White and Renner*, **Human Geography**, p. 421.

प्रश्न

१. गेहूँ के उत्पादन और व्यापार के लिये किन-किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत के मानचित्र पर गेहूँ के प्रमुख क्षेत्र दिखाइये । यह भी बताइये कि गेहूँ के उत्पादन और व्यापार में संयुक्त राज्य अमेरिका की अपेक्षा भारत को क्या लाभ तथा हानि है ?

२. कपास के उत्पादन के तीन प्रमुख देश बतलाइये और वे भौगोलिक दशायें बतलाइये जिनके अन्तर्गत इन देशों में कपास का उत्पादन होता है । संयुक्त राज्य अमेरिका की अपेक्षा भारत में प्रति एकड़ कपास का उत्पादन कम क्यों है ?

३. उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के फल उत्पादन क्षेत्रों का वर्णन करिये । इस सम्बन्ध में यह भी बतलाइये कि फलों पर कौन-कौन से उद्योग निर्भर करते हैं ।

४. भारत के मानचित्र पर चावल तथा गेहूँ का वितरण दिखलाइये तथा ऐसे वितरण का कारण भी लिखिये ।

५. गन्ना तथा चाय के उत्पादन के लिये किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? भारत के मानचित्र पर उनका वितरण भी दिखलाइये ।

६. निम्नलिखित देशों से वस्तुओं के अधिक निर्यात के क्या भौगोलिक कारण हैं ?

(अ) ब्राजील से काफी ।
(आ) संयुक्त राज्य अमेरिका से तम्बाकू ।
(इ) अर्जेन्टाइना से ऊन ।
(ई) जर्मनी से कागज ।

७. चाय तथा कहवा के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? इनके उत्पादन क्षेत्र कौन से हैं और क्यों ?

८. बंगाल में जूट का अत्यधिक उत्पादन किन भौगोलिक दशाओं के कारण है ? एक मानचित्र द्वारा बंगाल के जूट उत्पादन और जूट निर्माण के केन्द्र दिखलाइये ।

९. कपास तथा गन्ना के लिए किन भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है ? इनके उत्पादन-क्षेत्र भी लिखिये ।

१०. गन्ने और कपास की उपज के लिये अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों का वर्णन कीजिये । संसार में यह पदार्थ कहाँ-कहाँ पैदा होते हैं ?

११. निम्नलिखित पदार्थों के उत्पादन तथा निर्माण और निर्यात की उपयुक्त भौगोलिक तथा अन्य परिस्थितियों का वर्णन कीजिये—

रबड़, चुकन्दर, ऊन और रेशम ।

१२. एशिया के किन भागों में चाय, रबड़ तथा चावल अधिकता से पैदा होते हैं ? उनके उत्पादन की भौगोलिक दशायें भी बतलाइये ।

१३. निम्नलिखित पदार्थों का महत्ता बतलाइये—

जूट, कपास और शकर ।

१४. भारतवर्ष में चाय और कहवा कहाँ-कहाँ पैदा होते हैं ? कारण सहित ऐसे वितरण का वर्णन कीजिये । इन पदार्थों का निर्यात व्यापार भी बताइये ।

क्षित व्यक्ति अब मलाया, बोलिविया, नाइजीरिया और रोडेशिया की टिन की खानों में काम करते हैं।

(२) खनिज मे अयस की सम्पन्नता (Richness ot the Ore)—खानो से धातुयें उन्ही क्षेत्रो मे निकाली जाती है जहाँ खनिज मे अयस (Ore) की मात्रा पर्याप्त पाई जाये। अयस की मात्रा निश्चित प्रतिशत से कम होने पर उसे साफ करने मे बडा व्यय पड जाता है अत वह निकाली नही जाती। सयुक्त राज्य की मैसाबी श्रेणी से उच्च श्रेणी का लोहा-अयस इतनी तीव्रता से निकाला गया है कि वहाँ अब इसके भण्डार प्राय समाप्ति पर ही है अत अब वहाँ करोडो डॉलर के व्यय से इस बात का अनुसधान किया जा रहा है कि किस प्रकार निम्न प्रतिशत वाले धातु से अयस का अधिक प्रतिशत किया जाय। निम्न प्रतिशत वाले धातु की एक पट्टी १०० मील लम्बी, हजारो फीट चौडी और लगभग २०० फीट की मोटाई की है। अब इसका उपयोग किया जाने लगा है। पहले इसको पीसा जाता है और बारीक बुरादा हो जाने पर चुम्बक की सहायता मे लोहे के कणो को मैल मे से एकत्रित किया जाता है और फिर इनके छोटे-छोटे गोलें बनाकर ब्लास्ट-भट्ठियो मे काम में लाया जाता है। मोटे तौर पर वस्तुओ का निकाला जाना तभी आवश्यक तथा लाभदायक माना जाता है जब इसमें औसतन निम्न प्रकार से अयस की मात्रा मिलने का अनुमान हो —[7]

अयस	धातु का औसत प्रतिशत में
कच्चा लोहा	५० से ६०
सुरमा	५० — ६०
जस्ता	१० — ३०
सीसा	६ — १०
ताबा	२ — ५
टिन	१ — ५
पारा	१ — ३
चादी	०·०४ — ०१
सोना	०·००१ — ०·००४

तात्रिक परिवर्तन (Technological Change)—अनेक क्षेत्रो मे खनिज पदार्थो का विदोहन तब तक नही किया जाता जब तक कि ताबिक सहायता नही मिल पाती। १८७० के युद्ध मे जो जर्मनी और फ्रास के बीच हुआ था, फ्रास से लोरेन लोह क्षेत्र जर्मनी के अधिकार मे चला गया। उस समय लोहे के अतिरिक्त फासफोरस की मात्रा दूर करने की विधि पूर्णत ज्ञात न होने से उसका उपयोग नही

7. *R. N. Dubey*, **Economic and Commercial Geography,** 1961, p. 225.

अधिक ऊँचे और अधिक वर्षा वाले ढाल कहवा उत्पादन के लिए उपयुक्त क्यों नहीं माने जाते ?

३१. यूरोप के किन देशों में कच्चा रेशम का उत्पादन किया जाता है और क्यों ? अथवा यह बताइये कि यूरोप में शराब बनाने और निर्यात करने वाले कौन से देश हैं और क्यों ?

३२. उष्ण कटिबंध और अर्द्ध उष्ण कटिबन्ध में गन्ने की पैदावार और शीतोष्ण कटिबंध में चुकन्दर की पैदावार और शक्कर बनाने के उद्योग की तुलना करिये।

३३. आस्ट्रेलिया में किन भौगोलिक अवस्थाओं के अन्तर्गत गेहूँ पैदा किया जाता है। चित्र खींच कर गेहूँ उत्पादन के केन्द्र बताइये।

३४. यूरोप में किन कारणों से गेहूँ उत्पन्न किया जाता है ? यूरोप, उत्तरी अमेरिका और कनाडा के उत्पादक क्षेत्रों की तुलना कीजिए।

३५. रेशेदार पदार्थों के उत्पादन में कौन-कौन सी बातों का प्रभाव पड़ता है ? कच्चे रेशम और ऊन उत्पादन के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करिये।

३६. ऊन और कहवा के उत्पादन में कौन से भौगोलिक कारणों का महत्व अधिक है ?

३७. गन्ने और चुकन्दर के उत्पादन में कौन-कौन सी भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता पड़ती है ? इस सम्बन्ध में उनके व्यापार पर भी प्रकाश डालिये।

३८. रबड़ उत्पादन के कौन-कौन से मुख्य क्षेत्र हैं। अमेजन बेसीन का महत्व इस सम्बन्ध में कम क्यों हो गया है ? भारत में बागाती रबड़ के उत्पादन की क्या सम्भावनायें हैं ?

३९. एशिया के मानसूनी देशों में चाय के उत्पादन पर एक लेख लिखिये।

४०. विश्व में कपास के उत्पादन पर प्रकाश डालिये और बताइये कि कपास के निर्यात व्यापार में भारत की क्या स्थिति है ?

४१. विश्व के प्रमुख गेहूँ उत्पादक देशों का वर्णन करिये।

४२. विश्व में ऊन और वेजीटेबिल घी के उत्पादन पर लेख लिखिये।

४३. विश्व में 'फलों के उत्पादन' पर एक लेख लिखिये। प्रमुख रसदार फलों शीतोष्ण कटिबन्धीय फलों का वर्णन करते हुए बताइये कि उन पर कौन से उद्योग आधारित हैं ?

४४. चाय और रबड़ का विश्व उत्पादन बताते हुए उनके लिए अनुकूल भौगोलिक दशाओं का भी वर्णन करिये।

खनिज पदार्थ निकालने का ढंग

खनिजो को निकालने के लिए निम्न ढग काम मे लाये जाते है :—

(१) खुली खान खुदाई (Open-pit Mining)—जिन क्षेत्रो मे धातुओं अथवा आर्थिक महत्व के कोयले के जमाव धरातल के निकट पाये जाते है अथवा जहाँ इन जमावो के ऊपर अधिक महत्व नही होता वहाँ इस पद्धति द्वारा खनिज पदार्थों को निकाला जाता है। इसके अन्तर्गत धरातल के ऊपर की चट्टानों अथवा अन्य मलवे को हटा कर धातुयें निकाली जाती है। इस ढग का सबसे अधिक उपयोग लोहा निकालने मे किया जाता है। स० रा० मे मैसाबी क्षेत्र की लोहे की खानें इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। यहाँ लाखो वर्ष पूर्व काफी ऊँची पर्वत मालायें थी जिनमें नीचे की ओर लोहे के जमाव प्रस्तुत थे किन्तु अपक्षरण की क्रियाओ ने इनको नष्ट कर दिया। इससे लोहा धरातल के निकट आ गया फिर इन कटे-छँटे मैदानो पर समुद्र का आक्रमण हुआ और धरातल पर चने तथा बालू के पत्थरो का जमाव हो गया। इन्ही के नीचे लोहा दब गया। पुन जब आतरिक हलचलों के कारण ये भाग ऊँचे उठे तो प्लीस्टोसीन युग मे हिमानियो ने इन पर मोरेन जमा दिये। अब बडे-बडे यन्त्रो (Shovels) द्वारा इस मोरेन को हटा कर सरलता से लोहा प्राप्त किया जाता है और उसे गाडियो मे भरकर सुपीरियर झील के किनारे स्थित इस्पात के केन्द्रो को भेज दिया जाता है। विश्व की सबसे बड़ी लोहे की खुली खान मिनेसोटा मे हिबींग के निकट हल-रस्ट-महोनिंग खान (Hull-Rust-Mahoning Mine) है। विश्व का लगभग आधा लोहा इसी पद्धति द्वारा पृथ्वी के नीचे से प्राप्त किया जाता है। इस ढंग का उपयोग भारत में मयूरभंज की लोहे की खानो स्वीडेन की किरूना की खानो, ब्राजील की इटाबिरा, लैब्राडोर की बर्न्टक्रीक और रूस की क्रिवीरॉग की लोहे की खानो में भी किया जाता है।

लोहे के अतिरिक्त अन्य धातुओ को भी इसी ढंग द्वारा निकाला जाता है। इसके मुख्य उदाहरण यूटाह्रा मे बिंघम, चिली मे चुकियाटा, बेल्जियम कागो मे कटंगा, रूस मे क्रूराइस्कड़ो तथा जैजकाजगा की ताबे की खानें है।

मलाया मे टिन, रूस और ब्रिटिश गायना मे बाक्साइट; फ्लोरिडा मे फास्फेट्स; चिली के अटाकामा मरुस्थल मे शोरा तथा अन्य क्षेत्रो मे चूने का पत्थर, ग्रेनाइट, बालू पत्थर, सगमरमर, चिकना मिट्टी, जिप्सम, बालू, कंकड तथा अन्य भवन निर्माण के पत्थर भी इसी ढग से निकाले जाते है।

(२) स्ट्रिप खुदाई (Strip-Mining)—इस प्रकार की खुदाई मुख्यत कोयला प्राप्त करने के लिए की जाती है। इस ढग से १९४७ मे स०राज्य मे निकाले जाने वाले कोयले का २०% प्राप्त किया जाता था। इलीनियाम मे ५ फुट मोटी कोयले की तह तक पहुँचने के लिए ५० फुट की गहराई तक तथा पेन्सिलवेनिया मे एंथ्रेसाइट कोयला प्राप्त करने के लिए १७५ से २०० फीट की गहराई तक खुदाई की जाती है।

(३) शॉफ्ट खुदाई (Shaft Mining)—जिन क्षेत्रो मे धरातल के नीचे काफी गहराई तक धातुएं या कोयला मिलता है वहाँ राम्बवत् सुरग खोदी जाती है और इन्हे निकाला जाता है। इस प्रकार गहरी खानों की खुदाई दक्षिणी अफ्रीका मे रैंड की सोने की खानो मे २ मील की गहराई तक तथा भारत मे कोलार की सोने की खानें, ६,२०० फीट तक की जाती है। भूमि के गर्भ की गर्मी को शान्त करने के

औद्योगिक क्रांति के बाद धातुओं का बहुमुखी प्रभाव पूर्णतः परिलक्षित होता है। १९ वीं शताब्दी में ब्रिटेन की बहुमुखी उन्नति का मुख्य कारण उसमें मिलने वाले खनिज पदार्थ ही थे। इस काल में इनके उत्पादन में उसकी स्थिति चरम सीमा पर थी। १८५० से उन्नीसवीं शताब्दी पूर्व ब्रिटेन में विश्व का आधे से अधिक सीसा और १८२० से १८४० तक आधे से अधिक ताँबा निकाला गया। १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इसका लोहे का उत्पादन विश्व के उत्पादन का १/३ से बढ़ कर १/२ हो गया। यहाँ सबसे अधिक सीसा १८५६ में, तांबा १८६३ में, टिन १८७१ में, लोहा १८८२ में और कोयला १९१३ में निकाला गया।[3]

वर्तमान युग में खनिज पदार्थों का महत्व बहुत अधिक है क्योंकि जिस देश में खनिज पदार्थों का अगाध भंडार भरा है वहीं आज विश्व में सबसे अधिक आर्थिक, औद्योगिक और व्यापार सम्बन्धी उन्नति कर सका है। संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, बेल्जियम और जापान आदि ऐसे ही राष्ट्र हैं जिन्होंने अन्य देशों की अपेक्षा अधिक उन्नति की है।

जिन देशों में अपनी आवश्यकताओं के लिए खनिज पदार्थों की कमी पड़ती है, किन्तु जहां यान्त्रिक ज्ञान की उपलब्धि है, वे देश अपने लिए खनिज पदार्थ अन्य देशों से आयात करते हैं, और यदि आवश्यकता हुई तो खनिज उत्पादक देशों पर राजनीतिक अधिकार भी कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, जापान ने मंचूरिया, कोरिया, उत्तरी चीन तथा दक्षिण पूर्वी एशिया पर खनिज प्राप्ति के लिए ही अपना अधिकार जमाया था। मध्यपूर्व में राजनीतिक अशांति का मुख्य कारण मिट्टी का तेल; द० पूर्वी एशिया में टिन और पेट्रोलियम, फ्रांस और जर्मनी के पारस्परिक झगड़े का मूल एलसस तथा लोरेन की लोहे की खानें हैं।

आधुनिक सभ्यता बहुत अंशों तक खनिज पदार्थों पर ही निर्भर है। कृषि सम्बन्धी यन्त्र, मिलों सम्बन्धी यन्त्र, हथियार, आवागमन के विभिन्न वाहक, जैसे रेलगाड़ियाँ और एन्जिन, हवाई जहाज, जलयान आदि वस्तुओं से लेकर सुई, कैंची और भारी मोटरें और फौजी टैंक तथा अन्य दैनिक कार्यों में आने वाली वस्तुएँ, सिक्के, आभूषण और निवास-गृह आदि सभी किसी न किसी प्रकार के खनिज पदार्थों द्वारा ही बनाये जाते है। अतएव कृषि, उद्योग, यातायात और संदेशवाहन आदि सभी का विकास खनिज सम्पत्ति पर अवलम्बित है। खनिज पदार्थों की खोज के कारण ही आज विश्व के उष्णतम मरुस्थलों (आस्ट्रेलिया और कालाहारी) तथा ठंडे मरुस्थलों (विशेषकर अलास्का) का आर्थिक विकास सम्भव हो सका है।

यदि कहा जाय कि "मानव के विकास और प्रगति में इतिहास तथा खनिज पदार्थों का अटूट सम्बन्ध रहा है" तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। 'पाषाण युग' (Stone Age), 'ताम्रयुग' (Bronze Age), 'लोहा युग' (Iron Age), 'इस्पात युग' (Steel Age), 'अणु-युग' (Atomic Age) आदि शब्द मानव उत्थान की विभिन्न सीढ़ियों में खनिज पदार्थों का महत्व दर्शाते हैं। ज्यों-ज्यों मानव सभ्यता की सीढ़ियों पर चढ़ता गया त्यों-त्यों उसने अपने व्यवहार में आने वाले खनिज पदार्थों में भी परिवर्तन किया। वर्तमान युग में लोहे और इस्पात का उपयोग खनिज

3. *T. S. Lovering* "The Exploitation of Mineral Resources" Scientific Monthly, 1942, pp. 91-95.

विशेषकर उत्तरी अटलांटिक महासागर के निकटवर्ती देशो मे जस्ता, टिन, शीशा, ताँबा, रांगा और मैंगनीज आदि खनिज पदार्थ कम होते जा रहे है और अब उनका नये क्षेत्रो में निकाला जाना सन्देहजनक है। ऐसे प्रदेश अभी भी पृथ्वी पर बहुत से हैं विशेषकर पूर्वी एशिया के देश (जापान, चीन, ब्रह्मा, भारत आदि) जिनमे खनिज पदार्थ बहुत दबे पड़े है, किन्तु उन्हे अभी तक पूर्णतया निकाला नही गया है। पिछले कुछ समय से पाश्चात्य देशों के संसर्ग में आकर यह देश भी अपने खनिज पदार्थों को निकालने मे आगे बढ रहे हैं।

(२) कृषि पदार्थों की भाँति खनिज पदार्थ भिन्न-भिन्न स्थानों पर पैदा नही किये जा सकते क्योकि वे प्रकृति की देन है और पृथ्वी के गर्भ में छिपे रहते हैं। खनिज सम्पति का वितरण पूर्णतया पृथ्वी की बनावट पर निर्भर रहता है, भौगोलिक दशाओ पर नही। पृथ्वी के धरातल पर साधारणतया दो प्रकार की चट्टानें पाई जाती है। पहले प्रकार की चट्टानें पुरानी और सख्त होती हैं। यह धातु पदार्थो मे बडी धनी होती है। यही कारण है कि ब्राजील के पठार, गायना के पठार, दक्षिणी अफ्रीका, प्रायद्वीपीय भारत और आस्ट्रेलिया के बडे पठार जो सभी भाग प्राचीनकाल के गोंडवाना लैंड प्रदेश के अन्तर्गत आते थे—तथा अंगारालैंड और कैनेडियन शील्ड आदि भागो मे असख्य परिमाण में लोहा, सोना, ताँबा, मैंगनीज, हीरे आदि पदार्थ पाये जाते है जबकि अन्य प्रदेश खनिज पदार्थों मे दरिद्र है।

दूसरे प्रकार की चट्टानें वे होती है जो पृथ्वी के धरातल पर नई ही बनी है। इनमे खनिज पदार्थो की मात्रा बिलकुल नही होती, क्योकि इन चट्टानो मे ज्वालामुखी परिवर्तनो का प्रभाव नही पहुँच पाया है। इसीलिये विश्व के आल्पस, हिमालय, रॉकी और एण्डीज पर्वत खनिज पदार्थों मे बहुत ही निर्धन हैं। सिंध-गगा के मैदान, ह्वागो और यागटिसीक्याग नदियो के मैदानो मे भी किसी प्रकार के खनिज पदार्थ नही पाये जाते।

(३) खनिज पदार्थ खाने-पीने की वस्तुएँ न होने के कारण उनकी माँग बहुत कम होती है। इसलिये उनकी माँग मे काफी घटा-बढी होती रहती है और इसी के अनुसार उनके उत्पादन की मात्रा मे भी कमी या वृद्धि होती रहती है। साधारणतया शान्तिकाल की अपेक्षा युद्धकाल मे अस्त्र आदि बनाने के लिये धातुओ की माँग बढ जाया करती है। किन्तु युद्ध समाप्त होते ही उनकी माँग मे एक दम कमी पड जाती है। जबकि कृषि पदार्थ दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति मे प्रयुक्त होने के कारण सदैव ही एक-सी माँग वाले होते हैं।

(४) खान खोदने के व्यवसाय मे खान की गहराई का भी विशेष महत्व होता है, क्योकि जितनी ही खान अधिक गहरी होती है उतना ही खनिज निकालने का व्यय भी बढ़ता जाता है। खानें अधिक गहरी होने की दशा मे—अधिक गर्मी और हवा का अभाव होने के कारण—मजदूरो का कार्य करना भी कठिन हो जाता है। गहराई के साथ साथ न केवल गर्मी ही बढती जाती है बल्कि खानों के अन्दर रेल आदि डालने और पदार्थों को उठाने और उनको धरातल तक लाने मे काफी व्यय करना पडता है। अतएव किसी स्थान विशेष पर खानें तभी खोदी जाती है जबकि वहाँ खनिज पदार्थों का निकालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक हो।

(५) चुंकि खनिज सम्पत्ति का परिमाण सीमित होता है अतएव खानो मे काम करने का धन्धा अस्थायी होता है और इसीलिये पर्याप्त मात्रा मे श्रमिक भी

टगस्टन, वैनेडियम, मोलीबिड्नम, मैंगनीज आदि जो इस्पात आदि बनाने में काम में लाये जाते हैं—प्राप्त होते है।[6]

खनिज क्षेत्रो से खनिज पदार्थ कभी शुद्ध रूप में नही मिलते वरन् मिट्टी, चूना, तेल तथा पत्थर आदि के साथ मिलते रहते हैं। अतः खान से निकालने के पश्चात् उन्हे रासायनिक विधियो से शुद्ध किया जाता है।

खनिज क्षेत्रों का व्यापारिक महत्व

कोई खनिज क्षेत्र व्यापारिक महत्व का है अथवा नही इस बात पर निर्भर है कि :

(१) उसकी स्थिति कहाँ हैं तथा वहाँ वह कितनी गहराई पर मिलता है ?

(२) उस क्षेत्र मे कितनी खनिज की मात्रा है और उसमे धातु का कितना अंश शुद्ध धातु का है और कितना अशुद्ध का।

(३) तान्त्रिक साधनो से उन्हे कहाँ तक निकाले जाने की सम्भावनाये हैं ?

(४) उसकी माग कितनी है ?

(५) उसे कारखानो आदि तक पहुँचाने की क्या सुविधा है ?

(१) **भौगोलिक स्थिति** (Geographical Location)—खनिज पदार्थो के महत्व पर उनके मिलने के क्षेत्रो की स्थिति का उतना ही अधिक प्रभाव पड़ता है जितना कि बाजारो की निकटता का। स्थिति का महत्व उत्तरी अमेरिका के मैसाबी श्रेणी से मिलने वाले लोहे से स्पष्ट होता है। यहाँ का लोहा सुपीरियर झील द्वारा सुन्दर यातायात मिल जाने से अनेक वर्षो तक पूर्वी भागो तक सरलता से भेजा जाता रहा है। प्रतिवर्ष लगभग १० करोड टन लोहा इन खानो से निकाला जाता रहा है जब कि इसके विपरीत भारत मे मयूरभज मे लगभग १० अरब टन के सुरक्षित जमाव होने पर भी प्रति वर्ष निकाले जाने वाले लोहे की मात्रा १० लाख टन से २० लाख टन की ही रही है, क्योकि यातायात की दृष्टि से इन खानो की स्थिति इतनी सुन्दर नही है।

यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि विश्व के लगभग ८५% खनिज एटलान्टिक महासागर के निकटवर्ती देशो मे मिलते है। विश्व के सामुद्रिक मार्गो तथा भौगोलिक स्थिति के कारण ही खनिजो का महत्व इन देशो मे अधिक बढ गया है। अपनी प्रतिकूल भौगोलिक स्थिति के कारण ही ब्राजील की लोहे की खानो का काफी समय तक विदोहन नही किया जा सका। कागोलैंड मे तावे और यूकन नदी की घाटी की सोने की खानो का उपयोग भी इसी कारण जल्दी नही हो पाया।

खनिज पदार्थों की प्राप्ति ज्यों-ज्यों तेजी के साथ की जाती है उनके भडार शीघ्र ही समाप्त भी होने लगते हैं। कॉर्नवाल में टिन की खानें इतनी जल्दी समाप्त होने का मुख्य कारण उनका आधुनिक ढंगो से शीघ्र निकाला जाना था। अतः कुछ समय से वहाँ इंजीनियरो को प्रशिक्षण देने के लिए एक स्कूल खोला गया है जहाँ टिन की खुदाई करने सम्बन्धी तान्त्रिक बातें बताई जाती है। यहाँ के प्रशि-

6. *K. F. Mather*, **Enough and to Spare**, 1944, pp. 73-76.

नीचे की तालिका मे प्रमुख खनिजो की बनावट तथा खनिज मे धातु का प्रतिशत बताया गया है[१०] —

धातु (Metal)	धातु का खनिज (Ore Mineral)	बनावट (Composition)	धातु का प्रतिशत
सोना	देशी सोना (Native Gold)	सोना	१००
चाँदी	(i) देशी चादी (Native silver)	चाँदी	१००
	(ii) अरजेनटाइट (Arg-ntite)	चाँदी+गन्धक	८७
लोहा	(i) मैग्नेटाइट (Magnetite)	लोहा+आक्सीजन	७२
	(ii) हैमेटाइट (Hematite)	लोहा+आक्सीजन	७०
	(iii) लिमोनाइट (Limonite)	लोहा+आक्सीजन+जल	६०
ताँबा	(i) देशी ताँबा (Native copper)	ताँबा	१००
	(ii) बोरनाइट (Bornite)	ताँबा+गन्धक+लोहा	६३
	(iii) चैल्कोपाईराइट (Chalcopyrite)	ताँबा+गन्धक+लोहा	३४
	(iv) चैल्कोसाइट (Cnalcocite)	ताँबा+गन्धक+लोहा	८०
	(v) मैलेचाइट (Malachite)	ताँबा+कार्बन+आक्सीजन+जल	५७
	(vi) अज्यूराइट (Azurite)	ताँबा+कार्बन+आक्सीजन+जल	५५
सीसा	(i) गैलेना (Galena)	सीसा+गन्धक	८६
	(ii) कैरसाइट (Cerusite)	सीसा+कार्बन+आक्सी०	७७
जस्ता	स्फलेराइट (Sphalerite)	जस्ता+गन्धक	६७
	स्मीथसोनाइट (Smithsonite)	जस्ता+कार्बन+आक्सीजन	७८
टिन	कैसीटराइट (Casyiterite)	टिन+आक्सीजन	७८
रांगा	पैन्टलैंडाइट (Pantlandiet)	रांगा+लोहा+गन्धक	२२
क्रोमियम	क्रोमाइट (Chromite)	क्रोमी+लोहा+आक्सी०	६८
मैंगनीज	(i) पाइरोलूसाइट (Pyrolucite)	मैंगनीज+आक्सीजन	६३
	(ii) सीलोमैलीन (Psilomelane)	—	४५
अल्यूमीनियम	बाक्साइट (Bauxite)	अल्यूमी+जल+आक्सी०	३९
सुरमा	स्टीबनाइट (Stibnite)	सुरमा+गन्धक	७१
पारा	सीनाबार (Cinabar)	पारा+गन्धक	८६
टंगस्टन	वूलफ्रमाइट (Wolframite)	टंगस्टन+लोहा+आक्सीजन+मैंगनीज	७६

10. *A. M. Bateman*, **Formation of Mineral Deposits**, 1951, p. 7.

किया जा सका। यह उपयोग १८७८ के बाद ही हो सका जबकि दो जर्मनी वैज्ञानिकों—थामस और गिलक्राइस्ट—ने धातु प्राप्त करने का प्रयोगात्मक ढग निकाला। इसी प्रकार दक्षिणी अफ्रीका में विटवाटर्सरैंड सोने के भण्डार को सायनाइड विधि का आविष्कार हो जाने पर ही निकाला जा सका। स्वीडेन मे विद्युत भट्टियों के विकास के फलस्वरूप इस्पात उद्योग की बड़ी उन्नति हुई है। तान्त्रिक प्रगति के फलस्वरूप ही अब यह निश्चित रूप से ज्ञात हो सका है कि अटार्कटिक महाद्वीप मे कोई १७५ से भी अधिक किस्म के खनिज पदार्थ मिलने की सभावना है।

(४) जिन स्थानो पर सरलता से खनिज पदार्थ प्राप्त हो सकते हैं वहीं वे शीघ्रता से निकाले जाते हैं।[8] भारत मे बिहार तथा स० रा० मे मैसावी के खानों मे खुले मुँह (Open pit) की खुदाई के कारण कोयला और लोहा शीघ्रता से निकाला जाता है। किन्तु जहाँ खनिज पदार्थ अधिक गहराई पर मिलते हैं वहाँ शैफ्ट प्रणाली से उन्हें निकाला जाता है। ईरान मे तेल कूप इसलिए अधिक महत्व के हैं कि वहाँ तेल बहुत ही कम गहराई पर प्राप्त हो जाता है जबकि भारत मे नये स्रोत ६,००० फीट से भी अधिक गहराई पर पाये गये है।

(५) खनिज पदार्थ का विदोहन उनकी माँग पर भी निर्भर करता है। ज्यो-ज्यो लोहे और इस्पात के उद्योग का विकास होता गया, विश्व के अनेक भागो मे नई लोहे की खानो का पता लगाया गया। इसके अतिरिक्त क्रोमियम, मैंगनीज, मोलिबिड्नम तथा टंगस्टन धातुओ के क्षेत्रों का भी शीघ्रता से पता लगाया गया क्योंकि ये सभी खनिज लोहे को शुद्ध करने और उसको मजबूत बनाने के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। अनेक बार सीमान्तक उत्पादक प्रदेशों का भी महत्व बढ़ जाता है विशेषतः ऐसी अवस्था मे जब प्रमुख प्रदेशो से पूर्ति कम होने लगती है।

(६) यातायात की सुविधाओ का भी खनिज पदार्थों के विदोहन पर प्रभाव पड़ता है। ब्राजील मे ४०० मील लम्बी सड़क होने के कारण ही इतबीरा-लोहे की खानों का विकास हो सका। पनामा नहर बन जाने से ही दक्षिणी अमेरिका के प्रशान्त महासागरीय तट के खनिजो का निर्यात व्यापार बढ गया है। इसी प्रकार मध्यपूर्व के तेल के नल की लाइन भूमध्यसागर तट तक बन जाने से तेल के कुओं का विकास शीघ्रता से हुआ है। किन्तु बहुमूल्य धातुओं के विदोहन पर यातायात का अधिक प्रभाव नही पड़ता। यातायात की कठिनाई होते पर भी मानव ने आस्ट्रेलिया, अलास्का, कनाडा तथा कैलीफोर्निया मे सोने के भण्डारो को ढूँढ निकाला है।

अस्तु, सक्षेप मे कहा जा सकता है कि जिन खनिज क्षेत्रों मे उत्तम प्रकार की शुद्ध धातु मिलती हो और उसमे अशुद्धियों की मात्रा कम हो, जो कम गहराई पर सग्रहित हो वे ही क्षेत्र व्यापारिक दृष्टि से आदर्श होते है और उन्ही का विदोहन भी सरलता से किया जाता है।

8. "Placers veins, zones of contact metamorphism around igneous rock intrusions zones of secondary enriched accumulations of minerals, and of big intrusive bodies of rock containing finely disseminated minerals each presents a problem unlike others. These problems tend of determine the feasibility of recovering ore of any given place or time."—*Renner & Others*, **World Economic Geography**, p. 399.

लिए कृत्रिम रूप से ठंडी हवा पहुँचाई जाती है। सोने के अतिरिक्त अन्य धातुओं को निकालने में भी गहरी खुदाई का सहारा लिया जाता है। सं० राज्य में ८०% कोयला भूमि के गर्भ से पैदा किया जाता है। इसमें से लगभग २०% गहरी खुदाई से मिलता है। यहाँ लम्बवत सुरंग की औसत गहराई १६० फीट है। सबसे गहरी खुदाई न्यू मैक्सिको में ८३६ फीट पर की जाती है। ब्रिटेन में औसत गहराई १,१६७ फीट है।

(४) ड्रिफ्ट खुदाई (Drift Mining)—जिन क्षेत्रों में कोयला या धातुएँ धरातल के समानान्तर पाई जाती हैं, वहाँ उन्हें निकालने के लिये सुरंगें सतह के समानान्तर खोदी जाती हैं। इस प्रकार की खुदाई का सबसे अच्छा उदाहरण पूर्वी स० राज्य के एपैलेशियन पठार की कोयले की खानों में मिलता है।

(५) ढालू खुदाई (Slope Mining)—इस ढंग में पृथ्वी के धरातल से उसके नीचे की ओर जाने के लिये ढालू सुरंगें बनाई जाती हैं। जिन भागों में कोयले या लोहे की तहें ढालू होती हैं वहीं यह ढंग अपनाया जाता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण न्यूफाउंडलैंड में बैल द्वीप (Bell Island) में देखा जा सकता है। यहाँ लोहा समुद्र के नीचे स्थित है। अतः उस तक पहुँचने के लिये लगभग १ मील लम्बी ढालू सुरंग बनाई गई है। यहाँ से विद्युतचालित मोटरें अयस को तट तक ढोकर लाती हैं।

(६) प्लेसर खुदाई (Placer Mining)—बालू या बजरी के जमावों में अनेक स्थानों पर धातुओं के कण मिलते हैं जिन्हें आर्थिक रूप से निकालना लाभदायक सिद्ध होता है। सोना, टिन, प्लैटीनम और हीरे इस प्रकार के विस्तृत जमावों से प्राप्त किये जाते हैं। अधिकतर जमाव नदियों की बजरी में अथवा समुद्र तटीय बालू में मिलते हैं। अलास्का के नोम (Nome) के सोने के जमाव तथा भारत में केरल के तटीय भागों में थोरियम के जमाव इसके मुख्य उदाहरण हैं। इन जमावों से धातुएँ प्राप्त करने के लिए हाईड्रॉलिक (Hydraulic mining) और ड्रैजिंग (Dredging) खुदाई का ढंग काम में लाया जाता है।

विश्व में सोने के उत्पादन का १०%, टिन का ७०%, और प्लैटीनम का अधिकांश उत्पादन प्लेसर ढंग से ही प्राप्त किया जाता है।

खनिज पदार्थों की विशेषतायें

(१) यह कहना सत्य ही प्रतीत होता है कि खान खोदना प्रकृति की सम्पत्ति का अपहरण (Exploitation) है, क्योंकि कृषि की भाँति खनिज पदार्थों का उत्पादन नहीं किया जा सकता है। मानव खनिज पदार्थों का केवल उपभोग कर सकता है, वह उन्हें अपने इच्छित स्थान पर, अपनी आवश्यकताओं के अनुसार पैदा नहीं कर सकता। कारण स्पष्ट है, खनिज सम्पत्ति का परिमाण सीमित होता है। यह परिमाण इच्छानुकूल बढ़ाया नहीं जा सकता। भूगर्भ से एक बार निकाले जाने पर उतनी मात्रा में खनिज सदा के लिए समाप्त हो जाते हैं। इसीलिये यह कहा जाता है कि खान खोदना एक प्रकार की डकैती (Robber Economy) है क्योंकि इसके द्वारा जो खनिज पदार्थ एक बार निकाल लिये जाते हैं, उनकी पूर्ति करना असम्भव होता है। जिस गति से आज खनिज पदार्थ निकाले जाते हैं, उसे देखकर विद्वानों का कहना है कि निकट भविष्य में इन पदार्थों की भारी कमी पड़ जायगी। पश्चिमी देशों में

अध्याय २१

लोहा और मिश्रित खनिज

(IRON & ALLOY MINERAL)

१. लोहा (Iron)

लोहे का उपयोग ३००० वर्ष पूर्व भी औजार तथा हथियार बनाने मे होता था। १८ वी और १६ वी शताब्दियो से तो इसका महत्व और भी अधिक बढ गया। आधुनिक काल मे अल्यूमीनियम को छोडकर ससार मे और किसी धातु का इतना प्रयोग नही होता, जितना कि लोहे का। यदि यह कहा जाय कि लोहा आधुनिक सभ्यता की जननी है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी क्योकि आज के युग मे मानव के प्रयोग मे आने वाली दैनिक वस्तुओ मे से अधिकाश लोहे से ही बनाई जाती हैं। अतएव आधुनिक युग को लोहे और इस्पात का युग कहा जा सकता है। सुई, चाकू, कैंची, छुरियाँ आदि से लगाकर कृषि-यन्त्र, वस्त्र बनाने की मशीनें तथा जलयान, एंजिन, मोटर गाडियाँ और इमारतें तक सभी लोहे से ही बनाई जाती है। सच तो यह है कि लोहे का ६०% भाग इस्पात बनाने के काम आता है[1], जिसके द्वारा भारी भरकम, मजबूत, टिकाऊ वस्तुयें बनाई जाती है क्योकि इस्पात का मुख्य गुण उसकी सख्ती और टिकाऊपन है। लोहे के इतने अधिक मानव के उपयोग मे आने के मुख्य कारण उसका धरातल पर आसानी के साथ मिलना, खपत के केन्द्रों के निकट खानो का होना, और लोहे मे कुछ विशेष गुणो का होना है जैसे भारीपन, टिकाऊपन, सस्ता-पन, लचीलापन और उसको तारो मे खीचे जाने की क्षमता का होना।[2] जिन देशों मे लोहे का भडार पाये जाते हैं अथवा जिन्हे लोहा और कोयला अन्यत्र स्थानो से सरलता-पूर्वक मिल जाता है उन्होंने ही आधुनिक युग मे औद्योगिक प्रगति, राज-नीतिक सत्ता और धन की प्राप्ति की है। ये देश फौजी प्रगति मे भी अग्रणी हैं। कोयला आधुनिक काल में गति प्रदान करता है और लोहा और इस्पात औद्योगिक उन्नति में महान् योग देते हैं। अतएव कोयला और लोहा आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता

---

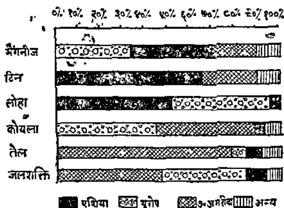
1. *Smith, Phillips and Smith*, **Industrial and Commercial Geography**, pp. 340-41.

2. "By alloying it with smaller amounts of other metals and by special treatment in the furnace iron may be given various qualities such as extreme hardness, toughness, elasticity, durability, brittleness, density, porosity and resistence to corrosion or oxidation. No other metal has been adapted to so many uses, and none is so easily and cheaply produced."

Ibid, p. 340 and *Case and Bergsmark*, **Op. Cit.**, p. 615.

खानों के लिए नही मिल पाते और जो मिलते भी है उनकी मजदूरी भी अधिक होती है।

(६) खनिज पदार्थों का विकास बहुत कुछ यातायात के साधनों पर निर्भर रहता है अतएव जिन स्थानो मे जैसे—पहाडी भागो अथवा गर्म मरुस्थलों मे जहाँ यातायात के साधनो की पूर्ण सुविधा नही है, वहाँ खनिज पदार्थो के अत्यधिक मात्रा मे होने पर भी उनको ठीक प्रकार नही निकाला जाता।



चित्र ११७. महाद्वीपो मे खनिज पदार्थ उत्पादन

हर देश मे कुछ न कुछ खनिज पदार्थ पाये जाते है। जिस देश मे जितने अधिक खनिज पदार्थ पाये जाते हैं वह उतना ही सम्पन्न समझा जाता है। किन्तु ऐसा कोई भी देश नही है जहाँ सारे ही खनिज पदार्थ पाये जाते हों। अतएव हर देश को कुछ न कुछ खनिज पदार्थो का दूसरे देशो से आयात करना पडता है। इस प्रकार सारे ही देश खनिजो के सम्बन्ध मे एक दूसरे पर आर्थिक रूप से निर्भर रहते है। अगले पृष्ठ की तालिका मे यह बताया गया है, कि विभिन्न देश अमुक खजिन पदार्थो मे कहा तक आत्मनिर्भर है।

अगले पृष्ठ पर दी गई दूसरी तालिका से स्पष्ट होगा कि खनिज पदार्थो का उत्पादन और नियन्त्रण कुछ ही देशो तक सीमित है। सन् १९३९ मे खनिज पदर्थो के कुल उत्पादन का ३४% संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, २३% ब्रिटेन साम्राज्य, १०% रूस, ७½% जर्मनी और ६% इंग्लैण्ड से प्राप्त हुआ था।[९] द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् विश्व के आठ बड़े देशो से कुल खनिज उत्पादन का ८५% भाग उपयोग मे लाया गया। यह देश क्रमश: सं० रा० अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, बेल्जियम, फ्रान्स, जर्मनी, इटली और जापान है। किन्तु अकेले रूस को छोड़कर सभी देश खनिज पदार्थो के लिए अन्य देशो पर निर्भर है। शताब्दियो से विश्व की दो बड़ी शक्तियाँ—अमेरिका और ब्रिटेन—खनिज उत्पादन मे महत्वपूर्ण रहे हैं क्योकि उपनिवेशो मे इन्ही देशो के नियन्त्रण में खनिज सम्पत्ति रही है और यदि यह कहा जाय कि वस्तुत:

9. *Leith, Furness and Lewis*, **World Minerals and World Peace,** 1943, pp. 224-226.

विश्व मे मैंगनीज उन देशो मे प्राप्त होता है जहाँ इसकी घरेलू खपत कम होती है। अत. इन देशों से यह उन देशो को भेजा जाता है जहाँ लोहा और फौलाद के बड़े बड़े कारखाने पाये जाते हैं। प्रमुख निर्यातक रूस, भारत, घाना, दक्षिणी अफ्रीका सघ और ब्राजील हैं और मुख्य आयातक संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, नार्वे, जर्मनी, फ्रास, बेल्जियम, लक्समबर्ग, नीदरलैंड और जापान है।

निम्न तालिका मे विश्व के मैंगनीज के सुरक्षित भडार बताये गये है :—

सुरक्षित भंडार (१० लाख मैट्रिक टनो मे)

देश	ऊँची श्रेणी के जमाव (औसत धातु ४५%)	निम्न श्रेणी के जमाव (औसत धातु २५%)
भारत	१,०००	२००
द० अफ्रीका संघ	५०	—
फ्रासीसी मोरक्को	३०	२०
गणतंत्र कागो	१०	२०
घाना	१०	२०
ब्राजील	१००	५०
क्यूबा	४	८
अन्य क्षेत्र	१६	२७

(४) अभ्रक (Mica)

वर्तमान युग मे अभ्रक का उपयोग अधिकतर बिजली के कारखानो मे किया जाता है। सफेद और पीले रग का अभ्रक अपनी स्वच्छता, लचक, तडक और बिजली तथा गर्मी के लिए अचालकता आदि गुणो के कारण बड़ा उपयोगी होता है और इसी कारण इसका उपयोग छोटे छोटे डायनमो, बिजली की मोटरो के कम्यूटेटर, बेतार के तार, समुद्री विमान मोटर यातायात आदि मे इसका अधिकाधिक उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त अपनी स्वच्छता और पतली-पतली पर्तों मे पृथक् हो जाने की रुचि के कारण अभ्रक लालटेन की चिमनियो मकानों की खिडकियो, कारखानो मे भट्टियो के मुँह पर पोतने तथा अग्नि-प्रतिरोधक पदार्थों के समान बायलरो के ऊपर लगाने के काम मे भी आता है जिससे वे शीघ्र ठढे नही होते। अभ्रक को काटते समय जो चूरा बच जाता है उसे स्प्रिट मे मिला कर पतले-पतले पत्तं बना लेते हैं। इस उद्योग को माइकैनाइट (Micanite) उद्योग कहते हैं।

अभ्रक ग्रेनाइट नामक आग्नेय अथवा शिष्ट (Schist) और नीस (Gneiss) नामक परिवर्तित शिलाओ मे सफेद या काले अभ्रक के छोटे छोटे टुकडे के रूप मे पाया जाता है। किन्तु सफेद अभ्रक के बड़े बडे टुकड़े धारियो के रूप में बनी हुई

हसन और केरल मे नैय्यूर और पुन्नालूर मे ही मिलता है। भारत का अभ्रक कलकत्ता, बम्बई, मद्रास के बन्दरगाहों से इगलैड, स० राज्य अमेरिका, फ्रास और जर्मनी को निर्यात किया जाता है।

अन्य उत्पादक—सयुक्त राज्य अमेरिका में उत्तरी केरोलीना और न्यू हैमशायर रियासतों मे तथा दक्षिणी अफ्रीका मे दक्षिणी रोडेशिया के लोमागुण्डी प्रदेश मे भी मैग्नीज प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अन्य उत्पादक फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, नार्वे, कनाडा, अर्जेन्टाइना, रूस और जापान हैं।

मुख्य निर्यातक दक्षिणी अफ्रीका और भारत है। इन देशों से अभ्रक संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट-ब्रिटेन और जर्मनी को भेजा जाता है।

(५) एस्बस्टस (Asbestos)

यह मैगनेशिया, सिलीका और जल का मिश्रण होता है। यह दो प्रकार का होता है—एक जहर मोहरा (Serpentine) नामक खनिज की रेशेदार किस्म और दूसरी हार्नब्लेंड (Hornblende) नामक खनिज की। विश्व में प्रथम प्रकार का एस्बस्टस ही मिलता है। इसके रेशे इतने मजबूत होते है कि उन पर मौसम के परिवर्तन, आग या पानी का कोई असर नहीं होता। इस खनिज की उपयोगिता उसके रेशो के चिमड़ेपन, लचीलेपन और उसके अग्निरोधक गुण के कारण ही है। इसके रेशे रुई के समान काते और बटे जा सकते हैं। इन रेशों से मोटे कागज, कपड़े और तख्ते तैयार किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त सीमेंट मिलाकर उसके खपरैल और छत पाटने के तख्ते और बिजलीघरों मे तथा तेजाब जैसे द्रव्यो को छानने मे भी इसका प्रयोग किया जाता है।

एस्बस्टस का १९५६ का उत्पादन इस प्रकार है :—

कनाडा	१०·४ लाख टन	प० यूरोप	४२,००० टन
अफ्रीका	२७६,००० टन	आस्ट्रेलिया	६,००० ,,
स० रा०अफ्रीका	४५,००० ,,	रूस	२४०,००० ,,
		अन्य देश	४८,००० ,,

विश्व का योग १७,००,००० टन

विश्व में इसके प्रमुख उत्पादक कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका संघ, इटली और भारत हैं। भारत मे बिहार मे सरायकेला और मयूरभंज जिलो में तथा मुगेर जिले की परिवर्तित शिलाओं के क्षेत्र मे एस्बस्टस की बड़ी-बड़ी धारियाँ मिलती हैं। मैसूर राज्य मे शिमोगा, काडूर, हसन और मैसूर नामक जिलो मे एस्बस्टस बहुत मिलता है। मद्रास में कडुापा जिले और राजस्थान के उदयपुर जिले में भी इसकी बहुतायत है। मध्य प्रदेश के भंडारा जिले मे भी एक दो जगह एस्बस्टस पाया जाता है।

विश्व के उत्पादन का ३/४ एस्बस्टस कनाडा के क्यूबेक प्रान्त से प्राप्त होता है। यहाँ यह ६ मील चौड़ी और ७० मील लम्बी पट्टी मे मिलता है। यहाँ लगभग ६५२० लाख टन के जमाव अनुमानित किये गये हैं। कुल उत्पादन के ९७% का निर्यात कर दिया जाता है इसमे से ६०% अकेला संयुक्त राज्य लेता है।

ये दोनों देश विश्व के कुल उत्पादन के ⅔ पर नियन्त्रण रखते हैं तो कोई अत्युक्ति न होगी[9]।

ज्यों-ज्यों औद्योगिक उन्नति होती गई त्यों-त्यों ब्रिटेन, सं० राज्य के पूर्वी भाग और पश्चिमी तथा मध्यवर्ती यूरोप मे कल-कारखानो का विकास होता गया। इसके फलस्वरूप यहाँ खनिज पदार्थों का उपभोग भी बढता गया। फलतः यहाँ के निवासियो ने विश्व के अन्य भागो मे जाकर खनिज सम्पत्ति प्राप्त करने के प्रयास किये। इसी के परिणामस्वरूप आज हम संयुक्त राज्य मे मिसीसिपी नदी के पूर्वी क्षेत्र मे तथा ग्रेट ब्रिटेन, पश्चिमी और मध्यवर्ती यूरोप तथा रूस और साइबेरिया मे एक विस्तृत 'शक्ति की पेट्टी' (Power Belt) पाते हैं जहाँ विश्व मे सम्भवतः सबसे अधिक खनिजो का उपभोग होता है और फलत औद्योगिक विकास भी इस क्षेत्र का अपनी चरम सीमा तक पहुँच सका है। इस क्षेत्र मे कोयले, पैट्रोल और विद्युत शक्ति से प्राप्त होने वाली शक्ति का ६०% उपभोग मे आता है। यहाँ बिखरे हुए भागो मे विश्व का ६०% कच्चा लोहा और इस्पात बनाया जाता है। इसकी तुलना मे उत्तरी अटलांटिक के शक्ति-क्षेत्र तथा सम्पूर्ण दक्षिणी गोलार्द्ध मे विश्व के उत्पादन की केवल ३% शक्ति प्राप्त होती है और यहाँ केवल २% लोहे और इस्पात का उत्पादन होता है तथा अन्य खनिजों का उपभोग भी कम होता है।[10]

सौभाग्यवश अब एशिया मे भारत, चीन, जापान और द० अमरीका में ब्राजील, अर्जेन्टाइना और चिली मे औद्योगिक विकास आरम्भ हो गया है।

10. Ibid, p. 32.

अध्याय २२

बहुमूल्य और अलौह धातुएँ

(PRECIOUS AND NON-FERROUS METALS)

कुछ धातुएँ अपनी सुन्दरता, रंग, अपर्याप्त मात्रा में उपलब्धि और स्थिरता के कारण प्राचीन काल से ही मानव उपयोग में आ रही हैं। इन्हें बहुमूल्य धातुएँ कहा जाता हैं। ऐसी प्रमुख धातुएँ क्रमश: सोना, चांदी, प्लैटीनम, हीरे, रत्न तथा मणियाँ आदि हैं।

(१) सोना (Gold)

अत्यन्त प्राचीन काल से सोने का महत्व आभूषण बनाने के लिए, सम्पत्ति के केन्द्रित रूप में तथा मुद्रा बनाने के लिए रहा है। मानव की इच्छा इस धातु को प्राप्त करने के लिए इतनी बलवती रहती है कि इसकी खोज के लिए न केवल आक्रमण हुए, नई खोजें हुई और विश्व के अनेक भागों में उपनिवेश बसाये गये। भारत, एशिया, अफ्रीका और साइबेरिया में इसी प्रकार की क्रियायें की गई। अमरीका की खोज में भी सोने का आकर्षण मुख्य रहा है और इसी के लिये लालचवश अनेकों [illegible], लूट-पाट तथा विश्वासघात किये गये। इसको पाने के लिए मानव ने अधिक कठिनाइयाँ और त्याग किया है। पिछले २०० वर्षों से इसका महत्व बढ़ा ही है, घटा नहीं। अभी भी इसकी खोज बड़ी उत्सुकतापूर्वक की जाती है और इसकी खोज के फलस्वरूप नई बस्तियाँ बन रही हैं, नये क्षेत्रों की सीमा बढ़ रही हैं और कृषि तथा उद्योग में वृद्धि हो रही है। अनेक दूरवर्ती देशों में इसका मिलना सभ्यता की सीढ़ी है।[1]

सोना अपने चमकीले रंग और सुन्दरता, टिकाऊपन और गलाने की सुविधा, भौतिक परिस्थितियों में और कम मात्रा में पाये जाने के कारण बहुत प्राचीन काल से ही मनुष्य के आकर्षण का वस्तु रहा है।[2] इसका अधिकतर उपयोग देश की सरकारों तथा केन्द्रीय बैंकों द्वारा कागजी मुद्रा की सुरक्षता के रूप में किया जाता है अथवा विदेशी व्यापार की बाकी के भुगतान के लिए। मुद्रा के अतिरिक्त सोने का उपयोग आभूषण बनाने, सजावट की कलात्मक वस्तुएँ बनाने, घड़ियों के चौखटे, बरतन, वर्क, तथा चीनी मिट्टी की वस्तुओं पर सुनहरी पालिश करने, धातु की ईंटें, चश्मे के फ्रेम, पैन की निबें, भस्में और औषधियाँ बनाने में होता है। अनेक धातुओं के साथ मिला कर भी इसका उपयोग किया जाता है विशेषकर प्लैटीनम जाति की धातुओं के साथ। दांत बनाने, कृत्रिम रेशे बनाने, विद्युत उपकरणों में वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं के उपकरणों में, अन्य धातुओं और खनिजों पर पालिश करने, हवाई जहाज के एंजिनों पर पालिश करने तथा पृथ्वी के उपग्रहों पर जिससे घिसाव और गर्मी से बचाव हो सके।

1. *A. M. Bateman*, **Economics of Mineral Deposits**, 1962.
2. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 413.

अफ्रीका में मैंगनीज का उत्पादन दक्षिणी अफ्रीका संघ तथा घाना में किया जाता है। प्रथम क्षेत्र में इसकी खानें पोस्टमैस्वर्ग के निकट है। अन्य प्रमुख क्षेत्र घाना, कांगो गणतन्त्र और फ्रांसीसी मोरक्को है।

जर्मनी, क्यूबा, मिस्र, मरक्को और आस्ट्रेलिया अन्य मैंगनीज पैदा करने वाले देश है।

नीचे की तालिका में मैंगनीज का उत्पादन बताया गया है :—

मैंगनीज का उत्पादन (००० टॉन्स में)

देश	१९५५	१९५८	१९५९
अंगोला	३२	३४	—
आस्ट्रेलिया	४८	५६	६१
रिपब्लिक कांगो	४६२	३३१	३८६
ब्राजील	२१२	६९५	८६६
चिली	५३	३८	६६
चीन	२८०	५४०	१३८०
क्यूबा	३१५	६९	१७
घाना (निर्यात)	५४८	५२१	५४२
भारत	१६०९	१२७६	१२६७
इंडोनेशिया	३५	४४	४२
जापान	२०१	२७७	९८३
मैक्सिको	८८	१७०	६४
द० मोरक्को	४११	४१०	४७१
उ० रोडेशिया	१८	४५	५७
रूमानिया	३९०	२००	१९७
द० प० अफ्रीका	३८	६३	५०
स्पेन	४४	३८	२३
द० अफ्रीका संघ	५८९	८४७	१३१६
सं० राज्य अमरीका	२६०	२९३	२०४
रूस	४७४३	५३६६	४६३०
वेनेजुएला	—	८	१५
विश्व का योग	१०,८७४	११,८६५	१२,०००

खाने तथा तुककुर जिले मे एक खान, हैदराबाद मे हट्टी मे, मद्रास में चित्तूर तथा बिहार मे सिंहभूमि जिले मे।[४]

सोना कभी भी प्रकृति मे शुद्ध रूप मे नहीं मिलता किन्तु इसमे चाँदी व अन्य धातुओ के अश मिले रहते है। जिन चट्टानो मे सोना प्राप्त होता हैं उसमे सोने का भाग चादी के अनुपात मे १४ वा होता है। चादी के अतिरिक्त इसके साथ कच्चा प्लैटीनम, यूरेनियम भी मिलता है।

सोने की कच्ची धातु दो प्रकार से मिलती है—आग्नेय चट्टानो की तह मे और नदियो की बालू मिट्टी मे। पहले प्रकार का सोना चट्टानों की नसो में पाया जाता है। इस प्रकार की नसें चट्टानो मे अधिक गर्मी और अधिक दबाव के कारण बन जाती है। सोने के कण आग्नेय चट्टानो मे बहुत थोडी मात्रा मे बिखरे हुए पाये जाते है अथवा स्वर्ण-मिश्रित बिल्लौर की धारियो मे पाये जाते है। इस प्रकार का सोना **पठारी सोना** (Vein-deposit या Load-mines) कहलाता है। इस प्रकार की सोने की चट्टाने विशेषकर दक्षिणी भारत के पठार, ब्राजील के पठार और दक्षिणी अफ्रीका संघ और पश्चिमी आस्ट्रलिया मे मिलती है।

दूसरे प्रकार का सोना नदियो की मिट्टियो मे पाया जाता है—क्योंकि नदियाँ और समुद्र की लहरें सोना मिलने वाली चट्टानो को तोड़ कर मैदानी भाग मे रेत और बजरी के साथ जमा कर देती है, इसलिए इसके कणो को चलनी आदि से छानकर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। किन्तु इस प्रकार से प्राप्त किये गये सोने की मात्रा बहुत ही थोड़ी होती है। इस प्रकार के सोने को **मैदानी सोना** (Placer deposit) कहते है। आस्ट्रेलिया के विक्टोरिया प्रान्त मे **बैलेरेट** की खानें, अलास्का के उत्तरी भाग मे **क्लोनडाइक** की खानें तथा दक्षिणी अफ्रीका मे **रैंड** की खानें इसी प्रकार के सोने की खानें है। भारत के उत्तर प्रदेश की **सोना** नदी, असम की **स्वर्णसीरी** और बिहार उडीसा की **स्वर्णरेखा** नदियो के बालू में भी सोना पाया जाता है। प्रसिद्ध भूगर्भ शास्त्री लाइस का कथन है कि भूतपूर्व भारत साम्राज्य का कोई भाग ऐसा नही है जहाँ के लोगो द्वारा नदियो की बालू से सोने के कण प्राप्त न किये जाते हों किन्तु इस प्रकार प्राप्त किये गये सोने की मात्रा अधिक नही होती और वह मूल्य मे ३००-४०० पौंड से अधिक नही होता है। किसी समय मध्य प्रदेश मे जाशपुर के अनेक भागों में भी नदी की बालू से सोना प्राप्त किया जाता था विशेषकर **इब** नदी और उसकी सहायक **मैनी** और **सनो चोरी** के बहाव-क्षेत्रो मे।

चट्टानों से प्राप्त कच्ची धातु को शुद्ध करने के लिए पहले चूरा कर लिया जाता है। फिर इसे पानी मे घुमाया जाता है जिससे अशुद्धियाँ बाहर निकल जाती हैं और सोने के कण भारी होने के कारण नीचे रह जाते है। इस प्रकार की क्रिया को 'Placer Mining' कहते हैं। शुद्ध करने के ढंग मे पानी की एक तेज धार को चट्टानों पर डाला जाता है जिससे चट्टानें छिन्न-भिन्न हो जाती है और सोने के कण अलग हो जाते हैं। इस क्रिया को 'Hydraulic Mining' कहते हैं। इसके पश्चात् सोने को गन्धक के तेजाब, जस्ते का चूरा तथा अन्य रासायनिक पदार्थों—पारा, पोटेशियम साइनाइड आदि के साथ भट्टियो मे गलाकर साफ किया जाता है।

विश्व वितरण

पिछले ६० वर्षों से सोने के उत्पादन मे काफी वृद्धि हो गई है। १८९२

4. **Indian Minerals,** *Jan.* 1961, Issue. No. 1, p. 50.

पैगमेटाईट (Pegmatite) नामक आग्नेय चट्टानों में ही मिलते हैं। सफेद अभ्रक को रूबी अभ्रक (Ruby Mica) और हल्का गुलाबीपन लिये अभ्रक को बायोटाइट अभ्रक (Biotite Mica) कहते हैं।

भारत—विश्व में अभ्रक पैदा करने वाले देशों में भारत का स्थान प्रथम है। यहाँ पैगमेटाईट शिलायें कई स्थानों पर मिलती हैं। बिहार, मद्रास, केरल, मैसूर और राजस्थान के जयपुर, अजमेर और उदयपुर जिलों में अभ्रक बहुत मिलती है किन्तु इन सब स्थानों में से मुख्य क्षेत्र प्रथम दो ही राज्यों में हैं।

बिहार में अभ्रक का क्षेत्र गया, हजारीबाग, मुंघेर और मानभूम जिलों में फैला है। यह क्षेत्र १२ मील लम्बा है। अधिकतर अभ्रक की खानें कोडर्मा (Kodarma), डोमाचान्च, चाकल, धाव तथा तिसरी इत्यादि स्थानों पर हैं। ये सब खानें कोडर्मा के जंगल में हैं। इस क्षेत्र से भारत का ८०% अभ्रक प्राप्त किया जाता है। इस क्षेत्र के अभ्रक को बंगाल अभ्रक (Bengal Mica) अथवा बंगाल का लाल अभ्रक कहते हैं, कारण यह है कि यहाँ के अभ्रक के परतों के समूह का रंग फीका लाल होता है। यह अभ्रक कलकत्ता से ही विदेशों को निर्यात किया जाता है।

अभ्रक का दूसरा प्रसिद्ध क्षेत्र मद्रास के नैलोर जिले में है। यह क्षेत्र ६० मील लम्बा और ८ से १० मील चौड़ा है। यहाँ की प्रसिद्ध खानें कालीचेडू और तैलीबाड़ू हैं। ये खानें गडूर, कवाली, रापुर और आत्मकुर में हैं। यह अभ्रक हरे रंग का होता है। अतः यहाँ का अभ्रक बिहार के अभ्रक से हल्का होता है।

राजस्थान में अभ्रक शाहपुरा, टोंक, भीलवाडा, राजनगर, और अजमेर क्षेत्रों में मिलता है। यहाँ का अभ्रक भी उत्तम किस्म का होता है। कुछ अभ्रक मैसूर में

विश्व में अभ्रक का उत्पादन (टॉन में)

देश	१९५६	१९५७	१९५८	१९५९
अंगोला	२४	२१	२१	—
आस्ट्रेलिया	१३	१७	३१	—
अर्जेन्टाइना	१४०	९६	४५	—
ब्राजील	१३२८	१४८२	१४१९	११५८
भारत (निर्यात)	९२५०	७५३२	६४७०	१०११२
मैडेगास्कर	५३६	६६४	६२२	६६४
द० रोडेशिया	५६	३२	४८	—
द० अफ्रीका संघ	१	१	१	१
टैंगेनिका	५९	६८	५०	५३
सं० राज्य अमरीका	१३१	३१३	३००	—
इन देशों का उत्पादन	११५४१	१०५२६	९३६२	१०९६५

जापान	७४६६	८०५६	६६५८
उत्तरी कोरिया	४०००	४०००	१३०,०००(औं०)
कोरिया प्रजातन्त्र	१४६३	२२७१	६५,६६०(औं०)
मैक्सिको	११६१३	१०३२६	६७६८
निकारगुआ	७३७२	७५२७	६२२१
पीरू	५३१६	४१३७	१४३,७६६(औं०)
फिलीपाइन	१३०३२	१३१५७	१२५३५
द० रोडेशिया	१६३२६	१७२६२	१७७२६
द० अफ्रीका संघ	४५४१७३	५४६४७४	६२४१२३
रूस	२८००००	३१००००	१० ला०(औं०)
संयुक्त राज्य अमरीका	५८३८१	५४७११	४६७०३
वैनेजुएला	१८६७	२३६४	१४५८
विश्व का अनुमानित योग	१,१२६,१००	१,२५६,६०६	१,३१८,८००

Source : U. S. Minerals Year Book, 1958, Mining Journal, Annual Review (May 1960), World Mining Vol. 13, No. 5.

दुनिया में सबसे अधिक सोना (५३%) दक्षिणी अफ्रीका संघ से प्राप्त होता है। यहाँ सोना निकालने का काम १८८४ से किया जाता रहा है। यहाँ ट्रांसवाल राज्य के किम्बरले, मोनोरीफ, पिलग्रीमस रेस्ट, बारबरटन, हाईडलबर्ग, कर्लकसडार्फ, बुलाओ और बोलियों की खानों से प्राप्त किया जाता है। इनमें सबसे प्रमुख लिम्पोपो और ऑरेंज नदियों के बीच में स्थित विटवाटरसरैंड की चट्टानें हैं। यह क्षेत्र ५० मील लम्बा और २५ मील चौड़ा है। यहाँ वर्ष के लगभग ४२५ टन सोना प्राप्त करने के लिए खानों से ६७० लाख टन कच्ची धातु निकाली जाती है। यहाँ खानें ६,००० फुट गहरी है।[5] यह संसार का सबसे बड़ा स्वर्ण-केन्द्र है। थोड़ा सा सोना दक्षिणी रोडेशिया की बार्टले, विक्टोरिया, और मेलसबरी तथा कांगो गणतन्त्र की किलोमोटर घाना और (गोल्डकोस्ट) की उन्ताली खानों से भी प्राप्त किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका से विश्व का केवल ६% सोना प्राप्त किया जाता है। यहाँ सोना केलीफोर्निया, फ्लोरिडा, मोनटाना, दक्षिणी डाकोटा, यूटाहा, कोलोराडो और एरीजोना पठार की खानों से तथा बृटिश कोलम्बिया में फ्रेजर और कोलम्बिया नदियों के बेसीन से प्राप्त होता है। सोना द० डाकोटा में ब्लैक पहाड़ियों के जिले से प्राप्त होता है।

कनाडा में सोना १५५८ से फ्रेजर नदी की घाटी से निकालना आरम्भ किया गया। यहाँ ब्रिटिश कोलम्बिया की कूटेनी खानों, अलास्का की क्लोनडाईक और पूर्वी

5. *E. W. Zimmermann*, **World Resources and Industries**, p. 761.

(६) टंगस्टन (Tungsten)

इसका मुख्य खनिज वूलफ्राम (Woolfram) है जो टंगस्टन, लोहे और मैंगनीज की भस्मो का रासायनिक मिश्रण है। वूलफ्राम बिल्लौर पत्थर की धारियों मे पाया जाता है। यह धारियां ग्रेनाइट नामक आग्नेय शिला के पास की भूमि मे पाई जाती हैं। कहीं-कहीं ऐसी धारियों के पास वूलफ्राम के कण नदियों की बालू मिट्टी में भी पाये जाते है। इसका अधिकतर उपयोग बढ़िया इस्पात बनाने के लिए होता है। यह धातु बिजली के लैम्प के तार बनाने मे भी काम आती है।

विश्व मे टंगस्टन पैदा करने वाले मुख्य देश ब्रह्मा, पुर्तगाल, संयुक्त राज्य अमेरिका, न्यूसाउथवेल्स, विक्टोरिया, क्वीसलैंड, टस्मानिया, कनाडा, चीन, ब्रिटेन और भारत है। भारत मे यह धातु सिंहभूमि जिले तथा मध्य प्रदेश के अमरगांव और राजस्थान के जोधपुर जिले में पाई जाती है।

विश्व में वूलफ्राम का उत्पादन

	१९५५	१९५६
सं० रा० अमरीका (धातु)	६,११५	६,०७१
बोलिविया (कन्सन्ट्रेट)	२,३८८	२,८०३
कोरिया (,,)	२,८६२	३,६६६
पुर्तगाल (,,)	३,४९८	३,८९३

(२) चांदी (Silver)

चादी विश्व मे न केवल शुद्ध रूप वरन् अन्य कई प्रकार के दूसरे पदार्थों—जैसे जस्ता, तांबा अथवा सीसा आदि—के साथ मिली हुई पाई जाती है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि चांदी मिलने वाली उन धातुओ से जिनसे दुनियाँ की ६०% शुद्ध चाँदी मिलती है उनसे ही दुनियाँ का ८५% सोना, ६६% राँगा, ५६% ताँबा और ४६%जस्ता भी प्राप्त होता है। चाँदी मुख्यत पाच प्रकार की कच्ची धातुओ से प्राप्त की जाती है—(i) अर्जेन्टाइट (Argentite) (इसमें धातु का अश ८७% होता है), (ii) पायराजाइराइट (Pyrazirite) (धातु का अंश ६०%) (iii) स्टेफेनाइट (Stefanite) (धातु का अंश ७०%) (vi) होर्नसिल्वर (Horn-Silver) (७०% धातु) तथा प्रोसटाइट (Prostite) (६५% धातु)।

चाँदी का सबसे अधिक प्रयोग सिक्के, आभूषण, वर्तन और औपधियाँ, फोटोग्राफिक सामान आदि बनाने और जवाहरात उद्योग के लिए होता है। इलैक्ट्रोप्लेटिंग (Solder) तथा मिश्रित धातु बनाने मे भी इसका उपयोग होता है।

नीचे की तालिका मे चाँदी का उत्पादन बताया गया है:—

देश	उत्पादन (मैट्रिक टनो में)	
	१९४८	१९५९
मैक्सिको	१,७८१	१,४६२
सं० राज्य अमरीका	१,२२०	१,१४५
कनाडा	५२९	९६७
आस्ट्रेलिया	३१३	५०५
प० जर्मनी	६४	२७८
जापान	६४	२५९
पीरू	२८९	८०६
विश्व का योग	५,०००	६,७००

विश्व मे चाँदी उत्पन्न करने वाले मुख्य देश मैक्सिको, सयुक्त-राज्य अमेरिका, कनाडा, पीरू, बोलीविया, चिली, आस्ट्रेलिया, जापान, स्वीडेन आदि देश है। विश्व मे चाँदी का उत्पादन क्रमश. बढता रहा है। सन् १८०० ई० मे ७८० लाख औंस चाँदी प्राप्त की गई। १९४० मे यह मात्रा २७३० लाख औंस हो गई। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात चाँदी का औसत उत्पादन प्रति वर्ष २,००० लाख औंस है। १९५९ मे ६७०० मैट्रिक टन चाँदी निकाली गई।

उत्तरी अमेरिका संसार मे सबसे अधिक चांदी पैदा करने वाला महाद्वीप है। यहाँ विश्व की ६६% चाँदी पाई जाती है। यहाँ चाँदी का भण्डार पश्चिम की समस्त पहाडी श्रेणी में उत्तर मे सयुक्त राज्य से लेकर दक्षिणी अमेरिका मे चिली तक भरा है। संयुक्त राज्य अमेरिका में चांदी उटाहा, मोनटाना, नेवाडा, कोलोराडो, एरीजोना और टैक्साज आदि रियासतों में मिलती है। यह देश के उत्पादन का

बहुत सा सोना व्यक्तियों द्वारा केवल मात्र गाड़ कर रखने के लिए भी इकट्ठा किया जाता है।[3]

सोने की खोज का इतिहास

सोने के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि वास्तव में अमेरिका की खोज के बाद ही हुई है जबकि पीरू, मैक्सिको, बोलीविया और चिली देशों ने यूरोप की राजधानियों को इस पीले धातु से पाटना आरम्भ किया था। संयुक्त राज्य अमरीका इसके उत्पादन में ३०० साल तक पिछड़ा रहा है। सबसे पहले यहाँ सोने की प्राप्ति सन् १८०१ में उत्तरी कैरोलिना में तथा १८२६ में जार्जिया में की गई। इसके बाद तो एक दम सोना प्राप्ति के लिए दौड़ सी लग गई। १८४८ में सोने की प्राप्ति का श्रेय कैलीफोर्निया राज्य को था। इसके उत्पादन के फलस्वरूप १८५३ में संयुक्त राज्य अमरीका विश्व का सबसे प्रमुख सोना उत्पादक देश बन गया। इसकी यह स्थिति आगामी ५० वर्षों तक रही। इसी प्रकार १८५१ में आस्ट्रेलिया में सोना निकाला गया जिसके परिणामस्वरूप विश्व में सोने का उत्पादन १८५०-१८६० की अवधि में ६० लाख औंस से भी अधिक का होगया। उत्पादन में थोड़े समय के लिए कमी हो गई किन्तु पश्चिमी संयुक्त राज्य में नई खानों से पता लग जाने से इसमें फिर से वृद्धि हो गई। यह वृद्धि १८८६ में दक्षिणी अफ्रीका में रेंड की खानों की खोज से और भी अधिक हो गई। १८९६ में क्लोनडाइक की सोने की दौड़ के फलस्वरूप १८९०-१९०० की अवधि में सोने का उत्पादन १५० लाख औंस से भी अधिक का हो गया तथा १९१५ में यह उत्पादन अपनी चरम तक पहुँच गया—२३० लाख औंस। १९०५ से दक्षिणी अफ्रीका का महत्व अधिक बढ़ गया है जहाँ का वार्षिक उत्पादन लगभग १२० लाख औंस है जिसका मूल्य ४२ करोड़ कूंता जाता है। प्रति टन पीछे लगभग ०.२१ औंस सोना प्राप्त होता है तथा प्रति टन पीछे निकालने का खर्च ५$\frac{1}{2}$ डालर। यहाँ ९००० फीट की गहराई तक कार्य हो रहा है। धरातल के नीचे ६००० मील लम्बे क्षेत्र में कार्य किया जा रहा है। मुख्य उत्पादक जिला ९० मील लम्बा और २५ मील चौड़ा है।

भारत में सोना अत्यन्त प्राचीन काल से निकाला जा रहा है। इसके प्रमाण मिले हैं। १७९३ में मलाबार जिले में नदी के रेत से सोना प्राप्त किया जाता था। १८३१ में वायनाड के दक्षिणी पूर्वी भागों से चट्टानी सोना प्राप्त होने के प्रमाण मिले हैं। इससे १८७५ तक सोना निकाला जाता रहा। १८७९ और १८८१ के बीच ४० लाख पौण्ड की पूंजी से ३३ कम्पनियाँ आरम्भ की गई जिनका उत्पादन लगभग ६०० औंस था किन्तु १९५३ में इस क्षेत्र में सोना निकाला जाना बन्द हो गया। हैदराबाद में सोना १८८६ से ही निकाला जा रहा है। ३०० से अधिक पुरानी खानों का पता हुट्टी, बोदाली, गास्की, टोपूलडोडी और बुधनी क्षेत्रों में लगा है जो रामचूर के दोआब में हैं। इनके अतिरिक्त गुलबर्गा तालुक के मंगलूर क्षेत्र से भी सोना प्राप्त होता था। मैसूर के धारवाड़ तथा बिहार के छोटा नागपुर से भी सोना मिलने के प्रमाणर मिले हैं। इस समय भारत में सोने का मुख्य क्षेत्र ये हैं: मैसूर राज्य में कोलार जिले के चा

3. *Geological Survey of India*, **Indian Minerals, January 1961, Vol 15, No. 1, p. 50.**

द० अफ्रीका संघ, २३% कनाडा और २०% रूस तथा शेष अलास्का और कोलम्बिया मे प्राप्त होता है।

(४) बहुमूल्य पत्थर (Precious Stones

ससार मे जहाँ कही भी बहुमूल्य पत्थर पाये जाते है वही इन्हे निकाला भी जाता है क्योकि इनका मूल्य बहुत हाता है। हीरे, माणिक, नीलम, पुखराज और रक्तिमणि आदि मुख्य बहुमूल्य रत्न है। हीरे का वितरण निम्न प्रकार से है[6].—

हीरा का उत्पादन (००० कॅरेट मे)

देश	१९५५	१९५८	१९५९
अगोला	७३४	१००१	१०१६
बेल्जियन कागो	१३०४१	१६६७३	१४८५४
ब्राजील	२५०	२५०	३००
बृ० गायना	३३	३३	६२
फ्रासीसी विषुवतीय अफ्रीका	१३७	१०५	१००
फ्रासीसी पश्चिमी अफ्रीका	३१८	२८१	३००
धाना	२२५८	३१३२	३०४२
लाइबेरिया (निर्यात)	२०४	८६९	४७७
सियरालिओन (निर्यात)	४१८	१४७०	७३८
द० अफ्रीका सघ	२६२९	२७०२	२८३२
द० प० अफ्रीका	८१३	९०५	९३१
टैंगेनिका	३२६	५२१	५५५
वेनेजुएला	१४१	९०	९५
विश्व का अनुमानित योग (रुस को छोडकर)	२१३७७	२८०४७	२६१७६

(क) हीरा (Diamond)—हीरा ससार मे सबसे अधिक दक्षिणी अफ्रीका की किम्बरले की खानो से नीली चट्टानो से प्राप्त किया जाता है। द० अफ्रीका मे हीरे के मुख्य क्षेत्र कागो गणतत्र मे कसाई नदी की ऊपरी घाटी मे बुवगा क्षेत्र; उत्तरी अगोला के डाइमग क्षेत्र, गोल्ड कोस्ट की बरीम घाटी; और सियरा लियोन की कैंचा और कोनो क्षेत्र हैं। इसके अतिरिक्त ब्राजील, ब्रिटिश गायना, न्यूसाउथ वेल्स और दक्षिणी भारत मे अनन्तपुर, बिलारी, कड्डापा, कर्नूल, कृष्णा और गोदावरी जिले तथा पूर्वी भारत मे महानदी और उसकी सहायक नदियो की बालू मे मुख्यतः सम्बलपुर और चाँदा जिले मे तथा मध्य भारतीय क्षेत्र मे मध्य प्रदेश की बुन्देलखण्ड आदि रियासतो मे हीरा पाया जाता है। विश्व का उत्पादन २३५ मैट्रिक कॅरेट है'।

6 'World Mining, Vol. 12 and 13, No. 5.

और १९१२ के बीच सोने के उत्पादन मे तीन गुनी वृद्धि हुई तथा १९१२ से १९४० तक प्राय दो गुनी हो गई। १९५३ मे ३४० लाख औंस सोना प्राप्त किया गया जबकि १९३७-३९ मे यह मात्रा ३८० लाख औंस थी। १९५९ मे सोने का उत्पादन ३२४० लाख औंस था। १९५९ मे समस्त उत्पादन १,३१८,८०० किलोग्राम का था। विश्व मे प्राय सभी देशो मे सोना पाया जाता है। किन्तु निकाला वही जाता है जहाँ-जहाँ यह काफी मात्रा मे मिलता है। सोने के मुख्य उत्पादक दक्षिणी अफ्रीका संघ, कनाडा, सयुक्त राज्य, घाना रोडेशिय, मेक्सिको, कोलम्बिया, कांगो, गणतंत्र चिली, भारत, जापान और आस्ट्रेलिया हैं। आगे की तालिका मे सोने के उत्पादन क्षेत्र आदि बताये गये हैं:—



चित्र १२०. सोना उत्पादक क्षेत्र

सोने का उत्पादन (किलोग्राम में)

देश	१९५५	१९५८	१९५९
आस्ट्रेलिया	३३६२८	[illegible]	३३४३६
गणतंत्र कांगो	११५०८	[illegible]	१०८८६
ब्राजील	४५१०	४३५४	१२०;०००(औं)
कनाडा	१४१२७७	१४११११७	१३८२५५
चिली	४२३०	२२०८	२,३७३
कोलम्बिया	११५८०	११४७१	११८१९
फीजी	२१७७	२७०६	—
घाना	२१३६८	२६५३१	२८३९७
भारत	६५५८	५२९१	५१४४

सीसा तीन प्रकार की कच्ची धातुओं से प्राप्त होता है :—

(i) गैलिना (Galena)—इसमें धातु का प्रतिशत ८६% होता है।

(ii) केरुसाईट (Cerrusite)—इसमें धातु का प्रतिशत ७७% है।

(iii) एंगेसाईट (Angesite)—इसमें धातु का ८६ प्रतिशत होता है।

सीसा अधिक परतदार चट्टानों की नसों के रूप में पाया जाता है। सीसे के साथ कभी-कभी चूना, चाँदी और जस्ता भी मिला रहता है। लोहे के बाद सीसे का ही सबसे अधिक प्रयोग होता है क्योंकि यह मुलायम और भारी धातु होती है जो ६२१° फ० ताप पर पिघलती है। इसे सरलता से दूसरी धातुओं के साथ मिलाया जा सकता है तथा इस पर खनिज अमलों का प्रभाव कम पड़ता है। यह बिजली का कुसचालक है। इसको फोनीसीयन लोगों ने स्पेन और फ्रास में ढूँढ निकाला था और ये लोग इसका खूब उपयोग भी करते थे। इसका उपयोग ईसा के ६०० वर्ष पूर्व भी किया जाता था।

उपयोगिता की दृष्टि से इसका बड़ा भारी महत्व है। रेल के इंजिन, मोटर कार, बैटरी, हवाई जहाज, टाइपराइटर, वाद्ययंत्र, मशीनें, छापेखाने के टाइप, कारतूस, बन्दूक की गोलियाँ, बिजली के तार, रंग-रोगन तथा अन्य वस्तुओं के बनाने में इसका प्रयोग होता है।[8] इसका सबसे अधिक उपयोग वस्तुओं में टाका लगाने के लिए होता है।

विश्व में जितना सीसा पाया जाता है उसका ४५% अकेले **उत्तरी अमरीका** से प्राप्त किया जाता है। यहाँ इसका उत्पादन मिस्सौरी, इडाहो, कन्सास, ओक्लोहामा, नेवाड़ा, कोलोराडो, मोनटाना, यूटाहा, न्यूआर्लियन्स और एरीजोना रियासतों से प्राप्त किया जाता है।

मेक्सिको में चहुहाहुआ, जैक्टेकास, और सैनलुइस-पोटोसी की खानों से सीसा मिलता है।

कनाडा में इसका उत्पादन ब्रिटिश कोलंबिया की मिलुवन खान से, क्यूबिक, ओंटेरियो, और नोवास्कोशिया प्रान्त से; तथा आस्ट्रेलिया में न्यूसाउथ वेल्स की ब्रोकनहिल और टसमानिया की रीड-हरक्यूलिस खानों में भी होता है।

अन्य उत्पादक यूरोप में सारडीनिया द्वीप, स्पेन (लैनारेस कैरोलिना), फ्रास में सेवॉय, आल्पस और पिरेनीज में; इगलैंड में कम्बरलैंड, डरहम, डरबीशायर और स्कॉटलैंड में लनार्कशायर, यूगोस्लाविया में ट्रेपका तथा सत्रघ की खानों

8. "As a metal, an alloying agent, an ingradient of manufactued goods, and an agent in industrial operations, the range of lead's usefulness is almost as wide as the field of industry itself. It is present in the home in paint, plumbing materials, glassware and musical instruments, in the office it is used in typewriters and calculating machines, in transportation, large quantities are required in in the manufacture of automobiles, airplanes, and locomotives. It is valuable in the building trade, communication by wire, the printing industry, the sportsman's rifle, and the chemical laboratory"—*Case and Bergmark*., **Op. Cit.**, p. 702.

ओंटेरियो प्रान्त के किर्कलैंड, पोरक्यूपाइन और लार्डर झील प्रदेश तथा न्यूबिक और नोवास्कोशिया की खानो से सोना प्राप्त किया जाता है। थोड़ा सा सोना मैक्सिको के पठार पर रिपलडीओरो तथा विटामादरे की खानो से भी मिलता है।

आस्ट्रेलिया मे जितना सोना निकलता है उसका ८०% पश्चिमी आस्ट्रेलिया की कूलगार्ली, कालगूर्ली, किम्बरले, यालगू, सेन्टमारग्रेट और शेष २०% सोना विक्टोरिया प्रान्त के बेलेरेट और बेनेंडिगों की खानो से, न्यूसाउथवेल्स की कोबाल्ट और एडीलोग तथा क्वीन्सलैंड की मारगन पर्वत, चार्ल्सटाउन और जिप्पी की खानो से प्राप्त किया जाता है। थोड़ा सा सोना न्यूजीलैन्ड की ओकलैंड और ओटैको खानो से से भी प्राप्त होता है।

साइबेरिया मे सोना लीना और यनीसी नदियों की घाटी और यूराल, अल्टाई पर्वतो तथा आर्कटिक तथा सुदूरपूर्व पठारो के भागो से भी प्राप्त किया जाता है।

दक्षिणी अमेरिका मे ब्राजील, गायना, इक्वेडोर, बोलीविया, पीरू, वैनेजुएला, कोलंबिया और चिली राज्यो मे मिलता है।

एशिया मे चीन, पूर्वी द्वीप समूह, फिलीपाइन तथा जापान मे सागानोशे और कोरिया मे इन्मान और सुहअन की खानो मे से सोना प्राप्त किया जाता है।

भारत का समस्त सोना मैसूर के कोलार नामक जिले में उत्पन्न होता है। यहाँ पर सोना बिल्लौर पत्थर की धारियों मे मिलता है। बिल्लौर की धारियाँ अत्यन्त परिवर्तित शिलाओं को बेधती हुई दूर तक उत्तर-दक्षिण दिशा मे चली गई है। इन धारियों की मोटाई बराबर एक-सी नही रहती बल्कि ये कही-कही मोटी और कही-कही पतली होती हुई चली गई है। इन धारियो में मुख्य धारी एक ही है और इस पर कई खानें कार्य कर रही है। इस धारी की मोटाई करीब ४ फुट है और तल पर यह ५ मील से अधिक दूर तक दिखाई देती है। यहाँ सबसे गहरी खानें चैम्पियन रीफ (Champion Reef) और ओरोगांम रीफ (Oerogum Reef) है। इन दोनों खानों मे लगभग २०,००० व्यक्ति काम कर रहे हैं। ये खानें १८ मील से अधिक गहराई तक पहुँच चुकी है। इस समय दोनो खानो मे ६००० फीट की गहराई पर कार्य हो रहा है। इन खानो की गणना ससार की सबसे गहरी खानो में की जाती है। पृथ्वी तल से इतनी नीची होने के कारण इन खानों की तह मे तापक्रम १२६° फा० तक पहुँच जाना है जिस कारण वहाँ के पत्थर हर समय तपते रहते हैं। अत मजदूरो को इस गहराई पर कार्य करने मे बडी कठिनाई पडती है। इस गर्मी को कम करने के लिए खानो मे चानकों (Shift) मे होकर बिजली के बड़े-बड़े पंखों द्वारा वायु का संचार किया जाता है। ओरोगाम की एक चानक तो ४,६८० फीट गहरी और १८ फुट चौडी है। यहाँ शिवसमुद्रम् से बिजली लाई जाकर खानों में बिजली से ही काम लिया जाता है। जहाँ बिल्लौर पत्थर को पीस कर जल द्वारा सोने के कण मिट्टी से अलग कर दिये जाते हैं। यहाँ चेम्पीयन रीफ, ओरोगांम रीफ, मसूर गोल्ड माईनिंग और नन्दीदुग गोल्ड माईनिंग कम्पनी काम कर रही है।

व्यापार—सोना निर्यात करने वाले मुख्य देश आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, भारत, दक्षिणी अमेरिका और कनाडा हैं तथा मुख्य आयातक ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, जर्मनी, फ्रांस और इटली हैं।

अधिक मात्रा में जस्ते की सल्फ़ाइड (Zinc-Sulphide) मे प्राप्त होता है किन्तु यह केलेमीन, जिंकाइट, विलेमाइट, हेमीमोरफाइट से भी प्राप्त होता है।

इसका प्रयोग मानव को ईसा के ३०० वर्ष पूर्व से ज्ञात होना है। इसका अधिकाश प्रयोग लोहे को मोर्चे से बचाने के लिए (Galvanising) किया जाता है। इसके अलावा यह रग बनाने, बिजली के शैल बनाने, लोहे पर पालिश करने, बैटरीज बनाने, मोटर के हिस्से बनाने, दवाइयाँ, बॉयलर प्लेट, फोटो एनग्रेविग करने मे भी प्रयोग मे आता है। जस्ते से तैयार किया हुआ नमक दवाइयाँ, वार्निश और रोगन बनाने के काम मे आता है। इसको ताँबे के साथ मिलाकर पीतल (Brass) और टिन के साथ मिला कर काँसा (Bell metal) धातु भी बनाई जाती है।

उत्पादन क्षेत्र

जस्ता उत्पन्न करने वाले देशों मे संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे प्रमुख है। नीचे की तालिका मे प्रमुख उत्पादक देश बताये गये हैं :—

जस्ता उत्पादन (००० टोन्स में)

देश	१९५५	१९५८	१९५९
आस्ट्रेलिया	२६०	२६७	२५१
प्रजातंत्र कांगो	६८	११४	११६
कनाडा	३९३	३८५	३५८
प० जर्मनी	९३	८५	१११
इटली	१२०	१३७	११७
जापान	१०९	१४२	१४२
मैक्सिको	२६९	२२४	२४६
पीरू	१६६	१२९	१४२
पोलैंड	१२६	१४०	१३५
रूस	२७२	३६३	३१६
स० राज्य अमरीका	४६७	३७४	३७८
विश्व का योग	२९१०	३०४०	३०१०

सन् १९१३ मे जस्ते का उत्पादन ११ लाख टन था। यह १९२५ मे बढकर १३ लाख टन, सन् १९३९ में १८ लाख टन और सन् १९५२ मे २७ लाख टन और १९५६ मे २८½ लाख टन तथा १९५९ मे ३० लाख टन हो गया।

सं० राज्य अमेरिका से विश्व का २५% जस्त प्राप्त होता है किन्तु इसमें धातु का प्रतिशत ५%से भी कम होता है जबकि अच्छी धातु में यह प्रतिशत १३% से भी अधिक होता है। यहां जस्ता पाँच क्षेत्रो से प्राप्त किया जाता है : (१) इडाहा मे क्यूर डी एलेन (Coeurd' Alene), (२) ओक्लाहामा मे कन्सास, द० प०

८५% देती हैं। कनाडा मे चाँदी ऑंटेरियो प्रान्त मे (देश की ५०%) सडबरी और कोवाल की खानो से तथा गोगांडा और दक्षिणी लारेंस, ब्रिटिश कोलम्बिया मे किस्वरले, पोर्टलैण्ड, क्यूबेक प्रान्त में नौरे-डारयेन जिले मे तथा मानीटोबा और सस्केचवान मे और यूकन प्रान्त मे चाँदी प्राप्त की जाती है। मैक्सिको मे ससार की एक तिहाई चाँदी प्राप्त की जाती है। यहाँ की मुख्य खानें हिल्डागो राज्य मे है। चिहुआहुआ, सैनफासिस्को, डेलओरो, सानलुइस, गाकाटोक्से, गुनाजूटो, पराल, सेंटा बारबारा तथा कुहाहिला मे सियरा नेवाडा मे चाँदी प्राप्त की जती है। यह खानें देश की $\frac{3}{5}$ चाँदी देती हैं।

दक्षिणी अमेरिका मे पीरू राज्य से विश्व की ८% चाँदी प्राप्त की जाती है। यहाँ चाँदी की खानें सैरोडीपैस्को मे १४,७०० फुट की ऊँचाई पर मिलती है। इसके अतिरिक्त बोलीविया और चिली मे भी टिन, ताँबा, जस्ता और सीसे की कच्ची धातु के साथ मिली हुई चाँदी पाई जाती है।

आस्ट्रेलिया में चाँदी न्यूसाउथवेल्स प्रान्त की ब्रोकनहिल और पश्चिमी आस्ट्रेलिया मे कालगूर्ली, क्वीन्सलैण्ड और दक्षिणी आस्ट्रेलिया मे पाई जाती है। टस्मानिया की रीड हरक्यूलिस खानो से भी चाँदी प्राप्त की जाती है।

यूरोप मे चाँदी जर्मनी, यूगोस्लाविया, स्वीडेन, इटली, जेकोस्लोवाकिया और रूमानिया से प्राप्त की जाती है।

एशिया में चाँदी जापान और ब्रह्मा मे पाई जाती है। जापान की अक्रीता कगावा और इबारकी जिले की खानें प्रसिद्ध है। थोड़ी-सी चाँदी कोरिया, चीन, और फारमूसा मे भी मिलती है। ब्रह्मा में शान के पठार पर बाल्डविन की खानों से सीसे की कच्ची धातु के साथ चाँदी मिलती है।

आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, कनाडा और पीरू अपने यहाँ से चाँदी बाहर भेजते हैं। चाँदी का आयात करने वाले मुख्य देश ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रास, भारत और पाकिस्तान हैं।

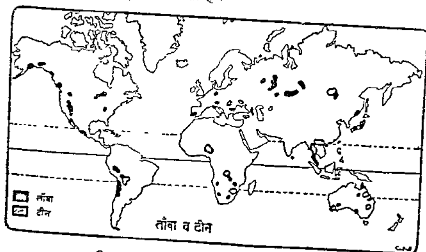
(३) प्लैटिनम (Platinum)

यह कडी धातु होती है जिस पर वायु, अम्ल और ऊँचे तापक्रम का प्रभाव कम पड़ता है।

वर्तमान समय मे यह सबसे मूल्यवान धातु मानी जाती है क्योकि विश्व में इसका बडा अभाव है। इसका प्रयोग बिजली के औजार बहुमूल्य गहने, दन्त चिकित्सा, फोटोग्राफी और एक्स-किरण (X-Ray) में भी होता है। इसका प्रयोग हीरे-जवाहिरात मे भी किया जाता है।

सन् १९५२ तक विश्व मे सबसे अधिक प्लैटिनम कनाडा मे पाया जाता रहा। कनाडा मे इसका उत्पादन ओंटेरियो प्रान्त के सडबरी जिले से प्राप्त किया जाता रहा है। किन्तु अब इसका प्रमुख उत्पादक द० अफ्रीका संघ है। यहाँ यह ट्रांसवाल के बाटरबर्ग, लिडनबर्ग और रस्थनबर्ग जिलों मे पाया जाता है। दक्षिणी अमेरिका मे कोलम्बिया और अलास्का मे गुडन्यूज के क्षेत्र मे भी प्राप्त किया जाता है। रूस मे प्लैटिनम निजनी टागील मे पाया जाता है। कुल उत्पादन का ४३%

टिन कसीटराइट (Cassiterite) नामक धातु से प्राप्त किया जाता है। यह अधिकतर नदियों की लाई हुई मिट्टी के उस जमाव में पाया जाता है जिसकी मिट्टी आग्नेय चट्टानों से टूट कर आई हो। साधारणतः कच्चा टिन कठोर होता है और इसकी घिसावट सरलता से नहीं होती। मलाया और बोलिविया में ऐसा टिन पाया जाता है जो पानी के कटाव से मिट्टी के साथ बहकर चला आता है। यह टिन पत्थर (Tin-Stone) कहलाता है। मलाया में कांप टिन या नदी का टिन (Alluvial Tin or Stream-Tin) पाया जाता है।



चित्र १२१. ससार में तांबे व टिन के क्षेत्र

सन् १९५१-५३ मे विश्व मे टिन का उत्पादन १७२,००० लाख टन था जब कि १९३७-३८ मे यह मात्रा १८४,००० टन थी। सन् १९५५ के कुल उत्पादन का लगभग ३३% मलाया प्रायद्वीप, २०% इण्डोनेशिया, २०% बोलिविया और ९% बेलजियन कांगो से प्राप्त हुआ। शेष उत्पादन थाईलैंड, नाईजीरिया और चीन से प्राप्त हुआ। विश्व का ९०% टिन मलाया, संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट-ब्रिटेन और नीदरलैंड में गलाया जाता।

विश्व में सबसे अधिक टिन मलाया प्रायद्वीप से प्राप्त होता है। यहाँ चीनियों द्वारा कांप-टिन १५ वी शताब्दी से ही निकाला जा रहा है। अब मलाया के उत्पादन का ७०% टिन अंग्रेजो के अधिकार में है। सबसे घनी क्षेत्र पश्चिमी मलाया मे है। टन की कच्ची धातु निकालने के लिए गाटी ड्रैजरों का उपयोग किया जाता है। यह

---

which manufacture and transportation would be impossible. As foil, it wraps like the workingman's tobacco and thes choolgirls' confectionary. It accounts for the rustle and lustre of silk so dear to feminine heart, while the tin dinner pail has a place in politics and is celebrated in song and story. Without the humble tin-can the world could no longer be properly fed"—*Spun and Wormser's*, **Marketing of Metals and Minerals,** 1925 pp. 181-182.

मानव निर्मित असली हीरे

प्रयोग शालाओं मे अनेक देशो की औद्योगिक कम्पनियाँ आजकल बिल्कुल असली हीरों जैसे हीरे तैयार कर रही हैं।

प्रकृति में अत्यधिक तापमान तथा दबाव का ही परिणाम है कि सामान्य कोयला हीरा बन जाता है। १९५५ मे **जनरल इलैक्ट्रिक कंपनी** ने ग्रेफाइट को अत्यधिक तापमान तथा दबाव देकर असली हीरा बनाने मे कामयाबी प्राप्त की। यह हीरा आकार मे बहुत ही छोटा था। १९५७ मे इस कम्पनी ने प्रयत्न किया कि हीरे बड़े आकार के तथा मात्रा मे अधिक बनाये जाएँ।

सबसे अधिक सफलता इस सम्बन्ध मे मिली है जापान की **तोक्योशिबोरा इलैक्ट्रिक कम्पनी** को। उसने केवल ८०० डिग्री सैन्टीग्रेड तापमान और एक लाख बीस हजार पौण्ड दबाव की नवीन पद्धति से असली हीरे बनाने मे कामयाबी हासिल करली है। इससे पहले जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी को इसी तरह हीरे बनाने के लिए १८०० डिग्री सैन्टीग्रेड का तापमान तथा दस लाख तक पौण्ड का दबाव इस्तेमाल करना पडता था।

लेकिन, अभी इन हीरों मे केवल पाँच या दस प्रतिशत ग्रेफाइट ही हीरे मे बदला जा सका है, अभी और अधिक विकास की आवश्यकता है।

(ख) माणिक और नीलम (Ruby & Sapphires)—यह अधिकाश ब्रह्मा, लंका, थाइलैंड में पाये जाते है।

(ग) पन्ना (Emerald)—यह कोलम्बिया, साइबेरिया और न्यू-साउथ वेल्स मे मिलता है।

(घ) रक्तमणियाँ (Topaz)—यह संयुक्त राज्य अमेरिका, यूराल पर्वत, साइबेरिया, सेक्सोनी, साईलेशिया और बोहीमिया में पाई जाती है।

(ङ) मोती (Pearls)—यह अधिकतर मनार की खाडी, बेहरीन द्वीप, सुलू द्वीप, केलीफोर्निया की खाड़ी तथा आस्ट्रेलिया के उत्तरी और पश्चिमी तट के किनारे छिछले पानी मे पाये जाते है।

अलौह-धातुएँ (Non-ferrous Metals)

(१) सीसा (Lead)

सीसा प्राय: जस्ते और चाँदी के साथ मिला हुआ पाया जाता है। यह मोलीबिडनम, वैनेडियम, कैडमीयम, ताँबा, सोना, सुरमा आदि के साथ भी मिला हुआ पाया जाता है। विश्व को प्रमुख खानो में मैक्सिको की विहुआहुआ और पोटोसी की खानें, आस्ट्रेलिया की ब्रोकन हिल और माउट ईसा तथा पीरू की फेरोडी पास्को में सीसा इसी प्रकार मिलता है। एस्मानिया, बोलिविया और कार्नवाल मे यह टिन के साथ मिलता है। स्पेन मे यह चाँदी के साथ मिलता है किन्तु पोलैण्ड, जर्मनी और सार्डीनिया में यह चाँदी के साथ नही मिलता।[7]

---

7. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 411.

चीन मे यद्यपि टिन यूनान, क्वागसी, हूनान आदि प्रान्तो मे मिलता है लेकिन अधिकाश उत्पादन द० यूनान के कोचीय जिले से प्राप्त किया जाता है।

पश्चिमी गोलार्द्ध मे एक मात्र टिन उत्पादक बोलिविया देश है जहाँ टिन की धातु बड़े-बड़े टुकडों के रूप मे मिलती है। यहाँ ७६ जिलों मे टिन निकाला जाता है। सबसे प्रमुख क्षेत्र यूनशिया, हुआनूनी एरेका-किमसा, क्रूज, ओरूरो, लापाज, पोटोसी और चीचास-विचीस्ला जिले हैं। यहाँ टिन के साथ ताबा, सीसा और सुरमा भी मिलता है। किसी भी अन्य प्रदेश मे टिन इतनी विषम परिस्थितियो मे नही निकाला जाता जितना यहाँ। क्योकि सामान्यत टिन की खानें ११ हजार से १६ हजार फुट की ऊँचाई पर पाई जाती है। ये अधिकतर घाटियो के ढालू भागों पर हैं जहाँ पहुँचना भी कठिन है। कही-कही तो धातु प्राप्त करने और लाने के लिए हवाई रस्सो के मार्गो का उपयोग किया जाता है। यहाँ से टिन निकाल कर लामा पशुओं पर लाद कर रेल तक पहुँचाया जाता है। वहाँ से यह एरीका बन्दरगाह द्वारा ग्रेट ब्रिटेन और स० राष्ट्र अमेरिका को गलाने के लिए निर्यात कर दिया जाता है।

अफ्रीका मे नाईजीरिया प्रान्त में बहुची पठार की खानो से टिन प्राप्त किया जाता है। कागो गणतन्त्र मे यह कटागा, मनोमा, रूआडा-यूरडी जिलों में प्राप्त किया जाता है। यह अधिकतर ब्रिटेन को निर्यात कर दिया जाता है। थोडा-सा टिन ब्रह्मा मे मालची और टामोय जिले मे भी प्राप्त होता है।

टिन आयात करने वाले मुख्य देश ग्रेट-ब्रिटेन, स० रा० अमेरिका, जर्मनी, फ्रास, ईरान, जापान और रूस है तथा प्रमुख निर्यातक, मलाया प्रायद्वीप, ब्रह्मा, थाईलैंड, इण्डोनेशिया और बोलीविया है।

से, पश्चिमी जर्मनी में ऊपरी साइलेशिया तथा एशिया में ब्रह्मा की बाडविन की खानें हैं।

मांग की वृद्धि होने के साथ-साथ सीसे के उत्पादन में भी आशातीत वृद्धि हुई है। सन् १८८० ई० में ४०८,००० टन सीसा निकाला गया। सन् १९१३ में यह मात्रा १,२६६,००० टन हो गई और सन् १९५६ में २,१७०,००० टन। विश्व के उत्पादन का ३/५ भाग स० राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, रूस और कनाडा से प्राप्त हुआ। सीसे के सम्भावित भंडार दुर्भाग्यवश बहुत कम हैं और यह अन्देशा है कि ये कुछ ही दशाब्दियों में समाप्त हो जावेंगे।[९]

सीसा निर्यात करने वाले मुख्य देश आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, स्पेन और पीरू हैं। मुख्य आयातक ब्रिटेन, जर्मनी, जापान और भारत हैं।

नीचे की तालिका में सीसा का उत्पादन बताया गया है :

सीसा उत्पादन (००० टोन्स में)

देश	१९५५	१९५८	१९५९
आस्ट्रेलिया	३००	३३२	३१९
कनाडा	१८४	१६६	१६४
मोरक्को	९०	९३	९१
प० जर्मनी	६७	६१	५४
मैक्सिको	२१०	२०२	१९८
पीरू	११९	१२२	११७
द० अफ्रीका	९२	७६	७१
स्पेन	६३	६७	६७
स० रा० अमरीका	३०७	२४२	२३०
रूस	२३०	३००	—
यूगोस्लाविया	९०	९०	८६
विश्व का योग	२१९५	२२९०	२२२०

(२) जस्ता (Zinc)

जस्ता भी प्राकृतिक रूप में नहीं मिलता। यह रांगे की तरह पर्तदार चट्टानों की नसों में मिलता है। इसके साथ चाँदी और रांगा दोनों ही मिलते हैं। जस्ता

9 *A. B. Parson*, **Metals & Minerls—Has the World Enough?** *quoted in Case & Bergsmark*, **Op. Cit.**, p. 792,

निम्न प्रकार के पदार्थ खनिज खादों के अन्तर्गत लिये जाते हैं :—

(१) फास्फेट (Phosphate or P_2O_5)

खनिज खादों में प्रमुख फास्फेट माना जाता है। विश्व की पूर्ति के लिए फास्फेट दो प्रकार से प्राप्त किया जाता है—(१) पृथ्वी के गर्भ में दबी हुई उन फास्फेट चट्टानों से जो प्राचीन-काल के भूगर्भ में जल में विचरने वाले प्राणियों के दब जाने में बनी हैं। विश्व का ५०% फास्फेट इन्हीं चट्टानों से प्राप्त होता है। इस प्रकार की चट्टानें उत्तरी अफ्रीका, सोवियत रूस, स० रा० अमेरिका आदि देशों में पाई जाती है।

अनुमान लगाया गया है कि विश्व में ३४ अरब टन फास्फेट के भंडार छिपे है। इसमें से लगभग २/३ उत्तरी अफ्रीका के अल्जीरिया, मोरक्को, ट्यूनीशिया और मिश्र में है—लगभग २३ अरब टन। इन्हीं देशों से विश्व का १/३ फास्फेट प्राप्त किया जाता है। यहाँ चट्टानों में फास्फेट का अश ५८ से ७७% तक होता है तथा वे १ से २० फुट तक मोटी हैं। यहाँ यह सतह के निकट ही खोदकर निकाला जाता है। यूरोप की माँग का ५० से ८०% फास्फेट ये ही प्रदेश पूरा करते हैं। यहाँ पर यह कुरीधा मोरक्को, गफसा, ट्यूनिशिया, हैबेसा और अल्जीरिया में निकाला जाता है।

रूस में विश्व के भंडार का लगभग १५% समाहित है—लगभग ५½ बिलियन टन। रूस विश्व का तीसरा प्रमुख उत्पादक है। यहाँ फास्फेट देने वाली चट्टानें १०० से ३०० फीट मोटी हैं जिसमें फास्फेट का अश ५० से ७०% तक होता है। यह मुख्यत: कोला प्रायद्वीप में खीबिनी, बोल्गा और नीपर नदियों के मध्य में तथा उत्तरी कजकस्तान में अक्तीयूबिन्मक और काराताऊ की खानों से प्राप्त होता है। सारा ही फास्फेट घरेलू माँग के लिए ही पूरा हो जाता है।

कुछ समय पूर्व से फास्फेट के नये उत्पादकों का भी ज्ञान हुआ है। नारू, ओशन, मकाटा, क्रिसमस और अगोर आदि द्वीपों में ७८ से ९०% अंश वाली चट्टानें पाई गई हैं। इनमें फास्फेट निकालकर आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और जापान को निर्यात कर दिया जाता है।

स० राज्य अमेरिका फास्फेट उत्पादन में दूसरा मुख्य देश है। यहाँ विश्व के १२% भण्डार—लगभग ४ लाख बिलियन टन—पाये जाते हैं। इन भण्डारों का लगभग २/३ अकेले फ्लोरिडा (२½ बिलियन टन) और शेष १/३ पश्चिमी रियासत में यूटाहा, व्योमिंग, मोनटाना में १½ बिलियन टन और टैनेसी में ०·१ बिलियन टन पाया जाता है। स० रा० में सबसे प्रमुख उत्पादक फ्लोरिडा ही है जहाँ फास्फेट की चट्टानें १०० फीट पक मोटी पाई जाती हैं। ये चट्टानें धरातल के समीप होने के कारण सरलता से ही खोदी जा सकती हैं। स० रा० से फास्फेट का निर्यात कनाडा, ग्रेट ब्रिटेन, इटली, जापान, नीदरलैण्ड और जर्मनी आदि देशों को होता है। अनुमान लगाया गया है कि स० राज्य के भण्डार वर्तमान गति के अनुसार १,३०० वर्षों तक के लिए पर्याप्त होंगे।[1]

---

1. The President's Material Policy Commision-Resources For Freedom, Vol. 2, 1952, p. 156

भारत मे तावा का क्षेत्र सिंहभूमि जिले मे लगभग ८० मील तक केरा, केरीकोल, खरसावाँ इत्यादि क्षेत्रों में होकर दक्षिणी-पूर्व दिशा मे चला गया है। यहाँ की मुख्य खनिज सोनामाखी ही है। परन्तु इसके साथ तावे, लोहे और निकिल के गंधकदार मिश्रण भी मिलते हैं। जहाँ ताँबे की खनिजें निविष्ट हो गई हैं—जैसे माटीगारा और मोसाबानी नामी स्थानों में—वहाँ पर वे खाने स्थापित करके निकाली जा रही है। तावे के इस क्षेत्र मे अधिक लाभदायक और प्रसिद्ध खान **मोसाबानी** (Mosabani), **धोबानी और राखा** है। यहाँ **इंडियन कोपर करपोरेशन** नाम की कम्पनी कार्य कर रही है। यहाँ ६५० फीट की गहराई पर कार्य हो रहा है। इस कम्पनी की मुख्य खानें और कारखाना **घाटशिला** नामक स्थान के पास है। घाटशिला के निकट ही कम्पनी ने **मौभंडार** नामक स्थान पर एक विशाल कारखाना तावे के खनिजों को शोधने के लिए तैयार किया है।

तावे के भंडार का ९०% स० राज्य अमेरिका, चिली, उत्तरी रोडेशिया, रूस, ताबा उत्पन्न करते है। ऊपर की तालिका मे विश्व मे ताबे के भण्डार बताये गये हैं।

विश्व के ताबा निर्यात करने वाले मुख्य देश सयुक्त राज्य अमेरिका, चिली, रोडेशिया, गणतंत्र कांगो, क्यूबा, बोलिविया, साइप्रस, फारमूसा, फिलीपाइन्स अ र पीरू हैं तथा मुख्य आयात करने वाले देश कनाडा, फ्रास, इटली, बेल्जियम, जर्मनी और ब्रिटेन हैं।

(५) टिन (Tin)

हम जितनी धातुओ का प्रयोग करते है संभवत टिन ही सबसे कोमल और सबसे अधिक उपयोगी धातु है। यह इतना कोमल और पीट कर बढाने योग्य होता है कि इससे पतली चादर बनाई जाती है। इस धातु मे मोर्चा नही लगता अतः यह इस्पात और लोहे की रक्षा करता है। इसलिये इसकी कलई की जाती है। ऐतिहासिक काल के पूर्व से ही इसका उपयोग हथियार, बरतन, औजार तथा गहने आदि बनाने और कासा बनाने के लिए ताबा टिन के साथ मिलाया जाता था। टिन का उपयोग फोनिसियन और कारथेजियन लोगो द्वारा भूमध्यसागर वर्ती देशों मे अधिकता से किया जाता था। १४ वी शताब्दी में मिश्री लोग इसके मिश्रण से मुँह देखने का काच बनाते थे। ऐसा कहा जाता है कि हैफास्टस ने (जो अग्नि देवता माने जाते थे) एचीलीज की ढाल को सजाने मे इसी धातु का उपयोग किया था। प्राचीन ब्रिटेन मे कार्नवाल से प्राप्त हुए टिन का भी अधिक महत्व था। टिन के तत्वों से औषधियाँ तथा रगने और चमकाने के पदार्थ बनाये जाते हैं। रेशम को रगने और चमकाने में भी इसका उपयोग किया जाता है। सोल्डर (Solder) बनाने के लिए ताबा और सीसा मिलाया जाता है और सुरमा तथा ताबा मिलाकर बैबिट (Babbit) धातु बनाई जाती है जिसका अधिकाधिक उपयोग यातायात के साधनों और कई उपयोगों मे होता है। टिन के हल्का होने के कारण इसके कनस्तर (Containers) और डिब्बे बनाये जाते हैं जिनमे फल, सब्जियाँ तथा अन्य वस्तुयें भर कर भेजी जाती हैं। वास्तव मे टिन मानव-जीवन के हरेक पहलू मे काम आता है।[28]

28. "It accompanies man in every walk of life literally from craddle to the grave" · It is a necessary ingredient of solder, and is a component of babbit and most other antifriction metals, without

फास्फेट का उपयोग दो प्रकार से किया जाता है (१) या तो फास्फेट की चट्टानो को चुरा कर उसे मिट्टी में मिला दिया जाता है या फिर फास्फेट को फासफोरिक तेजाब (Phosphoric Acid) के रूप मे प्राप्त किया जाता है। सबसे उपयोग खाद के लिए किया जाता है। फास्फोरस का उपयोग दियासलाई बनाने, बन्दूक की गोलियो, रंग दवाइया, पकाने का चूर्ण, हल्के पेय आदि बनाने तथा मुर्गियो और पशुओं को खिलाने में होता है।

(२) दूसरे प्रकार का फास्फेट लोहे और इस्पात के कारखानो में बिसैमर खुली भट्टियो मे जब लोहा गलाया जाता है तो भट्टे मे चूना आदि उससे फास्फोरस खीच लेते है। इसी को पीस कर चूरा बनाकर 'Basic Slag Thomas Meal' के नाम से बाजारो मे बेचा जाता है। इस प्रकार का फास्फोरस जर्मनी, फ्रास, बेल्जियम और लक्समबर्ग से प्राप्त किया जाता है।

(३) कुछ फास्फोरस पशु और मनुष्यो की विष्ठा से भी प्राप्त किया जाता है। कुछ मात्रा अमेरिका के बूचडखानो से विशाल मात्रा मे प्राप्त होने वाले रक्त, हड्डियो और पशुओं के अन्य अवशेषो से भी प्राप्त की जाती है।

(२) पोटास (Potash or K_2O)

पोटाश की प्राप्ति भी कई प्रकार से होती है। अधिकतर पोटाश उन भूगर्भिक नमक की चट्टानो से प्राप्त होता है जो पूर्व काल में बनी थी। नमक की ये चट्टानें क्रमश कारनेलाइट (Carnallite), सिलवाईट (Sylvite) और कियेनाइट (Kainite) है। इन विभिन्न प्रकार की नमक की चट्टानो से ही विश्व का अधिकाश व्यापारिक पोटाश प्राप्त होता है।

अनुमान लगाया गया है कि सम्पूर्ण विश्व मे ५ अरब टन पोटेशियम आक्साइड (Pattassium Oxide) के भण्डार मौजूद है, जो वर्तमान उपयोग की गति से आगामी एक हजार वर्षों तक के लिए पर्याप्त हैं। इनमे से सबसे अधिक भण्डार पूर्वी जर्मनी मे हैं—१४०,००० लाख टन; पश्चिमी जर्मनी मे २० से २००,००० लाख टन, रूस मे ७,००० से १८४,००० लाख टन; इजराइल ट्रांस-जार्डन मे १२,००० से १४,००० लाख टन; फ्रांस में ३,००० से ४,००० लाख टन, स्पेन मे २,७०० से ५,००० लाख टन और स० राज्य मे २,५०० लाख टन के भडार होने का अनुमान है।[२]

पोटाश का सबसे अधिक उत्पादक जर्मनी है। यहाँ से विश्व का ६०% पोटाश प्राप्त होता है। यहाँ तीनो प्रकार के नमक की चट्टानें मिलती है जिनमे पोटाश की मात्रा इस प्रकार है :—

कारनेलाइट (पोटाश + मैगनीशियम क्लोराइड)	८ से १%
कैयेनाइट (पोटेशियम क्लोराइड + मैग्नेशियम सल्फेट)	१० से १२%
सिलवाइट (पोटेशियम क्लोराइड)	१५ मे २४%

इनमे के प्रथम प्रकार की चट्टानें ही जर्मनी मे अधिक पाई जाती है। यहाँ नमक की चट्टानें हर्ज पर्वत ... ारो ओर पाई जाती है। उत्तर की ओर निम्न भूभागो के नीचे की ओर ... श्चम मे थुरगिया तक। यहाँ पोटाश की खानें १,२०० से

2 The Presid... edom, Vol s for Freedom 1952, pp. 157-58.

टिन का उत्पादन (टोन्स में)

देश	१९५५	१९५७	१९५९
बेल्जियन कांगो	१५२६८	१४५०९	१०४७९
बोलीविया	२८३६८	२८२४१	२४१९४
इण्डोनेशिया	३३९०१	२८१६७	२१९६२
मलाया	६२२२४	६०२४२	३८१२५
नाईजीरिया	८२८९	९७६६	५६११
थाईलैंड	९८४७	१३७४७	९८४७
विश्व का योग (रूस को छोडकर)	१८४,०००	१८३,०००	१४०,०००

टिन—स्पैल्टर उत्पादन (टोन्स में)

देश	१९५५	१९५७	१९५९
मलाया+सिंगापुर	७१७६२	७२४३०	४५४६१
इंगलैंड	२७६७७	३४७२१	२७६६५
नीदरलैंड	२६९९१	२९७२७	९७४५
बेल्जियम	१०५९९	१००१७	६०४०
बेल्जियन कांगो	३०८३	३१५५	३४०५
आस्ट्रेलिया	१०३६	१८३५	१३३४
संयुक्त राज्य	२२६८६	१५८९	१०८७१
विश्व का योग (रूस को छोडकर)	१८५०००	१७८०००	१३४०००

ड्रैजर टिन की धातु को निकाल देते हैं इसके पश्चात् टिन को पीसा जाता है और उसे पानी की बडी-बडी तश्तरियो में धोया जाता है। चूंकि टिन का चूरा भारी होता है अत यह पेंदे में जमा हो जाता है। इसे धोकर पीनाग और सिंगापुर के कारखानो में गलाने के लिए भेज देते है। यहाँ गलाने के लिए टिन थाईलैंड, ब्रह्मा, इण्डोनेशिया और इण्डोचीन से भी आता है। मलाया के मुख्य उत्पादक पराक, सेलेंनगोर, नेगरी सम्बीलन राज्यो में हैं। थोड़ा-सा टिन जोहोर, केलानटन, पेरेलिस, ट्रेंगनू, जोपंग और जैसीपोट में भी मिलता है।

इंडोनेशिया मे अधिकतर बाका, बिलीटन, और सिंगकेप द्वीप मे मिलता है। यहाँ का टिन गलाने के लिये स० रा० अमेरिका (टैक्साज सिटी) और नीदरलैंड (आर्नेहम) को भेजा जाता है।

थाईलैंड मे टिन निकालने का कार्य चीनी, ब्रिटिश और आस्ट्रेलियन फर्मों के अधीन है। यहाँ मावची और तवॉय जिलो मे टिन निकाला जाता है।

(३) शोरा या नेत्रजन (Nitrate or Nitrogen)

नेत्रजन भी खनिज खादों में मुख्य माना जाता है। यह मुख्यत. तीन प्रकार के स्रोतो से प्राप्त होता है—७५% हवा से, २०% कोयले से और ५% प्राकृतिक चट्टानों से

(१) **हवा से प्राप्त किया हुआ कृत्रिम नेत्रजन** (Atmospheric Nitrogen or Synthetic Nitrogen)—प्रथम युद्ध के समय जब जर्मनी को चिली से प्राकृतिक शोरा मिलना बन्द हो गया तो जर्मनी के वैज्ञानिको ने हवा से नेत्रजन प्राप्त करने का प्रयास किया। हवा नेत्रजन का सबसे बडा अक्षय भण्डार माना जाता है। अनुमान लगाया गया है कि प्रति घनफुट हवा के भार का ७५% असली नेत्रजन गैस होता है जिसमे से २२० लाख टन भूमि के धरातल पर प्रति वर्ग मील मे पाई जाती है।[4]

हवा मे नेत्रजन प्राप्त करने के लिए तीन मुख्य विधियाँ काम में लाई जाती हैं—(क) सन् १६०० मे नार्वे मे **महराब-विधि** (Arc method) का विकास किया गया। इस विधि के अन्तर्गत एक बड़े विद्युत महराब में होकर गर्म हवा को निकाला जाता है। इससे आक्सीजन और नेत्रजन मिलकर आक्साइड बनाती हैं जो पुनः पानी में घुलकर शोरे के तेजाब (Nitric Acid) बन जाती है। किन्तु इस विधि मे सस्ती विद्युत-शक्ति की आवश्यकता बहुत पड़ती है अत इसका प्रयोग बन्द हो गया है।

(ख) सन् १६०० मे जर्मनी मे **साइनामाइड विधि** (Cynamide Process) का विकास किया गया। इसके अन्तर्गत बिजली भट्टी मे कैलशियम कार्बाइड (Calcium Carbide) बनाने के लिए कोक और चूने का उपयोग किया जाता है। इसको नेत्रजन गैस के साथ २१२° फा० के तापक्रम पर गर्म किया जाता जिससे कैलशियम साइनामाइड बन जाता है। इसे जल और भाप के साथ मिला कर अमोनिया प्राप्त किया जाता है। इस विधि का प्रयोग भी अब कम होता जा रहा है।

(ग) **हैबर-बॉस विधि** (Haber-Bosch Process) का आधुनिक समय मे अधिक महत्व है। इस विधि को सबसे पहले १६१३ मे जर्मनी में काम मे लिया गया। इसकी सफलता का मुख्य कारण कैटेलिस्ट्स (Catalysts) के बारे मे रासायनिक ज्ञान प्राप्त होना था। इस विधि मे जल गैस से शुद्ध हाइड्रोजन और प्रोड्यूसर गैस से शुद्ध नेत्रजन प्राप्त कर दोनों को १०२२° फा० की आँच पर गर्म किया जाता है। इसमें थोड़ी मात्रा मे लोहे के आक्साइड भी मिले रहते हैं। इस प्रकार गर्म करने से हवा से नेत्रजन प्राप्त हो जाता है। इस विधि से विद्युत शक्ति की भी अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती।

(२) **नेत्रजन का दूसरा स्त्रोत अमोनियम सल्फेट** (Ammonium Sulphate) है जो कोयले को जला कर प्राकृतिक गैस से प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार का नेत्रजन विश्व के प्रायः सभी औद्योगिक देशो मे कोयले से उप प्राप्ति के रूप मे

4. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 472.

अध्याय २३

खनिज खाद और इमारती पत्थर

(MINERAL FERTILIZERS AND BUILDING MATERIALS)

खनिज खादें

मिट्टी की उर्वराशक्ति मुख्यतः उसमें पाये जाने वाली विभिन्न रसायनों—फास्फोरस, पोटास, नेत्रजन, कैल्शियम, गंधक, मैग्नेशियम आदि—की मात्रा पर निर्भर करती है। फास्फोरस, पोटाश, नेत्रजन, गंधक आदि रसायन व्यवसायिक या खनिज खाद कहे जाते हैं। आधुनिक काल में इन खनिज खादों का उपयोग और महत्व दो कारणों से बहुत बढ़ गया है :—

विश्व के अधिकांश भागों में निरन्तर खेती करते रहने से उसकी उर्वरा शक्ति का ह्रास हो गया है। इसकी पूर्ति खेतों में विभिन्न प्रकार से रासायनिक खाद देकर की जाती है।

२—उ० प० यूरोप, पूर्वी अमरीका आदि देशों में भूमि पर जनसंख्या का भार बढ़ता जा रहा है इसके लिए अधिकाधिक मात्रा में खाद्यान्नों की आवश्यकता पड़ती है। भूमि के प्रति एकड़ भाग से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए गहरी खेती की प्रणाली अपनाई जाती है। इसमें रासायनिक खादों द्वारा ही अधिक उपज संभव होती है।

इन खनिज खादों की मुख्य विशेषता यह है कि ये उन प्रदेशों में पाई जाती हैं जो इनके उपभोग करने वाले प्रदेशों से बहुत दूर हैं। नीचे की तालिका में रासायनिक खादों का उपयोग बताया गया है :—

खादों का उद्योग (००० मैट्रिक टनों में)

देश	नेत्रजन १९५०-५१	नेत्रजन १९५८-५९	फास्फोरिक एसिड १९५०-५१	फास्फोरिक एसिड १९५८-५९	पोटाश १९५०-५१	पोटाश १९५८-५९
सं० रा० अम०	११६६	२३४६	२०२८	२२३०	१३११	१८९२
फ्रांस	२६२	४८१	४१२	७६३	३९०	७०५
जापान	४४२	६८४	२३८	३५९	९३	४३६
ब्रिटेन	२१९	३४४	३८०	३००	२३०	३७६
भारत	४७	२५७	१४	३९	६	१३
इटली	१५७	३०३	१९	२६४	३८६	८१

(Native Sulphur), (२) पायराइट (Pyrite) नामक खनिज से, और (३) जस्ते और ताबे के मिश्रण से सल्फर-डाइ-आक्साइड (Sulphur Dioxide) से। इनमे से प्रथम दो स्रोत ही मुख्य है।

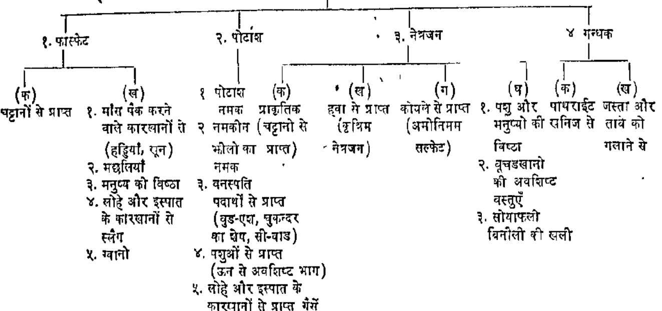
विश्व के गन्धक के उत्पादन का ५०% 'पायराइट' खनिज से प्राप्त किया जाता है। यह खनिज जापान स्पेन, रूस, इटली, सयुक्त राज्य अमेरिका और नार्वे मे मिलती है। सयुक्त राज्य मे इसका ३/४ उत्पादन टैक्साज की खानों से होता है जहाँ गन्धक की खनिज २५ से ३०० फीट मोटी तहो मे पाई जाती हैं। इसमे गन्धक का प्रतिशत २६ तक होता है। इस खनिज से गन्धक की प्राप्ति फ्रेस विधि (Frasch process) द्वारा की जाती है। इस विधि के अन्तर्गत जल को ३००° फा० तक खूब गर्म किया जाता है और इसे पम्पो द्वारा गन्धक की शिलाओ तक पहुँचाया जाता है। एक दूसरे नल द्वारा संकुचित वायु (Compressed air) भी इन शिलाओ तक पहुँचाई जाती है इससे द्रवित गन्धक एक तीसरे नल द्वारा धरातल के ऊपर तक लाई जाती है। यहाँ यह सूखकर रवो के रूप मे हो जाती है। इस विधि के कारण ही सयुक्त राज्य अमेरिका गन्धक का सबसे बडा उत्पादक बन गया है।

इसके अतिरिक्त ज्वालामुखी पर्वतो के विस्फोट होने से निकाला हुआ लावा और अन्य पिघले हुए पदार्थ चट्टानो के रूप मे जम जाते है। इनसे भी गन्धक प्राप्त होती है। इस प्रकार की चट्टाने जापान, आइसलैंड और इटली के विसूवियस पर्वत के निकटवर्ती भागो तथा सिसली द्वीप मे पाई जाती है। सिसली मे ये चट्टानें १ से ५ मील की लम्बाई मे २०० फीट मोटी पाई जाती है। इनमे गधक का अंश २६% तक होता है।

विश्व मे गन्धक का उत्पादन (००० टोन्स मे)

देश	१९५६	१९५७	१९५८	१९५९
अर्जेन्टाइना	२७	२९	३०	—
चिली	३८	१८	२४	—
इटली	१७३	१७५	१६२	—
जापान	२४७	२५८	१८०	१२२
मैक्सिको	७७०	१०२४	१२५७	१४३
स० रा० अमरीका	६५८८	५६६८	४७२०	१४०१
विश्व का अनुमानित योग	८१००	७४००	६६००	४६३३

गन्धक का उपयोग खाद के रूप तो मे होता ही है किन्तु इसका उपयोग कागज, रबड, सूती वस्त्र बनाने, तेल साफ करने, रोगन बनाने, रेयान, सैलोफेन (Cellophane), लोहा और इस्पात, विस्फोटक बारूद तथा रग बनाने मे भी होता है। सल्फर-डाइ-आक्साइड का उपयोग लकडी से लुब्दी बनाने और कार्बन डाई सल्फाइड का उपयोग लकडी से विस्कोस (Viscose) रेशम बनाने मे भी होता है। गन्धक से कई प्रकार की कीटाणुनाशक दवाईयाँ भी बनाई जाती है। गन्धक का


खनिज खाद
(Mineral Fertilizers)
१. फास्फेट
२. पोटाश
३. नेत्रजन
४ गन्धक
(क)
चट्टानों से प्राप्त
(ख)
१. माँस पैक करने वाले कारखानों से (हड्डियाँ, खून)
२. मछलियाँ
३. मनुष्य की विष्ठा
४. लोहे और इस्पात के कारखानों से स्लैग
५. ग्वानो
१ पोटाश नमक
२ नमकीन भीलो का नमक
३. वनस्पति पदार्थों से प्राप्त (वुड-एश, चुकन्दर का शेष, सी-वाड)
४. पशुओं से प्राप्त (ऊन से अवशिष्ट भाग)
५. लोहे और इस्पात के कारखानों से प्राप्त गैसें
(क)
प्राकृतिक (चट्टानों से प्राप्त)
(ख)
हवा से प्राप्त (कृत्रिम नेत्रजन)
(ग)
कोयले से प्राप्त (अमोनियम सल्फेट)
(घ)
१. पशु और मनुष्यों की विष्ठा
२. बूचड़खानों की अवशिष्ट वस्तुएँ
३. सोयाफली बिनौली की खली
(क)
पायराईट खनिज से
(ख)
जस्ता और तांबे को गलाने से

इमारती पत्थर (Building Stones)

साधारण लोगो का यह विचार है कि प्राय. सब पत्थरों से अच्छी मजबूत इमारतें बन सकती है जो शताब्दियों तक खडी रह सकें किन्तु यह केवल भ्रम है। कई पत्थर तो लकडी से भी कम टिकाऊ होते हैं। इमारतें बनाने के लिए सबसे उत्तम पत्थर ग्रेनाइट (granite) अथवा अन्य आग्नेय शिलाएँ है। इन शिलाओं पर जल का प्रभाव बहुत धीरे-धीरे पडता है और इनमे जल प्रविष्ट भी बहुत कम होता है क्योंकि इनकी रध्र विशिष्टता (Porosity) बहुत कम है। परन्तु यह शिलाएँ प्राय. पर्तहीन होती है और बहुत कडी होती है जिनको काटने-छाटने मे बडी मेहनत पडती हैं। जलज चूने के पत्थर और सगमरमर हल्के, सुन्दर और बहुत नरम होने के कारण अधिक प्रयोग मे आते है किन्तु अन्य पत्थरो की तुलना मे ये पत्थर कम टिकाऊ होते हे। इमारती पत्थरो मे सबसे अधिक प्रचलित बालू का पत्थर (Sandstone) है। यह पत्थर न तो ग्रेनाइट जैसा अधिक कड़ा और न चूने के पत्थर जैसा अति नरम और शीघ्र क्षय होने वाला ही होता है। इसके अतिरिक्त बालू का पत्थर तहदार भी होता है इसलिए इसकी पतली-पतली पट्टियाँ आसानी से बनाई जा सकती है। सबमे उत्तम बलुआ पत्थर वह गिना जाता है जिसमे बालू या रेत के अतिरिक्त अन्य पदार्थ बहुत कम हो। इनके अतिरिक्त इमारतो की छतो के पाटने मे खपरैल की जगह स्लेट भी काम मे आती है। जलज मिट्टी की पतली तहदार शिलाएँ पृथ्वीतल के नीचे पहुँच कर दबाव द्वारा परिवर्तित होकर स्लेट बन जाती है।

स्लेट का उत्पादन सयुक्त राज्य अमरीका मे तथा **ग्रेनाइट** का उत्पादन जार्जिया, मैसेचूसेट्स और वरमाउन्ट मे, **संगमरमर** का उत्पादन भारत के अतिरिक्त सयुक्त राज्य अमरीका मे भील-प्रदेश, ऐपेलेशियन क्षेत्र, जार्जिया, टेंकसी, कालोराडो की खानो मे और इटली मे करारा की खानो से होता है। **चूने के पत्थर** के क्षेत्र सयुक्त राज्य अमरीका के न्यूयार्क, पैन्सिलवेनिया से लगाकर मिस्सौरी, ओहियो और मिशीगन तक फैले है।

साधारण कांच बनाने के लिए उत्तम और आदर्श बालू वह माना गया है जिसमे १०० प्रतिशत सिलीका हो और जिसके सब कण बराबर तथा कोणदार आकार के हों। बालू में सिलीका के अतिरिक्त अन्य कोई पदार्थ जितना ही कम होता है उतना ही बालू अधिक सफेद होता है और वह कॉच के लिए उपयोगी होता है। बालू के सफेद जलज पत्थरो तथा स्फटिक शिलाओ को भी पीस कर कॉच के उपयुक्त बालू बनाया जाता है किन्तु इसमे मेहनत और व्यय अधिक पडता है।

२,००० फीट की गहराई पर जाती हैं। ये चट्टानें ६ से १२० फीट मोटी हैं। खानों से पोटाश गहरी खुदाई (Shaft tunnel) करके निकाला जाता है। यहाँ पोटाश निकालने में कई सुविधायें प्राप्त हैं, तथा (१) विद्युत शक्ति सस्ती प्राप्त हो जाती है, (२) सड़कों और रेलों द्वारा यातायात सस्ता है, (३) निकटवर्ती क्षेत्रों में जर्मनी के औद्योगिक क्षेत्र स्थापित हैं, (४) खाद के रूप में काम आने के लिए बाजार निकट ही है तथा उत्तरी सागर द्वारा इसका निर्यात सुविधापूर्वक किया जा सकता है।[3]

फ्रान्स के एल्सेस जिले में भी पोटाश दो क्षेत्रों में मिलता है। प्रथम क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी भाग में १,६०० फीट की गहराई से लगाकर उत्तरी-पूर्वी भाग में २,८०० फीट तक फैला है, इसकी मोटाई १२ फीट है। दूसरा क्षेत्र उपरोक्त क्षेत्र से ५० से ८० फीट ऊपर है। यहाँ चट्टान में पोटाश का अंश २२ %है। फ्रान्स से विश्व का १,४ पोटाश निकाला जाता है।

स्पेन में पोटाश नमक की खानें उत्तरी-पूर्वी भाग में कारडोना के निकट हैं। ये ७०० से ३,००० फीट गहरी हैं। यहाँ से विश्व का ५% पोटाश प्राप्त किया जाता है।

रूस में पोटाश नमक कई स्थानों पर मिलता है किन्तु यहाँ के सबसे बड़े भण्डार सोलीकमास्क में है जहाँ नमक की चाट्टानें २५० से १,००० फीट की गहराई तक मिलती हैं। इनकी मोटाई क्रमशः ६५ फीट और २०० फीट तथा पोटाश का अंश २०% है। रूस में भी विश्व को ५% पोटाश की खानें पाई जाती हैं। यहाँ चट्टानें ५०० से ६५० फीट गहरी हैं। यहाँ भी बड़े जमाव उपस्थित होने का अनुमान है।

संयुक्त राज्य में पोटाश नमक पश्चिमी रियासतों में—न्यूमैक्सिको, कैलीफोर्निया और यूटाहा में—पाया जाता है। इनमें न्यूमैक्सिको की कर्लबाद के पूर्ववर्ती ४०,००० वर्गमील क्षेत्र पोटाश के उत्पादन के लिए मुख्य हैं। सं० राज्य अमेरिका विश्व के उत्पादन का १/४ भाग देता है।

चट्टानों के अतिरिक्त पोटाश प्राप्त करने के अन्य स्रोत भी हैं। जार्डन में मृतक सागर तथा द० कैलीफोर्निया में सीअरलैस (Serles) झील के नमकीन पानी से पोटासियम प्राप्त किया जता है।

इसके अतिरिक्त लकड़ी की राख (Wood-ashes), शेल (Shales), ग्रीनसैंड (Greensand), फैलसपार (Felspar) आदि में भी पोटाश प्राप्त किया जाता है।

पोटाश न केवल खेती के काम में ही आता है बल्कि वर्तमान युग में इसका अधिकाधिक उपयोग साबुन, विस्फोटक पदार्थ, दवाइयाँ, काँच, दियासलाई, कागज बनाने, चमड़ा रंगने, ब्लीचिंग करने और उसे कमाने, धातुशोधन, फोटोग्राफी और इलैक्ट्रोप्लेटिंग आदि करने में भी होता है किन्तु कुल उत्पादन का लगभग ६/१० भाग हल्की रेतीली भूमि में खाद देने में किया जाता है और इसके सहारे कपास, आलू तथा तम्बाकू और अन्य जड़ों वाली फसलें पैदा की जाती हैं।

3. *Jones and Darkenwald*, **Economic Geography**, 1954. p 344.

लेकिन इनमें से सबसे महत्वपूर्ण जल-शक्ति, कोयला तथा पेट्रोलियम ही हैं जिनका वर्तमान युग मे मानव पर अधिक आधिपत्य है। प्राचीन समय मे विश्व की ... शक्ति कोयले मे प्राप्त होती थी लेकिन वर्तमान युग मे तेल तथा विद्युत का प्रयोग अधिक होने लगा है। सन् १९०० मे स० राज्य अमेरिका में कुल शक्ति का ८३% कोयले और जल-शक्ति मे प्राप्त होता था। सन् १९२५ में यह प्रतिशत ६९.३% था। १९३९ मे केवल ५१.४% ही रह गया। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि १८५० मे खनिज ईंधनो मे १ अरब अश्व शक्ति प्राप्त की जाती थी, १९०९ मे यह मात्रा ३० अरब से भी अधिक हो गई किन्तु फिर भी मनुष्य और पशुओं का श्रम अधिक मात्रा मे लिया जाता था। १९१० मे आधी शक्ति इन खनिज ईंधनो से प्राप्त हुई।[1]

यहां यह कहना अतिशयोक्ति नही होगी कि इन सभी स्रोतों मे सबसे महत्वपूर्ण स्थान कोयले को ही प्राप्त है। इसी के द्वारा ५०% शक्ति प्राप्त होती है।[2] सभी प्रकार के कोयलो मे प्राप्त शक्ति तेल से प्राप्त की गई शक्ति से दुगनी, प्राकृतिक शक्ति से ५ गुनी और जल विद्युत शक्ति से ८ गुनी है। लकडी या पीट से प्राप्त की गई शक्ति से यह सम्भवतः ७ गुनी अधिक है। एक वर्ष की अवधि मे कोयले से प्राप्त की गई शक्ति मानव और पशु शक्ति से ६ गुनी अधिक होती है।[3] नीचे की तालिका मे विभिन्न शक्ति के स्रोतो का सापेक्षिक महत्व बताया गया है[4]—

विश्व में शक्ति के विभिन्न स्रोतों का महत्व (१९१३-५९)

(कोयले के बराबर १० लाख टनो मे)

वर्ष	कोयला व लिग्नाइट	मिट्टी का तेल	प्राकृतिक गैस	जल विद्युत शक्ति	योग
१९१३	१२५९	७०	२०	८६	१४३९
१९२९	१४१२	२७६	७६	१००	१८६४
१९३७	१४०४	३८१	१०४	१२४	१०१३
१९५२	१६८८	८३१	३२०	२७७	१०७५
१९१३	८७.५	४.९	१.७	५.९	१००
१९२९	७५.७	१४.८	४.१	५.४	१००
१९३४	६५.०	२५.९	—	१०.०	१००
१९३७	६९.७	१८.९	५.२	६.२	१००
१९५२	५४.९	२७.०	१०.४	७.७	१००
१९५९	४२.०	४८.०		१०.०	१००

1. **Needs and Resources, 20th Century Fund's Survey,** pp. 680-681.

2. *U. S. Deptt. of State*, **Energy Resources of the World,** 1949, p. 28; *E. W. Zimmermann*, **World Resources and Industries,** 1951 p. 454.

3. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 286.

4. **Ibid**, p. 287.

निकाला जाता है। विश्व के सम्पूर्ण उत्पादन का लगभग ८०% सं० राज्य अमेरिका, रूस, प० जर्मनी और ब्रिटेन से प्राप्त होता है।

(३) नेत्रजन प्राकृतिक सोडियम नाइट्रेट (Sodium Nitrate) से भी प्राप्त किया जाता है जिसकी कच्ची धातु को 'Caliche' कहते है। प्राकृतिक शोरा मुख्यत. चिली, भारत, मिश्र, स्पेन और कैलीफोर्निया से प्राप्त होता है किन्तु इनमे सबसे अधिक महत्वपूर्ण चिली के मरुस्थल हैं। यहाँ शोरे की शिलायें (Beds) चिली के मरुस्थल मे ४० मील की लम्बाई मे समुद्र के धरातल से ४ से ७,००० फीट की ऊँचाई पर १९° से २६° द० अक्षाशो के बीच मे एण्डीज पर्वत के पूर्वी भाग मे अस्तव्यस्त रूप मे पाई जाती है। कुछ शिलायें तो समुद्र तट से १५ मील के भीतर है जबकि कुछ ९० मील दूर भी हैं। इस शिला मे Caliche की तहें कुछ इचो से लेकर १० फीट तक मोटी पाई जाती है। इनमे से कुछ धरातल के निकट ही और कुछ २५ फीट की गहराई तक मिलती है। इनमे शोरे का प्रतिशत ३०% तक होता है। इन शिलाओ को बिजली की मशीनो (Electric Shovels) द्वारा काट कर उसे शोरा साफ करने वाले कारखानों (Oficina) तक ले जाया जाता है। वहाँ इसे बडी-बडी मशीनो द्वारा पीसा जाता है फिर इस चूरे को पानी की बडी-बडी परातों मे धोया जाता है और फिर इस घोल को ठण्डी करने वाली परातो मे उँडेल दिया जाता है। यहा शोरा और जल अलग-अलग हो जाते है। इस शोरे को सीमेंट की फर्शो पर धूप मे सूखने के लिए रख दिया जाता है। सूखने पर २०० पौन्ड के थैलो मे भर कर इकीक, एन्टाफोगेस्टा आदि बन्दरगाहो को निर्यात के लिए भेज दिया जाता है। इन कारखानो की शोरा साफ करने की दैनिक क्षमता १६,००० टन की है। चिली मे शोरा प्राप्त करने मे सबसे बडी कठिनाई यह है कि ये प्रदेश समुद्र तल से काफी ऊँचे पाये जाते हैं अतः यातायात की असुविधा रहती है। इसके अतिरिक्त कारखानो मे काम करने वाले मजदूरों के लिए जल १०० मील से भी अधिक दूरी पर लाया जाता है।

चिली से शोरे का निर्यात सबसे अधिक किया जाता है। सन् १८८० मे १९०० के बीच यह मात्रा २५ लाख टन से बढकर १५ लाख टन हो गई। १९१६-१८ मे ३० लाख टन और १९२९ मे इससे भी अधिक। किन्तु ज्यो-ज्यो कृत्रिम नाइट्रोजन प्राप्त करने की विधि का विकास होता गया त्यों-त्यो उसमे प्रतिस्पर्धा होने से चिली के निर्यात को कुछ धक्का पहुँचा। अत: १९३२ मे यह मात्रा २५ लाख टन ही रह गई। द्वितीय महायुद्ध के बाद अब वार्षिक निर्यात लगभग २० लाख टन का होता है।

शोरे का उपयोग न केवल खाद के रूप मे ही होता है बल्कि मनुष्यों के भोजन मे भी इसका स्थान है। यह आश्चर्यजनक बात प्रतीत होती है कि शोरे की तेजाब के रूप मे ही इसका उपयोग उस विस्फोटक पदार्थ के बनाने मे होता है जो मानव के विनाश का सबसे बडा अस्त्र है। शान्तिकाल मे इसका ८५% से भी अधिक उपयोग खाद के रूप मे और शेष जल साफ करने और उसको ठढा करने तथा गन्धक, शोरा और अन्य प्रकार के तेजाब बनाने, रबड, प्लास्टिक, नायलन (Nylon), रेयन आदि बनाने मे भी होता है।

(४) गन्धक (Sulphur)

गन्धक तीन स्रोतों से प्राप्त होती है :—(१) प्राकृतिक रूप में देशी गन्धक

पवन चक्कियों का विकास आधुनिक काल मे मुख्यतः समशीतोष्ण कटिबन्ध में हुआ है क्योकि इन प्रदेशों मे वर्ष भर पछुआ हवाएँ चलती रहती हैं। पूर्वी ईरान, डेनमार्क, हॉलैंड, स० रा० अमेरिका (आयोवा और विस्कासिन की रियासतों में) पानी खीचने, चारा काटने और खेतो मे कार्य सम्पन्न करने के लिये अब भी पवन चक्कियाँ अधिक पाई जाती है। ब्रिटेन मे भी वायु से शक्ति प्राप्त करने के कुछ प्रयोग किये गये हैं। उनसे पता लगता है कि यदि वायुशक्ति और विद्युत शक्ति का सम्बन्ध कर दिया जाये तो स्कॉटलैंड की शक्ति की समस्या पूर्ण रूप से हल हो सकती है।

कोयले और तेल के क्षयशील होने के कारण कई देशों मे–विशेषत. ग्रेट ब्रिटेन, डेनमार्क, फ्रास, जर्मनी और स० रा० अमेरिका—अब वायु शक्ति के उपयोग सम्बन्धी कई खोजे हो रही हैं। इससे बिजली पैदा की जाने लगी है। संयुक्त राज्य अमरीका मे इस बिजली का उत्पादन २००० लाख किलोवाट घंटे माना गया है। इसका उपयोग पखे, रेडियो और कृषि यत्रों को चलाने मे किया जाता है।

भारत मे मलावार तट और राजस्थान के शुष्क प्रदेशो में प्राचीन काल से ही पवन-चक्कियों का प्रयोग होता रहा है क्योकि इन भागो मे साल भर ही हवा तीव्र गति से चला करती है।

(४) जल शक्ति (Water Powe)—मानव ने जल शक्ति का प्रयोग भी बहुत प्राचीन काल से ही करना सीख लिया था। शक्ति के लिए ऐसे जल का प्रयोग करते है जो विभिन्न नहरो तथा नदियों व हवा के धक्के से आता है। "एक अनुमान के अनुसार भूतल पर वार्षिक वर्षा का औसत ३६ इन्च है तथा इसकी औसत ऊचाई २४०० फीट। अत प्रत्येक वर्गमील भूमि को लगभग ८ करोड घन फीट जल की प्राप्ति होती है। यदि इस जल राशि का क्षय न हो और उसे पूर्ण रूप से उपयोग मे लाया जाय तो लगभग ३,६०,००० अरब अश्वशक्ति प्राप्त हो सकती है किंतु व्यावहारिक रूप मे इस सपूर्ण जल की मात्रा का उपयोग संभव नही होता क्योकि वर्षा जल का कुछ अश भाप बन कर उड जाता है और कुछ भूमि सोख लेती है तथा कुछ अश नदियो आदि मे बह कर समुद्रो मे चला जाता है। फलस्वरूप बहुत ही थोड़ी जल-मात्रा शक्ति बनाने मे उपयुक्त होती है।' अठारहवी शताब्दी के पूर्व भी इस शक्ति की उपलब्धता के कारण ही पिनाइन पर्वतो की घाटियो मे ऊनी कपड़े के उद्योग की प्रगति सम्भव हो सकी। स्कॉटलैण्ड मे ट्विड नदी की घाटी मे सूती कपडे के व्यवसाय का विकास भी इस शक्ति के कारण हुआ। स० रा० अमेरिका मे मिसीसिपी नदी पर स्थित मिनीयापोलिस नगर मे आटा पीसने के कारखानो मे अब भी जल-शक्ति का प्रयोग होता है। कनाडा, जापान, नार्वे स्विटजरलैण्ड, इटली, फिनलैण्ड आदि देशों मे लकडी चीरने की मशीनें तथा कागज बनाने मे इसी शक्ति का उपयोग होता है। १६ वीं शताब्दी के आरम्भ मे जल-प्रेरित टरबाइन (जल चक्की) और डायनमो के आविष्कार ने जल शक्ति के विकास को अधिक प्रोत्साहन दिया। पिछले ५० वर्षों मे इन आविष्कारो के फलस्वरूप जल-विद्युत ने मानव सभ्यता मे एक नवीन क्रान्ति ला दी है। जल शक्ति की मुख्य विशेषता यह है कि यह तारो द्वारा उत्पादित क्षेत्रो से दूर तक पहुँचाई जा सकती है।

(५) लकड़ी—प्रस्तर युग से ही लकडी का उपयोग मानव द्वारा शक्ति के रूप मे किया जा रहा है। आरम्भ मे धातु आदि गलाने का कार्य भी लकडी जलाकर

तेजाब सबसे अधिक संयुक्त राज्य अमेरिका में बनाया जाता है। यहाँ विश्व का ४५% तेजाब बनता है। शेष इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी और रूस से प्राप्त होता है। कच्चे लोहे के उपभोग की तरह गन्धक के तेजाब के उपभोग की मात्रा के अनुसार यह जाना जा सकता है कि किसी देश की आर्थिक अवस्था क्या है।

(५) नमक (Sodium Chloride)

नमक सोडियम क्लोराइड और क्लोरीन गैस का मिश्रण होता है। इसका मुख्य उत्पत्ति-स्थान समुद्र अथवा खारी झीलों का नमकीन जल होता है। यह चट्टानों में भी प्राप्त होता है किन्तु नमक का प्रमुख स्रोत समुद्र-जल ही है। विश्व में नमक उत्पन्न करने वाले मुख्य देश सं० राज्य अमेरिका, फ्रांस, ब्रिटेन, जर्मनी, अरब, भारत, स्पेन और इटली है। नीचे की तालिका में इन देशों का उत्पादन बताया गया है :—

नमक का उत्पादन (००० टोन्स में)

देश	१९५५	१९५७	१९५९
ब्राजील	५८१	७९८	८००
कनाडा	११३८	१६०८	२१४२
चीन	६२००	८०००	१०४००
फ्रांस	३३०४	३३७७	३५१९
पू० जर्मनी	१५२०	१७५५	१७५५
प० जर्मनी	३३८४	३५८८	३५६३
भारत	२९३३	३६७०	४२३३
इटली	१८६२	१४८९	१३७०
जापान	५६२	८३३	१०५८
पोलैंड	१२३६	१३०१	१३००
रूमानिया	५६६	८४९	८५०
स्पेन	१२१७	१३५३	२८२९
रूस	६५००	६५००	६५००
इंग्लैंड	४७८४	५०६८	५०१४
सं० रा० अमरीका	२०५९७	२१६४०	१९८७७
विश्व का अनुमानित उत्पादन	६४६००	७०२००	७४२००

नमक का वार्षिक उत्पादन ४०० से ६०० लाख टन का होता है। इसमें २/५ भाग औद्योगिक उपयोगों में व्यवहृत हो जाता है। नमक का मुख्य उपयोग खाद, रासायनिक पदार्थ, मछलियाँ सुखाने, मांस जमाने, चमड़ा रंगने तथा काँच, सोडा, ब्लीचिंग पाउडर आदि बनाने में होता है।

भारत में नमक मुख्यतः तीन स्रोतों से प्राप्त किया जाता है—(१) समुद्री जल से (२) खारी झीलों और कुओं के पानी से (३) चट्टानों से। भारतीय नमक की वार्षिक उपज का २/३ भाग समुद्री जल से, १/८ वाँ भाग नमक की खानों से और १/५ वाँ भाग खारी झीलों तथा कुओं से प्राप्त किया जाता है।

यूरोप	५५,१२९	८७७,८८९	९४·१	३५·४	२,३५६
रूस	२५,६५८	२०७,७१३	८८·२	६·०	१,३८०
अफ्रीका	१६,६९१	३०,६१०	६०·९	१·०	३४४
एशिया	१९८,१५०	१७१,२९९	५०·५	१२·९	३०५
ओशिनीया और आस्ट्रेलिया	२,२३६	२२,३५७	९०·८	०·९	२,४८८
विश्व योग	३२५,८६७	२,३०८,८९४	८७·६	—	१·२५०

१. कोयला (Coal)

कोयला आधुनिक यंत्र-युग की सभ्यता का मूल आधार है क्योंकि यह भाप बनाने, धातुओं को गलाने और ताप शक्ति निर्माण करने के उपयुक्त है।[6] इसकी उपलब्धता के अनुसार किसी देश के आर्थिक विकास को जाना जा सकता है। वर्तमान काल में यांत्रिक शक्ति का यह प्रमुख स्रोत है। सन् १८९९ ई० में संसार में प्रयुक्त कुल शक्ति का ९०% कोयला से प्राप्त हुआ। बीसवीं शताब्दी में जब तेल एवं जल विद्युत शक्ति का उत्तरोत्तर विकास होता गया तो कोयले से प्राप्त शक्ति का प्रतिशत घटता गया। यहाँ तक कि सन् १९६१ ई० में कुल शक्ति का केवल ४२% कोयले प्राप्त हुआ और तेल और प्राकृतिक गैस ने ४८% तथा १०% जल-वद्युत प्रदान किया।

विश्व के सभी उन्नतिशील देशों मे अधिकाधिक कोयले का प्रयोग होता है। जिन देशों मे कोयले के विशाल भण्डार हैं व विश्व के महत्वपूर्ण देश माने जाते हैं। ब्रिटेन, जर्मनी, बेल्जियम, लक्सम्बर्ग और जैकोस्लोवाकिया मे कोयला कुल शक्ति का ९०% प्रदान करता है। रूस, पोलैंड तथा फ्रांस में [illegible] आतरिक शक्ति का लगभग ७०% कोयले से प्राप्त होता है। स० रा० मे जल [illegible], तेल और गैस के अधिकाधिक प्रयोग के कारण कोयला कुल शक्ति का केवल ५०[illegible] प्रदान करता है।[7] भारत मे भी कुल शक्ति का अधिकांश कोयले से ही प्राप्त होता है। अतएव यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि आधुनिक औद्योगिक सभ्यता कोयले पर ही आश्रित है। "आधुनिक संस्कृति जिन साधनों पर टिकी हुई है उनमें कोयले को प्रथम स्थान मिलना चाहिए।"[8] आधुनिक युग मे कोयले का महत्व बहुत अधिक है। कोयले ने प्रमुख औद्योगिक देशो को राजनीतिक सत्ता प्रदान कर दी है। कोयले के अभाव में आधुनिक सभ्यता की कल्पना भी नही की जा सकती। यदि संसार से कोयला सहसा विलीन हो जाय तो मनुष्य के सैकड़ो काम रुक जायें और उसे बड़े संकट का सामना

6. "Coal is the basis of our modern machine civilization, because of its suitability for raising steam, smelting ores and providing heat"—*Smith and Others*, **Op. Cit.**, p. 287, *and Jones and Drakenswald*, **Op. Cit.**, p. 388.

7. *Case and Bergsmark*, **Op. Cit.**, p. 649.

8. *E. C. Jeffery*, **Coal and Civilization**, 1952, p. 2.

अध्याय २४

शक्ति के स्रोत

(SOURCES OF POWER)

शक्ति के विभिन्न स्रोत और उनका सापेक्षिक महत्व

यन्त्रवेत्ताओं के अनुसार शक्ति (Power) शब्द का अर्थ उस शक्ति से है जिस पर मनुष्य का अधिकार है और जो यन्त्र सम्पादित कार्यो के लिए प्राप्य ।

शक्ति के अनेक साधन हैं जिन्हे मनुष्यों ने पूर्ण रूप से प्रयोग किया है। इनमें से मुख्य कोयला, तेल तथा गिरता हुआ जल अर्थात् विद्युत है। इनमें से जल विद्युत सबसे अधिक महत्वपूर्ण है क्योकि इससे सिंचाई के लिए जल भी प्राप्त होता है और विद्युत शक्ति भी। इस तरह यह दो कार्यो मे आती है। सबसे प्राचीन और सामान्य शक्ति का साधन "मनुष्य के शरीर की शक्ति" है। मानव-गण अपनी शक्ति का प्रयोग खाद्यान्न पैदा करने मकान बनाने तथा बोझा ढोने मे करते है तथा इसका प्रयोग वह खिरगीज की तरह ऊनी कम्बल बनाने तथा स्विस निवासियों की तरह खिलौने बनाने मे भी करता है।

वर्तमान इस्पात तथा विद्युत के युग मे शक्ति के समस्त साधनो का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। एक उत्पादक को शक्ति की आवश्यकता अपनी मशीनें चलाने के लिए, अपना कच्चा माल लाने के लिए तथा तैयार माल बाजार मे ले जाने के लिए पडती है। व्यापारी को अपने इलीवेटर को ले जाने के लिए तथा प्रकाश के लिए बिजली की आवश्यकता होती है। किसान शक्ति की खोज मे इसलिए रहता है क्योकि वह अपने खेत मे प्रयोग करना चाहता है जिससे वह अपने औजार आदि तेज कर सके, मक्खन निकाल सके अथवा अपनी उपज की खपत केन्द्र तक पहुँचा सके। साधारण मनुष्य को लीजिए वह अपने घर मे प्रकाश के लिए, अपने पत्र आदि लाने के लिए तथा भेजने के लिए शक्ति का प्रयोग करता है। इस तरह मे बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रत्येक स्थान पर तथा पद-पद पर शक्ति की आवश्यकता पडती है तथा सभ्य देश मे तो प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी रूप मे निश्चित रूप मे अथवा अनिश्चित रूप से अवश्य ही प्रयोग करता है। वर्तमान युग मे मनुष्य शक्ति का गुलाम है और उसका कार्य बिना शक्ति के नही हो सकता। मनुष्य ने शक्ति का विकास अपनी सीमा तक किया है तथा उसके विलक्षण कार्य खेतो, यातायात के साधनो तथा बड़े-बड़े कारखानों मे देखने मे आते है।

शक्ति के निम्न ११ स्रोत हैं जिनमें से प्रथम सात महत्वपूर्ण हैं :—

(१) मानव शक्ति (२) पशु शक्ति (३) वायु शक्ति (४) जल शक्ति (५) लकडी की शक्ति (६) कोयला शक्ति (७) पैट्रोलियम (८) प्राकृतिक गैस (९) एलकोहल (१०) सूर्य शक्ति, और (११) अणु-शक्ति।

पौधों के असली स्वरूप के नष्ट होने में बैक्टेरिया (Bacteria) नामक कीड़े द्वारा बड़ी सहायता मिलती है। यह कीड़ा सभी हरे पौधों में बहुतायात के साथ पाया जाता है। यह पौधों के कार्बन के तत्वों को आक्सीजन, जल-वाष्प एवं हाइड्रोजन से अलग कर देता है। इस प्रकार इस अवशिष्ट वनस्पति की तह पर तह जमा होते होते कभी भूगर्भ में परिवर्तन द्वारा यह प्रदेश नीचे धँस गया और विस्तृत जलाशय बन गया। इसमें अनेक नदियां एवं नाले बारीक मिट्टी लाकर डालते गये और शताब्दियों तक रेत की तहें जमा होती गईं। मरे हुए जल-जीवों की ढाँचे भी इसी पर जमते गये। प्राचीन वन प्रदेश की वनस्पति में धीरे-धीरे पृथ्वी के भीतर की गर्मी और ऊपर के तहों के दबाव से परिवर्तन होता रहा। ज्यों-ज्यों धरातल का दबाव दबी हुई वनस्पति पर बढ़ता गया त्यों-त्यों इसमें से पानी और गैसें अलग होती चली गई और अवशेष पदार्थ में कार्बन का अंश बढ़ता गया। प्राचीन वनस्पति का यह परिवर्तित रूप ही कोयला है। भूगर्भ की किसी महान् हलचल से पुन जलाशय का यह पेटा उठ कर ऊपर आ गया। ऐसे ही भूभागों में कहीं-कहीं पर भूतल के कुछ ही नीचे और बहुधा बहुत गहराई में कोयले की खानें मिलती हैं।

कोयला अधिकतर जलमग्न अथवा परतदार चट्टानों (Sedimentary Rocks) में पाया जाता है। कोयले की तहों के बीच में मिट्टी की तहें भी पाई जाती हैं। ये मिट्टी की तहें अत्यधिक दबाव के कारण पत्थर बन जाती हैं जिन्हें हम कोयले की तहें (Coal measures) कहते हैं। कोयले के साथ मिट्टी की तहों का पाया जाना लाभदायक समझा जाता है क्योंकि इनमें कच्चा लोहा पाया जाता है।

वनस्पति का प्रारम्भिक परिवर्तित रूप पीट (Peat) है, उसके पश्चात् जैसे-जैसे समय बीतता गया यह लिगनाइट (Lignite), उप-बिटूमीनस (Sub-Bituminous), बिटूमीनस (Bituminous), अर्द्ध ऐंथ्रेसाइट (Semi-Anthracite) और ऐंथ्रेसाइट (Anthracite) में परिवर्तित हो गया।

कोयले की तहें कुछ इंच से लेकर कई फीट तक मोटी होती हैं। भारत के झरिया क्षेत्र में १८ तहें ऐसी हैं जिनकी मोटाई १०० फीट तक की है तथा बुकारो और रामगढ़ क्षेत्र में यह तहें ७५ से १२० फीट तक मोटी हैं।

कोयला खान खुदाई की विधियां (Methods of Coal-mining)

(१) खुली खान खुदाई (Open-pit mining)—इसमें कोयलों की तहों के ऊपर से चट्टानों की तह हटा दी जाती है और फिर सतह पर ही फावड़ा या मशीनों द्वारा कोयला खोद कर निकाला जाता है। इस प्रकार की खुदाई कोयले के सतह के पास पाये जाने पर ही हो सकती है। संयुक्त राज्य, जर्मनी और चीन में इस प्रकार की काफी खुदाई होती है।

(२) भूगर्भिक खुदाई (Underground mining)—इसमें हजार या उससे भी ज्यादा फीट की गहराई तक खोल या सुरंगें खोदी जाती हैं और उसमें कोयला निकाला जाता है। इस प्रकार की खान खुदाई में अधिक व्यय होता है।

(३) ड्रिफ्ट खुदाई (Drift mining)—इसमें सुरंगें सतह के समानान्तर खोदी जाती हैं और कोयले की सतहें खुदती चली जाती हैं। स० रा० अमरीका में अपलेशियन पठार पर इसी प्रकार खुदाई की जा सकती है।

(१) मानव शक्ति (Man Power)—उष्ण कटिबन्धीय देशों में मनुष्य शक्ति का प्रमुख साधन है। उदाहरणार्थ वर्तमान युग में भी विश्व के विभिन्न भागों में हजारों कुली काम करते रहे हैं जैसे कि भारत, अफ्रीका तथा उष्ण कटिबन्धीय दक्षिणी अमेरिका में जहाँ पर ये लोग जगल साफ करने तथा दलदली स्थानों को ठीक करने मे लगे हैं जिससे ये स्थान मनुष्य के उपयोग मे काम आ सकें। यूरोपीय देशों में मानव शक्ति का उपयोग प्रत्येक स्थान पर होता था लेकिन अब इसके स्थान पर मोटर गाड़िया, शक्ति बोट (Power Boats) तथा विद्युत मोटर गाड़ियाँ (Electric trucks) प्रयोग की जाती हैं। भारत चीन, जापान आदि मे भी बहुत सा काम मानवीय शक्ति द्वारा ही किया जाता है।

(२) पशु शक्ति (Animal Power)—जब मनुष्य को यह आभास हो जाता है कि उसकी शक्ति पर्याप्त नही है और फिर भी वह अपनी सब कामनाओं को फलता-फूलता देखना चाहता है तो वह अपनी समस्त युक्तियों का प्रयोग करता है। वह अपने विभिन्न विभागो के विकास के लिए पशु शक्ति का उपयोग करता है। इसलिए मनुष्य ने गधो, घोडो, भैसो, ऊँटो और रेनडियरों को पालतू बनाया। उसने इनमें किसी एक शक्ति का प्रयोग किया। इनकी शक्ति उसकी शक्ति से भिन्न थी और उनका प्रयोग उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो में सबसे कम तथा उन्नतिशील देशों मे सबसे अधिक किया गया। जापान तथा पूर्वी चीन के निवासियो ने पशु शक्ति के साधन का विशेष रूप मे खेतों में बहुत प्रयोग किया है। पशु शक्ति ने खेती में एक असाधारण क्रांति पैदा करदी है। जिन देशो में रेलें या सडकें नही या पर्वतीय प्रदेशों मे जहाँ भूमि के असमान होने के कारण अथवा मरुस्थलीय प्रदेशो मे जहाँ प्रचंड आँधियो और बालू मिट्टी की अधिकता के कारण रेलें और सडकें नहीं बनाई जा सकती वहाँ पशुओं को भारवाहक के रूप में प्रयोग किया जाता है। अस्तु रॉकी और एडीज पर्वतो पर अल्पाका और लामा, तिब्बत मे याक, टुंड्रा मे रेंडियर और कैरिबो, कुत्ते तथा मरुस्थलो मे ऊँट और पर्वतीय प्रदेशो मे खच्चरो का प्रयोग भार ढोने के लिए अधिक होता है। इंगलैंड, फ्रास और जर्मनी तथा स्पेन की खेती के लिए घोडे और खच्चर काम मे लाये जाते हैं। भारत मे गाडियाँ चलाने, हल जोतने तथा कुओ से पानी निकालने मे बैलों और भैसो का ही प्रयोग होता हैं। चीन तथा जापान मे खेती में भैसो का महत्व अधिक है।

(३) वायु-शक्ति (Wind Power)—यह मनुष्य को प्रकृति की देन है। इस शक्ति के प्रयोग के लिये मनुष्य मे यंत्र निर्माण योग्यता और आविष्कारात्मक बुद्धि का होना आवश्यक था। वायु शक्ति ने उद्योग और यातायात दोनो को प्रभावित किया। पहले नावें और जहाज चलाने मे इसका उपयोग किया गया। किन्तु यह शक्ति अनिश्चित है क्योंकि आवश्यकता के समय हवा का चलना बन्द हो सकता है अत. वर्तमान काल में इसके सस्ते होने पर भी इसका प्रयोग कम होता जा रहा है। सन् १८०० ई० मे ससार के समस्त जहाज वायु मे चलते थे क्योकि उस समय कोयले एवं तेल से चलने वाले जहाजों का आविर्भाव हुआ था किन्तु सन् १९२२ के बाद वायु-चालित जहाजों का लोप हो गया।

वायु मे चलने वाले जहाजों के प्रचार के बहुत काल बाद पवन चक्कियों (Wind mills) का प्रादुर्भाव हुआ। इसका प्रयोग नदियों और कुओं से पानी खीचने वाली मशीनों और अनाज पीसने वाली चक्कियों को चलाने में होता था।

गहराई अधिक होने के कारण अधिक दबाव एवं तापक्रमों के प्रभावों से गैसें अधिकतर नष्ट हो जाती हैं और कार्बन की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है।

विश्व के कुल एन्थ्रेसाइट कोयले के उत्पादन का लगभग आधा रूस से और १/४ से अधिक सं० रा० अमेरिका तथा शेष बेल्जियम, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी और इण्डोचीन से प्राप्त होता है।

(२) बिटूमिनस (Bituminous Coal)—यह कोयला भी काफी शुद्ध होता है, इसमें कोयले का अंश ७५% से ८०% तक पाया जाता है तथा शेष में से १०% आक्सीजन एवं ५% हाईड्रोजन पाई जाती है। इस प्रकार का कोयला काले या गहरे रंग का होता है। यह बड़ा उपयोगी एवं प्रचलित है। लोहे से इस्पात बनाने में यही कोयला अधिक काम में लाया जाता है। यह बहुत देर हवा में पड़े रहने पर चूरा-चूरा नहीं होता। यह सरलता से आग पकड़ लेता है एवं धुआं भी देता है। निम्न वाष्पशील बिटूमिनस कोयले का उपयोग जहाजों में होता है क्योंकि इसमें वाष्प कम होता है। उच्च वाष्पशील कोयला कृत्रिम गैस, कोक बनाने में उपयुक्त होता है। विश्व के बिटूमिनस कोयले के उत्पादन का ७०% रूस, ब्रिटेन, सं० रा० अमेरिका और जर्मनी से प्राप्त होता है।

(३) लिगनाइट या भूरा कोयला (Lignite or Brown Coal)—यह निकृष्ट जाति का कोयला होता है। इसमें अशुद्धियाँ अधिक परिमाण में होती हैं। कार्बन का अंश केवल ४५% से ७०% तक ही होता है किन्तु वाष्प अधिक होता है। यह कड़ा नहीं होता। खान के बाहर निकलते ही इसके टुकड़े होने आरम्भ हो जाते हैं। इसके छूने से उगलियाँ काली हो जाती हैं। जलते समय इसमें से गन्ध निकलती पाया होता है। इसकी आयु अपेक्षाकृत कम होती है। अधिक समय तक भूगर्भ में रहने पर यह अच्छा कोयला बन सकता था। इसके घटिया होने का कारण यह है कि यह निर्माण की पूर्ण प्रक्रिया में गुजर

विश्व के कुल उत्पादन का ५२% लिग्नाइट कोयला अकेले जर्मनी से प्राप्त होता है और शेष जैकोस्लोवाकिया, रूस और हंगरी से प्राप्त होता है। जर्मनी में ४½ टन लिगनाइट १ टन बिटूमिनस कोयले के बराबर माना गया है। जैकोस्लोवाकिया में यह अनुपात १७.१ है तथा हंगरी और सं० रा० अमेरिका में ३.१ है। जर्मनी में इसका सबसे अधिक उपयोग ईंटें बनाने (Briquette), कृत्रिम पैट्रोल, गैस आदि बनाने में होता है।

(४) केनल या गैस कोयला (Cannel or Gas)—इसमें कार्बन का अंश ४०% से भी कम पाया जाता है। यह सबसे अशुद्ध निकृष्ट जाति का कोयला है। इसके छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं। जलते समय इससे ऊँची शिखाएं निकलती हैं। उसका उपयोग कोल गैस (Coal Gas) बनाने में बहुत होता है। इसमें गैस तथा तरल पदार्थ बिटूमिनस अथवा एन्थ्रेसाइट से अधिक होते हैं।

(५) पीट कोयला (Peat Coal)—यह वनस्पति के मौलिक स्वरूप में थोड़ा-सा ही परिवर्तित कोयला है। इसमें ६०% कारबन, ३५% आक्सीजन, ५% हाइड्रोजन पाई जाती है। यह लकड़ी की भाँति जलता है और धुआं अधिक देता है तथा कम गर्मी प्रदान करता है। पीट का उपयोग घरों में जलाने के लिए सबसे अधिक जर्मनी, पोलैंड, आयरलैंड और रूस में होता है। रूस में तो इससे विद्युत शक्ति

ही किया जाता था किन्तु ज्यों ज्यों शक्ति के विभिन्न साधनों की खोज सफल होती गई त्यों त्यों लकड़ी का उपयोग ईंधन के रूप में कम होता गया। वर्तमान काल में अनुमानित विश्व में लकड़ी जलाकर लगभग ३००० करोड़ अश्व शक्ति घंटे शक्ति प्राप्त की जाती है।

आजकल का युग 'यंत्र-युग' (Machine Age) कहा जाता है। इस युग के महत्वपूर्ण शक्ति-स्रोत कोयला, जल विद्युत एवं तेल माने जाते हैं। स्रोतों के उपयोग के ही अनुसार किसी देश की सभ्यता एवं रहन-सहन के स्तर का माप-दण्ड निर्धारित किया जाता है। किन्तु आधुनिक काल के स्रोत प्राचीन शक्ति-स्रोतों के महत्व को कम नहीं कर सके हैं। आज भी मनुष्य, वायु, पशु शक्ति आदि का महत्व विश्व के विशेष भागों में उतना ही है जितना कोयले, तेल एवं विद्युत शक्ति का।

शक्ति के स्रोतों को चार मुख्य भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है:—

शक्ति के स्रोत

क	ख	ग	घ
जीवों से प्राप्त शक्ति (Animate Power)	निर्जीवों से प्राप्त शक्ति (Inanimate Power)	वानस्पतिक शक्ति (Vegetational power)	अन्य शक्ति (Other)
१. मनुष्य शक्ति	१ वायु शक्ति	१. लकड़ी	१. सूर्य शक्ति
२ पशु शक्ति	२. जल शक्ति	२. कोयला	२. अणु शक्ति
		३. तेल	३. ज्वार भाटे की शक्ति
		४. प्राकृतिक गैस	
		५ अल्कोहल	

नीचे की तालिका में विश्व के विभिन्न प्रदेशों में प्राप्त होने वाली जीव और निर्जीव शक्ति, उसका प्रति व्यक्ति पीछे उपभोग, और देश का भाग बताया गया है:—[५]

प्रदेश	जीवों से (प्राप्त शक्ति १० ला० यू०) में	निर्जीवों से प्राप्त शक्ति (१०ला०यू०) में	जीव-शक्ति का कुल शक्ति से अनुपात	विश्व का प्रतिशत	प्रति व्यक्ति के पीछे उपभोग
उत्तरी अमेरिका	२४,५६७	६४७,५५२	९७·५	३६·६	६,८३०
मध्य और द० अमेरिका	२३,४०६	५१,४७४	६४·३	३·०	६१०

5. *Sir Alfred Egerton's* article on **Civilization And Use of Energy in Br. Association for Advancement of Science Journal;** March 1941, p.390.

कनाडा—कोयले के उत्पादन मे कनाडा का कोई विशेष स्थान नही है। यह अपनी आवश्यकता का आधा कोयला उत्पन्न करता है। सन् १९६० मे यहाँ के कोयले का उत्पादन १ करोड १० लाख टन था। यहाँ कोयला तीन क्षेत्रो में निकाला जाता है। (अ) प्रशान्त महासागरीय कोयला क्षेत्र, जिसका फैलाव ब्रिटिश कोलम्बिया रियासत मे बैंकूवर के समीप है। बैंकूवर क्षेत्र अपनी स्थिति के कारण अधिक महत्व-पूर्ण है। यहाँ का कोयला घटिया है परन्तु प्रशान्त महासागर के जलमार्ग पर चलने वाले जहाजो के लिए यहाँ के कोयले की बडी माँग रहती है। (ब) राकी पर्वत कोयले क्षेत्र मे लिगनाइट कोयला मिलता है। इस कोयले का रेलो मे सबसे अधिक उपयोग होता है। यातायात की कठिनाई के कारण इसका यथेष्ट विकास नही हो पाया है। (स) पूर्वी कनाडा कोयला क्षेत्र के नोवास्कोशिया प्रान्त मे एक छोटा-सा कोयला क्षेत्र है। इस भाग मे न्यू ब्रुन्सविक और केप ब्रिटेन द्वीप के कोयला क्षेत्र हैं। यहाँ बहुत कम मात्रा मे कोयला मिलता है। इसका महत्व पूर्णरूप मे स्थानीय है।

अलास्का—इस देश मे भी प्रशान्त महासागर के तटवर्ती भागों मे कोयले की खानें हैं जिनसे उत्तम जाति का कोयला मिलता है। यहाँ कोयले की तहे बहुत मोटी हैं। अभी इनका महत्व बहुत कम है परन्तु आशा है कि भविष्य मे इसका खूब विकास होगा। आवागमन की कठिनाइयो के कारण इसका विकास रुका हुआ है। यहाँ १९१८ ई० से कोयला निकालना आरम्भ किया गया था और अब १ लाख ५० हजार टन कोयला प्रतिवर्ष यहाँ निकाला जाता है। यहाँ के भण्डार २० से १०७ अरब टन तक कूते गये हैं।

यूरोप के कोयला क्षेत्र इंगलैंड—कोयले के उत्पादन की दृष्टि से ग्रेट ब्रिटेन का विश्व मे तीसरा स्थान है। कोयले की खानो मे लगभग ५·७ लाख मजदूर काम करते हैं। यहाँ पर कोयले की खानों मे स्थिति व्यापारिक एव आन्तरिक उपभोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण है क्योंकि देश के भीतरी प्रदेशो मे कोयला और लोहा पास-पास मिलते हैं जबकि समुद्र के किनारे कहीं-कहीं तो समुद्र के भीतरी भागो तक कोयले की खानें चली गई हैं जहाँ कि आसानी से कोयला विदेशो को भेजा जा सकता है। ग्रेट ब्रिटेन की कोई भी कोयले की खान समुद्री बन्दरगाह से २५ मील से अधिक दूर नही है जिसका कि खर्चा २७ सेन्ट आता है। जबकि जर्मनी मे रूर कोयले का क्षेत्र रोटर-डम से १४० मील दूर है और जहाँ ७० सेन्ट उतने ही कोयले के ले जाने मे व्यय होता है कि संयुक्त राज्य मे उतने कोयले को प० वर्जीनिया से हेम्पटन रोड्स (जो कि ३१० मील दूर है) ले जाने मे १·२५ डालर लग जाते हैं। यहाँ जितने कोयले के भंडार हैं उनका अनुमान १२० अरब टन है। ये भन्डार आधुनिक उत्पादन की दृष्टि से ४०० मे ५०० वर्षों तक पर्याप्त है।[12] सब कोयले के क्षेत्रो का क्षेत्रफल ६,६०० वर्गमील है। ब्रिटेन मे कोयले के उत्पादन का १४% स्काटलैण्ड क्षेत्र से, ४०% यार्क, डर्बी और नॉटिंगघम क्षेत्र से, ६% लकाशायर से, ११% मिडलैण्ड से और १६% दक्षिणी वेल्स से प्राप्त होता है। अगले पृष्ठ की तालिका मे इगलैंड मे कोयले का उत्पादन बताया गया है।

ग्रेट ब्रिटेन के कोयले के क्षेत्रों को निम्नलिखित भागो में विभाजित कर सकते है :—

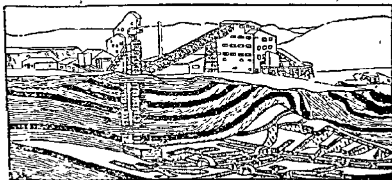
12. **Britain,** *An Official Hand Book,* 1963 p. 276

करना पड़े, सारे कारखाने बन्द हो जायें, संसार के समस्त ऐंजिन बेकार हो जायँ और उत्पादन को गहरा धक्का लगा कर विश्व का सारा व्यापार ठप्प हो जाय। इस सम्बन्ध मे रसल स्मिथ का कथन उल्लेखनीय है। उनका कथन है 'यदि कोई जादूगर विश्व से कोयले के भडारो को विलुप्त कर दे तो विश्व की सम्पूर्ण व्यवस्था ही बिगड़ जाय, नगर अन्धकारमय हो जाएँ, कारखाने बन्द हो जायें, विश्व के आधे जहाज प्रायः अपंग हो जाये और उत्पादन एक दम कम हो जाये।"

-अनुमानत. ३,००० वर्ष पूर्व चीन के निवासी अपने घरों मे कोयला जलाने के काम मे लाते थे। यूनान के दार्शनिक थियोफ्रैस्टस के मतानुसार ईसा से ३५० वर्ष पूर्व उत्तरी इटली के लिगूरिया प्रान्त के निवासी धातु गलाने और साफ करने मे कोयले का प्रयोग करते थे। ग्रेट ब्रिटेन मे भी रोम निवासियों के शासन काल मे कोयला उपयोग मे आता था। अठारहवी शताब्दी के आरम्भ मे कोयला लोहे व्यवसाय मे प्रयुक्त होने लगा। इस प्रकार वाष्प एंजिन के पूर्व इगलैंड मे कोयला प्रयोग किया जाता था। १८ वी शताब्दी के अन्त मे स्टीम एंजिन मे कोयले का उपयोग होने से उसकी माँग बढी फलत. उसका उत्पादन भी बढा। सं० रा० अमेरिका मे अभी कोयले का उद्योग नया ही है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जब यूरोप निवासी दुनिया के अन्य देशो मे पहुँचे तो साथ-साथ कोयले के प्रयोग का ज्ञान भी बढता गया और दूसरे देशो के वासी भी कोयले का प्रयोग अपने घरों एवं उद्योग धन्धो मे करने लगे।

कोयले का निर्माण (Formation of Coal)

कोयला, जिस पर कि आज के युग का औद्योगिक विकास निर्भर है, अत्यन्त प्राचीन वनस्पति का रूप है जो कि परिवर्तित रूप में पाया जाता है। जहाँ आज कोयले के क्षेत्र है अतीत काल मे वहाँ सघन वन थे। भूगर्भवेत्ता उस काल को कोयले का युग (Carboniferous Age) कहते हैं। ये वन प्रदेश दलदल भूमि पर स्थित है। शताब्दियो तक बड़े-बड़े विशाल वृक्ष एवं विविध प्रकार के पौधे इन



चित्र १२२. कोयले की खानों का भीतरी दृश्य

पर उगते गये और गिरते रहे। वृक्ष दल-दल के पानी में पडे-पडे सड़-गल कर पृथ्वी तल पर जमा होते रहे। पानी मे पौधो का मूल स्वरूप धीरे-धीरे नष्ट होने लगा।

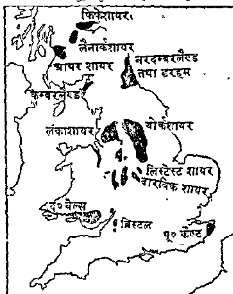
होता है। इसके अतिरिक्त घरेलू एव गैस बनाने के काम मे भी यह कोयला लिया जाता है। यार्कशायर के ऊनी कपडे के कारखाने और शैफील्ड के लोहे के कारखाने इसी कोयले का उपयोग करते है।

(३) कम्बरलैण्ड कोल क्षेत्र (Cumberland Coal Fields)—यह एक छोटा-सा क्षेत्र है और तटीय प्रदेश मे स्थित है। यह उत्तरी पूर्वी दिशा में देश मे १५मील तक चला गया है। यहाँ पर कोयले के भण्डार अनुमानित २०० करोड़ टन के है और वार्षिक उत्पादन १२ लाख टन है। इसका एक बड़ा भाग मेरी पोर्ट, वर्किङ्टन और ह्वाइटहैवन बन्दरगाह से आयरलैंड को निर्यात कर दिया जाता है। कोयले के निर्यात के महत्व के निम्न कारण हैं :—

(क) कोयले का क्षेत्र तटीय है अतः भूमि आवागमन खर्च बिल्कुल नहीं होता।

(ख) यहाँ बहुत कम उद्योग है अतः बहुत-सा कोयला बच जाता है।

(ग) आयरलैंड मे कोयला बहुत कम है अतः वह अच्छा बाजार है।



चित्र १२५. इंगलैंड में कोयला क्षेत्र

(४) लंकाशायर कोल क्षेत्र (Lancashire Coal Fields)—यह क्षेत्र रिबेल्स एवं परसी नदी के बीच मे फैला हुआ है तथा इसका कुछ भाग पिनाइन पर्वत के ढाल पर तथा कुछ भाग आस-पास के निम्न प्रदेशो मे स्थित है। कुछ स्थानों पर दरारें पड़ जाने के कारण कोयले का क्षेत्र थोड़े से क्षेत्रफल के बाद मे बहुत गहराई मे चला गया है। यहाँ के अनुमानित भन्डार ५६० करोड टन के हैं और वार्षिक उत्पादन १५० लाख टन है। इसका उपयोग लङ्काशायर की सूती कपड़ों की मिलो में होता है।

(४) स्लोप खुदाई (Slope mining)—इसमें कोयले की तहें ढालू होती हैं इसलिए सुरंग भी ढालू खोदनी पड़ती हैं।

(५) शाफ्ट खुदाई (Shaft mining)—इसमें लम्बवत् सुरंग खोदनी पड़ती है जिसमें बहुत गहराई से कोयला प्राप्त होता है। बेल्जियम में इसकी अधिकतम गहराई ४००० फीट है। ब्रिटेन में ११६७ फीट की गहराई है। सं० रा० अमरीका में ८०% कोयला धरातल के नीचे से निकाला जाता है जिसमें से एक चौथाई लम्बवत् सुरंगें खोद कर प्राप्त किया जाता है। इन सुरंगों की औसत गहराई १६० फीट है। सबसे गहरी सुरंग ८३६ फीट है जो न्यू मैक्सिको में है।[9]

कोयले के प्रकार (Types of Coal)

कोयला कई प्रकार का होता है। कार्बन का अंश जितना अधिक होता है कोयला उतनी ही अधिक गरमी उत्पन्न कर सकता है। इसी के आधार पर कोयले को कई जातियों में बाँटा जाता है। निम्न तालिका में विभिन्न प्रकार के कोयलों का रासायनिक सम्मिश्रण बताया गया है—[10]

कोयले का प्रकार	कार्बन (%)	हाइड्रोजन (%)	आक्सीजन (%)	नाइट्रोजन (%)	ताप-उत्पादक शक्ति
लकड़ी	५०	६	४३	१	?
पीट कोयला	५६	६	३३	२	६७,०० बिटयूमन प्रति पौंड
लिग्नाईट	६६	५·२	२५	०·८	१३,७५० बिट्यूमन प्रति पौंड
बिट्यूमिनस	८२	५·०	१२·२	०·८	१२,७०० बिट्यूमन प्रति पौंड
एन्थ्रासाइट	९५	२·५	२·५		×

(१) एन्थ्रासाइट (Anthracite)—यह सर्वोत्तम प्रकार का एवं सबसे मस्त किस्म का कोयला होता है। यह अपने निर्माण की पूर्ण प्रक्रिया में गुजर जाने के बाद में बनता है। यह बहुत कड़ा, चमकीला एवं रवेदार होता है। यह पत्थर के समान दिखाई देने वाला कोयला होता है जिसके छूने से अँगुलियाँ काली नहीं होती। यह सरलता से आग नहीं पकड़ता, किन्तु जलते समय बिल्कुल धुआँ नहीं देता तथा राख भी नहीं छोड़ता। घरों में भोजन बनाने के लिये इसी को ईंधन की तरह काम में लाया जाता है। इसकी आग बहुत तेज होती है अतः चालक दृष्टि से भी इसका महत्व बहुत है। इसमें कार्बन का अंश ९५% होता है तथा आक्सीजन २·५% तथा हाइड्रोजन २·५% होती है। इस प्रकार का कोयला वहाँ पाया जाता है जहाँ कि

9. *E. B. Shaw*, **World Economic Geography**, 1955, p. 89.
10. *Chamberlain*, **Geography**, p. 315; *Ayres and Scarlott* **Encyclopedia Britannica**, Vol 17.

(१) आयरशायर कोयला क्षेत्र—यह स्काटलैंड का १३% कोयला पैदा करता है और १२ से १५ मील तक फैला हुआ है।

(२) लेनार्कशायर कोयला क्षेत्र—यह स्काटलैण्ड का बहुत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह कोयला स्टीम बनाने के काम में आता है। यहाँ ४५% कोयला निकलता है।

(३) मध्य लोथियन कोयला क्षेत्र—यह एडिनबर्ग एव हैडिंगटन काउटी में स्थित है। इस क्षेत्र में कोयले के साथ-साथ शैल से तेल भी निकाला जाता है।

(४) फाइफशायर कोयला क्षेत्र—यह क्षेत्र आधुनिक काल में उत्पादन बढ जाने से ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है। यहाँ का कोयला निर्यात कर दिया जाता है जो कि मैथिल और बर्निटशायर बन्दरगाहों द्वारा बाल्टिक देशों को भेजा जाता है। डण्डी इसी क्षेत्र में है जो जूट के पक्के माल का उत्पादन केन्द्र है। यहाँ जूट से रस्से जालियाँ, टेल कपडा, केनवास आदि बनाये जाते हैं।

इंगलैंड मे कोयले का उपभोग इस प्रकार है।

कोयले का उपभोग (लाख टनों में)

उपयोग का प्रयोजन	१९५३	१९६०
गैस	२३४	२६४
बिजली	३५४	४६५
रेलवे	१५३	११४
कोक-भट्टियाँ	२३५	३०७
लोहा और इस्पात	८०	५६
एंजीनियरिंग और अन्य उद्योग	३७४	३१९
घरेलू और अन्य उपयोग	६१९	६०७
योग	२,०७९	२,१३२

व्यापार—ब्रिटेन का ४०% कोयला विदेशो को निर्यात कर दिया जाता है। निर्यात करने के मुख्य कारण निम्नांकित हैं :—

(१) कोयले का उत्पादन आवश्यकता से अधिक होता है।

(२) कोयले की खानें तटीय प्रदेश पर एवं समुद्र के गर्भ तक चली गई हैं तथा वैसे भी कोई भी प्रदेश तटीय बन्दरगाह से २५ मील से ज्यादा दूर नहीं है।

(३) यूरोप एक विशाल बाजार के रूप मे पास में ही आ गया है।

(४) आवागमन के साधन तथा निर्यात के जहाजो के साधन आधुनिकतम हैं जिससे खर्चा कम होता है।

(५) खानें पहाड़ी ढालो पर आ गई हैं और वहाँ से कोयला आधुनिक ढंगो से निकाला जाता है। इस कारण भी विदेशी प्रतिस्पर्द्धा मे यहाँ का कोयला सस्ता पड़ता है।

(३) खाड़ी तटीय क्षेत्र (Gulf Coast Coal Fields)—मैक्सिको की खाड़ी के सहारे दक्षिणी अलबामा के टेक्सास तक यह क्षेत्र फैला है। इसमें लिगनाइट जाति का घटिया कोयला मिलता है। संयुक्त राज्य के दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा इसका महत्व बहुत कम है। यहाँ का अधिकांश कोयला न्यू आरलियन्स के जलयानों के इंजनों में झोंकने के लिए भेज दिया जाता है।

(४) प्रशान्त महासागर तटीय कोयला क्षेत्र (*Pacific Coast Coal Fields*) इस क्षेत्र की स्थिति संयुक्त राज्य के उत्तरी पश्चिमी भाग में कोलम्बिया नदी की घाटी में है। यहाँ भी लिगनाइट जाति का घटिया कोयला मिलता है। वेन्कूवर टापू और वाशिंगटन रियासत में इस क्षेत्र का विस्तार है। यहाँ से सेनफ्रांसिस्को और पोर्टलैण्ड बन्दरगाहों को कोयला भेजा जाता है। इसका उपयोग प्रशान्त महासागर के जलयानों द्वारा किया जाता है।

(५) उत्तरी मैदान का कोयला क्षेत्र—यह भाग संयुक्त राज्य के प्रेयरी क्षेत्र के उत्तर में संयुक्त राज्य और कनाडा की सीमा के पास स्थित है। इस क्षेत्र से अधिक कोयला प्राप्त नहीं होता है। यहाँ प्राय. लिगनाइट जाति का घटिया कोयला मिलता है। यहाँ के सारे कोयले का उपयोग रेलों द्वारा किया जाता है।

(६) राकी पर्वतीय कोयला क्षेत्र—यह क्षेत्र राकी पर्वत माला के पूर्वी ढालों पर स्थित है। इसका विस्तार मोन्टाना, व्योमिंग, कोलोरेडो और न्यू मैक्सिको रियासतों में है। यह कोयला बिटुमिनस जाति का होता है परन्तु यातायात की कठिनाई के कारण बहुत कम निकाला जाता है। इसका स्थानीय महत्व बहुत अधिक है। यहाँ यूटाहा और कोलोरेडो में क्रमशः ६० लाख टन और ४० लाख टन कोयला निकाला जाता है। इस कोयले का उपयोग प्यूब्लो और प्रोवो में होता है। स० राज्य में कोयले की सभावित राशि २०४० खरब टन आकी गई है। इस राशि के भंडार इलीनियास, पश्चिमी वर्जीनिया, केन्टकी और पेंसिलवेनिया में निहित है।

१९५६ में संयुक्त राज्य से केवल ४ करोड़ टन कोयला निर्यात हुआ था। यह उस वर्ष की पूरी प्राप्ति का केवल ५% ही था। निम्नलिखित बातें यहाँ के कोयले के निर्यात के लिए बाधक हैं:—

(१) संयुक्त राज्य में समुद्र तट से २०० मील की दूरी पर कोयला मिलता है और अधिकतर रेलों द्वारा ढोया जाता है। इसीलिए इंगलैंड से उसकी प्रतियोगिता नहीं हो सकती है क्योंकि वहाँ समुद्र-तट से १५ मील की दूरी से ही कोयला निकाला जाता है।

(२) यूरोप के औद्योगिक क्षेत्रों की दूरी यहाँ से बहुत अधिक है।

(३) संयुक्त राज्य से बाहर जाने के लिए जहाज का भाड़ा बहुत अधिक है क्योंकि यहाँ से बाहर माल अधिक जाता है। इंगलैंड में सारे संसार के जहाजों का अड्डा है जिससे इंगलैंड से बाहर जाने का भाड़ा कम है।

केवल दक्षिणी अमेरिका को ही संयुक्त राज्य से कोयला जा सकता है परन्तु यहाँ की माँग बहुत कम है। यहाँ पर न तो औद्योगिक ही उन्नति हुई और न अधिक सर्दी पड़ती है। वास्तव में संयुक्त राज्य का कोयला कोयले की बड़ी खपत के क्षेत्रों से।

विशेष कारण कोयला निकालने के तरीको मे सुधार करना, यत्रों का उपयोग तथा नये कोयला क्षेत्रो का पता लगना है। १६१७ के पूर्व डोनेज बेसीन रूस के उत्पादन का ६०% देता था किन्तु अब इस प्रदेश से केवल ६०% उत्पादन ही प्राप्त होता शेष रूस के अन्य भागों से।

यद्यपि रूस में ८० से भी अधिक स्थानों पर कोयला मिलता है किन्तु मुख्य उत्पादक क्षेत्र मास्को से लगाकर साखालीन और आर्कटिक महासागर से अरब सागर तक फैले है। पश्चिमी साईबेरिया मे कुजबुज, यनीसी घाटी मे तुंगुज, रूस के पूर्वी प्रदेश मे इर्कुटस्क, डोनवाज, पिछौरा, आमूर बेसीन मे बुर्रान, लीना बेसीन में युकूट, कुर्स्क, स्टेपी प्रदेश मे करग. मान्सिक, तथा सुदूर पूर्व मे ब्लाडीवोस्टक के निकट एशियाई रूस के कोयले क्षेत्र है। किन्तु ये क्षेत्र मुख्यत. तीन भागों मे अधिक महत्वपूर्ण है—

(१) **डोनेज बेसीन** मे रूस के महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिनका क्षेत्रफल लगभग १६,००० वर्गमील है। इसमे लगभग २०० तहो मे कोयला मिलता है जिसकी मोटाई ७ फीट तक है। यहाँ एन्थ्रेसाइट और बिटूमीनस कोयला निकाला जाता है किन्तु कोकिंग कोयला का अभाव होने से एन्थ्रेसाइट ही इस उपयोग मे लाया जाता है।

(२) **कुजनेटस्क बेसीन**—रूस का दूसरा महत्व क्षेत्र है। इसका क्षेत्रफल भी डोनेज बेसीन के ही बराबर है किन्तु कोयले के भडारो की राशि उससे अधिक होने के कारण रूस के क्षेत्रो मे इसका स्थान प्रथम है। यहाँ का कोयला यूराल, कुजनेटस्क कारखाने म काम मे लाया जाता है।

(३) **करागंडा बेसीन**—काजकस्तान प्रदेश मे है। रूस मे कोयले के अनुमानित भंडार १६५४ बिलीयन मैट्रिक टन के है, जिनमे से ६०% एशियाई रूस में है मास्को और कमचकारिका के बीच मे।

यूरोप के अन्य देश

यूरोप मे कोयला प्राप्त होने वाले अन्य मुख्य देश जर्मनी, फ्रास, पोलैंड और चैकोस्लोवाकिया है।



चित्र १२६ यूरोप के कोयला क्षेत्र

(१० लाख टनो मे)

	१९४७	१९४९	१९५१	१९५४	१९५७	१९६१
गहरी खानो से	१८७·२	२०२७	२११९	२१३४	१९६४	१८२·०
खुली खानो से.	१०२	१२७	११·०	१०·१	१३६	८·५
योग	१९७४	२१५४	२२२·९	२२३·५	२१०·०	१९०·५

(क) पिनपाइन श्रेणी के आस-पास का क्षेत्र ।

(ख) वेल्स प्रदेश ।

(ग) स्कॉटिश निम्न प्रदेश ।

(क) पिनाइन समूह (The Penine Group)

इस पर्वत के दोनों ढालों पर कोयले के क्षेत्र पाये जाते हैं जो महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यहाँ के कोयले के क्षेत्रो को निम्न भागों में बाँटा जाता है :—

(१) **नार्थम्बरलैण्ड-डर्हम कोल क्षेत्र** (Northumberland Durham Coal Fields)—यह क्षेत्र पिनाइन श्रेणी के पूर्व में पाया जाता है। यहाँ का वार्षिक उत्पादन ५०० लाख टन है। कोयले के क्षेत्र बाहर निकलते हुये दिखाई देते हैं जो पूर्वी घोल्ड से आकलैण्ड विशोप तक चले गये हैं। यही क्षेत्र टाइन तथा कोनक्वेट नदियो की घाटियों में होता हुआ किनारे तक चला गया है तथा दक्षिण पूर्व मे यह क्षेत्र मैगनेशियम-लाइमस्टोन की चट्टानो के नीचे आ गया है। वहाँ से यह समुद्र के पेंदे मे २ से ३ मील तक चला गया है। यहाँ पर ग्रेट ब्रिटेन का सबसे उत्तम कोयला पाया जाता है विशेषकर दक्षिणी भाग में। इस क्षेत्र को कई लाभ हैं :—

(१) दक्षिणी डर्हम का बढ़िया कोयला मिलता है।

(२) समुद्र के किनारे मिलने से निर्यात आसानी से होता है।

(३) यह क्षेत्र क्लीवलैंड लौह क्षेत्रो के बिल्कुल पास में है।

(४) पिनाइन एवं वीयर घाटी से चूना प्राप्त हो जाता है।

(५) तटीय प्रदेशो मे होने के कारण स्वीडन से उत्तम प्रकार का लोहा आयात किया जा सकता है। इन सब लाभो के कारण यह ग्रेट ब्रिटेन का औद्योगिक क्षेत्र है जहाँ से लोहे और इस्पात के सामानो का निर्यात किया जाता है।

(२) **यार्कशायर - डर्बीशायर - नॉटिंघमशायर कोल क्षेत्र** (Yorkshire, Durbyshire And Nottinghamshire Coal Fields)—यह क्षेत्र दक्षिणी पिनाइन के पूर्वी ढालों पर स्थित है। इसका क्षेत्रफल २,००० वर्गमील है। यह क्षेत्र ग्रेट ब्रिटेन का ⅓ कोयला पैदा करता है। यहाँ पर कोयले के भण्डार ४० करोड टन होने का अनुमान है तथा वार्षिक उत्पादन ७२० लाख टन है। इस क्षेत्र की लम्बाई ७० मील है तथा चौड़ाई १० से १२ मील तक है। पूर्वी भागो के क्षेत्र धीरे-धीरे मैगनेशियम लाइमस्टोन के नीचे तथा बालू पत्थरो के नीचे चले गये हैं। कोयला भिन्न-भिन्न खानों में भिन्न प्रकार का पाया जाता है। इसका सर्वाधिक उपयोग रेलों मे

कोयला पाकिस्तान मे भी निकलता है जो बहुत ही कम है । जापान मे भी कोयला मिलता है ।

चीन में कोयला—चीन में कोयले की सुरक्षित राशि का विशाल भडार है। कोयले की सुरक्षित मात्रा के अनुसार इसका ससार मे चौथा स्थान है। चीन के कोयले के भडार के विषय में भूतत्ववेत्ताओ ने अनेकों अनुमान लगाये है। सबसे पहले रीचटोफन नामक विद्वान ने अपना मत प्रकट किया था। लेकिन उसका अनुमान बहुत बडा था अत. उसे आजकल कोई महत्व नही प्रदान किया जाता। अन्य विद्वान ड्रेक, सेह और हेव हैं जिन्होने चीन के कोयले की सुरक्षित राशि का अनुमान क्रमश सन् १९१२, १९१५ तथा १९३२ ई० में लगाये थे। ड्रेक के मतानुसार चीन के कोयले का भडार ९९,६०,००० लाख मैट्रिक टन और सेह के मतानुसार २१,७०,००० लाख मैट्रिक टन है। १९१३ की चीन की अन्तर्राष्ट्रीय भूमि सम्बन्धी कांग्रेस की गणना के अनुसार चीन मे कोयले का अनुमान ९९,५९,८७० लाख टन था। जबकि सम्पूर्ण यूरोप का कोयला केवल ७४,७५,०८० लाख टन था। हेव के मतानुसार चीन मे कोयले का भडार २४,६०,००० लाख मैट्रिक टन था। कुछ भी हो आज कल लोग यह स्वीकार करते है कि चीन मे कोयले की सुरक्षित राशि १,४६,९४,४१० लाख मैट्रिक टन है। साथ ही खोजो द्वारा यह भी सिद्ध हो चुका है कि यहाँ की कोयले की सुरक्षित राशि का ७५% कोयला बिटूमिनस किस्म का है। १९३४ मे चीनी भूगर्भीय सर्वेक्षण के अनुसार सुरक्षित भडार मे कोयले का वितरण इस प्रकार था :—

ऐन्थ्रैसाइट कोयले की सुरक्षित राशि	=	४५,८७०	लाख टन
बिटूमिनस ,, ,, ,,	=	१,८२०,१५०	,, ,,
लिग्नाइट ,, ,, ,,	=	२,८६,२६०	,, ,,

कुछ वर्ष पहले चीन मे कोयले का वार्षिक औसत उत्पादन ३ करोड टन था परन्तु इन पाँच वर्षो में चीन ने कोयले के उत्पादन में बहुत कुछ वृद्धि की है। सन् १९५२ मे ६ करोड टन कोयला पैदा हुआ। चीन की महान् योजना के अनुसार १९५७ मे ११३० टन कोयला उत्पन्न होने का अनुमान किया गया किन्तु वास्तविक उत्पादन इससे १३० लाख टन अधिक हुआ। द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत चीन मे कोयले के उत्पादन मे आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। सन् १९५८ मे चीन के कोयला का उत्पादन २७७० लाख टन था।

चीन की यह राशि बिटूमिनस तथा एन्थ्रैसाइट अच्छे कोयले की है जैसा कि निम्नलिखित तालिका से प्रकट होता है —

सुरक्षित राशि की मात्रा दस लाख मैट्रिक टनो मे
(सुरक्षित राशि—१९४०)

प्रान्त	ऐंथ्रेसाइट	बिटूमिनस	लिग्नाइट
आन्हवे	६०	३००	—
चाहार	१७	४८७	—

(५) मिडलैण्ड कोल क्षेत्र (Midland Coal Fields)—ये कोयले के क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण नही है क्योंकि यहाँ का उत्पादन अब बहुत कम होता है। खानें भी बहुत गहरी है तथा परतें भी पतली हो गई हैं और कोयले की किस्म भी बढ़िया नही है। इस कोयले का उपयोग बर्मिघम के औद्योगिक प्रदेश मे होता है।

(६) दक्षिण स्टाफर्डशायर कोल क्षेत्र (South Staffordshire Col Fields)—बरमिघम के उत्तर मे १० मील स्टेफोर्ड के भीतर तक यह क्षेत्र चला गया है। यहाँ पर जितने भण्डार हैं उनका अनुमान ७०० करोड़ टन का है। परन्तु काले देश में यह मात्रा १० लाख टन से कुछ ही अधिक है। यह प्रदेश महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र है तथा कोयला लोहा गलाने के काम में तथा इस्पात की वस्तुएँ बनाने के काम मे आता है।

(७) वारविकशायर कोल क्षेत्र (Warwickshire Coal Fields)—यह प्रदेश वारविक भाग के उत्तर-पूर्व मे मिलता है। अधिकतर कोयला बिटुमिनस है। यहाँ पर इसका उपयोग होता है। कुछ कोयला देश के दूसरे भागो मे भी निर्यात किया जाता है। कोयले के भण्डार यहाँ पर अनुमानत १४० करोड़ टन हैं और वार्षिक उत्पादन ५५ लाख टन है। कोविन्ट्री जो कि औद्योगिक केन्द्र है कुछ ही मील दक्षिण में स्थित है तथा यहीं से कोयला प्राप्त करता है।

(ख) वेल्स समूह (The Welsh Coal Fields)

(१) उत्तरी वेल्स कोल क्षेत्र (North Wales Coal Fields)—यह क्षेत्र उत्तरी-पूर्वी भाग मे स्थित है। यहाँ के अनुमानित भण्डार २५० करोड़ टन के है और वार्षिक उत्पादन २६ लाख टन है। ग्रोसफोर्ड के पास के प्रदेशो मे सर्वाधिक उत्पादन होता है।

(२) दक्षिणी वेल्सकोल क्षेत्र (South Welsh Coal Fields)—यह क्षेत्र मॉनमन्थशायर के पश्चिम से उस्क नदी की घाटी से ग्लेमोरगशायर तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र का क्षेत्रफल १,००० वर्गमील है। यहाँ के अनुमानित भण्डार ३,५०० करोड टन है, जिसमे से १४% प्रथम श्रेणी का स्टीम कोयला है, (एन्थ्रेसाइट)और २०% बिटुमिनस एव ३२% द्वितीय श्रेणी का स्टीम कोयला है। यहाँ का वार्षिक उत्पादन ३५० लाख टन है। अतः स्पष्ट है कि यह क्षेत्र मात्रा, किस्म एवं विभिन्नता की दृष्टि मे प्रसिद्ध है। पश्चिमी भागों के आधे प्रदेशो मे जो कोयला निकलता है वह एन्थ्रेसाइट होता है।

(३) उत्तरी स्टेफर्डशायर कोल क्षेत्र (North Staffordshire Coal Fields)—पिनाइन के दक्षिणी-पश्चिमी किनारो (ढालो) पर पाया जाता है, तथा उत्तरी स्टेफोर्डशायर का सिलसिला है। यह औद्योगिक प्रदेश पोटरीज (Potteries) के नाम से पुकारा जाता है।

(ग) स्कॉटिश प्रदेश के कोल क्षेत्र (Scottish Coal Fields)

स्कॉटलैंड के कोयले का ९९% प्रतिशत कोयला मध्यवर्ती निम्न प्रदेशो मे पाया जाता है जो ग्रेट ब्रिटेन का १/६ भाग उत्पादन करते हैं। यहाँ इंगलैंड के कोयले के क्षेत्र निम्न प्रकार हैं :—

(४) **मंचूरिया समूह**—इसके अन्तर्गत मुख्य कोयले की खानें पेन्चीहू सियान, मूलग और पीपायो मे हैं। यह सब क्षेत्र मचूरिया मे है। अनुमान है कि इन क्षेत्रो मे कोयले की सुरक्षित मात्रा लगभग ५०,००० लाख टन है। यहाँ का अधिक कोयला मध्यम क्षेणी का है।

(५) **उत्तर पश्चिमी समूह**—यह कोयले के क्षेत्र पहाडों से घिरे हुए बेसिनों मे स्थित है जहाँ पर आवागमन के साधन कठिन है। इसलिए इनकी ओर अभी तक कोई ध्यान नही दिया गया।

(६) **रैंड बेसिन क्षेत्र**—इस समस्त बेसिन मे कोयला विद्यमान है परन्तु यहाँ पर कोयले की तह केवल डेढ फीट मोटी है। दक्षिण भाग मे कोयले की तह कुछ मोटी हैं।

(७) **मध्य ह्यू नान समूह**—यहाँ के मुख्य कोयले के क्षेत्र हूपेह और क्यागसी मे है। इनके अतिरिक्त अनेकों छोटे-छोटे कोयले के क्षेत्र यहाँ हैं।

(८) **दक्षिण पूर्वी समूह**—दक्षिणी पूर्वी भाग मे तथा यागटिसीक्याग नदी की निचली घाटी मे अनेको छोटे-छोटे कोयले के क्षेत्र हैं जो विशेष महत्वपूर्ण नही है।

(९) **क्वांगतुंग**—क्यागसी और युन्नान समूह मे अनेकों छोटे-छोटे कोयले के क्षेत्र है जिनमे कोयले की पर्त बहुत पतली है। इसलिए महत्व नही हैं।

जापान मे कोयला— जापान मे कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति के विषय में विभिन्न अनुमान लगाये गये हैं। १९११ मे के० इनोई ने जापान की कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति ६,२२०,०००,०००, टन बताई थी। इसमे से १,०००, ०००,००० टन वास्तविक सुरक्षित सम्पत्ति है तथा शेष सम्भावित है। १९३२ मे जापान के खनिज मन्त्रालय ने इससे कुछ अधिक सुरक्षित सम्पत्ति बतलाई थी। इसने निम्न अक प्रकाशित किए हैं :—

जापान के कोयले का भंडार

(हजार मैट्रिक टनो में)

कोयले की श्रेणी	ज्ञात सम्पत्ति	अनुमानित सम्पत्ति	संभावित सम्पत्ति	योग	कुल का प्रतिशत
एंथ्रेसाइट	४५४,७४५	१३१,९४४	१३२,०९३	७,१८१,७८२	४ ३
सोफ्ट कोक	५,४३९,९०५	३,७८०,९५७	६,२७८,२११	१५,४९९,०९१	९२ ७
लिगनाईट	६५,७६५	१३२,५८२	२७५,११३	४७३,४६०	३.०
योग	५,९६०,४१५	४,०४५,५०१	३,६८५,४१७	१६,६९१,३३३	१००

जापान मे उत्पन्न होने वाले कोयले की ९०% मात्रा बिटूमिनम की निम्न तथा मध्यम श्रेणी की होती है। १९६० मे यहाँ ४६७ लाख टन कोयला प्राप्त हुआ।

जापान के कोयला क्षेत्र मुख्य रूप से दो—होकैडो तथा क्यूशू हैं जो देश के उत्तरी तथा दक्षिणी किनारे पर स्थित हैं। क्यूशू से समस्त जापान का

(६) स्वीडेन बिल्कुल पास मे ही है जहाँ कोयले की कमी एव लोहे की अधिकता है। अतः वहाँ से लोहे का निर्यात इंगलैंड के लिए और यहाँ से कोयले का निर्यात स्वीडेन को हो सकता है।

इगलैंड अपने कोयले के व्यापार का ५०% यूरोपीय देशो को भेजता है। प्रथम महायुद्ध के बाद इगलैंड के कोयला निर्यात मे कमी आ गई है। सन १९२३ मे ७६० लाख टन, सन् १९३८ मे ४०० लाख टन, १९५३ मे १४० लाख टन और १९६० में केवल ५५ लाख टन निर्यात किया गया। यह निर्यात मुख्यतः डेनमार्क, आयरलैण्ड, फ्रास और नीदरलैण्ड को किया गया।

निर्यात मे कमी होने के मुख्य कारण ये है—[13]

(१) आस्ट्रेलिया, द० अफ्रीका और जापानी कोयले से प्रतिस्पर्धा होने से ब्रिटेन के कोयले की माँग मे कमी हो गई है।

(२) कई देशो मे अब कोयले के स्थान पर मिट्टी का तेल या शक्ति के अन्य साधन काम मे लाये जाने लगे हैं। आधुनिक काल मे ८०% समुद्री जहाजो में तेल काम मे लाया जाता है।

(३) जहाजो के एन्जिनो, भट्टियो तथा विद्युत-प्लाटों मे सुधार हो जाने से अब ताप के लिए कम कोयले की आवश्यकता पडने लगी है।

(४) ब्रिटेन में कोयला निकालने मे खर्चा और असुविधा बढ गई है।

(५) ब्रिटेन मे कोयले का उत्पादन भी घटता जा रहा है। १९१३ मे उत्पादन और निर्यात २८७४ लाख टन तथा ७३४ लाख टन थे। १९६० मे यह ५५ लाख टन तथा ६० लाख टन ही रह गया।

(६) ब्रिटेन मे शताब्दियो से कोयला निकाला जा रहा है अत. निकटवर्ती खानों का कोयला समाप्त प्राय हो गया है। केवल १०% कोयला धरातलीय खानों से प्राप्त किया जाता है। कुछ खानें तो २ से ३½ हजार फीट तक गहरी पहुँच गई हैं। अतः कोयला निकालने मे व्यय बढ गया है।

इन असुविधाओ से बचने के लिये १९४६ मे कोयले उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है। राष्ट्रीयकरण के फलस्वरूप आरम्भ में कुछ वर्षो मे उत्तम और व्यवस्थित ढगो—कोयला काटने की मशीनो का उपयोग के कारण कोयले का उत्पादन १९४७ मे १८८० लाख से बढकर १९६० मे १९३५ लाख टन हो गया। १९७० तक कोयले का उत्पादन २५०० लाख टन होने का अनुमान है।

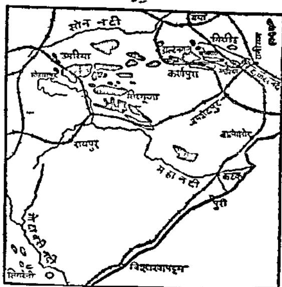
रूस—प्रकृति ने रूस को कोयले मे बडा धनी देश बनाया है। रूस की समस्त ईंधन राशि का २/३ कोयले से ही प्राप्त होता है।[14] संयुक्त राज्य अमरीका के बाद न केवल वास्तविक उत्पादन में ही वरन् कोयला भंडारो मे भी इसका स्थान दूसरा है। १९४० मे कोयले का उत्पादन ५५ लाख टन था, जो बढकर १९५० मे ३०३७ लाख टन और १९६१ मे ५१०० लाख टन हो गया। उत्पादन मे इस वृद्धि का

---

13. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit., p. 210.**

14. *Baransky*, **Economic Geography of U. S. S. R., 1956** p. 26.

निकालने का प्रयास कदाचित् १,७७४ ई० मे बराकर नदी के किनारे किया गया था। रानीगज क्षेत्र मे यद्यपि कोयला बराकर और रानीगंज दोनों श्रेणियों की शिलाओ मे पाया जाता है किन्तु यहाँ रानीगज श्रेणी का कोयला ही अधिक मिलता है। रानीगज श्रेणी मे कई अच्छी अच्छी कोयले की तहे हैं। बराकर श्रेणी के कोयलो में



चित्र १२६. भारत के प्रमुख कोयला-क्षेत्र

जल वाष्पीय पदार्थों का अश रानीगज श्रेणी के कोयलो से कम और ठोस कार्बन अधिक मात्रा में होता है। रानीगज श्रेणी की तह मे थोडी-सी तह ही धातु शोधने योग्य कोक बनाने के लिए अच्छी है जिनमें दिशारगढ तह १८ फीट मोटी और सैक्टोरिया तह १० फीट मोटी उत्तम कोयले के लिए प्रसिद्ध है। केवल इन दोनो सीमों मे १,००० फीट की गहराई तक १२ करोड टन से अधिक प्रथम श्रेणी का कोक बनाने वाला कोयला कूता गया है और इसके अतिरिक्त २० करोड टन कोक न बनाने वाला किन्तु उत्तम कोयला और होगा। रानीगज क्षेत्र मे कुल कोयला ५६८ करोड़ टन १००० फीट की गहराई तक होगा। यह क्षेत्र भारत के कोयले का एक-तिहाई भाग उत्पन्न करते हैं। इस क्षेत्र को दक्षिणी-पूर्वी रेलवे जोडती है।

झरिया कोल क्षेत्र—यह क्षेत्र रानीगज क्षेत्र से ३० मील पश्चिम की ओर है। इस क्षेत्र का पता सन् १८५५ मे लगा था। यह क्षेत्र २३ मील लम्बा (पूर्व-पश्चिम मे) और १० मील चौडा है। इस क्षेत्र का कोयला 'बराकर' और 'रानीगज' दोनो श्रेणियो की शिलाओ मे मिलता है। 'बराकर' श्रेणी यहाँ पर लगभग ८४ वर्गमील मे मिलती है और उनमे कोयले की बीस तहे हैं। इन तहो की पृथक रूप से मोटाई कुछ फुट से २७ फुट तक है। कुल तहे मिलाकर लगभग ३०० फीट के लगभग होगी। 'रानीगज' श्रेणी की शिलायें २१ वर्गमील मे मिलती हैं। झरिया [redacted]. सब तहो के कोयले से कोक बन सकता है, परन्तु उत्तम कोक केवल

जर्मनी—यूरोप में इंगलैण्ड और रूस के बाद जर्मनी ही सर्वाधिक कोयले-का उत्पादन करता है। यह देश विश्व मे चौथा सबसे बड़ा कोयला उत्पादन करने वाला देश है। जर्मनी के पश्चिमी भागो मे रूर (Ruhr) कोयले के क्षेत्र में ८०% कोयला यहाँ के कुल उत्पादन का बढ़िया एवं कोक बनाने योग्य होता है। यह कोयले का क्षेत्र बहुत ही विशाल है एवं जर्मनी, फ्रास, बेलजियम और नीदरलैण्ड तक फैला हुआ है। यह कोयला उच्च किस्म का एवं बढ़िया होता है। इस कारण जर्मनी के कुल उत्पादन का ६०% उत्पादन इसी क्षेत्र में निकाला जाता है। इसका क्षेत्रफल १,५०० वर्ग मील के लगभग है और केवल इस क्षेत्र के ⅓ भाग में ही विशेषकर रूर एवं लिप्पी नदी के बीच में अधिक खानें खोदी गई हैं क्योंकि यहाँ उत्तम किस्म का एव आसानी से प्राप्त कोयला पाया जाता है। यहाँ के भण्डार अत्यन्त विशाल हैं। आधुनिक उत्पादन के हिसाब से यह कोयला आने वाले २,५०० वर्षों के लिये पर्याप्त है।

जर्मनी के कोयले के उत्पादन मे द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बहुत न्यूनता आ गई है। वहाँ पहले १९३८ में १७१७ लाख टन कोयला निकाला था, सन् १९६० में वहाँ केवल १४२३ लाख टन कोयला निकाला गया। लिगनाइट के भण्डार भी मध्य जर्मनी मे पाये जाते है जिनका अनुमानित भण्डार १३० लाख टन है। जर्मनी के पश्चिमी भाग मे वैस्टफेलिया क्षेत्र मे जर्मनी की ६०% सम्पत्ति सुरक्षित पडी है। यहाँ कोयले की तहे ५ से ३० फीट गहरी हैं। इस क्षेत्र मे जर्मनी का ७०% कोयला मिलता है। दूसरा मुख्य क्षेत्र साइलेशिया क्षेत्र है जहाँ से जर्मनी का १७% कोयला प्राप्त होता है। शेष उत्पादन सार बेसीन, आकेन और सैक्सोनी क्षेत्र मे होते है।

फ्रांस—कोयले के उत्पादन में फ्रास निर्धन देश है। यहाँ का १९६० का उत्पादन ५८२ लाख मेट्रिक टन है जो कि यहाँ की माँग के लिए पर्याप्त नही है। देश में छोटे-छोटे कोयले के क्षेत्र बिखरे पडे है जो लॉरेन, ला-क्रूसोट एव रोन नदी के डेल्टा के प्रदेश मे है। इस कोयले से फ्रास की ⅔ माँग ही पूर्ण होती है। अतः फ्रास को बाहर से कोयला मँगाना पडता है। द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व जब कि लॉरेन एव एलसेस (फ्रास के प्रान्त) जर्मनी ने हडप लिये थे तो उस समय फ्रास विश्व मे कोयले का सर्वाधिक आयात करता था। यहाँ कोयला म० राष्ट्र जर्मनी और पोलैण्ड से आता है। फ्रांस का कोयला कोक के लिये महत्वपूर्ण नहीं है। परन्तु यहाँ पर जल-विद्युत की शक्ति के अगाध साधन भण्डार के रूप मे पडे है।

पोलैण्ड—कोयले एवं दूसरे खनिजो की दृष्टि से पोलैण्ड धनी देश है परन्तु यहाँ पर बहुत कम उत्पादन होता है। १९६० मे ११२ लाख मैट्रिक टन कोयला निकाला गया था। यहाँ के कोयले का ५०% भाग ऊपरी साइलेशिया से लिया जाता है जहाँ का वार्षिक उत्पादन ४०० लाख टन है। यहाँ कोयला ३ से ३० फीट मोटी तह मे मिलता है। यह कोयला उत्तम प्रकार का एवं कोक बनाने योग्य है। शेष उत्पादन क्रैको और डैम्ब्रोवा से प्राप्त होता है। चैकोस्लोवाकिया में भी कोयला निकाला जाता है परन्तु उसका महत्व बहुत कम है। यहाँ का कोयला उत्तम प्रकार का नहीं है।

एशिया के कोयला-क्षेत्र (Coal Fields of Asia)

एशिया मे चीन एव भारत ही कोयले के दो महत्वपूर्ण उत्पादक हैं। कुछ

से निम्न श्रेणी का है। यहाँ के कोयले मे नमी अधिक होती है। यहाँ कोयले के अन्य क्षेत्र निम्न भागो मे है।

पचघाटी के कोयला के क्षेत्र—ये क्षेत्र छिंदवाडा जिले मे सतपुडा पहाड के दक्षिण तवा, कन्हान और पच नदियों की घाटियो मे वर्तमान हैं। इन सबका क्षेत्र-फल १०० वर्गमील है। यहाँ का मुख्य क्षेत्र सिरगोरा, बरकोई, हिंगलदेवी, कन्हान और तवा के नाम से प्रसिद्ध है। ये क्षेत्र सन् १६०५ से काम मे आने लगे हैं। यहाँ कोयले की तहे ५ से १२ फीट ८ फ मोटी हैं। कन्हान का कोयला कोक बनाने योग्य है।

मोहपानी क्षेत्र—मध्य प्रदेश के नृसिंहपुर जिले में इस प्रदेश का सबसे पुराना क्षेत्र है, जो नर्मदा घाटी के दक्षिण मे सतपुडा पर्वत के उत्तरी ढाल के तले मे वर्तमान है। बराकर श्रेणी की शिलाओं मे यहाँ पर कोयले की चार तहें हैं जिनमे से दो तो लगभग २० और २५ फीट मोटी है। यहाँ ४ करोड टन कोयले होने का जमाव होने का अनुमान है। बगाल के साधारण कोयलों से यहाँ का कोयला कुछ निकृष्ट है। इस क्षेत्र के अतिरिक्त **यवतमाल** और **बेतूल** जिले मे **शाहपुर** इत्यादि क्षेत्र भी प्रसिद्ध है।

वरधा घाटी के क्षेत्र—इन क्षेत्रो मे बलारपुर, बरोरा, मस्ती और घुघस उल्लेख-नीय है। परन्तु प्रथम दो ही अधिक महत्व के है। चादा जिले मे **बलारपुर** नामक क्षेत्र मे कोयलेदार तहें ६२ फुट की गहराई तक मिलती है जिनमे केवल दो ही १७ और १४ फुट मोटी तहे अच्छे कोयले की है और इन्ही से कोयला निकाला जा रहा है। यहाँ २०,००० लाख टन कोयले का भण्डार होने का अनुमान है। यहाँ का कोयला हवा मे पडा रहने पर चूर-चूर होने लगता है और इस कोयले की तह मे स्वय जल उठने का भी डर रहता है। बरार के यवतमाल जिले मे पिसगाँव के निकट ७७ फीट की गहराई पर १३ से २७ फीट मोटी और राजपुर के निकट १६० फीट की गहराई पर १८ से ३० फीट मोटी कोयले की तहे पाई जाती हैं। यहाँ का कोयला हल्के किस्म का कोक न बनाने योग्य है। सम्पूर्ण जमाव २४०० लाख टन का है। चाँदा जिले मे एक क्षेत्र **बरोरा** है जहाँ कोयले की दो तहे—ऊपरी तह २२ फीट मोटी और निचली तह १० फीट मोटी हैं। यहाँ १२० लाख टन कोयले का भण्डार माना जाता है।

उत्तरी छत्तीसगढ तथा सरगुजा राज्य के क्षेत्र—इन क्षेत्रो मे रामकोला, तातापानी, सिनहट, विश्रामपुर, बन्सर, लखनपुर, पचबहनी और सेंदूगढ इत्यादि छोटे-छोटे क्षेत्र सम्मिलित है। क्षेत्रफल मे यद्यपि **रामकोला-तातापानी क्षेत्र** ८०० वर्गमील है, किन्तु गोडवाना काल की कोयलादार शिलाएँ केवल १०० वर्गमील मे पाई जाती है और यहाँ का कोयला अच्छा नही है। इस क्षेत्र के दक्षिण-पश्चिम मे **झिलमिली प्रदेश** से अच्छा कोक बनाने योग्य कोयला मिलता है। यहाँ की तहे क्षैतिज हैं जिससे कोयला निकालने मे बहुत सुभीता रहता है। इस क्षेत्र के दक्षिण और केन्द्रीय भाग मे उत्तम कोयले का परिमाण अधिक है, किन्तु ये भाग रेलवे से दूर हैं।

दक्षिण छत्तीसगढ़ और कोरिया के क्षेत्र—छत्तीसगढ मे कोरबा, माड नदी की घाटी तथा रामपुर नामक स्थान मे कोयला मिलता है। रामपुर का नाम **रायगढ़-हिंगिर क्षेत्र** मे भी है। यहाँ निम्न श्रेणी का कोयला मिलता है। यह क्षेत्र २०० वर्गमील से सम्बलपुर से २४ मील उत्तर मे है। कोरिया क्षेत्र मे अनेक स्थानो पर

हेलुगकियाग	—	५,०००	३,६८०
हेपो	६७५	२,०८८	२
जेहोल	—	४,७१४	—
कियांग्सू	२५	१६२	—
किरीन	—	५,५८१	—
लायोनिंग	३६	२,६०६	—
शान्सी	३६,४७१	८७,६८५	२,६७१
शान्तुग	२६	१,६१३	—
सेचवान	२६३	३,५४०	—
समस्त चीन का योग	४५,८७०	२२६,७८२	७,८८४

साम्यवादी अनुमान के अनुसार चीन के कुल भंडार १५०० फीट की गहराई तक ४४५ बिलियन टन के है।[१५]

इन कोयले के प्रदेशो को ६ मुख्य क्षेत्र मे बाँटा जा सकता है.—

(१) **शान्सी और शेन्सी क्षेत्र**:—यह चीन का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है। इसमें कोयले की समस्त राशि १६,६०,७७० लाख टन है जो समस्त चीन की सुरक्षित राशि का ८१% है। यही कारण है कि यह क्षेत्र केवल चीन का ही नहीं वरन् ससार के बड़े क्षेत्रों मे से एक है। संसार मे पेंसिलवानिया के विशाल भंडार के पश्चात् शान्सी तथा शेन्सी का ही स्थान है। इस क्षेत्र की मुख्य खानें श्यूसन तथा केलान है। अकेले शान्सी मे चीन की ५०%कोयले की सुरक्षित मात्रा है परन्तु उत्तरी चीन मे कोयला भी ऐसे मोटी तहों के नीचे दबा होने के कारण आसानी से नहीं निकाला जा सकता। दक्षिणी पश्चिमी भाग मे भी कोयले के महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। इन दोनो का क्षेत्रफल ४,००० वर्गमील है। इसमे ३० फुट कोयले की मोटी तह है।

(२) **पीपिंग क्षेत्र**—यह क्षेत्र शान्सी पठार के पूर्व मे उत्तरी चीन के मैदान की सीमा पर स्थित है। यहाँ कोयले के अनेको छोटे-छोटे क्षेत्र हैं जिनकी सख्या लगभग ४० है। कुछ क्षेत्रो मे उत्तम प्रकार का एन्थ्रेसाइट कोयला पाया जाता है। ये क्षेत्र पीपिंग से हैकाव्ड जाने वाले रेल मार्ग के निकट स्थित हैं इसीलिए यहाँ का उत्पादन आजकल काफी बढ गया है।

(३) **शान्तुंग क्षेत्र**—इसके अन्तर्गत शान्तुंग प्रायद्वीप, उत्तरी क्याम्सू और उत्तर पूर्वी आन्हेव के कोयले के क्षेत्र सम्मिलित हैं। यहाँ पर बिटूमिनस प्रकार का कोयला पाया जाता है। चुमशिग और लूटा में आधुनिक ढग की कोयले की खानें है उत्तरी क्षेत्र के अन्तर्गत सुय्यान, चहार और जेहोल प्रान्तो के अनेकों कोयले क्षेत्र सम्मिलित हैं। यह सब क्षेत्र मंचूरिया की सीमा के निकट पर्वतीय भाग में स्थित है और कोयला भी बहुधा घटिया किस्म का पाया जाता है।

---

15. *J. Shahbad*, **China's Changing Map**, 1956, p. 56.

विश्व के कोयला-भंडार

(दस लाख मीट्रिक टनों में)

देश	एंथ्रासाइट, बिटूमिनस और उपबिटूमिनस	लिग्नाइट और भूरा कोयला	योग	विश्व का %
एशिया:	२,०९४,५७५	२०६,२५५	२,३००,८३०	४६.०
रूस	९९८,०००	२०२,०००	१,२००,०००	२४.०
चीन	१,०११,०००	६००	१,०११,६००	२०.२
भारत	६२,१४३	२,८३३	६४,९७६	१.३
जापान	१६,२१८	४७३	१६.६९१	३
अन्य देश	७,२१४	३४९	७,५६३	.२
उत्तरी अमेरिका:	१३९०,६१७	५१९,८५७	१,९१०,४७४	३८.२
स० राज्य	१,३०३,०९६	४२०,३५०	१,७२३,४१६	३४.४
अलास्का	२२,४९८	७४,९१५	९७,४१३	२.०
कनाडा	६५,०५३	२४,५९२	८९,६४५	१८
यूरोप	५७२,०४५	८७,८९०	६५९ ९३५	१३ १
जर्मनी	२७९,५१६	५६,७५८	३३६,२७४	६.७
इंगलैंड	१७२,२००	— —	१७२,०००	३.४
पोलैंड	८०,०००	१८	८०,०१८	१.६
चैकोस्लोवाकिया	६,४५०	१२,५००	१८,९५०	.४
फ्रांस	११,२२४	१२५	११,३४९	.२
पुर्तगाल	६,०३६	४,२००	१०,२३६	.२
अन्य देश	१६.६१९	१४,२८९	३०,९०८	.६
अफ्रीका:	६९ ७३४	२१०	६९,९४४	१.४
द० अफ्रीका संघ	६८,०१४	०	६८,०१४	१.४
अन्य देश	१,७२०	२१०	१,९३०	—
आस्ट्रेलिया:	१३,९५७	३९,६८९	५३,६४६	१.१
आस्ट्रेलिया	१३,९००	३९,२००	५३,१००	११
अन्य देश	५७	४८९	५४६	—
दक्षिणी-मध्य अमेरिका	१३ ७३३	४	१३,७३७	.२
कोलंबिया	१०,०००	०	१०,०००	.२
चिली	२,११६	०	२,११६	—
अन्य देश	१,६१७	४	१,६२१	—
विश्व का योग	४,१५४,६६१	८५३,९०५	५,००८,५६६	१००.०

है उनसे यही निष्कर्ष निकलता है कि भारत में निम्न श्रेणी का कोयला तो काफी परिमाण में मौजूद है किन्तु धातु-शोधन योग्य उत्तम कोयले के भण्डार बहुत कम हैं। भारतीय कोयला समिति के अनुसार भारत में कोयले का कुल भण्डार ६० अरब टन का है —[१६]

भारत में कोयले का भण्डार

क्षेत्र	जमाव (दस लाख टनो मे)
१. दार्जिलिंग और पूर्वी हिमालय प्रदेश	१००
२. गिरडीह, देवगढ और राजमहल की पहाडियाँ	२५०
३. रानीगंज, झरिया, बुकारो और करनपुरा	२१,०००
४. सोन की घाटी (औरंगा से सुहागपुर तक)	१०,०००
५. छत्तीसगढ और महानदी क्षेत्र (तलचर)	५ ०००
६. सतपुडा क्षेत्र (मोहपानी से कनहान और पंचघाटी)	१,५००
७. वर्धा घाटी (वरोरा से बेदाद मोरू तक)	१७,०००
कुल	६०,०००

कौकिंग कोयले के जमाव
(Reserves of Coking Coal)

क्षेत्र	दस लाख टनो मे
गिरडीह	३०
रानीगंज	२५०
झरिया	६००
बुकारो	३२०
करनपुरा	अज्ञात
योग	१,२००

बंगाल, बिहार और उड़ीसा के कोयले के क्षेत्र

भारत की कुल उत्पत्ति का लगभग ९०% कोयला इन तीनों राज्यों की खानों से प्राप्त होता है। यह सभी क्षेत्र दामोदर नदी की घाटी में फैले हैं। कलकत्ते से १२०-१५० मील उत्तर पश्चिम की ओर दामोदर घाटी का सबसे पूर्व वाला रानीगंज का कोयला-क्षेत्र है। इसका क्षेत्रफल ६०० वर्ग मील है। यहां पर कोयला

16. National Planning Committee on Fuel & Power, 1948.

(१) कोयला जलाने की रीतियों में सुधार अथवा उसका गैस या बिजली द्वारा अप्रत्यक्ष उपयोग। ब्रिटेन व जर्मनी तथा रूस में बहुत-सा कोयला इन दोनों ही कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य ढंग भी कोयले को जलाने तथा उसका प्रयोग में लाने के लिए निकाले गये हैं। इन ढंगों में कोयले को तरल बनाकर उसका प्रयोग किया जाता है। साधारणतः ६०% कोयले और ४०% तेल का मिश्रण भी काम में लाया जाता है। इस मिश्रण का लाभ यह है कि उसकी गर्मी की शक्ति साधारण कोयले से कहीं अधिक होती है तथा वह थोड़े-से स्थान में ही रखा जा सकता है और यह तेल से भी सस्ता पड़ता है।

(२) तेल रूपी ईंधन का प्रयोग अब औद्योगिक क्रियाओं में बढ़ रहा है। इसका मुख्य कारण डीजल एंजिनों का विकास होना है। समुद्री यातायात में अब ऐसे जहाजों का चलन हो गया है जिसमें ईंधन के रूप में तेल का प्रयोग अधिकाधिक किया जाने वाला है। सन् १९१८-१९ में केवल ३४% जहाज तेल से चलते थे, सन् १९२५-२६ में ६८%, तथा अब ८०% से भी अधिक जहाज तेल से चलाये जाते हैं।

(३) विश्व के विभिन्न देशों में अनुकूल परिस्थितियों में जल-विद्युत शक्ति का उत्पादन दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। उदाहरण के लिए स० रा० अमेरिका में जल-विद्युत शक्ति ने १९१२ में सम्पूर्ण शक्ति के ३% की पूर्ति की थी, १९२१ में ५% और अब लगभग १०% पूर्ति करती है।

इन सब कारणों के होते हुए भी विश्व में कोयले का उपयोग बढ़ रहा है क्योंकि अब भी वाष्प सर्वाधिक शक्ति का स्रोत माना जाता है—उद्योगों के लिए भी और रेल के एंजिनों के लिए भी।

गौण-वस्तुएँ (By-products of Coal)

कोयले से कई बहुमूल्य गौण-वस्तुएं भी प्राप्त की जाती हैं। अनुमान लगाया गया है कि इनसे २ लाख से अधिक गौण-वस्तुएं प्राप्त की जाती हैं।[18] कोयले से यह वस्तुएँ प्राप्त करने के लिए निम्न ढंग काम में लाये जाते हैं :—

(१) **उच्च तापमान पर कोयले का जलाना** (High Temperature Carbonization)—इस क्रिया के अन्तर्गत कोयले को अधिक तापक्रम पर भट्टियों में जलाया जाता है। कोयले को जला कर उससे गैस निकाल दी जाती है और अच्छी प्रकार बुझा हुआ कोयला या 'कोक' प्राप्त कर लिया जाता है। निकली हुई गैसों से गौण वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। ऐसी भट्टियों को 'Bee-hives' कहते हैं। एक दूसरे प्रकार की भट्टी में कोयले को इस प्रकार जलाया जाता है कि उससे केवल गैस ही तैयार होती है।

(२) **कोयले को धीमे तापक्रम पर जलाना** (Low Temperature Carbonization)—इस ढंग के द्वारा कोयले को नीचे तापक्रम पर जलाया जाता है। इसमें पहिली क्रिया की अपेक्षा अधिक परिमाण में कोलतार और तेल प्राप्त होता है।

18. *Smith, Phillips & Smith*, **Op. Cit.**, p. 304.

६ नम्बर से १८ नम्बर तक की तहों से ही बनता है। झरिया क्षेत्र रागस्त भारत का ५०% कोयला उत्पन्न करते हैं। दक्षिणी पूर्वी रेलवे इस क्षेत्र को कलकत्ता जोड़ती है।

गिरडीह क्षेत्र—यह क्षेत्र हजारी बाग जिले में है। इसका क्षेत्रफल केवल ११ वर्गमील हैं, जिसमें कोयले वाली जलजे शिलायें केवल ७ वर्गमील में ही मिलती है। ये कोयले की शिलायें 'बराकर' श्रेणी की हैं, परन्तु यहाँ के कोयले की मुख्य विशेषता यह है कि उससे अति उत्तम प्रकार का स्टीग-कोक तैयार होता है। यहाँ की प्रसिद्ध तहें कडहरबाडी और पहाड़ी की सीम कहलाती है। इस तह मे ४ करोड टन कोयला होने का अनुमान लगाया गया है। यह कोयला धातु शोधन में व्यवहृत होता है।

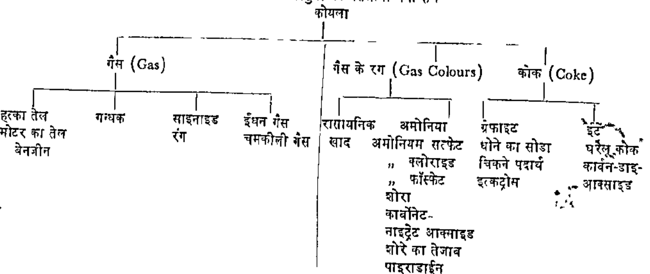
बुकारो क्षेत्र—यह क्षेत्र झरिया के पश्चिम मे है और दो भागो मे बंटा है—पूर्वी बुकारो-और पश्चिमी बुकारो। दोनो का क्षेत्रफल मिलाकर २२० वर्गमील है। यह क्षेत्र ४० मील लम्बा और ७ मील चौड़ा है। यहाँ भी कोक बनाने योग्य उत्तम कोयला मिलता है। यहाँ ६ करोड टन कोयला होने का अनुमान किया जाता है।

करनपुरा क्षेत्र—ऊपरी दामोदर की घाटी मे बुकारो क्षेत्र मे दो मील पश्चिम मे यह क्षेत्र वर्तमान है। इस क्षेत्र के भी दो भाग है—उत्तरी और दक्षिणी करनपुरा जिनका क्षेत्रफल क्रमशः ४७५ और ७० वर्गमील है। इस क्षेत्र की विशेषता यह है कि यहाँ पर कोयले की तह अधिक मोटी पाई जाती है। यहाँ ६० फीट मोटी तहें बहुत सी हैं। इस क्षेत्र में कुल कोयले का दो प्रतिशत निकाला जाता है। यहाँ ६·५ करोड टन कोयला होने का अनुमान है।

उपर्युक्त पांच क्षेत्रो के अतिरिक्त बिहार-उडीसा मे रामगढ़ (दामोदर घाटी), रामपुर (सम्बलपुर) तथा पलामाऊ के तीन क्षेत्र औरंगा हुटार और डाल्टनगज और उड़ीसा के तालचर इत्यादि प्रसिद्ध क्षेत्र हैं। औरंगा क्षेत्र का क्षेत्रफल ६७ वर्गमील है। यद्यपि यहाँ कोयला की तह बहुत है। किन्तु यह कोयला निम्न श्रेणी का है। हुटार क्षेत्र का क्षेत्रफल ५७ वर्गमील है। यहाँ साधारण श्रेणी का बराकर कोयला १२ फीट की तहो तक मिलता है डाल्टनगज क्षेत्र का कोयला निकृष्ट श्रेणी का है। इसका क्षेत्रफल १२ वर्गमील है। उडीसा के तलचर क्षेत्र का क्षेत्रफल २०० वर्गमील है, यह ब्राह्मी नदी की घाटी मे हैं। यहाँ कोयले का जमाव १८ करोड टन मे कूंता गया है।

मध्य प्रदेश के कोयला क्षेत्र—भारत के इस भाग मे कोयले का पता सन् १८२६ मे ही लग चुका था। मध्य प्रदेश के मुख्य क्षेत्र उमरिया, सुहागपुर और सिगरौली मे हैं। (१) उमरिया का क्षेत्रफल केवल ६ वर्गमील है। यहाँ कोयले मे राख और वाष्प का अश अधिक होता है। इस क्षेत्र मे ८ करोड टन कोयला होने का अनुमान है। यह क्षेत्र कटनी के निकट है। (२) सोहागपुर क्षेत्र १२०० वर्गमील मे फैला है। यहाँ कोयले की कई तहें हैं। (२) रीवाँ प्रदेश मे सिगरौली क्षेत्र ६०० वर्गमील मे फैला है। यहाँ कोयले की तहे ६ फीट से १८ फीट की मोटाई तक पाई जाती हैं। यद्यपि मध्य प्रदेश मे कई स्थानों मे कोयला पाया जाता है, किन्तु कुछ क्षेत्र तो रेल इत्यादि से दूर हैं और बहुतों का कोयला बिहार-उडीसा के क्षेत्र के कोयले

नीचे के चार्ट मे कोयले से प्राप्त होने वाली विभिन्न वस्तुओं को बतलाया गया है। [२०]



20. *Freeman and Raup*, **Essentials of Geography**, 1949, p. 327.

कोयला मिलता है। यहाँ पर कुरासिया—क्षेत्रफल ४८ वर्गमील और कोरियाग आदि नये क्षेत्र हैं।

आंध्र के क्षेत्र—आंध्र राज्य में गोंडवाना काल की चट्टानें ३८०० वर्गमील भूमि में फैली है। यहाँ सिगरेनी नामक क्षेत्र अधिक प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र में बराकार श्रेणी की शिलायें ८ वर्गमील में पाई जाती है। यहाँ पर चार तहे है, जिनमें सबसे बडी तह ३४ से ६७ फीट तक मोटी है। यह क्षेत्र दक्षिण भारत के पास है अतः यहाँ का कुल कोयला दक्षिणी भारत की रेलो और कारखानो मे खप जाता है।

टर्शरी युग का कोयला—सम्पूर्ण भारत का २% कोयला टर्शरी युग की चट्टानों से प्राप्त होता है। इसके मुख्य क्षेत्र राजस्थान और असम है। राजस्थान मे बीकानेर डिविजन से **पलाना** नामक क्षेत्र से कोयला निकाला जाता है। यहाँ पर केवल एक ही तह है, जिसकी मोटाई पृथ्वी तह पर केवल ६ फीट है, परन्तु नीचे कही कही यह ३० फीट मोटी हो गई है। यहाँ का कोयला 'लिग्नाइट' वर्ग का है जिसमे उद्भिज रेशे दिखलाई पडते हैं।

असम मे कोयला पूर्वी नागा पर्वत के उत्तर-पश्चिम ढाल पर लखीमपुर तथा शिवसागर जिलो मे पाया जाता है। यहाँ का सबसे बडा क्षेत्र **माकूम** है जो लगभग ५० मील लम्बा **नामदाग-लीडो** कोलक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र की तहो की मोटाई अधिकतर ५० फीट है। यहाँ ६०० लाख टन कोयला होने का अनुमान लगाया गया है। यह उत्तम किस्म का गैस बनाने योग्य कोयला है किन्तु इसमे गधक का अंश अधिक होता है। इस क्षेत्र के अतिरिक्त जयपुर क्षेत्र है जो २५ मील की लम्बाई मे फैला है और जहाँ कोयले का जमाव २०० लाख टन है। **नजीरा क्षेत्र—झांजी** और **देसीय** नामक क्षेत्र भी उल्लेखनीय हैं। यद्यपि यहाँ के कोयले में भी गधक का अंश अधिक है, किन्तु वैसे यह कोयला बडा उत्तम है जिससे कोक भी बन सकता है। असम का प्राय सब कोयला रेलो, स्टीमरो और असम के चाय के कारखानों मे ही काम आ जाता है।

विश्व में कोयले के भण्डार (Coal Reserves of the World)

विश्व मे कोयले के अनुमानित भण्डार इतने विशाल है कि भविष्य मे किसी भी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नही होनी चाहिये थी। परन्तु सब महाद्वीपों एव देशो मे कोयले का वितरण इतना असमान है कि कई देशो के लिए कोयले की कमी एक समस्या बनी हुई है।

एन्थ्रेसाइट, बिटूमिनस एव लिगनाइट कोयला मिलाकर विश्व के गर्भ में ८००० बिलियन टन कोयला छुपाये हुए हैं जो कि अभी के उत्पादन की दृष्टि से आने वाले हजारो वर्षों के लिए पर्याप्त है। कुछ विद्वानो का मत है कि यह कोयले के भंडार जो कि ६००० तक पाये जाते हैं आने वाले ४००० वर्षों के लिये पर्याप्त है। अगले पृष्ठ का तालिका मे कोयले के भण्डारों को बताया गया है[17].—

अलग पृष्ठ की तालिका के अध्ययन से निम्न बातें स्पष्ट होती हैं :—

17. *Smith, Phillips & Smith*, **Op. Cit.**, p. 297.

वार्षिक उपभोग २ से ३ अरब टन तक का है। यदि इसी अनुपात में कोयले की माँग बढ़ती गई तो शायद कोयले के ज्ञात भण्डार १५० वर्षों से अधिक न चल सकें।

कई एक ऐसे ढंग एवं प्रयोग हैं जिनके द्वारा कोयले को नष्ट होने से बचाया जा सकता है[21]:—

(१) कोयले को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में रेलों को कोयले का उपभोग करना पड़ता है। अमेरिका एवं इंगलैंड में परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि यदि इन्हीं खानों के पास में बिजली पैदा करके (जो कि कोयले के जलाने से प्राप्त होगी) लौह उद्योग केन्द्रों को भेज दी जाय तो रेलों के उपभोग में कमी होगी। इसके अतिरिक्त एक स्थान से दूसरे स्थान तक कोयला ले जाने में जो चूरा होता है वह भी नहीं होगा; शहरों में भी स्वच्छ हवा और वातावरण स्वच्छ बना रहेगा। विदेशों से जो कोयला मँगाया जाय उसको बन्दरगाहों में जला कर उससे विद्युत शक्ति प्राप्त करली जाय जो वहाँ से देश के आन्तरिक भागों में भेजी जा सके।

(२) जब किसी वाष्प यन्त्र में कोयला जलाया जाता है तो उसकी शक्ति का १५% का ही उपयोग होता है और बाकी ८५% शक्ति वायुमण्डल में नष्ट हो जाती है। जब इन १५% से बिजली पैदा की जाती है तो ६०% कोयले का ही ठीक-ठीक बिजली में उपयोग होता है। अतः उपयोग बढ़ाने के लिए कोयले में से गैसोलीन, गैस आदि का विदोहन बिना कोयले की ज्वलनशीलता को प्रभावित किये जाना चाहिये। साथ ही यह भी देखा गया है कि १ टन पाउडर कोयला ज्यादा शक्ति प्रदान करता है बनिस्वत १ टन ठोस कोयले के।

(३) कोयले का एक बहुत बड़ा भाग खानों से निकालते समय खानों की दीवालों, खम्भों आदि के साथ रह जाता है जिसके परिणामस्वरूप कभी-कभी दीवालें अत्यधिक असतुलित होकर गिर जाती हैं और अनेक व्यक्ति मरे जाते हैं और हजारों टन कोयला भी नष्ट होता है। साधारण दशा में विशेष सावधानी पर ऐसा खुले एवं निर्जन क्षेत्र में किया जा सकता है, परन्तु जिन स्थानों (खानों) की भूमि पर घर बने होते हैं ऐसे स्थानों पर सारे के सारे घरों के बैठने की आशंका बनी रहती है। इसको बचाने के लिए खानों में स्थान-स्थान पर सीमेंट एवं कंकरीट के खम्भे बना दिये जायँ और कोयले के खम्भों को एवं दूसरे स्थानों से कोयला निकाल लेना चाहिए।

21. *E. Huntington and E. B. Shaw*, **Principles of Human Geography**, 1959, (Indian Ed.), pp. 380-81.

(१) संसार के सभी देशों मे कोयले के भण्डार समान नही हैं ।

(२) एशिया मे संसार भर के कोयले के भण्डार का ४६% है, किन्तु सबसे अधिक भण्डार स० राज्य अमेरिका मे पाये जाते है, जहा संसार के कुल भण्डार का अनुमानित ३४% है । उ० अमेरिका में विश्व के ३८% भण्डार पाये जाते हैं ।

(३) सयुक्त राज्य के अनन्तर रूस मे २४% भण्डार पाये जाते हैं ।

(४) यूरोप का महत्व इनके पश्चात् आता है—केवल १३%, किन्तु इसके भडार विक्रय स्थलो के निकट हैं ।

(५) अफीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अमेरिका के भण्डार नगण्य हैं—क्रमश: १·४%, १·१%, और ·२% ।

(६) ससार मे सबसे अधिक भण्डार एन्थ्रेसाइट और बिटूमिनस कोयले के पाये जाते हैं । यह ससार के कुल सचित कोष का ८०% है और २०% लिगनाईट का है ।

(७) विश्व का ५०% एन्थ्रेसाइट और बिटूमिनस एशिया मे और लगभग २५% उत्तरी अमरीका मे पाये जाते है ।

कोयले के भण्डार के इस असमान वितरण का प्रभाव औद्योगिक उन्नति पर पडा है । इसी कारण आज यूरोप और उत्तरी अमेरिका के देश संसार के औद्योगिक विकास में अग्रणी है तथा सभ्यता और सस्कृति के केन्द्र बन गये हैं ।

कोयले का उपयोग (Utilization of Coal)

विभिन्न देशो मे कोयले के उपयोग की मात्रा और उसके विभिन्न उपयोगो में बडी विषमता पाई जाती है । द्वितीय महायुद्ध के पूर्व विश्व के कोयले के उत्पादन का $\frac{3}{4}$ भाग सयुक्त राज्य, इगलैड, जर्मनी, रूस और कनाडा द्वारा उपभोग मे लाया जाता था । इन सभी देशो मे लगभग ६०%कोयला औद्योगिक कार्यों, विद्युत उत्पादन और गैस में प्रयुक्त होता था । आज भी कनाडा में ४१%कोयला यातायात मे प्रयुक्त होता है । केप वर्डी द्वीप में ९१%कोयला जहाजों के ईंधन के रूप मे काम में लिया जाता है जब कि रूस मे यह उपभोग केवल १$\frac{1}{2}$% ही है । नार्वे मे ७७% घरो को गर्म रखने मे होता है । सयुक्त राज्य मे १९६० में २८० लाख टन एन्थ्रेसाइट घरों को गर्म करने तथा लगभग १०६० लाख टन बिटूमिनस विद्युत उत्पादन और इतनी ही मात्रा इस्पात के कारखानो मे काम आती थी । भारत में कोयले के उत्पादन का ३४%रेलों मे, ७% जहाजो और निर्यात मे तथा शेष लोहे और इस्पात सूती कपड़े, ईंटो के भट्टे, चाय, कागज, जूट, सीमेन्ट, रासायनिक पदार्थों के उद्योगों तथा घरेलू उपयोगों मे आता है ।

महीन टूटा हुआ और घटिया कोयला (जिसकी मांग कम है) अधिकतर ईंधन की ईंटें (Briquettes) तथा गोले तैयार करने मे प्रयुक्त होता है । यह कार्य अधिकतर फ्रास, हॉलैंड, ब्रिटेन, जर्मनी और बेलजियम मे किया जाता है । इन ईंटो का उपयोग घरेलू कार्यो मे और विद्युत-कारखानों मे किया जाता है । रूस और जर्मनी में भूरे कोयले से गैस और तेल भी प्राप्त किया जाता है ।

कोयले की मुख्य मांग ईंधन के रूप में होती है । इस मांग पर कई बातो का प्रभाव पड सकता है । इनमें मुख्य ये हैं :—

था। इस कारण यह कहना ठीक न होगा कि सबसे पहले तेल का व्यवसाय अमेरिका मे प्रारम्भ हुआ। पर इतना अवश्य है कि विस्तृत पैमाने पर तेल व्यवसाय का विकास अमेरिका में ही हुआ। सन् १८५९ मे पूव तेल निकालने के लिए कुओं को हाथ से खोदा जाता था और कभी-कभी पानी की खोज मे तेल मिल जाता था। तेल के इतिहास मे सन् १८५९ ई० का महत्व अभूतपूर्व है, क्योंकि इसी वर्ष पेन्सिलवानिया के तितुसविली (Titusville) स्थान पर तेल के लिए प्रथम कुआँ यन्त्र मे खोदा गया। यह कुआँ ६९ फीट गहरा था और इसमे २५ बैरल तेल निकाला जाता था।[3] तेल, का उत्पादन एव उपभोग इसके बाद बडी ही तेजी के साथ बढ़ने लगा। इसका मुख्य कारण यह था कि यह तेल ह्वेल मछली के तेल की तुलना मे कम मँहगा था। फलस्वरूप सभी घरो मे इस तेल का प्रयोग प्रारम्भ हुआ और पचास वर्षों तक ससार मे प्रकाश का प्रमुख साधन बना रहा। इसके बाद विद्युत के द्वारा शहरों की बत्तियाँ टिमटिमाने लगी। फिर भी आज भी मिट्टी के तेल का प्रयोग जलाने के एवं प्रकाश के लिये अनन्य घरो मे उपयोग मे लाया जाता है और भविष्य में भी लाया जायगा। स्पष्टतः पैट्रोलियम ईंधन, चिकनाहट करने और अन्तर्राष्ट्रीय अशांति का मुख्य स्रोत है।[4]

तेल उद्योग एक बडा ही जटिल उद्योग है जिनके अन्तर्गत तेल खोजने (Exploration), उत्पादन करने, साफ करने, उसको स्थानान्तरण करने, वितरित करने और बेचने की क्रियायें सम्मिलित की जाती हैं। इसकी सभी क्रिया विशाल रूप लिये होती है। न केवल अधिक पूंजी की ही आवश्यकता पडती है, वरन उसे ढोने के लिये विशालकाय विशेष प्रकार के बने जहाजो की आवश्यकता होती है, व्यापारिक और राजनीतिक जोखिम तथा तेल निकालने की संभावनाओ की अनिश्चितता आदि भी विशाल पैमाने पर अनुभव होती है। यह उद्योग कितना विशाल है इसका प्रमाण संयुक्त राज्य अमरीका के तेल उद्योग सबन्धी आँकड़ों से लगता है। इस उद्योग मे लगभग २० लाख व्यक्ति लगे हैं। तेल से १२०० किस्म की वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है तथा १५,००० व्यक्ति केवल शोध कार्य मे ही लगे हैं जिनका वार्षिक व्यय १० करोड़ डालर का है।[5]

तेल की उत्पत्ति (Formation of Petroleum)

मिट्टी का तेल प्रायः मैदानो मे साधारणतया: नवीन पर्वतों के किनारे पाया जाता है क्योंकि यहाँ पृथ्वी के भीतरी भागो मे उथल-पुथल कम हुई है, अतः ऊपर की छिद्रहीन चट्टानें टूटती नहीं और गैस तथा तेल सुरक्षित बने रहते हैं। पुरानी चट्टानों के बने पठारी प्रदेशों जैसे अफ्रीका, दक्खन का पठार, ब्राजील, स्कैन्डेनेविया और कनाडा में मिट्टी का तेल नही पाया जाता। यह तेल पर्तदार चट्टानों में ही मिलता है, आग्नेय या परिवर्तित चट्टानों मे नहीं। बालू और चूने के पत्थरों मे तेल उसी तरह से विद्यमान रहता है जैसे स्पंज में पानी। पर्तदार चट्टानें पृथ्वी के धरातल पर भूगर्भिक काल मे ६०० लाख वर्गमील में फैली थी। इनमे से लगभग २२० लाख वर्ग-

---

3. *Jones & Drakenwald*, **Op. Cit.**, p. 402.
4. *J. B. Davis*, **Petroleum and American Foreign Policy.**
5. *A. M. N. Ghosh*, **Op Cit.**, p. 23.

इससे सरलता से जलने वाला धूम्ररहित घरेलू उपयोग में आने वाला 'कोक' बनता है।

(३) कोयले में हाईड्रोजन मिलाकर उसे तरल बनाना (Hydrogenation)—इस क्रिया द्वारा कोयला द्रवित पदार्थ में परिणत हो जाता है। इस क्रिया में कोई ठोस वस्तु नहीं बचती और न कोक या गैस बनाते समय जो उप-वस्तुएँ प्राप्त होती हैं, वे ही निकलती हैं।

उपर्युक्त क्रियाओ मे सबसे महत्वपूर्ण क्रिया प्रथम ही है। ऊँचे तापक्रम पर कोयले को जलाकर मुख्यत ५ वस्तुएँ प्राप्त की जाती है—

(१) कोलतार एव उससे प्राप्त अन्य वस्तुएँ।

(२) अमोनिया और सम्बन्धित अन्य वस्तुएँ।

(३) गैसें।

(४) हल्के तेल और उनसे सम्बन्धित वस्तुएँ।

(५) विविध वस्तुएँ।

अनुमान लगाया गया है कि लगभग २००० पौंड बिटूमिनस कोक-योग्य कोयले से निम्न प्रकार से गौण वस्तुएँ प्राप्त की जाती हैं।[१९]—

(i) १,३०० से १,५०० पौड तक इस्पात बनाने के लिए कोक।

(ii) १८ से २४ पौंड तक विस्फोटक, रासायनिक खाद आदि बनाने के लिए अमोनियम सल्फेट।

(iii) २½ से ३ गैलन तक कोलतार—रग, डामर, सुगन्धि आदि बनाने के लिए।

(iv) ६,५०० से ११,५०० घनफीट गैस—घरेलू उपयोग के लिए।

कोयले का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade in Coal)

विश्व के कुल उत्पादन का १० प्रतिशत कोयला अन्तर्राष्ट्रीय बाजारो में व्यापारिक दृष्टिकोण से आता है। मुख्य-मुख्य निर्यातक देश ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी और संयुक्त राज्य हैं। ये तीनों देश विश्व के ¾ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की पूर्ति करते हैं। फ्रांस, कनाडा एवं इटली ये तीनों देश कोयले के सबसे बडे आयातक हैं। तीनों देश विश्व के कोयले के बाजार से ½ कोयला आयात करते हैं। फ्रांस और इटली कोयले के लिए इंगलैंड और जर्मनी पर तथा कनाडा सयुक्त राज्य पर निर्भर रहता है।

इनके अतिरिक्त भी विश्व के प्राय सभी महाद्वीपों के देशों में कोयले का विस्तृत बाजार के रूप में आयात-निर्यात होता रहता है।

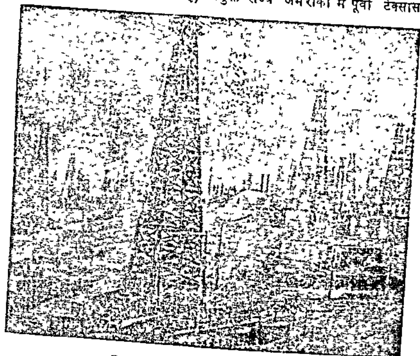
कोयले का संरक्षण (Conservation of Coal)

कोयले का महत्व आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र में लोहे के बाद में सर्वाधिक है, अत: इसका उपयोग बहुत ही सावधानी से करना चाहिए। आज विश्व में कोयले का

---

19. Ibid, p. 304

साधारणतया मिट्टी का तेल ३,००० फीट से लगाकर ७,००० फीट की गहराई तक पाया जाता है। जिन स्थानो मे नीचे कोयला रहता है, उन कुओं का आकार छोटा और गहराई अधिक होती है। आकार और उत्पादन दोनो की दृष्टि से तेल क्षेत्र एक दूसरे से भिन्न होते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका मे पूर्वी टेक्सास का



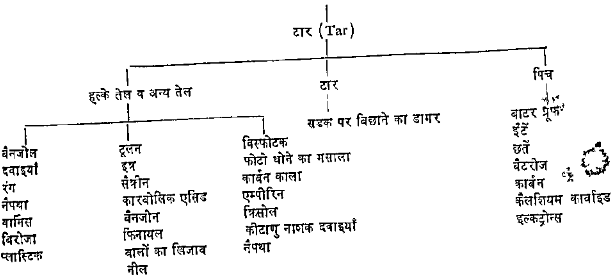
चित्र १३० मिट्टी के तेल के कुएं

तेल क्षेत्र आकार मे ससार मे सबसे बडा है। यह लगभग ४० मील लम्बा और ७ मील चौडा है। इसमे अब तक २५,८०० तेल के कुएं खोदे जा चुके हैं। इस क्षेत्र मे लगभग ६५ करोड टन तेल कूता जाता है। संसार में केलीफोनिया प्रान्त मे सबसे गहरा कुआ पाया जाता है। इसकी गहराई १५,००० फुट है। साधारणतया एक कुएं से ४ से ७ वर्ष तक तेल निकाला जाता है। रूस मे बाकू मे २४,००० फीट की गहराई से तेल प्राप्त किया जाता है।[७]

जो मिट्टी का तेल पृथ्वी से निकाला जाता है, उसमे बहुत से अशुद्ध पदार्थ मिले रहते हैं। अत. इसे **पेट्रोलियम** या **अशुद्ध तेल** कहते हैं। हल्के तेलो (Light oils) मे कार्बन की अपेक्षा हाईड्रोजन की मात्रा अधिक रहती है किन्तु भारी तेलों (Heavy oils) में हाइड्रोजन की अपेक्षा कार्बन की मात्रा अधिक होती है।

इसी तेल को साफ करने पर वर्तमान जगत की आवश्यकताओ की पूर्ति के

७. साधारणतः २,००० फीट से कम गहरे कुए को छिछले कुए (Shallow wells) तथा २,००० से ६,००० फुट से उससे अधिक गहराई वाले कुओं को गहरा कुआ (Deep wells) कहते हैं।


टार (Tar)
हल्के तेल व अन्य तेल
टार
पिच
सड़क पर बिछाने का डामर
वाटर प्रूफ
ईंटें
छतें
बैटरीज
कार्बन
कैलशियम कार्बाइड
इल्कट्रोन्स
बैनजोल
दवाइयाँ
रंग
नैपथा
वार्निस
बिरोजा
प्लास्टिक
टूलन
इत्र
सैक्रीन
कारबोलिक एसिड
बैनजीन
फिनायल
बालों का खिजाव
नील
विस्फोटक
फोटो धोने का मसाला
कार्बन काला
एस्पीरिन
क्रिसोल
कीटाणु नाशक दवाइयाँ
नैपथा

उत्पादक क्षेत्र Areas of Production)

विश्व मे तेल के तीन प्रमुख क्षेत्र पाये जाते है —

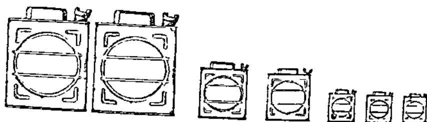
(i) उत्तरी अमेरिका मे ऐप्लेशियन पर्वत से लगाकर सयुक्त राज्य अमरीका मे मध्यवर्ती राज्यो मे होता हुआ, मेक्सिको तथा वेंनेजुएला तक प्रमुख क्षेत्र फैला है। यह क्षेत्र खाडी तथा कैरेबियन क्षेत्र (Gulf Caribbean Field) कहलाता है। इसकी एक शाखा राकी पर्वतो मे होती हुई केलीफोर्निया तक चली गई है।

(ii) दूसरा क्षेत्र मध्य पूर्व का क्षेत्र (Middle EastFields) कहलाता है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत तेल की एक पट्टी फारस से ईराक, सीरिया, पैलेस्टाइन होती हुई रूस और रूमानिया मे कैस्पियन तथा काले सागर के प्रदेशो तक चली जाती है।

(iii) तीसरा क्षेत्र एशिया के दक्षिणी पूर्वी भागो मे ब्रह्मा से आरम्भ होकर इण्डोनेशिया, फिलीपाइन्स और जापान द्वीप तक फैला है।

प्रमुख देशों में तुलनात्मक तेल उत्पादन

मिट्टी के तेल का उत्पादन सन् १९०५ के बाद से निरन्तर बढता रहा है। सन् १८६५ में तेल का उत्पादन केवल ७८६ ह० टन था। सन् १९०४ में यह १९,८५७ ह० टन और १९१५ में ५६,५५६ ह० टन था। तब से इसका उत्पादन निरन्तर बढ रहा है। १९२० में ९६,९१० ह० टन, १९३० में १९६,४७५ ह० टन; १९४० में २९४,८०० ह० टन, १९५० में ५३६,६०० ह० टन और १९५५ में ७६३,११७ ह० टन और १९६० में १,०५०,९७४ हजार टन तथा १९६१ में १,११५,००० हजार टन हो गया।



स० रा० अमेरिका रूस , वैनेजुएला रूमानिया फारस पू.द्वी.

चित्र १३१. प्रमुख देशो में तुलनात्मक तेल उत्पादन

विश्व में कच्चे तेल का उत्पादन[9]
(००० मैट्रिक टनों में)

	१९५८	१९६०	१९६१
१. मध्य पूर्व के देश			
कुवैत	७०,२१७	८१,८६३	८२,०८०
सऊदी अरब	५०,१२८	६२,०६५	६९,१२०

9. Report of the Oil Price Enquiry Committee, and Britanaica Book of the year, 1963, p. 393.

अध्याय ३१

शक्ति के स्रोत (क्रमशः)

खनिज तेल या मिट्टी का तेल

(MINERAL OIL OR PETROLEUM)

पेट्रोलियम का शाब्दिक अर्थ है चट्टानी तेल (Rock Oil)। तेल हाइड्रोजन और कार्बन के प्रज्वलनशील उस मिश्रण को कहते हैं जो पृथ्वी के गर्भ से स्वयं निकलता है या निकाला जाता है।[1]

तेल का महत्व

तेल के प्रयोग मे आने से पहले मनुष्य को बहुत युगो तक अन्य प्रकार के तेलो पर निर्भर रहना पडा जैसे वनस्पति तेल और जीवधारियों से प्राप्त तेल। रात्रि के समय घरो को प्रकाशित करने के लिए यूरोप मे जैतून का तेल काम मे लाया जाता था। अमरीका और उत्तरी यूरोप मे ह्वेल मछलियो के तेल से घरों मे उजाला किया जाता था। वैसे तो पेट्रोलियम का प्रयोग हजारो वर्षों से होता आया है, लेकिन उन्नीसवी शताब्दी के मध्य मे उसका वास्तविक प्रयोग प्रारम्भ हुआ। कुछ लोगो का मत है कि ईसाई-युग (Christian Era) के पूर्व चीन मे तेल के कुएँ हाथों से खोदे जाते थे और प्राकृतिक गैस को खारी पानी मे सुखाने के काम मे लाते थे। मिस्र देश मे तेल का प्रयोग बहुत पुराना है, लेकिन वह आधुनिक ढग से प्रयुक्त नही होता था, बल्कि यहाँ पर मृतकों (Mummies) के लपेटने के कपडे गाढे तेल मे भिगोये जाते थे। ईसा के ४००० वर्ष पूर्व बेबेलोनिया और निनेवा के भवन-निर्माण मे चूने की तरह एस्फाल्ट का प्रयोग होता था।[2] आज से एक हजार वर्ष पूर्व ब्रह्मा का यनगयान तेल क्षेत्र विकसित अवस्था मे था। सयुक्त राज्य अमरीका और जापान मे एक प्रकार का तेल जलाया जाता था जिसे वहाँ पुराने निवासी प्रज्वलित जल (Burning Water) के नाम से पुकारते थे। रूमानिया देश में तेल का प्रयोग अठारहवीं शताब्दी में होता था। उत्तरी अमरीका के आदि-निवासी तेल का प्रयोग सभी प्रकार की बीमारियो को ठीक करने के लिए करते थे। ईराक मे इसका उपयोग सडको पर छिडक कर आग लगा देने में किया जाता था जिससे शत्रुओ की सेना उधर से न निकल सके। यूनान मे भी सैनिक जहाजों पर तेल छिड़ककर जला दिया जाता था।

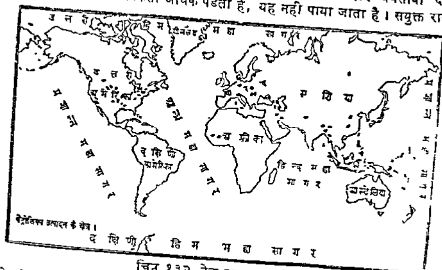
तेल का औद्योगिक विकास उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ से होता है। सयुक्त राज्य के तेल व्यवसाय से पूर्व तेल ब्रह्मा से लन्दन के बाजारों मे आकर बिकता

---

1. "Petroleum is an inflamable mixture of oily hydro-carbons that exudes from the earth or pumped up." *W. H. Emmons*, **Geology of Petroleum**, Chapter I.

2. *Case and Bergsmark*, **College Geography**, p. 675.

मिट्टी के तेल के वितरण के सम्बन्ध में यह बात महत्वपूर्ण है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के अतिरिक्त संसार के उन बड़े-बड़े औद्योगिक और व्यवसायी देशों में जिन्हें इसकी आवश्यकता अधिक पड़ती है, यह नहीं पाया जाता है। सयुक्त राज्य



चित्र १३२. तेल उत्पादन क्षेत्र

में भी अधिकांश उत्पादन क्षेत्र औद्योगिक प्रदेशो से दूर है। मिट्टी के तेल का अभाव राजनीतिक झगड़ो की जड है। इस अभाव को दूर करने के लिए ब्रिटिश पूंजीपतियो ने पहले ही संसार के अनेक भागो के मिट्टी के तेल के क्षेत्रो पर अपना प्रभुत्व जमा लिया था, यद्यपि इस समय ये क्षेत्र ब्रिटेन के हाथ से निकल चुके हैं। रूस, मैक्सिको और ईरान से ब्रिटिश तेल कम्पनियाँ निकाल दी गई हैं। आज भी दुनियाँ के शक्तिशाली राज्य मिट्टी के तेल के क्षेत्र अपने अधिकार में करने का प्रयत्न कर रहे हैं। सौभाग्यवश मिट्टी के तेल के वृहद भण्डार मध्यपूर्वी देशों में हैं जो निर्बल हैं। अत कहा जाता है कि ये देश विश्व मे अशाति उत्पन्न करने मे सहायक हो सकते हैं।[10]

संयुक्त राज्य अमेरिका

सयुक्त राज्य अमेरिका विश्व में सर्वाधिक तेल उत्पन्न करता है। यहाँ तेल क्षेत्र लगभग ६,००० वर्ग-मील मे फैला है जिसमे ५ लाख से अधिक तेल के कुएँ है। सन् १८५७ से १८८३ तक सयुक्त राज्य ने विश्व के उत्पादन का ८० से ९९% तक तेल उत्पन्न किया किन्तु १८८३ से १९०१ के बीच यह प्रतिशत केवल ४१% रह गया। सन् १९०६ से १९४२ तक पुन. यह प्रतिवर्ष ६०% तक उत्पादन करता रहा। अब यह प्रतिशत लगभग ३६ तक रह गया है क्योंकि मध्यपूर्व के तेल क्षेत्र अधिक उत्पादन करने लग गये हैं। सन् १८५९ से अब तक लगभग ४८ अरब

10 *Smith, Phillips & Smith*, **"Rich Oil land under a weak and corrupt Govt. in a strategic location is a menace to world peace"—Industrial and Commercial Geog.**, 3rd Ed., p. 106.

मील मे तेल पाये जाने की सम्भावना है। ये क्षेत्र मुख्यतः उत्तरी ध्रुव प्रदेश, भूमध्य-सागरीय, इण्डोनेशियन, और करेबियन तथा मैक्सिको की खाड़ी मे हैं। इन्ही से विश्व का अधिकाश तेल प्राप्त होता है।[6]

वैसे तो किसी भी समय की जलज शिलाओं (Acqueous Rocks) मे यह पाया जा सकता है किन्तु अधिकतर तृतीय कल्प की जलज शिलाओ से ही मिलता है, क्योंकि यह शिलायें औरो से नई हैं, जिससे पृथ्वी की आन्तरिक गर्मी तथा दवाव का प्रभाव इन पर अधिक नही पड़ा है, अन्यथा मिट्टी का तेल गैस आदि के रूप मे कभी का निकल गया होता। यह विश्वास किया जाता है कि तेल की उत्पत्ति वनस्पति और समुद्र के अनेक छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं (Microscopic organism) के जो पुराने समय मे डेल्टाओ, झीलों और समुद्रो मे रहते थे—दब जाने से हुई है। जब जलज चट्टानें बन रही थी, तो उनमें बहुत से सामुद्रिक जीव-जन्तु भी दब गये। दब जाने पर समय पाकर गर्मी और दबाव के प्रभाव से इन्ही जीव-जन्तुओं की चर्बी खनिज पदार्थों में मिलकर मिट्टी का तेल बन गई। मिट्टी का तेल प्राय बालू, बालू के पत्थर, चिकनी मिट्टी के पत्थर और कही-कही छिद्रदार चूने के पत्थर में पाया जाता है। इन पत्थरों मे भी यह छिद्रहीन पत्थरों की तहो के बीच में छिद्रदार (Porous) पत्थरो में पाया जाता है। क्षितिज अथवा एक ओर को थोडी झुकी हुई जलज शिलाओं की तहो का निर्माण कही-कही पृथ्वी की आन्तरिक हलचलों, खिंचाव तथा संकोचन के प्रभाव से जल की लहरों की बनावट के समान हो जाता है। इन झुकी हुई चट्टानो में ऊँचा उठा हुआ भाग उन्नतोदर (Anticline) और नीचा झुका हुआ नतोदार (Syncline) कहलाता है। मिट्टी का तेल इन्ही ऊपर उठे हुए भागों में बन्द रहता है। ऐसे स्थानो को तेल स्रोत (Oil Pool) कहते है।

तेल प्राय. नमकीन जल और गैसो के साथ मिला रहता है। सबसे नीचे जल रहता है, उसके ऊपर नमकीन तेल और सबसे ऊपर गैस होती है। प्राकृतिक गैस के दबाव पर धरातल के नीचे वाले पानी के दबाव के कारण तेल की कुछ सीमित मात्रा कुछ समय के लिये झरनो या नालों के रूप मे पृथ्वी के धरातल पर बहने लगती (Overflow) है। किन्तु बाद मे इसे पम्प करके निकाला जाता है। कभी-कभी मिट्टी का तेल फव्वारो के रूप मे अपने आप भी भूमि के गर्भ से निकलकर बहने लगता है। किन्तु अधिकाश मे इसे पम्पो द्वारा ही निकालना पड़ता है।

तेल निकालने का नया तरीका

तेल को तरल सोना कहते हैं। इसलिए इसकी एक-एक बूंद कीमती है। तेल निकालने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जिनमें एक है तेल के साथ मिट्टी का निकलना। मिट्टी आने से तेल के पाइप बंद हो जाते हैं। अब इस समस्या का हल करने के लिए डच वैज्ञानिको ने एक नया तरीका अपनाया है जो बड़ा सफल हुआ है। इसके अनुसार तेल पाइपो मे बाहर की ओर प्लास्टिक का एक प्रकार का द्रव लगा दिया जाता है। यह द्रव मिट्टी के कणो को अपने मे चिपका लेता है और तेल के साथ पाइपों के भीतर नही जाने देता।

---

6. *E. B. Shaw*, **World Economic Geography, p. 120.**

क्षेत्रों से आता है। यहाँ तेल का निकालना सन् १८५९ से आरम्भ किया गया। आज कल उत्पादन की दृष्टि से बड़े कुएँ दक्षिण पश्चिम पेन्सिलवेनिया में पाये जाते हैं। इस क्षेत्र के तेल के कुएँ सामान्यतः लम्बे तथा सकरे हैं और उन्नतोदर खाली भागों में स्थित हैं जो उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम की ओर सामान्य बनावट के समानान्तर चले गये हैं। इस क्षेत्र में जो तेल मिलता है वह संयुक्त राज्य का सर्वोत्तम तेल है तथा तेल उद्योग मे "पेन्सिलवेनिया श्रेणी" के नाम से प्रसिद्ध है। इसका आधार पैराफीन वैक्स है और इसमें पर्याप्त प्रतिशत गैसोलीन निकलती है। यह सरलता से साफ भी हो जाता है तथा इसमें गन्धक या दूसरे प्रकार की अपवित्रता नहीं के बराबर है। इस क्षेत्र का, जिसने संयुक्त राज्य के तेल इतिहास में इतना अभूतपूर्व भाग लिया है अब भावी उत्पादक में बहुत थोड़ा भाग रहता है। यदि यहाँ का तेल इतना अधिक अच्छा न होता तो इनमें बहुत से कुओं से तेल निकालने मे कोई लाभ न होता। यहाँ के कुओं में तेल और प्राकृतिक गैस साथ-साथ पाये जाते हैं किन्तु कुछ कुओं में अकेली प्राकृतिक गैस ही मिलती है, तेल नहीं। पेंसिलवेनिया क्षेत्र से अब संयुक्त राज्य का केवल १/३ भाग तेल मिलता है।

(ब) लीमा-इण्डियाना क्षेत्र (Lima-Indiana Fields)

यहाँ ओहियो में सन् १८८४ और इण्डियाना में सन् १९०४ से तेल निकालना आरम्भ हुआ। पूर्व में ओहियो पश्चिम में मिसीसिपी तथा उत्तर में ग्रेट लेक्स को मिलाकर जो एक त्रिभुज बनता है उसमें दो क्षेत्र हैं जो महत्वपूर्ण उत्पादक रहे हैं। लेकिन अब वे अपने वैभव के दिन खो चुके हैं। ये हैं—(१) लीमा इण्डियाना क्षेत्र, (२) इलिनियास क्षेत्र। इसमें से पहला क्षेत्र इरी झील के पश्चिमी कोने से दक्षिण पश्चिम की ओर फैला हुआ है तथा इसका कुछ भाग ओहियो तथा कुछ भाग इण्डियाना में है। मुख्य उत्पादन क्षेत्र ओहियो में लीमा नगर में तथा उसके चारों ओर है। यहाँ पर चूने की चट्टान ही मुख्य आवरण चट्टान (Cap-rock) है। यद्यपि तेल अच्छी किस्म का है लेकिन बहुत मिश्रित है। गंधक मिश्रण का मुख्य पदार्थ है। तेल से गंधक को पृथक करने की प्रणाली में उत्पादन का मूल्य नहीं मिलता जितना पेंसिलवेनिया के तेल का मिलता है। एपलेसियन क्षेत्र के तेल की तरह इस क्षेत्र में भी पैराफीन का आधार है और गैसोलीन के उच्च प्रतिशत होने के साथ-साथ यह बत्ती में जलाने लिए सब से उत्तम तेल का उत्पादन करता है।

(स) इलिनियास क्षेत्र (Illinois)

इस क्षेत्र का विकास सन् १९०५ से ही हुआ है। लीमा-इण्डियाना क्षेत्र के दक्षिण पश्चिम में मिशीगन झील के दक्षिणी कोनों तथा ओहियो नदी के बीच इलिनियास क्षेत्र है। यह एक लम्बा सँकरा उत्पादन प्रदेश है जो उत्तर से दक्षिण तक इलिनियास में कार्क, क्रौफोर्ड तथा लारेंस काउंटी में फैला हुआ है। सम्पूर्ण पट्टी प्रेरी देश में वाबाश नदी पश्चिम की ओर फैली हुई है। इसके मुख्य उत्पादक सलेम, लूडन और सेंट्रलिया जिले हैं। इसका उत्पादन सन् १९३१-३५ में ५० लाख बैरल से बढ़कर १९४० में १४८० लाख बैरल हो गया, किन्तु अब यह घट गया है। इस मुख्य क्षेत्र के अलावा कुछ बिखरे हुए क्षेत्र भी हैं जो कि राज्य के दूसरे भागों में पाये जाते हैं और मुख्य क्षेत्र के पश्चिम की ओर है। यहाँ पर तेल कार्बोनीफरस बालू के पत्थरों से निकलता है और शेष आवरण चट्टान है।

लिए कई प्रकार की वस्तुएँ बनाई जाती हैं। खनिज तेल तीन प्रकार की विधियों द्वारा शुद्ध किया जाता है.

(i) **साधारण स्रवण की विधि** (Topping Plant Process) द्वारा हल्की वस्तुए जैसे गैसोलीन और केरोसीन अलग कर ली जाती है। स्रवण की इस क्रिया में अशुद्ध तेल और भारी चीजें नीचे रह जाती हैं।

(ii) **पूर्ण प्रक्रिया वाली विधि** (Straight Run Process) द्वारा भी तेल का स्रवण किया जाता है और इसके द्वारा अनेक पदार्थ गैसोलीन, केरोसीन, ईंधन, चिकने करने वाले तेल, पराफीन, वैसलीन मोम तथा एस्फाल्ट आदि अलग किये जाते है। इस क्रिया से २५% गैसोलीन प्राप्त किया जाता है।

(iii) **चटकाने वाली विधि** (Cracking Process) के अनुसार कच्चे तेल को लेकर बहुत तेज आँच में बिजली की गर्मी से गर्म किया जाता है और अधिक दवावमय रखा जाता है जिससे तेल के कण अलग-अलग होकर पुनः सगठित हो जाते हैं और कई हल्के पदार्थ जैसे गैसोलीन (६५%) आदि बन जाते हैं।

क्रूड ऑयल से ४३% गैसोलीन; ३८% शोधा हुआ बचा हुआ ईंधन, ५% केरोसीन; २% चिकना करने वाला तेल तथा १२% अन्य वस्तुएँ मिलती हैं।[8]

मिट्टी के तेल मे कार्बन का अश सबसे अधिक होता है। यह ८०%, हाईड्रोजन १३% और आक्सीजन ७% होता है। कुओ से मिट्टी का तेल निकालकर शुद्ध होने के लिए उन केन्द्रों को भेजा जाता है जहाँ तेल शोधने के कारखाने (Refineries) होते है। इस कार्य के लिए टैंकर्स (Tankers) नामक विशेष प्रकार के तेल ले जाने के लिए काम मे लाये जाते हैं। ये टैंकर्स साधारणतः १५,००० बैरल तेल ले जाने की क्षमता रखते है। सयुक्त राज्य मे १००-१०० रेलवे टैंक कार और ५०० टैंकर्स जहाज और हजारो टैंक लारियाँ हैं। मिट्टी के तेल के कुछ क्षेत्र समुद्र-तट से दूर स्थित होते हैं। अतएव इन स्थानो से जहाजो तक कुओ से तेल भेजने के लिए सैंकड़ो मील तक ८" से १२" व्याम वाले नल बिछा दिये जाते है। ईराक के किरकुक क्षेत्र का तेल नलों द्वारा भूमध्यसागर पर स्थित हैफा और ट्रिपोली तक भेजा जाता है। इसी प्रकार ईरान का तेल अबादन की फैक्ट्री को नलो द्वारा भेजा जाता है। सयुक्त राज्य मे तेल के नलों की लम्बाई ४०,००,००० मील है। ईराक, फारस, वैनेजुएला, पीरू और पूर्वी द्वीप समूह से कच्चा तेल जहाजो मे तेल भरकर औद्योगिक देशो को साफ करने के लिए भेज दिया जाता है। अब भारत के असम के क्षेत्र के कच्चे तेल को बिहार मे बरौनी स्थान तक पहुँचाने के लिए ७२० मील लम्बा नल बिछाया जा रहा है जिसका व्यास १४" का होगा। विश्व के प्रमुख तेल शोधने के कारखाने मुख्यतः सयुक्त राज्य के पूर्वी समुद्र तटीय भागों और उ० प० यूरोप में पाये जाते हैं। ये विक्रय स्थलो के समीप हैं। सन् १६५३ मे विश्व मे ६६२ तेल शोधने के कारखाने थे जिनकी क्षमता प्रतिदिन २,३५० लाख बैरल तेल साफ करने की थी। इनमे से ३४६ संयुक्त राज्य में थे जिनकी दैनिक क्षमता ७० लाख बैरल की थी।[8] अब यहाँ ७० कारखाने बनाये जा रहे हैं जिनके फलस्वरूप यह क्षमता १२ करोड़ टन की हो जायेगी

8. *C. F. Jones & G. G. Drakenwald*, **Op. Cit.**, p. 407.

से कोई ३०० मील दूर मध्य महाद्वीपीय क्षेत्र का सबसे बडा क्षेत्र है जो ओकलाहामा तथा कसास मे है। यह एक लम्बी पट्टी है जो कन्सास और ओकलाहामा के पूर्वी भाग मे उत्तर से दक्षिण की ओर फैली हुई है और इसका अन्त कसास के मध्य हो जाता है तथा पश्चिमी किनारा फैला हुआ सा प्रतीत होता है। इस क्षेत्र में बहुत से प्रसिद्ध तेल के कुएँ है जैसे कुशिग, ग्लैन, वार्टरस विल, जैनिग्स, शैमरोक जिन्होंने इस प्रदेश के तेल इतिहास को वैभवशाली बना दिया है। यह क्षेत्र तथा टैक्साज लूसियाना क्षेत्र सयुक्त राज्य के सबसे बडे तेल उत्पादन प्रदेश हैं और मिलकर विश्व का ⅓ तेल उत्पादन करते है और सयुक्त राज्य अमरीका का ४४%।

ओकलाहामा मे प्रतिवर्ष लगभग २०,००० लाख बैरल तेल निकाला जाता है और वहा पर वार्षिक उत्पादन बराबर बढ रहा है। अन्त मे इस क्षेत्र का भी वही भाग्य होगा जो दूसरे क्षेत्रों का हुआ है। इसमें कोई सन्देह नही है। लेकिन निकट भविष्य मे इस प्रकार कोई चिन्ह देखने मे नही आता और आज तक कोई ऐसा क्षेत्र नही हुआ जो इतना अधिक उत्पादन करे।

जैसा कि उत्तरी समूह के अधिकाश क्षेत्रो मे है इस क्षेत्र मे भी तेल कार्बन युक्त बलुई चट्टानो (Carboniferous Sand Stone) से ही आता है जिसमे तेल एकत्रित होता है। तेल के कुयें धनुपाकार भागो मे बडी गुम्वदो (domes) मे पाए जाते हैं और छोटे गुम्वदो मे गैस होती है। इस प्रदेश मे उत्पन्न तेल का लगभग ⅔ भारी तेल होता है जिसे शुद्ध कर चिकना करने वाली वस्तुयें बनाई जाती है और ⅓ हल्का तेल होता है जिसमे गैसोलीन का अनुपात अधिक होता है।

मध्य महाद्वीप क्षेत्र के सब कुओ मे सबसे प्रसिद्ध कुशिग है। इस प्रसिद्ध कुएँ मे सन् १९१७ तक जबकि इसने अधिकतम उत्पादन किया था १७०० लाख बैरल तेल ५ साल मे पहले कुएँ के १९१२ मे खुदने से किया था जो कि उस समय के संयुक्त राज्य के बाद विश्व के सबसे बडे तेल उत्पादक मैक्सिको के बराबर था। यह एक छोटे से उन्नतोदार ढाल पर स्थित है। यह उन्नतोदर ढाल १५ मील लम्बा और २ से ४ मील तक चौडा है और सिमारन नदी पर स्थित एक विन्दु से दक्षिण की ओर ४० मील पश्चिम तक 'तुलसा' नामक स्थान तक, जो आरकन्सास पर है, फैला हुआ है। इस प्रकार यह मध्य महाद्वीप क्षेत्र के दक्षिण-पश्चिमी किनारे पर स्थित है।

इसके पश्चात् दक्षिणी ओकलाहामा और उत्तरी क्षेत्र आते है। इनमे से एक उत्तर तथा दूसरा रैड नदी के दक्षिण मे है जो यहाँ तक ओकलाहामा तथा पश्चिमी धनुपाकार ऊपर उठे हुए भागो मे है जो कि उत्तर मे विचित्र उन्नतोदर कहलाता है तथा दक्षिण मे रैड रिवर अपलिफ्ट (Red River Uplift) कहलाता है। ओकलाहामा के भाग मे उत्पादन क्षेत्र पठार की सबसे ऊँची भूमि के दक्षिण मे है तथा टैक्साज से अधिकाश उत्पादन वर्कबर्नेट क्षेत्र मे होता है जो विचिटा प्रपात से अधिक दूर नही है और विचिटा तथा रैड नदी के बीच मे स्थित है। एक छोटा सा उत्पादन मुख्य क्षेत्र मे पैट्रोलियम के निकट पाया जाता है।

उत्तरी-पश्चिमी टैक्साज के पैन-हैण्डल जिले (Panhardle District) मे बहुत अधिक विकास हो गया है तथा तेल के खपत केन्द्रो के लिए तीन पाइप लाइनें बना दी गई हैं। इस कुएँ से अधिक उत्पादन तथा ओकलाहामा के सेमीनोल कुएँ

ईरान	४०,४६०	५२,०५०	५७,१६८
ईराक	३५,६७०	४७,५००	४८,८१६
कतार	८,२२२	८,२१२	८,३७६
कुवेत (न्यूट्रल जोन)	४,२५८	७,२८४	८,३६८
म० पूर्व तथा उत्तरी अफ्रीका का कुल योग	२१४,७०२	२६४,६७७	२६६,१४८
२ उत्तरी अमरीका			
संयुक्त राज्य	३,३०,१२१	३,४०,१२१	३५४,२८८
कनाडा	२२,२८३	२५,८२७	२६,८४४
योग	३५२,४०४	३७२,६४८	३८४,१३२
३ लेटिन अमरीकी देश			
वेनेजुएला	१,३८,६३६	१,४७,८६३	१५५,८६२
मैक्सिको	१३,३३१	१४,१२५	१६,७१६
अर्जेन्टाइना	५,११४	६,१४६	१२,०८४
कोलम्बिया	६,६२१	७,८६४	७,३६८
कुल योग	१७५,६७३	१६३,२४१	१०,७,७०४
४. साम्यवादी क्षेत्र			
रूस	१,१२,६००	१,४७,६००	१६५,६००
रूमानिया	११,३३६	११,४७३	११,६००
चीन	२,२३०	५,५००	—
कुल योग	१२८,२०५	१६७,२१५	१७६,०३१
५. सुदूरपूर्व			
इंडोनेशिया	१६,१०६	२०,४५१	२१,२८८
ब्रिटिश बोर्नियो	५,२६६	४,६००	४,१७७
जापान	३६७	५२७	
भारत	४२६	४४६	
पाकिस्तान	३०३	३६४	२,०४०
सुदूर पूर्व का कुल योग	२३,२०२	२७,१ ८	२७,४०५
विश्व का कुल योग	६,०७,८६३	१०,४०,६७४	११,१५,०००

इस तालिका से स्पष्ट होगा कि विश्व के तेल के उत्पादन का ३८.७% उत्तरी अमरीका से; १६.५% लैटिन अमरीका से, २३.७% मध्यपूर्व के देशों से; १४.६% पूर्वी यूरोप, चीन, रूस आदि देशों से और शेष सुदूर पूर्व, पश्चिमी यूरोप, अफ्रीका और अन्य देशों से प्राप्त होता है।

यहाँ से तेल सफलतापूर्वक जहाजों के लिए निर्यात कर दिया जाता है या गल्फ स्ट्रीट के तेल साफ करने के कारखानों में भेज दिया जाता है।

(च) कैलीफोर्निया क्षेत्र (California Fields)

उत्पादन की दृष्टि से इसका द्वितीय स्थान है। यदि मध्य महाद्वीप तथा कैलीफोर्निया का उत्पादन मिला दिया जावे तो संयुक्त राज्य का ६/१० उत्पादन हो जाता है। शेष १ १० दूसरे क्षेत्रों में आता है। यहाँ तेल का उत्पादन सन् १८८६ से ही किया गया किन्तु वास्तविक उत्पादन लॉस एन्जलीस और बैकर्सफील्ड क्षेत्रों के मिलने पर ही बढ़ा। यहां के तेल के कुछ कुएँ मैदानों में और कुछ पहाड़ियों में स्थित हैं जैसे दक्षिणी कैलीफोर्निया जिला, सैन जाक्विन घाटी तथा तटीय श्रेणियों में। संयुक्त राज्य अमरीका में तेल के कुल भंडार २७ अरब बैरल के अनुमानित किये गये हैं। वार्षिक उत्पादन (२ अरब बैरल) की गति से ये भंडार १५-२० वर्षों से अधिक नहीं चल सकते इसीलिये यहाँ अब नये भण्डारों की खोज की जा रही है। गल्फ क्षेत्र और महाद्वीपीय ढालों पर तेल की अतुल राशि होने का अनुमान किया गया है। इस समय अमरीका अपनी तेल की आवश्यकता विदेशों से आयात करके पूरी करता है।

मैक्सिको (Mexicon Oil Field)

मैक्सिको में तेल निकालना सन् १८६४ से आरम्भ किया गया। सन् १६१० में मैक्सिको ४० लाख बैरल से कम तेल का उत्पादन कर रहा था। सन् १६२१ में यहाँ २००० लाख बैरल तेल का उत्पादन हुआ जो कि विश्व के कुल उत्पादन का (जो कि उस समय बहुत बढ़ गया था) १/४ था। सन् १६३२ में ३३० लाख बैरल। अब मैक्सिको का स्थान संयुक्त राज्य का उत्पादन में छठा है। यहाँ सन् १६४० में ६२० लाख बैरल तथा १६६० में ७३० लाख बैरल तेल पैदा किया गया। यहाँ का अधिकांश तेल उस लम्बी सकरी पट्टी से आता है जो कि टैम्पीको के उत्तर-पश्चिम में उसके पीछे को स्थित है। यह कैरीबियन सागर के तटीय भागों में है।

मैक्सिको की खाड़ी के पश्चिम किनारे पर रायो ग्रान्डी डेल नार्टे तथा टेहुन्टापैक के स्थल डमरूमध्य के बीच में दक्षिण की ओर मैक्सिको के मुख्य उत्पादन क्षेत्र स्थित हैं। ये दो हैं—पहला टैम्पिको से अन्दर की ओर रायो पैनूको और तोमसी की एस्चुरी के मिलने के स्थान पर स्थित हैं। २० मील और अन्दर चलकर दोनों नदियों के बीच त्रिभुजाकार क्षेत्र में मैक्सिको का उत्तरी तेल क्षेत्र है इस क्षेत्र के मुख्य उन्नत क्षेत्र इबानो के निकट टैम्पिको से ३० मील दक्षिण में स्थित हैं।

समस्त उत्तरी प्रदेश के लिए टैम्पिको मुख्य बन्दरगाह है। मैक्सिको का अधिकांश तेल घटिया किस्म का, भारी ईंधन में प्रयोग किया जाने वाला तेल है। इसमें गैसोलीन की मात्रा बहुत कम (५% से १५%) है जबकि अमरीका के तेल में यह २५% से ४०% तक होती है। मैक्सिको का तेल चूने की पर्त में आता है।

दूसरा दक्षिणी क्षेत्र ४० मील लम्बी चौड़ी तथा १ मील लम्बी चौड़ी सकरी पट्टी में पाया जाता है। यह टैम्पिको से लगभग ६० मील दक्षिण में आरम्भ होती है और तट पर टक्सपान तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र में बहुत से कुएँ हैं जो दूर-दूर

बैरल तेल इन कुओं से निकाला जा चुका है। इसका आधा १६३८ के पश्चात् ही निकाला गया है।[11]

संयुक्त राज्य अमेरिका में तेल के मुख्य क्षेत्र ये हैं—

(१) अपलेशियन क्षेत्र	(४) खाड़ी के क्षेत्र
(२) लीमा—इंडियाना क्षेत्र	(५) राकी पर्वत के क्षेत्र
(३) मध्यवर्ती क्षेत्र	(६) कैलीफोर्निया क्षेत्र

मध्यवर्ती क्षेत्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। इसी क्षेत्र में संयुक्त राज्य के सबसे बड़े भंडार भी पाये जाते हैं—[12]

टैक्साज	१५·०	अरब बैरल	मैक्सिको	०·८	अरब बैरल
कैलीफोर्निया	३·६	,,	इलिनास	०·६	,,
लूसियाना	२·८	,,	मिसीसिपी	०·३	,,
ओक्लाहामा	१·७	,,	अन्य	२·६	,,
व्योमिंग	१·३	,,	संयुक्त राज्य	—	
कन्सास	०·६	,,	का योग	२६·६	अरब बैरल

इससे स्पष्ट होगा कि मध्य महाद्वीपीय रियासतें और खाड़ी के प्रदेशों में सबसे अधिक तेल के भंडार स्थित हैं। टैक्साज में ५६%, कैलीफोर्निया में १५%; लूसियाना में ८%; ओक्लोहामा में ४% और व्योमिंग में २% भण्डार होने का अनुमान है।[13]

१६६१ में संयुक्त राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में तेल का उत्पादन ६० करोड़ बैरल टैक्साज से, ३६ करोड़ बैरल लूसीयाना में, ३१४ करोड़ बैरल कैलीफोर्निया से; ८१ करोड़ बैरल इलीनियास से और ७ करोड़ बैरल पेन्सिलवेनिया से प्राप्त किया गया।

(अ) एपेलेशियन क्षेत्र (Appalachian Fields)

यहां तेल एक लम्बी सकरी पट्टी में पाया जाता है जो न्यूयार्क राज्य के दक्षिण पश्चिमी किनारे से पैन्सिलवेनिया और पूर्वी ओहियो होती हुई पश्चिमी वर्जीनिया तथा पूर्वी कंटकी तक फैली हुई है। तेल उत्पादन इसी पट्टी के निश्चित

11. *Smith, Phillips and Smith,* **Ibid.**, p. 311.
12. **Ibid**, p. 313. १ बैरल=४२ अमरीका गैलन के होता है।
13. *Finch and Trewartha,* **Elements of Geography,** 1949, p. 486.
    सं० राज्य अमरीका सरकार के अनुसार यह भंडार इस प्रकार हैं: टैक्साज ३३%; कैलीफोर्निया १४%; लूसियाना ६·६%; ओक्लाहामा ६·३%; व्योमिंग ५·२%; कन्सास ३·१%; न्यूमैक्सिको २·६%; इलीनियास २·२% और अन्य राज्य ७·२%।
14. *Smith, Phillips and Simth,* **Op. Cit.**, p. 314.

में लड्यूक तथा रैंड वाटर उल्लेखनीय हैं। इस समय कनाडा में तेल के मुख्य क्षेत्र निम्नलिखित है—

(१) पीस नदी नगर के निकट—नार्मेन्ड विले

(२) एडमान्टन नगर के निकट—एटेवास्का, लड्यूक, वुडवैंड किम्मैला, लायड-मिसटर तथा प्रोवोस्ट।

(३) कैलगरी नगर के निकट—टर्नर घाटी।

सन् १९४६ में कनाडा का तेल भण्डार लगभग ७२० लाख पीपे कूता गया था। लेकिन उपरोक्त क्षेत्रों की खोज के बाद सन् १९५० में इसकी संख्या १२०० लाख पीपे करदी गई जिससे तेल भण्डार की दृष्टि से संसार में कनाडा का स्थान आठवाँ हो गया है।

उत्तरी अलवर्टा में स्थित एटवाका में तेल-युक्त बालू का बहुत बडा भण्डार है। ऐसा अनुमान है कि संसार में अन्य कहीं ऐसा भण्डार नहीं है। इस बालू में १०० से २५० अरब पीपे तेल के जमाव होने का अनुमान किया जाता है। इस बालू के तेल में गन्धक भी मिलता है।

वैनेजुएला क्षेत्र

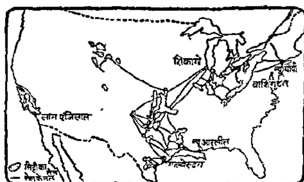
वैनेजुएला मिट्टी का तेल पैदा करने वाला संसार में दूसरे नम्बर का देश है। यहाँ सन् १९१४ से ही तेल का निकाला जाना आरम्भ हुआ है। सन् १९३९ और १९५३ के बीच यहाँ तेल का उत्पादन २१३० से ६४४० लाख बैरल हो गया। यहाँ मारकोईवो झील के समस्त तट पर तेल के क्षेत्र पाये जाते है जिनमें से मुख्य क्षेत्र **लारोजा** और **लेगुनीलाज** है। लारोजा से बाँकेवरो तक ५० मील लम्बी उत्पादक मारकाइवो खाडी के पश्चिम की ओर **कन्सेपशन** और **लापाज** तथा पूर्व की ओर एलमेन और दक्षिण पश्चिम में कोलन हैं। यहाँ तेल के डैरीक ५ मील खाडी के भीतर तथा ८ मील झील तक फैले हैं। यहाँ का दूसरा तेल क्षेत्र वैनेजुएला के मैदानों में पाया जाता है। यहाँ का मुख्य तेल क्षेत्र **ओफीसाना** में हैं।

यहाँ का तेल नलों द्वारा **अरूबा** और **क्यूरोका** के कारखानों को शोधने के लिए भेज दिया जाता है जो विश्व की सम्भवतः सबसे विशाल तेल शोधन शालायें हैं। कुछ तेल नलों द्वारा कैरेबीयन तट पर स्थिति **प्यूरटो लाकज** तथा **करीपीटो** को भी भेजा जाता है जहाँ वैनेजुएला की तेल शोधने की बडी फैक्ट्रियाँ हैं। वैनेजुएला के इस उद्योग में अमरीकन और ब्रिटिश की लगभग २ विलिअन डालर की पूँजी लगी है।

कोलंबिया में मैग्डेलना नदी पर स्थित बैरानकावरमेजा के चारों ओर तेल क्षेत्र हैं। यहाँ प्रतिवर्ष लगभग ४०० लाख बैरल तेल निकाला जाता है। इसका अधिकांश भाग मामोनल बन्दरगाह द्वारा निर्यात कर दिया जाता है।

इस प्रकार दक्षिण अमेरिका का ९०% तेल वैनेजुएला, कोलंबिया और थोडा सा तेल अर्जेन्टाइना में **कोमोराडो**, **रिवाडिवा** क्षेत्र से और ब्राजील तथा चिली में भी मिलता है।

इन दोनो क्षेत्रों मे प्रत्येक क्षेत्र की सीमा मे तेल लगभग एक ही प्रकार का है लेकिन इलिनीयास क्षेत्र का तेल एक सा नही है। यहाँ हलके तेल से भारी तेल तक निकाला जाता है।



चित्र १३३ संयुक्त राज्य मे तेल क्षेत्र और पाइप लाइनें

ये तीन क्षेत्र उत्तरी समूह की श्रेणी मे आते है और यहाँ से अधिकाश तेल या तो एटलांटिक तट की ओर भेज दिया जाता है या मिशीगन झील पर शिकागो के पास बहुत तेल साफ करने के कारखानो मे उत्तर की ओर भेज दिया जाता है या इरी झील की ओर चला जाता है। इन क्षेत्रों पर संयुक्त राज्य अब भविष्य मे निर्भर नही रह सकता। इन्होने अमरीका तेल उद्योग के विकास मे अपना भाग भली प्रकार निभाया है और अब मिसीसिपी के उस ओर के नवीन क्षेत्रों के लिए मार्ग छोड दिया है।

(द) मध्य महाद्वीप समूह (Mid-Continent Fields) 

यह क्षेत्र एक पट्टी के रूप मे उत्तर से दक्षिण तक मिसीसिपी के समानान्तर उसके पश्चिम मे फैला हुआ है। यह क्षेत्र कसास, ओकलाहामा, टैक्साज तथा लूसियाना राज्य की सीमाओं के अन्तर्गत है। यहाँ अधिकाश तेल दक्षिण की ओर मैक्सिको की खाडी को भेज दिया जाता है। यहाँ कसास मे तेल उत्पादन सन् १८८९ से आरम्भ किया गया, ओकलाहामा मे सन् १९०२ मे, लूसियाना मे सन् १८९८ मे और द० अरकनसास मे सन् १९२१ मे पहले तेल के कुएँ खोदे गये।

मध्य महाद्वीपीय क्षेत्र को बहुत से छोटे क्षेत्रो मे विभाजित किया जा सकता है, जैसे ओकलाहामा, कन्साम, दक्षिणी ओकलाहामा, उत्तरी टैक्साज, मध्य टैक्साज, कैडो-डि-सोटो और रैड नदी के क्षेत्र जो पश्चिमी लूसियाना मे फैले हुए हैं। इनमें अधिक विस्तृत दृष्टिकोण से दक्षिण टैक्साज तथा दक्षिणी लूसियाना के खाड़ी क्षेत्र भी सम्मिलित किए जा सकते है।

मिसीसिपी के पश्चिम मे तथा मिसूरी के दक्षिण मे एक ऐसा चतुर्भुजी क्षेत्र है जिसकी पश्चिमी तथा दक्षिणी सीमा पर क्रमशः आरकन्सास तथा रैड नदी की तरह मिसीसिपी की अनेको सहायक नदियाँ इस क्षेत्र मे बहती हैं। इस चतुर्भुज के उत्तरी भाग के मध्य मे ओजार्क पर्वत है। इन पर्वतो के पश्चिम मे मिसीसिपी

यहाँ की सबसे अधिक गहराई २०,००० फीट है। रूस मे तेल के उत्पादन के साथ-साथ उसकी खपत भी बढ़ती जा रही है। सन् १९४६ में यहाँ तेल की खपत ४०० लाख टन थी। मोटरों व मशीनों के अधिकाधिक प्रयोग के कारण तेल की माँग बढ़ती जा रही है। इसीलिये बढ़ती हुई खपत के कारण सन् १९६० तक रूस में ६०० लाख टन तेल प्रतिवर्ष निकालने का आयोजन है। सन् १९६५ तक रूस मे वार्षिक उत्पादन २,४०० लाख टन हो जाने का अनुमान है। पिछले कुछ समय मे तेल की खोज पूर्वी रूस मे भी की गई है। यहाँ बशकिर, तातर तथा क्येबीशेव प्रदेशो मे तेल के काफी भंडार मिले हैं।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि रूस मे कुल तेल भंडार का लगभग ५६% तेल पाया जाता है। रूस का कुल भण्डार ६३ ८०० लाख गैलन का कूंता जाता है। जिसमे से ७८०० लाख टन बाकू, १७,७०० लाख टन अजरबैजान, १८,५०० लाख टन ग्रोजनी, १६०० लाख टन मेकोप, १८०० लाख टन बशकीविया, ३५०० लाख टन पर्म, ४७०० लाख टन यूराल-वाल्गा, २४०० लाख टन माखालीन और ४३०० लाख टन मध्य एशिया मे हैं।

यूरोप के तेल क्षेत्र

यूरोप मे रूमानिया देश मे तेल के कुएँ कारपेथियन पहाड़ की दक्षिणी तलहटी मे ६ मील लम्बे और ३० मील चौडे क्षेत्र मे पाये जाते हैं। यह तेल क्षेत्र उत्तर मे सुसीवा से लेकर दक्षिण मे डामओरिटजा की घाटी तक फैला है। तेल के सबसे विशाल क्षेत्र डामओरिटजा घाटी, पारहोवा, बाजुऊ और बकाऊ मे स्थित हैं। इन क्षेत्रो मे सन् १८८० मे तेल निकालना आरम्भ हुआ और अब इनसे समस्त देश का ६८% तेल निकाला जाता है। कुल उत्पादन का लगभग ७०-८०% भाग निर्यात कर दिया जाता है। अधिकतर तेल प्लोस्टी से नलो द्वारा ओडेसा को भेजा जाता है।

मध्यपूर्व के तेल क्षेत्र

मध्यपूर्व मे तेल के प्रमुख क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी और पश्चिमी फारस, पूर्वी ईराक और सऊदी अरब तथा कुवैत मे पाये जाते हैं। मध्यपूर्व के इन क्षेत्रो मे ससार का लगभग आधा भण्डार पाया जाता है। मध्य पूर्व मे चट्टानो की १५ अलग-अलग तहे हैं जिनमे तेल मिलता है। इनमे ईरान की आगाजरी, कुवैत की बुरगन और अरम की अबाकेक अधिक प्रसिद्ध हैं। इनमे से प्रत्येक से लगभग २०० लाख टन तेल प्रति वर्ष निकलता है। इसकी तुलना सयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी टैक्साज के तेल क्षेत्र से की जा सकती है जहाँ प्रति वर्ष लगभग १३४ लाख टन तेल निकाला जाता है। मध्यपूर्व के तेल क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग २२ लाख वर्ग किलोमीटर है। इसमे से लगभग ३·४ लाख वर्ग किलोमीटर ही इस समय उन्नत किया जा रहा है। मध्यपूर्व के तेल क्षेत्र के प्रतिवर्ग किलोमीटर मे १५,००० टन तेल है। यह सयुक्त राज्य अमेरिका के टेक्साज की तुलना मे चौगुना अधिक है।

मध्यपूर्व के देशो मे पिछले कुछ वर्षों से तेल का उत्पादन बढ जाने से यूरोपीय देशो मे तेल की माँग घट गई है। किन्तु सन् १९५१ मे जब ईरान सरकार ने मिट्टी के तेल के राष्ट्रीयकरण करने का निश्चय किया तो उसके फलस्वरूप सरकार

केलीफोर्निया के नये क्षेत्र तथा पूर्वी टैक्साज से अधिक उत्पादन हो गया है और तेल का मूल्य गिर गया है।

टैक्साज का तेल उद्योग उस कुएँ से आरम्भ हुआ जो सन् १८९५ में कौसिकाना में ट्रिनिटी नदी के सहायक नदी के पास शहर में पीने का पानी प्रदान करने के लिए खोला गया था। कुएँ में तेल निकल आया। दूसरे कुएँ भी तुरन्त ही खोदे गये और टैक्साज का तेल उद्योग प्रारम्भ हो गया जिसने बाद में उतना विशाल रूप धारण कर लिया। कौसिकाना के कुएँ वास्तव में दो कुएँ हैं—एक कौसिकाना का जो पश्चिम में होता है और अच्छा हल्का तेल पैदा करता है तथा दूसरा पौवेल का जो कौसिकाना से ८ मील पूर्व में तथा भारी तेल जो जलाने के काम आता है पैदा करता है। इस क्षेत्र ने अपना अधिकतम उत्पादन सन् १९०६ में १०० लाख बैरेल्स किया। अब कौसिकाना क्षेत्र एक छोटा उत्पादक है। इसके ३० मील दक्षिण में मैकिमआ नगर है जिसके चारों ओर पहले अधिक प्राकृतिक गैस पैदा की जाती थी और एक विशाल तेल क्षेत्र विकसित हो गया है।

यहाँ दूसरा क्षेत्र जहाँ तीव्रता से विकास हुआ केडो-डि-सोटो क्षेत्र है जो रैड नदी पर उत्तरी-पश्चिमी लुसियाना तथा उत्तरी पूर्वी टेक्साज में है। यहाँ से तेल सैबाईन झील के बन्दरगाहों को पाइप लाइन द्वारा भेज दिया जाता है।

इस प्रदेश के लगभग १०० मील उत्तर-पूर्व अर्कन्सास का तेल क्षेत्र है जिसने सन् १९३६ में १०० लाख बैरल्स तेल का उत्पादन किया। यद्यपि इसके बारे में प्रसिद्ध भूगर्भ शास्त्री ने, जो भविष्यवाणी करने में बहुत कम जल्दबाजी से काम लेता था यहाँ तक कहा था कि वह आरकन्सास में भविष्य में जितना भी तेल पैदा होगा उसको पीने को तैयार है।

(य) खाड़ी के क्षेत्र (Gulf Coast Fields)

तट में ५० मील एक ओर तेल की पट्टी पाई जाती है जिसे "खाड़ी क्षेत्र" कहते हैं। यह क्षेत्र दलदली और लैगून क्षेत्र के ठीक पीछे है। यहाँ पर तेल नमकीन गुम्बदों (Salt domes) में पाया जाता है और नतोदर में नहीं पाया जाता। यह गुम्बदें केवल कुछ १०० एकड़ में फैली हुई हैं और इनमें तेल की मात्रा कम है जो गैस के अधिक दबाव के कारण निकलती है। गुम्बदों में स्रोत (Gushers) भी निकलते हैं जो शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं। यद्यपि ये टेक्साज माटागोर्डो में मिसीसिपी तक फैले हुए क्षेत्र में पाये जाते हैं तथा इनका विस्तार ४०० मील तक है लेकिन यहाँ के विशेष कुएँ केवल एक छोटे में ही क्षेत्र में पाये जाते हैं जो हाउस्टन और सैबाईन नदियों के बीच में हैं। इनमें सर्व प्रमुख कुएँ सिन्डिल टॉप, हम्बिल, गूज क्रीक तथा मारा टीना है।

सन् १९१६ में गूज क्रीक ने ३००,००० बैरल तेल पैदा किया और १९१७ में इसी ने २०००% वृद्धि दिखाते हुए ७३ लाख बैरल तेल पैदा किया। इस प्रदेश में तेल चूने के पत्थर में पाया जाता है और आवरण चट्टान चिकनी मिट्टी है। इस क्षेत्र में सबसे पहले सन् १९०१ में सिन्डिल टॉप में तेल निकाला गया। इसके पश्चात् सोरलेक तथा जोनिंग्स में कुएँ खोदे गये। इन सबका जीवन तीन साल का था। सन् १९२५ में सिन्डिल टॉप पर कुआ खोदा गया और इसमें बहुत भारी उत्पादन हुआ।

दक्षिण पश्चिमी एशिया के तेल क्षेत्रों को जिनसे इस समय उत्पादन हो रहा है, निम्नलिखित तीन भागों में बाटा जा सकता है :—दक्षिण-पश्चिमी ईरान का खुजिस्तान क्षेत्र; ईराक तथा उत्तर-पश्चिमी ईरान के क्षेत्र; सऊदी अरब और फारस की खाड़ी के क्षेत्र।

इनके अतिरिक्त अन्य कुछ क्षेत्र भी यहाँ पर ऐसे हैं जिनकी भूगर्भीय रचना तेल की उपस्थित के लिये सहायक है। सम्भव है भविष्य में इन स्थानों पर तेल की खोज हो सके।

(क) **सऊदी अरब क्षेत्र**—इस देश के तेल क्षेत्र ४,५०,००० वर्ग मील में फैले हुए हैं तथा यहा तेल उत्पादन के २०० कुएँ हैं जिनसे तेल प्राप्त होता है। प्राचीन स्थिर भूखड का बना होने के कारण अरब में मोड़ क्रिया का कहीं भी प्रभाव नहीं पड़ा है। अतएव तेल विस्तृत तथा खुली हुई भूसनतियों में प्राप्त होता है। यहाँ का पेट्रोलियम छिद्रपूर्ण बालू पत्थर की गर्म चट्टानों में पाया जाता है, चूने के पत्थर की चट्टानों में नहीं। यहा के तेल क्षेत्र निम्न हैं :—

(१) **अबकेक क्षेत्र**—यह सऊदी अरब का सबसे बड़ा तथा सबसे अधिक उत्पादन करने वाला क्षेत्र है। इसकी चौडाई ५ से ७ मील और लम्बाई ३६ मील है। यहाँ तेल के ८० कुएँ है जिनमें ५७ में तेल प्राप्त होता है।

(२) **दमाम क्षेत्र**—इस क्षेत्र का रूप अडाकार है। यह ४½ मील लम्बा और ४ मील चौड़ा है। यहा तेल के ४२ कुएँ हैं जिनमें तेल निकलता है।

(३) **कातिफ क्षेत्र**—यह ८ मील लम्बा तथा ४ मील चौडा है। यहाँ तेल के ९ कुएँ हैं जिनसे तेल निकलता हैं।

ये तीनों क्षेत्र फारस की खाड़ी के निकट हासा प्रान्त में हैं। ये सऊदी अरब के तीन बड़े तेल क्षेत्र है।

इनके अतिरिक्त एनदार तथा बुक्का अन्य तेल क्षेत्र हैं। एनदार अबकैक से २५ मील पश्चिम में है। बुक्का अबकैक के उत्तर पूर्व में स्थित है। ये भी हासा प्रान्त में है। बुक्का में तेल का अपार भडार है।

(४) **आबू हद्रिया क्षेत्र**—यह धारान में १०० मील उत्तर पश्चिम में स्थित है।

इन क्षेत्रों में जो तेल उत्पन्न होता है उसका अधिकाश भाग पाइप लाइन के द्वारा रस तनूरा और बेहरीन को भेज दिया जाता है। रस तनूरा की शोधन शाला में प्रतिदिन लगभग ३,५०,००० पीपा तेल प्रति दिन साफ किया जा सकता है। पाइप लाइन कैसूमा, रफा और बादाना में सुराफ होती हुई जाती है। सऊदी अरब में तेल का निकाला जाना सन् १९३७ में सबसे पहले दहरान में आरभ किया गया। इसके बाद अन्य क्षेत्रों का पता लगा। यहाँ सन् १९४६ में तेल का उत्पादन ८२ लाख मैट्रिक टन था। यह सन् १९५९ में ५३६ लाख मैट्रिक टन हो गया। आज तेल उत्पादक देशों में अरब का स्थान ५ वाँ है। यहाँ लगभग २८ बिलियन बैरल तेल के भडारों का अनुमान है तथा यहाँ प्रतिदिन ८ लाख बैरल तेल निकाला जा रहा है तथा इसमें से १,८०,००० बैरल रोज रस तनूरा में साफ किया जा रहा है। इसका देशी उपभोग केवल ३० हजार बैरल का प्रतिदिन का है। अतः ९०% कच्चा तेल और उसके उपोत्पादन निर्यात कर दिये जाते हैं। यह निर्यात तेल वाहक जहाजों

पर स्थित है और उनमे से प्रत्येक लगभग १,००० लाख बैरल तेल समाप्त होने के पहले पैदा करता है। यह कुएँ श्रोत (Gusher) हैं। इसी क्षेत्र मे मैक्सिको का तेल उद्योग बड़े पैमाने पर आरम्भ हुआ जबकि सन् १९०८ मे डोस बोकास कुआ खोदा गया था जिसमे आग लग गई थी और २ मास तक जलता रहा था जिसके पश्चात् नमकीन पानी तैरता हुआ पाया गया। इसके जलने से ८०० से १,४०० फीट ऊँची लौ उठी थी। इसमे इतनी रोशनी हुई थी कि रात को भी १७ मील दूर अखबार पढा जा सकता था। इसके बाद सन् १९१० तक उत्पादन नही हुआ और फिर जुआन कैसिनी नामक कुआ सन् १९१० मे खोदा गया जिसका दैनिक उत्पादन १,००,००० बैरल था और जो सन् १९१० तक समाप्त ही नही हुआ। सन् १९१०में ही दक्षिणी क्षेत्रों ने अपना भारी उत्पादन किया। उस समय से ही बहुत से प्रसिद्ध कुएँ सफलतापूर्वक खोदे जा चुके हैं। मुख्य सैरो अजूल स्रोत, अमहलान कुआ पोटरिगे डेल लानो टोटेकी, अलजान तथा अलामो हैं।

इसलिए अब मैक्सिको के तेल उत्पादन का भविष्य उसके तीसरे प्रदेश के हाथ मे है जो कि टैहानटपैक में स्थित है। इसका विकास सन् १९०२ मे आरम्भ हुआ। लेकिन इसमे भूमि की दलदली प्रकृति, घनी वनस्पति के आवरण तथा टैम्पिको के श्रोतो की खोज के कारण बाधाएँ उपस्थित हो गई। कच्चे तेल को नलो द्वारा द्रुवतपान तक पहुँचाया जाता है जहाँ से इसका निर्यात ग्रेट ब्रिटेन या सं० रा० अमरीका को होता है। मैक्सिको मे तेल शोधक कारखाने टैम्पिको, मैक्सिको नगर और आवसको में है।

कनाडा तेल-क्षेत्र (Canadian Oil Fields)

कनाडा मे ओन्टेरियो प्रान्त मे लगभग उसी समय तेल मिला था जबकि सयुक्त राज्य अमेरिका मे मिला। परन्तु भूमि मे तेल अधिक न होने से कनाडा मे उसकी उन्नति नही हुई।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद रॉकी पर्वत के निकट मैदानों मे तेल ढूंढा जाने लगा। ढूंढने वालो मे अधिकतर सयुक्त राज्य के ही थे। उस क्षेत्र मे सन् १९२० मे पहले पहल आर्कटिक वृत से लगभग ७०० मील दक्षिण मे स्थित नार्मन वेल्स नामक स्थान पर तेल मिला। बहुत दिनो तक इस तेल की उन्नति नही की गई क्योंकि न तो उस तेल के लिए स्थानीय मांग ही थी और न क्षेत्र के बाहर ले जाने के लिए अच्छे मार्ग ही थे। द्वितीय युद्ध के बाद सयुक्त राज्य मे तेल की माँग बढी और इसलिए कनाडा की इस तेल की उन्नति के लिए पूंजी व नई मशीनें सयुक्त राज्य से लाई गई, जिससे लगभग ७० कुएँ खोदे गये और तेल निकाला जाने लगा। इसी काल मे कुन्जी नदी मे जहाज चलने लगे और पूरे क्षेत्र की आर्थिक उन्नति की ओर ध्यान गया। इससे यहाँ पर स्थानीय माँग भी खडी हुई। खोज करने पर पता चला कि नार्मन वेल्स के क्षेत्र मे लगभग ३० लाख पीपे तेल भण्डार हैं।

ऊपर कहे हुए तेल के क्षेत्रो की उन्नति के साथ-साथ लोग निकटवर्ती अलबर्टा और सस्केचुआन प्रान्तों के मैदानो मे भी तेल की खोज करने लगे। सन् १९३६ मे टर्नर घाटी मे तेल पाया गया। यह स्थान कैलगरी से लगभग ७० मील दूर है। इस स्थान के तेल की प्रचुरता को देखकर लोग अन्धाधुन्ध इधर उधर तेल के लिए कुएँ खोदने लगे। इसके फलस्वरूप कुछ अन्य स्थानों मे भी तेल मिला। इन स्थानों

पूर्वी पेटी मे किरकुक के उत्तर की ओर बावागुर क्षेत्र सबसे बडा है। यह ७० मील लम्बा तथा २ मील चौडा है। यह ससार के बडे तेल क्षेत्रो मे से एक है। इसको एक पाइप लाइन द्वारा भूमध्य सागर तट के बन्दरगाह हैफा तथा ट्रिपोली से मिला दिया गया है। प्रतिवर्ष इन पाइप लाइनो द्वारा ६२० मील की दूरी पर हैफा और ५४० मील की दूरी पर ट्रिपोली को ४० लाख टन कच्चा तेल ले जाया जाता है। सन् १९५२ में एक नई ३०" व्यास की लाइन पूरी हो गई है जो किरकुक को सीरिया के बन्दरगाह बेनीस से जोडती है तथा इसके द्वारा १४० लाख टन कच्चा तेल ले जाया जाता है। यहाँ के सुरक्षित भडार का अनुमान ३३,५२१ लाख मैट्रिक टन है। यहाँ से तेल निकलना सन् १९२७ से आरम्भ हुआ है।

दूसरा तेल क्षेत्र अधिक दक्षिण पूर्व मे नफ्तखान मे स्थित है। इसका उत्पादन कम है। यह तेल अलबन्द मे साफ किया जाता है। सन् १९२९ मे एक दूसरा तेल क्षेत्र ऐन जलेह मे प्राप्त किया गया। यह मौसल के उत्तर मे स्थित है। द्वितीय महायुद्ध मे इसमे तेल निकलना बन्द हो गया लेकिन भविष्य मे इसकी उन्नति होने की आशा है।

बसरा मे भी तेल के सुरक्षित भण्डार का पता चला है। यह दजला नदी पर स्थित है।

दक्षिण पश्चिमी एशिया में ईराक तेल के उत्पादन की दृष्टि से चौथे स्थान पर है। यहाँ तेल का उत्पादन बराबर बढता जा रहा है। सन् १९५० मे यहाँ तेल का उत्पादन ६० लाख मैट्रिक टन था जो सन् १९६० मे ४७० लाख मैट्रिक टन हो गया।

ईराक मे सन् १९५० मे डौरा मे तेल साफ करने का कारखाना बनकर तैयार हुआ है। यह वगदाद के पास है। यहाँ तेल साफ करके वगदाद तथा अन्य देशो को भेजा जाता है। यहाँ प्रतिवर्ष ८७,६०,००० बैरल तेल साफ होता है। किरकुक से जो १८० मील उत्तर मे है यहाँ पर तेल साफ करने के लिए आता है। इसके लिए १२ इंच की इस्पात पाइप लाइन बनी है जो लगभग १३० मील लम्बी है। यह डौरा को बैजी पम्पिग स्टेशन से जोडती है जो दजला के १० मील पश्चिम मे स्थित है।

(घ) **ईरान**—यहाँ के तेल क्षेत्र १,००,००० वर्गमील मे फैले हुए है। ईरान का एशिया मे तेल उत्पादन मे तीसरा स्थान है। यहाँ के विशाल तेल क्षेत्र सामान्य भूसनतियो मे पाये जाते है। यहाँ के तीन भंडार ५४,८५० लाख मैट्रिक टन के है। यहाँ के तेल क्षेत्र दो भागो मे विभक्त किये जा सकते है।

(१) दक्षिण-पश्चिम ईरान के खुजिस्तान के तेल क्षेत्र।

(२) उत्तर पश्चिम ईरान के क्षेत्र।

खुजिस्तान तेल क्षेत्र—यह जैग्रीस पर्वत के पश्चिमी किनारो पर बुख्तायर तथा पुश्त ए कुह नामक एक पर्वत श्रेणी के मध्य मे स्थित है। यहाँ की चट्टाने जिनमे तेल निकलता है चूने के पत्थर की हैं। यहाँ पर छ. क्षेत्रो से तेल प्राप्त होता है। **मस्जिद-ए-सुलेमान** (१९०८ से) उत्तर मे, **हफ्तकेल** (१९२८ से) मध्य मे, **अधाजरि** (१९४४ से) तथा **गाक सरन** (१९४१ से) दक्षिण मे, **नफ्त सफीद** (१९४५ से) उत्तर मे तथा **लाली** (१९४८ से) अधिक उत्तर मे है। इन सब तेल क्षेत्रो को

रूस के तेल क्षेत्र (Russian Oil Fields)

रूस का तेल पैदा करने वाले देशों में तीसरा स्थान है। सन् १९१७ के पूर्व रूस, के उत्पादन का ९७% तेल काकेसस क्षेत्र से प्राप्त किया जाता था, इसमें से बाकू से ही अकेला क्षेत्र का, ८०% तेल मिलता था किन्तु अब ६०% तेल पूर्व की ओर स्थित द्वितीय-बाकू क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है। यहाँ के तेल क्षेत्र दो भागों में पाये जाते हैं। रूस के मुख्य क्षेत्र ये हैं—

(i) पहला क्षेत्र काकेशस क्षेत्र या बाकू क्षेत्र है, जो केस्पियन सागर के पश्चिमी और दक्षिण काकेसस प्रदेश में फैला है। बाकू क्षेत्र के तेल के जिले क्रमशः बालाखानी, सबूनची, रोमानी और बीबी इपियाते हैं। रूस में प्रधान तेल के कुएँ बाकू में पाये जाते हैं। बाकू के क्षेत्र से सन् १८७१ से लगाकर अब तक लगभग ८० करोड़ टन तेल निकाला जा चुका है। यहाँ अब तेल २४,००० फीट की गहराई से प्राप्त किया जाता है। काकेसस क्षेत्र के कुछ केन्द्र उत्तरी काकेसस में भी हैं। इनमें ग्रोजनी मेकोप, टिफलिस और माकचकाला हैं। समस्त रूस का ६०% तेल इसी क्षेत्र से निकलता है।

(ii) तेल की दूसरी पट्टी यूराल पर्वत के पश्चिमी ढाल पर उत्तर में उम्बा से लेकर स्टर्लीटामक तक फैली हुई है। इसको यूराल-वाल्गा क्षेत्र या द्वितीय बाकू क्षेत्र कहा जाता है। इस क्षेत्र में एम्बाक और बसीरियन, पूमू और ऊफा प्रमुख उत्पादक हैं। इस क्षेत्र से समस्त रूस का ४०% तेल मिलता है।

उपर्युक्त दो क्षेत्रों के अतिरिक्त रूस के अधिकार में एशिया के दो क्षेत्र और हैं। उनमें एक मध्य एशिया में फरगना और बुखारा के निकट है तथा दूसरा साखालीन द्वीप में है। रूस के मध्य एशिया वाले भाग ४.९% और सुदूरपूर्व से १.१% तेल मिलता है। सुदूर उत्तर में पिचोरा क्षेत्र से भी तेल प्राप्त किया जाता है।

रूस के तेल क्षेत्र बाकू से एक दुहरी पाईप लाइन बातुम से मिली है तथा माकचकाला, ग्रोजनी और मेकोप अपना तेल नल द्वारा काले सागर पर स्थित टूआपसे को और पूर्वी यूक्रेन में स्थित ट्रूडोवाया को भेजते हैं। तेल की एक दूसरी लाइन केस्पियन सागर के उत्तर पूर्व स्थित, कोसाहेगिल, राकूशा, गुरीव और ओसर्क मिलती है। रूस में तेल शुद्ध करने के कई केन्द्र हैं जिनमें सबसे बड़ा कारखाना बाकू में है। यहाँ प्रतिदिन लगभग ४ लाख पीपे तेल साफ किया जा सकता है। तेल साफ करने के अन्य कारखाने ग्रोजनी, क्रसनोडार, मोलाटो, उफा, गोरकी, स्टलिंटामाक, ओस्के और पर्गना में हैं। रूस में प्रतिवर्ष बहुत अधिक मात्रा में तेल निकाला जाता है। यहाँ सन् १९३८ में तेल का उत्पादन ३२२ लाख टन, सन् १९४२ में ३८५ लाख टन और सन् १९५० में ३७० लाख टन तथा सन् १९५६ में १२६९, लाख टन तेल प्राप्त किया गया। १९६० में अनुमानित मात्रा १३५० लाख टन की कूंती गई है।[15] तेल की मात्रा में वृद्धि होने का मुख्य कारण रूस में नये और उन्नत ढंगों का प्रयोग किया जाना और यूक्रेन में नये औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना है। १९४५ के पहले रूस में २½—३ हजार फीट की गहराई से तेल निकाला जाता था। परन्तु अब नये प्रयोगों के कारण ६,००० फीट की गहराई से तेल प्राप्त किया जाता है।

15. *Baransky*, **Op. Cit., p. 32**

गये है। उत्तरी सहारा मे हासी-र-मेल मे ३ ५ लाख घन फीट गैस के अनुमान लगाये गये हैं। इसके उपयोग से बोन के निकट एक धातु उद्योग का कारखाना स्थापित किया जा रहा है। एक २४" मोटी व्याम वाली ५३० मील लम्बी पाइप-लाइन गैस को अलजेर से ओरन तक घरेलू कार्यों तक पहुँचाती है। अनतः यह गैस अलजीरिया तट पर स्थित अर्जू तक बढ़ाई जायगी। इसके द्वारा यह पश्चिमी देशो को निर्यात की जा सकेगी।

(ज) टर्की—टर्की मे लगभग १,८१,००० वर्ग किलोमीटर मे जो पर्तदार चट्टानो का बना है, तेल मिलने की सम्भावनायें है, पश्चिमी एशियाई टर्की और उत्तरी तथा मध्य भाग मे तेल मिलने की सम्भावनाये नही है। यहाँ तेल के दो क्षेत्र हैं। (१) रमन और (२) गरजन सारा उत्पादन सरकार की टरकिश पेट्रोलियम कम्पनी द्वारा होता है। गरजन तेल क्षेत्र से सन् १९५९ में प्राप्त हुआ तथा इस क्षेत्र के तेल भडार लगभग ५२५ लाख बैरल है।

तेल साफ करने का एक कारखाना बटमान में रमन तेल क्षेत्र के पास है जहाँ ६,६०० बैरल तेल प्रतिदिन साफ होता है। दूसरा तेल शोधक कारखाना दक्षिण पूर्वी टर्की में मरसीन के पास बन रहा है जिसकी क्षमता ६५,००० बैरल प्रतिदिन है।

(झ) इजरायल—यहाँ २२ सितम्बर सन् १९५५ को पहली बार हेलेटज क्षेत्र से जो रूम सागर से ११ किलोमीटर और टेल आबीब से ५४ कि. मी. दक्षिण में तटीय मैदान में स्थित है, प्राप्त हुआ। सितम्बर १९६० में एक दूसरे तेल क्षेत्र नेगबह जो पहले तेल क्षेत्र से ४ किलोमीटर उत्तर में है, पता चला तथा वहाँ का उत्पादन ६०-७० बिलियन प्रतिदिन हैं। हेलेटज मे २४ तेल के कुएँ है तथा इस क्षेत्र का प्रतिदिन का उत्पादन २,६०० बिलियन बैरल है।

नीचे की तालिका मे मध्यपूर्व के देशो मे तेल की मुख्य लाइनें इस प्रकार हैं —

कहाँ से	कहाँ को	लम्बाई (मीलो मे)	क्षमता	कब बनाई गई
आबकाक	सीदन	१,०६८	३२०	१९५०
किर्कुक	हेफा	६१७	—	१९३४
किर्कुक	हैफा	६१७	—	
किर्कुक	त्रिपोली	५३१	४०	१९३४
किर्कुक	त्रिपोली	५३१	१२०	१९४९
किर्कुक	बनिआस	५५६	३७०	१९५२
एनजराह	क-बैजी	१३६	२६	१९५१
जुबेर	फाओ	७४		
जुबेर	फाओ	६५	२५०	१९५३
दुखन	उम्म सईद	७१	१७०	१९५०

(ञ) पाकिस्तान—हिमालय पर्वत के दोनो ओर तेल के क्षेत्र पाये जाते है—पूर्व की

और एग्लो ईरान तेल कम्पनी के बीच झगड़ा हो गया और तेल का निकाला जाना सन् १९५३ तक बन्द रहा। सन् १९५४से तेल का उत्पादन पुनः आरम्भ हो गया है। राज्य सरकार की कम्पनी का आधा लाभ प्राप्त होता है और इसके फलस्वरूप यह कम्पनी १ जनवरी सन् १९५६ से कम से कम ३०० लाख मैट्रिक टन तेल के उत्पादन की गारन्टी करती है।

दक्षिण-पश्चिम एशिया के तेल-क्षेत्र (Oil Fields of S. W. Asia)

दक्षिण पश्चिम एशिया से समस्त विश्व का लगभग २४·७% तेल प्राप्त होता है।

दक्षिणी पश्चिमी एशिया मे तेल का उत्पादन
(००० बैरल प्रतिदिन)

देश	उत्पादन १९५०	१९६०
कुवैत	३४४	१,६२४
सऊदी अरब	५४७	१,२४७
ईरान	६६५	,०५५
ईराक	१२८	९६४
कातार	३३	१७३
टर्की	—	७
बेहरीन	३०	४५
इजरायल	—	३
न्यूटरल जोन	—	१३७
योग	१७४७	५२५४

उपरोक्त तालिका से प्रकट होता है कि खनिज तेल का उत्पादन दक्षिण पश्चिमी एशिया मे बढ़ता जा रहा है तथा पिछले दस वर्षों मे उत्पादन तिगुना बढ़ गया है।

यहाँ के सुरक्षित भंडार विश्व में सबसे अधिक हैं। इस प्रदेश मे विश्व के तेल भंडार का ६०% निहित है जबकि उत्तरी व मध्य अमरीका मे लगभग १५·५%, दक्षिणी अमरीका ८·५%, यूरोप मे (रूस सहित) १०·२%, अफ्रीका मे १·३%, तथा एशिया के अन्य देशों मे ४·१% है।

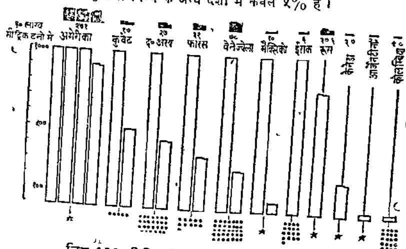
दक्षिणी-पश्चिमी एशिया की भूगर्भिक रचना तेल के उत्पादन मे बहुत सहायक रही है। इसके ये कारण हैं:—(क) टैथिस महासागर की द्रोणी मे कई युगों तक छटीय पदार्थ का एकत्रित होते रहना; (ख) टैथिस का एक गर्म जल समुद्र तथा अनेक प्राणियों का निवास स्थान होना (ग) यद्यपि बड़े बडे मोडों के होते हुए भी उनकी अधिक तीव्रता न होना।

विश्व के तेल भण्डार

(लाख पीपों मे, १ पीपा=४ गैलन)

देश	भण्डार	भण्डार (१० लाख टनो मे)	विश्व का प्रतिशत
सयुक्त राज्य अमेरिका	२९०,४४०	४,०००	३०·५
सऊदी अरब	२८०,०००		
कुवैत	२००,०००		
ईरान	१५०,०००	५,५७१	४२·४
ईराक	१३०,०००		
वैनेजुएला	९६,०००	१,५३६	११·७
रूस	९०,०००	१,२१४	९·२
इडोनेशिया	२४,५००	२८९	२·२
कनाडा	१९,५००	४१	०·३
मैक्सिको	१७,२५०	१३९	१·१
कतार	१५,०००	—	—
कोलम्बिया	५,५००	८३	०·६
अन्य देश	३१,०००	१०७	०·८
योग	१३,५२,५९०	१३,१३३	१०० ०

इस तालिका से स्पष्ट होगा कि विश्व के तेल भण्डारो का ४२% फारस की खाडी के निकटवर्ती भागों—सऊदी अरब, ईराक, ईरान, वहरीन द्वीप, कतार और कुवैत—में स्थित है। शेप भण्डार संयुक्त राज्य में ३०%, कैरेबियन तटीय प्रदेश में १४%, रूस मे ९% तथा विश्व के अन्य देशो में केवल ५% है।

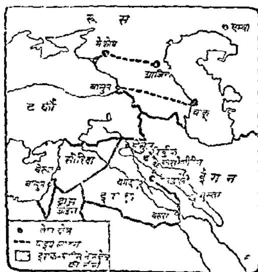


चित्र १३६. विभिन्न देशो के तुलनात्मक तेल भण्डार।

द्वारा अथवा ११०० मील लंबी ३०-३१ इंच व्यास ट्रांस-अरब पाइप लाइन द्वारा भूमध्य सागर पर स्थित हैफा को लाया जाता है यहाँ से बहरीन को साफ करने के लिए भेज दिया जाता है।[16]

(ख) कुवैत-(Kuwait)—फारस की खाड़ी के उत्तरी सिरे पर स्थित राज्य यद्यपि बहुत छोटा है तथापि उसका उत्पादन पश्चिमी एशिया में सबमें अधिक है। ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों का ही यहाँ के तेल क्षेत्रों पर अधिकार है। सन् १९३७ में बुर्गान की पहाड़ियों में तेल की खोज हुई। यह क्षेत्र कुवैत नगर से ३० मील दक्षिण में है। यहाँ की चट्टानें मध्य काटेशियस की बालू पत्थर हैं। यहाँ पाये जाने वाले तेल की गहराई ३,६९२ फीट है। यहाँ के सुरक्षित भण्डार विश्व में सबसे अधिक ७,९९९ २ लाख मेट्रिक टन है। यहाँ का तेल बहुत उत्तम होता है। कुवैत में तेल साफ करने का एक कारखाना मीना एल एहमदी में है। जहाँ प्रतिदिन २५ हजार पीपे तेल साफ किया जाता है। अधिकांश तेल निर्यात कर दिया जाता है।

(ग) ईराक—इस देश की जिन चूने पत्थर की चट्टानों से तेल मिलता है वे ईयोसीन से मायोसीन युग तक की है। यहाँ की रचना ईरान के तेल क्षेत्रों से बहुत मिलती जुलती है। यहाँ तेल के १३३ कुएँ हैं, मिट्टी का तेल यहाँ पर तीन पेटियों में मिलता है: (१) पूर्वी पेटी, (२) मध्य दजला की पेटी, और (३) फरात की पेटी।



चित्र १३४ ईरान के तेल क्षेत्र

16. *Carlson*, **Economic Geography of Industrial Miner** 1956, p. 84.

ईंधन के रूप में काम में लाया जाता है।[२१] उत्तरी अमेरिका और यूरोप दोनो ही महाद्वीप विश्व के उत्पादन को ६/१० भाग उपभोग में लाते हैं। विश्व में पैट्रोलियम के कुल उत्पादन का ५७% उत्तरी अमेरिका मे, ११% पश्चिमी यूरोप १०% रूस व पूर्वी यूरोप मे, ७% लैटिन अमेरिका मे, ३% एशिया मे, १% मध्य पूर्व अफ्रीका और ओसीनिया मे प्रत्येक में उपयोग में आता है।

पैट्रोलियम वस्तुओं का आंतरिक उपभोग (००० मैट्रिक टन में)

	१९५३	१९५८	प्रतिशत वृद्धि (१९५३-५८)
भारत	३,२५६	५,७००	७५.१
संयुक्त राज्य अमेरिका	३२४,६४०	३८८,३७०	१९.६
कनाडा	२०,४६०	३३,४००	६३·०
ब्रिटेन	१७,७७४	२८,८६०	६२·४
फ्रांस	१२,५१९	१९,८१०	५८ २
पश्चिमी जर्मनी	६,५४८	१८,४१०	१८१·१
इटली	६,८४०	१३,३२०	९४·७
नीदरलैंड्स	३,१०९	६,३९२	१०५·६
बेल्जियम	३,०७५	५,७९६	८८ ५
स्विट्जरलैंड	१,४७९	३,२०६	११६·८

भारत मे प्रति व्यक्ति पीछे तेल का उपभोग बहुत ही कम होता है। कुछ देशो के प्रति व्यक्ति उपभोग के आकडे गैलनों में इस प्रकार हैं : स० राज्य अमरीका ६००, कनाडा ५००, इगलैंड १५०, फ्रास ११०, रूस १०५; भारत ३, विश्व का औसत ७० गैलन।[२२]

मिट्टी के तेल से लगभग ५,००० प्रकार की विभिन्न उप-वस्तुएँ प्राप्त की जाती है।[२३] इसका सबसे अधिक मुख्य उपयोग युद्ध काल मे बनावटी (Synthetic) रवड़ बनाने में किया गया। अनुमान लगाया गया है कि एक ढोल कच्चे तेल से ३९% ईंधन का तेल, ३५% गैसोलीन, १५% गैस का तेल, ८% मिट्टी का तेल, ४% डिस्टीलेट और शेष २% मे चिकना करने का तेल, पैराफीन नेप्था- वैसलीन, बैन्जीन कोक, मोम आदि प्राप्त होता है।

---

21. *Jones & Drakenuald*, **Op. Cit.**, p. 402.
22. *A N. M Ghosh*, **Op. Cit.**, p. 19
23. *Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 309.

एक पाइप लाइन द्वारा जो १५० मील लम्बी है, अबादान बन्दरगाह से जोड़ दिया गया है जहाँ पर तेल शोधन का कारखाना है। यह कारखाना विश्व में तेल साफ करने का सबसे बड़ा है। इसमें १ लाख श्रमिक काम करते हैं। यहाँ ५ लाख बैरल तेल प्रतिदिन साफ किया जाता है।

उत्तर पश्चिमी तेल क्षेत्र—उत्तर पश्चिम में ईरान व ईराक की सीमा रेखा पर नफ्तखानेह व नफ्तशाह का सम्मिलित तेल क्षेत्र है। इसके उत्तर में एक अन्य तेल क्षेत्र खानाकिन है। नफ्तशाह ईरान के अन्तर्गत एक छोटा तेल क्षेत्र है। इसको तीन इंच व्यास की पाइप लाइन द्वारा करमशाह के तेल साफ करने के कारखाने से जोड़ दिया गया है।

ईरानियन तेल निगम ने एक कुएँ की जो तेहरान से ८५ मील दक्षिण में एल बुर्ज में है, खोज की है। २६ अगस्त सन् १९५६ को इस कुएँ से तेल निकला है। कहा जाता है कि यह ईरान का बहुत महत्वपूर्ण कुँआ है और सारे देश की घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति इससे होगी।

ईरान का तेल ले जाने के लिए अब एक १०० मील लम्बी पाइप लाइन ३ करोड़ पौंड की लागत से बनाई जा रही है जो सबसे अधिक तेल ढो सकेगी। यह पाइप लाइन खार्ग द्वीप तक होगी जो फारस की खाड़ी के उत्तर-पूर्वी छोर पर स्थित है। यह विश्व की सबसे लम्बी और बड़ी तेल की पाइप-लाइन होगी जो प्रतिदिन खार्ग के टैंकों को लगभग ३.५ लाख बैरल तेल पहुँचायेगी। सर्व प्रथम ईरान के तेल क्षेत्र ब्रिटिश पैट्रोलियम कम्पनी के हाथ में थे और उसमें ५६% हिस्से ब्रिटिश सरकार के थे किन्तु बाद में इस तेल क्षेत्र के राष्ट्रीयकरण के बाद जो १९५४ में समझौता किया गया उसके अनुसार अब ये तेल क्षेत्र आठ देशों की एक संयुक्त कम्पनी के हाथ में है। इसमें ब्रिटिश सरकार के ४०% से अधिक हिस्से है।

कुवैत के तेल क्षेत्र का नियंत्रण कुवैत तेल कम्पनी के हाथ में है तथा इसके ५०% हिस्से ब्रिटिश सरकार तथा शेष अमरीकी कम्पनी के हाथों में है। सऊदी अरब के बेहरीन प्रदेश के तेल पर अमरीकी कम्पनी का अधिकार है।

थोड़ा सा मिट्टी का तेल फारस की खाड़ी में स्थित बेहरीन द्वीप में भी पाया जाता है। यहाँ तेल निकालना सन् १९३४ से आरम्भ किया गया।

(च) मिश्र—मिश्र से बलायम नामक क्षेत्र के अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि यहाँ तेल के इतने अधिक भण्डार है कि इसमें मिश्र आत्मनिर्भर हो सकता है।

(छ) सहारा क्षेत्र—सन् १९५७ में सहारा में एडजेल और हासी मसूद क्षेत्रों में सर्व प्रथम तेल निकाला गया और सन् १९५९ में यह तेल इन क्षेत्रों से बोगी को पहुँचाया गया। इसके लिए ४१० मील लम्बी और २४" व्यास वाली पाइप-लाइन मरुस्थल के नीचे लगाई गई। अब एक नई पाइप लाइन पूर्वी सहारा में भी सन् १९६० में बनाई गई है जिसके द्वारा एडजेल-जरायतीन-टीगुनटूरानी क्षेत्र सेगैब की खाड़ी होकर सकीरा तक लगभग ७० लाख मैट्रिक टन तेल ढोया जा रहा है। अब तेल के नये क्षेत्र बरोयन तथा लगोट के बीच में बोर्डनोली और अड्राड के निकट इन-एजने नामक स्थानों पर मिले है जो हासी-मसूद क्षेत्र के ५० मील दक्षिण की ओर है। यह क्षेत्र बड़े उत्पादक माने

तेल की विशेषतायें

ससार के सारे शक्ति स्रोतो मे खनिज तेल सबमे अधिक धोखेबाज (Fugitive) है। इसके कई कारण हैं[२५] :—

(१) तेल के बारे मे निश्चित रूप से कुछ भी नही कहा जा सकता क्योकि वह दृष्टि के परे पृथ्वी के गर्भ मे पाया जाता है और एक द्रव होने के कारण उसमे चंचलता विद्यमान है, अतः वह एक स्थान से दूसरे स्थान को वह कर चला जाता है। अत निश्चित रूप से यह कहना कि किसी भूखण्ड मे कितना तेल विद्यमान है बडा कठिन है। अभी तक जो भी अनुमान लगाये गये है वे सभी झूठे सिद्ध हुए है।

(२) तेल के विभिन्न दशाओ मे प्राप्त होने के कारण उसमे स्थिति-विषयक अनिश्चितता भी है। कई वर्षों तक अनुमान लगा कर इसकी खुदाई होती थी जिसे जगली बिल्ली (Wild Catting) पकडना कहते थे किन्तु अब कई आधुनिक यन्त्रो का आविष्कार होने के कारण तेल की स्थिति का पता लगाने का उपाय ठीक प्रकार किया जाता है। परन्तु अभी तक इस दिशा मे पूरी तरह सफलता नही मिली है। तेल की स्थिति ज्ञात करने के निमित्त ये यन्त्र प्रयोग मे लाये जा रहे है - सीसमोग्राफ (Seismograph), टॉरशिन तराजू (Torsion Balance), मैग्नेटोमीटर (Magnetometer), विद्युत लॉग (Electric Log), हवाई कैमरा (Aerial Camera) आदि।

(३) तेल का जीवन भी अनिश्चित है। एक तेल का कुआँ वर्षों तक तेल दे सकता है या कुछ ही दिनो बाद उसमे खारी पानी निकलने लगता है जो तेल के अन्त का द्योतक होता है। यह निश्चित है कि तेल किसी भी समय समाप्त हो सकता है क्योकि खनिज तेल एक क्षयात्मक शक्ति श्रोत (Exhaustible power) है। साधारणत एक तेल के कुएँ से उसके उत्पादन का ३/४ प्रथम दो वर्षों मे ही प्राप्त हो जाता है और शेष तेल १० वर्षों या उससे अधिक समय तक न्यून मात्रा में निकलता रहता है।[२६]

(४) जब किसी स्थान पर तेल मिलता है तो वहाँ तेल निकालने के लिए एक प्रकार की होड सी लग जाती है। "पहले मारे सो मीर" (First Come First Served) वाली कहावत तेल की खुदाई के लिए पूरी तरह चरितार्थ होती है। स्पर्धात्मक खुदाई मे बहुत सी कम्पनियों को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

(५) इस उद्योग मे लगाई गई पूँजी से होने वाला लाभ भी अनिश्चित होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

तेल का सबसे अधिक व्यापार उन देशों के बीच मे होता है जो तेल उत्पन्न करते हैं—यद्यपि सयुक्त राज्य अमेरिका अपने यहाँ काफी तेल पैदा करता है किन्तु फिर भी यह अपनी बढती हुई माँग के लिए कोलम्बिया, वेनेजुएला और मैक्सिको से तेल आयात करता है। तेल आयात करने वाले अन्य मुख्य देश फ्रास, जर्मनी, बेलजियम, इटली, कनाडा, जापान और भारत हैं। तेल निर्यात करने वाले मुख्य देश

25. *Smith, Phillips and Smith*, **Ibid**, p. 309-310.
26. *Jones & Drakenwald*, **Op. Cit.**, p. 403.

जाता है। रंगून मे तेल शोधक कारखाने सीरियम और डेनिडा मे है। अराकान तट, अक्याब, क्यायू और क्यपू जिले में भी थोडा तेल पाया जाता है।

इंडोनेशिया—यहाँ मिट्टी का तेल सुमात्रा, बोर्नियो, जावा आदि द्वीपो मे मिलता है। सुमात्रा मे प्रमुख तेल क्षेत्र अटजेह के तटीय क्षेत्रो मे तथा पूर्वी तट पर जम्बी और पालमबंग मे स्थित है। बोर्नियो के पूर्वी तट से कुछ दूर टार्कन द्वीप मे तथा दक्षिणी तट के निकट बालकीपापन मे भी तेल मिलता है। थोडा सा तेल सिलेबीज, सारावाक और जावा मे भी पाया जाता है।

जापान—पैट्रोलियम के उत्पादन मे जापान का स्थान बहुत नीचा है। रैंडफील्ड ने यहाँ सुरक्षित सम्पत्ति ५६० लाख बैरल और ब्रेडले तथा स्मिथ ने ७५० लाख बैरल की बताई है। यहाँ का वार्षिक उत्पादन ३.५ लाख टन का है।

जापान मे पैट्रोलियम की पेटी होकैडो और उत्तरी होशू मे जापान सागर के तटीय भागों मे स्थित है। *य क्षेत्र तृतीय युग की भूसनतियों से सम्बन्धित है।* उत्तरी होशू के पश्चिमी तट पर अकीता और निगाता दो प्रमुख क्षेत्र स्थित हैं। अकीता १७० किलोमीटर की लम्बाई मे फैला है तथा निगाता इसके दक्षिण मे है। यह लगभग ३२० किलोमीटर की लम्बाई मे फैला है। इन दोनो क्षेत्रो से कुल उत्पादन का ६५% मिलता है। इसमे से अकीता से ६०% प्राप्त होता है। इसमे १० तेल उत्पादक जिले है।

तेल के नये क्षेत्र—पिछले कुछ समय से अमरीकन नये क्षेत्रो की खोजों मे लगे हुए हैं। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् मिस्र, सिनाई, फिलिस्तीन, सीरिया, अरब, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, एशियाई रूस, इंडोनेशिया, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, घाना, नाईजीरिया, भूमध्य रेखीय अफ्रीका आदि देशो मे तेल क्षेत्रों के विकास के लिए काफी प्रयत्न किये गये है।

तेल भण्डार (Oil Reserves)

विश्व में तेल कितनी मात्रा मे सुरक्षित है इसका अनुमान लगाना कठिन है क्योंकि भू द्रोणियो (Geosynclines) के द्वारा तेल स्थानान्तरित हो जाता है। अत उसकी उपस्थिति के बारे निश्चयात्मक रूप से नही कहा जा सकता। मात्रा ज्ञात करने के ढंगों मे जो सुधार हो रहे हैं उनसे संभव है विश्व के तेल भंडारो का पूरी तरह ज्ञान हो सके। नीचे की तालिका मे तेल भंडारो का अनुमान दिया जाता है:—[17]

---

17. *D. M. Duff*, "Over Half of World's Reserves Now Concentrate in Middle East," **Oil and Gas Journal**, December 21, 1953, pp. 117-119 and *Dr. A. Parkers* article : "Man's Use of Solar Energy," in **Br. Association for Advancement of Science Journal**, March 1951, p. 400.

अध्याय २६

शक्ति के स्रोत (क्रमश)

(SOURCES OF POWER)

३. जलशक्ति (Water Power)

जलशक्ति वर्तमान काल मे बडे आर्थिक महत्व का एक प्रमुख प्राकृतिक साधन है। कहा जाता है कि जलशक्ति के विकास एव उत्पादन और उपभोग से ही किसी देश की आर्थिक अवस्था का पता लगाया जा सकता है। यह निश्चित तथ्य है कि भूमण्डल पर कोयले और तेल के भडार प्राय सीमित है और सम्भवत. वे कुछ ही शताब्दियो के लिये लाभदायक हो सकते है। किन्तु इसके विपरीत जल शक्ति का एक अटूट साधन है जो कभी समाप्त नही हो सकता। दूसरे, कोयले तेल की अपेक्षा जल की अधिक जगहो पर बहुतायत है अतः विश्व के अनेक देशों में जल शक्ति के विकास की कुछ न कुछ सम्भावनायें पाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त शक्ति के अन्य साधनो की अपेक्षा जलशक्ति बहुत सस्ती पडती है एव इसका प्रयोग उत्पत्ति के स्थानो से बहुत दूर तक भी किया जा सकता है।

जल विद्युत बनाने के लिये ऐसा स्थान चुना जाता है जहाँ स्वाभाविक जल प्रपात पाये जाते है अथवा जल प्रपात न होने पर वहाँ बाध आदि बना कर कृत्रिम जल प्रपात तैयार किए गये हो। प्रपात के जल की शक्ति द्वारा जल-चक्की (Turbine) चलाई जाती है जिनसे बिजली उत्पन्न करने वाला यत्र (Dynamo) कार्य करता है और विद्युत शक्ति तैयार हो जाती है। इसे तारो द्वारा दूरस्थ स्थान को ले जाया जा सकता है। जल विद्युत शक्ति का विकास बहुत ही थोड़े समय पूर्व ही हुआ है। संसार का सर्व प्रथम विद्युत-गृह फ्रांस मे १८८३ मे स्थापित किया गया। तब से जलशक्ति का विकास संसार के सभी देशों मे बडी द्रुत गति से हुआ है।

जलशक्ति के विकास मे निम्न भौगोलिक और आर्थिक दशाओ का होना आवश्यक है —

(१) प्रपातों का होना (Existence of water-falls)

जिस स्थान पर जलशक्ति उत्पन्न की जाय वहाँ का धरातल ऊँचा-नीचा होना चाहिये। जब नदियाँ पर्वतीय प्रदेशो अथवा हिमनदियो द्वारा प्रभावित क्षेत्रो पर होकर बहती है तो उनके मार्ग मे झरने अथवा प्रपात बन जाते है। ग्लेशियर प्रभावित जल प्रदेश इस दृष्टि से बड़े लाभदायक होते है। सहायक नदियों की घाटियाँ खड़े ढाल वाली होने के कारण नदियों के मार्ग मे बाधायें डालती है जिससे जलागार और जल प्रपातो की अधिकता पाई जाती है। जिस झरने का पानी जितनी ऊँचाई से गिरेगा, उस स्थान पर बने ही कम-खर्च और सुविधा से जलशक्ति के उत्पन्न

१९५८ के अंत में विश्व में मिट्टी के तेल के भण्डार ३७०,००० लाख टन के अनुमानित किये गये थे, जबकि १९५७ में यह भण्डार ३५७,००० लाख टन के कूते गये। इस भंडार के मध्य पूर्व में २३६,००० लाख टन; सं० रा० अमरीका में ४२,००० लाख टन, रूस में ३५,००० लाख टन और लेटिन अमरीका में ३०,००० लाख टन है।

अनुमान लगाया गया है कि विश्व के तेल भंडार संभवतः १०० वर्षों से अधिक नहीं चल सकेंगे।[१८] एक अन्य अनुमान के अनुसार निकालने योग्य तेल के ये भंडार १५,००,००० टन के हैं जो १६० वर्षों तक के लिए पर्याप्त हैं।[१९]

तेल का उपयोग (Utilization of Oil)

कोयले के बाद उत्पादन के मूल्य के दृष्टिकोण से मिट्टी के तेल का महत्व सबसे अधिक है क्योंकि इसका अधिकाधिक उपयोग वर्तमान समय में ताप प्रकाश चालक शक्ति और मशीनों को चिकना करने के लिये किया जाने लगा है।[२०] इसके अतिरिक्त जब से डीजल के तेल के एंजिन का आविष्कार हुआ है तब से इस ईंधन के प्रयोग में काफी प्रगति हुई है और इसी कारण कोयले और तेल में शक्ति के साधन के रूप में प्रतिस्पर्धा भी होने लगी है। हवाई जहाजों में जलयानों में (जहाँ गति और स्थान दोनों ही अभीष्ट हैं) एवं मोटर गाड़ियों में इसका अधिक प्रयोग बढ़ने लगा है। इसका कारण यह है कि (i) तेल अधिक सुगमता पूर्वक और कम खर्चे से दूसरे स्थान को ले जाया जा सकता है क्योंकि यह कोयले की अपेक्षा कम स्थान घेरता है और सैकड़ों मीलों तक नलों अथवा विशेष प्रकार के जहाजों में भरकर ले जाया जा सकता है। (ii) कोयले के प्रयोग की अपेक्षा इसके प्रयोग में अधिक स्वच्छता रहती है और इसे इकट्ठा रखना भी आसान है। (iii) इसके प्रयोग से यंत्रों की रफ्तार अधिक की जा सकती है और यंत्र संचालन के लिये अपेक्षाकृत कम मजदूरों की आवश्यकता पड़ती है। (iv) कोयले की भाँति मिट्टी के तेल क्षेत्रों में कई उद्योग केन्द्रित नहीं हैं यहाँ तक कि उसको शुद्ध करने के कारखाने भी बन्दरगाहों पर ही पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि जिन क्षेत्रों में मिट्टी का तेल पाया जाता है वहाँ प्रायः और कोई खनिज पदार्थ नहीं मिलते जिससे कारखाने चल सकें।

वास्तव में तेल के कुल उत्पादन का विश्व में ३३% मोटरों के लिये ईंधन के रूप में, ५३% ईंधन तेल, ६०% कैरोसीन और शेष चिकना करने वाले तेलों के उपभोग में आता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में ३९% तेल यातायात के साधनों में, १९% व्यावसायिक और घरेलू कार्यों में, १४% उद्योग और खानों में तथा १८% अन्य कार्यों में प्रयुक्त होता है। दक्षिणी अमेरिका में ६९% तेल

18. *A. Parker*, **World Energy Resources and Their Utilization,** 1949.

19. *A. N. M. Ghosh*, **Op. Cit.**, p. 20.

20. "By providing lubricant and a compact and convenient fuel petroleum has played a major role in revolutionizing transportation on land, on sea and in the air."

नदियों में बाढ़ नहीं आनी चाहिए क्योंकि इससे शक्ति-यन्त्रों को हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है और नदियों में पानी कम हो जाता है तो यंत्र ठीक प्रकार से बिजली नहीं बना सकते और उन्हें अनिवार्यतः बन्द कर देना पड़ता है। इसलिए प्रायः बाढ़ वाली नदियों के ऊपरी भागों में बांध अथवा झील बनाकर जल-राशि को रोक लिया जाता है जिससे जलशक्ति के लिए वर्ष भर ही पर्याप्त मात्रा में जल मिल सके। संयुक्त राज्य में नियाग्रा नदी के मार्ग में झीलें हैं अतः उसमें पानी की मात्रा वर्ष भर लगभग एक सी पाई जाती है किन्तु ..केहैना नदी में जल की मात्रा प्रति ५,००० से १९६,००० घन फीट तक घटती-बढ़ती रहती है क्योंकि इसके मार्ग में झीलों का अभाव है अतः जल-विद्युत बनाने में कठिनाई पड़ती है।

(३) अन्य शक्ति के साधनों का अभाव (Lack of other means of power)

जलशक्ति के उत्पादन के लिए वे ही प्रदेश अनुकूल होते हैं जहाँ कोयला अथवा मिट्टी का तेल न तो पर्याप्त मात्रा में मिलता ही हो और न वह सस्ता ही हो। इसीलिये संसार के बड़े-बड़े महत्वपूर्ण जल-शक्ति उत्पादन केन्द्र उन्हीं क्षेत्रों में पाये जाते हैं जहाँ ये दोनों साधन मँहगे पड़ते हैं। जल-विद्युत की प्रारम्भिक लागत बहुत अधिक पड़ती है और उसमें लगी हुई पूँजी पर ब्याज आदि का व्यय अधिक हो जाता है अतः बिजली कुछ मँहगी पड़ती है।[1] किन्तु एक बार जल-यन्त्रों के चालू किये जाने पर उन्हें काम में लाना ही पड़ता है अतः जिन देशों में लिगनाइट कोयला अधिक पाया जाता है वहाँ से जल विद्युत-शक्ति प्राप्त नहीं की जाती किन्तु इटली, जापान, दक्षिणी भारत, स्वीडेन, फ्रांस, नार्वे आदि देशों में कोयले की कमी किन्तु जल राशि की अधिकता के कारण अधिक जल-विद्युत शक्ति उत्पादित की जाती है।

(४) खपत के केन्द्रों का निकट होना (Nearness to Consuming-Centres)

चूँकि विद्युत-शक्ति का उत्पादन केन्द्रों से अधिक दूरी तक भेजने में काफी खर्चा पड़ता है अतः यथा सम्भव खपत के केन्द्र जलशक्ति पैदा करने वाले क्षेत्रों के निकट ही होने चाहिए। जलशक्ति तारों द्वारा दूरस्थ केन्द्रों तक भेजी जाती है किन्तु ज्यों-ज्यों दूरी बढ़ती जाती है त्यों-त्यों शक्ति का क्षय होने लगता है। साधारणतः संवाहन में १० से २०% तक विद्युत-शक्ति का ह्रास होता है :—[2]

१०० मील की	दूरी पर	८	%
२००	,,	१०	,,
३००	,,	१३	,,
४००	,,	१७	,,
५००	,,	२१	,,

1. *Mears*, Reoprt on Hydro-electric Survey in India, 1921.
2. Quoted by *Huntington and Williams*, Business Geography, p.139.

मोटे तौर पर पैट्रोल से निम्न वस्तुएँ प्राप्त की जाती है :—

पैट्रोल

१	२	३	४	५
प्राकृतिक गैस (Natural Gas)	हाइड्रो-कार्बन गैस (Hydro-Carbon Gases)	भारी वस्तुएँ (Heavy Distr-llates)	शेष पदार्थ (Residuals)	अन्य वस्तुएँ (Other products)
↓	↓	↓	↓	↓
ईंधन	ईंधन गैस	नैप्थलीन	चिकनाई	गंधक का तेजाब
औद्योगिक ईंधन	पैट्रोल ईथर	साफ किए तेल	सड़क के तेल	एस्फाल्ट,
बूटेडीन	द्रव गैस	कैरोसीन	वाटर प्रूफ तेल	ईंधन कोक
बूटेलीन	ठोस कार्बन-डाई-आक्साइड	मोटर का तेल	तेल-कोक	चमड़ा साफ करने का तेल
ऐसेटीलीन	काला कार्बन	चिकना करने वाला तेल	दवाइयों के तेल	इत्र
ऐथीलीन	नैप्थलीन	मोम		रासायनिक पदार्थ
मैथीलएलकोहल		पैराफीन		
फार्मेल्डीहाइड				
क्लोरोफॉर्म				
कार्बन काला				
कार्बन टैट्रा-क्लोराइड				

"मिट्टी का तेल अनेक प्रकार से मानव जीवन के उपयोग में आता है। इसका उपयोग न केवल चिमनियों और लालटेनों तथा अंतरदाह एंजिनों में होता है वरन् दरवाजों पर वार्निश करने, प्लास्टिक की पेटियाँ बनाने, लिपस्टिक, नाखून की पालिश, ग्रामोफोन की चूड़ियाँ आदि बनाने में भी इसका उपयोग किसी न किसी रूप में होता है। मशीनों को चलाने, उनको चिकना करने के लिए Jute Batching oil, tea drying oil, furnace oil, lubricating oil, aviation spirit आदि का उत्पादन होता है। पैराफीन से मोमबत्तियाँ, एसफाल्ट से धूल से बचाव होने वाली सड़कें (dust-proofroads) कच्चे तेल से ही बनाई जाती हैं। इनके अतिरिक्त साबुन, विस्फोटक पदार्थ, छापने की स्याही, फोटोग्राफी की फिल्में, सैलीफोन, विशेष प्रकार की चिकनाई (Greases), कृत्रिम रबड़ आदि भी तेल से ही बनाये जाते हैं। इससे न केवल मानव के अनेक काम निकलते हैं वरन् उद्योगों का भी विकास होता है। यातायात में भी इसका अधिक उपयोग होता है इसीलिए इसको औद्योगिक और विकासशील देशों का जीवन-रक्त कहा जाता है किन्तु दुर्भाग्यवश केवल रूस को छोड़ कर विश्व का कोई भी देश इसमें आत्म-निर्भर नहीं है।"[२४]

---

24. *A. M. N. Ghosh* "Role of Petroleum in the Modern World India Economy, **Indian Minerals** January, 1961, Vol. 15., No. 1, p. 18.

लग गया है। कई क्षेत्रो मे तो जल विद्युत ने उन्हे बहिष्कृत कर दिया है। इसकी सर्व-प्रियता, शीघ्र प्रचार तथा महत्व-पूर्णता के अनेक कारण हैं —

(१) कोयले तथा पेट्रोल की सुरक्षित मात्रा की एक सीमा है अतः निरन्तर प्रयोग करते रहने से एक ऐसा समय आ सकता है जब कि इसके भण्डार समाप्त हो जावेंगे। अत इनका भविष्य सदिग्ध है। जबकि जल-विद्युत का भण्डार अक्षय है यह निरन्तर उत्पन्न की जा सकती है। जहाँ जल विद्युत के उत्पादन की सुविधायें नही हैं वहाँ अन्य साधन खोज निकाले गये हैं एवं प्रयत्न किये जा रहे हैं। उदाहरणार्थ कृत्रिम पैट्रोल, सूर्य की किरणो की शक्ति, ज्वार भाटा के जल की शक्ति आदि को काम में लाने के लिये अविरल प्रयत्न जारी है।

(२) जल विद्युत के प्रयोग मे स्वच्छता एव सुविधा रहती है अत इसे श्वेत कोयला (White Coal) कहते है। कोयला तथा पैट्रोलियम की अपेक्षा इसे कम श्रमिको द्वारा चलाया जा सकता है।

(३) बिजली के प्रयोग से उद्योग के विकेन्द्रीकरण मे सरलता हो गई है। उससे केन्द्रीकरण के दोषों को बचा जा सकता है।

(४) बिजली द्वारा यन्त्र चलाने में बहुत कम बिजली का व्यय होता है। जितनी शक्ति छ टन कोयले से मिलती है उतनी ही शक्ति एक अश्व-शक्ति बिजली से प्राप्त होती है।

(५) बिजली के केन्द्र से दूर तक ले जाने मे प्रारम्भ मे तार का एवं खम्भे लगाने का खर्चा अवश्य पडता है किन्तु बाद के वर्षों मे इनका उपयोग होता रहता है। अतः बिजली के कारखानो तक ले जाने मे कोयला अथवा तेल की अपेक्षा कम व्यय होता है। परिणामस्वरूप बिजली सस्ती पडती है।

(६) बिजली का अधिकाधिक प्रयोग बढने से कोयले की बचत होती है, और उसके ढोने मे जो यातायात के साधन काम मे लाये जाते हैं उनका उपयोग अन्य वस्तुओं के वाहन मे किया जा सकता है।

(७) कोयले के स्थान पर बिजली के प्रयोग से रेलगाडियों के चलाने मे अधिक सुविधायें रहती है। रेल को एकदम चालू करने तथा रोकने मे बहुत कम समय लगता है। गति अधिक तेज हो सकती है। पहाडों की चढ़ाई में बिजली की शक्ति द्वारा चालित रेलगाडी अधिक उपयुक्त रहती है क्योंकि उतार की यात्रा में विद्युत उत्पन्न होती रहती है जिसका प्रयोग चढाव पर किया जा सकता है। सुरंगों में कोयले के धुंए से दम घुटने लगता है अत ऐसे स्थानो पर धूम्र रहित रेलगाडियाँ अधिक उपयुक्त रहती है। रेलगाडी चलाने में बिजली का प्रयोग होने की दशा में रेलवे लाइन के समीपस्थ भागों में विद्युत का वितरण प्रकाश कुटीर उद्योग, इत्यादि के लिए किया जा सकता है। स्विट्ज़रलैंड, इगलैंड, जर्मनी और भारत में भी विद्युत रेलें अधिक चलाई जाती हैं।

(८) यों तो प्रायः उद्योगो के सभी क्षेत्रो में बिजली के प्रयोग से सुविधायें रहती है किन्तु कुछ विशेष उद्योगो में विद्युत का प्रयोग बहुत ही आवश्यक हैं। उदाहरणार्थ अल्यूमीनियम बनाने में, वायुमण्डल से नाइट्रोजन प्राप्त करने में, लकड़ी की लुग्दी बनाने, कागज़ और लोहे की चादरें बनाने में इस शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है।

की जाती थी किन्तु उस शताब्दी के अन्त से गैस यान्त्रिक शक्ति के रूप में भी व्यवहृत की जाने लगी है। आधुनिक युग में गैस का उपयोग कई कार्यों में किया जाता है। इसका सबसे अधिक उपभोग उद्योग-धन्धों में होता है। संयुक्त राज्य में गैस के कुल उत्पादन का २८% उद्योग-धन्धों और ८७% घरेलू कार्यों तथा ५% व्यापारिक कार्यों में प्रयुक्त होता है। गैस तेल तथा गैस के कुओं में तेल तथा गैस निकालने के लिए शक्ति के रूप में भी काम में लाई जाती है। इसका उपभोग काँच, तेल साफ करने, लोहे, सीमेंट आदि के कारखानों में भी किया जाता है। गैस से काला कारबन, गैसोलीन, हेलियम और तरल पैट्रोलियम भी बनाया जाता है। इससे टायर, स्याही और रंग आदि भी बनाते हैं।

देश	जल-विद्युत शक्ति का कुल उपभोग (१० लाख किलोवाट में)	धातु शोधन एवं विद्युत, रासायनिक उद्योगों में जल विद्युत शक्ति का उपभोग (१० लाख किलोवाट में)	कुल उपभोग के अनुपात में धातु शोधन एवं रासायनिक उद्योगों में जल विद्युत का उपभोग (%)
फ्रांस	२८,८८७	४,२३८	१४.७
प० जर्मनी	३७,८३४	९,६००	२५.४
इटली	२०,६६८	४,६०७	२२.४
नार्वे	५१,५५५	७,०५०	४५.५
स्वीडेन	१५,५५०	२,६७७	१६.६
स्विटजरलैंड	८,४४२	१,७६४	२१.०
जापान	३१,९६३	५,७७८	१८.३

भारत के आँकड़े प्रस्तुत नहीं हैं किन्तु यह ज्ञात है कि लोहे इस्पात तथा एल्यूमीनियम और ताँबे के उद्योग में कुल विद्युत शक्ति का १२.८% उपभोग होता है।

भारत में विद्युत शक्ति का उपभोग प्रति व्यक्ति पीछे अन्य देशों की तुलना में बहुत ही कम है। हमारा प्रति व्यक्ति पीछे वार्षिक उपभोग केवल ३ किलोवाट है जबकि उपभोग की यह मात्रा पश्चिमी देशों में बहुत अधिक है—कनाडा में प्रति व्यक्ति पीछे ४३३८ किलोवाट शक्ति, स्विटजरलैंड में ३६६७ किलोवाट; संयुक्त राज्य अमेरिका में २,२०७ किलोवाट, न्यूजीलैंड में १,५१६ किलोवाट; जापान में ५०० किलोवाट और इग्लैंड में १,४२१ किलोवाट है[1]।

अनुमान लगाया गया है कि धातु शोधन में प्रति शॉर्ट टन पीछे औसत तौर पर विभिन्न धातुओं के पीछे निम्न रूप में जल विद्युत शक्ति का उपभोग आवश्यक है :—[2]

एल्यूमीनियम	२४,००० किलोवाट	क्लोरीन और का० सोडा	३,४०० कि० वा०
तांबा	३६७ ,,	फैरो-सिलीकन	१०,००० ,,
जस्ता	३७१४ ,,	कॉस्ट और अलाय-लोहा	५०० से ६००,,
		कॉस्ट स्टील	५०० से ७००,,
मैग्नेसियम	१६,००० से २०,०००	विद्युत पिग आयरन	२,५०० ,,

1. *C. B. Mammoria*, **Organisation and Financing of Industries in India**, 1960, p. 171.

2. **Britannica Book of The Year**, 1963, p. 184.

होने की सम्भावना होगी । यदि थोड़े परिमाण का जल अधिक ऊँचाई से गिरता है तो शक्ति का उत्पादन भी बड़ी मात्रा में होगा और जहाँ अधिक परिमाण का जल कम ऊँचाई से गिरता है तो शक्ति भी उसी मात्रा में उत्पन्न होगी । भारत में उत्तर प्रदेश में गंगा नहर में हरिद्वार से अलीगढ़ तक ११ जल प्रपात पाये जाते हैं—यथा बहादुराबाद, मुहम्मदपुर, सलवा, चित्तौड़ा, सुमेरा, बुलन्दशहर, पालुरा, भोला आदि—जहाँ जलशक्ति प्राप्त करने के बड़े महत्वपूर्ण केन्द्र बन गये हैं । दक्षिणी भारत में पश्चिमी घाटों के जल प्रपातों तथा मध्यप्रदेश में धुआँधार जल प्रपात और मैसूर में जिरसप्पा प्रपात पर जल-विद्युत शक्ति उत्पन्न की जाती है । अफ्रीका में विक्टोरिया तथा उत्तरी अमेरिका में नियाग्रा के संसार प्रसिद्ध झरनों का महत्व जलशक्ति पैदा करने के कारण ही है । जापान, स्वीडेन तथा नार्वे और उत्तरी इटली में भी नदियों के मार्गों में जल प्रपातों के कारण ही सस्ती जल-शक्ति उत्पन्न की जाती है ।



चित्र १३७. विक्टोरिया प्रपात

(२) जल का निरन्तर प्राप्त होना (Constant Supply of Water)—

जलशक्ति के उत्पादन करने के लिए जल की मात्रा का निरन्तर और एकसी मात्रा में उपलब्ध होना भी आवश्यक है । अस्तु, जिन क्षेत्रों में वर्षा पर्याप्त और साल-भर समान रूप से होती रहती है वहाँ नदियों के प्रवाहित जल की राशि भी निरंतर समान गति से प्रवाहित होती रहती है तथा जिन स्थानों में वर्षा मौसमी होती है वहाँ कुछ महीनों में अधिक पानी प्राप्त होता है और नदियों में बाढ़ें आ जाती हैं । किन्तु शेष महीने नदियों में पानी की मात्रा कम रह जाती है और जलशक्ति के लिए जल की मात्रा पर्याप्त नहीं रहती । ऐसे स्थानों में बाँध आदि बनाकर वर्षा ऋतु के जल को रोका जाता है और इस जल को कृत्रिम रूप से झरने के रूप में ऊँचाई से गिराया जाता है । नार्वे, स्वीडेन तथा स्विटजरलैण्ड में प्राकृतिक रूप से बने झरनों की अधिकता है । अतः जल-विद्युत शक्ति भी अधिक बनाई जाती है ।

सं० राज्य	३६५	३४७	९१·१
अर्जेन्टाइना	५४	१४	२·६
ब्राजील	२००	२६	१३·९
चिली	७०	६	७·८
पीरु	६४	३	५·१
इटली	६०	९५	१५८·३
स्पेन	३५	३०	८५·७
स्वीडेन	४०	५८	१४५ ०
स्विटजरलैंड	३०	४६	१५१·६
स० राष्ट्र	८	११	१४६ ६
रूस	१४०	६०	४२·९
अल्जीरिया	३	२·७	९२·९
बेल्जियम कागो	१३०	३ ५	०·२७
फ्रांसीसी कैमरून	७०	०·४	०·५७
केनिया	२०	०·२	१·००
मोरक्को	३ ५	१·९	५५·१
लका	५ ०	०·४५	९·०
चीन	२२०	०·०४	०·१९
फारमोसा	१०	४ ७	४७·०
भारत	२७०	१०	३ ७
जापान	१२०	१००	८३·३
कोरिया	३०	१८	६०·०
आस्ट्रेलिया	१००	१४ ०	४४ ०
जावा	११	१·४	१२ ८
न्यूजीलैंड	५०	११	२३ ४
फिलीपाइन	२०	१ १	५ ५
विश्व का योग	६४८ ६	१२९·७	२०·३

१९६० में विश्व में जलशक्ति का उत्पादन १५,३,९४० लाख किलोवाट शक्ति था। यह उत्पादन १९३७ के उत्पादन से २४२% अधिक था। कुल उत्पादन का ४०% उत्तरी अमरीका में, ३१% यूरोप में, ११% रूस में और ६% एशिया में हुआ।

उक्त तालिका से स्पष्ट होगा कि विश्व के जल-शक्ति के अनुमानित भण्डार सबसे अधिक उष्णकटिबन्धीय अफ्रीका में पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि

अधिक दूर तक तार लगाना और उसकी देखभाल करना बड़ा व्ययसाध्य हो जाता है। इस व्यय के कारण एक ऐसा बिन्दु आ जाता है जहाँ से आगे शक्ति-संवाहन की लागत संवाहित शक्ति के मूल्य से बढ़ जाती है। अतः खपत के केन्द्र विद्युत उत्पादन के क्षेत्रों के निकट होना अनिवार्य हैं। संयुक्त राज्य में २८,७०,००० वाल्ट की शक्ति २५० से ३०० मील तक बड़ी सरलता से भेजी जा रही है। बोनविले शक्ति प्रशासन ने तो एक ६०० मील लम्बी शक्ति ले जाने वाली तार की लाइन लगाई है।

(५) जल-विद्युत उत्पादन में प्रयुक्त होने वाली पुच्छल जलराशि (Tail-water) का उपयोग सिंचाई के लिए किया जा सके तो थोड़े से ही अतिरिक्त व्यय से नहरें बनाकर सम्बन्धित क्षेत्र की सिंचाई की जा सकती है और जलशक्ति के उत्पादन का मूल्य भी घटाया जा सकता है।

(६) जल-विद्युत उत्पादन के क्षेत्र ऐसे स्थानों पर स्थित होने चाहिए जहाँ मशीनें, आवश्यक भारी यंत्र एवं अन्य सामान सुगमतापूर्वक पहुँचाया जा सके।

निम्न तालिका में विश्व के विभिन्न देशों में उन बाँधों को बताया गया है, जो जल विद्युत उत्पादन के निमित्त बनाये गये हैं और जो १०० फीट में ऊँचे हैं[3] :—

देश	बाँधों की वर्तमान संख्या	प्रति वर्ग मील पीछे बाँध
आस्ट्रेलिया और टसमानिया	४०	७४,२००
कनाडा	३७	६६,८००
फ्रान्स	५३	४,०१०
जर्मनी	३८	३,७६०
भारत	४०	३१,७००
इटली	११६	१,००८
जापान	१६१	६१६
स्विटजरलैंड	२४	६६६
इंग्लैंड	२६	५६,५००
महाद्वीपीय संयुक्त राज्य अमेरिका (अलास्का सहित)	४६६	६,०६०

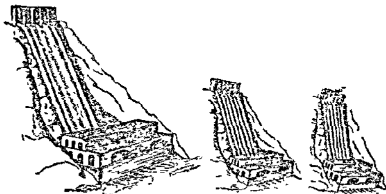
जलशक्ति का महत्व

शताब्दियों से यंत्र शक्ति के लिए कोयला तथा पैट्रोलियम का प्रयोग किया जाता रहा है और अब भी हो रहा है। किन्तु जब से जल-विद्युत का आविष्कार हुआ है तथा इसका उपयोग किया जाने लगा है, कोयले और पैट्रोल का महत्व कम होने

3. **Major Industries Annual**, 1954-55, p. 115.

स्वीडेन	४१	६०
नार्वे	३६	१३०
स्विटजरलैंड	३६	८०
जर्मनी	२७	·०४
स्पेन	२३	·०८
आस्ट्रिया	२०	·३०
ब्राजील	१६	·०४
कोरिया	१८	·०६
भारत, पाकिस्तान लंका	०६	·०२
इंग्लैंड	०·८	०२
न्यूजीलैंड	०·७	३५
फिनलैंड	०·७	१८
आस्ट्रेलिया-टसमानिया	०४	०५
चिली	०·४	०७

इस तालिका से विदित होता है कि जलविद्युत का सबसे अधिक विकास यूरोपीय देशों और उत्तरी अमेरिका में हुआ है। इटली, फ्रान्स, स्वीडेन, नार्वे, स्विटजरलैंड और जर्मनी यूरोप की समस्त विकसित शक्ति का ७५% उत्पन्न करते हैं। व्यक्तिगत रूप से इटली ने अपनी जलशक्ति का ६०%, स्विटजरलैंड ने ६७%, जर्मनी ने ५४%, नार्वे ने ५३%, फ्रांस ने ४८%, स्वीडेन ने २७% और रूस ने ३४% का विकास किया है जबकि संयुक्त राज्य ने अपनी २४% शक्ति और कनाडा ने २८% शक्ति तथा भारत ने केवल १% शक्ति का विकास किया है।



चित्र १३९. विश्व में जलविद्युत शक्ति का तुलनात्मक उत्पादन

जलशक्ति का उपयोग

आधुनिक काल में जल विद्युत शक्ति का विकास और उसका उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। इसके कई कारण है:—

(१) अल्यूमीनियम, कृत्रिम रेशे तथा समाचार पत्रो का कागज बनाने मे अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है। यह विद्युत शक्ति द्वारा ही मिलती है।

(२) बहुत से उद्योग कोयले की खानो से दूर स्थापित किये गये है जहाँ कोयला पहुँचाना व्ययसाध्य होता है किन्तु विद्युत शक्ति सरलता के साथ भेजी जा सकती है।

(३) संसार की आवश्यकता से कम कोयला निकाला जा रहा है।

(४) खेती की पैदावार बढाने के लिए सिंचाई की उन्नति करनी पड़ी है। इस उन्नति के लिए नदियो पर बाध बनाने पडे हैं। इन बाधो पर बढ़ते हुए जल से विद्युत बनाना सरल हुआ है।

विश्व के कुछ प्रमुख बाँध इस प्रकार हैं—

बाँध की ऊँचाई	जल-चक्की पर गिरने वाले जल की ऊँचाई	संभावित स्थापित क्षमता (०००Kw)	सिंचित क्षेत्र (१० लाख एकड़)
हूवर बाँध			
(सं. रा) ७२२'	४६०	१,३१८	४६
ग्रांडकूली बाँध			
(स. रा.) ५२४'	३३४	१,८२२	१·१
निप्रोस्ट्राय (रूस) १३१'	१२८	७००	—
सेंगोक (फ्रांस) ४८६'	२,५८८	२,२५३	०·४
वालडोमर (फ्रांस) १६८६'	५,७००	२,७८०	—
भाकडा	७४०'	६०४	३·६

जल विद्युत शक्ति का उपयोग मकानो तथा सड़को पर रोशनी करने, ठढे देशों मे गर्म करने, ट्यूब वैलो मे जल निकालने तथा खेती मे ट्रैक्टर आदि चलाने के अतिरिक्त उद्योग धन्धों मे अधिक किया जाता है। रासायनिक और धातु-शोधन सम्बन्धी (Metallurgical) उद्योगो मे यह अधिक प्रयुक्त की जाने लगी है जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा[1]:—

1. *Govt. of India*, **Bhagirath Anniversary Number**, June, 1955, p. 25.

है। संयुक्त राज्य में सुरक्षित जलविद्युत सम्पत्ति की ५% बिजली उत्पन्न की जाती है। बाढ के सारे पानी को यदि बाँधा जावे तो इस देश मे केवल इस पानी से ८० करोड अश्व-शक्ति बिजली तैयार की जा सकती है। १६२०--६० के बीच जलविद्युत शक्ति का उत्पादन लगभग १४ गुना बढा है। नीचे की तालिका से यह स्पष्ट होगा [5] :—

(लाख किलोवाट मे)

	१६२०	१६५३	१६६०
सम्पूर्ण उत्पादन	३६,४०५	४४२,६६५	७,५२८,६१०
जल वियुत शक्ति	१५,७६०	१०५,२३३	१,५०५,७२२
वाष्प शक्ति	२३,४८६	३३३,५४२	५,२६८,३६१
तेल शक्ति	१५६	३,८६०	७५४,४६७

सयुक्त राज्य मे जलविद्युत उत्पादन १८६६ के बाद से ही बढ़ा है। सन् १६०० मे केवल २० लाख अश्व-शक्ति का उत्पादन किया गया किन्तु १६११ मे यह मात्रा ७६ लाख अ श., १६३१ मे १४८ लाख अ. श., १६४० मे २०० लाख अ. श. और १६५३ मे २२० लाख अश्व शक्ति हो गई। [6]

(1) सयुक्त राज्य के जल-विद्युत उत्पादन क्षेत्र—सयुक्त राज्य के मुख्य जल-विद्युत उत्पादन क्षेत्र पूर्वी अटलांटिक समुद्र तटीय पेटी मे फैले हुए है। पीडमाँट पठार और तट के बीच मे झरनो की एक पंक्ति है। जो नदियाँ अपलेशियन पर्वत से निकलती है वे सभी डेलावेयर, सस्केहाना, पोटोमैक और जेम्स पठार को छोड़ते ही मैदानी भाग मे प्रवेश करते समय अपने मार्ग मे झरने बनाती हैं। इन झरनो की पंक्ति (Fall Line) पर क्रमश ट्रेन्टन, फिलाडेलफिया, बाल्टीमोर, वाशिंगटन, रिचमाड, पीटर्सवर्ग, रैले, कोलबिया, आगस्टा, मैकन आदि नगर बसे है। अन्य क्षेत्र झीलो के पास और राकी पर्वतीय क्षेत्रो मे स्थित हैं। सयुक्त राज्य के मुख्य क्षेत्र निम्नलिखित है :

(१) न्यू इङ्गलैंड की रियासतें (New England States)—इस क्षेत्र मे कानेकटिकट, माएन, मैसाचुसेट्स, न्यू हेम्पशायर, रोडद्वीप और वरमोण्ट शामिल है। इस क्षेत्र मे १२१ जल विद्युत गृह है जिससे प्रति वर्ष ३७० करोड़ किलोवाट बिजली पैदा की जाती है। यह क्षेत्र प्राचीन समय से हिम नदियो की क्रियाओ से प्रभावित हुआ था इसलिए यहाँ असख्य छोटी-बडी झीलें और प्राकृतिक जल प्रपात पाये जाते हैं। इस क्षेत्र मे कोयला नही पाया जाता और यह क्षेत्र कोयला क्षेत्रो से काफी दूर पडता है। इसलिए प्राकृतिक सुविधाओ की उपस्थिति मे काफी जल विद्युत तैयार की जाती है। अधिक वर्षा होने से सभी झीलों मे सारे साल आवश्यकतानुसार काफी पानी रहता है। इस क्षेत्र मे संयुक्त राज्य की अन्य रियासतो की अपेक्षा कही अधिक जल विद्युत उत्पन्न की जाती है।

5. *USIS* : **Economic Forces in the U. S. A. in Facts and Figures**, (1955), p. 57.

6. *D. H, Davis,* **Earth and Man**, 1955, p. 204.

विश्व में जल विद्युत का विकास

जल विद्युत की सुरक्षित और उत्पादित राशि का अनुमान करना बड़ा ही दुष्कर है क्योंकि अभी इसके खोज सम्बन्धी कार्य बहुत ही अविकसित दशा मे है। विश्व की सुरक्षित राशि का लगभग ४१½% अफ्रीका में पाया जाता है। किन्तु इसमे से बहुत ही नगण्य राशि (½ से १%) का उपभोग किया जा सका है। एशिया में सम्पूर्ण विश्व का २२% पाया जाता है जिसमे से ४% का ही उपयोग हुआ है। वास्तव में उत्तरी अमेरिका मे सुरक्षित राशि का केवल १३% और यूरोप मे १०½% पाया जाता है किन्तु दोनो ही महाद्वीपो मे क्रमश ४०% व ३३% का विकास किया गया है क्योकि इन्ही महाद्वीपों मे औद्योगिक विकास अधिक हुआ है। दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया मे जल विद्युत शक्ति का और भी कम विकास हो पाया है। जैसा कि नीचे तालिका से स्पष्ट होगा :—[3]

जल विद्युत शक्ति का वितरण

(अश्व-शक्ति मे)

महाद्वीप	सुरक्षित	जलशक्ति गृहों की क्षमता (१० लाख) किलोवाट	उत्पादित
अफ्रीका	२७२,०००,०००	·६	१७५,०००
एशिया	१५१,०००,०००	१३ ७	३,०००,०००
उत्तरी अमेरिका	८७,०००,०००	४१·१	२६ ०००,०००
दक्षिणी अमेरिका	५५,०००,०००	४० ८	१,३००,०००
यूरोप	६९,०००,०००	३ १	२०,५००,०००
ओसीनिया	२३,०००,०००	१·४	६००,०००
विश्व का योग	६५७०००,०००	१०० ७	६४,५७५,०००

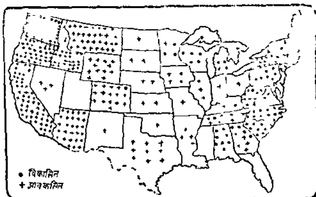
नीचे की तालिका मे विश्व मे जल विद्युत शक्ति का उत्पादन बताया गया है :—

विश्व के कुछ देशों में सम्भावित और विकसित जल शक्ति का वितरण (१९६०)[4]

देश	सम्भावित शक्ति (लाख अश्व शक्ति मे)	विकसित शक्ति	सम्भावित शक्ति का विकसित शक्ति मे अनुपात
कनाडा	३३६	१९७	४५·७
मैक्सिको	८५	६	१० ६

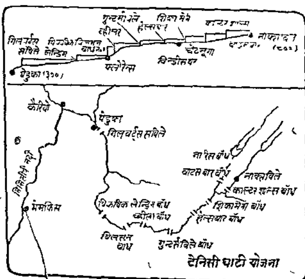
3. *(i) U. S. Geological Survey*, **Developed and Potential Water Power of the World,** 1951, p. 7; *(ii)* **Man and His Material Resources,** p. 53.
4. **U. S. Geological Survey Circular, No. 367.**

(५) पैसिफिक तट क्षेत्र (Pacific Area)—इस क्षेत्र में केलीफोनिया और अरीजोना रियासतें शामिल हैं। पूर्वी तटीय मैदान की तरह इस क्षेत्र में छोटी, द्रुतगामी नदियों का लगातार एक क्रम उत्तर से दक्षिण तक फैला है। इस क्षेत्र में कोलोरेडो नदी पर बने बांधों के द्वारा काफी जल विद्युत बनाई जाती है। बांधों में



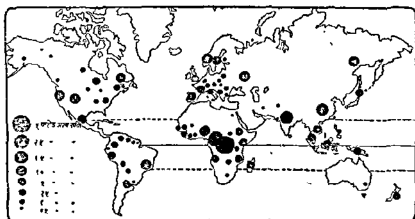
चित्र १४१ स० रा० अमेरिका में जल विद्युत शक्ति

प्रसिद्ध बांध हूवर, ग्राण्ड कूली और बोल्डर बांध सारे संसार में प्रसिद्ध हैं। पहाड़ी ढालों की उपस्थिति, कोयले की कमी, पर्याप्त ढालू भूमि, सिंचाई के साधनों की अत्यधिक आवश्यकता, जाड़े की ऋतु में घनी वर्षा का होना। गर्मी की ऋतु में बर्फ के पिघलने से काफी पानी की प्राप्ति और तटीय बड़े नगरों में बिजली की बड़ी मांग अन्यतम सुविधायें हैं।



चित्र १४२. टैनेसी घाटी योजना

उसका बहुत सा भीतरी भाग एक ऊँचा पठार है और प्राय सभी नदियों में तट के पास जल-प्रपात पाये जाते है। कागो नदी अपने मार्ग मे ३,००० फीट ऊँचाई से बहते हुए कई प्रपात बनाती हैं। स्टैनले प्रपात मे तो इतनी शक्ति भरी है कि उससे १०० से १५० लाख अश्व शक्ति का उत्पादन किया जा सकता है। मध्य अफ्रीका मे वर्षा भी अधिक होती है।



चित्र १३८. जलविद्युत शक्ति के सुरक्षित क्षेत्र

एशिया का स्थान दूसरा है लेकिन क्षेत्रफल देखते हुए जलशक्ति कुछ भी नही है। संभावित जलशक्ति की मात्रा के अनुसार उत्तरी अमेरिका का स्थान तीसरा है। सभावित जलशक्ति के विश्व वितरण की मुख्य विशेषता यह है कि उसका बहुत सा अंश उन महाद्वीपो मे पाया जाता है जो बहुत ही पिछड़ी अवस्था मे है।

नीचे की तालिका मे विश्व के २० प्रमुख देशो मे जलशक्ति की क्षमता बताई गई है :—

जलशक्ति की क्षमता १९६०

देश	कुल क्षमता (१० लाख अश्वशक्ति मे)	प्रति व्यक्ति पीछे अश्व-शक्ति
संयुक्त राज्य अमेरिका	२७·५	·१८
कनाडा	१२·६	·६०
जापान	६·२	·११
इटली	८·५	·१६
फ्रास	७·२	·१७
रूस	४·३	·०२

२६० मील तक ४ फुट थी और उसके ऊपर २६४ मील तक केवल २ फुट; किन्तु अब इसकी धारा ऊपरी ४६४ मील में ६ फुट गहरी कर दी गई है और निचले ६५० मील में ९ फुट। अत इससे नदी यातायात में बडी वृद्धि हुई है।

इस योजना के अन्तर्गत दलदली भूमि मे मलेरिया की रोकथाम भी हो चुकी है तथा विद्युत का उत्पादन भी बढा है। सम्पूर्ण योजना मे ६२२, १८१,०६४ डालर का व्यय अनुमानित किया गया है। यह खर्च स्टीम प्लान्ट लगाने, विद्युत के तार लगाने, नदी को नाव्य बनाने, रासायनिक उद्योग आदि के स्थापन मे खर्च होगा। १९३३ मे केवल १५,००० लाख किलोवाट घटा शक्ति तैयार की गई, १९४४ मे इससे १,०१,१७७ लाख किलोवाट और १९६१ में ६४५,१७० लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की गई। टेनैसी घाटी योजना ने अपने प्रदेशों की काया पलट करदी है। यहाँ मनोरजन के लिए कई उद्यान, शिकारगाह आदि भी पर्याप्त मात्रा मे बनाये गये है।

मिसौरी घाटी प्रबन्ध (Missouri Valley Authority)—टेनैसी घाटी योजना के आशाप्रद परिणाम के फलस्वरूप सं० रा० की केन्द्रीय सरकार ने प्रोत्साहित होकर कुछ और भी घाटी योजनाओं का प्रबन्ध किया है जिनमें मुख्य मिसौरी घाटी प्रबन्ध है। इसके अ तर्गत स० राज्य का कुल १६% क्षेत्रफल (लगभग ५ लाख वर्गमील) आ जावेगा। इस योजना के अन्तर्गत ये कार्य हैं :—

(१) नदी की ऊपरी और मध्यवर्ती घाटी मे जहाँ वर्षा के अभाव मे खेती अनिश्चित होती है—लगभग ५० लाख एकड भूमि की सिंचाई की व्यवस्था करना।

(२) मिसौरी नदी की निचली घाटी मे नदी की गहराई को बढाकर उसे नाव्य बनाना।

(३) निचले प्रदेश मे नदी मे बाढ नियन्त्रण कर प्रतिवर्ष होने वाली आर्थिक हानि से बचाना।

(४) मुख्य नदी और उसकी सहायक पर जलविद्युत शक्ति गृह स्थापित-कर शक्ति उत्पादन करना।

(५) नदी की घाटी मे मिट्टी के कटाव को रोकना।

इस योजना मे लगभग १ अरब डालर का व्यय हुआ है तथा इसके द्वारा टेनैसी घाटी योजना की अपेक्षा ६ गुना अधिक क्षेत्रफल की सेवा की जायेगी।

बोल्डर बाँध या हूवर बाँध (Boulder or Hoover Dam)—यह बाध कोलोरेडो नदी पर (एरीजोना रियासत में) १९३६ मे बनाया गया। इसके निर्माण मे १२ करोड़ डालर खर्च हुए। इस बाँध के द्वारा २३० वर्गमील क्षेत्र की एक झील (Lake M ad) बनाई गई है जिसमे कोलोरेडो नदी के दो साल के प्रवाह के बराबर जल रोका गया है। इस बाँध के बनने के पूर्व कोलोरेडो नदी के जलप्रवाह मे बड़ा परिवर्तन होता रहता था। जब नदी मे जल की मात्रा कम होती थी तो प्रवाह प्रति सैकिंड पीछे १३०० घन फीट होता था, किन्तु अधिक पानी के समय प्रवाह की मात्रा सैकिंड २४०,००० घनफीट से ३००,००० घनफीट तक हो जाती थी। इससे नदी के प्रवाह प्रदेशों मे बाढ आ जाने से अकथनीय हानि होती थी। अतः सयुक्त राज्य की सरकार ने १९३१ मे इस बाँध का श्रीगणेश किया। इस योजना का उद्देश्य भ बहुमुखी है।

इटली, स्विटजरलैंड, नार्वे, स्वीडेन आदि यूरोप के ऐसे देश हैं जिनमें कोयले का अभाव है और इसलिये जल शक्ति की भारी माँग होने से इन देशों में उनका विकास इतना अधिक हो सका है। यद्यपि फ्रांस और जर्मनी कोयला पैदा करने वाले देशों में प्रमुख हैं किन्तु वहाँ भी जलशक्ति का विकास बहुत हुआ है। फ्रांस के बहुत से भागों में महत्वपूर्ण कोयले की खानें नहीं पाई जाती। दूसरे फ्रांस को अपने कोयले की ½ आवश्यकता के लिये विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। जर्मनी में कोयला अधिक मिलता है फिर भी उद्योग-धन्धों के बढ़ने के कारण जलशक्ति का विकास आर्थिक दृष्टि से लाभदायक सिद्ध हुआ है। ग्रेट-ब्रिटेन में कोयले की अधिकता और सम्भावित जलशक्ति की कमी के कारण जलविद्युत का महत्व बहुत कम है। रूस में कोयला और तेल दोनों ही पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। सम्भावित जलशक्ति के अधिक होने हुये भी जलशक्ति का विकास अभी आरम्भ ही हुआ है।

एशिया के देशों में सम्भावित शक्ति के अनुपात में विकास बहुत कम हुआ है। किन्तु जापान और कोरिया ऐसे देश हैं जहाँ जलशक्ति का विकास अपनी चरम सीमा पर हुआ है।

जल विद्युत शक्ति का उत्पादन
(१० लाख किलोवाट घंटों में)

देश	१९५५	१९५९
इटली	३०,८००	३८,३७०
फ्रांस	२१,९५६	३२,९१३
प० जर्मनी	६,२००	१०,९३१
नार्वे	१०,०८८	२८,३७५
स्वीडेन	८,१२५	२८,६२२
फिनलैंड	२,४३५	५,४२०
आस्ट्रिया	२,६००	१०,६७५
स्विटजरलैंड	७,०८९	१८,०७८
स्पेन	२,८४४	१४,०५०
प० जर्मनी	२८,६९५	४०,३०० (१९६०)
रूस	१७,२२५	२९१,००० (१९६०)

उत्तरी अमरीका में जलविद्युत का विकास

सुरक्षित सम्पत्ति के दृष्टिकोण में उत्तरी अमेरिका का स्थान संसार में तीसरा है लेकिन उत्पन्न की गई शक्ति के विचार में इसका स्थान प्रथम है। इस महाद्वीप में संयुक्त राज्य और कनाडा में ही जलविद्युत उत्पादन का अधिकाधिक विकास हुआ है। आधुनिक औद्योगिक विकास के साथ ही जलविद्युत का उपभोग बहुत बढ़ गया है। उत्तरी अमेरिका में कुल ३ करोड़ अश्व-शक्ति जलविद्युत उत्पन्न की जाती

इस क्षेत्र में सेन्ट लारेन्स नदी के अन्तर्राष्ट्रीय उथले वेग के भाग में कई बाँध बनाकर जलविद्युत उत्पन्न की जा रही है। इस क्षेत्र में दक्षिणी पूर्वी ओन्टारियो और क्यूबेक रियासतों के भाग शामिल है। यहाँ २२ लाख अश्वशक्ति की सुरक्षित सम्पत्ति में से १ लाख अश्वशक्ति बिजली उत्पन्न की जा रही है।

(३) पैसिफिक तटवर्ती भाग—इस क्षेत्र में ब्रिटिश कोलम्बिया रियासत शामिल है। यहां कोयले का अधिक अभाव है। राकी और कोस्ट पर्वत की श्रेणियों के पास प्राकृतिक जल प्रपातों से बिजली उत्पन्न की जाती है। फ्रेजर और कोलम्बिया नदियों पर बाँध बनाये गए हैं। यहाँ ८८ लाख अश्व शक्ति बिजली उत्पन्न की जाती है जिसके द्वारा कनाडा के कागज और लकड़ी उद्योग चलाये जाते हैं।

कनाडा की जलविद्युत शक्ति की स्थापित क्षमता २६७ लाख अश्व शक्ति है।

कनाडा के विभिन्न राज्यों में प्राप्य और विकसित जलशक्ति १ जनवरी, १९५७ :—[7]

प्रान्त	२४ घंटे प्रतिदिन के हिसाब से शक्ति की उपलब्धता (००० में) न्यूनतम बहाव	साधारण बहाव	विद्युत शक्ति का जमाव
न्यूफाउण्डलैण्ड	९५६	२,७५४	२३६,७५०
प्रिंस एडवर्ड द्वीप	०५	३	१,८८२
नोवास्कोशिया	२६	१५६	१७१,०१८
न्यू ब्रन्सविक	१२३	३३४	१६४,१३०
क्यूबेक	१०,८६६	२०,४४५	८,४८९,९५७
अन्टेरियो	५,४०७	७,२६१	५,४४१,८६६
मानीटोबा	३,३३३	५,५६२	७९६,९००
सस्केचवान	५५०	१,१२०	१०९ ८३५
एलबर्टा	५०८	१,२५८	२८५,०१०
बृ० कोलम्बिया	७,०२३	१०,९९८	२,५६६,४६०
यूकन और उत्तर-पश्चिमी राज्य	३८३	८१४	३३,२४०
कनाडा	२९,२०७	५०,७०५	१८,६०३,८४८

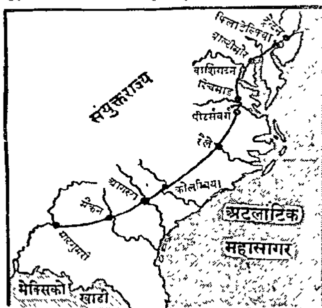
१९६१ में यहाँ ११०,०७१ लाख किलोवाट घंटा शक्ति का उपयोग किया गया।

यूरोप में जल शक्ति का विकास

यहाँ जल-विद्युत मात्रा का अनुमान लगभग ७ करोड़ अश्व शक्ति है जिसका केवल ३३% ही घोषित किया जा सका है। इस महाद्वीप में औद्योगीकरण का विकास सबसे अधिक हुआ है। इसलिये शक्ति की प्रचुर माँग रहती है। यहाँ के कई

7. **Canada**, 1957, p. 117.

(२) **दक्षिणी एटलाण्टिक रियासतें** (South Atlantic States)—इस क्षेत्र मे वर्जीनिया, दक्षिणी केरोलिना रियासतें शामिल है। इन रियासतो मे ब्लू पर्वत और मैदानी पेटी के सगम क्षेत्र (Piedmont Area) मे प्रपातरेखा के सहारे असख्य प्रपात उपस्थित है जिनसे काफी जल विद्युत का विकास हुआ है। इस क्षेत्र मे काफी वर्षा होती है और झीलो मे सारे वर्ष पानी भरा रहता है। इस क्षेत्र का सबसे बडा जल-विद्युत-गृह चारलोट नगर के पास है। यहाँ की घनी आबादी, औद्योगिक उन्नति



चित्र १४०. सयुक्त राज्य मे जल विद्युत के केन्द्र

और शक्ति की मांग के कारण खपत भी बहुत होती है। यहा से उत्तरी रियासत और *औद्योगिक नगर वाशिंगटन और बाल्टीमोर को भी बिजली भेजी जाती है।*

(३) **नियाग्रा जल प्रपात क्षेत्र** (Niagra Fall Region)—यह क्षेत्र पूर्ण रूप से न्यूयार्क रियासत मे फैला हुआ है। इस क्षेत्र मे नियाग्रा जल प्रपात से काफी जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। नियाग्रा प्रपात इरी और ओण्टारियो झीलो के मध्य स्थित है। कुल उत्पन्न की गई बिजली की दो-तिहाई सयुक्त राज्य मे आती है। यहाँ उत्तरी अमेरिका का सबसे बडा विद्युत गृह है। यहाँ से पूर्व मे अत्यन्त उन्नतशील औद्योगिक क्षेत्रों को बिजली प्राप्त होती है। कोयले का अभाव और औद्योगिक शक्ति की माँग के कारण यहाँ विद्युत का काफी विकास हो गया है।

(४) **महान झीलों का दक्षिणी क्षेत्र** (Great Lakes Area)—इस क्षेत्र मे सुपीरियर, मिशीगन, ह्यूरन झीलो के दक्षिण मे स्थित विसकान्सिन और मिशिगन रियासतो का भाग शामिल है। ये दोनो ही रियासतें हिम-नदी का प्रभाव क्षेत्र रही हैं। इसलिये असख्य छोटी-बडी झीलें इस क्षेत्र मे है। नदियाँ छोटी और द्रुतगामी हैं और औद्योगिक माँग भी अधिक है। यह भाग कोयला क्षेत्रों से काफी दूर पड़ता है।

मे बिजली का उपयोग विशेषकर खाद, कारबाइड, विद्युत्-रसायन, जस्ता, अल्यूमीनियम धातु, कागज, वन, और लोहे इस्पात के कारखानो और रेल चलाने में होता है। नार्वे के दक्षिणी भागो मे घनी जनसंख्या और औद्योगिक विकास के कारण इस सस्ती जलविद्युत की काफी माँग रहती है। यहाँ १९६० मे ३५ लाख किलोवाट बिजली तैयार की गई और स्वीडेन मे ३७०,००० लाख कि० घटा।

स्विटजरलैण्ड—स्विटजरलैंड मे जल-विद्युत शक्ति का अच्छा विकास हो पाया है क्योकि यहाँ पहाडी भागो में जल-प्रपातो की अधिकता है तथा आल्पस से निकलने वाली नदियाँ तेज बहने वाली है। यहाँ कोयले का भी अभाव है तथा देश के धरातल के पहाडी होने के कारण विदेशों से कोयला लाना बड़ा व्ययसाध्य हो जाता है, अत जल शक्ति उत्पन्न कर इस अभाव को दूर किया जाता है। यहाँ के कुटीर उद्योगो में इस शक्ति का प्रयोग किया जाता है। यहां जल-विद्युत उत्पादन के २८५ विशाल केन्द्र हैं जिनमे से प्रत्येक मे २०,००० अश्व शक्ति से भी अधिक शक्ति का उत्पादन किया जाता है। १९६० मे १८८,२६० लाख कि० घटा शक्ति पैदा की गई।

स्विटजरलेण्ड में जल-विद्युत केन्द्र

केन्द्र	ऊँचाई (फीट मे)	बाँध की ऊँचाई (फीट मे)	बांध की शक्ति (लाख क्यू० फीट मे)	संभावित शक्ति (लाख किलोवाट)
डिक्सेन्स	७,३४८	२८५	१,७६०	२०००
ग्रिमसल	६,२६६	३७४	३,५३०	२,६००
डिक्सेन	७,७७६	८६६	१५,१८०	२०,०००

फ्रांस—फ्रास मे जलविद्युत शक्ति के उत्पादन के लिए कई अनुकूल अवस्थायें पाई जाती है यहाँ जल विद्युत का विकास आल्पस, पिरेनीज और सेवीन्स पर्वतो के सहारे-सहारे किया जा सकता है। फ्रास मे लोहे की मात्रा अधिक पाई जाती है किन्तु कोयले का अभाव ही है। अत फ्रान्स मे जल-विद्युत शक्ति का विकास काफी हुआ। १९६० मे ४३२,६०० लाख किलो० घंटा शक्ति तैयार की गई। नीचे की तालिका मे फ्रान्स के जलविद्युत केन्द्र बताये गये हैं :—

वर्तमान केन्द्र	नदी	ऊँचाई (फुट)	बाँध की ऊँचाई (फुट)	सम्भावित शक्ति (प्रतिवर्ष १० ला० किलोवाट मे)
बोर्ट	डोरडोन	१,६२६	३३०	२६४
सरान्स	ट्रूमीर	१,६३८	३१५	१२२
चैम्बन	रोमञ्च	३,१२०	२७४	७४
ल' ऐग्ल	डोरडोन	१,०२६	२७०	४४
मर्जेस	डोरडोन	१,२५१	२७०	१६
जैनीसीआट	रोन	६६०	३०६	१०
इगुजन	न्यूज	६०६	१७७	२·५
(निर्माण मे)	टिग्न्स इसर	५,२६५	३६०	२७२

रूस—विश्व मे सबसे प्रथम देश जलशक्ति भण्डारो की दृष्टि से रूस हैं। इन भण्डारो का ⅔ भाग एशियाई रूस में केन्द्रित है। इसी विद्युत शक्ति के फल-

पिछले कुछ समय से संयुक्त राज्य की केन्द्रीय सरकार ने कुछ ऐसी योजनाओं को कार्यान्वित किया है जिनका उद्देश्य न केवल जल विद्युत शक्ति का ही विकास करना है बल्कि उनके द्वारा बाढ़ का नियन्त्रण, जलमार्ग का विकास, सिंचाई और भूमि का वैज्ञानिक उपयोग, घरेलू कार्यों के लिए पानी की व्यवस्था, मछली पकड़ने की सुविधायें, जंगलों का संरक्षण आदि भी होगा। ऐसी योजनाओं में सबसे प्रमुख टेनैसी घाटी योजना है।

टैनैसी घाटी योजना (Tennessee Valley Project)

टेनैसी घाटी योजना का विकास टेनैसी रियासत में टेनैसी नदी की घाटी में किया गया है। टेनैसी और उसकी सहायक नदियां एक ऐसे प्रदेश में बहती हैं जिसकी बनावट में विभिन्न प्रकार की चट्टानें और ३०० फुट से ७,००० फीट तक के भूभाग हैं। यह प्रदेश खनिज संपत्ति में बड़ा धनी है। इस घाटी में सुधार करने हेतु अनेक प्रयत्न किए गये हैं और १९१४ के बाद से नदी का मार्ग अनेक स्थानों पर नावों की सुगमता के निमित्त सुधारा गया है। प्रथम महायुद्ध काल में बारूद बनाने के लिये अलबामा राज्य में स्थित फ्लोरेंस नगर के निकट मसल शोल्स का शक्तिगृह विलसन नामक बाँध पर ५ करोड़ डालर की लागत से बनाया गया था। किन्तु इस शक्तिगृह के चलने के पूर्व ही युद्ध समाप्त हो गया। अतएव कुछ समय तक सरकार के समक्ष यह समस्या हो गई कि वह इसका किस प्रकार उपयोग करे। किन्तु जब मिसीसिपी नदी में भयंकर बाढ़ के कारण एक बहुत बड़े भूभाग में विनाश हुआ तो सरकार ने इस नदी का सुधार मिसीसिपी की बाढ़ को कम करने के लिए किया।

टेनैसी नदी का प्रदेश ४१,००० वर्गमील में फैला हुआ है, जिसमें अधिकतर ग्रामीण जनसंख्या रहती थी। अतएव सन् १९३३ में अमरीका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने एक व्यवस्था बनाई जिसको निम्न कार्य सौंपे गये—

(१) टेनैसी की नाविकशक्ति में सुधार करना।

(२) बाढ़ों पर नियंत्रण करना।

(३) निकटस्थ भागों में वृक्षारोपण कर इस प्रदेश की औद्योगिक उन्नति करना।

(४) घाटी की कृषि और आर्थिक दशा में सुधार करना।

(५) जलविद्युत का उत्पादन, स्थानान्तरण तथा बिक्री करना।

सन् १९४८ में इस योजना के अन्तर्गत मुख्य नदी पर ९ और सहायक नदियों पर २१ बांध बनाये गये। सब मिला कर ३० बड़े बांध हैं। इनके अतिरिक्त इस व्यवस्था के अधिकार में २० लाख किलोवाट शक्ति के २६ शक्तिगृह भी थे तथा एक कोयले से शक्ति उत्पन्न करने का शक्तिगृह भी था जिसमें ४.५ लाख किलोवाट शक्ति उत्पन्न हो सकती है। इन दोनों शक्तिगृहों को शक्ति-लाइनों द्वारा जोड़कर सम्मिलित रूप में शक्ति का उपयोग किया जाता है। बाँधों के बन जाने से झीलों की एक शृंखला सी बन गई है (जिनका क्षेत्रफल ९३६ वर्गमील है)। इसमें स्वतः ही बाढ़ों पर नियंत्रण हो गया है। इसके फलस्वरूप ओहियो और मिसीसिपी की बाढ़ की ऊँचाई भी कम हो गई है। बाँधों की इस प्रणाली के कारण टेनैसी नदी की नाविक शक्ति में भी सुधार हुआ है क्योंकि इनके द्वारा मौसमी प्रवाह को रोक कर नदी में पानी का बहाव समान कर दिया है। पहले टेनैसी की गहराई

की काफी सुरक्षित मात्रा है लेकिन औद्योगीकरण के विकास न होने के कारण इस विद्युत सम्पत्ति का शोषण नहीं हो पाया। इस क्षेत्र में माँग भी बहुत कम है।

न्यूजीलैण्ड एक पर्वतीय प्रदेश है और पश्चिमी यूरोपीय जलवायु वाले खण्ड में स्थित है। इसलिए इसको सारे साल घनी वर्षा प्राप्त होती है। नदियाँ भी छोटी और द्रुतगामी हैं और तंग घाटियों से होकर बहती हैं। यहाँ ये बड़े बिजली के केन्द्र है—पुटारुरु, जिसबोर्न, क्राइस्ट चर्च, ओमारु, डीनन, कोरिब्रज, नाइटवेस और इनोनिन।

द० अफ्रीका में जल-शक्ति

सारे संसार में जल बिजली की सुरक्षित सम्पत्ति के विचार से इसका स्थान पहला है लेकिन उत्पादन के विचार से यह सारे संसार में सबसे अधिक पिछड़ा हुआ है। यहाँ जल विद्युत का विकास कई कारणों से नहीं हो पाया है :—(अ) नदियों में प्राय. बाढ़ें आती रहती हैं जिससे विद्युत गृह टूटने का खतरा रहता है। (ब) नदियाँ कुछ तो केवल मौसमी हैं उनमे एक ऋतु मे पानी रहता ही नहीं है। (स) अफ्रीका संसार का सबसे बड़ा अविकसित महाद्वीप है इसलिए उद्योग धंधों के अभाव में बिजली की माँग नहीं के समान है।(द) जिन क्षेत्रों में जल-विद्युत शक्ति उत्पन्न करने के अनुकूल दशायें प्राप्त हैं वे सभी क्षेत्र घनी आबादी वाले क्षेत्रों से बहुत दूर पड़ते हैं। जनसंख्या तो सबसे अधिक उत्तरी, पूर्वी और दक्षिणी भागों में है लेकिन जल बिजली उत्पादन संभावनायें सबसे अधिक मध्यवर्ती अफ्रीका में हैं। (र) शक्ति प्राप्ति के क्षेत्र अधिकतर भूमध्यरेखिक भागों में हैं जहाँ के स्थान घने दुर्भेद्य जंगलों के कारण पहुँच के बाहर हैं।

अफ्रीका के विक्टोरिया जल-प्रपात और कांगो के कटिंगा जिले में कुछ जल-शक्ति उत्पन्न की जाती है।

एशिया में जल शक्ति

अफ्रीका के बाद सारे संसार में सुरक्षित सम्पत्ति की दृष्टि से एशिया का विकास हुआ है। औद्योगीकरण के प्रभाव से वंचित रहने और मुख्यत: खेतिहर और कच्चे माल के उत्पादन क्षेत्र होने के कारण औद्योगिक शक्ति की यहाँ बहुत अधिक माँग नहीं रही है और इसलिये जल-विद्युत का विकास बहुत कम हुआ है। यहाँ ७ करोड़ ५० लाख अश्व शक्ति की अनुमानित सुरक्षित सम्पत्ति है जिसमें से केवल ४% ही विकसित हो पाई है। विकास के विचार से केवल भारत और जापान मुख्य हैं।

नीचे की तालिका में एशिया के प्रमुख देशों में द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् जल विद्युत शक्ति की कुल क्षमता और प्रति १००० व्यक्ति पीछे शक्ति का उत्पादन बताया गया है[९].—

9 *U. N. O.* **Survey of Asia and Far East, 1948, p. 82.**

इसका जल कोलंबिया नदी के गहरे गड्ढो को डलेस स्थान तक भरता है। इस बाँध की शक्ति का उपयोग वाशिंगटन राज्य के विभिन्न कार्यों के लिए किया जाता है। यह बाँध ७२६.४ फीट ऊँचा है और इसके द्वारा लगभग ३०५ लाख एकड फीट जल संग्रहित किया गया है। इस बाँध से १,८३५,००० अश्व शक्ति का उत्पादन किया जाता है। शक्ति का उपभोग तारो द्वारा ३०० मील की दूरी पर लॉस ऐंजल्स मे किया जाता है।

कोलंबिया नदी बेसीन योजना—यह योजना भी बहुमुखी योजना है। जिसका आरंभ १६३३ मे किया गया था। यह ५० करोड डालर के खर्च से बन कर पूरी हो चुकी है। कोलम्बिया नदी की घाटी मे, सपूर्ण इडाहो, वाशिंगटन, ओरेगन के अधिकाश भाग, मोटाना के पश्चिमी भाग और अरीजोना, नेवाडा और यूटाहा के कुछ भाग लगभग २२ वर्गमील क्षेत्र को घेरे हुए है। इसी बेसीन मे यह योजना कार्यान्वित की गई है। इस योजना के अन्तर्गत २०० शक्ति गृह स्थापित किये गये है। जिनमे से मुख्य **ग्रांड कूली** (Grand Coulee) और **बोनविले** (Bonneville) है। इनके द्वारा लगभग २१ लाख किलोवाट शक्ति का उत्पादन हो रहा है।

ग्राड कूली बाँध भूगर्भ संबंधी विशेषताओं का आश्चर्यजनक प्रतीक है। प्लेस्टोसीन युग मे इस नदी की घाटी मे हिमानियो द्वारा उत्तर-पश्चिम भाग मे **बिगबेंड** देश मे झील का निर्माण किया गया था। यहाँ से रोका गया जल महासागर की ओर दक्षिण-पश्चिम दिशा मे होकर बहता है और लावा के मैदानों मे लगभग ५२ मील लबी और २ से ५ मील चौडी तथा ६०० फीट गहरी घाटी बनाता हुआ बहता है। इसी घाटी मे बेसाल्ट की चट्टानो के सहारे ग्राड कूली बाँध बनाया गया है, जो विश्व मे सबसे लम्बा कंक्रीट का बाँध है। इस बाँध के द्वारा कोलम्बिया नदी का जल तल ३५५ फीट ऊँचा उठ गया है और सम्पूर्ण बाँध मे लगभग ५० लाख एकड फुट जल संग्रहित हो सका है। इसकी शक्ति उत्पादन क्षमता २७ लाख अश्व शक्ति की अनुमानित की गई है। इसके द्वारा १२ लाख एकड भूमि की सिंचाई होने का अनुमान है। यह सिंचाई कोलम्बिया के पूर्व तथा स्नेक नदी के उत्तरी भागो मे बिगबेंड देश मे की जायगी।

दूसरा मुख्य बाँध बोनविले मे बनाया गया है। महासागर से १५० मील ऊपर की ओर कोलम्बिया बेसीन मे इसका निर्माण किया है। यह बाँध नदी की पहली रपटो के निकट ही है। यही से नदी दो भागो मे बँट जाती है। इस बाँध के दो भाग है जो ब्रैडफोर्ड द्वीप और मुख्य स्थलीय तटो के बीच मे हैं तथा शक्ति गृह ब्रैडफोर्ड और ओरेगन के तट के बीच मे। यह बाँध समुद्र के धरातल से ७२ फीट ऊँचा है तथा लगभग ४५ मील लम्बा है।

कनाडा में जलशक्ति

इस देश के पश्चिमी और दक्षिणी पूर्वी क्षेत्रो मे पहाडी और पठारी इलाके जल-विद्युत उत्पादन के आदर्श क्षेत्र हैं।

इस देश के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं :—

(१) न्याग्रा क्षेत्र—यह क्षेत्र इस देश की सीमा पर इरी और ओन्टारियो झीलो के मध्य फैला है। इस क्षेत्र मे काफी जलविद्युत न्याग्रा प्रपात से उत्पन्न की जाती है जिसकी ½ कनाडा को प्राप्त होता है।

(२) सेन्ट लारेन्स क्षेत्र—इस क्षेत्र मे प्रेसकोट-माट्रियल तक क्षेत्र फैला है।

(य) जापान में हल्के उद्योग धन्धों का विकास हुआ है जिससे छोटी-छोटी मशीनो के चलाने में बिजली का प्रयोग उपयुक्त रहता है।

(र) जापान में ताँबा इतनी अधिक मात्रा में मिलता है कि बिजली के तारों के बनाने में काफी सुविधा मिलती है। इसलिए प्रारम्भिक व्यय काफी घट जाता है।

जापान में सिंचाई, जल विद्युत शक्ति और बहुमुखी उद्देश्यों के लिए हाल ही में कई बाँध बन कर समाप्त हो चुके हैं। नीचे की तालिका में यही बताया गया है :—

	इस समय कार्य कर रहे हैं	जो बन रहे हैं
बहुमुखी उद्देश्यो के लिए	१८ बाँध	३४ बाँध
जल विद्युत शक्ति	१७६ ,,	३५ ,,
सिंचाई	१६७ ,,	६६ ,,
जल-सेवा	५४ ,,	४ ,,
बाढ रोकना	० ,,	३ ,,
योग	४१८	१७५

ये सभी बाँध १५ मीटर से ऊँचे है।

नदियो के सामान्य प्रवाह के अनुसार जापान में १४५ लाख अश्व शक्ति बिजली उत्पादन की जा सकती है किन्तु अभी यहाँ ६०% का ही प्रयोग किया जा रहा है।

जापान मे बिजली की सबसे अधिक माँग जापानी आल्पस के निकट इन केन्द्रो मे है - टोकियो और याकोहामा, क्योटो, ओसाका और कोबे, तथा नगोया। जलविद्युत उत्पादन का जापान मे मुख्य क्षेत्र वास्तव मे मध्य होन्शू ही है। इसी क्षेत्र मे जापान सागर के तट तथा प्रशान्त तट के निकटवर्ती भागों पर ही बड़े-बड़े विद्युतगृह स्थित है जिनमे मुख्य शिनोनो, कीसो, तोनि, फूजी और पोदो है।

चीन मे जल विद्युत—सन् १९४६ से पूर्व चीन मे कवल ६० करोड किलोवाट बिजली बनाई जाती थी। इसका एक बडा भाग ताप विद्युत से प्राप्त होता था जो मुख्यत. बड़े-बडे नगरो मे प्रकाश तथा औद्योगिक कार्यों के लिये उत्पन्न की जाती थी। सन् १९४६ के पश्चात् यहाँ की सरकार ने उन शक्ति उत्पादन केन्द्रो का जीर्णोद्धार किया जो अब तक बेकार पड़े हुए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९५५ मे विद्युत शक्ति का उत्पादन ७२६ करोड किलोवाट हो गया था। यह मात्रा १९४६ के उत्पादन से बारह गुना अधिक थी। सन् १९५२ मे जितनी भी शक्ति का उत्पादन हुआ उसका केवल ६०% के लगभग जलविद्युत था और शेष ६०% से भी अधिक ताप विद्युत था। इससे स्पष्ट है कि सन् १९५२ से पूर्व चीन मे जलशक्ति का विकास बहुत ही कम हुआ था। इस समय तक उत्तरी चीन मे सुंगारी नदी पर **फंगमैन जलविद्युत** केन्द्र ही सबसे बडा जलशक्ति उत्पादन केन्द्र था। परन्तु प्रथम पचवर्षीय

देशो मे जैसे इटली, नार्वे, फ्रास, जर्मनी, स्विटजरलैंड, फिनलैण्ड, ग्रेट ब्रिटेन, आयरलैण्ड और रूस मे जलविद्युत का अत्यधिक विकास हो चुका है। इन देशो मे कोयले की बडी कमी है।

इटली में जलशक्ति—यह देश यूरोप मे सबसे अधिक बिजली उत्पन्न करता है। आधुनिक औद्योगीकरण इसी जलविद्युत पर निर्भर करता है। देश के उत्तरी भागो मे पर्वत और मैदान के सगम क्षेत्र (Piedmont Section) जलविद्युत उत्पन्न करने के आदर्श क्षेत्र है। पीडमाण्ट क्षेत्र के लोम्बार्डी और वेनिशिना प्रान्त बिजली के उत्पादन मे सर्व प्रथम है। इस क्षेत्र मे स्विटजरलैंड की बडी झीलो से निकलने वाली द्रुतगामी नदियाँ ऊँचे जल प्रपात बनाती हुई गिरती हैं जिससे प्रचुर मात्रा मे बिजली उत्पन्न की जाती है। आल्पस पर्वत मे बर्फ के पिघलने और घनी वर्षा मे पानी की काफी पूर्ति होती है। शक्ति उत्पादन करने वाले ७५% प्लाट अल्पाइन क्षेत्र मे ही है जहाँ से देश की कुल विद्युत शक्ति के उत्पादन का ६५% प्राप्त होता है। अन्य प्रसिद्ध केन्द्र अम्बरिया इमलिया, टस्कानी है जो मध्य इटली मे स्थित है। मध्यवर्ती श्रेणी अपीनाइन से निकलने वाली कई छोटी द्रुतगामी नदियो से काफी बिजली उत्पन्न की जाती है। इटली मे कोयले का अत्यन्त अभाव है इसलिये जलविद्युत के विकास को काफी प्रोत्साहन मिला है।



चित्र १४३ इटली मे जल-विद्युत शक्ति

इटली की जलविद्युत शक्ति की क्षमता द्वितीय महायुद्ध के बाद ४५% अधिक हो गई है। १९४६-४७ के बाद अनेक नये विद्युत उत्पादन यत्र लगाये गये है जिनमे २६ तो अकेले अल्पाइन प्रदेश मे ही है। ये स्थान क्रमश लूमी तागलिमेंटी, ग्लोरेंजा और कैसेलवैलों द० एंटोनियो है। किन्तु सबसे अधिक शक्तिशाली शक्तिगृह द० मसेजा का होगा जिसकी क्षमता ३५५ ००० कि० वा० होगी। यह मोलवैलो झील के दक्षिणी भाग मे बनाया जा रहा है। १९६० मे यहाँ ४६१,०६० किलोवाट घंटा जलशक्ति तैयार की गई।

नार्वे-स्वीडेन—इन दोनो देशों मे यूरोप की २५% बिजली उत्पन्न की जाती है। सारे यूरोप की सुरक्षित सम्पत्ति का एक-तिहाई भाग इस क्षेत्र मे पाया जाता है। इटली के बाद सारे यूरोप में इसका उत्पादन सबसे अधिक है। नार्वे, स्वीडन के पश्चिमी भाग मे स्थित ऊचा पर्वतीय भाग हिम नदी कृत महान् झीलों, तग चोटियां और द्रुतगामी जलप्रपात बनाने वाली नदियो से भरा पड़ा है। इस क्षेत्र में कोयले का अभाव है ही लेकिन धातु उद्योगो के विकास की आवश्यकतानुसार जल विद्युत का उत्पादन भी आरम्भ किया गया है। पश्चिमी भाग मे घनी वर्षा तो होती ही है, झीलों और नदियों को बर्फ और हिम नदियो से भी पर्याप्त पानी मिल जाता है, प्राचीन मजबूत रवादार चट्टानों की नीव पर ऊँचे-ऊँचे मजबूत बाँध बनाये गये हैं। इस क्षेत्र के दक्षिणी पूर्वी भाग मे जल-बिजली का विशेष विकास हुआ है। इस क्षेत्र

पर्वत के नीचे पाकिस्तान के पश्चिमी भाग से लेकर पूर्व में आसाम तक फैला है। इस क्षेत्र में हिमाच्छादित भागों से निकलकर बहने वाली प्रमुख नदियों में वर्ष भर ही पानी भरा रहता है तथा नदियों के मार्ग में कई प्रपात होने के कारण उपयुक्त स्थानों पर जल रोक कर बांध बनाये जा सकते हैं किन्तु इस प्रकार उत्पादित शक्ति अधिक दूर तक नहीं भेजी जा सकती।

(२) जल-विद्युत शक्ति का दूसरा विशाल क्षेत्र दक्षिणी प्रायद्वीप की पश्चिमी सीमा के सहारे महाराष्ट्र में होकर मद्रास तथा मैसूर तक फैला है। इस क्षेत्र में भारत की सबसे मुख्य मुख्य जलविद्युत योजनाएँ कार्य कर रही हैं।

(३) उपरोक्त दोनों क्षेत्रों के मध्य प्रदेश में तीसरा विस्तृत जल-विद्युत शक्ति का क्षेत्र जो सतपुड़ा, विन्ध्याचल, महादेव और मैकाल की पहाड़ियों के सहारे-सहारे पश्चिम से पूर्व की ओर चला गया है, किन्तु यह क्षेत्र अधिक धनी नहीं है।

इन तीन क्षेत्रों के अतिरिक्त भारत के कई क्षेत्रों में कोयले से भी विद्युत शक्ति पैदा की जाती है। ताप-शक्ति का मुख्य क्षेत्र कलकत्ता से आरम्भ होकर पश्चिम में नागपुर तक फैला है। इसके अन्तर्गत गोंडवाना कोयले के क्षेत्र हैं।

इस वर्णन से स्पष्ट ज्ञात होगा कि भारत में संभावित जल-विद्युत शक्ति के प्रधान क्षेत्र पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, आसाम और बिहार हैं। जल-विद्युत शक्ति से रहित प्रमुख क्षेत्र पश्चिमी राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि हैं।

(क) महाराष्ट्र राज्य–भारत में सबसे महत्वपूर्ण जल-विद्युत उत्पन्न करने वाले कारखाने पश्चिमी घाट के समीप स्थित हैं। इस घाटी पर अत्यधिक वर्षा होती है। इस जल से बिजली उत्पन्न करने का विचार भारत के प्रसिद्ध व्यवसायी श्री जमशेद जी नशरवान जी ताता के मस्तिष्क की उपज थी। अतः उन्होंने **ताता जल-विद्युत शक्ति का कारखाना** स्थापित किया। इस योजना के अनुसार भोरघाट के ऊपर लोनावाला, वलव्हान और शिरवता नामक तीन झीलें बांध बना कर तैयार की गई। वर्षा का पानी इन झीलों में इकट्ठा किया जाता है और नहरों द्वारा लोनावाली की झील तक लाया जाता है। यहाँ से पानी नलों द्वारा १,७२५ फीट की ऊँचाई से खोपोली शक्तिगृह के पास गिराया जाता है और यहाँ से ६५,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है। शक्ति की अधिक माँग होने के कारण कुंडेल के निकट एक झील और बनाई गई और दोनों कारखानों में १५,००० घोड़ों की शक्ति के बराबर शक्ति उत्पन्न करके ७० मील दूर तारों द्वारा बम्बई के मिलों को भेजी जाती है।

बम्बई में बिजली की माँग इतनी अधिक थी कि ताता कम्पनी उसे पूरा नहीं कर सकती थी। इसलिए ताता कम्पनी ने **आँध्र घाटी जल-विद्युत योजना** का श्रीगणेश किया। इस योजना के अनुसार लोनावला के उत्तर में तोकरवाडी के पास आँध्र नदी पर १/२ मील लम्बा और १९२ फुट ऊँचा बाँध बना कर नदी का पानी रोका गया। यहाँ से एक लम्बी सुरंग (८७००') द्वारा पानी भीवपुरी के शक्तिगृह को ले जाया गया। यहाँ पानी १७५० फीट की ऊँचाई से गिराया जाता है। इस शक्तिगृह का उत्पादन ७२,००० किलोवाट है। यहाँ की बिजली बम्बई हारबर, ट्रामों

स्वरूप साम्यवादी सरकार ने पूर्वी भागों का औद्योगिक विकास करना आरम्भ किया है।[८] रूस मे पहला बड़ा जलविद्युत केन्द्र १९२७ में वोल्खोव में स्थापित किया गया। यूरोप का सबसे बड़ा केन्द्र नीपर नदी पर १९३२ में स्थापित किया गया। रूस में प्रथम महायुद्ध से कितनी प्रगति हुई इस बात से स्पष्ट होगी कि १९५६ मे चार दिनो में इतनी विद्युत शक्ति उत्पन्न की गई जितनी सम्पूर्ण १९१३ मे। १९५६ में इसका उत्पादन १०० गुना अधिक किया गया।

वर्ष	कुल विद्युत शक्ति (१० लाख किलोवाट घंटे)	जलशक्ति (१० लाख किलोवाट घंटे)
१९१३	१,९००	४०
१९२८	५,०००	४००
१९४०	४८,३००	५,१००
१९५५	१७०,२००	२३,२००
१९५७	१९२,०००	२६,०००.

सोवियत रूस मे नीपर, वोल्गा, इर्टाइश, सीवर और वोरखोव आदि नदियों पर अनेक जल विद्युत केन्द्र स्थापित किये है। ये सब केन्द्र काकेशस प्रदेश में हैं। १९५५ में इनकी उत्पादन क्षमता ६० लाख अश्व शक्ति थी। १९५१-५५ की अवधि मे यहाँ लगभग ६ नये विशाल जल विद्युत गृहों की स्थापना की गई। ये शक्ति-गृह लेनिन-वाल्गा नहर पर सिमल्यान्स्कया, आरमेनिया मे ग्यूमुश, लेनिनग्राड प्रदेश मे वरखने-स्विर, अजरबैजान मे मिनचौर, नीपर नदी पर कामा और काखोवका, वोल्गा पर गोर्की तथा नरवा आदि है। १९५६-६० में वोल्गा नदी पर दो विशालकाय विद्युत केन्द्र कूइबीशेव तथा स्टेलिनग्राड मे स्थापित किये गये है। इनके अतिरिक्त वोटेकिन्स, क्रास्नोयास्कं, इर्कुटस्क और नोवोसिब्रिस्क आदि केन्द्र भी चालू हो चुके हैं।

रूस की छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विद्युत शक्ति का उत्पादन ८८% तथा शक्ति-गृहों की क्षमता १२% और जलविद्युत शक्ति का उत्पादन १७०%, बढाने का आयोजन है। इसी प्रकार विद्युत ले जाने वाले तारों की लम्बाई ३५ से २२० किलोवाट अर्थात् १२% बढ़ेगी।

रूस की साइबेरिया की नदियों की जल-शक्ति का दीर्घकालीन उपयोग करने के लिए अंगारा पर १ करोड किलोवाट और यनीसी पर २ करोड किलोवाट के नये-प्लांट स्थापित किये गये हैं इसमे साइबेरिया की जल और ताप शक्ति की क्षमता कुल मिलाकर ५ करोड़ किलोवाट हो जायगी। आगामी १५-२० वर्षों मे साइबेरिया मे जलविद्युत का उत्पादन प्रति वर्ष २५ से ३६ लाख किलोवाट घंटे हो सकेगा।

आस्ट्रेलिया में जलशक्ति

इस महाद्वीप के पूर्वी भाग मे आस्ट्रेलिया आल्पस पर्वत श्रेणी में जल-बिजली

8. *Bransly*, **Op. Cit.**, p. 34.

(१) पायकारा योजना—इस योजना के अन्तर्गत पायकारा नदी के आर-पार प्रमुख प्रपातों से ऊपर की ओर सन् १९३२ में एक बांध बनाया गया है जिसे ग्लैन मार्गन कहते हैं। इससे पानी को १२०० फीट की ऊँचाई से गिरा कर बिजली उत्पन्न की जाती है। पायकारा की सहायक मुकुर्ती नदी पर भी १९३८ में एक बांध बना कर

चित्र १४५. मद्रास में विद्युतशक्ति

अतिरिक्त पानी की व्यवस्था की गई है। पूरे विकसित रूप में इस योजना की अनुमानित उत्पादन क्षमता ६९ ००० किलोवाट होगी। अभी इसकी क्षमता ४४,००० किलोवाट ही है। विद्युत शक्ति पहले कोयम्बटूर जाती है और फिर वहां से उद्दुमलपेट, इरोड, मदुराई, तिरपुर, सम्बाती, विधुनगर और कोयलपट्टी को बिजली की तार जाती है। इरोड और मदुराई की लाइनों को मेट्टूर और पापानासम प्रणालियों से क्रमशः जोड़ दिया गया है। पायकारा योजना अन्तर्गत उत्पादित बिजली तामिल प्रदेश के छोटे-छोटे गांव और नगरों को दी जाती है।

(२) मेट्टूर जल-विद्युत योजना—मेट्टूर पर स्टेनले नामक १७६ फीट ऊंचा बांध बनाया गया है जो ९३५,००० लाख घनफीट पानी रोक लेता है। इससे जो विद्युत-शक्ति उत्पन्न होती है उसकी मात्रा मे मेट्टूर बांध के पानी की सतह के

देश	क्षमता (००० Kw)	प्रति १००० व्यक्ति पीछे उत्पादन (Kw में)
जापान	८,५३६	१०९.४
भारत	१,३६२	४.१०
चीन	१,३३२	२.८८
इंडोनेशिया	३५०	५.०७
मलाया	१२०	२०.६८
फिलीपाइन्स	१०८	५.५३
पाकिस्तान	७५	१.०२
इण्डोचीन	४६	१.७०
ब्रह्मा	३०	१.७६
लंका	२१	३.०४
थाईलैंड	१६	०.९४
योग	१२,२७१	

जापान—यह देश सारे एशिया में सबसे अधिक औद्योगिक उन्नतिशील देश है लेकिन इस देश में कोयले का अत्यन्त अभाव है। इसलिए जलविद्युत का विकास भी यहाँ सबसे अधिक हुआ है। एशिया की सारी सुरक्षित सम्पत्ति का केवल ५०% यहाँ है। लेकिन यहाँ सारे एशिया की दो-तिहाई जल-शक्ति उत्पन्न की जाती है। एशिया का सबसे पुराना जल-शक्ति उत्पादन केन्द्र इसी देश में है। जलविद्युत उत्पादन कार्य इस देश में सन् १८९१ में आरम्भ किया गया। लेकिन सन् १८९४-९५ में चीन युद्ध के कारण कोयला आना बन्द हो जाने के पश्चात् अधिकाधिक जल शक्ति बनाई जाने लगी। जापान में जल-विद्युत उत्पादन की निम्नलिखित अनुकूल दशायें हैं :—

(अ) जापान अत्यन्त ऊँचा-नीचा पहाड़ी प्रदेश है जिसके ठीक बीचो एक ऊँची श्रेणी उत्तर दक्षिण दिशा में फैली है। इससे उतरते समय सभी नदियाँ जल प्रपात बनाती हैं।

(ब) जापान की सभी नदियाँ बहुत द्रुतगामी हैं और अधिकतर नदियाँ विकसित तथा औद्योगिक क्षेत्रों से होकर बहती हैं जिनमें बिजली की बहुत बड़ी माँग रहती है। माँग के क्षेत्र की निकटता एक अत्यन्त सुविधा है।

(स) जापान के मध्यवर्ती पर्वतीय भाग में घनी वर्षा होने के कारण सारी बड़ी झीलों में पर्याप्त पानी सारे साल भर रहता है। इसलिए नदियों में काफी पानी की कमी नहीं होती।

(द) जापान में औद्योगीकरण की प्रगति तो ज्यादा हो गई है लेकिन यहाँ कोयला और पेट्रोल की अत्यन्त कमी है। शक्ति की पूर्ति के लिए इस कारण जल विद्युत का महत्व बहुत बढ़ गया है।

(घ) मैसूर राज्य—मैसूर राज्य में कावेरी नदी पर शिवसमुद्रम् जल-प्रपात के समीप शक्ति गृह स्थापित किया गया है। भारत में सबसे पहले (१६०२ में) जलविद्युत मैसूर राज्य में ही उत्पन्न की गई है। शिवसमुद्रम् से उत्पन्न की गई बिजली ६२ मील दूर कोलार की सोने की खानों को दी गई है। इसके अतिरिक्त बिजली बंगलौर और मैसूर की ऊनी और रेशमी कपड़े के मिलों को भी दी गई है। बिजली की मांग अधिक होने के कारण नदी के ऊपर की ओर कृष्ण राजासागर बांध बनाकर कावेरी नदी के जल को रोक दिया गया है और इस प्रकार दोनों की सम्मिलित उत्पादन क्षमता ४०,००० किलोवाट हो गई है।

कावेरी की सहायक नदी शिम्मा के प्रपात पर एक नया शक्ति गृह बनाया गया है। इससे १७,२०० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है।

महात्मा गांधी जल विद्युत योजना या जोग-प्रपात शक्ति योजना के अन्तर्गत शिरावती नदी के जोग (गिरस्सप्पा) प्रपातों का उपयोग किया गया है। यहाँ का बांध प्रपात के करीब ३ मील ऊपर और शक्तिगृह प्रपात से २ मील नीचे है। इस योजना से ४८,७०० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है। किन्तु अन्तिम स्थिति में बढ़कर इसकी उत्पादन क्षमता १,२२,००० किलोवाट हो जायगी। शिम्सा, शिवासमुद्रम् और जोग प्रपातों की बिजली भद्रावती पर आकर मिल जाती है और मैसूर राज्य को बिजली देती है।

(ङ) काश्मीर राज्य—काश्मीर राज्य में झेलम नदी पर श्रीनगर से ३४ मील उत्तर की ओर बारामूला के निकट नदी का पानी विद्युत उत्पन्न करने में लिया जाता है जिसका शक्ति गृह मोहरा स्थान पर है। यहाँ से बिजली की लाइनें बारामूला और श्रीनगर तक जाती है। यह बिजली झेलम नदी में झाम चलाने, श्रीनगर में रोशनी करने और रेशम के कारखाने चलाने में प्रयोग होती है।

(च) पंजाब—उत्तरी भारत में मंडी राज्य का जल-विद्युत का कारखाना महत्वपूर्ण है। इस योजना के अनुसार मंडी राज्य में ऊहल नदी के पानी को एक २½ मील लम्बे सुरंग से ले जाकर जोगिन्दरनगर के निकट १८०० फीट की ऊँचाई से गिराकर बिजली उत्पन्न की जाती है। यह पूर्वी पंजाब के लगभग २० स्थानों को दी जा रही है। फिरोजपुर, लायलपुर, शिमला, गुरदासपुर, पटियाला, गुजरानवाला और अम्बाला को यही बिजली मिलती है।

(छ) उत्तर प्रदेश—उत्तर प्रदेश में बिजली के कारखानों में गंगा की नहर से बिजली उत्पन्न करने की योजना (Ganges Canal Hydro-electric Grid System) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। गंगा की नहर के १३ प्रपातों में से ११ प्रपातों पर शक्ति-गृह बनाये गये है। इनमे से महत्वपूर्ण जलविद्युत गृह मुहम्मदपुर, नीरगजनी, चितौड़ा, भोला, पालरा, सुमेरा है और दो तापशक्तिगृह चन्दौसी और हरदुआगज हैं। इन सबकी सम्मिलित शक्ति ७५,००० किलोवाट है जिसमें ३०,००० किलोवाट तापशक्ति और शेष जलशक्ति है। इन सभी शक्ति गृहों तथा जल प्रपातों से उत्पन्न होने वाली बिजली को एक बड़ी बिजली की लाइन से जोड़ दिया गया है। यह प्रणाली पश्चिमी उत्तरी प्रदेश के १४ जिलों में ९३ नगरों को बिजली दे रही है जिनमें से मुख्य जिले यह हैं—सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, एटा, अलीगढ़, आगरा, बिजनौर तथा मुरादाबाद। इस प्रणाली से मेरठ और रुहेलखंड डिवीजनों में लगभग ३००० नल-कूप चलाये जा रहे हैं।

योजना मे १६ नये जलविद्युत शक्ति केन्द्र स्थापित किये गये और फैगमैन केन्द्र को भी रूस की सहायता से सुधारा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९५९ में जलविद्युत का भाग १०% से बढ़ कर २०% हो गया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ह्वांगहो के बेसिन के लिये जलशक्ति विकास का एक विकास कार्यक्रम बनाया गया। इसके अनुसार इस नदी तथा उसकी सहायक नदियों पर अनेकों स्थानो पर बाँध बनाये है। ये सब बाँध बहुउद्देशीय हैं। इस नदी पर सारमेन नामक तग घाटी पर एक विशाल बाँध बनाया गया है। शक्ति कान्सू, चिघाई, शान्सी, शेन्सी और होनान प्रान्तों मे प्रयोग की जा रही है। इसी प्रकार याँगटीसीक्याँग नदी के बेसिन में भी इसके जल को प्रयोग करने के लिये कई बाँध बनाये गये हैं। पेकिंग के निकट युगतिक नदी पर मोशिक नामक स्थान पर एक बाँध बनाकर जल विद्युत केन्द्र की स्थापना की गयी है। इसे कुआँतिंग जलविद्युत गृह के नाम से पुकारा जाता है। इसी प्रकार आन्हवे और सीक्याँग प्रान्तो में भी कई जलविद्युत गृह बनाये गये है जिनके द्वारा इन प्रान्तो की जल विद्युत पूर्ति पहले की अपेक्षा बहुत बढ गई है। दक्षिण-पश्चिमी चीन के विभिन्न प्रान्तों मे आठ जलविद्युत केन्द्रो का निर्माण किया गया है। इनमे से उल्लेखनीय ये हैं—(१) सेचवान प्रान्त मे शिलसेतान जल विद्युत केन्द्र। (२) क्वांगसी प्रान्त मे ल्यूची नदी पर शाँग्यू स्थान पर जलविद्युत विकास केन्द्र। (३) चीक्याँग प्रान्त मे सिनान नदी पर एक जलविद्युत गृह बनाया गया है। इस प्रकार सन् १९५७ के अन्त तक चीन मे विद्युत का उत्पादन १५६० करोड़ किलोवाट हो गया था जो सन् १९५२ के उत्पादन से दुगने से भी अधिक था। इसमे से लगभग ८३% बिजली कोयले से उत्पन्न की गयी और शेष १७% जलविद्युत थी।

पाकिस्तान—पाकिस्तान में जल विद्युत की चार मुख्य योजनायें बनाई गई हैं जिनके द्वारा लगभग ३ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायगी और लगभग २ लाख एकड भूमि की सिंचाई भी होगी। (१) सीमा प्रान्त मे मालकंद के निकट लगभग २०,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जा रही है। पेशावर के निकट वारसाक (Warsak project) योजना द्वारा १५०,००० किलोवाट विद्युत पैदा की जाती और १२०,००० एकड भूमि की सिंचाई भी होती है। (३) प० पंजाब में रासूल (Rasul Project) योजना द्वारा २२,००० किलोवाट यूनिट बिजली उत्पन्न की जा रही है। इन योजनाओं के अतिरिक्त पूर्वी पाकिस्तान मे कर्णफूली नदी के जल से १६,००० किलोवाट शक्ति उत्पन्न कर चाँदपुर, कोमिला और चटगाव को दी जायगी तथा ७०,००० एकड भूमि की सिंचाई होगी।

भारत में जल विद्युत शक्ति—जहाँ प्रकृति ने भारत को कोयले और मिट्टी के तेल की दृष्टि से निर्धन बनाया है वहाँ उसने भारत में जल-विद्युत को उत्पन्न करने के साधन उपलब्ध करके इस कमी को पूरा कर दिया है। अतः देश प्रायः दो भागों में बँट गया है—एक भाग वह है जिसमे जल-विद्युत-शक्ति का उत्पादन किया जा सकता है और दूसरे वे क्षेत्र हैं जिनमें कोयले की खानों के निकट होने के कारण कोयले से ही विद्युत शक्ति पैदा की जा सकती है। भारत में जल-विद्युत शक्ति के मुख्य क्षेत्र ये हैं:—

(१) संभावित जल-विद्युत शक्ति का सबसे अधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र हिमालय

देश में उत्पादित शक्ति का लगभग ८०% जल-विद्युत पश्चिमी घाट से पैदा की जाती है। महाराष्ट्र, मद्रास, मैसूर तथा केरल की जल-विद्युत शक्ति यहाँ से प्राप्त होती है। हिमालय की अपेक्षा पश्चिमी घाट में अधिक जल-विद्युत शक्ति प्राप्त की जाती है, क्योंकि :—

(१) पश्चिमी घाटो मे स्थित जल-विद्युत प्रपातो तक पहुँचने की सुविधायें अधिक है जिससे सामान और मशीनें सरलतापूर्वक पहुँच सकती हैं।

(२) यहाँ ज न वर्षा बहुत होती है अतः बिजली बनाने के लिये पानी की कमी नही पडती।

(३) इस क्षेत्र मे औद्योगिक उन्नति अधिक हुई है अतः यहाँ बिजली की माँग अधिक है।

(४) इस क्षेत्र में कोयले का अभाव है अत. यहाँ कोयले का काम बिजली से लिया जाता है।

(५) यह क्षेत्र पठारी है और पठार के ढालों पर स्वभावतः जल-प्रपात अधिक पाये जाते है। मैसूर मे शिवसमुद्रम, गाधी प्रपात आदि हैं।

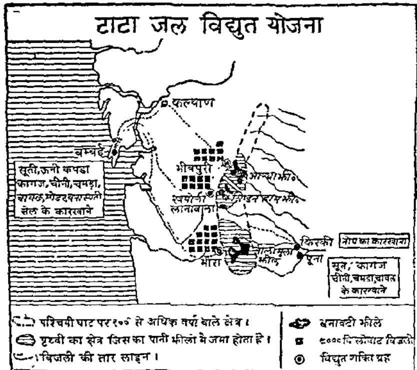
भारत की बहुमुखी योजनायें (Multipurpose Projects)

यद्यपि भारत मे संसार मे सबसे अधिक प्रदेश मे सिंचाई होती है फिर भी भारत की खाद्य पदार्थों की कमी को पूरा करने के लिये सिंचाई की सुविधाओ में और अधिक वृद्धि करने की आवश्यकता है। वैज्ञानिकों द्वारा यह अनुमान लगाया गया है कि भारत मे सिंचाई के लिये जितना पानी उपलब्ध हो सकता है उसका केवल ६ प्रतिशत ही अब तक कार्य मे लाया जा रहा है, शेष पानी व्यर्थ मे समुद्र मे बह जाता है और प्रतिवर्ष अनियन्त्रित बाढो के द्वारा इतनी धन और जन की हानि होती है कि उसका सही माने में अनुमान भी नही लगाया जा सकता है। प्रतिवर्ष भारत की नदियों मे १३,५६० लाख एकड़ फीट पानी बहता है। इस मात्रा का केवल ५.६% (४५० लाख एकड़ फुट) पानी सिंचाई उत्पादन के प्रयोग मे आता है। शेष ९४.४% यो ही बह कर चला जाता है। अभी तक जल-विद्युत शक्ति बनाने के लिए केवल २% जल का ही प्रयोग हुआ है। इस समय लगभग ३०० छोटी व बड़ी योजनाओ पर काम हो रहा है। इससे २०० लाख एकड़ भूमि पर अतिरिक्त सिंचाई की जायेगी।

टेनैसी घाटी योजना के ढंग पर ससार के अन्य देशो—फ्रास, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जर्मनी और रूस—मे बनी नदी घाटी योजनाओं की सफलता से उत्साहित होकर भारत ने भी अपनी जल-शक्ति का उपयोग करने मे एक नये तरीके को अपनाया है। यह 'नया रास्ता' भूमि को पानी, उद्योग को शक्ति और सभी को उद्यम प्रदान करेगा।

बहुधन्धी योजना उन कई उद्देश्यो को एक साथ पूरा करने का ढग है जो वास्तव मे एक ही समस्या के विभिन्न रूप हैं। इस प्रकार हम न तो किसी पक्ष की अवहेलना ही करते हैं और न हमारा दृष्टिकोण एकागी रह पाता है। उस क्षेत्र की सभी आवश्यकताओ और सभी साधनो को ध्यान मे रखते हुये बहुधन्धी योजना विकास कार्य करती है। किसी नदी का सम्पूर्ण अध्ययन इसी ढग के अन्तर्गत सम्भव

और मध्य रेलवे के उपयोग मे आती है। वास्तव मे आंध्र घाटी योजना पहली योजना का विस्तार मात्र है।



चित्र १४४. टाटा विद्युत शक्ति योजना

ताता ने एक तीसरी कम्पनी टाटा शक्ति कम्पनी बना कर नीलामूला नदी को मुलसी नामक स्थान पर एक बड़ा बाँध बनाकर रोक दिया है। इस झील से १६८० फीट की ऊँचाई से पानी भीरा के शक्तिगृह पर गिराया जाता है और उससे बिजली उत्पन्न की जाकर बम्बई की मिलो, पश्चिमी व मध्य रेलवे को दी जाती है। भीरा शक्तिगृह की उत्पादन क्षमता १,१०,००० किलोवाट है।

उपर्युक्त तीन योजनाएँ एक ही इकाई की भाँति काम कर रही हैं और इनकी सम्मिलित उत्पादन क्षमता २,१०,००० से २,१५,००० किलोवाट तक बिजली उत्पन्न करने की है। यह बिजली बम्बई नगर, निकटवर्ती स्थानों, थाना, कल्याण, पूना की कपड़ा मिलो की तथा पश्चिमी और मध्य रेलवे को जाती है। इससे बम्बई राज्य के लगभग १,००० वर्गमील क्षेत्र को बिजली मिलती है।

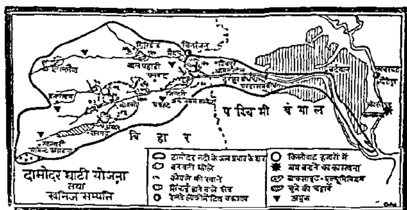
(च) मद्रास राज्य—मद्रास राज्य में जल-विद्युत विकसित करने के उत्तम स्थान नीलगिरी और पालनी पर्वतों के मध्य मे हैं। इस राज्य में अब तक तीन महत्वपूर्ण योजनायें विकसित की जा चुकी है—

(४) जल-मार्ग का विकास तथा क्षेत्रीय आर्थिक प्रगति,
(५) घरेलू-कार्यों के लिए पानी की व्यवस्था,
(६) मछलियों को पकड़ना और मत्स्य-उद्योग का विकास,
(७) जंगलों की रक्षा, वृक्षारोपण और ईंधन का प्रबन्ध,
(८) भूमि की रक्षा,
(९) पशु सम्पत्ति के लिए चारे की व्यवस्था,
(१०) दुर्भिक्ष आदि से मुक्ति दिलाना, और
(११) मनुष्यों तथा साधनों को काम मिलना।

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये भूमि-विशेषज्ञ, कृषक, इन्जीनियर और अर्थशास्त्री में सहयोग की बहुत बड़ी आवश्यकता है। अन्यथा सभी परिश्रम व्यर्थ हो जाने की आशंका है।[10]

कुछ महत्वपूर्ण बहुमुखी योजनायें ये हैं:—

(१) **दामोदर घाटी योजना** (Damodar Valley Project)—दामोदर ३३६ मील लम्बी है। इसका उद्गम छोटा नागपुर की पहाड़ियों में समुद्र तल से २,००० फीट की ऊँचाई पर है। यह बिहार में १८० मील बहने के बाद पश्चिमी बंगाल में हुगली में गिर जाती है। इस योजना का ध्येय सिंचाई तथा जल मार्ग के लिये पानी प्रदान करना, मलेरिया पर विजय प्राप्त करना तथा वैज्ञानिक व्यवस्था का प्रवेश कर, सारी घाटी की आर्थिक स्थिति में विकास करना है। इस योजना से ७ लाख ५० हजार एकड़ भूमि में नित्यवाही सिंचाई और ३½ लाख किलोवाट शक्ति



चित्र १४९. दामोदर घाटी योजना

10. *Lewis Mumford*, **The Culture of Cities**, 1948.

अनुसार घटा-बढ़ी होती रहती है। अतः पानी की कमी के समय मैंटूर बाँध को अन्य स्थानों की बिजली की आवश्यकता पड़ जाती है। इस समस्या को पायकारा और मैंटूर की लाइन से मिलाकर हल कर लिया गया है। मैंटूर बाँध से उत्पन्न की गई बिजली उत्तर मे सिगारपेट को और दक्षिण में इरोड को दी जाती है। इरोड पर मैंटूर की बिजली को पाईकारा विद्युत के तारों से मिला दिया गया है। उत्तर मे विद्युत लाइनें वैलोर, तिरूपुर, अम्बर, तिरुवन्नमजय, विल्लूपुरम तक फैली हुई हैं और दक्षिण मे तिरुचिरापल्ली, तंजौर, नागापट्टम, चितूर, अरकोनम, कांजीवरम, चिंगलपुट आदि स्थानों तक जाती हैं। मैंटूर प्रणाली को मद्रास तापीय गृह में सिंगारपेंट और मद्रास के बीच एक लाइन से जोड दिया गया है। इस प्रकार दक्षिणी भारत में इन शक्तिगृहों से बिजली ले जाने वाली लाइनों को जोड़कर एक बड़ी लाइन का जाल-सा बिछा दिया गया है। मैंटूर योजना से तिरूचिरापल्ली, सेलम और मैंटूर के उद्योग, डालमियानगर के सीमेंट के कारखानों और नागापट्टम के लोहे के रोलिंग मिल्स को शक्ति मिलती है।

(३) पापानाम योजना—तिरूनलवैली जिले मे—पश्चिमी घाटी के नीचे—ताम्रपर्णी नदी ३३० फीट की ऊँचाई से पापानासम प्रपात पर गिरती है। इस प्रपात से ६ मील ऊपर एक १७६ फीट ऊँचा बाँध बनाकर ५५,००० लाख घनफुट पानी रोका गया है। यहाँ से बिजली तूतीकोरिन, कोयलपट्टी और मदुराई को भेजी जाती है और मदुराई पर इसे पायकारा योजना मे जोड दिया गया है। इसकी उत्पादन क्षमता २१,००० किलोवाट है।



चित्र १४६ मैंटूर बाध

उपरोक्त तीनों योजनाएँ एक विद्युत शक्ति ग्रिड के रूप मे सम्बन्धित हैं। दक्षिण मे यह ग्रिड पूर्ण रूप से व्यवस्थित है और चितूर से तिरूनलवैली तक तथा चिंगलपुट से मलाबार तक के १२ जिलो के अधिकाश भागो को घेरे हुए है। इन तीनों शक्ति गृहों की सम्मिलित उत्पादन क्षमता १,०४,००० किलोवाट है। इस ग्रिड से कपडे की मिलों, सीमेंट के कारखानों, रासायनिक कार्यों, चाय की फैक्ट्रियों को बिजली मिलती है।

(ग) केरल राज्य—यहाँ पल्लीवासल जल विद्युत योजना विकसित की गई है। इसके अनुसार मदिरापूजा नदी का पानी ऊँचाई से गिराकर मुनार पर शक्ति गृह बनाया गया है। इसकी उत्पादन क्षमता ६,००० किलोवाट है। इसके अतिरिक्त मद्रास सरकार की पापानासम व्यवस्था से भी ३,००० किलोवाट बिजली मिल जाती है। इसके लिए कुदरा और शेनकोट को इकहरी लाइन से जोड़ दिया गया है। इस संघ मे ७०% से अधिक औद्योगिक कार्यों मे अल्यूमीनियम, चाय, मिट्टी के बर्तन, कपड़े, कागज, प्लाईवुड, तेल और लकडी के मिलों तथा इंजीनियरिंग कारखानों आदि मे—और शेष घरेलू व कृषि-सम्बन्धी कार्यों मे व्यवहृत होती है।

(२) कोसी योजना (Kosi Project)—यह बिहार की सबसे अधिक महत्वपूर्ण योजना है। यह योजना सिचाई, शक्ति, जल-मार्ग, बाढ़ नियंत्रण, मिट्टी के कटाव, नियन्त्रण, दलदल भूमि को साफ करने, मलेरिया नियन्त्रण, मछली पकड़ना और मनोरजन की सुविधा की दृष्टि से एक बहुमुखी योजना बनेगी। इस योजना के द्वारा नैपाल मे छत्तर खड्ड के आर पार ७५० फीट ऊँचा बाँध बनाया जायगा। इस बाँध के द्वारा ११० लाख एकड़ फीट पानी सग्रहीत किया जा सकेगा। यह पानी ७६ वर्गमील भूमि को ढकेगा। इस योजना के द्वारा कोसी पर दो बाँध बनाये जायेंगे—

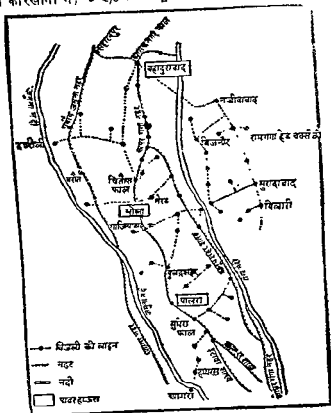
(१) पहला बाँध कोसी के आर-पार नैपाल मे बनाया जायगा और इसके दोनो किनारो से नहरें निकाल कर नैपाल की लगभग १० लाख एकड भूमि मे सिंचाई की जा सकेगी। यह १९६३ तक पूर्ण हो गया है। (२) दूसरा बाँध कोसी नदी के आर-पार नैपाल बिहार की सीमा पर बनाया गया है और यहाँ से दो नहरें बायी ओर और एक नहर दायी ओर बनाई गई है जिससे बिहार की ३५ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। यह पूर्निया, दरभगा और मुजफ्फरपुर (बिहार) जिलों की जनसख्या का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने मे सहयोग प्रदान करेगा। बिहार के इस प्रदेश मे पानी की अधिकता से बाढ भी आया करती है तथा पानी की कमी से अकाल भी पडा करता है। इसलिये यह योजना जल नियन्त्रण कर उपयुक्त वितरण के द्वारा यहाँ कृषि के उत्पादन मे सहयोग प्रदान करेगी। इस योजना के द्वारा २० लाख किलोवाट शक्ति का उत्पादन होगा। इसके शक्ति-गृहों को दामोदर घाटी के शक्ति-गृहो से मिलाकर जाल सा बना देने की योजना भी है।

(३) हीराकुड बाँध योजना (Hirakud Project)—महानदी प्राय-द्वीप की एक महत्वपूर्ण नदी है। किन्तु महानदी के जल का अभी तक सिंचाई अथवा जल विद्युत उत्पन्न करने के लिए उपयोग नही किया गया है। केवल ३% जल ही अब तक प्रयोग मे लाया जा सका है। उडीसा का राज्य खनिज पदार्थों से भरा पडा है। यहाँ कोयला, लोहा, बाक्साइट, मैंगनीज, ग्रेफाइट, क्रोमाइट और अभ्रक बहुत बडी राशि मे पृथ्वी के गर्भ मे भरा हुआ है। महानदी प्रतिवर्ष ४० लाख एकड फीट पानी बहा ले जाती है। उडीसा के क्षेत्रफल ६०,०३६ वर्ग मील है और एक करोड २० लाख जनसख्या है। संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रसिद्ध टेनैसी घाटी से कई गुना यह प्रदेश साधन-सम्पन्न है। परन्तु महानदी के जल का पूरा-पूरा उपयोग न हो सकने के कारण यह प्रदेश निर्धन और अवनत दशा मे पड़ा हुआ है।

इस प्रदेश को धन-धान्य तथा उद्योग-धन्धो से भरा-पूरा करने के उद्देश्य से हीराकुड बाँध की योजना हाथ मे ले ली गई है। हीराकुड बाँध की योजना बहुमुखी है। उसके द्वारा सिंचाई होगी, जल-विद्युत उत्पन्न होगी, नावो के द्वारा माल ढोने की सुविधा होगी और आज जो नदी मे बाढ आने से विनाश होता है वह रोका जा सकेगा। मलेरिया का प्रकोप रोका जा सकेगा। मछली उद्योग मे विकास होगा तथा उद्योग-धन्धो की गति मे तीव्रता होगी।

हीराकुड बाँध की योजना उडीसा के सम्बलपुर जिले मे महानदी पर सम्बल-पुर मे ९ मील ऊपर की ओर हीराकुड नामक स्थान पर बनाई गई है।

भारत में उत्पादित विद्युत शक्ति का उपयोग इस प्रकार है—५४·८% कारखानों में; २८% घरेलू खर्च; ०·८% रोशनी में, ८·२% व्यावसायिक कार्यों में, ५% कल कारखानों में, ७ ६% सिंचाई में। पश्चिम के देशों से यदि भारत की



चित्र १४७ गंगा नहर जल विद्युत योजना

तुलना की जाय तो ज्ञात होगा कि यहाँ जलविद्युत शक्ति का जो भी विकास हुआ है वह थोड़ा है। देश में उद्योग धन्धों के पूर्ण रूप से विकसित न होने के कारण ही हमारी यह स्थिति है।

देश की वर्तमान विद्युत योजनाओं की संभावित क्षमता को बढाने का विचार ५७ लाख किलोवाट (१९६१) से ७० लाख किलोवाट (मार्च १९६६) बनाया गया है। इससे कुल उत्पादन क्षमता १३४ लाख किलोवाट हो जायेगी, इसमें से १२६ लाख किलोवाट बिजली उपयोग में लाई जायेगी। प्रति व्यक्ति विद्युत की खपत ४५ किलोवाट से बढकर ९५ किलोवाट होने का अनुमान है जबकि संसार के अन्य महत्वपूर्ण देशों में यह खपत नार्वे में ७,२५० किलोवाट, कनाडा में ५,४५० किलोवाट, ग्रेट-ब्रिटेन में २००० किलोवाट; रूस में ९६० और जापान में ८५० किलोवाट हैं।

सरहिंद नहर में पानी बढ़ाकर उसकी सिंचाई का क्षेत्र बढ़ाना, (३) गंगा नहर द्वारा राजस्थान में सिंचाई के लिए जल पहुँचाना, और (४) लगभग ४ लाख किलोवाट बिजली पैदा करना। भाखरा खड्ड के आर-पार सतलज नदी पर ६८० फीट ऊँचा

चित्र १५२. तुङ्गभद्रा बाँध योजना

और १,३०० फीट लम्बा सीमेन्ट और ककरीट का बाँध बनाया गया है। यह स्थान रूपड़ से ४० मील ऊपर की ओर है। इस बाँध से ५० मील लम्बी और लगभग २-३ मील चौड़ी गोविन्द सागर नामक झील बनी है। इस झील में ७२ लाख घन फीट पानी संग्रह हो सकता है। इस बाँध द्वारा ६५० मील लम्बी मुख्य नहर तथा २,००० मील लंबी शाखायें निकाली जा सकेंगी। भाखड़ा बाँध प्रायः बनकर समाप्त हो गया है केवल विद्युत गृहों का निर्माण हो रहा है। भाखड़ा बाँध के दोनों ओर दो शक्तिगृह होंगे।

चित्र १५३. भाखरा नागल योजना

नागल योजना में नांगल के पास नदी के आर-पार एक बाँध बनाया गया है। यह बाँध भाखरा से ८ मील नीचे की ओर है। यह बाँध नदी का पानी नांगल जल-विद्युत नहर में परिणत कर एक समतुलित संग्राहक का कार्य करता है। नांगल

है । नदी की स्वाभाविक अथवा प्राकृतिक अर्थ व्यवस्था तथा साधनों में अनावश्यक उलट-फेर न कर उनका इस प्रकार विकास किया जाता है कि समाज को अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त हो सके । सतुलित और समग्र विकास पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाता है । किसी भी ऐसी योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते हैं :—

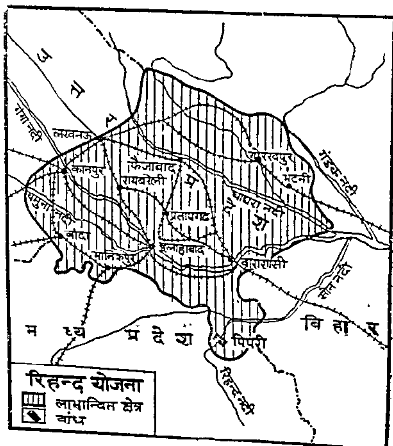
चित्र १४८: भारत की नदी घाटी योजनाएँ

(१) सिंचाई और भूमि का वैज्ञानिक उपयोग एवं प्रबन्ध,

(२) विद्युत-शक्ति में वृद्धि और औद्योगीकरण,

(३) बाढ़ नियन्त्रण और बीमारियों की रोकथाम में सहायता,

इसके द्वारा ६०,००० किलोवाट बिजली पैदा होगी, और इसके बनने में लगभग साढ़े दस करोड़ रुपया खर्च हुआ है। यह बाँध १९६०-६१ तक बनकर तैयार हो गया है।



चित्र १५४ रिहन्द बाँध योजना (उत्तर प्रदेश)

दूसरा बाँध रावत भाटा के पास राणा प्रताप सागर बाँध के नाम से चूलिया झरने पर बनाया जायगा इसके द्वारा ६० वर्गमील का पानी रोका जायेगा। यह बाँध ३५०० फीट लम्बा व १२० फुट चौड़ा होगा। इसके द्वारा ६०,००० किलोवाट बिजली पैदा होगी। यह बाँध १९६३-६४ में समाप्त होगा। तीसरा बाँध कोटा से १० मील उत्तर की तरफ कोटा बाँध के नाम से बनाया जायगा। यह बाँध १८०० फीट लम्बा व ८० फीट चौड़ा होगा। इसके द्वारा ५०,००० किलोवाट बिजली पैदा होगी।

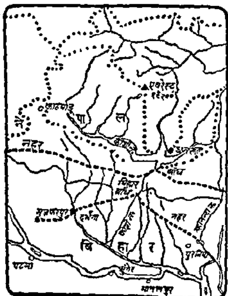
इस योजना के पूरी हो जाने पर मध्य प्रदेश की १२ और राजस्थान की १९ तहसीलों में सिंचाई करके १२ लाख एकड़ जमीन पर खेती की जायेगी जिससे चार ाज अधिक पैदा होगा और २ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की

के उत्पादन का अनुमान है। कोनार बाँध १९५४ में बनकर तैयार हो चुका है। इसमें ११ लाख घनफीट जल रोका जायगा और ६०,००० किलोवाट शक्ति उत्पन्न की जायगी। पचेत पहाड़ी और दुर्गापुर का बाँध बनकर समाप्त हो चुके हैं।

उत्तरी दामोदर नदी की घाटी टिम्बर, लाख और टसर रेशम के लिये बहुत धनी है। नीचे की घाटी यद्यपि बहुत उपजाऊ है लेकिन सिचाई की उचित व्यवस्था के अभाव में वहाँ विस्तृत कृषि एवं उत्पादन असम्भव है। दामोदर घाटी में भारत के प्रसिद्ध कोयले के सम्भावित क्षेत्र और विचारणीय मात्रा में बॉक्साइट और एल्यूमीनियम पाया जाता है। इस घाटी में फायर क्ले, अभ्रक, चूना, सीसा, चाँदी, सुरमा और क्वार्ट मिलने की भी सम्भावना है। इसलिये सस्ती जल-विद्युत शक्ति के वितरण से ये खनिज भी उचित रूप से प्रयोग में लाये जा सकेंगे।

योजना के अन्तर्गत चार जलाशय तिलैया, कोनार, मैथान और पचेतहिल बाँधों द्वारा बनाये गये हैं। कोनार को छोड़कर प्रत्येक के अलग अलग शक्ति-गृह बनाये गये हैं जिनकी कुल उत्पादन क्षमता १०४,००० k. w. होगी। तीन भाप द्वारा विद्युत बनाने वाले केन्द्र हैं-बुकारो, दुर्गापुर और चन्द्रपुरा--जिनकी उत्पादन क्षमता ५,००,००० k. w. है।

इन बाँधों से लगभग ३ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी जो दक्षिणी बिहार, पटना, कलकत्ता, जमशेदपुर और डालमियानगर तक पहुँचाई जायगी। इसके अतिरिक्त इस योजना के अन्तर्गत १५५० मील लम्बी नहरें भी बनाई जायेंगी जिससे बंगाल की १० लाख एकड़ भूमि को सींचा जा सकेगा। पूरी प्रणाली के समाप्त होने पर चार लाख टन अधिक अन्न पैदा किया जा सकेगा। छोटा नागपुर के उजाड़ क्षेत्रों में, भूमि के कटाव को रोकने के निमित्त बन लगाये जायेंगे जिनसे पशुओं के लिये चारा, रेशम के कीड़ों के लिये शहतूत के वृक्ष, लाख और बाँस प्राप्त होगा और ९० मील लम्बी सिंचाई की मुख्य नहर द्वारा सस्ते दामों पर कलकत्ता व घाटी के बीच कोयला आदि वस्तुएँ ले जाई जा सकेंगी। तालाबों में नावें चलाने तथा तैरने की सुविधा होगी और घरेलू कार्यों के लिये नलों द्वारा जल प्रदान किया जावेगा।



चित्र १५०. कोसी बाँध योजना

शक्ति के अन्य साधन (Other Sources of Power)

यद्यपि विश्व में शक्ति के और भी कई साधन उपलब्ध हैं, किन्तु मानव के आर्थिक विकास मे वृद्धि होने से उनकी माँग भी बढती जा रही है और यह डर है कि यदि शक्ति की माँग इसी प्रकार की निर्विरोध गति से बढती रही तो संभवतः एक समय ऐसा आ सकता है जब शक्ति के वर्तमान साधन बिल्कुल ही अपर्याप्त सिद्ध हो। अत मानव शक्ति के अन्य साधनो की खोज निकालने मे तत्पर हो रहा है। इस सम्बन्ध मे उसे कुछ सीमा तक सफलता मिली भी है लेकिन यह नगण्य सी है। इस प्रकार की नई आविष्कृत शक्तियाँ क्रमश. ये है —

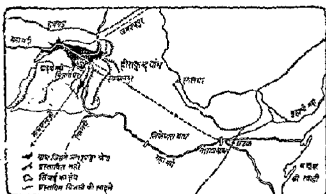
(१) ज्वार भाटे की शक्ति (Power of Tidal Water)
(२) पृथ्वी का अन्तर्ताप (Internal Heat of the Earth)
(३) सूर्य की शक्ति (Heat of the Sun)
(४) अणु-शक्ति (Atomic Power)

(१) **ज्वार भाटे की शक्ति**—समुद्र के निकटवर्ती भागो में ज्वार के समय समुद्र का जल बहुत ऊँचा उठता है तथा भाटे के समय वह नीचा हो जाता है। इस जल मे भी शक्ति प्राप्त करने के प्रयास किये गये है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यदि विश्व के सभी क्षेत्रो के ज्वार भाटो की शक्ति की प्राप्ति की जाये तो सभवतः पृथ्वी की माँग की आधी पूर्ति हो सकती है किन्तु अभी तक इस दिशा मे किये ४ नो द्वारा विशेष सफलता नही मिली है। इसका मुख्य कारण प्रतिकूल भौगो- अवस्थायें हैं। ज्वार भाटे से शक्ति प्राप्त करने के प्रयास मुख्यतः नदियो की इस्चुरी में ही किये जा सकते हैं। यह शक्ति इंगलैंड में दक्षिणी वेल्स मे सेवर्न नदी की इस्चुरी मे और फ्रांस मे बिस्के की खाड़ी मे प्राप्त की गई है। इंगलैंड मे इसका उपयोग चक्कियाँ चलाने में तथा संयुक्त राज्य अमरीका के मेन प्रांत मे लकड़ी चीरने के कारखानो मे किया जाता था। ज्वार भाटे से शक्ति प्राप्त करने की अन्य योजनायें ब्रिटेन में **रैम्स और मोर सेंट मिशल**; अर्जेन्टाइना की **सेनजोंस तथा डिसोडो** नदियाँ और ब्रिटेन मे **फंडी के आखात** की हैं। किन्तु कुल उत्पादन इतना कम होता है कि उससे विश्व के माँग का केवल २% से भी कम की पूर्ति सभव है।

ज्वार भाटे से तीन विधियो द्वारा शक्ति प्राप्त की जाती है। **पहली विधि** के अन्तर्गत ज्वार के जल को खाडी पर बने बाँधों में एकत्रित कर जल सग्रहित किया जाता है और फिर उससे टरवाइन चलाये जाते हैं। इस विधि को **एक बाँध योजना** (One basin System) कहा जाता है। दूसरी विधि के अनुसार ज्वार के जल को एक बाँध की अपेक्षा दो बाँधो मे इकट्ठा किया जाता है—जिनमे से एक ऊँचाई पर और दूसरा निचाई पर होता है। ऊँचाई वाले बाँध का जल निचाई वाले बाँध में छोडा जाता है और इससे शक्ति प्राप्त की जाती है। इस विधि को **दो बाँध योजना** (Two basins System) कहा जाता है। तीसरी विधि के अनुसार दोनो बाँधो को आपस मे जोड दिया जाता है और जल की अधिक राशि मिल जाने से उसका उपयोग टरवाइन चलाने मे किया जाता है।

(२) **पृथ्वी का अन्तर्ताप या ज्वालामुखी की शक्ति**—पृथ्वी के गर्भ में जितनी गरमी मिलती है, उसका अनुमान लगभग २५ अरब अश्वशक्ति घंटे प्रति वर्ष

मुख्य बांध की लम्बाई १५,७४८ फीट है। दोनों तरफ किनारे-किनारे १३ मील लम्बा अवरोधक है। इसके द्वारा २५०' वर्ग मील क्षेत्र में ६७ लाख एकड़ फीट पानी एकत्रित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त दो और बांध बनाये जायेंगे—



चित्र १५१- हीराकुड बाँध योजना

तिकरपारा और नाराज पर हीराकुड बाँध की योजना से लगभग १८ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। इस बाध से १९६२ तक १० लाख एकड़ भूमि सींची गई। शक्तिगृह की ४ इकाइयों की उत्पादन क्षमता १,२३,००० किलोवाट प्राप्त की जा चुकी है। एक शक्तिगृह बाँध के निकट और दूसरा बाँध से १७ मील नीचे की ओर होगा। यह बिजली कटक और जमशेदपुर तक जावेगी तथा इस बिजली की लाइन मुचकन्द शक्ति गृह को भी जोड़ेगी। ये बाँध बाढ़ों को रोककर लगभग १२ लाख रुपये का लाभ करेंगे। राजगगपुर के सीमेंट, रूरकेला के इस्पात, जोदा के फैरो-मैंगनीज, ब्रजराजनगर के कागज और चौद्वार के कपड़े उद्योग को बिजली दी जा रही है। हीराकुड से कटक, पुरी, सम्बलपुर सुन्दरगढ़, बास आदि स्थानों को विद्युत शक्ति का लाभ हुआ है।

(४) **तुङ्गभद्रा योजना** (Tungbhadra Project)—यह योजना मद्रास और आंध्र सरकार द्वारा प्रारम्भ की गई है। इसमें कृष्णा की बड़ी सहायक नदी तुङ्गभद्रा के आस-पास मैसूर के बलारी जिले में १६२ फीट ऊँचा और ७,६४२ फीट लम्बा बाँध बनाया गया है जिसमें ६० फीट चौड़े और २० फीट ऊंचे ३३ दरवाजे हैं। इस बाँध के द्वारा ३० लाख एकड़ फीट पानी संग्रह किया जाता है, जिसका उपयोग मद्रास और आंध्र दोनों प्रदेशों के लिए होगा। इस योजना से मद्रास में जल विद्युत का उत्पादन किया जायेगा। मद्रास व आंध्र में दो नहरों द्वारा २·५ लाख एकड़ और ४.५ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जा रही है। इस योजना से कुल १,८०,००० किलोवाट शक्ति उत्पादन तथा ७ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकेगी।

(५) **भाखरा और नांगल योजना** (Bhakra Nangal Project)—पूर्वी पंजाब की यही एकमात्र और भारत की सबसे बड़ी बहुमुखी योजना है। इस योजना का ध्येय (१) सतलज और यमुना नदी के बीच के भाग की सिंचाई करना, (२)

गया। इनमे सबसे अधिक आशामय सम्भावना सूर्य की शक्ति से बिजली बनाने की जान पड़ी। इस काम के लिए सौर-सैल, उष्मा विद्युत और उष्मा-आयनिक परिवर्तक इस्तेमाल किये जाते हैं।

परिवर्तक

थर्मोकपल को उष्मा आयनिक परिवर्तक कहते है। धूप को थर्मोकपल की सहायता से बिजली मे बदलने के जो प्रयोग किये जा रहे हैं वे अभी आरम्भिक अवस्था मे है। फिर भी पिछले पांच वर्ष मे यह सम्भव हो गया है कि एक थर्मोकपल पर, ५०० अश सेंटीग्रेड धूप डालकर उसकी पाँच प्रतिशत शक्ति को बिजली मे बदला जा सकता है।

सौर-सेल

धूप जब एक फोटोप्लेट पर पड़ती है, तब वह सीधी बिजली मे बदल जाती है। इस प्रकार के दस प्रतिशत दक्षता वाले सिलकिन सैल सफलतापूर्वक कृत्रिम उपग्रहों, ट्राजिस्टर रेडियो, तारहीन टेलीफोन व्यवस्थाओं मे उपयोग मे लाये गये है। पर वे अब भी मँहगे है। एक सिलकिन सौर-सेल से एक किलोवाट बिजली प्राप्त करने मे ढाई लाख से दस लाख डालर तक की लागत आती है।

बड़ी सौर-भट्टिया अर्ध-औद्योगिक पैमाने पर इस्तेमाल हो रही है।

(४) शक्ति का नवीनतम साधन विभिन्न प्रकार की खनिजों—थोरियम, (Thorium), यूरेनियम (Uranium), प्लूटोनियम (Plutonium) आदि से प्राप्त की जाने वाली अणु-शक्ति है। अनुमान लगाया जा सकता है कि एक पौंड यूरेनियम या प्लूटोनियम से १२० लाख किलोवाट शक्ति उत्पादित की जा सकती है—अर्थात् इस शक्ति की मात्रा ६००० टन कोयले से प्राप्त होने वाली शक्ति के बराबर होगी। ये तीनो ही खनिज भारत, कागो गणतत्र, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि देशों मे प्राप्त होते हैं। अभी तक इस शक्ति का उपयोग केवल विनाशकारी कार्यों के लिये ही किया गया है। इसका सर्वप्रथम परीक्षण १९४५ मे हीरोशीमा के निकट अणुबम डाल कर किया गया। किन्तु अब इसका उपयोग वायुयान चलाने मे भी किया गया है। सं० राज्य, रूस, फ्रास और ब्रिटेन अणुशक्ति के नये उपयोग ढूंढ निकालने मे प्रयत्नशील है। १९५४ मे रूस ने विश्व मे सबसे पहले आणविक विद्युत स्टेशन स्थापित किया जिसकी क्षमता ६,००० k. w. की थी। १९५९–६० तक रूस मे ऐसे केन्द्रों की क्षमता २० से २५ लाख किलोवाट थी। इनमे से १० लाख किलोवाट शक्ति वाले दो स्टेशन यूराल मे और एक ४ लाख किलोवाट शक्ति वाला मास्को के निकट होगा।

परमाणु शक्ति से बिजली उत्पादन के लिए भारत मे पहला बिजलीघर पश्चिमी तट पर तारापुर मे बनाया जा रहा है। समझा जाता है कि यहाँ लगभग तीन लाख किलोवाट बिजली पैदा की जा सकेगी। यह परमाणु-बिजलीघर ६५-६६ तक चालू हो जायगा। यहाँ बिजली बनाने के लिए आवश्यक ऊर्जा यूरेनियम धातु मे परमाणुओं के विघटन से प्राप्त की जायगी। यूरेनियम बिहार की जादूगुडा खादानों से निकाला जायगा।

भारतीय परमाणु शक्ति आयोग ने इन खदानो को विकसित करके एक

(२) यूरोप का विस्तार सबसे अधिक शीतोष्ण कटिबन्ध मे है और ध्रुवीय क्षेत्र मे इसका भाग अन्य महाद्वीपो से बहुत कम है। इसलिये इसके अधिकांश भाग मे सम जलवायु पाई जाती है। ऐसी जलवायु मानव जाति की प्रगति में उत्साहवर्द्धक और सहायक तत्व है। यूरोप की जलवायु प्रो० हन्टिंगटन के कथनानुसार भौतिक सभ्यता, मानसिक प्रगति, औद्योगिक उन्नति के लिये आदर्श है। खेती और उद्योग दोनों के लिये ही यहाँ की जलवायु अत्यन्त अनुकूल है। शीतोष्ण चक्रवातीय जलवायु स्वास्थ्य के लिए आदर्श है। इसलिये यूरोपवासियों की कार्य-क्षमता बहुत अधिक है।

(३) यूरोप एक विशाल प्रायद्वीप है जिसमें कई छोटे-छोटे प्रायद्वीप हैं। इस प्रकार असंख्य स्थानो पर समुद्र यूरोप के भीतर चला गया है और सामुद्रिक प्रभाव भीतरी भागो मे पहुँचकर जलवायु को सम बनाता है। रूस को छोड़कर यूरोप का कोई भी भाग समुद्र से अधिक दूर नही पडता। जलवायु के सम होने के साथ व्यापार में भी इसलिये सुविधा और वृद्धि हो जाती है।

(४) यूरोप के समुद्र तट की लम्बाई क्षेत्रफल के अनुपात से संसार मे सबसे अधिक है। समुद्र तट अत्यन्त कटा-फटा है। असंख्य छोटी-छोटी खाड़ियाँ भीतर तक चली गई है जिससे यूरोप मे उत्तम बन्दरगाहों की अधिकता है। यूरोप के प्राय. सारे बन्दरगाह प्राकृतिक हैं।

(५) यूरोप मे निवास योग्य भूमि का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल के अनुपात में बहुत अधिक है। यूरोप मे कोई भाग रेगिस्तानी नही है। इसके किसी भाग मे अमेजन बेसिन जैसे सघन वन नही पाये जाते और पर्वतीय बेकार क्षेत्र का विस्तार भी बहुत थोड़ा है। इसलिये यूरोप मे कृषि का महत्व उतना ही अधिक है जितना उद्योगधन्धो का।

(६) यूरोप मे खनिज सम्पत्ति की विविधता तो नही है लेकिन लोहा और कोयला (जो आधुनिक कारखाना उद्योग के आधार हैं) इस महाद्वीप मे प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। कोयले और लोहे का शोषण भी इस महाद्वीप मे सबसे पहले हो गया था।

(७) यूरोप के निवासी कई जातियो के मिश्रण है इसलिये ये स्फूर्तिवान और अन्वेषणप्रिय होते है।

(८) यूरोप मे वैज्ञानिक प्रगति भी सबसे अधिक हुई है अतः इसकी औद्योगिक उन्नति भी सम्भव हो सकी है।

(९) यूरोप के राष्ट्रों के आधीन संसार के बड़े-बड़े क्षेत्रों में उपनिवेश हैं जहाँ से यूरोप के कारखानो के लिये कच्चा माल प्राप्त होता है और जहाँ पक्के माल के लिए विस्तृत बाजार विद्यमान हैं।

(१०) संसार के किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना मे यूरोप का भीतरी यातायात क्रम कहीं अधिक उन्नत और कार्यकुशल है।

(११) ऊँचे अक्षांशो में स्थित होने से इनकी जलवायु समशीतोष्ण है। प्रो० हण्टिङ्गटन के अनुसार यूरोप की चक्रवातीय जलवायु कारखाना उद्योग के लिए आदर्श है।

१४. निर मीचकर रानीगंज के कोल क्षेत्र का विवरण देते हुए बताइये कि इस कोयले की क्या बुराइयां हैं ? उनके दूर करने के लिए क्या सुझाव दिये जा सकते हैं ?

१५. संयुक्त राज्य-अमेरिका के तेल-क्षेत्र का विवरण दीजिए और उनसे सम्बन्धित उन बन्दरगाहों का भी उल्लेख करिये जिनके द्वारा तेल का व्यापार होता है।

१६. टैनेसी घाटी योजना का वर्णन करते हुए बताइये कि भारत की दामोदर घाटी की योजना से इसकी तुलना कहाँ तक की जा सकती है ?

१७. भारत में जल विद्युत शक्ति का विकास करना क्यों आवश्यक है ? उत्तरी भारत में जो विकास हुआ है उसका वर्णन करिए।

१८. कौन-कौन सी भौतिक और आर्थिक दशायें जल विद्युत शक्ति के विकास पर प्रभाव डालती हैं ? कोयले की तुलना में इसने उद्योग-धन्धों का स्थानीयकरण पर क्या प्रभाव डाला है ?

१९. एशिया के तेल-स्रोतों का वर्णन करिये ? ये किस प्रकार पूर्व और पश्चिम के बीच संघर्ष के कारण रहे हैं ?

२०. भारत के लिए कौन-कौन से विदेशी स्रोत उपलब्ध हैं ? इनकी वर्तमान स्थिति का उल्लेख करिये और यह भी बताइये कि देश में कोयले और गन्ने के छूते से किस प्रकार शक्ति उत्पादन की जा सकता है ?

२१. "यद्यपि वर्तमान काल में मिट्टी के तेल और जल विद्युत का महत्व बहुत अधिक है किन्तु कोयले ने औद्योगिक केन्द्रों के स्थानीयकरण में बड़ा प्रभाव डाला है।" इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ? विश्व के प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों का उदाहरण द्वारा स्पष्ट करिये।

२२. दामोदर घाटी योजना का संक्षिप्त वर्णन करिये।

२३. 'ईरान में तेल समस्या' पर छोटा सा निबन्ध लिखिये।

२४. "कुछ समय पश्चात् कोयले गैस और तेल का महत्व कम हो जायगा किन्तु जल विद्युत शक्ति रहेगी। जब तक पृथ्वी पर आकाश से जल और वर्फ गिरता रहेगा, जब तक जल समुद्र में बहता रहेगा ताकि वाष्पीकरण की क्रिया द्वारा जल पुनः धरातल पर वह सके। मनुष्य की सहायता के लिये जल शक्ति का यह स्रोत अक्षय रहेगा।" इसका विवेचन करिये और इस सम्बन्ध में टैनेसी घाटी योजना और भारत की अन्य बहुमुखी योजनाओं का वर्णन करिये।

२५. पृथ्वी के विभिन्न भागों में मानव ने अपनी सांस्कृतिक उन्नति के लिए शक्ति के विभिन्न स्रोतों का किस प्रकार उपयोग किया है ?

२६. कोयले और मिट्टी के तेल का तुलनात्मक विवरण दीजिये।

२७. "जल विद्युत शक्ति के उपयोग में कई उतार-चढ़ाव आए हैं जो विशेषकर औद्योगिक अवस्थाओं और अविष्कारों पर निर्भर रहते हैं।" इस कथन की पुष्टि करिये।

२८. बहुमुखी योजनाओं से क्या अभिप्राय है। भारत की कुछ प्रमुख योजनाओं का वर्णन करिये।

जायगी। इस योजना से साभर झील का नमक, मकराने का संगमरमर, जयपुर व भीलवाडा का घीया पत्थर, जयपुर किशनगढ, कोटा और भीलवाड़ा की सूती कपड़ों की मिलों, उदयपुर की जावर की खानों और बूँदी के सीमेंट के कारखानों तथा जयपुर के धातु उद्योग को बहुत सस्ती बिजली प्राप्त हो सकेगी।

(८) मयूराक्षी योजना (Mayurakshi Project)—सथाल परगना में मैसनजोर नामक स्थान पर मयूराक्षी नदी पर एक बाँध १५५ फीट ऊँचा और २,१७० फीट लम्बा बनाकर ५ लाख एकड़ फीट पानी का संग्रह किया गया है। यह बाँध मैसनजोर या **कनाडा बाँध** कहलाता है। दूसरा बाँध मैसनजोर से २२ मील आगे इसी नदी पर प० बंगाल के वीरभूम जिले मे सूरी स्थान के निकट बनाकर दोनों किनारों से नहरें निकाली जायेंगी, जो वीरभूम, बर्दवान और मुर्शिदाबाद जिलों में ७ लाख एकड़ की भूमि सिंचाई करेगी। इसके फलस्वरूप ३ लाख टन चावल और २५ हजार टन रबी की फसलें पश्चिमी बंगाल और बिहार में उत्पन्न की जा सकेंगी।

मैसनजोर नामक स्थान पर एक छोटा सा शक्तिगृह भी बनाया जायेगा जिससे ४०० किलोवाट जल-विद्युत शक्ति तैयार होगी। यह शक्ति वर्दवान, मुर्शिदाबाद और सथाल परगना को दी जायगी। यह योजना विशेषत सिंचाई योजना है।

(९) मच्छकुण्ड योजना (Machkund Project)—आन्ध्र और उड़ीसा राज्य के सम्मिलित प्रयत्न से इस योजना के अन्तर्गत मच्छकुण्ड नदी पर १७६ फीट ऊँचा और १३४५ फीट लबा बाँध बनाया गया है जिसके अन्तर्गत ६ २ लाख एकड़ फीट जल एकत्रित किया गया है। शक्ति उत्पादन के लिए तीन शक्तिगृह निर्मित किये गये हैं जिनमें से प्रत्येक की उत्पादन क्षमता १७,००० किलोवाट होगी। बाद मे तीन और शक्तिगृह निर्माण किये जायेंगे। इनकी सम्मिलित शक्ति की क्षमता १,०२,००० किलोवाट होगी।

(१०) रामपद सागर (Rampad Sagar)—यह बाँध गोदावरी नदी पर पोलावरम के पास बनाया जायगा। यह ४२८ फीट ऊँचा और ६,६०० फीट लम्बा होगा। यद्यपि यह बहुमुखी योजना है किन्तु इसका महत्व सिंचाई के लिए अधिक होगा। इसके द्वारा विशाखापट्टम, कृष्णा, गोदावरी और गन्तूर जिलो की लगभग २७ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। इस बाँध के दाईं ओर एक शक्तिगृह भी बनाया जायेगा जिससे लगभग १½ लाख किलोवाट शक्ति उत्पन्न होगी। इस शक्ति-गृह का सम्बन्ध मद्रास के विद्युत-जाल से किया जायेगा।

(११) कोयना बाँध योजना (Koyna Project)—बम्बई में कोयना नदी पर हेलवाक स्थान पर २०८ फीट ऊँचा और ३,०३० फीट लम्बा बाँध बनाया जा रहा है। इस बाँध के जल में २'४ लाख किलोवाट जल-विद्युत उत्पन्न की जायगी। इसका उपयोग बम्बई, सतारा, पूना, शोलापुर, बीजापुर, रत्नगिरी तथा थाना जिले में किया जायेगा। इस योजना के अन्तर्गत ३७,००० एकड़ भूमि की सिंचाई भी की जायगी।

(१२) ककड़ापारा बाँध (Kakrapara Project)—ताप्ती नदी पर ककड़ापारा नामक स्थान के निकट एक २०३५ फीट लम्बा और ४५ फीट ऊँचा बाँध बनाया गया है। इससे बम्बई और अहमदाबाद के बीच ६'५ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जायेगी तथा २'२ लाख किलोवाट जल-विद्युत शक्ति का उत्पादन होगा।

हो सकता है। किसी स्थान विशेष पर उद्योगो के केन्द्रित हो जाने के लिए निम्न आधारभूत आवश्यकताओ की पूर्ति होना आवश्यक है :—

(१) पूँजी की सुलभता।
(२) कच्चे माल की निकटता।
(३) बाजार की निकटता।
(४) अनुकूल जलवायु।
(५) शक्ति के साधनो की निकटता।
(६) सरकारी संरक्षण।
(७) यातायात की सुविधायें।
(८) पूर्वारम्भ का लाभ।
(९) चतुर श्रमिको की प्रचुरता।

इन तत्वो की सुविधा के लिए हम इस प्रकार निर्धारित कर सकते है :—

"Money, Material, Market, Men,
Motive Power, Machinery, Management.
Momentum of an Early Start, and
Means of Transport."

(१) पूँजी की सुलभता (Supply of Capital)--बडे-बडे उद्योग धन्धो को चलाने के लिए पर्याप्त पूँजी की आवश्यकता होती है। जहाँ बड़े-बड़े पूँजीपति होते हैं वहाँ यदि किसी उद्योग के लिए कुछ और सुविधायें भी हो तो वह उद्योग-धन्धा उस स्थान पर केन्द्रित हो जाता है। उदाहरणार्थ—बम्बई के सेठो ने अमेरिकन गृह युद्ध के फलस्वरूप हुई कपास की मँहगाई से लाभ उठाते हुए कपास का निर्यात कर बहुत सा धन कमा लिया था। उस धन से बम्बई में सूती कपडे की मिलें भारी संख्या मे खुल गई। आधुनिक काल मे पूँजी गतिशील तत्व माना जाता है। अत: जिन देशो के पास आवश्यकता से अधिक पूँजी उपलब्ध है वे इस प्रचुर-पूँजी को लगा कर सुदूर देशो मे भी उद्योग स्थापित कर सकते हैं। अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस तथा जर्मनी की पूँजी अधिकतर भारत, पाकिस्तान, एशिया के अन्य देशों और दक्षिण अफ्रीका में लगी हुई है। इसी प्रकार औद्योगिक विकास के लिये ब्रिटेन और न्यू-इंगलैंड स्टेट्स को अन्य देशो से पर्याप्त मात्रा मे पूँजी उपलब्ध हो गई थी। भारत मे पूँजी का आधिक्य होते हुए भी उसके शंकित (Shy) होने के कारण विदेशो से पूँजी का आयात करना पडता है।

(२) कच्चे माल की निकटता (Proximity to Raw Materials)—सभी छोटे बडे उद्योगो को कच्चे माल की आवश्यकता होती है। यदि किसी कारखाने को दूर से कच्चा माल मगाना पडे तो उसका उत्पादन व्यय बढ जावेगा और वह दूसरे उत्पादको के मुकाबले मे नही टिक सकेगा। उद्योग-धन्धो के स्थापन और कच्चे माल की उपलब्धता मे गहरा सम्बन्ध है। उद्योग-धन्धों मे व्यवहृत होने की दृष्टि से कच्चा माल दो तरह का होता है। एक वह जो कच्चे रूप में बहुत भारी होता है, किन्तु तैयार माल के रूप मे बदल कर उसका भार कम हो जाता है। इस प्रकार के माल

के बराबर लगाया गया है। इसमे से अभी तक बहुत ही नगण्य राशि का उपयोग हो पाया है। ज्वालामुखी पर्वतो के निकट जो भूगर्भ से गैस या भाप निकलती है अथवा गर्भ-स्रोतो से प्राप्त होने वाले जल से शक्ति मिलती है। इस प्रकार के भाप के कुएँ मुख्यतः इटली मे लार्डेरेलो में हैं जहाँ लगभग १० कुओं से शक्ति प्राप्त की जाती है। कैलीफोर्निया, इगलैंड, जापान और न्यूजीलैंड के गर्म कुओ से भी शक्ति प्राप्त की जाती है। इगलैंड के ज्वालामुखी पर्वतीय भागो मे इस शक्ति से वाष्प इंजन और विद्युत उत्पन्न करने वाले यंत्र चलाये जाते है। आइसलैंड मे भी इस शक्ति का विकास किया गया है। यहाँ थिंगवाला झील में कई गर्म स्रोतो का जल वह कर आता है। यह गर्म जल नलो द्वारा १० मील की दूरी पर रैंकजाविक को ले जाया जाता है। वहाँ यह लगभग ३००० घरो को गर्म करने मे उपयुक्त होता है। इसका उपयोग सार्वजनिक-लौन्ड्रियो मे भी होता है। आइसलैंड मे तो इस गर्म जल की शक्ति से मकानो (Hot houses) मे केला, रसदार फल, सब्जियाँ और फूल गैदा किये जाते हैं। किन्तु इस प्रकार प्राप्त की गई शक्ति भी मानव की माँग को पूरा करने मे अपर्याप्त ही रहेगी।

(३) **सूर्य की गर्मी**—सूर्य भी पृथ्वी पर मिलने वाली गर्मी और शक्ति का जन्मदाता है। यह एक दहकता हुआ आग का महान पिंड है जिसके आतरिक भाग मे लगभग २ करोड़ सैंटीग्रेड और ऊपरी भाग मे ७ हजार सैंटीग्रेड तापक्रम मिलता है। श्री एबट के अनुसार भूमि का प्रति ५ वर्ग फीट क्षेत्र सूर्य से १ अश्व शक्ति ग्रहण करता है। यह शक्ति पृथ्वी पर लघु तरगो के रूप मे पहुँचती है। पृथ्वी के कुछ भागो मे इस शक्ति की मात्रा अधिक और कुछ मे कम पहुँचती है। अनुमान लगाया गया है कि मिस्र के ६,००० वर्ग मील पर पड़ने वाली सूर्य की किरणें इतनी शक्ति फेंकती है जो विश्व की सारी मशीनो और पवन-चक्कियो को गतिमान कर सकती है। विशेष प्रकार के काँच और अन्य साधनों द्वारा सूर्य की शक्ति का छोटे पैमाने पर विकास किया गया है। किन्तु मोटे तौर पर सूर्य की शक्ति का वे ही देश अधिक लाभ उठा सकते है जहाँ मौसम वर्ष भर चमकीला और साफ रहता है क्योकि ऐसे ही मौसम मे सूर्य की किरणें सीधी पडने के कारण उनसे मिलने वाली गर्मी की मात्रा अधिक होती है। अतएव यह सभव है कि उष्ण कटिबन्धीय प्रदेश ही भविष्य में इस शक्ति उत्पादन के श्रेयी होंगे और तब सभ्यता के केन्द्र गर्म मरुस्थलों की सीमा पर ही स्थापित होंगे।

छोटे पैमाने पर सूर्य शक्ति का उपयोग अत्यन्त प्राचीन काल से किया जा रहा है। यूनानियों ने ६४० ई० में और फ्रांस मे १७ वी शताब्दी मे इसका उपयोग किया गया है। वर्तमान युग मे इसका उपयोग घरो को गरम करने तथा जल-गर्म करने के लिए किया जाता है। सूर्य से शक्ति प्राप्त करने के प्रयास भारत मे भी आरम्भ हो गये हैं। वैज्ञानिको का कथन है कि यदि इस शक्ति का विकास किया जा सके तो इससे न केवल खेतों की सिंचाई और कुटीर उद्योगों को ही लाभ होगा वरन् पश्चिमी शुष्क क्षेत्रों मे, जहाँ जल की कमी है और शक्ति का अभाव है, सूर्य-यंत्र विशाल क्षेत्रो को खेती के उपयोग बना सकेंगे।

१९६१ मे रोम में एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें विभिन्न देशो के पाच सौ से अधिक विशेषज्ञो ने भाग लिया। इस अवसर पर धूप, वायु और पृथ्वी के भीतर से मिलने वाली प्राकृतिक भाप को इस्तेमाल करने की नयी रीतियो पर विचार किया

जिसमे उनकी माँग की पूर्ति सुविधाजनक रूप से पूरी की जा सके। प्राय प्रत्येक बड़े नगर म बिस्कुट बनाने, छपाई करने आदि के उद्योग इसीलिए पाये जाते हैं कि वहा इन उद्योगों की माँग-स्थानीय होने के साथ-साथ निरतर भी रहती है।

अब सामान भेजने की विधि मे इतनी अधिक उन्नति हो चुकी है कि नाजुक और शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तुयें दूर-दूर के स्थानो को शीघ्रता के साथ भेजी जा सकती हैं, किन्तु बाजारो की निकटता उद्योग स्थापन के लिए पर्याप्त प्रलोभन होता है। दूध, अन्डे, मछलियाँ, फल आदि वस्तुयें शीत भडारो मे वन्द कर काफी दूर तक भेजे जा सकते हैं।

(४) अनुकूल जलवायु (Favourable Climate)—उद्योग-धन्धों मे अनेक व्यक्ति काम करते है और औद्योगिक क्षेत्रों की जनसख्या उत्तरोत्तर बढती जा रही है। इसलिए उद्योग ऐसे स्थानो पर स्थापित किये जाते हैं जहाँ की जलवायु स्वास्थ्यप्रद होती है। किसी-किसी उद्योग धन्धे को विशेष प्रकार की जलवायु की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ सूती कपड़े के उद्योग के लिए नम जलवायु अच्छी समझी जाती है। क्योकि ऐसी जलवायु मे धागा कम टूटता है और धागा बारीक तथा मजबूत बनाया जा सकता है। इसीलिए सूती कपडो के उद्योग बम्बई, मानचेस्टर व ओसाका मे स्थापित किये गये हैं। शुष्क-जलवायु वाले क्षेत्रों में कृत्रिम उपायों से नमी रखी जाती है, किन्तु इससे उत्पादन-व्यय बहुत बढ जाता है। इसके विपरीत आटा पीसने के लिए सूखी जलवायु चाहिए। इसीलिये यह उद्योग बुडापेस्ट, मिनियापोलिस, सैंटपाल तथा कराँची मे पाया जाता है। फिल्म व्यवसाय के लिए स्वच्छ धूप और उज्वल प्रकाश की आवश्यकता है अत हालीवुड, पूना, फ्रास और इटली मे काफी फिल्मे बनाई जाती हैं। पूना को तो 'भारत का हालीवुड' कहा जाता है। ऊनी कपडे, रस्सी तथा कागज आदि के उद्योग पर भी जलवायु का नियंत्रण रहता है।

(५) शक्ति के साधनों की निकटता (Proximity to Sources of Power) उद्योग-धन्धो मे शक्ति के साधनो से ही प्राण संचार होता है। शक्ति के साधनो मे अभी भी कोयले का महत्व अधिक है। अधिकाश उद्योग कोयले से ही चलाये जाते है। कोयला एक भारी पदार्थ है उसे दूर तक ले जाने मे काफी व्यय पड़ जाता है, इसलिए प्राय. वे धन्धे जिनमे कोयले का अधिक उपयोग होता है कोयले की खानो के निकट स्थापित किये जाते हैं। उदाहरणार्थ—रानीगज, झरिया की खानो के निकट ही जूट व लोहे के उद्योग केन्द्रित है। पजाब मे कोयले का अभाव होने के कारण उसका औद्योगिक विकास नही किया जा सका यद्यपि वहाँ कच्चा माल बहुत उपलब्ध है। किन्तु अब शक्ति के साधन की दृष्टि से बिजली का महत्व बढ रहा है। यह बिना अधिक व्यय के ही काफी दूर तक तारो द्वारा ले जाई सकती है। अतः यह आवश्यक नही रह गया है कि उद्योग-धन्धे शक्ति-स्रोतो के निकट ही स्थित हो। जहाँ तक बिजली पहुँच सकती है वही तक उद्योग भी स्थापित किये जा सकते हैं। अतएव स्विटजरलैंड, इटली, स्कैंडेनेविया, पूर्वी कनाडा, जापान और भारत मे कागज बनाने, धातु से एल्यूमिनियम प्राप्त करने लुब्दी बनाने, घड़ी बनाने और सूती वस्त्रों की मिलो में बिजली का ही प्रयोग किया जाता है। किन्तु ब्रह्मा, ईरान और स० रा० अमेरिका में मिट्टी के तेल की उपलब्धता के कारण वहाँ इसी के सहारे उद्योग चलते है।

(६) सरकारी संरक्षण (Protection)—जब कोई राज्य किसी उद्योग को

हजार टन कच्चा यूरेनियम प्रतिदिन प्राप्त करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया है, उस पर लगभग साढ़े चार करोड़ रुपये की लागत आयगी ।

भारत मे बिजली की माग भविष्य में परिमाणु बिजलीघरो से बहुत कुछ पूरी की जायगी । परमाणुशक्ति बिजलीघर में रेडियमधर्मी यूरेनियम के अलावा थोरियम भी काम मे आता है । इस सम्बन्ध मे देश मे थोरियम के भण्डार के जो सर्वे किये गये हैं, उनसे पता चला है कि यह धातु उस मोनोजाइट रेत में उपस्थित है, जो केरल और मद्रास के समुद्र-तटो पर और बिहार राज्य मे पायी जाती है ।

केरल और मद्रास की रेत मे थोरियम की मात्रा नौ प्रतिशत और बिहार की रेत मे दस प्रतिशत है । थोरियम की कुल मात्रा दक्षिण मे दो लाख टन और बिहार मे तीन लाख टन से अधिक बतायी जाती है । कहा जाता है कि ससार भर में अभी तक थोरियम के जो ज्ञात भण्डार हैं, उनमें यह सबसे बडा है । समझा जाता है कि शेष ससार भर में यूरेनियम के जितने ज्ञात भण्डार हैं, यह मात्रा उसके बराबर है ।

प्रश्न

१. ब्रिटेन के व्यापार में कोयले का क्या स्थान है? ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यापार की तुलना कीजिये ।

२. दुनिया में कोयले और पैट्रोल की उत्पत्ति के बारे में संक्षिप्त नोट लिखिये ।

३. जल विद्युत के विकास के लिए कौन-कौन सी भौगोलिक तथा आर्थिक दशायें आवश्यक होती हैं? अपने उत्तर को भारत अथवा इटली के उदाहरण से स्पष्ट कीजिए ।

४. जल विद्युत का क्या महत्व है? उसके मुख्य साधन बताओ और यह भी लिखो कि अब तक उसने देश की क्या-क्या सेवाएँ की हैं?

५. "आधुनिक युग में कोयला व लोहा, सोना व हीरों से अधिक मूल्यवान क्या है ।" क्यों आप इस कथन से सहमत है? अपने उत्तर की पुष्टि से उदाहरण दीजिये ।

६. विश्व के कुछ ही देशों में कोयला क्यों पाया जाता है? कोयले की किस्म और उत्पादन-व्यय किस प्रकार भूगर्भिक कारणों से सम्बन्धित होते हैं?

७. संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रमुख मिट्टी के तेल क्षेत्रों का वर्णन करते हुए बताइये कि विश्व में मिट्टी के तेल का क्या महत्व है?

८. पैट्रोलियम क्या है? संसार के किन देशों में यह निकाला जाता है? ईंधन के रूप में इसका क्या महत्व है?

९. विश्व के कोयले और पैट्रोलियम के क्षेत्रों का वर्णन करते हुए उनके वितरण बताइये ।

१०. संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस के तेल क्षेत्रों का वर्णन करते हुए बताइये कि आधुनिक समय में मिट्टी के तेल का क्या महत्व है?

११. 'ब्रिटेन में कोयला उद्योग' का वर्णन करते हुए बताइये कि इन कोल-क्षेत्रों में कौन से प्रमुख उद्योग-धन्धे पाये जाते हैं ।

१२. विश्व में जल-विद्युत साधनों पर अपने विचार प्रकट करिये । इस सम्बन्ध में भारत के उत्पादित और संभावित साधनों पर प्रकाश डालिये ।

१३. दक्षिणी-पूर्वी एशिया में तेल-प्राप्ति का वर्णन करते हुये उसका महत्व समझाइए?

केन्द्रित हो जाता है तो आस-पास के श्रमिक उन धन्धों मे काम करते-करते निपुण हो जाते हैं। इस प्रकार उस क्षेत्र मे निपुण श्रमिको की पूर्ति अधिक हो जाती है। यदि कुछ श्रमिक बीमार हो जावें या छुट्टी पर चले जायें तो विशेष हानि नही होती क्योंकि अन्य कारीगर आसानी से मिल जाते हैं।

(२) कुशल मजदूरों की माँग में वृद्धि—जब एक स्थान पर किसी उद्योग के अनेक कारखाने खुल जाते है तो वहाँ कुशल श्रमिको की माँग बढ जाती है और वह स्थान कुशल कारीगरो का बाजार हो जाता है। दूर-दूर से भी कारीगर उस केन्द्र पर काम के लिये आते रहते हैं।

(३) यंत्रों का विकास—जब कोई कारीगर श्रमिक कई वर्षों तक एक ही काम करता रहता है तो वह उस काम को करने के सरल ढग निकाल लेता है और उस कार्य को सरलतापूर्वक करने के लिए औजारो और मशीनो का आविष्कार कर लेता है अथवा मौजूदा यत्रो मे सुधार कर लेता है। उस स्थान पर उन यंत्रों का वर्कशॉप खुल जाती है। धीरे-धीरे उन मशीनो को बनाने के कारखाने भी खुल जाते हैं।

(४) सहकारी उद्योगों का विकास—जब किसी स्थान पर कोई धन्धा केन्द्रित हो जाता है तो हजारो श्रमिक वहाँ काम करने लगते हैं। उनके कुटुम्ब भी उनके साथ आते हैं अत श्रमिको की स्त्रियो के लिये भी काम चाहिये। फलतः छोटे-छोटे धन्धे भी वहाँ खुल जाते हैं जिनमे उनकी स्त्रियों और बच्चों को काम मिल जाता है।

(५) पूरक अथवा निर्भर उद्योगों का विकास—जहाँ कोई धन्धा केन्द्रित हो जाना है वहाँ उस धन्धे मे बच रहने वाली वस्तुओ का उपयोग करने वाले आर्थिक धन्धे भी खुल जाते हैं जैसे मिट्टी के तेल के कारखानो के केंद्र मे मोमबत्ती के बनाने का धन्धा चालू हो जाता है। लोहे के कारखानो के केन्द्र के निकट टिन की चादरो के कारखाने, सीमेन्ट के कारखाने तथा खाद बनाने के कारखाने खुल जाते हैं क्योंकि इन कामो मे लोहे के कारखानो की बची हुई स्लैग (Slag) का उपयोग होता है। वनस्पति घी के कारखानो के केन्द्र मे साबुन बनाने के कारखाने और शक्कर बनाने के कारखानों के निकट अल्कोहल, कागज आदि बनाने के कारखाने खुल जाते है।

(६) व्यापार मे वृद्धि—जिस केन्द्र मे किसी विशेष धन्धे का स्थानीकरण हो जाता है वहाँ उस धन्धे के कच्चे माल और तैयार माल की मंडी बन जाती है और उनका व्यापार बढ जाता है।

(७) स्थान की प्रसिद्धि—जब किसी स्थान पर कोई धन्धा केन्द्रित हो जाता है तो वह स्थान उस धन्धे के लिए प्रसिद्ध हो जाता है। देश-विदेशो में वह प्रख्यात हो जाता है जैसे—अहमदाबाद या मानचेस्टर बढ़िया कपड़े के लिये, फिरोजाबाद चूड़ियों के लिये और जमशेदपुर फौलाद के लिए प्रसिद्ध हो गये हैं।

स्थानीयकरण से हानियाँ

(१) सुरक्षा की दृष्टि से हानिकर—यदि कोई धन्धा किसी एक स्थान पर केन्द्रित हो जाता है तो युद्धकाल मे शत्रु की उस पर निगाह रहती है और वह सबसे

अध्याय २७

प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र

(GREAT MANUFACTURAL REGIONS)

उद्योगों का स्थानीयकरण (Localisation of Industries)

इंगलैंड मे होने वाली यान्त्रिक और औद्योगिक क्रांतियों ने आधुनिक उद्योगों को जन्म दिया। यान्त्रिक क्रांति के फलस्वरूप मनुष्य को मशीनें और औद्योगिक क्रांति ने इन मशीनों को चलाने के लिए शक्ति प्रदान की। मनुष्य ने बौद्धिक विकास से मशीनो का आविष्कार कर शारीरिक परिश्रम के भार को कम किया और बड़े पैमाने पर उत्पत्ति आरम्भ कर विश्व के बाजारों को विभिन्न प्रकार के तैयार माल से पाट दिया। ज्यों-ज्यों मनुष्य की आवश्यकतायें बढ़ती गईं त्यों-त्यों वैज्ञानिक आविष्कारों के सहारे नई-नई वस्तुओं का उत्पादन भी बढ़ता गया। यहाँ तक कि वर्तमान युग में किसी भी देश का आर्थिक महत्व उसके औद्योगिक विकास से आँका जाने लगा है। जो देश भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से बड़ी मात्रा में जिन वस्तुओं के उत्पादन के लिए अनुकूल हैं, वहाँ उन्हीं से सम्बन्धित उद्योगों का विकास किया गया। यूरोप के पश्चिमी देशों—विशेषतः जर्मनी, बेल्जियम, इंगलैंड—और संयुक्त राज्य अमरीका जैसे देशों की आर्थिक व्यवस्था पूर्ण रूप से औद्योगिक प्रगति पर आधारित है। इन देशों ने अपनी आय बढ़ाने तथा अपने निवासियों का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने के लिए अधिकाधिक उत्पादन करना आरम्भ किया और अपने कारखानों में निर्मित पक्के माल को बेचने के लिए विश्व के अविकसित देशों पर प्रभुत्व जमाया। इन देशों से इन्हें पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल सस्ता मिलने लगा।

संसार के औद्योगिक मानचित्र पर दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि विभिन्न उद्योग विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित है। उदाहरण के लिए लोहे और इस्पात का उद्योग जर्मनी, इंगलैंड, फ्रांस व संयुक्त राज्य अमेरिका में कोयले की खानों के निकट स्थापित है। कागज का उद्योग कनाडा, नार्वे और स्वीडन में तथा सूती वस्त्रों का उद्योग इंगलैंड के पश्चिमी भागों में और रेशम का धन्धा फ्रांस में केन्द्रित हो गये है। किसी उद्योग के इस प्रकार किसी स्थान विशेष में केन्द्रित होने या स्थापित हो जाने की प्रवृत्ति को उन उद्योगों का स्थानीयकरण (Localisation of Industries) कहते हैं। संसार के सभी देश एक समान उद्योगों के स्थानीयकरण के लिए अनुकूल नहीं होते। कुछ देशों में कच्चे माल सम्बन्धी विशेष सुविधा होती है, कुछ मे शक्ति के स्रोतों की और कुछ मे मजदूरों की कुशलता तथा कुछ में बाजारों की निकटता होती है। इसी कारण जहाँ इंगलैंड में सूती और ऊनी वस्त्र उद्योग स्थापित है, वहाँ रेशम उद्योग के लिए अनुकूल अवस्थायें नहीं पाई जातीं। यहाँ यह स्मरणीय है कि यह आवश्यक नहीं कि स्थानीयकरण के सभी तत्व एक ही स्थान या क्षेत्र विशेष में उपलब्ध हो। केवल एक या दो तत्वों की विद्यमानता में ही वहाँ उद्योग विशेष स्थापित

गया है। संयुक्त राज्य के औद्योगिक विकास के लिए निम्नलिखित कारण महत्व-पूर्ण हैं :—

(१) यह संसार का सबसे धनी देश है। आर्थिक विकास के लिये इसे कभी अर्थ और पूंजी का कोई अभाव नहीं होता।

(२) यहाँ की जलवायु मानसिक और शारीरिक परिश्रम के लिए बहुत ही उपयुक्त है तथा यूरोप के आये हुए निवासियों की परम्परागत कुशलता इसके लिए एक महान देन रही है।

(३) यहाँ औद्योगिक शक्ति की प्रचुर प्राप्ति है। यहाँ जल, कोयला, तेल और गैस से संसार की ५० प्रतिशत बिजली उत्पन्न की जाती है।

(४) इस देश मे औद्योगिक वस्तुओं के ढोने के लिए संसार का सबसे अधिक सम्पन्न, व्यवस्थित एवं कुशलता पूर्वक यातायात क्रम है। संयुक्त राज्य में रेलों की लम्बाई विश्व भर की रेलों की लम्बाई की २९% है।

(५) इसकी स्थिति यूरोप के महान् औद्योगिक क्षेत्र और एशिया के विस्तृत बाजारों के ठीक मध्य में है।

इन्हीं सब कारणों से संयुक्त राज्य संसार के औद्योगिक देशों में सर्वप्रथम है परन्तु एक महाद्वीप के रूप में यूरोप संसार में सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्र है।

संयुक्त राज्य के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र प्रायः पूर्वी अटलांटिक तटीय प्रदेश पर स्थित हैं। यह वही क्षेत्र है जहाँ सबसे पहले जनसंख्या आकर बसी थी। यहाँ बन्दरगाह, कोयला, जल-शक्ति और यूरोप की निकटता की अत्यन्त सुविधायें प्राप्त हैं। भौगोलिक स्थिति के विचार से संयुक्त राज्य के औद्योगिक क्षेत्र दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं :—

(क) अटलांटिक तटीय भाग—यह भाग अटलांटिक तट पर न्यू इंगलैण्ड के उत्तर से दक्षिण की ओर अलबामा तक फैला है।

(ख) भीतरी भाग—यह भाग अप्लेशियन के पश्चिम की ओर स्थित है।

(क) अटलान्टिक तटीय भाग (Atlantic Coastal Region)—यह भाग देश के सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक भागों में से एक है। उद्योगों की विविधता इस भाग की मुख्य विशेषता है। यूरोप से सीधा सम्पर्क इसकी महान सुविधा है। इस भाग के मुख्य क्षेत्र निम्नलिखित हैं :—

(१) न्यू इङ्गलैंड क्षेत्र (New England States)—इस क्षेत्र मे सारे उद्योग दक्षिणी-पूर्वी कोने में बोस्टन के आस-पास केन्द्रित हैं। यहाँ, कैन्वस, सूती, चमड़ा, उद्योग का विशिष्टीकरण हो जाने से यह पृथ्वी का एक पृथक भूभाग सा लगता है। देश के इस क्षेत्र में ही सबसे पहले उद्योग चालू किए गये थे और कनेक्टीकट घाटी में धातु उद्योग। इस क्षेत्र मे खनिज पदार्थ नहीं पाये जाते हैं किन्तु यहाँ जल-प्रपातों से यान्त्रिक और विद्युत शक्ति प्राप्त की जाती है। यातायात का विकास पठारी क्षेत्र होने के कारण नहीं हो पाया है। लकड़ी चीरने, कागज और लुब्दी बनाने का उद्योग इस क्षेत्र की विशाल वनस्पति पर निर्भर है। अधिक जनसंख्या वाले न्यू इंगलैंड राज्य के खेतों से पूँजी कारखाना उद्योगों मे लगाई गई है। अप्लेशियन से जलयानों

को मुख्यतः उनके मिलने के स्रोतों के निकट ही उपयोग में ले लिया जाता है। उदाहरण के लिए मांस बन्द कर भेजने का धन्धा। यदि उपभोग के केन्द्रों तक पशुओं का निर्यात किया जाय तो व्यय बहुत पड़ेगा। किन्तु यदि पशु-पालन क्षेत्रों के निकट ही पशु के बधगृह बनाये जायें और वहीं से मांस को शीत भण्डारों में बन्द कर निर्यात किया जाय तो वाहन-व्यय कम होगा तथा मांस भी सुविधापूर्वक भेजा जा सकेगा। अतः मांस के बड़े-बड़े कारखाने अर्जेन्टाइना, संयुक्त राज्य अमेरिका और आस्ट्रेलिया में पाये जाते हैं, जबकि इसका उपभोग शीतोष्ण कटिबन्ध के उत्तरी देशों में अधिक होता है। कच्चे माल की उपलब्धता के कारण ही भारत में सीमेंट का उद्योग मध्य प्रदेश, चीनी का उद्योग पश्चिमी उत्तर प्रदेश, सूती वस्त्र उद्योग बम्बई और रेशम का उद्योग इटली, फ्रांस, जापान व चीन में अधिक केन्द्रित है। भारत में जो भी उद्योग केन्द्रित हुए हैं वे विशेषतः कच्चे माल के स्रोतों के निकट ही हैं—यथा मद्रास में चमड़े के कारखाने, कलकत्ता में जूट व रासायनिक पदार्थों के कारखाने, कानपुर व गोरखपुर में शक्कर और जमशेदपुर में लोहे व इस्पात के कारखाने इनके मुख्य उदाहरण हैं। स्वीडन तथा नार्वे और पूर्वी कनाडा में वन-प्रदेशों की निकटता से लकड़ी चीरने, लुग्दी बनाने और कागज बनाने के उद्योगों का स्थानीयकरण हुआ है। काँच का उद्योग भी बालू मिट्टी के स्रोतों के निकट ही स्थापित किया जाता है।

दूसरे प्रकार का कच्चा माल हल्का होता है। उसे दूर तक निर्यात करने में व्यय भी अधिक नहीं होता तथा कच्चे माल और पक्के माल के वजन में भी कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। फलतः ऐसे उद्योग कच्चे माल के स्रोतों से दूर ही स्थापित किये जाते हैं, जहाँ अन्य सुविधायें प्राप्त होती हैं, विशेषकर माँग की पूर्ति के लिये बाजार। सूती व ऊनी कपड़ों के उद्योग इसी कारण इंगलैंड, फ्रांस तथा पूर्वी संयुक्त राज्य में पाये जाते हैं जहाँ कपास व ऊन क्रमशः भारत, मिस्र, पाकिस्तान, सूडान, आस्ट्रेलिया आदि देशों से आयात की जाती है।

(२) बाजार की निकटता (Nearness to Market)—यों तो अनेक उद्योग-धन्धों की वस्तुओं के बाजार विदेशों तक में होते हैं किन्तु जब उद्योग-धन्धे स्थापित किये जाते हैं तो देशी बाजार (खपत का क्षेत्र) का ही विशेष ध्यान रक्खा जाता है। जिन क्षेत्रों में किसी उद्योग की वस्तुओं की खपत अधिक होती है वहीं वे उद्योग चालू किये जाते हैं। ऐसा करने से तैयार माल को बाजार तक भेजने में बहुत कम खर्च होता है और अधिकाधिक माल बनाकर लाभ उठाया जा सकता है। बङ्गाल में सूती कपड़ों की मिलों के लिए कच्चा माल दूर से मंगाना पड़ता है पर वहाँ कपड़े की खपत बहुत ज्यादा है अतः सूती उद्योग स्थापित किया गया है। विशेषकर ऐसी वस्तुएँ जो टिकाऊ नहीं होतीं (जैसे काँच का सामान) अथवा जिनको दूर भेजने में विशेष कठिनाई होती है (जैसे तेजाब इत्यादि) तो उनके कारखाने बाजार के निकट ही स्थापित किये जाते हैं। हुगली औद्योगिक क्षेत्र में तेजाब की काफी खपत है, इसलिये तेजाब के कारखाने वहाँ पर केन्द्रित हैं।

जूतों की स्टाइल में समय समय पर ग्राहक की रुचि के अनुसार परिवर्तन होते रहते हैं। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि जूता बनाने वाली मशीनों के उद्योग भी जूते के कारखाने के निकट ही स्थापित किये जाएँ। इसी प्रकार सूती वस्त्रों के उद्योग के निकट ही कताई और बुनाई की मशीनों के उद्योग स्थापित किये जाते हैं,

(iii) मध्य न्यूयार्क क्षेत्र (Central New York Belt)—यह क्षेत्र अलबानी से रोचेस्टर तक फैला है। ओन्टेरियो मैदान और मोहाक घाटी की प्राकृतिक यातायात की सुविधा इसे प्राप्त है। हडसन नदी की घाटी से होकर कई रेलें, सड़कें और नहरी मार्ग उत्तर की ओर इस क्षेत्र को महान झील क्षेत्र से जोड़ते हैं। महान झीलों से जोड़ने के लिये ईरी नहर खोदी गई है। इस क्षेत्र में कोयले की स्थानीय पूर्ति तो नहीं है परन्तु पेनसिलवानिया की विशाल एन्थ्रेसाइट कोयला की सम्पत्ति इसके निकट ही पड़ी हुई है। निकटवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों से प्रचुर मात्रा में विद्युत-शक्ति प्राप्त हो जाती है। यह क्षेत्र भी उद्योगों की विविधता (Industrial Diversity) के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ गौण उद्योगों का विकास खूब हुआ है। वस्त्र बनाने, बिजली की मशीन, चश्मा, कागज और रासायनिक पदार्थों के उद्योग खूब विकसित है।

यहाँ कागज—अलबनी में, रेशम—बिघंमटन में, भारी लोहे की मशीनें—राचेस्टर में, फोटोग्राफी के सामान—राचेस्टर में—चीनी मिट्टी के बर्तन साईराक्यूज और हाथों के दस्ताने—जानस्टम में बनाये जाते हैं।

(iv) दक्षिणी अप्लेशियन क्षेत्र (South Appalachian Region)—इस क्षेत्र के कुछ केन्द्र तटीय भागों में और कुछ क्षेत्र अप्लेशियन के दक्षिणी सिरे पर स्थित हैं। इसलिये जल यातायात की सस्ती सुविधा और भीतरी भागों में कोयले और जलविद्युत दोनों की सुविधा इस क्षेत्र को प्राप्त है। यहाँ लोहे की कच्ची धातु भी काफी मिलती है। यहाँ सस्ता श्रम, वन सम्पत्ति, कच्ची रुई और अन्य कच्चे माल की प्रचुर परिणाम में स्थानीय प्राप्ति है। पीडमॉन्ट क्षेत्र में कपास के कारखाने और सूती कपड़े की मिलें हैं। उत्तरी अलबामा में लोहे की भट्टियाँ और इस्पात, कागज और रासायनिक पदार्थों की मिले है। इस क्षेत्र में उद्योगों का विशिष्टीकरण बहुत हुआ है। यह क्षेत्र अभी औद्योगिक परिपक्वता नहीं प्राप्त कर पाया है। इस क्षेत्र में संयुक्त राज्य के ७५ प्रतिशत करघे चालू है। टेनेसी से सस्ती बिजली प्राप्त होने से उत्तरी केरोलिना में सूती उद्योग का विशेषीकरण हुआ है। डुरहामा और विस्टन में अनेकानेक सिगरेट के विशाल कारखाने है। विद्युत रसायन, विद्युत धातु, प्लास्टिक और कृत्रिम खाद के कई कारखाने इस क्षेत्र में चालू है। ओकरिज में अणुवम, किंगसपोर्ट में नकली रेशम और अलकोआ में अल्युमीनियम बनाने के कारखाने है। खेती के पदार्थों पर निर्भर उद्योग यहाँ चारों ओर फैले हुये है।

(ख) भीतरी भाग (Central-Region)—इस भाग के सारे क्षेत्र अप्लेशियन श्रेणी द्वारा पूर्वी तटीय भाग से पृथक है। इस क्षेत्र में उद्योगों का विकास अपेक्षाकृत बाद में हुआ था। इस भाग में निम्नलिखित क्षेत्र मुख्य हैं —

(i) नियाग्रा ओन्टैरियो क्षेत्र (Niagra-Ontario Region)—इस क्षेत्र को महान झीलों के सस्ते यातायात की महान् सुविधायें प्राप्त है। भीतरी भागों से इसी यातायात द्वारा कृषि उपजें और खाद्यान्न फसलें यहाँ इकट्ठी की जाती है। झीलों के क्षेत्र से कच्ची लोहे की धातु और अप्लेशियन क्षेत्र से प्रचुर कोयला भी प्राप्त किया जाता है। नियाग्रा जल-प्रपात से प्रचुर मात्रा में जल विद्युत मिल जाती है। भीतरी क्षेत्र और पूर्वी तटीय भाग के मध्य में यह स्थित है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग भारी उद्योग हैं। यहाँ लोहे की भट्टियाँ, इस्पात मिलें, मशीनें और गाड़ियाँ बनाई जाती हैं। रसायन उद्योग, आटा पीसने और कृषि उपज उपयोग करने वाले कई उद्योग भी यहाँ पाये जाते है। यहाँ लोहे की भारी चादरें भी बनाई जाती हैं। यहाँ

प्रोत्साहन देने के लिये आर्थिक सहायता (Subsidy) अथवा आयात माल पर अधिक चुंगी लगाता है तो वहाँ वह उद्योग चालू होकर पनप जाते हैं। लखनऊ के नवाबों के सरक्षण के बल पर ही वहाँ चिकन का व्यवसाय केन्द्रित हो गया था।" सरकारी संरक्षण के कारण ही भारत मे शक्कर, कागज, लोहा और सूत के कपड़े के कारखाने इतनी अधिक उन्नति कर सके। रूस में तो सारे कारखाने सरकार द्वारा आयोजित और नियंत्रित होते हैं।

(७) यातायात की सुविधायें (Accessibility of Means of Transport)—हर प्रकार के उद्योग के लिये कच्चे माल को दूर से मँगाने और तैयार माल को बाजार तक भेजने की आवश्यकता होती है। अतः जिस स्थान पर यातायात की अधिकाधिक सुविधायें प्राप्त होती हैं, वही यदि अन्य साधन भी सुलभ हो, तो उद्योग-धन्धे केन्द्रित हो जाते है। यातायात के साधनों की प्राप्ति ही काफी नही, वे तेज गति वाले और सस्ते भी होने चाहियें। बड़े-बडे नगर रेल, सड़क, हवाई जहाज इत्यादि के मार्ग पर होते हे। बन्दरगाहों पर तो इन मार्गो के अतिरिक्त जल मार्गों की भी सुविधा होती है अत उद्योग-धन्धे बन्दरगाहो या बड़े नगरो मे केन्द्रित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—बम्बई मे (जो कोयले के क्षेत्रों से दूर है) सूती कपडे की मिलें केन्द्रित हैं। वहाँ पर जलयानों द्वारा अफ्रीका से कोयला मगा लिया जाता था। हुगली औद्योगिक क्षेत्र की जूट मिलें जलमार्गों द्वारा कच्चा माल सुगमता से प्राप्त कर लेती हैं और पक्का माल भी नावो व स्टीमरो द्वारा कलकत्ता बन्दरगाह तक भेजा जा सकता है। इसीलिये कहा जाता है कि उद्योग की नसें यातायात के मार्ग हैं जिनमे जीवन-रक्त का सचार होता रहता है। यातायात के अतिरिक्त समाचार वाहन, अखबार, टेलीफोन, टेलीग्राफ की सुविधायें भी उद्योगों के स्थानीयकरण में सहायक होती है।

(८) पूर्व आरम्भ का लाभ (Momentum of an Early Start or Geographical Inertia)—जिस स्थान पर किसी उद्योग-धन्धे का कोई कारखाना पहले से स्थापित होता है और वह सफलतापूर्वक चल जाता है तो अन्य साहसी उद्योगपति भी उसी स्थान पर उस धंधे के कारखाने स्थापित करने को आकर्षित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—बम्बई मे सूती कपड़े का और कलकत्ते मे जूट का पहला कारखाना स्थापित हुआ था। किन्तु इसके बाद ये दोनों उद्योग क्रमशः बम्बई और कलकत्ते मे ही केन्द्रित हो गये।

(९) चतुर श्रमिकों की प्रचुरता (Supply of Skilled Labour)—उद्योग धन्धों के सचालन मे सस्ते किन्तु निपुण श्रमिको का भी काफी हाथ रहता है। चतुर और कार्यक्षम श्रमिक अधिक और अच्छा श्रम कर सकते हैं जिससे माल सस्ता और अच्छा बनता है। जिन स्थानों मे जिस उद्योग के लिए चतुर और कार्यक्षम श्रमिकों की प्रचुरता होती है वही वे उद्योग केन्द्रित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—फीरोजाबाद में काँच के कारखानों में काम करने वाले चतुर कारीगरों के कारण ही यह उद्योग केन्द्रित हो सका है। इसी प्रकार अलीगढ मे ताला बनाने, मेरठ में चाकू, कैंचियाँ बनाने, फर्रुखाबाद मे रंगाई छपाई तथा जापान और स्विटजरलैंड के औद्योगिक विकास का प्रमुख कारण वहाँ सस्ते व निपुण कारीगरों का अधिक मात्रा में मिलना ही है।

स्थानीयकरण के लाभ

(१) कुशल मजदूरों की पूर्ति में वृद्धि—जब किसी स्थान पर कोई धन्धा

उद्योगो मे एक प्रकार का संतुलन स्थापित है। सिनसिनाती इन उद्योगों का मुख्य केन्द्र है।

(v) **मिशीगन क्षेत्र** (Michigan Region)—यह अमेरिका के मुख्य क्षेत्रों मे से एक है। इसमें मिशीगन झील का दक्षिणी भाग और उसका पृष्ठ प्रदेश सम्मिलित है। यह क्षेत्र कई विशिष्टीकरण प्राप्त जिलो मे बँटा है। इस क्षेत्र को इण्डियाना-इलीनोएस क्षेत्र से रेल द्वारा और झील मार्ग द्वारा पूर्वी भागों से भी कोयला मिल जाता है। इसी क्षेत्र मे मध्यवर्ती क्षेत्र, रॉकी पर्वत, पैसिफिक तट और पूर्व से आने वाले सभी मार्ग मिलते हैं। इन सभी क्षेत्रो से पर्याप्त कच्चा माल प्राप्त होता है और यहाँ बने हुए माल के बिकने के भी केन्द्र है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग चादर की मिलें, ट्रैक्टर, खेत घेरने के तार, खेती की मशीनें, चमड़े का सामान, जूते, मांस पैकिंग और खाद्यान्न से सम्बन्धित है। फर्नीचर और कागज की मिलें भी यहाँ है। शिकागो और मिलवाकी यहाँ के प्रसिद्ध केन्द्र है। अमेरिका में औद्योगिक उत्पादन के विचार से यह बडा केन्द्र है। शिकागो मे ससार की सबसे वडी माँस की मण्डी है। कागज बनाने और आटा पीसने के कई कारखाने सेंट लुईस मे भी हैं।

(vi) **मध्य मैदानी भाग क्षेत्र** (Central Plain Region)—उच्च मैदान के पूर्व प्रेरी प्रान्त के गल्फ तट तक कई छोटे-छोटे उद्योग क्षेत्र कई विभिन्न स्थानो मे फैले हुए है। इनका स्थानीय महत्व ही अधिक है। ये उद्योग अधिकतर कृषि उपजों पर निर्भर है। इन क्षेत्रो मे विनिपेग, मिनियोपोलिस, सेंट पाल, ओमाहा, कन्सास, सेन्टलुई, डालेस-फोर्ट, वर्थ और हाउस्टन मुख्य है। इन उद्योगो का खास काम कच्चे माल को नया रूप प्रदान करना (Bulk reducing type) है। मांस पैकिंग, अनाज पीसने, कपास दबाने और तेल साफ करने के उद्योग मुख्य है। सेन्ट लुई मुख्य केन्द्र है जहाँ इस्पात, मशीनरी, जूता और रासायनिक पदार्थों के कारखाने है। युद्ध के समय मध्यवर्ती नगरो मे युद्ध सामग्री बनाने के कई उद्योग विकसित हो गये थे। कन्सास और नेब्रास्का हवाई जहाज निर्माण के केन्द्र है। मिनियोपोलिस ससार का सबसे बडा आटा पीसने का केन्द्र है।

(२) यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of Europe)

उत्तरी पश्चिमी यूरोप को आधुनिक औद्योगिक सभ्यता का जन्म क्षेत्र माना जाता है। ससार के सभी बडे उद्योगो की स्थापना पहले यहीं हुई थी। पूर्वारम्भ के लाभ के कारण ही विश्व के औद्योगिक विकास मे आज भी इसका स्थान प्रथम है। औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व ही से यूरोप मे सारे सांस्कृतिक और प्राकृतिक तत्व विद्यमान थे जिनके आधार पर औद्योगिक विकास सभव हो सका। यूरोप की औद्योगिक उन्नति के कारण ये हैं—

(१) यूरोप की स्थिति समार मे मध्यवर्ती है। यह एशिया और अमेरिका से प्राय. समान दूरी पर स्थित है, जिससे यह दोनो ही से समान सुविधा से व्यापार कर सकता है। इसके पश्चिम मे अत्यन्त उन्नतिशील व्यापारिक मार्गों का क्षेत्र अन्ध महासागर तक विस्तृत है। वास्तव मे इसकी स्थिति स्थल गोलार्द्ध मे मध्यवर्ती है। पनामा नहर के द्वारा इसका सीधा सम्बन्ध प्रशान्त महासागर के व्यापार से और स्वेज नहर के द्वारा हिन्द महासागरीय व्यापार से रहता है।

पहले ऐसे केन्द्रों को बम गिराकर नष्ट करके देश को बहुत ही क्षति पहुँचा सकता है। अतः सुरक्षा की दृष्टि से स्थानीयकरण घातक सिद्ध होता है।

(२) **श्रमिक संघों की शक्ति का दुरुपयोग**—जहाँ एक ही प्रकार के अनेक कारखाने होते हैं वहाँ समान हित वाले श्रमिकों की उपस्थिति के कारण श्रमिक संघ बड़े संगठित होते हैं और वे मामूली बातों पर ही अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर बैठते हैं अर्थात् हड़तालें आदि करते हैं। इस प्रकार उत्पादन में कमी आ जाती है। उदाहरणार्थ—बम्बई में विशेषतः सूती कपड़े के कारखानों में लम्बी-लम्बी हड़तालें चला करती हैं।

(३) **मकान की समस्या की निकटता**—जहाँ कोई धन्धा किसी स्थान पर केन्द्रित हो जाता है और कारखानों की संख्या निरन्तर बढ़ती जाती है तो रहने के लिये मकान की उपयुक्त व्यवस्था नहीं हो पाती जिससे मकानों के किराये बढ़ जाते है। जनसंख्या बढ़ जाने से गंदगी व रोग बढ़ने लगते हैं।

(४) **दैनिक उपयोग की वस्तुओं की कमी**—किसी स्थान पर उद्योग-धन्धों के स्थानीयकरण से जनसंख्या की बेहद वृद्धि होने पर दैनिक उपयोग की वस्तुओं की माँग बढ़ जाती है जिसकी पूर्ति कठिन होती है, इसलिए मँहगाई अधिक हो जाती और रहन-सहन का मानदंड गिर जाता है।

(५) **सामाजिक कुरीतियों का प्रसार**—स्थानीयकरण के केन्द्रों पर मजदूर जो घर से दूर अकेले रहते हैं दिन भर मजदूरी के बाद शाम को किसी सस्ते मनोरंजन की खोज में घूमा करते हैं। ऐसी दशा में वे जुआरियों, शराबियों के फन्दे में फँस जाते हैं अथवा व्यभिचार के अड्डों की ओर आकर्षित हो जाते हैं। इस तरह अनेक सामाजिक कुरीतियों का प्रसार हो जाता है।[1]

(६) **उद्योग के अनायास लुप्त हो जाने का भयंकर परिणाम बेकारी**—यदि किसी कारण से कोई केन्द्रित उद्योग नष्ट हो जावे या उसे भारी धक्का लगे तो बड़े भयंकर परिणाम होते हैं। अनायास ही बेकारी फैल जाती है, किन्तु यदि एक स्थान पर अनेक उद्योग हों तो एक धंधे में घाटा होने पर उसके मजदूर अन्य उद्योगों में खप सकते हैं।

विश्व के औद्योगिक क्षेत्र

(१) संयुक्त राज्य के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of U.S.A.)[2]

संयुक्त राज्य संसार का सबसे औद्योगिक देश माना जाता है। इसकी विशाल प्राकृतिक सम्पत्ति और उसका व्यवस्थित विदोहन यहाँ के निवासियों का श्रम और वैज्ञानिक बुद्धि आदि तत्व औद्योगिक प्रगति के मुख्य कारण हैं। नये-नये वैज्ञानिक अन्वेषणों द्वारा उद्योगों को नित्य प्रति नये-नये क्षेत्रों को विस्तृत किया जा रहा है। स्वचालित मशीनों के प्रयोग से प्रति व्यक्ति औद्योगिक उत्पादन बहुत बढ़

1. "In thousands of Slums of Indian industrial centres, manhood is brutalised, womanhood dishonoured and childhood poisoned at its very source."

—*Dr. R. K. Mukerjee*, **Indian Working Class**, 1951, p. 320.

2. *Finch & Trewartha*, **Elements of Geography**, 1942, pp. 711-718.

यूरोप मे औद्योगिक क्षेत्र समान रूप से फैले हुए नहीं हैं। अधिकतर औद्योगिक क्षेत्र उत्तरी पश्चिमी यूरोप में स्थित हैं जहाँ की ४० प्रतिशत जनसख्या कारखानो में काम करती है। किन्तु ज्यो-ज्यो पूर्व और दक्षिण की ओर जाते हैं औद्योगिक आबादी घटती जाती है। यूरोप की मुख्य औद्योगिक पेटी (Industrial Belt) यूरोपीय महाद्वीप के ठीक बीच पूर्व से पश्चिम तक फैली है। उत्तरी और दक्षिणी यूरोप में औद्योगिक क्षेत्रो का स्थानीय महत्व ही उनकी विशेषता है। मुख्य पेटी में ग्रेट ब्रिटेन है। यहाँ से यह पेटी उत्तरी फ्रास, बेल्जियम, पश्चिमी और मध्य जर्मनी, जेकोस्लोवाकिया और दक्षिणी पोलैंड होती हुई भीतरी तथा दक्षिणी रूस तक चली गई है। एक ही औद्योगिक क्षेत्र मे एक से अधिक देश सम्मिलित हैं। मुख्य औद्योगिक पेटी के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित है :—

(i) ब्रिटेन
(ii) फ्रैंको-बेल्जियम,
(iii) वेस्टफैलिया,
(iv) मध्य यूरोप के देश,
(v) दक्षिणी यूरोप के देश,
(vi) उत्तरी पश्चिमी यूरोपीय देश, तथा
(vii) सोवियत रूस।

(i) **ब्रिटेन के औद्योगिक क्षेत्र** (Industrial Regions of Britain)—यह देश ससार भर मे सबसे उन्नत उद्योग-प्रधान देश है। १६ वीं शताब्दी से यहाँ पर व्यापार तथा उद्योगो मे उल्लेखनीय विकास हुआ है। तभी से यह देश इजीनियरी के विकास, रेलो की प्रमुखता तथा उद्योग-धन्धो के अविष्कार मे अग्रगण्य रहा है। ग्रेट ब्रिटेन की इस महान् व्यापारिक उन्नति मे इसकी प्राकृतिक तथा भौतिक सुविधाओ ने बडा योग दिया है।

(१) शीतोष्ण कटिबन्ध मे स्थित होने से यहाँ की जलवायु न अधिक ठढी है और न अधिक गर्म परन्तु सम है जिसके कारण खेती मे रुकावट नही होती। हिम से मुक्त होने से आवागमन मे बाधा नही। जलवायु के ही कारण खेती और कारखानों मे यहाँ मनुष्य सारे साल काम कर सकते है। लोगो मे काफी स्फूर्ति रहती है जिससे उनके नियमित कार्यों मे कोई बाधा नही पडती।

(२) यहाँ की तट रेखा इतनी कटी फटी है कि ब्रिटेन का कोई भी भाग समुद्र से २०० मील से अधिक दूर नही है। १३ मील के क्षेत्रफल पर १ मील तट रेखा पडती है। समुद्र की समीपता के कारण ही इसके दोनो ओर औद्योगिक प्रदेशो को विदेशो मे माल भेजने की बडी सुविधा रहती है।

(३) ब्रिटेन की स्थिति भी आदर्श है। इगलिश चैनल इसे महाद्वीप से अलग करती है। यूरोप से समीपता के कारण यहाँ व्यापारिक उन्नति हो सकी है। साथ ही समुद्र से पृथक होने के कारण यहाँ पर थल अथवा जल मार्गों द्वारा विदेशी आक्रमणो का भय नही है। इसकी स्थिति संसार के उन्नत भागो के मध्य मे है। सभी देश समीप पडते हैं। यूरोप के व्यापारिक देश—जर्मनी, फ्रास, बेल्जियम इत्यादि समीप ही पूर्व या दक्षिण मे स्थित है। सयुक्त राज्य अमेरिका मे भी आन्ध्र महासागर द्वारा

और रेलो द्वारा कोयला प्राप्त हो जाता है। इसलिये अधिकतर केन्द्र समुद्रतट के पास ही स्थित है। इस क्षेत्र मे केवल हल्के उद्योग चालू हैं। पूर्वी और दक्षिणी पश्चिमी भागो मे बड़ा औद्योगिक अन्तर पाया जाता है। पूर्वी भाग जो रोड द्वीप से मेन तक फैला है सूती कपड़ा, चमड़े का सामान और जूते बनाने के उद्योगो का मुख्य क्षेत्र है। यहाँ उन मशीनो के भी उद्योग हैं जो जूते, सूती कपड़ा और चमडा उद्योगो मे प्रयुक्त होती है। दक्षिणी पश्चिमी भाग मे धातु के हल्के सामान बनाने के अनेक उद्योग हैं। यहाँ भारी सामान, पुर्जे, बिजली के यन्त्र, बन्दूक, हथियार, हवाई जहाज और मशीनें बनाई जाती हैं। इन दोनों भागो को देश की सघन जनसख्या वाले पूर्वी भागों की निकटता की अन्यतम सुविधा प्राप्त है। इससे इनमे पदार्थो की बड़ी खपत है। दक्षिणी पश्चिमी भाग का घनिष्ट सम्पर्क न्यूयार्क क्षेत्र से है। यहाँ से कुछ सूती कपड़े की मिलें दक्षिणी रियासतो को चली गई है जिससे इसका महत्व कुछ घट गया है। फिर भी इस क्षेत्र मे संयुक्त राज्य का २५ प्रतिशत सूती और ऊनी कपडा तैयार होता है। इस क्षेत्र के मुख्य औद्योगिक केन्द्र लावेल, लारेन्स, बोस्टन, प्रोवीडेन्स और ट्राय है।

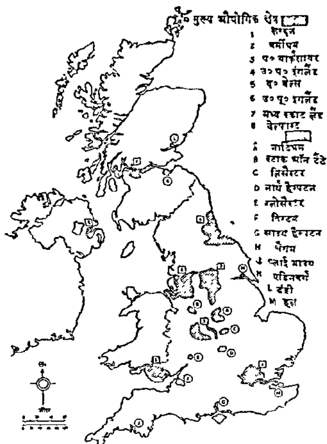
नकली रेशम—ट्राय; **जूता**—हैवरहिल; ब्राकटन और लिन्न (मेसेचुसेट्स रियासत), **बिजली की मशीन**—कनेकटिकट; **घड़ियाँ**—वाटरबरी; **कागज**—होलीओक; **सूती कपड़ा**—बेडफोर्ड, फोलरिवर, लावेल और लारेंस; **ऊनी कपड़ा**—वरसेस्टर, **फेल्ट हैट**—डेनबरी मे बनाये जाते हैं।

अधिकतर केन्द्रों मे केवल एक ही उद्योग केन्द्रित है। बोस्टन इस क्षेत्र का सबसे बड़ा नगर है। इसके सारे उद्योग आयात किये गये कच्चे माल पर निर्भर करते हैं। यह न्यू इगलैंड उद्योगो में प्रयुक्त होने वाले कच्चे मालो का आयात करता है और तैयार मालो का निर्यात करता है।

(२) **मध्य अटलांटिक तटीय क्षेत्र** (Middle Atlantic Metropolitan Districts)—इस क्षेत्र मे डिलावेयर, न्यूजर्सी, न्यूयार्क, पेन्सिलवेनिया, ओहियो, पश्चिमी वर्जीनिया और मेरीलैंड के कुछ भाग सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र मे असख्य उद्योग चालू हैं। उत्तरी अप्लेशियन से प्रचुर कोयला, वाणिज्य सुविधायें, बन्दगाह और घनी आबादी के क्षेत्र की महान सुविधाएँ इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। इसको सारे कच्चे माल का आयात करना पड़ता है। पश्चिम और दक्षिण से ओहियो नदी और महान झीलो के द्वारा यह जुड़ा हुआ है। अप्लेशियन मे होकर असख्य नदी, नहर, सडक और रेल मार्ग निकलते हैं। यूरोप को सामान भेजने में बन्दरगाह प्रमुख तत्व है। यहाँ पूंजी भी पर्याप्त मात्रा में मिलती है और सस्ते श्रमिक भी बहुलता के साथ मिल जाते हैं। न्यू इंगलैंड रियासतो की तरह इस क्षेत्र को पूर्वारम्भ की सभी सुविधाएँ प्राप्त हैं। न्यूयार्क स्वय ही एक बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। साथ ही यह बन्दरगाह के कार्य मे भी सर्वप्रथम है। यहाँ के उद्योग मे दूसरे औद्योगिक क्षेत्रो से बने पदार्थो का प्रयोग किया जाता है। वस्त्र उद्योग यहाँ का मुख्य उद्योग है। चीनी साफ करना, वनस्पति तेल, पेट्रोल और ताँबा साफ करने के कारखाने मुख्य हैं। प्राय. ऐसे गौण उद्योग (Secondary Industries) बाल्टीमोर, फिलाडेलफिया और पेनसिलवानिया के दक्षिणी-पूर्वी नगरो मे केन्द्रित है।

जलयान निर्माण—न्यूयार्क और फिलाडेल्फिया में; **रसायन**—विल्मिगटन मे; **भाप की चक्कियाँ**—ट्रेन्टन मे, **ऊनी कपड़ा**—फिलाडेल्फिया मे और **रेडियो**—कैमडेन में बनाये जाते है।

यहाँ चरम सीमा तक विशिष्टीकरण हुआ है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग और केन्द्र निम्नलिखित है :—



चित्र १५५. ब्रिटेन के मुख्य औद्योगिक क्षेत्र

उद्योग	केन्द्र
इस्पात उद्योग	चेस्टरफील्ड और शेफील्ड।
साइकिले	नाटिंघम।
इन्जीनियरिंग कार्य	ब्रेडफोर्ड, लीड्स और डरबी
शीत भंडार की मशीने	डरबी
कांच	हडर्सफील्ड
रासायनिक पदार्थ	नाटिंघम
ऊनी कपडा	हडर्सफील्ड

को विदेशों
(३)
करती है। यूरोप
समुद्र से पृथक
मणो का भय नही
समीप पडते है। यू
हीं पूर्व या दक्षिण में

के मुख्य केन्द्र बफेला, टोरोन्टो और नियाग्रा हैं। यहाँ के उद्योग में कोई विविधता नहीं है। बफैलो सारे देश का सबसे बड़ा आटा पीसने का केन्द्र है।

(ii) **पिट्सबर्ग-ईरी क्षेत्र** (Pittsburg-Erie Lake Region)—पश्चिमी वर्जीनिया और पश्चिमी पेनसिलवानिया के भागों में देश का सबसे अच्छा कोयला पाया जाता है। यहाँ कोक, कोयला, पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस की शक्ति भी प्राप्त की जाती है। यहाँ केवल भारी उद्योगों का केन्द्रीयकरण हुआ है। इस्पात मिलें और लोहे की भट्टियाँ ही यहाँ अधिक हैं। ईरी झील के बन्दरगाहों पर मेसाबी श्रेणी से लाई गई लोहे की कच्ची धातु उतारी जाती है। पेन्सिलवानिया क्षेत्र से काफी कोयला प्राप्त किया जाता है। अब बन्दरगाहों पर ही उद्योग स्थापित किए जा रहे हैं। भारी इस्पात उद्योग का यह अमरीका में सबसे बड़ा केन्द्र है। ट्रास-अप्लेशियन रेल और सड़क मार्गों और महान झील मार्गों और उत्तम सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। लोहा, इस्पात, सीमेन्ट, सूती कपड़ा, काँच, चीनी के बर्तनों, गृह निर्माण के काम में आने वाली इस्पात की वस्तुओं और इस्पात नलों के बहुत से कारखाने यहाँ स्थापित है।

भारी इस्पात—पिट्सबर्ग, क्लीवलैंड, लोरेन, यंग्स्टन, और ओहियो में; **रबड़**—आक्रोन में, **सूती वस्त्र**—क्लीवलैंड और ईस्टन में, **इंजिन**—रोनेकटाडी में बनाये जाते हैं।

(iii) **डिट्रॉयट क्षेत्र** (Detroit Region)—इस क्षेत्र का विस्तार ईरी झील के पश्चिमी सिरे पर है। इस क्षेत्र में पश्चिमी ओण्टारियो, उत्तरी पश्चिमी ओहियो और दक्षिणी पूर्वी मिशीगन के भाग सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र को भी पूर्वी अप्लेशियन कोयला क्षेत्र और पश्चिम की महान झीलों के लोहा क्षेत्रों के मध्य में स्थित होने से कई सुविधायें प्राप्त है। यहाँ कुछ लोहा इस्पात के उद्योग है। लेकिन अधिकतर उद्योग इन धातुओं और अन्य कच्चे माल को प्रयोग में लाते हैं। इनका मुख्य उपयोग मोटर गाड़ियाँ बनाने में होता है। इन महान झीलों की उत्तम यातायात सुविधाएं इस क्षेत्र को प्राप्त है। समतल मैदान पर असंख्य रेलें और सड़कें फैली हैं। ओण्टारियो के भाग में चुंगी बाधा (Tariff Barrier) से उद्योगों को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र डिट्रॉयट है। यहाँ मोटरें, मोटर का इन्जिन और इनसे सम्बंधित सामान बनाये जाते हैं। डिट्रायट संसार का सबसे बड़ा मोटर निर्माण केन्द्र है। इसके अतिरिक्त यहाँ औजार, बिजली की मशीनरी, शीत भण्डार की मशीनरी, काँच और रसायन उद्योग भी स्थित है।

(iv) **सिनसिनाती इण्डियानापोलिस क्षेत्र** (Cincinati-Indianapolis Region)—इस क्षेत्र में पूर्वी इण्डियाना एवं दक्षिणी पश्चिमी ओहियो के केन्द्र शामिल है। इसको महान झील का यातायात मार्ग, झील क्षेत्र के लोहे एवं वन सम्पत्ति की महान सुविधाये तो प्राप्त नही है परन्तु अन्न की कुछ सुविधायें प्राप्त है। अप्लेशियन और पूर्वी मध्यवर्ती कोयला क्षेत्र के मध्य इसकी स्थिति है। अनाज की पेटी के धनी भाग की पूर्वी सीमा पर स्थित होने से इसके माल की काफी खपत है। ओहियो नदी और रेलों द्वारा यह अप्लेशियन कोयला क्षेत्र से जुड़ा है। अमेरिका की आबादी के सबसे बड़े केन्द्र से सबसे पास यह क्षेत्र पड़ता है। इस क्षेत्र में लोहा इस्पात, मशीनरी, बिजली के सामान, वैज्ञानिक यन्त्र, रासायनिक पदार्थ, माँस, तेल और साबुन के उद्योग स्थित है। यहाँ खेती पर निर्भर उद्योगों और धातुओं पर निर्भर

मोटरकार	कॉविन्ट्री।
मिट्टी के वर्तन	वर्मलेम और स्टोक।
ताले	वोलवर हैम्पटन।
जीन	वालशाल

(उ) साउथ वेल्स क्षेत्र (South Wales Region)—इस क्षेत्र का अभी हाल ही में औद्योगिक विकास हुआ है। साउथ वेल्स कोयला क्षेत्र पर यहाँ के उद्योग निर्भर हैं। यहाँ का विशिष्टीकरण महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग टिन चादर और इस्पात चादर है। स्वान्सी में सीसा और जस्ता गलाने के उद्योग चालू हैं। स्वान्सी, नरगाम और पोर्ट टालबोट टिन चादर उद्योग के केन्द्र हैं। ब्रिस्टल में रेल के डिब्बे, हवाई जहाज और इन्जीनियरिंग उद्योग पाये जाते है।

(ऊ) स्कॉटिश क्षेत्र (Scottish Area)—यह क्षेत्र स्काटलैंड के मैदान में स्थित है जो क्लाईड और फर्थ आफ फोर्थ के बीच फैला हुआ है। यह क्षेत्र वहाँ के कोयला क्षेत्रो पर निर्भर है। यहाँ उद्योगों की विविधता एक मुख्य विशेषता है। सूती कपडा और लोहा तथा इस्पात उद्योगो के कारखाने भी हैं। ग्लासगो के पास जलयान निमार्ण, ऊन, जूट और लिनेन के उद्योग स्थित हैं। एडिनबरा रबड़ और कागज; डण्डी जूट और लिनेन; किलमारकन इन्जिन और पैसले सूती कपडा उद्योग के लिये प्रसिद्ध हैं। आयर, लेनार्क और हैमिलटन अन्य मुख्य केन्द्र है।

(ए) लन्दन क्षेत्र (London Region)—लन्दन के अधिकतर उद्योग आयात किये गए माल पर निर्भर हैं। बन्दरगाह और रेलो के जक्शन की सभी सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। रासायनिक पदार्थो के बनने, जलयान तथा कागज निर्माण के कारखाने और धातु उद्योग इस क्षेत्र मे अधिक है।

(II) फ्रैंको बेल्जियम औद्योगिक क्षेत्र (Franco-Belgium Industrial Region)—यह क्षेत्र यूरोप की प्रधान औद्योगिक पेटी के पूर्व की ओर स्थित है। इस क्षेत्र के सभी केन्द्र कोयला क्षेत्रो से सम्बन्धित हैं। राजनैतिक सीमाओ की बाधा से इसके विकास को बडी असुविधा है और क्षेत्र की औद्योगिक महत्ता भी घट जाती है। इस क्षेत्र के दो भाग है। (अ) फ्रांसीसी, और (आ) बेल्जियम क्षेत्र।

(अ) फ्रांसीसी क्षेत्र—यह भाग देश के उत्तरी पूर्वी भागो मे फैला है। फ्रास के भाग मे कोयला तो नही है लेकिन यहाँ सुविकसित जल शक्ति प्राप्त है। आरडेनोज, वॉसजेस, जूरा, आल्पस और मध्य के उच्च पठारो मे काफी जल बिजली शक्ति पैदा की जाती है। इसका उपयोग उत्तर पूर्व और पूर्व मे सूती कपडे और हल्के उद्योगों मे किया जाता है। लारेन की लोहे की खानें भी इसी क्षेत्र मे स्थित हैं। इस क्षेत्र में भारी उद्योगों का विशिष्टीकरण हुआ है। इस्पात उद्योग के अतिरिक्त हल्का सूती कपडा उद्योग चालू है। आर्मेन्टाएर्स लिनेन का महान् केन्द्र है। लीले, पैरिस और वेलेन्शियन मे इजीनियरिंग उद्योग चालू है। जस्ते और अन्य धातुओ को गलाने, मशीनरी बनाने, कॉच, चिकनी मिट्टी के वर्तन और रासायनिक पदार्थों के उद्योग भी यहाँ पाये जाते है।

(आ) बेल्जियम क्षेत्र—यह भाग मोज से आरम्भ होकर नामूर नदी की घाटी से होते हुए लीज तक फैला हुआ है। यह भाग कैम्पाईन और फ्रैंको-बेल्जियम कोयला

(२) यूरोप का विस्तार सबसे अधिक शीतोष्ण कटिबन्ध मे है और ध्रुवीय क्षेत्र मे इसका भाग अन्य महाद्वीपो से बहुत कम है। इसलिये इसके अधिकांश भाग मे सम जलवायु पाई जाती है। ऐसी जलवायु मानव जाति की प्रगति में उत्साहवर्द्धक और सहायक तत्व है। यूरोप की जलवायु **प्रो० हन्टिंगटन** के कथनानुसार भौतिक सभ्यता, मानसिक प्रगति, औद्योगिक उन्नति के लिये आदर्श है। खेती और उद्योग दोनों के लिये ही यहाँ की जलवायु अत्यन्त अनुकूल है। शीतोष्ण चक्रवातीय जलवायु स्वास्थ्य के लिए आदर्श है। इसलिये यूरोपवासियों की कार्य-क्षमता बहुत अधिक है।

(३) यूरोप एक विशाल प्रायद्वीप है जिसमें कई छोटे-छोटे प्रायद्वीप हैं। इस प्रकार असंख्य स्थानो पर समुद्र यूरोप के भीतर चला गया है और सामुद्रिक प्रभाव भीतरी भागो मे पहुँचकर जलवायु को सम बनाता है। रूस को छोड़कर यूरोप का कोई भी भाग समुद्र से अधिक दूर नही पडता। जलवायु के सम होने के साथ व्यापार में भी इसलिये सुविधा और वृद्धि हो जाती है।

(४) यूरोप के समुद्र तट की लम्बाई क्षेत्रफल के अनुपात से संसार मे सबसे अधिक है। समुद्र तट अत्यन्त कटा-फटा है। असंख्य छोटी-छोटी खाड़ियाँ भीतर तक चली गई है जिससे यूरोप मे उत्तम बन्दरगाहों की अधिकता है। यूरोप के प्राय: सारे बन्दरगाह प्राकृतिक हैं।

(५) यूरोप मे निवास योग्य भूमि का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल के अनुपात में बहुत अधिक है। यूरोप मे कोई भाग रेगिस्तानी नही है। इसके किसी भाग मे अमेजन बेसिन जैसे सघन वन नही पाये जाते और पर्वतीय बेकार क्षेत्र का विस्तार भी बहुत थोड़ा है। इसलिये यूरोप मे कृषि का महत्व उतना ही अधिक है जितना उद्योगधन्धो का।

(६) यूरोप मे खनिज सम्पत्ति की विविधता तो नही है लेकिन लोहा और कोयला (जो आधुनिक कारखाना उद्योग के आधार हैं) इस महाद्वीप मे प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। कोयले और लोहे का शोषण भी इस महाद्वीप मे सबसे पहले हो गया था।

(७) यूरोप के निवासी कई जातियो के मिश्रण है इसलिये ये स्फूर्तिवान और अन्वेषणप्रिय होते है।

(८) यूरोप मे वैज्ञानिक प्रगति भी सबसे अधिक हुई है अत: इसकी औद्योगिक उन्नति भी सभव हो सकी है।

(९) यूरोप के राष्ट्रों के आधीन संसार के बड़े-बड़े क्षेत्रों में उपनिवेश हैं जहाँ से यूरोप के कारखानो के लिये कच्चा माल प्राप्त होता है और जहाँ पक्के माल के लिए विस्तृत बाजार विद्यमान हैं।

(१०) संसार के किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना मे यूरोप का भीतरी यातायात कम कहीं अधिक उन्नत और कार्यकुशल है।

(११) ऊँचे अक्षांशों में स्थित होने से इसकी जलवायु समशीतोष्ण है। प्रो० हण्टिङ्गटन के अनुसार यूरोप की चक्रवातीय जलवायु कारखाना उद्योग के लिए आदर्श है।

उद्योग स्थानीय लोहे की पूर्ति पर चलाये जा रहे है। पोटास और लिगनाईट से प्राप्त पदार्थो द्वारा रासायनिक उद्योग चलाये जा रहे हैं। कपडा, रसायन, मिट्टी के बर्तन, हल्की मशीनें, ऐनक, वैज्ञानिक यन्त्र आदि के अनेक हल्के उद्योग यहाँ स्थापित है। युद्ध के समय अस्त्र-शस्त्र, हवाई जहाज और अनेक युद्ध यन्त्र बनाने के कारखाने चालू किये गये थे जो अब भी स्थित है। इस औद्योगिक क्षेत्र का अधिकतर भाग अब रूस के अधीन है। साइलेसिया के भाग मे जस्ता, कोयला, लोहा और अन्य धातुयें पाई जाती हैं इसका प्राय सारा भाग पोलैंड मे होने के कारण इसका विकास नही हो पाया है। यहाँ जस्ता रसायन, धातु और इस्पात उद्योग चालू हैं। रीनबोर और ग्लीविटज प्रसिद्ध केन्द्र हैं। ब्रेसलो सूती कपड़े और लिनेन का बडा केन्द्र है।

(v) दक्षिणी यूरोपीय औद्योगिक क्षेत्र (South European Centres)—दक्षिणी यूरोप मे कोयले की कमी ने कारखाना उद्योग को जन्म लेने से रोका तो नही है लेकिन उद्योगो के स्वभाव पर इसका गहरा प्रभाव पडा है। स्पेन मे प्रचुर लोहा पाया जाता है लेकिन कोयला नही मिलता। इटली, बाल्कन देश और स्विटजरलैंड मे लोहा और कोयला दोनों मे से एक भी नही है। आल्प्स और पिरेनीज पर्वत श्रेणियो पर बहने वाली नदियो से प्रचुर मात्रा मे विद्युत शक्ति प्राप्ति की जाती है। इन्ही कारणो से यहाँ भारी उद्योगों का अभाव है। यह उद्योग विशेषकर हथियार, हवाई जहाज आदि प्रायः सरकारी संरक्षण मे राजनीतिक या फौजी कारणो से चलाये जा रहे हैं। इटली मे जलयान और वायुयान निर्माण ऐसे ही उद्योग हैं। यहाँ के अधिकतर उद्योग हल्के प्रकार के हैं जिनमें मुख्य कृत्रिम अब्र बनाना, घड़ियाँ, यन्त्र और कपडा आदि हैं। इन उद्योगों को प्रचुर जल-विद्युत शक्ति और कुशल श्रमिक मिलते हैं। स्विस घाटी, पो बेसिन और केटेलोनिया की घाटी इन उद्योगों के मुख्य क्षेत्र हैं तथा एक दूसरे से पृथक हैं। यहाँ औद्योगिक पेटी की अपेक्षा पृथक केन्द्र ही पाये जाते हैं। बार्सीलोना, लियो, सेंट इटीन, मार्स्लेज, ट्यूरिन, ट्रीस्ट, वेसल, बर्न ज्यूरिच और सेंगालन प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्र हैं। स्विटजरलैंड बहुत समय से घडियों और वैज्ञानिक यन्त्रो के लिए विश्व विख्यात है। लियोन रेशमी कपड़े का सबसे बडा केन्द्र है। रेडियो और बिजली का सामान भी इटली में बनाया जाता है।

(vi) सोवियत रूस के औद्योगिक प्रदेश—आधुनिक काल मे सोवियत रूस में शिल्प उद्योगो का यथेष्ट विकास हुआ है। सोवियत सगठन का यह उद्देश्य है कि समस्त देश मे शिल्प उद्योगो का पुर्नवितरण कर दिया जाय जिससे कि किसी प्रदेश विशेष मे उद्योगो का एकाधिकार न रहे। यत्र निर्माण- खेती के औजार, मोटर, ट्रैक्टर मोटरगाडियाँ, सूती वस्त्र, चमडे की वस्तुएँ, मिट्टी के बर्तन, रासायनिक पदार्थ, चीनी शोधन आदि के यहाँ पर बडे-बडे कारखाने हैं। इस रीति से सोवियत रूस का औद्योगिक सगठन केवल उन्ही कच्ची वस्तुओं पर निर्भर रहता है जो कि रूस ही मे हो सकती हैं। रूस के मुख्य औद्योगिक क्षेत्र निम्न है :—

(अ) मास्को प्रदेश (Moscow Region)—सोवियत रूस मे छः प्रधान औद्योगिक प्रदेश हैं जिनमें सबसे प्रधान मास्को प्रदेश है। सूती वस्त्र के ६०% श्रमिक मास्को प्रदेश मे ही केन्द्रित हैं। मास्को तथा इवानावे ही दो प्रधान सूती वस्त्र केन्द्र हैं। धातु उद्योगो का स्थानीयकरण ट्यूला, मास्को तथा गोर्की मे हो गया है। देश के रासायनिक उद्योगो का ६०% भाग मास्को प्रदेश मे ही स्थित है।

(आ) यूक्रेन का औद्योगिक प्रदेश (Ukraine Region)—दूसरा महत्व

सरलता से पहुँचा जाता है। छिछले तटीय समुद्र में स्थित होने के कारण यहाँ के बन्दरगाहों को ऊँचे ज्वार से लाभ होता है। जहाज बन्दरगाहों मे सरलता से पहुँचते हैं और कीचड इत्यादि भी उनमें नही जमती।

(४) ग्रेट ब्रिटेन मे कोयले और लोहे की बडी-बडी खाने हैं जो कि पास ही पास स्थित हैं। कोयला उत्तम श्रेणी का है और लगभग सभी औद्योगिक केन्द्र कोयले की खानो के समीप है। थोडे बहुत परिमाण मे चाक, स्लेट, टीन आदि भी मिलते हैं।

(५) *यहाँ की नदियाँ जल मार्ग की दृष्टि से अच्छी नही परन्तु उनके मुहानो* मे जहाजो के लिये सभी सुविधाएँ हैं। अतः व्यापार के लिये महत्वपूर्ण है।

ग्रेट ब्रिटेन मे कोयले के विशाल भंडार पाये जाते हैं। किन्तु अन्य साधनों का अत्यन्त अभाव है। इसलिये यह स्वाभाविक ही है कि ग्रेट ब्रिटेन के सारे औद्योगिक क्षेत्र कोयला क्षेत्रों पर ही स्थित है। जल विद्युत का विकास हो जाने से अवश्य ही विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति लागू हो गई है लेकिन फिर भी पूर्वारम्भ के लाभ के कारण अब भी अधिकतर उद्योग कोयला क्षेत्र पर ही स्थित है। सच तो यह है कि प्रत्येक प्रमुख कोयला क्षेत्र का अपना अलग औद्योगिक क्षेत्र है। ब्रिटेन के वैसे तो, प्रो० **डडले स्टाम्प** के अनुसार तेरह औद्योगिक क्षेत्र हैं परन्तु उनमे से केवल निम्नलिखित ही मुख्य हैं:—

(अ) उत्तरी पूर्वी इङ्गलंड या नार्थम्बरलैंड का क्षेत्र (North-East England or Northumberland)—*यह क्षेत्र डरहम और नार्थम्बरलैंड के कोयला क्षेत्रों पर आधारित है।* उत्तरी यार्कशायर और क्लीवलैंड से इसे लोहा प्राप्त होता है। सामुद्रिक स्थिति और उत्तम बन्दरगाहों की सुविधा भी इसे प्राप्त है। नीचे इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग और उनके केन्द्र बताये गये है—

उद्योग	केन्द्र
जहाज निर्माण	मिडिलसरो, साउथ शील्ड्स, हार्टलपूल, संडरलैंड और न्यू कासिल।
इंजीनियरिंग	न्यू कासिल, स्टाक्टन और डरहम।
रासायनिक पदार्थ	टाईनमाउथ, टीजमाउथ, बिलिंघम और हैवरटल हिल।
धातु गलाना	टाईनमाउथ।
कांच	बिलिङ्घम।

(आ) यार्क, डरबी तथा नाटिंघमशायर क्षेत्र (York, Durby and Notinghamshire Area)—*यह क्षेत्र ब्रिटेन का सबसे बडा ऊनी उद्योग का क्षेत्र है।* यह पिनाईन के पूर्व की ओर फैला है। यार्क के दो उपक्षेत्र हैं।

(१) वैस्ट राईडिंग, जहाँ ऊनी कपड़ा उद्योग केन्द्रित है, और (२) शेफील्ड क्षेत्र जहाँ लोहा, इस्पात और कटलरी के उद्योग का विशिष्टीकरण हुआ है। नाटिंघम क्षेत्र सूती कपडा उद्योग और डरबी रेशम कपड़ा उद्योग के लिये प्रसिद्ध है।

(ऊ) द्वितीय विश्वयुद्ध के छिड़ने से सुदूरपूर्व का कुजनेटस्क औद्योगिक प्रदेश भी महत्वपूर्ण हो गया है। यूराल पर्वत से २,००० मील के अन्तर पर होने से सोवियन सरकार ने इस प्रदेश को आर्थिक दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर बना दिया है। सुदूरपूर्व स्थित इस प्रदेश के याकूतस्क, विटिम, कोमसोमोल्स, आरलोवास्क तथा व्लाडीवोस्टक प्रसिद्ध नगर हैं। इस प्रदेश में रसायन, कागज, लुग्दी और हल्के धातु उद्योग स्थित हैं।

(११) **उत्तरी पश्चिमी यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र**—इस क्षेत्र में नार्वे, स्वीडन और फिनलैंड के निकटवर्ती भागों के औद्योगिक क्षेत्र सम्मिलित हैं। इन देशों में कोयले का अत्यन्त अभाव है पर सौभाग्यवश सभी देश पहाड़ी हैं जहाँ ग्लेशियरों के रगड़ से असंख्य जल-प्रपात पाये जाते हैं जिनका उपयोग शक्ति उत्पादन के लिये किया गया है। नार्वे और स्वीडन में उत्तम श्रेणी का लोहा मिलता है किन्तु दुर्गम्य स्थानों पर पाये जाने के कारण इसका पूरी तरह विदोहन नहीं हो पाता है। किन्तु जल शक्ति,के सहारे कागज, लुग्दी, विद्युत यंत्र और रसायन आदि के उद्योग यहाँ स्थापित हो गये हैं। यहाँ इस्पात, लकड़ी चीरने और दियासलाई बनाने के भी कई कारखाने पाये जाते हैं। नार्वे में नोटोडेन और यूक्यू खाद और विस्फोटक पदार्थों के उत्पादक केन्द्र हैं। ओस्लो फियोर्ड में विद्युत रसायन और इस्पात उद्योग केन्द्रित हैं। स्वीडन के मुख्य औद्योगिक केन्द्र नारकोपिंग, मोटाला और टॉलहाय हैं। फिनलैंड के मुख्य केन्द्र हाको और हेलसिंकी हैं।

पूर्वी और दक्षिणी एशिया के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of East and South Asia)

(१) **जापान के क्षेत्र** (Industrial Regions of Japan)—जापान में उद्योग धन्धों का विकास सबसे घनी जनसंख्या की पेटी में ही हुआ है जहाँ सस्ते मजदूर और बाजार दोनों की प्रचुरता है। इस क्षेत्र में कोयला, रेशम और जल-शक्ति भी उपलब्ध है तथा यहीं जापान के मुख्य-मुख्य बन्दरगाह स्थित हैं जिनके द्वारा जापान का वैदेशिक व्यापार होता है। जापान का मुख्य औद्योगिक क्षेत्र होंशू के दक्षिण में स्थित है जो उत्तरी क्यूशू व आन्तरिक सागर से लगाकर पूर्व में टोकियो तक फैला है। यह ६०० मील लम्बी पेटी नागासाकी से टोकियो तक विस्तृत है। इस पेटी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी सब प्रदेशों और राष्ट्रों में पहुँच है। इस पेटी में सैकड़ों कारखाने पाये जाते हैं। सिताउची सागर के दोनों किनारों पर बड़े-बड़े औद्योगिक नगर स्थित हैं। इस पेटी में जापान की ५३% जनसंख्या और ८०% मजदूर पाये जाते हैं। ७५% कच्चा लोहा और ६०% इस्पात भी यहीं तैयार किया जाता है। यहाँ सूती, ऊनी, रेशमी कपड़े, कागज, लुग्दी, रसायन, दियासलाई, पेंसिल, चीनी के बर्तन, काँच, रबड़, चमड़ा, इस्पात व लोहे की वस्तुयें, साइकिल चावल का कागज और खिलौने आदि के उद्योग केन्द्रित हैं।

इस औद्योगिक पेटी में चार मुख्य क्षेत्र हैं :—

(अ) **कोबे-ओसाका क्षेत्र या किंकी केन्द्र** (Kobe Osaka Region)—यह क्षेत्र जापान के मध्यवर्ती सागर के चारों ओर फैला है। इस क्षेत्र में जापान का एक-तिहाई माल उत्पन्न होता है। ओसाका यहाँ का प्रमुख केन्द्र है। यह तो **जापान का मान्चेस्टर** ही कहलाता है क्योंकि यह नगर सूती वस्त्र उद्योग में एक

धातु गलाना	शैफील्ड
विद्युत तथा रंगाई	शैफील्ड
सिगरेट	नाटिंघम

हल, यार्क, लिंकन, डोनकास्टर, राथरहम और वेकफील्ड आदि अन्य प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्र हैं।

(इ) लंकाशायर क्षेत्र (Lancashire Region)—यह क्षेत्र संसार का सबसे बड़ा सूती उद्योग क्षेत्र है। मान्चेस्टर संसार का सबसे बड़ा सूती कपड़ा उद्योग का केन्द्र है। यह क्षेत्र पिनाईन श्रेणी के पश्चिम की ओर मरसी नदी के बेसिन में फैला है। सूती कपड़ा उद्योग मे भी अलग-अलग अगों का विभिन्न केन्द्रों मे विशिष्टीकरण हुआ है। मुख्य उद्योग और उनके केन्द्र निम्नलिखित है —

उद्योग	केन्द्र
सूती कपड़ा	मांचेस्टर, लिवरपूल और ओल्डहम।
बुनाई	मांचेस्टर।
कताई	ओल्डहम, बोल्टन, बरी, रोशडेल और स्टाकपोर्ट।
रंगाई-छपाई	रेडक्लिफ, बोल्टन और रोशडेल।
सूती धोतियाँ	प्रेस्टन और ब्लैकबर्न।
चीनी	लिवरपूल।
काँच	सेंट हेलेन्स।
साबुन	लिवरपूल।
रासायनिक पदार्थ	रेनकोर्स।
कागज	रोसेन्डेल।
रबड़ और रेशमी कपड़ा	मांचेस्टर।

(ई) मिडलैंड क्षेत्र (Midland Region)—इस क्षेत्र मे प्रारम्भिक इस्पात उद्योग के कारखाने स्थापित किये गये थे। बर्मिघम इसका मुख्य केन्द्र है। मध्यवर्ती स्थिति और सुव्यवस्थित रेल मार्गों की सुविधा इसे प्राप्त है। यहाँ इस्पात के भारी और हल्के दोनों ही प्रकार के सामान बनाये जाते है। साईकिल, अस्त्र शस्त्र, हल्के सामान, चीनी मिट्टी के बर्तन, जूते, शराब, इस्पात और इन्जीनियरिंग के कई कारखाने यहाँ पाये जाते है। यहाँ के मुख्य उद्योग और उनके केन्द्र इस प्रकार हैं :—

उद्योग	केन्द्र
जूता	लिसेस्टर।
शराब	बर्टन।
रेल के इञ्जिन	बर्मिङ्घम।

के अभाव में हल्के उद्योग-धन्धे उन्नति कर सके हैं। रेशम की रील तैयार करना सूती कपड़ा की बुनाई व कताई भी मुख्य व्यवसाय है। ऊनी, सूती व रेशमी वस्त्रों के अतिरिक्त रसायन, चीनी मिट्टी के बर्तन व औजार और मशीनें भी बनाई जाती हैं।

(ई) उत्तरी क्यूश्यू क्षेत्र (Northern Kiushiu Region)—यह क्षेत्र क्यूश्यू के उत्तरी सिरे पर मोजी और नागासाकी के मध्य में स्थित है। इस क्षेत्र की सबसे मुख्य सुविधा इसका कोयला क्षेत्रों के निकट होना है। लोहा मंचूरिया से आयात कर लिया जाता है। जापान का ५% इस्पात और ७५% ढला लोहा इसी क्षेत्र से प्राप्त होता है। जापान के कुल औद्योगिक उत्पादन का ६% इस क्षेत्र से प्राप्त होता है। यहाँ सबसे अधिक लोहे गलाने की भट्टियाँ मिलती हैं। भारी लोहे की वस्तुयें जहाज, इञ्जिन, मशीनें व पुर्जे, काँच, कागज, सीमेंट तथा रसायन उद्योग के कारखाने पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ आटा पीसने, तेल साफ करने के भी कारखाने हैं। यावटा में लोहे के बड़े कारखाने केन्द्रित हैं।

(ii) चीन के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of China)—चीन मुख्यतः एक खेतिहर देश है अतः यहाँ का औद्योगिक विकास पूर्ण नहीं है। इसके कई कारण हैं (१) खेतिहर देश होने से चीन निवासी अधिकतर गाँवों मे ही रहते हैं अतः उद्योगो की ओर उनका कोई आकर्षण नहीं रहता। (२) अब तक की अव्यवस्थित राजनीतिक अवस्था देश की आर्थिक प्रगति में बड़ी बाधक रही है। (३) भीतरी यातायात की सुविधायें भी कम हैं। (४) सामुद्रिक यातायात का भी पूर्ण विकास नहीं हो पाया है। (५) श्रमिको की कार्य-कुशलता बहुत कम है। (६) पूंजी की नितान्त कमी है। (७) कोयले और जल विद्युत शक्ति का पूर्ण रूप से विकास न होने से औद्योगिक विकास भी उच्च स्तर तक नहीं पहुँच सका है। (८) चीन संसार के अन्य औद्योगिक देशों से बहुत दूर पड़ता है, अतः उनका प्रभाव इस पर नहीं पड़ा है।

अतएव चीन मे अधिकतर कुटीर उद्योग-धन्धे ही किए जाते हैं। इनमें मुख्य रेशम के कीड़े पालना, रील बनाना, रेशम कातना, लोहे के बर्तन, खेती के छोटे यन्त्र, रस्सियाँ, टोकरियाँ, नमदे, कालीन, कपड़ा, चीनी मिट्टी के बर्तन आदि हैं।

चीन के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र ये हैं:—

(१) उत्तर-पूर्वी चीन।

(२) पेकिंग, ताई यूनान, सिंगताओ क्षेत्र।

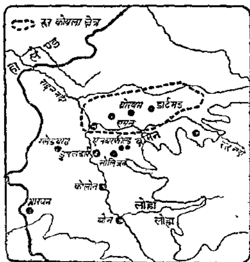
(३) शंघाई, बूहान प्रदेश।

(१) उत्तरी-पूर्वी चीन—यह प्रदेश चीन के उत्तरी पूर्वी भाग मे हेलुंगकियाग, किरीन और लायोनिंग नामक प्रान्तों में विस्तृत हैं। आरम्भ में इस प्रदेश में कारखानों की स्थापना जापानियो द्वारा की गई थी। आजकल यहाँ लगभग १५० आधुनिक कारखाने हैं जिनमें विविध प्रकार की वस्तुयें बनाई जाती हैं। डेरन मे जलपोत और रेल के एंजिन; शेनयांग और हर्बिन में बिजली का सामान, मशीनें; क्यामुजे में कागज; किरीन मे रासायनिक खाद और फुलारकी में भारी मशीनें तैयार की जाती हैं।

क्षेत्र पर निर्भर है। यहाँ जस्ता, काच, चिकनी मिट्टी के बरतन,, रसायन और गाड़ी के डिब्बे बनाने के कारखाने है। नहरो द्वारा कोयला औद्योगिक केन्द्रो तक पहुँचाया जाता है। यहाँ ऐतिहासिक पूर्वारम्भ का तत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लीज और चार्लोरॉय इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र हैं। लीज और शारलोट खनिज और इन्जीनियरिंग उद्योगो के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ रासायनिक पदार्थो और कॉंच का सामान बनाने के भी बहुत बड़े-बडे कारखाने है।'

इन दो भागो के अतिरिक्त हालैंड का दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र मे सम्मिलित है। इस भाग मे सूती कपड़ा उद्योग का विशिष्टीकरण हुआ है। एन्सकेडी सूती कपडे, टिलबरी ऊनी कपडे और नकली रेशम, इडोवेन बिजली के बल्व, रेडियो और अन्य बिजली का सामान और लॉगस्ट्राट जूते के उद्योग का केन्द्र है।

(iii) **पश्चिमी जर्मनी या रूर-वेस्टफेलिया क्षेत्र** (W. Germany or Ruhr Westphalian Region)—इस क्षेत्र मे उपरी राईन घाटी, सार कोयला वेसिन और बवेरिया शामिल है लेकिन इसमे निचली राईन का क्षेत्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यह क्षेत्र वेस्टफालिया के रूर कोयला क्षेत्र से सम्बन्धित है। यह जर्मनी के भारी उद्योगो का सबसे पुराना और सबसे बड़ा क्षेत्र है। इस क्षेत्र के भीतर औद्योगिक विशिष्टीकरण खूब हुआ है किन्तु भारी उद्योग कोयला क्षेत्र के पास स्थित है। इसके पूर्व और दक्षिण पूर्व की ओर मजबूत सामान और हल्के धातु उद्योग चालू है। इसके उत्तर और पश्चिम की ओर कपडा उद्योग स्थित है। एसेन, डार्टमड और बोचम इस्पात के केन्द्र हैं। राम्मचीड और सोलिन्जेन मे भारी सामान, अस्त्र-शस्त्र और कटलरी के समान बनाये जाते है। डुईसबर्ग, हैम्बोर्न, क्रेफेल्ड, मु चेन-ग्लाडबैक, कोलीन कपडा उद्योग के मुख्य केन्द्र है। इस औद्योगिक क्षेत्र को दो बडे-बडे महायुद्धो से विशेष क्षति पहुँची है लेकिन कोयले और लोहे की निकटता के कारण पुनर्निर्माण द्रुतगति से हो रहा है। सम्पूर्ण क्षेत्र मे रेशम से लगाकर जहाज तक बनाये जाते हैं।



चित्र १५६. जर्मनी के प्रधान औद्योगिक क्षेत्र

(iv) **मध्य यूरोपीय क्षेत्र** (Central European Region)—इस क्षेत्र मे दक्षिणी मध्य जर्मनी और बोहेमिया के क्षेत्र बर्लिन से प्राग तक फैले हुए हैं। इस क्षेत्र मे लिगनाईट कोयले की विशाल सम्पत्ति पाई जाती है। कही-कही जल शक्ति, अच्छा कोयला और गैसोलीन की शक्ति भी पाई जाती है। क्षेत्र मे लोहे और पोटाश के लवण भी पाये जाते हैं। लिगनाईट से कृत्रिम उपायो द्वारा गैसोलीन बनाया जाता है। शक्ति की प्रचुर प्राप्ति इस क्षेत्र की अन्यतम सुविधा है। यहाँ भारी इस्पात

दूर नहीं है—कोयला मिल जाता है। यह न केवल कारखानों के लिये शक्ति प्रदान करता है वरन् इससे ताप बिजली (Thermal power) भी बनाई जाती है।

(३) नदियों और उनसे संबंधित झीलों (Bill॰) तथा नहरों के कारण उद्योग के लिये पर्याप्त मात्रा में स्वच्छ जल उपलब्ध हो जाता है।

(४) अधिक जनसंख्या होने के कारण यहाँ श्रमिक भी बहुत मिलते हैं।

(५) यहाँ के बने माल की माँग भी उत्तरी भारत मे सभी जगह है।

(६) यहाँ पूँजी की पूर्ण सुविधा है।

(ii) **बम्बई का कपास क्षेत्र** (Bombay Cotton Belt)—यह भी भारत का प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है जो दक्षिण के कपास उत्पादन क्षेत्रों से सम्बन्धित है। अत. यहाँ सूती वस्त्र उद्योग बहुत उन्नत हो गया है, यहीं भारत के सबसे अधिक श्रमिक पाये जाते हैं। यहाँ कपास के क्षेत्रों की निकटता से पर्याप्त मात्रा में कपास उपलब्ध हो जाता है। शक्ति अधिकतर टाटा के जल-विद्युत कारखानों से प्राप्त हो जाती है। बन्दरगाह होने के नाते विदेशों से रसायन और यत्र, उपकरण आदि कम खर्चे में और सरलतापूर्वक आयात किये जा सकते हैं। भीतरी भागों से रेल मार्गों द्वारा सबधित होने से यहाँ का माल दूर-दूर तक पहुँचता है। बम्बई मे बड़े-बडे पूँजीपतियों का सान्निध्य है, अत. पूँजी खूब मिल जाती है। अतएव इस क्षेत्र मे सूती उद्योग के अतिरिक्त कागज, रेशम, ऊनी वस्त्र, काँच, रसायन आदि के कारखाने भी केन्द्रित हैं। यहाँ के मुख्य औद्योगिक केन्द्र बम्बई, शोलापुर, अहमदाबाद, बडौदा, ओल्वा, बेलगाँव, पूना आदि हैं।

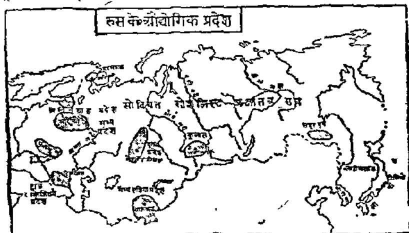
(iii) **नीलगिरी पर्वतों के निकट मद्रास व मैसूर क्षेत्र** (Madras-Mysore Belt)—यद्यपि यह क्षेत्र उत्तरी भारत के भागों से बहुत दूर पड जाते हैं तथा यहाँ लोहा और कोयला तथा अन्य खनिज पदार्थ भी कम पाये जाते हैं किन्तु दक्षिणी भारत मे जल-विद्युत शक्ति का विकास बहुत अधिक हो जाने से यहाँ विशेषत: सूती, ऊनी व रेशमी कपडों और रसायन तथा चमडे के उद्योग केन्द्रित हो गये हैं। यहाँ सीमेंट, दियासलाई आदि प्रमुख औद्योगिक केन्द्र हैं।

(iv) **रानीगंज-झरिया क्षेत्र** (Raniganj-Jharia Area)—यह क्षेत्र कलकत्ता से लगभग १२५ मील पश्चिम को ओर स्थित है। इसके विकास का मुख्य कारण यहाँ मिलने वाली कोयले की विशाल राशि है जो धातु शोधन एवं कोक बनाने और गैस निर्माण के सर्वथा उपयुक्त है। इसी क्षेत्र मे चूने का पत्थर, डोलोमाइट, मैंगनीज, अभ्रक, अग्नि, प्रतिरोधक मिट्टी तथा लोहा खूब मिलता है। अत: यहाँ जमशेदपुर, कुल्टी व हीरापुर मे लोहे व इस्पात के कारखाने, रानीगंज में कागज, सिंदरी में रासायनिक खाद, जे० के० नगर में अल्यूमीनियम और डालमिया नगर मे सीमेंट, कागज, रसायन आदि के मुख्य कारखाने पाये जाते हैं। दामोदर घाटी योजना के पूर्ण होने पर यह क्षेत्र वास्तव मे **भारत का रूर प्रदेश** (Ruhr of India) बन जायगा क्योंकि प्राकृतिक स्रोतों मे यह बहुत सम्पन्न है।

दक्षिणी अमेरिका के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of S. America)

दक्षिणी अमेरिका के औद्योगिक विकास में निम्न बाधायें रही हैं :—

पूर्ण औद्योगिक प्रदेश यूक्रेन तथा उसके समीप का भाग है। डोनेट्ज नदी के बेसिन से ही सोवियत रूस की ४५% इस्पात तथा ७०% अल्यूमीनियम की पूर्ति होती है। यूक्रेन का डोनट्ज बेसिन चीनी और आटे की मिलो तथा चमड़े के कारखानों के-



चित्र १५७. रूस के औद्योगिक क्षेत्र

लिए भी प्रसिद्ध है। कीवा (अनाज की मन्डी), ओडेसा (खेती के औजार), क्रिवोई रॉग (लोहा तथा इस्पात), नीप्रोपेट्रोवस्क (इन्जीनियरी की वस्तुओं तथा कोयले से उत्पन्न बिजली का स्टेशन), रोस्टोव (खेती के औजार), वोरोशिलोवग्राड (मोटर गाडी) तथा स्टालिनग्राड (लोहा तथा इस्पात) इस प्रदेश के मुख्य औद्योगिक केन्द्र हैं।

(इ) यूराल करगंडा का औद्योगिक प्रदेश (Ural Karganda Region)—यह प्रदेश अपेक्षतः नवीन ही है। इस क्षेत्र में पर्म, स्वर्डलोवस्क, शोलियाबिस्क, ओरेनबर्ग तथा बाश्कीर प्रदेश करगंडा, मैगटोगोरस्क और निजनीटगिल आदि सम्मिलित हैं। इस प्रदेश में सोवियत रूस का २०% के लगभग लोहा तथा २५% के लगभग इस्पात उत्पन्न होता है। अन्य शिल्प उद्योगों में रासायनिक उद्योग, रेलों के कारखाने तथा शस्त्रास्त्र ढालने के कारखाने है। इस प्रदेश के प्रधान नगर मैगनीटोगोरस्क, निझनी टागिल, शोलियाबिस्क, स्वर्डलोवस्क तथा उफ्रा हैं। इस प्रदेश को ट्रांस साइबेरियन रेलवे तथा कैस्पियन रेल दोनों ही जाती है।

(ई) कुजबज देश (Kujbutz Region)—पश्चिमी साइबेरिया में है। कुछ ही दिनों में यह महत्त्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेश बन गया है। केमरोवो (तेल शोधन तथा धातु उद्योग), स्टालिस्क (लोहा इस्पात तथा मोटर गाड़ियाँ) तथा होमस्क (वायुयानों के लिये) यहाँ के प्रमुख औद्योगिक नगर हैं।

(उ) मध्य एशिया प्रदेश (Central Asia Region)—सोवियत मध्य एशिया प्रदेश में सूती वस्त्र उद्योग, रासायनिक पदार्थ, लोहा तथा इस्पात आदि के उद्योग होते है। ताशकंद, बुखारा तथा स्टालिनाबाद मध्य एशिया प्रदेश के मुख्य नगर हैं।

(३) चूंकि झीलें दिसम्बर से अप्रैल तक बर्फ से ढकी रहती हैं, अतः यातायात में असुविधा हो जाती है, फलत कई कारखानों को सर्दी के लिये भी कच्चा लोहा जमा रखना पडता है।

(४) कई कारखानों की मशीनें व यंत्र आदि भी पुराने पड गए हैं तथा कइयों के निकट भूमि का अभाव होने से उनके विस्तार में बाधा पडती है।

अत. कई पुराने कारखाने अब बंद प्राय हो गये हैं। इस क्षेत्र का उत्पादन १६४१-५४ के बीच केवल २०% तक ही बढा है जब कि सम्पूर्ण संयुक्त राज्य मे यह वृद्धि ५५% तक हुई है। इसी बीच झील प्रदेशो की उत्पादन क्षमता २ गुनी और शिकागो गैरी की ५०% बढी।

इस प्रदेश का मुख्य केन्द्र पिट्सबर्ग है किन्तु उसके चारों ओर कई अन्य केन्द्र भी स्थापित हो गये हैं। जैसे—

उद्योग	केन्द्र
पिट्सबर्ग के निकट	मैकीजपोर्ट, ब्रैडॉक, कारनेगी, हॉमस्टेड और जॉन्सटाऊन।
शैननगो घाटी मे	शैरोन।
महोनिंग घाटी मे	यंगस्टाऊन, कैंटन, मैसीलन।
ओहियो घाटी मे	बीवस्टन, वीलिंग, स्टूबेनविले, हटिंगटन, ऐशलैंड, आयरलटन, पोर्ट्समाउथ।
मियामी घाटी मे	मिडिलटाऊन।

इन सभी केन्द्रो मे भारी वस्तुएँ बनाई जाती है।

(iii) **बड़ी भीलों के प्रदेश** (Great Lake Districts)—यह सयुक्त राज्य के इस्पात उद्योग का प्रमुख क्षेत्र है जो ईरी, मिशीगन और सुपीरियर झीलों के सहारे फैला है। इन क्षेत्रो मे इस उद्योग के स्थानीयकरण का मुख्य कारण जल यातायात की सस्ती और उन्नत सुविधायें हैं। भील मार्गों द्वारा कच्चा माल आसानी से इकट्ठा किया जा सकता है और तैयार माल देश के भीतरी भागो मे वितरित किया जा सकता है। इस क्षेत्र के तीन भाग है :—

(क) **ईरी क्षेत्र** (Eri Region)—बफैलो से टोलडो और डिट्रायट तक फैला है। इस क्षेत्र को (१) पेंसिलवेनिया रियासत से काफी कोयला मिल जाता है। बफैलो जिलो को न्यागरा प्रपात की सस्ती बिजली का भी लाभ प्राप्त है। (२) चूना ईरी झील के द्वीपो अथवा ह्यूरन झील के पश्चिमी भागो मे मिल जाता है। (३) कच्चा लोहा मेसाबी की खानो से प्राप्त हो जाता है। (४) कारखानो के लिए जल भीलो से मिल जाता है। (५) इस क्षेत्र को सस्ते जलमार्ग, रेलों और सडको की सुविधाएँ प्राप्त हैं। (६) इस प्रदेश से बने माल की माँग भी बहुत है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र ईरी, डिट्रायट, लोरेन, टोलडो और क्लीवलैंड हैं।

(ख) **मिशीगन क्षेत्र** (Michigan Region) या **शिकागो-गैरी क्षेत्र** (Chicago-Gary Region)—इस क्षेत्र को चूना और लोहा मिशीगन झील मार्ग द्वारा ह्यूरन झील के पश्चिमी किनारों तथा मिशीगन झील के पूर्वी किनारो और लोहा उत्तरी भागो (वयूवा और गोगेबिन) से मिल जाता है। उत्तरी और मध्यवर्ती

विशेष स्थान रखता है। सूती कपड़े के अतिरिक्त यहां रेशमी व ऊनी वस्त्र उद्योग, लोहा व इस्पात, जहाज आदि उद्योग भी केन्द्रित हैं। ओसाका के पीछे समतल भूमि विस्तृत है तथा अधिक जनसंख्या के कारण बाजार और सस्ते मजदूरों की प्रचुरता है अतः कच्चा माल और शक्ति न होते हुये भी उद्योग चलाए जाते हैं। क्योटो में कलापूर्ण वस्तुयें अधिक निर्माण की जाती हैं। रेशमी वस्त्र, मिट्टी व चीनी के बर्तन, शराब, बाँस काँसे की वस्तुयें और खिलौने तथा लाख की वस्तुएँ अधिक बनायी जाती हैं। समस्त जापान के कला कौशल की ३०% वस्तुयें यहीं तैयार की जाती हैं।

(आ) टोकियो-याकोहामा क्षेत्र या क्वान्टो केन्द्र (*Tokyo Yakohama-Region*)—यह क्षेत्र टोकियो और याकोहामा के चारों ओर क्वान्टो के मैदान पर फैला है। क्वान्टो के मैदान में अनेक नदियां बहती हैं उनसे जलविद्युत उत्पन्न कर यहाँ के उद्योगों को चलाया जाता है। यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुयें तैयार की जाती हैं। टोकियो सागामी खाड़ी के सिरे पर स्थित है जहाँ तक बड़े जहाज नहीं पहुँच पाते अतः खाड़ी के द्वार पर स्थित याकोहामा बन्दरगाह द्वारा इस क्षेत्र का व्यापार होता है। इसके पृष्ठ देश में रेशम बहुत होता है अतः यहाँ रेशम उद्योग के कई कारखाने पाये जाते हैं। यहां मशीनें, बिजली का सामान, छापेखाने की मशीनें,



चित्र १५८. जापान के औद्योगिक क्षेत्र

टे आदि बड़ी मात्रा में तैयार किये जाते हैं क्योंकि पृष्ठदेश में बहने वाली तीव्रगामी नदियों से जलशक्ति प्राप्त होती है। क्वान्टो के मैदान में अन्य कई केन्द्रों में प्लास्टिक, रबड़ व लकड़ी के खिलौने, फैशन की वस्तुयें, सजावट के सामान, कागज, चीनी मिट्टी के बर्तन और चमड़े का सामान बनाने के भी कई कारखाने हैं। जलयान निर्माण और उनकी मरम्मत करना, सुन्दरता-वर्द्धक वस्तुयें बनाना तथा रेशम की रील बनाना और बुनाई करना भी यहाँ के प्रमुख उद्योग हैं।

(इ) नगोया-क्षेत्र (*Nagoya Region*)—यह क्षेत्र एक छिछली खाड़ी के किनारे स्थित है। इसका मुख्य केन्द्र नगोया है जहाँ जापान की १०% वस्तुयें तैयार की जाती हैं तथा ६०% ऊनी कपड़ा यहाँ तैयार होता है। यहाँ कोयले व लोहे

लोहा, इस्पात और उससे सम्बन्धित उद्योग

(IRON, STEEL AND ALLIED INDUSTRIES)

(क) लोहे और इस्पात का उद्योग

आधुनिक युग मे सबसे प्रमुख उद्योग लोहे और इस्पात का ही माना जाता है क्योंकि इस उद्योग द्वारा ही वर्तमान काल के औद्योगिक क्षेत्रों का विकास सम्भव हो सका है। लोहे और इस्पात के कारखानो द्वारा न केवल अन्य उद्योगो के लिए मशीनें, पुर्जे और यत्र ही बनाये जाते है वरन् ये यातायात के विभिन्न साधनो के लिए मोटरगाड़ियाँ, एंजिन और खेती के लिए कई प्रकार की मशीनें आदि भी बनाते हैं। अतएव यह उद्योग भारी और आधारभूत (Heavy & Basic) उद्योग कहलाता है।

लोहा और इस्पात उद्योग मिस्र मे ३,००० वर्ष पूर्व भी चालू था किन्तु इसका उत्तम विकास रोम मे रोमन-साम्राज्य के युग में ही हुआ। इग्लैंड मे भी भट्टियो मे लोहे को शुद्ध कर उससे औजार बनाये जाते थे किन्तु आधुनिक ढग से यह उद्योग २० वी शताब्दी मे ही आरम्भ हुआ है। १९ वी शताब्दी के अर्द्ध भाग तक इग्लैंड इस उद्योग मे अग्रगण्य था, किन्तु सन् १८९० मे सयुक्त राज्य; सन् १८९४ से प्रथम महायुद्ध तक जर्मनी ; सन् १९३४ से रूस और कभी-कभी फ्रास इस उद्योग में अग्रणी रहे। अब सयुक्त राज्य अमेरिका ही इस उद्योग मे सर्व प्रथम है।

उद्योग का स्थानीयकरण

किसी देश मे लोहे और इस्पात के उद्योग के लिए निम्न बातो की आवश्यकता होती है :—

(१) कच्चा माल—इस उद्योग के लिए तीन प्रकार के कच्चे माल की आवश्यकता होती है :—(i) धातु बनाने के लिए लोहे की अयस, (ii) कच्चे लोहे को गलाने के लिये कोयला, और (iii) गली हुई धातु का मैल साफ करने के लिए चूना अथवा डोलोमाइट पत्थर। इनके अतिरिक्त लोहे को कड़ा बनाने के लिए मैंगनीज, टगस्टन, क्रोमियम, निकल आदि की भी भिन्न-भिन्न मात्रा मे आवश्यकता होती है। नीचे के आकड़ो से यह स्पष्ट होगा कि १ टन पिग-आयरन बनाने मे कच्ची धातु और अन्य कच्चा माल किस परिमाण मे आवश्यक होते हैं :—

पदार्थ	१ टन इस्पात बनाने मे उपभोग की मात्रा
कोकिंग कोयला	१·५६५ टन
लोहा	१·६१३० ,,
मैंगनीज	०·१३० ,,

(२) पेकिंग, ताईयूनान-सिंगताओं प्रदेश—यह प्रदेश चीन के बड़े मैदान में, ह्वांगो नदी के डैल्टा प्रदेश के अधिकाश भाग पर स्थित है। यह प्रदेश त्रिभुजाकार है जो पेकिंग, ताईयूनान और सिंगाताओ तीन नगरों को मिलाने से बनता है। शातुंग, शांसी, शेंसी, होनान तथ हूपे प्रान्तों के कुछ भाग इनमे सम्मिलित है। यहाँ विविध प्रकार के खनिज पदार्थ और व्यावसायिक फसलें पैदा की जाती है। शक्ति के लिये कोयला तथा ह्वांगो और उसकी सहायक नदियो से जलविद्युत भी सुगमतापूर्वक प्राप्त हो जाती है। अतः यहाँ लोहा, इस्पात, सूती कपड़ा, रसायन, धान कूटने और आटा पीसने के कारखाने बडी मात्रा मे पाये जाते हैं। लोहा और इस्पात के मुख्य केन्द्र पेकिंग, ताईयूनान और टीटसीन हैं। सूती कपडा उद्योग चिंगतामो, सिनान, और चेंगचाऊ मे हैं। सीमेंट, वनस्पति तेल और सिगरेट बनानेके कारखाने भी यहाँ हैं।

(४) शंघाई-वूहान प्रदेश—यह प्रदेश मध्य चीन मे *यांगटीसिक्यांग* नदी के बेसिन मे फैला हुआ है। यह शघाई से लेकर हैंकाऊ तक फैला हुआ है। वूहान ही चीन का सबसे पुराना लोहा और इस्पात का केन्द्र है। इस प्रदेश के आह्वेई और हुपे प्रान्तो मे खनिज पदार्थ अधिक मिलते हैं। यांग्टीसी से जलविद्युत भी प्राप्त होती है। शंघाई मे चीन मे सबसे अधिक सूती कपडा बनाया जाता है। इसी से इसे चीन का मानचेस्टर कहते हैं। यहाँ अनेक प्रकार की छोटी-छोटी मशीनें भी बनाई जाती हैं। वूहान के समीप लोहा-इस्पात तथा मशीनें भी बनाई जाती हैं। यहाँ- रसायन, बिजली की मोटरें, साइकिल, घड़ियाँ, सिगरेट तथा रेशमी कपड़ा भी बनाया जाता है। नान्किंग और हांगचाऊ अन्य प्रसिद्ध केन्द्र है।

(iii) भारत के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of India)—यद्यपि भारत विश्व के औद्योगिक देशों में आठवाँ देश है किन्तु यहाँ अभी तक पूर्णरूप से कारखानो का विकास नही हुआ है। केवल १०% व्यक्ति इनमें काम करते हैं फिर भी कुछ क्षेत्र विशेषों मे कई विशेषताओं के कारण औद्योगिक केन्द्र स्थापित हो गये हैं। ये विशेषताएँ हैं क्रमशः (१) विशाल जनसंख्या और अधिक माँग, (२) बड़े-बड़े बैंकों द्वारा पूँजीगत सहायता देना, (३) यातायात की सुविधाएँ, और (४) कच्चे माल की प्रचुरता।

भारत में मोटे तौर पर निम्नलिखित औद्योगिक प्रदेश है :—

(i) हुगली नदी के क्षेत्र (Hooghly Side Area)—यहाँ भारत के लगभग १/३ उद्योग-धन्धे पाये जाते हैं। यही भारत का प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है जहाँ भारत के सभी जूट मिल, पाट, कागज, लोहा, रसायन, सूती कपड़े, काँच आदि उद्योगों के कारखाने केन्द्रित हैं। यह उद्योग मुख्यतः कलकत्ता की घनी बस्ती के बाहर स्थित हैं। हावड़ा, लिलुआ, बेलूर, बजबज, टीटागढ आदि कलकत्ता के मुख्य उप-नगर हैं। यहाँ कारखाने अधिकतर हुगली नदी के किनारे किनारे पर ही पाये जाते हैं। इस क्षेत्र को ये सुविधाएं प्राप्त हैं :—

(१) हुगली के यातायात मार्ग पर स्थित होने के कारण यहाँ कलकत्ता द्वारा विदेशों से व्यापार बडी मात्रा मे सरलतापूर्वक किया जा सकता है। भीतरी भागो से भी यह क्षेत्र रेल-मार्गों और नदियों द्वारा सम्बन्धित है अतः कच्चा माल सुविधापूर्वक प्राप्त हो जाता है।

(२) कोयले की खानो से निकट होने से—जो सभी १५० मील से अधिक

द्वारा कच्चा माल एकत्रित करना रेल मार्गों की अपेक्षा अधिक सस्ता पड़ता है। यातायात के साधनों द्वारा ही उत्पादित माल को खपत के केन्द्रों तक आसानी के साथ भेजा जा सकता है।

एक बार लोहे और इस्पात के कारखाने के नष्ट हो जाने से उसके पुनर्निर्माण की सम्भावनायें कम रहती हैं, अतः युद्धकालीन आक्रमण से बचने के लिए इस्पात के कारखाने देश के भीतरी क्षेत्रों मे सुरक्षित स्थानों में स्थापित किये जाते हैं। जमशेदपुर वर्मिघम और पिट्सबर्ग के कारखाने ऐसे ही स्थानो पर केन्द्रित हैं। साइबेरियाई क्षेत्र में आधुनिक इस्पात के कारखाने इसीलिए स्थापित किये जा रहे हैं।

लोहे की अशुद्धियाँ दूर करना

कच्चे लोहे मे कई प्रकार की अशुद्धियाँ मिली रहती हैं जिन्हे साफ करने के लिए लोहे को भट्ठी मे रख कर गर्म किया जाता है और उसमे कुछ नियत मात्रा में चूना मिलाया जाता है। इस प्रकार गलने पर शुद्ध लोहे की धातु नीचे जम जाती है और उसकी अशुद्धियाँ ऊपर तैरने लगती हैं। नीचे की ओर भट्ठी में एक टोंटी लगी रहती है जिसमें से शुद्ध धातु निकल कर नीचे रखे हुये ढाँचों में गिरती रहती है। इस तरह जो लोहा प्राप्त होता है उसे ढला हुआ लोहा (Cast Iron) कहते हैं। यह लोहा अधिक मजबूत नही होता क्योकि इसमे अब भी काफी मैल (जैसे गंधक, फास्फोरस और कार्बन) रह जाता है। इसलिये यह बड़ी जल्दी टूट भी जाता है। अतएव इसे और अधिक मजबूत और साफ बनाने के लिए फिर भट्टियों मे गलाया जाता है। इस प्रकार का लोहा आसानी के साथ काटा-पीटा जा सकता है—और काफी मजबूत भी होता है। इसे शुद्ध या पिटवां लोहा (Wrought Iron) कहते हैं। शुद्ध लोहा काफी कठोर होता है और इससे मशीनें, शस्त्र आदि बनाये जाते हैं, किन्तु यह सभी प्रकार की वस्तुओ के लिए पर्याप्त कठोर नहीं होता। इसके बनाने मे समय भी काफी लगता है और खर्चा भी अधिक पड़ता है। इसलिये इस लोहे को और भी मजबूत और कठोर बनाने के लिए उसमे कार्बन की मात्रा बहुत कम करके कई प्रकार की धातुएँ मिला दी जाती हैं। यही पक्का लोहा इस्पात या फौलाद (Steel) कहलाता है। इसका प्रयोग अधिक मजबूत और टिकाऊ वस्तुएँ बनाने में होता है। इस्पात कई प्रकार का होता है और इस्पात मे कुछ विशेष गुण होते हैं और हर इस्पात किसी विशेष धातु के मिश्रण से बनता है।

लोहे को मजबूत बनाने के लिए दो प्रकार की धातुओं को मिलाया जाता है। मैंगनीज, टिन, टंगस्टन, निकल, क्रोमियम आदि लोह-धातुएँ (Ferrous Metals) तथा ताँबा, जस्ता, शीशा, अलूमीनियम, सुरमा, थोरियम, वेनेडियम और मॉलीबिडनम आदि अलोह-धातुएँ (Non-Ferrous Metals) आदि। इनके मिलाने से इस्पात में जग नहीं लगता और वह काफी मजबूत हो जाता है। इस प्रकार के मिश्रित इस्पात (Ferro-Alloys) विशेषकर एंजिनों के बॉयलर, बर्तन, मशीनें तथा तेज धार वाले औजार बनाने के काम मे आते हैं। इस्पात बनाने मे मुख्यतया इन धातुओं का प्रयोग किया जाता है :—[1]

1. *Jones and Drakenwald*, **Economic Geogrphy, p.** 382; and *Smith, Phillips and Smith*, **Industrial Geography, p.** 350.

(१) यहाँ के निवासी बुरी जलवायु तथा घातक ज्वर के कारण सुस्त तथा अकर्मण्य हैं। मृत्यु का औसत घना है।

(२) यहाँ की अवनति के कारणों में राष्ट्रीयता का अभाव भी है। एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त वालों को बुरा भला कहते हैं। राज्य प्रबन्ध की निर्बलता और सरकार की अस्थिरता यहाँ की उन्नति में बाधा डालती है। यहाँ के राज्यों में क्रान्तियाँ बहुधा हुआ करती हैं। लोगों की जान माल सुरक्षित नहीं है। इसी कारण विदेशी भी पूँजी लगाने में हिचकते हैं और देश निर्धन है ही।

(३) आवागमन की कठिनाइयाँ हैं सड़कें खराब है, और रेलों का विकास नही हो सकता है।

(४) दक्षिण अमेरिका मे अन्य सभी उपयोगी खनिज पदार्थों के होते हुए भी कोयले की कमी है। यहाँ की चट्टानें बहुत पुरानी नही है और उनकी परतें भी नवीन है। पीरू और चिली मे अच्छी श्रेणी के कोयले की कुछ खानें हैं। कोयले की कमी के कारण यहाँ के निवासी खेती तथा पशु सम्बन्धी कार्यों मे लगे है। पीरू, वेनेजुएला अर्जेन्टाइना, इक्वेडोर, कोलम्बिया मे तेल निकल आने के कारण देश मे उद्योग-धन्धों की उन्नति हो रही है। यहाँ की नदियों और झरनों की अधिकता के कारण काफी जल शक्ति भी मिल सकती है परन्तु यहाँ पर मजदूरो की कमी के कारण व्यय अधिक पड़ता है।

(५) दक्षिण मे अमरीका में कच्ची वस्तुओ की उपज अधिकतर होती है और ये वस्तुएँ निर्यात के लिए ही होती है। यहाँ की उपज का ६० प्रतिशत से भी अधिक भाग यूरोप को भेजा जाता है। फलतः जब कभी यूरोप की माँग युद्ध अथवा अन्य कारणो से कम हो जाती है तो यहाँ के लोगों को बडी हानि उठानी पड़ती है।

दक्षिणी अमेरिका मे उद्योगो का विकास बहुत कम हुआ है। जो कुछ भी विकास हो पाया है वह मुख्यतः ब्राजील और अर्जेन्टाइना देशों मे हुआ है। यहाँ ऐसे उद्योग पनपे हैं जिनमें, (१) स्थानीय कच्चे माल का अधिक उपयोग किया जाता है (२) कोयले का उपभोग बहुत कम होता है, (३) अधिक यान्त्रिक और वैज्ञानिक ज्ञान वाले श्रमिको की आवश्यकता नही पड़ती, और (४) जो विशेषतः स्थानीय माँग की पूर्ति करते हैं। अतः यहाँ के मुख्य उद्योग कृषि की पैदावारों से ही सम्बन्धित हैं। अर्जेन्टाइना में जल विद्युत और कोयले की कमी से माँस का उद्योग, आटा पीसने, खेती के यंत्र बनाने, मोटरें तथा सूती कपडे के उद्योग पाये जाते हैं। ये अधिकतर ब्यूनस आयरस और उसके निकटवर्ती केन्द्रों में ही स्थापित हैं। अर्जेनटाइना की तुलना मे ब्राजील में जल विद्युत शक्ति भी अधिक है माँग भी पर्याप्त है, अतः यहाँ उद्योग-धन्धों की विविधता पाई जाती है। मुख्य उद्योग सूती और जूट के वस्त्र, रसायन तथा हल्के उद्योग हैं।

अफ्रीका संघ के औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Regions of S. Africa)

अफ्रीका की औद्योगिक उन्नति को निम्न बाधायें रही हैं :—

(१) वस्तुओ को लाने और ले जाने के लिए अच्छे मार्गों की कमी और अधिक व्यय के कारण अफ्रीका के भीतरी भागों से व्यापार में बाधा पड़ती है। यद्यपि

सामान्यतया बेसेमर क्रिया उन कच्चे लोहों के लिये उपयुक्त होती है जिनमे फास्फोरस बिल्कुल नही या बहुत ही थोडा होता है।[2] इस क्रिया से तैयार होने वाला इस्पात बहुधा रेल की पटरियो, पुल और जहाज की चादरें बनाने के काम मे आता है। इस क्रिया द्वारा इस्पात उत्पादन जर्मनी मे अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। इस क्रिया का आविष्कार सन् १८५५ मे सर हेनरी बेसेमर ने किया था। बेसेमर विधि दो प्रकार की होती है। अम्लीय (Acid) विधि, जिसमे बालू और स्पीगल (Spiegel) दोनो ही गली धातु में मिलाये जाते है। भास्मिक विधि (Basic) जिसमे गली धातु में चूना और फास्फोरस दोनों ही मिलाये जाते है।

(ii) **सीमेंस मार्टिन की खुली अंगीठी वाली क्रिया** (Siemens Martin's Open Hearth Process)—यह इस्पात बनाने की आधुनिक विधि है। इस विधि में खुली भट्टी मे चूने या मैगनीशियम का लेप किया जाता है और ढला हुआ लोहा किसी बर्तन मे भर दिया जाता है और उसके ऊपर गर्म हवा और गैस की लौ पहुँचाई जाती है। ऐसा तब तक करते है जब तक अनावश्यक कार्बन की मात्रा उसमें से न निकल जाय। जब सब अशुद्धियाँ जल कर नष्ट हो जाती है तो अन्य धातुएँ उसमे मिला दी जाती हैं और पिघले हुये इस्पात को साँचे मे ढाल कर ठंडा कर लिया जाता है जिससे इस्पात बहुत अच्छा और मजबूत बन जाता है। यह खुली अँगीठी का इस्पात कहलाता है। ब्रिटेन और जर्मनी मे इस प्रकार का इस्पात अधिक बनाया जाता है। सामान्यतया यह विधि मध्यम श्रेणी का कच्चा लोहा बनाने के लिये उपयुक्त होती है।

(iii) **मिश्रित विधि** (Mixed Process)—इस विधि का आजकल बहुत कम उपयोग होता है। यह उपरोक्त दोनों ही विधियो का मिश्रण है।

(iv) **कटोरी पात्र विधि** (Crucible Process)—इस विधि का आविष्कार शैफील्ड के एक घडीसाज ने किया था। इस विधि के अनुसार एक बडी कटोरी मे लोहा पिघला कर उसमे चूना और दूसरी वस्तुएँ आवश्यक मात्रा मे मिला कर इस्पात बनाया जाता है।

(v) **विद्युत भट्टी प्रणाली** (Electric Furnace Process)—जहाँ विद्युत उत्पादन सस्ता होता है या जिन क्रियाओ के लिये बहुत ऊँचे तापक्रम की आवश्यकता होती है वहाँ इस प्रणाली का उपयोग होता है। ये भट्टियाँ दो प्रकार की होती हैं—

(क) **विद्युत चाप भट्टी** (Electric Arc Furnace)—इसमें कार्बन के दो ध्रुवों द्वारा ३०,००० सैन्टीग्रेड तक तापक्रम उत्पन्न किया जाता है।

(ख) **विद्युत प्रतिबन्ध भट्टी** (Electric Resistance Furnace)—इसमे विद्युत चक्र मे बाधा डाल कर उसमें गर्मी उत्पन्न की जाती है।

यह विधि नयी है और आधुनिक काल मे इसका प्रयोग इस्पात बनाने के लिये किया जाता है किन्तु इसके दो दोष हैं। एक तो यह विधि बहुत व्ययसाध्य है और दूसरे इसमे विद्युत की मात्रा भी अधिक खर्च होती है। इस विधि मे विद्युत भट्टी मे लोहा गला कर अन्य धातुएँ आवश्यकतानुसार मिला कर अच्छा इस्पात बनाया जाता

2. *Jones und Drakenwald*, **Ibid, p. 441.**

ही हैं, अतः इन्हें भी अपने पूर्वजों की तरह यांत्रिक ज्ञान और औद्योगिक व्यवस्था का अनुभव है। यहाँ के अधिकांश धन्धे खेती की पैदावार से ही सम्बन्धित हैं—विशेषकर भोज्य पदार्थ बनाने के। आटा पीसना, शक्कर बनाना, फलों का संरक्षण और डिब्बों मे बन्द करना, माँस तैयार करना तथा मक्खन और पनीर बनाना आदि यहाँ के प्रमुख उद्योग हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ लकड़ी चीरने, मेज-कुर्सी बनाने, धातुओं को साफ करने, ऊन का धागा व कपड़ा बनाने, लोहा, इस्पात और अनेक प्रकार की मशीनें बनाने के भी कई कारखाने द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् स्थापित हो चुके हैं। न्यूकैसिल और पोर्ट कैम्बला में लोहा गलाने और खेती की मशीनें बनाने के कारखाने हैं। न्यूजीलैंड में क्राइस्ट चर्च मे जूते और चमड़े का सामान बनाया जाता है।

उपरोक्त वर्णन से यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि औद्योगिक विकास मुख्यतः उत्तरी अटलांटिक महासागर के तटवर्ती पूर्वी और पश्चिमी भागों में—पश्चिमी यूरोपीय देश-ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम और रूस तथा उत्तरी पूर्वी अमेरिका-मे ही हुआ है। विश्व के अन्य भाग अभी औद्योगिक प्रगति में पिछड़े हुए ही कहे जा सकते हैं।

एल० डी० विधि

(क) **परिवर्तक और आक्सीजन धौंकनी**—एल० डी० परिवर्तक गोलाकार पेंदे का, छोटे मुँह वाला बड़ा ढोल होता है। इसी मे पिघले हुए लोहे को इस्पात बनाया जाता है। ताप या गर्मी को बनाए रखने के लिए ही इसका मुह छोटा रखा जाता है। परिवर्तक की दीवारों पर भीतर की ओर, मैगनेसाइट (मैगनेशियम का कार्बोनेट) की ईटों, चिकनी मिट्टी (टैम्पिगक्ले) और डोलोमाइट (कैल्शियम और मैगनिशियम का कार्बोनेट) तथा कोलतार की ईंटों की तह चढ़ाई जाती हैं। परिवर्तक के पेंदे और दीवारो के उस भाग मे जहाँ रासायनिक क्रिया होती है, तापसह ईंटों की एक और तह चढाई जाती है। आक्सीजन धौंकनी से परिवर्तन मे सीधी नीचे की ओर धौंकी जाती है। धौंकनी का मुंह तांबे का होता है। धौंकनी को अधिक गरम होने से बचाने के लिये ठढे पानी के नलों की व्यवस्था रहती है। यदि धौंकन के किसी छिद्र से आक्सीजन निकलने लगे, तो तुरन्त दूसरी धौंकनी काम मे लाई जा सकती है। इसके लिये एक अतिरिक्त धौंकनी रहती है, जिसका सम्बन्ध आक्सीजन और ठंढे पानी के नलों से रहता है।

(ख) **प्रक्रिया**—परिवर्तक को कुछ भुकाया जाता है और इसमें पहले इस्पात के हल्के बेकार टुकड़े और बाद में भारी टुकड़े डाले जाते हैं। इसके बाद पिघला हुआ लोहा डाला जाता है और परिवर्तक को फिर सीधा कर दिया जाता है। इसके बाद धौंकनी के मुँह को भुकाकर पिघले हुए ढलवाँ लोहे की सतह से लगभग १ मीटर की दूरी पर लाया जाता है और वायुमण्डल के दबाव के ८ गुने से १० गुने दबाव पर आक्सीजन धौंकी जाती है। आक्सीजन ६,००० एन० सी० एम० से ७,००० एन० सी० एम० प्रति घटे के हिसाब से धौंकी जाती है। कचरा (स्लैग) जल्दी अलग करने के लिये और बाद मे ताप को नियंत्रित रखने के लिए थोड़ी-थोड़ी देर पर परिवर्तक में चूना डाला जाता है।

(ग) **रासायनिक क्रिया**—आक्सीजन के सम्पर्क मे आने से धौंकनी के मुँह के ठीक नीचे द्रव मे बहुत तेज क्रिया शुरू हो जाती है। इस स्थान पर लगभग २,५००° सेंटीग्रेड तापमान हो जाता है और यहाँ का लोहा बहुत शीघ्र कार्बन अलग हो जाने के कारण इस्पात बन जाता है। इस प्रकार शोधित इस्पात अधिक भारी होने के कारण नीचे बैठ जाता है और परिवर्तक की दीवारों की ओर जाता है। धौंकनी के मुँह के नीचे के स्थान के ताप और दीवारों के तापमान मे बहुत अतर होने के कारण और जिस तेजी से अधिक गर्मी पाकर लोहा इस्पात मे परिवर्तित होता है, उससे गरम पिघली धातु मे गहरी खलबली मच जाती है जो तभी धीमी पड़ती है जब सारा लोहा, इस्पात हो जाता है और कार्बन अलग करने के लिए आक्सीजन धौंकने की आवश्यकता नही रहती।

(घ) **तैयार इस्पात**—इस विधि से तैयार इस्पात मे आक्सीजन और अन्य गैस बहुत कम होती हैं।-९९.४ प्रतिशत शुद्ध आक्सीजन प्रयोग करने पर नाइट्रोजन केवल ०.००४ से ०.००६ प्रतिशत तक रह जाती है। अधिक शुद्ध आक्सीजन इस्तेमाल करने से नाइट्रोजन और भी कम की जा सकती है। इस इस्पात मे फास्फोरस और गधक भी बहुत कम होते हैं।

पिघले लोहे के इस्पात होने के दौरान अधिकाश गधक सल्फर डाई-आक्साइड गैस (गंधक का डाइ-आक्साइड) बनाकर उड़ जाती है। इस विधि से बने इस्पात में

५

पदार्थ	१ टन इस्पात बनाने में उपभोग की मात्रा
ब्लास्ट फरनेस फ्लक्स	०·५०६ टन
खुली भट्ठी के लिए फ्लक्स	०·०५७ ,,
फैरी-एलॉय	०·०१७ ,,
डोलोमाइट	०·०६० ,,
मैगनेसाइट	०·००६ ,,
अग्नि प्रतिरोधक मिट्टियाँ	०·०२६ ,,
अन्य मिट्टियाँ	०·०१३ ,,
स्टीम कोयला	०·०६५ ,,

मोटे तौर पर टैरिफ बोर्ड (Tariff Board) के अनुमानानुसार यह कहा जा सकता है कि १ टन परिष्कृत इस्पात के लिए २ टन कच्ची धातु, १½ टन कोकिंग कोयला और १½ टन अन्य कच्चे माल की आवश्यकता पड़ती है। इसी प्रकार १ टन पिग आयरन बनाने में १½ टन कच्ची धातु और १½ टन कोकिंग कोयला चाहिये। इसके अतिरिक्त अन्य कई पदार्थ (Flux) धातु शोधन के लिए आवश्यक है। चूंकि भारी पदार्थों में कच्चा लोहा, कोयला और चूना मुख्य हैं अतएव उत्तम माल को तैयार करने के लिए अनावश्यक रूप से उत्पादन का मूल्य बढ़ाये बिना इन भारी पदार्थों को अधिक दूर तक नहीं ले जाया जा सकता। अतएव कोयले की खानों के निकट ही लोहे का उद्योग स्थापित किया जाता है। यदि चूने की चट्टान और लोहा एक ही स्थान में मिलते हैं तो अन्य लाभ मिलने के कारण कभी-कभी लोहे की खानों के समीप ही बाहर से कोयला मँगाकर उद्योग स्थापित कर दिया जाता है। किन्तु साधारण दशा में कोयले के क्षेत्रों पर ही कच्चे लोहे को ले जाया जाता है क्योंकि कोयला कच्चे लोहे से अधिक भारी होता है और इधर-उधर ले जाने में कच्चे लोहे की अपेक्षा अधिक मँहगा पड़ता है, इसी कारण संयुक्त राज्य अमेरिका में बर्मिंघम के कारखाने, इंगलैंड में साऊथ वेल्स के कारखाने और भारत में जमशेदपुर का कारखाना प्रायः सभी कोयले की खानों के निकट ही स्थापित किये गये हैं।

(२) **सस्ती भूमि और स्वच्छ जल की अधिकता**—लोहे के कारखानों में इतनी बड़ी-बड़ी और भारी मशीनों का प्रयोग किया जाता है कि उसके लिए बहुत अधिक भूमि की आवश्यकता होती है—भूमि के अतिरिक्त इस उद्योग के लिए अधिक पानी की भी आवश्यकता होती है। लोहे को ठंडा करने, गैस की धुलाई करने, भाप बनाने आदि कामों में अधिक जल की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि लोहे के बड़े-बड़े कारखाने प्रायः झीलों अथवा नदियों के किनारे ही स्थापित किये जाते हैं।

(३) **यातायात के साधनों की सुविधा**— लोहे और कोयले जैसे पदार्थों के इधर-उधर ले जाने को सस्ते यातायात के साधनों की आवश्यकता होती है क्योंकि यदि यह साधन सस्ते न होंगे तो निम्न कोटि के धातु के मूल्य के बढ़ जाने की सम्भावना हो सकती है। इस उद्योग में पूर्णतया अथवा कुछ अंश तक ही जल मार्गों

विश्व उत्पादन का लगभग १७% प्राप्त किया जाता है। ब्रिटेन ७½%,फ्रास ५%, जर्मनी ८ प्रतिशत आदि देश ससार का ⅓ इस्पात बनाते हैं। इन तीनो क्षेत्र के अतिरिक्त १० प्रतिशत इस्पात जापान, भारत, चीन, आस्ट्रेलिया तथा द० अफ्रीका से प्राप्त होता है।

१९५१ मे ढले लोहे का उत्पादन १२५७ लाख टन था। यह उत्पादन १९३७ की अपेक्षा ४२ प्रतिशत अधिक था। इसी प्रकार १९५१ मे १७८० लाख टन इस्पात बनाया गया, जो १९३७ के उत्पादन से ५१ प्रतिशत अधिक था। सन् १९६१ में २६४६ लाख टन ढला लोहा और ३५९७ लाख टन इस्पात तैयार हुआ था। नीचे की तालिका मे विश्व के प्रमुख देशो में इस्पात का उत्पादन बताया गया है :—

विश्व के प्रमुख देशो मे इस्पात का उत्पादन और क्षमता[3]

देश	उत्पादन		क्षमता	
	(००० मैट्रिक टनो मे)			
	१९५८	१९५९	१९६०	१९६५
द० अफ्रीका	१,८३६	१,८९४	२,२००	३,६००
मुख्य चीन	८,०००	१३,३५७	१८,४००	३५,०००
जापान	१२,११८	१६,६२९	२०,०००	२६,०००
भारत	१,८३९	२,३८०	३,२००	१०,०००
आस्ट्रेलिया	२,६१६	३,६६७	३,७५०	५,०००
ब्राजील	१,६५९	८६६	२,१९४	४,३००
स० राज्य अमेरिका	७७,३४३	८४,७७३	१३४,८००	१४५,०००
कनाडा	३,९३६	५,३७६	६,०००	९,०००
रूस	५४,८६८	५९,९१६	६४,९२०	९१,०००
इगलैड	१९,८८०	२०,५११	२५,५००	३२,०००
पूर्वी यूरोपीय देश	१७,३९४	१९,३८७	२१,१४५	२९,६७२
विश्व का योग	२७०,७६६	३०५,४४३	३६१,६७९	५०४,८३२

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि पश्चिमी यूरोप और स० राज्य दोनो मिल कर विश्व के इस्पात के उत्पादन का लगभग ६०% देते है।

इस्पात के उत्पादन में वृद्धि होने के साथ उसके उपभोग मे भी बडी वृद्धि हुई है। १९३६-३८ की तुलना मे १९५७ मे उपभोग की यह वृद्धि स० राज्य मे १५० प्रतिशत, ब्रिटेन मे ७१ प्रतिशत, जापान मे ३० प्रतिशत, इटली मे १४८ प्रतिशत, और कनाडा मे १९५ प्रतिशत हुई है।

3. *Indian Minerals*, April 1961, Vol. 15., No.2, pp. 159-162.

धातु	उपयोग का हेतु	सामान जो बनाया जाता है
क्रोमियम	थोडी मात्रा मे लोहे को कड़ा करने और जग रहित बनाने में।	मशीनों के पुर्जे, यंत्र, औजार, स्टेनलेस स्टील,अम्ल प्रतिरोधक स्टील
ताँबा	जंग लगने से बचाता है।	चादरें
सीसा	टिन के साथ मिला कर जंग से बचाने के लिए रोगन किया जाता है; इस्पात के साथ मिला कर उसे मशीनें बनाने योग्य बनाया जाता है।	चादरें बनाने, मोटर गाड़ियाँ, गैसोलीन, टेंक, मशीनों के पुर्जे।
मैंगनीज	१ से २% मिला कर गैसें दूर की जाती हैं; धातु की मजबूती और ठोसपन बढाने, जंग से बचाने में।	रेलें बनाने, मशीनों के पुर्जे (Frog, Switches and dredge, bucket teeth)
मॉलीबिडनम	धक्के-प्रतिरोधक, मजबूती आदि के लिए।	औजार मशीनों के पुर्जे।
रांगा	मजबूती और कड़ाई बढाने तथा अग्नि और अम्ल-प्रतिरोधक बनाने मे।	औजार, मशीनों के पुर्जे, स्टेनलेस स्टील, अन्य अग्नि प्रतिरोधक इस्पात।
टिन	इस्पात पर जंग प्रतिरोधक रोगन करने में।	बर्तन तथा गुसलखाने के उपकरण बनाने (Sanitary Wares) में।
टंगस्टन	अत्यधिक तापक्रम पर भी लोहे को कठोर और मज,-बूत बनाने में।	चुम्बक, काटने के तीखे औजार बनाने मे।
वैनेडियम	लोहे को मजबूत बनाने में।	औजार, पुर्जे आदि।
जस्ता	इस्पात पर रोगन करने में	बाल्टियाँ, काँटेदार तार, गैलवैनाइज्ड चादरें आदि।

इस्पात बनाने की विधियाँ

कच्चे लोहे से इस्पात बनाने के लिए निम्न प्रकार की क्रियायें काम में ली जाती है :—

(i) बैसेमर प्रणाली (Bessemer Process)—इस प्रणाली में ढले हुये लोहे को एक सुराईदार बर्तन मे रख कर इस बर्तन में की हवा को बड़ी तेजी के साथ फूंका जाता है। इस विधि मे प्रयुक्त होने वाले बर्तन को बैसेमर परिवर्तक (Bessemer Convertor) कहते हैं। बर्तन में अन्दर फूंकी जाने वाली हवा मे वर्तमान आक्सीजन ढले लोहे की अशुद्धताओं को गला डालती है। इसके बाद उस लोहे मे उचित मात्रा मे कार्बन और फैरो-मैंगनीज आदि धातुएँ मिला दी जाती हैं।

सभी देशो मे इस्पात के उपयोग के बढ जाने का मुख्य कारण इंजीनियरिंग उद्योगो का विकास होना है। उदाहरण के लिए १९४८ और १९५६ के बीच भारत चिली, ब्राजील, अर्जेन्टाइना, कोलबिया और मैक्सिको में इस उद्योग का उत्पादन ६०% बढ़ गया।

१. उत्तरी अमेरिका का लोहे और इस्पात का उद्योग

उत्तरी अमेरिका मे लोहे और इस्पात का उद्योग सन् १६४४ से आरम्भ हुआ जबकि मैसेचूसेट्स मे पहला कारखाना खोला गया। इसमे लकडी का कोयला जलाया जाता था और इसकी साप्ताहिक उत्पादन क्षमता ७ टन की थी। यहाँ ढला लोहा बनाया जाता था। किन्तु उद्योग का वास्तविक विकास सन् १८४० के बाद हुआ जब स्यूलकिल घाटी मे तथा पेन्सिलवेनिया के कोल-क्षेत्रो मे इसका स्थापन हुआ। किन्तु कई कारणों से इस उद्योग का विस्तार पश्चिमी अपलेशियन भागो मे अधिक हुआ।

यहाँ अपलेशियन कोयला क्षेत्र मिलते हैं जो पश्चिमी पेन्सिलवेनिया से लगाकर पूर्वी कैन्टकी तथा उत्तरी अलबामा तक फैले है। यहाँ बिटुमीनिस कोयला मिलता है। (२) सुपीरियर झील के चारो ओर करोडों टन उत्तम श्रेणी का कच्चा लोहा मिलता है। इस क्षेत्र मे से निकाले गये प्रति ५ टन लोहे मे से ३ टन इसी क्षेत्र को लाया जाता है।[४] (३) इन दोनों सुविधाओ के अतिरिक्त झील-मार्गों से सस्ते यातायात की सुविधायें उपलब्ध है जिससे भारी माल कम खर्च मे इस्पात-केन्द्रों तक भेजा जा सकता है। (४) झीलो के दक्षिण और पूर्व मे पर्याप्त मैदान विस्तृत हैं जहाँ खेती की जाती है और जहाँ खेती के उपयोगी यंत्रो की बड़ी माँग है। (५) इन मैदानों के नीचे पैट्रोल और प्राकृतिक गैस के भडार जमे हैं। इस प्रकार की सुविधायें विश्व के किसी भी एक देश मे नही पाई जाती। अत इस भाग मे विश्व की सबसे अधिक इस्पात-उत्पादन की क्षमता उस क्षेत्र मे पाई जाती है जिसके तीन विन्दु पिट्सबर्ग, शिकागो और बफैलो हैं।

सयुक्त राज्य के मध्य-पश्चिमी भाग मे इस्पात के मुख्य क्षेत्र ये हैं :—

(i) उत्तरी अपलेशियन या पिट्सबर्ग क्षेत्र (North Appalachian or Pittsburg Region)

(ii) झीलों का प्रदेश (Lake Region)

(iii) अटलांटिक तटीय प्रदेश (Atlantic Coast Region)

(iv) दक्षिणी अपेलेशियन प्रदेश (Southern Appalachian Region)

नीचे की तालिका मे सयुक्त राज्य के विभिन्न भागों मे लोहे और इस्पात की उत्पादन क्षमता बताई गई है :—

संयुक्त राज्य अमेरिका में लोहे और इस्पात के बनाने की शक्ति
(लाख टन में)

	पिग आयरन	इस्पात
पिट्सबर्ग-यंग्स टाऊन	२९१	४६७
इरी झील	१४२	१९०

4. *Brigham*, **Commercial Geography**, p. 67.

है। इस विधि का अधिकतर प्रयोग इटली, नार्वे, स्वीडेन में इङ्गलैण्ड, फ्रास, जर्मनी, आस्ट्रेलिया, बेल्जियम, स्विटजरलैण्ड और स्पेन में किया जाता है।

(vi) **थामस-गिल काइस्ट विधि** (Thomas-Gilchrist Method)—१९वी शताब्दी मे लोहे और इस्पात बनाने मे एक नया आविष्कार इंगलैण्ड मे थोमस और गिलक्राइस्ट दृय वैज्ञानिकों द्वारा किया गया। इसके अनुसार उस अयस का—जिसमें फास्फोरस की मात्रा अधिक होती है—उपयोग भी इस्पात बनाने के लिये किया जा सकता है। इस विधि के बैसेमर परिवर्तक (Convertor) की दीवारों पर चूने की पुताई की जाती है जो फासफोरस की अतिरिक्त मात्रा को सोख लेती है। इस आविष्कार के फलस्वरूप जर्मनी के लोरेन क्षेत्र का उपयोग इस्पात बनाने के लिये होने लगा। अब इसी विधि द्वारा जर्मनी, ग्रेट ब्रिटेन तथा स० राज्य में भी इस्पात बनाया जाता है।

एल० डी० विधि से इस्पात का उत्पादन (L. D. process)

सन् १९४९ में आस्ट्रिया की वोएस्ट कम्पनी ने अपने लिज के कारखाने का उत्पादन २½ गुना बढ़ाने का निश्चय किया। ये ऐसी विधि निकालना चाहते थे, जिसमे इस्पात की कतरनें भी ज्यादा न लगें। साथ ही, इस्पात पिंड भी ऐसे हों, जिनसे पत्तियाँ या कम चौड़ी चादरे आसानी से तैयार की जा सकें।

इसके लिये जो प्रयोग किये गये उनमें खुली भट्टियो मे आक्सीजन धौंकने के प्रयोगों से उत्पादन कुछ बढ़ा। पर इस तरीके से इस्पात पिंड तैयार करने मे भट्टी की छत और दीवारो में बहुत छीजन हुई।

इससे पहले सन् १९३९-३६ में श्री एल० लेलेप और सर्वश्री सी० वी० श्वार्ज तथा आर० ड्यूरर ने भी अधिक इस्पात बनाने की विधि निकालने के लिये अलग-अलग प्रयोग किये थे। इन प्रयोगों से पता चला कि यदि पिघले हुए ढलवाँ लोहे की सतह पर ध्वनि की गति से तेजी से आक्सीजन धौंकी जाय तो कार्बन बहुत जल्दी अलग हो जाती है।

श्री ड्यूरर के जोर देने पर वोएस्ट कम्पनी के प्रबन्धको ने बड़े पैमाने पर इस विधि की आजमाइश करने का निश्चय किया।

पहले २ टन के परिवर्तक (कन्वर्टर) मे प्रयोग किये गए। बाद में १५ टन के परिवर्तक में इसे आजमाया गया। ये परीक्षण बहुत सफल रहे और वोएस्ट कम्पनी के प्रबन्धकों ने इस विधि से इस्पात पिंड बनाने का निश्चय किया और इस प्रकार नवम्बर सन् १९५२ मे पहला एल० डी० परिवर्तक (कन्वर्टर) चालू हुआ। बाद के प्रयोगों से यह भी स्पष्ट हो गया कि इस विधि से हर प्रकार का इस्पात तैयार किया जा सकता है। यह विधि इतनी पसन्द की गई कि इस समय १६ स्थानों पर ऐसे ३४ परिवर्तक काम कर रहे हैं जिनकी उत्पादन क्षमता ८७ लाख ८० हजार टन है। २३ स्थानों पर ४३ एल० डी० परिवर्तक और लगाये जा रहे है। इनके अलावा २६ स्थानों पर ४६ और एल० डी० परिवर्तक लगाने की योजना तैयार की जा रही है।

(३) चूँकि झीलें दिसम्बर से अप्रैल तक बर्फ से ढकी रहती हैं, अतः यातायात में असुविधा हो जाती है, फलत कई कारखानों को सर्दी के लिये भी कच्चा लोहा जमा रखना पडता है।

(४) कई कारखानों की मशीनें व यंत्र आदि भी पुराने पड गए हैं तथा कइयों के निकट भूमि का अभाव होने से उनके विस्तार में बाधा पडती है।

अत. कई पुराने कारखाने अब बंद प्राय हो गये हैं। इस क्षेत्र का उत्पादन १९४१-५४ के बीच केवल २०% तक ही बढा है जब कि सम्पूर्ण संयुक्त राज्य मे यह वृद्धि ५५% तक हुई है। इसी बीच झील प्रदेशो की उत्पादन क्षमता २ गुनी और शिकागो गैरी की ५०% बढी।

इस प्रदेश का मुख्य केन्द्र पिट्सबर्ग है किन्तु उसके चारों ओर कई अन्य केन्द्र भी स्थापित हो गये हैं। जैसे—

उद्योग	केन्द्र
पिट्सबर्ग के निकट	मैकीजपोर्ट, ब्रैडॉक, कारनेगी, हॉमस्टैड और जॉन्सटाऊन।
शैननगो घाटी मे	शैरोन।
महोनिंग घाटी मे	यंगस्टाऊन, कैंटन, मैसीलन।
ओहियो घाटी मे	वीवस्टन, वीलिंग, स्टूबैनविले, हटिंगटन, ऐशलैंड, आयरनटन, पोर्टसमाउथ।
मियामी घाटी मे	मिडिलटाऊन।

इन सभी केन्द्रो मे भारी वस्तुएँ बनाई जाती है।

(iii) **बड़ी झीलों के प्रदेश (Great Lake Districts)**—यह सयुक्त राज्य के इस्पात उद्योग का प्रमुख क्षेत्र है जो ईरी, मिशीगन और सुपीरियर झीलो के सहारे फैला है। इन क्षेत्रो मे इस उद्योग के स्थानीयकरण का मुख्य कारण जल यातायात की सस्ती और उन्नत सुविधायें हैं। झील मार्गों द्वारा कच्चा माल आसानी से इकट्ठा किया जा सकता है और तैयार माल देश के भीतरी भागो मे वितरित किया जा सकता है। इस क्षेत्र के तीन भाग है :—

(क) **ईरी क्षेत्र (Eri Region)**—बफैलो से टोलडो और डिट्रायट तक फैला है। इस क्षेत्र को (१) पेंसिलवेनिया रियासत से काफी कोयला मिल जाता है। बफैलो जिलो को न्यागरा प्रपात की सस्ती बिजली का भी लाभ प्राप्त है। (२) चूना ईरी झील के द्वीपो अथवा ह्यूरन झील के पश्चिमी भागो मे मिल जाता है। (३) कच्चा लोहा मैसाबी की खानो से प्राप्त हो जाता है। (४) कारखानो के लिए जल झीलो से मिल जाता है। (५) इस क्षेत्र को सस्ते जलमार्ग, रेलों और सडकों की सुविधाएँ प्राप्त हैं। (६) इस प्रदेश से बने माल की माँग भी बहुत है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र ईरी, डिट्रायट, लोरेन, टोलडो और क्लीवलैंड हैं।

(ख) **मिशीगन क्षेत्र (Michigan Region) या शिकागो-गैरी क्षेत्र (Chicago-Gary Region)**—इस क्षेत्र को चूना और लोहा मिशीगन झील मार्ग द्वारा ह्यूरन झील के पश्चिमी किनारों तथा मिशीगन झील के पूर्वी किनारो और लोहा उत्तरी भागो (वयूवा और गोगेबिन) से मिल जाता है। उत्तरी और मध्यवर्ती

कार्बन का अंश प्राय: कम होता है। पर हाल के कुछ प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि परिवर्तक की रासायनिक क्रिया को नियंत्रित करके अधिक कार्बनयुक्त-इस्पात तैयार किया जा सकता है। इस इस्पात मे सीसा, जस्ता आदि हानिकारक तत्व नहीं होते क्योंकि इसे बनाने मे इस्पात की कतरनें बहुत कम काम में लाई जाती हैं और अधिक लोहा ही होता है।

एल० डी० विधि के लाभ—खुली भट्टी और बेसिमर परिवर्तक मे इस्पात बनाने की पुरानी विधियों से एल० डी० विधि उत्तम साबित हुई है। इस विधि से बने इस्पात को ठंड और गरम दोनों तरह से बेलकर चादरें बनाई जा सकती हैं। इस विधि से इस्पात बनाने मे खर्च भी कम पड़ता है। एल० डी० परिवर्तक का नकशा और आकार बड़ा सादा होता है। यह जगह भी ज्यादा नहीं घेरता और इसे कम कारीगर आसानी से चला सकते हैं। साथ ही इसे बनाने और लगाने पर लागत भी कम आती है। अन्य विधियों की अपेक्षा इसमें ताप की भी कम आवश्यकता होती है। १ टन इस्पात बनाने के लिए लगभग ६० घनमीटर आक्सीजन की जरूरत होती है। यह आक्सीजन २३/४ लाख थर्म (ताप मात्रा) के बराबर होती है। जबकि खुली भट्टी की विधि से १ टन इस्पात पिंड तैयार करने मे १० लाख थर्म से १२ लाख थर्म ताप की आवश्यकता होती है। एल० डी० विधि में रासायनिक क्रिया के दौरान बहुत कम इस्पात उफन कर बाहर गिर पाता है। अत: उत्पादन अधिक होता है। परिवर्तक के मुँह से बाहर निकलने वाली लपटों की चमक और आकार से रासायनिक क्रिया की गति का पता चलता रहता है। लपट निकलना बंद हो जाने का अर्थ होता है कि क्रिया पूरी हो गई है और इस्पात तैयार हो गया है। इसके बाद धौंकनी हटा ली जाती है और इस्पात आसानी से निकाल लिया जाता है। एल० डी० परिवर्तक में क्रिया इतनी तेजी से होती है कि १ मिनट मे १ टन इस्पात बन जाता है। परिवर्तक की देखभाल और मरम्मत आदि भी बहुत सरल है। प्राय: हर सप्ताह कोलतार और डोलोमाइट की ईंटो की तह बदली जाती है। परिवर्तक के पेंदे में छीजन नहीं होती अत: इसमें दुबारा ताप-सह ईंटें लगाने की जरूरत नहीं पड़ती। परिवर्तक को ठंडा करने, नई ईंटें लगाने और पिघला हुआ ढलवां लोहा डालने से पहले इसे निश्चित मात्रा तक तपाने का काम यदि तीन पारियों में काम किया जाए तो चार दिन में पूरा हो जाता है। ३० टन के परिवर्तन में इस्पात के २७०० घान तैयार करने के बाद कोलतार और डोलोमाइट की ईंटें बदलनी पड़ती हैं। इसमें १ टन बनाने मे ५ किलोग्राम से कम ईंटों का औसत पड़ता है। इस विधि से इस्पात तैयार करने मे खुली भट्टी से लगभग तिहाई खर्च आता है।

इस्पात उत्पादन के क्षेत्र

विश्व का अधिकांश इस्पात केवल उन दो बड़े क्षेत्रों से प्राप्त होता है जो उत्तरी अटलांटिक महासागर के पश्चिमी और पूर्वी भागों में केन्द्रित हैं। पश्चिम की ओर के मुख्य क्षेत्र सं० राज्य अमेरिका में मध्य अटलांटिक तट से लगा कर शिकागो और सैन्ट लुई तक फैले हैं। यही अमेरिका इस्पात हृदय (Steel-Core) है। पूर्व की ओर का क्षेत्र पश्चिमी यूरोप में ब्रिटेन से लगा कर फ्रांस, स्पेन, जर्मनी और रूस तक फैला है।

विश्व में सबसे अधिक इस्पात सयुक्त राज्य अमेरिका में तैयार किया जाता है—लगभग ४०%। रूस इस्पात तैयार करने में दूसरे नम्बर का देश है। यहाँ से

(३) अधिकांश कच्चा लोहा क्यूबा, चिली, ब्राजील, वैनेजुएला, स्वीडेन, स्पेन तथा अल्जीरिया से सुगमतापूर्वक मंगाया जाता है।

(४) निकटस्थ सघन वनों से लकड़ी का कोयला और तेज बहने वाली नदियों से शक्ति प्राप्त की जाती है।

(५) सघन जनसख्या व व्यवसाय की प्राचीनता के कारण सस्ते और कुशल श्रमिक मिल जाते हैं।

(६) अधिक जनसख्या तथा न्यू-इगलैंड के औद्योगिक क्षेत्र के लिये तैयार माल की स्थानीय माग काफी है।

(७) यातायात के भीतरी और बाहरी साधन अच्छे हैं। विदेशो से जल-मार्ग द्वारा और देश के भीतरी भागो से रेलो द्वारा जुडा हुआ है।

इस क्षेत्र के प्रधान इस्पात-केन्द्र तट के सहारे वाशिगटन से बोस्टन तक फैले हैं। उल्लेखनीय केन्द्र बाल्टीमोर, हैरीसबर्ग, ट्रेंटन, मोरसीविले, स्पेरो पाइंट, बेथलेहम, स्टीलटन, फिलाडेलफिया, वरसेस्टर, वाटरवरी इत्यादि हैं।

(iv) दक्षिणी अपेलेशियन या अलबामा प्रदेश (South Appalachian or Albama Region)—यह क्षेत्र अलबामा राज्य में है। यहाँ कम्बरलैंड तथा दक्षिणी अलैघनी पठार के रास्ते विशाल भण्डार से बिटूमीनस कोयला प्राप्त होता है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र बर्मिन्घम के चारो ओर दस मील के क्षेत्र मे चूना, कच्चा लोहा और कोकिंग कोयला मिल जाता है। लोहे की खनिज मे १५% तक चूना पाया जाता है, अत: अलग से चूना काम मे लाने की कम आवश्यकता पड़ती है। इसी कारण यहाँ विश्व मे सबसे सस्ता इस्पात तैयार किया जाता है। यहाँ श्रमिक भी काफी सस्ते मिल जाते हैं किन्तु यह क्षेत्र उत्तर की विशाल माँग के क्षेत्रो से दूर पडता है। यहाँ सबसे अधिक उत्पादन पश्चिमी वर्जीनिया मे होता है। इसके मुख्य केन्द्र बर्मिघम, अलबामा और वर्जीनिया हैं।

संयुक्त-राज्य के इस्पात केन्द्रों का विशिष्टीकरण इस प्रकार है :—

(क) जलयान निर्माण :

न्यूयार्क, फिलाडेलफिया, बाल्टीमोर, न्यू-पोर्ट, विलिंगटन इत्यादि।

(ख) मोटरें :

क्लीवलैंड, फिलाडेलफिया, डिट्रायट, इडियानापोलिस, कोनर्सविले, न्यूयार्क, फिलट लैंसिग, पौंटिएक, टोलडो, बफैलो इत्यादि।

(ग) इंजिन तथा बिजली की मशीनें :

न्यूयार्क, फिलाडेल्फिया, पिट्सबर्ग, शिकागो, मिलवाकी इत्यादि।

(घ) कपड़ा बुनने की मशीनें :

बोस्टन, वरसेस्टर और फिलाडेलफिया।

(ड) कृषि यंत्र :

शिकागो, इलिनीयोस और मिनियापोलिस।

इस्पात उत्पादन में वृद्धि

देश	(प्रतिशत मे) १६३६ की तुलना मे १६५६ में	क्षमता १६३६ मे १६५६ की तुलना में
द० अफ्रीका	२६७ ४	८०·०
चीन	६६१ ५	१५० ०
भारत	६२·६	५५०·०
जापान	६५·६	६८·२
ओसीनिया	१००·७	५६·३
ब्राजील	१०६७ ४	८८·६
मैक्सिको	१०४१·६	६०·६
सं० राज्य	११८ २	२१·७
रूस	१७६ २	५४·५
इगलैंड	५६·३	२४·५
विश्व	१०७ ८	४३·३

नीचे की तालिका मे लोहे और इस्पात का प्रति व्यक्ति पीछे उपभोग बताया गया है :—

देश	१६३७-३८ (पौंड मे)	१६६०
स० राज्य	६४०	१,३७३
कनाडा	३३६	६६८
स्वीडेन	५३२	७०४
इंगलैड	४६३	५४७
आस्ट्रेलिया	४२८	६५२
जर्मनी	६००	४१४
फास	२८६	२६०
बेल्जियम	३५३	४६५
लक्सम्बर्ग		४४७
इटली	१२३	१६१
भारत	६	११

लोहा मँगाने मे अपेक्षाकृत अधिक खर्च हो जाता है। किन्तु इस प्रदेश मे कोयला काफी मिलता है। ड्रेस्डन, लिपजीग, चिमनीज इत्यादि प्रसिद्ध केन्द्र हैं।

उपरोक्त दो प्रधान इस्पात प्रदेशो के अतिरिक्त सैक्सोनी, बवेरिया तथा हनोवर मे भी इस्पात के केन्द्र हैं। जर्मनी के विविध इस्पात केन्द्रो का विवरण इस प्रकार है—

जहाज बनाने के केन्द्र—हैम्बर्ग, कील, रोस्टार्क, ब्रीमेन, स्टेटिन तथा लुबके।

सीने की मशीनें और प्यानो—ड्रेस्डन तथा लीपजिंग।

छुरे, चाकू, कैंची इत्यादि—रेम्सचीड, टटलिंगटन तथा साइलेसिया।

भारी मशीनें—इसन, डुसलडार्फ, डार्टमंड, नूरेम्बर्ग, ड्यूसबर्ग, एसेन।

कृषि यंत्र व बिजली का सामान—हाले, मेकडेबर्ग, फ्रैंकफर्ट, बर्लिन आदि।

सुइयाँ—इजरलोन।

वैज्ञानिक यन्त्र—ड्रेसडेन, लिपजिग और इजरलोन।

मोटरें—स्टटगार्ड, एसेन और नूरेम्बर्ग।

५. स्वीडन का इस्पात उद्योग

स्वीडन मे उत्तम प्रकार के कच्चे लोहे के भडार विश्व मे सबसे अधिक पाये जाते है—लगभग १½ अरब टन। यहाँ के मुख्य लोह-क्षेत्र आर्कटिक वृत्त के उत्तरी भागो मे किरूना—गलीवरा जिले मे पाये जाते हैं। इनमे कच्ची धातु मे लोहे का अश ६५% से भी अधिक किन्तु इनमे से अधिकाश लोहे मे फास्फोरस का भी अंश पाया जाता है, अत: लोहे को साफ करने के लिए कई विधियों का प्रयोग किया जाता है। मध्यवर्ती स्वीडन मे भी डैनेमोरा और ग्रैंगसबर्ग मे लोहा प्राप्त होता है। यह विश्व का सबसे शुद्ध लोहा है जिसमे फास्फोरस का अश ०·००१% से ०·०२% तक होता है, किन्तु यहाँ के भडार ५०० लाख टन से भी कम के हैं। इस लोहे का उपयोग स्वीडन मे मशीनें, विद्युत-औजार, हार्डवेयर तथा अर्द्ध-निर्मित इस्पात बनाने मे होता है। इस इस्पात से कटलरी, औजार, रेजर-ब्लेड, वॉल-बियरिंग आदि तैयार किये जाते हैं।

यहाँ लोहे के विशाल भडार होते हुए भी कोयले की नितान्त कमी है। अतः इस उद्योग के लिये ६०% से भी अधिक कोयला ब्रिटेन, फ्रास आदि देशो से मँगवाना पडता है। कई कारखानो मे लकडियाँ भी जलाई जाती है। इसके अतिरिक्त देश के कुल पिग आयरन के उत्पादन का २०% और इस्पात की ईंटो का ४०% बनाने मे जल विद्युत का उपयोग किया जाता है। स्वीडन मे अच्छी किस्म का इस्पात (Quality Steel) तैयार किया जाता है। १६६१ मे उत्पादन २५ लाख टन था। स्वीडन साधारण उपयोग की लोहे की वस्तुएँ विदेशो से आयात करता है। यहाँ टिन की चादरें, रेल की पटरियाँ आदि भी आयात की जाती है।

६. स्पेन में इस्पात का उद्योग

स्पेन मे भी अच्छी किस्म का लोहा प्राप्त होता है। यहाँ का वार्षिक उत्पादन ३० लाख टन का होता है। किन्तु इसमे से अधिकाश विदेशो को निर्यात कर

शिकागो—गैरी	१६४	२७३
पूर्वी संयुक्त राज्य	११८	१७४
दक्षिणी—(,,)	६५	६६
पश्चिमी (,,)	३६	७०
कुल योग (सं० राज्य अमेरिका)	८२३	१२४३

(i) उत्तरी अपेलेशियन प्रदेश (North Appalachian Region)—पश्चिमी पेन्सिलवेनिया तथा पूर्वी ओहियो में फैला हुआ है। इस प्रदेश में पिट्सबर्ग तथा यंगस्टाऊन दो क्षेत्र शामिल हैं। (क) पिट्सबर्ग क्षेत्र संसार का सबसे बड़ा इस्पात-उद्योग क्षेत्र गिना जाता है। पिट्सबर्ग-क्षेत्र के कारखाने ओहियो, अलेघनी तथा मोननघेला नदियों की घाटियों में पिट्सबर्ग से ४० मील के भीतर स्थित हैं। (२) यंगस्टाऊन क्षेत्र के कारखाने शेननगो तथा महोनिंग नदियों की घाटियों में यंगस्टाऊन से ३० मील के अन्दर स्थित हैं। यह संयुक्त प्रदेश संयुक्त राज्य के इस्पात उद्योग का सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र है और समस्त देश का ३५ प्रतिशत लोहा व इस्पात तैयार करता है। अकेले पिट्सबर्ग नगर के कारखानों में एक चौथाई माल बनता है जिसका उपभोग न केवल इसी क्षेत्र मे किया जाता है बल्कि अटलांटिक तटीय क्षेत्र, झीलों के प्रदेश, मध्य पश्चिमी तथा दक्षिणी और प्रशान्त महासागर के क्षेत्रों में भी होता है। इस प्रदेश में लोहा तथा इस्पात उद्योग के लिए नीचे लिखी सुविधायें प्राप्त है :—

(१) कोयला (विशेषकर कोकिंग कोयला) उत्तरी अपेलेशियन की खानों से मिल जाता है। कोयले के यहाँ बड़े भंडार सुरक्षित है।

(२) इस क्षेत्र का लोहा समाप्त हो चुका है अतः यह सबसे बड़ी असुविधा है, किन्तु सस्ते जल यातायात साधनों द्वारा समुचित परिमाण में लोहा सुपीरियर झील-क्षेत्र की लोहे की खान से प्राप्त हो जाता है।

(३) चूना यहाँ पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

(४) सभी कारखाने नदियों की घाटियों में स्थित हैं। अतः सस्ते यातायात की सुविधा है और जल की पर्याप्त पूर्ति है। मिसीसिपी नदी से ठेठ पिट्सबर्ग तक पहुँचने के लिए ओहियो नदी में नहरें बनाई गई हैं जिससे १० से १२ हजार टन के जहाज सरलता से पहुँच जाते हैं। इस क्षेत्र में रेलों का विस्तार अधिक है।

(५) सघन जनसंख्या और श्रेष्ठ औद्योगिक क्षेत्र होने के कारण माल की स्थानीय माँग बहुत है।

(६) इस क्षेत्र को भारत से सस्ता मैंगनीज प्राप्त हो जाता है।

(७) यहाँ के श्रमिक कुशल और मजबूत है।

इस क्षेत्र को कई असुविधायें भी हैं, जैसे—

(१) चूना पूर्वी पर्वतों से या उत्तरी ओहियो से १०० मील से भी अधिक दूरी से लाना पड़ता है।

(२) लोहा झील भागों से कारखानों तक रेलो द्वारा लाया जाता है अतः लोहे की ढुलाई बहुत लग जाती है—एक बार झील-मार्गों मे और दूसरी बार रेलों में।

(२) स्थानीय कोयला बहुत घटिया है और मँहगा पडता है। केवल क्यूश्यू और होकेडो की खानो का कोयला काम में लाया जा सकता है। शेष भाग चीन, मचूरिया तथा कराफूटो से मँगाया जाता है।

(३) अन्य कच्चे माल के पदार्थ भी विदेशो से मँगाने पड़ते है, केवल चूना ही इस देश मे पर्याप्त मात्रा मे मिलता है।

इनके अलावा इस देश में इस्पात उद्योग अन्य देशो की अपेक्षा बहुत पीछे आरभ हुआ। इसलिये कच्चा माल प्राप्त करने और तैयार माल बेचने के लिए अतर्राष्ट्रीय सम्पर्क स्थापित करने मे कठिनाई पड़ी। इससे यह लाभ भी हुआ कि दूसरे देशो के अनुभव का उपयोग करके यह देश इस उद्योग की त्रुटियो से बचा रहा।

जापान का यह उद्योग पूर्वी तट पर टोकियो और पश्चिमी तट पर नागासाकी के बीच के क्षेत्रो मे ही केन्द्रित है।

जापान के इस्पात उद्योग के तीन मुख्य प्रदेश हैं :—

(i) **मौजी क्षेत्र** (Moje Area)—यह क्षेत्र उत्तरी क्यूश्यू में स्थित है। यहाँ जापान का तीन-चौथाई लोहा व इस्पात बनाया जाता है। कोयला नागासाकी के निकट से और चीन मे काइलान खान से मिल जाता है। लोहा होकेडो से तथा विदेशों से नागासाकी तथा कूपाभोटो बन्दरगाहो द्वारा मँगाया जाता है। पूर्व के . . देशो को तैयार माल भेजने में भी यह क्षेत्र सबसे निकट पडता है। यावटा केन्द्र है जहाँ एक बहुत बडा सरकारी कारखाना है। यहाँ भारी सामान जैसे—रेल के डिब्बे, पटरियाँ और मछुआ-जलयान बनाये जाते हैं। तोबाता, कोकूरा और ओमुता अन्य प्रसिद्ध नगर है।

(ii) **कमिशी क्षेत्र** (Kamishi Area)—यह होशू द्वीप मे स्थित है। यहाँ कच्ची धातु और कोयला दोनो बाहर से मँगाये जाते है। कुछ कच्ची धातु इस प्रदेश की कुजी तथा मिडाई खानो से भी मिल जाती है। इस क्षेत्र को कुशल तथा सस्ते श्रमिक, पर्याप्त पूँजी और नदियो से सस्ती जल-विद्युत शक्ति प्राप्त हो जाती है। यहाँ समतल भूमि भी काफी है और रेलो का जाल बिछा है। इस क्षेत्र मे अधिकतर हल्का सामान ही बनाया जाता है। ओसाका, टोकियो तथा याकोहामा प्रसिद्ध केन्द्र है।

(iii) **मुरारां क्षेत्र** (Muraran Area)—यह होकेडो द्वीप मे स्थित है। यहाँ कच्ची धातु मुरारां खान से और कोयला इशीकारी की खान से प्राप्त किये जाते है। वैनिशी प्रसिद्ध केन्द्र है। यहाँ सैनिक मशीनें अधिक बनाई जाती है।

जापान मे कच्चा लोहा और इस्पात दोनो ही बनाये जाते हैं। कच्चा लोहा उत्पन्न करने वाले चार मुख्य केन्द्र हैं जो क्यूशू, मुरारां, याकोहामा और ओसाका कोबे-हिमेजी हैं। इनका उत्पादन प्रतिशत इस प्रकार है :—

यावता—कोकुरा (क्यूश्यू)	३०-३५%
मुरारां	१६-१८%
कोबे—ओसाका	१८-२२%
टोकियो—याकोहामा	११-१४%

अपेलेशियन क्षेत्र से कोयला प्राप्त होता है। यहाँ मिशीगन के दक्षिणी सिरे पर पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी रेल मार्ग आकर मिलते हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर से सस्ती जल यातायात सुविधा भी प्राप्त है। निकटवर्ती भागों में मोटरें, मशीनें, औजार आदि बनने से इस्पात की माँग भी अधिक रहती है। इस क्षेत्र के प्रमुख केन्द्र शिकागो, गैरी और मिलवाकी हैं। यहीं विश्व के सबसे बड़े-बड़े दो इस्पात के कारखाने स्थापित हैं।

(ग) *सुपीरियर क्षेत्र* (*Lake Superior Region*)—*इस क्षेत्र को अति* निकट की मैसाबी श्रेणी से प्रचुर मात्रा में अच्छा लोहा मिल जाता है। अपेलेशियन क्षेत्र से लौटते हुए जहाज यहाँ काफी कोयला ले आते हैं। सस्ते जल यातायात की सुविधा भी उपलब्ध है। यहाँ के प्रसिद्ध केन्द्र डुलूथ और सुपीरियर हैं।

नीचे की तालिका में संयुक्त राज्य के उद्योग की लोहे की पूर्ति बताई गई है :—

संयुक्त राज्य में लोहे की पूर्ति (लाख शार्ट टनों में)

प्राप्ति स्थान निम्न झील प्रदेशों को ,,		पूर्व में	दक्षिण में	पश्चिम में	योग
सुपीरियर झील	८५०	६०	—	—	९१०
उत्तर-पूर्व	२५	२५	—	—	५०
दक्षिण	—	—	११०	—	११०
पश्चिम	—	—	—	५०	५०
कनाडा	२०	—	—	—	२०
चिली	—	३०	—	—	३०
दूसरे साधन से	१०	३०	—	—	४०
	६०५	१४५	११०	५०	१२१०

(iii) अटलांटिक तट-प्रदेश (Atlantic Coast Region)—मध्य मैसेचूसेट्स से लगाकर स्पैरो पॉइंट तक फैला है। यहाँ लोहा और इस्पात का उद्योग औपनिवेशक युग मे स्थापित हुआ। जब प्रारम्भ मे अंग्रेज यहाँ अटलांटिक तट पर न्यू-इगलैंड रियासत मे आकर बसे और उन्हे कृषि कार्यों के लिये यन्त्रो की आवश्यकता *हुई तो इस उद्योग का श्रीगणेश हुआ। प्रारम्भ मे* यहाँ कुछ लोहा प्राप्त हो जाता था किन्तु अब यह प्राय. समाप्त हो चुका है। कोयले का कार्य वन वृक्षों की लकड़ी के कोयले से किया जाता था। कोयले तथा तेज बहने वाली नदियो के जल से शक्ति प्राप्त की जाती है। संयुक्त राज्य के अन्य-इस्पात प्रदेशों की तुलना मे इस प्रदेश मे न कच्चे माल की सुविधा है और न पत्थर का कोयला ही मिलता है किन्तु फिर भी यह उद्योग निरन्तर चालू है। इसके निम्न कारण हैं :—

(१) इस प्रदेश मे सबसे पहले इस उद्योग का श्रीगणेश हुआ और सफलतापूर्वक चला।

(२) इस प्रदेश की तटीय स्थिति होने के कारण विदेशो से कच्चा लोहा मगाने और तैयार माल भेजने में बड़ी सुविधा रहती है।

विश्व के इस्पात के उत्पादन का केवल ५% से भी कम देते हैं। इन सबमे प्रमुख आस्ट्रेलिया है। यहाँ इस उद्योग का विकास सन् १६१५ के बाद से ही हुआ है। १६६१ से सरकार ने आयात पर अधिक चुंगी लगा रखी है, अतः यहाँ १६२१ से १६५३ के बीच इस्पात का उत्पादन २·८ लाख से २५ लाख टन बढ गया। यहाँ इस्पात के कारखाने न्यूकैसिल, पोर्ट कैम्बला, लाइथगो (जो सभी न्यू साऊथ वेल्स मे हैं) और दक्षिणी आस्ट्रेलिया मे वाइयाला मे हैं। ये सब आबाद क्षेत्रो के निकट हैं, अतः इस्पात की माँग अधिक है। न्यूकैसिल और पोर्ट कैम्बाला की निकटवर्ती खानों से कोयला और चूना, तथा जल मार्गों द्वारा उत्तम श्रेणी का लोहा स्पेन्सर की खाडी के निकट आयरनाब जिले से प्राप्त होता है। यातायात की सुविधा के कारण यहाँ कच्चा माल इतना सस्ता प्राप्त हो जाता है कि इस्पात बनाने मे बहुत ही कम खर्चा पडता है। यहाँ कई प्रकार की वस्तुएँ तैयार की जाती हैं जिनका थोड़ा सा भाग न्यूजीलैंड को भी निर्यात कर दिया जाता है।

१२. दक्षिणी अफ्रीका में इस्पात उद्योग

दक्षिणी अफ्रीका सघ मे भी इस्पात का उद्योग विकसित हुआ है। यहाँ यद्यपि लोहा और कोयला पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाता है किन्तु माँग कम होने से यहाँ वर्ष मे १० लाख टन से भी कम इस्पात बनाया जाता है। यहाँ इस्पात कारखाने ट्रासवाल मे प्रिटोरिया और विरीनीगींग और नैटाल मे न्यूकैसिल मे स्थित हैं। लिए कच्चा माल निकटवर्ती स्थानों में ही मिल जाता है।

१३. लेटिन अमेरिका में इस्पात उद्योग

लेटिन अमेरिकी देशो मे भी इस उद्योग का विकास हुआ है किन्तु यहाँ की कुल इस्पात उत्पादन क्षमता २५ लाख टन से भी कम है—अर्थात् विश्व की क्षमता का केवल १०%। इसमे आधी क्षमता ब्राजील के कारखानो में है। ब्राजील का मुख्य कारखाना पैराहाइबो नदी की घाटी मे वोल्टा रेडोण्डा मे स्थित है। छोटे-छोटे कारखाने मिनास, जिरारा और साओपालो मे भी हैं। वोल्टा के कारखाने के लिये चूना, कच्चा लोहा और मैंगनीज रेल द्वारा २५० मील की दूरी से मिनास जिरास जिले से आता है। कोयला ६०० मील दूर पूर्वी सैटा कैथेरीना से नावो द्वारा मंगवाया जाता है। कुछ कोयला भी आयात किया जाता है। यह कारखाना मुख्य रेल मार्गों के केन्द्र पर स्थित है, अत. यह उस प्रदेश मे है जहाँ इस्पात का उपभोग सबसे अधिक होता है। कारखाने के लिए शुद्ध जल पैराहाइबो नदी से मिल जाता है तथा १२०० फीट ऊँचाई पर होने से जलवायु भी अधिक गर्म नही है। यहाँ इस उद्योग को सरकारी संरक्षण भी प्राप्त है। वोल्टा रोडोन्डा के कारखाने की स्थिति भौगोलिक दृष्टि से बडी अनुकूल है क्योंकि कारखाने के २५० मील के घेरे मे ही उत्पादित इस्पात का ६८% उपयोग हो जाता है और ३७५ मील के घेरे मे ८०% इस्पात का।

चिली में इस्पात का कारखाना सरकारी है जो सैनविसेंट घाटी पर स्थित हुआची पाटो में है। यहाँ कच्चा लोहा और इस्पात उत्तर की ओर से ५०० मील की दूरी से एलटोफो की खानो से प्राप्त किया जाता है। कोयला जल-मार्ग द्वारा लाटा और शैवेगर की खानो से प्राप्त किया जाता है। माद्रेडी डायस द्वीप से प्राप्त किया जाता है जो यहाँ से ६०० मील दूर है। जल-विद्युत शक्ति और जल दोनो ही निकटवर्ती नदियों से मिल जाते हैं। चिली के इस्पात की माँग स्थानीय है।

लाख टन से बढ़ कर २२० लाख टन तथा विदेशी अयस का उपयोग १६० लाख टन से बढ़ कर २२०-२४० लाख टन हो जायेगा।[8]

४. जर्मनी का लोहा व इस्पात उद्योग

संसार में लोहा व इस्पात उद्योग में जर्मनी का स्थान चौथा है क्योंकि इस देश को कोयले और लोहे की सुविधाओं के साथ-साथ अति-उन्नत वैज्ञानिक आविष्कारो की भी सुविधा प्राप्त है। प्रथम महायुद्ध के बाद ही यहाँ इस उद्योग का विकास हुआ है। क्योंकि प्रथम युद्ध मे जर्मनी का ⅘ कच्चा लोहा, ⅓ कोयला और ⅔ इस्पात पैदा करने वाले भाग शत्रुओं के हाथ मे चले गये थे। युद्ध के पश्चात् पुर्ननिर्माण के कारण जर्मनी मे इस्पात और लोहे का उद्योग सगठित हो गया और १६२४ में यहाँ २४० लाख टन इस्पात तैयार किया गया। किन्तु द्वितीय महायुद्ध से इस उद्योग को पुन धक्का लगा क्योंकि रूर का उत्पादन घट गया, साइलेशिया पोलैण्ड को चला गया, सार फ्रास को और स्वयं जर्मनी के भी दो भाग हो गए। किन्तु अब पुनर्निर्माण क्रियाओ के फलस्वरूप पश्चिमी जर्मनी मे यह उद्योग एक बार फिर से सगठित किया गया है। १६६१ मे यहाँ से ३३५ लाख टन स्टील प्राप्त हुआ। यहाँ इस्पात उद्योग के प्रधान क्षेत्र निम्नलिखित हैं :—

(i) रूर प्रदेश (Ruhr Region)

(ii) साइलेशिया प्रदेश (Silesia Region)

(i) **रूर प्रदेश** (Ruhr Region)—यह क्षेत्र नीची जर्मन राईन घाटी मे पूर्व-पश्चिम दिशा में ४५ मील और उत्तर-दक्षिण दिशा मे १५ मील तक फैला है। इसका विस्तार रूर नदी के उत्तर की ओर ड्यूसबर्ग से डॉर्टमड तक है। यह ससार के प्रसिद्ध लोहा तथा इस्पात क्षेत्रों मे गिना जाता है। नाजियो के प्रभुत्व से पहले यह प्रदेश ससार मे सबसे अधिक लोहा निर्यात करता था। सन् १६३७ मे यहाँ ७६ लोहे तथा इस्पात के कारखाने थे जो जर्मनी की तीन-चौथाई लोहा व इस्पात उत्पन्न करते थे। यहाँ सारे अंग्रेजी साम्राज्य के बराबर लोहा और फौलाद बनाया जाता था। द्वितीय महायुद्ध से पहले इस देश का लोहा और इस्पात उद्योग प्राय: आयात की हुई कच्ची धातु पर निर्भर था जो नार्वे, स्वीडेन, लक्जम्बर्ग, उत्तरी पश्चिमी अफ्रीका, स्पेन तथा सयुक्त-राज्य से मँगाया जाता था। किन्तु अब रूर क्षेत्र के दक्षिण मे सीजरलैंड, मानडिल, बोजिल्सबर्ग की खानो से ही कुछ लोहा प्राप्त होता है। इस प्रदेश मे इस्पात के उद्योग के विकास का कारण रूर प्रदेश का कोयला है जिस पर इस उद्योग का आधार है। रूर प्रदेश की सबसे बडी सुविधा यह है कि यहाँ जलमार्गों की सुविधा होने के कारण स्वीडेन, लक्जम्बर्ग, लारेन और स्पेन से सस्ते दामो पर धातु मंगाया जा सकता है। डुसलडर्फ मे भारी मशीनें बनाई जाती है। यहाँ के मुख्य केन्द्र ड्यूसबर्ग, डॉर्टमड, एसेन, गेलसेनकर्चेन और बोशेग हैं।

(ii) **साइलेशिया प्रदेश** (Silesia Region)—पूर्वी भाग में स्थित साइलेशिया क्षेत्र भी जर्मनी का लोहे व इस्पात का मुख्य प्रदेश है। इस प्रदेश मे कच्ची धातु की बहुत कमी है और भीतरी भाग मे स्थित होने के कारण विदेशो से कच्चा

8. **Britain Official Handboo k, 1959, p. 310.**

(ii) क्लाइड क्षेत्र मे विशेषतः यात्री जहाज बनते हैं। यहाँ के यार्ड विश्व मे सबसे उत्तम रूप से सज्जित हैं। यहाँ जहाज बनाने के ३० कारखाने हैं। Queen Mary और Queen Elizabeth जहाज यही बनाये गये हैं।

(iii) इंगलैंड का उत्तरी पूर्वी तट—यहाँ पर मर्सी नदी पर स्थित बैरो-इन-फर्नेस में अधिकतर नौ-सेना के लिए जहाज बनाये जाते हैं। अन्य केन्द्र अवरडीन, डंडी, लीथ, गूले, साऊथ हैम्पटन, काऊज इत्यादि हैं।

(iv) बेलफास्ट—यहाँ जहाज लगैन नदी की ऐस्चुरी मे बनाए जाते हैं। यहाँ स्कॉटलैंड तथा कम्बरलैंड से जहाज बनाए जाने के सामान मँगाये जाते हैं। यहाँ पर अधिकतर मोटर बोटें बनाई जाती हैं।

(v) टेम्स के किनारे अब जहाज नही बनाये जाते हैं परन्तु लन्दन मे जहाजो के मरम्मत का काम अधिक होता है।

वास्तव मे जहाज-निर्माण-उद्योग मे ब्रिटेन का स्थान सर्वोपरि है। १९४५ से १९६० तक यहाँ १५५ लाख टन भार के जहाज बनाये गये हैं। यहाँ अधिकतर विदेशों के लिए ही जहाज बनाये जाते है। इनका लगभग ३०% नार्वे, ८ प्रतिशत अर्जेन्टाइना और फ्रास, ६ प्रतिशत पुर्तगाल, ६ प्रतिशत हॉलैंड और ३ प्रतिशत स्वीडेन को जाता है। १९६० मे ब्रिटेन से बना कर भेजे गये जहाजो का मूल्य ८९० लाख पौड था। इस उद्योग मे लगभग २,३०,००० व्यक्ति लगे है।

(२) अन्य देश

युद्ध पूर्व के काल मे जर्मनी भी जहाज बनाने में बडा प्रमुख देश था। वहाँ कोयला और लोहा पर्याप्त मात्रा मे मिल जाने तथा समुद्र से राइन द्वारा जल यातायात की सुविधा होने से स्टैटीन, रॉसटाक, ल्यूबैक, कील और हम्बर्ग मे उत्तम श्रेणी के जहाज बनाये जाते थे किन्तु द्वितीय महायुद्ध के अन्त मे ये सब कारखाने विजेताओ के अधिकार में चले गये। द्वितीय महायुद्ध काल मे जर्मनी के जहाज बनाने पर कई प्रतिबध लगाये गये किन्तु १९५१ से अब जर्मनी मे पुनः उपरोक्त स्थानो पर जहाज निर्माण का कार्य किया जाने लगा है।

नीदरलैंड, स्वीडेन और डेनमार्क मे भी जहाज बनाने का उद्योग बहुत समय से किया जा रहा है। ये तीनो ही समुद्र-तटीय देश हैं। यहाँ इस्पात जर्मनी और ब्रिटेन से मँगा कर जहाज बनाये जाते हैं। नीदरलैण्ड मे उत्तरी सागर की नहर के किनारे वैल्सन, डेनमार्क मे कोपनहेगन और स्वीडेन मे गोटेवर्ग और माल्मों में जहाज बनाये जाते है। फ्रांस मे जहाज बनाने के केन्द्र अटलाटिक महासागर के किनारे लाहावरे, चैरबोर्ग, और बोर्डो तथा भूमध्य-सागरीय तट पर मार्सलीज और टूलन मे हैं। इटली मे जिनाओ और नेपल्स में जहाज बनाये जाते हैं।

रूस मे बडे-बडे जहाज काले सागर के किनारे निकोलायेव और सिवास्टोपोल तथा फिनलैंड की खाड़ी के किनारे लैनिनग्राड और मुरमास्क, आर्कनगैस्क तथा ब्लाडीवोस्टक मे बनाये जाते है। जापान मे जहाज बनाने के मुख्य केन्द्र कोबे और नागासाकी हैं। यहाँ व्यापारी जहाज अधिक बनाये जाते हैं।

दिया जाता है क्योंकि यहाँ कोयले का अभाव है। बिल्बिओ में इस्पात बनाने का एक छोटा कारखाना है। यहां के लिये कोयला ब्रिटेन से उन जहाजों द्वारा लाया जाता है जो वहाँ कच्चा लोहा भर कर ले जाते हैं। लौटते समय उन्ही जहाजो मे कोयला सस्ते भाड़े में आ जाता है।

७. इटली में इस्पात उद्योग

इटली में एल्बा द्वीप, सार्डिनिया और ओस्टा में निम्न श्रेणी का लोहा पाया जाता है, जिसका वार्षिक उत्पादन ९१ लाख टन से भी कम है किन्तु यहाँ कोयले की बडी कमी है। अत कोक बनाने योग्य कोयला इंगलैंड और जर्मनी से आयात किया जाता है। किन्तु इटली मे जलविद्युत् का अधिक विकास होने से शक्ति की प्राप्ति की सुविधा हो गई है। एपीनाइन पर्वतों मे नीरा नदी के सहारे तर्नी में विद्युत भट्टी की विधि द्वारा ऊँचे किस्म का इस्पात बनाया जाता है, किन्तु देश का अधिकाश उत्पादन जिनोआ और मिलन मे खुली भट्टी की विधि द्वारा किया जाता है।

८. फ्रांस में लोहे और इस्पात का उद्योग

फ्रास देश मे लोहे की धातु की कमी नही है। यहाँ की लारेन की प्रसिद्ध खानों मे देश की ९५% कच्ची धातु प्राप्त की जाती हे किंतु यहाँ घटिया किस्म का कोयला मिलता है और वह भी कम मात्रा मे। इसलिए इस देश का इस्पात उद्योग विकास की ओर नहीं जा रहा है। पहले संसार मे इस देश का उद्योग तीसरे स्थान पर था किंतु रूस का उत्पादन बढ जाने से अब स्थिति बदल गई है। इस देश का इस्पात उद्योग लारेन प्रदेश तथा उत्तरी भाग के कोयला क्षेत्र मे स्थित है जहाँ मैजेल नदी और राईन-मार्ने नहर द्वारा सस्ता जल यातायात प्राप्त होता है। इन क्षेत्रों मे लगभग तीन-चौथाई लोहा व इस्पात बनाया जाता है। फ्रास मे १९६१ में १७६ लाख टन इस्पात बनाया गया।

फ्रांस देश के इस्पात केन्द्रों का विवरण इस प्रकार है :—

मशीनें—लीले, रोबे, सेटईटीन, वैलेन्शिया मे।

रेल के इन्जन, पटरियाँ—लाक्रू जोट मे।

मोटर कारें—सेंट इटीन, पेरिस, लियोस मे।

बन्दूकें; हथियार—लाक्रू जोट, सेंट इटीन मे।

लोहा साफ करने की भट्टियाँ—मेज, वेर्य, नेन्सी, थायनविले और लांगवे मे है।

९. जापान में लोहे और इस्पात का उद्योग

जापान का इस्पात उद्योग अन्य औद्योगिक देशों के इस्पात उद्योगों की तुलना मे बहुत सीमित है। यहाँ इस्पात का सबसे पहला कारखाना क्यूश्यू के उत्तरी भाग में यावटा मे सरकार द्वारा स्थापित किया गया। यहाँ के इस्पात उद्योग के मार्ग में तीन बड़ी बाधाएँ निम्नलिखित हैं :—

(१) यहाँ कच्ची धातु बहुत कम मिलती है इसलिए चीन, कोरिया, मचूरिया, संयुक्त राज्य इत्यादि से मँगानी पड़ती हैं। कच्चा लोहा भी बाहर से मँगाया जाता है।

मिल जाती है जो जहाज निर्माण मे डेक, कमरे आदि बनाने के काम आती है। १९५२ से विशाखापट्टम पोत-निर्माण क्षेत्र हिन्दुस्तान शिपयार्ड कं० लि० के हाथ मे आ गया है। इस कम्पनी मे भारत सरकार का ⅔ और सिंधिया कं० का ⅓ धन लगा है।

समुद्री जहाज बनाने के व्यवसाय का भविष्य बडा उज्ज्वल है क्योंकि जिन कच्चे मालो की आवश्यकता पडती है वे भारत मे ही मिल जाते हैं। किन्तु मद्रास व बम्बई के बन्दरगाहो मे जहाज निर्माण का कार्य नही हो सकता। बम्बई लोहा व कोयला उत्पादन केन्द्रों से सैकडो मील दूर है तथा मद्रास कृत्रिम बन्दरगाह और पानी छिछला है अत बडे जहाजो का बनाना बडा कठिन है। कोचीन के समुद्री जलाशय मे जहाजों की मरम्मत के लिये उचित सुविधायें हैं। यहीं दूसरा कारखाना स्थापित किया जा रहा है।

(ग) वायुयान बनाने का उद्योग (Air Craft Manufacture)

हवाई जहाज बनाने का उद्योग अभी भी अन्य उद्योगों की तुलना मे शिशु उद्योग (Infant Industry) ही कहा जा सकता है जिसका विकास प्रतिदिन बड़ी तेजी से हो रहा है। निर्माण क्रिया में यांत्रिक परिवर्तन, उत्पादन में अस्थिरता और उद्योग से प्राप्त होने वाली आय में अनिश्चितता आदि उद्योग की मुख्य विशेषतायें हैं।[9] सबसे प्रथम वायुयान १९०३ में अमेरिका के राईट बन्धुओ ने बनाया। उसी-५ से इस उद्योग की विशेष प्रगति हुई है।

हवाई जहाज बनाने के उद्योग के अन्तर्गत दो प्रकार के यानो का निर्माण सम्मिलित किया जाता है—एक वे जो हवा से भी हल्के होते हैं और दूसरे वे जो हवा से भारी होते हैं। प्रथम जाति के यान—गुब्बारे, ब्लिम्पस, और डिरिजीब्ल्स हैं जो गैस या आन्तरिक दहन (Combustion) एंजिन की शक्ति द्वारा चलाये जाते है। इनका प्रयोग मुख्यत वायु सेना अथवा फौजो द्वारा ही किया जाता है। दूसरी श्रेणी के यानो में मुख्य हैलीकोप्टर यान है जिसे 'Flying Windmill, Whirligig or Egg Beater' कहते हैं। यह वायुयान जल, थल और वायु में तथा बर्फीले और दलदली भागो में दौड और उड सकते हैं। ब्रिटेन में इनका उपयोग लदन और बर्मिंघम के बीच यात्री ले जाने में होता है। इसी तरह अमेरिका मे न्यूयार्क और ला गारडिया, लास एजलिस, शिकागो आदि के बीच यात्री ले जाते है। तेल कम्पनियाँ इनका उपयोग तेल ले जाने में करती हैं। कुछ खेतो में कीडे मारने वाली दवायें डालने के काम में भी आते हैं। ये साधारणत ३०० मील की दूरी तक ४० यात्रियो को ले जा सकते है।

वायुयान उपयोग की दृष्टि से कई प्रकार के होते है। बडे यान अधिक दूरस्थ स्थानों को डाक, यात्री, माल आदि ले जाते हैं जबकि छोटे यान थोड़ी दूर के बीच वाले स्थानो पर यात्रियो को ढोते हैं। विशेष प्रकार के यान हवाई सर्वेक्षण करने, फोटोग्राफी लेने, जगलो में लगी आग पर नियन्त्रण पाने, फसलो पर कीटाणुनाशक पदार्थ छिडकने और व्यापारिक विज्ञापन आदि करने के काम आते है।

---

9. *Smith, Russel and Smith*, **Op. Cit**, p. 450.

हिमेजी	७-१०%
कैमैशी	७-६%

विदेशों से कच्चे लोहे के पुराने अंश (Scrap) मँगाकर उससे जापान में इस्पात तैयार किया जाता है। यहाँ अधिकतर इस्पात विद्युत भट्टियों से गर्म धातु (Hot metal) और One Heat विधि से उत्पन्न किया जाता है। यहाँ इस्पात के जहाज, रेलगाडी के डिब्बे, अन्त: दहन इंजिन, खान खुदाई करने की मशीनें, मशीनी औजार कृषि यंत्र, जल-चक्की आदि बनाये जाते है। १९६१ मे २८२ लाख टन इस्पात यहाँ तैयार किया गया।

१०. चीन का इस्पात उद्योग

चीन में द्वितीय महायुद्ध के पूर्व आधुनिक ढङ्ग का इस्पात और लोहे का कोई कारखाना नही था यद्यपि चीन कोयले और लोहे म धनी देश है। कुटीर उद्योग धंधो की प्रणाली से ही देश के कई भागों मे छोटी-छोटी फाउंड्रियाँ फैली हुई थी जो स्थानीय माँग को ही पूरा करती थी, किन्तु आधुनिक ढग की इस्पात की कोई भट्टी नही थी। एक इस्पात का कारखाना हैंकाऊ मे था किन्तु इसकी एक भट्टी पेंपिग मे भी बनाई गयी थी किन्तु जापानी आक्रमण के पूर्व (१९३७) यह भी काम मे नही ली जा सकती। किन्तु मंचूरिया मे जापानियो द्वारा एक आधुनिक कारखाना स्थापित किया गया है, यही चीन का मुख्य इस्पात केन्द्र है। चीन के कारखाने मुख्यतः यागटिसी नदी के मैदान में केन्द्रित है। हैंकाऊ के निकट हानयाग यहाँ का सबसे बडा केन्द्र है। इसके निकट चीन की सर्वोत्तम लोहे की खानें तायेह मे स्थित है जिसमे पर्याप्त मात्रा मे लोहा उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त सस्ते श्रम और देशी बाजार की उपलब्धता तो है ही, यागटिसी द्वारा यातायात भी सुलभ है। उत्तरी चीन मे द्वितीय युद्ध पूर्वकाल में अन्शान मे भी एक कारखाना स्थापित किया गया। इसके अतिरिक्त भीतरी मगोलिया मे पाओथो नामक स्थान पर तथा सीक्याग राज्य से तिहवा मे भी नये कारखाने स्थापित किये जा रहे हैं। उत्तरी चीन में तेयुआन के कारखानो को आधुनिक यंत्रो से सुसज्जित किया जारहा है वहाँ एक नई चादर मिल, फोर्ज-शॉप, विद्युत-भट्टी विभाग आदि बनाये गये हैं जिसमें रोलिंग-मिल्स, कोक-भट्टियाँ तथा क्रेन बनाये जाते हैं।

होपे राज्य मे टीटमीन मे शहतीर, तार तथा मशीन-टूल, पीपिंग मे मशीन-टूल, चुम्बक पृथक्कारक यंत्र, सर्वेक्षण के उपकरण, छापेखाने के पुर्जे और कृषि संबंधी औजार बनाये जाते है। शंघाई के कारखाने में अम्ल बैसेमर को दैहिक बसेमर विधि मे परिवर्तित किया जाता है। ताइयेह मे विद्युत भट्टियाँ, बेलन आदि तथा चुगकियांग मे रेल की लाइनें, शंघाई में रेलगाडियों के पहिये और उत्तम प्रकार का इस्पात तथा कुर्नमिंग मे मशीन टूल और भारी बिजली के सामान बनाये जाते हैं।

द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १८ नये लोहे और इस्पात के कारखाने स्थापित किये जा रहे हैं। इसके द्वारा कच्चे लोहे और इस्पात के उत्पादन में क्रमशः २६ लाख टन और १७ लाख टन की वृद्धि हो जायगी। १९६१ में यहाँ १८२ लाख टन इस्पात बनाया गया।

११. आस्ट्रेलिया में इस्पात उद्योग

विषुवत रेखा के दक्षिण भागों में कईक्ष त्रो में लोहा पाया जाता है किन्तु ये

१. संयुक्त राज्य : संयुक्त राज्य में मोटरो के उत्पादन का उद्योग मुख्यतः तीन बड़ी-बड़ी कम्पनियों—जनरल मोटर्स (General Motors), फोर्ड (Ford) और क्राइस्लर (Chrysler) के आधीन है। ये ही तीन कम्पनियाँ यात्री कारो का ८५ से ९०% और मोटर ट्रको का ८० से ८५% उत्पादन करती हैं। यात्री कारो का शेष उत्पादन स्टूडीबेकर (Studebaker), पैकर्ड (Packard), अमरीकन मोटर्स (American Motors) और कैसर-विलीज (Kaiser Willys) कम्पनियो द्वारा तैयार किया जाता है। इसी प्रकार मोटर ट्रको का शेष उत्पादन अन्तर्राष्ट्रीय हारवेस्टर (International Harvester), मैक (Mack), ब्रॉकवे (Brockway), ह्वाइट (White) और डायमण्ड-टी (Diamond T) कम्पनियो द्वारा होता है। जनरल मोटर्स के कारखानो मे उत्पादन मे लगा कर पुर्जे जोड़ने और मोटरो मे बिक्री तक का कार्य होता है। फोर्ड के कारखानो मे (डिट्रायट) कन्टैकी से कोयला और लोहा तथा चूना ऊपरी झील प्रदेश से प्राप्त किया जाता है। इस उद्योग मे लगभग ८ लाख मजदूर काम करते हैं तथा इसमे ५ बिलियन डॉलर की पूँजी लगी है और प्रतिवर्ष इतने ही मूल्य की विभिन्न प्रकार की गाड़ियाँ तैयार की जाती है।

स० राज्य मे यह उद्योग मुख्यतः पिट्सबर्ग के क्षेत्र मे फैला हुआ है जहाँ तीन मुख्य सुविधायें मिलती है—(१) निचले झील प्रदेश मे लकड़ियाँ अधिक मिलती है तथा जल यातायात की सुविधायें प्राप्त है। (२) इस क्षेत्र मे रेल-मार्गों का [illegible] जाल बिछा है जो न्यूयार्क, सैंट लुइस, फिलाडेलफिया, बोस्टन और माट्रियल के औद्योगिक केन्द्रो को जोड़ता है। (३) उत्तरी अमेरिका की अधिकाश जनसख्या इसी क्षेत्र मे है। अतः मोटरो की माँग भी बहुत है। यहाँ मोटर उद्योग के निम्न केन्द्र है :—

मिशीगन—लैनसिंग, पोन्टैक, कैडीलैक, फ्लीन्ट, डिट्रायट।

ओहियो—टोलडो, क्लीवलैण्ड।

इंडियानापोलिस—द० बैण्ड, इण्डियानापोलिस।

विस्कोसिन—कैनोशा।

इलिनीयास—शिकागो।

न्यूयार्क—बफैलो,

स० राज्य अमेरिका मे विश्व मे सबसे अधिक मोटरों का निर्यात किया जाता है क्योकि (i) यहाँ की कारें उच्च श्रेणी की होती है, (ii) इनका मूल्य अपेक्षतः कम होता है और (iii) यहाँ ऐसी गाड़ियाँ ही अधिक बनाई जाती है जो न केवल अच्छी सड़को पर वरन् ऊँची-नीची भूमि पर भी सुविधापूर्वक दौड़ सकती हैं। अतः आस्ट्रेलिया, ब्राजील, अर्जेन्टाइना तथा दक्षिणी अफ्रीका के देशो मे यही की गाड़ियाँ अधिक खरीदी जाती है।

२. अन्य देश कनाडा मे मोटर उद्योग मुख्यतः विन्डसर और ओसावा मे स्थापित है। यद्यपि मोटर उद्योग का प्रारम्भिक विकास पश्चिमी यूरोप के देशो मे हुआ किन्तु अब यहाँ सयुक्त राज्य से भी कम गाड़ियाँ बनाई जाती हैं क्योकि यहाँ इस उद्योग को कई असुविधाओ का सामना करना पड़ा है—यथा [10] (१) संयुक्त

10. *Jones and Drakenwald*, **Op. Cit.**, pp. 482-483.

इसके लिए कच्ची धातु गुआ की खानों से; कोयला झरिया से; चूना हाथी-बाड़ी और बीर मिर्जापुर से तथा जल दामोदर नदी से प्राप्त किया जाता है। शक्ति दामोदर घाटी के अन्तर्गत तक ताप विद्युत केन्द्र से मिलेगी।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में १०२ लाख इस्पात के ढोके और १५ लाख टन बिक्री के लिए लोहा बनाने का लक्ष्य रखा गया है। निजी उद्योग का भाग ३२ लाख टन इस्पात का रखा गया है। सरकारी क्षेत्र मे भिलाई, दुर्गापुर और रूरकेला तथा मैसूर लोहा इस्पात कारखाने का विस्तार किया जायगा। बुकारो में जो कारखाना बनाया जा रहा है उसमे २० लाख टन इस्पात के ढोके बनाये जायेंगे। नैवेली के निकट लिगनाइट से चलने वाले लोहे का कारखाना भी बनाया जायेगा। मोटे तौर पर अनुमान है कि तीसरी योजना की अवधि में २४० लाख टन तैयार इस्पात बनाया जायेगा।

(ख) जहाज बनाने का उद्योग (Ship-Building)

जहाज-निर्माण उद्योग के लिए दो बातें मुख्य हैं। प्रथम तो जहाँ जहाज बनाये जावे वहाँ ऐसी नदी हो जिसमे बड़े-बड़े जहाज चलाये जा सकें और नदी उस स्थान से समुद्र तक खेने योग्य हो। दूसरी आवश्यकता यह है कि उसके निकट जहाज बनाने का सामान सरलता से उपलब्ध हो सके। पहले जब जहाज लकडी के बनाये जाते थे तो उनके केन्द्र उन स्थानों पर थे जहाँ पर या तो लकडी मिलती थी या बाहर से सरलतापूर्वक मँगाई जा सकती थी। परन्तु जब से लोहे के जहाज बनाये जाने लगे ये केन्द्र हट कर उन स्थानों पर चले गये जहाँ लोहा तथा कोयला उपलब्ध हैं। ये उद्योग मुख्यतः ग्रेट-ब्रिटेन, स० राज्य अमरीका, रूस तथा जापान आदि देशों मे विकसित है।

(१) ग्रेट ब्रिटेन

ग्रेट-ब्रिटेन मे जहाजों के बनाने के उद्योग मे सफलता के कारण ये हैं :—

(१) यहाँ की नदियों के पास बड़ी बड़ी खाडियाँ हैं जहाँ ऊँचे ज्वार-भाटे आते रहते हैं।

(२) यहाँ बड़े-बड़े कोयले के क्षेत्र है जहाँ पर लोहे तथा इस्पात का उद्योग उन्नति पर है।

(३) लकड़ियाँ पहाडी भागों के वनों में मिल जाती हैं।

(४) संसार मे सब जगह से जहाजों की माँग बढ़ती जा रही है।

(५) अंग्रेज लोग सदा से ही नाविक रहे हैं।

ग्रेट-ब्रिटेन मे लगभग सभी प्रकार के जहाज बनाये जाते हैं। यहाँ के जहाज बनाने वाले मुख्य केन्द्र निम्नांकित हैं :—

(i) उत्तरी-पूर्वी समुद्र-तट—यह क्षेत्र टाइन, वियर तथा टीज नदियों के किनारे हैं। यहाँ पर समस्त ब्रिटेन के उत्पादन के ½ भाग जहाज बनाये जाते है। इस तटीय भाग मे जहाज बनाने वाली ४० बड़ी बड़ी कम्पनियाँ हैं जो Cargo Liners, Tramp, Warships और Tankers आदि बनाती है। न्यूकैसिल, सुन्दरलैंड, हार्टिलपुल तथा मिडिल्सबरो मुख्य नगर हैं।

इग्लैंड मे विश्व विख्यात रालस-रायस (Rolls-Royce) गाडियाँ बनाई जाती हैं। यहाँ इस उद्योग के मुख्य केन्द्र कावन्ट्री, वृहत्-लदन, बार्मिघम, आक्सफोर्ड, एविगटन और क्रू हैं। सबसे अधिक उत्पादन कावन्ट्री में होता है, जहाँ ११ बड़ी-बडी कम्पनियाँ हैं। अत इसे 'ब्रिटेन का डिट्रायट' कहते हैं।

फ्रास मे रेनोल्ट, साइट्रोन और प्यूगोट गाडियाँ पेरिस, इटली मे फीयट ट्यूरिन; और जर्मनी मे वाक्सवेगेन वूल्पसबर्ग मे बनाई जाती है। रूस में गोर्की, मास्को, गारोस्लेव, मिआस ओमस्क, नोवोसीबिरस्क, रास्टॉव तथा नीप्रोपेट्रोवस्क आदि मुख्य केन्द्र हैं।

(ङ) एञ्जिन बनाने का उद्योग (Locomotive Industry)

विश्व मे सबसे अधिक रेल के इजिन संयुक्त-राज्य में ही बनाये जाते हैं। यहाँ चार प्रमुख कम्पनियाँ एजिन बनाती हैं—शैनेकठैडी (न्यूयार्क) में, अमेरिकन लोकोमोटिव क० एडीस्टोन (फिलाडेलफिया) मे, बाल्डविन लोकोमोटिव क० तथा शिकागो के निकट ला ग्रैन्ज मे जनरल मोटर्स क०। पिट्सबर्ग, लीमा (ओहियो) और स्क्रैंटन मे भी छोटे आकार के इजिन बनाये जाते है।

अन्य मुख्य उत्पादक रूस, इग्लैण्ड, जर्मनी और वेल्जियम तथा इटली है। . में इजिन बनाने के मुख्य कारखाने यूक्रेन मे वोरोशिलोवोग्राड, लेनिनग्रॉड, ोलोमना, गोर्की, ब्रायन्सक, मरीपूल, खारकोव, स्वर्डलोवस्क, नीप्रोजरजिन्सक, तीजा, ओमस्क, तासकद, चीता, स्वोबोनी आदि हैं।

(च) मशीन-उद्योग (Machine Industry)

मशीन टूल्स (Machine Tools)

लोहे और इस्पात के उद्योग से सम्बन्धित ही मशीन टूल्स बनाने का उद्योग भी है। बडे-बड़े कारखानो मे लोहे और इस्पात के पिंड, छडें, रेलें तथा चादरें बनाने से ही इस उद्योग की समाप्ति नही हो जाती। यद्यपि इनमे से कई तैयार माल के रूप मे निकलती है किन्तु लोहे और इस्पात के पिंड कई अन्य उद्योगों के लिए कच्चे माल का काम देते है। अत इनसे जो अन्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं उन उपकरणो को ही मशीन-टूल्स कहते हैं। इनके द्वारा अनेक प्रकार की नई मशीनें बनाई जाती हैं। 'मशीन टूल' इस प्रकार का शक्ति चालित यत्र होता है जो धातु को काट कर एक विशिष्ट रूप देने के कार्य मे प्रयुक्त होता है।[11]

मशीन टूल दो प्रकार के होते हैं: (१) विशेष प्रयोजन के लिए काम मे आने वाले—जैसे मोटर गाडी के एक्सिल बनाने वाली मशीन जो एक घन्टे में १५० एक्सिल तैयार करती है। (२) साधारण प्रयोजन वाली मशीनें जो विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ मिलीग और प्लानिग मशीनें बनाने के काम आती हैं। विश्व मे सबसे अधिक मशीनटूल्स बनाने के क्षेत्र पश्चिमी यूरोप और उत्तर-पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका में ही हैं। इन दोनों क्षेत्रों के अतिरिक्त अब रूस और जापान में भी इस उद्योग की काफी उन्नति हुई है।

---

11. "A machine tool is a power-driven complete metal-working, machine not portable by hand that is used to cut or shape metal"—*Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.,** p. 433.

(३) संयुक्त-राज्य अमेरिका

संयुक्त-राज्य अमेरिका मे व्यापारिक जहाजो के निर्माण का लगभग ⅔ तीन मुख्य क्षेत्रो से प्राप्त होता है—न्यूयार्क हारबर, डिलावेयर नदी की खाड़ी और चैस्पीक की खाड़ी। न्यूयार्क हारबर में जहाज बनाने के डॉक्स स्टैटन द्वीप, ब्रूकलीन और करनी मे है। डिलावियर मे तो इतने जहाज बनते है कि इसे अमेरिका की क्लाइड नदी का नाम दिया जाता है। यहाँ के मुख्य केन्द्र फिलाडेलफिया, चेस्टर, बिलमीगटन, कैंमडेन हैं। चैस्पीक खाड़ी के किनारे स्पैरो प्वाइन्ट व न्यूपोर्ट न्यूज में सभी प्रकार के व्यापारिक तथा लड़ाकू जहाज बनाये जाते है। यहाँ इस्पात स्पैरो पाइंट के कारखानो से प्राप्त किया जाता है, पूर्व के कारखानो से मशीनें और एंजिन, एपलेशियन क्षेत्र से कोयला और स्थानीय भागो से कुशल कारीगर मिल जाते है। न्यू इंग्लैड स्टेट्स मे भी बड़े जहाज क्विन्सी और छोटे जहाज ग्रोटन मे बनाये जाते है। यहाँ पनडुब्बियाँ भी बनाई जाती है। कुछ जहाज बाथ और साऊथ पोर्टलैंड में भी बनाये जाते हैं।

यद्यपि पैसिफिक महासागर के तटीय भागों मे अनुकूल जलवायु मिलता है किन्तु इस्पात की असुविधा और बाजारो से दूर होने के कारण यहाँ जहाज बनाने का धन्धा पूर्ण रूप से नही चमका है। फिर भी खाडी के निकटवर्ती भागो मे टैम्पा, मोबाइल और पैंसकूला मे तथा प्रशात महासागरीय तट पर सिएटल, पोर्टलैंड और सैन फ्रांसिस्को मे जहाज बनाये जाते है। भील क्षेत्र मे सभी सुविधायें होने से क्लीवलैंड, डिट्रायट, शिकागो और बफैलो तथा टोलडो और लोटेन मे जहाज बनाये जाते है।

सयुक्त राज्य मे व्यापारिक जहाजों के अतिरिक्त नौसेना के लिए भी बड़े जहाज बनाये जाते है। युद्ध के जहाज यहाँ मुख्यत. पोर्ट्समाऊथ, बोस्टन, ब्रूकलीन, फिलाडेलफिया, नोरफॉक, चार्ल्सटन, ब्रिमाटन और मेअर आइलैण्ड मे बनाये जाते है।

(४) भारत

द्वितीय महायुद्ध के पहले तक कलकत्ता और विशाखापट्टम मे केवल नावें ही बनाई जाती थी अथवा जहाजो की मरम्मत होती थी, किन्तु सन् १९४१ मे सिंधिया कम्पनी ने विशाखापट्टम में समुद्री जहाज बनाने का उद्योग आरम्भ किया जिसमे अब तक कई प्रसिद्ध जलयान बनकर अवतरण कर चुके है। यहाँ जहाज बनाने के उद्योग को निम्न सुविधायें प्राप्त हैं :—

(१) यह बन्दरगाह पूर्वी तट पर कलकत्ता और मद्रास के केन्द्रवर्ती भाग मे स्थित है अत. दोनो ओर से आने-जाने की सुविधा है। (२) इसका बन्दरगाह गहरा है अतः बडे-बड़े जहाजों के ठहरने की सुविधा है। (३) बगाल और बिहार के लोहे तथा कोयले के क्षेत्र बहुत ही निकट हैं। विशाखापट्टम दक्षिण-पूर्वी रेलवे द्वारा ताता नगर से जुड़ा है (जो केवल ५५० मील दूर है) अत इस्पात मिलने की सुविधा है। (४) जहाज बनाने के लिए उपयुक्त मजबूत लकड़ी बिहार, उड़ीसा और छोटा नागपुर के जगलो से प्राप्त हो जाती है। (५) कुशल और दक्ष मजदूर बंगाल और मद्रास से आ जाते हैं। (६) छोटा नागपुर से अच्छे मेल की लकडी भी

प्राप्त करने और समय बचाने के लिए कई प्रकार की मशीनों का आविष्कार होता गया। इन मशीनो के फलस्वरूप अब उन्नत देशों मे जुताई मे लेकर फसल की कटाई तक का सारा काम मशीनों से किया जाने लगा है। मुख्य खेती की मशीनें ये है—

(१) कम्बाइन हारवेस्टर (Combine Harvester)—इससे फसल कट कर इकट्ठी हो जाती है।

(२) लैंड पडलर (Land Puddler)—इसका उपयोग अधिकतर चावल की खेतो मे पानी के भीतर खेत करने के लिए किया जाता है।

(३) विनोअर्स (Winnowers)—अनाज और भूसा अलग-अलग करने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। इस यत्र के घूमते हुए पखे इस काम के लिए हवा उत्पादन करते हैं।

(४) थ्रेशर (Thresher)—इसकी सहायता से भूसे से अन्न अलग किया जाता है।

(५) बीज बिखेरने वाला यत्र—यह यत्र पंक्तियो में नालियाँ खोदता है, उनमे बीज डालता है और उन्हे मिट्टी से ढकता है ताकि उन्हे पक्षी न चुगलें।

(६) डिस्क हैरोज और कल्टीवेटर (Disk Harrows and Cultivator)—इन दोनो यंत्रों द्वारा जुती हुई जमीन के ढेले तोड़े जाते हैं।

(७) खाद वितरक यत्र द्वारा उचित रीति से कम खर्च पर खेतो मे खाद बिखेरा जाता है।

(८) कुट्टी काटने वाला यंत्र—भूसे की कुट्टी काटने के काम आता है।

(९) ट्रैक्टर (Tractor)—भूमि को समतल बनाने के काम आता है।

(१०) कपास चुनने वाली मशीनें (Cotton picking machines)—कपास के डोडो को चुनने के लिए व्यवहृत की जाती है।

इनके अतिरिक्त चाय की पत्ती तैयार करने वाली मशीनें, तेल पेरने, चावल कूटने, दाल और आटा तैयार करने आदि की मशीनें भी मुख्य हैं।

विभिन्न देशो मे इनके उत्पादन केन्द्र इस प्रकार हैं :—

संयुक्त राज्य—शिकागो, पिट्सबर्ग, स्प्रिंगफील्ड, मिलवाकी, रैसीन, साउथ बैण्ड, मोलीन, रॉक आइलैंड, डैवनपोर्ट, मिनियापालिस, न्यूयार्क।

इंगलैंड —लीड्स, डनकॉस्टर, ङैगनहम, ग्रैंथम, डिल मारनॉक।

रूस —ट्रैक्टर के कारखाने—खारखोव, लैनिनग्रॉड, चैलिया, बिन्सक। हारवेस्टर कम्बाइन—जपोरोभ, रास्टोव-आनडोव, सैरटोव, ल्यूबरटसी। रुई चुनने की मशीनें—ताशकन्द।

जर्मनी —डसलडर्फ, मागडेलबर्ग, लिपजीग, आग्सबर्ग।

वायुयान निर्माण के लिए न केवल कुशल कारीगरों की ही आवश्यकता पड़ती है वरन् स्वच्छ मौसम की भी बड़ी आवश्यकता होती है जिससे निर्माण के बाद यानों का परीक्षण किया जा सके। इसके लिए उत्तम प्रकार का इस्पात अल्यूमीनियम और जल-विद्युत भी आवश्यक है।

उद्योग के केन्द्र

विश्व मे सबसे अधिक वायुयान संयुक्त राज्य अमेरिका मे बनाये जाते हैं। १९५३ मे यहाँ १२,००० सैनिक-यान और ४,७०० सार्वजनिक यान बनाये गये। यहाँ अब तक ५ लाख यान बनाये जा चुके हैं। अमेरिका मे यान निर्माण का कार्य मुख्यतः कैलीफोर्निया मे सैंटा मोनीका, एल सैगूँडो, लाँग बीच, सैन डिआगो, वरबैंक, हार्थोन और लॉस एंजिलस मे किया जाता है। यहाँ का मौसम बड़ा स्वच्छ और सूखा तथा गर्म रहता है। टक्साज में यानों के पुर्जे जोड़ने का उद्योग पोर्टवर्थ तथा डलैस मे किया जाता है। वायुयान निर्माण के अन्य केन्द्र विचीता और कन्सास सिटी (कन्सास), फार्मिंगडेल, बैथजेल (न्यूयार्क), सियेटल और बाल्टीमोर हैं।

संयुक्त राज्य के अतिरिक्त अन्य देशों मे भी यह उद्योग विकसित है। रूस में यह उद्योग सरकार के हाथ मे है जबकि अन्य देशों मे इस उद्योग को सरकारी सहायता दी जाती है। रूस मे अमेरिका के बाद सबसे अधिक वायुयान बनाये जाते हैं। यहाँ के मुख्य केन्द्र यूक्रेन मे मास्को-गोरकी तथा यूराल क्षेत्र मे नोवोबिरस्क, टॉमस्क, स्वरलोस्क और कोरोमोल्स्क हैं। पश्चिमी यूरोप मे लन्दन, कॉवनट्री, वूलवरहैम्पटन, ब्रिस्टल, साऊथ हैम्पटन, पेरिस, मिलन आदि मे वायुयान बनाये जाते हैं। द्वितीय महायुद्ध के बाद से जर्मनी मे वायुयान बनने पर प्रतिबन्ध लगा हुआ है।

बंगलौर मे भारत का मुख्य कारखाना है। इस कारखाने की स्थापना के कई कारण हैं: (१) हवाई जहाज के लिये एलूमीनियम की आवश्यकता होती है जो पास ही ट्रावनकोर के कारखाने से प्राप्त हो जाता है। (२) फौलाद मैसूर राज्य के भद्रावती लोहे के कारखाने से मिल जाता है। (३) दक्षिण मैसूर मे जल विद्युतशक्ति की उन्नति होने के कारण कारखाने के लिये शक्ति भी आसानी से उपलब्ध हो जाती। (४) भारतीय वैज्ञानिक संस्था भी बंगलौर मे है जिससे टेकनीकल सहयोग भी प्राप्त होता है। सोवियत संघ के सहयोग से भारत मे मिग (Mig) हवाई जहाज बनाने का कारखाना स्थापित किया जा रहा है।

(घ) मोटर गाड़ी उद्योग (Antomobile Industry)

मोटर गाड़ियाँ विश्व मे सबसे अधिक संयुक्त राज्य अमेरिका में बनाई जाती हैं। विश्व मे पाई जाने वाली यात्री कारें और मोटर ट्रकों का क्रमशः ७५% और ५०% संयुक्त राज्य मे है। संयुक्त राज्य के बाहर मोटर गाड़ियों मे कुल उत्पादन का ९०% ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, कनाडा, पश्चिम जर्मनी और रूस से प्राप्त होता है। मोटर गाड़ियों का उत्पादन का आरंभ १८६५ से होता है जब कि सीगफ्रीड मारकस नामक आस्ट्रियन ने गैसोलीन से चलने वाली मोटर का निर्माण किया। इसके बाद इस पर १८८० मे जर्मनी के नाथन ओटो, कार्ल बैंज और ग्रोटफीड डैलमर ने तथा फ्रांस के एमीले लैवेसर ने कई सुधार किये। तभी से इस उद्योग का क्रमिक विकास हुआ है। १८९२-९४ मे अमेरिका में फोर्ड आदि ने भी इसी प्रकार की मोटरें बनाई।

वर्तमान काल में कपड़ा बनाने के लिए जिन प्राकृतिक और कृत्रिम रेशों का उपयोग किया जाता है, उनकी विशेषतायें नीचे की तालिका में बताई गई हैं :—

कपड़ा बनाने में प्राकृतिक और कृत्रिम रेशो का उपयोग'

रेशा	टिकाऊपन	लोच	बरतने में सावधानी	दिखावट
लिनेन	मजबूत	कम	धोने योग्य, स्त्री चाहता है	चटकीला, मजबूत
कपास	काफी मजबूत	सिकुड़ता है	लिनेन से हल्का	कठोर
रेयन	,,	बढ़ता है	धोने योग्य-सल पड़ जाते है	मुलायम-चमकदार
रेशम	बहुत मजबूत	काफी लोचदार	धोने योग्य	मुलायम
नाइलन	,,	कम लोचदार	धोने योग्य, शीघ्र सूख जाता है	रेशम की तरह
ऊन	मजबूत	सरलता से सिकुड़ता है	शुष्क धुलाई, सल पड़ते है	मुलायम, (Good drape)
ओरलन	ऊन से मजबूत	सिकुड़ता या बढ़ता नहीं है	धोने योग्य-धब्बे सह सकता है	ऊन की तरह
डैक्रोन	बहुत मजबूत	,,	धोने योग्य-क्रीज पड़ती है	ऊन तथा रेशम की तरह
विकारा	कपास से कम मजबूत	सिकुड़ता है	धोने योग्य	बहुत मुलायम
डाइनेल	बहुत मजबूत	सिकुड़ता या बढ़ता नहीं है	,,	ऊन की तरह

1. *L. E. Klimm, O. P. Starkey, J A Russel*, **O. P. Cit.**, p. 345.

राज्य अमेरिका की तुलना में यहाँ प्रति व्यक्ति पीछे वार्षिक आय कम है। अतः मोटरों की स्थानीय माँग नहीं है। (२) अन्य देशों से पश्चिमी यूरोप से आयात की गई मोटरों पर अधिक आयात-कर लगाया जाता है—विशेषतः संयुक्त राज्य से। (३) यहाँ अधिकतर मूल्यवान गाड़ियाँ ही बनाई जाती हैं। (४) द्वितीय महायुद्ध काल में इस उद्योग को बड़ी क्षति पहुँची। (५) गैसोलीन के भाव ऊँचे हैं। किन्तु अब इन देशों में कइयों में विशेषकर इंगलैंड, जर्मनी, इटली और फ्रांस में स० राज्य की कम्पनियों की शाखें खुल गई हैं तथा कई देशों में स्वयं के भी कारखाने स्थापित हो चुके हैं। अतः द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् यहाँ मोटर गाड़ियों का उत्पादन पुनः बढ़ रहा है।

३. इंगलैंड इंगलैंड में मोटरें बनाने का उद्योग मुख्यतः मिडलैंड्स और लंदन क्षेत्र में केन्द्रित है किन्तु अनेक भागों में छोटी बड़ी कम्पनियों द्वारा मोटरें बनाई जाती हैं। ब्रिटिश मोटर कॉरपोरेशन फोर्ड, रूट्स, स्टैंडर्ड और वॉक्सहॉल आदि कम्पनी कुल उत्पादन का ६०% बनाती हैं। १९६० में यहाँ ८·६ लाख कारें, २·८ लाख ट्रकें और ६,५०० सार्वजनिक मोटरें तैयार की गईं।

मोटरों का सबसे अधिक उपयोग स० राज्य अमेरिका, कनाडा, न्यूजीलैण्ड और आस्ट्रेलिया में होता है जहाँ प्रति मोटर पीछे क्रमशः ३, ४, और ५ व्यक्ति उपभोक्ता हैं। यूरोप में सबसे अधिक मोटरें ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, स्वीडेन, बेल्जियम आदि देशों में पाई जाती हैं किन्तु विश्व में सबसे कम मोटरें चीन, पाकिस्तान, भारत आदि देशों में—उनकी जनसंख्या की दृष्टि से—मिलती हैं। अगली तालिका में प्रमुख देशों में मोटरों की कुल संख्या और प्रति मोटर पीछे मनुष्यों की संख्या बताई गई है :—

क्षेत्रफल और जनसंख्या पीछे मोटरों की संख्या

देश	सड़कों के प्रति मील पीछे	प्रति १०० वर्ग मील क्षेत्रफल पीछे	प्रति १ लाख जनसंख्या पीछे
आस्ट्रेलिया	४·४	७८	२४,५८७
कनाडा	८·०	११२	२६,८८६
चीन	२०	२	२१
फ्रांस	५·५	२,३५१	११,४६४
प० जर्मनी	१३·७	२,२२६	४,२०१
भारत	१३	२१	६५
इटली	१२१	१,२७३	३,०६६
जापान	११·७	७३४	१,१६४
पाकिस्तान	०८	१३	५६
सं० रा० अमरीका	२१·४	२,१५८	३८,७७७
इंगलैंड	२८·७	५,७५५	१०,५८६
रूस	१·६	२६	१,५६३

संयुक्त राज्य अमेरिका में ही विश्व में सबसे ज्यादा मशीन-टूल बनाये जाते हैं क्योंकि (i) यहाँ लोहे और इस्पात का उद्योग बड़ा विकसित है, (ii) कच्चा लोहा और अन्य धातु पदार्थ तथा कोयला और जल-विद्युत शक्ति काफी बड़ी मात्रा में उपलब्ध हैं, (iii) यहाँ विज्ञान का विकास कई दिशाओं में हुआ है, (iv) यहाँ कुशल और दक्ष कारीगर बहुतायत से मिलते हैं। इन कारणों से न्यू-इंग्लैंड स्टेट्स में ही सबसे प्रथम यह उद्योग स्थापित हुआ। यहाँ के प्रसिद्ध केन्द्र वरसेस्टर, फालरिवर, ब्रिजपोर्ट, न्यू ब्रिटेन, हार्टफोर्ड और प्रोविडेन्स हैं। संयुक्त राज्य में मशीन टूल्स के कुल उत्पादन का लगभग ६० प्रतिशत सात बड़ी रियासतों से प्राप्त होता है। ये क्रमशः ओहियो, मिशीगन, मैसेचुसेट्स, कनैक्टीकट, इलिनियाँस, रोड द्वीप और न्यूयार्क हैं। अब नये कारखाने डिट्रायट क्षेत्र में ही स्थापित किये जा रहे हैं क्योंकि मशीन टूल्स की यहाँ मोटर उद्योग में बड़ी माँग है। यहाँ के प्रमुख केन्द्र क्लीवलैण्ड, सिडनी, डेटन, ओहियो, मिलवाकी, मैडीसन, शिकागो और इण्डियानापोलिस हैं। यहाँ से कुल उत्पादन का लगभग ३० प्रतिशत ब्रिटेन, कनाडा, फ्रांस, ब्राजील, मैक्सिको, अर्जेन्टाइना आदि देशों को निर्यात किया जाता है।

पश्चिमी यूरोपीय देशों में भी उत्तम कारीगर अधिक मिलने से यह उद्योग पूर्ण विकसित है। सबसे प्रमुख देश जर्मनी है जहाँ विश्व में संयुक्त राज्य के बाद सबसे अधिक मशीन टूल्स बनाये जाते हैं। यहाँ के कारखाने रूर-राईन क्षेत्र में स्थित हैं। चिमनीज, डसलडर्फ, कोलोन, फ्रैंकफर्ट, लिपजीग और ड्रेस्डन यहाँ के प्रमुख केन्द्र हैं।

इंग्लैण्ड, रूस, स्वीडेन, स्विटजरलैण्ड तथा बेल्जियम में भी उत्तम प्रकार के मशीन टूल्स बनाये जाते हैं।

२. औद्योगिक मशीनें (Industrial Machinery)

मशीन-टूल्स के अतिरिक्त विश्व के प्रमुख औद्योगिक देशों में औद्योगिक मशीनें भी बनाई जाती हैं। नीचे मुख्य-मुख्य प्रकार की मशीनें और उनके उत्पादक देश बताये गये हैं :—

सूती वस्त्र उद्योग की मशीनें (Cotton Textile Machinery)—(१) इंगलैंड—मानचेस्टर, बोल्टन, लंकाशायर क्षेत्र के नगर।

(२) संयुक्त राज्य अमेरिका—वरसेस्टर, लॉविल, हाइड पार्क, ह्विटीन्सविले, फिलाडेलफिया।

ऊनी वस्त्र उद्योग की मशीनें—इंगलैंड में ब्रेडफोर्ड, लीड्स, यार्कशायर के नगर।

जूट उद्योग की मशीनें—डंडी और बेलफास्ट में।

हौजियरी मशीनें—नार्टिघम और लीसेस्टर में।

अन्य देश जहाँ वस्त्र उद्योगों के लिए मशीनें बनाई जाती हैं वे उत्तरी फ्रांस, बेल्जियम, पश्चिमी जर्मनी, उत्तरी इटली, स्विटजरलैंड, रूस, जापान और भारत (कोयम्बटूर, बम्बई, सतारा, कलकत्ता, जमशेदपुर आदि हैं)

३. कृषि की मशीनें (Farm Machinery)

ज्यों-ज्यों कृषि की विधि में उन्नति होती गई त्यों-त्यों भूमि से अधिक उत्पादन

देश	तकुए			कार्यशील (१९६०)	साधारण	कर्घे स्वचालित	कार्यशील
	रिग	म्यूल	योग				
भारत	१३११०	३६	१३१४६	१२१४७	१८७८११	२०४३०६	१६६७३८
इङ्गलैंड	१०००७	९८८२	१९८८६	१६४४८	२०५००००	२५००००	२२२७००
प० जर्मनी	६०२०	—	६०२०	६०२०	६१३१२	१२५७७१	१२५७७१
फ्रांस	६०७३	२०७	६२८०	५२११	५७४६४	१२४५१७	१०१०८६
इटली	५२०४	७	५२११	४०८३	२६३६२	१०६२२६	८६६१५
बेल्जियम	१५८१	—	१५८१	१३२२	२१२००	३२५२०	२७०००
स्पेन	२४८५	१२३	२६०८	२५३५	५७८७३	६८९६२	६१८१६
रूस	१०७१२	—	१०७१२	१०७१२	१२६०००	२१६०००	२१६०००
संयुक्त राज्य अमेरिका	२०६८१	—	२०६८१	१९२७६	—	३२६३८७	३१२८६६
जापान	१२८९५	—	१२८९५	८६९३	२९६०८३	३६८३४९	२८९९२०
चीन	८६४०	—	८६४०	८६४०	८००००	९००००	९००००
पाकिस्तान	१८८२	—	१८८२	१७६५	११२८२	२८३६०	२६१५१
ब्राजील	३४९०	१५	३५०५	३१९२	७३२२६	११९४४४	१०८७९१
मेक्सिको	११८८	—	११८८	११८४	२२७३२	३८६०४	३७७१२
अन्य देश	१६४३८	४२	१६४८०	१५९९८	२३०४२०	३४३७५५	३८८१४४
योग	१२४२३१	१०३१५	१३४५४६	१२१०१७	१५३१७१६	२५८९९१७	२३७२४१०

अध्याय २६

वस्त्र उद्योग

(TEXTILE INDUSTRY)

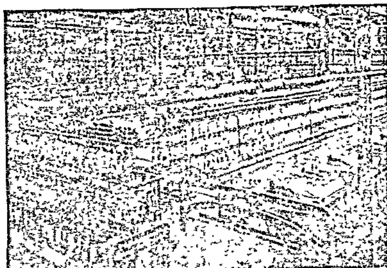
उद्योग का विकास

आदि काल से ही अपना तन ढकने के लिये मनुष्य ने विभिन्न प्रकार के वृक्षो और पशुओ के रेशे और बालो से धागे बनाकर वस्त्र बुनना सीख लिया था। ज्यों-ज्यों मानव-सभ्यता का विकास होता गया त्यो-त्यों वस्त्र कातने और बुनने की कुशलता कला रूप मे परिणत होती गई। लिनेन के बने कपडे प्रागैतिहासिक युग मे स्विट्जरलैंड के गाँवों मे पाये गये हैं तथा ५,५०० वर्ष पूर्व मिश्र मे शव भी इन्ही वस्त्रो मे लिपटे हुये पाये गये हैं। इसी प्रकार ५,००० वर्ष पूर्व भारत मे भी कपास से सूती वस्त्र बनाये जाते थे जिसका प्रमाण आज भी मोहनजोदडो और उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका मे की गई खुदाई से प्राप्त होता है। ऊनी वस्त्र बनाने का उद्योग रोम मे और रेशम के वस्त्रों का उद्योग चीन मे बहुत ही पुराने काल से होता आया है।

(क) सूती वस्त्र उद्योग (Cotton Industry)

आरम्भ में वस्त्र उद्योग घरेलू और कुटीर उद्योग के रूप मे किया जाता था जिसमे कारीगरी की कुशलता का महत्व बहुत अधिक था। भारत मे सूती वस्त्र व्यवसाय बहुत प्राचीन है। यहाँ उत्तम प्रकार के बारीक और महीन कपडे बनाये जाते थे जिनकी माग विश्व के अधिकाश देशो मे थी। चीन मे भी यह उद्योग बहुत प्राचीन काल से चालू रहा है, किन्तु इसका महत्व यूरोप से बहुत दूर होने के कारण बहुत कम था। यूरोप मे सूती वस्त्र उद्योग आरम्भ करने का श्रेय मूर लोगो को है। १७ वी शताब्दी तक इगलैंड मे इस उद्योग का विकास नही हुआ था क्योंकि तब तक उस देश मे ऊनी कपडा उद्योग पर ही अधिक ध्यान दिया जाता था। इसका मुख्य कारण वहाँ ऊन का प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होना था। किन्तु औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप इंगलैंड मे वस्त्र उद्योग मे बड़ा विकास हुआ जिसके फलस्वरूप अब कपडा मशीनो द्वारा बनाया जाने लगा। सन् १७३३ मे Flying Shuttle के आविष्कार से कपड़ा चौडा और सरलता से बुना जाने लगा। इसके लिये अधिक मजबूत धागे की आवश्यकता पड़ने लगी। सन् १७६० मे हारग्रीव्स ने कार्डिग मशीन (Carding Machine) तथा सन् १७६४ में 'Spinning Jenny' का तथा सन् १७६७ मे आर्कराइट ने 'Spinning Jenny' और सन् १७६८ मे 'Water Frame' नामक कताई की मशीनों का आविष्कार किया जिनके फलस्वरूप धागा उत्तम और सूत मजबूत काता जाने लगा। सन् १७७९ में क्रॉम्पटन ने 'Spinning Mule का आविष्कार किया जिसमें एक श्रमिक १०० तकुओ को देख सकता था और प्रतिदिन ३०० पौंड सूत कात सकता था। इसके बाद 'Ring Spindles' से ४५० पौंड सूत काता

भग ४० प्रतिशत सूती कपडा प्राप्त होता है । यहाँ यह उद्योग इतना बढा चढा है कि यह इस देश का द्वितीय महान् उद्योग है ।



चित्र १६३ इगलैड के मिलो मे यत्रो द्वारा कताई

१८ वी शताब्दी के अन्त मे इन कारणो से ब्रिटेन के सूती वस्त्र व्यवसाय मे असाधारण उन्नति हुई —(१) ब्रिटेन की बढी-चढी सामुद्रिक शक्ति तथा विस्तृत साम्राज्य के कारण कच्चा माल (कपास) मिलने तथा बने हुए माल के विकने की सुविधा थी। (२) कपास उत्पादक देशो मे औद्योगिक उन्नति नहीं थी। (३) यहाँ की आर्द्र जलवायु, जलशक्ति तथा कोयला वस्त्र उद्योग स्थापना के लिए स्वाभाविक सुविधायें थी। (४) सूत कातने की मशीनो और यत्रो की सुविधायें थी। (५) भारत तथा कपास के उत्पादक अन्य देशो मे अफ्रीका, लका, आस्ट्रेलिया, तथा बर्मा मे राजनैतिक स्वतन्त्रता नही थी, तथा (६) यूरोप के अन्य देशो मे राजनीतिक अशाति और युद्ध का बोलबाला था।

सन् १९१२ तक इस क्षेत्र मे ब्रिटेन की स्पर्द्धा करने वाला कोई देश न था। किन्तु जापान से मुकाबला करना पड़ा तो ब्रिटेन ने बढ़िया किस्म का अधिकाधिक कपड़ा बुनना शुरू किया क्योकि घटिया कपडे मे यह जापान से प्रतिस्पर्द्धा नही कर सकता था जहा श्रम बहुत सस्ता था और जिसे कपास भी निकट ही चीन से प्राप्त हो जाती थी। ब्रिटेन मे कपास मुख्यत सयुक्त राज्य से मगाई जाती थी और श्रम अपेक्षाकृत मँहगा था। सन् १९३० के बाद ब्रिटेन के सूती उद्योग को भारतीय स्वदेशी आदोलन से भी बहुत क्षति हुई क्योकि भारत मे विदेशी कपडे का बहिष्कार होने से यहाँ ब्रिटेन के माल की खपत कम हो गई तब लङ्काशायर क्षेत्र की अनेक सूती मिलें रेशमी मिलो मे परिवर्तित करनी पडी। बीसवी शताब्दी मे प्रथम विश्व युद्ध के बाद मुकाबला और भी कठिन हो गया क्योकि सयुक्त राज्य अमेरिका भी मैदान मे आ

जाने लगा। इससे इंगलैंड मे सूत की अधिकता हो गई। इसका उपयोग करने के लिए १७८५ में कार्टराइट ने शक्ति चालित कर्घे (Power Looms) का आविष्कार किया। अतः कताई की मशीनों द्वारा उत्पन्न सूत सुविधाजनक रूप से इन कर्घों पर बुना जाने लगा। १७८६ मे कार्टराइट ने अपने कर्घे मे और भी कई परिवर्तन किये। फलस्वरूप इंगलैंड मे यह उद्योग कुटीर प्रणाली के कारखाने के रूप में स्थापित हो गया। इसी समय १७६३ में ह्विटने ने लुढाई की चर्खी (Cotton Gin) का आविष्कार किया। इसके कारण रेशे (विशेषकर कपास) बहुत सस्ते हो गये। सन् १७८५ मे बैल द्वारा 'Cylinder Printer' और जैकर्ड द्वारा 'Jackard Loom' का भी आविष्कार किया गया। इन नयी मशीनों के फलस्वरूप सूती कपड़े की छपाई और रेशमी तथा सूती धागों को मिलाकर बुनना सरल हो गया। इस प्रकार इङ्गलैंड में इस उद्योग के स्थापित और विकास होने का मुख्य कारण वहाँ होने वाली औद्योगिक और यान्त्रिक क्रान्ति ही है। यन्त्रों के उपयोग के कारण ही इंगलैंड इस उद्योग मे निरन्तर उन्नति करता गया है और अब विश्व मे इसने पहला स्थान ग्रहण कर लिया है। अमेरिका, जापान और यूरोप के अन्य देशों में यह उद्योग देर से फैला। इन देशो मे इस उद्योग का आपेक्षिक महत्व इनसे होने वाले कपड़े की निर्यात मात्रा से स्पष्ट होगा :—

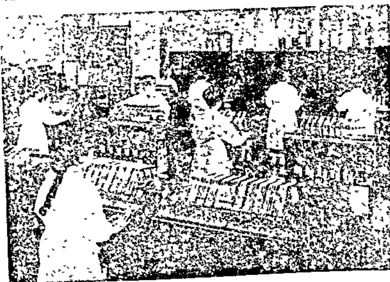
कपडे का निर्यात (००० मैट्रिक टनो मे)

देश	१९५७	१९५८	१९५९
भारत	१००	६६	७२
जापान	१४०	१२८	१२८
स० रा० अमरीका	६६	६३	५६
इगलैड	५७	४८	४२
फ्रास	३३	३३	४२
विश्व का योग	६५६	५८५	६००

सूती कपडे का उद्योग अन्य उद्योगो मे सबसे प्रमुख माना जाता है क्योकि इसी के द्वारा ससार की अधिकाश जनसख्या को तन ढकने हेतु वस्त्र मिलते है। आज कल इस उद्योग का विश्व के सभी देशों में प्रमुख स्थान है। ग्रेट ब्रिटेन मे सूती वस्त्र व्यवसाय के बारे मे कहा जाता है कि "वस्त्र व्यवसाय यहाँ की रोटी है" (Cotton is bread in Great Britain) इस कथन का कारण यह है कि यहाँ की अधिकाश जनसख्या की रोटी का मुख्य आधार यही व्यवसाय है। सयुक्त राज्य अमेरिका मे इस व्यवसाय को "अमेरिका का राजा" (Cotton is the King in America) कहते हैं क्योकि यह इस देश के लिए अत्यन्त लाभदायक धन्धा है। जापान मे भी कपास शक्ति है (Cotton is Power in Japan) क्योंकि विश्व के व्यापार में जापान का यह व्यवसाय ब्रिटेन जैसे शक्तिशाली देश से पूर्ण प्रतिस्पर्धा कर रहा है। भारत मे भी यह व्यवसाय महात्मा गाधी द्वारा चलाये गये चरखे पर आश्रित राजनैतिक आन्दोलन का प्रमुख आधार रहा है। इस व्यवसाय के सम्बन्ध में डा० बुकानन ने उचित ही कहा है : "For India Cotton manufacture is ancient glory, past and present tribulation, but always hope."

जुलाहा ६ से ८ करघे चला लेता है और स्वयंचालित करघो के चलने से तो अब एक जुलाहा ३० से ५० करघे तक चला लेता है।

(४) उद्योग की व्यवस्था सहकारी ढग पर है और कुटीर उद्योग तथा मिल उद्योग में सम्पर्क से कार्य किया जाता है। यहाँ का यह उद्योग मुख्यत. दो उद्योग-पतियों—मितसुई (Mitusui) और मितुबिसी (Mitubishi)—के ही अधीन है। अत माल की प्रतिस्पर्धा नही होती।



चित्र १६६ जापान की मिलो मे स्त्रियो का कार्य

(५) चीन, इडोनेशिया, थाइलैंड, पाकिस्तान जैसे बृहत् खपत के केन्द्र निकट हैं तथा जापानी जहाजो पर अन्य जहाजो की अपेक्षा कम भाडा लगता है।

(६) पुराने यत्रों को शीघ्र ही बदलकर उनके स्थान पर अधिक नवीन और उत्तम ढंग के यत्र लगा दिये जाते हैं। टोयाडा स्वचालित प्रणाली द्वारा उत्पादन व्यय मे काफी कमी हो गई है। इसके अतिरिक्त यहाँ की मिलो मे दो पारी (Shifts) मे काम होता है। अत मशीन से अधिक काम लिया जा सकता है और उत्पादन भी अधिक होता है।

जापान के अनेक क्षेत्रो मे विशेपता प्राप्त की गई है। कोई केन्द्र सूत कातने के लिये तो कोई बुनने के लिये प्रसिद्ध है। सूत कातने का कार्य बडी-बडी फैक्ट्रियो मे किया जाता है। यह उद्योग मुख्यतः (१) आतरिक सागर के पूर्वी छोर पर किंकी क्षेत्र में जहाँ ओसाका सबसे बडा केन्द्र है, (२) आईसी की खाडी के समीपवर्ती तट मुख्य रूप से मीनो-ओवारी का मैदान जहाँ नगोया महत्वपूर्ण केन्द्र है, तथा (३) क्वान्टो प्रदेश और आन्तरिक सागर के उत्तरी तट पर स्थापित है।

कपडा बुनने का कार्य छोटी-छोटी फैक्ट्रियो मे किया जाता है। विशेपत शक्ति चालक करघे अधिक चलाये जाते हैं। बुनने के कारखाने अधिक दूर-दूर स्थित हैं किंतु होन्शू के तीन औद्योगिक क्षेत्र इन मिलो के मुख्य क्षेत्र हैं।

कारखाने खोले जा रहे है। भारत मे इस प्रकार के कारखाने कानपुर, ग्वालियर, बिरलानगर और अमृतसर आदि नगरों में खोले गये हैं।

(ii) सूती कपडा बनाने के लिए कच्चे माल की आवश्यकता होती है—किंतु कपास गाँठ मे बाँधकर कम खर्च और आसानी के साथ दूर के क्षेत्रों को भेजा जा सकता है। अतएव वर्तमान समय मे जिन देशो में कपास पैदा नहीं होती वे ही सूती कपड़े बनाने वाले प्रमुख देश है। इगलैड अपने मिलों के लिए स० राज्य अमेरिका, मिस्र, युगेन्डा और अफ्रीका के अन्य देशो से कपास मँगाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान, भारत और चीन से अपनी माँग पूरी करते है।

(iii) उत्तम जल की आवश्यकता सूती कपड़े के लिए बहुत महत्व रखती है। सूत की धुलाई, रगाई और अन्य कई प्रकार के कार्यों के लिए उत्तम जल की आवश्यकता होती है। इसी कारण नदियों, नहरो या झीलो के किनारे सूती-व्यवसाय के केन्द्र स्थापित किये गये है। इंगलैड में ब्लैकबर्न या बर्नले में लीड्स या लिवरपूल तक नहर के किनारे किनारे सूती कपड़े के कारखाने पाये जाते हैं। सं० राज्य में भी न्यू इगलैन्ड स्टेट्स में नदियों के किनारे-किनारे ही अधिक कारखाने स्थापित किये गये हैं।

(iv) सूती वस्त्र-व्यवसाय कुशल कारीगरों की उपलब्धता पर भी बहुत निर्भर करता है। लङ्काशायर और मानचेस्टर मे इस धधे के केन्द्रित होने का प्रधान कारण यही है कि वहाँ पहले ऊनी कपडा बनाने वाले कुशल कारीगर पाये जाते थे। इसी प्रकार जापान में सूती वस्त्र-व्यवसाय को रेशमी कपड़ा बुनने वाले से काफी सहायता मिली है। फ्रास के उत्तरी-पूर्वी भाग मे सूती कपडे की मिलें इसीलिये चालू हुई कि वहाँ ऊनी कपडा बनाने वाले चतुर मजदूर काफी मात्रा मे मिलते है। भारत मे बम्बई और अहमदाबाद केन्द्रो में अधिकाँश जुलाहे और कोली (जो पहले हाथ करघों पर काम करते थे) काम करते हैं।

(v) शक्ति के साधनों को उपलब्धता—सूती कपडे का उद्योग साधारणतया उन्ही स्थानों पर स्थापित किया जाता है जहाँ कोयला अथवा बिजली सस्ती प्राप्त हो जाती है। पश्चिमी यूरोप मे जर्मनी, फ्रास और इगलैंड मे यह उद्योग कोयले की खानों के निकट ही स्थापित है क्योकि इन क्षेत्रो पर कोयले की खानो मे काम करने वाले मजदूरो के बच्चो और स्त्रियो से सस्ती मजदूरी पर काम लिया जा सकता है, इसके अतिरिक्त कोयला क्षेत्रो मे साधारणतया इजीनियरिंग कारखाने भी होते हैं, जिनमे मशीनो की टूट-फूट आसानी के साथ दुरस्त कराई जा सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे प्रपात रेखा पर स्थित सभी केन्द्रो के लिए बिजली सस्ती मिल जाती है। इटली, नार्वे और स्विटजरलैंड मे तथा बम्बई में भी बिजली के सहारे ही कारखाने चलाये जाते हैं जबकि कानपुर, ग्वालियर, दिल्ली अथवा अन्य केन्द्रो मे कोयले का ही अधिक प्रयोग किया जाता है।

(vi) तैयार माल को खपत के केन्द्रो तक पहुँचाने के लिये सस्ते और उत्तम यातायात के साधनों की आवश्यकता पडती है। प्राय. सभी प्रमुख केन्द्र उन प्रदेशों से हजारों मील दूर है जहाँ कपडे की माँग होती है। उदाहरण के लिये लङ्काशायर के कपड़े पूर्वी देशो के लिये, जापान के कपड़े चीन और भारत के लिए तथा राज्य अमेरिका के कपडे पश्चिमी द्वीप समूह और दक्षिणी अमेरिका के [illegible] किये जाते हैं। भारत मे भी मद्रास, बम्बई और अहमदाबाद की मिलें [illegible]

श्रमिक आबादी के लिए कपडे की स्थानीय माग भी बहुत है। राइन नदी और नहरों द्वारा सस्ता यातायात प्राप्त हो जाता है। ब्रेमेन बन्दरगाह द्वारा अमेरिकन रुई प्राप्त हो जाती है। इस क्षेत्र के सूती केन्द्र ब्रेमेन, एल्बरफील्ड, मुंचेन, ग्लॉडबाक, मुन्टोन, रैन, क्रीफैल्ड और ग्रोनाऊ इत्यादि हैं।

(ii) **सैक्सोनी क्षेत्र**—इस क्षेत्र मे सूती कपडे के विकसित होने का कारण यहाँ का प्राचीन ऊनी वस्त्र उद्योग है जिससे यहाँ कुशल कारीगरो की कमी नही। यहाँ कोयला जिकाऊ-ड्रेस्डन प्रदेश से मिलता है। खनिज पदार्थों पर अवलम्बित उद्योगो के धीरे-धीरे नष्ट होते जाने से श्रमिको की समस्या और सरल हो गई और शीघ्र ही सूती उद्योग इस क्षेत्र का मुख्य उद्योग हो गया। लीपजिग, ड्रेस्डन, राइसन बाक, चिमनिज, म्यूनिज, व ज्विचान मुख्य केन्द्र है।

(iii) **दक्षिण पश्चिमी जर्मनी क्षेत्र**—यहाँ के मुख्य सूती केन्द्र स्टटगार्ट तथा आग्सबर्ग और मुलहाउस हैं। यहाँ कोयला और कच्चा माल बाहर से मँगवाना पडता है। नेकार औद्योगिक क्षेत्र में यहाँ के कपड़े की खपत बहुत है। यही से सस्ते मजदूर भी मिलते हैं।

जर्मनी मे सूत का उत्पादन ३ ला० टन तथा कपडे का २·७ लाख टन था।

(६) रूस में सूती कपड़े का उद्योग

रूस मे यह उद्योग कुछ ही समय से आरम्भ हुआ है। पहले रूस को कपास ...ा से मँगवानी पडती थी। किन्तु जब वहीं कपडे का उद्योग विकसित हो गया तो कपास का आना रुक गया अत अब रूस मे ही सर और आमू नदियों के सूखे क्षेत्रों मे—ताजकिस्तान व जार्जिया और मध्य दक्षिणी रूस—कपास पैदा किया जाने लगा है। किन्तु घरेलू माँग पूरी न होने से विदेशों से भी रुई आयात की जाती है।

यही कपडे उद्योग का मुख्य क्षेत्र मास्को-आइवानोवा है। यह टूला के कोयला क्षेत्र पर हैं। मास्को-वाल्गा नहर से सस्ता यातायात प्राप्त होता है तथा मास्को औद्योगिक क्षेत्र है इसलिए चतुर श्रमिक पर्याप्त मात्रा मे मिल जाते है। जनसंख्या अधिक होने से कपड़े की माँग भी बहुत है। मेरी नहर द्वारा यह क्षेत्र उत्तर पश्चिम औद्योगिक क्षेत्र और लेनिनग्राड से जुडा है। रूस के लगभग ¾ कपडे का उत्पादन इसी क्षेत्र से प्राप्त होता है। कई छोटे नगरो मे रगाई, रसायन, सूती कपडे की मशीनें आदि बनाने के कारखाने भी यहाँ हैं। अत उद्योग की मरम्मत आदि की भी बडी सुविधा है। इस उद्योग के अन्य प्रमुख केन्द्र ये है—

मास्को आइवानोवा, लैनिनग्रॉड, कोस्ट्रोमो, रिबिनस्क, कालिमिन, बरनौल, अजरबेजान, लेनिनाकन, किरोब आबाद, तासकंद, फरगना। आइवानोवा तो रूस का मानचेस्टर कहलाता है।

रूस मे सूत का उत्पादन १२ ला० टन और कपडे का ४८६ करोड़ मीटर था।

(७) चीन में सूती वस्त्र उद्योग

चीन के औद्योगिक व्यवसायो मे सूती कपडे का सबसे अधिक महत्व है। यहाँ सबसे पहली मिल शघाई मे स्थापित की गई। इसके लिए कपास विदेशों में आयात किया जाता था। आज भी शघाई इस उद्योग का सबसे बडा केन्द्र है। यही चीन की ५०% मिलें हैं। यहाँ इस उद्योग को निम्न सुविधायें प्राप्त हैं :—

भागों के लिए कपडा तैयार करती है जो रेलों द्वारा आसानी के साथ वहाँ पहुँचा दिया जाता है।

(vii) वस्त्र-उद्योग की प्रगति के लिए बाजार की निकटता भी अत्यधिक आवश्यक है। ग्रेट ब्रिटेन में सूती कपड़े के धन्धे की उन्नति होने का कारण यही है कि इनका बाजार अत्यन्त विशाल और विस्तृत है। विश्व के सभी मुख्य उपभोक्ता देशों पर इसका राजनीतिक प्रभुत्व हैं। भारत मे बम्बई और अहमदाबाद की मिलो के लिये भी विस्तृत-बाजार वर्तमान है इसीलिये यहाँ कपड़े का उद्योग अधिक उन्नति कर गया है।

उद्योग के प्रमुख क्षेत्र

यद्यपि कपास ३५° उत्तरी और दक्षिणी अक्षाशो के बीच पैदा होता है किंतु सूती वस्त्र-उद्योग मुख्यतः ३०° अक्षाशो के उत्तरी क्षेत्रो में स्थापित हैं। विश्व मे सूती कपड़े के मुख्य उत्पादक ब्रिटेन, सयुक्त-राज्य अमेरिका, जापान और भारतवर्ष है। दूसरे शब्दों मे हम यह कह सकते हैं कि सूती कपडा बनाने के मुख्य क्षेत्र अटलांटिक के दोनों तटों पर और उत्तरी पैसिफिक के पश्चिमी तट और हिंद महासागर के तट पर स्थित हैं।

इंगलैंड मे विश्व के कुल तकुओं का २३·७% पाया जाता है, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका मे १६·६%, फ्रास मे ६·६%, जापान मे ५·५%, पश्चिमी जर्मनी में ५·३%; और इटली मे ४·६% है। पृष्ठ ७८८ पर विश्व के प्रमुख देशो में तकुओं की सख्या बताई गई है :—

विश्व के प्रमुख देशो मे सूती कपड़े का उत्पादन इस प्रकार है —

विश्व मे सूती कपड़े का उत्पादन

देश		१६५५	१६५६
स० रा० अमरीका	(ला० गज)	१०,१७४·६०	६,५७२ ७६
चीन	(,,)	३,८१६·००	८,६६८·००
भारत	(,,)	६,८४६·४८	७,१८३·४३
रूस	(,,)	६,४५६·००	५,५२०·००
जापान	(ला० वर्ग गज)	३,०११·८४	३,२६३·८०
फ्रास	(,,)	१,८२१ ८८	१,६६८ १२
प जर्मनी	(,,)	१,४१६ २०	१,४६६·००
इगलैंड	(ला० गज)	१,७८१·००	१,३३६·८०
इटली	(ला० वर्ग गज)	१,०११·४४	१,२२७·००

१९६१ में सं० राज्य मे ८३७ करोड मीटर, रूस में ४६० करोड मीटर; भारत में ४७० क० मी; जापान में ११२ क० मी०, इंग्लैंड मे ७० क० मी०; चीन में ७६० क० मी०; पोलैंड मे ६४ करोड़ मीटर और जर्मनी मे २·३ ला. टन; फ्रास मे २·२ लाख टन तथा इटली में १·३ ला० टन कपड़ा बनाया गया।

ब्रिटेन में सूती कपड़े का उद्योग

सूती कपड़े के उद्योग में ब्रिटेन का प्रधान स्थान है। यहाँ से संसार का लग-

बार नही टूटता है। (४) बम्बई की मिलो को पहले पश्चिमी बगाल के कोयले की खानो पर निर्भर रहना पड़ता था—किन्तु अब पश्चिमी घाट पर स्थित टाटा जल-विद्युत योजना से सस्ती विद्युत शक्ति प्राप्त हो जाती है। इसके अतिरिक्त सामुद्रिक मार्ग द्वारा दक्षिणी अफ्रीका और इगलैंड से कोयला मगवाया जा सकता है। (५) बम्बई देश का प्रधान व्यापारिक केन्द्र है। इसलिए अपने पृष्ठ-देश द्वारा रेलो से जुड़ा है। अत तैयार माल भीतरी भागो को सुविधापूर्वक भेजा जा सकता है। (६) बम्बई मे पूँजीपतियो का जमाव अधिक है। अत. नई मिलो के लिए पूँजी काफी मात्रा मे मिल जाती है। (७) बम्बई की मिलो मे काम करने के लिए मजदूर कोकन, सतारा और शोलापुर और रत्नागिरी जिलो तथा दक्कन, राजस्थान और उत्तर प्रदेश से भी आते हैं। (८) बम्बई की प्रमुख पारसी और भाटिया व्यापारियो ने विदेशी व्यापार मे बहुत धन अर्जित किया था—विशेषतः चीन के साथ होने वाले कपास और अफीम के व्यापार मे। अमेरिकन गृह-युद्ध के कारण विदेशों को निर्यात किये जाने वाली कपास की मात्रा बढ गई, इसमे उन्हे काफी लाभ हुआ। इसी धन का उपयोग बम्बई मे सूती कपडे की मिलें खोलने मे किया गया। (९) बम्बई के अधिकाश व्यापारियो को कपास के व्यापार का पूरा अनुभव हो गया। इसके लिए पर्याप्त मात्रा मे यान्त्रिक सहायता अग्रेजी मशीन बनाने वाली फर्मों से मिल गई।'

इन कारणो से ही बम्बई मे प्रथम सूती कपडे के मिल स्थापित हुए और बम्बई भारत के सूती वस्त्रो के व्यवसाय का प्रमुख केन्द्र हो गया है। यहाँ सूत बनाना और कपडा बुनना दोनो ही कार्य किये जाने लगे। फलस्वरूप १८६१ तक बम्बई द्वीप मे ७०० मील खुल गये। १६ वी शताब्दी के अन्त तक भारत मे कुल उत्पादन क्षमता का आधे से भी अधिक क्षमता बम्बई मे स्थित थी। इसी कारण बम्बई को भारत की कपास की राजधानी (Cottonopolis) कहा जाता है।

इन सब सुविधाओ के होने हुए भी १६२६ से बम्बई मे उस उद्योग का भावी विकास कुछ रुक सा गया है क्योकि अब बम्बई को अनेक असुविधाओ का सामना करना पड रहा है[3] —

(१) बम्बई मे पहले से ही ७० से भी अधिक कारखाने हैं और अधिकतर के लिये यहाँ स्थान का अभाव है क्योकि यह नगर एक छोटे से टापू पर स्थित है। (२) स्थान की कमी के कारण मजदूरो के रहने के लिये मकान की समस्या बडी विकट हो गई है तथा मकानो के किराये और भूमि का मूल्य बहुत बढ गया है। (३) चूँकि बम्बई पश्चिमी घाटो द्वारा कुछ अलग सा हो गया है अत दैनिक व्यवहार की वस्तुओ—दूध, घी, शाक-सब्जी आदि की कमी रहती है। अत बम्बई मे रहन सहन का काफी खर्च होता है। (४) सरकारी टैक्स आदि भी अधिक है। (५) देश के भीतरी भाग के कारखानो से जो कपडे की खपत के प्रदेश मे है, बम्बई की स्पर्धा बढ गई है। (६) पहले बम्बई अधिकतर विदेशो के लिये सूत तैयार करता था किन्तु अब देश मे सूत की अपेक्षा कपडा अधिक बनाया जाने लगा है। अत इस दृष्टि से बम्बई का महत्व कुछ कम हो गया है क्योकि कपडे की खपत के केन्द्रो से यह भीतरी केन्द्रो की अपेक्षा कुछ दूर पडता है। अत कपडे के यातायात

---

3. *Dr. T. R. Sharma*, **Location of Industries in India**, 1951, p 22

जल विद्युत शक्ति उत्पन्न की जाती है और इस शक्ति से मिलें चलाई जाती हैं। टैनेसी की घाटी वाले प्रदेश मे बिजली उत्पादन में वृद्धि हो जाने के कारण दक्षिणी प्रदेश को बिजली मिलने की सुविधा और बढ़ गई है।

(ग) यहाँ पर जलवायु अच्छी है और सस्ते कारीगर (हब्शी और गोरे) मिल जाते हैं क्योंकि यहाँ के निवासियों का रहन-सहन अन्य क्षेत्रो से नीचा है। यहाँ पर मोटे कपड़े बनाये जाते हैं। अत अधिक चतुर कारीगरों की भी आवश्यकता कम है।

इस क्षेत्र को एक बडी हानि यह है कि यहाँ का पानी कपडा धोने के लिए अच्छा नही है। परन्तु अब बडे-बडे गहरे कुएँ खोदे गये हैं जिनका पानी स्वच्छ करके कपडों के धोने मे प्रयोग किया जाता है।

संयुक्त राज्य मे अधिकतर मोटा कपडा होता है जो २० काउन्ट से नीचे का सूत अधिक प्रयोग करते है, इसलिए कपास की खपत अधिक है। ४० काउन्ट के कपड़े कम बनाये जाते है। इससे अधिक काउन्ट का कपडा तो नाम मात्र को बनता है। ग्रेट ब्रिटेन में अधिकतर ऊँचे काउन्ट का कपड़ा बनता है जिससे वे कम कपास प्रयोग करते है और अधिक लाभ उठाते है, परन्तु कुशल कारीगर ही काम कर सकते है।

(३) जापान में सूती कपड़े का उद्योग

जापान मे सूती कपडे का उद्योग बीसवी सदी मे ही उन्नत हुआ। सन् १९१२ के बाद *यह व्यवसाय शीघ्रता से उन्नत होता गया। सन् १९३४ तक यहाँ २७० मिलें थी जिससे सूती माल का उत्पादन बहुत बडी मात्रा मे होता है। ब्रिटेन तथा अमेरिका* की तुलना मे यहाँ मिलो तथा मशीनों की संख्या तो बहुत कम है किन्तु मिलो में कई पारी मे काम होता है। यहां की मिलो को प्राय समस्त कच्चा माल अमेरिका, पाकिस्तान, चीन, भारत इत्यादि से मँगाना पडता है। स्वय जापान मे भी क्वान्टो मैदान तथा ओवारी गुल्फ खाडियो के बीच मे कपास पैदा किया जाता है। पहले यहाँ काफी रुई उत्पन्न की जाती थी, किन्तु बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से धीरे-धीरे रुई का स्थान शहतूत के बागानो और खाद्यान्न की फसलो ने ले लिया।

जापान मे इस धधे के लिये निम्नलिखित सुविधाएँ हैं :—

(१) जापान के पूर्वी समुद्री तटीय भागो मे, जहाँ यह उद्योग स्थित है वर्ष भर वर्षा होने के कारण पर्याप्त नमी रहती है। जापान के मध्य मे स्थित पर्वत श्रेणी के कारण सारी वर्षा पूर्व की ओर ही हो जाती है। यह पर्वत श्रेणी साइबेरिया की ओर से आने वाली ठंडी हवाओ को भी रोक लेती है। इसके अतिरिक्त यहाँ की चक्रवातीय जलवायु परिश्रम करने के लिये अनुकूल है।

(२) यहाँ द्रुतगामी नदियों से सस्ती जल विद्युत शक्ति की सुविधा है तथा सस्ते जल यातायात के कारण कोयला भी चीन और मंचूरिया से प्राप्त किया जाता है।

(३) श्रमिक बड़े मेहनती और सस्ते हैं। यहाँ अधिकाँश मजदूर स्त्रि जिनको कम मजदूरी दी जाती है। मजदूरी सस्ती होने के साथ साथ .. कार्यकुशल भी होते है। जापान में एक कारीगर सामान्यतः मोटे धागे तकुओं और मध्यम धागों वाले ६०० तकुओं की देखभाल कर सकता

होने के कारण तैयार माल आसपास के स्थानो को भेजा जा सकता है—विशेषतः आसाम, बिहार और उडीसा को। (३) कलकत्ता मे पूँजी और अन्य व्यापारिक सुविधायें भी प्राप्त हो जाती हैं। (४) मजदूर विशेषकर बिहार, उत्तर प्रदेश व आसाम से आ जाते है। (५) घनी जनसख्या वाले प्रदेश केन्द्र में होने से यहाँ कपडे की माँग अधिक है। (६) यहाँ का जलवायु उद्योग के अनुकूल है तथा साल भर सूती कपड़े का मौसम रहता है।

इसके मुख्य केन्द्र सोदपुर, पनिहाट्टी, सीरामपुर, मोरीग्राम, शामपुर, पाल्टा, बेलगरिया, सल्कीया और घुसेरी आदि हैं। इन मिलो मे भूरा और ब्लीच किया हुआ कई प्रकार का कपडा बनता है। पश्चिमी बगाल मे इस व्यवसाय की और भी उन्नति होने की आशा है क्योकि निकटवर्ती प्रदेशो मे सूती कपड़े की मिलो का अभाव है तथा कलकत्ता विश्व का सबसे बडा सूती कपडे का बाजार है।[5]

उत्तर प्रदेश—सूती वस्त्र उद्योग में उत्तर प्रदेश का स्थान तीसरा है। यहाँ १९ वी शताब्दी के अन्त मे इस उद्योग का विकास हुआ। उत्तर प्रदेश मे यद्यपि मुरादाबाद, बनारस, आगरा, बरेली, अलीगढ, मोदीनगर, हाथरस, सहारनपुर, रामपुर, इटावा आदि स्थानों मे सूती कपडे की मिलें पाई जाती हैं किन्तु कानपुर इस उद्योग का मुख्य केन्द्र है। इसे **'उत्तरी भारत का मानचेस्टर'** कहते हैं। इसके कारण ये हैं—

(१) यह गगा की घाटी के कपास क्षेत्र की सीमा पर है जहाँ से यहाँ कपास आती है। यह कपास छोटे रेशे वाली होती है, अत यहाँ मोटा कपडा ही अधिक बनाया जाता है। (२) यह नगर न केवल उत्तर प्रदेश के नगरो से मिला है वरन् अमृतसर, दिल्ली और कलकत्ता से भी उत्तम रेलो और सडको द्वारा जुडा है। अतः मिलो को मशीनें व रासायनिक पदार्थ सरलता से प्राप्त हो सकते है। (३) यह रानीगज, झरिया और डाल्टनगज की कोयले की खानो के निकट है। (४) उत्तर प्रदेश की अधिक जनसख्या और कृषको की अधिकता के कारण कपडे की माँग अधिक रहती है। (५) घनी आबादी के कारण मजदूर सस्ते और अधिक परिमाण मे मिल जाते है।

दक्षिणी भारत—मे सूती कपडे की मिलो का आधिक्य है। इसका मुख्य कारण सस्ती जल-विद्युत शक्ति और कपास का अधिक परिमाण मे मिलना । मजदूर भी बहुत मिल जाते है। दक्षिणी भारत के मिल समस्त देश का १६% सूत बनाते है। यहा सूती मिलें मद्रास मे मदुराई, कोयम्बटूर, सेलम, तिरुनलवैली, मैसूर मे बलारी व बगलौर मे, आध्र मे गतूर, गोदावरी, हैदराबाद, औरगाबाद तथा गुलबर्गा मे तथा केरल मे त्रिवेन्द्रम मे पाई जाती है।

मध्य प्रदेश की वर्धा और पूर्णा नदियो की घाटी मे कपास खूब उत्पन्न होता है तथा पिछडी जातियो की अधिकता मे मजदूर भी पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हो जाते है। वरोरा की खानो से कोयला मिल जाता है। सूती कपडे की मिलें रतलाम, इन्दौर, ग्वालियर, देवास, निमार, अकोला, राजनन्दगाव, हिंगनघाट, भोपाल, उज्जैन, बुड़नेरा, बुरहानपुर, एलीचपुर और पूलागाम मे है।

राजस्थान मे यह उद्योग पाली, जयपुर, ब्यावर, विजयनगर, उदयपुर किशनगढ, भीलवाड़ा और कोटा मे केन्द्रित है। यह कोयला बिहार की खानो से मँगवाया जाता

5. *P. S. Loknathan*, **Industrial Organisation in India**, p. 63.

जापान में इस भाँति सूती वस्त्र व्यवसाय के ओसाका, कोबे, टोकियो और नगोया प्रमुख क्षेत्र है। इन सबसे बड़ा केन्द्र ओसाका है। इसे **'जापान का मानचेस्टर'** कहते हैं। इसके निकट याकोयामा, किशीवाडा और नारा अन्य केन्द्र है। यहा जापान के लगभग ⅔ तकुए है। जहाँ सम्पूर्ण देश का लगभग ⅔ सूत तैयार किया जाता है। उत्पादन की दृष्टि से दूसरा स्थान ह्योगो प्रान्त को प्राप्त है। कोबे यहाँ का मुख्य केन्द्र है। इसी के समीप अमागासाका और निशिवाकी अन्य केन्द्र हैं। टोकियो के मैदान मे टोकियो व याकोहामा का प्रमुख क्षेत्र है। नगोया भी मुख्य केन्द्र है। १९६१ मे जापान में ३३८ करोड मीटर कपड़ा तथा ४ लाख टन सूत बनाया गया।

(४) फ्रांस में सूती कपड़े का उद्योग

फ्रास अत्यन्त सुन्दर और सर्वोत्तम सूती माल के लिये संसार मे अद्वितीय और बेजोड है। यहाँ सूती उद्योग के तीन मुख्य क्षेत्र है —

(i) **वासजेज क्षेत्र**—वासजेज क्षेत्र का महत्व फ्रास के सूती उद्योग में सबसे ज्यादा है। यहाँ के मुख्य सूती केन्द्र बेलफोर्ट, कोलमार, नैन्सी, एपीनाल इत्यादि हैं। (१) इस क्षेत्र मे औद्योगिक व्यवस्था उच्च कोटि की है जिससे कम व्यय पर ही अधिक उत्पादन होता है। (२) यहाँ के श्रमिक बहुत मेहनती और निपुण है। पहाडी क्षेत्रो की जनसंख्या से सस्ते मजदूर मिल जाते हैं। (३) वासजेज पर्वत की द्रुतगामी नदियों से पर्याप्त स्वच्छ जल प्राप्त हो जाता है। (४) सस्ती जल-विद्युत भी मिल जाती है। लारेन की कोयला खानों से कोयला भी प्राप्त हो जाता है। (५) कच्चा माल अमेरिका से मँगाया जाता है। (६) लारेन के घने आबाद औद्योगिक प्रदेश मे कपडे की खपत बहुत है।

किन्तु इस क्षेत्र की सबसे बडी असुविधा सूखी जलवायु का होना है जो इस उद्योग के लिये अनुकूल नही है।

(ii) **नार्मंडी क्षेत्र**—नार्मंडी क्षेत्र फ्रास के सूती उद्योग मे अगुवा गिना जाता है क्योकि सबसे पहले यहीं रौवा जिले में यह उद्योग शुरू हुआ था। यहाँ पहले से हो ऊनी तथा लिनन के वस्त्रो का व्यवसाय चालू था। अत: कुशल श्रमिक मिल गए। कोयला सस्ते जल यातायात के कारण इंगलैंड से सुगमता से मँगाया जा सकता था। ला हॉवरे बन्दरगाह द्वारा अमेरिका से कपास मँगवाई जाती है। यही फ्रास की पहली सूती मिल खुली। सीन नदी द्वारा सस्ता जल यातायात और स्वच्छ पानी की पर्याप्त पूर्ति हो जाती है।

(iii) **उत्तरी पूर्वी क्षेत्र**—इस क्षेत्र मे सबसे बडी सुविधा कोयले की है क्योकि यहाँ कोयले की खानें है। लीले और अमीन्स प्रसिद्ध केन्द्र हैं।

फ्रास मे सूत का उत्पादन २·५ ला० टन तथा कपडे का २ लाख टन था।

(५) जर्मनी का सूती वस्त्र उद्योग

सूती कपडे के उत्पादन मे जर्मनी का विशिष्ट स्थान है यहाँ घटिया रुई और ऊन मिला कर विशेष प्रणाली से खास किस्म का कपडा (Canders Darn) तैयार किया जाता है। इस कपडे से स्त्रियो के पहनने के वस्त्र और बनियान बनाये जाते है। इस उद्योग के प्रधान क्षेत्र निम्नलिखित है :—

(i) **रूर कोयला क्षेत्र**—इस क्षेत्र को वेस्टफेलिया प्रदेश भी कह सकते हैं। यह जर्मनी के उत्तरी पश्चिमी भाग मे स्थित है। सूती कपडे का यह सबसे प्रसिद्ध प्रदेश है। औद्योगिक क्षेत्र होने के कारण यहाँ सस्ते श्रमिक मिल जाते है और

श्यकता से कम होने के कारण विदेशों से आयात करना पडता है। किन्तु अब कुछ समय से नवीन सिंचित क्षेत्रों मे लम्बे रेशे वाली कपास का उत्पादन बढाये जाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। आन्ध्र और मध्य प्रदेश मे देशी तथा अमरीकन कपास की किस्मों मे सुधार किया गया है। महाराष्ट्र में भी लम्बे रेशे वाली एशियाई कपास पैदा करने के प्रयत्न किये जा रहे है।

(२) यह उद्योग १०० वर्षों से भी पुराना है किन्तु अब भी मिलो मे काम मे आने वाले यन्त्रादि विदेशो से ही मँगवाये जाते है। इस कमी को पूरा करने के लिए तृतीय योजना के अन्तर्गत देश मे ही मशीनो के उत्पादन के लिए १७ करोड़ रुपयों का आयोजन किया गया है।

(३) भारत मे लगभग १५०मिल ऐसी हैं जो अपने आकार की तुलना मे कम उत्पादन करती हैं। ६० मिलों मे तो उत्पादन केवल सीमान्त रेखा तक ही है। अत. स्पष्ट है कि अधिकाश मिल अनार्थिक इकाइयाँ ही है। इसी कारण मिलो की संख्या अधिक होते हुए भी उत्पादन कम है।

(४) सूती वस्त्र उद्योग की कार्य-समिति के अनुसार कताई विभाग मे ६५% मशीनें सन् १९२५ के पहले लगाई गई थी और ३०% तो सन् १९१० से भी पहले। बुनाई विभाग मे स्थिति और भी असतोष-जनक है। ७५%करघे, १९२५ के पूर्व के और ४६% सन् १९१० के पूर्व के है। साधारणत: एक मशीन ३० वर्ष तक काम दे सकती हैं। अधिक घिस जाने पर उत्पादन व्यय अधिक हो जाता है। इसलिए भारतीय कपडा विदेशी प्रतियोगिता मे नही टिक पाता। अत उत्पादन व्यय को कम करने के लिये कारखानो के आधुनिकरण और वैज्ञानिकरण की बडी आवश्यकता है।

(५) हाथ करघा उद्योग मे पूर्ण सामजस्य होना चाहिये।

(ख) रेशम के कपड़े का उद्योग (Silk Textile Industry)

रेशम की कहानी इतिहास की सबसे पुरानी कहानी है। चीन के ५ हजार वर्ष पहले के धर्म ग्रन्थों मे भी इसका उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि २,६०० वर्ष पूर्व चीनियो के एक पूर्वज राजा ह्वांग टी और उसकी रानी हाइ-लिग शिह ने सबसे पहले रेशम के धागे के बारे मे पता लगाया। इन्ही दोनो ने सबसे पहले रेशम के धागो से कपडे बनवाकर पहने। धीरे-धीरे इनका इतना अधिक प्रचार हुआ कि साधारण नागरिक भी इन्हे पहनने लगे। यही से रेशमी कपडो को ऊँचे दामो पर दूसरे देशो को भी बेचा जाने लगा। यही से इनका प्रचार जापान और यूरोप के देशो को हुआ। आज भी चीन और जापान मे यह उद्योग घरेलू पद्धति पर अधिक किया जाता है। विश्व मे जितना रेशमी कपडे का उत्पादन होता है उसका लगभग ५०% आधुनिक तरीको द्वारा कच्चा रेशम पैदा करने वाले देशो से ही प्राप्त होता है। शेष ५०% उन देशों से प्राप्त होता है जहाँ वैज्ञानिक सुविधाएँ और कुशल श्रमिक अधिक पाये जाते है—उदाहरणार्थ फ्रास, जर्मनी, स० राज्य अमेरिका और ब्रिटेन मे।

उद्योग का स्थापन

कच्चा रेशम एक हल्की वस्तु है अत वह सरलता से उन स्थानो को भेजा जा सकता है जहाँ इसके लिए कुशल मजदूर तथा अन्य औद्योगिक सुविधाएँ प्राप्त हो सकती है। कच्चा रेशम मुख्यत चीन और जापान से प्राप्त होता है जो दोनो सम्पूर्ण

(१) शंघाई के बन्दरगाह द्वारा विदेशों से कपास आयात करने की सुविधायें हैं तथा यागटिसी घाटी का कपास भी इसे मिल जाता है।

(२) इसके लिये बाजार यागटिसी की घाटी में विस्तृत है।

(३) *श्रमिक सस्ते मिल जाते हैं।*

सूती कपड़े के व्यवसाय के अन्य प्रमुख केन्द्र केख, सिंगटाओ, टियन्टसीन, सिनान, हाँगचाऊ, नानकिंग, चेंगचाऊ, सियान, सियेनयाँग, शिहचियचुयाँग, और ऊरुमची हैं। १९५३ से १९५६ तक साम्यवादी सरकार ने ३८ नये कारखाने स्थापित किये है। १९६० में चीन ने ७६० करोड़ मीटर कपड़ा तथा १६ ला० टन सूत तैयार किया।

(८) भारत में सूती वस्त्र उद्योग

विश्व मे रुई उत्पादन की दृष्टि से भारत का स्थान दूसरा, श्रमिको की दृष्टि से तीसरा और तकुओं की दृष्टि से चौथा है। भारत में इस उद्योग के ५११ मिल हैं जिनमें १३६ लाख तकुये और २·०६ लाख कर्घे हैं। इस उद्योग मे ७ लाख श्रमिक लगे हैं। इस उद्योग के निर्यात द्वारा ३५० से ४०० करोड़ रुपया की विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। इनमे से देश का कताई की ५३% क्षमता और बुनाई की ६८% क्षमता गुजरात और महाराष्ट्र राज्यो मे केन्द्रित है जैसा की निम्न तालिका से स्पष्ट होगा—

बम्बई द्वीप आर नगर	६५	मद्रास	१३०
अहमदाबाद	७१	उत्तरप्रदेश	२९
महाराष्ट्र-गुजरात राज्य के अन्य भाग	७६ २१२	मध्य प्रदेश	२०
राजस्थान	११	आन्ध्र प्रदेश	१६
पंजाब	६	प० बंगाल	३९
केरल	१४	मैसूर	१८
उड़ीसा	४	दिल्ली	७
बिहार	२	पाँडिचेरी	३

गुजरात-महाराष्ट्र ये दोनों राज्य भारत के सूती कपडे के उद्योग मे अग्रणी हैं। इसके निम्न कारण है :—

(१) सारा रुई पैदा करने वाला प्रदेश बम्बई बन्दरगाह का पृष्ठ-देश है। इसलिये सारी रुई विदेश निर्यात के लिए बम्बई को आती है और बम्बई की मिलो के लिए रुई की विशेष माँग करने की आवश्यकता नही होती। लम्बे रेशे वाली रुई मिस्र और संयुक्त राज्य अमेरिका से मंगवाने की भी सुविधा है। (२) बम्बई यूरोप का सबसे निकट का बन्दरगाह है, इसलिये मिलों के लिये आवश्यक मशीनें और अन्य सामान इंगलैंड, जर्मनी और अमेरिका आदि देशों से मगवाने की सुविधा प्राप्त है। (३) बम्बई समुद्र के किनारे स्थित है और नम मानसूनी हवाओ के प्रवाह क्षेत्र मे है, इसलिये यहाँ की मिलों में सूत का धागा पतला और लम्बा आता है औ

पदार्थ है इसलिए दूर देशों से मँगाए जाने पर विशेष खर्चा नही पडता। संयुक्त राज्य के पूर्वी औद्योगिक क्षेत्रों मे जहाँ लोहा, कोयला, सीमेंट इत्यादि के कारखाने हैं कारीगरो की स्त्रियाँ तथा लडकियाँ रेशमी कपड़े की मिलो मे काम करने के लिए जाती हैं। अन्य औद्योगिक सुविधाएँ तो इस देश मे पर्याप्त रूप से वर्तमान है ही इसलिए यह देश रेशमी वस्त्रो के व्यवसाय मे अग्रगण्य है।

समस्त देश मे प्राय. ६०० रेशमी कपडे के कारखाने हैं जिनमे से दो-तिहाई रेशमी वस्त्रो की बुनाई का काम करते है और शेष मे रेशमी धागे अथवा 'ऊन मिश्रित वस्त्र' बनाये जाते हैं।

फ्रांस का रेशमी कपड़ा उद्योग

ससार मे रेशमी वस्त्र के उद्योग मे फ्रास का द्वितीय स्थान है। यहाँ यह व्यवसाय लियोंस नगर तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र मे केन्द्रित है क्योंकि—

(१) निकट ही रोन घाटी से कच्चा रेशम प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त इटली, लेवैन्ट, चीन तथा जापान से भी कच्चा माल मँगा लिया जाता है।

(२) फ्रासीसी लोग सुन्दर रेशमी कपड़े के बडे शौकीन होते हैं इसलिए यहाँ रेशमी वस्त्रो की माँग काफी है।

(३) फ्रासीसी श्रमिक इस व्यवसाय में बडे दक्ष है।

(४) जलविद्युत शक्ति सहज ही मिल जाती है। कोयले से भी बिजली की सुविधा है।

लियोंस का रेशम उद्योग दिन-दिन विकसित हो रहा है। जल विद्युत के विकास की सुविधा हो जाने पर यह धन्धा लियोंस के आसपास के क्षेत्र मे छोटे-छोटे गाँवो तक फैल गया है।

इटली में रेशमी कपड़े का उद्योग

यूरोप मे कच्चा रेशम उत्पन्न करने के उद्योग मे तो इटली अग्रगण्य है ही रेशमी वस्त्र के उद्योग मे भी यह यूरोप के प्रधान देशो मे गिना जाता है। यह उद्योग पो नदी के बेसिन और उत्तरी घाटियो मे केन्द्रित है। मिलान, ट्यूरिन, कोमो, तथा वेरोना मुख्य केन्द्र हैं। मिलान नगर तथा इसका निकटवर्ती क्षेत्र इटली में ही प्रसिद्ध नही वरन् ससार के प्रमुख रेशम उद्योग क्षेत्रो मे गिना जाता है। इसके कई कारण है :

(१) इस क्षेत्र मे पर्याप्त कच्चा माल मिलता है। बाहर से मँगाने की भी सुविधा है।

(२) पो बेसिन इस देश का अत्यन्त सघन जनसंख्या वाला क्षेत्र है, अतः पर्याप्त श्रमिक मिल जाते हैं।

(३) सस्ती जल विद्युत शक्ति सुलभ है।

यूरोप के अन्य देश

स्विट्जरलैंड मे बेसिल, ज्यूरिच, बर्न तथा जेनोआ प्रसिद्ध केन्द्र हैं। यहाँ सेंट गोथर्ड मार्ग द्वारा इटली से कच्चा रेशम मँगा लिया जाता है।

मे अधिक खर्च पड़ जाता है। (७) रेलों ने देश के भीतरी मार्गों से बन्दरगाहो पर ले जाने वाले माल के लिए जो रियायतें दी थी वे अब बन्द कर दी हैं। (८) बम्बई में मजदूरो की मजदूरी भी बढ गई। इससे कपडे के उत्पादन मे अधिक व्यय होने लगा।

अत. इन असुविधाओं के कारण नये मिल बम्बई द्वीप के बाहर ही खोले जाने लगे। सबसे पहले अहमदाबाद मे कपडे की मिलें स्थापित की गईं जहाँ इस उद्योग के लिये सुविधायें प्राप्त हैं :—(१) यहाँ साहसी व्यापारियो और सेठो की कमी नही है जिनसे उद्योग के लिये पर्याप्त पूँजी मिल जाती है। (२) यह सौराष्ट्र और गुजरात के कपास उत्पादन केन्द्रों के मध्य मे स्थित है। अत धौलेरा और भड़ौंच नामक उत्तम कपास बहुत मिल जाती है। (३) सौराष्ट्र तथा गुजरात के बन्दरगाहो द्वारा विदेशो से मशीनें आदि सुगमतापूर्वक मंगाई जा सकती हैं। (४) यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही घरेलू धंधे के रूप मे कताई और बुनाई का उद्योग होता रहा है। अत मिलो के लिये चतुर मजदूर मिलने की सुविधा है। (५) तैयार माल पंजाब, उत्तर प्रदेश और राजस्थान सरलता से भेजा जा सकता है। यहाँ के कपड़े की माँग दिल्ली, कानपुर और अमृतसर तक है।

इन कारणो से अहमदाबाद भारत मे सूती कपड़ा बनाने मे महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसे 'पूर्व का बोस्टन' कहते हैं।

धीरे-धीरे अहमदाबाद के अतिरिक्त नये मिल गुजरात-महाराष्ट्र राज्य मे पेटलाद, धूलिया नाडियाद, सूरत, भड़ौंच, वडौदा, शोलापुर, पूना, हुबली, बेलगाँव, सतारा, कोल्हापुर, जलगाँव, राजकोट, मोरवी, कलोल, वीरमगाँव, नवसारी, बिलीमोरिया, नागपुर, आमलनेर, भावनगर आदि नगरो मे भी खुल गये है।

बम्बई की मिलों मे भीतरी क्षेत्रो की मिलो से स्पर्धा होने के कारण अब बढिया कपडा ही अधिक बनने लगा है। इन मिलों मे लट्ठा, मलमल, वायल, विभिन्न प्रकार की छीटें, चद्दरे, टी क्लाथ, कमीजो के टुकडे, धोतियाँ आदि तथा कई प्रकार के रंगीन कपडे बनाये जाते है। अहमदाबाद मे भी उत्तम और महीन कपडा अधिक बनाया जाता है—विशेषत. छोटे रूमाल, धोतियाँ, शटिंग, कोटिंग, मलमल, वायल, आदि। कपडे की किस्म के अनुसार अहमदाबाद मे लकाशायर मिलो की तरह 'मिस्री कपडे' और 'अमरीकी कपडे' अधिक बनाये जाते है।[4]

पश्चिमी बंगाल—पश्चिमी बंगाल मे कलकत्ता के आसपास ३० मील की परिधि मे २४ परगना, हावडा और हुगली प्रदेश मे हुगली नदी के किनारे पर सूती कपड़े के लगभग ४० मील है। इस स्थापन के कारण ये हैं :—

(१) कलकत्ता बन्दरगाह के समीप होने के कारण विदेशों से मशीनें और रुई आसानी से इन मिलो के लिये आ जाती है। (२) रानीगज और झरिया की खानो से कोयला प्राप्त हो जाता है। रेल मार्गों और जल मार्गों का जाल सा बिछा

4. "From the point of view of progress in quality Ahmedabad resembles what they call in Lancashire the 'Egyptian Section of the Cotton Industry' while Bombay the 'American Section of the British Cotton Industry"—*T. R. Sharma*, **Ibid**, p. 52.

इस देश में प्राचीन समय से कुटीर उद्योग के ढग पर प्रचलित है और गाँव-गाँव में करघो पर काम होता है।

चीन में रेशम की बुनाई शिल्प और डिजाइन व नमूनों की कला, दोनो ही बहुत विकसित हैं। यहाँ रेशम उत्पन्न करने वाले प्रान्त क्वान्टुंग, क्याग्सू चेक्याग, हूफे, अन्हेव, हुनान, शेववान, शान्टु ग और होनान हैं। क्वान्टुंग मे यह उद्योग सीक्याग और पर्ल नदियो के डेल्टाओ मे शुताग, चुगशुई, नामोही और समशुई जिलों में केन्द्रित है। चेक्याग मे हेगचाऊ और हूचाहू; क्यागसू मे वूसिह और शघाई तथा शान्टु ग मे रेफू और जगटाओ और होनान में भूचाओ में रेशमी कपडे बुनने के बड़े केन्द्र हैं।

भारत में रेशमी कपड़े का उद्योग

भारत मे रेशम के उद्योग मे हाथ के करघे का विशेष महत्व है और मिल-उद्योग का कम। रेशम के उद्योग की अधिकाश उत्पादन क्षमता काश्मीर और मैसूर राज्य मे ही सीमित है क्योकि अधिकाश कच्चा रेशम (शहतूत के कीड़े का रेशम, टसर, ऐडी और मूंगा) मैसूर, मद्रास, पश्चिमी बगाल, काश्मीर और असम मे ही पैदा होता है। समस्त भारत मे २४ लाख पौड कच्चा रेशम उत्पन्न होता है। उससे देश की ६०% माँग पूरी होती है। बाकी का रेशम जापान, इटली आदि देशो से आयात किया जाता है। भारत मे रेशम पर बहुत ऊँचा आयात कर होने पर भी बाहर का रेशम सस्ता पड़ता है और वह बढिया भी होता है।

काश्मीर मे श्रीनगर में रेशम का सबसे बडा कारखाना है जो बिजली की शक्ति द्वारा कार्य करता है। रेशम के कीडे पालने और रेशम की कुकडी बनाने के काम मे चतुर कुशल मजदूरों की आवश्यकता पडती है और यहाँ इन कामो को करने वाले कुशल मजदूर मिल जाते हैं। यहाँ की सरकार भी इस उद्योग के विकास मे बडी रुचि रखती है। रेशम बुनने के अन्य मुख्य केन्द्र पंजाब मे अमृतसर, जालधर तथा लुधियाना, उत्तर प्रदेश मे मिर्जापुर और शाहजहाँपुर; पश्चिमी बगाल मे बाकुडा, मुर्शिदाबाद तथा विश्नुपुर; मद्रास मे वरहामपुर, सलेम, तजौर और तिरुचिरापल्ली, महाराष्ट्र मे नागपुर, पूना, धारवाड, हुबली, बेलगाँव और शोलापुर, बिहार मे भागलपुर और मैसूर में बंगलौर है।

रेयन उद्योग (Rayon Manufacture)

६० वर्ष पहले रुई, ऊन, रेशम और पटसन ये चार वस्तुयें ही कपडा बनाने के लिए प्रयुक्त होती थी। किन्तु अपनी अनवरत शोषणा और विकास कार्य के फलस्वरूप मनुष्य ने आज २० प्रकार के निर्मित रेशे इस सूची मे बढाये है। अब रेयन (Rayon), ओरलन (Orlon), केपरन (Kapron), एक्रीलीन (Acriline), डिनल (Dynal), सरन (Saron), डेकरन (Dacron), टैरीलीन (Terriline), पौलीएथिलीन (Poliaethelin), और काँच के रेशे विकारा (Vicara) कपडा बनाने के लिए सुलभ हुये हैं। मानव निर्मित इन सभी रेशो मे रेयन या नकली रेशम ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इन रेशो मे इसका उत्पादन सर्वाधिक है और कपडे बनाने के काम मे आने वाली सभी प्राकृतिक और मनुष्य निर्मित वस्तुओ मे कपास के बाद इसी का स्थान आता है। संसार भर मे उद्योग का विकास अद्भुत गति से हुआ है। विश्व मे रेयन उद्योग की फैक्ट्री सबसे पहले १८८४ मे फ्रांस मे स्थापित

है किन्तु कपास की प्राप्ति स्थानीय ही होती है। कपड़े की माँग भी यहाँ इतने बड़े क्षेत्र की है।

१९६२ मे भारतीय मिलों मे १३० करोड़ पौंड सूत और ३७६ करोड़ गज कपड़ा तैयार किया गया।

तृतीय योजना के अंत तक ९३० करोड गज कपड़े की आवश्यकता होगी। इसमें से ८५ करोड गज निर्यात के लिए होगा। ९३० करोड गज के लक्ष्य मे से ३५० करोड गज हाथ करघा, बिजली का करघा और खादी उद्योग में बनेगा। कपडे की मिलों का उत्पादन बढाने के लिए २५,००० स्वचालित करघे लगाये जायेंगे। मिलों मे तकुओं की संख्या १९५ लाख की जायेगी।

भारत से कपडे का निर्यात विशेषतः हिन्द महासागर के किनारे वाले देशो —पूर्वी अफ्रीका, दक्षिणी अफ्रीका, अरब, इराक, ईरान, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, इंडोनेशिया, ब्रह्मा, लंका, मिस्र, टर्की, चीन और जापान—को होता है। सूती कपड़े के हमारे निर्यात की महत्वपूर्ण बातें ये है—

(१) हमारे कुल निर्यात का ९०-९२% भाग मोटा तथा मध्यम श्रेणी का कपडा होता है।

(२) कपडे के कुल निर्यात में बहुत बडा भाग बिना धुले कोरे कपड़े का होता है जिसे आयातक देश पुनर्निर्यात के लिये मँगवाते है।

(३) निर्यात का अधिकांश भाग एशिया तथा अफ्रीका के देशो को जाता है।

(४) निर्यात का बहुत कम प्रतिशत रंगा या छपा और अन्य प्रकार से भेजा जाता है।

भारत सरकार ने सूती कपडे के निर्यात को बढाने मे निम्न महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं :—

(१) विदेशो मे सूती कपडे के बाजारो की स्थितियो का गहन अध्ययन करने तथा निर्यात बढाने के लिये सूती वस्त्र निर्यात संवर्धन परिषद् की स्थापना की गई है।

(२) निर्यात होने वाले माल पर लगे उत्पादन शुल्क मे छूट देना।

(३) निर्यात किये जाने वाले कपडे पर किस्म नियन्त्रण तथा निरीक्षण की योजनाएँ लागू करना।

(४) निर्माताओ और निर्यातको को निर्यात के लिए माल बनाने के आवश्यक कच्चा माल समय पर तथा उचित दामों पर दिलाने मे सहायता करना।

(५) अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियो मे भाग लेना और संसार के मुख्य केन्द्रो में व्यापार केन्द्र और वाणिज्यक प्रदर्शन कक्ष चलाना।

उद्योग की समस्याएँ

इस समय सूती वस्त्र उद्योग के सम्मुख निम्न समस्याएँ है जिन्हे दूर करना आवश्यक है :—

(१) देश मे अभी भी लम्बे रेशे वाली उत्तम कपास का उत्पादन आव-

बहुत अन्तर है। नकली रुई प्रणाली मे छलनी यन्त्र छलनी प्रणाली के छलनी यन्त्र से बहुत बडा होता है—उसमे कई हजार छेद होते है। (छलनी प्रणाली के अनुसार बनने वाले सूत के छलनी यन्त्र में २० से लेकर १०० तक छेद होते हैं।) रेयन के तारों के रूप में जो सैलूलोज निकलता है, उसको बिना लपेटे एक जगह ही एकत्र किया जाता है। (छलनी प्रणाली के अनुसार छलनी यन्त्र से निकलने वाले तार को घूमते बर्तन में लिया जाता है जिससे वह लिपट जाता है) एकत्रित सैलूलोज को आवश्यक लम्बाई वाले रेशों के रूप में काट लिया जाता है, उसे धोकर और सुखाकर गाँठें बाध दी जाती हैं। रेशे वाले इन रेयन तन्तुओं को 'नकली रुई' भी कहा जा सकता है। इस नकली रुई को उपयुक्त कुताई मिल में काता जाता है और रेयन का सूत बनाया जाता है। कुछ सीमा तक यह नकली रुई लम्बे रेशे वाली रुई का स्थान ले सकती है।

छलनी प्रणाली के रेयन कारखानों में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख कच्चे माल हैं—लुब्दी, कास्टिक सोडा और गन्धक। एक पौंड रेयन बनाने के लिये १ १५ पौंड लुब्दी, १ पौंड कास्टिक सोडा और ० ६ पौंड गन्धक की आवश्यकता होती है। इस समय भारत रेयन बनाने के लिए इन सभी कच्चे मालों को आयात कर रहा है।

यह उद्योग अत्यन्त नवीन उद्योग है। कृत्रिम रेशम सबसे पहले फ्रास में सन् १८८५ में बनाया गया था। वही से मध्य यूरोप के देशो में यह उद्योग फैला। इसमें प्रयुक्त होने वाले कच्चे माल के पदार्थ बहुत सस्ते हैं। इसलिए इसका उत्पादन अब इतना बढ चुका है कि असली रेशम से भी अधिक हो गया है। सूती, असली रेशमी तथा ऊनी धागों के साथ मिलाकर भी इसका कपडा बनाया जाता है। इससे मोजे, साडियाँ, शर्टिंग, चद्दरें, बनियान, टाइयाँ, पैरेशूट कपडा बहुत बनते हैं। सौन्दर्य, मजबूती और कम कीमत के कारण रेयन अब बहुत ही लोकप्रिय हो गया है।

नकली कच्चा रेशम जापान, सयुक्त राज्य, ग्रेट ब्रिटेन जर्मनी तथा इटली में अधिक बनता है, किन्तु सयुक्त राज्य और ब्रिटेन में इसकी खपत इतनी अधिक है कि कि ये दोनो देश जापान तथा इटली से कच्चा रेशम मँगाते हैं। नीचे की तालिका में नकली रेशम का उत्पादन बताया गया है :—

रेयन का उत्पादन (००० मैट्रिक टनो मे)

देश	१९४८-५२	१९५९	१९६१
फ्रांस	८१	११०	६७
प० जर्मनी	९६	२२४	१५५
इटली	९२	१५५	९०
जापान	१११	३२२	३०५
रूस	३७	७३	८४
इगलैंड	१३८	१२३	१३६
सयुक्त राज्य	५२७	५३०	१७०
विश्व	१४७०	२४९०	

विश्व के उत्पादन का ८५% देते हैं, किन्तु यह साधारणतया मोटा और घटिया किस्म का होता है। बढिया और महीन रेशम फ्रास और इटली से प्राप्त होता है। जापानी कोये (Cukoon) एक समान नही होते और ताने (Warp) में प्रयोग होने वाला महीन सूत उत्पन्न करने के अयोग्य होते हैं। अत फ्रांस और इटली का रेशम उत्तम प्रकार के कपड़े बनने के लिए ही अधिक व्यवहृत किया जाता है।

अतएव रेशमी वस्त्र बनाने मे दो प्रकार के रेशम का उपयोग किया जाता है—(१) प्राकृतिक रेशम (Thrown Silk), जो वास्तविक रेशम का सूत होता है। कोयो को खोलने तथा रेशों को थोडा-थोडा बट लेने (Twist) से यह रेशम तैयार होता है। (२) कता हुआ रेशम (Spun Silk) जो रेशम के टूटे धागों तथा व्यर्थ पदार्थ से साधारण रीति से काता जाता है। इस प्रकार का रेशम मजबूत नही होता और इसमें प्राकृतिक रेशम की चमक ही होती है। अतः यह सस्ता होता है।

उद्योग के मुख्य क्षेत्र

रेशमी कपडे के सबसे मुख्य उत्पादक सं० राज्य अमेरिका, फ्रांस, जापान, इटली, जर्मनी और ब्रिटेन हैं। इनमे सं० राज्य अमेरिका का प्रथम स्थान है।

संयुक्त राज्य का रेशमी कपड़ा उद्योग

यहाँ उद्योग का मुख्य केन्द्र पैटरसन (न्यूजर्सी) है जो विश्व मे विशालतम रेशम बाजार न्यूयार्क से १५ मील के भीतर है। यहाँ रेशम के सभी कारखाने न्यूयार्क से २५० मील की परिधि मे ही हैं। यही सबसे पहला रेशम का मिल खोला गया क्योंकि यह केन्द्र न्यूयार्क के निकट होने से बाजार की सुविधा थी, जल विद्युत शक्ति तथा रेशम धोने और रंगने के लिए पर्याप्त मात्रा मे जल उपलब्ध था और निकटवर्ती क्षेत्र मे अन्य भारी उद्योगों के होने से मजदूरों के स्त्री और बच्चों का सस्ता श्रम उपलब्ध हो जाता था।

पेन्सिलवेनिया, न्यूजर्सी तथा न्यूयार्क रियासतों मे इस देश की ९० प्रतिशत रेशम की मिले स्थित हैं, शेष मेसेचुसेट्स, वर्जीनिया, कनेक्टीकट इत्यादि रियासतो मे हैं। न्यूजर्सी रियासत मे स्थित पैटरसन, स्क्रैंटन, विलकीज बार, आलेटन आदि नगर रेशमी वस्त्र के मुख्य केन्द्र है।

इस उद्योग के क्षेत्र मुख्यतः उन स्थानों मे हैं जहाँ अधिकतर पुरुष श्रमजीवियो की माग करने वाले उद्योग-धन्धे हैं। अतः लोहे के उद्योग वाले पैटरसन नगर स्क्रैंटन और विल्कीज बार जैसे कोयले के उद्योग वाले नगर तथा सीमेंट बनाने वाला नगर—ईस्टन और एलेनटाऊन आदि—महत्वपूर्ण केन्द्र हैं जहाँ रेशमी कपडा बनाया जाता है।

कच्चा रेशम उत्पन्न करने वाले प्रायः सभी देशों से उनके उत्पादन का ⅘ भाग यहाँ रेशम मँगाया जाता है और विदेशी कच्चे माल के द्वारा रेशमी कपडा बुना जाता है। यहाँ रेशमी वस्त्र की माँग बहुत अधिक है। चीन और जापान का कच्चा माल जहाजों द्वारा पश्चिमी तट पर स्थित सेनफ्रांसिस्को बन्दरगाह पर लाया जाता है जहाँ से स्पेशल गाडियो द्वारा न्यूयार्क तथा अन्य केन्द्रों मे भेजा जाता है। बढिया और महीन रेशम इटली तथा फ्रास से मँगाया जाता है। रेशम चूँकि हल्का और कीमती

कराफुटो तथा होकेडो में ही लकड़ी मिलती है। अतः लकड़ी की लुब्दी कनाडा से मँगानी पड़ती है। इस धन्धे के लिये जापान में तीन क्षेत्र प्रसिद्ध हैं जो होंशू द्वीप के मध्य भाग में स्थित हैं—(१) कनाजवा क्षेत्र, (२) क्योटो क्षेत्र, (३) टोकियो क्षेत्र। प्रमुख केन्द्र फुकुई, कनाजवा, क्योटो और टोकियो हैं। जापान से इनका निर्यात इंडोनेशिया, लंका, कोरिया, पाकिस्तान, ईराक और दक्षिण अफ्रीका को किया जाता है।

भारत—गत महायुद्ध के बाद भारत में यह उद्योग बहुत बढ़ गया है। छलनी से निकाला हुआ रेयन का सूत, काता हुआ रेयन का सूत और दोनों प्रकार का सूत प्रयोग करने वाले ३५,००० शक्ति-चालित करघे और ७५,००० हाथ करघे इस समय रेयन तैयार कर रहे हैं। इस उद्योग के लिए प्रति दिन ८ करोड़ पौण्ड सूत की आवश्यकता होती है—यह मांग १९६०-६१ तक १४ करोड़ हो गई थी। छलनी प्रणाली से रेयन तैयार करने का पहला कारखाना ट्रावनकोर रेयन लि० रेयनपुरम (ट्रा०) १९५० में और दूसरा कारखाना नेशनल रेयन कारपोरेशन लि० कल्याण (बम्बई) में चालू हुआ। नकली रुई तैयार करने का कारखाना १९५३ में और कताई प्रणाली से रेयन बनाने का कारखाना १९५४ में चालू हुआ। यह कारखाना सिरसिल्क लि० सिरपुर (हैदराबाद) में है। चौथा कारखाना १९५४ में ग्वालियर रेयन सिल्क मैन्यूफैक्चरिंग कम्पनी के नाम से नागदा में खोला गया। इन वर्तमान कारखानों की कुल वार्षिक उत्पादन क्षमता २·४ करोड़ पौण्ड है और नकली रेशम के कारखाने की उत्पादन क्षमता १·२ करोड़ पौण्ड है। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक छलनी से निकाले गये तथा काते हुए रेयन के सूत की उत्पादन क्षमता १४ करोड़ पौण्ड और निकली हुई रुई का ७½ करोड़ पौण्ड होगा। इस समय इस उद्योग में १५ करोड़ रुपये की पूँजी लगी है और ३ लाख मजदूर काम करते हैं।

यह उद्योग बम्बई, अहमदाबाद, कलकत्ता, अमृतसर और सूरत में केन्द्रित है तथा रेयन के तार केरल, बम्बई व हैदराबाद में बनाये जाते हैं।

(घ) ऊनी कपड़े का उद्योग (Woollen Manufactures)

शीतोष्ण तथा शीत प्रधान देशों में ऊनी कपड़े का प्रयोग बहुत अधिक होता है और प्रायः प्रत्येक देश में जहाँ ऊन प्राप्त की जाती है। ऊनी कपड़े का उद्योग छोटे बड़े पैमाने पर केन्द्रित है। ऐसे देशों में जिनका औद्योगिक संगठन श्रेष्ठ था उन्होंने ऊन का आयात करके अपने उद्योग को उन्नति दी। ग्रेट ब्रिटेन में वेस्ट राइडिंग आफ यार्कशायर, फ्रांस में उत्तरी पूर्वी प्रदेश, स० रा० अमेरिका में न्यू इंगलैंड के क्षेत्र ऊन पैदा करने वाले क्षेत्रों में हैं। अतएव ऊनी कपड़े का उद्योग यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका महाद्वीप में बहुत ही बढ़ा-चढ़ा है। यों तो एशिया में भी जापान का ऊनी कपड़े का उद्योग पर्याप्त विकसित है और भारत में भी इस धन्धे के केन्द्र हैं। यूरोप में ब्रिटेन इस क्षेत्र में अग्रगण्य है और उत्तरी अमेरिका में संयुक्त-राज्य।

ऊनी कपड़े के उद्योग का स्थापन

ऊनी कपड़ों के कारखाने सूखी जलवायु में चलते हैं। जिस प्रकार उष्ण कटिबन्ध में सूती कपड़ों का व्यापक प्रयोग होता है उस प्रकार शीतोष्ण कटिबन्ध में

ब्रिटेन में यार्कशायर प्रदेश के ब्रेडफोर्ड तथा हेलीफैक्स नगर, चैशायर प्रदेश के मेकल्सफील्ड तथा लीज नगर और डरबीशायर प्रदेश का डरबी नगर मुख्य केन्द्र है।

जर्मनी में रूर कोयला क्षेत्र के निकट क्रेफेल्ड नगर तथा उत्तरी राईन प्रदेश के वेस्टफेलिया और बेडन नगर प्रमुख केन्द्र है।

जापान का रेशमी कपड़ा उद्योग

जापान कच्चे रेशम के लिये तो अग्रगण्य है ही, रेशमी वस्त्रों का उद्योग भी यहाँ काफी विकसित है। यह व्यवसाय जापान का प्राचीन धंधा है। पहले से यह कुटीर उद्योग के ढंग पर चालू था। अब भी यहाँ का रेशमी कुटीर उद्योग कम महत्वपूर्ण नहीं। अब तो रेशम के बड़े-बड़े कारखाने भी काफी हैं। क्योटो नगर सबसे अधिक नामी है। इस नगर में रेशमी वस्त्रों के उद्योग के लिए अन्य सुविधाओं के अलावा एक यह सुविधा और है कि निकटस्थ बीव भील का स्वच्छ जल रेशम साफ करने में काम मे आता है, इस देश में रेशम उद्योग के लिये निम्न सुविधायें है—

(१) कच्चा माल आवश्यकता से अधिक प्राप्त है।

(२) कारखानों के बड़े उद्योग को कुटीर उद्योगो से बड़ी सहायता मिलती है।

(३) जापानी लोग इस व्यवसाय में प्राचीन समय से निपुण हैं।

(४) ग्रामीण श्रमिक पर्याप्त मात्रा मे सुलभ हैं।

(५) जलविद्युत् शक्ति बडी सस्ती है।

जापान में कोयों से रेशम के धागे निकालकर उनसे सूत बनाया जाता है। इसे Silk Reeling कहते हैं। रीलिंग का कार्य छोटे पैमाने पर हाथ से किया जाता है। रील किये जाने वाले रेशम का ६०% छोटी फैक्ट्रियों में होता है जिन्हे 'फिलेचर' (Filatures) कहते है। एक औसत विस्तार वाले फिलेचर मे १०० उबालने वाले बेसिन (Basin) होते हैं और उसमें लगभग १२० श्रमिक कार्य करते हैं। अधिकतर रेशम ५०-३०० बेसिन वाले फिलेचरों मे तथा केवल ५ प्रतिशत ३०० से अधिक बेसिन वाले फिलेचरो मे रील किया जाता है। इन फिलेचरो को जलशक्ति मिल जाती है। साधारणत. फिलेचर उन्ही स्थानों मे स्थापित होते है जहाँ शहतूत बडी मात्रा मे उत्पन्न होते हैं। फिलेचर अधिकतर (१) फोसा मेगना के बेसीन मे, नागानो और यामनाशी प्रीफैक्चर में; (२) पश्चिमी क्वाटो के मैदान मे गुमा तथा सैतामा प्रीफैक्चर मे और (३) आइसी और अतूमी की खाड़ी को घेरने वाले भाग में ऐची प्रीफैक्चर मे हैं।

रेशम बुनने के अन्तर्गत यहाँ रेशम के महीन वस्त्र तैयार करना तथा कपास और रेशम का मिश्रण तैयार करना है। इसी के अन्तर्गत विलास की वस्तुयें बनाना भी है तथा रेशम बुनने का काम छोटे-छोटे कारखानो मे किया जाता है जो घरेलू उद्योगशालाओं की भाँति होते हैं। सबसे अधिक उत्पादन फुकुई तथा ईशीकावा के प्रीफैक्चरो मे होता है।

चीन में रेशमी कपड़े का उद्योग

चीन में रेशम के कीड़े पालने का धंधा बहुत प्राचीन है और प्रायः समस्त कृषि क्षेत्र मे रेशम के कीड़े पालने का काम होता है। रेशम का कपड़ा बनाने का धंधा

देश	इकाई	ऊनी कपड़े का उत्पादन		
		१९५५	१९५९	१९६१
आस्ट्रिया	००० टन	५ ६	४ ६	—
बेल्जियम	,,	२८ ५	२९·२	—
प० जर्मनी	,,	७१ ७	६७·१	६७·८
फ्रांस	,,	६९·८	१७·३	७३·६
जापान	१० ला०मीटर	२२४·०	३२१·०	३४०·०
स्वीडेन	,,	११ ०	१०·१	११·३
इगलैंड	००० मीटर	३४३	३०५	२९४०
भारत	१० ला०मीटर	१३ ७	१३·३	१५·०
सं० राज्य	,,	२४८·०	२६·१६	२६२·८

ऊनी कपड़े के मुख्य उत्पादक

(१) **ब्रिटेन** यूरोप महाद्वीप का ही नही ससार का सबसे बडा ऊनी कपडे का उत्पादक है। इस देश के यार्कशायर प्रदेश का वेस्ट राइडिंग क्षेत्र इस उद्योग के लिए अग्रगण्य है। इसी क्षेत्र मे ब्रिटेन के ८०% ऊनी कपडे के कारखाने स्थित हैं। शेष कारखाने किसी एक क्षेत्र मे केन्द्रित नही बल्कि जहाँ-तहाँ स्थित हैं। यार्कशायर प्रदेश के वेस्ट राइडिंग क्षेत्र की मिलें काल्डर तथा आयर नदियों की पिनाइन घाटियो मे केन्द्रित है। इस उद्योग के अन्य क्षेत्र ट्वीड घाटी, लीसेस्टर शायर, मध्य वेल्स, वेस्ट आफ इगलैंड इत्यादि है।

वेस्ट राइडिंग क्षेत्र मे इस उद्योग के अत्यन्त उन्नत हो जाने के निम्नलिखित कारण है —

(१) ऊन को धोने तथा रंगने के लिये हलका तथा स्वच्छ जल कोल्डर तथा आयर नदियों से प्राप्त हो जाता है। (२) इस क्षेत्र की जलवायु इस धधे के अनुकूल है। (३) यार्कशायर प्रदेश मे पिनाइन तथा उसके निकट स्कॉटलैंड मे भेड़ें अधिक हैं जिनसे ऊन प्राप्त होती है। शेष भाग विदेशो से मँगाने की सुविधायें हैं। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड इस क्षेत्र की ऊन की माँग की पूर्ति करते है। (४) इस क्षेत्र के श्रमिक बहुत कुशल और अनुभवी है।

यहाँ के मुख्य केन्द्र ब्रेडफोर्ड, लीड्स, ड्यूसबरी, बटली, हडर्सफील्ड तथा हैलीफैक्स है जहाँ ऊनी कपडे के अनेक कारखाने है और विविध प्रकार का ऊनी माल तैयार होता है। ऊनी कपडे के उद्योग मे लीड्स का वही महत्व है जो सूती उद्योग मे मानचेस्टर का है। हेलीफैक्स, हडर्सफील्ड तथा यार्क मे कालीन अच्छे बुने जाते हैं। कोट्सवाल्ड क्षेत्र इस धधे मे बहुत आगे है। यहाँ की कती ऊन बहुत उत्तम होती है। इस क्षेत्र में स्ट्राउड नगर के आस-पास सर्ज नामक ऊनी कपडा अच्छा बनता है। विटनी मे बढिया कम्बल बनते है और किडर मिस्टर में उत्तम कालीन बनाये जाते हैं। ट्वीड नदी की घाटी मे हाविक और गैलाशील्स 'ट्वीड' नामक ऊनी

की गई जिसकी उत्पादन क्षमता १०० पौंड की थी। १८६० में रेयन का उत्पादन केवल ३० हजार पौंड था। १९६१ में यह ३० लाख टन हो गया।

रेयन तैयार करने की प्रणाली

रेयन तैयार करने की कई क्रियायें हैं—यथा नाइट्रो-सिल्क (Nitro-silk), कुपर अमोनियम (*Cuper-ammonium*), विस्कोज (*Viscose*) या चलनी द्वारा तार निकाल कर सूत करने की प्रणाली और एसीटेट प्रणाली (Acetate)। किन्तु इनमे सबसे मुख्य और अधिक प्रचलित विस्कोज प्रणाली है। छलनी प्रणाली से रेयन तैयार करने मे सबसे पहले लुब्दी की तहों को एक यन्त्र के अन्दर कास्टिक सोडा के घोल मे डाल कर तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया का उद्देश्य होता है कि लुब्दी की तहो पर जो भी गन्दगी है, वह कास्टिक सोडा मे घुल कर उतर जाय और साथ ही लुब्दी में कास्टिक सोडा का कुछ अश भी मिल जाये। इसके बाद एक यन्त्र मे रख कर उसमे अलकली सैलूलोज मिलाया जाता है जिससे उसके बहुत से टुकड़े हो जाते है। इन टुकड़ो को नरम करने के लिये उन्हे विशेष बाल्टियो में रखा जाता है और उस समय तापमान तथा वातावरण की आर्द्रता को नियन्त्रित रखा जाता है। इसे नरम करने का उद्देश्य सैलूलोज और कास्टिक सोडा की मंद रासायनिक क्रिया का नियन्त्रण करना तथा उसे एक स्थिति विशेष तक ले जाना है। इसके बाद टुकड़ों को मथने के लिये ले लिया जाता है और उसमें कुछ मात्रा में कारबन-डाई-सल्फाइड मिलाया जाता है। इस मिश्रण क्रिया के बाद अलकली, सैलूलोज तथा कारबन-डाइ-सल्फाइड के इस मिश्रित पदार्थ को नियन्त्रित स्थितियो के अन्दर घुले हुए कास्टिक सोडा मे मिलाया जाता है। इस प्रकार बने विस्कोज घोल को पकाने के कमरे मे ले जाते हैं जहाँ इसे उपयुक्त यन्त्र के द्वारा छाना जाता है और छने हुए पदार्थ को उसी कमरे मे तब तक रखा जाता है जब तक कि वह कातने योग्य नही हो जाता। रेयन की छलनी प्रणाली में कताई की क्रिया वस्त्र मिलों की कताई से सर्वथा भिन्न है। दोनों क्रियाओं में 'कलाई' शब्द को छोडकर और किसी बात में साम्य नहीं। विस्कोज घोल को छलनी जैसे कताई यन्त्र में डाला जाता है जिसमें पतले-पतले अनेक छेद होते हैं। रेयन का जितना पतला धागा बनाना हो, उतने पतले छेद उस छलनी यन्त्र को गन्धक के तेजाब, सोडियम सल्फेट, जिंक ऑक्साइड आदि के प्रवाहित घोल में डूबा हुआ रखा जाता है। जब कास्टिक सोडा युक्त विस्कोज घोल उस घोल से मिलता है जिसमे गन्धक का तेजाव भी है और जिसमे छलनी का यन्त्र डूबा हुआ होता है तब गधक के तेजाब के प्रभाव से कास्टिक सोडा का अंश समाप्त हो जाता है और सेलूलोज धागे का रूप धारण कर लेता है। इसे घूमते हुए बर्तन मे एकत्रित किया जाता है और एक बर्तन हटाकर दूसरा बर्तन लगाते जाते हैं। इन बर्तनों मे आये धागे की गुच्छियों को ठण्डे और गरम पानी से धोया जाता है, गन्धक के तेजाब के अंश निकाले जाते हैं, उनमें ब्लीच लगाई जाती है और तब उचित उपकरण मे उसे सुखाया जाता है। इन गुच्छियों को बाद मे ऐसे स्थान पर रखा जाता है जहाँ उनमे हल्की आर्द्रता आ जाय और इसके बाद ये बेची जाती हैं। कभी-कभी इनकी घुण्डियाँ आदि बनाकर बेचा जाता है।

छलनी प्रणाली से रेयन का तार बनाने मे कताई क्रिया से पहले जो प्रक्रिया प्रयुक्त होती है वही प्रक्रिया नकली रुई प्रणाली से रेयन का तार बनाने में प्रयुक्त होती है। दोनों प्रणालियो से तार बनाने के लिए प्रयुक्त होने वाली कताई क्रियाओं में-

कच्चे माल की पूर्ति और तैयार माल के बाजारों के दृष्टिकोण से पंजाब, काश्मीर तथा दक्षिणी भारत की स्थिति बहुत अनुकूल है। इन्हीं क्षेत्रों में ऊनी उद्योगों के सबसे अधिक महत्वपूर्ण केन्द्र स्थापित हो गये हैं। उत्तर प्रदेश में कानपुर में लाल इमली मिल्स और पंजाब में न्यू इजरटन मिल्स हैं। यहां ऊनी मिलों के स्थापन होने का मुख्य कारण आस-पास के भागों में ऊन का बहुतायत से मिलना है। बम्बई में ऊनी मिलों का होना अपवादस्वरूप है। देश के भीतरी मिलों की आवश्यकता पूरी करने के लिये जो ऊन विदेशों—इटली, इंगलैंड, आस्ट्रेलिया आदि देशों—से आती है वह बम्बई के बन्दरगाह पर उतारी जाती है। बम्बई में यही ऊन काम में ली जाती है। बंगलौर, बड़ौदा, श्रीनगर, अमृतसर और मिर्जापुर में भी ऊनी कपडे के कारखाने हैं।

(ड) लिनेन उद्योग (Linen IndustrY)

रेशेदार पौधों में सबसे पहले लिनेन का ही प्रयोग किया गया। आरम्भ यह जाल बनाने के काम में लाया गया और उसके बाद यह कपडे बनाने में प्रयुक्त होने लगा। पाषाण-युग के समय भी झील निवासी इसके कपडे बनाते थे। ऐतिहासिक युग में सम्भवतः मिस्री ही इससे कपडा बनाने वाले पहले मनुष्य थे। जब रोमन लोगों का आधिपत्य इंगलैंड पर था उस समय इसका उद्योग भूमध्यसागरीय प्रदेशों से होता हुआ मध्य और पश्चिमी यूरोप में फैला। १३ वीं शताब्दी में यह उद्योग आयरलैंड में फैला। किन्तु १८ वीं शताब्दी और १९ वीं शताब्दी से ही यान्त्रिक क्रांति के कारण लिनेन का स्थान कपास ने ले लिया अत: इस उद्योग को कुछ क्षति पहुँची। किन्तु अब भी ठंडे देशों में लिनेन का उपयोग अधिक किया जाता है क्योंकि इसमें कपास की अपेक्षा कई गुण हैं। यद्यपि लिनेन का मूल्य कपास के बराबर ही होता है और सूती कपडे की अपेक्षा इसके उद्योग में मजदूरी भी कम दी जाती है किन्तु फिर भी लिनेन के वस्त्र इसकी अपेक्षा महँगे होते हैं। लिनेन का रेशा अधिक मजबूत, टिकाऊ, लम्बा और साफ है जिसमें अधिक मजदूर और अधिक शक्ति का प्रयोग होता है। प्रति करघे पीछे उत्पादन लागत भी सूती उद्योग की अपेक्षा अधिक होती है।

लिनेन की कताई और बुनाई का उद्योग अधिकतर यूरोप के सन उत्पादक प्रदेश में किया जाता है जो उत्तरी आयरलैंड से पूर्वी यूरोपीय रूस तक फैला है। इस क्षेत्र में विश्व का ९५% सन उत्पादन होता है तथा यहाँ यह उद्योग बहुत पुराना होने के कारण मजदूर कुशल और चतुर हैं। इस उद्योग के मुख्य क्षेत्र ये हैं: ब्रिटेन, रूस, संयुक्तराज्य, जर्मनी, बेल्जियम, फ्रांस आदि।

ब्रिटेन का लिनेन उद्योग

स्काटलैंड में यह उद्योग १६ वीं शताब्दी से ही कुटीर के रूप में चल रहा था। इंगलैंड के साथ एकता हो जाने से १८ वीं शताब्दी से इसकी निरन्तर प्रगति होने लगी। इस उद्योग का श्रीगणेश १६२६ में फ्रांसीसी शरणार्थियों द्वारा एडनबरा में किया गया। यहाँ अधिकतर मध्यम श्रेणी के लिनेन के वस्त्र बनाए जाते हैं। यहाँ सन रूस से और जूट भारत से आयात किया जाता है। ग्लासगो-पैसले क्षेत्र में भी यह उद्योग किया जाता है क्योंकि यहाँ स्वच्छ जल, जल विद्युत शक्ति, और कोयले की सुविधा है। सन बाल्टिक और बेल्जियम क्षेत्र से मँगवाया जाता है। अमेरिकन गृह

नकली रेशम के वस्त्र के उत्पादक

विश्व मे नकली रेशम के वस्त्रों का सबसे बड़ा उत्पादक संयुक्त राज्य अमेरिका है। यहाँ तीन मुख्य क्षेत्र हैं :—(१) दक्षिण पूर्वी पेंसिलवेनिया, मैरीलैंड तथा वर्जीनिया के औद्योगिक क्षेत्र. (२) इरी झील का औद्योगिक क्षेत्र तथा (३) टेनेसी वैली तथा पश्चिमी वर्जीनिया के मध्य अपलेशियन क्षेत्र। यहाँ के प्रमुख केन्द्र रोएनोक, लिविसटाऊन, पर्मिसबर्ग, नाशविले, आक्रोन और फिलाडेलफिया है।

इस देश मे नकली रेशम के उद्योग के लिए निम्न सुविधायें प्राप्त हैं :—

(१) कच्चा रेशम यहाँ काफी मिलता है और जापान से भी सुगमतापूर्वक मगाया जा सकता है। लकड़ी की लुब्दी कनाडा व स्वीडेन से भी प्राप्त की जाती है।

(२) स्वच्छ और हल्के पानी की पर्याप्त सुविधा है।

(३) यातायात के साधन इतने उन्नत है कि कच्चा माल मगाने और कपडा देश भर मे भेजने मे बहुत कम खर्चा पडता है।

(४) शक्ति बहुत सुलभ और सस्ती है। जल विद्युत का पर्याप्त विकास हो चुका है।

(५) औद्योगिक क्षेत्रो मे श्रमिको की कमी नही है।

(६) इस देश की व्यावसायिक व्यवस्था बहुत उच्चकोटि की है। इस धन्धे के लिए यह बहुत जरूरी है।

(७) अनेक रसायन उद्योग बहुत उन्नत दशा मे हैं। यहाँ कास्टिक सोडा और गन्धक का तेजाब पूर्वी भागों से प्राप्त होता है।

ब्रिटेन मे नकली वस्त्र बनाने का उद्योग काफी उन्नत है। कच्चा माल यहाँ प्राप्त होता है और नार्वे स्वीडेन व इटली से आसानी से मँगाया जा सकता है। रसायन उद्योग भी बहुत उन्नत है। इनके अलावा प्राय सभी सुविधायें जो सयुक्त राज्य मे है यहाँ भी प्राप्त है। सन् १९३० के बाद जब सूती कपडे के उद्योग मे शिथिलता आने लगी तो नकली रेशम का उद्योग बढा और लकाशायर प्रदेश की बहुत सी मिलें सूती वस्त्र के स्थान पर नकली रेशम के वस्त्रो के कारखाने मे बदल दी गई। यहाँ के प्रमुख केन्द्र मानचेस्टर, राशडेल, हेलीफैक्स, स्टाकपोर्ट, बोल्टन और मेक्लसफील्ड तथा डर्बी हैं।

इटली मे नकली रेशम का धन्धा सन् १९१९ मे आरम्भ हुआ और सन् १९३२ के बाद विकास पाने लगा। यहाँ लकडी की लुब्दी नार्वे और स्वीडेन देशो से मँगाई जाती है किन्तु आवश्यक रासायनिक पदार्थो की पूर्ति काफी है। इस देश के उत्तरी भाग मे मिलान में नकली रेशम का धन्धा बहुत उन्नतिशील हो गया क्योकि वहाँ सस्ती जल विद्युत शक्ति की पर्याप्त सुविधा है। वीला, कोमा और ट्यूरिन प्रमुख केन्द्र हैं।

जापान मे इस धन्धे का आरम्भ सन् १९१९ मे हुआ। इसकी शीघ्र उन्नति हुई और द्वितीय महायुद्ध से पहले जापान मे सबसे अधिक नकली रेशम का धागा बनता था किन्तु युद्ध से इस देश के सभी व्यवसायो को बहुत ठेस पहुँची—युद्धोत्तर काल में इसका उत्पादन बहुत घट गया किन्तु अब भी यहाँ १५ लाख पौंड नकली रेशम तैयार होता है। इस देश में लुब्दी के योग्य लकड़ी की पूर्ति कम है। केवल

संयुक्त राज्य का लिनेन उद्योग

यहाँ सन बिलकुल पैदा नहीं होता फिर भी आयात किए हुए सन के सूत और अर्द्ध-निर्मित माल के द्वारा ही यहाँ हडसन नदी के किनारे न्यू इङ्गलैंड, न्यूयार्क और न्यूजर्सी में यह उद्योग स्थापित हो गया है। न्यूयार्क से हडसन नदी द्वारा जुडे होने के कारण घनी आबादी वाले औद्योगिक क्षेत्र की बडी माँग की महान सुविधा इसे प्राप्त है। यहाँ आयात किए गए सूत से रूमाल, मेजपोश, टाइयाँ, कॉलर, कफ आदि उत्तम श्रेणी का माल तैयार किया जाता है।

बेल्जियम का लिनेन उद्योग

यहाँ का लिनेन उद्योग घरेलू सन की पूर्ति पर ही निर्भर है। मुख्य क्षेत्र लिस नदी की घाटी के सहारे फैला है। इस नदी से इसे स्वच्छ जल मिल जाता है तथा यहाँ सस्ता किन्तु चतुर श्रम भी खूब प्राप्त होता है। यहा घरेलू माँग के लिए ही मध्यम श्रेणी का माल तैयार किया जाता है। यहाँ के मुख्य केन्द्र घेन्ट, कोर्टिक, और लोकर्न हैं जो सब फ्लैंडर्स क्षेत्र मे है।

फ्रांस का लिनेन द्यो।

फ्रास मे भी काफी पुराना उद्योग है। यहाँ यह उद्योग लिस नदी के किनारे किया जाता है। इस नदी का पानी रेशे को सडाने और उसको साफ करने के लिए अनुकूल है। यहाँ के मुख्य क्षेत्र लिले, कैम्ब्रे और वेंस्टर्फलिया हैं। इस उद्योग के सबसे बडे केन्द्र रूबेटस, टोरकोइग और आर्मेन्टायस हैं।

रूस का लिनेन उद्योग

रूस मे लिनेन उद्योग उस समस्त पेटी मे फैला है जिसमे सन पैदा होता है। यह क्षेत्र मास्को के द० पश्चिम मे ओरशा से लगाकर यूराल पर्वत के पश्चिम की ओर ग्लैजोव तक फैला है। इस क्षेत्र को कोयला टूला कोल क्षेत्र से प्राप्त होता है। सन का उत्पादन निकटवर्ती पट्टियो मे बहुत होता है। सस्ती जल यातायात सुविधा मास्को वाल्गा नहर और मस्कोवा नदियो द्वारा प्राप्त हो जाती है। यहाँ मोटे किस्म का कपडा बनाया जाता है जिसकी घरेलू माँग बहुत है।

इस उद्योग के मुख्य केन्द्र ग्लैजोव, कोस्ट्रोमा, कैमेशिनो, ओरशा, स्मोलैस्क, वोलोडा, व्याजिन्स, कालोनिन और मास्को है।

(च) जूट उद्योग (Jute Industry)

इस उद्योग का मुख्य क्षेत्र भारत है, जहाँ अब भी काफी मात्रा मे कच्चा जूट प्राप्त होता है। यहाँ प्राचीन काल मे कपाली लोग कुटीर प्रणाली करते आये है। आधुनिक ढंग का पहला मिल स्कॉटलैंड वासी जार्ज ऑकलैंड द्वारा रिश्रा मे सन् १८५५ मे स्थापित किया गया। इसी समय विश्व के अन्य देशों मे भी जूट की मिलें खोली गई। सयुक्त राज्य मे सन् १८४८ मे, फ्रास में सन् १८५७ मे; जर्मनी मे सन् १८६१ मे, बेल्जियम मे सन् १८६५ मे, रूमानिया व इटली सन् १८८५ मे। रूस, पौलैंड, जैकोस्लोवाकिया, स्पेन, नार्वे, और फिनलैंड मे भी इसी शताब्दी मे जूट की मिलें स्थापित की गईं।

विभाजन के पूर्व भारत से ही विश्व के उत्पादन का ९९% कच्चा जूट प्राप्त

ऊनी कपड़ों का प्रयोग होता है । सूती कपड़े के बहुत से कारखाने कपास क्षेत्रों से दूर स्थापित है किन्तु यह बात ऊनी कपड़े के कारखानों के साथ लागू नहीं होती । ये तो प्राय: ऊन-क्षेत्रों के पास ही स्थित हैं। इतना अवश्य है कि जब स्वदेश में पर्याप्त ऊन प्राप्त नहीं होती तो दूसरे देशों से भी कुछ ऊन मँगा ली जाती है । ऊनी कपड़े के व्यवसाय को धुलाई व रँगाई के काम के लिए मुलायम पानी चाहिए । इसके अलावा श्रमिकों और शक्ति साधन को आवश्यकता होती ही है । वैसे इस धन्धे के लिए बहुत कम शक्ति की आवश्यकता होती है और थोड़े कोयले से ही काम चल जाता है। ऊनी कपड़े के मजदूर सूती धन्धे के मजदूरों से भी निपुण होते हैं। खपत के केन्द्र भी पास होने चाहिए । यही कारण है कि न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, द० अमेरिका या अफ्रीका में ऊन पैदा होने पर भी देश की आबादी कम होने से इन देशों में कोई बड़ी मिल नहीं है तथा विश्व के औद्योगिक देशों से दूर होने के कारण मशीनें आदि मँहगी पड़ती है । इसके अतिरिक्त इन देशों की जलवायु साधारणत: मध्यम है अत ऊनी कपड़े की *अधिक माँग नहीं होती ।*

ऊनी कपड़ा तैयार होने तक निम्नलिखित क्रियाएँ होती है :—

(१) भेड़ों की ऊन काटना (Sheaving)—यह काम अब मशीनों से होने लगा है ।

(२) ऊन को अच्छी तरह साफ करना (Scouring)—यह काम ऐसे पानी द्वारा किया जाता है जिसमे अमोनिया पड़ा हो ।

(३) कताई (Carding or Combing)—ऊन के रेशों को कंधे द्वारा सीधा करके काता जाता है । कती हुई ऊन ही कपड़ा बुनने के काम में आती है ।

(४) बुनाई (Weaving)—ऊनी कपड़ा सूती कपड़े की तरह बुना जाता है । किन्तु अन्तर इतना ही है कि ऊनी कपड़े का ताना बाना एक ऊपरी तह से ढका रहता है ।

ऊनी कपड़ा बुने जाने के बाद पीटा जाता है इससे ऊन के रेशे दब जाते है ।

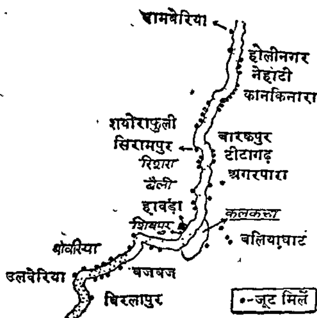
ऊन के उद्योग मे मुख्यत. तीन शाखायें होती है—(१) **वर्सटेड सूत** (Worsted Yarn)—ऊनी सूत के सामान ऊँचे किस्म के ऊन से बनते है । पहले ऊन को धुना जाता है और साफ किया जाता है फिर उस सूत को बँट दिया जाता है इस बँटे हुए सूत (वर्सटेड) से तकुओं पर सर्ज इत्यादि कपड़े बुने जाते है । इस प्रकार के कपड़े में ऊन का सूत चिकना और एक सार मिला हुआ होता है ।

(२) ऊनी कपड़ा (Woollen fabric)—उत्तम ऊन से प्राप्त व्यर्थ पदार्थ और मोटी तथा मध्यम रेशे वाली ऊन को मिलाकर कपास की भांति धुन लिया जाता है, फिर उसे कात कर सूत बना लेते है । इसी सूत से ऊनी माल बनाया जाता है । इस सूत मे अधिक बट नहीं होता तथा इसके तार भी ढीले होते है । इस सूत से ट्वीड और ब्रॉड क्लाथ बनाये जाते है ।

(३) ऊनी कपड़ों के चिथड़ों और दर्जियों की कतरन आदि से भी रेशा खींचा जाता हैं । उसे धोकर, रंगकर फिर से काता जाता है । इससे शोडी (Shoddy) नामक कपड़े तैयार किए जाते हैं ।

भारत में यह उद्योग पश्चिमी बंगाल में ही केन्द्रित है। यहाँ इस उद्योग के स्थापन के मुख्य कारण ये है :—

(१) जूट की खेती गङ्गा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा में होती है जहाँ प्रतिवर्ष नदियों द्वारा उपजाऊ मिट्टी लाकर जमा कर दी जाती है। अतः कच्चा माल सुगमता से मिल जाता है। (२) नदियों और उनकी सहायकों द्वारा सस्ते जल यातायात की सुविधा प्राप्त है। ये कच्चे जूट को मिलों तक पहुँचा देती है। जूट पहुँचाने के लिए श्रीराम-पुर तक जहाज चलाये जाते हैं। (३) कारखानों के लिए कोयला रानीगंज और आसनसोल के क्षेत्रों से उपलब्ध हो जाता है जो यहाँ से केवल १२० मील दूर पड़ते हैं। (४) इस क्षेत्र में मिल-उद्योग से पहले ही जूट का कुटीर-उद्योग चालू था क्योंकि इसमें स्काटिश और अङ्गरेजों द्वारा पूँजी लगाई गई थी। (५)जूट अधिकतर विदेशी व्यापार के लिए ही था। हुगली नदी और कलकत्ता का बन्दरगाह निर्यात के लिए सुविधाजनक थे। मशीनों और अन्य आवश्यक रसायन विदेशों से आयात किए जा सकते हैं। (६) कलकत्ता एक औद्योगिक केन्द्र है जहाँ विविध प्रकार के कारखाने पाये जाते हैं। अत इनके लिए श्रमिक बिहार, उड़ीसा, आसाम, उत्तर प्रदेश तथा मद्रास से भी आते हैं। इस समय भी ९०% मजदूर इन्हीं राज्यों से यहाँ आते हैं।



चित्र १६७. पश्चिमी बंगाल का जूट-मिल क्षेत्र

(७) यहाँ नम और गरम जलवायु उद्योग के लिए उपयुक्त है। (८) कलकत्ता नगर में अनेक बैंक, बीमा कम्पनियाँ आदि होने से रुपये के लेने-देन में सुविधा रहती है तथा व्यापार का केन्द्र होने से क्रय-विक्रय की सुविधा रहती है।

कपडा उत्तम बनता है। इसी क्षेत्र में तथा नाटिंघम और लीसेस्टर मे मोजे, बनियान आदि बुने जाते हैं। वर्स्टेड कपडा बिजली, ब्रैडफोर्ड, लीड्स, हैलीफैक्स में और शॉडी कपड़ा ड्यूसबरी, वाटले और मौंडविके मे बनाया जाता है।

यूरोप महाद्वीप के प्रसिद्ध ऊन क्षेत्र, जो वियना से उत्तरी सागर व इंगलिश चैनल तक फैला है, मे भी कई देशो मे ऊनी कपडे का उद्योग केन्द्रित है। इनमे फ्रास, जर्मनी, इटली तथा बेलजियम उल्लेखनीय है क्योंकि इन सभी क्षेत्रों मे स्वच्छ जल की अधिकता, सस्ते जल यातायात की सुविधा, कोयले और लोहे की निकटता के कारण यह उद्योग विकसित हुआ है। जर्मनी के साइलेशिया, सेक्सोनी तथा वेस्टफेलिया कोयला क्षेत्र मे डुसलडर्फ, ब्रेसलो व एलबरफील्ड ऊनी उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। फ्रास के रूआँ व लिली, , रूबैक्स, टूरकिंग और आर्मनटायर्स नगर के ऊनी कपडे उत्तम डिजायनो के लिए नामी है। रूस मे ऊनी कपड़े का उद्योग मास्को, लेनिनग्राड, फायनोवी, विलन्सटी, पैवलोयस्की, खारकोव, त्रिमचुग, कुटैनी और कज्जाक मे स्थित है।

(२) संयुक्त राज्य अमेरिका में अलघनी के पूर्व की ओर इस उद्योग का विस्तृत क्षेत्र है। यहाँ ८०% मिलें एटलांटिक तट वाले प्रान्तो के मेन प्रान्त से लेकर पेंसिलवेनिया तक फैली हुई है। न्यू इगलैंड रियासतें इस देश के ऊनी कपडे का आधे से अधिक भाग उत्पन्न करती हैं। इस क्षेत्र के प्राय प्रत्येक नगर में ऊनी कपडे के कारखाने मिलेंगे किन्तु फिलाडेलफिया सबसे प्रसिद्ध केन्द्र है। अकेली मैसेचुसेट्स रियासत से इस देश का एक तिहाई ऊनी कपडा प्राप्त होता है। दूसरा स्थान पैंसिलवेनिया रियासत का है। रोड द्वीप पर भी इस उद्योग का पर्याप्त विकास हुआ है। ओहियो रियासत का भी इस उद्योग में नाम है।

इस देश मे ऊनी कपडे के कारखानो के लिए फिलाडेलफिया, प्रावीडेंस, वर्सेस्टर, लावेल, लारेस, सोलयोक इत्यादि नगर विशेष प्रसिद्ध है। न्यूयार्क मे ऊनी कालीन व बढिया कम्बल बनाये जाते हैं। न्यूयार्क, न्यूजर्सी व केनक्टीकट मे फैल्ट हैल्ट भी बहुत बनाये जाते है।

(३) एशिया महाद्वीप पर जापान ने हाल ही मे ऊनी कपडे के उत्पादन मे उन्नति की है। यह देश आस्ट्रेलिया से ऊन मँगाता है और ऊनी कपडे की अधिकतर स्थानीय माँग की पूर्ति के लिए ही कपडा बनाता है किन्तु अभी यह इस माग की पूर्ति नहीं कर पाया है। यहाँ का ऊनी कपडा उत्तम प्रकार का नही होता है।

(४) भारत में ऊनी कपड़े का उद्योग—यह उद्योग प्राय. उत्तरी भारत में ही केन्द्रित है। ऊनी उद्योग तीन प्रकार का है— (१) ऊनी मिल उद्योग, (२) ऊनी गृह-उद्योग, और (३) गलीचे का उद्योग। गलीचे का उद्योग, गृह-उद्योग और फैक्टरी उद्योग दोनो ही तरह का है। ऊनी मिलें भी तीन प्रकार की हैं। पहली प्रकार के वे मिल हैं जिनमे 'वूलन' (निम्न दर्जे का) और 'वर्स्टेड' बढिया दोनो ही प्रकार के कपडे तैयार किये जाते है। दूसरी प्रकार की मिलो मे केवल उपरोक्त मे से एक ही प्रकार का कपडा तैयार किया जाता है। तीसरी श्रेणी मे वे मिलें हैं जो तैयार सूत खरीद कर उसकी बुनाई और रंगाई आदि करती हैं। पहली श्रेणी की मिलें कानपुर और धारीवाल तथा तीसरी की अमृतसर मे हैं।

राज्यों की हलचलों का ,एकीकरण करने के हेतु भारत-सरकार ने एक केन्द्रीय देख-रेख संगठन स्थापित किया है। यह संगठन प्रति एकड़ अधिक उपज करने, फसल की किस्म को सुधारने का ध्यान रखता है। इसके लिए वह अच्छे बीज, उर्वरक, खेती की अच्छी प्रणालियों, पौधो की रक्षा, डंठल सड़ाने के लिए अधिक तालाबों की व्यवस्था करने की ओर भी ध्यान देता है।

(२) **युक्तियुक्त संगठन और आधुनिकीकरण** :—उत्पादन विधियां युक्तियुक्त और उन्नत की जायँ और इसके लिए नवीनतम ढग की मशीनें तथा उपकरण लगाए जायँ। कताई-बुनाई विभाग मे नई मशीनें लगाने और आधुनिक प्रणालियाँ काम में लाने की आवश्यकता है। इससे काम अच्छा हो सके और उत्पादन की लागत भी घटाई जा सके। अभी तक आधुनिकीकरण के कार्यक्रम को भी उद्योग ५०% पूरा कर चुका है। जिन मिलो में नई मशीनें लग चुकी हैं उनमे तीन पालियाँ चलाई जाती हैं। इनके द्वारा तैयार की गई सुतली से अधिक करघे चलाये जा सकते हैं।

(३) जूट के माल के उत्पादन को ऐसे कारखानो में ही केन्द्रित किया जाय जो श्रेष्ठ और आधुनिक ढग के हो। जो कारखाने अनार्थिक हैं उन्हें बन्द कर दिया जाय और उनमे होने वाला उत्पादन आधुनिक मशीनो वाले अन्य कारखानो मे किया जाय।

(४) निर्यात संवर्द्धन का कार्यक्रम उत्साह के साथ चलाया जाय जिससे खोये हुऐ बाजार फिर हाथ मे आ जाएँ और वर्तमान बाजार भी बने रहें। जूट के माल के प्रतिवर्ष बिक्री के विकास के लिए भारत-सरकार निरन्तर सहायता दे रही है। भारतीय जूट मिल्स एसोसियेशन के ब्रिटेन और अमरीका मे शाखा कार्यालय है। पहला कार्यालय यूरोपीय क्षेत्र मे और दूसरा अमरीका, कनाडा और मध्य तथा दक्षिण अमरीका मे व्यापारिक सम्पर्क करता है। इसके अतिरिक्त सद्भावना मण्डल विदेशो मे बाजारो का अध्ययन करने हेतु जाते है।

(५) उद्योग के उत्पादन विविध प्रकार के किये जायँ और जूट का नये-नये कार्यों मे प्रयोग किया जाय। इस सम्बन्ध मे जूट मिल्स एसोसियेशन कई नये परीक्षण करा रहा है। दरियो के नीचे अस्तर लगाने में भी जूट का प्रयोग आरम्भ हुआ है।

युद्ध के कारण जब सूती कपड़ा उद्योग के लिये रूई का अभाव होने लगा तब इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिला। जूट के उद्योग के निकट होने से दक्ष मजदूर भी मिल जाते हैं। यहाँ के मुख्य क्षेत्र एडिनबरा, एबरडीन, पर्थ, ग्लासगो और डम्बार्टन हैं।

आयरलैंड में यह उद्योग अति प्राचीन काल से किया जा रहा है। आधुनिक युग में भी लिनेन उद्योग में विश्व में यही देश सबसे प्रमुख हैं। यहाँ लिनेन उद्योग का जन्म १०२८ में बेलफास्ट नगर में हुआ। इंगलैंड में विश्व के लिनेन उद्योग में लगे $\frac{3}{4}$ करघे और तकुए हैं। इनमे से $\frac{3}{4}$ तकुए और करघे अकेले उत्तरी आयरलैंड में पाये जाते है जहाँ बेलफास्ट इस उद्योग का प्रमुख केन्द्र है। यहाँ के $\frac{3}{4}$ से भी अधिक मिल बेलफास्ट से ३० मील की परिधि में ही स्थित हैं। लिनेन उद्योग मे बेलफास्ट का महत्व इग्लैंड मे सूती उद्योग मे मानचेस्टर से भी अधिक है। इसके निम्नांकित कारण हैं :—

(१) यद्यपि उत्तरी आयरलैंड मे सन अधिक पैदा होता है फिर भी यहाँ सन रूस, फ्रांस और नीदरलैंड्स से मँगवाने की विशेष सुविधा है।

(२) आरम्भिक काल मे जब यह उद्योग कुटीर प्रणाली पर चलाया जाता था, तो सरकार द्वारा इसे आर्थिक सहायता दी जाती थी। अत. जब औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नये यन्त्रों का आविष्कार बढा तो यहाँ के उद्योगपतियों ने सहज ही में नये उपादानों का व्यवहार शुरू कर लिया।

(३) आयरलैंड में लिनेन उद्योग ही प्रमुख है जब कि स्काटलैंड और आयरलैंड मे इस उद्योग को सूती कपडे और जूट तथा अन्य उद्योगों से प्रतिस्पर्धा करनी पडती है। अत आयरलैंड के उद्योगपति अधिक वेतन देकर भी दक्ष मजदूरों को अपने यहाँ रख सकते हैं। इसके अतिरिक्त आयरलैंड मे जहाज बनाने तथा अन्य भारी उद्योग के विकास होने के कारण इन उद्योगो मे पुरुष श्रमिको को कार्य मिल जाता है किन्तु स्त्री श्रमिको को लिनेन उद्योग मे अधिक कार्य मिलता है। अतः इस उद्योग मे $\frac{3}{4}$ मजदूर स्त्रियाँ और बच्चे ही हैं।

(४) उत्तरी आयरलैंड का जलवायु नम होने के कारण सन के धागे लम्बे और मजबूत बनाने की सुविधा है।

(५) यहाँ के श्रमिक लिनेन के सूत को रगने, ब्लीच करने और उनको फिनिश करने मे बड़े निपुण हैं।

(६) यहाँ स्वच्छ जल बहुतायात से मिलता है तथा कोयला और जल-विद्युत शक्ति की पूर्ण सुविधाएँ हैं।

(७) बन्दरगाहों की सुविधा होने के कारण तैयार माल निर्यात करने की पूर्ण सुविधा है।

(८) आरम्भ मे ही यहाँ उद्योग स्थापित होने से यहाँ के माल की माँग उसकी उत्तम श्रेणी के कारण विश्व के देशो में बहुत अधिक है।

यहाँ महीन और बढिया किस्म का लिनेन ही अधिक बनाया जाता है। यहाँ के मुख्य केन्द्र बेलफास्ट, लार्न, कोलेरेन, लिसबर्न, बानब्रिज, ड्रोमोर व वाल्लीमिना हैं।

मानचेस्टर और लीड्स में भी कुछ लिनेन के कारखाने हैं जो यहाँ के सूती उद्योग से ही सम्बन्धित हैं।

मे सूती कपड़े का उत्पादन आरम्भ हुआ तो उसके लिए गन्धक का तेजाव, सोडा, एश, और रंग तथा ब्लीचिंग पाउडर की आवश्यकता हुई। फलस्वरूप इस उद्योग का श्रीगणेश सबसे पहले लकाशायर कोयला क्षेत्र मे हुआ। इस उद्योग को दो कारणों से बड़ा प्रोत्साहन मिला। १७४६ मे जॉन रूपक ने गन्धक का तेजाब बनाने का एक कारखाना स्कॉटलैण्ड मे खोला। १७६१ मे निकोलस ब्लैक ने नमक, गन्धक के तेजाब व चूने आदि से फास मे सोडा एश बनाने का कारखाना स्थापित किया। इन दोनो कारणो से इगलैण्ड मे यह उद्योग अच्छी तरह विकास पा गया। यहाँ तक कि १६ वीं शताब्दी के लगभग ७५ वर्षों तक विश्व में सबसे अधिक रसायन ब्रिटेन में ही तैयार किये जाते थे।

इसके बाद १८६५ में जर्मनी मे पोटाश और रंग बनाने का उद्योग स्थापित किये गये, किन्तु इस उद्योग का वास्तविक विकास वहाँ १८७१ के बाद ही हुआ। पश्चिमी यूरोप के इन दोनो देशो मे इस उद्योग के लिए तान्त्रिक शिक्षा (Technical Education), कुशल मजदूर, पृष्ठ-देश मे चूना, नमक, कोयला, लोहा मिलने की सुविधा तथा विस्तृत बाजार की निकटता आदि की सुविधाओ का होना था।

सयुक्त राज्य अमेरिका मे इस उद्योग का विकास १८८० के बाद से हुआ किन्तु असली विकास प्रथम महायुद्ध के बाद हुआ जबकि यूरोप से युद्ध के कारण रसायन पदार्थ का आना बन्द हो गया। राज्य द्वारा सहायता मिलने, कच्चे माल की प्रचुरता, पूंजी का बडी मात्रा मे मिलना और बडी सख्या मे कुशल और शिक्षित मजदूरो का मिलना आदि सुविधाओं के फलस्वरूप सयुक्तराज्य अमेरिका वर्तमान समय में ससार का सबसे वडा रासायनिक पदार्थ तैयार करने वाला देश है। इसका उत्पादन जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रास, इटली, रूस और जापान के सम्मिलित उत्पादन से भी अधिक है। अब यही देश सबसे अधिक निर्यात भी करता है।

उद्योग की विशेषतायें

इस उद्योग की कुछ विशेषतायें हैं जो और उद्योगो मे नही पाई जाती :—

(१) अनुसधान और नई खोजो के लिये इस उद्योग मे अन्य उद्योगों की अपेक्षा अधिक खर्च की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिये अमेरिका की ड्यू पौंट (Du-Pont) नामक उद्योग में नायलन के १ मोजे जोडी बनाने में लगभग २७० लाख डालर खर्च किये।

(२) इस उद्योग मे वस्तुएँ बनाने की क्रियाओं और उनके उत्पादन मे अन्य उद्योगों की अपेक्षा शीघ्र परिवर्तन होते है। इसका मुख्य कारण नई खोजो का होना है। एक ही पदार्थ से कई वस्तुएँ बनाई जा सकती है।

(३) इस उद्योग को आरम्भ करने के पूर्व वस्तुओ के उत्पादन की पूरी रूप-रेखा गवेषणाशालाओ मे तैयार की जाती है। उसके उपरान्त वस्तुओं का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है।

(४) अन्य उद्योगो की अपेक्षा इस उद्योग की मशीनो और उपकरणो का ह्रास जल्दी होता है, अतएव उन्हे जल्दी-जल्दी बदलना पडता है।

(५) यह उद्योग विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाता है जैसे विस्फोटक पदार्थ, प्लास्टिक, कृत्रिम रबड, कृत्रिम रेशे, कृत्रिम रेशम और रोगन आदि। अतएव अपरोक्ष रूप में यह नये उद्योगो को जन्म देता है।

होता था, अतएव विश्व मे जूट के उद्योग में भारत का एकाधिकार था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह उद्योग विश्व मे सबसे अधिक भारत में ही केन्द्रित और विकसित हुआ है। विश्व में कुल जूट के कर्घों का ५६% अब भी भारत में ही पाया जाता है, जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा—

विश्व मे जूट के कर्घों का वितरण (१९६१)

देश	कर्घे	विश्व का प्रतिशत
भारत	६८,९५३	५६·०
ग्रेट ब्रिटेन	११,१५१	९·१
फ्रास	७,६९८	६·३
जर्मनी	६,३४९	५·२
ब्राजील	४,९८७	४·१
बेल्जियम	४,८०७	३·९
इटली	४,६३१	३·८
सयुक्त राज्य अमेरिका	२,७५०	२·२
जैकोस्लोवाकिया	२,०००	१·६
पोलैंड	१,६००	१·३
रूस	१,३१५	१·१
पाकिस्तान	१,०००	०·८
द० अमेरिका	१,०००	०·८
स्पेन	८००	०·७
चीन	७५६	०·६
आस्ट्रिया	७३५	०·६
जापान	६१५	०·५
अन्य देश	१,७५९	१·४
योग	१,२२,५१०	१००·०

जूट उत्पादक देशों में जूट के माल का उत्पादन (००० टनों में)[6]

देश	१९५९ जूट का कपडा	१९५९ सूत	१९६० जूट का कपड़ा	१९६० सूत
सं० राज्य	७९·९	१३७·७	८२·२	१४१·८
फ्रास	६५·३	८१·६	६६·३	८५·९
प० जर्मनी	५६·८	७२·०	५८·०	७२·६
बेल्जियम	३६·७	७७·९	३४·९	७६·६
पाकिस्तान	२३२·९	—	२६६·४	—
भारत	१,०११·५	—	१,०६७·१	—
योग	१,५२३·१	३६९·२	१,५७४·७	३७६·६

6. Records & Statistics, Vol. 12, No. 4, Aug. 61, p. 206.

लाख टन गधक का तेजाब, ४०-५० लाख टन सोडा एश और ७ लाख टन विस्फोटक पदार्थ बनाये जाते है। सोडा ऐश बनाने के कारखाने डिट्रायट, सोल्वे, बैटन रॉग, लेक चार्लेस, साल्टविले और वारवरटन मे हैं।

जर्मनी में रासायनिक उद्योग

जर्मनी मे वैज्ञानिक अन्वेषणो की प्राचीन परम्परा है। यहाँ की अनुसंधान-शालायें सारे ससार मे प्रसिद्ध हैं। आधुनिक रग उद्योग (Dye Industry) जर्मन वैज्ञानिको का ही महान् आविष्कार है। यह उद्योग यहाँ सन् १८६५ मे आरम्भ हुआ था और अब इसका स्थान ससार मे प्रथम है। जर्मनी मे इस उद्योग के अन्तर्गत रङ्ग, खाद, कृत्रिम, तेल, रबड, कपडा और प्लास्टिक बनाये जाते हैं। जर्मनी के इस उद्योग का केन्द्रीकरण साइलेशिया क्षेत्र मे हुआ है। मुख्य केन्द्र स्ट्रासफर्ट, एसेन, म्यूनिच, एल्वरफल्ड, बरगौसन, सेहौनब्रेक, फ्रैंकफर्ट और ओपाऊ हैं। इनमें स्टासफर्ट मुख्य क्षेत्र है जहाँ निम्नलिखित सुविधाएँ प्राप्त हैं —

(१) स्टासफर्ट और हाली के पास हार्ज हॉर्स्ट से प्रचुर मात्रा मे पोटाश और अन्य रासायनिक लवण प्राप्त होते हैं।

(२) इन लवणो से कृत्रिम खाद, साबुन, काँच और अन्य रासायनिक पदार्थ भी बनाये जाते हैं जिनकी खपत स्थानीय रूप से भी काफी है। विदेशों मे भी इन पदार्थों की बहुत माँग रहती है।

(३) ज्वीकाऊ कोयला क्षेत्र से काफी कोयला प्राप्त हो जाता है। साइ-लेशिया से भी कोयला प्राप्त होता है।

(४) केवल लिगनाइट कोयले से ही हजारो प्रकार के रासायनिक पदार्थ बनाये जाते हैं।

(५) नदियों से प्रचुर मात्रा मे जल मिलता है।

लीपजिग, हाली और बिटरफील्ड मे कास्टिक सोडा और साबुन बनाया जाता है। ल्यूनावर्क मे लिगनाइट से विस्फोटक पदार्थ और कृत्रिम खाद बनाये जाते हैं।

ब्रिटेन का रासायनिक उद्योग

ब्रिटेन मे यह उद्योग सबसे पहले चालू किया गया था। सन् १७८७ मे ग्लासगो नगर मे इस उद्योग का जन्म हुआ। औद्योगिक क्रांति के बाद सूती कपड़ा उद्योग मे तेजाब, क्षार, साबुन और रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता बढ़ने पर इस उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन मिला। सरकारी आदेशो द्वारा विस्फोट उद्योग को विकसित होने का सुअवसर मिला। नोबेल विस्फोट कारखाना इसी समय खुला। चैशायर की खानो से पर्याप्त और विविध प्रकार के लवणो की प्राप्ति हो जाती है। मानचेस्टर नहर द्वारा बना माल बाहर भेजा जाता है। लिवरपूल के उत्तम बन्दरगाह से आयात की सारी सुविधायें प्राप्त हैं। यहाँ चर्बी और मारगेराईन इकट्ठा किया जाता है। इस उद्योग का बर्मिघम के धातु-उद्योग से घनिष्ट सम्पर्क है। टाईन नदी की घाटी मे सस्ती गैस शक्ति और ईंधन प्राप्त हैं। किनलोकलावेन, फोरस और फोर्ट विलियम मे सस्ती बिजली प्राप्त हो जाती है जिसके द्वारा उच्च तापक्रम की विधि से रासायनिक पदार्थ बनाये जाते हैं। ब्रिटेन के मुख्य रसायन केन्द्र एंट हेलेन्स, न्यू कासिल, रनकार्न, मिडिल्सबरो, ग्लासगो, लदन और लीड्स हैं। इङ्गलैंड मे अन्वेषण मे प्रयुक्त होने वाले रासायनिक पदार्थ बनाने का विशिष्टीकरण हुआ है।

इन्हीं कारणों से भारत में जूट का उद्योग हुगली नदी के किनारे कलकत्ता से ३५ मील ऊपर और २५ मील नीचे ६० मील लंबी और २ मील चौड़ी पट्टी में स्थापित हो गया है। इस क्षेत्र में भारत की ८०% जूट की उत्पादन क्षमता पाई जाती है। इसमें भी सबसे अधिक केन्द्रीयकरण १५ मील लम्बी पट्टी में ही पाया जाता है जो उत्तर में रिश्रा से दक्षिण में नैहाटी तक फैली है। यहाँ के मुख्य केन्द्र बैली, अगरपारा, रिश्रा, टीटागढ, श्रीरामपुर, बजबज, सिवपुर, सल्किया, हावड़ा, श्यामनगर, बंसबरिया, उलूबरिया, काकिनारा, बिरलापुर, नैहाटी, होलीनगर और बारकपुर हैं। बिहार में दरभंगा, उत्तर प्रदेश में गोरखपुर और कानपुर तथा आंध्र में नॉलीमारलाँ और विमलीपट्टम में भी जूट की मिलें हैं। सब मिलाकर भारत में ११२ जूट की मिलें हैं, जिनमें ६ लाख श्रमिक काम करते हैं और ७२,२८८ कर्घे हैं। बिहार में ३, आंध्र में ४, उत्तर प्रदेश में ३, प० बंगाल में १०१ और मध्य प्रदेश में ३ मिलें हैं।

भारतीय जूट उत्पादन चार प्रकार का होता है : (१) जूट के बोरे, (२) टाट, (३) मोटे कालीन और फर्शपोश तथा (४) रस्से एवं तिरपाल। १९६२ में भारतीय मिलों द्वारा १० लाख टन जूट का सामान तैयार किया गया।

भारत से जूट के बोरों का निर्यात क्यूबा, आस्ट्रेलिया, थाइलैंड, इंगलैंड, चिली, अर्जेनटाइना और चीन को किया जाता है तथा टाट का निर्यात इङ्गलैंड, कनाडा, सयुक्त राज्य और अर्जेन्टाइना को होता है।

भारत व अन्य देशों से जूट के माल का निर्यात (००० टनों में)

देश	१९५९	१९६०	भारत से जूट के माल का निर्यात (००० टनों में)	
भारत	८६०·२	८५७·५	१९५७	८६६·९
पाकिस्तान	१८९ ६	१८५·७	१९५८	७७७·९
संयुक्त राज्य	१५ २	१६·३	१९५९	८६०·२
बेल्जियम	४३·६	५१ ३	१९६०	८५७·६
फ्रांस	२७ ०	२९·३	—	—
प० जर्मनी	१२ २	१२·८	—	—
योग	१,१४८ १	१,१५२·६		

जूट उद्योग की समस्याएँ—

इस समय जूट उद्योग के सम्मुख निम्न समस्यायें हैं :—

(१) **कच्चे जूट की कमी**—इसे भारत में जूट का अधिक उत्पादन बढाकर हल किया जाय और जूट उद्योग को स्वावलम्बी बनाया जाय। कच्चे जूट के उत्पादन में सरकारी प्रयत्नों द्वारा काफी वृद्धि हुई है। १९४७-४८ में जहाँ १६·५ लाख गाँठें पैदा होती थी वहाँ १९६२-६३ में ५४ लाख गाँठें पैदा हुई। अब जूट उत्पादन में देश इतना आत्म-निर्भर हो गया है कि उसे अपनी कुल आवश्यकता का केवल १०% कच्चा जूट ही पाकिस्तान से मंगवाना पड़ता है। जूट उत्पादक विभिन्न

समुद्री सीपियों) की मिट्टी को उचित परिमाण मे मिला कर चूरा कर लेते हैं। फिर उसे ऊँचे तापमान (प्रायः १४०० अश सेन्टी० से १५०० अश सेन्टी० तक) पर घूमने वाली अथवा स्थिर मिट्टी मे भूनते है। इस प्रकार तैयार होने वाली वस्तु को क्लिनकर (Clinker) कहते है। इसे ठंडा करके बारीक पीस डालते हैं। इसमे थोडा सा जिप्सम (Gypsum) मिला देते हैं। इस प्रकार पोर्टलैंड सीमेन्ट बनकर तैयार हो जाता है जो आज मजबूती और आकर्षण, दोनो ही दृष्टियो से इमारतो के बनाने मे जादू का काम करता है। इसे प्लास्टिक के समान किसी भी रूप मे ढाला जा सकता है। इसकी सहायता से ठोस अथवा पोले किसी भी प्रकार की वस्तुएँ तैयार की जा सकती हैं। एक ओर इससे सुन्दर बेल बूटो वाली सुन्दर जालिया बनाई जाती है तो दूसरी ओर भारी-भारी बाँध, लम्बे-चौड़े हवाई अड्डे अथवा सडकें बनाई जाती हैं।

सीमेन्ट बनाने की दो प्रमुख विधियाँ है: (१) गीली विधि, और (२) सूखी विधि।

भारत मे अधिकतर गीली विधि से ही सीमेन्ट बनाया जाता है। इस विधि से कच्चे माल को उपयुक्त परिमाण मे मिलाकर बारीक पीस डालते हैं। फिर उसे पानी मे गाढा घोल लेते हैं।

गीली विधि में सूखी की अपेक्षा ईंधन अधिक खर्च होता है परन्तु विभिन्न कच्चे माल भली प्रकार और सरलता से मिलकर एक हो जाते हैं। इधर सूखी विधि से भी विभिन्न प्रकार के कच्चे माल को मिलाकर एक कर देने की अच्छी प्रणालियाँ निकल आई हैं।

सीमेन्ट बनाने मे कई कच्चे पदार्थों की आवश्यकता होती है उनमे मुख्य चूने का पत्थर, चिकनी मिट्टी, कोयला और जिप्सम है। अनुमान लगाया गया है कि १ टन सीमेन्ट तैयार करने में १·६ टन चूने का पत्थर, ४% जिप्सम और ३८%कोयले की आवश्यकता होती है। इस अनुपात के कारण सीमेन्ट का उद्योग अधिकतर चूने के पत्थर वाले स्थानो के निकट स्थापित किया जाता है।

सीमेन्ट बनाने के लिए भट्टियो मे जलाने को उच्चकोटि का कोयला ही उपयुक्त समझा जाता है जिसमे कम से कम राख के अंश हो। अतः संयुक्त राज्य अमेरिका मे सीमेन्ट उद्योग सबसे अधिक पूर्वी पेन्सिलवेनिया में लेहाई नदी की घाटी मे केन्द्रित है।

सीमेन्ट बनाने के लिये जिप्सम की भी आवश्यकता पडती है।

उत्पादन क्षेत्र

सयुक्त राज्य अमेरिका मे सीमेन्ट बनाने का उद्योग बडा विकसित है। यहाँ सीमेन्ट के कारखाने लेहाई नदी की घाटी मे पूर्वी पेन्सिलवेनिया मे हैं, जहाँ से देश के उत्पादन का लगभग ७०% सीमेन्ट मिलता है। यहाँ उत्तम किस्म के चूने के पत्थर, शेल तथा कोयला मिलता है और न्यूयार्क तथा फिलाडेलफिया की माग के क्षेत्र भी निकट हैं। अत. यहाँ सीमेन्ट केलिफोर्निया, न्यूयार्क, मिशीगन, ओहियो आदि राज्यो मे भी बनाया जाता है।

सीमेन्ट के अन्य उत्पादक इंगलैंड और सयुक्त राज्य अमेरिका मिलकर विश्व के उत्पादन का लगभग ७०% सीमेन्ट देते हैं।

अध्याय ३०

अन्य उद्योग

(MISCELLANEOUS INDUSTRIES)

१. रासायनिक उद्योग (Chemical Industry)

"रासायनिक उद्योगो के अन्तर्गत वे उद्योग आते है जो अन्य उद्योग के लिये आधारभूत रासायनिक पदार्थ बनाते है। इसके अतिरिक्त वे उद्योग भी आते हैं जिनमें रासायनिक क्रियाओं द्वारा पदार्थ उत्पन्न किये जाते है।"[1] इस दृष्टि से इन उद्योगों के अन्तर्गत कई प्रकार की वस्तुएँ बनाना—जैसे रग और रोगन, कृत्रिम रबड़, कृत्रिम रेशे, प्लास्टिक, दवाइयाँ, कृत्रिम तेल आदि है।

भारी रासायनिक पदार्थ वे रासायनिक तत्व होते हैं जिनका प्रयोग मुख्यत: औद्योगिक और उसी से सम्बन्धित उद्योगो मे किया जाता है। साधारणत: इन पदार्थों का औद्योगिक उपयोग ही अधिक होता है। ये वस्त्र, कागज, साबुन, काँच, चमडा, रग वारनिश, प्लास्टिक, मोटर स्प्रिट इत्यादि उद्योगो मे कच्चे माल की तरह काम मे लाये जाते है। इम्पीरियल रासायनिक उद्योगो के चेयरमेन के अनुसार, "यह उद्योग सभी उद्योगो मे सबसे अधिक बहुपति वाला उद्योग है, क्योकि यह उद्योग रसायन-वैज्ञानिकों, उद्योगपतियो, इन्जीनियरो आदि की सहकारिता पर निर्भर करता है।" उद्योग का शान्ति व युद्ध दोनो ही काल मे बडा महत्व है। आधुनिक काल मे जिस देश मे इन उद्योगों का जितना अधिक विकास होता है वह देश उतना ही सभ्य और औद्योगिक माना जाता है।

रासायनिक उद्योग दो प्रकार के होते है —

(१) भारी रासायनिक पदार्थ (Heavy Chemicals)—इनके अन्तर्गत गन्धक का तेजाव, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, शोरे का तेजाव, विभिन्न प्रकार के सल्फेट, कास्टिक सोडा, सोडा एश, एमोनिया, ब्लीचिंग पाउडर, पोटेशियम नाइट्रेट, सुपरफोस-फेट, शोरा आदि का उत्पादन आता है।

(२) कीमती और हल्के रासायनिक पदार्थ (Fine Chemicals)—इनके अन्तर्गत फोटोग्राफी मे काम आने वाले रसायन, दवाइयाँ, रग और रोगन आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

उद्योग का विकास :

इस उद्योग का विकास सबसे अधिक संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी यूरोप व रूस मे हुआ है। सबसे पहले औद्योगिक क्रान्ति के समय जब यन्त्रो द्वारा इंगलैण्ड

1. "The Chemical industry includes establishments producing basic chemicals and establishments manufacturing products by predominantly chemical processes"— *U. S. A. Census of Manufacturing.*

बीकानेर जिलो से मँगवाया जाता है। (३) सीमेन्ट की माँग न केवल कलकत्ता के बन्दरगाह पर वरन् अनेक नई बहुमुखी योजनाओ के निकट होने के कारण अधिक है।

मध्य प्रदेश मे बनमोर, जबलपुर, मद्रास एवं आन्ध्र मे मधुकराई, विजयवाड़ा, दालमियाँपुरम, मगलागिरी, हैदराबाद, तिरुचिरापल्ली, पंजाब मे सूरजपुर, दालमियाँ-दाद्री; उडीसा मे राजगगपुर, राजस्थान मे सवाई माधोपुर और बूँदी; गुजरात मे ओखामडल, सिवालिया, पोरबन्दर, पश्चिमी बंगाल मे चौबीस परगना मे सीमेंट की अन्य फैक्ट्रियाँ है।

३. चीनी मिट्टी के बर्तनों का उद्योग (Potteries)

चिकनी मिट्टी से बर्तन बनाने का उद्योग बहुत प्राचीन है। सबसे पहले इसका जन्म लगभग १००० वर्ष से भी पूर्व चीन मे हुआ। वहाँ इसके बनाने मे केओलीन (Kaolin) नामक मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। यह उद्योग प्राचीन काल मे बैबीलोनिया, मिश्र और भारत भी मे किया जाता था। विश्वास किया जाता है कि चीनी मिट्टी के बर्तन तथा छोटी मूर्तियाँ पहले पहल जापान में ईसवी की प्रथम सदी अधिक बनी। ईसवी की १३ वीं सदी तक जापान मे चीनी बर्तनो की निर्माण की प्रगति अत्यन्त मन्द रही। इसी समय कातोसीरो नामक जापानी कुभकार चीनी मिट्टी बनाने की गुप्त विधि सीखने चीन गया। इसके बाद से ही वहाँ चीनी मिट्टी का सामान बनाने की अधिक प्रगति हुई है। १७ वी शताब्दी मे ब्रिटेन में चीनी, मिट्टी का सामान बनाने का उद्योग इतनी पूर्णता पर पहुँच गया जितना यूरोप मे और कही नही पहुँचा। ब्रिटेन मे स्टैफर्डशायर के कुम्हार सबसे अच्छे चिकनी मिट्टी के बर्तन बनाते थे।

वर्तमान युग मे इस उद्योग ने काफी उन्नति की है। यह उन्नति केवल निर्माण प्रणाली मे ही नही वरन् नई डिजायनो का माल तैयार करने मे भी हुई है। चीनी मिट्टी के उद्योग में यत्रो का प्रयोग अन्य उद्योगो की अपेक्षा कम होता है क्योकि—

(१) चीनी मिट्टी के बर्तनो आदि के उद्योग मे होने वाले पदार्थों मे सरलता से मशीनो का प्रयोग नही हो पाता।

(२) चीनी मिट्टी के कारखानो मे प्रायः विभिन्न प्रकार की वस्तुयें (ईटें, टाइल, तीव्र गर्मी सह सकने वाली ईटें, इन्सूलेटर आदि) बनाई जाती हैं जो अन्य उद्योगो मे नही होता।

(३) चीनी मिट्टी के उद्योग मे इजीनियर बहुत थोडे होते हैं।

उत्पादित वस्तुएँ

इस उद्योग मे ऐसी मिट्टियो का प्रयोग किया जाता है जिनमे लोहा नही होता। इस उद्योग की बनी चीजो का बहुत व्यापक प्रयोग होता है। एक ओर ये मकानों का निर्माण तथा भवन-सज्जा के काम आती हैं, दूसरी ओर धातुओ के निर्माण अथवा विद्युत उपयोग से इन्सूलेटरो के लिए, रासायनिक पदार्थ, स्वच्छता

(६) इस उद्योग में वैज्ञानिक और तांत्रिक शिक्षा प्राप्त किये हुए मजदूर ही काम कर सकते हैं।

(७) इस उद्योग के अधिकतर कच्चे माल प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होते है। जैसे वायु, जल, कोयला, नमक और लकड़ी आदि।

उद्योग का स्थापन

संयुक्त राज्य, ब्रिटेन और जर्मनी इस उद्योग मे मुख्य हैं। नार्वे और स्वीडेन में विद्युत रसायन का उत्पादन महत्वपूर्ण है।

संयुक्त राज्य

यह उद्योग इस देश मे द्वितीय महायुद्ध के कुछ ही दिनो पहले आरम्भ किया गया था। अब इसका उत्पादन ससार मे सबसे अधिक है। इस उद्योग मे ६·५ लाख व्यक्ति काम करते हैं। इसके छोटे-बडे १०,००० कारखाने हैं। इस उद्योग मे लगी हुई तीन मुख्य कम्पनियाँ है—ड्यू-पौंट (Du-Pont), यूनियन कारबाईड (Union Carbide) और एलाइड कैमिकल (Allied Chemical)। इनमे सबसे बड़ी कम्पनी पहली ही है जिसके १०० कारखाने है तथा जिनमे ८५,००० मजदूर काम करते है। इसकी पूंजी २ बिलियन डालर है। निर्यात व्यापार मे इसका जर्मनी के बाद ससार मे दूसरा स्थान है। इस उद्योग को यहाँ निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त है—

(१) अमेरिका मे वैज्ञानिक अन्वेषणों के लिये प्रचुर अनुसधान सामग्री मिलती है। यहाँ का धन अनुसधानशालाओ मे लगा हुआ है। इन्जीनियर भी सस्ते पारिश्रमिक पर मिल जाते है।

(२) विशेष प्रशिक्षण प्राप्त श्रमिक कुशल मात्रा मे मिल जाते हैं।

(३) यहाँ ससार का एक तिहाई गन्धक का तेजाब उत्पन्न किया जाता है जिसका व्यापक प्रयोग इस उद्योग मे किया जाता है। गन्धक के तेजाब के उत्पादन मे इस देश का स्थान ससार में प्रथम है।

(४) अमेरिका के अत्यन्त धनी देश होने से पूंजी की पर्याप्त घरेलू पूर्ति हो जाती है।

(५) अप्लेशियन के क्षेत्र से पर्याप्त कोयला और सस्ती जल-विद्युत प्राप्त हो जाती है।

(६) औद्योगिक विकास के क्षेत्रो मे काफी रासायनिक पदार्थों की माँग रहती है।

(७) जल, रेल, नहर और सड़कों की यातायात सुविधाये इस क्षेत्र को प्राप्त हैं।

रासायनिक पदार्थों का सबसे अधिक उत्पादन सयुक्त राज्य के उत्तरी पूर्वी भाग मिसीसिपी के पूर्व तथा ओहियो और पोटोमैक नदियो के उत्तरी भागों मे प्राप्त होता है। यह उद्योग यहाँ न्यूजर्सी, न्यूयार्क, इलीनियॉस, टैक्साज, पेन्सिलवेनिया, ओहियो और मिशीगन राज्यों मे केन्द्रित है। डिलावेयर नदी पर स्थित विलमिगटन नगर में गोला बारूद और विस्फोटक पदार्थ बनाये जाते हैं। टेनेसी घाटी और होपवेल वेली मे वायुमण्डल मे नाइट्रोजन और अन्य कई प्रकार के नाइट्रोजन बनाये जाते हैं। गंधक का तेजाब डकटाऊन और ऐनाकोंडा मे बनाया जाता है। संयुक्त राज्य मे १४१

जिकाऊ क्षेत्र मे स्थित हार्ज पठार पर कई प्रकार के रसायन और लवण पाये जाते हैं। मिट्टी भी पर्याप्त मिलती है। यहाँ ड्रैस्डन, मैसन, बर्लिन, सैक्सोनी इत्यादि केन्द्र बर्तन बनाने के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ यह उद्योग १८ वीं शताब्दी से ही किया जाता है।

संयुक्त राज्य

इस देश का उत्पादन थोड़ा है लेकिन माँग बहुत अधिक है। यहाँ केवल अच्छे प्रकार के बर्तन ही बनाये जाते हैं। ट्रेन्टन, ओहियो और ईस्ट लिवरपूल में इस उद्योग के मुख्य केन्द्र हैं। कुशल श्रमिकों के सहारे ही यहाँ यह उद्योग चलाया जा रहा है। जेनसविले और अन्य केन्द्रों मे इस उद्योग के लिए एपैलेशियन पर्वतों से कोयला और स्थानीय भागों से चिकनी मिट्टी प्राप्त हो जाती है। ७०% चिकनी मिट्टी जाजिया और २०% द० कैरोलिना तथा शेष पेन्सिलवेनिया से प्राप्त की जाती है। यहाँ लैनोक्स जाति के बर्तन बहुत बनाये जाते हैं।

इस उद्योग के अन्य क्षेत्र फ्रांस में लिमोजेज और पेरिस, हॉलैंड मे डेलफ्ट; इटली मे मेजोरिका, चीन मे हाकाऊ और जापान मे टोकियो हैं।

भारत में चीनी मिट्टी के बर्तनों का उद्योग

भारत मे चीनी मिट्टी के बर्तनों के लिए उपयुक्त मिट्टी राजमहल की पहाड़ियों मे तथा जबलपुर, रानीगज और कुमारधूबी में मिलती है। बर्तनों पर चमक लाने के लिए हड्डी की राख, चकमक पत्थर और फैल्सपार निकटवर्ती क्षेत्रों में ही मिल जाते हैं।

इस समय भारत में बर्तन बनाने वाले कुल ६० कारखाने हैं। इनमें मुख्य ये हैं:—

	कारखाने	केन्द्र	उत्पादन
१.	बगाल पॉटरीज लि०	कलकत्ता	क्रॉकरी और इंस्युलेटर।
२.	बर्न एण्ड कम्पनी,	रानीगज; जबलपुर	नालियो के पाइप, स्वच्छता उपकरण।
३.	मैसूर स्टोनवेअर पाइप्स एं. पॉटरीज लि०	बंगलौर	नालियो के पाइप।
४.	परशुराम पॉटरीज वर्क्स	बीकानेर, थानागढ, नजरबाद	क्रॉकरी, टाइलें स्वच्छता उपकरण, पत्थर का सामान
५.	ईस्ट इण्डिया डिस्टीलरी एन्ड सुगर फैक्ट्री लि०	रानीपेठ	तेजाब के अमृतबान।
६.	कुंडारा फैक्ट्री	तिरुवांकुर	क्रॉकरी
७.	हिन्दुस्तान पॉटरीज लि०	रूपनारायनपुर	चीनी के मोटे पाइप।
८.	रिलाइन्स फायर-ब्रिक्स एण्ड पॉटरीज लि०	बम्बई	मिट्टी के बर्तन, स्वच्छता उपकरण, तेजाब के बर्तन।
९.	स्टोनवेअर पाइप्स लि०	त्रिवेल्लोर (मद्रास)	चीनी के मोटे पाइप।

नार्वे का रासायनिक उद्योग

नार्वे का आधुनिक विद्युत रसायन उद्योग प्रचुर जल-विद्युत पर निर्भर करता है। नार्वे की आधी जल विद्युत नार्वे की दक्षिणी पूर्वी घाटी में उत्पन्न की जाती है। वायु से नाइट्रोजन प्राप्त करके उससे कई रासायनिक पदार्थ बनाये जाते हैं। चूना और कार्बन का आयात करके कैल्शियम कार्बाइड बनाया जाता है। कृत्रिम खाद, प्लास्टिक, कैल्शियम नाइट्रेट, नाइट्रिक तेजाब, अमोनिया सल्फेट, कास्टिक सोडा आदि रासायनिक पदार्थ प्रचुरता से बनाये जाते हैं। इसके मुख्य केन्द्र नोटोड्डेन और रियूकान हैं।

भारत में रासायनिक उद्योग

रसायन-उद्योगों के विस्तार को औद्योगिक विकास और समृद्धि का सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण कहा जा सकता है। मशीनी उत्पादन की व्यवस्था में उपभोग्य वस्तुओं के तैयार होते-होते कच्चे माल और अन्य समानों को कई बार बड़ा रूप-परिवर्तन करना पड़ता है। इस काम को सुविधा और उत्कृष्टता से करने के लिए तरह-तरह के रसायनों (अम्लों, क्षारों और अन्य वस्तुओं) की आवश्यकता पड़ती है। कागज, काच, साबुन कपडा, चीनी, चमडा, दवाइयां और लोहे और इस्पात के उद्योगों में हर जगह और पग-पग पर रसायनों की आवश्यकता पड़ती है और इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि रसायनों की उपलब्धि पर्याप्त मात्रा में न हो तो कोई भी देश आजकल अपनी औद्योगिक संभावनाओं से पूरा लाभ नहीं उठा सकता। रसायन-उद्योगों का विकास औद्योगिक समृद्धि की एक बड़ी आवश्यक शर्त है।

द्वितीय महायुद्ध के पूर्व हमारे भारी रासायनिक उद्योगों की स्थापना हुए अधिक दिन नहीं हुए थे। गंधक के तेजाब और उससे बनने वाली वस्तुएं—फिटकरी, नीलाथोथा, फैरस-सल्फेट इत्यादि इनी-गिनी वस्तुएँ ही—तैयार की जाती थी। किन्तु युद्धकाल में विदेशों से रासायनिक पदार्थों के न मिलने के कारण यहाँ सोडा-एश विद्युत प्रणाली से तैयार किया गया। कॉस्टिक सोडा, क्लोरीन, बाइक्रोमेट, कैलशियम क्लोराइड, सोडियम सल्फाइड और ग्लिसरीन आदि पहली बार बनाये जाने आरम्भ हुए। इसके पश्चात् तो रासायनिक पदार्थों के उत्पादन की वृद्धि होती गई। सुनियोजित प्रयत्नों और सरक्षण के लिए किए गए उपायों के फलस्वरूप पिछले कुछ वर्षों से देश में ब्रोमीन, कैलशियम कारबाइड, कारबन डाइसलफाइड, डी० डी० टी०, बेनजीन, हैक्सावलोराइड, टाइटेनियम डाइआक्साइड, अमोनियम क्लोराइड, विशेष लवण, रङ्ग, प्लास्टिक आदि बनाये जा रहे हैं।

२. सीमेंट उद्योग (Cement Industry)

पोर्टलैण्ड सीमेन्ट (Portland Cement) इमारतें बनाने का ऐसा मसाला है जिसका चलन हुए अभी अधिक दिन नहीं हुए। १८२४ में इगलैंड के लीड्स नामक स्थान के एक राज ने जिसका नाम जोसेफ एस्पडिन था, वर्तमान सीमेन्ट से मिलते-जुलते एक मसाले का आविष्कार किया। ककड़-पत्थर आदि को पीसकर बनाए जाने वाले साधारण ढंग के चूने और सीमेन्ट का प्रयोग तो सदियों से होता आया है।

पोर्टलैण्ड सीमेन्ट बनाने की विधि संक्षेप में इस प्रकार है: चूने के पत्थर (अथवा केल्शियम युक्त किसी अन्य पदार्थ जैसे खड़िया मिट्टी, संगमरमर अथवा

जाती हैं। इसका मुख्य केन्द्र डसलडर्फ है। (२) सैक्सोनी क्षेत्र में कोयला अधिक मिलने के कारण जीना और ड्रेसडेन इस उद्योग के मुख्य केन्द्र है। पहले नगर में चश्मों के कांच और दूसरे में वैज्ञानिक यन्त्र अधिक बनाये जाते हैं। (३) साइलेशिया क्षेत्र में ब्रेसलो में कांच बनाया जाता है।

जर्मनी के कांच उद्योग का महत्व वैज्ञानिक यन्त्रो में प्रयुक्त होने वाले कांच के लिये है। यहाँ अधिकतर दूरबीनें, केमरा, खुर्दबीनें तथा चश्मो के कांच बनाये जाते हैं।

ग्रेट ब्रिटेन में यह उद्योग कोयला क्षेत्रों में न्यूकेसिल, बर्मिघम व ब्रिस्टल के निकट केन्द्रित है क्योकि इस क्षेत्र में बाजार की निकटता, सस्ते कुशल मजदूरों की उपलब्धता और ईंधन के लिए गैस मिलने की सुविधायें हैं। यहाँ के मुख्य केन्द्र लदन, न्यूकेसिल, सैंट हैलेन्स, बर्मिघम, डड्ले, राथरहेम और साउथ शील्डस हैं। यहाँ अधिकतर बोतलें और कच्चे किस्म का काँच बनाया जाता है।

फ्रांस में कोयले की खानों के निकट चादर ग्लास और खिडकियो के काम के कांच अधिक बनाये जाते है। पैरिस में चश्मे के कांच व बकार्ट में रवेदार काँच के बर्तन बनाये जाते हैं।

बेल्जियम में यह उद्योग लीच और चार्लेराय के कोल क्षेत्रों तथा सोडे की फैक्ट्रियो के निकट है। यहाँ बालू मिट्टी कम्पाइन क्षेत्रो से मिल जाती हैं तथा रासायनिक पदार्थ भी निकट ही प्राप्त हो जाते है। यहाँ अधिकतर शीशे की चादरे और दर्पण बनाये जाते हैं।

रूस मे काँच का उद्योग यूक्रेन, मास्को, गोर्की, लेनिनग्राड और यूराल के औद्योगिक क्षेत्रो मे स्थित है। सोवियत रूस मे टोमस्क, इरकूटस्क और उलनडडे मे भी काँच बनाया जाता है।

जैकोस्लोवाकिया मे यह उद्योग बोहीमिया क्षेत्र मे स्थित है जहाँ निकट ही बालू, पोटास और कोयला मिल जाता है। यहाँ के मुख्य केन्द्र प्राग, जाबलौंज, स्टीन, शोनाओ और एगर हैं। यहाँ अधिकतर रंगीन काँच बनाया जाता है।

भारत में कांच का उद्योग—भारत मे काँच का सामान बनाने का उद्योग दो भागों मे विभक्त है :—

(१) प्रथम प्रकार के कारखाने वे हैं जो कुटीर उद्योग के रूप मे काम करते हैं, और (२) दूसरे प्रकार के कारखाने वे हैं जो आधुनिक फैक्टरियों के रूप मे काम करते हैं।

(१) प्रथम प्रकार के कुटीर धंधे के रूप मे काँच के सामान बनाने के उद्योग का प्रमुख केन्द्र फिरोजाबाद और दक्षिण मे बेलगाँव है। फिरोजाबाद मे १०० से भी ऊपर छोटी-छोटी फैक्टरियाँ हैं जो काँच की रेशमी तथा साधारण चूडियाँ बनाती हैं। उत्तर प्रदेश में काँच का कुटीर उद्योग एटा, फतहपुर, शिकोहाबाद आदि स्थानो मे भी चलाया जाता है। फिरोजाबाद में चूड़ियाँ बनाने के धंधे से ५०,००० लोगों को व्यवसाय मिलता है तथा यहाँ वार्षिक उत्पादन १६,००० टन है जिसका मूल्य ४ करोड रुपये हैं।

नीचे की तालिका मे सीमेन्ट का उत्पादन वताया गया है:—

सीमेन्ट का उत्पादन (००० मैट्रिक टनो में)

देश	१६५१	१६५६	१६६१
सं० राज्य	५४,८२८	५६,०४०	५४,१२१
आस्ट्रिया	१,४७५	२,४१६	३,०८४
बेल्जियम	४,३६५	४,४३६	४,७५२
डेनमार्क	६८५	१,३६०	—
फिनलैंड	८२६	१,१७०	—
फ्रास	८,३५५	१४,१८४	१५,६८४
पश्चिमी जर्मनी	११,७४४	२२,८५२	२६,६४०
इटली	५,७६६	१४,०७४	१७,५६८
लक्सम बर्ग	१३२	१६२	—
नीदरलैंड्स	७०२	१,६००	—
नार्वे	७०२	१,१०६	—
स्पेन	२,३२३	५,२१८	—
स्वीडन	२,०३५	२,८५३	—
स्विट्जरलैंड	१,३२०	२६८२	—
रूस	१२,०७०	३८,७८१	५०,८८०
पूर्वी जर्मनी	१,६५६	४,२०५	५,२८०
भारत	३,२४७	६,६३६	८,१००

सीमेन्ट का प्रति व्यक्ति उपभोग संयुक्त राज्य मे ४१६ पौड, रूस में ३३२ पौड; स्वीडेन में ७४० पौंड; इगलैंड में ४११ पौंड, डेनमार्क में ४६० पौंड; जापान मे ६० पौंड, और भारत मे केवल ३२ पौंड है।

भारत में सीमेन्ट-उद्योग

भारत मे १६६१ मे ३४ सीमेण्ट की फैक्ट्रियाँ थी जिनकी उत्पादन क्षमता १०० लाख टन थी और वास्तविक उत्पादन ८२ लाख टन था। तृतीय योजना के अंत मे उत्पादन क्षमता १५२ लाख टन और वास्तविक उत्पादन १३२ लाख टन का निर्धारित किया गया है।

भारत मे सीमेंट उद्योग का स्थापन मुख्यत बिहार में हुआ है। यहाँ इसके केन्द्र दालमियानगर, जाप्ला, चैवासा, सिंद्री, खलारी और कल्याणपुर में हैं। बिहार मे इसकी स्थापना के मुख्य कारण ये हैं :

(१) यहाँ के कारखानो में चूने का पत्थर रोहतास की पहाड़ियों से तथा कोयला झरिया और रानीगंज से प्राप्त किया जाता है। (२) जिप्सम जोधपुर एवं

हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, बगाल और विहार के अनेक स्थानों की मिट्टी में शोरा भी मिलता है जिससे काँच के लिए क्षार प्राप्त होता है। यही वस्तुएँ उत्तर प्रदेश के कारखानो मे प्रयुक्त की जाती हैं।

पश्चिमी बंगाल मे हावडा मे काँच के कारखाने हैं। इनके लिए राजमहल पहाड़ मे **मङ्गलघाट और पाथरघाट** नामक स्थानो पर गोंडवाना काल का उत्तम श्रेणी का सफेद वालू का पत्थर पीस कर काँच के लिए उपयुक्त वालू प्राप्त किया जाता है। कोयले की दृष्टि से बगाल के काँच के कारखानों की स्थिति बहुत ही अनुकूल है, परन्तु अधिकाश बालू उन्हें उत्तर प्रदेश से मँगवानी पड़ती है। बगाल के काँच के कारखानो को एक लाभ यह है कि बगाल के उन औद्योगिक केन्द्रों के पास ही स्थित हैं, जहाँ रासायनिक पदार्थ तैयार किये जाते है। यहाँ अधिकतर लैंप, लालटेनो के हिस्से, बोतलें, शीशे के ट्यूब, फ्लास्क, ट्यूब ग्लास, शीशे की प्लेटें आदि बनाई जाती हैं।

५. कागज उद्योग (Paper Industry)

उद्योग का विकास

यदि यह कहा जाय कि आधुनिक सभ्यता का मूलाधार कागज ही है तो कोई अत्युक्ति नही होगी क्योकि जिस देश मे जितने अधिक कागज का उपभोग होता है वह उतना ही सभ्य और उन्नतिशील समझा जाता है। सभ्यता की प्रगति के साथ-साथ कागज की माँग भी निरतर बढ़ रही है और इन बढती हुई माँग के साथ-साथ कागज का उत्पादन भी बढता जा रहा है। संसार के औद्योगिक व्यापार मे इसका स्थान ऊँचा है। कागज का आविष्कार होने के पूर्व वेबीलोन, जिनेवा और मैसेपोर्टमिया के निवासी अपने विचारो को मिट्टी की टिकियो पर लिखकर उन्हे पकाकर रख देते थे। मिश्री लोग पैपीरस (Papyrus) नामक पतला पदार्थ लिखने के प्रयोग मे लाते थे। कागज बनाने का आविष्कार सबसे पहले सन् १०५ ई० मे एक चीनी साईलून (Tsai Lun) द्वारा किया गया। उसने चिथड़ो द्वारा कागज बनाने की क्रिया ज्ञात की। उसी समय से इस कला का विस्तार मध्य एशिया होता हुआ अरब और वहाँ से सन् ६०० ई० मे यूरोप मे हुआ। स्पेन और इटली मे कागज के कारखानो का स्थापन सन् ११५० में, फ्रास मे सन् ११८६ मे, जर्मनी मे सन् १२६१ मे और इगलैंड मे १३२० मे हुआ। १६वी शताब्दी तक कागज बनाने के लिए चिथडो का ही प्रयोग किया जाता रहा। आज भी लिनेन और सूती कपडे के चिथडो द्वारा मजबूत और पुस्तक छापने का कागज बनाया जाता है।

कागज बनाने के लिए लकडी की लुब्दी का प्रयोग सबसे पहले जर्मनी मे सन् १८४० मे किया गया, इसके बाद १८८० में संयुक्त राज्य अमेरिका मे। अब तो सभी देशो मे कागज बनाने मे लकडी की लुब्दी ही काम मे लाई जाती है। १६ वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इंग्लैंड मे एस्पार्टो घास से कागज बनाया जाने लगा। मजबूत कागज के बोरे अब जूट तथा मनीला हैम्प के रेशो से ही बनाये जाते है। बैंक के नोट-पेपर बनाने मे 'बाओबाब' (Baobab) वृक्ष की छाल काम मे ली जाती है तथा सस्ते पैकिंग कागज बनाने मे घास।

अस्तु आधुनिक काल मे कागज उद्योग मे काम आने वाला कच्चा माल, लकड़ी की लुब्दी (pulp) ही है। यह लुब्दी मुख्यतः स्प्रूस, नीली चीड, हैमलॉक,

उपकरण (Sanitary wares) पानी और गन्दगी निकालने की नालियों के निर्माण में काम आती है। चीनी मिट्टी मे ही खपरैलें (Tiles), कप-तश्तरियाँ (Crokery), तीव्र ताप सहने वाली ईटें, और चमकदार टाइलें भी बनाई जाती हैं।

कच्चा माल

चीनी मिट्टी के बर्तनों के लिये चिकनी मिट्टी (China Clay) या कैओलीन मिट्टी की ही अधिक आवश्यकता होती है। इस मिट्टी को सरलता से ३०००° फा० तक गरम किया जा सकता है। यह उद्योग अधिकतर मिट्टी के क्षेत्र के पास ही केन्द्रित होता है।

भट्टियों मे जलाने के लिए काफी मात्रा मे कोयले की भी आवश्यकता पडती है। रासायनिक पदार्थ—फैलसपार, क्वार्टस आदि की भी आवश्यकता बर्तनो पर चमक और मजबूती लाने के लिये होती है।

इस उद्योग के बने माल काफी भारी होते हैं अत: उन्हे परिवहन के लिये सस्ते और सुरक्षित साधनो की आवश्यकता होती है। इसका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार काफी बढा-चढ़ा होता है क्योकि कांच के बर्तनों से यह अधिक सस्ते और मजबूत होते है।

उद्योग के क्षेत्र

यह उद्योग मुख्यत: ब्रिटेन, सं० राज्य अमेरिका, चीन, जापान, जर्मनी, फ्रास, चैकोस्लोवाकिया, बेल्जियम और भारत मे किया जाता है।

ब्रिटेन

ब्रिटेन मे इस उद्योग का सबसे बडा क्षेत्र उत्तरी स्टेफर्डशायर है जहाँ सारे देश के चीनी मिट्टी बर्तन उद्योग के ७२ प्रतिशत मजदूर काम करते है। इसके अतिरिक्त डरबी और लदन भी मुख्य क्षेत्र है।

उत्तरी स्टेफर्डशायर मे कोयला क्षेत्र मे यह उद्योग इतने व्यापक रूप से फैला है कि इस क्षेत्र को ही 'Potteris' कहने लगे है। इस क्षेत्र मे खेती की सुविधायें प्राप्त न होने से लोगो का ध्यान इस उद्योग की ओर आकर्षित हुआ था। स्थानीय मिट्टी इस उद्योग के लिए उपयुक्त है। डरबीशायर क्षेत्र से मिट्टी के बर्तनो पर पालिश करने के लिये काफी सीसा प्राप्त हो जाता है। पूर्वारम्भ की सभी सुविधायें इस उद्योग को इस क्षेत्र मे प्राप्त हैं। इस क्षेत्र मे वेजवुड परिवार (Wedgwood Family) सारे संसार मे इस उद्योग के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ कुशल श्रमिकों की अधिकता है। डारसेट और डेवोन से विशेष प्रकार की मिट्टी लाई जाती है। कार्नवल से चीनी मिट्टी (China Clay) मगाई जाती है। ट्रेन्ट और मरसी नहर के द्वारा सामान का सस्ता यातायात होता है। इस नहर द्वारा कार्नवल से इसका सीधा सम्बन्ध है। इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र स्टाक, बर्सलेन, हैनली, टन्सटाल, लोङ्गटन और फेन्टन है। चेशायर से रासायनिक पदार्थ मगाये जाते हैं। इन सब केन्द्रों मे कुल मिलाकर ३०० कारखाने हैं। १०५ कारखाने स्टोक मे हैं। सेनीटरी सामान किलमारनोक और बारहेड मे बनाये जाते हैं।

जर्मनी

संसार में चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने मे इस देश का दूसरा स्थान है।

प० जर्मन	१६२२	२०७२
इटली	५६६	७६५
नीदरलैण्ड	३१८	४६२
स्वीडेन	८६४	१०५७
स्विटजरलैण्ड	१६०	२३३
इंगलैण्ड	१७६५	१६१४
भारत	१६०	३५०
संयुक्त राज्य	—	१२,३८०
कनाडा	—	८०६
रूस	—	१,६३३ (१६५७)

विश्व मे कागज और गत्ते का प्रति व्यक्ति पीछे उपभोग (किलोग्राम में)

देश	१६५०	१६५६
स्वीडेन	६४	१०६
बेल्जियम-लक्समबर्ग	४१	५४
नीदरलैण्ड	२६	७७
फ्रांस	२६	५२
जर्मन फेडरल रिपब्लिक	३२	७०
इटली	११	२७
नार्वे	४६	७६
डेन्मार्क	५६	८२
स्विट्जरलैंड	४८	८२
इंगलैण्ड	५६	६०
फिनलैंड	४३	७३
रूस	६	१५
जर्मनी प्रजातन्त्र	२५	१५
भारत	१४·०२	२६·२०

कनाडा का कागज उद्योग

कनाडा यान्त्रिक लुब्दी से कागज बनाने में संसार भर मे प्रथम है। कनाडा मे शीतोष्ण कटिबन्धीय नरम लकड़ी वाले वनों का महान विस्तार है जिससे लुब्दी की प्राप्ति असीम है। उत्तरी यूरोप से कागज मिलना बन्द होने पर इस उद्योग को यहाँ भारी प्रोत्साहन मिला है। फौजी खेमो में प्रयोग होने के लिये, दीवार के बोर्ड बनाने के ठेले से उद्योग को बहुत लाभ पहुँचा है। क्यूबेक और ओन्टेरियो इस उद्योग

४. कांच का उद्योग (Glass Industry)

कांच मुख्यत: बालू मिट्टी से बनाया जाता है किन्तु इसके निर्माण मे सोडा एश, चूना, टूटे हुए कॉच के टुकडे, सोडियम सल्फेट, पोटेशियम कारबोनेट, शोरा, सुहागा, बोरिक एसिड, सीसा, सुरमा, सखिया और बेरियम मिलाये जाते है। इनके मिश्रण से उत्पादित कांच मजबूत, टिकाऊ, अच्छी प्रकार पिघलने वाला होता है। इन सब पदार्थों को बालू मिट्टी के साथ मिलाकर बहुत ऊँचे तापक्रम (२५००° से ३०००° फा०) पर गर्म किया जाता है। यह पदार्थ पिघल कर चिपचिपा और बेरवेदार हो जाता है। ठंडा होने पर इसे किसी भी शक्ल में बनाया जा सकता है। काँच बनाने के लिये ऐसे बालू की आवश्यकता होती है जिसमे सिलिका के कण अधिक किन्तु लोहे के कण कम हों।

इस उद्योग के स्थानीयकरण पर कच्चे माल का विशेष प्रभाव नही पड़ता क्योंकि कच्चे माल का मूल्य उत्पादन व्यय मे १० से १५% तक ही होता है, अतएव यह उद्योग बाजारों के निकट ही अधिक पनपता है क्योंकि इसके कच्चे माल भारी होते हैं तथा तैयार माल हल्के होने के साथ-साथ दूर भेजने मे टूटने की जोखिम रहती है और किराया भी अधिक लगता है। अतएव यथा सम्भव काँच के कारखाने माँग के निकट वाले क्षेत्रो मे ही अधिक स्थापित किये जाते हैं। प्राकृतिक गैस या कोयले की शक्ति इसके लिये आवश्यक है। यही कारण है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में काँच के उद्योग का स्थानीयकरण पश्चिमी पेंसिलवेनिया, उ० प० वर्जीनिया, पूर्वी ओहियो, पश्चिमी न्यूयार्क और मध्य इण्डियाना राज्यो मे हुआ है।

आधुनिक समय मे कई प्रकार का काँच बनाया जाता है जैसे—पारदर्शी, अपारदर्शी, शीघ्र टूटने वाला, न टूटने वाला और लोहे की तरह मजबूत। काँच के रेशो से सूती कपडे भी बनाये जाते हैं। काँच की ईंटें विविध प्रयोगों में ली जाती हैं। काँच की चादरें, कांच के बोतल, बर्तन आदि भी बनाये जाते हैं।

उत्पादन क्षेत्र

विश्व का सबसे अधिक कांच सयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, बेल्जियम, फ्रास, जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, रूस और जापान मे बनाया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे इस उद्योग का विकास १७७६ मे हुआ जबकि न्यूजर्सी मे सबसे पहला मिल ग्लासबोरो मे खोला गया क्योंकि यहाँ बालू मिट्टी की अधिकता थी और जलाने के लिये लकड़ियाँ उपलब्ध थी। किन्तु अब कोयले का उपयोग अधिक होने से यह उद्योग अपेलेशियन श्रेणी के सहारे अधिक फैला हुआ है। संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे उत्तम प्रकार का काँच तैयार करता है। यहाँ विज्ञान के कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार की काँच की वस्तुएँ—चश्मे का काँच, चादर काँच आदि बहुत बनाई जाती हैं। उद्योग के मुख्य केन्द्र शिकागो, कोर्नींन, रोचेस्टर, पिट्सबर्ग, मोलविले, न्यूजर्सी, हंटिंगटन, ग्लासबोरो और बिजटन है।

यूरोप मे कांच का उद्योग **पश्चिमी जर्मनी** मे एडेनहीन के निकट, ओनर कोवन, स्टेगर्ट, लिपजिग, जीना, डसलडर्फ और वीटरफील्ड है। यहां ३ क्षेत्रों में कांच बनाया जाता है—(१) रूर क्षेत्र मे कोयले की प्रचुरता, सस्ते जल यातायात, कुशल श्रमिक और वैज्ञानिक अनुभव के कारण संसार मे सबसे अधिक शीशियां तैयार की

यूरोप के अन्य देशों में कागज का उद्योग

यूरोप के अन्य कागज उत्पादन करने वाले देशों मे नार्वे, स्वीडेन, फिनलैंड, जर्मनी, आस्ट्रिया और जैकोस्लोवाकिया मुख्य हैं। इन सभी देशों मे पर्याप्त जल विद्युत पाई जाती है और लुब्दी की उत्पत्ति असीम है। अधिकतर देश लुब्दी का निर्यात भी करते है। नार्वे संसार मे सबसे अधिक अखबारी कागज का उत्पादन करता है। नार्वे मे कागज उद्योग के मुख्य क्षेत्र ओसलो फियोर्ड और स्कागेराक तट प्रदेश हैं। स्टावेञ्जर और हागेसुण्ड इस उद्योग के प्रसिद्ध केन्द्र हैं। रूस मे यूराल और साइवेरियन क्षेत्रो मे काफी कागज बनाया जाता है।

लेटिन अमेरिका में कागज उद्योग

यहाँ यह उद्योग मुख्यत ब्राजील, अर्जेन्टाइना, मैक्सिको और चिली मे किया जाता है। ये चारो देश मिलकर इस प्रदेश का ८६% कागज बनाते हैं। ब्राजील कागज की माँग का ८०%, चिली और मैक्सिको ७०% तथा अर्जेन्टाइना ५०% अपने ही उत्पादन से पूरा करते हैं। इन सभी देशों मे अखबारी कागज का आयात किया जाता है। ब्राजील तथा चिली मे शीतोष्ण वन अधिक पाये जाने से यहाँ काफी लुब्दी बनाई जाती है। फिर भी ब्राजील और चिली मे ८०% रासायनिक लुब्दी आयात की जाती है। यहाँ गन्ने के छूतो से भी कागज बनाया जाता है।

चीन व जापान में कागज उद्योग

चीन मे यह उद्योग बहुत पुराना है। यहाँ हल्का कागज चावल के भूसे से और उत्तम कागज ((Rice-paper) फारमोसा मे पैदा होने वाले एक पौधे से बनाया जाता है।

जापान मे कागज का उद्योग बडा विकसित है। यहाँ कागज के मजबूत बोरे (Sea weed) और उडो (Udo) नामक झाडी से बनाये जाते हैं। इनका उपयोग धान भरने, जल-प्रतिरोधक तिरपाल बनाने, घरो की दिवालें आदि बनाने मे किया जाता है। जापानी लोग कागज की सुन्दर छतरिया, तौलिए और रूमाल भी बनाते है। जापान मे मुख्यत दो प्रकार का कागज बनाया जाता है: (१) सख्त (Tough) तथा देशी कागज जिसका उपयोग लिखने के लिए किया जाता है; (२) नरम या विदेशी-तुल्य कागज। पहले प्रकार के कागज का वार्षिक उत्पादन लगभग १ लाख टन होता है। ये घरेलू उद्योग के रूप मे बनाया जाता है। द्वितीय प्रकार के कागज का उत्पादन १० लाख टन होता है। यह मुख्यतः आधुनिक ढंग के कारखानो मे यन्त्रो द्वारा बनाया जाता है। यहाँ कागज के लिए लुब्दी होकेडो द्वीप के कोणधारी वनो से प्राप्त की जाती है। कुछ लुब्दी विदेशों से भी आयात की जाती है।

भारत में कागज उद्योग

भारत मे कागज बनाने के २८ मिल हैं (१६६१) जिनकी वार्षिक उत्पादन क्षमता ४·१ लाख टन है। इनमे से बगाल मे ५, बिहार मे १, उडीसा मे २; गुजरात मे १; मैसूर मे ३; केरल और मध्य प्रदेश मे प्रत्येक मे १-१ मिल; और महाराष्ट्र मे ७; उत्तर प्रदेश, तथा आध्र मे प्रत्येक मे २-२ मिलें हैं।

(२) भारत मे काँच बनाने की आधुनिक फैक्टरियाँ विशेष कर उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बंगाल, पजाब, मध्य प्रदेश, बिहार, मद्रास और उडीसा मे केन्द्रित हैं। इनका प्रादेशिक वितरण इस प्रकार है.—

उत्तर प्रदेश	२८		
प० बगाल	२४	मध्य प्रदेश	१
महाराष्ट्र	२२	मद्रास	६
बिहार	४	दिल्ली	२
पजाब	२	राजस्थान	१
मैसूर	१	योग	९७

१३१ फैक्टरियो मे से ९७ कार्यशील हैं। इनकी उत्पादन क्षमता ३·८३ लाख टन की है।

इन कारखानो मे मुख्यतः चार प्रकार की वस्तुएँ बनाई जाती है.—

१—चूडियो के लिए शीशे की बट्टी।

२—मोती, बोतलें, चिमनियां, शीशियाँ, बरतन।

३—काँच की चद्दरें और दरवाजे, खिड़कियों में लगाने के काँच।

४—चीर-फाड़ करने व प्रयोगशालाओं मे प्रयुक्त होने वाली वस्तुएँ।

यह उद्योग अधिकतर गगा की ऊपरी घाटी मे ही केन्द्रित है। इसके निम्न कारण है.—

(१) काँच निर्माण के योग्य सबसे अच्छा बालू उत्तर प्रदेश मे विध्याचल पर्वत मे लोधरा और बोरगढ़ नामक स्थानो पर बालू के परिवर्तित जलज पत्थर को पीस कर प्राप्त किया जाता है। इन स्थानो के अतिरिक्त बरार, पूना, जबलपुर, इलाहाबाद इत्यादि जिलो मे तथा जयपुर, बीकानेर, बूदी, बडौदा आदि स्थानो में भी उत्तम श्रेणी की बालू अथवा बालू के पत्थर पाये जाते हैं जिनका प्रयोग इन कारखानो में किया जाता है।

(२) उत्तर प्रदेश के कारखानो को सबसे बडा लाभ कुशल मजदूरो का पर्याप्त मात्रा मे मिल जाना है। आगरा के निकट कुछ जातियाँ (शीशागर) मिलती हैं जो पीढियो से काँच का सामान तैयार करती आ रही है। ये कुशल मजदूर आधुनिक ढंग के कांच बनाने के काम मे भी बहुत जल्दी सिद्धहस्त हो जाते हैं।

(३) इस भाग मे रेलो का जाल-सा बिछा है जिससे सब सामान इकट्ठा करने मे सुविधा रहती है और तैयार माल के लिए जनसख्या की अधिकता के कारण बाजार भी विस्तृत है।

(४) काँच बनाने मे प्रयोगित दूसरे मुख्य पदार्थ सोडा-मिट्टी, सोडा सल्फेट और शोरा है। भारत के अनेक तेजाब के कारखानों में सोडा-सल्फेट उपप्राप्ति के रूप मे रह जाता है। राजस्थान की नमकीन झीलो से भी सोडा के कार्बोनेट और सल्फेट दोनो मिलते हैं। मध्य प्रदेश के बुल्ढाना जिले की कोलनार झील से सोडा कार्बोनेट प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त भारत के कई शुष्क भागों मे कहीं-कहीं भूमि पर रेह नामक पदार्थ एकत्रित हो जाता है। यह भी काँच बनाने के प्रयोग में लिया जाता

६. नीचे लिखे देशों में किन कारणों से लोहे और इस्पात का धन्धा किया किया जाता है:—
संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और इङ्गलैंड।

७. संयुक्त राज्य अमेरिका में लोहे और इस्पात का धन्धा किन क्षेत्रों में और क्यों किया जाता है?

८. किन कारणों से इङ्गलैंड में सूती वस्त्र व्यवसाय और लोहे और इस्पात का धन्धा किया जाता है?

९. नीचे लिखे के कारण बताओ —

(i) फ्रान्स में रेशमी वस्त्र और शराब बनाने का धन्धा किया जाता है।

(ii) नार्वे और स्वीडेन में लकड़ी चीरने का धन्धा किया जाता है।

(iii) डंडी में जूट से वस्त्र बनाये जाते हैं।

(iv) इटली में रेशम का धन्धा किया जाता है।

१०. वाले देश में लोहे और इस्पात के उद्योग के विकास के कारणों पर प्रकाश डालिए।

११. इंगलैंड के औद्योगिक विकास के लिए कौन कौन से भौगोलिक और आर्थिक कारण सहायक हुए हैं?

१२. 'औद्योगिक विकास प्राय कोयले की प्राप्ति स्थानों से ही सम्बन्धित है।' इस कथन की पुष्टि इंगलैंड के उदाहरण द्वारा कीजिए।

१३. दूसरे देशों की तुलना में भारत में जहाज बनाने के उद्योग का कहा तक विकास हुआ है? इसके कौन से कारण सहायक हुए है, तथा इस उद्योग की भविष्य की सम्भावनाओं को भी बताइये।

१४. उपर्युक्त मानचित्रों द्वारा बताइये कि संयुक्त राज्य में किन कारणों से निम्न उद्योगों की स्थापना हुई है :—

(१) लोहे और इस्पात का उद्योग।

(२) सूती वस्त्र उद्योग

१५. ''बड़े उद्योग धन्धों के *स्थान में मिट्टी के तेल की अपेक्षा कोयले का अधिक प्रभाव पड़ा है,* किन्तु जल-विद्युत शक्ति ने उद्योग के विकेन्द्रीकरण में सहायता दी है।'' इस कथन की पुष्टि इंगलैंड, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका के उदाहरण से करिये।

१६. कनाडा और भारत के कागज उद्योग की तुलना करिये। यह भी बताइए कि भारत में इस उद्योग का भविष्य कैसा है? नये कारखाने किन स्थानों मे खोले जा सकते है? कारण सहित बताइये।

१७. इंगलैंड और न्यू इंगलैंड स्टेट्स में सूती वस्त्र के उद्योग के स्थानीयकरण पर प्रकाश डालिये तथा आधुनिक समय में इस उद्योग मे क्षेत्रों का स्थानान्तरण हुआ है उसके कारण बताइये।

१८. विश्व में धातु उद्योगों के स्थान और विकास के महत्व को बताइए।

१९. विश्व के ऊनी वस्त्र उद्योग का विस्तारपूर्वक विवेचन करिये तथा यह भी बताइए कि क्या पिछली शताब्दी से इस उद्योग के केन्द्रों का स्थानान्तरण हुआ है?

२०. विश्व के प्रमुख औद्योगिक राज्यों में रासायनिक उद्योगों का महत्व बताइये। इसके विकास और स्थापन के कारण बताइये।

२१. किन कारणों से कृत्रिम रेशे वाले पदार्थ प्राकृतिक वस्त्र उत्पादक रेशों से स्पर्धा करते है? इन कृत्रिम रेशों के विकास का विश्व के पुराने रेशेदार पौधों पर क्या प्रभाव पड़ा है?

फर आदि वृक्षों की लकडी से बनाई जाती है। इनको लकड़ी को पीसकर चूरा बनाकर लुब्दी बनाई जाती है। इसे 'यांत्रिक लुब्दी' (Mechanical pulp) कहते हैं। इससे घटिया कागज बनाया जाता है।

पोपलर, एस्पेन तथा अन्य चौडी पत्ती वाले वृक्षों की लकडी से रासायनिक विधि द्वारा लुब्दी बनाई जाती है। इसे 'रासायनिक लुब्दी' (Chemical pulp) कहते हैं। इसका उपयोग मुख्यत. उत्तम किस्म के कागज बनाने मे किया जाता है।

इस उद्योग के स्थानीयकरण के लिए निम्न बातो की आवश्यकता होती है:—

(१) कागज का कच्चा माल (लुब्दी) एक भारी पदार्थ है और दूर तक भेजने मे नष्ट हो जाता है। अत. कागज उद्योग के केन्द्र के समीप ही लुब्दी की प्रचुर स्थानीय पूर्ति होनी चाहिये।

(२) नरम लकड़ी वाले वनों के पास यह उद्योग भली-भाँति चालू किया जा सकता है ताकि अच्छी लुब्दी पास ही प्राप्त हो सके। इसलिये अधिकतर कागज के कारखाने शीत और शीतोष्ण कटिबन्धीय वनों के समीप स्थित है। स्प्रूस, हेमलाक, पाईन और फर की लकडी से अच्छी लुब्दी बनाई जाती है। वन काफी विस्तृत होने चाहिए ताकि वर्षों तक लकड़ी प्राप्त हो सके। इसी दशा मे कारखाना स्थायी आधार पर चालू रह सकता है।

(३) मिलो को प्रचुर मात्रा मे स्वच्छ पानी मिलना चाहिए ताकि लकड़ी के रेशे और लुब्दी भली भाँति साफ की जा सके। पानी द्वारा लुब्दी मशीनो मे पहुँचाई जाती है इसलिये पानी की प्राप्ति एक आवश्यक तत्व है।

(४) अनेक रासायनिक पदार्थों की भी इस उद्योग में आवश्यकता होती है, इसलिए इनका समीप होना हितकर है। रासायनिक पदार्थ—कास्टिक सोडा, सोडा ऐश, क्लोरीन, हड्डी का चूरा, चीनी मिट्टी आदि हैं।

(६) वैसे तो कागज हल्का पदार्थ होने से दूर तक भेजा जा सकता है फिर भी खपत के क्षेत्र की निकटता एक उत्साहवर्धक तत्व है।

(७) इस उद्योग के लिये कुशल मजदूरों की प्राप्ति होनी चाहिये।

विश्व वितरण

ससार में कागज कुछ ही देशो मे बडे पैमाने पर बनाया जाता है। कनाडा, सयुक्त राज्य, नार्वे, स्वीडन, ब्रिटेन, फ्रास, जर्मनी और रूस इसके मुख्य उत्पादक देश हैं। विश्व मे उत्पादन का ८५% कागज इन्ही देशो से प्राप्त होता है।

विश्व में कागज का उत्पादन

(००० मैट्रिक टनों में)

देश	१९५५	१९५९
बेल्जियम	२१६	२४१
डेनमार्क	११४	—
फिनलैण्ड	४७८	६३५
फ्रांस	१०२९	१४६०

है। झोंपड़ियाँ, मकान, गाँव, और नगर एक दूसरे के बाद जागरूक होते हैं। कच्चा मार्ग सड़क बन जाती है, जो पहले कच्ची और बाद में पक्की हो जाती है। विश्व को एक सूत्र में बाँधने के लिए व्यापार और वाणिज्य की उन्नति हुई। वस्तुतः मानव की प्रगति यातायात के परिवर्तन के साथ आनुक्रमिक होती है। यही नहीं इनके द्वारा केवल सामान एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाया जाता है, प्रत्युत देश की सांस्कृतिक, सामाजिक और नैतिक वृद्धि भी प्रत्यक्षतः उसी पर निर्भर करती है। यातायात से ज्ञान बढ़ता है पक्षपात का नाश होता है और अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है।

वस्तुओं की माँग और प्राप्ति को स्थिर रखने के लिए यातायात बहुत आवश्यक है और यह वास्तव में व्यापार की आधारशिला है। जिस प्रकार कारखाने उद्योग से कच्चे माल की आकार-उपयोगिता (Form utility) बढ़ती है उसी प्रकार यातायात के द्वारा किसी वस्तु की स्थान-उपयोगिता (Place Utility) बढ़ती है। अतः यह सर्वमान्य है कि इस युग की आर्थिक व्यवस्था सस्ते यातायात के साधनों पर ही निर्भर है। यातायात के साधनों का महत्व इतना अधिक है कि प्रो० बैलोक के अनुसार "सड़क इतिहास को चलाती और निर्धारित करती है।"[3] किसी देश की अवनति या उन्नति वहाँ के यातायात के साधनों की अवस्था से ज्ञात होती है।

परिवहन की विधियाँ (Modes of Transport)

यातायात के साधनों की प्रत्येक समय और प्रत्येक देश में आवश्यकता पड़ती है। बिना यातायात के साधनों के व्यापार हो ही नहीं सकता। यदि यातायात के साधन सुलभ न हों तो प्रत्येक छोटा-छोटा प्रदेश एक पृथक क्षेत्र बन जावे और उसका अन्य प्रदेशों से कोई सम्बन्ध ही न रहे। मानव सभ्यता के विकास में यातायात के साधनों का सदैव से ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आज भी चाहे अफ्रीका के पिछड़े महाद्वीप के निवासियों के व्यापार को लें या उन्नतिशील यूरोप को लें, यातायात के साधनों की आवश्यकता सभी जगह प्रतीत होती है। माल लाने और ले जाने का व्यापार साधनों के बिना हो ही नहीं सकता और यातायात के लिए व्यापारिक मार्ग होना चाहिए।

आधुनिक परिवहन शीघ्रगामी और सस्ते होते हैं। उनके साधनों का संगठन और आकार बड़ा होता है जिनमें आरम्भ में अधिक पूँजी की आवश्यकता पड़ती है। इन साधनों का मुख्य उद्देश्य ढुलाई की क्रिया को सस्ता, नियमित, विश्वसनीय और सुविधाजनक बनाना है। रेल, मोटर, जहाज वायुयान ऐसे ही शीघ्रगामी और सस्ते साधन हैं। इनमें भाप, तेल, कोयला अथवा बिजली की शक्ति का प्रयोग किया जाता है, इनकी चाल और भार-वहन क्षमता अधिक होती है और ढुलाई व्यय अपेक्षाकृत कम होता है। यही आजकल व्यवसाय के मेरुदंड हैं।

प्रत्येक परिवहन के साधन के तीन अंग माने गये हैं:—

(अ) पथ अथवा मार्ग, (ब) वाहन, और (स) चालक शक्ति। किसी भी परिवहन के साधन सञ्चालनार्थ मार्गों का होना आवश्यक है जिन पर विविध प्रकार की गाड़ियाँ दौड़ सकें। रेल की पटरियों के बिना रेलगाड़ी, जल के बिना जहाज अथवा वायु के अभाव में विमान नहीं चलाये जा सकते। पथ उतना ही प्राचीन माना

3. "The road moves and controls all history."

में भौगोलिक और आर्थिक सुविधाओं के कारण सर्व प्रथम हो गये हैं। इस क्षेत्र में कोणधारी वन पाये जाते हैं। यहाँ असंख्य झीलों से स्वच्छ जल तो मिलता ही है, उनसे निकलने वाली नदियों से जल विद्युत भी काफी बनाई जाती है। सस्ती जल-विद्युत द्वारा यान्त्रिक लुब्दी बनाई जाती है। ब्रिटिश कोलम्बिया और न्यूफाउण्डलैंड में भी काफी कागज बनाया जाता है। खपत से बहुत अधिक उत्पादन होने के कारण कनाडा से कागज बहुत बड़ी मात्रा में निर्यात किया जाता है। यहाँ से संयुक्त-राज्य को निर्यात किये गए कागज का ८०% भेजा जाता है। शेष कागज भारत, पाकिस्तान और ब्रिटेन को निर्यात किया जाता है। कागज के अतिरिक्त यहाँ से लकड़ी की लुब्दी भी विदेशों को भेजी जाती है।

संयुक्त राज्य का कागज उद्योग

यह देश संसार का सबसे अधिक कागज का उत्पादन करता है। इस देश में कागज का उत्पादन १ करोड़ ४३ लाख टन वार्षिक है और कागज की मिलों की संख्या ३००० है। इस उद्योग की सभी अनुकूल दशायें इस देश में पाई जाती हैं। संयुक्त राज्य का ८० प्रतिशत कागज रासायनिक लुब्दी से बनाया जाता है। इस प्रकार इस देश में अच्छे किस्म के कागज के उत्पादन पर विशेष बल दिया जाता है। अधिकतर कागज के केन्द्र न्यू इंगलैंड रियासत में स्थित हैं क्योंकि (i) यहाँ की द्रुत-गामी नदियों से सस्ती जल शक्ति और स्वच्छ जल मिल जाता है, (ii) यहाँ नरम लकडी के सघन विस्तृत वन पाये जाते है। यह वन सुगमता से मनुष्य की पहुँच के भीतर होने के कारण व्यापक रूप से शोषित किए जाते हैं। (iii) इस क्षेत्र में यान्त्रिक लुब्दी भी बनाई जाती है। (iv) संयुक्त राज्य में रासायनिक उद्योग विकसित दशा में है इसलिए कागज उद्योग को काफी रासायनिक पदार्थ मिल जाते हैं। न्यू इंगलैंड रियासत में इस उद्योग के मुख्य क्षेत्र मेसाचुसेट्स में लिखने का अच्छा कागज बनाया जाता है। *होलीयोक इस प्रकार के कागज का सबसे बड़ा केन्द्र है। न्यूयार्क*, विस-कासिन, मिशीगन, ओहियो, पेंसिलवेनिया अन्य प्रमुख रियासतें है। **अखबारी कागज** (News Print) के लिए मेन, न्यूयार्क, वाशिंगटन, विसकांसिन, चिल्डर्सबर्ग, कालहाऊन लूफिकन प्रसिद्ध केन्द्र हैं। अखबारी कागज की खपत अधिक है इसलिए कनाडा से ८०% से भी अधिक अखबारी कागज मँगाया जाता है। **पुस्तकों के लिए कागज** (Book paper) पेंसिलवेनिया, मैसेचुसेट्स और ओहियो में और **लिखने का कागज** (Writing paper) विस्कासिन, मैसेचुसेट्स और पेंसिलवेनिया में तथा गत्ते ओहियो, मिशीगन, लूसियाना में तथा कार्डबोर्ड दक्षिणी रियासतों में बनाया जाता है।

ब्रिटेन का कागज उद्योग

इस देश में बढ़िया कागज का अधिक उत्पादन होता है। अपनी श्रेष्ठता के लिये यहाँ का कागज प्रसिद्ध है। इस देश में लुब्दी नहीं मिलती है इसलिये नार्वे, स्वीडेन, कनाडा और बाल्टिक देशों से लुब्दी मँगाई जाती है। निर्यात करने के लिये इस देश को *बन्दरगाहों की अन्यतम सुविधायें प्राप्त हैं। बन्दरगाहों के निकट ही* अधिकतर कागज के केन्द्र स्थित है। प्रचुर स्वच्छ पानी, ज्वार, जल क्षेत्र की निकटता और पश्चिमी यूरोप के विस्तृत बाजारों की समीपता मुख्य सहायक तत्व हैं। उत्तरी सामरसेट बढ़िया कागजों के लिये प्रसिद्ध है। रासेनडेल, केन्ट और हैम्पशायर कागज उत्पादन के प्रसिद्ध क्षेत्र हैं।

में बिना पहिये वाले और कालांतर में पहियेदार, अधिक सुदृढ वाहन तैयार किये गये। इन्हीं वाहन पथों को राजमार्ग सड़क अथवा महापथ कहा गया।

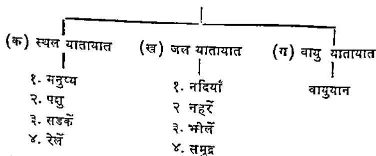
अन्त में नाव और जहाज का आविष्कार होने पर समुद्र-मार्गों का उपयोग किया जाने लगा। आरम्भ में नावें और पालदार जहाजों का विकास हुआ जो पतवार या वायु की दिशा के अनुसार चलाये जाते थे किन्तु कालांतर में जब भारी वस्तु के लाने जाने की आवश्यकता अनुभव हुई तो बड़े जहाजों और रेल के लिए विशेष मार्ग का निर्माण किया गया और अब रेलें अन्तर्देशीय स्थल मार्गों में तथा जलयान सामुद्रिक मार्गों पर विशेष उपयोगी हो गये हैं।

यातायात के प्रकार (Types of Transport)

यातायात के मार्गों को तीन प्रकार से विभाजित किया जा सकता है:—

१. स्थल यातायात
२. जल यातायात
३. वायु यातायात

यातायात की किस्में



(क) स्थल यातायात (Land Transport)

स्थल यातायात के अन्तर्गत बैलगाडी, भैंसा या घोडा गाडी, ऊँट, गाडी, साइकिल, ट्रामगाड़ी, मोटर या रेलगाडी शामिल हैं। ग्रामीण क्षेत्रों और कच्ची सड़कों पर इनके प्रयोग में बडी असुविधायें रहती हैं। वर्षा ऋतु में कीचड और शुष्क ऋतु में धूल के कारण बहुत कठिनाई का सामना करना पडता है किन्तु विवश होकर मनुष्य जैसे-तैसे अपना काम चलाता ही है।

स्थल मार्गों का निर्माण करते समय प्राकृतिक दशा पर विशेष ध्यान देना पडता है क्योंकि मैदानी भागों में ही सडकें या रेलें द्वारा सुगमता से बनाई जा सकती हैं। पहाडी प्रदेश में सडकें बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बहुत अधिक चढाई और दर्रों को बचाया जाय अन्यथा खर्च बहुत होता है। मैदानों में भी सड़कों को केवल इसलिए घुमाकर बनाया जाता है कि उससे नदी के ऊपर पुल बनाने के लिए उचित स्थान मिलने की सुविधा हो। रेलें अधिकतर मैदानों में ही बनाई जाती हैं। पहाडों में रेलें बनाने में बहुत कठिनाई और व्यय पडता है। अधिकाश पहाडी रेलें नदियों की घाटियों में ही बनाई जाती हैं। मार्ग में पड़ने वाली ऊँची

बंगाल—कागज बनाने का उद्योग मुख्यतः बगाल में ही केन्द्रित है जहाँ कुल उत्पादन का लगभग ५०% प्राप्त होता है। (१) पश्चिमी बगाल की मिलों मे कागज बनाने के लिए बाँस की लुब्दी ही काम मे ली जाती है। बाँस असम के जंगलों से प्राप्त किया जाता है। सवाई घास मध्य प्रदेश और विहार से मंगाई जाती है। (२) कोयला बिहार के कोल क्षेत्रों से। किन्तु सामूहिक रूप मे बंगाल के कागज के मिल कच्चे माल के दृष्टिकोण से बहुत अच्छी स्थिति में नही हैं। (३) कोयला और रासायनिक पदार्थों के निकट होने तथा कलकत्ता जैसे औद्योगिक नगर के निकट होने के कारण (छापेखाने तथा दफ्तर आदि खूब होने से कागज की खपत ज्यादा होती है) इन मिलों का महत्व अधिक है। (४) घनी जनसख्या के कारण मजदूर भी आसानी से मिल जाते है। इन्ही अनुकूल परिस्थितियों के कारण कागज के उद्योग के मुख्य केन्द्र पश्चिमी बगाल मे ही है। बगाल के मुख्य केन्द्र टीटागढ़, नैहाटी, रानीगज, और काकीनारा हैं।

उत्तर प्रदेश—कागज के उद्योग मे दूसरा स्थान उत्तर प्रदेश के मिलों को प्राप्त है। लखनऊ के कागज के मिल सबाई घास पूर्वी क्षेत्रो से तथा सहारनपुर के मिल पश्चिमी क्षेत्रो से प्राप्त करते है। कोयला बिहार, उड़ीसा की खानों से प्राप्त किया जाता है तथा घनी जनसख्या के कारण मजदूर भी खूब मिल जाते हैं।

उड़ीसा के सबलपुर जिले मे बृजराजनगर बाँस उत्पन्न करने वाले क्षेत्र मे स्थित है और ये रायपुर की कोयले की खानो के भी पास है। बिहार के मिलों की स्थिति भी कच्चे माल और कोयले की दृष्टि से बड़ी अच्छी है।

मैसूर और केरल राज्य के कागज के मिल बाँस के जंगलों के निकट हैं। जल-विद्युत शक्ति और बाजार के दृष्टिकोण से भी इनकी स्थिति अच्छी है।

महाराष्ट्र के मिलो की स्थिति कोयला और कच्चे माल दोनो की ही दृष्टि से विशेष लाभदायक नही है। यहाँ लकडी की लुब्दी विदेशो से मँगवाई जाती है। पूना और अहमदाबाद यहाँ के मुख्य केन्द्र हैं। अन्य केन्द्र भद्रावती, दालमियानगर, जगाधरी, राजमहेन्द्री, पुन्नूलूर, सिरपुर, नीपानगर है।

भारतीय कारखानों की उत्पादन क्षमता १३ लाख टन की है और वास्तविक उत्पादन ३.६ लाख टन का। तृतीय योजना मे क्षमता मे दुगुनी वृद्धि होगी तथा उत्पादन १५ लाख टन का होगा।

प्रश्न

१. भूमण्डल के सूती वस्त्र व्यवसाय के केन्द्र बतलाइये तथा उनके स्थानीयकरण के कारणों का वर्णन कीजिए।

२. इङ्गलैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से लोहे तथा इस्पात उद्योग का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए। उद्योग के स्थानीयकरण के प्रधान कारण भी लिखिये।

३. जापान के सूती वस्त्र व्यवसाय का विस्तृत वर्णन कीजिए। क्या भारत जापान के माल पर निर्भर है?

४. इंगलैंड के सूती वस्त्र-व्यवसाय का वर्णन कीजिए। जापान से उसकी तुलना भी कीजिए।

५. ग्रेट ब्रिटेन में किन भौगोलिक आर्थिक कारणों से सूती वस्त्र-व्यवसाय किया जाता है? इस धंधे की वर्तमान अवस्था और भविष्य की सम्भावनाओं पर अपने विचार प्रकट करिये।

समय मे भी प्राचीनतम यातायात पिछड़ी जातियों मे दृष्टिगोचर होता है। टुंड्रा के एस्कीमो, अमेरिका के लाल हिन्दुस्तानी, चीन निवासियो, न्यूगिनी एवं अडमन द्वीपों की असभ्य जातियो ने बच्चो को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिये विभिन्न साधन ढूँढ निकाले हैं। इनमें भार ढोने का कार्य स्त्रियाँ ही करती हैं। पुरुष तो आखेट आदि करने के लिए केवल हथियार लेकर चलता है। यद्यपि मनुष्य का उपयोग बोझा ढोने मे बहुत कम हो गया है किन्तु आज भी कुछ पहाड़ी प्रदेशो मे अथवा वृत्तीय जगलो मे सडकें बनाना कठिन ही नही असम्भव भी है। इसी कारण हब्शी कुली ही हाथी दाँत, रबर, नारियल आदि ढोते हैं। दक्षिणी पूर्वी एशिया के कुछ भागो मे मानव श्रम सबसे सस्ता साधन है। इसका कारण केवल पशुओं की कमी ही नही किन्तु इन प्रदेशों मे एक-एक इच भूमि बहुमूल्य है इसलिए यहाँ सडकें इतनी ही चौडी बनाई जाती है, जिससे आना जाना हो सके। घोडा गाडी या बैल-गाडी के लिए वहाँ गुंजाइश नही। दक्षिणी अमेरिका के एडीज अथवा एशिया के हिमालय पर्वतों मे मनुष्य यातायात का प्रमुख साधन है। ससार के जिन भागो मे जनसख्या अधिक है (चीन, भारत, जापान) वहाँ अब भी मनुष्य यातायात का साधन बना है। आज भी विश्व के अनेक भागों मे पानी भरने, लकड़ी या घास लाने, फल-फूल एकत्रित करने तथा तरकारियाँ लाने का काम मुख्यत. स्त्रियो द्वारा ही किया जाता है। हाथ के ठेले या रिक्शा पुरुषो द्वारा खीचे जाते हैं। प्राचीन काल मे मनुष्यो द्वारा ढोई जाने वाली पालकी का भी बड़ा महत्व था।

मनुष्य द्वारा ढोये जाने वाले भार का महत्व का पता हमे इस बात से लग जाता है कि दक्षिणी पश्चिमी चीन और तिब्बत मे लोग साधारणत २०० पौंड उठाकर १२० मील की दूरी ७,००० फीट की औसत ऊँचाई पर २० दिन में पहुँच जाते हैं। इसके विपरीत एक औसत एशियाई और अफ्रीकी कुली ५५ से ६६ पौंड के बीच बोझा उठाने की क्षमता रखता है और यदि वह साथ की गाडी (Wheel Barrow) का सहारा लेता है तो साधारणत. २५० पौंड बोझा ढोता है। मनुष्य का उपयोग बोझा ले जाने के लिए केवल उन्ही भागो में होता है जहाँ अन्य साधन उपलब्ध नही हैं जैसे चीन, तिब्बत अथवा मध्य अफ्रीका अथवा मध्य अमेजन के बेसिन जहाँ विषैले कीड़ो के कारण पशु द्वारा यातायात मे बाधा पड़ती है। ऐसे भागो मे भी भारी बोझा कुली ही ले जाते है। अनुमान लगाया गया है कि मनुष्य द्वारा १५० मील बोझा ढुलवाने का व्यय रेल द्वारा ८,००० मील के भाडे से तिगुना बैठता है। मनुष्य ने भार को हल्का करने के लिए कई उपाय ढूँढ निकाले हैं। सिर पर बोझा ले जाने के लिए किसी न किसी प्रकार की गद्दी (pad) का प्रयोग किया जाता है तथा सिर की अपेक्षा पीठ पर लाद कर अधिक ढोया जा सकता है।

(२) पशु यातायात (Animal Transport)

यद्यपि बोझा ढोने तथा सवारी के साधन के रूप मे पशुओं का स्थान बहुत निम्न है किन्तु जहाँ लद्दू जानवरो का बाहुल्य है और प्राकृतिक परिस्थितियाँ सडकें, मोटर अथवा रेल बनाने के अनुकूल नही हैं, वहाँ पशुओ का उपयोग किया जाता है। ऐसे ही स्थानों में पशुओ ने मानव को श्रम से बचाने के लिए काफी सहायता पहुँचाई है। सभ्यता के प्रारंभिक काल मे यातायात में मानव को बैल, घोड़े, ऊँट, गदहे, कुत्ते और हाथी आदि पशुओं से बड़ी सहायता मिलती थी।

आवागमन के साधनो के रूप में पशुओ का उपयोग किसी देश के अप्रगतिशील

अध्याय ३१

परिवहन के साधन

(MEANS OF TRANSPORT)

यातायात के साधनों का महत्व

प्रो० ब्रून्स ने ठीक ही कहा है, "परिवहन और सचार वाहन के साधन न केवल धरातल के भौतिक स्वरूप मे परिवर्तन लाते हैं वरन् वे मानव-जनसंख्या की मात्रा, गुण और उसकी किस्म को भी बदल देते है।" अत इसमें कोई संदेह नही कि परिवहन का इतिहास ही मानव सभ्यता का इतिहास है क्योंकि ज्यो-ज्यों परिवहन की विधियो का विकास और प्रगति होती गई, मानव सभ्यता की ओर अग्रसर होता गया।

यातायात, परिवहन या आवागमन "सब यान्त्रिक साधनों एव सगठनो का योग है जो व्यक्ति, वस्तुओं अथवा समाचारों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने में सहायक होते हैं।"[1] यदि कृषि और उद्योग धन्धे किसी देश के आर्थिक जीवन का शरीर और हड्डियाँ मानी जाएँ तो यातायात को उस आर्थिक ढांचे की स्नायुप्रणाली मानना चाहिए।[2] आजकल का समाज यातायात के साधनों पर बहुत निर्भर है। हमारा आर्थिक जीवन ऐसा बन गया है कि यातायात के साधनों के अभाव मे हमेशा आर्थिक सकट पडने की सभावना रहती है। व्यापार, कृषि और औद्योगिक पद्धति इसी सहायता से सभव हो सकी है। बड़े बड़े दूर के स्थान अब थोड़े समय मे ही पार किये जा सकते हैं। वस्तुओ का बाजार विस्तृत हो जाने से उत्पत्ति का पैमाना बहुत बडा हो गया है। शासन-व्यवस्था, देश-रक्षा और समाज-लाभ की दृष्टि से भी यातायात का एक बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक लगभग प्रत्येक देश मे यातायात के अच्छे साधन नही थे इसीलिए मानव समाज बहुत पिछडा हुआ था। मानवीय सभ्यता इन्ही साधनो की उन्नति पर निर्भर है। इन साधनों की उन्नति के परिणामस्वरूप सारा विश्व एक विस्तृत बाजार के रूप मे परिणत हो गया है जिसके फलस्वरूप छोटे से छोटे स्थान की बनी वस्तुएँ भी विश्व के किसी भी भाग मे ले जाकर बेची जा सकती हैं।

यातायात का इतिहास सभ्यता का इतिहास है। सडकें बनाने वाले रोशनी की मशाल लेकर बढते हैं। वह नेतृत्व करते हैं और सभ्यता उनका अनुकरण करती

---

1. "Transportation is the sum of all technical instruments and organisations designed to enable persons, commodities and news to master space."—*Kurt Widenfield.*

2. "If agriculture and industry are the body and bones of a a national organism, communications are its nerves."—**India in 1925-26.**

यह पाला जाता है। मध्य एशिया सभवतः इसके लिए सर्वोत्तम भौतिक परिस्थितियाँ प्रदान करता है। मध्य यूरोप और जर्मनी मे तो घोडे पालने और उन्हे सवारी के लिए काम मे लाने का कार्य अत्यन्त प्राचीन काल से किया जाता रहा है। इगलैंड मे रानी ऐन के काल तक घोडा ही एक मात्र परिवहन पशु था। यूनान, दक्षिणी पूर्वी एशिया और अरब मे भी इसका उपयोग खूब किया जाता था। भारत मे घोडे आर्यों द्वारा लाये गये थे। वर्तमान काल मे तो इसका उपयोग रेंडियर क्षेत्रो से लेकर हाथी तक के क्षेत्रो मे किया जाता है। दलदली क्षेत्रो मे तथा नगरों में इनका उपयोग अधिक होता है। यह अपनी पीठ पर १५० पौंड तक माल लाद कर ले जा सकता है।

खच्चर(Mule)—इसका प्रयोग मुख्यत. शुष्क प्रदेशो मे किया जाता है क्योंकि वह थोडे माल को ले जाने मे समर्थ है, और ऐसे सब स्थानो तक जा सकता है जहाँ मनुष्य का प्रवेश सम्भव है। यह गदहे और घोडे का वर्णशंकर रूप होता है, अत जहाँ एक ओर इसमें गदहे जैसा बोझ लादने का गुण होता है वहाँ दूसरी ओर यह घोडा जैसे ऊंचा और फुर्तीला तथा ताकतवर होता है।

गदहे (Donkey)—इसका क्षेत्र अफ्रीका मे सूडान और सहारा मरुस्थल के बीच का क्षेत्र है। यह कटीली झाड़ियो और कठोर भूमि की संतान होने के कारण स्वभाव में बडा कठोर होता है और निकृष्ट से निकृष्ट वनस्पति पर भी अपना जीवन-यापन कर लेता है। यह मुख्यत लद्दू पशु है जिसका उपयोग भारत मे ईंट, चूना, पत्थर, मिट्टी, भूसा अथवा कृषि उपज ढोने के लिए किया जाता है। इसका विस्तृत रूप से उपयोग स्पेन, इटली और एशियाई देशो मे होता है। यह अपनी पीठ पर लाद कर ४-५ मन भार ढो सकता है।

रेंडियर—उत्तरी ध्रुव के निकटवर्ती ठढे और बर्फीले प्रदेशो मे न केवल सामान ढोने वरन् वहाँ के निवासियो के लिए दूध, मांस, चमड़ा और हड्डियाँ प्रदान करने में भी काम मे आता है। यह स्लेज गाडियाँ खीचने तथा साधारण सवारी के लिए अधिक उपयुक्त होता है। अब इसका उपयोग साइबेरिया, अलास्का और कनाडा के उत्तरी भागो मे ही होता है।

ऊँट (Camel)—यह ही एक ऐसा पशु है जो मरुस्थलीय वनस्पति को खाकर तथा कम पानी पीकर मरुस्थल मे पनप सकता है। हफ्तों बिना जल और भोजन के रह सकता है। इसकी पैरो की बनावट गद्दीदार होती है जिससे यात्रा करते समय वे रेत मे धँसते नही। ये मार्ग तथा दिशा ज्ञान मे चतुर होते हैं और इनकी सूंघने की शक्ति इतनी तीव्र होती है कि ये आँधी आने की सभावना, जल की उपस्थिति तथा वनस्पति की निकटता शीघ्र ही जान जाते हैं, अत मरुस्थलवासियो द्वारा लम्बी यात्राओ के लिए इन्ही का प्रयोग किया जाता है। एशिया के शुष्क प्रदेशो मे यह घोडे का प्रतिद्वन्दी है और आस्ट्रेलिया के मरुस्थलो की खोज मे इसने अपार सेवायें दी है। मेहरी जाति के ऊँट सवारी के काम आते है। ये दिन भर में ६५० मील तक की यात्रा कर सकते हैं। ये छोटे, पतले और फुर्तीले होते है। किन्तु भारी भरकम ऊँट सामान ढोने के काम आते हैं। ये १०० पौड से अधिक भार ढो सकते है। मरुस्थलो मे इनका प्रयोग खेती करने, गाड़ी जोतने तथा पानी खीचने के लिए भी किया जाता है।

हाथी—दक्षिणी-पूर्वी एशिया के पहाडी, नम तथा घने जगली प्रदेशो मे यह आवागमन का मुख्य साधन है। भारत, बर्मा, लका, थाईलैंड, मलाया, सुमात्रा,

जाता है जितना स्वयं मनुष्य क्योंकि ज्योंही मानव ने पैरों पर चलना सीखा उसे पथ को आवश्यकता अनुभव हुई। डा० मैथिलीशरण गुप्त की यह उक्ति इस सबंध में स्पष्ट है, "पाए बिना पथ पहुँच सकता कौन इष्ट स्थान में।"

पथ दो प्रकार के होते हैं—प्राकृतिक, जैसे समुद्र, नदी और वायु अथवा कृत्रिम, जैसे नहरें और रेलें।

प्रागैतिहासिक युग मे मानव का आविर्भाव आखेटावस्था में हुआ माना जाता है। उस समय मानव कदराओं में रहता था, उसके भोजन के लिए प्रकृति द्वारा प्रेषित कंदमूल फल अथवा वन-पशुओ का माँस होता था। उसके हथियार पत्थर, लकड़ी अथवा हड्डी के बने होते थे और आवागमन गुफाओं से नदियो, झरनो अथवा आखेट और लकड़ी की खोज मे निकटवर्ती वनों तक ही सीमित था। अतः उस समय मार्ग का प्रारंभिक रूप पगडंडियाँ ही था जो इन मनुष्यो और वन्य-पशुओं के चलने-फिरने से बन गई थी।

उत्तर-प्रस्तर युग मे मनुष्य कुछ अधिक सभ्य हो गया। अब यह घास-फूस की झोपड़ियो मे रहने लगा तथा जीविकोपार्जन के लिए मछली मारना, पशु पालन और कृषि करना भी सीख गया। अपने शरीर को पत्तो और चमडे से ढकने लगा और उसकी आवश्यकतायें बढने के साथ-साथ आवागमन का क्षेत्र भी बढ गया और उसने पगडंडियो को अधिक समतल और सुविधाजनक बनाना आरभ कर दिया। अब तक वह अपने हथियार, शिकार अथवा भोजन-सामग्री को सिर या पीठ पर लाद कर ले जाता था अब वह पालतू पशुओ की पीठ पर लाद कर ले जाने लगा और उसका आवागमन क्षेत्र भी विस्तृत हो गया। कालान्तर में वह अतिरिक्त वस्तुओं का आदान-प्रदान भी अपने पड़ोसियो से करने लगा। किन्तु इस समय मार्ग में चोर डाकुओं का भय रहा हो अत मानव समूह रूप में व्यापार के लिए प्रस्थान करने लगा। इन झुण्डों को कारवाँ (सार्थवाह) कहा जाता था। इस कारवाँ में हजारो घोडे, गदहे, ऊँट, बैल आदि पशु माल ढोकर ले जाते थे। अरब के इतिहास में एक ऐसे कारवाँ का उल्लेख मिलता है, जिसमे ६०,००० ऊँटो का काफिला दमिश्क से मक्का तक जाता था। ये कारवाँ मार्ग विशेषत काफी चौडे होते थे।

ज्यो ज्यो मानव सभ्य होता गया वह नदियो के तटो पर बसता गया क्योकि नदियो का जल न केवल पीने और दैनिक कार्यो के लिये सरलता से उपलब्ध हो सकता था वरन् उसमें आवागमन की सुविधा भी मिल सकती थी। अतः नदियों का उपयोग आवागमन के लिए आरभ हुआ। नदियाँ प्राकृतिक मार्ग प्रस्तुत करती थी, जिस पर किसी प्रकार के विशेष प्रयत्न अथवा व्यय की आवश्यकता नही होती थी। केवल माल लादने अथवा यात्रियों को बिठाने के लिए बेडे की आवश्यकता होती थी। ये बेड़े लकड़ो के मजबूत लट्ठो को आपस मे बाँध कर बनाये जाते थे। बाद मे जब यह अनुभव हुआ कि नदी मार्ग अथवा टेढे और घुमावदार होते हैं जिनसे निर्दिष्ट स्थान तक पहुँचने मे समय और व्यय दोनों ही अधिक लगते हैं तो मानव ने इनके मार्गों को सीधा करने अथवा नहरें बनाकर उन्हें छोटा करने का प्रयास किया और इस प्रकार कृत्रिम जलमार्ग बनाये गये।

पीठ, कन्धे या सिर पर रख कर जितना भार ढोया जा सकता है, उससे कही अधिक भूमि पर घसीट कर ले जाया जा सकता है, अत धीरे-धीरे वाहनो का विकास आरम्भ हुआ। इनके लिए वाहन-पथ चौडे और समतल बनाने पड़े जिन पर प्रारम्भ

माल के गाड़ी पर चढाने और उतारने में अधिक समय लगता हो, जहाँ अन्य प्रकार के आधुनिक यान्त्रिक वाहनो के लिए यातायात अपर्याप्त हो अथवा जहाँ सडकें खराब हों या भूमि ऊबड-खाबड हो वहाँ पशु यातायात के प्रमुख साधन होते हैं।

पशुओ द्वारा होने वाले यातायात मे कुछ दोष भी हैं —

(१) पशु प्राणी है अतः उसके अस्वस्थ होने की शका बराबर बनी रहती है। बीमारी के पश्चात वह अशक्त हो जाने से मालिक के लिए एक प्रकार से पूंजीगत हानि हो जाता है। शहरों में पशु आदि का रखना भी दूषित वातावरण के कारण प्रायः कठिन ही रहता है।

(२) पशुओ के माल ले जाने की क्षमता भी यातायात के अन्य साधनो की अपेक्षा कम ही है। उदाहरणतः बैलगाडी एक बार मे २४-३० मन माल ढो सकती है जबकि मोटर ठेले में २५०-३०० मन ले जाया जा सकता है। इसी प्रकार तांगा केवल ३ या ४ सवारियाँ बिठा सकता है जबकि मोटर बसों मे ४०-६० तक सवारियाँ एक ही बार में ले जाई जा सकती हैं।

(३) पशुओ की चाल भी अन्य साधनों की अपेक्षा कम होती है। बैल अथवा घोडा ज्यादा से ज्यादा २०-२५ मील चल सकता है किन्तु मोटर-लारी दिन भर मे १००-१५० मील की यात्रा आसानी से कर सकती है, अतएव पशुओ द्वारा माल ले जाने मे अपेक्षतया अधिक समय लगता है। अधिक दूरी वाले स्थानो के लिए पशुओ का यातायात अधिक व्ययसाध्य हो जाता है। आजकल जहाँ-जहाँ रेलो और मोटरो का प्रसार बढता जा रहा है वहाँ तो अब यह साधन बहुत कम प्रयोग मे लाये जाते है। किन्तु जिन भागो मे अभी इन साधनों का प्रचार नही हुआ है वहाँ अब तक भी पशुओं द्वारा व्यापार किया जाता है।

भारत मे माल ढोने के लिए पशु अधिक काम मे लाये जाते है। बैल तो भारतीय कृषि के एक मात्र साधन हैं। वे न केवल कृषि कर्म मे ही सहायता देते हैं बल्कि खेती की पैदावार को मडी तक लाने मे भी बडी सहायता देते है। ग्रामीण क्षेत्रो मे गधे, खच्चर तथा घोडो का भी उपयोग होता है। ये खेती की पैदावारों को शहर में लाते हैं और उनके बदले में अन्य सामान गाँवो को ले जाते हैं। पूर्वी बगाल अथवा दक्षिणी भारत के सघन वनों मे हाथियो का महत्व अधिक है क्योंकि ये न केवल यातायात का साधन ही प्रस्तुत करते हैं बल्कि इनकी मृत्यु के पश्चात् इनसे हाथी-दाँत, चमड़ा तथा हड्डियाँ आदि भी प्राप्त होती हैं जो व्यापार मे काम आती हैं। हाथियो की रक्षा और बचाव के लिए राष्ट्रीय योजना आयोग ने कहा है, "यदि अविवेकपूर्ण शिकार अथवा मनोरजन के साधन मे प्रयुक्त कर हाथी जैसे यातायात के प्रमुख साधन को नष्ट होने से न रोका गया तो देश की काफी राष्ट्रीय क्षति होगी।" इसी सुझाव को स्वीकार कर असम और मैसूर की सरकारो ने कडे कानून बना दिये है।

निम्न तालिका मे यातायात के विभिन्न पशुओ और उनकी सापेक्षिक भार-वाहन शक्ति तथा उपयोग के क्षेत्र बताए गए हैं।—४

---

4. *L. Brittle*, Social and Economic Geography, 1938, pp. 362-364.

पहाडियों को सुरंग बनाकर पार किया जाता है। आल्पस, एंडीज और राकी पर्वतों को इन्ही दर्रो द्वारा पार किया गया है। नदियों पर पुल बनाकर मार्ग निकाला जाता है।

रेलें या सडकें मैदानो तथा तटों पर ही अधिक पाई जाती हैं। उदाहरणार्थ भारत में गगा-सतलज के मैदान, चीन के ह्वांगो और याग्टसी के मैदान मे तथा संयुक्त राज्य मे मिसीसिपी नदी के मैदान मे रेलों व सडको की संख्या अधिक है। सडकों पर तो भौतिक परिस्थितियो का इतना अधिक प्रभाव पड़ता है कि इनमे विभिन्न ढांचे बन जाते हैं, जैसे—

(i) विकेन्द्रीय ढाचा (Centrifugal Pattern),

(ii) रेखात्मक ढाँचा (Linear Pattern), और

(iii) धंधात्मक ढाँचा (Cause-way Pattern)

पहला प्रकार वहाँ मिलता है जहाँ केन्द्रीय स्थान होते है जैसे पेरिस या दिल्ली आदि। दूसरा प्रकार नदियों के किनारे और तीसरा जहाँ दलदल आदि हों जिसमे आवागमन के लिये बाँध बना कर रेल मार्ग बनाये जाते है। ये इधर-उधर से नगरो को संयुक्त करने के लिए बनाये जाते है। भारत मे डेल्टाई भागो में इस प्रकार का स्वरूप देखने को मिलता है। मैदानों मे भी बाढग्रस्त क्षेत्रो मे इसी प्रकार के रेल-मार्ग व सड़कें बनाना आवश्यक है।

जलवायु का भी व्यापारिक मार्गों पर बडा प्रभाव पडता है। जिन देशो मे वर्षा अधिक होती है वहाँ नदियों मे बाढ आते रहने के कारण स्थल-मार्ग बनाने और उसकी रक्षा करने मे बहुत व्यय होता है क्योकि प्राय प्रत्येक वर्षा में मार्ग नष्ट हो जाते है। पुलो के निर्माण मे भी अधिक व्यय होता है। इसी प्रकार ठढे प्रदेशो मे जहाँ शीतकाल मे बर्फ जम जाती है, स्थल मार्गों का बनाना और उनको कार्यशील रखना कठिन और व्यय-साध्य होता है। जिन दिनो किसी देश मे कुहरा अधिक पडता है उन दिनों स्थल-मार्गों की कार्यशीलता नष्ट हो जाती है क्योकि मार्ग स्पष्ट दिखाई नही पडता है।

जिन क्षेत्रों मे अधिक यात्री तथा सामान मिलता है उन्ही मे होकर स्थल-मार्ग बनाये जाते है जिससे अधिक से अधिक आय हो सके। अस्तु सघन जनसंख्या वाले और औद्योगिक क्षेत्रो मे स्थल-मार्ग का जाल-सा बिछ जाता है। चीन के जैच्वान प्रान्त और भारत मे उत्तर-प्रदेश मे जनसंख्या की अधिकता के कारण ही स्थल-मार्गों का जाल बिछा है।

स्थल-मार्गों पर निम्न साधन माल ले जाने मे काम मे लाये जाते है।

(१) मनुष्य भारवाहक के रूप में (Human Porter)

विश्व की जनसंख्या अपने स्थानीय यातायात के लिये मुख्य साधन के रूप मे मानव का उपयोग करती है। पदार्थों को एक जगह से दूसरे जगह पहुँचाने का काम मनुष्य स्वय करते हैं। इसके राजनीतिक, सामाजिक, औद्योगिक प्रगति, आर्थिक दशा, जनसंख्या का घनत्व, भूमि की प्राकृतिक बनावट कारण, जलवायु आदि कई कारण हैं। स्त्री जाति सर्वप्रथम भारवाहिनी के रूप मे पृथ्वी पर अवतरित हुई, उसका प्रगाढ वात्सल्य उसे शिशु को सदैव अपने अक में रखने के हेतु प्रेरित करता है। आधुनिक

पशु	वितरण-क्षेत्र	गुण तथा उपयोग
	रूस और द० पूर्वी यूरोप २१% मध्य और दक्षिणी अमेरिका २०% द० अफ्रीका २%	कर २,००० पौंड तक ले जा सकता है।
	विश्व का योग = २५ करोड	
४. कुत्ते (Dogs)	सभी प्रदेशो मे जहाँ अन्य पशु सामान ढोने के लिए उपलब्ध नही हैं। टुड्रा प्रदेश तथा उ० प० यूरोप	(i) एस्कीमो कुत्ता १०० पौंड तक खीच सकता है, (ii) बेल्जियम कुत्ता २४० पौंड और (iii) सैंड वर्नाड कुत्ता ३० से ५० पौंड तक ढो सकता है।
५ ऊट (Camel)	अर्द्ध-शुष्क और मरुस्थलीय प्रदेशो मे— उत्तरी अफ्रीका और यूरेशिया मे लगभग २० लाख और आस्ट्रेलिया मे ६,०००।	बिना खाये पीये ३ से १० दिन तक रह सकता है। मरुस्थलीय वनस्पति निर्वाह का मुख्य साधन। प्रतिदिन १५ से २० मील की गति से ऊँट ४५० पौंड बोझ ढो सकता है। किन्तु दो कूबड वाला ऊँट ७०० पौंड तक ढो सकता है।
६. रेन्डियर (Reindeer)	टुड्रा, यूरेशिया के उत्तरी वन प्रदेश, उ० अमेरिका।	कड़ी-से-कडी सर्दी भी सहन कर सकता है। अल्प और अपौष्टिक खुराक पर निर्वाह करता है। बैल से थोडा बोझा ढो सकता है।
७. हाथी (Elephant)	भारत तथा द० पूर्वी एशिया के वन प्रदेश और मध्य अफ्रीका।	अधिक भोजन की आवश्यकता, पहाडी तथा वन-प्रदेशो के उपयुक्त। यह ६०० पौंड तक बोझा ढो सकता है किंतु खीचकर २ से ३ टन तक ले जा सकता है।

तथा पिछड़ेपन का संकेत करता है किन्तु यह जानकर आश्चर्य होगा कि पश्चिमी दुनिया के औद्योगिक सभ्यता वाले देशों में अभी भी पशुओं का महत्व बहुत अधिक है। कुछ समय से ही सभ्य जगत के बहुत से भौतिक साधन उनके श्रेय को कम करने की बराबर चेष्टा कर रहे है, किन्तु इसमें संदेह नही कि वह शीघ्र ही उनके स्थान को ग्रहण कर लेंगे।

गाड़ियाँ खीचने के लिए या सामान ढोने के लिए पशु शक्ति का प्रयोग आज भी विश्व के अनेक भागों मे किया जाता है। मोटे तौर पर परिवहन के लिए पशुओं का उपयोग उन्ही क्षेत्रो मे सभव है जहाँ वे प्राकृतिक सुविधाओ के कारण भली-भाँति पनप सकते है अथवा जहां उनके लिए उपयुक्त चारा, घास आदि मिल सकता है। रेन्डियर काई वाले क्षेत्रों से बाहर नही पनप सकता, लामा का क्षेत्र दक्षिणी अमरीका के सीराज प्रदेश मे ही बहुधा सीमित है और हाथी केवल दक्षिणी-पूर्वी एशिया के वन प्रदेशो मे ही उपयोगी है।

कुत्ता (Dog)—पहला पशु कुत्ता था जो परिवहन के लिए प्रयोग मे लाया गया। *ऋग्वेदिक काल मे भारत मे कुत्तों का प्रयोग गाडी खीचने के लिए किया जाता था।* तत्कालीन भारतीय कुत्तें की माँग ईरान और मैसोपोटामिया मे थी अत इसका नियमित निर्यात यहाँ से किया जाता था। इसके छोटे आकार और सीमित शक्ति के कारण इसका प्रयोग उन्ही प्रदेशो में किया जाता था जहाँ अन्य दूसरा उपयोगी पशु उपलब्ध नही था। आज भी आर्कटिक प्रदेश मे परिवहन का मुख्य पशु कुत्ता ही है, क्योंकि यह अपने छोटे और हल्के शरीर से बर्फ पर चलने के लिए विशेष उपयोगी है।

बैल (Ox)—संभवत. अपनी व्यापकता के कारण यह सबसे प्रमुख भार-वाहक पशु है। १३ वी शताब्दी में इसका उपयोग रूस की काली मिट्टी मे किया जाता था। भारत और फ्रास में भी अत्यन्त प्राचीन काल से ही यह उपयोग मे आता था। मिश्री, सुमेरियन और मोहनजोदड़ो की सभ्यतायें भी बैलो का प्रयोग करती थीं। आधुनिक काल मे भी बैल का सबसे अधिक विस्तृत क्षेत्र पाया जाता है। उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, यूरोप और एशिया के अधिकाश प्रदेशो मे आज भी इसका उपयोग व्यापक रूप से किया जाता है। प्राचीन काल मे बैलो की कई जंगली नस्लें यहाँ मिलती थीं। अमरीकी बिसन बैल पालतू पशु नही था किन्तु यूरोप तथा एशिया का बैल प्रस्तर युग में भी घरेलू पशु था और आधुनिक युग मे यह भूमध्यसागर के चारो ओर तथा दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी अमरीका, और भारत के ग्रामीण क्षेत्रो मे खेती करने, पानी निकालने तथा सामान ढोने के लिये प्रयुक्त होता है। बैल की वाहन-शक्ति स्थानीय और सीमित होती है. किन्तु जब उसे गाडियों मे जोता जाता है तो यह शक्ति कई गुना अधिक बढ जाती है, क्योकि इसकी गर्दन पीठ की अपेक्षा अधिक भार ढो सकती है। एक बैल की जोडी ३-४ मील प्रति घंटा की गति से १४-१५ मन वजन खीच सकती है और दिन भर मे २०-२५ मील की दूरी पार कर सकती है।

घोड़ा (Horse)—यह विस्तृत क्षेत्र मे सर्व प्रथम उपयोग में आया। यह सवारी करने, हल जोतने, इक्के-बग्घी मे जोतने, पीठ पर बोझा ढोने और युद्ध स्थलों पर रथों में जोतने के लिए लोकप्रिय रहा है। यात्रा के लिए घोडा अन्य पशुओ से अच्छा होता है। यह ताकतवर और फुर्तीला पशु होता है। यह सरलता से छलाग मार कर कूद या दौड सकता है और जिस तरफ चाहे दौडते-दौडते मुड सकता है। यह हरी मुलायम घास पर निर्भर रहता है अत. जहाँ सुविधा रूप से घास मिल जाती है वही

धीरे-धीरे यह पहिया, घूमने और मुड़ने की सरलता तथा भूमि के न्यूनतम घर्षण प्रभाव के कारण, मानव द्वारा अनेक भूभागों में अपना लिया गया। श्री ब्लांशे ने ठीक ही कहा है, "रोमन लोगों ने जब सिम्ब्री लोगों पर आक्रमण किया तो उन्हें उनकी गाड़ियों के आकार ने आश्चर्य चकित कर दिया था। यह गाड़ियाँ इतनी बड़ी थी कि यदि उनको पास-पास घेरे में खड़ा कर दिया जाय तो इस प्रकार निर्मित घेरे में एक पूरी सेना और उसकी रसद आ सकती थी। इस प्रकार यात्री रथक भी तातारियों की बड़ी आकार वाली गाड़ियों से आश्चर्यचकित हो गया था।"[5]

भारत में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाइयों मे पहिए वाली गाड़ी की एक तांबे की मूर्ति तथा कुछ गाड़ी की आकृति के खिलौने मिले हैं जो ५००० वर्ष पूर्व के माने जाते हैं। ३२०० वर्ष पूर्व तो रथों और गाड़ियों का व्यापारिक कार्यों के लिए भी प्रयोग होता था। बैलगाड़ी, इक्का, तागा, ठेला, रथ, रेलगाड़ी, मोटर आदि के आधुनिक पहिये प्राचीन पहियो के ही विकसित रूप हैं। केवल मोटर के पहिये मे एक विशेष गुण यह होता है कि ठोस न होने के कारण अन्य पहियों की अपेक्षा साधारण सड़क पर अधिक भार अधिक तेजी से ले जाने मे समर्थ होता है। रेल का पहिया तो इससे भी अधिक भार ऊँची पटरी के कारण ले जाता है।

वे आज भी हिम प्रदेशों में बैलगाडी या अन्य साधनों के स्थान पर प्रयुक्त की जाती हैं। इनका प्रयोग अधिकतर शीत काल में होता है। बिना पहिए की ये स्लेज गाड़ियाँ कई प्रकार की होती हैं। उनके निर्माण में लकड़ी, साल, ह्वेल मछली की चमड़ी और हड्डियाँ तथा वालरस के दाँतो का प्रयोग होता है। पश्चिमी स्लेज ३½ से ४ फुट लम्बी होती है किन्तु पूर्वी क्षेत्रों की स्लेज १३ से १४ फीट लम्बी होती है। ये साधारणतः २ मील प्रति घन्टे की चाल से चलती हैं तथा १,००० पौन्ड तक का बोझा ढो सकती हैं।

पहिएदार गाड़ियाँ तीन शक्तियों द्वारा चलाई जाती हैं (१)—मानव शक्ति (Human Traction) जैसे चीन, जापान और दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में रिक्सा, ठेला या छोटी गाड़ियाँ खींचने में मनुष्य के श्रम का उपयोग किया जाता है। (२) पशु शक्ति (Animal Traction) का प्रयोग विश्व के सभी देशो मे किया जाता है। (३) निर्जीव शक्ति (Inanimate Power Traction) जिसके अन्तर्गत कोयला, पेट्रोलियम, जल विद्युत शक्ति का प्रयोग किया जाता है.

सड़कों पर चलने वाले वाहनों में मुख्य ये हैं :—

(क) बैलगाड़ियाँ—सड़कों पर न केवल बैलगाड़ियाँ और मोटर द्वारा ही आना जाना होता है बल्कि भारत जैसे विशाल देश मे बैलगाड़ियों का महत्व बहुत अधिक है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि भारत के आन्तरिक व्यापार का लगभग ७०% सामान बैलगाड़ियों द्वारा ही ढोया जाता है। सम्पूर्ण देश मे १ करोड से भी अधिक बैलगाडियाँ हैं जिनमें ३०० करोड़ रुपयों की पूँजी लगी है और इसमें लगभग एक करोड़ व्यक्ति और २ करोड पशु अपना भरण-पोषण करते हैं।[6] इनके द्वारा लगभग १२½ करोड़ टन माल यातायात की सेवा प्रदान की जाती है। देश के दूरस्थ

5. *Blache*, **Principles of Human Geography, p. 364.**
6. **India Reference Annual, 1956, p. 311.**

बोर्नियो आदि मे इसका अधिक उपयोग होता है। अफ्रीका में अब इसका महत्व कम होता जा रहा है। जिन घने जंगलो मे गहरे वृक्षों, तालाबों अथवा भूमि पर दलदल होने के कारण और कोई साधन प्रयुक्त नही किया जा सकता वहाँ हाथी ही यातायात के लिए उपयुक्त माना गया है। अपने भारी डील-डौल तथा शक्ति के कारण यह १,००० पौण्ड वजन तक खींच सकता है किन्तु धीमी मस्त चाल से चलने वाला हाथी बहुत उपयोगी नही होता। आधुनिक काल मे इसकी उपयोगिता बड़ी सीमित हो गई है क्योकि इसे अधिक मात्रा मे भोजन चाहिए किन्तु चूँकि यह बडा शक्तिशाली और बुद्धिमान पशु होता है अतः इससे क्रेन जैसी भारी मशीनें उठाने का काम लिया जाता है। असम और बर्मा के वनो मे लट्ठे ढोने के लिए ही इनका अधिक उपयोग किया जाता है।

अन्य भारवाहक-पशु—ऊँची पर्वतमालाओं, कन्दराओ तथा दर्रों को पार करने के लिए तिब्बत मे 'याक', हिमालय मे 'भेड़ें', एंडीज पर्वत मे 'लामा' और राकी पर्वत में 'विकूना' पशु और टर्की मे 'बकरों' का उपयोग किया जाता है। निचले पहाड़ी प्रदेशो में भेड़ और बकरे ही बोझा ढोते हैं किन्तु वे २५-३० पौंड से अधिक वजन नही ढो सकते।

इस प्रकार यह स्पष्ट होगा कि वर्तमान काल के उत्तमोत्तम यान्त्रिक साधनों के होते हुए भी विश्व के कई भागों में पशुओ का महत्व अब भी अधिक है। पशु द्वारा होने वाले यातायात के मुख्य लाभ यह हैं :—

(१) जिन भूभागों मे (पर्वतीय प्रदेशों अथवा विस्तीर्ण उजाड मरुस्थलों पर) यातायात के अन्य साधन नही पहुँच सकते वहाँ भी पशुओं द्वारा सुगमतापूर्वक यात्री ले जाना और माल ढोना होता है। यही कारण है कि घने जंगलो मे हाथी, मरुस्थल मे ऊट और पहाडी देशो मे विकूना, याक, लामा आदि पशुओं का अधिक महत्व है।

(२) पशुओ के चलने के लिए किसी विशेष प्रकार के मार्गों के निर्माण की आवश्यकता नही होती। वे अपने सधे हुए पाँवों और फुर्ती के कारण किसी भी तरफ जा सकते है और जहाँ भी हो वहाँ से माल और यात्री ला ले जा सकते हैं। ये प्रायः पगडंडियों का अनुसरण करते हैं जिनके बनाने में मानव का धन खर्च नही होता क्योकि यह प्रकृति द्वारा स्वत ही बनाया जाता है।

(३) पशुओ द्वारा यातायात न केवल सुगम ही प्रत्युत सस्ता भी बहुत होता है क्योंकि मार्ग मे उगने वाले वृक्षो की पत्तियाँ अथवा टहनियाँ खाकर ही ये अपना निर्वाह कर सकते हैं। पशुओं की टूट-फूट और घिसावट का भी प्रश्न उपस्थित नही होता। उन्हे दिन भर मे थोडे विश्राम की आवश्यकता होती है जिसे पा जाने पर वे पुनः यात्रा आरम्भ कर देते हैं। कुछ पशु दो तरफा लाभदायक होते हैं। वे न केवल बोझा ही ढोते हैं बल्कि कृषि कार्य मे सहायक होते है।

(४) पशुओ द्वारा राष्ट्रीय आय मे भी वृद्धि होती है। भारत के राष्ट्रीय योजना आयोग के अनुसार प्रति वर्ष सामान आदि ढोने मे पशुओ द्वारा १,००० करोड रुपये की प्राप्ति होती है। इसमें से यदि उनके रखने आदि का खर्च निकाल दिया जाय तो भी देश को प्रतिवर्ष १०० करोड रुपये का लाभ होता है।

अस्तु, यह कहा जा सकता है कि जहाँ थोड़ी दूरी तय करनी हो, जहाँ शहरों मे गलियाँ या रास्ते तंग हो अथवा जहाँ मार्ग मे भीड़-भाड़ अधिक होती हो, जहाँ

हालत भी न बिगडे, इसके लिये गाडियों के पहियो मे सुधार किया जाय। लोहे के पहियो की जगह गाडियो पर रवड के टायर प्रयुक्त किये जायें जिससे सडको पर गडार पडना रुक जायगा। किन्तु किसान की वर्तमान आर्थिक अवस्था का ध्यान रखते हुए ये रवर टायर काम में नही लाए जा सकने क्योकि वे बहुत मँहगे होने हैं और फिर इनकी दुरुस्ती भी गाँवो मे सभव नहीं। इसके अतिरिक्त जब तक शहरो और गाँवो मे कच्ची सडको की प्रधानता रहती है तब तक इनका उपयोग वाछनीय नही कहा जा सकता। रवर टायर वाली गाडियाँ तभी सफलतापूर्वक चलाई जा सकती हैं जब देश की सड़कें पक्की बनाई जायें। बैलगाडियों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों मे ऊँट गाडियो का भी प्रयोग किया जाता है विशेषत पजाब, पश्चिमी तथा पूर्वी राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश मे किन्तु इनके द्वारा ५०-७० मील की दूरी तक ही सामान सस्ता भेजा जा सकता है। प्राय ये गाडियाँ एक स्थान से रात को ही रवाना होती हैं, प्रात काल अपने गतव्य स्थान को पहुँच जाती हैं। कुछ समय से इनमें और मोटरो मे भी प्रतिस्पर्धा होने लगी है।

(ख) घोड़ा गाड़ी—शहरो मे घोडों द्वारा खीचे जाने वाले इक्कों और तागों का प्रयोग दिन प्रतिदिन बढता जा रहा है। इसका सबसे बडा लाभ तो यह है कि ये गाडियाँ चाहे जहाँ ठहर कर सामान और यात्री चढा सकती हैं तथा जहाँ-जहाँ सडकें बनी हैं वहाँ जा सकती हैं। यही कारण है कि शहरो की तग गलियो मे भी जहाँ मोटरें नहीं पहुँच सकती—ये सुगमतापूर्वक जा सकती हैं। इनकी बनावट भी सीधी-सादी और कम खर्चीली होती है तथा विदेशी सामान से बनाये जाते हैं। घोड़े आदि को भी रखना इतना व्ययसाध्य नही होता, अस्तु तागे, बग्घियाँ कम किराये मे ही सामान और यात्रियो को स्टेशनो से शहरो तथा निकटवर्ती स्थानो में ले जा सकती हैं। शहरो में तो एक स्थान तक के किराये निश्चित ही होते हैं बाहर के स्थानो के लिए प्रति घण्टा या प्रति मील के हिसाब से किराया वसूल किया जाता है। घोडा-गाडियों का मुख्य दोष यही है कि उनमें सामान ले जाने की शक्ति सीमित होती है तथा ये धीमी गति से चलती हैं। किन्तु अधिक भीड़ वाले स्थानो में धीमी चाल भी एक बडा लाभ है। इसमे राहगीर खतरों से बच जाते हैं। अब बस और मोटर सर्विसो के अधिक प्रचार के कारण इनका महत्व घटता जा रहा है। भारत राष्ट्रीय योजना आयोग ने घोड़ा गाड़ियो के यातायात सम्बन्धी प्रश्न पर पूर्ण विचार करने के उपरात ये विचार व्यक्त किये हैं, "औसत रूप मे एक घोडा-गाडी यदि वर्ष में ५० टन माल ढोती है तो सम्पूर्ण देश में वे प्रति वर्ष १,००० लाख टन सामान ढोने के लिये लगभग ४००० मील की यात्रा करती है। यदि एक सामान को एक मील ले जाने में हम ६ आने का अनुमान लगावें तो प्रतिवर्ष इनसे होने वाली आय—खर्चे इत्यादि निकाल कर—१००० करोड रुपया अवश्य होगी।" इस वर्णन से भारत में घोडा-गाडियो का अधिक महत्व सरलता से ही जाना जा सकता है।

तांगो आदि के अतिरिक्त अब तो प्रत्येक शहर और नगर में साइकिलो की भी भरमार हो गई है। सस्तेपन के कारण साइकिल खरीदते हैं। इसका मुख्य उपयोग तो गाँवो से दूध आदि लाने के लिये किया जाता है। मोटर और साइकिल रिक्शो का भी प्रयोग उत्तरोत्तर बढता जा रहा है। इनसे जल्दी ही एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचा जा सकता है।

(ग) मोटर गाड़ियाँ और बाइसिकलें—सड़को पर चलने वाले वाहनो मे मोटर गाड़ियो का महत्व पिछले कुछ समय से बढ गया है। भारत मे १९५९-६० के

पशु	वितरण	गुण तथा उपयोग
१. घोड़ा व खच्चर (Horse and Pony)	शीतोष्ण कटिबन्धीय यूरोप, एशिया में ४५%	अधिक सर्दी गर्मी नहीं सह सकता।
	उत्तरी अमेरिका २६%	(१) घोड़ा गाड़ी ५ टन तक।
	द० अमेरिका ६%	(२) हल्की गाड़ी ½ से १ टन।
	आस्ट्रेलिया २%	(३) घोड़ा ३०० पौण्ड। सम्भवतः सभी पशुओं से अधिक काम करता है।
	विश्व का योग=११ करोड़	
२. गदहा व टट्टू (Mule Donkey and Ass)	(i) अर्द्ध-उष्ण कटिबंधो में जहाँ मौसम सूखा रहता है तथा (ii) शीतोष्ण प्रदेशों मे जहाँ निर्धन व्यक्ति रहते हैं और धरातल पहाड़ी है यथा— भूमध्य सागरवर्ती देश ३६% संयुक्त राज्य अमेरिका २४% भारत ८% द० अफ्रीका ४% अर्जेनटाइना ४% आयरलैंड १%	बड़ा मजबूत, अधिक जीवित रहने वाला मजबूत पाँव वाला तथा हल्की घासो पर निर्वाह करने वाला। गदहा तथा खच्चर १५० से २५० पौंड तक बोझा ढो सकता है—४ से ६ मील प्रति घंटा की गति से चल कर यह १ टन तक बोझा ले जा सकता है।
	विश्व का योग=२ करोड़	
३. बैल, भैंसा, कैरिबो (Ox Buffaloes, Caribou)	शीतोष्ण कटिबन्ध वाले दरिद्र देशों मे तथा अर्द्ध उष्ण और उष्ण प्रदेशो के तर भागों मे भारत और द० पूर्वी एशिया ५०%	धीमी गति वाला किन्तु घोड़े से अधिक भार वाहक; गर्मी, आर्द्रता तथा बीमारी सह सकता है। १५० पौंड बोझ ढो सकता है किंतु खींच

है। खाद्यानों के स्थान पर व्यवसायिक फसलें अधिक उगाई जा सकती है। यही बात ताजे फल और सब्जियो दूध, तथा अडे आदि के उत्पादन के बारे में भी लागू होती है।

(३) उच्च कोटि का औद्योगिक विकास सडको के विकास से सम्बद्ध है। उद्योग-धंधो के विकेन्द्रीकरण के लिए उपयुक्त वातावरण उपस्थित करना सडको द्वारा ही संभव है। वर्ष भर काम में आने वाली पर्याप्त पक्की सडकें छोटे और बड़े सभी उद्योगो की उत्पादन क्षमता बढाने मे सहयोग देती हैं।

(४) अकालो से पीडित व्यक्तियो को अन्न पहुँचा कर, रोगियों को दवा-दारू का प्रबध करके वे महान उपकार भी करती है।

(५) भारतीय राष्ट्रीय व्यावहारिक आर्थिक गवेषण परिषद के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि सड़क परिवहन रेल परिवहन की अपेक्षा दूने लोगो को काम देता है तथा सडक परिवहन की प्रत्येक क्रिया रेलो की अपेक्षा अधिक लोगो को काम देने मे समर्थ है। भारत में सडकें २३½ लाख लोगो को रोजगार देती हैं, जबकि रेलें केवल १२ लाख व्यक्तियों को।

(६) सडक निर्माण समाज की प्रारभिक आवश्यकता की पूर्ति करता है क्योंकि अन्य सभी परिवहन के साधनो की सफलता एक मात्र सडक परिवहन पर ही निर्भर है। रेलें, जलमार्ग, वायुमार्ग आदि सभी परिवहन के साधनो की पोषक सडकें हैं। ये बिजली और टेलीफोन के तारो तथा जल के नलो के लिए आवश्यक मार्ग प्रदान करती हैं।

(७) इनके विकास से शिक्षा का विकास होता है। चलते फिरते पुस्तकालय, पत्र-पत्रिकायें ग्रामीण जनता तक सूचनायें पहुँचाती हैं। इन्ही के द्वारा यात्री यातायात (Tourist Traffic) मे भी अपूर्व वृद्धि होती है। निरतर आवागमन होते रहने से सडको ने शताब्दियो पूर्व की रूढियो और अधविश्वासो को हटाने में भी बड़ा योग दिया है।

(८) स्थानीय प्रशासन मे भी सडको का प्रमुख सहयोग होता है। यदि देश के किसी भाग मे गृह-युद्ध छिड जाय या साम्प्रदायिक दगे हो जाये तो सड़को द्वारा ही पुलिस अथवा अस्त्र-शस्त्रो से सुसज्जित सेना के सिपाहियो की गति बढाई जा सकती है। आधुनिक उत्तम ढगों की सडको पर मोटर गाडियो द्वारा भीषण अग्नि-काडो से बचाव करना भी सरल हो जाता है। आजकल सशस्त्र सेनायें मशीनों का उपयोग करती हैं जो कि पहियो पर चलती हैं और पहियो के लिये अच्छी सडको की आवश्यकता है। युद्ध क्षेत्र मे वास्तविक मोर्चे पर बढती हुई विजयी सेनाओ की पदगति बढाने का श्रेय सडको को ही है क्योंकि इनके द्वारा ही खाद्य पदार्थ, अस्त्र-शस्त्र, गोला-बारूद तथा सैन्य शक्ति तत्परता से भेजी जा सकती है।

(९) सडक वाहन के अन्य वाहनों की अपेक्षा छोटे होने के कारण उसमे माग को घटा-बढी के अनुसार आवश्यक समायोजन संभव है। सडक की पहुँच प्रत्येक स्थान तक है जबकि रेल पटरी से उतर कर एक इच भी नही चल सकती, इसी प्रकार नाव या जहाज भी किन्तु सडक पर चलने वाली मोटर, तागा अथवा बैलगाडी इत्यादि के लिए इतना भारी बधन नही होता। यह एक विशेष महत्वपूर्ण तथ्य है कि जहाँ अन्य साधनों के लिए माल तथा सवारी को गाडी के पास लाया जाता है वहाँ सड़क परिवहन मे गाड़ी को माल और सवारी के पास लाया जाता है।

८.	लामा (Lama)	बोलविया और पीरू के पठार पर।	बड़े तेज पाँव वाला। यह हिम रेखा तक १२ से १४ मील प्रति घटे के हिसाब से १०० पौंड तक बोझा ढो सकता है।
९	याक (Yak)	केवल मध्य एशिया के ऊंचे भागों में।	यह ९० से १२० पौंड तक बोझा ढो सकता है।
१०	भेड बकरी	केवल मध्य एशिया के पर्वतीय भागो में।	२५ से ३५ पौंड तक बोझा ढो सकते हैं।

(३) चलयान या पहियेदार गाड़ियां (Spoked Carts)

बोझे को शरीर पर या सिर पर लाद कर ले जाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक आसान है कि बोझे को ढकेल कर, घसीट कर या खीच कर ले जाया जाय। इसी विचार ने कदाचित गाड़ी के प्राचीनतम रूप को जन्म दिया। आरम्भ मे गाडियाँ बिना पहिये की होती थी। जहाँ कहीं धरातल पर कर्षण के लिये न्यूनतम बाधायें थी वहीं ऐसी गाडियो का उपयोग होता था। ध्रुवीय प्रदेशो में प्रयोगित स्लेज (Sled e) गाडियाँ उसी का मुख्य उदाहरण है। वाहन उद्भव की इस अवस्था मे अंग्रेजी के अक्षर 'V' की आकृति का एक ढाँचा उत्तरी अमरीका मे बनाया गया जिसको ट्रावाइस (Travois) कहते थे। स्लेज गाडी के स्थान पर अमरीकी भारतीय चमडे के थैले सीकर बर्फीली भूमि पर खींचते थे। धीरे-धीरे डडो को एक साथ बाँध कर उनका एक सिरा कुत्ते के दोनो ओर बांधा जाने लगा। इसके दो सिरे भूमि पर सरकते थे। इन्ही से चमडे का थैला बॉध दिया था और इन पर माल लादा जाता था। इस प्रकार धीरे-धीरे मनुष्य वाहन का आधार बनने मे सफल हुआ।

कुछ समय निकल जाने के पश्चात् यह अनुभव किया गया कि यदि वृत्ताकार लकडी की तख्तियो को लठ्ठो द्वारा धुरी से जोड दिया जाये तो स्लेज सरलता से लुढक सकती है अत सभवत इसी विचार के कारण पहियेदार गाडियो का चलन हुआ माना जाता है। किन्तु पहियेदार गाडियो का प्रयोग कब और कहां हुआ यह अभी तक एक विवादास्पद प्रश्न है फिर भी यह माना जाता है कि पहियेदार रथो (Chariots) का उपयोग आरभ मे यूनान, मिश्र, असीरिया और भारत मे युद्ध कार्यो के लिए किया जाता रहा था। ईसा से ४००० वर्ष पूर्व रथो का उपयोग मिश्र और बेबीलोनिया मे होता था। बाद मे तो यह यूरोप के भूमध्यसागरीय प्रदेशो मे भी उपयोग मे लाया जाने लगा।

पहिये का प्राचीनतम स्वरूप वेलन के समान मिलता है। यह पहिया बड़ा ठोस और छोटा होता था तथा धुरी के साथ इस प्रकार कस कर लगाया जाता था कि पहिये के घूमने के साथ धुरी भी घूमती थी। बाद मे उसे हल्का बनाने के लिए छोटा और बीच मे खोखला बनाया गया। इस प्रकार खोखला होने पर उसकी भार-वाहक शक्ति कम हो जाने पर उसमे आरा व तिल्लियाँ (Spokes) का लगना आवश्यक हो गया। इस प्रकार धीरे-धीरे पहिये का आविष्कार हुआ। यह आविष्कार परिवहन के क्षेत्र में एक युगान्तरकारी परिवर्तन था। अब इसके द्वारा अधिक बोझ अपेक्षाकृत कम शक्ति और सरलता से खीचा जा सकता था। गाडी की चाल भी अधिक हो गई थी और इससे समय की बचत होने लगी।

पशुपथ, जो ३ गज चौडा होता था, और (५) क्षुद्र पशु-पथ, जो १ गज चौडा होता था।

(ख) नगर के बाहर के मार्ग—(१) राजधानी से बडे नगरो को जाने वाला मार्ग राष्ट्रपथ (२) चरागाह को जाने वाला विवीतपथ; (३) ४०० गाँवों के केन्द्रीय नगर को जाने वाला द्रोणमुख स्थानीय पथ, (५) व्यापारी मडियो को जाने वाला संयानी पथ और (६) गाँवो को जाने वाले ग्रामपथ कहलाता था। इनमे प्रत्येक की चौडाई १६ गज होती थी। माल ढो . के लिए ऐसी गाडियाँ काम मे लाई जाती थी जिन्हे बैल, घोडे, खच्चर, गधे तथा अन्य एक खुर वाले पशु खींचते थे। सडकें बनाना तथा उनका सुधार करना राज्य का मुख्य कर्तव्य होता था। अस्तु, स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत मे सड़को की प्रणाली आयोजित थी और उनका निर्माण यातायात एव व्यापार के लिए बनाया जाता था। इन पर अनेको साधन व्यवहृत होते थे किन्तु उनमे बैलगाडी सबसे श्रेष्ठ थी।

"पाश्चात्य देशो मे रोम सडक निर्माताओ का पथ-प्रदर्शक कहा जाता है, इन्होने ही सडको को राष्ट्रीय प्रणाली का स्वरूप दिया था। रोम निवासियो ने अपने शासनकाल (१५०-७८ ई० पू०) मे ब्रिटेन मे सुन्दर सडकें बनाईं। मार्ग की सम्पूर्ण बाधाओं को पार करते हुए सीधा मार्ग प्रदान करने के लिये सड़कें बड़ी महत्वपूर्ण हैं। इनका निर्माण क्रमानुसार होता था और ये १४ मे १६ फीट चौडी होती थीं। आरभ मे इनका महत्व व्यापार की दृष्टि से ही अधिक था किन्तु बाद मे जाकर यह राजनीतिक हो गया। रोम साम्राज्य वास्तव मे सडको पर ही टिका था। रोम मे सडको का न केवल सामाजिक और सामरिक महत्व ही था वरन् व्यावसायिक महत्व भी और इसीलिए यह उक्ति प्रचलित होगई थी कि सभी सडकें रोम को जाती है, (All roads lead to Rome)। रोम साम्राज्य के अतर्गत इटली, आल्पस के पर्वतीय भाग स्पेन, जर्मनी और इगलैड मे भी सडको का निर्माण किया गया। ये सडकें प्राय. समतल होती थी और इनका ढाल उचित रखा जाता था। मिट्टी को कूट कर इनका प्रथम परत (Pavimentum) बनाया जाता था, दूसरा परत बड़े पत्थरो और चूने का होता था जिसे स्टेटूमेन्टम (Statumentum) कहा जाता था। तीसरा परत पत्थर के छोटे टुकडो और चूने का होता था। इसके ऊपर चूने, खडिया के चूर्ण अथवा पिसी हुई ईट का परत लगाया जाता था जिसे न्यूक्लीयस (Nuecleus) कहते थे और इसके ऊपर अन्तिम पट्टी होती थी जिसे डॉरसम (Dorsam) कहते थे।"[१२]

पाँचवी शताब्दी मे रोम राज्य के पतन के साथ-साथ सडक निर्माण काल का भी ह्रास हो गया। रोम युग के बाद यूरोप मे 'अन्धेरा युग' आया जिसमे यूरोप की आर्थिक एव राजनीतिक स्थिति बडी अस्त-व्यस्त हो गई। १६ वी शताब्दी मे (सन् १५६७ मे) सले नामक फ्रास निवासी ने इसे फिर से बनाने का कार्य किया। कॉलबर्ट ने सले के कार्य को और आगे बढाया। फिर सन् १७७५ मे ट्रासकत नामक फ्रासीसी ने आधुनिक सडक निर्माण कला का एक नया सिद्धान्त बनाया। किन्तु वैज्ञानिक सिद्धान्तो के अनुसार सडक निर्माण कला का आविष्कार करने वालो मे दो स्कॉटलैंड निवासी टामस टैलफोर्ड (१७५७-१८३४) और जॉन लाऊडन मैकेडम (१७५६-१८३६) के नाम से प्रसिद्ध हैं। टैलफोर्ड के सिद्धान्तानुसार' बडे-बडे पत्थरो द्वारा सडक की

१२ शिवध्यानसिंह, आधुनिक परिवहन, १९६२, पृ० ५।

स्थानों में उत्पादित कृषि उपज बडे नगरों को इन्ही बैलगाडियो का महत्व गांवो में अधिक है इसका एक कारण यह भी है कि नगरों और गांवो के बीच उक्त सड़कों का अभाव है अस्तु मोटरें आदि इन पर नहीं चलाई जा सकतीं ।

ग्रामीण यातायात में बैलगाडियो का आर्थिक महत्व अधिक होने के कई कारण हैं :—

(१) बैलगाड़ियाँ गांवो मे ही जंगल द्वारा प्राप्त हुई लकड़ियों से गांव के कारीगरो द्वारा अपने फुरसत के समय बना ली जाती हैं । इनके बनाने में विशेष खर्च भी नही होता क्योंकि यदि गाड़ी का कोई भाग भी टूट जाता है तो वह आसानी से ही पुन. तैयार किया जा सकता है । गाडी बनाने मे आरम्भ मे अधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं पडती है क्योकि किसान अपने व्यर्थ के समय में देशी सामान से घरेलू धन्धे के बतौर इन्हे बनाया करते हैं और इस कार्य में इन्हें अपने परिवार के सदस्यो का भी सहयोग मिल जाता है ।

(२) गाडी रखने मे किसान या मालिको को अधिक खर्चा नही करना पड़ता क्योकि वह स्वयं ही गाडी चलाता है तथा उसके बैलो के लिए चारा आदि भी उसे अपने खेतो से मिल जाता है ।

(३) भारत मे गाड़ियों द्वारा प्रतिवर्ष १००० लाख टन से अधिक का सामान ढोया जाता है । गाडियो द्वारा यात्री भी असख्य सख्या मे लाये ले जाये जाते हैं । गाडियो आदि मे लगभग ३०० करोड रुपये की पूँजी लगी हुई मानी गई है जिसमे २०० करोड रुपयो की प्राप्ति तो प्रति वर्ष माल ढोकर ले जाने से ही हो जाती है । लगभग एक करोड व्यक्तियों और दो करोड पशुओं को काम मिलता है । इससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि गाडियों द्वारा देश को उतना ही आर्थिक लाभ होता है जितना रेलों द्वारा । राष्ट्रीय योजना आयोग का अनुमान है कि यदि प्रति वर्ष एक गाड़ी पीछे एक टन सामान ले जाया जाय और गाडी वर्ष मे १०० चक्कर लगावे तो भी कम से कम प्रति वर्ष मे ५० करोड टन से भी अधिक की पैदावार इस पुराने ढग की गाडियों द्वारा ढोई जाती होगी । यद्यपि वर्षा के दिनो मे जब गाँव की सड़कों पर कीचड आदि हो जाती है तो भी गाडियो द्वारा थोडा बहुत आवागमन तो रहता है और इस प्रकार प्रति वर्ष २,००० मील चल चुकती है तथा उससे ५०० करोड रुपये की आय होती है ।

(४) बैलगाडियों की बनावट इतनी सरल और सीधी सादी होती है कि उसकी तुलना किसी यान्त्रिक साधन से नही की जा सकती । टूटी सडकों पर गाडियाँ ही जा सकती हैं अस्तु भविष्य में भी गाडियो का चलन देश मे जारी रहेगा, इसमे कोई सशय नही किया जा सकता ।

इन गुणो के साथ-साथ गाडियों के कुछ अपने दोष भी है । जिन सडको पर गाडियाँ चलती हैं उन पर खड्डे तथा गडार सी पड जाती हैं, इससे सडकों की हालत बिगड़ जाती है क्योकि ये फिर मोटरें आदि चलाने के योग्य नही रहती । अस्तु, यह आवश्यक प्रतीत होता है कि गाडियो का महत्व अक्षुण्ण बना रहे तथा सडको की

---

7. **National Planning Committee's Report on Transport** (1948)

प्रदेश तथा बिहार और पश्चिमी राजस्थान के उत्तरी भागों में अधिक वर्षा के कारण सडकें बार-बार टूट जाती हैं।

१९४३ की नागपुर योजना के अनुसार भारत की सडको को चार श्रेणियों मे बांटा गया है राष्ट्रीय मार्ग जो देश की राजधानी को राज्यो के प्रमुख नगरो से जोडते हैं। इनका सम्बन्ध ब्रह्मा, नेपाल, तिब्बत और पाकिस्तान की सडको से भी है इनकी कुल लम्बाई १३,८०० मील है। (२) **राज्यकीय मार्ग** जो राज्य की मुख्य सडकें है। ये राष्ट्रीय एव निकटवर्ती राज्यो की सडको से मिली हैं। (३) **जिले की सड़कें**, जो जिले के विभिन्न भागो मे मंडियो तथा अन्य स्थानो से जोडती हैं। ये सडकें बडी सडकें और रेलो से भी मिली हैं। (४) **गाँव की सड़कें**, जो एक गाँव को दूसरे गाँव से जोडती हैं। ये प्राय: पगडण्डियाँ मात्र होती हैं।

नागपुर योजना के लक्ष्यो की तुलना में भारत मे सडक निर्माण मे इस प्रकार प्रगति की गई है :—

	पक्की सडकें (हजार मील)	कच्ची सडकें (हजार मील)
नागपुर योजना	१२३	२०८
१ अप्रैल, १९५१	९८	१५१
३१ मार्च, १९५६	१२२	१९८
३१ मार्च, १९५७	१२७	२०१
३१ मार्च, १९५८	१३३	२३५
३१ मार्च, १९६१	१४४	२५०

१९५८ मे भारत के लिए एक २० वर्षीय सडक-विकास योजना बनाई गई है जिसके अनुसार १९८०-८१ तक सडको की कुल लम्बाई ६५७,०००मील हो जायगी। इस योजना मे ५२०० करोड रुपये लगेंगे। योजना के पूर्ण हो जाने पर देश मे प्रति १०० वर्गमील पीछे सडको की लम्बाई ५२ मील हो जायगी। जबकि अभी यह केवल ३१ मील है। इसके अतिरिक्त —

(क) विकसित एव कृषि क्षेत्र का प्रत्येक गाँव पक्की सडक से ४ मील और अन्य सडक से १½ मील,

(ख) अर्द्ध-विकसित क्षेत्र का प्रत्येक गाँव पक्की सडक से ८ मील तथा अन्य सडक से ३ मील,

(ग) अविकसित एव कृषि विहीन क्षेत्र का प्रत्येक गाँव पक्की सडक से १२ मील और अन्य सडक से ५ मील से अधिक दूर न रहेगा।

भारत की प्रमुख सड़कें ये हैं

(१) **ग्राड ट्रंक रोड**—यह भारत की सबसे मुख्य सडक है। यह कलकत्ता से आसनसोल, बनारस, इलाहाबाद, अलीगढ, देहली, करनाल, अम्बाला, लुधियाना

अन्त में ५६८,३८४ मोटर गाड़ियों में से २४०,३७० व्यक्तिगत कारें, ५०,७६७ बसें, १८,१४८ मोटर कर्बें, २६,२६० जीप गाड़ियाँ, ६६,३६४ मोटर साइकिलें, ४,६६० ओटो रिक्शा तथा शेष विविध गाड़ियाँ थीं। मोटर बसों के वार्षिक यातायात का परिमाण ३,७७० करोड़ यात्री मील और मोटर ठेलो का ११४४ करोड टन मील आका गया है।[8] किन्तु वास्तविकता यह है कि भारत में मोटर गाड़ियों की सख्या अपर्याप्त है। प्रति १ लाख जनसख्या के लिये स० रा० अमरीका में ३८,०००; कनाडा मे २५,०००, आस्ट्रेलिया में २३,००० और लका में ६०० मोटर गाड़ियाँ हैं किन्तु भारत मे केवल ६० मोटरें हैं। इसी प्रकार प्रति मील सडक-पथ के लिये हमारे यहाँ १ मोटर गाड़ी है जबकि इगलैंड मे २५, सयुक्त राज्य मे २१, लका में, कनाडा मे ७ और फ्रास मे २ गाडियाँ हैं। इस पिछड़ेपन का परिणाम यह है कि इस समय हमारी मोटर चलाने योग्य सडकों की २० से ४०% तक क्षमता उपयोग मे नही आती अर्थात् भारत को अपनी सडकों पर पूर्ण उपयोग करने के लिले ४-५ गुनी अधिक मोटरों की आवश्यकता है।[10]

(४) सड़कें (Roads)

सभी थल मार्गों मे सडके सबसे प्राचीन हैं और विश्व के सभी भागों मे (ध्रुवीय क्षेत्रों को छोडकर) पाई जाती है। वास्तव मे सडकों के जन्म का मुख्य कारण पहिएदार गाडियो का प्रचलन ही है। जहाँ-जहाँ ये गईं वहीं सडकें भी बनाई जाने लगी। इनके बनने के पूर्व यातायात के लिए पगडडियाँ, खच्चरों और गाड़ियों के मार्ग ही थे। प्राचीन गाडी मार्ग मुख्यत. प्राकृतिक ही थे।

आधुनिक युग मे सडको का कितना महत्व है यह निम्न बातों से स्पष्ट होगा। किसी राष्ट्र के आर्थिक स्वास्थ्य को स्थिर और स्थायी रखने में सडकें वही काम करती है जो शरीर मे धमनी और शिरायें करती है। ये मनुष्यों, वस्तुओं और विचारों को देश के कौने-कौने तक पहुँचाती हैं। उत्पादन, विनियम और वितरण के सारे घटनाचक्र का सुचारु रूप से सचालन पर्याप्त और सुगम परिवहन द्वारा ही सम्भव है और सडकें इसका एक महत्वपूर्ण अग हैं। देश की उन्नति और समृद्धि, शिक्षा-दीक्षा, व्यक्तिगत सुरक्षा सामाजिक एकता एव समता, शाति, और सास्कृतिक विकास एक मात्र सडकों पर ही निर्भर हैं।

(१) सडकें एक ऐसी सुदृढ धुरी के समान हैं जिसके चारों ओर कृषि और कृषक तथा सारा गत्यात्मक ग्रामीण जीवन घूमता है। कृषि का विकास ही सडकों के विकास से सम्बद्ध है। अन्वेषणों से यह ज्ञात हुआ कि ग्रामीण क्षेत्रों मे पर्याप्त मात्रा में सडकें बनाने से कृषि भूमि की मात्रा में २५% की वृद्धि की जा सकती है।

(२) सडकें बनने से भूमि की उत्पादन क्षमता बढती है, जिसका प्रभाव मूल्यों पर पड़ता है। किसान अच्छे खाद, बीज और कृषि उपकरण सरलता से खरीद कर उपयोग मे ला सकता है और इसके द्वारा कृषि का स्वरूप ही बदला जा सकता

---

8. **India 1962**, p. 355.

9. **Reoprt of the Road Transport Reorganisation Committe**, 1959 p. 4.

10. *I. R. T. D. A.*, **Roads and Road Transport in India**, p. 21.

विश्व के विभिन्न देशों में विद्युत-रेलों का विकास-काल ११—

देश तथा उनमे रेलो का प्रथम निर्माण (वर्ष)	विद्युतीकरण किया गया (वर्ष)
ग्रेट ब्रिटेन (१८२५)	१८९०
स्वीडेन (१८५६)	१८९४
जर्मनी (पश्चिमी) (१८३५)	१८९५
स्विटजरलैंड (१८४४)	१८९९
फ्रान्स (१८३२)	१९००
इटली (१८३९)	१९०१
जेकोस्लोवेकिया (१८३९)	१९०३
बोलीविया (१८८९)	१९०५
सं० रा० अमेरिका (अलास्का सहित) (१८३०)	१९०५
जापान (१८७२)	१९०६
क्यूबा (१८३७)	१९०७
कनाडा (१८३६)	१९०८
हालैंड (नीदरलैंड्स) (१८३९)	१९०८
अर्जेंटाइना (१८५७)	१९०९
ब्राजील (१८५४)	१९१०
आस्ट्रिया (१८३८)	१९११
हंगरी (१८४६)	१९११
नार्वे (१८५४)	१९११
स्पेन (१८४८)	१९११
चिली (१८५१)	१९१६
आस्ट्रेलिया (१८५५)	१९१९
न्यूजीलैंड (१८६३)	१९२३
मैक्सिको (१८५०)	१९२४
भारत (१८५३)	१९२५
इन्डोनेशिया (१८६७)	१९२५
दक्षिणी अफीका (१८६०)	१९२६
रूस (१८३७)	१९२६
मोरक्को	१९२७
कोस्टा रीका (१८९०)	१९२९
बेल्जियम (१८३५)	१९३१
अल्जीरिया (१८६२)	१९३२
डेन्मार्क (१८४७)	१९३४
पोलैंड (१८४५)	१९३६
गणतंत्र कागो (१८९८)	१९५२
टर्की (१८५६)	१९५५

11. *Complied from the* **Directory of Railway Officials and Year Book**, 1956-57.

(१०) सडक परिवहन स्वतंत्र होता है । यदि एक मार्ग पर गाड़ी चलाना लाभदायक सिद्ध नही होता तो दूसरे मार्ग पर चलाई जा सकती है । गाड़ी द्वारा सेवा परिवर्तन की भी सुविधा रहती है । गाड़ी का उपयोग सवारियो के लिए तथा माल ढोने के लिए किया जा सकता है ।

(११) सडक की गाड़ियां पूर्ण सेवा देती हैं । इससे माल शीघ्र यथास्थान पहुँच जाता है और उसकी टूट-फूट और खराब होने की संभावना कम होती है ।

(१२) थोडी दूरी के लिए अपेक्षाकृत कम माल ले जाने के लिए सड़क सर्वोत्तम एव सस्ता साधन है । अमरीका मे जो गवेषणा की गई है उनसे ज्ञात हुआ है है कि थोड़े माल को, जिससे कि पूरा डिब्बा नही भरता, रेल से ले जाने मे लगभग ८ बार बदली और हस्तातरण करना पडता है जबकि उसी माल को मोटर ठेले से ले जाने में केवल ३ बार बदली करनी पड़ती है ।

(१३) रेल, जहाज और विमान केवल धनिक वर्गो के लिए उपयोगी हैं, किन्तु सड़कें अमीर-गरीब सभी के लिए समान रूप से लाभदायक है । विमान परिवहन विलास की वस्तु है, रेल और जहाज आराम की और केवल सडक परिवहन ऐसा है जिसे हम जीवन के लिए आवश्यक कह सकते हैं क्योंकि बिना सडक के किसी प्रकार का गमनागमन सभव नही है ।

सड़कों का विकास

भारत मे मोहनजोदड़ो और हडप्पा की खुदाइयो से सिद्ध हुआ है कि २००० ई० पूर्व भारतवासी चौडी और सुन्दर सडकें बनाना जानते थे जिन पर बैलगाड़ी और रथ चलाये जाते थे ।

मोहनजोदडो की मुख्य सडक ३३ फीट चौडी और अन्य सडके ९ से १२ फीट चौडी पाई गई है । गलियां ५ से १० फीट चौडी थी ।[११] इन सड़कों के दोनों ओर पानी के निकास के लिए पक्की नालियां बनी थी । ६०० ई० पूर्व राजा बिम्बसार द्वारा बनाई गई पहाडी सड़क के अवशेष पटना जिले मे मिलते है । भारतीय सडक निर्माण कला का विवरण शुक्रनीति और कौटिल्य के अर्थशास्त्र से मिलता है । शुक्रनीति के अनुसार उत्तम पुल युक्त कछुवे की पीठ के तुल्य ढालू, चिकनी और दृढ पक्की सडकें ककड और चूने से कूट कर बनाई जाती थी, जिनके बनाने मे राजा अभियुक्तो, कैदियो और गाँव के लोगो के श्रम का उपयोग करता था । चौडाई के अनुसार वे राजमार्ग उत्तम, मध्यम तथा निकृष्ट गिने जाते थे जो क्रमश ३० हाथ, २० हाथ और १५ हाथ होती थी । पुर और गाँवो के बाजारो की सडकें भी इतनी चौडी होती थी । नगरो और गाँवो की अन्य आन्तरिक सडकें १० हाथ, ५ हाथ और तीन हाथ चौडी हो सकती थी जिन्हे क्रमश मार्ग, वीथि अथवा पद्या कहते थे ।

कौटिल्य के अनुसार दो प्रकार की सडकें भारत मे मिलती थी . (क) नगर के आतरिक मार्ग, और (ख) नगर के बाहर के मार्ग । ये मार्ग इस प्रकार थे : (क) नगर के आंतरिक मार्ग—(१) राजमार्ग, जो १६ गज चौडे होते थे, (२) रथ्या, जो ८ गज चौडे होते थे, (३) रथ-पथ जो २½ गज चौडा होता था, (४)

---

11 *E. Mackay*, **Early Indus Civilization**, 1948, p. 19 and *Wheel, M.*, **Indus Civilization Supplement to Cambridge History of India**, 1953, p. 37.

चाहिए कि यातायात के साधन विशेषकर रेलें तथा सड़कें, न्यूनतम अवरोध का मार्ग ग्रहण करते है (Means of communication follow the path of least resistance)। पहाड़ी मार्गो में सड़कों का निर्माण कठिन और अत्यधिक खर्चीला होता है। केवल यही नहीं पहाडी मार्गो मे यातायात के साधन मोटर, रेल इत्यादि टूटते रहते हैं और मरम्मत में भी काफी खर्च पड जाता है। सामने पड़ने वाली ऊँची पहाड़ियो को सुरगें बनाकर पार करना पड़ता है, नदियों पर पुल बनाने पड़ते हैं और ढाल के सहारे गोलाकार (contour roads) मार्ग बनाये जाते हैं, जिससे चढाई या ढलाव हल्का हो। इस प्रकार सड़कों की लम्बाई बढ जाती है और निर्माण व्यय भी अधिक होता है। रेल मार्गों का निर्माण अत्यन्त मद ढालों पर ही सम्भव है। एक प्रतिशत ढाल पर (१०० पर १ फुट की चढान) रेल का इञ्जिन समतल भूमि पर जितना बोझ खींच सकता है उसका ½ भाग खीचा जा सकता है। उत्तरी अमेरिका में राकी पर्वतों को पार करने वाली गाड़ी को २.२% से अधिक ढाल पर नहीं चढना पड़ता। पीरू देश की एक रेल लाइन १५,८०६ फीट की ऊँचाई तक जाती है, ४% से अधिक ढाल कहीं भी नहीं है। रेल के इञ्जिन की कर्षण-शक्ति सबसे अधिक भूमि के ढाल पर भी निर्भर है। अतः सबसे कम ढाल पर ही रेल मार्ग बनाये जाते हैं। जिन स्थानों पर पर्वतों को पार करना आवश्यक हो जाता है वहीं सुरगे बनाई जाती हैं। भारत में इस प्रकार की सुरगें पश्चिमी घाट में मिलती हैं।

(२) जलवायु (Climate)—प्रारम्भिक काल में यातायात बहुत कुछ जलवायु से प्रभावित होता था। किन्तु अब यान्त्रिक यातायात जलवायु के प्रभाव से प्रायः मुक्त हो गया है। अधिक वर्षा वाले भागों की जमीन दलदली होती है इसलिए वहां रेलों और सड़कों के निर्माण मे बड़ी कठिनाई होती है। केवल यही नहीं इनकी रक्षा और मरम्मत करने में काफी खर्चा करना पडता है। बाढ मे सड़कें और रेलें उखड़ जाती हैं, पुल टूट जाते हैं और स्टेशन तक डूब जाते हैं। भारत में असम और बिहार राज्यों में, संयुक्त राज्य अमेरिका की मिसीसिपी की घाटी मे प्रायः इन बाढ़ो से यातायात मार्गों को बहुत हानि पहुँचती रहती है। गर्म लू वाले देशों में सड़कें और रेल रेत से ढक जाती हैं और अति शीत वाले देशों में इन पर बर्फ जमने से यातायात रुक जाता है। इसको साफ करने में व्यय भी बढ जाता है। इसी कारण रेगिस्तानों मे पक्की सड़कों या रेल मार्गों का अभाव रहता है। जापान मे उत्तरी द्वीपों और इंगलैंड मे सड़कों पर से बर्फ साफ करने के लिये भारी व्यय करना पड़ता है।

(ख) आर्थिक दशायें—अधिक उन्नत देशों मे भौगोलिक तत्वो का प्रभाव आर्थिक तत्वो के प्रभाव से अपेक्षाकृत कम होता है। प्रारम्भिक व्यय पर भौगोलिक तत्वों का प्रभाव अधिक होता है लेकिन उस मार्ग से प्राप्त होने वाले लाभ पर आर्थिक तत्वो का प्रभाव अधिक पड़ता है। आर्थिक दशाओं मे निम्नांकित बातें महत्वपूर्ण हैं :—

(१) जनसंख्या—जिन क्षेत्रों की जनसख्या घनी होती है वहाँ काफी यात्री व सामान उपलब्ध हो सकते हैं और उन क्षेत्रों में मार्गों का घनत्व भी अधिक होता है तथा उसी क्षेत्र से होकर अधिकतर मार्ग गुजरते हैं। अतएव जनसख्या का खिंचाव (Pull of the population) एक महत्वपूर्ण तत्व है। बहुधा रेलें व्यापारिक, धार्मिक और सैनिक केन्द्रों से होकर निकाली गई है जैसे पश्चिमी यूरोपीय भागों में।

(२) व्यापार—जिन क्षेत्रों में व्यापार का आयतन (Volume of trade)

नीवें भरी जाती थी। उनके ऊपर छोटे-छोटे पत्थर बिछाये जाते थे और फिर पत्थर के अत्यन्त बारीक टुकड़ों द्वारा उसका ऊपरी धरातल बनाया जाता था। मैकेडम ने बड़े-बड़े पत्थरो के स्थान पर छोटे पत्थर के टुकडो द्वारा सडकें बनाने का कार्य आरम्भ किया। उनका सिद्धान्त यह था कि छोटे पत्थर के टुकडो को भारी बेलन द्वारा कूट देने से सडक के धरातल को इतनी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह सड़कों से ढोये जाने वाले बोझ को सहन कर सकती है। इस प्रकार बनाई गई सडकें न केवल सस्ती बनती थी वरन् वे हल्की भी होती थी। आधुनिक सडकें बनाने मे यही सिद्धान्त काम मे लाया जाता है। अब ऊपरी धरातल कंक्रीट, तारकोल या सीमेंट की बनाई जाती है।"

विश्व मे सबसे अच्छी और पक्की सडकें उत्तरी अमरीका में पाई जाती है। कही-कही तो संयुक्त राज्य की सडकें यातायात-भार बढ जाने के कारण १०० से २०० फीट तक चौडी हैं। यहाँ सबसे पहले सडको का विकास ग्रामीण क्षेत्रों में किया गया। यहाँ सडको का समूह होता है जिसमें मुख्य सडकें शाखाओ में (Feeder Road) आकर मिलती है। यूरोप, जापान, चीन, भारत आदि देशो मे सड़कें रेलो के जाल को पूरा करती है।

विश्व मे कुल सडकों की लम्बाई ६,२२५ लाख मील मानी गई है जिसमे से १/३ संयुक्त राज्य मे है। इसके बाद रूस, जापान, कनाडा, आस्ट्रेलिया, फ्रास और जर्मनी का स्थान है।

नीचे की तालिका मे सड़को सम्बन्धी आकडे प्रस्तुत किये गये है :—

देश	सडको की लबाई मीलो मे प्रति वर्ग मील क्षेत्रफल पीछे	प्रति १ लाख जनसख्या पीछे	मोटर गाड़ियो की सख्या प्रति १ लाख जनसख्या पीछे
जापान	३'००	६६४	
इंगलैंड	२०२	३६२	५,५६०
फ्रास	१'८४	६३४	३,५६३
स० रा० अमरीका	१०२	२,४६६	२५,८०१
जर्मनी	०६५	२६०	—
इटली	०८६	२४७	—
भारत	०२२	७२	६३

भारत मे ३१ मार्च १६६१ को ३,६४,००० मील लम्बी सडके थी जिनमे से १४४ हजार मील पक्की (अर्थात् केवल ३६%) तथा शेष कच्ची (६४%) थीं। सड़कों की कुल लम्बाई का आधे से अधिक भाग दक्षिण के पठार पर पाया जाता है क्योंकि वहाँ धरातल मजबूत है तथा सडकें बनाने के लिए पत्थर-कंकड़ बहुतायत से मिलते हैं। जबकि उत्तरी भारत मे राजस्थान, मालवा का पठार, मध्य प्रदेश और असम में अधिकाश सडकें कच्ची हैं क्योंकि इन भागों में पत्थर की कमी है। उत्तर

देशों की तो रेलें जीवन ही हैं क्योंकि (१) पहाड़ी प्रदेशों से लेकर मैदानी भागों तक लगभग सभी जगह रेलवे लाइनें बनाई जा सकती हैं।

(२) सड़कों की भांति रेलें स्थल के किन्हीं दो स्थानों तक सम्भवतः नहरों की अपेक्षा कम व्यय से बनाई जा सकती हैं किन्तु सड़कों की अपेक्षा इनका व्यय अधिक पड़ता है। भारत में एक मील रेल पथ बनाने में ८५,००० रु० व्यय होते हैं।

(३) नलों को छोड़कर अन्य सभी साधनों से रेलें ऋतु परिवर्तन से कम प्रभावित होती हैं। न सड़कें और न हवाई मार्ग ही इतने सुरक्षित होते हैं और न इतने भरोसे वाले जितनी कि रेलें। अधिक वर्षा, आंधी व कुहरा के कारण मोटरों और विमानों को अपना कार्य-क्रम बदलना पड़ता है। इसके विपरीत रेलें प्रायः निरन्तर काम करती रहती हैं।

(४) अधिक माल के लिए रेलों की अपेक्षाकृत कम चालक शक्ति की आवश्यकता होती है।

(५) अधिक मात्रा में यातायात ले जाने के लिए रेलें सभी साधनों से सर्वोपरि हैं। लम्बी और भारी रेलगाड़ियाँ सुविधापूर्वक सचालित की जा सकती हैं।

(६) बड़े आकार की किन्तु सस्ती वस्तुओं (खाद्यान्न, रुई, जूट, तिलहन एवं अन्य औद्योगिक कच्चे पदार्थ) तथा दूरवर्ती (सामान्यत. १५० मील से अधिक) ।ए ।.न के लिए रेलें अद्वितीय साधन हैं।

किन्तु रेलों का उपयोग अभी तक देश के भीतरी व्यापार के लिए ही हो सका है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उनका महत्व कम है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए वह केवल सहायक मार्गों का काम देती है। इसके दो मुख्य कारण हैं—प्रथम, रेलों द्वारा माल ले जाने में जहाजों की अपेक्षा अधिक व्यय होता है। दूसरे, भिन्न-भिन्न देशों में रेलों की पटरियों के बीच की दूरी से भी भिन्नता होती है जिससे माल को उतारने चढ़ाने में कठिनाई पड़ती है। इस प्रकार यूरोप में ही रूस की पटरियों की चौड़ाई ५ फुट है, स्पेन और पुर्तगाल की ५ फुट ५½ इंच तथा अन्य यूरोपीय देशों में ४ फुट ८½ इंच की चौड़ाई है। यद्यपि कई फ्रांसीसी लाइनों की चौड़ाई ४ फुट ६ इंच है। कुछ समय पूर्व से ही यूरोपीय लाइनों की चौड़ाई एक सी कर दी गई है जिससे अब पेरिस से मास्को तथा अन्य बड़े नगरों तक रेल बिना बदले ही यात्रा सम्भव हो गई है। भारत में भी सभी जगह रेल पटरियों के बीच की दूरी समान नहीं है। आँधी आदि के डर से बचने के लिए यहाँ की रेलें अंग्रेजी रेलों से अधिक चौड़ी बनाई गई हैं। इसमें बीच की पटरियों की दूरी ५ फुट ६ इंच है। इसे बड़ी लाइन (Broad Gauge) कहते हैं। इसके अतिरिक्त मीटर गॉज (Meter Gauge) में पटरियों की दूरी ३ फुट ३⅜ इंच है। अधिक चढ़ाई के स्थानों और बहुत ही कम व्यापार वाले स्थानों में तङ्ग गॉज वाली (Narrow Gauge) रेलवे लाइन खोली गई हैं जिसमें पटरियों के बीच की दूरी २ या २½ फुट ही रखी गई है।

नीचे की तालिका में विश्व के प्रमुख देशों में रेलों के गॉज बताये गये हैं :—

होती हुई अमृतसर तक जाती है। आगे यह लाहौर, नजीराबाद इत्यादि नगरों मे होती हुई पेशावर तक पाकिस्तान देश में जाती है।

(२) **कलकत्ता मद्रास रोड**—यह सडक कलकत्ता से सम्बलपुर, रायपुर, विजयानगरम, विजयवाड़ा, गन्तूर होती हुई मद्रास तक गई है।

(३) **बम्बई आगरा रोड**—यह सड़क बम्बई से नासिक, इन्दौर, ग्वालियर होती हुई आगरा तक जाती है। इसको ग्राड ट्रक रोड में मिलाने के लिये आगरा से अलीगढ तक सड़क बनी है।

(४) **ग्रेट डेकन रोड**—यह सडक मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश) से जबलपुर, नागपुर होती हुई हैदराबाद तक और उससे आगे बगलौर होती हुई कुमारी अतरीप तक गई है। नागपुर से छोटी-छोटी सड़को द्वारा इसको दक्षिणी भारत की अन्य बडी सडकों से जो बम्बई कलकत्ता का जाती हैं, मिला दिया गया है। इसी प्रकार मिर्जा-पुर मे एक छोटी सडक द्वारा इसे माधोसिंह के समीप ग्राड ट्रक रोड से मिलाया गया है।

(५) **बम्बई कलकत्ता रोड**—यह सडक कलकत्ता से सम्बलपुर, रायपुर, नागपुर, धूलिया होती हुई आमलनेर स्थान पर बम्बई आगरा रोड से मिल जाती है। नागपुर पर यह सड़क ग्रेट डेकन रोड से मिलती है।

(६) **मद्रास बम्बई रोड**—यह सड़क मद्रास से बंगलोर, बेलगाँव, पूना होती हुई बम्बई गई है।

(७) **पठानकोट जम्मू रोड**—यह सड़क पठानकोट से जम्मू तक जाती है। वहाँ से इसका सम्बन्ध श्रीनगर जाने वाली सडक से है। यह सड़क देश विभाजन के बाद काश्मीर से सम्बन्ध करने के लिए बनाई गई है।

(८) **गोहाटी चेरापूँजी रोड**—यह सड़क भी विभाजन के बाद ही गोहाटी से शिलाँग होती हुई चेरापूँजी तक के लिये गई है।

अन्य सड़कें ये हैं :—

(१) पूर्णिया—दार्जिलिंग, (२) बरेली-नैनीताल-अल्मोडा, (३) अम्बाला-शिमला; (४) पठानकोट-कुल्लू, (५) मनीपुर-कोहिमा-इम्फाल-सिल्चर; (६) देहरादून-मसूरी; (७) पठानकोट-डलहौजी, (८) मद्रास-कोजीखोड; (९) मद्रास-त्रिवेन्द्रम; (१०) अहमदाबाद-काघला; (११) लखनऊ-मिर्जापुर-बरौनी, (१२) दिल्ली से अजमेर, उदयपुर होती हुई अहमदाबाद तक; (१३) आगरा-जयपुर-बीका-नेर; (१४) अजमेर-चित्तौड़-इंदौर, (१५) अम्बाला-तिब्बत; (१६) शोलापुर-चित्तलदुर्ग; (१७) जबलपुर-भोपाल आदि।

५. रेल मार्ग (Railways)

रेलों का विकास सडको के बहुत बाद हुआ है। प्रथम रेल मार्ग का निर्माण १८३५ ई० में इगलैड मे हुआ था जब पहली रेलगाड़ी मानचेस्टर से लिवरपूल के लिए रवाना हुई और जिसके चालाक उसके निर्माता स्वयं जार्ज स्टीफैंसन थे किन्तु तब से रेल मार्गों ने विश्व के सभी देशों में बड़ी प्रगति की है।

गॉज	दो पटरियो के बीच की दूरी	देश जहाँ इस गॉज की रेलें पाई जाती हैं
(२) स्टेन्डर्ड गॉज (Standard Gauge)	(१) ४ फुट ८½ इच (२) ४ ,, ९½ ,,	ब्रिटेन, सं० रा० अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, चीन, मिस्र, जर्मनी, इटली, फ्रास, बेलजियम, नीदरलैण्ड, पोलैंड, नार्वे, स्वीडेन, यूनान, हगरी, जैकोस्लोवाकिया
(३) छोटी लाइन (Meter Gauge)	(१) ३ फुट ६ इच (२) ३ ,, ३⅜ ,,	द० अमेरिका, आस्ट्रेलिया, भारत, पाकिस्तान, बर्मा, मलाया, थाइलैंड, फ्रास
(४) तग गॉज (Narrow Gauge)	(१) २ फुट ६ इच (२) २ ,, ० ,,	भारत, पाकिस्तान, चिली, भारत, द० अफ्रीका सघ

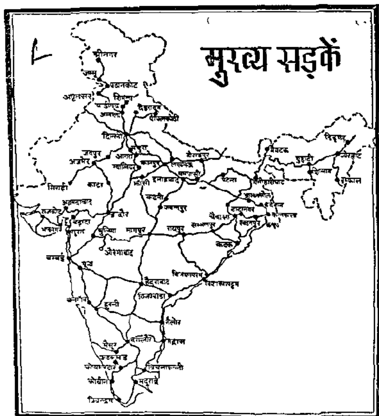
रेलें प्रथमतः कुछ भागो मे युद्ध सम्बन्धी कारणो से ही बनाई गई थी। व्यापार का विकास तो उनके द्वारा बाद को हुआ। यूरोप की रेलें इसी प्रकार की हैं। ऐसी रेलो की मुख्य विशेषता यह है कि केन्द्रीय (radial) होती हैं अर्थात् देश की राजधानी से चारो ओर सीमा तक जाती हैं। इस प्रबन्ध से सरकार को देश की रक्षा के लिये सैनिक सामान की पूर्ति करने तथा सेनाएँ भेजने मे सहायता मिलती है। परन्तु इसी व्यवस्था के कारण राजधानी मे व्यापार का प्रभाव भी होने लगता है और अन्त मे व्यापार मार्गो की एक बहुत बडी सख्या बन जाती है। इस प्रकार व्यापार बढने से इन रेलो की युद्ध-उपयोगी विशेषता छिप जाती है और वे अन्य व्यापारिक रेलो की भाँति देश की सेवा करने लगती हैं।

उत्तरी अमेरिका मे रेलें आवश्यकीय रूप से व्यापारिक (Commercial) हैं अतएव वे आयताकार है। यह आयताकार नमूना बडी झीलो के प्रतिनिवेश मे एक केन्द्रीय हो जाता है। झीलो पर बहुत अधिक मात्रा मे सामान लाया ले जाया जाता है। इस सामान को लेने के लिये रेलें झील के बन्दरगाह को जाती है।

रेलो का जाल पश्चिमी यूरोप और स० रा० अमरीका मे विशेष रूप से बिछा पाया जाता है जबकि अन्य महाद्वीपों मे इनका अभाव पाया जाता है। एशिया मे रेलो का सबसे उत्तम विकास भारत, चीन, पाकिस्तान, जापान मे तथा पूर्वी आस्ट्रेलिया मे हुआ है। जबकि मरुस्थलीय पहाडी अथवा दलदली और वन प्रदेशो मे आज भी रेल मार्गो का अभाव है। इसके मुख्य उदाहरण मध्य अफ्रीका, आस्ट्रेलिया के गर्म मरुस्थल, टुड्रा के शीत मरुस्थल, और हिमालय, रॉकी, एण्डीज तथा मध्य एशिया के अन्य पहाड़ी भाग हैं। उत्तरी अमेरिका में अटलाटिक तट से प्रशात महासागर के तट तक या यूरोप मे मास्को से प्रशान्त महासागर के तट पर ब्लाडीवोस्टक तक जाने वाली रेल **महाद्वीपीय रेल** (Trans-Continental Railways) कहलाती हैं। प्राय सभी महाद्वीपों मे महाद्वीपीय रेलें पाई जाती हैं।

रेल मार्गों को प्रभावित करने वाली दशायें—रेल मार्गों को प्रभावित करने वाली परिस्थतियो को तीन भागों मे बाँटा जा सकता है—

(क) भौगोलिक, (ख) आर्थिक, और (ग) राजनीतिक।



चित्र १६८. भारत की मुख्य सडकें

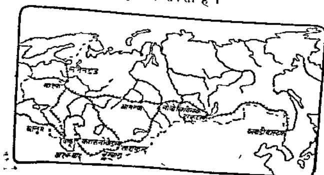
(क) **भौगोलिक दशायें**—वैसे साधारणतया सडकों और रेल मार्गों को प्राय. बिल्कुल सीधी होना चाहिए क्योंकि ज्यामितीय नियमानुसार किन्ही भी दो बिन्दुओ के बीच की कम-से-कम दूरी एक सीधी रेखा द्वारा ही हो सकती है। इस सीधी रेखा का उल्लंघन भौगोलिक परिस्थितियो के कारण करना पडता है। भौगोलिक दशाओ में दो मुख्य हैं:—

(१) **धरातली बनावट** (Topography)—धरातली बनावट का थल मार्गों पर बडा गहरा प्रभाव पड़ता है। मैदानी भागो मे तो मार्ग सीधे चलते है लेकिन रुकावट पडते ही उनको मुडना पड़ता है जिससे मार्ग की लम्बाई और दो स्थानों के बीच की दूरी बढ जाती है। इस विषय मे इस सिद्धान्त को ध्यान मे रखना

इण्डोनेशिया	३७२७	५५	७७
इटली	११२१०	४२९७	७९२३
जापान	१४११३	६६१८	९१३७
मैक्सिको	१४४९८	७९	१००
न्यूजीलैंड	३४८९	७१	१६७
दक्षिणी अफ्रीका	१३५८५	८६१	१७४९
स्पेन	८१७०	१२०१	अप्राप्य
स्वीडेन	१००६३	४३३१	६७४९
स्विटजरलैंड	३०८२	२९५३	४३७१
रूस	७४७५३	३४३०	अप्राप्य
स० रा० अमेरिका (अलास्का सहित)	१२१६६६	२०४४	५३६८

प्रमुख रेल मार्ग

(१) ट्रॉन्स साइबेरियन रेल-मार्ग (Trans-Siberian Railway)—यह रेल मार्ग ससार का सबसे लम्बा अन्तर-महाद्वीपीय रेल मार्ग है। इस रेल मार्ग के द्वारा न केवल लेनिनग्राड और मास्को ब्लाडीवोस्टक से जुड़े हैं बल्कि पेरिस भी ब्लाडीवोस्टक के साथ मास्को होते हुए जुड़ गया है। इस प्रकार यूरोप का सीधा सम्पर्क प्रशान्त महासागरीय देशों के साथ इस रेल मार्ग द्वारा हो गया है। स्वेज मार्ग के साथ इस मार्ग की कोई तुलना नही हो सकती। एशिया के पूर्वी देशों और यूरोपीय देशो के बीच सामुद्रिक मार्ग द्वारा ही सीधा सम्पर्क स्थापित रहता है। जहाँ तक समय का प्रश्न है ट्रास साइबेरियन रेल मार्ग सामुद्रिक मार्ग से अच्छा है क्योकि लन्दन से जापान तक जाने मे जल यातायात मे छ: सप्ताह लेकिन रेल यातायात मे केवल दो सप्ताह लगते हैं। परन्तु व्यापारिक वस्तुओ के आयतन के विचार से रेल मार्ग सामुद्रिक मार्ग की तुलना नही कर सकता है।



चित्र १७०. ट्रास साइबेरियन रेल मार्ग

अधिक होगा वहाँ यातायात मार्गों की अधिक आवश्यकता पड़ेगी। ऐसे क्षेत्रो मे अधिक से अधिक आय हो सकती है और यातायात का विकास भी निरन्तर होता रहता है। ऐसे क्षेत्रो में मार्गो की प्रचुरता तो रहेगी ही, साथ ही उनकी कार्य कुशलता को प्रोत्साहन मिलता रहेगा।

(३) औद्योगिक उन्नति—औद्योगिक विकास के लिए सामान का गमनागमन अत्यावश्यक है। इसलिए अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्रो मे मार्गो का विकास भी अधिक होता है। इसी कारण संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी और यूरोप के उत्तरी पश्चिमी क्षेत्रों मे रेल मार्गों का घनत्व संसार भर में सबसे अधिक है।

(ग) राजनीतिक दशायें—राजनीतिक तत्व का प्रभाव भी रेल मार्गों पर गहरा पड़ता है। प्राचीन समय मे भी शासन सम्बन्धी कार्यों की सफलता और राष्ट्रीय एकता को प्राप्त करने में यातायात के महत्व को प्रत्येक राज्य समझता था। रोम को साम्राज्य के पृथक भागो से मिलाने के लिए एक विस्तृत मार्ग का निर्माण किया गया था और कहावत भी है सारे मार्ग रोम को जाते हैं (All roads lead to Rome)। प्रो० मूडी के कथनानुसार रोमन साम्राज्य के पतन के कई कारणों मे मार्गों की बुरी दशा भी एक प्रमुख कारण था। राजनीतिक दशाओं में दो दशायें मुख्य हैं :—

(१) शासन कार्य—रेल या सड़को द्वारा किसी राज्य के भिन्न-भिन्न भाग राजधानी से मिले रहते है जिससे शासन कार्य ठीक होता रहता है। पहाड़ी राज्यो जैसे नेपाल और काश्मीर मे सड़को के अभाव मे दैनिक शासन कार्य भी ठीक नही हो पाता है। कोरिया, जैसे दूर देश मे अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस आदि मित्र राष्ट्रो द्वारा युद्ध मे भाग लेना रेल मार्गो की सुविधा द्वारा ही सम्भव हो सका। भारत मे रेलो का निर्माण राजनीतिक कारणो से ही हुआ था। संयुक्त राज्य अमरीका मे यूनियन प्रशांत व अन्य रेलें, रूस मे ट्रांस-साइबेरियन, अफ्रीका की केप से काहिरा तक तथा जर्मनी की बर्लिन से बगदाद तक की रेल योजनाओ के पीछे संभवत राजनीतिक दृष्टि से सुरक्षा ही प्रमुख उद्देश्य रहा है।

(२) राष्ट्रीय एकता—छोटे-छोटे राष्ट्र से लेकर बड़े-से-बड़े राष्ट्र तक के लिए यह आवश्यक है कि सारे भाग एक दूसरे से मिले रहे। इस प्रकार राष्ट्रीय एकता की भावना जाग्रत रहेगी। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रूस के पूर्वी और पश्चिमी तटीय भागो को मिलाने मे ट्रांस महाद्वीपी रेलें बहुत सहायक हुई हैं। ऐसे ही मार्गों द्वारा सारे देश मे विचार और सामान का निरन्तर आदान-प्रदान होता रहता है और एकता का विचार पनपता रहता है।

रेलों के प्रारम्भिक विकास को अनेक दशाओं ने प्रभावित किया है। कुछ क्षेत्रो मे औद्योगिक विकास तथा अन्य मे कृषि की उन्नति ने इनके प्रसार को बढ़ाया है जैसे ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमरीका मे। रूस और भारत जैसे देशो मे इनका विकास आरंभ में सैनिक दृष्टि से ही किया गया था। फ्रांस मे भी रेलो का विकास राष्ट्रीय सीमाओ की रक्षार्थ किया गया था।

रेलों की विशेषतायें

रेलें यातायात का सबसे महत्वपूर्ण साधन हैं। औद्योगिक विकास मे बढ़े हुए

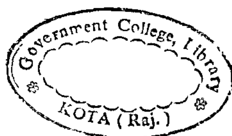
यात्री को दोनो ओर सूनसान प्रदेश दिखाई देता है और बीच-बीच मे धातुओं की खानें भी मिलती हैं। यह जन-विहीन इलाका है। चीता मे इस रेल की एक शाखा आमूर नदी के सहारे-सहारे उत्तर की ओर चलकर खावारोस्क पहुँचती है जहाँ से एकदम दक्षिण की ओर मुड़कर ब्लाडीवोस्टक पहुँचती है। दूसरी शाखा चीता से सुङ्गारी नदी के मैदान में स्थित हारबिन होती हुई ब्लाडीवोस्टक पहुँचती है। हारबिन से रेल मे प्रचुर मात्रा मे सोयाबीन भेजी जाती है। कोयला, समूर और धातुएँ भी लदती हैं। हारबिन और चीता के बीच सिगन की ऊँची पहाड़ी श्रेणियाँ हैं जो खनिज पदार्थों के भण्डार हैं। दक्षिणी शाखा का निर्माण सन् १८९६ के चीन रूस समझौते के अनुसार हुआ था जिससे चीता ब्लाडीवोस्टक तक का मार्ग काफी छोटा हो गया है। यह शाखा, जैसा कि मानचित्रो से स्पष्ट है अत्यन्त घनी खेतिहर प्रदेशों से होकर गुजरती है जहाँ से भारी व्यापार होता है।

इस रेल मार्ग के निर्माण के पूर्व साईबेरिया केवल कुछ फर एकत्रित करने वाले खानाबदोश पशु चराने वाले और राजनीतिक कारणो से निर्वासित लोगों का घर था लेकिन इस रेल मार्ग द्वारा हजारो व्यक्ति बेकाल झील तक फैले काली मिट्टी के प्रदेश मे बस गए। इसी रेल मार्ग द्वारा साईबेरिया का गेहूँ, मक्खन, पनीर, चर्बी, मास, चमड़ा, ऊन, फल चीनी, चाय और रेशम पश्चिमी रूस को भेजे जाते हैं। १९३० के बाद धातु सम्पत्ति का व्यापक शोषण होने से नोवोसिविरस्क, कुजनेटस्क, खावारोवस्क और कोमोसोमलस्क आदि प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्रों का जन्म हुआ है। इसी रेल मार्ग के द्वारा पूर्वी और मध्य साईबेरिया के बीच कृषि और कारखाना उद्योगो मे एक प्रकार का सतुलन कायम हो सका है जिससे साईबेरिया के कच्चे माल को कई हजार मील दूर यूरोपीय रूस के औद्योगिक क्षेत्रो को पहुँचने की कोई आवश्यकता नही रह गई है। राष्ट्रीय सुरक्षा मे भी इस रेल मार्ग का एक बड़ा हाथ है। प्रारम्भ मे इसे फौजी आवश्यकता के लिये बनाया गया था जिससे फौज राजधानी से साईबेरिया के दूर देशो को आसानी से भेजी जा सके। युद्ध के समय सुरक्षा के महत्व का एक और पहलू सामने आया। सन् १९४५ मे इसी रेल मार्ग के द्वारा लाखो रूसी सैनिक अपनी विशाल रसद के साथ मास्को क्षेत्र से मचूरिया की ओर गये। साईबेरिया के मध्यवर्ती देशो का आर्थिक विकास और राजनैतिक एकता की भावना का उदय पूर्ण रूप से इसी रेल मार्ग पर निर्भर है। अत रूसी सरकार द्वारा इस मार्ग निर्माण पर खर्च किया गया २० करोड पौंड का व्यय एक सर्वथा उपयुक्त व्यय है।

(२) ट्रांस कास्पियन रेल मार्ग (Trans-Caspian Railway)—यह रेलवे मध्य-एशिया को रूस से मिलाती है। आशा है कि भविष्य मे यह लाइन दोनो ओर बढा दी जायगी और इस प्रकार यूरोप व भारत मे रेल-सम्बन्ध स्थापित हो जायगा। कास्पियन सागर पर स्थित क्रैस्नोवोडस्क नगर से चलकर यह लाइन तुर्किस्तान के कपास उगाने वाले प्रदेश के मध्य तक पहुँचती है। क्रैस्नोवोडस्क ताशकन्द होकर मास्को से मिला हुआ है। इस प्रकार यह रेलवे लाइन तुर्किस्तान की कपास को मिलो तक पहुँचाने मे सहायता करती है।

(३) सूद एक्सप्रेस रेल मार्ग (Sud Express)—यह रेलवे फ्रास के पश्चिमी निम्न प्रदेश से होकर बोर्डो नगर जाती है जो शराब बनाने का बड़ा केन्द्र है। इसके बाद यह रेलवे पिरेनीज के पश्चिमी भाग से होकर स्पेन की राजधानी

गॉज	दो पटरियों के बीच की दूरी	देश जहाँ इस गॉज की रेलें पाई जाती है
(१) बड़ी लाइन (Broad Gauge)	(१) ५ फुट ६ इंच	भारत, पाकिस्तान, लङ्का ब्राजील, चिली, अर्जेन्टाइना
	(२) ५ ,, ५$\frac{3}{4}$,,	स्पेन, पुर्तगाल
	(३) ५ ,, ३ ,,	आस्ट्रेलिया, आयर
	(४) ५ ,, ० ,,	रूस

















चित्र १६८. विश्व के प्रमुख देशों में रेल मार्गों की तुलनात्मक लम्बाई

रेल से यात्रा करने मे कई देशो से होकर जाना पडता है। पेरिस से यह रेलवे लाइन मार्न नदी के साथ-साथ जाती है और फिर सवर्न दर्रे से होकर जो वोसजेज पहाडियों के उत्तर में है, स्ट्रॉसबर्ग पहुँचती है। यह नगर राइन नदी की घाटी में एक सुरक्षित स्थान पर स्थित है। इसके आस-पास गेहूँ तथा अगूर की खेती अच्छी होती है। इसके उपरान्त यह रेलवे लाइन राईन नदी को पार करके ब्लैक फोरेस्ट के उत्तर मे होकर जाती है। यहाँ से यह रेल जर्मनी के दक्षिण मे बवेरिया के पठार पर आती है। वहाँ प्राय डैन्यूब नदी की घाटी म होकर जाती है। वहाँ म्यूनिच नगर डैन्यूब की सहायक इन नदी पर स्थित है।

बवेरिया के पठार को पार करने के बाद यह रेलवे लाइन आस्ट्रिया मे प्रवेश करती है और वीयना जाती है। यह रेलो का बडा जङ्कशन तथा आस्ट्रिया की राजधानी है। यहाँ से यह रेलवे लाइन डैन्यूब नदी के साथ-साथ हङ्गरी के मैदान मे जाती है और बुडापेस्ट नगर जाती है। हङ्गरी के मैदान में डैन्यूब नदी के बाढ़ के कारण यह नगर ऊँचाई पर बसाया गया है। बुडापेस्ट से डैन्यूब नदी दक्षिण पूर्व को मुड़ती है। रेलवे लाइन भी उस नदी के साथ-साथ मुड जाती है और बेलग्रेड नगर जाती है। (जो यूगोस्लाविया की राजधानी है तथा डैन्यूब और सेव नदी के सङ्गम पर स्थित है) यहाँ से यह रेल मोरावा नदी की घाटी मे हो कर जाती है जो दक्षिण से आकर डैन्यूब मे मिलती है। इस घाटी मे निस रेलवे स्टेशन है। यहाँ से यह रेल बलगेरिया मे जाकर सोफिया पहुँचती है। इसके बाद यह रेल बालकान तथा रोडोप पर्वतो के बीच स्थित रोमेलिया के मैदान मे जाती है। यहाँ मरीतजा नदी बहती है। इस नदी के साथ-साथ रेल एड्रियानोपेल होती हुई यूरोपीय टर्की मे होकर इस्तम्बूल पहुँचती है जहाँ बासफोरस जलडमरूमध्य मारमोरा तथा काला सागर को मिलाता है।

(७) कैनाडियन पैसिफिक रेल मार्ग (Canadian Pacific Railway)—इस रेल मार्ग का निर्माण सन् १८८५ मे पूरा हुआ। यह कनाडा का महत्वपूर्ण रेल मार्ग है। इसकी कुल लम्बाई १७,००० मील है लेकिन केवल मुख्य शाखा की लम्बाई ३,५०० मील है। यह रेल मार्ग कनाडा के पूर्वी अटलाटिक सागरीय बन्दरगाहो को पश्चिमी प्रशान्त महासागरीय बन्दरगाहो से मिलाता है। इसकी मुख्य शाखा न्यू ब्रसविक मे स्थित सैंट जॉन बन्दरगाह से प्रारम्भ होती है। पश्चिम को ओर सयुक्त राज्य की मेन रियासत को पार करती हुई रेल माट्रियल पहुँचती है। इस नगर में रेल और नदी यातायात का मिलन होता है। कनाडा के प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र होने के कारण इसका महत्व काफी बढ गया है। इस नगर के पास ही रेल मार्ग सेन्ट लारेन्स नदी को पार करता है और कनाडा की राजधानी ओटावा को पहुँचता है। ओटावा नदी की खाडी मे फलो के बगीचे दिखाई पडते है और ओटावा कागज, लुग्दी, लकडी चीरने आदि के हल्के उद्योग हैं। ओटावा के बाद गाडी ओटावा नदी की घाटी मे नदी के सहारे-सहारे पश्चिम की ओर घाटी के सिरे पर स्थित सडबरी नगर मे पहुँचती है, जो खनिज पदार्थो का एक बडा केन्द्र है।

यहाँ से रेल मार्ग ओंटेरिया के ऊँचे पठार पर चलता है। यह पठार जनविहीन है और इस भाग मे स्टेशनो की सख्या काम तथा स्टेशन छोटे-छोटे है। पठारी भाग को पार करने के बाद रेल मार्ग सुपीरियर झील के पश्चिमी तट पर स्थित बन्दरगाहों फोर्ट विलियम और फोर्ट आर्थर को पहुँचता है। इन दो बन्दरगाहो को इसी रेल मार्ग द्वारा प्रेरी का गेहूँ और मेसाबी श्रेणी की लोहा धातु प्राप्त होती है,

प्रमुख महाद्वीपीय-रेल मार्गों की लम्बाई इस प्रकार है —

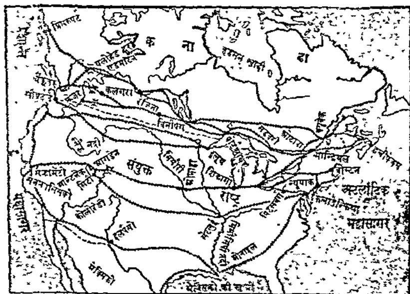
(१) चेलियाबिस्क ब्लाडीबोस्टक .... ४,०६४ मील
(२) लिस्बन से ब्लाडोबोस्टक ... . ८,४६६ ,,
(३) न्यूयार्क से न्यू आर्लियन्स .... ३,६०६ ,,
(४) न्यूयार्क से सैनफ्रासिस्को (द० प्रशात रेल मार्ग) ... ३,४७५ ,,
(५) न्यूयार्क, सैंट लुइस और लॉस एजिल्स तक (जिसे सैंटाफे और द० प्रशान्त रेल मार्ग भी कहते हैं) ... ३,७१२ ,,
(६) हैलीफैक्स से वैंकूवर (कैनेडियन पैसेफिक रेलवे) .... २,७६८ ,,
(७) ब्रिस्बेन से मेलबार्न (आस्ट्रेलियन तटीय रेलवे) २,५०० ,,
(८) ट्रास-अमेरिकन रेलवे-लोबिटो की खाडी से अगोला और मोजम्बिक तक ... २,६७० मील
(९) ओरियंट एक्सप्रेस-पेरिस से बुखारेस्ट ... १,६७८ ,,
(१०) सिम्पलन ओरियेंट एक्सप्रेस-पेरिस से इस्तम्बूल ... १,८६२ ,,
(११) ट्रास एण्डियन रेलवे ब्यूनेस आयरेस से वॉलपैरेजो ८८७ ,,
(१२) ट्रास इरानियन रेलवे ... ... ८७५ ,,
(१३) हैदरापाशा-रेलवे इस्तमबूल से बगदाद-बसरा तक १,५०० ,,

विश्व के प्रमुख देशों में रेल मार्गों की लम्बाई निम्न प्रकार है —

रेल मार्ग (मीलों में) १९६१

देश	कुल रेल मार्गों की लम्बाई	विद्युत रेल मार्गो की लम्बाई	विद्युत पटरियों की लम्बाई
अर्जेन्टाइना	२७२७३	८८	२०६
आस्ट्रेलिया	२६५६२	३६८	९७७
बेल्जियम	३०६३	३१२	८५६
कनाडा	४३१३२	३१	८७
चीन	१६७०८	—	—
डेनमार्क	२२३६	३७	८१
फ्रास	२५२२३	३०९०	५८८१
जर्मनी (पश्चिमी)	२२८७८	१३२६	३५०१
ग्रेट ब्रिटेन	१९४७०	११७२	३१५८
हॉलैंड (नीदरलैण्ड)	१९७५	८२८	१९८९
हंगरी	५०२९	२३१	६५६
भारत	३४७०५	२४०	५७६

पशु माँस और चमडे के लिए चराये जाते है। यह भाग हल्का आबाद दिखाई पड़ता है। चैने के बाद रेल मार्ग राकी पर्वत के उच्च पर्वतीय भाग मे चलता है। यही इवान्स दर्रे के द्वारा रेल राकी पर्वत को पार करती है और साल्टलेक भील के पूर्वी तट पर स्थित साल्टलेक सिटी को पहुँचती है। इसके बाद रेल मार्ग साल्टलेक रेगिस्तान को पार करके सिरानेवादा श्रेणी पर चढती है। इसको पार करने के बाद टासो भील के अन्तर स्थित कारसन नगर को पार करके रेल घनी और हरी-



चित्र १७२ संयुक्त राज्य के प्रमुख रेल मार्ग

भरी सेक्रेमेन्टो घाटी मे उतरती है। यही केलीफोर्निया की प्रसिद्ध घाटी है। इस घाटी का प्रमुख केन्द्र सेक्रेमेन्टो है। इस घाटी मे भूमध्यसागरीय फलों के विस्तृत बगीचे पाये जाते हैं। यहाँ से रेल सेनफ्रासिस्को पहुँचती है जो प्रशान्त महासागरीय तट पर इस रेल मार्ग का अन्तिम स्टेशन है। इस रेल मार्ग की अन्य कई शाखायें हैं। इनमे से दो शाखायें मुख्य हैं. (अ) शिकागो से मिसीसिपी-मिसूरी संगम स्थित सेन्ट लुई तक और (ब) बफेलो नगर होती हुई अप्लेशियन पर्वत माला को पार करती हुई न्यूयार्क तक। दूसरी शाखा द्वारा न्यूयार्क और सेनफ्रासिस्को का सीधा सम्पर्क रहता है।

इस रेल मार्ग के द्वारा संयुक्त राज्य के पूर्वी और पश्चिमी तटीय भाग जुडे है। इसी रेल मार्ग के द्वारा शिकागो क्षेत्र मे घनी आबादी बसी और मध्यवर्ती क्षेत्रो का आर्थिक विकास हुआ। शिकागो को ससार के दूर स्थित बड़े बाजारों से मिलाने का कार्य इसी रेल मार्ग ने किया है। यह रेल मार्ग विशेष प्रकार के हल्के सामान और यात्रियो के लिये प्रयोग किया जाता है जबकि पनामा मार्ग द्वारा भारी सामान का गमनागमन होता है। इस प्रकार पनामा मार्ग के पूरक का काम यह रेल मार्ग करता

यह रेल मार्ग रूस के पूर्व मे प्रशान्त महासागरीय बन्दरगाह ब्लाडीवोस्टक से रूस की राजधानी मास्को और बाल्टिक सागर के तट पर स्थित बन्दरगाह लेनिनग्राड तक जाता है। इस रेल मार्ग का निर्माण सन् १८९१ मे आरम्भ होकर सन् १९०४ मे समाप्त हुआ था। इसमे दो जोड़ी पटरियाँ (Double Tracks) है जिससे व्यापार का आयतन अधिक रहता है। इसकी सीधी लम्बाई ब्लाडीवोस्टक से मास्को तक ४,०९४ मील है। इस लम्बाई का दो तिहाई भाग एशिया मे और शेष यूरोप मे है।

यह रेल मार्ग पश्चिमी अन्तिम स्टेशन लेनिनग्राड से आरम्भ होता है जो फिनलैंड खाड़ी के तट पर स्थित है। यह रूस का अकेला बन्दरगाह है जिसके द्वारा रूस का पश्चिमी यूरोप तथा अमेरिका के देशो के साथ सम्पर्क रहता है। साइबेरिया या जापान जाने वाले थोड़े बहुत यात्री यहाँ दिखाई पडते है। यहाँ से रेल दक्षिण पूर्व की ओर लेनिनग्राड औद्योगिक क्षेत्र को पार करती हुई चलती है। बीच मे कालिनिन नामक प्रसिद्ध व्यापारिक और औद्योगिक केन्द्र पडता है। उसके बाद रेल रूस की राजधानी और सबसे बडे नगर मास्को पहुँचती है। मास्को-आईवानोवा औद्योगिक क्षेत्र का बना माल यहाँ साइबेरिया पहुँचाया जाने के लिये लादा जाता है। मास्को के बाद दूसरा प्रसिद्ध केन्द्र वोलगा पर स्थित कुबीसिव (समारा) आता है। यहाँ से रेल मार्ग की प्रधान शाखा यूराल पर्वत को पार करके चिलियाबिन्स्क पहुँचती है। इसी रेलमार्ग द्वारा यूराल प्रदेश के दक्षिण मे स्थित मैगनिटगोरस्क की लोहे की खानो से प्राप्त कच्ची लोहे की धातु रूस के पश्चिमी और उत्तरी औद्योगिक केन्द्रो को भेजी जाती है। इस कार्य के लिये इस रेल मार्ग की शाखाओ का भी प्रयोग किया जाता है। साईबेरिया से पश्चिमी रूस को भेजे जाने वाले पदार्थ जैसे समूर, लुग्दी, लकडी, चमडा, मक्खन, सुखाया हुआ दूध, धातुएँ और गेहूँ इसी स्थान से लादे जाते है। इसके बाद रेल स्टेपी के घनी, विस्तृत और समतल मैदान पर चलती हुई ओमस्क पहुँचती है। इस प्रदेश मे रेल मार्ग के उत्तर की ओर गेहूँ के खेत और कोणधारी वनो के समूह और दक्षिणी भाग मे गेहूँ के खेत दिखाई पडते हैं। स्टेपी के सूखे भागो मे विस्तृत चरागाह भी मिलते है। ओमस्क के आस पास कोयले की खानें और कपास के विस्तृत खेत दिखाई पडते हैं जिनके आधार पर यहाँ का सूती कपडा उद्योग चालू है। ओमस्क के बाद नोवोसिबिरस्क तक प्राकृतिक और मानवीय दृश्यो मे कोई परिवर्तन नहीं होता है। नोवोसिबिरस्क से दक्षिण की ओर इसी रेल की एक मुख्य शाखा बाल्कश झील के चारो ओर मुडकर इसके दक्षिण पश्चिम की ओर ताशकन्द शहर तक गई है। नोवोसिबिरस्क नगर मे साईबेरिया की गेहूँ और नरम कटी लकडी तुर्किस्तान भेजी जाती है और तुर्किस्तान की कपास उतारी और लादी जाती है ताकि यह कपास रूस के पश्चिमी औद्योगिक क्षेत्रो को पहुँचाई जा सके। नोवोसिबिरस्क ओबो नदी पर स्थित है। इसके आगे यनेसी नदी पर क्रासनोयास्कं है। इसके बाद रेल पठारी भाग पर चढ जाती है और अङ्गारा घाटी होती हुई बैकाल झील के दक्षिण स्थित इरकुटस्क पहुँचती है। इससे झील प्रदेश का अच्छा कोयला और उत्तम लोहा रूस के औद्योगिक क्षेत्रो को भेजा जाता है। कोयला शक्ति द्वारा चालित एक बडा विद्युत स्टेशन भी इस नगर के पास है। बैकाल झील को पहले नावो द्वारा पार करना पडता था लेकिन अब झील के दक्षिण की ओर से रेल मार्ग बनाया गया है। यह मार्ग टाबलोनाय पर्वत की ३१४० फीट की ऊँचाई पार करता हुआ शिल्का नदी के तट पर स्थित चीता नगर पहुँचता है। इस भाग मे

से शुरू होता है। यह भाग सारे मिस्र की एकता प्राप्त करने मे सहायक है। निचली नील और ऊपरी नील की घाटियो मे भी यह रेल मार्ग सहायक होता है। नील नदी के सहारे-सहारे यह रेल मार्ग काहिरा से अस्वान तक जाता है। इस प्रदेश मे विस्तृत कपास के खेत दिखाई पडते है। अस्वान से आगे वादी हाल्फा तक कोई रेल मार्ग नही है। इस रेल मार्ग के द्वारा मिस्र की कपास उत्तर को भेजी जाती है।

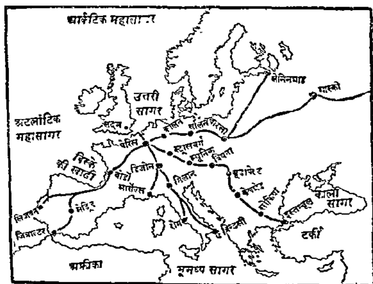
(स) यह भाग वादी हाल्फा से चलकर अतवारा और खारतूम होते हुये मकवार नगर तक जाता है। मकवार से एलिबो तक कोई यातायात सुविधा नही है क्योकि नदियों मे झरने होने से उनमे नावें नही चलाई जा सकती। इस भाग का महत्व राजनैतिक है। इसके द्वारा सूडान और मिस्र जुड़े रहते हैं।

(१०) ट्रांस-एंडियन रेल मार्ग (Trans-Andean Railway)— यह ससार के रेल मार्गों मे बहुत प्रसिद्ध है। इसका निर्माण सन् १९१० मे हुआ था। यह रेल मार्ग वैलपरेजो को, जो चिली का मुख्य बन्दरगाह और प्रशान्त महासागरीय तट पर है, अर्जेन्टाइना की राजधानी और अटलाटिक तटीय बन्दरगाह ब्यूनस आयर्स से मिलाता है। इस पूर्व-पश्चिम यातायात मे प्राय ३३ घटे लगते हैं। अर्जेन्टाइना की ओर ढाल बहुत हल्का और चिली की ओर ढाल बहुत तेज है। यहाँ रेल-गाडी रेक और पिनियन (Reck and Pinion) विधि से चलती है। इसमे पहिये दाँतो पर चलते हैं। इस मार्ग की सबसे अधिक ऊँचाई १०,४५२ फीट पर दो मील लम्बी सुरग है। चट्टान और बर्फ गिरने मे इनको बडी हानि पहुँचती है। चिली के भाग मे इस रेल मार्ग के निर्माण मे १२ लाख रुपये लगे। वैलपरेजो से ब्यूनसएयर्स की दूरी ९०० मील है। इस रेल मार्ग के तीन भाग है: (अ) चिली की चौडी पटरी का मार्ग, (ब) पर्वतीय भाग की तग पटरी का मार्ग, (स) अर्जेन्टाइना मेण्डोजा से ब्यूनसएयर्स तक की चौडी पटरी का मार्ग यह रेल मार्ग वैलपरेजो से चल कर चिली की राजधानी सेण्टियागो तक जाता है। सेण्टियागो के आस पास रूम सागरीय जलवायु पाई जाती है। भूमि समतल है और पहाडी नालो से सिंचाई होती है। गेहूँ, सब्जियाँ, फल, सेव, नाशपाती आदि फल उगते हैं। ज्यो-ज्यो हम पूर्व की ओर चलते हैं रेल के दोनो ओर के भाग पहाडी हो जाते हैं। जब गाडी एन्डीज पर्वत पर पहुँचती है तो वहाँ गहरी घाटियो मे इसे दानेदार पटरी पर होकर जाना पडता है। जितना हम ऊँचा उठते हैं बर्फ ढके पर्वत दिखाई पड़ते हैं। इसके बाद उस्पलाटा दर्रे के नीचे सुरग द्वारा एन्डीज पर्वत को पार करते है और लगभग ११ हजार फीट की ऊचाई मे गुजरते हैं और के अर्जेन्टाइना पहुँचते हैं। अर्जेन्टाइना और चिली की सीमा पर उस्पलाटा दर्रे के पास ही ईसा की प्रसिद्ध मूर्ति एण्डीज का ईसा (Christ of the Andes) स्थापित है। इस पर निम्नलिखित लेख खुदा है, "यह सम्भव है एण्डीज पर्वत टूट कर चूर-चूर हो जाये लेकिन यह सम्भव नही कि चिली और अर्जेन्टाइना के निवासी उस प्रतिज्ञा को तोड दें जो उन्होंने आपस मे शान्ति रखने के लिये मुक्ति-दाता ईसा के सामने की है।" यह आपस की सौगन्ध सन् १९०२ मे की गई थी। उस समय से दोनो देशो के लोग सुखी रहते हैं। अर्जेन्टाइना मे पहले रेल शुष्क और पहाडी प्रान्तो से चक्कर खाती हुई गुजरती है और मेण्डोजा पहुँचती है। यहाँ पर अगूर और खुबानी आदि फलो के बाग और गेहूँ और सब्जियो के खेत दिखाई पडते हैं क्योंकि यहाँ पर पहाडी नालो से सिंचाई होती है। इसके पूर्व एक लम्बे-चौडे मैदान मे पहुँचती है जहाँ विस्तृत चरागाह (Estancias) पाये जाते हैं। इस मैदान को पैम्पास का मैदान कहते हैं। यहाँ पर मवेशी घोडों और भेड़ो का पालन होता है।

मेड्रिड जाती है। यहाँ से एक लाइन लिस्बन और दूसरी लाइन जिब्राल्टर जाती है। जिब्राल्टर जलडमरू मध्य, रूम सागर तथा अटलांटिक महासागर को मिलाता है।

(४) पेरिस-लियास-भूमध्यसागरीय मार्ग—यह रेलवे लाइन पेरिस से आरम्भ होकर सीन की सहायक नदी योनी के साथ-साथ जाती है और एक दर्रे से निकल कर डिजान पहुँचती है। यहाँ से दक्षिण को मुड़ कर रोन नदी के साथ-साथ मार्सेल्स को जाती है जो भूमध्य सागर के किनारे बसा हुआ है। यह एक पाकेट स्टेशन है। पूर्वी देशों को जाने वाले यात्री इसी रेल द्वारा मार्सेल्स आते है और फिर जहाजों पर सवार होकर पूर्वी देशों को जाते है। यहीं से पूर्वी देशों से जहाजों द्वारा स्वेज नहर से आया हुआ माल देशों के भीतरी भागों को रेलों द्वारा भेजा जाता है।

(५) पेरिस इटली रेल मार्ग (Paris Italy Railway)—ऊपर वर्णन किए हुए डिजान नगर से एक लाइन जूरा पर्वत को पार करके आल्पस पर्वत को लाचवर्ग तथा सिंपलन सुरंगों द्वारा पार करके मिलान पहुँचती है। यहाँ से एक लाइन इटली के पश्चिमी समुद्र तट में होती हुए रोम तथा नेपल्स जाती है। यही रेल इटली के दक्षिणी सिरे तक चली जाती है। एक दूसरी रेलवे लाइन मिलान से इटली के उत्तरी मैदानी भाग से होती हुई पूर्वी समुद्र तट से ब्रिडसी तक जाती है। फ्रांस के लियास नगर से एक और रेलवे लाइन रोन नदी की घाटी से होकर आल्पस पर्वत को माउण्ट सेनिस के सुरंग से पार करके ट्यूरिन जाती है। फिर यहाँ से यह रेल भूमध्य सागर पर स्थित इटली के जेनेवा नगर जाती है।



चित्र १७१. यूरोप के रेलमार्ग

(६) ओरेयंट एक्सप्रेस रेल मार्ग (Orient Express)—यह यूरोप महाद्वीप को बहुत महत्वपूर्ण रेलवे है। यह रेल पेरिस से आरम्भ होकर पूर्व की ओर इस्तम्बूल तक जाती है। इसके द्वारा यूरोप के कई देशों की राजधानियाँ मिली हुई हैं। इस

नीदरलैण्ड	३,२५६	३,२१०	६,२६१	७,४१६
नार्वे	१,४०६	१,३४८	१,५५८	१,७५२
स्पेन	७,००६	७,४७०	७,२८४	८,४८८
स्वीडेन	१०,०३४	६,७००	६,५१०	५,१४०
स्विटजरलैण्ड	२,६८०	३,५००	६,६७४	७,८४३
रूस	६७७,३०० १,४२६,५००		६८,५००	१६४,४००
पू० जर्मनी	१७,२६१	३१,६४८	१६,२५७	२१,३८८
भारत	४७,४४६	८२,०७१	६३,६५१	७४,२१८

भारत में रेल मार्ग (Railways in India)

भारत मे रेलमार्गो की कुल लम्बाई ३५,३६५ मील है। १९६२ मे इनके द्वारा औसत रूप मे प्रतिदिन ४६ लाख मनुष्य और ४ लाख टन सामान ढोया गया। इसमे १६६० करोड रुपये की पूँजी लगी है तथा १२ लाख मनुष्यो को व्यवसाय मिला है। भारत मे प्रथम रेल मार्ग १६ अप्रैल १८५३ मे बनाया गया था जब बबई और कल्याण के बीच २२ मील लम्बा मार्ग बनाया गया।

रेल मार्गों की लम्बाई का लगभग आधा भाग सतलज गगा के मैदान मे है। यह स्वाभाविक ही है क्योकि इस मैदान मे भारत की अधिकाश जनसख्या निवास करती है, यहीं देश के बडे-बडे नगर एवं औद्योगिक केन्द्र तथा कलकत्ता का बन्दरगाह है। इनके अतिरिक्त भूमि समतल होने के कारण रेल मार्ग बनाने की सुविधायें भी है। मैदान के रेलमार्गों की दो विशेषतायें है . (१) मीलो तक उनका मार्ग सीधा है अत अधिक मुडने की आवश्यकता नही होती, (२) इनकी अनेक शाखायें विशेषत. कोयला क्षेत्र मे है। इन रेलमार्गो का अन्त कलकत्ता मे होता है। इस मैदान के उत्तर की ओर अथवा पश्चिम मे ऐसा कोई एक केन्द्र नही जहाँ रेलो का अन्त होता हो जैसा कि कलकत्ता मे दृष्टिगोचर होता है। मैदान के उत्तर मे हिमालय पर्वत है जिसमे रेलों का प्रवेश नही हो सका है। दार्जिलिंग, शिमला, कॉगडा आदि ही ऐसे स्थान है जहाँ पहाडो मे सुरगें बनाकर तग रेल की लाइने पहुँची है।

इस मैदान में रेल मार्ग बनाने मे दो असुविधाओ का भी सामना करना पडता है - (१) घनी वर्षा और नदियो की अधिकता से बाढ के समय रेल लाइनो को बहुधा क्षति पहुँचती रहती है, (२) रेल के किनारे डालने को पत्थर की गिट्टी बहुत दूर से मँगवानी पडती है।

दक्षिण के पठार पर रेल मार्ग कम हैं और जो है भी उनके मार्ग प्राय टेढे-मेढे है क्योंकि पठार की भूमि ऊँची-नीची है। इनसे बचने के लिये यथासम्भव समतल भूमि मे चलने के उद्देश्य से उनमे मोडें आवश्यक हो जाती है। अनेक स्थानो पर सुरगें भी बनानी पडी है। अत. रेल मार्ग बनाने मे बडी कठिनाई और व्यय होता है।

दो क्षेत्रों मे रेलो का विस्तार कम हुआ है थार का मरुस्थल और छोटा नागपुर, असम व उडीसा के पहाडी भाग। इन क्षेत्रों मे बहुत थोडी जनसंख्या पाई जाती है जिससे रेलमार्गो की आवश्यकता कम पडती है।

जिन्हें झील मार्ग के द्वारा ये बन्दरगाह पूर्वी औद्योगिक क्षेत्रों को भेज देते है। फिर समतल प्रेरी के उच्च मैदानों पर चलता हुआ विनीपेग झील के दक्षिणी सिरे पर स्थित विनिपेग नगर को पहुँचता है। विनिपेग प्रेरी का सबसे बडा गेहूँ केन्द्र है। यहाँ एलीवेटरो से गेहूँ रेल के डिब्बो मे भरा जाता है और पूर्व को भेजा जाता है। विनिपेग शहर रेड और असीनो बॉयन नदियो के सङ्गम पर स्थित है और रेलो का बड़ा जङ्क्शन है जहाँ कनाडियन नेशनल रेलवे आकर मिलती है। यहाँ से सस्केचवान की राजधानी रेगीना तक रेल समतल प्रेरी के लहराते हुए गेहूँ के खेती से होकर चलती है। रेगीना के बाद दूसरा प्रमुख स्टेशन राकी पर्वत के पूर्वी किनारे पर स्थित कैलगिरी आता है, जिसके बीच मेडिसिन हैट पडता है। मेडिसिन हैट से रेल की दो शाखायें हो जाती हैं। एक शाखा लेथब्रिज से होती हुई क्रोज नेस्ट दर्रे के द्वारा राकी पर्वत को पार करके वैंकूवर पहुँचती है। किकिंग हार्स दर्रे की ऊँचाई ५,३०० फुट है। राकी पर्वत के पश्चिम की ओर रेल फ्रेजर और थामसन नदियों की घाटियों मे नदियो के सहारे-सहारे वैंकूवर तक चलती है। इस भाग मे डालगस पर घने वन पाये जाते है। लकडी चीरने के कारखाने और फलो के बगीचे बहुतायत दिखाई पड़ते है। कोलम्बिया की घाटी सोने, चाँदी, कीमती धातुओं के लिए प्रसिद्ध है। इस घाटी के फल रेल द्वारा वैंकूवर भेजे जाते है जहाँ से टिन मे भर कर विदेशो को फल उद्योगो के पदार्थ भेजे जाते है। नई योजना के अनुसार रेल को किकिंग हार्स दर्रे की ऊँचाई से बचाने के लिये एक सोलह मील लम्बी सुरग खोदी जावेगी।

कनाडा की राजनीतिक, आर्थिक और व्यापारिक उन्नति का बहुत-कुछ श्रेय इसी मार्ग को है। इसके द्वारा लिवरपूल से चीन और जापान तट का मार्ग लगभग १,२०० मील छोटा हो जाता है। प्रेरी का आर्थिक आकर्षण यूरोपीय गेहूँ बाजार के ऊपर निर्भर था और गेहूँ का पूर्वी तटो तक भेजने मे रेल मार्ग ही एक मात्र साधन था। इसलिये इस रेल मार्ग का इतना ज्यादा महत्व हो गया है। जनसख्या का बसना भी रेल मार्ग के निर्माण के बाद ही सम्भव हो सका है। आज भी जनसख्या अधिकतर रेल मार्ग की मुख्य लाइनो और उसकी शाखाओ के पास ही बसी है। पूर्वी कनाडा के औद्योगिक क्षेत्रो मे सतुलन कायम करने का काम इसी रेल मार्ग के द्वारा होता है। राजनीतिक दृष्टि से कनाडा के पूर्वी और मध्य तथा पश्चिमी भागों मे एकता की सृष्टि करने का काम भी इसी रेल मार्ग द्वारा होता है।

(८) यूनियन पेसिफिक रेल मार्ग (Union Pacific Railway)—यह सयुक्त राज्य का सबसे बडा और अधिक महत्वपूर्ण महाद्वीपीय रेल मार्ग है। इसका निर्माण अन्य महाद्वीपीय रेल मार्गो के पहले हुआ था। यह रेल मार्ग सन् १८६९ में बन कर तैयार हुआ। यह रेलमार्ग सयुक्त राज्य के ठीक मध्य से ही होकर गुजरता है। यह रेल मार्ग शिकागो से शुरू होता है। यहाँ से शुरू होकर यह एक अत्यन्त घनी प्रेरी के क्षेत्र मे होकर मिसीसिपी नदी को पार करते हुए मिसूरी नदी स्थित ओमाहा नगर पहुँचता है। यहाँ तक रेल मार्ग के दोनों ओर लहलहाते हुए गेहूँ के खेत दिखाई पडते हैं। ओमाहा के बाद रेल मार्ग प्लाट नदी की घाटी मे नदी के सहारे-सहारे नेब्रास्का के कटे फटे पठार (Badlands) को पार करता हुआ लारावी पर्वत के दक्षिणी सिरे पर स्थित चैने नगर को पहुँचता है। इस नगर के पहले बड़े-बड़े पशुचारण के फार्म (Ranch) दिखाई पडते हैं जहाँ अधिकतर भारी

(१) उत्तरी रेल मार्ग—इसका उद्घाटन १४ अप्रैल १९५२ को हुआ। इसका लम्बाई ६,३६६ मील और कार्यालय दिल्ली में है। पूर्वी पजाब, बीकानेर व जोधपुर स्टेट रेलवे और ईस्ट इ डिया रेलवे की इलाहाबाद, लखनऊ व मुरादाबाद डिवीजनो को मिलाकर यह रेल मार्ग बनाया गया है। यह पूर्वी पजाब, दिल्ली, उत्तरी-पूर्वी राजस्थान तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश मे फैला है। गेहूँ, ऊन, गन्ना आदि व्यापारिक वस्तुएं इसी रेल मार्ग द्वारा ढोई जाती है। इस मार्ग पर छोटी और बडी दोनो ही लाइनें जाती हैं।

(२) उत्तरी-पूर्वी रेल मार्ग—इस क्षेत्र का उद्घाटन भी १४ अप्रैल १९५२ को हुआ। इसकी लम्बाई ३,०७५ मील है। अवध तिरहुत रेलवे और असम रेलवे तथा बी० बी० एण्ड० सी० आई रेलवे के कुछ भाग (आगरा, कानपुर ब्राच; आगरा काठगोदाम ब्रांच) जोडकर यह रेल मार्ग बनाया गया है। यह उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग, उत्तरी बिहार, पश्चिमी बगाल का उत्तरी भाग और असम के कुछ भागो से होकर जाता है। इसके द्वारा तम्बाकू, गन्ना, चाय, चावल, चमडा आदि ढोया जाता है। इसका कार्यालय गोरखपुर मे है।

(३) पूर्वोत्तर-सीमान्त रेलवे—इसका उद्घाटन १५ जनवरी १९५७ को किया गया। यह रेल मार्ग १,७२६ मील लम्बा है और इसका कार्यालय पाडु मे है। इसके अन्तर्गत उत्तर-पूर्वी रेल का पूर्वी भाग आता है। यह रेल मार्ग समस्त असम, प० बगाल और बिहार के कुछ भागो मे जाती है। इसके द्वारा चाय, पेट्रोलियम, कोयला, लकड़ी, पटसन आदि वस्तुएं ढोई जाती है।

(४) मध्य रेल मार्ग—इसका उद्घाटन ५ नवम्बर १९५१ को हुआ। यह रेल मार्ग ५,३३० मील लम्बा है और इसका कार्यालय बम्बई मे है। हैदराबाद स्टेट रेलवे, धौलपुर स्टेट रेलवे तथा सिंधिया रेलवे को जी० आई० पी० रेलवे से मिलाकर इसका निर्माण किया गया है। यह मार्ग मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मद्रास तथा आन्ध्र प्रदेश मे होकर जाता है। इसके द्वारा मैंगनीज, ताबा, अल्युमीनियम, पीतल, कपास और नारगियां ढोई जाती है।

(५) पश्चिमी रेल मार्ग—इसका उद्घाटन ५ नवम्बर १९५१ को किया गया। इसकी लम्बाई ६,०५६ मील है और कार्यालय बम्बई मे है। इसमें बी० बी० एण्ड सी० आई० की छोटी लाइन, सौराष्ट्र रेलवे, राजस्थान रेलवे व कच्छ रेलवे का समावेश किया गया है। गाधी-धीरा छोटी लाइन इसी रेलवे में है। यह रेल मार्ग राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य-प्रदेश मे होकर जाता है। अनाज, कपास, नमक, तिलहन, अभ्रक, लकड़ियाँ, सूती कपड़े, सीमेन्ट आदि इस रेल द्वारा ढोये जाते हैं।

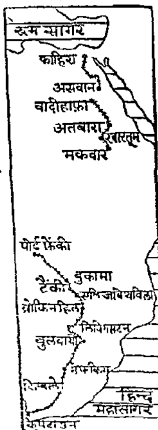
(६) दक्षिणी रेल मार्ग—इसका उद्घाटन १४ नवम्बर १९५१ को हुआ। यह रेल मार्ग ६,९५६ मील लम्बा है और इसका कार्यालय मद्रास मे है। इसमें मद्रास और साउथ मरहठा रेलवे तथा साउथ इण्डियन रेलवे और मैसूर रेलवे का समावेश किया गया है। यह रेल मार्ग मद्रास, महाराष्ट्र तथा आन्ध्र प्रदेश मे होकर गुजरता है। इसके द्वारा भी तिलहन, कपास, खाद्यान्न, चमडा आदि ढोये जाते है।

(७) पूर्वी रेल मार्ग—इसका उद्घाटन अगस्त १९५५ मे हुआ। इसकी लम्बाई २,३२५ मील तथा कार्यालय कलकत्ता मे है। इसमें बगाल, नागपुर रेलवे और ईस्ट इण्डियन रेलवे के कुछ भाग (दानापुर, सियालदह, धनबाद, हावडा और

है। सुरक्षा व एकता की दृष्टि से भी इस मार्ग का महत्व बहुत अधिक है। इस रेल मार्ग के द्वारा पूर्वी क्षेत्रो से अधिक कीमती बने माल पश्चिम की ओर फल तथा फिल्में पश्चिमी क्षेत्रों से पूर्वी क्षेत्रो को भेजे जाते हैं। चाय और रेशम भी पूर्व से सेनफ्रासिस्को का रेशम स्पेशल गाड़ियो द्वारा न्यूयार्क क्षेत्र को इसी रेल मार्ग द्वारा पहुँचाया जाता है।

(६) केप काहिरो रेल मार्ग (Cape to Cairo Railway)—यह रेल मार्ग अभी पूरी लम्बाई मे बन नही पाया है। इसके निर्माण की योजना सबसे पहले सेसिल रोड्स (Cecil Rhodes) नामक अँगरेज साम्राज्य निर्माता ने बनाई थी। उसकी योजना के अनुसार केपटाउन से काहिरा तक का रेल मार्ग बनाना था जिसका प्राय ¾ भाग अब तक बन चुका है। इस मार्ग के तीन खण्ड है (अ) केपटाउन से एलिबो (ब) काहिरा से अस्वान (स) वादीहाफा से मकवर।

(अ) केप प्रान्त के दक्षिणी सिरे पर स्थित केपटाउन से यह रेल मार्ग प्रथम खण्ड के लिये चलता है जहाँ पर भूमध्य सागरीय फलो के विस्तृत बगीचे पाये जाते हैं। इसके बाद अचानक चढाई पार करके लघुकारू और बृहतकारू को पार करते हुये रेल मार्ग वैल्ड पठार पर चलता है। इसी पठार पर सबसे पहला प्रसिद्ध केन्द्र किम्बरले पडता है जो हीरे, जवाहरातो का बडा केन्द्र है। वैल्ड के पठार पर भेड पालने के बडे-बडे चरागाह पाये जाते हैं। किम्बरले से रेल मार्ग ठीक उत्त रकी ओर मेफकिंग होता हुआ बुलावियो तक जाता है, जिसके मार्ग मे कई आदिम जातियों के क्षेत्र पडते है। बुलावियो दक्षिण रोडेशिया की राजधानी और रेलों का बडा जकशन है। यहाँ रेल के जेम्बेजी नदी पर स्थित लिविंगस्टन नगर को पहुँचती है जिसके पास ही संसार प्रसिद्ध विक्टोरिया जल-प्रपात है। इस भाग में रेल मार्ग उष्णप्रदेशीय घने वनों से होकर गुजरता है। शहरों की सख्या भी बहुत कम है। इस नगर के बाद उत्तर-पूर्व की ओर सवाना के भाग से होकर रेल गुजरती है। सवाना प्रदेशीय पशु जेबरा, जिराफ, शेर, चीता और शुतुर्मुग इत्यादि भी दिखाई पडते हैं। थोडी दूर आगे चलकर ताबा, सीसा आदि खनिज धातुओ का केन्द्र ब्रोकेन हिल पडता है। यहाँ से कटिंगा प्रदेश होती हुई रेल टेंको नगर को पहुँचती है जहाँ कटिंगा प्रदेश के खनिज पदार्थ एकत्रित किये जाते हैं। टेंकी से उत्तर की ओर बुकाया पडता है जहाँ से रेल मार्ग एलिवोया पोर्ट फ्रेन्की तक जाता है जो केपटाउन से लगभग ३,२०० मील दूर है। इस भाग मे कच्चे माल रेल द्वारा बाहर की ओर जाते दिखाई पडते हैं।



चित्र १७३- केप काहिरा रेलमार्ग

(ब) यह भाग मिस्र की राजधानी काहिरा

अध्याय ३२

यातायात के साधन (क्रमशः)

जल परिवहन

(WATER TRANSPORT)

जल यातायात का विकास

जल यातायात का उपयोग मानव ने बहुत प्राचीन काल से ही सामान ले जाने अथवा एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने के लिए कर लिया था। आरम्भ की नावें घास, लकडी के लट्ठो, रीड, अथवा अन्य हल्के पदार्थों से बनाई जाती थी। इन्हे रैफ्ट (Raft) कहते थे। आजकल भी टसमानिया और मिस्र के निवासी तथा टीटीकाका झील मे इंका (Incas) लोग इन रैफ्टो का प्रयोग करते है। दक्षिणी अडमान द्वीप मे जारवा नामक लकड़ी की बनी नावें या डोंगियों (Canoes) के स्थान पर बाँस की बनी रैफ्ट नावो को खाड़ियाँ पार करने मे व्यवहृत किया जाता है। मलाया प्रायद्वीप के सेमाग (Semang) और अफ्रीका, पीरू और मैक्सिको तथा भारत मे राजस्थान की जयसमुद्र झील में भील लोग ऐसी ही 'रैफ्टो' का प्रयोग आज भी आने-जाने के लिए करते है।

ईराक आदि देशो मे पशुओ की खालो की बनी नावें, जिन्हे किलेक (Kelek) कहते हैं, यातायात का मुख्य साधन है। ऐसी नावें अधिकतर दजला नदी मे दिखाई पडती हैं। मिस्र और भारत की अनेक नदियो मे वर्षाकाल मे मिट्टी के घडो को उलट कर एक दूसरे के साथ बाँस से बाँधकर नदी पार करने के लिये उपयोग किया जाता है। दजला और फरात नदियो मे टोकरियो की बनी गोल गुफा (Gufa) नामक नावें काम मे लाई जाती हैं। इनके भीतर चमडा मढ़ा रहता है। इस प्रकार की नावें कावेरी, भवानी, तुगभद्रा और कृष्णा नदियो मे अब भी चलती है। बगाल मे चलने वाली तिगरी अथवा गमला नामक नावे प्राचीन नावो के ही स्वरूप हैं। एस्कीमो लोग मछली के चमडे से बनी उमियाक (Umiak) और कयाक (Kayak) नावें शिकार करने के लिये काम मे लाते हैं। ब्रिटिश कोलम्बिया और आस्ट्रेलिया मे पेड के छाल तथा तनो से खोखली नावें बनाई जाती है।

सभ्यता के विकास के साथ-साथ नावो के रूप और आकार मे भी परिवर्तन होने लगा। आरम्भ मे बनाई गई नावो का रूप बेडे की तरह होता था जिसे मनुष्य तैरा कर ले जा सकता था किन्तु इस प्रकार की नावो मे सदैव इस बात का डर रहता था कि वायु के झोको और लहरो के झकोरो से ये कहीं डूब न जायें अत नाव पर एक ओर ऊँचा उठा भाग बनाया जाने लगा। यूनानी, रोमन और फोनिशीयन लोगों ने सर्वप्रथम नावो मे पाल बाँध कर वायु-शक्ति का प्रयोग उन्हे चलाने के लिए किया। ऐसी नावें पालदार नावें कहलाती थीं। इनके उपयोग के सामुद्रिक यातायात का श्री

यहाँ के निवासियो को ग्वाचो (Guacho) नाम से पुकारते है जो पक्के घुड़सवार होते है। यहाँ पर मवेशी जगली जानवरो की तरह नही फिरते बल्कि बड़े-बड़े खेतो मे रख कर पाले जाते हैं। इनकी खुराक के लिये लूसर्न घास उगाई जाती है, जिसके खेत रेल मार्ग के दोनो ओर दिखाई पड़ते है। पैम्पास के पूर्वी भागों में जहाँ वर्षा काफी होती है गेहूँ, मकई और अलसी की खेती होती है। अन्त मे ब्यूनसएयर्स पहुँचती है। यह दक्षिणी अमेरिका का सबसे बड़ा शहर है। यहाँ से पैम्पास के मैदान की उपज भेजी जाती है। यहाँ पर कई कारखाने हैं, जिनमे पशु बिना कष्ट दिये मारे जाते हैं। उनकी खाल उतार ली जाती है और बाहर भेजने के लिये जमा हुआ मांस तैयार किया जाता है। यह सब जहाजों मे लादकर शीत भण्डारो द्वारा यूरोप को भेजा जाता है। कुछ मॉस पका कर डिब्बों में भर दिया जाता है। कुछ का अर्क निकाल लेते है। विशेष मास आक्सो बुआइल और लिम्बज भी तैयार किया जाता है। फ्रेन्ट्रोज जो यूरेग्वे देशीय भाग में है इन पदार्थों के लिये विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

(११) पर्थ-ऐडिलेड रेल मार्ग (Perth-Adelaid Railway)—आस्ट्रेलिया महाद्वीप मे यह एक महत्वपूर्ण रेल मार्ग है जो पश्चिमी किनारे को पूर्वी तट से मिलाता है। यह मार्ग पर्थ बन्दरगाह से पूर्व की ओर जाता है और एक विशाल मरुस्थल से होकर निकलता है। इस मरुस्थल मे दो बड़े स्टेशन पड़ते हैं जिनके नाम कूलगार्डी और कूलगार्ली हैं। इन दोनो नगरो के आसपास आस्ट्रेलिया की मुख्य स्वर्ण खानें हैं। यहाँ से पूर्व की ओर यह मार्ग नल्लरबार मैदान मे होकर गुजरता है जहाँ की जल वर्षा बहुत कम है और जनसख्या बहुत ही कम है। पचास-पचास मील तक कोई स्टेशन नही है। इस मैदान मे लाइन बिना मोड सीधी तीन सौ मील तक जाती है। दुनिया में किसी अन्य स्थान पर इतनी दूर तक बिना मोड कोई लाइन नही है। स्पेन्सर-गल्फ के उत्तर मे पोर्ट आगस्टा नाम का बन्दरगाह इस लाइन का मुख्य स्टेशन है। यहाँ से यह लाइन दक्षिण की ओर मुडती है और दक्षिणी आस्ट्रेलिया की राजधानी एडीलेड पहुँचती है। एडीलेड से एक अन्य लाइन मेलबोर्न और कैनबेरा होती हुई सिडनी तक गई जो पैसिफिक तट का मुख्य बन्दरगाह है। आस्ट्रेलिया के पूर्वी तट पर सिडनी से ब्रिस्वेन, राकहैम्पटन, टाउन्सविल होती हुई एक लाइन केयर्न्स तक गई है। आस्ट्रेलिया मे भी भिन्न गेज वाली लाइनें हैं।

कुछ प्रमुख देशों मे रेलो द्वारा इस प्रकार माल ढोया गया :—

रेलों द्वारा ढोये गये माल और यात्रियों का वितरण

देश	टन किलोमीटर्स मे		यात्री किलोमीटर्स मे	
	१६५१	१६५६	१६५१	१६५६
बेल्जियम	६,७०५	६,११६	७,२२३	८,५१८
डेनमार्क	१,०६८	१,४११	३,१७५	३,३०८
फ्रान्स	४५,३६१	५३,३७०	२८,०६५	३१,४५०
प० जर्मन	४५,६२८	४७,६७६	२६,६७३	३८,४५२
इटली	११,५६८	१४,३२८	२०,६६२	२५,६८७

बना रहा। पीगू, कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो व जापान तक सुदूर पूर्वी देशों मे उस समय भारतीय उपनिवेश थे। दक्षिणी चीन, मलाया प्रायद्वीप, अरब व ईरान के सभी मुख्य नगरो व अफ्रीका के सारे पूर्वी तट पर भारत की व्यापारिक बस्तियाँ थी। उस समय भारत का प्रभाव इतना अधिक था कि इस देश को इतिहास कारो ने पूर्वी सागरों की रानी (Mistress of the Eastern Seas) की सज्ञा दी है।"

जल यातायात के क्षेत्र

जल यातायात के क्षेत्र को दो भागो मे बाँटा जा सकता है —

(१) भीतरी जलमार्ग, तथा

(२) सामुद्रिक जल मार्ग।

(१) भीतरी जल-मार्ग (Inland Waterways)

आन्तरिक जल यातायात के अन्तर्गत (क) नदियाँ, (ख) भीलें, तथा (ग) नहरें सम्मिलित की जाती है। इन पर आधुनिक काल की नावें व जहाज दोनो ही व्यवहृत किये जाते है।

(क) नदियाँ (Rivers as Waterways)

यद्यपि रेलो और मोटरो के कारण आजकल नदियों का महत्व यातायात की दृष्टि से कम हो गया है किन्तु फिर भी विश्व के प्रमुख देशो मे उनका उपयोग हो रहा है।[2]

जलमार्गों का बडा लाभ उसके लिये अपेक्षाकृत कम चालक शक्ति की आवश्यकता होना है जबकि चाल धीमी हो। जलयान सम्बन्धी चालक शक्ति की एक सामान्य इकाई कई मालगाडियों से अधिक माल खीचने मे समर्थ है। इसी भाँति प्राकृतिक जल-मार्गों को परिवहन योग्य बनाने के लिये कम पूँजी और पोषण व्यय की आवश्यकता पडती है। इन कारणो से जल परिवहन रेल की अपेक्षा सस्ता पडता है। उदाहरण के लिये सयुक्त राज्य अमरीका मे रेलो द्वारा १०० मील दूर कच्चा लोहा ले जाने मे जितना खर्च पडता है डुलूथ से ईरी भील के बन्दरगाहो तक लगभग १००० मील की दूरी तक जलमार्ग से उसे ले जाने मे कही कम खर्चा पड़ता है। भारत मे डिब्रूगढ से कलकत्ता (११५० मील) और कलकत्ता से पटना (६२० मील) तक बेडो मे माल ले जाया जाता है। प्रत्येक बेडे मे १½ बडो गाडियो के बराबर और ४ मझली गाडियो के बराबर माल लादा जाता है। इसकी ढुलाई १ आने से १½ आने प्रति टन मील पडती है जबकि मोटर-ठेले की ढुलाई से ३ से ६ आना प्रति टन मील और रेल से १¾ आना से ३½ आना प्रति टन मील पडती है। पहाडी ढालो पर सघन वनो मे तथा वर्फीले क्षेत्रो मे जल मार्ग ही परिवहन का उत्तम साधन होता है क्योकि ऐसे क्षेत्रो मे न तो सडकें और न रेलें ही बनाई जा सकती हैं। हिमालय के वनो मे

---

2. *R. K. Mukerjee*, **A History of Indian Shipping**, pp. 4-5.

3. *Bigham, T. C*, **Transportation Principles and Problems**, 1947, p. 84.

रेल मार्गों का कुल १६,४५० मील लम्बा भाग बड़ी लाइन का, १५,५८२ मील मझली लाइन का और ३,१८१ मील छोटी या तंग लाइन का है। ३५,३९५ मील में से केवल ३२६ मील लंबे मार्ग पर बिजली की रेलें चलाई जाती है। पूर्वी रेल पर ८८·६३ मील दक्षिणी रेल पर १८·१४ मील; मध्य रेलवे पर १८४·८५ मील पश्चिमी रेल मार्ग पर ३७ २५ मील।

अगस्त १९४९ के पूर्व भारत मे ३७ रेल-प्रणालियाँ थी। किन्तु अब समस्त रेल मार्गों को ८ क्षेत्रो मे विभाजित कर दिया गया है। इस विभाजन का मुख्य उद्देश्य इनकी कार्यशीलता में वृद्धि करना है।

ये ८ क्षेत्र निम्न प्रकार है.—



चित्र १७४ भारत के मुख्य रेल मार्ग

जाने से भी उनका प्रयोग सभव नही। गर्मी मे उनके सूख जाने का भी भय रहता है।

(३) स्थल मार्ग की अपेक्षा जल मार्ग अधिक भयानक होते है और जान माल को भारी जोखिम बनी रहती है। फलत माल का बीमा जल परिवहन का एक आवश्यक व्यय समझा जाता है। नदियो में बाढ आने और समुद्रो मे भयानक आँधियो के प्रकोप से नाव और जहाज बहुधा डूब जाते हैं और भय उपस्थित होने पर उसका प्रतिकार भी नही किया जा सकता।

(४) चौथी कमी जल परिवहन का सीमित विस्तार है। जल मार्ग इस देश के विस्तृत क्षेत्र के कुछ भाग तक ही प्रत्यक्षत. पहुँचते है अतएव जो उत्पादक और उपभोक्ता क्षेत्र, नदी, और नहरो के मार्ग से दूर हैं उनके लिए जल मार्ग परिवहन की सेवा प्रदान नही कर सकते। ऐसी स्थिति मे जल मार्गों का उपयोग करने के लिए रेल अथवा सडक परिवहन की सहायता अपेक्षित है। माल और सवारियो को रेल अथवा सडक द्वारा जल मार्ग तक पहुँचना पडता है। ऐसा करने मे जलमार्ग का सस्तापन सर्वथा समाप्त हो जाने की सभावना रहती है।

यदि उद्योग धन्धे जल-मार्गों पर स्थित नही है (और ऐसी स्थिति बहुधा देखने मे आती है) तो वे जल मार्गों का उपयोग करने मे असमर्थ है। सडक और रेल की सेवायें उद्योग धन्धो के द्वार तक ले जाई जा सकती हैं जो कि जल मार्ग के लिए सर्वदा संभव नही है।

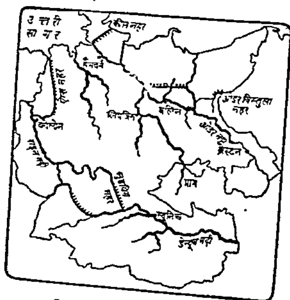
यूरोप के जल मार्ग (Waterways of Europe)

यूरोप भीतरी जलमार्गों की दृष्टि मे बहुत उन्नतिशील है। इस महाद्वीप की अधिकतर नदियाँ नाव्य हैं। किन्तु इस महाद्वीप मे **जर्मनी** विशेष भाग्यशाली है। अधिक नाव्य नदियाँ इसी देश मे पाई जाती हैं। जर्मनी मे सबसे बडी कमी समुद्री किनारे की है जिसे बहुत सीमा तक नदियाँ पूरा करती है। सभवत औद्योगिक देशो में ऐसा कोई देश नही जहाँ पर अधिकतर औद्योगिक नगर नदियो के किनारे बसे हो। जर्मनी इसका सच्चा प्रतिनिधित्व करता है। यूरोप की महत्वपूर्ण और जर्मनी में सबसे बडी नदी राइन मे यातायात का सदा बडा भारी जमघट रहता है। राइन नदी में समुद्री जहाज आ जा सकते है। इसलिये इससे इतना अधिक माल आता-जाता है जितना ससार मे किसी नदी से नही गुजरता। राइन नदी वास्तव मे ससार की सबसे व्यस्त व्यापारिक नदी है। इस नदी के दोनो किनारो पर भारी उद्योग चालू है जिनके तैयार माल का व्यापार इसी मार्ग द्वारा होता है। इस नदी मे यातायात केवल छोटे-छोटे जहाजो द्वारा ही हो सकता है। राइन क्षेत्र एक अत्यधिक विकसित औद्योगिक क्षेत्र है। अत इसके व्यापार का आयतन भी अधिक रहता है। इस नदी मे जहाज ४,००० टन तक के वजन का माल ढो सकते है किन्तु अधिकतर व्यापार २,०००–२,५०० टन-भार वाले जहाजो द्वारा ही होता है। १९६० मे रूर और राइन नदी के संगम पर स्थित ड्यूसबर्ग रूहॅट बन्दरगाहो द्वारा ४ करोड टन का व्यापार हुआ जिसमे १ करोड टन तो केवल कोयला ही था। इन नदी द्वारा खाद, कोयला, रासायनिक पदार्थ, इस्पात, कच्चा लोहा, पेट्रोलियम और अनाज आदि अधिक ढोया जाता है। राटरडम विश्व मे सबसे अधिक व्यापार करता है। राइन नदी के व्यापार मे कोयले का महत्व अधिक होने से इसे कोयला नदी (Coal River) कहते है।

आसनसोल) मिलाये गये हैं। इसी मार्ग पर बर्नपुर और कुल्टी के लोहे के कारखाने, सिंदरी का खाद का कारखाना और चितरंजन का एन्जिन का कारखाना है। यह रेल मार्ग बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में जाता है। इसके द्वारा सीमेन्ट, लोहा-इस्पात, वस्त्र, चावल, जूट आदि ढोये जाते हैं।

(८) **दक्षिणी-पूर्वी रेल मार्ग**—इसका उद्घाटन १ अगस्त १९५५ को हुआ। इसकी लम्बाई ३,४२० मील है और कार्यालय कलकत्ता में है। इसमें पहले की पूर्वी रेलवे और बंगाल नागपुर रेलवे का ही भाग है। यह मार्ग मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और बंगाल में होकर जाता है। इसके द्वारा मैंगनीज, लकड़ियाँ लोहा, कोयला ढोया जाता है। टाटानगर, रूरकेला, भिलाई, विशाखापट्टनम् आदि इसी रेल मार्ग पर है।

राइन नदी का अधिकतम लाभ उठाने के हेतु इसको कई नदियों से नहरों द्वारा मिला दिया गया है जिनमें मुख्य ये हैं—



चित्र १७६. जर्मनी के जल मार्ग

(१) दक्षिण की ओर बॉमेल के द्वारा स्विटजरलैंड व इटली से।

(२) दक्षिण की ओर वास्जेस और जूरा पर्वत के बीच बरगंडी द्वार के द्वारा रोन घाटी और मार्सेलीज से।

(३) पश्चिम की ओर वॉस्जेस के उत्तर-स्थित मेवर्न द्वार के द्वारा पेरिस से।

(४) उत्तर की ओर राइन घाटी द्वारा वैस्टफेलिया और उत्तरी सागर से।

(५) उत्तर की ओर फ्रैंकफर्ट द्वारा उत्तरी जर्मनी और बर्लिन से।

(६) पूर्व की ओर स्टैटगार्ट होकर वियना और डेन्यूब के मैदान से।

वेजर, एल्ब और ओडर जर्मनी की अन्य नदियाँ हैं। राइन के बाद वेजर सबसे अधिक व्यापारिक महत्व की नदी है। यद्यपि यह राइन की तरह अधिक गहरी नहीं है और इसमें जल-प्रवाह भी समान नहीं रहता किन्तु ड्रेस्डन और माग्डे-बर्ग होकर हम्बर्ग से सीधा सम्बन्ध स्थापित करती है। इसके द्वारा नदी के निचले भागों को शक्कर, पोटाश और कोयला तथा ऊपरी भागों को अनाज ढोया जाता है। पूर्व की ओर ओडर ऊपरी साइलेशिया के खनिज व औद्योगिक क्षेत्रों को उत्तरी सागर से जोड़ती है। इसके मुख्य बन्दरगाह ब्रेस्लो और फ्रैंकफर्ट हैं। पश्चिम की ओर वेजर नदी ब्रिमेन की सेवा करती है। जर्मनी की सभी नदियाँ एक दूसरे से नहर द्वारा जुड़ी हैं। (१) हंसा नहर (Hansa Canal) कोयले की खानों को हैम्बर्ग से जोड़ती है। (२) लुडविग नहर (Ludwig Canal) डेन्यूब को राइन की सहायक मेन नदी

गणेश हुआ। वायु से चलने वाली छोटी नावो ने ही १५ वी से १६ वी शताब्दी तक नये प्रदेशो की खोज की और उनके बस जाने मे योग दिया। कोलम्बस १४६२ ई० मे सैन्टामाना (Senta Mana) १०० टन, पिंटा (Pinta) ५० टन और निना (Nina) ४० टन के जहाजों को लेकर ही अमरीका की खोज को निकला था। १८ वी शताब्दी तक ये पालदार नावें काम मे लाई जाती रही किन्तु फिर भी इनका आकार बदलता गया यहाँ तक कि १६वी शताब्दी मे लकडी निर्मित जहाजो और वायु संचालित जहाजो के स्थान पर लोहे और इस्पात के वाष्प-चालित विशाल जहाजो का प्रयोग होने लगा। भीतरी जल-मार्गो मे भी १६ वी शताब्दी के आरम्भ से ही वाष्प-चालित नावो का प्रयोग होने लगा और अब तो लाइनर तथा ट्रैम्प जहाजो का ही सबसे अधिक उपयोग हो रहा है।[1]

कौटिल्य के इतिहास से भारत मे ईसा के लगभग ३००वर्ष पूर्व जल भी परिवहन के विकास की सूचना मिलती है। कौटिल्य ने भारतीय जल मार्गो को दो भागो मे बाटा था। जल के किनारे के मार्ग, और जल ही जल मे जाने के मार्ग। कौटिल्य के अनुसार नदियों और नहरों का मार्ग ही उत्तम होता है क्योकि इनकी धारा निरतर बनी रहती है और इस मार्ग में विशेष बाधायें भी उपस्थिति नही होती। भारी-भरकम सामान इन्ही दोनो मार्गो द्वारा ढोये जाते थे। भारत मे उस समय नावों और जहाजो की बड़ी उन्नति हो चुकी थी। कौटिल्य के अनुसार व्यापार सम्बन्धी नावें और जहाज इस प्रकार होते थे

(१) समुद्रो मे चलने वाले जहाज—**संयातीर्नाव**।

(२) बडी-बडी नदियो मे चलने वाले छोटे जहाज—**महानाव**।

(३) छोटी नावें—**क्षुद्रका**।

(४) व्यक्तिगत नावें जिन पर राज्य का कोई अधिकार नही होता **स्वतरणानि**, और

(५) सामुद्रिक डाकुओं के जहाज—**हिंश्रिका**।

मैगेस्थनीज और एरियन के यात्रा-वर्णनो से भी ज्ञात होता है कि गगा और उसकी १७ सहायक नदियो तथा सिंधु और उसकी १३ सहायक नदियो मे नावो द्वारा आना जाना होता था तथा सारे देश मे लगभग ५८ नदियाँ ऐसी थी जो जल परिवहन के योग्य थी। ७ वी शताब्दी मे भारतीय व्यापारियो के जहाज सौराष्ट्र, गुजरात व पूर्वी तट से सुमात्रा, जावा, फिलीपाइन्स और प्रशान्त महासागर के द्वीपो को जाया करते थे। १४ वी शताब्दी मे नदियो नहरो और अन्य जल मार्गो द्वारा जल परिवहन यथेष्ट रूप से एक लाभदायक व्यापार समझा जाता था। युक्त कल्पतरु नामक ग्रथ से स्पष्ट होता है कि भारत मे नदियो और समुद्रो मे चलने वाले दोनो प्रकार के जहाज बनते थे जिनके २७ प्रकार थे। बडे से बडे सामुद्रिक जहाज का आकार २७६ फीट × ३६ फीट × २७ फीट का होता था और उसकी भार-वहन क्षमता २३०० टन की। **डा० मुकर्जी** के अनुसार "पूरी ३० शताब्दियो तक भारत की स्थिति पुरानी दुनिया के मध्य मे उसी प्रकार महत्वपूर्ण रही जैसे मनुष्य के शरीर मे हृदय की और भारत विश्व के सामुद्रिक राष्ट्रो मे एक अग्रगामी राष्ट्र और महान सामुद्रिक शक्ति

१. गगा प्रसाद शास्त्री, कौटिल्य अर्थशास्त्र, १६६७ वि०, पृ० १६७-२०१.

इमारती लकडियाँ ढोने के लिए तथा उत्तरी साइबेरिया की वन सम्पत्ति को लाने के लिए नदियो का ही उपयोग होता है। लकड़ी, पत्थर, घासफूस, कोयला, खनिज पदार्थ आदि सस्ती किंतु बड़े आकार की वस्तुओ के लिए अथवा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये जल परिवहन विशेष रूप से लाभदायक होता है। यद्यपि नावो और जहाजों की चाल प्रति मील मोटर और रेल दोनो से कम होती है किन्तु एक साथ अधिक परिमाण मे जाने वाले माल के नदी से भेजने मे समय की बचत होती है, क्योंकि बहुत-सा माल एक साथ बिना मार्ग मे रुके निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच जाता है। उदाहरण के लिए, एक जहाज ने ८०० टन माल भर कर कलकत्ता से गोहाटी तक ८४० मील की यात्रा ८ दिन मे पूरी कर डाली जो संभवत. सडक और रेल से संभव नही। आसाम से कलकत्ता तक चाय की पेटियाँ जल मार्ग से ७ दिन मे पहुँच जाती हैं जबकि रेल से उन्हे १५ से २० दिन तक लगते हैं।

नीचे की तालिका मे भारत और अन्य देशो मे जल-मार्गों का विस्तार बताया गया है —

जल मार्गों की लम्बाई

देश	प्रति १०,००० वर्ग मील पीछे लम्बाई (मीलो मे)	प्रति १,००० व्यक्तियो पीछे लम्बाई, (मीलो मे)	सम्पूर्ण लम्बाई (मीलो में)
नीदरलैंड	३४०·७	४·५	४,३४०
बेलजियम	९१·०	१ २५	१,०५४
जेकोस्लोवेकिया	३४·४	१·५	१,८६०
फ्रास	२८ ०	१·४३	५,९२०
इंगलैंड	२५ ५	०·४८	२,४००
जर्मनी	२१·५	० ६	३,९००
पोलैंड	१८ २	१·१४	२,७३०
सं० रा० अमरीका	९ ८	१·९५	२८,०००
मिश्र	५ ४	१·०६	२ ०८१
भारत	३ ८	०·५५	४,७०६

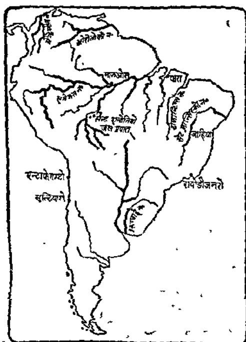
जल परिवहन के दोष

(१) जल परिवहन की एक बडी कमी उसकी चाल है। जल वाहनों की चाल साधारणतः १०-१५ मील प्रति घंटे से अधिक नही होती, जबकि मोटर गाड़ियो की चाल २५-३० मील और रेलगाड़ियो की ५०-६० मील प्रति घंटा होती है। नदियां बहुधा टेढी-मेढी बहती हैं और नहरो मे बाधो से निकलने मे समय लगता है।

(२) दूसरी कमी परिवहन का सामायिक स्वरूप है। ठण्डे देशो मे जल मार्ग बर्फ से ढक जाने से आवागमन के सर्वथा अयोग्य हो जाते हैं। वर्षा ऋतु मे बाढ आ

कोलंबिया में किया जाता है, जहाँ की मुख्य नदी मैग्डेलेना है। यह नदी ६०० मील तक नाव्य है किन्तु इसके मार्ग में बालू के स्तूप आ जाने से नदी की गहराई कम हो जाती है तथा जल की न्यूनता भी हो जाती है, इससे माल ढोना अधिक व्ययसाध्य हो जाता है। डेल्टा से केवल ७० मील की दूरी तक ही नदी में साल भर नावें चलाई जा सकती हैं। बैरेनक्वीला और बोगोटा के बीच दो सप्ताह से भी कम में माल भेजा जा सकता है। किन्तु जब नदी में जल की कमी हो जाती है तो यातायात में ४-५ सप्ताह लग जाते हैं। इस नदी पर स्थित कोलंबिया का सबसे प्रमुख द्वार बैरेनक्वीला है। इस बन्दरगाह द्वारा कोलंबिया का कहवा, अनाज तथा बालू आदि निम्न भागों को और शक्कर, कपास तथा पशु और विदेशों से आयातित माल मैदानों से ऊँचे भागों की ओर भेजा जाता है।

ओरीनिको नदी में १५० मील तक समुद्री जहाज आ जा सकते हैं किन्तु छोटे स्टीमर लगभग ७०० मील तक पहुँच सकते हैं। इस नदी पर स्यूडाड, बॉलीवर प्रमुख बन्दरगाह हैं जिनके द्वारा चमड़ा और खालें, सोना, रबड़, और फलियाँ पोर्ट-ऑफ स्पेन तथा ट्रिनीडाड को विदेशों से निर्यात के लिए भेजी जाती हैं।



चित्र १७६. दक्षिणी अमेरिका के जल-मार्ग

अमेजन नदी अपनी सहायक नदियों सहित लगभग ५०,००० मील लम्बा जल-मार्ग बनाती है। यह अपने निचले भाग में १,००० मील तक १०० फुट से भी अधिक गहरी है और आगे २,००० मील तक यह नदी केवल २५ फुट गहरी है। इसका ढाल



चित्र १७५ यूरोप के जलमार्ग

एल्सेस से हालैंड तक नदी के किनारे-किनारे अधिक घनी जनसंख्या पाई जाती है। प्रायः हर ३० मील की दूरी पर १ लाख की जनसंख्या वाले नगर मिलते हैं। इतनी बड़ी आबादी के लिये आवश्यक माल और खाद्यान्न इसी नदी द्वारा ढोये जाते हैं। इस नदी में कई भौगोलिक सुविधायें हैं जिनसे यातायात को प्रोत्साहन मिलता है। यातायात के विचार से राइन नदी को चार खण्डों में विभाजित किया जा सकता है

(१) बॉसेल से स्ट्रासबर्ग, (२) स्ट्रॉसबर्ग से बिन्जेन, (३) बिन्जेन से बोन, और (४) बिन्जेन से राटरडम तक। बॉसेल से स्ट्रॉसबर्ग तक के भाग में द्रुत जल वेग के कारण व्यापार में कठिनाई पड़ती है। इस मार्ग में औसत ढाल प्रति किलोमीटर पीछे ८६ सैंटीमीटर है। किन्तु निचले भाग में यह ढाल केवल ३५ सैंटीमीटर रह जाता है। स्ट्रॉसबर्ग से ऊपर यात्रा कम होती है तथा जल भी कम है।[5]

स्टॉसबर्ग से नीचे जल की धारा धीमी बहती है और कोई कठिनाई नहीं पड़ती। जल का आयतन भी ग्रीष्मकाल में सम रहता है किन्तु शीतकाल में जल की मात्रा कम हो जाने से राइन में जहाजों का चलना बन्द हो जाता है।

बिन्जेन से बोन तक नदी एक तंग घाटी (Gorge) में होकर बहती है।

---

५. राइन के विभिन्न भागों में धारा की गहराई:—

	ग्रीष्म में	शीतकाल में
स्ट्रासबर्ग से मानहाइम तक	२'८ मीटर	१'७ से २ मीटर
मानहीम से बिन्जेन तक	२'८ ,,	२'३ ,,
सेंट गोर से कोलोन तक	२'९ ,,	—
कोलोन से समुद्र तक	३ से ३'५ मीटर,	मध्य मौसम में

दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी भाग मे रियो नीग्रो नदी पैंटेगोनिया प्रदेश का मुख्य जल मार्ग है।

अफ्रीका के जल-मार्ग (Waterways in Africa)

अफ्रीका की नदियाँ जब पहाड़ों और पठारों को छोड़कर मैदानी भागो मे उतरती है तो मार्ग मे असंख्य झरने और रपटें बनाती है। अत ये जलमार्गों के अनुकूल नही होती। इसके अतिरिक्त नदियों के जल-तल मे सामयिक परिवर्तन होता रहता है तथा मिट्टी जमती रहती है। अस्तु, ये बातें इनके अच्छे जलमार्ग बनने मे बाधास्वरूप है। किन्तु फिर भी मध्य अफ्रीका का १७° उत्तरी अक्षाश से १०°दक्षिणी अक्षाश तक का सम्पूर्ण भाग यातायात के लिये पूर्णत. नदियों पर ही निर्भर रहता है। नदियो के अतिरिक्त इस भाग मे न्यासा, टैंगेनिका, विक्टोरिया, चाड और रूडोल्फ झीलो मे भी जहाज चलते है

कांगो अफ्रीका की सबसे लम्बी नदी है जो लगभग ६,८०० मील तक नाव चलाने योग्य है। समुद्र से २,३०० मील तक इसमें जहाज आ सकते है। इस नदी का सम्बन्ध माटाडी से लियोपोल्डविले तक रेल-मार्ग द्वारा भी है। कोबालो मे लूलाबा-कागो रेल-मार्ग से टैंगेनिका झील तक जोड़ दी गई है। इस नदी द्वारा अधिकतर कागो गणतत्र का व्यापार होता है। इस नदी की मुख्य व्यापारिक वस्तुएँ ताड का तेल, ताड की गिरी, कठोर लकड़ियाँ, कपास, कोपल, गोद तथा कहवा आदि है।

नाइजर तथा उसकी सहायक बेनू नदी मे समुद्र से ६०० मील भीतर तक जहाज जा सकते हैं किन्तु अधिकतर जहाज ५०० मील तक चलते हैं। इस नदी का महत्व रेल-मार्गों के बन जाने से कम हो गया है क्योकि अब अधिकतर व्यापार रेलो द्वारा ही होता है जो इस प्रदेश का टिन, कपास, गिरी, ताड का तेल, मटर, चमडा आदि ले जाती है। नाइजर नदी का १४,००० वर्ग मील डेल्टा-क्षेत्र दलदली है किन्तु फिर भी इस जलमार्ग द्वारा इतना अधिक ताड का तेल और ताड की गिरी ढोई जाती है कि इस नदी का नाम ही तेल की नदी (Oil River) पड गया है। अपने ऊपरी और मध्य भाग मे यह नदी फ्रासीसी सूडान मे होकर बहती है अत. इसके द्वारा चमडा और मटर अधिक ले जाया जाता है।

यद्यपि नील मिस्र की सबसे प्रसिद्ध नदी है किन्तु यह केवल डेल्टे मे ही खेई जा सकती है। शेष भाग जल-प्रपातो और ऊबड-खाबड भूमि प्रदेश के होने से निकलता ही रहता है। यह नदी भूमध्यसागरीय प्रदेश और विषुवत् रेखीय अफ्रीका के बीच सम्बन्ध स्थापित करती है। चूँकि अधिकाश दूरी तक रेल-मार्ग इसके समानान्तर जाता है अत. इस नदी का महत्व व्यापार के लिये पहले जितना नही रहा। किन्तु पहले और दूसरे प्रपात (Cataract) के बीच रेल-मार्ग न होने से इस नदी के द्वारा ही व्यापार होता है। वैसे तो आजकल मिश्र और सूडान का व्यापार सडको द्वारा ही होने लगा है किन्तु फिर भी मिस्र के विश्व-विख्यात पिरेमिड देखने बहुत यात्री आते हैं जो इस नदी मे चलने वाले स्टीमरों से ही देश के भीतरी प्रदेशो मे पहुँचते हैं। नील नदी से होने वाले समस्त यातायात का ८०% यात्री होते हैं।

आस्ट्रेलिया के जल-मार्ग (Waterways of Australia)

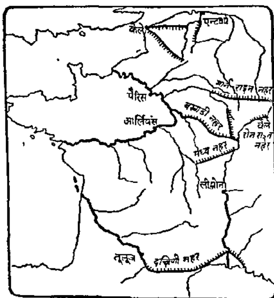
आस्ट्रेलिया मे भीतरी जल-मार्गों की बहुत कमी है। छोटे-छोटे नदी-नाले जो कि उक्त प्रदेशो से किनारो तक बहते है यहाँ के मुख्य जल-मार्ग बनाते हैं। पूर्वी नदियाँ

से जोड़ती है। (३) इसी तरह **डार्टमंड एम्स नहर** रूर को उत्तरी सागर से जोडती है। (४) **मिडलंड नहर** (Midland Canal) जर्मनी के पूर्व पश्चिम राइन और ओडर को जोडती है जिसके कारण बर्लिन प्रमुख बन्दरगाह बन गया है। (५) पूर्वी भाग की अन्य प्रमुख नहरें जो एल्ब और ओडर नदियो को जोडती है, क्रमशः **ओडर-स्प्री नहर** (Oder-Spree Canal), **होहेन-जोलर्न नहर** (Hohen Zolern Canal) और **ट्रावे नहरें** है। जर्मनी की नहरो की गहराई कम होने से उनमे चपटी पेंदे वाली नावें (Barges) चलाई जाती हैं। यहाँ लगभग ७ हजार मील लम्बी नहरें है।

फ्रांस भी भीतरी जल-मार्गों मे जर्मनी मे किसी प्रकार कम नही हैं। यहाँ पर भीतरी जल मार्गों के यातायात द्वारा अधिकतम लाभ उठाने की दृष्टि से बडी-बडी महत्वपूर्ण नदियाँ एक दूसरे से जोड दी गई है। फ्रास की समस्त नदियाँ अपने ऊपरी भागों के सिवाय सब जगह नाव्य है।

रोन नदी जो कि ५०० मील लम्बी है, जल मार्ग की दृष्टि से महत्वपूण नही है। **सैओन** यहाँ का मुख्य और अत्यन्त महत्वपूर्ण जल-मार्ग है। **सीन** नदी बरगडी पहाडियों से निकल कर पैरिस प्रदेश मे होती हुई इग्लिश चैनेल मे गिरती है। **लॉयर** नदी एक व्यापारिक मार्ग है जो बिस्के की खाड़ी मे गिरती है। **ड्रॉन** और **गारोन** यहाँ की अन्य मुख्य नदियाँ है।

फ्रास में नहरें भी जल-मार्गो का काम देती हैं। फास मे मुख्य नहर (१) **मारवी राइन नहर** (Marve Rhine Canal) है जो राइन ओर सीन के जल-मार्गों

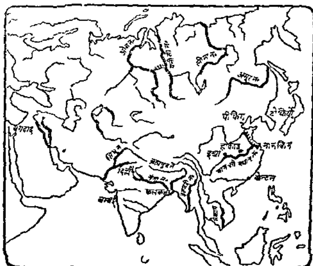


चित्र १७७. फ्रास के जल मार्ग

दक्षिणी चीन मे सिक्यांग नदी का महत्व उत्तर की याग्टसीक्यांग का जितना ही है। इसके मुख्य बन्दरगाह कैंटन और हांगकांग है।

उत्तरी चीन मे ह्वांगो नदी व्यापारिक दृष्टि से उपयुक्त नही है क्योंकि यह बहुत तेज और छिछली है। वह वीहो मे मिलने के उपरात १०० मील तक खेई जा सकती है। इसका मुख्य बन्दरगाह टीटसीन है।

उत्तरी मचूरिया मे हारबीन तक आमूर सुङ्गारी नदी नाव चलाने योग्य है और दक्षिणी मचूरिया मे लाओ नदी मे न्यूचांग और मुकडेन के बीच जहाज चलाये जाते हैं।



चित्र १८२. एशिया के जल-मार्ग

हिन्दचीन, थाइलैंड और ब्रह्मा में तो अधिकांश जनसंख्या नदियों के किनारे ही पाई जाती है। ब्रह्मा मे खेई जाने वाली नदियों की बहुलता है। ईरावदी नदी यहाँ की सबसे बड़ी और मुख्य नदी है जिसमे ५० मील से ऊपर तक स्टीमर आ जा सकते है। छोटी नावें तो बहुत ऊपर तक चली जाती हैं। इसका मुख्य बन्दरगाह रंगून है जिसके द्वारा चावल, मिट्टी का तेल, लकडियाँ, टिन, सीसा आदि निर्यात किये जाते हैं।

भारत—संपूर्ण भारत मे जल-मार्गों की लम्बाई ४१,००० मील है जिनसे २६,००० मील लम्बी नाव्य नदियाँ और १५,००० मील लम्बी नहरें हैं। भारत मे साल भर जारी रह सकने वाले जल-मार्गों पर स्टीमर्स और बड़ी-बड़ी देशी नावें चलती हैं। उत्तरी भारत में नदियों मे २,००० मील तक जहाज चलते है। जल-मार्गों की दृष्टि से बंगाल, असम, मद्रास तथा बिहार महत्वपूर्ण हैं। भारत मे जल-मार्गों की लम्बाई उत्तर प्रदेश में ७४५ मील, बिहार मे ७१५ मील, पश्चिमी बंगाल मे

बडी भीलें और सैन्ट लॉरेन्स नदी संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा दोनों की आर्थिक उन्नति के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यही नही व्यापार की दृष्टि से भी यह जल-मार्ग अद्वितीय है। इस जल-मार्ग द्वारा जहाज २,३०० मील दूर पोर्ट आर्थर तक जा सकते है। इस जल-मार्ग का मुख्य दोष यह है कि मुहाने के पास प्राय. कोहरा फैला हुआ रहता है। सर्दी मे वर्फ जम जाता है और मार्ग मे कई और प्रपात और

चित्र १७८. उत्तरी अमेरिका के जल मार्ग

झरने पडते हैं। जहाजो को कोहरे में दुर्घटनाओं से बचाने के लिए सर्चलाइट और हॉर्न का प्रयोग किया जाता है। सर्दी मे बर्फ तोडने वाले जहाज नदी को जहाजरानी के उपयुक्त बनाये रखते हैं। मार्ग के प्रपातों और झरनो की कठिनाइयो को नहरें बना कर दूर कर दिया गया है। सैन्ट लॉरेन्स नदी और बडी भीलें जगह-जगह नहरें बना कर मिलादी गई हैं। सुपीरियर झील और ह्यूरिन के बीच सू नहर, ईरी झील और ओन्टेरियो के बीच वैलेन्ड नहर और बार्ज नहर (जो सैन्ट लॉरेन्स और हडसन मोहाक को जोड़ती है) यहाँ की मुख्य नहरें हैं।

कनाडा मे रेड, अल्बेनी, ससकेचुआन, मैकेंजी, यूकन, फ्रेजर, स्कीना और कोलम्बिया मुख्य नदियाँ हैं जो यहाँ के स्थानीय व्यापार मे महत्वपूर्ण सहयोग देती हैं।

दक्षिणी अमेरिका के जलमार्ग (Waterways in South America)

दक्षिणी अमेरिका में जलमार्गों के रूप मे नदियों का सबसे अधिक उपयोग

ब्रह्मपुत्र नदी :	
डिब्रूगढ़ से सदिया तक (केवल वर्षा ऋतु में)	६० मील
भागीरथी नदी :	
कलकत्ता से गङ्गा नदी तक (केवल वर्षा ऋतु में)	१८० ,,
ब्रह्मपुत्र नदी :	
डिब्रूगढ़ से धूबरी	४०० ,,
सहायक नदियों में सेवाऐं	३७५ ,,
सुरमा घाटी में सहायक सेवाऐं	८५ ,,
हुगली नदी :	
कलकत्ता से सुन्दर वन	१५० ,,
घाघरा नदी :	
गङ्गा के संगम से बरहज	६७ ,,
गंगा नदी :	
पटना से बक्सर	१०० ,,
पटना से लालगोला	३१५ ,,
जोड़	१,७६२ मील

दक्षिणी भारत में गोदावरी, कृष्णा, नर्बदा तथा ताप्ती नदियों के निचले भागों में ही नावें चल सकती हैं। इनका शेष भाग पठारी है। गंगा नदी में मुहाने से ५०० मील ऊपर तक (जहां लगातार रूप से नदी ३० फुट गहरी है) कानपुर तक स्टीमर चला करते हैं। छोटी-छोटी नावें तो हरद्वार तक जा सकती हैं किन्तु रेलों के बन जाने से गंगा का महत्व कम हो गया है। सन् १८५४ तक इलाहाबाद से ४०० मील और ऊपर गढ़मुक्तेश्वर तक स्टीमर चले जाते थे, किन्तु अब केवल बक्सर तक ही नदी पर नावें चलाई जा सकती है। यमुना नदी में प्रयाग के राजापुर तक साल भर नावें चलती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी में मुहाने से डिब्रूगढ़ तक ८६० मील तक नावें चलती है किन्तु इस नदी में नावें चलाने में कुछ असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। नदी के मार्ग में प्राय नये-नये द्वीप बने रहते हैं जिससे नावों को खेने में बड़ी अड़चन पड़ती है, तथा वर्षा ऋतु में पानी की तेजी के कारण नावों को उलट जाने का डर रहता है। हुगली नदी में भी नाडियाड तक जहाज पहुँच सकते है। छोटी-छोटी नहरें बड़ी-बड़ी नदियों को जोड़ती है, इसलिए कलकत्ता से असम तक स्टीमर चलते हैं। अधिकांश जूट, चाय और चावल नावों में ही बड़े-बड़े शहरों में पहुँचाया जाता है।

यद्यपि भारत में नदियां बहुत हैं किन्तु फिर भी आन्तरिक आवागमन के लिए उनका पूर्ण उपयोग नहीं होता। इसका मुख्य कारण भूमि की रचना तथा अब तक विदेशी सरकार का ध्यान केवल रेल-मार्गों की उन्नति करना ही रहा है। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित मुख्य कारण हैं :—

प्रति मील पीछे $\frac{२}{१०}$" गिरता जाता है। अधिक वर्षा के समय इसमे बाढें आती है। इस समय अधिक पानी होने से सामुद्रिक जहाज १००० मील तक मैनोस तक जा सकते है, किन्तु बडी नावे २,३०० मील तक पहुँच जाती हैं। सूखे मौसम मे नदी का मार्ग छोटा हो जाता है। यद्यपि जल मार्ग की दृष्टि से यह नदी अच्छा मार्ग उपस्थित करती है किन्तु जिस प्रदेश मे होकर यह बहती है वह बहुत ही कम आबाद, पिछडा हुआ और विषुवतीय वनो से आच्छादित है अत इसका पूर्ण उपयोग नही हो पाता। मोटे तौर पर ब्राजील, बोलीविया, पीरू और कोलंबिया राज्यों की लगभग २० लाख वर्ग मील भूमि यातायात के लिए इसी नदी पर निर्भर है। इसके मुख्य बन्दरगाह मैनोस और इक्वीटॉस हैं जिनके द्वारा अमेजन घाटी की पैदावार—रबड़, ब्राजील-नट, टैंगुआ-टन, बालटा और कठोर लकड़ियाँ—निर्यात की जाती हैं।

दक्षिणी अमेरिका का सबसे उत्तम जल मार्ग **प्लाटा-पराना-पैरेग्वे** नदियाँ प्रस्तुत करती हैं। यह नदियाँ अर्जेन्टाइना, यूरेग्वे, परेग्वे तथा दक्षिणी ब्राजील मे फैली हैं। प्लाटा-पैराना-पैरेग्वे जल-मार्ग ब्यूनेसआयर्स से कोरुम्बा तक १७०० मील लम्बा

चित्र १८० अफ्रीका के जल-मार्ग

है। सामुद्रिक जहाज साधारणतः पैराना में अनाज तथा माँस लाने के लिये रोसारियो और सैन्टा फे तक चले जाते हैं। प्रति वर्ष एसनशन मे लगभग ४,००० जहाज आते हैं। पैराना और पैरेग्वे नदियो मे बड़े जहाज १८० मील ऊपर कन्सैपशन तक और छोटे जहाज कोरुम्बा तक जा सकते हैं। इस जल मार्ग द्वारा चमडा, लकडियाँ, माँस, कपास, नारियल का तेल, मैंगनीज तथा कच्चा लोहा यूरोप के देशो को निर्यात किया जाता है।

(५) महानदी योजना के अन्तर्गत हीराकुण्ड बाँध के पूरा हो जाने पर महानदी का ३०० मील का टुकड़ा जल यातायात के योग्य हो सकेगा।

(६) उड़ीसा की तटीय नहरों को बढाकर मद्रास की नहरों से जोड दिया जाय जिससे असम से मद्रास तक जल यातायात का सीधा सम्पर्क स्थापित किया जा सके।

(७) मध्य प्रदेश में नर्मदा और ताप्ती नदियों को भी यातायात के योग्य बनाने का प्रश्न विचाराधीन है।

वृहत योजना (Master Plan)—केन्द्रीय जल तथा बिजली आयोग (Central Power and Water Commission) ने सन् १९५६ में आन्तरिक जल मार्गों के विकास के लिए एक दीर्घ कालीन योजना Master Plan बनाई थी। इस योजना के अनुसार —

(i) पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक अविरल (Continuous) मार्ग बनाने के उद्देश्य से गंगा को नर्मदा ताप्ती से मिलाने के निमित्त आयोग ने निम्न ४ योजनायें बनाई हैं —

(क) नर्मदा को सोन की सहायक जोहिला द्वारा सोन से (जो गंगा की सहायक है) मिलाना।

(ख) हिरन और कटनी द्वारा (जो क्रमश नर्मदा और सोन की सहायक है।) नर्मदा को सोन से जोडना।

(ग) करम् नदी द्वारा (जो नर्मदा की सहायक है) नर्मदा को चम्बल से (जो यमुना की सहायक है) जोड़ना।

(घ) केन और हिरन द्वारा (जो क्रमश. यमुना और केन की सहायक है) नर्मदा को यमुना से जोडना।

(ii) इसी भाँति पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक जल-मार्ग बनाने के लिये नर्मदा को गोदावरी से जोडा जायेगा, ताकि महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और आंध्र का पृष्ठ-देश-जल मार्ग द्वारा मिल जाय।

(iii) पूर्वी और पश्चिमी तटों के बीच एक दूसरा जल मार्ग बनाने के विचार से आयोग ने वार्धा (जो गोदावरी की सहायक है) द्वारा ताप्ती को गोदावरी से मिलाने का भी सुझाव दिया है।

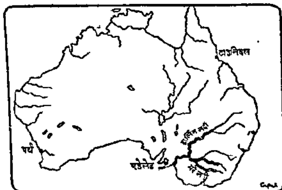
(iv) चौथी योजना द्वारा उत्तरी भारत को दक्षिणी भारत से मिलाने का विचार है, अर्थात्-कलकत्ता बन्दरगाह से कटक और मद्रास होकर कोचीन तक जल मार्ग बन जायगा। इसके लिए सोन और रिहन्द (जो गंगा और सोन की सहायक हैं) नदियों द्वारा गंगा को महानदी से जोड़ा जायगा।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट होगा कि अनेक औद्योगिक और व्यापारिक देशों में नदियाँ अब भी यातायात की प्रमुख साधन है क्योंकि —

(१) नदियों के धीमे मार्ग होते हुए भी स्थल मार्गों से सस्ते हैं क्योंकि नावें आदि चलाने के लिए सड़कें या रेल की पटरियों की आवश्यकता नहीं होती तथा रेल और मोटर की अपेक्षा नावों में शक्ति की आवश्यकता भी कम होती है।

(२) पिछड़े हुए देशों में जहाँ रेलों और सडकों का सर्वथा अभाव है जैसे

वर्षा के अन्दर कुछ दूरी तक ही मार्ग बनाती हैं। यहाँ की दो मुख्य नदियाँ मरें और डार्लिंग बोर्को तक १२०० मील लम्बा जल-मार्ग बनाती हैं। मरें नदी आस्ट्रेलियन आल्पस के बर्फीले पहाड़ो से निकल कर अच्छे वर्षा वाले प्रदेश से बहती है—इसलिये यह जल-मार्ग और सिचाई दोनो दृष्टियो से उत्तम है।



चित्र १८१. आस्ट्रेलिया के जल-मार्ग

एशिया के जल-मार्ग (Waterways of Asia)

एशिया महाद्वीप के मुख्य जल-मार्ग भारत और चीन में स्थित हैं। चीन मे कुल मिलाकर लगभग १,००,००० मील लम्बी नदियाँ और नहरें है, जिनमे से अधिकाश यातायात् के लिए काम मे आती हैं। इन सबमे मुख्य यांगटसीक्यांग नदी है जो ३, १०० मील लम्बी है। यह नदी शघाई के निकट पूर्वी चीन सागर मे गिरती है। इस नदी में नावो द्वारा इसके मुहाने से १५०० मील भीतर चुङ्किंग तक यातायात होता है, बड़े-बडे जहाज नदी में शघाई और नानकिंग के बीच वर्ष भर ही चलते हैं। ग्रीष्म मे ये जहाज हैंकाऊ तक जाते है। इस नदी में सबसे अधिक यातायात होने के तीन मुख्य कारण है—(१) इस नदी मे नाव चलाने योग्य शाखायें उत्तर और दक्षिण मे आकर मिलती है तथा इसका सम्बन्ध नहरो से है जिसके द्वारा अधिक व्यापार करने मे सहायता मिलती है। (२) इस जल-मार्ग के किनारे सघन जनसख्या पाई जाती है जो इसका अधिक उपयोग करती है। (३) इस प्रदेश मे रेल-मार्गो से स्पर्धा नही है। जब अधिक बाढ आती हैं तो निकटवर्ती झीलों—पोयाग, टङ्गटिंग और टाई—मे जल चला जाता है, अत. नदी बाढ से बच जाती है। गर्मी की ऋतु मे भी इस नदी मे जल की कमी नही पडती। जलयानो के लिए जल भी नदी मे काफी गहराई तक रहता है। राइन के बाद यांगटसीक्यांग नदी ही ससार की सबसे व्यस्त नदी कही जाती है। अधिकतर व्यापार छोटे स्टीमरों द्वारा ही होता है। बड़े जहाज ऐसे केन्द्रो पर जहाँ वे नदी की गहराई कम हो जाने से आगे नही बढ़ पाते हैं अपना व्यापारिक माल स्टीमरों में लाद देते हैं। इस नदी द्वारा नीचे की ओर चाय, तुङ्ग का तेल, रेशम, कोयला, अनाज आदि ढोया जाता है तथा ऊपर की ओर कैरोसीन, सूती वस्त्र आदि।

(५) दलदली मार्गों से गुजरने वाली नदियों में भी यातायात नहीं हो सकता क्योंकि इसमें जहाज या छोटी नावें फँस जाती हैं।

(६) नदी की चाल हल्की होनी चाहिये। अत्यधिक द्रुतगति होने से नावें धारा के साथ नीचे तो जा सकेंगी किन्तु धारा के विरुद्ध ऊपर नहीं जा सकेंगी।

(७) नदियों की गहराई प्रत्येक भाग में पर्याप्त होनी चाहिये अन्यथा एक भाग में तो नावें चल सकेंगी किन्तु दूसरा भाग बेकार होगा।

(८) दूरी और लम्बाई कम करने के लिये यह आवश्यक है कि नदियों में मोड़ (Meanders) अधिक न हों। मोड़ वाली नदियों को यातायात के उपयुक्त बनाने के लिये खोदकर सीधा करना पड़ता है जिसमें काफी खर्च होता है। राइन नदी व्यापार के लिये इसी प्रकार उपयुक्त बनाई गई है।

(९) नदी के पेंदे में रेतादि नहीं जमनी चाहिये इससे पानी की गहराई घट जाती है और मामो (Dredgers) द्वारा पेंदा गहरा करना पड़ता है।

(ख) झीलें (Lakes)

विश्व में उत्तरी अमरीका को छोड़कर अधिकतर देशों में झीलें व्यापार के उपयुक्त नहीं हैं। उत्तरी अमरीका में पाँच झीलें हैं—सुपीरियर, मिशीगन, ह्यूरन, ईरी और औन्टेरियो। ये झीलें और इनकी नहरें सब मिलाकर ९५,००० वर्गमील [illegible] में विस्तृत हैं। इनके द्वारा दक्षिणी कनाडा और उत्तरी संयुक्त राज्य अमे-[illegible] का व्यापार होता है। इन झीलों में जहाँ झरनें बाधा पहुँचाते थे नहरें बना दी गई हैं; जैसे सू नहर (Soo Canal), सुपीरियर और ह्यूरन के बीच में (जो सोल्ट सैंट मेरी के झरनों को दूर करती है); वेलेण्ड नहर (Walland Canal), ईरी और औन्टेरियो के बीच में (न्यागरा को दूर करती है); सेंट लॉरेंस नहर (St. Lawrence Canal) जो औन्टेरियो और सैंट लॉरेंस नदी के बीच के झरनों को दूर करती है। इन नहरों के बनाये जाने से सैंट लॉरेंस नदी के मुहाने से लेकर २,००० मील दूर तक काफी बड़े स्टीमर आ जा सकते हैं। यह स्टीमर विशेष रूप से इन्हीं नहरों के लिए बनाये गये हैं।

इन झीलों का वार्षिक व्यापार विश्व की दो बड़ी नहरों—स्वेज और पनामा—के कुल ट्रैफिक से अधिक है। इन झीलों के व्यापारिक महत्व के कारण ये हैं (१) ये झीलें काफी गहरी हैं जिससे बड़े-बड़े स्टीमर—जिनमें काफी सामान ढोया जाना है—आसानी से आ-जा सकते हैं। (२) इनका विस्तार पूर्व-पश्चिम है जिधर संयुक्त राज्य के सामान के आने-जाने का प्रधान मुख है, (३) अमेरिका में गेहूँ, लोहा कोयला, लकड़ी आदि पर्याप्त होने के कारण इन झीलों की भौगोलिक स्थिति अत्यन्त सुन्दर है। (४) आवश्यक्ता के अनुसार गहरी होने के कारण इन झीलों के द्वारा सामान ढोने में किराया रेल से कम लगता है। (५) झीलों के किनारे सभी बन्दर-गाहों पर सारे रेल-मार्ग केन्द्रित होते हैं। दुर्भाग्य से ये झीलें जाड़े के दिनों में जम जाने के कारण व्यापार के लिए बेकार हो जाती हैं, फिर भी विश्व का यह प्रसिद्ध और उपयोगी भीतरी जल-मार्ग अमेरिका की रेलों, उद्योगों, व्यापारिक केन्द्रों और घनी आबादी को आकर्षित किये बिना रहता है।

इन झीलों द्वारा होने वाले व्यापार का ९५% कच्चा लोहा, चूना कोयला, पैट्रोलियम और अनाज होता है। लोहा अधिकतर ईरी झील के बन्दरगाहों के लिये

७७७ मील, असम मे ६९० मील, उड़ीसा मे २८७ मील और मद्रास में १७०० मील है। भारत के परिवहन मंत्रालय के अनुसार नाव चलाने योग्य जल-मार्गों की लम्बाई ५,१४२ मील है।[6] इन आँकड़ों मे बड़े-बड़े जहाजों और बड़ी-बड़ी नावों द्वारा



चित्र १८३. भारत के जल-मार्ग

प्रयुक्त किये जाने वाले मुख्य-मुख्य जल-मार्ग ही शामिल है। इसमे से १,७६२ मील मे बडे-बडे जहाज चल सकते हैं, जैसा कि निम्न तालिका मे प्रतिभासित होगा[7] और शेष पर देशी नावें।

6. **India,** 1962, p. 356.

7. **Indian Year Book,** 1958-59, p. 321.

मे बाधा डालने वाले झरनो और प्रपातो को दूर करने के लिये, अथवा (३) उन प्रदेशो के व्यापार को उन्नत करने के लिये होता है जहां अन्य साधन सरलतापूर्वक प्राप्त नही हो सकते । जहाजी नहरो की लम्बाई-चौडाई काफी होती है जिनसे होकर बडे-बडे जहाज निकल सकते हैं । चूँकि यह भूमि को काट कर बनाई जाती है इसलिये कई देशो के बीच की समुद्री दूरी बहुत कम हो जाती है । सडको रेलो और नदियो के साथ-साथ यह भी देशो के भीतरी व्यापार मे अपना हाथ बँटाती हैं । कई नहरो का महत्व तो केवल स्थानीय ही होता है । किन्तु कइयो का महत्व अन्तर्राष्ट्रीय भी होता है । विश्व मे सबसे अधिक नहरें यूरोप मे है । फ्रास एव जर्मनी मे तो नहरो का जाल बिछा है । यहाँ सरकारी नीति के कारण नहरो का प्रयोग अधिक होता है । ये राज्य नहरो को निरन्तर जीवित रखते हैं । इन देशो की बहुसख्यक नहरें औद्योगिक प्रदेशो मे है जहां कोयला ही सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है जिसे नहरें ढोती हैं । जहाजी नहरो के बन जाने से कुछ जल-मार्गो का महत्व बढ गया है क्योकि इनमे या तो दूरियाँ कम हो गई है (जैसे पनामा और स्वेज द्वारा) या कुछ भागों पर व्यापार केन्द्रीभूत हो गया है (जैसे सेंट सू नहर पर) । विश्व की कुछ महत्वपूर्ण नहरें ये हैं :— (१) स्वेज नहर, (२) पनामा नहर, (३) कील नहर, (४) सू सैंट मेरी नहर, (५) मैनचेस्टर जहाजी नहर, (६) उत्तरी सागर की नहर, (७) न्यू वाटर वे, और (८) स्टैलिन नहर ।

(१) स्वेज नहर (Suez Canal)

स्वेज नहर ससार की सबसे बडी जहाजी नहर है जो स्वेज के स्थल डमरूमध्य को काट कर बनाई गई है । यह भूमध्यसागर को लाल सागर से जोडती है । पुराने समय से ही यूरोप और एशिया के बीच मे होने वाला व्यापार इसी स्थल डमरूमध्य के द्वारा होता था अत इस डमरूमध्य का महत्व अधिक रहा है । पिछली शताब्दी के मध्य मे इसी को काट कर फर्डीनेन्ड डी लेसेप्स (Ferdinend De Lesseps) नामक एक फ्रांसीसी इजीनियर की देख-रेख में यह नहर सन् १८६६ मे बनाई गई । इसके बनाने मे १८० लाख पौंड खर्च हुआ और निर्माण कार्य १८५६ मे आरम्भ होकर १७ नवम्बर १८६६ मे समाप्त हुआ ।

इस नहर की खुदाई स्वेज कम्पनी ने की थी जिसकी पूँजी ८० लाख पौंड थी जिसके आधे हिस्से फ्रासीसी सरकार ने और आधे मिस्र के तत्कालीन बादशाह सईद सय्यैद पाशा ने खरीदे थे । बाद को अग्रेज सरकार ने १८७५ मे मिश्र के बादशाह से हिस्से खरीद लिये । आरम्भ मे जो समझौता हुआ था उसके अनुसार १८६६ से लगाकर १०० वर्षों का ठेका कपनी को दिया गया । यह ठेका १७ नवम्बर १९६९ को स्वत ही समाप्त होने वाला था जिसके बाद नहर पर मिश्र का अधिकार होने वाला था, किन्तु इसके पूर्व ही सन् १९५६ मे कर्नल नासेर ने स्वेज के राष्ट्रीयकरण की घोषणा करदी ।

यह नहर लाल सागर स्थित पोर्ट स्वेज को भूमध्यसागर स्थित पोर्ट सैयद से मिलाती है । यह नहर १०१ मील लम्बी है । इसकी कम से कम गहराई ४० फुट और चौडाई १९५ फुट से २४६ फुट तक है । मोडो पर चौड़ाई अधिक है, जहाँ वह २६५ फुट से ३६० फुट हो जाती है ।[8]

इस नहर के बनाने मे नमकीन झीलो (Great Bitter Lakes) का भी उपयोग किया गया है । यह पोर्ट सैयद के क्वातरा तक रेल की लाइन के साथ-साथ

8. **Britannica Book of the Year,** 1963, p 484.

(१) भारत की अधिकांश नदियों में वर्षा के दिनों में बाढ आ जाती है। इस समय नदी की धारा तेज होती है, अत: उससे नाव खेना बडा कठिन होता है। (२) गर्मी के दिन में अधिकाश नदियाँ सूखी रहती है। जो कुछ थोड़ा-बहुत पानी नदियो मे मिलता है वह जाड़ों और गर्मियो केआरम्भ में यहाँ की विशाल नहर-व्यवस्था को पानी देने के लिये उपयोग मे आ जाता है। सिंचाई के लिए पानी को इस तरह अलग कर देते से नदियो मे सूखी ऋतु मे पानी नही रहता। (३) दक्षिण की नदियाँ तो पठारी भूमि पर बहने के कारण नावें चलाने के योग्य है ही नही, क्योंकि इनके मार्गों मे जगह-जगह प्रपात पडते हैं। (४) कभी-कभी नदियाँ अपने मार्ग भी बदला करती हैं इस कारण भी उनका उपयोग नही किया जा सकता है क्योंकि वे एक किनारे से दूसरे किनारे की ओर पतली धारा के रूप मे बहने लगती हैं। अधिकतर नदियो के किनारे बहुत दूर तक रेती रहती है इस कारण नदी के किनारे तक लदी हुई गाड़ियो का आना कठिन हो जाता है। (५) प्राय. सभी नदियाँ छिछले तथा बालूमय डेल्टाओं में गिरती हैं। अतः समुद्री किनारे से देश के भीतरी भागो मे जहाज नही जा सकते।

केन्द्रीय जलशक्ति, सिंचाई तथा नौका संचालन आयोग ने भारत के विभिन्न भागो में जल-मार्गों की उन्नति करने की जो योजना बनाई है वह इस प्रकार है :—

(१) बंगाल मे दामोदर घाटी योजना (Damodar Valley Project) के फलस्वरूप रानीगंज की निचली कोयले की खानो को हुगली नदी से एक जल यातायात की नहर के द्वारा मिलाया जायगा तथा गगा बैरेज प्रोजेक्ट के अन्तर्गत भी एक नहर बनाने की योजना है जो भागीरथी से भाँसीपुर के पास मिलेगी। गगा नदी और भागीरथी के बीच के जल-मार्ग, तीस्ता-नदी योजना के अन्तर्गत उत्तरी बगाल के जल-मार्ग तथा पूर्वी बगाल और कलकत्ते के बीच के जल-मार्गों का पुनर्निर्माण किया जायगा। इस योजना के अनुसार गगा नदी पर बिहार में स्थित साहिबगंज से २४ मील नीचे राजमहल स्थान पर एक बाध बनाया जायगा। इसकी सहायता से गगा नदी के पानी को एक नहर द्वारा भागीरथी नदी की तलहटी मे डाल दिया जावेगा। यह योजना कई उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बनाई जा रही है—(i) बगाल-बिहार की सीमा पर गगा नदी के आर-पार भागीपुर पर बाँध बनाया जावेगा। (ii) इसी प्रकार भागीरथी तथा पश्चिमी बगाल की अन्य नदियों मे अधिक जल की व्यवस्था हो सकेगी। (iii) कलकत्ता और बिहार-उत्तर प्रदेश के बीच का सीधा जल मार्ग नाव्य हो जायगा तथा वर्तमान मार्ग ५०० फीट से छोटा हो जायेगा। (iv) हुगली नदी मे अधिक पानी आ जायेगा और उसके फलस्वरूप यह नदी नाव चलाने के योग्य बनी रह सकेगी। इस योजना के पूरे होने पर दो लाभ होंगे (अ)—भागीरथी मे साल भर पानी भरा रहेगा। (ब) हुगली नदी के पानी का खारापन भी जाता रहेगा।

(२) असम की दीहींग, डिब्रू, धनसीरी, कलाग नदियो का पुनरुत्थान करना।

(३) बिहार मे गडक और कोसी नदियो तथा उनकी सहायक नदियो का पुनर्निर्माण करना तथा सोन घाटी योजना के अन्तर्गत सोन नदी को १५० मील तक यातायात के योग्य बनाना।

(४) बेतवा और चम्बल नदियो की बाढ के पानी को रोककर ऐसी व्यवस्था करना जिसके फलस्वरूप शीत ऋतु मे भी यातायात के लिये पर्याप्त पानी की मात्रा उपलब्ध हो सके।

चते हैं इसमे उन्हे २५ से ३०% की बचत हो जाती है। अब नई योजना के अनुसार १२ करोड पौण्ड खर्च कर यातायात की सुविधाये बढ़ाई जा रही हैं जिससे ४५ से ५० तक बड़े-बड़े जहाज प्रतिदिन नहर मे होकर निकल सकें। नहर को ठीक अवस्था मे रखने के लिये निरन्तर खुदाई और गाद निकालने का काम जारी रखना पड़ता है।

नहर का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व—स्वेज का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व बहुत अधिक है। आरम्भ से ही ससार के देशो ने यह आश्वासन चाहा कि स्वेज मार्ग प्रत्येक देश के लिए शान्ति और युद्ध दोनो कालो में समान रूप से खुला रहेगा।[९] यदि ऐसा बहुमूल्य और महत्वपूर्ण जल मार्ग किसी एक देश के आधिपत्य में आ जाये तो सारे एशिया और यूरोप का भाग्य उस देश की इच्छा पर निर्भर रहेगा, बल्कि युद्ध के समय कोई भी राष्ट्र नहर को हानि पहुँचा कर ससार के लिए विपत्ति खड़ी कर सकता है। अतएव २९ अक्तूबर १८८८ को ब्रिटेन, जर्मनी, आस्ट्रिया, हंगरी, स्पेन, फ्रास, इटली, नीदरलैंड, रूस और टर्की इन देशो ने एकत्रित होकर कुस्तुनतुनिया में एक सधि पर हस्ताक्षर किये। इस सधि के अनुसार तय हुआ कि :—

(१) स्वेज नहर का जल-मार्ग युद्ध और शाति दोनों ही कालो मे प्रत्येक देश के व्यापारिक अथवा लडाकू जहाजों के लिये खुला रखा जायगा। इस मार्ग को कभी बन्द नही किया जायगा। न केवल स्वेज बल्कि उसमें गिरने वाली साफ पानी की नहरो को भी सुरक्षित रखा जायगा।

(२) युद्ध के समय जहाँ लडने वाले राष्ट्रो के जगी जहाज युद्ध के सामान और फौजें आदि इस मार्ग से स्वतन्त्र रीति से आ जा सकेंगे वहाँ प्रत्येक राज्य इस बात का ध्यान रखेगा कि नहर के भीतर और उसके मुहाने के बन्दरगाहो से ३-३ मील के घेरे के भीतर कोई आक्रमण अथवा लडाई का अभ्यास नही किया जायगा।

(३) नहर की सुरक्षा और देखमाल की जिम्मेदारी मिस्र सरकार पर होगी, जो यह भी देखेगी कि कोई राज्य सधि की धाराओं का उल्लघन तो नही करता।

(४) स्वेज नहर पर खतरा होने पर मिस्र और टर्की नहर को आवश्यकता पड़ने पर बन्द भी कर सकते हैं और उसकी नाकाबन्दी भी कर सकते हैं। उस समय इस कार्य को सन्धि के विरुद्ध न समझा जायगा।

सन् १८८२ से ही ब्रिटिश सेनायें स्वेज क्षेत्र मे ही स्थित रही हैं और व्यावहारिक रूप में इगलैंड का इस नहर पर पूर्ण अधिकार रहा है। इस नहर के खुलने से यूरोपीय राष्ट्रो और विशेषतया ब्रिटेन को अपने सुदूर पूर्व उपनिवेशो से कच्चा माल प्राप्त करने और बने माल को बेचने में बड़ा प्रोत्साहन मिला है। उपनिवेशो पर शासन सम्बन्धी नियन्त्रण रखने मे भी इस नहर का महत्व बहुत अधिक है। व्यापार और साम्राज्य की रक्षा का विचार करते हुए ही कहा जा सकता है कि "स्वेज नहर ब्रिटिश साम्राज्य की जीवन रेखा है"।[१०] प्रथम महायुद्ध के समय अंग्रेजो के आधे से अधिक जहाज पनडुब्बियो (Submarines) द्वारा इस नहर में नष्ट किये गये। इससे

---

9. According to International Convention (1888) : "The Suez is free and open, in times of war as in times of peace to every vessel of Commerce or of war, without distinction of flag".

10. "Suez route has long been called the life-line of the British Empire"—*Smith, Phillips and Smith*, **Op. Cit.**, p. 642.

चीन, मध्य अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका में, नदियाँ ही इस अभाव को दूर करती हैं।

(३) यह यातायात का बहुत सस्ता तथा धीमा साधन है इसलिए भारी, कम कीमत और शीघ्र खराब न होने वाली वस्तुएँ—कच्ची धातुएँ, कोयला, लट्ठे नमक आदि—इनके द्वारा ढोए जाते हैं।

(४) बहुत नदियाँ तथा नहरें अन्य यातायात के साधनों की पूरक का काम करती हैं क्योंकि ऐसे प्रदेशों—सघन वनों आदि—से, जहाँ रेल अथवा मोटर नहीं पहुँच पाती, नावें सामान ढोकर लाती हैं।

(५) नदी, नहर या झील यातायात का मार्ग स्थायी और स्थिर है। इसमें स्थल या सामुद्रिक मार्गों की तरह दिशा परिवर्तन नहीं किया जा सकता। ये एक ही मार्ग से चलती है। इस पर चलने वाले जहाजों का आयतन भी बहुत कम होता है।

जलमार्गों सम्बन्धी भौतिक दशायें

जिन देशों में रेलों का विकास हो गया है, नदियों का महत्व घट गया है क्योंकि नदियों द्वारा माल अधिक देर में पहुँचता है रेलवे साइडिंग पर माल रखने और जब आवश्यकता हो तब भरने की सुविधा होती है जो नदियों और नहरों से माल ले जाने में नहीं होती है। अधिक मूल्यवान वस्तुएँ या तो बिगड़ जाने वाले पदार्थ होते हैं अथवा जब समय की बचत की आवश्यकता होती है तो नदियों का महत्व अधिक नहीं रह जाता क्योंकि वे धीमी बहने वाली होती है। इसके अतिरिक्त सभी नदियाँ व्यापारिक जलमार्ग के उपयुक्त नहीं होती। अस्तु उनका उपयोग तभी हो सकता है जब वे नौमार्ग के उपयुक्त हों।

नदियों के लिए उत्तम जल-मार्ग प्रदान करने के लिये यह आवश्यक है कि—

(१) उनमें जल की गहराई सर्वत्र समान हो तथा जल की मात्रा भी समान रहे। शुष्क हो जाने अथवा बाढ़ आ जाने से यातायात में बाधायें पड़ जाती है और यातायात बन्द हो जाता है। अधिक वर्षा और बाढ़ें आने के कारण अमेजन, कांगो और मिसीसिपी की उपयोगिता घट जाती है।

(२) नदियाँ बर्फ के प्रभाव से सर्वथा मुक्त होनी चाहिए अन्यथा जल के जम जाने से आना-जाना रुक जाने की सम्भावना हो जाती है। अस्तु, यह आवश्यक है कि वह बर्फ रहित समुद्रों में गिरती हो। सैंट लॉरेंस, यनीसी, लीना और ओबी तथा मैकेंजी आदि नदियाँ साल के ३-४ महीने बर्फ से जम जाने के कारण यातायात के लिये बन्द हो जाती है।

(३) कई नदियाँ मार्ग में रपटें और झरने होने से तथा कई दलदल में बहने के कारण और कई अपने-अपने असमान तल के कारण साल भर अच्छे यातायात का साधन उपस्थित नहीं करती। अतः यह आवश्यक है कि नदियों के मार्ग में रपट, झरने अथवा चट्टानें नहीं होनी चाहिये।

(४) नदियों का मार्ग तंग और गहरी घाटियों में न होकर मैदानी भाग में सघन जनसंख्या वाले प्रदेशों या औद्योगिक क्षेत्रों में ही होना चाहिये जिससे माल और यात्री मिलने की सुविधा हो सके।

,,	कलकत्ता	७,६३३	११,४५०	४०	५७
,,	कोलम्बो	६,७२०	१०,३५०	३४	५२
,,	सिंगापुर	८,२४०	११,५७५	४१	५८
,,	पिनांग	७,९५०	११,२८५	४०	५६
,,	सिडनी	११,६३०	१२,४५०	५८	६२
,,	वैलिंगटन	१२,६५०	१३,२५०	६३	६६
,,	हांगकांग	६,६८०	१३,०१५	४८	६५
नीदरलैंड से इण्डोनेशिया		८,५०२	११,१५०	४३	५६

आरंभ से इस नहर का उपयोग सबसे अधिक इंगलैंड ही करता था किन्तु अब धीरे-धीरे दूसरे देश भी इसका अधिक प्रयोग करने लगे हैं। सन् १९३९ मे स्वेज मे होकर निकलने वाले ५८% जहाज इंगलैण्ड के ही थे। सन् १९५२ मे इंगलैण्ड का भाग ३७% ही रह गया। अब लाइबेरिया, फ्रास, इटली, नीदरलैंड, स्वीडेन, अमेरिका, डेनमार्क, जर्मनी और पनामा के जहाज भी बहुत सख्या मे इस नहर द्वारा जाने लगे हैं। यातायात किस गति से बढता जा रहा है इसका अनुमान इससे हो सकता है कि जहाँ १९५२ मे सब मिलाकर ८ करोड ६१ लाख टन के जहाज नहर मे से गुजरे थे वहाँ सन् १९६० मे १५ करोड़ ७० लाख टन के जहाज नहर मे होकर गुजरे। इसमे से ७३% तेल ले जाने वाले जहाज थे।

इस नहर मे होकर प्रतिवर्ष लगभग १२,००० जहाज निकलते हैं जिनमे से एक तिहाई ब्रिटेन के होते हैं। १९३९ में भिन्न-भिन्न देशो के निकलने वाले जहाजो का प्रतिशत इस प्रकार था—ब्रिटेन ५८%, इटली ५%, हॉलैंड १२%, जापान ४%, जर्मनी ८%, अमेरिका ३%, फ्रांस ७%।

स्वेज से निकलने वाले विभिन्न देशो के जहाजो का भार इस प्रकार है

देश	१९५२	१९६०
	(लाख टन)	
ब्रिटिश	२८६	३३०
नार्वे	१३५	२४५
लाइबेरिया	३१	२३४
फ्रास	७७	१५३
इटली	४७	१२८
डच	३९	६४
स्वीडेन	२६	५७
डेनमार्क	२५	५४
जर्मनी	—	४५
रूसी	—	२८
अमेरीकी	—	४२
जापानी	—	१९

भेजा जाता है जहाँ से यह रेल द्वारा पिट्सबर्ग और यंग्सटाऊन को जाता है। ईरी झील द्वारा अपलेशियन प्रदेश का कोयला पश्चिम को भेजा जाता है। यह कोयला ईरी झीलों के बन्दरगाह से डिट्रायट जिलों को भेजा जाता है। मिशीगन झील का दक्षिणी सिरा मक्का की पेटी (Maize belt) के भीतर तक जाता है जिससे मध्य-वर्ती कृषि प्रदेश के सारे पदार्थ इसी भाग द्वारा पूर्व को भेजे जाते हैं। इस मार्ग द्वारा पश्चिम की ओर से लोहा, कृषि पदार्थ एवं डेरी-पदार्थ पूर्व को और पूर्व से कारखानों में बना माल पश्चिम को भेजा जाता है। झीलों के मुख्य बन्दरगाह ये हैं—सुपीरियर झील के प्रमुख बन्दरगाह डुलुथ, पोर्ट आर्थर और फोर्ट विलियम हैं। मिशीगन झील के मुख्य बन्दरगाह शिकागो, मिलवाकी, गैरी और इण्डियाना हारबर हैं। ईरी झील के मुख्य बन्दरगाह टोलडो, ह्यूरन, क्लीवलैंड, एस्टाबूला और ईरी है।

इन झीलों में माल ढोने के लिये विशेष प्रकार के जहाज ही काम में लाये जाते हैं। बड़े जहाज साधारणत. ६०० फुट लम्बे तथा ६०-७० फुट चौड़े होते हैं। ये १५,००० टन कोयला या लोहा या ५ लाख बुशल अनाज एक बार में ढो सकते है। इनसे माल आकर्षण-शक्ति द्वारा उतारा जाता है।

इन बड़ी झीलों का सम्बन्ध तीन प्रमुख जल-मार्गों से है—ऊपरी सैंट लॉरेंस नदी की नहरें, न्यूयार्क स्टेट बार्ज नहर व्यवस्था और इलीनियॉस जल मार्ग। इन तीनों में ३५० टन वार्षिक व्यापार होता है। सैंट लॉरेंस नहर १४ फुट गहरी है। इसमें बड़े जहाज नहीं जा सकते। इस नहर द्वारा वर्ष में लगभग १०० लाख टन अनाज, बालू, मिट्टी, लुब्दी, कोयला आदि ढोया जाता है। १९५४ में संयुक्त राज्य और कनाडा की सरकार के बीच संधि हुई जिसमें ऑग्डेन्सबर्ग और मान्ट्रियल के बीच में २७ फुट गहरी नहर बनाना तय किया गया। यह जल-मार्ग १९६० तक तैयार हो गया है। ईरी और ह्यूरन झीलों तथा सैंट मेरी नदी और सू नहर के बीच के जल-मार्ग को भी गहरा किया जायेगा जिससे ह्यूरन, मिशीगन और सुपीरियर झील के बन्दरगाहों का सीधा सम्पर्क महासागरीय मार्गों से हो सकेगा।

न्यूयार्क स्टेट में १२ फुट गहरी नहर हड्सन नदी को ईरी, ओंटेरियो, फिंगर और चैम्पीयन झीलों से जोड़ती है। इसके द्वारा लगभग ४०-५० लाख टन का व्यापार होता है—विशेषतः मिट्टी का तेल, अनाज, मोटरें और लुब्दी में।

इलीनियॉस जल-मार्ग मिसीसिपी नदी को मिशीगन झील से जोड़ता है। इस जल-मार्ग के अन्तर्गत शिकागो नदी, शिकागो नहर तथा इलीनियॉस नदियाँ है। इस जल-मार्ग द्वारा लगभग १८० लाख टन का व्यापार होता है।

अफ्रीका की विक्टोरिया, टैंगेनिका, न्यासा और यूरेशिया सागर तथा बेकाल बड़ी-बड़ी झीलें हैं किन्तु यह सब व्यापार की केवल स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। विश्व व्यापार के दृष्टिकोण से उनका कोई विशेष महत्व नहीं है। अन्यत्र झीलें बहुत छोटी हैं और व्यापार के लिए उपयोगी नहीं हैं।

(ग) नहरें (Canals)

नहरें वे जल-मार्ग हैं जो जहाज चलाने हेतु बनाये जाते हैं। नहरों का व्यापार में अपना महत्व होता है। नहरें व्यापार के लिये किसी न किसी उद्देश्य को लेकर बनाई जाती हैं। उनका उद्देश्य या तो (१) दो नदियों, खाड़ियों अथवा समुद्रों की दूरी और समय को कम करने के लिए; या (२) किसी नहर या झील के व्यापार

१९५३	१२७३१	६५००	२२·५	६७·६	४६·४	६०·४
१९५४	१३२१५	६६००	२२·४	७४·५	५७०	६६·६
१९५५	१४६६६	८०००	२० १	८७·४	६६·६	१०७·५
१९५६	१३२६१	—	१८·१	८२·८	—	१००·६
जनवरी-अक्टूबर						
१९५७						
अप्रैल-जुलाई ३८०५		—	३·७	१२·३	—	१६०

नहर द्वारा होने वाला व्यापार—सुदूर पूर्व और दक्षिणी अफ्रीका से पश्चिमी देशों को जाने वाला सामान अधिक भारी किन्तु कम कीमत का होता है। इसका कारण यह है कि इन देशों से अधिकतर अनाज, लकडी, कच्चा सामान ही विदेशों को जाता है। पूर्वी और पश्चिमी देशों का व्यापार बहुत ही पुराना है, परन्तु यह बहुधा भिन्न-भिन्न मार्गों द्वारा होता रहा है। बहुत ही प्राचीन काल से भारत और चीन से स्थल-मार्ग द्वारा कीमती कच्चा सामान जैसे रेशम, मसाले, पत्थर आदि निर्यात किये जाते थे। किन्तु समुद्री मार्गों का अनुसन्धान हो जाने से यह मार्ग प्राय: कम काम में आने लगा और अब इन देशों के बीच सभी व्यापार समुद्री मार्गों द्वारा होता है, अत अब भारी वस्तुएँ भी अधिक भेजी जाने लगी हैं।

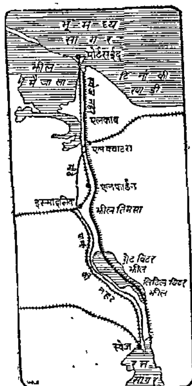
स्वेज नहर के उत्तर के देशों से अधिकतर सभी प्रकार की मशीनें, लोहे का सामान, कोयला, पक्का माल, कपडा और यूरोप का बना हुआ अन्य सामान होता है। हिन्द महासागर को छोडकर दक्षिण से उत्तर की ओर मुख्यत: खाद्य पदार्थ और कच्चा सामान भेजा जाता है। गेहूँ, ऊन, ताँबा और सोना आस्ट्रेलिया से, ऊन और मक्खन *न्यूजीलैंड से, चाय भारत, चीन और लङ्का से, शक्कर जावा से, जूट बङ्गाल से;* गेहूँ पजाब से, शक्कर और तम्बाकू फिलीपाइन से, रबड लङ्का और मलाया से, छुहारे फारस से, कॉफी अरब से, सोयाफली मचूरिया से, पैट्रोलियम फारस की खाड़ी, ब्रह्मा और आस्ट्रेलिया से, नारियल प्रशान्त महासागर के द्वीपों से, रबड, हाथीदाँत और कच्चा चमडा पूर्वी अफ्रीका से स्वेज नहर द्वारा पश्चिमी यूरोप और अमेरिका के देशों को भेजा जाता है।

इससे यह सिद्ध होता है कि यह नहर खाद्य और कच्चा सामान आयात करने वाले जर्मनी, फ्रास, ग्रेट ब्रिटेन, इटली आदि देशों से मिली है और कच्चा सामान निर्यात करने वाले चीन, थाईलैंड, मलाया स्टेट, ब्रह्मा, पूर्वी द्वीप समूह आदि देशों से सम्बन्धित है। इस नहर द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का १५% व्यापार होता है।

स्वेज नहर होकर माल का जो यातायात होता है उसके किस पूर्वी देश का कितना भाग रहा है, उसका अनुमान नीचे की तालिका से होगा :—

ईरान की खाडी के तटवर्ती देश	६६६ लाख टन
भारत, पाकिस्तान, लङ्का, बर्मा	११५ ,,
द० पूर्वी एशिया	७६ ,,
चीन, जापान, फिलीपाइन	७६ ,,

दक्षिण की ओर जाती है। इस्माइलिया के पास स्थल-डमरूमध्य समुद्र की सतह से ५२ फीट ऊँचा है। यहाँ यह नहर टिमशा झील (घड़ियालों की झील) में मिल जाती है। टिमशा झील और बड़ी नमकीन झीलों (Great Bitter Lakes) के बीच में यह नहर किनारे के पुराने सभ्यता के खंडहरों के बीच में होकर जाती है। यहाँ से नहर छोटी नमकीन झील (Little Bitter Lake) में होती हुई स्वेज के बन्दरगाह तक चली जाती है। पोर्ट स्वेज से पोर्ट सैयद तक नहर के पश्चिम की ओर और उसके साथ-साथ एक रेल-मार्ग है जिसका मुख्य उपयोग सेना की गति और नहर की सुरक्षा करना है।



चित्र १८४. स्वेज नहर

यह नहर पूरी लम्बाई तक समुद्र की सतह पर ही बनी है अतः इसमें पनामा नहर की तरह झालें (Locks) नहीं हैं। यह पुरानी दुनिया के घने आबाद देशों के बीच में से गुजरती है और इसके द्वारा दूसरे मार्गों की अपेक्षा अधिक देशों को पहुँचा जा सकता है। इस मार्ग का महत्व इस बात पर है कि इस मार्ग में दो स्थानों पर ईंधन मिलता है—ब्रह्मा और पूर्वी द्वीप समूह में मिट्टी का तेल व पश्चिमी यूरोपीय देशों में कोयला। इससे यह नहर पनामा नहर से अधिक लाभदायक है क्योंकि उसमें संयुक्त राज्य अमेरिका के तेल के स्थानों के अलावा अन्य स्थानों में ईंधन नहीं मिलता। स्वेज मार्ग पर जिब्राल्टर, माल्टा, स्वेज, अदन, बम्बई, कोलम्बो, कलकत्ता और सिंगापुर नाम के बन्दरगाह बहुत प्रसिद्ध हैं जिनमें सभी स्थानों पर जहाजों के कोयला लेने में सुविधायें हैं। इस मार्ग से कई छोटे-छोटे मार्ग मिले हैं यहाँ तक कि प्रत्येक खाड़ी और समुद्रों में से होता हुआ सामुद्रिक मार्ग स्वेज मार्ग से कहीं न कहीं अवश्य मिलता है।

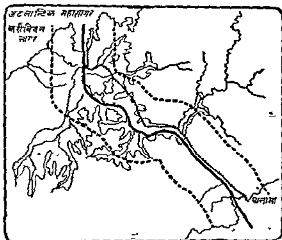
इसमें जहाज ८-१० मील प्रति घंटा के हिसाब से चलते हैं क्योंकि तेज चलने में नहर के किनारों के टूट कर गिर जाने का डर रहता है। अतः साधारणतया इस नहर को पार करने में ११ घंटे लग जाते हैं। नहर की चौड़ाई अधिक न होने के कारण इसमें एक साथ दो जहाज नहीं निकल सकते अतः जब एक जहाज निकलता है तो दूसरे को बाँध दिया जाता है।

यातायात इस प्रकार एक तरफा रह जाता है। आरम्भ में जब यह नहर बन कर तैयार हुई तो इसकी चौड़ाई केवल ७२ फुट थी और गहराई २६ फुट। आमने-सामने में आने वाले जहाजों को लघाने के लिये केवल ८ स्थान थे जहाँ चौड़ाई ८६ फुट थी। यद्यपि नहर में अब कई परिवर्तन किये गये हैं किन्तु फिर भी पूरे भरे हुए ४५ हजार टन के टैंकर नहर में से न गुजर कर केप के मार्ग से घूम कर यूरोप पहुँ-

(३) इस नहर मे से गुजरने वाले जहाजों से कर वसूल किया जाता है। जो जहाज माल से लदे होते हैं उन पर प्रति टन पीछे १'६० डॉलर; खाली जहाजों पर इसका आधा और यात्री जहाजों पर १२ वर्ष से ऊपर आयु वाले यात्रियों पर १'६० डॉलर कर लिया जाता है। तेल ले जाने वाले टैंकर जहाज प्रति यात्रा पीछे लगभग २०,००० डॉलर कर का देते हैं। अत जब जहाजो को जल्दी पहुँचने की आवश्यकता नहीं होती तो बोझा ढोने वाले बहुत से जहाज 'केप-मार्ग' से जाते हैं ताकि उन्हे भार कर न देना पडे।

(२) पनामा नहर (Panama Canal)

यद्यपि पनामा नहर स्वेज के बहुत देर बाद बनाई गई किन्तु इसका महत्व उससे किसी प्रकार कम नहीं है। इसके निर्माण के लिये दो बार प्रयत्न किए गये। पहला प्रयत्न सन् १८८२ मे फ्रांसीसी इंजीनियर डी० लेस्पेस का था किन्तु यह कार्य फ्रांसीसी कम्पनी द्वारा थोड़े दिनो के लिये ही हो सका। मलेरिया और पीले बुखार से हजारो श्रमिको की मृत्यु हो गई इसलिये काम अधूरा ही रह गया। सन् १९०४ मे दूसरा प्रयत्न सयुक्त राज्य की सरकार द्वारा किया गया। ठीक उसी समय पीरू की चाँदी और कैलीफोर्निया की सोने की सम्पत्ति की खोज हुई जिसके फलस्वरूप पूर्वी अमरीका से पश्चिमी अमरीका को बड़ी मात्रा मे प्रवास आरम्भ हुआ। सयुक्त राज्य ने पनामा क्षेत्र से नहर के लिये जमीन खरीदी। नहर की खुदाई आरम्भ की गई। पानी के निकास का प्रबन्ध किया गया तथा मलेरिया और पीले बुखार की रोक-थाम की गई। अन्तत. १५ अगस्त १९१४ में ७ करोड ५० लाख पौण्ड की लागत से यह नहर बनकर तैयार हुई।



चित्र १८५ पनामा नहर

यह नहर पनामा के मुहाने को काट कर बनाई गई है जो प्रशान्त और एटलान्टिक महासागर को जोड़ती है। एटलाटिक के तट पर कोलन और प्रशान्त के तट पर पनामा बन्दरगाह हैं। यह नहर ५० मील लम्बी है। इसकी औसत गहराई ४०' फुट है, किन्तु यह गहराई सर्वत्र एक सी नहो है, अटलाटिक की ओर यह ४२ फुट गहरी

अन्य देशों के जहाज 'केप-मार्ग' से जाने लगे। द्वितीय महायुद्ध काल में भी जर्मनी के बम-वर्षक जहाजों ने ६४ बार इस नहर पर आक्रमण किये जिसके फलस्वरूप ७६ दिनों तक यातायात प्रायः बन्द रहा। इस हानि से बचने के लिये यातायात मार्ग मे भी परिवर्तन हुआ। जहाँ १९३८ में इस नहर द्वारा ३४५ लाख टन भार के जहाज निकलते थे वहाँ १९४२ में केवल ७० लाख टन भार के जहाज ही इस नहर मे होकर गुजरे। किन्तु १९५३ मे यह मात्रा बढ कर ९३० लाख टन, १९६० मे १८५३ लाख टन, और १९६१ मे १८५७ लाख टन की हो गई।

नहर का प्रभाव—इस नहर के बन जाने से यूरोप और एशिया के पूर्वी देशों के बीच की दूरी लगभग ५,००० मील कम हो गई है। नहर के बनने के पूर्व यूरोप और पूर्वी देशो के बीच का व्यापार उत्तमाशा अंतरीप (Cape of Good Hope) द्वारा होता था किन्तु अब यह व्यापार इसी मार्ग द्वारा होता है। अतएव यह नहर सुदूरपूर्व और यूरोप के देशों के व्यापार के लिये बडी महत्व की है। यूरोप, एशिया और आस्ट्रेलिया के लिये स्वेज नहर का सापेक्षिक महत्व नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा :—

इसी प्रकार उत्तरी अमरीका के पूर्वी भागों और पूर्वी देशों के बीच का व्यापार भी इसी के द्वारा होता है। नीचे की तालिका से इस नहर द्वारा विभिन्न स्थानों के बीच कितनी दूरी कम हुई है, उसे बताया गया है :—

स्वेज नहर से सुदूर पूर्व की दूरी मे बचत

लिवरपूल से	बम्बई	बटाविया	हांगकाग	सिडनी
(१) केप मार्ग द्वारा	१०,७३०	११,२५०	१३,१९५	१२,६२६
(२) स्वेज मार्ग द्वारा	६,१८९	८,५१६	९,७८५	१२,२३५
दूरी की बचत	४,५४१	२,६८९	३,४१०	३९१

स्वेज नहर से पूर्वी उत्तरी अमरीका और पूर्वी देशो के बीच की दूरी की बचत

न्यूयार्क से	बम्बई	बटाविया	हागकाग
(१) केप मार्ग द्वारा	११,५११	११,९८६	१३,९९६
(२) स्वेज मार्ग द्वारा	८,१०२	१०,४२९	११,३७३
दूरी की बचत	३,४०९	१,५५७	२,२९३

यूरोप, एशिया और आस्ट्रेलिया के लिये स्वेज नहर का सापेक्षिक धनत्व

	स्वेज नहर द्वारा दूरी (मीलो मे)	केप मार्ग द्वारा दूरी (मीलो मे)	स्वेज नहर द्वारा आने जाने मे लगा समय (दिनों में)	केप द्वारा आने जाने मे लगा समय (दिनों में)
लदन से फारस की खाड़ी	६,४००	११,३००	३७	६५
लंदन से मोम्बासा	६,०१४	८,६७५	३०	४३
" बम्बई	६,२६०	१०,७००	३१	५४

भागो के नजदीक हो जाते हैं। इससे उत्तरी अमेरिका के पूर्वी और पश्चिमी किनारे के बीच ७,००० मील का अन्तर पड गया है। यह सबसे अधिक लाभप्रद बात है कि इसने दक्षिणी अमेरिका की स्टेटो के व्यापार को काफी उन्नत बना दिया है। ब्रिटिश कोलम्बिया, उत्तरी अमेरिका के पूर्वी भागो को अनाज, टिम्बर और दूसरी वस्तुएँ सब इसी जलमार्ग द्वारा ही भेजता है। जहाँ तक सयुक्त राज्य का प्रश्न है इस नहर ने पूर्वी और पश्चिमी भाग की दूरी को कम कर व्यापार मे ही लाभ नही पहुँचाया बल्कि आपत्ति के समय भी फौजें भेज कर तटो की रक्षा की जा सकती है।

(५) इस नहर के द्वारा दक्षिणी अमेरिका के प्रशान्त तट और उत्तरी अमेरिका के अटलांटिक तटों के बीच की दूरी काफी कम हो गई है। न्यूयार्क से मैगलन द्वारा वालपैरेजो ८,४०० मील पडता है किन्तु पनामा द्वारा वह केवल ४,६०० मील ही है।

(६) पनामा मार्ग से पश्चिमी द्वीप समूहो को भी बहुत लाभ पहुँचा है।

नीचे की तालिका मे पनामा नहर की द्वारा दूरी मे होने वाली बचत को बताया गया है :—

लिवरपूल से सैनफ्रासिस्को		५,६६६	नॉटीकल मील
,,	होनोलूलू	४,४०३	,,
,,	वालपैरेजो	१,५४०	,,
,,	याकोहामा	६६४	,,
,,	शंघाई	२,७७४	,,
,,	सिडनी	१५०	,,
,,	एडीलेड	२,३२६	,,
,,	वैलिंगटन	१,५६४	,,
न्यूयार्क से सैनफ्रासिस्को		७,८७३	नॉटीकल मील
,,	वालपैरेजो	६,६१०	,,
,,	होनोलूलू	३,७४७	,,
,,	याकोहामा	३,७६८	,,
,,	शघाई	१,८७६	,,
,,	सिडनी	३,६३२	,,
,,	एडीलेड	१,७४६	,,
,,	वैलिंगटन	२,४६३	,,
न्यूआर्लियन्स से सैनफ्रासिस्को		८,८६८	,,
,,	याकोहामा	५,७०५	,,
,,	वालपैरेजो	४,७४२	,,

इस नहर से सयुक्त राज्य को काफी लाभ पहुँचता है। इस नहर द्वारा अधिकतर माल सयुक्त राज्य का ही निकलता है और अमेरिकन जहाज जो इस नहर का

नीचे की तालिका में स्वेज नहर से होकर निकलने वाले जहाजों और उनके टन भार को बताया गया है इससे स्वेज की महत्ता प्रकट होती है।

इस नहर के बन जाने से कई लाभ हुये हैं :—

(१) इसके बनने के पूर्व नहर-क्षेत्र में चलने वाली हवायें कमजोर थीं जिससे उस समय के जहाज इसमें होकर नहीं जा सकते थे किन्तु वे सब यान्त्रिक सहायता से इसे पार कर सकते हैं।

(२) इस मार्ग द्वारा आस्ट्रेलिया से सीधा व्यापार होता है क्योंकि यूरोप और आस्ट्रेलिया के बीच की दूरी कम हो गई है। स्वेज से निकलने वाले जहाज भिन्न-भिन्न बन्दरगाहों का सामान लादते हैं। यह पूरे भरे नहीं रहते क्योंकि प्रत्येक बन्दरगाह पर सामान उतार दिया जाता है। इससे सारे रास्ते बराबर सामान नहीं ले जाना पड़ता।

(३) सुदूर पूर्व के देशों और पश्चिमी देशों के बीच दूरी कम हो जाने से कई वस्तुओं के मूल्य में कमी हो गई है तथा व्यापार में वृद्धि हुई है।

(४) इसके द्वारा लाइनर जहाजों का अधिक लाभ हुआ है। अधिकतर लाइनर जहाज यूरोप और एशिया बन्दरगाहों के बीच इसी मार्ग से होकर निकलते हैं। इसी प्रकार जब अधिक भाड़ा मिल जाता है तो ट्रैम्प जहाज भी इसी मार्ग का अनुकरण करते हैं, किन्तु जब कम भाड़ा मिलता है तो वे 'केप मार्ग' द्वारा ही जाते हैं।

स्वेज नहर द्वारा होने वाला व्यापार

वर्ष	यात्रा की संख्या		सामान ले जाया गया (दस लाख मैट्रिक टनों में)			
	कुल जहाज	तेल ले जाने वाले जहाज	दक्षिण को जाने वाला	उत्तर को जानेवाला सभी प्रकार का सामान	तेल	योग
१८७०	४८६	—	—	—	—	०'३
१९००	३४४१	—	३'८	४'०	—	७'८
१९१३	५०८५	—	११'३	१४ ५	० ३	२५'८
१९१७	२३५३	—	१'३	५'४	—	६'८
१९२०	४००९	—	६'३	१०'७	० ८	१७'०
१९३०	५७६१	—	९'४	१९'१	०'१	२८'५
१९३८	६१७१	११००	७'८	२१'०	५'२	२८ ८
१९४२	१६४६	—	—	—	—	—
१९४७	५९७२	२४००	७'८	२२'८	१३'८	३० ६
१९४८	८६८६	४६००	९ ७	३९ ७	२८'९	४९'४
१९४९	१०४२०	५५००	१३'०	४८'०	३७'०	६१ ०
१९५०	११७५१	६६००	१२ १	६०'५	४७'५	७२'६
१९५१	११६९९	५९००	१७'४	५९'३	४२ ९	७६ ८
१९५२	१२१६८	६२००	२२ ०	६१'४	४५'९	८३ ४

प्रथम महायुद्ध काल मे पनामा नहर का मुख्य महत्व चिली के शोरे को संयुक्त राज्य अमेरिका तक ले जाने मे ही अधिक था, किन्तु भूमि के खिसक कर गिर जाने से १८ सितम्बर १९१५ से १५ अप्रैल १९१६ तक यातायात बन्द रहा। द्वितीय महायुद्ध काल मे सयुक्त राज्य के लिए नहर का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया। १९४१ से १९४५ तक इसमें होकर २३,००८ जहाज निकले और इस काल से लगभग ४५० लाख टन सामान ले जाया गया। १९६२ में ८७२५ जहाज इस नहर से गुजरे जिनमे ६७५ लाख टन सामान ले जाया गया।

पनामा नहर के दोष—पनामा नहर के मार्ग मे भी स्वेज की तरह कई दोष है यथा—

(१) पनामा नहर का मार्ग पर्वतीय, मलेरिया से पीड़ित और निर्धन देशों से होकर जाता है अत. इसके द्वारा अधिक व्यापार नही होता।

(२) पनामा नहर जनविहीन पहाड़ी प्रदेश मे खोदी गई है अत. इसके निर्माण मे भी अधिक खर्च हुआ है।

(३) भील के द्वारों को खोलने के और बन्द करने मे अधिक समय लगता है और बड़ी असुविधा होती है।

(४) प्रशान्त महासागर बहुत विस्तृत है और उसमे बन्दरगाह कम हैं. अत. इस मार्ग पर कोयले का भी उचित प्रबन्ध नही है।

फिर भी इस नहर का महत्व सयुक्त राज्य अमेरिका के लिए बहुत अधिक है। मध्य पूर्व सुरक्षा संगठन (Middle East Defence Organisation) के लिए तो यह नहर मेरुदड ही है।

पनामा और स्वेज की तुलना

(१) पनामा प्रशान्त की नहर है क्योंकि यह प्रशान्त के देशो को अटलांटिक से जोड़ती है।

(२) स्वेज मार्ग से पर्याप्त मात्रा मे कोयला लेने के स्थान हैं क्योंकि इसमें कितने ही द्वीपो और बन्दरगाहो की बहुतायत है जिनके समीपवर्ती स्थानो मे कोयला मिलता होता है। इसलिये इसमे कोयला मिलने मे कठिनाई नहीं होती। यह मार्ग अपने पूर्ववर्ती देशो के लिए लाभदायक है। किन्तु पनामा मार्ग मे कोयला लेने के स्थानो का नितान्त अभाव हैं। इसमे मार्ग के बीच मे द्वीप नही हैं और न कोयला ही निकटवर्ती स्थानो मे मिलता है किन्तु तेल अवश्य कई जगह मिलता है। पनामा से जापान और चीन के बीच मे सैनफ्रांसिस्को के अतिरिक्त दूसरा कोलिंग स्टेशन नही है। पनामा से एशिया और आस्ट्रेलिया को जाने वाले जहाज को लम्बे-चौडे समुद्र पार करने पड़ते है जिनके किनारे के देश प्रायः अनुपजाऊ ही है।

(३) स्वेज मार्ग अधिक घने देशो के पास होकर जाता है, इससे सामान और यात्री पर्याप्त मात्रा मे मिल जाते हैं, किन्तु पनामा मार्ग पहाड़ी और रेगिस्तानी प्रदेशों में होकर जाता है। जैसे उत्तरी अमेरिका का और दक्षिणी अमेरिका का पश्चिमी किनारा, अत यात्री कम मिलते हैं।

(४) स्वेज नहर बहुत दूर तक मैदान मे होकर जाती है, इसमे भीलें बनाने की जरूरत नही पड़ी किन्तु पनामा मे भील बने हुए है अत इसके बनाने मे खर्च भी अधिक हुआ है।

आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड	५३ ,,
लाल सागर के तटवर्ती देश और अदन	३७ ,,

नीचे की तालिका में यह बताया गया है कि कौन-कौन-सा सामान कितनी मात्रा में नहर में से होकर यूरोप से पूर्वी और दक्षिणी देशों को जाता है :—

धातु का बना हुआ सामान	३,७३१ हजार टन
सीमेंट	२,६८३ ,,
खादें	२,४५४ ,,
पैट्रोलियम और पैट्रोल से उत्पन्न पदार्थ	१,९०५ ,,
मशीनें	१,०२८ ,,
चीनी	६६६ ,,
कागज और कागज की लुब्दी	६११ ,,
रासायनिक द्रव्य	५५६ ,,
नमक	४६७ ,,
अनाज	४८६ ,,
रेल का सामान	४६७ ,,

इन आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि इन देशों में औद्योगिक और व्यावसायिक उन्नति के लिये आवश्यक पदार्थों का आयात एशिया व अफ्रीका के देशों से अधिक बढ़ रहा है।

जो माल पूर्वी और दक्षिणी देशों से यूरोप को जा रहा है वह इस प्रकार है :—

पैट्रोलियम और पैट्रोल से निर्मित पदार्थ	६६,८६३ हजार टन
कच्ची धातुएँ	५,३०० ,,
अनाज	२,४८८ ,,

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट होगा कि यूरोप और एशिया दोनों के लिए यह नहर कितना महत्व रखती है और दोनों के लिये वह जीवन-वाहिनी प्रणालिका है।

नहर के दोष—स्वेज नहर के कुछ दोष भी हैं :—

(१) यह नहर कम गहरी व कम चौड़ी है। अतः इसमें से आधुनिक बड़े-बड़े जहाज नहीं गुजरते। किन्तु अब नहर का यह दोष उसे चौड़ा करके दूर किया जा रहा है। इस मार्ग से अब ४५ हजार टन के जहाज भी आ-जा सकेंगे।

(२) दूसरा दोष यात्रा सम्बन्धी है। पहले जहाज को नहर के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुँचने में ३० घन्टे लगते थे किन्तु अब १० से १२ घन्टों में ही यात्रा पूरी हो जाती है। पहले कम चौड़ाई के कारण एक तरफ ही यातायात होता था किन्तु अब नहर को चौड़ा करके कुछ सुधार किया गया है। मार्ग पर बहुत से प्रकाश स्तूप (Light-houses) और सर्चलाइट (Search-Light) भी बनाये गये हैं जिससे यात्रा करना सुगम हो गया है।

अटलांटिक महासागर के तटीय भागों को बड़ी झीलों के तटीय भागों से जोड़ती है। इसके निर्माण में ४७१० लाख डॉलर का व्यय हुआ है। इस नहर को बनाने के लिये एक १२०० मील लम्बी तथा २५ फीट गहरी नहर (Channel) खोदी गई है जो मॉन्ट्रियल में बड़ी झीलों तक जाती है। इसके निर्माण के फलस्वरूप जहाजों को समुद्र के धरातल से ६०० फीट ऊँचा उठाया जाता है। इसके निर्माण के पूर्व सामुद्रिक जहाज सेंट लारेंस में अटलांटिक से केवल ८०० मील ऊपर तक जा सकते थे फिर मॉन्ट्रियल पर माल को छोटे जहाजों में लादना पड़ता था। किन्तु अब इसके बन जाने से बड़े जहाज ईरी झील के सिरे पर स्थित टॉलेडो तक (१२०० मील) चले जाते हैं। इस नहरें में ७ बड़ी भालें (Locks) हैं जो ६,००० टन की क्षमता वाले जहाजों को ढो सकते हैं। अनाज तथा तेल ले जाने वाले २५,००० टन की क्षमता वाले जहाज भी इसमें होकर जा सकते हैं। इसी से संलग्न मोसेज-सौन्डर्स जलविद्युत शक्ति का गृह है जिसकी विद्युत उत्पादन क्षमता १८.८ लाख किलोवाट की है। इस नहर द्वारा अमरीका के घने बसे और उपजाऊ पृष्ठ देश की सेवा होती है। १९६६ के अन्त तक इस नहर में से निकलने वाले जहाजों की भार वहन की क्षमता ५०० लाख टन तक की हो सकेगी। इस नहर का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि इस नहर के बन जाने से सिंगापुर से ओहियो स्थित अक्रन नगर को कच्चा रबड़ प्रति टन १२ डॉलर मूल्य में कम लाया जा सकेगा।

कोरिंथ नहर (Corinth Canal)—यह नहर ग्रीस देश में है और केवल ४ मील लम्बी है जो कोरिन्थ की खाड़ी को इजियन सागर से मिलाती है। यह नहर (सन् १८८१ से ९३ तक) बारह वर्ष में बन कर तैयार हुई है। इस नहर के बन जाने से यूनान के दक्षिण में स्थित प्रायद्वीप का चक्कर बच जाता है। यह नहर पहाड़ी भूमि को काट कर बनाई गई है। इसलिये इसके किनारे बहुत ऊँचे-ऊँचे हैं। इसके समानान्तर एक प्राचीन दीवार बनी हुई है।

वैलेन्ड जहाजी नहर (Walland Ship Canal)—कनाडा में यह नहर ईरी झील को ओन्टोरियो झील से मिलती है। दोनों झीलों में ३२६ फीट का अन्तर है। यह अन्तर रूपी कठिनाई आठ लॉक्स बनाकर दूर की गई है। इस नहर के बन जाने से सेंट लॉरेन्स नदी की यात्रा सुगम हो गई। इस नदी के मार्ग में नियाग्रा नाम का प्रसिद्ध जलप्रपात है। नहर द्वारा यात्रा करने से सेन्ट लॉरेंस नदी का प्रपात वाला भाग एक ओर रह जाता है। यह नहर १९१४ में बनकर तैयार हुई। इसकी चौड़ाई ३०० फीट है। नहर की कुल लम्बाई २७.६ मील है।

जारजियन खाड़ी नहर (Georgian Bay Canal)—यह जल प्रणाली मॉन्ट्रियल नगर की ओर जारजियन खाड़ी के बीच में बनाई गई है। जारजियन खाड़ी ह्यूरन झील का उत्तरी पूर्वी भाग है। इस खाड़ी को सेंट लॉरेंस नदी से मिला दिया गया है। इस जल प्रणाली द्वारा अमेरिका की बड़ी झीलें यूरोप से ८०० मील और निकट हो गई हैं।

वॉल्गा-डॉन नहर (Volga-Dan Canal)—यूरोपीय रूस का महत्वपूर्ण जलमार्ग है जो कैस्पियन सागर को काले सागर से मिलाता है। यह नहर ६० मील लम्बी है। जहाँ पर डॉन नदी वॉल्गा नदी के समीप आ जाती है वहाँ पर यह नहर बनाई गई है। इस नहर पर कई लॉक हैं। यह नहर सोवियत रूस की सफलता का नमूना है जिसका निर्माण १९५४ में पूर्ण हुआ।

है और प्रशान्त महासागर की ओर ४५ फुट और गाटून झील में कहीं-कही ८५ फुट है। नहर की चौड़ाई १०० से ३०० फुट तक है। इसमें होकर जहाजों को निकलने में ७ से ८ घण्टे तक लगते हैं। यह नहर दो खाड़ियो, एक कृत्रिम झील, एक प्राकृतिक झील और तीन द्वार प्रणाली या झल (Lock-System) द्वारा खोदी गई है। प्रशान्त महासागर की ओर लिमोन की खाड़ी और अटलांटिक की ओर पनामा की खाडी है। पूर्व की ओर मीरापलोरस प्राकृतिक झील और पश्चिम की ओर कृत्रिम झील गाटून है। तीन द्वार-प्रणालियों मे पूर्व से पश्चिम की ओर गाटून, पेड्रो मिगुएल और मीराफ्लोरस हैं। सारी नहर ऊबड़-खाबड़ भूमि पर होकर बनाई गई है। इस नहर के खोदने के लिये बीच की कुलोबरा पहाड़ी को काट कर ४ मील लम्बी कुलोबरा या गेलार्ड सुरग बनाई गई है। यह कटान एक जगह ८०० फुट गहरी है। द्वार-प्रणाली दुहरी है जिससे एक ही समय में जहाजों का आना-जाना होता रहता है। सारा भाग पहाड़ी होने के कारण गाटून नामक स्थान पर चार्जेज नदी के पानी को रोक कर बाँध बना कर कृत्रिम झील तैयार की गई है। इस झील के अनावश्यक जल को १ सैकन्ड में १,३७,००० घन फुट के हिसाब से बाहर निकाला जा सकता है। इस झील मे जहाजो के लाने के लिए अटलांटिक तट पर स्थित कोलन नगर के पास तीन झीलो की सहायता से जहाजो को ८५ फुट ऊँचा उठाकर नहर मे लाने की व्यवस्था की गई है। आगे चल कर गैम्बोज स्थान पर झील द्वारा फिर जहाजो के नीचे झील मे उतारा जाता है। पनामा मे से प्रतिदिन ४८ जहाज गुजरते हैं। पनामा नहर सस्था द्वारा चार्जेज नदी के जल से विद्युत शक्ति उत्पन्न की जाती है जिससे इस क्षेत्र को रोशनी दी जाती है और बिजली द्वारा चालित इंजिनो का उपयोग जहाजों को बाँध मे खीचने के लिए किया जाता है।

पनामा नहर का प्रभाव—इस नहर के खुलने से निम्नलिखित लाभ हुए हैं:—

(१) इगलैंड से न्यूजीलैंड को जाने वाले मार्ग की दूरी मे इस नहर द्वारा काफी अन्तर पड गया है। उदाहरण के लिये पनामा नहर द्वारा सिडनी से लिवरपूल की दूरी १२,२०० मील किन्तु स्वेज द्वारा यह दूरी १२,४०० मील पड़ती है। इसी प्रकार लिवरपूल से विलिंगटन पनामा नहर द्वारा ११,००० मील किन्तु स्वेज द्वारा १२,५०० मील है।

(२) यद्यपि पनामा नहर द्वारा यूरोप से आस्ट्रेलिया को जाने वाले मार्ग मे कोई विशेष अन्तर नही पडा किन्तु अमेरिका और आस्ट्रेलिया के मार्ग मे काफी अन्तर हुआ है। इस प्रकार न्यूयार्क से पनामा द्वारा सिडनी ६,७०० मील है किन्तु स्वेज द्वारा यह १३,५०० मील है। इसी प्रकार न्यूयार्क से विलिंगटन पनामा नहर द्वारा केवल ८,५०० मील है किन्तु स्वेज द्वारा ११,३०० मील है।

(३) पूर्वी एशिया के बन्दरगाह पनामा नहर की अपेक्षा यूरोप के बन्दरगाहो से समीप है। किन्तु हांगकांग, शघाई, याकोहामा आदि बन्दरगाह पनामा द्वारा ही यूरोप से नजदीक पड़ते हैं। न्यूयार्क से याकोहामा पनामा द्वारा केवल ६,६०० मील किन्तु स्वेज द्वारा १३,१०० मील पडता है। भारत और एशिया के दूसरे बन्दरगाह अपना व्यापार अमेरिका से स्वेज द्वारा करते हैं क्योंकि इससे दूरी कम हो जाती है और अन्य व्यापारिक सुविधायें भी मिलती हैं।

(४) इस नहर से सबसे अधिक लाभ संयुक्तराज्य अमेरिका को हुआ है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी किनारे, पश्चिमी यूरोप और अमेरिका के पूर्वी

(४) दक्षिणी भारत में बकिंघम नहर कारोमन्डल तट पर दक्षिण की ओर २७६ मील तक चली जाती है और मद्रास को कृष्णा के डेल्टा में जोड़ती है।

(५) गोदावरी में दोलेश्वरम् तक तथा कृष्णा नहर मे ४०० मील तक नावें चलती है।

(६) कर्नूल कडप्पा नहर भी १६० मील तक चलाने योग्य है। दक्षिणी भारत में नदियो के डेल्टो को कपास, चावल आदि इन्ही नहरों द्वारा ढोया जाता है।

नहर और रेल यातायात की तुलना

आधुनिक समय में सामान को ले जाने के लिए नहरों का प्रयोग उतना महत्वपूर्ण नहीं रहा है जितना पहले था। इसका विशेष कारण रेलो का संघर्ष है। रेलो को नहरो की अपेक्षा कतिपय लाभ प्राप्त हैं। सबसे महत्वपूर्ण लाभ गति का है। इसके अतिरिक्त रेलें किसी स्थान तक बिना सामान के तोड़े या कम किये हुए ले जा सकती हैं परन्तु नहरें ऐसा नहीं कर सकतीं। रेलवे स्टेशनों पर सामान को संग्रहीत रखने के लिए सुविधायें रहती हैं। जब तक आवश्यकता पड़े तब तक सामान वहां रखा जा सकता है। उन्हें तत्काल हटाने की आवश्यकता नहीं होती। रेल की लाइन पर डिब्बो मे मान भरा जा सकता है। इस लाभ ने इंगलैंड की रेलों को अब इस योग्य बना दिया है कि अब नहरो से ढोया जाने वाला कोयला रेलों से जाने लगा है। कोयला पहले मोटर ठेलो में भर दिया जाता है। ये ठेले रेल पर छोड दिये जाते हैं और फिर एंजिन से जोड दिये जाते है। ज्योंही कही मांग हुई एंजिन इन ठेलो को खीचकर वहाँ ले जाता है।

(२) सामुद्रिक जलमार्ग (Ocean Transport)

आज से ५०० वर्ष पूर्व पृथ्वी के भिन्न-भिन्न भू-भागों के बीच मे समुद्र एक बडी रुकावट के रूप मे था जब तक कि समुद्र मे चलने योग्य जहाज नही बन गये तथा जहाज खेने की कला में इतनी उन्नति नहीं हो गई कि नाविक अपने निर्धारित मार्ग पर जहाजों को ले जा सके तब तक समुद्र के व्यापार के लिए उपयोग न हो सका। आरम्भिक काल मे (१५ वीं शताब्दी तक) भारत और स्पेन आदि देश समुद्र में नौका द्वारा व्यापार करते थे। भूमध्यसागर का जल वर्ष मे अधिकाश समय तक शान्त रहने के कारण नौकागमन के लिए उपयुक्त था। अतः स्पेन और इटली को इसके जन्मदाता होने का श्रेय है। चौथी शताब्दी से नौकागमन का विकास आरम्भ हुआ किन्तु १६ वी शताब्दी तक बडे-बडे जहाज नही बने थे। किन्तु अब बडे आकार के जहाज बहुत बनाये जाने लगे है। इसके मुख्य कारण (१) अशान्त जल मे जहाजों की गति की तीव्रता, (२) जहाज का अधिक न हिलना और यात्रियो की सुख-सुविधा, (३) व्यापार के लिए सुविधा क्योंकि इनमे स्थान की अधिकता, गति की तीव्रता और सजावट अधिक होती है। अब समुद्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का मुख्य साधन बन गया है और दूसरे देश के बहुत समीप आ गया है। एक देश तक बराबर जहाज चलते रहने से बिना खर्च के निश्चित समुद्री मार्ग स्थापित हो गये हैं जिनके कारण अब थोड़े दामों मे मनुष्य और सामान इच्छा के अनुसार आ जा सकते हैं।

अतः आधुनिक युग मे जिन देशो के पास समुद्र तट नही है अथवा जो समुद्र तट से बहुत दूर पड़ते हैं वे बड़े अभागे हैं। हंगरी, अफगानिस्तान, स्विटजरलैंड, चेकोस्लोवाकिया, तिब्बत आदि देशो की अवस्था दयनीय है क्योंकि ये देश समुद्र पर

उपयोग करते हैं वे अमेरिका के तटीय व्यापार में लगे रहते हैं। १९५२ में इस नहर में होकर ६५२४ जहाज निकले जिसमे से २०८४ संयुक्त राज्य के ही थे। इस नहर द्वारा १९५२ में २४२ लाख टन सामान का व्यापार हुआ तथा १९६१ मे ६७५ लाख टन का। १९६२ मे इस नहर से निकलने वाले विभिन्न देशों के जहाजों की संख्या ये थी। संयुक्त राज्य १,७८३; नार्वे १४६१, ब्रिटेन १२७६; प० जर्मनी १०९४; लाइबेरिया ८४८, जापान ८४४, यूनान ७७१ और डच ५५८।

नहर द्वारा होने वाला व्यापार—इस नहर के बन जाने से अमरीका के पूर्वी तथा पश्चिमी बन्दरगाहों की दूरी कम हो गई है। न्यूजीलैंड से इस नहर द्वारा पनीर, मक्खन, ऊन, अंडे और भेड़ का मांस; जापान से रेशम और रबड़ का सामान, चीन से संयुक्त राज्य के पूर्वी तथा पश्चिमी भागों को चाय और चावल, फिलीपाइन से तम्बाकू, सन आदि; सैन फ्रान्सिस्को से संयुक्त राज्य के पूर्वी भाग और ग्रेट ब्रिटेन को खनिज पदार्थ भेजे जाते हैं।

अन्य वस्तुएँ जो यूरोप के पश्चिमी देशों से और अमेरिका के पूर्वी भाग से भेजी जाती हैं वे ये हैं :—चाँदी बोलविया से; नाइट्रेट पेरू से, सिनकोना इक्वेडोर से, टिम्बर कोलम्बिया से। एटलांटिक से प्रशान्त सागर को जो व्यापार होता है उसमे गन्ना, तम्बाकू और केला पश्चिमी द्वीप समूह से, लोहे और फौलाद का सामान उत्तरी अमेरिका के पूर्वी किनारों और यूरोप के देशों से तथा तेल संयुक्त राज्य से भेजा जाता है। ये सब वस्तुएँ अमेरिका के पश्चिमी भागों, आस्ट्रेलिया, चीन और जापान को भेजी जाती हैं।

पनामा नहर खुलने के पहले अनुमान किया जाता था कि दूसरे मार्गों को इसके बन जाने पर हानि होगी, परन्तु ऐसा नहीं हुआ है। व्यापार मे उन्नति अवश्य हुई है किन्तु कम। जो जहाज पहले केप मार्ग द्वारा न्यूयार्क से आस्ट्रेलिया, चीन, जापान, ब्रह्मा, मलाया को जाते थे वे अब लौटते समय अपने जहाजों में पूरा सामान लाने के लिए स्वेज में होकर आते है। यह ऊपर बताया जा चुका है कि इन मार्गों मे पनामा से कुछ भी दूरी कम नहीं हुई है किन्तु यूरोपीय देशों और अमेरिका के पूर्वी भागों और पश्चिमी भागों मे जो व्यापार होता है, इससे स्वेज मार्ग के व्यापार मे किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचती। इसके विपरीत चीन और जापान का व्यापार इस नहर के खुलने से अधिक बढ़ा है।

पनामा नहर द्वारा हुए व्यापार का ब्यौरा

देश	उत्तर की ओर (प्रशान्त से अटलांटिक महासागर को)		दक्षिण की ओर (अटलांटिक से प्रशान्त महासागर को)	
	जहाजों की संख्या	माल (००० टन)	जहाजों की संख्या	माल (००० टन)
१९२९	३,०६५	२०,७८०	३,३४८	९,८८३
१९५३	३,७३९	१८,७६६	६७४	१७,३२९
१९५६	४,०७६	२३,८३३	४,१३३	२१,२८६
१९५८	४,५८८	२५,२८२	९,१८७	४८,१२५
१९५९	४,८०९	२८,७०७	९,७१८	५१,१५३
१९६२	—	२९,८१७	—	३७,६९९

कुल ईंधन का केवल ५% तेल होता था, १९२९ मे ४५% था किन्तु १९६१ मे यह प्रतिशत ८५ हो गया। जहाजो मे तेल का उपयोग अधिक बढ़ जाने के मुख्य कारण ये है (१) प्रत्येक अश्वशक्ति उत्पन्न करने के लिये तेल कोयले की अपेक्षा कम स्थान घेरता है। (२) तेल रखने और उसके आदान प्रदान मे कोयले से अधिक आसानी होती है। (३) तेल लेने के बाद जहाजों को काफी समय तक ईंधन की आवश्यकता नही रहती।

पिछले १०० सालो से तो ट्रैम्प और लाइन जहाजो का ही अधिक प्रयोग बढ गया है। जहाज दो प्रकार के होते हैं—ट्रैम्प (Tramp) और लाइनर।

लाइनर (Liner) जहाज एक निर्धारित मार्ग से होकर जाते हैं।[14] जिन बन्दरगाहो पर उनका जाना निश्चित है उन पर वे अवश्य ही जायेंगे। लाइनर तैयार माल, जल्दी खराब हो जाने वाले माल तथा कीमती सामान और मुसाफिरों को ही ले जाते हैं। किसी निर्धारित मार्ग पर लाइनर चलेंगे यह उस मार्ग पर उपलब्ध व्यापार पर निर्भर करता है। लाइनर वस्तुत. बड़े तेज चलने वाले और अधिक मँहगे होते ह। एक प्रकार के लाइनर केवल यात्रियो तथा अधिक मूल्यवान सामान तथा डाक को ही ले जाते है। इनको **विशेष लाइनर** (Express Liners) कहते हैं। इनमे अन्य सामान ले जाने के लिए कम स्थान होता है। दूसरे प्रकार के लाइनर निर्धारित स्थानो के बीच निश्चित समय पर ही सामान आदि ले जाते हैं। इनको **माल ले जाने वाले लाइनर** (Cargo Liners) कहते हैं। तीसरे प्रकार के लाइनर यात्री और सामान दोनो ही ले जाते हैं। ये **मिश्रित लाइनर** (Combination Liners) कहलाते हैं। ये काफी तेज चाल और नियमित रूप से चलते हैं। विश्व का लगभग ८०% ट्रैफिक इन्ही के द्वारा किया जाता है जिनका औसत टन भार ६,००० टन से अधिक का होता है।[15]

ट्रैम्प (Tramp) जहाजो का न तो कोई निश्चित मार्ग ही होता है और न उनका समय ही निश्चित होता है।[16] ये काफी बडे जहाज होते है जो बन्दरगाहो को माल लेने के लिए जाते हैं। जहाँ इनको माल मिल जाता है वही ट्रैम्प चले जाते हैं। ट्रैम्प जहाजो के द्वारा खाद्य पदार्थ तथा कच्चा माल—अनाज, कोयला, गन्ना, लकडी, कपास, खनिज पदार्थ आदि बहुत अधिक राशि मे एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजा जाता है। ससार का आधे से अधिक व्यापार इन ट्रैम्प जहाजो के द्वारा ही होता है। किन्तु ट्रैम्प जहाज उन्ही व्यापारियो से माल लेते है जिनके पास पूरे जहाज के लायक माल होता है। जिनके पास पूरे जहाज के लायक माल भेजने को नही होता वे लाइनर से ही अपना माल भेजते है। जब ट्रैम्प एक स्थान पर से अपना माल

---

14. "A Liner is any vessel that operates over a fixed route on a regular schedule of sailing."

15. उदाहरण के लिये क्वीन एलिजबैथ तथा क्वीन मैरी जहाजों का टन भार क्रमशः ८३,६७३ टन और ८१,२३७ टन है। किन्तु ट्रान्स-अटलांटिक पर चलने वाले अधिकाश जहाजों का टन भार १० हजार से ३० हजार टन तक ही है। अन्य मार्गों पर छोटे जहाज चलते हैं—*L. D. Stamp*. **Op. Cit.**, p 263.

16 "A tramp is any vessel that has no fixed route and no regular time of sailing and which is ever-seeking those ports where profitable cargo is to be obtained."

(५) स्वेज पनामा से कम गहरी है। इससे जहाज धीरे-धीरे जाते हैं। यह इतनी चौड़ी भी नहीं है कि दो जहाज एक साथ इसमें से निकल सकें। पनामा नहर काफी चौड़ी है अत. उसमे स्वेज की तरह जहाजों को खड़े रहकर प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

(६) पनामा नहर की अपेक्षा स्वेज की नहर के कर (Taxes) ऊँचे हैं। उदाहरण के लिए स्वेज में से निकलने वाले जहाजों को प्रति टन ५ शिलिंग ६ पेंस कर देना पड़ता है, किन्तु खाली जहाजों को सिर्फ २ शिलिंग १० पेंस प्रति टन ही देना पड़ता है जबकि पनामा नहर से निकलने वाले जहाजो को क्रमशः एक डॉलर प्रति टन ही देना पड़ता है।

(७) स्वेज नहर का अधिकतर उपयोग ब्रिटिश जहाजो द्वारा ही होता है। किन्तु पनामा नहर अधिकतर सयुक्त राज्य की ही नहर है जिससे उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के बीच ही तटीय व्यापार खूब होता है।

अन्य नहरें

कील नहर (Kiel Canal)—जटलैण्ड का प्रायद्वीप बाल्टिक समुद्र में बाहर को निकला हुआ है। एल्ब नदी से बाल्टिक समुद्र का रास्ता जटलैण्ड का चक्कर लगाकर जाता है। यह ६०० मील लम्बा पड़ता है। फिर इस राह में चट्टानें आदि होने से यात्रा अत्यन्त खतरनाक होती है। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिये कील नहर खोदी गई है जो केवल ६१ मील लम्बी है। यह नहर बाल्टिक समुद्र को उत्तरी सागर से एल्ब नदी के मुहाने के पास जोड़ती है। इस नहर की गहराई ३८ फीट और चौड़ाई १४४ फीट है। अत. बड़े-बड़े जहाज भी इसमें आसानी से गुजर सकते हैं। यह नहर व्यापारिक और सामरिक दृष्टि से जर्मनी के लिये बहुत महत्वपूर्ण है। यह सन् १८९५ में बनकर तैयार हुई।

सू नहर (Soo Canal)—यह नहर अमेरिका मे सुपीरियर झील तथा ह्यूरन झील के मध्य में बनी हुई है। यह संसार में सबसे बड़ी जहाजी नहर है। इन झीलों के बीच सैंट मैरी नदी एक मील में २० फुट ढाल के ऊपर गिरती है। इस द्रुत जलवेग से जहाजों को बचाने के लिए सू नहर खोदी गई थी। इस नहर की दो शाखायें हैं और ५ बड़े द्वार हैं। कनाडा की ओर यह २२ फुट और संयुक्त राज्य की तरफ २४ फुट गहरी है। प्रतिदिन लगभग ७०० जहाज इसमें होकर निकलते हैं। प्राय ८६% व्यापार पूर्व की ओर होता है। अमेरिका और कनाडा के व्यापार के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है। इस नहर से स्वेज और पनामा से गुजरने वाले माल का चौगुना माल गुजरता है। कच्ची लोहे की धातु, गेहूँ और आटा पूर्व को तथा कोयला पश्चिम को जाता है।

मैनचेस्टर जहाजी नहर (Manchester-Ship Canal)—ब्रिटिश द्वीप समूह में यह सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण नहर है। यह नहर मरसी नदी के पूर्वी किनारे पर स्थित ईस्थम को मैनचेस्टर से मिलाती है। इसकी कुल लम्बाई ३५½ मील है, चौड़ाई १२० फीट और गहराई २८ फीट है। इसके बनने से पूर्व मैनचेस्टर को कपास लिवरपूल से रेल द्वारा आता था। अब यह सीधे यहाँ जहाजो द्वारा पहुँच जाता है। यह १८९४ मे बन कर समाप्त हुई।

सेंट लारेंस नहर (St. Lawrence Sea-way)—यह सामुद्रिक नहर

का एकाधिकार नही होता। जहाजो को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना करना पडता है। इस कारण जहाजो के चलाने की कला मे उन्नति करने, मुसाफिर तथा व्यापारियो को सुविधा देने और कम किराया लेने की ओर जहाजी कम्पनियों का विशेष ध्यान रहता है।

(४) जल न केवल जहाज बल्कि माल के बोझ को भी वहन करता है। केवल कुछ शक्ति की आवश्यक्ता होती है किन्तु स्थल पर अधिक मात्रा मे शक्ति की आवश्यकता पडती है।

(५) एक जहाज बनाने मे तथा उसके चलाने मे जो खर्च होता है वह रेल के इन्जिन बनाने तथा डिब्बे बनाने से कम होता है।

जहाजी उद्योग का महत्व

पोतचालन एक मूलभूत उद्योग है, जो अनेक उद्योगो को जन्म देता है। जहाज निर्माण, रग रोगन (Paints), लोहा ढलाई, लोहा व इस्पात उद्योग तथा इंजन लंगर, जजीरें, रस्सियाँ, घडियाँ, निमेषमान (Chronometer,) पथ प्रदर्शक, दन्ति-चक्र (Steering gear) और अन्य इसी प्रकार के अनेक यंत्रो व वस्तुओ के बनाने के कार्यालयो को जन्म देता है—जो बहुधा जहाज बनाने, उसे सुसज्जित करने अथवा उसके पोषण के लिए आवश्यक होते हैं।

इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, हॉलैण्ड इत्यादि देशो के उपनिवेशिक साम्राज्यो का उद्भव और विकास केवल जलयान द्वारा ही हुआ है। जलयानो ने ही ब्रिटेन जैसे छोटे-छोटे देशो को ससार के महान् व्यापारिक राष्ट्रो मे परिवर्तित कर दिया है जिसके द्वारा वे अपनी सघन औद्योगिक जनसख्या का पालन पोषण करने मे समर्थ हो सके हैं। युद्ध कालीन जहाजी बल ने विश्व के इतिहास मे भारी परिवर्तन कर दिखाये हैं। पिछले विश्व व्यापी भीषण युद्धो मे जहाज का स्थान स्थल सेना, नौ सेना और वायु-बल से कम नही रहा है।

इन्ही बातो को ध्यान मे रखकर प्रत्येक देश अपने यहाँ के पोतचालन व्यवसाय पर निकट दृष्टि रखता है, उसे प्रोत्साहन प्रदान करता है और सरक्षण एवं आर्थिक सहायता देता है, और कोई-कोई देश उसके प्रबन्ध और प्रशासन मे भी प्रत्यक्ष भाग लेता है। इन कारणो के अतिरिक्त देश की सरकार के लिए इस उद्योग के प्रति रुचि जागरण का एक कारण यह भी है कि पोतचालन स्वय एक बडा व्यापार है।

पोतचालन का विश्व की अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पडता है, इस प्रश्न का उत्तर देते हुए एक अमेरिकन विद्वान् लिखते है कि—"विश्व की विभिन्न जातियो मे परस्पर आधारभूत वस्तुओ के विनिमय की भावना अन्तर्राष्ट्रीय पोतचालन को जन्म देती है। यात्रियो के आवागमन मे भारी कमी होने पर भी कोई राष्ट्र भयानक परिणामो से बच सकता है; वायुयान, रेडियो व समुद्री तार द्वारा विदेशी डाक व्यवस्था के भिन्न भिन्न होने पर भी जीवित रह सकता है, तथा बने हुए माल के सीमान्त व्यापार के बन्द होने पर भी हानि से बच सकता है, किन्तु आधारभूत वस्तुओ के परस्पर आदान-प्रदान के बन्द होने से विश्व के राष्ट्रो की अर्थ व्यवस्था सकटकालीन स्थिति को पहुँच जायगी, और जातियो की उन्नति का मार्ग सर्वथा अवरुद्ध हो जाएगा वे इसे सहन नही कर सकते।"

स्टालिन जहाजी नहर (Stalin Ship Canal)—बाल्टिक सागर और श्वेत सागर के बीच कृत्रिम तथा प्राकृतिक जल प्रणाली है। यह मार्ग नीवा नदी, लाडोगा झील और ओनेगा झील से होकर निकलता है। यह श्वेत सागर और लेनिनग्राड को जोड़ती है।

वेनिस की ग्रान्ड नहर (Grand Canal)—इटली के प्रसिद्ध नगर वेनिस के बाजारों में होकर यह सुन्दर नहर जाती है। वास्तव में एड्रियाटिक सागर के उत्तर में वेनिस की खाड़ी पर वेनिस नगर छोटे-छोटे द्वीपों पर बसा हुआ है जो आपस मे मिले हुए हैं और बीच-बीच में नहरें हैं। ग्रान्ड कैनाल सबसे बड़ी है और मुख्य बाजारों में से होकर जाती है। इस नहर पर सुन्दर-सुन्दर गोन्डोला (नौकाएँ) इस प्रकार चलती हैं जैसे सीमेण्ट की सड़क पर रिक्शाएँ हों।

चीन की बड़ी नहर (Chinese Canal)—हैंगचाऊ और टीन्टसन नगरों के मध्य एक प्राचीन नहर है। यह नहर ८५० मील लम्बी है। यांग्ट्सीक्यांग नदी इस नहर को दो भागों में बाँटती है। यांगट्सीक्यांग और ह्वांगहो नदी के बीच वाला भाग तो ईसा से ६०० वर्ष पूर्व ही बन चुका था। उत्तरी चीन और दक्षिणी चीन के बीच व्यापार का यह महत्वपूर्ण मार्ग है।

भारत की नहरें—भारत की कुछ नहरें भी जलमार्गों का काम देती हैं। उनमें से ये मुख्य हैं :—[११]

(१) पूर्वी पंजाब की सरहिन्द नहर में हिमालय पर्वत की लकड़ियाँ बहाकर लाई जाती हैं।

(२) गंगा और यमुना की नहरों मे भी थोड़ी बहुत खेती की पैदावार एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाई जाती है।

(३) बंगाल का पश्चिमी भाग तो नहरों की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। भारत के विभिन्न भागों से निर्यात के लिये जो माल कलकत्ता को आता है उसका लगभग २५% जल मार्गों द्वारा ही लाया जाता है। इसका भी ६३% तो अकेले असम से ही नदियों और नहरों द्वारा आता है। कलकत्ता के जल मार्गों द्वारा किये जाने वाला व्यापार प्रतिवर्ष लगभग ४५ लाख टन होता है जिसमें ३४% स्टीमरों द्वारा, ६६% देशी नावों द्वारा ढोया जाता है। यात्री भी नावों द्वारा अधिक आते-जाते हैं। हिजली, सरकूलर, पूर्वी नहर, मिदनापुर और उड़ीसा नहर द्वारा पश्चिमी जिलों की पैदावारें कलकत्ता तथा अन्य व्यापारिक मंडियों को पहुँचाई जाती हैं।

---

११. भारत में नावें चलाने योग्य नहरों की लम्बाई इस प्रकार है :—

(अ) बंगाल—मिदनापुर नहर ५५ मील, हिजली नहर ५० मील, उड़ीसा तटीय नहर ५४ मील, कलकत्ता और पूर्वी नहर ८३४ मील।

(ब) मद्रास—गोदावरी नहर ५०० मील; कृष्णा नहर ४०० मील; बकिंघम नहर २६८ मील; वेदनारयम नहर ३५ मील; पश्चिमी तटीय नहर ४०० मील।

(स) गंगा की नहरें ३३६ मील।

(द) बिहार उड़ीसा की नहरें, ५०० मील।

K. T. Shah, **National Planning Committee Report on Trade**, 1948, pp. 100-102.

(४) यद्यपि आधुनिक जहाज हवा से अधिक प्रभावित नही होते किन्तु फिर भी हवा का थोडा बहुत प्रभाव तो पडता ही है। यही कारण है कि लिवरपूल से आस्ट्रेलिया जाने वाले जहाज आशा अन्तरीप के मार्ग से जाते है क्योकि पछुआ हवाएँ उनके अनुकूल पडती हैं, किन्तु आस्ट्रेलिया से लौटते समय उस मार्ग से न आकर स्वेज नहर के मार्ग से आते है जिससे उन्हे पश्चिमी हवाओ का सामना न करना पडे। यदि ये उसी मार्ग से आवें तो उन्हें कोयला भी अधिक जलाना पडे और उनकी चाल भी धीमी हो जाय।

यह बड़ी महत्वपूर्ण बात है कि विश्व के सभी प्रमुख व्यापारिक मार्ग पश्चिमी यूरोप पर आकर समाप्त होते है। इसका मुख्य कारण यह है कि पश्चिमी यूरोप जगत का सबसे महत्वपूर्ण औद्योगिक भाग है। विश्व मे सबसे अधिक कच्चे माल का उपयोग यहाँ होता है और यहाँ मे सबसे अधिक तैयार माल निर्यात किया जाता है अतएव यह स्वाभाविक ही है कि व्यापारिक मार्ग पश्चिमी यूरोप पर ही केन्द्रित हो। पश्चिमी यूरोप मे कोयले की बहुतायत होने के कारण ही यह उद्योग प्रधान है। यही नही कोयले के मिलने की सुविधा के कारण भी जहाज इस ओर आकर्षित होते हैं। अस्तु, कोयला ही प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से, सामुद्रिक मार्गों का पश्चिमी यूरोप मे केन्द्रित होने का मुख्य कारण है।

जहाजी बेड़ा

१६०३ मे समस्त विश्व का व्यापारिक जहाजी बेडा केवल २ करोड़ ४७ लाख टन था। १६१४ मे यह बढकर ४ करोड़ २४ लाख टन हो गया। इसमे इगलैंड के जहाज १ करोड ६० लाख और सं० राज्य के २० लाख टन के थे। ३० जून १६३६ मे यह टन भार ६ करोड़ ८५ लाख टन का था।

सन् १६३६ (६८५·०६ लाख टन) मे विश्व के सामुद्रिक बेडे की शक्ति १६१४ (४२५·१४ लाख टन) की अपेक्षा १६१% अधिक हो गई। द्वितीय महायुद्ध के उपरात फिर इस क्षेत्र मे उसी प्रकार की प्रतियोगिता जारी रही, जैसी प्रथम युद्ध के उपरान्त आरम्भ हुई थी। इस प्रतिस्पर्धा के कारण १६६० मे १२६७·७ लाख टन विश्व की सामुद्रिक शक्ति १६३६ की अपेक्षा १६० प्रतिशत और सन् १६५० की अपेक्षा १५३% हो गई है और प्रतिवर्ष इसमे वृद्धि होती चली जा रही है। १६६२ मे ३८,६६१ जहाज थे जिनका टन भार १३६६·८ लाख टन था।

सयुक्त राज्य अमेरिका ने प्रथम-महायुद्ध काल मे अपने जहाजी बेड़े को ५ गुने से अधिक बढा लिया था। सन् १६३६ की अपेक्षा सयुक्त राज्य का वर्तमान जहाजी बेडा दुगने से अधिक है और आज वह विश्व की सबसे बडी सामुद्रिक शक्ति है। सन् १६३६ तक ब्रिटेन और आयरलैंड विश्व की सबसे बडी जहाजी शक्तियाँ थी किन्तु अब स० राज्य ने उन्हें पीछे छोड दिया है। द्वितीय युद्ध से पूर्व तक जिन राष्ट्रो के बेडे की कोई गिनती नही थी—ऐसे कई राष्ट्रों ने भी युद्धोपरान्त काल मे अच्छा बेडा बना लिया है—और उनकी गणना अब विश्व के महत्वपूर्ण सामुद्रिक राष्ट्रो मे होने लगी है। पनामा, ब्राजील, कनाडा, लाइबेरिया इत्यादि देश नए सामुद्रिक राष्ट्रो मे उल्लेखनीय है। ब्रह्मा, पाकिस्तान, अर्जेन्टाइना, इण्डोनेशिया, इजराईल, तुर्की, मिश्र, इत्यादि कुछ अर्द्ध विकसित राष्ट्र भी आज अपना राष्ट्रीय बेडा बनाने में प्रयत्नशील है।

नही हैं। वास्तव मे जिन देशों की स्थिति समुद्र पर नही है वे उस घर के समान हैं जो सड़क से दूर है।[12]

महासागर के अपने कुछ गुण है। चूँकि वे प्रकृति की देन हैं अतः विश्व के सभी राज्य उनका उपयोग कर सकते हैं। प्रारम्भ से ही समुद्र में कहीं भी स्वतंत्रता-पूर्वक जहाज चलाये जा सकते हैं। आजकल भी देश तट से तीन मील की दूरी तक समुद्र पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकता है। बाहरी देशों के जहाजों को उस क्षेत्र के अन्दर आने-जाने से रोक सकता है। अतः यह कहा जाता है कि जो समुद्र पर अधिकार रखता है वह विश्व के व्यापार पर भी अधिकार रखता है।[13]

जिस प्रकार भूमि के साधनों मे थोडी दूर वाले स्थानों तक सामान ले जाने मे सड़कों की सुविधा होती है और दूर के लिये रेलो का प्रयोग उपयोगी होता है, उसी प्रकार समुद्री साधनों मे विशेष प्रकार के जहाजो को विशेष प्रकार के सामान ले जाने में ही सुविधा रहती है। इस विशेषता को ध्यान में रखकर ही अब जहाजो का निर्माण होता है। इसलिये यात्रियों को ले जाने वाला जहाज केवल यात्रियो को, डाक और कीमती हल्की वस्तुओं वाला जहाज इन चीजों को ही ले जाता है। भारी और सस्ते सामान को ढोने के लिये अलग जहाज होते हैं।

१६ वीं शताब्दी के आरम्भ (१६२४) तक पालो से चलने वाले जहाजों का प्राधान्य था किन्तु पिछले १०० वर्षो में भाप की शक्ति से चलने वाले आधुनिक जहाजों का इतना अधिक उपयोग होने लगा है कि हवा से चलने वाले जहाज (Sailing Ships) महत्वहीन हो गये हैं। आज भी अधिकाश हवा से चलने वाले जहाज तटीय व्यापार और कम दूरी की यात्रा करते हैं तथा भारी सामान को, जो जल्दी नष्ट होने वाला नही होता, ले जाते हैं। परन्तु थोडे से हवा द्वारा चलने वाले जहाज दूर की यात्रा भी करते हैं। वाष्प की शक्ति से यन्त्रो द्वारा चलने वाले जहाज हवा से चलने वाले जहाजो की अपेक्षा अधिक सामान ढो सकते है; उनकी चाल तेज होती है तथा वायु का उन पर कोई प्रभाव नही पडता। अस्तु, हवा से चलने वाले जहाजो का उपयोग अब क्रमश कम होता जा रहा है। किन्तु भाप से चलने वाले जहाजों के लिये कोयला अथवा तेल की आवश्यकता होती है। इस कारण तेल तथा कोयला मिलने वाले केन्द्रों की आवश्यकता पड़ी।

जैसे-जैसे जहाजो का आकार बढाया जाने लगा और उनकी चाल को तेज किया गया त्यों-त्यो अधिकाधिक कोयले की आवश्यकता पडने लगी। कोयला जहाज मे बहुत सा स्थान घेरने लगा। इसका परिणाम हुआ कि जहाजों में माल भरने के लिये कम स्थान रहने लगा। अस्तु, उस कठिनाई को दूर करने के लिए कई प्रयत्न किए गए। इंजिनो मे सुधार किया गया जिससे जहाजों मे कोयला कम खर्च हो। १६२० के उपरान्त तो ऐसे जहाज भी बनाये जाने लगे जिनमे कोयले के स्थान पर तेल का ही अधिक उपयोग किया जाने लगा। आजकल तो समुद्री यातायात मे डीजल एंजिन के प्रयोग से महान् परिवर्तन हो गया है क्योकि तेल कोयले की अपेक्षा कम स्थान घेरता है तथा ईंधन के रूप में भी कम खर्च होता है। १६१४ में जहाजो मे

12. "The nation that does not touch the ocean is like a house that is not upon the street."

13. "He who rules the sea, rules the Commerce of the World,"

विश्व के प्रमुख व्यापारिक मार्ग (Ocean Routes of the World)

विश्व का सामुद्रिक व्यापार मुख्यत निम्न व्यापारिक मार्गों द्वारा होता है—

(१) उत्तरी अटलांटिक मार्ग ।

(२) भूमध्यसागरीय जल मार्ग ।

(३) दक्षिणी अफ्रीका का केप मार्ग

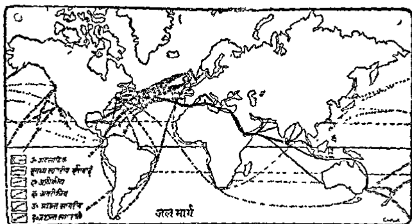
(४) दक्षिणी अमरीका का मार्ग ।

(५) प्रशान्त महासागर मार्ग

(१) उत्तरी अटलांटिक मार्ग (North Atalantic Route)

यह समुद्री मार्ग ससार का सबसे अधिक व्यस्त और महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग है जो एक शताब्दी से भी अधिक समय से काम मे आ रहा है। समस्त विश्व के व्यापारिक जलयानों का ½ माल इसी मार्ग से आता जाता है। इस मार्ग मे इतने यात्री और माल ले जाया जाता है जितना कि सभी मार्गों द्वारा सम्मिलित रूप मे। इसी मार्ग द्वारा विश्व के बडे-बडे जहाज आते-जाते हैं। १९६० मे ऐसे १५ जहाज, जो ३०,००० ग्रॉस टन से अधिक के थे, इस मार्ग द्वारा गुजरे। यह मार्ग संसार के दो सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्रो—पश्चिमी यूरोप और पूर्वी सयुक्त राज्य अमेरिका—को मिलाता है, अत. इन देशो के उन्नत व्यापार का सम्पूर्ण भार इसी मार्ग पर पड़ता है।

औद्योगिक दृष्टि से यूरोप और कृषि तथा अन्य पदार्थों के लिये कनाडा व संयुक्त राज्य अमेरिका बहुत उन्नत और विकसित है। अत कनाडा से यूरोपीय देशो को अनाज, लकड़ियाँ, कागज, लुब्दी तथा मक्खन, कैरेबियन प्रदेश से मिट्टी का तेल,



चित्र १८६. विश्व के प्रमुख व्यापारिक मार्ग

फल, शक्कर, कठोर लकडियाँ और सयुक्त राज्य अमेरिका से मिट्टी का तेल, पुराना लोहा, फॉस्फेट, गन्धक, कपास, खाद्यान्न, मांस, सेब, कच्चा लोहा और कारखानो मे

उतार देते हैं तब बेतार के तार से उन्हें सूचित कर दिया जाता है कि कहाँ-कहाँ जाकर माल लादना चाहिए। इस प्रकार ट्रैम्प जहाजों को माल मिलने में कठिनाई नहीं पड़ती। ट्रैम्प जहाज एक बड़ी आवश्यकता को पूरा करते हैं, कारण यह है कि किन्हीं स्थानों पर जब फसल का समय होता है तब तो माल लादने को रहता है अन्यथा वर्ष के शेष समय में वहाँ से माल नहीं भेजा जा सकता। ऐसे भारकस (traffic) के लिये ट्रैम्प उपयुक्त होते हैं। इनका वजन ५,००० से १०,००० टन तक होता है तथा ये ४०० फुट लम्बे होते हैं। इनकी चाल केवल ८ से १२ नॉट (Knot)[17] के बीच में होती है।

प्रो० रमेल स्मिथ के अनुसार नियमित जहाजी मार्गों (Regular Shipping Lines) को चार श्रेणियों में रखा जा सकता है —

(१) द्रुत यात्री मार्ग (Passenger Lines)—इनमें गति और समय का विशेष ध्यान रखा जाता है।

(२) कार्गो मार्ग (Cargo Lines)—इसमें जहाजों की गति धीमी रखी जाती है तथा किराया भी कम होता है।

(३) रेल-जहाज संयुक्त मार्ग (Rail-Cum-Shipping Lines)—जहाँ रेलें समाप्त होती हैं वहीं से ये जहाज समयानुसार आरम्भ होते है।

(४) गैर-सरकारी एवं व्यावसायिक मार्ग—इन पर चलने वाले जहाज तेल, केला आदि वस्तुएँ ढोते है।

समुद्री यातायात की कुछ विशेषताएँ

(१) *समुद्री जलमार्ग द्वारा माल बहुत सस्ते भाड़े में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है।* उदाहरण के लिए एक जहाज द्वारा माट्रियल से लिवरपूल तक गेहूँ ले जाने में प्रति टन मील ·०६ पें० खर्च पड़ता है, किन्तु इंगलैंड में रेल से गेहूँ ले जाने में प्रति टन मील २०·३ पें० खर्च पड़ता है। यद्यपि जहाज द्वारा माल ले जाने में खर्च बहुत कम होता है किन्तु जहाज रेल की अपेक्षा धीरे चलता है। जहाज साधारणत. ८,००० से १०,००० टन बोझा ले जा सकता है जबकि रेलें ६०० टन बोझा ही ले जा सकती हैं। जहाज द्वारा कम खर्च से माल ले जाया जा सकता है क्योंकि समुद्र ने एक प्रकृतिदत्त जहाज-मार्ग उपस्थित कर दिया है जिसको बनाने में कुछ व्यय नहीं होता।

(२) *यही नहीं समुद्री-मार्ग सब दिशाओं में होते है अतएव आवश्यकतानुसार कहीं भी जा सकते हैं।* इसके विपरीत रेलवे लाइनें बनाने में पचास हजार से लेकर एक लाख रु० प्रति मील तक व्यय हो जाता है, फिर भी सब स्थानों को रेलें नहीं पहुँच सकती।

(३) *समुद्र सब देशों के लिए खुला रहता है, अतएव प्रत्येक देश के जहाज समुद्र का स्वतन्त्रतापूर्वक उपयोग कर सकते हैं।* अस्तु, जहाजी कम्पनियों को व्यापार

---

17. १ नॉट—६०८० फुट प्रति घन्टा। माल ले जाने वाले जहाज की चाल १३ से १५ नॉट की होती है और यात्री ले जाने वाले जहाजों की चाल १७-१८ से २४ नॉट तक होती है। क्वीन मेरी और क्वीन एलिजाबेथ जैसे विशेष प्रकार के जहाजों की चाल ३० नॉट तक है।

द्वीपो को अपने अधिकार मे लेना, और (४) अलास्का मे सोने की खानों का पता लगना है। उत्तरी अटलांटिक मार्ग की तरह प्रशान्त महासागर का केवल उत्तरी मार्ग (North Pacific Route) ही अधिक महत्वपूर्ण है। यह मार्ग स० राज्य अमेरिका और कनाडा के पश्चिमी किनारो को पूर्वी एशिया के चीन, जापान, फिलीपाइन आदि देशो से जोड़ता हैं। यह मार्ग न्यूज़ीलैंड और आस्ट्रेलिया को भी जोड़ता है।

इस मार्ग मे बृहत् वृत्त का सिद्धान्त बड़ा महत्वपूर्ण है क्योंकि इस मार्ग के दोनों सिरो के मुख्य क्षेत्र एक ही अक्षास पर स्थित हैं। इसलिए उत्तरी मोड़ की लम्बाई बहुत रखनी पड़ती है। इसकी मुख्य पेटी कैलीफोनिया के दक्षिणी सिरे से आरम्भ होकर कनाडा की दक्षिण सीमा-अक्षास रेखा के साथ गोलाकार रूप मे याकोहामा तक फैली है। सैन फ्रांसिस्को से चलने वाले जहाज वृहत् वृत्त का अनुसरण करते हुए एल्यूशियन द्वीप होते हुए याकोहामा और मनीला पहुँचते है। इस मार्ग मे हिमपिंडों का खतरा नहीं रहता किन्तु शीत ऋतु मे तूफानी आँधियो के कारण यह मार्ग कुछ दक्षिण मे हटकर जाने लगता है। इस मार्ग पर उत्तरी अटलांटिक मार्ग की तरह कोयले की प्रचुरता नही है। कोयला बैंकूवर और जापान मे मिलता है और मिट्टी का तेल कैलीफोर्निया मे। पूर्वी एशिया के देश जहाजो के लिए मिट्टी का तेल सं० राज्य अमेरिका, ईरान और इण्डोनेशिया से आयात करते हैं।

इस मार्ग पर पूर्व से पश्चिम अर्थात् एशिया को जाने वाले व्यापार का आयतन पश्चिम से पूर्व अर्थात् अमेरिका जाने वाले व्यापार के आयतन से कही अधिक होता है। वाशिंगटन, ब्रिटिश कोलंबिया और आरगन से पूर्वी एशिया को लुब्दी. कागज, लकड़ी, अनाज आदि भेजा जाता है। कैलीफोर्निया से मिट्टी का तेल, कपास, खाद, डिब्बो मे बद किए हुए फल तथा नमक भेजा जाता है। खाडी के बन्दरगाहो से पूर्वी एशिया को इस्पात और लोहे का सामान तथा अन्य तैयार माल निर्यात होता है। एशिया से अमेरिका को गिरी, चीनी, हैम्प, वनस्पति तेल, सोयाफली, रेशम, सूती वस्त्र, चाय, खिलौने और शौकीनी कला के सामान (Lacquerwares) भेजे जाते हैं। एशिया से अमेरिका जाने वाले जहाजो को काफी खाली जगह लेकर लौटना पड़ता है इसलिए ये अधिक भाडा वसूल करते हैं।

इस मार्ग पर एशिया मे मुख्य बन्दरगाह याकोहामा, शघाई, हागकाग, मनीला और कोबे है। अमेरिका मे पोर्टलैंड, बैंकूवर, प्रिंस रूपर्ट, सैनफ्रासिस्को, ऑकलैंड, लॉस एँजिल्स और कालाओ हैं। इस मार्ग पर चलने वाली मुख्य जहाजी लाइनें 'ओरियन्टल लाइन' (Oriental Line) और 'जापान मेल-स्टीमशिप क०' (Japan Mail Steamship Co.) हैं।

इस मार्ग की तीन मुख्य शाखाएँ हैं.—

(क) प्यूजेट साउंट से न्यूज़ीलैंड तक—यह मार्ग बैंकूवर से आरम्भ होकर हवाई द्वीप के होनोलूलू बन्दरगाह होता हुआ फीजी द्वीप जाता है। वहाँ से यह आकलैंड और सिडनी को जाता है। इस मार्ग द्वारा दक्षिण की ओर कारखानो का तैयार माल, कागज तथा उत्तर की ओर ऊन, मक्खन, चमडा और खालें भेजी जाती हैं।

(ख) हवाई द्वीप से अलास्का मार्ग—यह मार्ग होनोलूलू से आरम्भ होकर सैनफ्रासिस्को और सियेटल होता हुआ अलास्का के जूनो और स्कैग्वे बन्दरगाहो तक

'आगे यही महानुभाव लिखते है कि 'सागर तल पर जलयानो के चले बिना एशिया निवासी अपने दीपको मे अमेरिकन तेल नही जला सकते; न दूरवर्ती देश अमेरिका के गेहूँ का ही उपयोग कर सकतेहै; न यूरोपवासी अपने यहाँ की भूमि मे उतनी गहनता के साथ खेती कर सकते है, न अमेरिकावासी इतना सस्ता तथा इतनी अधिक मात्रा मे उच्च कोटि का लोहा व इस्पात उत्पन्न कर सकते हैं; और न ब्रिटेन निवासियो को न्यूजीलैण्ड और अर्जेन्टाइना का ताजा माँस प्राप्त हो सकता है। यह जहाज के द्वारा ही संभव है जो कि मूलभूत वस्तुओं को असीमित मात्रा में सस्ते भाड़े पर ले जाता है और इस भाँति माल, मशीनो एव मनुष्यो को किसी उद्योग प्रधान स्थान पर केन्द्री भूत कर देता है। इसी भाँति यह प्रशीतन पोत (Refrigerator Ship) की कृपा के द्वारा ही सभव है कि एक क्षेत्र द्वारा उत्पन्न खाद्य पदार्थ विश्व के दैनिक भोज्य पदार्थ का काम देते हैं"।

भुगतान में सतुलन (Balance of Payments) स्थापित करने के दृष्टि कोण से भी पोतचालन का महत्व कम नही है क्योंकि जहाजी भाड़े को बहुधा अदृश्य निर्यात (Invisible exports) की संज्ञा दी जाती है।

समुद्री यातायात को प्रभावित करने वाली बातें

समुद्री-मार्ग व्यापार पर निर्भर रहते हैं। जहाँ माल लादने को अधिक मिलता है जहाज वही जाते हैं फिर चाहे उनको चक्कर लगाकर ही जाना पड़े। यद्यपि माल मिलने की सुविधा मुख्यत: जहाजो के मार्ग को निर्धारित करती है, किन्तु अन्य बातें भी समुद्री मार्गों को निर्धारित करती है; जैसे—

(१) यदि मार्ग मे कोयला मिलने के स्थान (Port of Coal) अधिक हैं तो जहाजों को थोड़ा कोयला ही भरना पडता है और माल लादने के लिए अधिक जगह मिल जाती है। यही कारण है कि बहुत से ऐसे स्थानों पर भी जहाज नियमित रूप से आते-जाते हैं जहाँ माल लादने को नही मिलता किन्तु कोयला सस्ता मिल जाता है। विश्व के ८०% कोयले के स्टेशन आध्र और भूमध्यसागर मे हैं। प्रशान्त महासागर मे सैनफ्रान्सिस्को, वैंकूवर, होनोलूलू, याकोहामा, सिंगापुर, एडीलेड और पर्थ मुख्य कोयले के स्टेशन हैं। भूमध्यसागर मे काहिरो, एथेन्स, और रोम तथा हिन्द महासागर में कोलम्बो और अदन मुख्य कोयला स्टेशन हैं।

(२) समुद्री-मार्ग यथासभव महावृत्तीय मार्ग (Great Circle Route) का अनुसरण करते है क्योकि वही दो स्थानो के बीच मे न्यूनतम मार्ग होता है। किन्ही दो स्थानो मे सबसे कम अन्तर सीधा मार्ग नही होता वरन महावृत्तीय मार्ग होता है। यही कारण है कि समुद्री मार्ग उत्तर मे उत्तरी ध्रुव की ओर तथा दक्षिण मे दक्षिणी ध्रुव की ओर जाते हैं जिससे जहाजो को कम से कम दूरी पार करनी पड़े। किन्तु कभी-कभी माल मिलने की संभावना, जलवायु तथा कोयला मिलने की सुविधा के कारण जहाजो को महावृत्तीय मार्ग भी छोडना पडता है।

(३) कहीं-कहीं नदियाँ तथा बन्दरगाह जाडो मे जम जाते हैं, तब जहाजो को सुविधाजनक मार्ग ग्रहण करना पडता है। यही कारण है कि जब शीतकाल मे सैंट लॉरेंस नदी जम जाती है तब जहाज दक्षिणी बन्दरगाह की ओर जाते हैं। हडसन की खाडी का मार्ग इंगलैंड के लिए सबसे निकट है किन्तु उसके अधिकतर जमे रहने के कारण जहाज उसका उपयोग नही करते।

इस्पात का सामान, शक्कर आदि—मँगवाया जाता है। चूँकि स्वेज नहर कम्पनी बहुत भारी कर वसूल करती है, अत प्रत्येक जहाज इस मार्ग से लाभ नहीं उठा पाता। जो जहाज सस्ते सामान आस्ट्रेलिया को लेकर जाते हैं वे केप मार्ग का ही अनुसरण करते हैं। कभी-कभी यूरोप से आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड जाने वाले यात्री कम खर्च होने से केप मार्ग ही जाते है।

इस मार्ग पर पश्चिम की ओर लन्दन, लिवरपूल, साऊथ हैम्पटन, हैम्बर्ग, रॉटरडैम, लिस्बन, मार्सेलीज, रोम, जिनेवा, नेपल्स और पूर्व की ओर सिकन्दरिया, हैफा, अदन, बम्बई, कोचीन, कलकत्ता, कोलम्बो, रगून, पिनाग, सिंगापुर, मनीला, हागकाग, पर्थ, एडीलेड, मेलबोर्न, सिडनी, मोम्बासा, जन्जीबार और डरबन है।

इस मार्ग पर पेनिनसुलर ओरियन्टल स्टीमशिप क० (Peninsular Oriental Steamship Co), 'ब्रिटिश इण्डिया लाइन' (British India Line), 'आस्ट्रेलिया कामनवैल्थ लाइन' (Australia Commonwealth Line) और 'जापान स्टीमशिप क० (Japan Mail Steamship Co.) के जहाज चलते है।

भूमध्यसागरीय मार्ग की निम्न शाखायें प्रमुख हैं :—

(क) भूमध्यसागर और काले सागर के बीच के मार्ग—यह मार्ग एक ओर खाद्यान्न उत्पादक क्षेत्रों को दूसरी ओर औद्योगिक क्षेत्रों से मिलाता है। अत पूर्व से पश्चिमी भागों को न केवल खाद्यान्न ही वरन कच्चा माल भी भेजा जाता है। मध्य पूर्व का तेल, रूस से अनाज और मैंगनीज, युगोस्लाविया से मक्का, तुर्किस्तान से कपास, तम्बाकू और क्रोमाइट तथा भूमध्यसागरीय देशों से फल, ऊन और चमड़ा तथा खालें इटली और फ्रास को भेजी जाती हैं तथा इन देशों से कारखानों का तैयार माल भेजा जाता है।

(ख) पश्चिमी यूरोप और भूमध्यसागर के बीच का मार्ग—इस मार्ग द्वारा पश्चिमी यूरोप के ब्रिटेन और उत्तरी सागर के तटीय देशों तथा भूमध्यसागरीय देशों के बीच व्यापार होता है। भूमध्यसागरीय देशों से—स्पेन से मध्यपूर्व के देशों तक नारंगी, जैतून, अजीर, मुनक्का, नीबू, शराब तथा विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ भेजी जाती है। उत्तरी अफ्रीका से फास्फेट, सिसिली से गन्धक, मिश्र से कपास तथा अन्य खनिज पदार्थ पश्चिमी यूरोपीय देशों को भेजे जाते है और उनके बदले में मुख्यतः ब्रिटेन से कोयला, स्कैन्डेनेविया से मुलायम लकड़ियाँ, दियासलाई, कागज लुब्दी, जर्मनी, फ्रास, इगलैंड और बेल्जियम से मशीनें तथा लोहे और इस्पात का सामान निर्यात किया जाता है।

(ग) दक्षिणी और पूर्वी एशिया का मार्ग—यह मार्ग सुदूर पूर्व (Far East) का मार्ग कहलाता है जो अदन से भारत का चक्कर लगाता हुआ पूर्वी देशों को जाता है। इस मार्ग द्वारा जापान को बर्मा, थाईलैंड और इण्डोचीन से चावल, भारत से कच्चा लोहा, जूट का माल, फारमूसा और जावा से शक्कर तथा मलाया और फिलीपाइन्स से कच्चा लोहा भेजा जाता है और जापान इन देशों को सूती वस्त्र, कोयला, रासायनिक पदार्थ आदि भेजता है।

(घ) उत्तरी अमेरिका और भूमध्यसागर के बीच का मार्ग—यह मार्ग भूमध्यसागर के जिब्राल्टर से अटलांटिक महासागर को पार करता हुआ पश्चिम की ओर संयुक्त-राज्य अमेरिका को जाता है। इस मार्ग द्वारा भूमध्यसागरीय देशों से

विश्व की वणिक पोत शक्ति (३० जून को)

(१००० टन और अधिक के जहाज) (लाख टन)

	१९३९ (टन)		१९५०	१९६० विश्व का%
सं० रा० अमेरिका	११३ ६२	२७५·१३	२४८ ३७	१९·१४
ब्रिटेन	१७८·९१	१८२·१९	२११ ३१	१६ २८
लाईबेरिया	——	२·४५	१२२·८२	८ ६९
नार्वे	४८·३४	५४·५६	११२·०३	८·६३
जापान	५६·३०	१८·७१	६९·३१	५·३४
इटली	३४·२५	२५·८०	५१ २२	३·९५
नीदरलैण्ड	२९·७०	३१·०९	४८·८४	३·७६
फ्रान्स	२९·३०	३२·०७	४८·०९	३·७१
प० जर्मनी	४४ ८३	४ ६०	४५·३७	३·५०
यूनान	१७·८१	१३·४८	४५·२९	३·४९
पनामा	७·१८	३३·६१	४२·३६	३·२६
स्वीडेन	१५·७७	२०·४८	३७·४८	२·८९
रूस	११·५४	२१·२५	३४·२९	२ ६४
डेनमार्क	११·७५	१२·६९	२२·७०	१·७५
स्पेन	९·०२	११·९०	१८·०१	१·३९
कनाडा	४ ८५	६·९०	१०·५५	०·८१
ब्राजील	३·५८	१९·३१	१५·७८	१·२२
अर्जेन्टाइना	२ ९१	९ १४	१०·४२	०·८०
भारत	१ ५०	४·२०	८ ५९	०·६६
बेल्जियम	४ ०८	४·८२	७·२९	०·५६
फिनलैण्ड	५·९०	५·०३	७·१४	०·५५
यूगोस्लाविया	४·१०	२·१५	६·६१	०·५१
तुर्की	२ २४	३·८८	६ ५१	०·५०
अन्य देश	४७·५७	५०·४०	६७·३२	६·०७
विश्व का योग	६८५·०९	८४५·८३	१२९७·७०	१००

(५) दक्षिणी अमेरिका का मार्ग (S. American Route)

दक्षिणी अटलांटिक महासागर का यह मार्ग पश्चिमी द्वीपसमूह, ब्राजील और अर्जेन्टाइना को ले जाता है। यहाँ मुख्य बन्दरगाह किंगस्टन, हवाना, वेराक्रूज, टैम्पिको, बाहिया, रिओडिजेनारो, सेन्टास, मोन्टीविडियो, ब्यूनेस आइरस और रोसारीयो हैं। यहाँ से मुख्य वस्तुएँ शक्कर, केले, रुई, मेहगोनी, तम्बाकू, चाँदी, रबड़, काफी, हीरे, अनाज, ऊन और गोश्त निर्यात की जाती हैं। यह मार्ग यूरोप और पश्चिमी द्वीप समूह, ब्राजील, यूरोप और अर्जेन्टाइना में व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करता है। इस मार्ग पर 'रॉयल मेल स्टीम पैकेट, कं०' (Royal Mail Steam Packet Co.) 'पैसिफिक स्टीम नैवीगेशन कम्पनी', (Pacific Steam Navigation Co.), 'लैम्पोर्ट एण्ड होल्ड लाइन', 'एलर्न एण्ड फाइम्स लाइन' तथा 'इम्पीरियल डाइरेक्ट वेस्ट इण्डियन मेल सर्विस कं०' के जहाज चलते हैं।

(vi) हिन्द महासागर के जलमार्ग

ये इस प्रकार हैं —

(१) अदन से बम्बई १,६५० मील।
(२) अदन से कोलम्बो २,१०० मील।
(३) कोलम्बो से कलकत्ता १,३०० मील।
(४) कोलम्बो से मारिशस और डरबन होते हुए केपटाऊन ४,००० मील।
(५) कोलम्बो से फ्रीमैन्टल ३,१०० मील।
(६) कोलम्बो से सिंगापुर १,६०० मील।
(७) कलकत्ता से रंगून होते हुए सिंगापुर १,७०० मील।
(८) केपटाउन से एडीलेड ५,६०० मील।

हिन्द महासागर के बन्दरगाहों से चावल, गेहूँ, जूट, चाय, खाल व चमड़ा, रांगा, रबड़, कपास, सूती कपड़ा, ऊन, चीनी, कोयला, सिनकोना, नारियल का तेल व जटाएँ और मसाले इत्यादि यूरोप व अमेरिका के लिये भेजे जाते हैं। बाहर से आने वाले सामान में मशीनें, मोटरें, कृषि यन्त्र, पैट्रोलियम पदार्थ, कल पुर्जे, सौदागरी का सामान, इन्जिन इत्यादि मुख्य हैं।

तैयार माल भेजे जाते हैं। यूरोपीय देशों से अधिकतर कारखानों के बने माल भेजे जाते हैं—विशेषकर स्पेन से पायराईट, फ्रास से खड़िया, जर्मनी से पोटाश, स्कैंडेनेविया से कागज व लुग्दी तथा अन्य बहुमूल्य पदार्थ जिनका आयतन बहुत कम होता है किन्तु मूल्य अधिक।

इस मार्ग पर पूर्व को जाने वाले माल का आयतन पश्चिम की ओर जाने वाले माल के आयतन का ४ या ५ गुना अधिक रहता है। इस प्रकार असतुलन का प्रभाव जलयानो के भाड़े पर पड़ता है। पश्चिम की ओर जाते समय जहाजो को अधिकतर खाली लौटना पड़ता है इसलिये ये जहाज भाडा बढा देते हैं। फिर भी यह मार्ग विश्व का सबसे श्रेष्ठ यात्री और माल मार्ग है। कुछ ट्रैम्प जहाज त्रिभुजाकार यात्रा करते है जिसके अनुसार जहाज ब्रिटेन से कोयला लेकर अर्जेन्टाइना पहुँचते हैं, वहाँ से सन या मैंगनीज लाद कर संयुक्त राज्य को जाते हैं और वहाँ से कच्चा माल आदि लादकर यूरोप ले जाते हैं। इस यात्रा मे बड़े वृत्त के मार्ग के अनुसार लिवरपूल जाने वाले जहाज नोवास्कोशिया और न्यू इगलैंड की ओर उत्तरी मोड़ लेते हुए जाते है। उत्तर की ओर इनके मार्ग सीमा और पूर्व के मोड का स्थान ऋतुओ पर निर्भर रहता है क्योंकि उत्तर की ओर से ग्लेशियर बहते हुए आते है। ऐसे ही हिमपिंडो द्वारा १६१२ मे टाइटैनिक (Titanic) नामक जलयान टकरा कर टूट गया जिसके फलस्वरूप १५१७ मनुष्य मृत्यु के मुँह मे पहुँच गए इसलिये तभी से शीतऋतु मे यह मार्ग २°३० अधिक दक्षिण की ओर होकर जाता है।

न्यूयार्क और न्यूआर्लियन्स, मैक्सिको की खाडी, मध्य अमेरिका के तटीय प्रदेशो और पश्चिमी द्वीप समूहों के पदार्थ इसी मार्ग द्वारा यूरोप भेजे जाते हैं। इस मार्ग मे डूबी हुई चट्टानें या द्वीप नही पाये जाते, अत. जहाजो के टकरा कर डूब जाने का कोई भय नही रहता। किन्तु इस मार्ग मे जहाजो को ग्राड बैंक्स के घने कुहरे का डर रहता है। उस समय जहाजों को बृहत् वृत्त मार्ग को छोडना पडता है जिससे उनकी यात्रा लम्बी हो जाती है।

इस मार्ग मे दोनों ओर जहाजो के लिए ईधन की सुविधा है। संयुक्त राज्य मे मध्यवर्ती क्षेत्र और कैरेबियन क्षेत्र मिट्टी के तेल मे धनी हैं और यूरोप की ओर इगलैंड, फ्रास, जर्मनी, पोलैंड आदि देशों में कोयला अधिक मिलता है।

इस मार्ग की मुख्य पेटी ४०° और ५०° उत्तरी अक्षाशो के बीच उत्तर की ओर गोलाकार फैली है। यह मार्ग पश्चिम यूरोप के मुख्य बन्दरगाह ग्लासगो, लिवरपूल, मैनचेस्टर, साऊथहेम्पटन, लन्दन, प्लाईमाऊथ, हैम्बर्ग राटरडैम, एन्टवर्प, लाहावरे, लिस्बन, बोर्डो और ब्रीमेन को उत्तरी अमरीका के पूर्वी किनारे के बन्दरगाहों—न्यूविक, माण्ट्रियल, हेलीफैक्स, सैंट जान्स न्यूयार्क, बोस्टन, न्यूआर्लियन्स, पोर्टलैंड, फिलाडेलफिया, न्यूपोर्ट- नॉरफोक, चार्ल्सटन और बाल्टीमोर—से जोडता है,

इस मार्ग पर अधिकतर 'क्यूनार्ड स्टीमशिप क०' (Cunard Steamship Co,) और 'ह्वाइट स्टार लाइन' (White Star-Line) के जहाज चलते हैं।

(ii) प्रशांत महासागर मार्ग (Pacific Ocean Route)

वर्तमान काल में इस मार्ग का महत्व काफी बढ गया है। इसकी उन्नति के मुख्य कारण (१) पनामा नहर का बनना, (२) जापानी बन्दरगाहों का विदेशी व्यापार के लिए खुलना, (३) संयुक्त राज्य द्वारा अलास्का, हवाई और फिलीपाइन

(६) सैन फासिस्को और लॉस ऐंजिल्स से होनोलूलू, आकलैंड, मनीला और हागकाग ।

वायुयान के विकास के फलस्वरूप यात्रा मे कितना समय बच जाता है इसका अनुमान निम्नलिखित तालिका से लगाया जा सकता है :—

यात्रा	हवाई मार्ग द्वारा दू०।	साधारण समय		
		हवाई जहाज द्वारा	रेल द्वारा	सामुद्रिक जहाज द्वारा
मॉन्ट्रियल-वैंकूवर	३,०००	१२ घंटे	४½ दिन	—
न्यूयार्क-लॉसऐन्जिल्स	२,४७०	११ ,,	३½ ,,	१६ दिन
न्यूयार्क-ब्यूनेसआइर्स	५,२९५	३० ,,	—	१६ दिन
लदन-सिडनी	११,६६०	८५ ,,	—	३० ,,
लंदन-कलकत्ता	६,३८६	३२ ,,	—	२२ ,,
लदन-जोहनेसबर्ग	७,०९४	३२ ,,	—	१७ ,,
लदन-मास्को	१,६००	१२ ,,	२½ दिन	—
लंदन-पेरिस	२०५	१½ ,,	८ घंटे	—

इस समय सपूर्ण विश्व मे २५० मे भी अधिक मार्गों पर नियमित रूप से व्यापारिक हवाई सेवाएँ चलती हैं। १९३० से १९५० के बीच के काल मे वायुयानो के ऐंजिन की शक्ति मे भी पर्याप्त प्रगति हुई है। यह ५०० अश्वशक्ति से बढकर १२,००० अश्वशक्ति हो गई है। इसी प्रकार चाल की औसत गति १२५ मील प्रति घन्टा से बढाकर ३७५ मील और उडान की दूरी ५०० मील से बढकर ८,००० मील हो गई है। यात्री ले जाने वाले यान साधारणतः २०० से २५० मील और डाक ले जाने वाले यान ३०० मील प्रति घन्टा चाल से उड़ते है। कुछ यानों ने तो ६०० मील प्रति घन्टा की रफ्तार से भी उडान की है।

विमान विकास के इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण बात उसकी चाल मे वृद्धि होना है। १९१० तक विमानो की चाल मोटर साइकिल की चाल की आधी थी, किन्तु १९१८ तक यह १३० मील प्रति घटा हो गई।[3] द्वितीय महायुद्ध से पूर्व विमानो की सामान्य चाल १०० से १५० मील प्रति घन्टे थी किन्तु अब ७०० मील की चाल सामान्य समझी जाती है यद्यपि कुछ विमान १००० मील की चाल से जाने की क्षमता रखते हैं। कुछ विद्वानो का अनुमान है कि आगामी १० वर्षों मे २००० मील की चाल सामान्य हो जायगी। ब्रिटेन के विमान विशेषज्ञो के अनुसार लदन से आस्ट्रेलिया की दूरी ३००० मील प्रति घटे से अधिक चाल से ३-४ घन्टो मे पूरी की जा सकती है। सयुक्त राज्य का राकेट विमान २१५० मील की चाल प्राप्त कर चुका है। जर्मनी के राकेट विमान लगभग ३७ मील ऊँचा चढ सकेगा और उसकी

3. *Nicholson, J. L.*, **Air Transportation Management**, *1951*, p. 2.

जाता है तथा दूसरा मार्ग प्यूजेट साऊंड से पोर्टलैंड, सैनफ्रान्सिस्को, होनोलूलू, मनीला होता हुआ याकोहामा को जाता है। इस मार्ग द्वारा मछलियाँ, फर, खनिज पदार्थ, शक्कर, केले, अनन्नास आदि भेजे जाते हैं।

(ग) न्यूजीलैंड-पनामा मार्ग—यह मार्ग पनामा नहर से आरम्भ होकर गैला पैगोप द्वीप होता हुआ न्यूजीलैंड को जाता है। इसकी शाखायें सिडनी, मेलबोर्न और आस्ट्रेलिया को जाती हैं। इस मार्ग द्वारा आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड का व्यापार उत्तरी अमेरिका के पूर्वी देशों और पश्चिमी यूरोपीय देशों से होता है। व्यापार की मुख्य वस्तुयें—मक्खन, ऊन, माँस, चमड़ा खालें आदि हैं।

(iii) भूमध्यसागरीय जलमार्ग (Mediterranean Route)

यह मार्ग उत्तरी अटलांटिक मार्ग को छोड़कर व्यापारिक दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मार्ग दुनिया के मध्य से होकर निकलता है और विश्व के अधिकांश भागों और मनुष्यों की सेवा करता है। इस मार्ग की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें महाद्वीपों के निकट स्थिति विभिन्न खाड़ियों और कटानों से आकर अनेक सहायक मार्ग मिलते हैं। इसके अतिरिक्त इनके निकटवर्ती देशों का धरातल पहाड़ी होने से स्थल यातायात के अनुकूल नहीं है, अतः तटीय भागों के व्यापार में इस मार्ग का महत्व अधिक बढ़ जाता है। इस मार्ग द्वारा विश्व के लगभग ½ मनुष्यों तक पहुँच जाता है। यह मार्ग विश्व की दो विभिन्न सभ्यता वाले देशों को जोड़ता है। पश्चिम की ओर औद्योगिक सभ्यता वाले पश्चिमी यूरोप और उत्तरी अमेरिका तथा पूर्व की ओर कृषि-सभ्यता वाले एशिया के देश हैं। इस मार्ग के किनारे प्राचीन ढंग के उद्योग-धन्धों से लगाकर आधुनिकतम उद्योग पाये जाते हैं।

यह मार्ग सबसे अधिक शाखाओं वाला मार्ग कहा जाता है।[१८] पश्चिम की ओर इसकी शाखायें यूरोप और उत्तरी अमेरिका को तथा पूर्व की ओर एशिया का चक्कर लगाने के बाद एक चीन, जापान और दूसरी आस्ट्रेलिया को चली जाती है। पश्चिमी यूरोपीय और एशिया की सीमाओं को छोड़कर इस मार्ग पर मिट्टी के तेल की सुविधा है। इस मार्ग के पश्चिमी भागों में सयुक्त राज्य अमेरिका, कैरेबियन प्रदेश, रूमानिया, रूस, तथा पूर्व में ईराक, सऊदी अरब, बहरीन द्वीप ईरान, कुवैत, बर्मा, इण्डोनेशिया और ब्रिटिश बोर्नियो में मिट्टी का तेल मिलता है किन्तु दूरस्थ पूर्वी स्थानों को कोयला आयात करना पड़ता है। यह मार्ग कोयले की प्राप्ति में धनी है। अटलांटिक सागर के किनारे पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका, नोवास्कोशिया, ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी तथा प्रशान्त महासागर के किनारे जापान और पूर्वी आस्ट्रेलिया में कोयला मिल जाता है।

इस मार्ग द्वारा पूर्वी देशों से पश्चिमी देशों को खाद्यान्न—चीन, जापान और थाइलैंड तथा ब्रह्मा से चावल, जापान से कच्चा रेशम और रबड़ का सामान, चीन से चाय, सोयाफली, कच्चा रेशम, भारत से चाय, मसाले, रुई, लकड़ियाँ, हेम्प, चमड़ा और खालें, तिलहन, आस्ट्रेलिया से माँस, लकड़ी, गेहूँ, ऊन, आटा, फल और मक्खन तथा शराब और मलाया से रबड़ और टिन—भेजा जाता है और इनके बदले में कारखानों का तैयार माल—सीमेंट रासायनिक पदार्थ, कागज, लुग्दी, लोहे और

18. "The Mediterranean-Asiatic is the trunk-line par excellence."

मार्ग सचालन मे अपने देश की कम्पनियो को आर्थिक सहायता देते है। यह सहायता या तो हवाई अड्डो तथा धरातलीय व्यवस्था की उपलब्धता प्रस्तुत कर अप्रत्यक्ष रूप से दी जाती है अथवा प्रत्यक्ष रूप से विभिन्न वायुयान कम्पनियो को धन देकर की जाती है। देश की डाक आदि ले जाने के बदले मे भी सरकार द्वारा निश्चित रकम आर्थिक सहायता के रूप मे दी जा सकती है। इससे सबसे बडा लाभ यह होता है कि वायुयान आदि चलाने का खर्च यात्रियो पर ही नही पडता। पहले थोड़ा किराया लिया जाता है फिर ज्यो-ज्यो व्यापार बढता जाता है त्यो-त्यो खर्चा भी बढता जाता है।

यद्यपि यह सही है कि यातायात के साधनों में वायुयान सबसे गतिशील है किन्तु यह व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नही है। सस्ता तथा भारी बोझा ढोने मे यह रेलो अथवा जहाजो की प्रतिस्पर्धा नही कर सकते। इसके अतिरिक्त ये छोटी मात्राओ के लिए भी अनुपयुक्त है। इनका अच्छा उपयोग अन्तर्देशीय उडानों के लिए ही लाभप्रद हो सकता है। किन्तु यह मानना पडता है कि जहाँ तक जरूरी डाक और कीमती सामान तथा यात्रियो के शीघ्र भेजे जाने का प्रश्न है, वायुयान ही अधिक लाभप्रद हो सकते है। आजकल सभी देश लम्बी यात्रा, डाक व बहुमूल्य वस्तुएँ भेजने मे समय बचाने की दृष्टि से वायुयानो का ही उपयोग करते हैं। ससार के प्रमुख औद्योगिक तथा व्यापारिक भागो म इनका अधिकतर उपयोग डाक तथा यात्रियो और शीघ्र नष्ट हो जाने वाली वस्तुओ को ले जाने के लिए ही होता है। हवाई यातायात का सबसे बडा लाभ यह है कि इसमे यात्रा की गति अत्यधिक रहती है और ऐसे मनुष्य के लिए समय ही धन होता है। किन्तु यह बात सर्वमान्य है कि भारी सामान ले जाने मे किसी दूसरे यातायात के साधनो से हवाई यातायात होड नही कर सकता क्योकि यह साधन बडा खर्चीला पडता है। १९५५ मे सयुक्त-राज्य के हवाई जहाजो की आय का ८८$\frac{1}{2}$% यात्रियो से प्राप्त हुआ, ४% डाक ले जाने से, २$\frac{1}{2}$% अन्य सेवाओ से और ५% माल ढोने से।

वायुमार्गों को प्रभावित करने वाली दशायें

यद्यपि वायुमार्ग रेल तथा जलमार्गों की तरह निश्चित और बँधे हुए नही होते किन्तु अपने हित की दृष्टि से सदा ही वह भूमि की बनावट और प्रकाश स्तभ तथा महावृत्तीय मार्ग का अनुसरण करते हैं। इन मार्गों को प्रभावित करने वाली ये दशायें हैं—

(1) जलवायु का हवाई यातायात पर बडा प्रभाव पडता है। अर्द्धउष्ण भागो मे उच्च मार्ग की पेटियाँ इसके लिए सबसे अधिक अनुकूल पडती हैं और कुछ स्थानो में तो हवाई उड़ान के लिए ये आदर्श हैं। उष्ण कटिबन्ध मे जलवायु सम्बन्धी दशाओ मे प्रादेशिक तथा मौसमी अन्तर होता रहता है किन्तु साधारण रूप के हवाई उड़ान के लिए वे अच्छी समझी जाती हैं। शीतोष्ण भागो मे वायु की दशा में बहुत अधिक परिवर्तन होता रहता है अत. हवाई उडान के लिए वायु की दशा बहुत ही प्रतिकूल होती है। तेज हवा, घनी वर्षा और बर्फीले तूफानों का हवाई मार्गों पर अधिक प्रभाव पड़ता है। इससे वायुयान का उडना कठिन ही नही असभव भी हो जाता है। दुर्घटनायें होने का अधिक अदेशा रहता है। स्वच्छ नीला आकाश और सूखी हवा ही इसके अनुकूल होते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि सूखी हवा की

संयुक्त राज्य अमेरिका को जैतून, जैतून का तेल, शराब, मुनक्का, सारडीन मछलियाँ कार्क, पाइराइट, फ्लूरोस्पर, कच्चा लोहा, कपास, तम्बाकू, मैंगनीज आदि जाते हैं और संयुक्त-राज्य अमेरिका से इन देशों को मुख्यतः कपास, तैयार माल और मशीनें आती हैं।

(ड) उत्तरी अमेरिका और सुदूर पूर्व मार्ग—यह मार्ग अटलांटिक महासागर से भूमध्यसागर, स्वेज नहर होता हुआ दक्षिणी पूर्वी एशिया को जाता है। इस मार्ग की पूर्व की ओर मोटरें, साइकिलें, मशीनें, पैट्रोल तथा निर्मित वस्तुएँ भेजी जाती हैं। पश्चिमी भागों को एशिया से रबड़, चावल, टिन, चाय, जूट, कपास, तम्बाकू, मसाले, मैंगनीज, लाख आदि भेजे जाते हैं।

(च) यूरोप और पूर्वी देशों का मार्ग—यह मार्ग सबसे प्रसिद्ध है। इस मार्ग द्वारा फारस से यूरोप को मिट्टी का तेल, ऊन, खजूरें, खालें और चमड़ा; पाकिस्तान से गेहूँ, भारत से कपास, चमड़ा-खालें, तिलहन, जूट का सामान, नारियल के रस्से; थाइलैंड, ब्रह्मा और इण्डोचीन से चावल, मलाया से रबड़, टिन मसाले; इण्डोचीन से शक्कर, मसाले, टिन, तम्बाकू, कहवा और खोपरा तथा फिलीपाइन्स से हैम्प, खोपरा, नारियल का तेल और जापान से चाय तथा कच्चा रेशम भेजा जाता है। इनके बदले में यूरोप इन देशों को इस्पात, इस्पात का सामान, सूती वस्त्र, रासायनिक पदार्थ एंजिन आदि भेजता है।

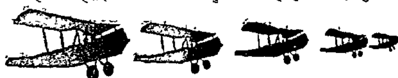
(v) दक्षिणी अफ्रीका का केप मार्ग (Cape Route)

स्वेज नहर के बनने के पहिले उत्तरी अटलान्टिक और पूर्व के बीच आने-जाने का केप आफ गुड होप का ही मार्ग था। किन्तु स्वेज नहर के बन जाने के पश्चात् यह मार्ग पश्चिमी यूरोप को अफ्रीका के दक्षिणी और पश्चिमी भागों से जोड़ता है। अफ्रीका का पश्चिमी किनारा आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है, इस कारण इस भाग में न तो कोई विशेष वस्तु जाती है और न यहाँ आती है। इसके अलावा यहाँ का समुद्री किनारा छिछला है। अतः बड़े-बड़े जहाजों के ठहरने के लिये यहाँ उत्तम बन्दरगाह नहीं हैं। किन्तु संयुक्त राज्य और यूरोप से आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड को माल ले जाने वाले जहाज इसी मार्ग से होकर जाते हैं क्योंकि एक तो यह मार्ग सस्ता पड़ता है और दूसरे स्वेज नहर की तरह जहाजों का जाना मुश्किल नहीं है। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड को यूरोप से जाने वाले यात्री भी कम खर्च की वजह से इसी मार्ग से ... हैं। इसकी एक शाखा आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड को जाती है। दूसरी केपटाउन से उत्तर की ओर अफ्रीका के पूर्वी तट के सहारे चलती है। तीसरी शाखा पूर्व की ओर पूर्वी द्वीप समूह को जाती है।

यूरोपीय किनारों पर मुख्य बन्दरगाह लन्दन, लिवरपूल, कार्डिफ, साऊथ हैम्पटन और लिसबन आदि हैं। जिन बन्दरगाहों पर जहाज ठहरते हैं वह पोर्ट एलिजाबैथ, ईस्टलन्दन, केपटाऊन, एडिलेड, मेलबोर्न, सिडनी और ब्रिसबेन हैं। अफ्रीका से मुख्य वस्तुएँ हाथी दाँत, गोंद, रबड़, इमारती लकड़ी, चमड़ा, खालें, मक्का, माँस, चीनी और शुतुर्मुर्ग के पंख आदि बाहर भेजे जाते हैं और बदले में मुख्यतः बनी हुई वस्तुएँ आती हैं।

इसी मार्ग पर 'यूनियन कैसिल लाइन' (Union Cassel Line) 'आस्ट्रेलियन कामनवैल्थ लाइन, और 'पी० एण्ड ओ० क०' (P &.O Co.) के जहाज चलते हैं।

करना पड़ता है। संयुक्त राज्य के महत्वपूर्ण वायुमार्ग डाक तथा यात्रियों को ले जाते हैं। संयुक्तराज्य के अटलांटिक और पैसिफिक तट इस देश के सबसे अधिक उन्नत भागों में से हैं और इन क्षेत्रों को परस्पर मिलाने का सबसे शीघ्रता का मार्ग हवाई मार्गों द्वारा ही है। इस देश के दूरस्थ स्थानों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने वाले इस शीघ्र गामी मार्ग का प्रयोग करने की इच्छा रखने वाले लोगों की संख्या बहुत अधिक है। अत हवाई यातायात का व्यय बहुत अधिक नहीं है। इसलिए संयुक्त राज्य



चित्र १८७—विभिन्न देशों में वायुयान का आपेक्षिक महत्व

अमेरिका में हवाई यातायात यूरोप अथवा संसार के किसी भी अन्य भाग की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है।

नीचे की तालिका में प्रमुख देशों के हवाई यातायात और उनके मार्गों को बताया गया है :—

देश	मुख्य हवाई सेवायें
संयुक्त-राज्य अमेरिका	—यूनाइटेड एअर लाइन्स ट्रान्स-वर्ल्ड एअर लाइन्स अमेरिकन एअर लाइन्स पान-अमेरिकन एअर वेज।
कनाडा	—ट्रांस-कनाडा एअर लाइन्स (ब्रिटेन, पश्चिमी द्वीप समूह, फ्रांस, जर्मनी और संयुक्त राज्य अमेरिका)
ब्रिटेन	—ब्रिटिश ओवरसीज एअर कॉरपोरेशन (यूरोप, दक्षिणी अमेरिका, पश्चिमी- द्वीप समूह और ब्रिटिश कॉमनवेल्थ के सब देश)।
फ्रान्स	—एअर फ्रान्स (यूरोप, उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका, मध्य और सुदूर पूर्व तथा आस्ट्रेलिया)
नीदरलैंड	—रोयल डच एअर लाइन्स (सभी महाद्वीपों के साथ)
डेनमार्क स्वीडेन नार्वे	स्कैंडिनेवियन एअर लाइन्स —प्रणाली (एस० ए० एस०)

अध्याय ३३

यातायात के साधन (क्रमशः)

वायु-परिवहन

(AIR TRANSPORT)

यदि यह कहा जाय कि वर्तमान युग 'वायु का युग' (Air Age) है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी क्योंकि अब सारा विश्व सिकुड कर एक छोटी सी जगह में समा गया है। अनुमान लगाया गया है कि विश्व मे कोई भी स्थान एक दूसरे से ३५ घंटे से दूर नही हैं। इस कथन का मुख्य कारण मानव द्वारा वायु पर विजय प्राप्त करने के लिये ऐसे वायुयानो का निर्माण कर लेना है जिनके द्वारा विश्व के सभी देश एक दूसरे के निकट आ गये हैं।[1] अब विश्व की दूरी हजारों या सैकडों मीलों मे नही बरन् घन्टों और मिनटों मे नापी जाती है। चाहे शुष्क मरुस्थल हो, या घने जंगल या पहाडी क्षेत्र सभी के ऊपर होकर वायुयान जा सकते हैं। पान-अमेरिकन-वर्ल्ड एयर वेज के 'फ्लाइङ्ग क्लेपर्स' अटलांटिक की यात्रा प्रति १२ घण्टे के बाद करते-रहते हैं।. यह साधारणत ३४० मील प्रति घण्टे की चाल मे उडते हैं और १५,००० से २५,००० फुट की ऊँचाई पार कर सकते हैं। इनमे से कुछ वायुयानों ने न्यूयार्क और लन्दन के बीच की दूरी केवल ९ घन्टों मे ही तय की है।

वायु यातायात का विकास हुए अधिक समय नही हुआ। सबसे पहला प्रयास १९०३ मे अमरीका के राइट-भ्राताओं ने किया। उसी के बाद से ही इसमे प्रगति हुई है। १९३० और १९३८ के बीच उडान में १७% प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हुई। १९३८ मे वायुयानो ने २३,३७,५६,००० मील की दूरी तय की अर्थात् १९३० की तिगुनी और १९२६ की १२ गुनी दूरी।[2] १९३९ मे विभिन्न भागों के बीच हवाई सेवाएँ आरम्भ हुईं जिनमे से मुख्य ये हैं :—

(१) लन्दन से सिडनी, सिंगापुर और केपटाऊन।

(२) पेरिस से सेगाँव और टैनरीव।

(३) बर्लिन से रायोडी-जानेरो और काबुल।

(४) अमस्टरडॉम से बटैविया और पैरामैरिबो।

(५) न्यूयार्क से ब्यूनेसआयर्स, लिस्बन और लन्दन।

---

1. "For good or for evil, we live in a rapidly shrinking World." *W. Willkie*, **One World**, 1943.

2. *J. B. Hubbard*. **World Transport, Aviation, Harvard Business Review**, 1944, p. 510-11.

हवाई सेवा आरभ हुई थी। १९३८ मे बी० ओ० ए० सी० कम्पनी के स्वामित्व मे १४० यान थे जिनके द्वारा लगभग २५ हजार यात्री प्रति वर्ष ढोये गये। १९४६ मे इसके पास ३५० यान थे। इन्होने ५० हजार यात्रियो को ढोया और अब इनका महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। १९६१ मे अमरीकी यानो ने देश मे ३ करोड यात्रियो को और विदेशो को ४० लाख यात्रियो को ढोया।

(२) वे हवाई सेवायें जो दूरस्थ मार्गो को मिलाती हैं और जहाँ यातायात के अन्य साधनो द्वारा पहुँचना कठिन है। दक्षिणी अमरीका आस्ट्रेलिया, अफ्रीका तथा पूर्वी एशिया के विस्तृत भागो मे स्थित स्थानो को हवाई जहाजो द्वारा ही पहुँचा जा सकता है।

(३) वे सेवायें जिनका महत्व न केवल व्यापारिक दृष्टि से ही है वरन् सामरिक दृष्टि से भी है। अफ्रीका मे फ्रासीसी यानो के मार्ग इसके अन्तर्गत ही आते हैं।

(४) वे सेवायें जो नियमित रूप से तो नही चलती किन्तु आवश्यकता पडने पर वे कहीं भी जा सकती हैं।

भू-मण्डल के मुख्य वायु-मार्ग

(१) यूरोप और अमेरिका के बीच के वायु मार्ग—यह मार्ग अफ्रीका के अटलाटिक तट के साथ-साथ डाकर या बॉथरस्ट तक जाता है। यहाँ से यह मार्ग आध्र महासागर को पार करके ब्राजील के परनाम्बूको नगर पहुँचता है। यहाँ से एक मार्ग चिली मे सैंटियागो तक जाता है। अटलाटिक महासागर के किनारे सयुक्त-राज्य अमेरिका के वायु मार्ग भी परनाम्बूको मे आकर मिलते हैं।

यूरोप से एक दूसरा मार्ग लन्दन से शैनन, गेंडर, ओटावा होता हुआ न्यूयार्क जाता है। दूसरा मार्ग पेरिस से लिस्बन, एजोर्स, बरमूडा होता हुआ न्यूयार्क पहुँचता है। एक अन्य मार्ग स्टॉकहॉम से ओसलो, रेकजिविध-गेंडर और ओटावा होता हुआ न्यूयार्क जाता है।

(२) यूरोप आस्ट्रेलिया के बीच के वायु-मार्ग—इन मार्गों पर फ्रासीसी, डच तथा ब्रिटिश वायुयान चलते हैं। ब्रिटिश वायु-मार्ग लन्दन से आरम्भ होकर मार्सेलीज, अथेन्स, सिकन्दरिया, काहिरा, गाजा, बगदाद, बहरीन, शीराज, करांची, जोधपुर, दिल्ली, इलाहाबाद, कलकत्ता, रंगून, बैंगकाक, पीनाग, सिंगापुर, बटाविया, डारविन, ब्रिसबेन तथा सिडनी होता हुआ मैलबोर्न तक जाता है। डच तथा फ्रांसीसी हवाई जहाज भी लगभग इसी मार्ग पर चलते है। कुछ समय से रूस मे मास्को से ब्लाडीवोस्टक तक एक नया मार्ग खोला गया है।

(३) यूरोप तथा अफ्रीका के बीच के वायु मार्ग—इस मार्ग पर इटालियन, फ्रान्सीसी और ब्रिटिश वायुयानो का नियन्त्रण है। अफ्रीका के महत्वपूर्ण मार्ग ब्रिटेन के अधिकार मे हैं। ब्रिटिश वायुयान साउथैम्पटन से आरम्भ होकर भूमध्यसागर के पास सिकन्दरिया तक जाता है। सिकन्दरिया से यह मार्ग सीधे खारतूम को जाता है और फिर वहाँ से यह दो-दिशाओं या शाखाओं मे बँट जाता है—एक शाखा तो पश्चिम मे लागोस तक जाती है और दूसरी दक्षिण मे केपटाउन तक।

फ्रांसीसियो ने अफ्रीका मे दो वायु-मार्ग स्थापित किये हैं। एक अफ्रीका के

चाल ६६०० मील प्रति घंटा की होगी। रूस के राकेट की चाल तो इससे भी अधिक होगी।

वायुयान मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं—(१) हवा मे तैरने वाले (Aeroplanes) और (२) हवा मे उड़ने वाले (Airships)। हवा मे तैरने वाले वायुयान हवा से हल्के और हवा मे उडने वाले वायुयान हवा से भारी होते हैं। आधुनिक काल में साधारण तौर पर कई प्रकार के वायुयान जाने लगे है। जैसे—भूमि पर ठहरने वाले, जल पर ठहरने वाले (Hydroplanes) और दोनो पर ही ठहरने वाले (Amphibranes)।

वायुमार्गों का महत्व

हवाई जहाजो से धरातलीय यातायात की अपेक्षा एक बडा लाभ यह है कि इनका उपयोग स्थल और जल दोनों के ऊपर सम्भव है। जल पर स्थल का वितरण हवाई यातायात के लिए प्रथम महत्व रखता है क्योंकि प्रायद्वीप और द्वीप समूह जन्म दाता महाद्वीपो की केवल बाहर की सीमा पर ही नही होते बल्कि ठहरने के लिये सुविधाजनक स्थान भी होते है। इनके होने मे हवाई जहाज को जल पर बिना रुके हुए बहुत दूर तक नही उड़ना पडता, वह थोडी-थोडी दूर पर ठहरता चलता रहता है।

महासागरीय यातायात की भांति वायुयानो के लिए कोई मार्ग बनाने अथवा स्थिर रखने के लिए किसी धन की आवश्यकता नही होती। केवल वायुयानों के रुकने के स्थान बनाने के लिए धन चाहिए। अत हवाई यातायात के अन्तर्गत यातायात का व्यय रेल के यातायात की अपेक्षा कम ही होता है परन्तु रेलो द्वारा बहुत अधिक व्यापार होता है जिससे सामान का भाडा हवाई जहाज की अपेक्षा रेल से कम पडता है। इसलिए अन्तत हवाई यातायात रेलवे यातायात से अधिक व्ययसाध्य बैठता है। इसके अतिरिक्त हवाई जहाजों की मरम्मत व कलपुर्जों के लिए भी खर्च अधिक ही बैठता है। इनमे प्रयोग करने के लिए तेल आदि भी काफी महगा पडता है। हवाई जहाज के ठहरने का शुल्क भी कुछ अधिक होता है। इसके अतिरिक्त रेलो की अपेक्षा हवाई जहाज के चालको, कप्तानों तथा अन्य कर्मचारियों का वेतन भी अधिक होता है। हवाई जहाजों के मार्गो का—जो साधारणत ५० मील चौडे होते है—निर्धारण सरकारी विभाग द्वारा किया जाता है। हवाई जहाज के ठहरने आदि के स्टेशन बनाने तथा अन्य धरातलीय व्यवस्था उपलब्ध करने के लिए हवाई अड्डे, वायुयान उतरने के स्थान, हवाई जहाज रुकने के भवन, दुरस्ती के कार्यालय, अतिरिक्त विभाग द्वारा व्यवस्थित बेतार के स्टेशनों, प्रकाश घरो, वायु रुख सूचक यत्रो तथा प्रकाश आदि मे भी धन की आवश्यकता पडती है। यह व्यवस्था यद्यपि बडी व्ययसाध्य होती है किन्तु हवाई यातायात की सुरक्षा नियमितता, विश्वसनीयता और यात्रियो की सुख-सुविधा के लिए नितात आवश्यक समझी जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के अलावा अन्य सभी देशों मे यह व्यय सरकार ही सहन करती है। इन व्यवस्थाओं का उपयोग कोई भी निजी वायुयान निश्चित शुल्क देकर कर सकते है।

हवाई जहाज खरीदने और नियमित रूप से हवाई सर्विस चलाने में भी काफी खर्च पडता है। परन्तु युद्ध की दृष्टि से हवाई उडान की शिक्षा और वायुयानो की संख्या बनाये रखने तथा व्यापारिक कार्यो मे लाभ पहुँचाने के लिए सभी राष्ट्र वायु-

पूर्व में पोलैण्ड को और दक्षिण में इटली को; दक्षिण पश्चिम में पुर्तगाल तथा स्पेन को और पश्चिम में फ्रांस तथा संयुक्त राज्य को वायुयान चलते हैं। दूसरे महायुद्ध के पहले पश्चिमी और दक्षिणी यूरोप में डच तथा फ्रांसीसी वायुयानों की जर्मन वायुयानों से स्पर्धा थी।

पश्चिमी यूरोप के मार्ग रूस के मार्गों से जुड़े हैं लेकिन रूस से होकर उनका संबंध पूर्वी देशों से नहीं है। रूस का वायु-मार्ग मास्को से काबुल; मास्को से मंचूरिया, मास्को और काकेशस तथा मास्को और खाबारोवस्क होते हुए ब्लाडीवोस्टक तक हैं।

वायु-मार्ग तथा हवाई यातायात के विकास में संयुक्त राज्य अमेरिका का स्थान प्रमुख है। इस देश में एक किनारे से दूसरे किनारे तक आने-जाने वाले कई वायु-मार्ग हैं। पूर्वी तट पर बोस्टन, न्यूयार्क तथा वाशिंगटन और पश्चिमी तट पर सियाटिल, सैनफ्रांसिस्को और लॉस एंजिल्स प्रसिद्ध हवाई अड्डे हैं।

भारत में वायु यातायात

भारत में वायु-यातायात का महत्व होते हुए भी इसका अधिक विकास नहीं हो पाया है। १९२९ में पहली बार वायुमार्ग से विदेशों को डाक भेजी गई और तब से इस यातायात में अवश्य काफी प्रगति हुई है। भारत की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि यूरोप और आस्ट्रेलिया के बीच का वायु-मार्ग इस देश में होकर ही जाता है, अतः बाहरी वायुमार्गों के साथ-साथ देश के भीतरी भागों में भी कुछ वायु-मार्ग उन्नत हो गये हैं। दोनों तटीय भागों में इन मार्गों का विशेष रूप से विकास हुआ है। ये मार्ग कोलम्बो से मद्रास-विशाखापत्तनम्-भुवनेश्वर होते हुए पूर्वी तट पर कलकत्ता को और त्रिवेन्द्रम-कोचीन-बंगलौर तथा बम्बई होते हुए जामनगर और भुज को पूर्वी तट पर जाते हैं।

इनके अतिरिक्त देश के भीतरी भाग में मद्रास-बम्बई को, बंगलौर से, हैदराबाद को पूना से, बम्बई और कलकत्ता को वाराणसी, लखनऊ और कानपुर तथा दिल्ली से वायुमार्गों द्वारा जोड़ा गया है।

उत्तर में दिल्ली से वायुमार्ग श्रीनगर तथा लाहौर को जाते हैं।

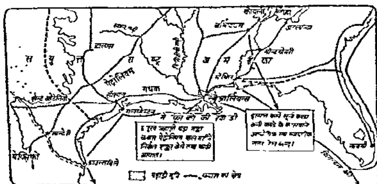
पूर्व में कलकत्ता और इम्फाल तथा असम के अन्य भागों के बीच भी वायु-मार्ग जाते हैं।

वायुमार्गों द्वारा भारत का पड़ोसी देशों से भी सम्बन्ध है—पटना से काठमाडू, दिल्ली से लाहौर या कराची होते हुए कधार और कलकत्ता से ढाका को भी वायुमार्ग जाते हैं।

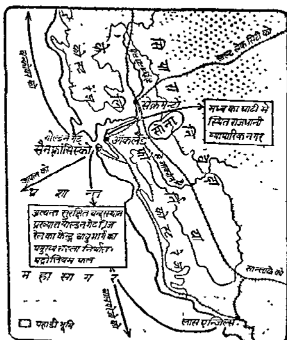
१ अगस्त १९५३ को वायु यातायात के राष्ट्रीकरण होने के फलस्वरूप भारत में दो निगमों की स्थापना की गई। प्रथम निगम Indian Airlines Corporation देश के भीतरी भागों की सेवा करता है। इसके अधिकार में १३ विस्काउंट, ३ स्काई मास्टर, ७ फोकर फ्रेन्डशिप्स और ४५ डैकोटा किस्म के हवाई जहाज हैं जो देश के विभिन्न भागों को जोड़ते हैं। इस निगम द्वारा १९६१-६२ में कुल ३२८ लाख कि० मी० की उड़ान की गई और ९ लाख यात्रियों को ले जाया गया।

दूसरा निगम Air India International भारत और विदेशों के बीच वायु सेवा करता है। इसके पास ९ सुपर-कान्स्टीलेशन, ६ बोइंग और ७०७ जेट

ऊनी कपड़ा, लोहा और फौलाद के सामान और नकली रेशम के बड़े-बड़े कारखाने हैं। यहाँ के मुख्य आयात रेशम, चाय, जूट, कहवा, शक्कर, चावल, तिलहन, लकड़ी तथा कागज की लुग्दी है और प्रमुख निर्यात कपड़ा लोहे और फौलाद का सामान तथा बिजली का सामान है।



चित्र १९३ न्यू आर्लियन्स की स्थिति



चित्र १९४. सेनफ्रांसिस्को की स्थिति

इटली	—एरोफ्लोट (Aeroflot)
	टेस्को (Tesco)
	एल० ए० आई० (L.A.I.)
	(उत्तरी अफ्रीका, समीप पूर्व, दक्षिणी अमेरिका तथा लन्दन)
भारत	—एअर इण्डिया इन्टरनेशनल
	(काहिरा, रोम, जिनेवा, पेरिस, लन्दन, अदन, नैरोबी, बैंकोक, सिंगापुर, काबुल, जकार्ता, लंका, बर्मा तथा पाकिस्तान)
रूस	—एरोफ्लोट
	(पूर्वी-यूरोप के देश)

वायुयान की प्रगति

देश	यात्री ले जाये गये (००० में)			हवाई जहाजों की उड़ान (१० लाख किलोमीटर में)		
	१९५६	१९५७	१९५८	१९५६	१९५७	१९५८
विश्व	५८५५४	६४५०८	६९२४९	१९७४	२१७४	२३६१
सं० रा० अमरीका	३६१२५	३८४६५	३८५२५	११२२	१२२८	१२३०
इगलैंड	२८२४	३२८२	३२९०	१११	१२४	१२५
फास	२३६०	२५७५	२५९७	९०	९७	१०८
कनाडा	२३१८	२६५७	३०५१	८०	९१	९८
आस्ट्रेलिया	१५२८	१७८३	१७८५	६९	६३	७४
नीदरलैण्ड	८०५	८८२	९११	५९	६४	६५
बेल्जियम	४६६	६१६	८२३	२९	३५	४१
स्विटजरलैंड	७६७	९८५	१०५९	२२	२९	३३
प० जर्मनी	२०६	३८१	५५०	१०	१६	२३
जापान	३६७	४२३	४५५	१०	१३	१६

व्यापारिक हवाई सेवाओं को निम्न श्रेणियो में रखा जा सकता हैः—

(१) वे हवाई सेवाये जो विश्व के घने बसे देशों मे यात्री और डाक ले जाने का कार्य करती हैं। सयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप में इस प्रकार की सेवाओ का जाल सा बिछा है। ये रेलमार्गों तथा सड़को से प्रतिस्पर्धा करती हैं किन्तु इनका महत्व निरंतर गति से बढ रहा है। १९१९ मे लंदन और पेरिस के बीच पहली

अध्याय ३४

बन्दरगाह

(PORTS)

बन्दरगाह समुद्र पर अवस्थित वह स्थान है जहाँ देश के भीतरी व्यापारिक भागों और समुद्री व्यापारिक भागो का सम्मिलन होता है। बन्दरगाहों द्वारा किसी देश का आयात और निर्यात व्यापार किया जाता है। वास्तव मे ये बन्दरगाह अपने पृष्ठ-देश के लिए व्यापार द्वार है। यह जल और स्थल के मध्य मे वह स्थान होता है जहाँ जहाज ठहर सकें और सामान लाद या उतार सके।[1] सामान लादना और उतारना ये दो मुख्य बातें किसी बन्दरगाह के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। बन्दरगाहो के अच्छे होने के लिए निम्न बातें होना आवश्यक हैं—

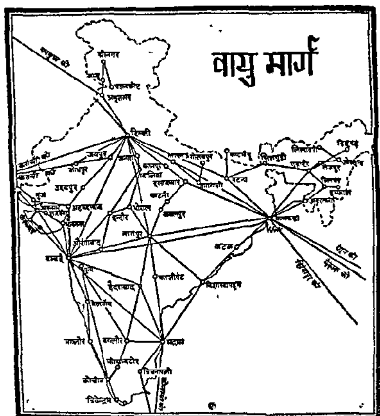
(१) अच्छा पोताश्रय (Good Harbour):—समुद्र तट पर जहाजो के ठहरने और उनमे सामान लादने और खाली करने के लिए अच्छे पोताश्रय का होना आवश्यक है।[2] आधुनिक समय मे प्रत्येक बन्दरगाह के पास पोताश्रय होते हैं क्योंकि इसके बिना बन्दरगाह पूरी तरह से उन्नति नही कर सकता। प्राचीन काल मे पोताश्रय वे स्थान होते थे जहाँ पर छोटे जहाज ठहर सकते थे और अपने को तूफानों या समुद्री लुटेरो से बचा सकते थे। किन्तु पास मे प्राकृतिक पोताश्रय होने से भी कोई बन्दरगाह अच्छा नही होता। उदाहरणार्थ त्रिकोमाली को लीजिये यह एक अच्छा पोताश्रय है किन्तु व्यापारिक मार्ग पर न होने के कारण अब तक बड़ा बन्दरगाह नही बन सका है। नार्वे व स्कॉटलैंड के पश्चिमी किनारो पर असख्य प्राकृतिक पोताश्रय हैं, किन्तु समीपवर्ती देशो के अधिक आबाद न होने से तथा उनके पहाड़ी होने से अच्छे बन्दरगाहो की नितान्त कमी है।

इस सम्बन्ध मे दूसरी आवश्यक बात यह है कि पोताश्रय केवल तूफानों से बचने एवं विश्राम-गृह का स्थान मात्र ही न होना चाहिये—बल्कि यह इतना गहरा भी होना चाहिये कि बड़े जहाज भी इसमे आसानी से ठहर सकें। साधारणतः जल की गहराई १०० फुट से कम नही होनी चाहिये। किन्तु यदि कहीं गहराई इससे भी कम है तो वहाँ निरन्तर भामो द्वारा मिट्टी हटा कर उसे गहरा बनाना पड़ेगा। रॉटरडैम, ऐंटवर्प, न्यूयार्क, कलकत्ता और शघाई के बन्दरगाह इसी प्रकार गहरे बनाये जाते है। यदि पोताश्रय किसी नाव खेने वाली नदी के किनारे पर स्थित है तो उसके द्वारा देश के आन्तरिक भागों मे पहुँचा जा सकता है। न्यूयार्क, लन्दन, लिवरपूल और कलकत्ता ऐसे स्दुअरी बन्दरगाहो के उदाहरण हैं।

1. "A port is a gateway between the land the and sea and thus performs the dual function of loading and unloading of the cargo."

2. A harbour is a place where ships can come and anchor during the time goods are binag loaded and unloaded.

पश्चिमी तट के सहारे-सहारे बाथर्स्ट होता हुआ फ्रांसीसी भूमध्यरेखीय तक पहुँचता है। दूसरा मार्ग सहारा तथा कांगो को पार करके मेडागास्कर में समाप्त होता है। इटली के वायु मार्ग ट्रिपोली तथा काहिरा होते हुये अबीसीनिया से अदीस अबाबा तक जाते हैं।



चित्र १८८. भारत के वायु-मार्ग

(४) अमेरिका और एशिया के बीच के वायु-मार्ग—प्रशान्त महासागर के लिये संयुक्त राज्य के वायुयानों द्वारा यात्रा की जाती है। यह मार्ग सैनफ्रांसिस्को से आरम्भ होता है और प्रशान्त महासागर के मध्य होनोलूलू, मिडवे द्वीप, वेकद्वीप और मनीला होता हुआ कैन्टन तक जाता है। एक दूसरा मार्ग सिडनी से ऑकलैंड, फीजी, होनोलूलू, सैनफ्रासिस्को होता हुआ वैंकूवर तक जाता है। एक तीसरा मार्ग सैनफ्रांसिस्को से अलास्का होकर टोकियो तक जाता है।

जर्मनी से वायु-मार्ग विभिन्न दिशाओं में जाते हैं। यहाँ से उत्तर में नार्वे, स्वीडन, फिनलैण्ड को; दक्षिण में चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लोवाकिया और यूनान को;

वितरित किया जाता हो।[3] किसी बन्दरगाह की उन्नति के लिए पृष्ठ-देश का महत्व अधिक होता है। अक्याव (ब्रह्मा) बन्दरगाह की पृष्ठ-भूमि पथरीली है और बिलोचिस्तान में ग्वाडर का बन्दरगाह रेतीला है। ऐसे बन्दरगाहों की उन्नति मे बाधा अवश्य पड़ती है। बन्दरगाहों के निकट सम-चौरस मैदान वाला पृष्ठ-देश जहाँ खेती सरलता से की जा सके या उद्योग-धन्धो का स्थानीयकरण हो सके अथवा जहाँ घनी आबादी हो, हमेशा उन्नति करता जायेगा। यद्यपि कलकत्ता का पोताश्रय उत्तम नही है किन्तु पृष्ठ-भूमि (गगा सिंघु का मैदान) के उपजाऊ होने के कारण इस बन्दरगाह का महत्व भारत के लिये अधिक है।

पृष्ठ-भूमि उपजाऊ होनी चाहिये जिससे वह दूसरे देशों की वस्तुयें लेकर उसके बदले मे अपनी वस्तुएं दे सके। साथ ही पृष्ठ-भूमि मे घनी आबादी होना भी जरूरी है जिससे बाहर की वस्तुओ की माँग हो और जहाज सामान से भरे हुये बन्दरगाह तक आया जाया करें। सक्षेप मे घनी आबादी, अच्छी पैदावार और आवागमन के उन्नत साधन पृष्ठ-भूमि को उपजाऊ बना देते हैं।

पृष्ठ-भूमि दो भागो मे विभाजित की जा सकती है —

(१) सग्राहक (Contributory) (२) वितरक (Distributory)। सग्राहक पृष्ठ-भूमि से आशय उस पृष्ठ-भूमि से है जो खाद्य पदार्थ और कच्चा माल बाहर भेजती है। वितरक पृष्ठ-भूमि अपने निवासियो के लिए कच्चा सामान और कल-कारखानों के लिए पक्का माल और कच्चा माल बाहर से मँगाती है। किन्तु प्राय सभी बन्दरगाह दोनों प्रकार के ही काम करते है।

कुछ पृष्ठ-भूमियाँ बहुत से बन्दरगाहो की पूर्ति करती हैं जैसे काडला द्वारा होने वाला अरब सागर के देशो के व्यापार के लिए पंजाब देश उसकी पृष्ठ-भूमि का काम करता है—उसी प्रकार पूर्व की ओर बंगाल की खाडी से होने वाले व्यापार के लिए यह कलकत्ता की पृष्ठ भूमि का काम देता है। बहुधा जिस बन्दरगाह में व्यापार की सुविधायें होती हैं वहाँ ट्राफिक अधिक रहता है। उदाहरणार्थ बम्बई और सूरत को ले लीजिये सूरत बन्दरगाह की अपेक्षा बम्बई बन्दरगाह पर ट्राफिक अधिक रहता है क्योंकि वहाँ सूरत से अधिक व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त हैं।

(३) आवागमन के साधन (Developed Means of Transport)—सभी बन्दरगाह अपनी पृष्ठ-भूमि से आवागमन के उन्नत साधनो द्वारा जुडे होने चाहिए जिससे बन्दरगाह से सामान आसानी से शीघ्र पृष्ठ-भूमि मे भेजा जा सके तथा वहाँ का सामान भी शीघ्र बन्दरगाह तक बाहर भेजने के लिए लाया जा सके—किसी बन्दरगाह को जिसे अधिक आवागमन के साधन उपलब्ध होंगे उतनी ही विस्तृत पृष्ठ-भूमि भी उस बन्दरगाह की होगी—भारत मे रेलमार्ग (दक्षिण मे) बनाने से पहले बम्बई इतना बडा बन्दरगाह नही था। यह कलकत्ते से भी छोटा था। परन्तु अब पश्चिमी घाट के कट जाने से यह पठारी और कडी मिट्टी की विस्तृत पृष्ठ-भूमि से जुड गया है, जो बहुत उपजाऊ है। यह देश के सभी भागों से रेल-मार्गों द्वारा जुडे होने के

---

3. "A hinterland is a land which lies behind a sea-port or a sea-board and supplies the bulk of the exports, and in which are distributed the bulk of the imports of that sea-board or sea-port, either generally or in relation to certain uses."

—**Chisholms' Handbook, p. 107.**

हवाई जहाज हैं। इसकी सेवायें २१ देशों को होती हैं। १९६१-६२ में इस निगम द्वारा १४१ लाख कि० मी० की उड़ान की गई तथा १३ लाख यात्रियों को ढोया गया।

१९६२ में अनुसूचित और सूचित सेवाओं द्वारा कुल मिलाकर ५४१ लाख कि० मी० की उडान की गई, १२ लाख यात्रियों को और लगभग ८२८ लाख कि० ग्राम डाक ले जाई गई।

१९४७ की तुलना में यात्रियों को ले जाने की संख्या में दुगुनी से अधिक, माल ढोने में १७ गुनी; डाक की ढुलाई में ९ गुनी से अधिक और उड़ान में ३ गुनी से अधिक प्रगति हुई है।—

भारत में नागरिक उडान द्वारा शासित ८२ हवाई अड्डे भी हैं।

मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि स्थल गोलार्द्ध में विश्व के चार प्रमुख व्यापारिक क्षेत्र स्थित हैं :

(१) वृहद यूरोप (जिसमे उत्तरी अफ्रीका और एशिया माइनर भी सम्मिलित हैं);

(२) रायोग्रान्डे से उत्तर से लगाकर उत्तरी अमेरिका,

(३) सोवियत रूस, और

(४) सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप।

ये चारों क्षेत्र मिलकर विश्व के क्षेत्रफल का ५९% और जनसंख्या ८८% बनाते हैं। इन क्षेत्रो मे विश्व के रेल-मार्गों का ८१%; कृषि योग्य भूमि का ८५%; सम्पूर्ण आय का ९९%; १००,००० से अधिक जनसख्या वाले नगरों की संख्या का ९२%, मोटरो का ९१% तथा कारखाने के उत्पादन का ९५% पाया जाता है। अस्तु, यह कहा जा सकता है कि भविष्य में इन देशों के बीच वायु यातायात की निश्चय ही प्रगति होगी।

प्रश्न

१. विश्व के व्यापार पर पनामा नहर का क्या प्रभाव पड़ा है? किन देशों को इसके बन जाने से विशेष लाभ हुआ है?

२. पनामा और स्वेज नहरों द्वारा विश्व के व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ा है? भारत के व्यापार को इन्होंने किस प्रकार प्रभावित किया है?

३. पनामा और स्वेज नहर की तुलना कीजिये (अ) बनावट और (ब) व्यापारिक महत्व के अनुसार।

४. स्वेज नहर के मार्ग द्वारा उष्ण कटिबन्ध और शीतोष्ण कटिबन्ध के बीच में जो व्यापार होता है, उसका वर्णन करिये और इस मार्ग की आर्थिक और व्यापारिक महत्ता पर प्रकाश डालिए?

५. "जो समुद्र पर राज्य करता है, वह विश्व के व्यापार पर राज्य करता है।" संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा इंगलैंड के उदाहरणों द्वारा इस कथन की सत्यता प्रकट करिये।

६. "पनामा नहर का महत्व दक्षिणी अमेरिका से उत्तरी अमेरिका के लिए अधिक है।" इस कथन की सत्यता पर प्रकाश डालिए।"

७. "मुसाफिर-मार्गों पर किन भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है।" विश्व के प्रमुख

गाह बनाया जाता है। ऐसे बन्दरगाहो मे जहाज हर समय आ-जा सकते हैं, किन्तु बन्द डाक वाले बन्दरगाहो मे जहाजो को ज्वार के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है और जब पानी ऊँचा उठता है तो वह उसके साथ बन्दरगाह मे आता है। अमेरिका के बन्दरगाह इसी प्रकार के हैं।

(६) कोयला लेने क स्थानों की बहुलता (Port of Coals)--बन्दरगाह जो साधारण-जल-मार्गो के स्थानो मे पड़ते हैं बहुत शीघ्र उन्नति कर जाते हैं। हवाना बन्दरगाह का महत्व उस समय की अ ा जब व्यापार दक्षिणी अमेरिका का चक्कर लगा कर होता था, पनामा नहर खुल जान से बहुत बढ़ गया है, इसी प्रकार हवाई द्वीप का होनोलूलू बन्दरगाह इस प्रकार के बन्दरगाह का अच्छा उदाहरण है।

किसी बन्दरगाह की महत्ता जानने के जो विभिन्न तरीके काम में लाये जाते हैं, ये हैं.—

(१) वर्ष मे वहाँ कितने जहाज आते और जाते है ?

(२) बन्दरगाहो पर आने वाले जहाजों का टन भार (Tonnage) क्या होता है ?

(३) आयात और निर्यात की मात्रा कितनी है ?

(४) आयात अथवा निर्यात सामान का मूल्य ?

किसी बन्दरगाह का महत्व वहाँ पर साल भर आने वाले जहाजों की संख्या जानने से ठीक-ठीक ज्ञात हो सकता है क्योंकि बन्दरगाह मे आने वाले जहाज बिल्कुल छोटे भी हो सकते हैं और बहुत बड़े भी। जहाजो के महसूल के हिसाब से भी पता चल सकता है कि अमुक बन्दरगाह का व्यापारिक महत्व अधिक है या कम, किन्तु इस रीति से यह नही ज्ञात हो सकता कि सामान कीमती है या सस्ता।

सामुद्रिक बन्दरगाहो को उनके पोताश्रय और स्थल मार्गों के सम्बन्ध के अनुसार तीन भागो मे विभाजित किया जा सकता है.—

(१) खुले बन्दरगाह (Open Road Steads) —ये बहुधा अच्छे बन्दरगाह नही होते क्योंकि उनके पोताश्रय न तो अधिक गहरे ही होते हैं और न उनमे जहाजो को हवाओं एव तूफानों से बचने का सुरक्षित स्थान होता है। यह बन्दरगाह बडी नदियो के मुहाने पर स्थित नही होते अतः इन बन्दरगाहों से देश के भीतरी भागो मे पहुँचने मे बडा व्यय और कठिनाई पड़ती है और इन बन्दरगाहो मे पक्की दीवारें बना ली जाती हैं जिनमे समुद्र की लहरो के कारण जहाजो से माल उतारने और उन पर उसके लादने मे बडी बाधा न पडे। मद्रास, एन्टाफोगेस्टा और बोकोना ऐसे बन्दरगाहो के उदाहरण हैं।

(२) खाड़ी के बन्दरगाह (Bay Ports)—ये काफी गहरे और सुरक्षित होते हैं और इनमे डॉक्स की भी अच्छी व्यवस्था रहती है, जैसे बम्बई। खाड़ी के कई बन्दरगाह तो नदियो पर हैं जिनके द्वारा समुद्र के जहाज स्थल मे बहुत दूर तक आ जा सकते हैं। पश्चिमी यूरोप की राइन नदी, चीन की यागट्सीक्याग, दक्षिणी अमेरिका की अमेजन और उत्तरी अमेरिका की सेंट लॉरेंस नदियाँ इसके लिए प्रसिद्ध हैं। कई स्थानों पर इन बन्दरगाहों से स्थल के मुख्य व्यापारिक केन्द्रो तक समुद्री जहाजों को लाने के लिए नहरें भी खोल दी गई है। मैनचेस्टर जहाजी नहर इनमे से मुख्य है।

३०. विश्व के अभी तक अर्द्ध विकसित और अमहत्वपूर्ण क्षेत्रों में विकास करने में आधुनिक युग में वायु-यातायात का क्या महत्व रहा है?

३१. निम्नलिखित की आर्थिक महत्ता बताइए:

(१) कोई भी दो ट्रांस-कांटिनेंटल रेलें।

(२) पनामा और स्वेज को छोड़कर कोई भी दो जहाजी नहरें।

(३) दो अन्तर्राष्ट्रीय वायु मार्ग।

३२. वातावरण की विभिन्न स्थितियों में यातायात के लिए 'मनुष्य' का क्या महत्व और स्थान है?

३३. उत्तरी अमेरिका के व्यापार और यातायात में बड़ी झीलों का क्या महत्व है? चित्र की सहायता से समझाइए।

३४. सैंट लॉरेन्स नदी का महत्व व्यापार के लिए कहाँ तक है? इसको बढाने के लिए क्या किया गया है।

३५. अटलांटिक महासागर को प्रायः 'मध्यवर्ती सागर' कहा जाता है? यह कहाँ तक सत्य है? व्यापारिक और आर्थिक तुलना हिंद महासागर से करिये।

३६. विश्व में वायु-यातायात के विकास का संक्षिप्त इतिहास बताइए। इसका आर्थिक महत्व क्या है, कुछ अन्तर्राष्ट्रीय वायु-मार्गों के दृष्टांत द्वारा समझाओ।

३७. भारत में वायु यातायात का विस्तृत वर्णन करिये तथा वायु-मार्गों को बताने वाला मानचित्र भी खींचिए?

३८. नीचे लिखों पर विस्तृत टिप्पणियां लिखिए:—

(क) स्वेज नहर तथा उसका भौगोलिक और सामरिक महत्व।

(ख) राइन नदी का मार्ग।

३९. विशिष्ट उदाहरणों द्वारा बताइये कि देश के आर्थिक विकास में रेलों का क्या महत्व है?

४०. "जो राष्ट्र समुद्र को नहीं छूता वह उस घर की तरह है जो सड़क मार्ग पर नहीं है।" इस कथन की पुष्टि करिए।

४१. यांगटसीक्याग और नील नदी की जलमार्गों की दृष्टि से तुलना करिए।

४२. विश्व के प्रमुख हवाई मार्गों का वर्णन करिए। इस सम्बन्ध में भारत के हवाई मार्गों पर भी प्रकाश डालिए।

४३. कौन-कौन सी परिस्थितियां नागरिक उड्डयन और हवाई मार्गों को प्रभावित करती है? गत महायुद्ध ने भारत और इङ्गलैण्ड के बीच के वायु-मार्गों को प्रभावित किया? भारत के प्रमुख वायु-मार्गों का वर्णन करिए।

४४. स्थल, जल और वायु-मार्गों के गुण विशेषों की तुलनात्मक विवेचना कीजिए, और यह बताइये कि ये विभिन्न साधन किन-किन वस्तुओं के व्यापार के लिए उपयुक्त हैं।

४५. भविष्य में हवाई-यातायात किस प्रकार विश्व के व्यापार को प्रभावित कर सकता है? इस संबंध में विश्व के प्रमुख हवाई मार्गों तथा उनके हवाई अड्डों का वर्णन करिए।

विश्व के प्रमुख देशो के बन्दरगाहों द्वारा होने वाले व्यापार की मात्रा

देश	१९५८ माल लादा गया (००० मैट्रिक टनो में)	१९५८ उतारा गया	१९६० माल लादा गया (००० मैट्रिक टनो मे)	१९६० उतारा गया
संयुक्त राज्य	२३,८०३	६१,९२२	३०,५४१	१११,३३३
पश्चिमी जर्मनी	३,८८०	१३,२२२	१५,२८४	४७,५९२
नीदरलैंड्स	७,१५७	१६,०२१	२२,९२२	६७,१०४
फ्रांस	—	—	१६,९३०	५१,१९४
इटली	२,५५४	१९,९४०	११,८७३	४७,००५
पूर्वी जर्मनी	—	—	१,३८८	१,४६८
रूस	—	—	३०,१३६	-४,६७१
बेल्जियम	७,२६५	१६,०४०	१६,०९०	२२,५१४
डेनमार्क	१,७३२	८,२७४	४,२००	१५,९००

विश्व के प्रमुख बन्दरगाह

(क) यूरोप के महत्वपूर्ण बन्दरगाह उत्तर-पश्चिमी तट पर स्थित हैं। यहाँ मुख्य बन्दरगाह ये हैं :—

हैम्बर्ग—जर्मनी का सबसे महत्वपूर्ण और महाद्वीपीय यूरोप का सबसे प्रधान बन्दरगाह एल्ब नदी के मुहाने पर स्थित है । यह अपनी पृष्ठ-भूमि से (जिसमें कृषि और औद्योगिक चीजें पैदा होती हैं), नदियो नहरो, सडको तथा रेल-मार्गों द्वारा जुडा है । यहाँ के मुख्य धधे जहाज बनाना, दवाइयां, शराब, सिगरेट, रासायनिक पदार्थ तथा रबड का सामान तथा जूट और साबुन बनाना है । यह मुख्यत- पुन-वितरक केन्द्र है । यहाँ से कहवा, शक्कर, तम्बाकू, चावल, रेशम, जूट, लोहा, कोयला और तेल यूरोप के देशो को वितरित की जाती है ।

रॉटर्डम—राइन की सहायक नदी न्यूमास नदी पर स्थित है जो समुद्र से गहरी नहर (न्यू वाटर वे) द्वारा जुडा है । इसका पृष्ठ देश (जर्मनी का औद्योगिक प्रदेश वैस्ट फेलिया, हालैण्ड तथा बेलजियम हैं) बड़ा कारबारी और धनी है । यहाँ से मक्खन, सुखाया हुआ दूध, कोयला, शराब, लिनेन इत्यादि निर्यात किये जाते हैं । यहाँ साबुन, शराब तथा जहाज बनाने के कारखाने हैं ।

मार्सेलीज—फ्रास का प्रमुख बन्दरगाह दक्षिणी फ्रास में रोन के मुहाने से ३० मील दूर स्थित है, जो एक नहर द्वारा रोन नदी से जोड दिया गया है । स्वेज नहर के खुल जाने से इसका व्यापारिक महत्व अधिक बढ गया है । अपने पृष्ठ देश से नदियो और रेलो से जुड़ा है । यहाँ के मुख्य उद्योग जहाज, एंजिन, साबुन, शक्कर, रेशम बनाना है । मुख्य आयात गेहूँ, तिलहन, नारियल का तेल, रेशम, शराब और कच्चा लोहा है ।

किसी देश की तटीय रेखा में प्राकृतिक कटानों के कारण स्थान-स्थान पर जल अपने आस-पास की सीमाओं द्वारा इस प्रकार घिर जाता है, कि वहाँ साधारणतया अच्छे पोताश्रय बन जाते हैं। जैसे बम्बई का पोताश्रय प्राकृतिक है, किन्तु कलकत्ता से यह बात नहीं पाई जाती। जहाँ प्राकृतिक पोताश्रय नहीं होते हैं वहाँ अप्राकृतिक पोताश्रय बनाये जाते हैं। कुछ स्थानों पर तो समीपवर्ती देश धनी होने से ही बनावटी पोताश्रय बनाने पड़ते हैं। कृत्रिम पोताश्रय उस स्थान पर बनाये जाते हैं जहाँ आस-पास की परिस्थितियाँ प्राकृतिक पोताश्रय बनाने में बाधा डालती हों। लहरों को रोकने के लिये बनावटी पोताश्रय में जल-तोड़ दीवालें (Break-Waters) बनाई जाती हैं जिससे जहाज तूफानों से सुरक्षित रह सकें। मद्रास में जहाजों को तूफानों से बचाने के लिये पोताश्रय के सामने जल-तोड़ दीवाल (Break-Waters) बनाई गई है। हाऊस्टन (टेक्सास) और मैनचेस्टर (इङ्गलैण्ड) आदि नगरों ने तो समुद्र से सम्बन्ध जोड़ने के लिये नहरें (dug-out basin) भी बनाई हैं। दक्षिणी अमेरिका का मोन्टिविडियो नाम का बन्दरगाह पैराना, पैरेग्वे नदियों के उपजाऊ पृष्ठ-देश के कारण ही बनाया गया है। इस प्रकार बनावटी पोताश्रय को बनाने के लिये कभी-कभी तो काफी रुपया खर्च कर देना पड़ता है। परन्तु वर्तमान समय में प्राकृतिक और कृत्रिम बन्दरगाहों में कोई विशेष अन्तर नहीं पाया जाता क्योंकि प्राय: सभी बड़े-बड़े पोताश्रयों को नियमित रूप से मिट्टी निकालकर गहरा किया जाता है जिससे आधुनिक समय के विशालकाय जहाज बन्दरगाहों तक पहुँच सकें।

जहाज ठहरने, घूमने आदि के लिये पर्याप्त लङ्गर स्थान (anchorage) होना भी आवश्यक है। इस दृष्टि से न्यूयार्क, हैम्पटन रोड्स, रायोडीजोनेरो आदि बड़े महत्व के हैं जहाँ बड़े-से-बड़े जहाज भी शरण ले सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी स्थान पर अच्छा पोताश्रय होने के लिये यह बातें आवश्यक है. (१) काफी बड़े आकार की एक नहर जिसके द्वारा जहाज समुद्र से बन्दरगाह तक आ सकें, (२) लहरों तथा तूफानी हवाओं से बचाव, (३) डॉक्स बनाने के लिये पर्याप्त स्थान, (४) विस्तृत क्षेत्रफल और अधिक गहराई; (५) अधिक चौड़ाई जिससे बड़े-से-बड़े जहाज आसानी से घूम सकें, (६) बर्फ, ज्वारभाटा और लहरों तथा कुहरे आदि से बचाव; (७) इसके पास के स्थान में भूमि समतल होनी चाहिये, जिनसे ग्राम या शहर बन सकें। (८) आन्तरिक मार्ग की सुविधायें हों जिससे सामान ले जाया और लाया जा सके, (९) ज्वारभाटा की ऊँचाई १५ फुट से कम होनी चाहिये जिससे जहाज जाकर माल उतार और लाद सकें। न्यूयार्क में यह ऊँचाई ४½ फुट, बाल्टीमोर में १ फुट और लिवरपूल तथा लाहावें में २५ से ३० फुट है।

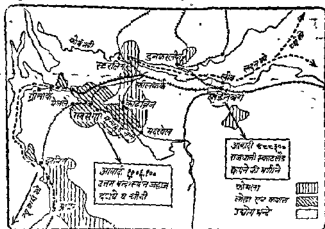
लन्दन, लिवरपूल, लाहावें, एन्टवर्प, हैम्बर्ग, न्यूयार्क, बोस्टन, सैनफ्रासिस्को रायोडीजोनेरो और सिडनी बन्दरगाह ससार के मुख्य गहरे बन्दरगाहों में से हैं।

(२) **धनी और आबाद पृष्ठ-भूमि** (Rich and populous Hinterland)—किसी भी बन्दरगाह की प्रसिद्धि उसकी पृष्ठ-भूमि की उपज पर निर्भर रहती है—क्योंकि जितनी ही पृष्ठ-भूमि धनी होगी उतना ही बन्दरगाह भी समृद्धिशाली होगा। पृष्ठ-भूमि वह स्थान है जो किसी बन्दरगाह या समुद्र-तट के पास हो और जहाँ से सामान निर्यात किया जाता है अथवा जिसके अन्दर देश का आयात

लन्दन––ब्रिटेन की राजधानी और विश्व का दूसरा बड़ा नगर है जो टेम्स नदी के मुहाने पर समुद्र से ६५ मील दूर ऐसे स्थान पर स्थित है जहाँ तक स्टीमर जा सकते हैं। यह विश्व का सबसे बड़ा पुन: वितरक केन्द्र है। चाय, कहवा, रबड़, ऊन, अनाज, माँस, लकड़ी, शराब, फल, मक्खन आदि वस्तुयें विदेशों से आयात करके यूरोप के दूसरे देशों को निर्यात की जाती हैं। यह एक बड़ा व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्र भी है, जहाँ कागज, रासायनिक पदार्थ, रेशम, लोहे, जूते, शराब, बिजली का सामान तथा अन्य सामान बनाने के बड़े-बड़े कारखाने हैं। यह रेलों द्वारा ब्रिटेन के सभी भागों से मिला है।

लिवरपूल––मरसी नदी के मुहाने पर स्थित ब्रिटेन का दूसरा बड़ा बन्दरगाह है। इसके द्वारा ब्रिटेन का ⅓ व्यापार होता है। इसका पृष्ठ देश बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है जो लङ्काशायर, यार्कशायर, स्टैफर्डशायर और चैशायर के प्रदेश तक फैला है। यहाँ तक आटा पीसने, शक्कर बनाने, सूती कपड़े बनाने, इस्पात, रासायनिक पदार्थ और साबुन बनाने के भी कारखाने हैं। यहाँ कपास, अनाज, चमड़ा, रबड़, तम्बाकू, गिरी का तेल, मक्खन आदि विदेशों से मँगवाया जाता है। यहाँ के मुख्य निर्यात सूती-ऊनी वस्त्र, लोहे-इस्पात का सामान, रासायनिक पदार्थ और चीनी मिट्टी के बर्तन हैं।

ग्लासगो––इसका उत्तम बन्दरगाह क्लाइड नदी के मुहाने पर स्थित है। इसके पृष्ठ देश में लोहा और कोयला अधिक मिलने के कारण इसका निकटवर्ती प्रदेश विश्व में सबसे अधिक जहाज बनाने वाला भाग है। यहाँ कोयले और फौलाद, लकड़ी,



चित्र १९१. ग्लासगो की स्थिति

चमड़े, जूते, ऊनी कपड़ा बनाने के कारखाने भी हैं। यहाँ के मुख्य आयात अनाज, कच्चा लोहा, फल, तेल और लकड़ी तथा निर्यात लोहे और इस्पात का सामान, जहाज, ऊनी-सूती, कपड़ा, कोयला, शराब और रासायनिक पदार्थ हैं।

बोर्डो––फ्रांस में गारोन नदी के मुहाने से ६० मील भीतर की ओर स्थित दक्षिणी-पश्चिमी तट का मुख्य बन्दरगाह है। यहाँ से शराब, लकड़ी तथा जहाजी

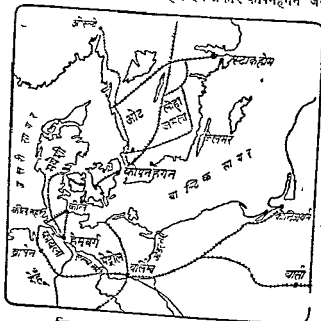
कारण उन्नतशील हो गया है। न्यूयार्क का बन्दरगाह, यद्यपि वह इंगलैंड से बोस्टन बन्दरगाह की अपेक्षा दूर है पर संयुक्त राज्य अमेरिका का अधिकतर व्यापार इसी बन्दरगाह द्वारा है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि यद्यपि कोई पृष्ठ-भूमि उपजाऊ है परन्तु बन्दरगाह तक आवागमन के साधन नहीं हैं तो वह अधिक बढ़ नहीं सकता। यद्यपि सैंट लारेंस नदी पर समुद्र से १०० मील दूर मांट्रियल का बन्दरगाह स्थित है किन्तु फिर भी नोवास्कोशिया के हैलीफैक्स बन्दरगाह की अपेक्षा इसका महत्व व्यापार के लिए अधिक है।

विश्व के अधिकांश बन्दरगाह नदियों के मुहाने पर ही पाये जाते हैं। फिलाडेलफिया, बोस्टन, बाल्टीमोर (अमेरिका में), लन्दन और लिवरपूल, टेम्स और मर्सी पर, हैम्बर्ग एल्ब नदी पर, सिकन्दरिया नील पर, कलकत्ता गंगा पर, शंघाई यांगट्सी पर तथा कैंटन और हांगकांग क्रमशः सी और तुंग नदियों के मुहाने के बन्दरगाह ही हैं।

(४) जलवायु (Climate)—बन्दरगाह की स्थिति पर उस स्थान की जलवायु का भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि जलवायु ठीक होता है तो साल भर तक बन्दरगाह खुले रहेंगे जिससे व्यापार में किसी भी प्रकार की हानि नहीं होगी, परन्तु यदि बन्दरगाह के समीप साल के अधिकांश भागों में बर्फ जमती है तो वह उन्नत नहीं हो सकता। रूस के उत्तरी बन्दरगाहों की यही दशा है पर आजकल जहाजों के आगे ऐसे यन्त्र लगा दिये जाते हैं जिससे समुद्र का बर्फ हटता जाता है और जहाज सरलता से बन्दरगाह तक पहुँच सकते हैं। बाल्टिक सागर के बन्दरगाहों की भी यही दशा है किन्तु यूरोप के उत्तर-पश्चिमी बन्दरगाह साल भर खुले रहते हैं क्योंकि वहाँ गल्फ स्ट्रीम बहती है किन्तु कनाडा के उत्तरी और पूर्वी बन्दरगाह लेब्रोडर की ठंढी धारा के कारण वर्ष में सिर्फ नौ महीने ही खुले रहते हैं। यदि जहाजों में बर्फ तोड़ने वाले यन्त्र (Ice Breakers) काम में नहीं लाये जाते हैं तो जर्मनी के उत्तरी बन्दरगाह भी सर्दी में किसी काम के नहीं रहते। सर्दी में कनाडा का व्यापार हैलीफैक्स और पोर्टलैंड द्वारा होता है क्योंकि सैंट लॉरेंस नदी सर्दी के कई महीनों तक खुली रहती है। सौभाग्यवश भारत के सभी बन्दरगाह साल भर खुले रहते हैं अतः इसमें व्यापार में विशेष कठिनाई नहीं पड़ती।

(५) बन्दरगाह की उन्नति के लिए ज्वार-भाटा (Tidal Range) का आना भी आवश्यक है—यद्यपि बन्दरगाह गहरा न हो परन्तु उस स्थान पर नियमित रूप से ज्वार-भाटा आते रहें तो ज्वार के चढ़ाव के साथ जहाज खुले समुद्रों से बन्दरगाह तक पहुँच सकते हैं और भाटा के साथ पुनः बन्दरगाह छोड़ सकते हैं। इससे अधिक खर्चा भी नहीं पड़ता और जहाज भी आसानी से बन्दरगाह तक पहुँच जाते हैं। किन्तु जहाँ ज्वारभाटा की सुविधा नहीं होती है वहाँ माल हल्के जहाजों द्वारा बन्दरगाह तक पहुँचाया जाता है। ज्वारभाटा के द्वारा बन्दरगाहों का सम्बन्ध खुले हुए समुद्र से होता है। यदि किसी स्थान पर ज्वारभाटा का उतार-चढ़ाव १५ फुट से अधिक होता है तो वहाँ बन्द डॉक (Closed docks) वाला बन्दरगाह बनाया जाता है जिससे पानी के ऊँचा उठने पर डाक के अन्दर का जहाज ऊँचा उठने न पाये नहीं तो जब पानी उतरेगा उस समय जहाज के नीचे जाने का डर रहता है और इससे माल लादने उतारने में बड़ी कठिनाई होगी। किन्तु जहाँ ज्वारभाटे का उतार-चढ़ाव १५ फीट से कम होता है समुद्र की गहराई काफी होती है वहाँ खुला हुआ बन्दर-

यह स्वीडेन के दक्षिणी भाग पर भी शासन करता था, और तब यह एक और महान राजधानी नगर था। कील नगर के खुल जाने से बाल्टिक और उत्तरी सागर के बीच की दूरी मे २४० मील की बचत हो गई है जिसने कोपेनहेगन के व्यापार को नुकसान पहुँचा है। नहर के द्वारा यातायात मे अधिक महसूल लगने के कारण अब भी कोपेनहेगन से होकर काफी व्यापार होता है। कोपेनहेगन के पास उत्तरी यूरोप से स्केण्डोनेविया जाने वाला मार्ग समुद्र पार करता है। इस प्रकार कोपेनहेगन जल और स्थल



चित्र १६२ कोपनहेगन की स्थिति

मार्गों के जङ्कशन पर बसा है। बाल्टिक और अधिकतर व्यापार और बाल्टिक तटवर्ती देशों का अधिकतर व्यापार यही शहर करता है, क्योंकि इसे मार्के की स्थिति और व्यापारिक मार्गों की सुविधायें प्राप्त हैं। डेनमार्क के सारे सांस्कृतिक, व्यापारिक और कारखाने के कार्य इसी नगर मे केन्द्रित है। इस नगर मे चीनी के बर्तन, पियानो, दूध, पनीर, मक्खन, पशु,उपज, घड़ियाँ, रसायन,शराब, जूते और सूती कपडे के कारखाने हैं। यहाँ से डेनमार्क के ससार मे प्रसिद्ध दूध उद्योग की उपज, सुखाया हुआ दूध, मक्खन और पनीर आदि भेजे जाते हैं। बाल्टिक तटीय देशो के लिए यह शहर पुनः निर्यात का भी व्यापार करता है।

(ख) उत्तरी अमेरिका के मुख्य बन्दरगाह ये हैं :—

न्यूयार्क : सयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तरी-पूर्वी तट पर हड्सन नदी के मुहाने पर स्थित है। इसी भील द्वारा यह भीलो के मार्गों से सम्बन्धित है। यह एक गहरा तथा सुरक्षित बन्दरगाह है जो यूरोप के औद्योगिक देश के निकट है। इसका पृष्ठ देश धनी और घना बसा है। यह रेल नदियों तथा सड़कों और नहरो द्वारा सभी ओर जुडा है। यह एक प्रमुख व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्र भी है। यहाँ सूती,

(३) नदियों के बन्दरगाह (Riverine or Estuarine Ports)—इस प्रकार के बन्दरगाहों से पृष्ठ-भूमि में सामान भेजने में भी सुविधा रहती है क्योंकि यह भीतरी स्थल भागो से जुड़े हैं। किन्तु ये कम गहरे होते हैं और उनमे जहाजो के ठहरने की सुविधा नही होती। इनको अधिक गहरा बनाने पर ही जहाजों के ठहरने की सुविधा हो सकती है। लन्दन और कलकत्ता ऐसे बन्दरगाहों के उदाहरण हैं। ऐसे बन्दरगाहों मे समुद्र के कटाव (Inundation) के कारण इधर-उधर निकली हुई भूमि के द्वारा समुद्रों की लहरों आदि से जहाजों की रक्षा होती है। इस प्रकार के बन्दरगाहों में बहुत ही उत्तम बन्दरगाह नार्वे और ब्रिटिश कोलम्बिया में टूटे हुए पहाड़ी समुद्री तटो के होने के कारण पाये जाते हैं। इन्हे फियोर्ड बन्दरगाह (Fiord Ports) कहते हैं जैसे ट्रामढीम।

कुछ बन्दरगाह जहाँ अनेक सुविधाएँ प्राप्त होती हैं वे केन्द्रीय बन्दरगाह (Entreport) के रूप मे जकदान का काम करते हैं। ये वे बन्दरगाह होते हैं जहाँ विदेशों से माल गोदामो मे भरकर रखा जाता है और अन्य देशों को जहाजों द्वारा निर्यात कर दिया जाता है। ये बंदरगाह एक प्रकार से दलाल का काम करते हैं—तटीय व्यापार करने वाले जहाज भिन्न-भिन्न देशों के तटीय भागो से सामान भर लेते हैं और फिर सुविधाजनक बन्दरगाहों पर, जो उनके मार्ग मे पडते है, उतारते जाते हैं। केन्द्रीय बन्दरगाह इसी प्रकार दूसरे बन्दरगाहों से सामान इकट्ठा कर भेजते है। इससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मे काफी लाभ होता है। जैसे लन्दन और हैम्बर्ग—संसार के दो मुख्य एन्ट्रिपो हैं—अन्य केन्द्रीय बन्दरगाह कोलम्बो, सिंगापुर, शंघाई, रोटरडम आदि हैं। ब्रिटेन का व्यापारी अपने किसी भी छोटे बन्दरगाह से सामान इकट्ठा कर बड़े बन्दरगाहों को भेज देता है और फिर इसी प्रकार बड़े बन्दरगाह मे छोटे-छोटे बन्दरगाहों को सामान लाया जा सकता है। लदन इसी तरह ब्रिटेन के बन्दरगाहों के साथ एक दलाल का काम कर रहा है।

देशी बन्दरगाह (Domestic Port)—ये अपने देशी व्यापार के लिये होते हैं। इन बन्दरगाहो की उत्पत्ति इनकी पृष्ठ भूमि अथवा सामुद्रिक मार्गों की उन्नति पर निर्भर है।

व्यापार (Traffic) की दृष्टि से भी बन्दरगाहों का वर्गीकरण किया जा सकता है : (१) यात्री बन्दरगाह (Passenger ports) और (२) माल के बन्दरगाह (Freight ports)।

(१) विश्व के कुछ ही बन्दरगाहों पर यात्रियों का जमाव अधिक होता है। इङ्गलैंड मे साउथ हैम्पटन तथा प्लाईमाऊथ, फ्रांस मे चेरबोर्ग तथा लाहावे, अर्जेनटाइना मे लाप्लाटा और भारत में बंबई इस प्रकार के बन्दरगाहों के मुख्य उदाहरण हैं।

(२) माल उतारने और लादने वाले बन्दरगाह प्राय सभी देशों में पाये जाते हैं। इनमे भी कुछ बन्दरगाह केवल कच्चा माल ही लादते हैं, जैसे—टैम्पा से फॉस्फेट, एन्टाफोगस्टा या इक्वीक से शोरा, वैन्कूवर से लकड़ियाँ, लूलिया या बिलबैओ से कच्चा लोहा, जैम्बोगना से खोपरा, विशाखापत्तनम से मैंगनीज, कार्डिफ, न्यूकैसिल और नार्फोक से कोयला ही अधिक लादा जाता है।

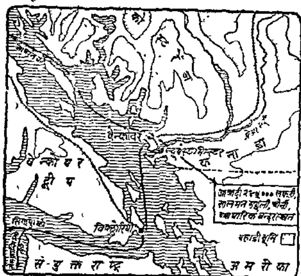
अन्य बन्दरगाहो से कारखानो में निर्मित तैयार माल लादा जाता है। इनके मुख्य उदाहरण हैम्बर्ग, कलकत्ता, न्यूयार्क, लंदन, कोबे, योकोहामा और रॉटरडैम हैं।

मांट्रियल—यह कनाडा का सबसे बडा नगर, व्यापारिक केन्द्र तथा प्रमुख बन्दरगाह है। यह सैंट लारेंस और ओटावा नदियों के सगम पर मांट्रियल नाम के टापू पर स्थित है। यह स्थल और जल-मार्गों का केन्द्र है। किन्तु सर्दी मे यह जम जाता है। यहाँ चमडा रबड, कपड़े, तम्बाकू तथा शराब बनाने के कारखाने हैं। यह नगर आयात की हुई वस्तुओ के वितरण का प्रमुख केन्द्र है।

न्यूआर्लियन्स—यह मिसीसिपी नदी के मुहाने पर स्थित है। इसका पृष्ठ देश कृषि की पैदावार मे बडा धनी है जहाँ से कपडा, मिट्टी का तेल, गेहूँ, पशु, लकडी तथा मक्का बाहर भेजी जाती है।

सेनफ्रांसिस्को : यह संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी तट का मुख्य प्राकृतिक बन्दरगाह है। पनामा नहर खुल जाने से इसका महत्व बढ गया है। इसके पृष्ठ-देश मे फलों की पैदावार बहुल होती है। यहाँ जहाज बनाने, गोश्त भेजने के लिए तैयार करने, फलों को डिब्बों मे बन्द करने, लकडी काटने तथा ऊनी-वस्त्र बनाने के उद्योग स्थापित हैं। यहाँ से सोना, गेहूँ, माँस, शराब, फल, लकडी, धातु और तेल निर्यात किया जाता है तथा विदेशो से रेशम, चाय, चावल, शक्कर और जूट मंगवाया जाता है।

वैंकूवर यह फ्रेजर नदी के मुहाने पर एक सुन्दर तथा सुरक्षित बन्दरगाह है। प्रशान्त महासागर-तट पर होने के कारण इसका महत्व अधिक है। यह प्रेरी प्रदेश की अनाज लकडी भेजने के लिए प्रमुख बन्दरगाह है। यह रेलों द्वारा भीतरी भागों से जुडा है।



चित्र १६५. वैंकूवर की स्थिति

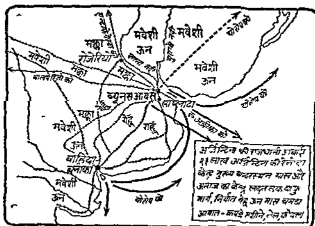
हेलीफैक्स : यह नोवास्कोशिया की राजधानी और कनाडियन नेशनल रेलवे मार्ग का पूर्वी अन्तिम स्टेशन है। यह एक श्रेष्ठ बन्दरगाह पर बसा है। लिवरपूल से

कुस्तुनतुनिया—बन्दरगाह बासफोरस जलडमरूमध्य पर स्थित है। यह यूरोप और एशिया के मध्य का प्रवेश-द्वार है। दक्षिणी रूस और कालासागर के निकटवर्ती देशों का व्यापार इसी बन्दरगाह से होता है। इसका पुनर्निर्यात व्यापार बहुत बढ़ा-चढा है। पूर्व के देशों से शाल-दुशाले, कालीन, इत्र, तम्बाकू, चमड़ा इत्यादि मंगाकर यूरोपीय देशों को भेजे जाते हैं।

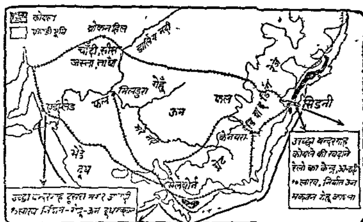
चित्र १८९ विश्व के प्रमुख बन्दरगाह

चित्र १९०. लदन की स्थिति

बोस्टन—अटलांटिक महासागर के व्यापारिक मार्गों की दृष्टि से इसकी स्थिति बडी अच्छी है। इसका पोताश्रय सुरक्षित खाडी पर बसा है। न्यू इन्लैंड के विशाल औद्योगिक क्षेत्र के व्यापार का यही प्रमुख द्वार है। यद्यपि न्यूयार्क के बाद बोस्टन दूसरा महत्वपूर्ण बन्दरगाह है और यूरोप के देशो के लिए निकटतम बन्दरगाह है फिर भी इसका महत्व इससे उद्योग धन्धो के कारण है न कि व्यापार के कारण। यह बन्दरगाह वर्ष भर खुला रहता है। इसका तटीय व्यापार भी बहुत अधिक है। यह रेल द्वारा पोर्टलैण्ड, न्यू ब्रिस्विक माट्रियल और न्यूयार्क से मिला हुआ है। यहाँ निकटवर्ती प्रदेशो के लिए चमडा, खाले, रुई व ऊन आयात किया जाता है तथा यहाँ से जूते, कागज, लोहा व इस्पात और चीनी निर्यात किए जाते है।



चित्र १६८. ब्यूनैस आयर्स की स्थिति



चित्र १६६. सिडनी की स्थिति

अमेरिका के अन्य बन्दरगाह गेलवेस्टन, पोर्टलैण्ड, बोस्टन, बाल्टीमोर और हैलीफैक्स आदि हैं।

सामान बाहर भेजे जाते है। इसका पृष्ठ-देश अंगूरो की पैदावार के लिए बडा प्रसिद्ध है। यहाँ चाकलेट, शराब, लोहे और चमड़े का सामान बनाने तथा चीनी और पैट्रोल साफ करने के कारखाने है।

एम्सटरडम—ज्वीडरजी नदी के बायें किनारे पर एम्सबल और नहरों द्वारा बनाये नये छोटे-छोटे अनेक टापुओं पर बसा है। इस नगर द्वारा पूर्वी देशों का बहुत व्यापार होता है। यहाँ शराब, रसायन और चीनी बनाने के कारखाने हैं। यह नगर हीरा तराशने तथा पालिश करने के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ इण्डोनेशिया से कहवा, रबड, चाय, टिन, चावल, मसाले तथा तम्बाकू आदि वस्तुएँ आती हैं।

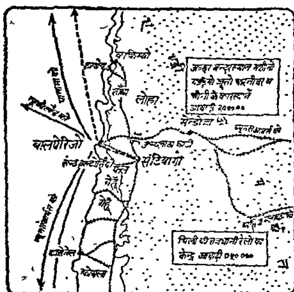
ओसलो—यह नार्वे देश की राजधानी है जो दक्षिणी पूर्वी भाग मे ओसलो नामक कटान पर स्थित है। ग्लोमेन घाटी द्वारा यह भीतरी भागो से जुडा है। इसका पृष्ठ देश मूल्यवान लकडी और खनिज पदार्थो तथा जल-विद्युत में बहुत धनी है। इसका बन्दरगाह शीतकाल मे ३ महीने तक बर्फ से जम जाता है अतः मशीनो द्वारा बर्फ को तोडना पडता है। यहाँ लकडी-चिराई, लकडी की लुब्दी, कागज, दियासलाई, शराब तथा ऊनी सूती कपडा बनाने के कई कारखाने हैं। यहाँ के मुख्य निर्यात लकडी, लुब्दी, कागज, दियासलाई, मछली का तेल मक्खन, सील मछली की खालें हैं तथा प्रमुख आयात कोयला, लोहा, मशीनें और सूत हैं।

वेनिस—पो नदी के डेल्टा के उत्तर मे एड्रियाटिक सागर का प्रसिद्ध बन्दरगाह है जो अनूप के किनारे १२० द्वीपो पर बसा है। इसको **'एड्रियाटिक सागर की रानी'** भी कहते हैं। यहाँ बैंगकाक और श्रीनगर की भाँति लोग नावों पर मकान बना कर रहते हैं। एक दूसरे स्थान को भी **गोंडोला** नामक नावों द्वारा ही आना जाना होता है। पूर्वी देशों की बहुमूल्य वस्तुएँ यहाँ वितरणार्थ लाई जाती थी और यहाँ से यूरोप के भिन्न-भिन्न देशो को उनका पुनर्निर्यात कर दिया जाता था किन्तु केप मार्ग के खुल जाने से इसका महत्व अब जाता रहा है। यहाँ शीशे का सामान तथा फीते और लेसें भी बनाई जाती हैं।

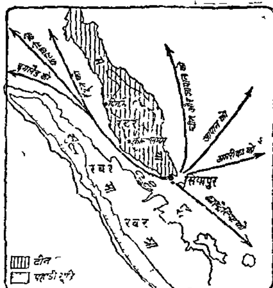
जिनेवा—पश्चिम की ओर लिनाओ की खाडी पर स्थित इटली का प्रसिद्ध बन्दरगाह है। यह रेल मार्गो द्वारा ट्यूरिन और मिलन से मिला है। स्विट्जरलैंड और जर्मनी का व्यापार भी इसी बन्दरगाह द्वारा होता है।

कोपेनहेगन—यह डेनमार्क देश की राजधानी है। इसकी स्थिति जीलैंड के उपजाऊ और मध्यवर्ती द्वीप पर है। इसकी आबादी ७ लाख ७५ हजार है जो कि सारे डेनमार्क का पाँचवाँ भाग है। इस प्रकार यह शहर सारे डेनमार्क पर प्रभाव डालता है। इसलिए यह डेनमार्क का प्रमुख नगर (Primate City) कहा जा सकता है। यह इस देश का सबसे बडा बन्दरगाह है। इसके पास कई छोटे छोटे टापू है जिनके बीच मे सकरे जलडमरूमध्य के तट पर स्थित होने के कारण बाल्टिक और उत्तरी सागर के बीच यह व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार पूर्व-पश्चिम व्यापार मार्ग पर बसे होने से इसका व्यापार काफी बढ गया है और यह एक महान व्यापारिक नगर बन गया है। कोपेनहेगन और अमागर द्वीप के बीच एक नदी की तरह सकरे जलभाग मे इसको एक सुरक्षित पोताश्रय भी प्राप्त है। इसी कारण कोपेनहेगन का नाम इस शहर को दिया गया जिसका अर्थ है सौदागरो की शरण-स्थल (Merchants Haven)। किसी समय अपने मध्यवर्ती स्थिति के कारण

है, जो कि साटियागो से होकर अस्पलाटा के दर्रे से ब्यूनस आयर्स एवं एकसा, स्वाबाहिया, ब्लाका को जाती है। इस बन्दरगाह के प्रमुख निर्यात फल, शराब, शोरा, गेहूँ, ताँबा, ऊन आदि हैं। यहाँ के प्रमुख आयात शक्कर, मशीनें, रेलों का सामान,

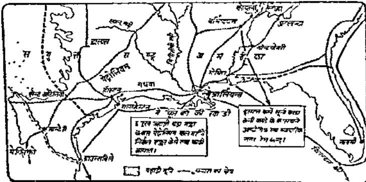


चित्र २०१. वालपेरैजो की स्थिति

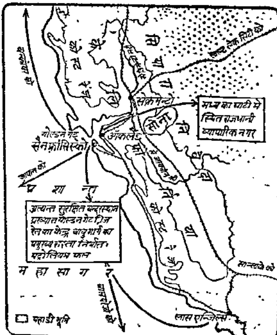


चित्र २०२. सिंगापुर की स्थिति

ऊनी कपड़ा, लोहा और फौलाद के सामान और नकली रेशम के बड़े-बड़े कारखाने हैं। यहाँ के मुख्य आयात रेशम, चाय, जूट, कहवा, शक्कर, चावल, तिलहन, लकड़ी तथा कागज की लुग्दी है और प्रमुख निर्यात कपड़ा लोहे और फौलाद का सामान तथा बिजली का सामान है।



चित्र १९३ न्यू आर्लियन्स की स्थिति



चित्र १९४. सेनफ्रांसिस्को की स्थिति

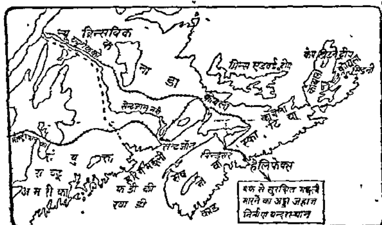
रेशम और चाय तथा मुख्य आयात कपड़ा, शक्कर, मिट्टी का तेल, तम्बाकू और लोहे तथा फौलाद का सामान है। इसके पृष्ठ-देश में ३०० से अधिक कारखाने हैं, जिनमें रेशमी कपड़ा, रबड़ का सामान, साबुन, रसायन, कागज, सिगरेट, सीमेन्ट, ग्रामोफोन, मशीनें आदि बनाई जाती हैं।

चित्र २०४. शंघाई की स्थिति[1]

टोकियो—यह विश्व का तीसरा बड़ा नगर है जो छोटी-छोटी नदियों द्वारा बने हुए डेल्टा की एक शाखा पर स्थित है। इसका बन्दरगाह उथला है अतः जहाज याकोहामा तक ही आ सकते हैं। यह अपने पृष्ठ देश द्वारा रेलों से मिला है। इसके मुख्य निर्यात सूती और रेशमी कपड़ा, रबड़, बिजली और काँच का सामान तथा कागज और ताँबा है। मुख्य आयात कच्चा कोयला और लोहा, कपास, चावल, शक्कर और अनाज हैं। यहाँ बिजली के यन्त्र, चीनी के बर्तन, इंजिन, रेल के डिब्बे, सूती कपड़े, रसायन, टिन, गटापारचा और रबड़ बनाने के कारखाने हैं।

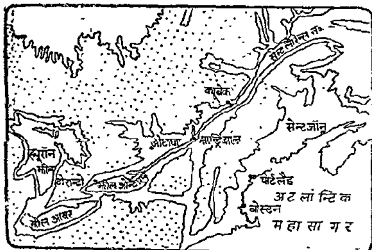
रंगून—ब्रह्मा का सबसे बड़ा नगर, राजधानी और प्रमुख बन्दरगाह है। यही नगर इरावदी की बड़ी शाखा से नहर द्वारा सम्बन्धित है। यहीं से देश के भीतरी मार्गों को रेल मार्ग गये हैं, इस प्रकार यह नगर अपने पृष्ठ-देश से पूर्णतया सम्बन्धित है। अपनी उत्तम स्थिति के कारण यह नगर पूर्व के प्रमुख बन्दरगाहों में से है। ब्रह्मा का ६०% व्यापार यहीं से होता है। यहाँ पर चावल कूटने तथा साफ करने की मिलें एवं आटा पीसने की चक्कियाँ तथा लकड़ी चीरने के कारखाने हैं। इस बन्दरगाह के प्रमुख आयात धातुएँ, सूती और रेशमी वस्त्र, मशीनें चमड़े का सामान, कागज और शक्कर हैं। यहाँ के मुख्य-मुख्य निर्यात चावल, लकड़ी, मिट्टी का तेल, मोमबत्ती, चमड़ा, शीशा, जस्ता, तम्बाकू और रबड़ हैं।

इसकी दूरी न्यूयार्क की तुलना मे ६१६ मील कम है। यह उत्तर-पश्चिमी यूरोप के बन्दरगाहो से चलने वाले जहाज जो न्यूयार्क को जाते है उनके मार्ग पर पडता है



चित्र १९६. हैलीफैक्स की स्थिति

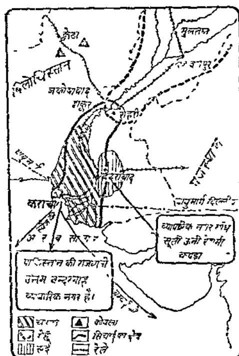
इसलिये शिकागो और माट्रियल पहुँचने मे यहाँ से उतर जाने पर कम समय लगता है। यह नोवास्कोशिया का प्रमुख औद्योगिक केन्द्र और बन्दरगाह है। यहाँ का बन्दरगाह जाडे की ऋतु मे भी गल्फस्ट्रीम की गर्म धारा के कारण खुला रहता है। इस ऋतु का प्राय सारा व्यापार इसी बन्दरगाह से होता है और कनाडा को इस पर निर्भर रहना पडता है। यह हवाई मार्गो के द्वारा कनाडा के भीतरी नगरों से मिला हुआ है। यहाँ कागज, चीनी साफ करने और लकडी चीरने के कारखाने है।



चित्र १९७. बोस्टन की स्थिति

लेने का स्थान है। यहाँ से कपास व कपास के सामान, काफी, शक्कर और तम्बाकू विदेशों से मंगाकर स्वयं अदन से विदेशों को भेजी जाती है।

करांची—सिन्ध प्रान्त और सम्पूर्ण पाकिस्तान का प्रसिद्ध नगर है। यह जल-मार्गों और रेल का केन्द्र है। यहाँ का बन्दरगाह प्राकृतिक है। सिन्ध के डेल्टा और पंजाब की खेती की मुख्य पैदावारें इसी बन्दरगाह से निर्यात की जाती हैं। यहाँ प्रमुख



चित्र २०७. कराची की स्थिति

हवाई अड्डा भी है। विदेशों से आने वाले जहाज यहाँ होकर ही भारत में आते हैं। यहाँ आटा पीसने की कई चक्कियाँ हैं। यहाँ के मुख्य आयात मशीनें, लोहे का सामान, कपड़ा, शक्कर तथा रासायनिक पदार्थ हैं और मुख्य निर्यात गेहूँ व कपास है।

भारत के बन्दरगाह

भारत की तट रेखा लगभग ३,५०० मील लम्बी है, किन्तु कम कटी-फटी है तथा सपाट है। इसके अतिरिक्त किनारे के निकट पानी बहुत छिछला है और किनारे अधिकतर चपटे और बालूमय हैं। नदियों के मुहाने पर ज्यादातर बालू इकट्ठी होती रहती है इसलिये बन्दरगाह तक जहाज नहीं पहुँच सकते। पश्चिमी समुद्र तट पर तो बम्बई और गोआ बन्दरगाहों को छोड़कर कोई अच्छा बन्दरगाह नहीं है। प्रायः सभी बन्दरगाह (इन दोनों को छोड़ कर) मानसून के दिनों में व्यापार के लिए बन्द रहते हैं। इसके कई कारण हैं—(१) नदियों द्वारा लाई गई बालू और मिट्टी के कारण ताप्ती और नर्मदा का मुहाना बहुत ही कम गहरा है। (२) इसके अतिरिक्त मई से

(ग) दक्षिणी गोलार्द्ध में प्रमुख बन्दरगाह ये हैं:—

ब्यूनेस आयर्स—यह लाप्लाटा नदी के मुहाने पर स्थित अर्जेन्टाइना की राजधानी है। यह रेल और वायु-मार्ग द्वारा अपने पृष्ठदेश से जुड़ा है। यहाँ का बन्दरगाह उथला है अतः बड़े-बड़े जहाज यहाँ तक नहीं आ सकते। यहाँ चीनी शुद्ध करने, कपड़े, चमड़े तथा सिगरेट बनाने, आटा पीसने के कई कारखाने हैं।

सिडनी—आस्ट्रेलिया का प्रमुख बन्दरगाह और न्यू साऊथ वेल्स की राजधानी है। यह दक्षिणी-पूर्वी तट पर स्थित है। इसका बन्दरगाह गहरा और सुरक्षित है। इसका पृष्ठ देश बड़ा धनी है। यहाँ रेल के एन्जिन और पुर्जे, जूते, साबुन, चीनी तथा आटा, माँस अधिक बनाये जाते हैं। यहाँ की मुख्य निर्यात ऊन, कोयला, खनिज पदार्थ, गेहूँ, माँस और फल हैं। विदेशों से मशीनें, कपड़े और रासायनिक पदार्थ, मँगाये जाते हैं।

रियोडिजानैरो—दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी समुद्र तट पर बसा हुआ है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध का दूसरा सबसे बड़ा शहर है। ब्राजील की राजधानी है। *यह बन्दरगाह अपनी उत्तम पृष्ठ-भूमि तथा पोताश्रय के कारण आज एक विशाल* नगर है। लोहे और इस्पात तथा जहाज बनाने के कारखाने भी यहाँ स्थित हैं। सूती

चित्र २००. रियोडिजानैरो की स्थिति

वस्त्र उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है। यहाँ ऊनी और रेशमी वस्त्रों के कारखाने भी स्थित हैं। विश्व का प्रमुख काफी निर्यात होने के साथ-साथ चमड़ा, माँस, रबड़, संतरे है। यहाँ लोहा व इस्पात और उसकी बनी वस्तुएँ गेहूँ, कोयला, बिजली के सामान आदि प्रमुख-प्रमुख वस्तुओं का आयात होता है।

वालपेरेजो—दक्षिणी अमेरिका के प्रमुख बन्दरगाहों में है। मध्य चिली में बसा हुआ है एवं चिली की राजधानी सान्टियागो से बिजली की रेलों द्वारा जुड़ा हुआ है। इसी बन्दरगाह से दक्षिणी अमेरिका की एक मात्र महाद्वीपीय रेल प्रारम्भ होती

कोरन, कोचीन काजीखोड, मगलौर, मारमुगोआ, बम्बई, सूरत तथा सौराष्ट्र के अन्य बन्दरगाह ह।

भारत का समुद्री व्यापार का औसत ३५० लाख टन प्रति वर्ष है। यहाँ के बन्दरगाहो मे इससे अधिक काम हो भी नही सक्ता। यदि व्यापार को कुछ थोडा-बहुत बढाया भी जावे तो बन्दरगाहो मे भीड-भाड बढ जाती है।

इन बन्दरगाहों मे सामुद्रिक व्यापार के केन्द्रित होने के कई कारण है—भौगोलिक स्थिति के अतिरिक्त ऐतिहासिक प्राचीनता ने भी इनके व्यापारिक विकास मे सहायता दी है। बम्बई, मद्रास और कलकत्ता काफी समय से शासन के केन्द्र रहे हैं। फलत वहाँ जनसख्या का घनत्व बढा और साथ-साथ व्यापारिक और औद्योगिक काम-धन्धो का भी विकास हो चला। इसके अतिरिक्त १९ वी शताब्दी के अन्त मे रेलो का निर्माण इन्ही बन्दरगाहो से आरम्भ किया गया। इस प्रकार राजनैतिक व यातायात के केन्द्रो से बढकर ये प्रमुख बन्दरगाह बन गये।

वर्तमान काल मे कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, कोचीन तथा विशाखापत्तनम् बन्दरगाहो की सम्मिलित भार वहन की शक्ति २१० लाख टन की है। किन्तु यह देश के व्यापार को देखते हुये बहुत ही थोडी है। अस्तु पचवर्षीय योजना मे इन पाँच बन्दरगाहो को सुधारने, आधुनिकीकरण करने तथा उनका विस्तार करने का प्रयास किया जा रहा है। कांडला के बन्दरगाह के बन जाने से वहाँ ८,५०,००० टन प्रति वर्ष के हिसाब से व्यापार मे वृद्धि हो सकेगी। पचवर्षीय योजनाओ के अन्तर्गत कलकत्ता के बन्दरगाह पर गार्डन रीच जेटी का पुनरुद्धार, डिब्बे तथा इजनो की उपलब्धि, भारी मशीनो को उठाने के लिए क्रेन की स्थापना तथा कोयला आदि जमा करने को बर्थो का बनाया जाना सम्मिलित है। बम्बई के बन्दरगाह पर प्रिन्स और विक्टोरिया डाक्स का आधुनिकीकरण करने, वहाँ माल रखने के गोदामों का निर्माण करने तथा एलेक्जेन्ड्रिया डाक्स मे विद्युत चालित-क्रेनो को लगाये जाने का आयोजन किया गया है। मद्रास मे एक तर-डॉक तथा पैट्रोलियम जमा करने के लिए एक बर्थ बन रहा है।

प्रश्न

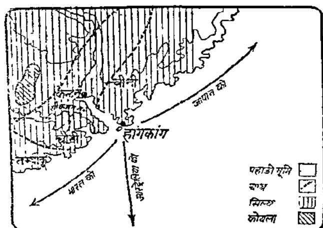
१. निम्नांकित बन्दरगाहों का उत्पत्ति और विकास के कारण बताइए —
न्यूयार्क, सिंगापुर, लिवरपूल, विनीपेग।
२. बम्बई बन्दरगाह के इतने अधिक उन्नतिशील हो जाने के क्या कारण है?
३. किसी बन्दरगाह के पृष्ठ-देश से आप क्या समझते हैं? बन्दरगाह के विकास में इसका क्या महत्व है? अपने उत्तर की पुष्टि में भारत के बन्दरगाह और उनके पृष्ठ देशों के उदाहरण दीजिए।
४. 'एक अच्छा पोताश्रय एक अच्छे बन्दरगाह को और न ही एक प्रमुख बन्दरगाह एक अच्छे पोताश्रय को आवश्यक रूप से विकास प्रदान कर सकता है।' इस कथन की पुष्टि कोलम्बो, शघाई, विशाखापत्तनम् और सैनफ्रासिस्को के उदाहरण द्वारा करिए।
५. नीचे लिखे बन्दरगाहों और उनकी पृष्ठ-भूमियों के विकास के कारण बताइए :—
बम्बई, पोरबन्दर, रगून और न्यू आर्लियन्स।
६ निम्नलिखित बन्दरगाहों के विकास में कौन से भौगोलिक कारण प्रमुख रहे हैं? उन पर प्रकाश डालिये?

दवाइयाँ, कपडे आदि पक्का माल है। चिली का यह एकमात्र उत्तम बन्दरगाह है।

(घ) एशिया के प्रमुख बन्दरगाह ये हैं.—

सिंगापुर—स्ट्रेट सैटलमेंट की राजधानी है जो सिंगापुर द्वीप के दक्षिण भाग पर स्थित है। यह दक्षिणी-पूर्वी एशिया का सबसे बडा व्यापारिक बन्दरगाह है जहाँ जहाज सुरक्षित खड़े रह सकते हैं। सभी ओर को यहाँ से जहाज जाते हैं। इसके मुख्य निर्यात रबड़, टीन, चाय, तम्बाकू, मसाले, चावल, ताँबा और अनन्नास तथा मुख्य आयात मशीनें, लोहे का सामान, तेल, तम्बाकू और शक्कर हैं। इसका पुन-निर्यात व्यापार बढा चढा है।

हांगकांग—बन्दरगाह हागकाग द्वीप के उत्तर-पश्चिम भाग में स्थित है। यह बडा ही स्वाभाविक और सुन्दर तथा बहुत ही सुरक्षित बन्दरगाह है। यह भी पुन· वितरक केन्द्र है। यहाँ के प्रमुख आयात मशीनें, लोहे का सामान, मोटा कपडा और चावल है। मुख्य निर्यात चावल, शक्कर, कपास, चाय, रेशम, अफीम और तेल हैं।



चित्र २०३. हांगकांग की स्थिति

कैंटन—दक्षिणी चीन का प्रमुख बन्दरगाह है जो कैंटन नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। यह भूमि के उत्तरी भाग टीटसीन, पीपीग और हागकाग द्वारा मिला हुआ है। इसका पृष्ठ-देश चावल, शक्कर, रेशम और चाय मे बडा धनी है तथा अधिक घना बसा है। यहाँ के मुख्य आयात कपडा, मशीनें, लोहे और फौलाद का सामान, तेल, चावल और शक्कर हैं। मुख्य निर्यात चावल, कपास, तिलहन, चाय, रेशम और कोयला है।

शंघाई—ह्वांगो नदी पर समुद्र से ५४ मील दूर स्थित है। यह भी एक प्रसिद्ध पुन. वितरण केन्द्र है जहाँ से सामान चीन, जापान, कोरिया आदि को बाँटा जाता है। इसका पृष्ठ-देश बड़ा धनी और आबाद है। इसके मुख्य निर्यात कपास,

अध्याय ३५

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

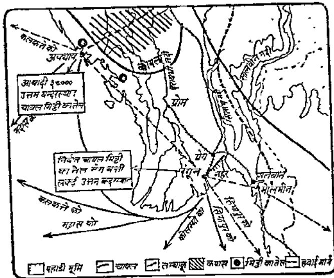
(INTERNATIONAL TRADE)

व्यापार का महत्व

व्यापार और यातायात दोनो का चोली-दामन का साथ है क्योकि बिना एक के दूसरे का विकास होना असभव है। जब दोनो का साथ हो जाता है तो ये किसी देश के आर्थिक जीवन को सुधार देते हैं। बिना इनके विकास हुए आधुनिक सभ्यता का जन्म भी नही हुआ होता और मानव केवल प्राचीन धन्धो तक ही सीमित रहता। आज भी अधिकाश देशो मे आदिम निवासी अपनी स्वय की उत्पादित वस्तुओ पर ही निर्भर रहते हैं। वे अपने खाद्य पदार्थ स्वय उत्पन्न करते हैं तथा अपने उद्योग के अनुरूप स्वय ही यत्रादि तैयार करते हैं। यद्यपि ये वस्तु अन्यत्र स्थानो से सस्ती प्राप्त की जा सकती है किन्तु यातायात साधनो के अभाव मे इनका आयात करना सभव नही हो सका है। ज्यो-ज्यो मानव की बुद्धि बढती गई, उसे विश्व के लोगो के बारे मे ज्ञान होता गया, उनके उत्पादनो मे रुचि होने लगी और ज्यो-ज्यो यातायात की सुविधा बढती गई, उसके व्यापार-क्षेत्र मे वृद्धि होती गई। उसके व्यापार का न केवल मूल्य ही बढा वरन् व्यापार की वस्तुओ मे भी परिवर्तन हो गया और आज विश्व के सभी भागो के बीच केवल अपवादो को छोड कर—व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं।

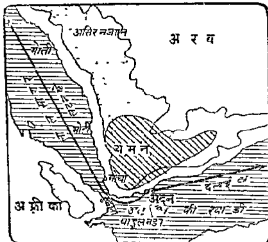
व्यापार की वृद्धि पर कई बातो का प्रभाव पडा है—मुख्यत इस बात पर कि कौन-से क्षेत्र मे किस वस्तु का उत्पादन निम्नतम मूल्य पर उत्पन्न करने की सुविधायें प्राप्त हैं। यातायात की सुविधाओ, मनुष्य की रुचि और उसके रहन-सहन के स्तर मे परिवर्तन, अनेक नये आविष्कारो का विकास और सरकार द्वारा निर्धारित व्यापारिक नीतियाँ आदि ने भी व्यापार के विकास मे पूर्ण योग दिया है। व्यापार का सबसे अधिक प्रभाव तो आधुनिक काल के वृहत् औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्रो को जन्म देने मे पडा है क्योकि बिना व्यापार के नगरो के लिए पर्याप्त मात्रा मे न भोजन प्राप्त हो सकता है, न वस्त्र और न उद्योग धन्धो के लिए कच्चा माल। यही नही व्यापार के अभाव मे प्रत्येक किसान को अपने लिये भोज्य-पदार्थ उत्पन्न करने और वस्त्रादि के लिए कुटीर उद्योग चलाने पडे।

व्यापार का विकास होना इसलिए भी आवश्यक है कि किसी भी एक देश मे वस्तुओ की माँग एक निश्चित मात्रा तक ही सीमित रहती है किन्तु यदि कई देश मिलकर व्यापार करें तो निश्चय ही वस्तुओ की माँग मे अत्यधिक वृद्धि होगी। इससे देशो के आर्थिक और औद्योगिक विकास को भी प्रोत्साहन मिलेगा क्योकि सभी देशों मे ऊँचे जीवन-स्तर को कायम रखने के लिए पर्याप्त-मात्रा में न तो खाद्य पदार्थ ही मिलते हैं और न अन्य नैसर्गिक सम्पत्ति। यदि आज संयुक्त राज्य अमेरिका विदेशो से मैंगनीज, टिन, रबड़, कहवा, चाय, जूट आदि वस्तुओ का



चित्र २०५. रगून की स्थिति

अदन—दक्षिणी-पश्चिमी एशिया का महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। यह बन्दरगाह ब्रिटेन के संकुचित साम्राज्य का अंग है। इसकी स्थिति लाल सागर से प्रवेश के १०० मील पूर्व है। यहा पर नौसेना और वायुसेना के केन्द्र भी स्थित हैं। पश्चिमी एशिया का महत्वपूर्ण सिगरेट बनाने का कारखाना यही पर स्थित है। नमक भी यहा से बहुत



चित्र २०६. अदन की स्थिति

बडी मात्रा मे बाहर भेजा जाता है। यह जहाजो के ठहरने का प्रमुख केन्द्र एव कोयला

अर्जेन्टाइना—मे जिनका क्षेत्रफल १० लाख वर्ग मील से भी अधिक है केवल कनाडा और आस्ट्रेलिया का ही व्यापार प्रति व्यक्ति पीछे अधिक होता है, अन्य देशों में बहुत कम। इसका मुख्य कारण यह है कि इन बडे देशों मे इतनी विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ उत्पन्न हो जाती हैं कि जितनी छोटे देशों में नहीं होती। फलतः इन्हे विदेशो से अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए अधिक माल मँगवाने की जरूरत नही पडती। दो उदाहरण इस कथन की पुष्टि करेंगे। सयुक्त राज्य अमरीका में कोयला पेन्सिलवेनिया में, लकडियाँ वाशिंगटन मे, कपास दक्षिणी और अनाज मध्य पश्चिमी तथा पशुपालन भीतरी क्षेत्रो मे, और मछलियाँ तटवर्तीय भागो में प्राप्त होती हैं, अत देश के एक किनारे से दूसरे किनारे तक इनका अन्तर्देशीय यातायात होता है, अस्तु, व्यापार का रूप देशीय है न कि अन्तर्राष्ट्रीय। इसी भाँति भारत भी अनेक प्रकार के उत्पादनों मे आत्मनिर्भर है, अस्तु, कुछ आवश्यक वस्तुओ को छोड़कर उसे विदेशो से अधिक वस्तुएँ आयात करने की आवश्यकता नही पडती।

व्यापार को प्रभावित करने वाले तत्व

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रभावित करने वाले मूलभूत कारण निम्नांकित है—

(१) वातावरण-सम्बन्धी दशाएँ।
(२) आर्थिक विकास की गति।
(३) जनसख्या का वितरण।
(४) यातायात की सुविधायें।

इनके अतिरिक्त गौण कारण ये हैं :—

(५) राष्ट्रो की आय।
(६) विदेशी पूँजी का विनियोग।
(७) प्रशुल्क दरें।
(८) राष्ट्रीय भावनायें तथा निवासियो की रुचि, आदतें आदि।

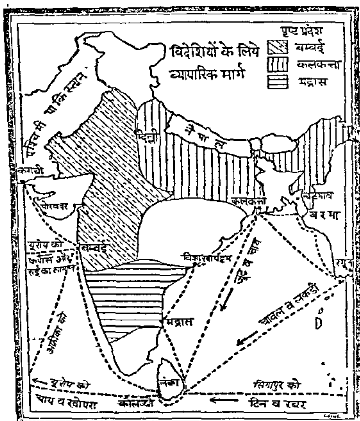
(१) वातावरण संबंधी दशायें (Environmental Differences)—आधुनिक युग मे प्रत्येक देश केवल उन वस्तुओ को उत्पन्न करने मे अपनी शक्ति और साधन लगाता है जिनके लिए उसको सर्वाधिक लाभ प्राप्त हैं और अनुकूल परिस्थितियाँ है।

अनुकूल परिस्थितियों के अन्तर्गत जलवायु का महत्व सबसे अधिक माना जाता है क्योंकि इसका प्रभाव मिट्टी और वनस्पति दोनो पर ही पडता है। उदाहरण के लिए मिसीसिपी नदी के किनारे और मकई की पेटी के क्षेत्रो मे ऐसी मिट्टी पाई जाती है जो हिमानियो द्वारा निर्मित होने के कारण केवल खरबूजे और शकरकद उत्पन्न करने के लिए ही उपयुक्त है अत. यहाँ इन्ही दोनो वस्तुओं का उत्पादन कर किसान इन्हे निकटवर्ती क्षेत्रों को बेचकर आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदते हैं। क्यूबा मे मिट्टी के विशेष गुणो के कारण ही वहाँ की तम्बाकू उत्तम स्वाद वाली होती है। भारत मे भी नदियो के डेल्टो और समुद्रतटीय भागो में उपजाऊ काप मिट्टी के कारण चावल, गन्ना और जूट अधिक बोया जाता है जबकि मध्य प्रदेश की काली मिट्टी कपास और गेहूँ के लिए ही विशेष रूप से अनुकूल पडती है। अत. इन दोनो क्षेत्रो मे अन्तर्देशीय व्यापार होता है। इसके अतिरिक्त बडी मात्रा मे कपास और जूट का निर्यात विश्व के अधिकाश देशो को होता है।

अगस्त तक पश्चिमी तट पर मानसून हवाओ का प्रकोप अधिक रहता है, जहाजों की सुरक्षा के लिए कोई सुरक्षित स्थान नही है। (३) समस्त पश्चिमी भाग थोडी बहुत कटानों के अतिरिक्त प्राय. सपाट और पथरीला है।

भारत के पूर्वी तट पर यद्यपि नदियों के डेल्टा अधिक है, किन्तु इन नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से समुद्री तट अधिक पटता रहता है। कलकत्ता के बन्दरगाह पर भी यह कठिनाई रहती है। कभी-कभी तो घन्टों तक जहाजों को ज्वार भाटे की बाट जोहनी पडती है। *इस भाग में कलकत्ता का बन्दरगाह ही प्राकृतिक है। मद्रास* और विशाखापत्तनम् तो कृत्रिम हैं। कलकत्ता के बन्दरगाह की मिट्टी भामो द्वारा निकाली जाती है।

भारत का चौथाई व्यापार इन बन्दरगाहो द्वारा ही होता है क्योंकि उत्तर को ओर के सीमान्त प्रदेश पहाडी और अनुपजाऊ हैं या बहुत ही कम बसे हुए भाग हैं। भारत के मुख्य-मुख्य बन्दरगाह कलकत्ता, विशाखापत्तनम्, कॉंडला, मद्रास, ओखा, तूती-



चित्र २०८. प्रमुख बन्दरगाहो के पृष्ठ प्रदेश एवं व्यापारिक मार्ग

लंदन, साउथ हैम्पटन, न्यूयार्क, बम्बई, मारसेलीज, हागकांग, रंगून, अदन, एडीलेड, बैंकाक।

७. नीचे लिखे बन्दरगाहों के विकास और उन्नति के क्या कारण हैं :—
सैनफ्रांसिस्को, रंगून, पेरिस, शघाई, याकोहामा, कोलम्बो, सिंगापुर, विशाखापत्तनम् और कराची।

८. नीचे लिखे बन्दरगाहों की वास्तविक स्थिति बताते हुए उनके आर्थिक और व्यापारिक महत्व पर प्रकाश डालिए.—
मेलबोर्न, वेलिंगटन, ब्यूनस आयर्स, केपटाऊन, फोलम्बो, लिवरपूल और डर्बन।

९. नीचे लिखों पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए:—
(i) ग्लासगो, (ii) हैम्बर्ग, (iii) रोटरडम, (iv) वेनिस, (v) पेरिस (iv) रियोडीजानैरो (vi) सिडनी (vii) न्यूआर्लियन्स।

१०. नीचे लिखे बन्दरगाहों की स्थिति और महत्व समझाइए :—
लन्दन, लिवरपूल, हैम्बर्ग, मान्ट्रियल, वैंकूवर, काहिरा, स्वीडन, ब्रिसबेन, वेलिंगटन, एंटवर्प।

११. "किसी बन्दरगाह का महत्व उसके पृष्ठ देश के विस्तार और धनाढ्यता पर निर्भर है।" इस कथन की पुष्टि करिये।

सकती हैं। इससे विदेशों से ऐसी वस्तुओं का आयात अधिक कर होने से प्राय. बंद-सा हो जाता है और देश में ही उनका विकास होने लगता है। इससे अतिरिक्त जब किसी देश की स्थिति व्यापारिक मंदी अथवा व्यापार-सतुलन के प्रतिकूल होने पर डावाडोल होने लगती है तो भी आयातों पर रोक लगा कर देश में गिरने वाली कीमतों को रोक दिया जाता है। कभी सरकार कुछ उद्योगों को इस विचार से आर्थिक सहायता (Subsidy) देती है कि वे अल्प काल में ही अपनी अवस्था सुधार लें और विदेशी निर्माताओं से प्रतिस्पर्द्धा कर सकें। इसके अतिरिक्त कई बार एक देश अपने यहाँ आयात किए जाने वाली वस्तुओं की मात्रा भी निश्चित कर लेता है और यह भी तय कर लेता है कि उसे किस देश से कितना माल आयात करना है। संरक्षण के इन विभिन्न रूपों का प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को सीमित करने में पड़ता है। यदि विभिन्न देशों में इन उपायों का अवलबन न किया जाय तो निस्सदेह व्यापार अधिक मात्रा में होता है।

(८) राष्ट्रीय भावनायें और निवासियों की रुचि (National Character and Habits)—प्राय. सभी औद्योगिक राष्ट्र अपनी उत्पादित वस्तुओं की बिक्री के लिए पहले अन्य देशों में जाकर वहाँ के निवासियों की रुचि, रीति-रिवाज तथा अन्य आवश्यकीय बातों का पूरी प्रकार अध्ययन करते हैं और फिर उन्हीं के अनुसार वस्तुओं का निर्माण किया जाता है। आज भी विश्व के अनेक देशों में 'जर्मनी का बना हुआ' माल आदर की दृष्टि से देखा जाता है तथा उसे अच्छी किस्म का और टिकाऊ समझा जाता है। 'जापान का बना हुआ माल' सस्ता तथा अस्थायी माना जाता है। यदि किसी देश की दूसरे देश के प्रति दुर्भावना हो जाती है तो वह उस देश के माल का ही बहिष्कार कर देता है जैसे १९३० में भारत में असहयोग आन्दोलन के फलस्वरूप ब्रिटेन के माल का पूर्ण रूप से बहिष्कार किया गया। इसी प्रकार जब द्वितीय महायुद्ध के पूर्व जापान ने चीन पर आक्रमण किया तो अमेरिका में उसके माल पर रोक लगा दी गई। अस्तु, किसी देश की राष्ट्रीय भावनाओं का प्रभाव भी व्यापार को घटाने या बढ़ाने पर होता है।

नीचे की तालिका में विश्व व्यापार में मुख्य देशों का भाग बताया गया है —

विश्व व्यापार में कुछ देशों का भाग

वर्ष	यूरोप	जर्मनी	ग्रेट ब्रिटेन	फ्रांस	स० राष्ट्र
			आयात का प्रतिशत		
१९००	७० ३	१३ ५	२१.८	८ ८	७.९
१९२९	५६.३	९.१	१५.३	६.५	१२.३
१९५१	४३.४	—	१३.२	५.५	१४.७
१९५४	४४.५	—	११.६	५.३	१३.८
१९५६	४५.९	—	१०.७	५.८	१३.८
१९६१	४६.३	—	१०.४	५.८	१३.२

आयात न करे तो कुछ ही सप्ताह मे उसकी औद्योगिक प्रगति ठप्प हो जायगी। इसी प्रकार यदि इगलैंड को लोहे या कपास का निर्यात बन्द कर दिया जाय तो शीघ्र ही उनके सूती वस्त्र और लोह उद्योग को गहरा धक्का लगेगा। ज्यो-ज्यो किसी देश का रहन-सहन का स्तर ऊँचा होता जाता है त्यो-त्यो वह देश-विदेशों पर अधिकाधिक निर्भर होता जाता है।

किसी देश की सच्ची आर्थिक स्थिति का ज्ञान उसके व्यापार मे ही हो सकता है। यह ठीक ही कहा गया है कि "अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एक आर्थिक बैरोमीटर है जिसके द्वारा उस देश के जीवन स्तर का पता लग सकता है।" किन्तु यह स्मरणीय है कि अधिक व्यापार होने से ही किसी देश का रहन-सहन का स्तर ऊँचा नही हो जाता। उदाहरण के लिए भारत का व्यापार स्वीडेन के व्यापार से ५०% से भी अधिक होता है किन्तु एक औसत भारतवासी का जीवन-स्तर स्वीडेन-निवासी की अपेक्षा बहुत ही कम है। इसका मुख्य कारण भारत के क्षेत्रफल का अधिक होना है। भारत का क्षेत्रफल लगभग १२ लाख वर्ग मील है और जनसख्या ४४ करोड जबकि स्वीडेन का क्षेत्रफल केवल १६ लाख है और जनसख्या ७० लाख। फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अपना महत्त्व होता है। प्रति व्यक्ति पीछे होने वाले व्यापार से ही उस देश की सम्पन्नता का उचित ज्ञान हो सकता है। उदाहरण के लिए, भारत मे प्रति व्यक्ति पीछे व्यापार का मूल्य केवल ६ डॉलर होता है, जबकि स्वीडेन में ७२८ डॉलर, नार्वे मे ६०० डॉलर और सयुक्त राज्य अमेरिका मे १८३ डालर का प्रति व्यक्ति पीछे व्यापार होता है। इसके विपरीत अधिकाश देशो मे प्रति व्यक्ति व्यापार का मूल्य ५० डालर से भी कम है। इस प्रकार के देशो के अन्तर्गत अधिकाश एशिया (इजरायल, हांगकांग और लका को छोडकर), अफ्रीका (दक्षिणी रोडेशिया, दक्षिणी अफ्रीका सघ, एल्जीरिया, मोरक्को और मिस्र को
४ छोडकर), दक्षिणी और पूर्वी यूरोप के देश और दक्षिणी अमेरिका के अधिकाश देश हैं। इन देशो का प्रति व्यक्ति व्यापार कम होने के दो मुख्य कारण हैं :—

(१) इन देशो की जनसख्या न केवल घनी है वरन् अधिक भी है। इस कारण यहाँ उपभोग के बाद बहुत ही कम आधिक्य रह पाता है। अस्तु, विदेशो से माल खरीदने के लिए धन उपलब्ध नही हो पाता।

(२) इन देशों की प्राकृतिक सम्पत्ति या तो कम है अथवा अधिक होते हुए भी उसका पूर्ण विदोहन न होने से आर्थिक विकास अवरुद्ध हो रहा है।

उपर्युक्त देशो के विपरीत ऐसे देश भी विश्व मे हैं जिनका प्रति व्यक्ति व्यापार ४०० से ५५६ डॉलर तक होता है। इनमें मुख्य न्यूजीलैंड, कनाडा और बेल्जियम-लक्समबर्ग हैं। २०० से ४०० डॉलर तक के मूल्य का व्यापार वैनेजुएला, आस्ट्रेलिया, स्विटजरलैंड, नार्वे, डेनमार्क, नीदरलैंड्स, स्वीडेन, इजरायल, इगलैंड, मलाया और सिंगापुर में होता है। इनमें से अधिकांश देश या तो कच्चे माल के निर्यात को बहुत प्रोत्साहन देते है। फलत: देश को व्यापार मे अधिक मुद्रा प्राप्त होती है और इन देशों के निवासियो का जीवन-स्तर भी काफी ऊँचा रहता है।

कभी-कभी प्रति व्यक्ति पीछे होने वाले व्यापार और उस देश के क्षेत्रफल में भी गहरा सम्बन्ध पाया जाता है। विश्व के ६ प्रमुख देशो—रूस, कनाडा, चीन, ब्राजील, स० रा० अमेरिका, आस्ट्रेलिया, फ्रांसीसी पश्चिमी अफ्रीका, भारत और

यूरोपियन कोल एंड स्टील कम्यूनिटी (E. C. S. C.)—इसकी स्थापना १९५३ मे कोयला और इस्पात के लिए एक सामान्य बाजार उत्पन्न करने के लिए की गयी। सार-क्षेत्र के बारे मे उठे फ्रांस और जर्मनी के बीच विवाद को अन्त करने के लिए ही यह योजना बनाई गई थी। इसके सदस्य **फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी, बेल्जियम, लक्समबर्ग और नीदरलैंड** है।

तटकर व व्यापार विषयक सामान्य करार (General Agreement on Tariff and Trade or Gatt.)—यह संस्था उन देशो की है जो साम्यवादी गुट से बाहर है। इन देशों ने मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मे पालन करने के लिए एक संहिता (Code) बनाई है जिसके उद्देश्य ये है (1) द्विदैशिक करारो मे एक देश के प्रति जो बर्ताव किया जाय, वही सब देशो के प्रति किया जाना चाहिए।

(11) वरीयता (Preference)—देने की सधियाँ अब न की जायें किन्तु उन्मुक्त व्यापार के देशो को चुगा-एकता बनाने की छूट दी गई है। गैट के माध्यम से तटकर घटाने का प्रयत्न किया जाता है।

राष्ट्रमंडल (Common Wealth of Nations)—यह प्रभुत्व शक्ति-सम्पन्न स्वाधीन देशो का एक स्वेच्छापूर्ण सघ है जिसका उद्देश्य अपने सदस्यो के आर्थिक एव राजनीतिक विकास मे सहायता करना है। इसके सदस्य **ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया-न्यूजीलैंड, भारत, पाकिस्तान, लका, घाना, मलाया, नाइजीरिया, साइप्रस, जमैका, सियरालियोन, ट्रिनीडाड और टोबेगो, युगडा और टंगेनिका** देश है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से लाभ

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से होने वाले लाभ ये है.—

(१) प्रत्येक देश केवल उन वस्तुओ को उत्पन्न करने मे अपनी शक्ति और साधन लगाता है जिनके लिए उसको सर्वाधिक लाभ प्राप्त है और अनुकूलतम परिस्थितियाँ है। कहने का तात्पर्य यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के द्वारा प्रादेशिक श्रम-विभाजन (Territorial Division of Labour) का पूर्ण विकास होता है। इसके द्वारा वस्तुओ का उत्पादन अनुकूलतम परिस्थितियो मे होता है और ससार की कुल सम्पत्ति या धन और हित की वृद्धि होती है।

(२) जहाँ तक उपभोक्ताओ का प्रश्न है उन्हे केवल इतना ही लाभ नही होता कि उन्हे विदेशों की उत्पन्न की हुई वह वस्तुएँ उपभोग करने के लिये मिलती है जो कि उनका देश कभी भी उत्पन्न नही कर सकता था, वरन् उन्हे अपनी आवश्यकता की वस्तुओ को ससार के सस्ते-से-सस्ते बाजार से प्राप्त करने की सुविधा भी मिलती है। कोई देश तभी विदेशों से माल मगवाता है जबकि वह वस्तुएँ उसे बाहर मे सस्ती प्राप्त हो।

(३) जब किसी देश मे दुर्भिक्ष पडता है अथवा किसी वस्तु का बहुत अभाव प्रतीत होता है तो वह देश अपनी जनसख्या के जीवन तथा स्वास्थ्य की रक्षा के लिए विदेशों से खाद्यान्न तथा अन्य आवश्यक वस्तुए मगवा सकता है। यदि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार न हो तो ऐसी दशा मे करोडो व्यक्तियो का जीवन नष्ट हो सकता है। द्वितीय महायुद्ध मे, बगाल मे बाहर से चावल न आ सकने के कारण लाखो व्यक्ति मर गए।

जलवायु ही यह निर्धारित करती है कि किस प्रदेश मे क्या वस्तु पैदा हो सकती है। उदाहरणत ठंडे देशों मे अधिकतर गेहूँ, राई, चुकन्दर, आलू, सेब, जौ आदि अधिक पैदा किये जाते है। इन देशो से इनका निर्यात उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशो को किया जाता है, जहाँ से इन्हे उस जलवायु के मुख्य उत्पादन—रबड़, चाय, कहवा कोको, शक्कर, खोपरा, ताड का तेल, तिलहन, अनन्नास, केले, मसाले तथा विभिन्न प्रकार की कठोर लकडियाँ आदि प्राप्त होती हैं। इसी प्रकार मरुस्थलीय भागों मे छुहारे, अथवा सिंचित क्षेत्रो से कपास, अल्फाफा घास और चुकदर पैदा किये जाते हैं। इनका निर्यात ठंडे देशो को किया जाता है। द० अमरीका और आस्ट्रेलिया के शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान मे असख्य सख्या मे चौपाये और भेडें पाली जाती है जिनसे प्राप्त मास, चमडा और खालें तथा ऊन, जमा हुआ दूध, मक्खन आदि उत्तरी गोलार्द्ध के ठंडे देशों को भेजी जाती है और इनके बदले मे कारखानों का तैयार माल मँगवाया जाता है।

जलवायु के अनुसार ही पशुओ का वितरण पाया जाता है। भेडें मुख्यतः कम बसे और अर्द्ध शुष्क तथा नम भागो मे शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो में, बकरियाँ पहाड़ी भागों मे, तथा ऊँट गर्म मरुस्थलो मे और रेन्डियर बर्फीले रेगिस्तानों में ही उपलब्ध होते हैं।

इस प्रकार जलवायु की विभिन्नता दो देशो के बीच व्यापार को जन्म देती है। यातायात के साधन इसमे वृद्धि कर देते हैं।

भूमि की रचना मे अन्तर होने से भी दो क्षेत्रो के बीच व्यापार उत्पन्न हो जाता है। साधारणत: पहाडी क्षेत्र ऊबड-खाबड और ढालू होने के कारण खेती के अयोग्य होते है किन्तु वे वन-सम्पत्ति, लकडियो, कागज के कच्चे माल और फल तथा जलशक्ति मे धनी होते है। अत: ऐसे क्षेत्रों से विश्व के मैदानी प्रदेशों को ये वस्तुएँ भेजी जाती हैं और मैदानी क्षेत्रो से अनाज मांस, ऊन, सूती वस्त्र तथा कई अन्य वस्तुएँ मँगवाई जाती है।

इसी प्रकार सयुक्त राज्य अमरीका, इंगलैंड, जर्मनी आदि देशों मे कोयला और स्विटजरलैंड, फ्रास, कनाडा, जापान, नार्वे-स्वीडेन इत्यादि देशो में जलविद्युत शक्ति का अधिक भडार होने से विश्व के अन्य देशो से उद्योग के लिए कच्चा माल मँगाया जाता है। इससे इन देशो के कारखानो मे माल तैयार होकर पुन. अन्य देशो को भेज दिया जाता है।

खनिज पदार्थो की प्राप्ति भी व्यापार को जन्म देती है। शुष्क मरुस्थलों मे शोरा, नमक, सोना एव ठंडे देशो मे लोहा, सोना, यूरेनियम आदि की प्राप्ति होने से ये प्रदेश धनी हो जाते है क्योकि इन बहुमूल्य धातुओं को विश्व के उन देशो को निर्यात किया जाता है जहाँ ये बिल्कुल या कम मात्रा में मिलती हैं। खनिज पदार्थों के कारण ही दो देशो के बीच युद्ध की जड़ जम जाती है।

(२) **आर्थिक विकास में अन्तर** (Differences in Economic Development)—विभिन्न देशों मे आर्थिक विकास की गति भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ...प देती है। इग्लैड जैसे पुराने औद्योगिक देश की उन्नति का मुख्य कारण अपेक्षा श्रमिको की कार्य-कुशलता थी। इसी के आधार पर बहुत लम्बे समय से उन वस्तुओ ...-पूर्वी एशिया, आस्ट्रेलिया, सं० रा० अमरीका और दक्षिणी अफ्रीका

इस तालिका से निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :—

१—यद्यपि एशिया का क्षेत्रफल अफ्रीका के बराबर ही है किन्तु इसकी जनसंख्या अफ्रीका की ८ गुनी अधिक है इसी प्रकार क्षेत्रफल में एशिया दोनों अमरीकाओं से छोटा है इसकी जनसंख्या इन महाद्वीपों की लगभग ४ गुना अधिक है।

२—यूरोप क्षेत्रफल में एशिया से बहुत छोटा है—लगभग १/१० वां भाग और इसकी जनसंख्या भी एशिया की केवल १/४ ही है किन्तु जनसंख्या का घनत्व यूरोप में एशिया का लगभग ११/२ गुना अधिक है।

३—आस्ट्रेलिया और ओसीनिया में जनसंख्या बहुत ही थोड़ी है।

स्पष्ट है कि पृथ्वी के धरातल पर जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण बड़ा असमान है। एक ओर लगभग ५३ करोड़ वर्गमील भूमि पर ९०% व्यक्ति रहते हैं तो दूसरी ओर ४१/४ करोड़ वर्ग मील भूमि पर केवल १०% व्यक्ति बसते हैं। वस्तुतः मानव जाति का दो-तिहाई भाग कुल विश्व के क्षेत्रफल के सातवें भाग में केन्द्रित है।[४]

इसी तथ्य को एक अन्य लेखक ने इस प्रकार व्यक्त किया है "विश्व की लगभग आधी जनसंख्या कुल क्षेत्रफल के ५% भाग पर बसी है, जबकि ५७% क्षेत्र में केवल ५% जनसंख्या निवास करती है।"[५]

श्री फासेट (Fawcett) ने जनसंख्या समूह के चार मुख्य क्षेत्र बतलाये हैं; सुदूर पूर्व, भारत, यूरोप और पूर्वी मध्य उत्तरी अमेरिका।[६]

श्री जेम्स ने जनसंख्या समूह के दो क्षेत्र स्वीकार किये है. (अ) दक्षिणी पूर्वी एशिया जहाँ विश्व की लगभग आधी जनसंख्या संसार के रहने योग्य भूमि के $\frac{१}{१०}$ के भाग में केन्द्रित है, और (ब) यूरोप जहाँ विश्व की करीब $\frac{१}{५}$ जनसंख्या संसार के रहने योग्य भूमि के $\frac{१}{२०}$ भाग में रहती है।[७]

केन्द्रित जनसंख्या के लघु क्षेत्रों में जावा, दक्षिणी पूर्वी आस्ट्रेलिया, नील नदी की घाटी, अफ्रीका का गिनीतट, दक्षिणी पूर्वी दक्षिणी अमेरिका, मध्य अमेरिका तथा स० रा० अमेरिका व कनाडा के प्रशान्त सागरीय तट पर एकत्रित जनसमूह सम्मिलित किये जाते हैं।

विशाल एवं लघु जनसंख्या क्षेत्रों के बिल्कुल विपरीत विशाल जनहीन क्षेत्र

---

4. *Blache, V.*, **Principles of Human Geography**, p. 28, and *Brunhes, J.*, **Op. Cit**, p. 46. "Actually 2/3 rds of human race live on an area no greater than 1/7 of the total land area of the earth"

5 *Pearl R.*, **The Natural History of World's Population**, 1939, p. 266 and 277.

6 *Faucett*, "The Changing Pattern of World Population", **The Scottish Geographical Magazine**, Vol.53 ,No 6 ,1937., p 361-373.

Blache, **Ibid.**, 1922, p. 19, 32;

Faucett, C. B., 'The Numbers and Distribution of Mankind **Scientific Monthly** (U.S.A), Vol. 64, No 5, May 1947, pp. 389, 396; and **Advancement of Science**, 1947, Vol 8, pp 140-147.

7. *C. James*, **A Geography of Man**, 1949, p 5

परिवर्तन होने के साथ-साथ यातायात के साधनों में भी परिवर्तन होता रहा है। इससे व्यापार की वस्तुओं का रूप ही बदल गया है। शीत भंडारों की सुविधा अथवा तेलवाहन जहाजों के विकास होने से अब हजारों मील दूर से जमा हुआ माँस, अंडे, दूध और मछलियाँ तथा अन्य शीघ्र नष्ट हो जाने वाले पदार्थ और मिट्टी का तेल विश्व के बाजारों को भेजा जाने लगा है। प्राचीन काल में जब यातायात के साधनों का पूरी तरह विकास नहीं हो पाया था तब व्यापार मुख्यतः पड़ौसी देशों के बीच ही होता था तथा व्यापार की वस्तुयें मुख्यत भारी और कम मूल्यवाली होती थीं किन्तु अब व्यापार के रूप में भारी परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा है। अधिक दूरी के स्थानों को माल ले जाने के लिए सामुद्रिक मार्गों और बड़े-बड़े जलयानों का होना आवश्यक है तभी व्यापार मे वृद्धि हो सकती है।

(५) राष्ट्रों की आय (Wealth of Nations)—जिस राष्ट्र में प्रति व्यक्ति आय तथा उद्योग-धन्धो में व्यवहृत करने के लिए पूँजी की मात्रा जितनी अधिक होती है, वहाँ का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे प्रति व्यक्ति आय अधिक होने के कारण ही व्यापार भी अधिक बढ़ा-चढ़ा है। यहाँ विदेशो से चाय, कहवा, कागज, पैट्रोलियम, रबड, ऊन, तावा, टिन, शक्कर, तम्बाकू और वनस्पति तेल बहुत आयात किये जाते हैं। यदि अमेरिकी इन चीजो का उपयोग कम कर दें तो उनका जीवन-स्तर भी नीचा हो जायगा। भारत या रूस के पास अधिक धन हो तो वे अपने व्यापार को और अधिक बढा सकते हैं। प्रति व्यक्ति पीछे निम्न आय। होने के कारण ही चीन और भारत जैसे देशो का व्यापार विश्व के उन्नत राष्ट्रो की तुलना में बहुत कम है।

(६) विदेशी पूँजी का विनियोग (Foreign Investment)—यदि किसी देश मे विदेशी पूँजी अधिक लगी रहती है तो उसका उस देश के आयात-निर्यात पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। जो देश आर्थिक दृष्टि से पिछडे हैं अथवा निर्धन है उन्हें विदेशी पूँजी की अपने उद्योग-धन्धो और यातायात के साधनो को उन्नत बनाने के लिए अधिक आवश्यकता होती है। आज संयुक्त राज्य अमेरिका की अरबों डॉलर पूँजी न केवल कनाडा और लेटिन अमेरिकी देशो मे ही लगी है वरन् यूरोप और एशिया के कई देशो मे भी इसका उपयोग होता है। लेटिन अमेरिका के कैरेबियन प्रदेश मे ५ अरब डॉलर मे भी अधिक विदेशी पूँजी लगी है जिसमे से $\frac{3}{4}$ से अधिक अकेले संयुक्त राज्य अमेरिका की है। संयुक्त राज्य के कुल ३० अरब डॉलर विदेशो मे लगे हैं जिनमें से ६०% निजी पूँजी है। यह पूँजी अधिकतर शक्कर, मिट्टी के तेल, कहवा और केले आदि उद्योग में लगी है। इसका अधिकाँश भाग मैक्सिको, वैनेजुएला, क्यूबा, हैटी, डोमीनीकन रिपब्लिक आदि देशो मे लगा है। इन देशो मे अमेरिका खाद्यान्न, शक्कर तथा मिट्टी का तेल प्राप्त करता है। सन् १९६० मे क्यूबा मे वहाँ के प्रधान मंत्री के नेतृत्व में आर्थिक क्रान्ति प्रारम्भ हो गई है जिससे वहाँ संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यापार को धक्का पहुँचने की संभावना है। इसी तरह ब्रिटेन की करोडो पौंड पूँजी भारत मे सूती वस्त्र, जूट, साइकल, मशीन, चाय आदि के बागो मे लगी है। अस्तु, ब्रिटेन का भारत के विदेशी व्यापार मे बड़ा हाथ रहता है।

(७) प्रशुल्क दरें (High Tariffs)—मुक्त व्यापार (Free Trade) की अपेक्षा अधिक प्रशुल्क दरें व्यापार को सीमित कर देती है। प्रशुल्क या आयात कर उन वस्तुओं पर लगाया जाता है जो किसी देश मे ही सरलतापूर्वक निर्मित की जा

९. पं० जर्मनी	५६१·७	१८	६५,६२१	०२	५८६
१०. इगलैंड	५२८ ३	१८	६४,५१०	०·२	५५६
११. इटली	५०४ ६	१७	११६,३००	०२	४३४
१२. फ्रांस	४७०·०	१५	२१२,८२२	०·४	२२१
१३ मैक्सिको	३४६ २	१२	७६० ३३५	१५	४५·६
१४. नाइजीरिया	३६६·२	१२	३५६,६६६	०·६	१०३
१५. स्पेन	३०५·५	१०	१९४,८८१	०·४	१५७
१६. पोलैंड	२९७ ३	१०	१२०,३५९	०२	२४३
इनका योग	२२१६०२	७४५	२,२४,५६,३४२	४५·१	—
विश्व का योग	३०,३३९९	१०० ००	५७६००,०००	१००·००	५८·२

जनसंख्या का महाद्वीपीय वितरण (Continental Distribution of Population)

एशिया में जनसंख्या का विन्यास

विश्व की ५५% जनसंख्या एशिया महाद्वीप में निवास करती है। मानव समुदायों की दृष्टि से एशिया का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। यहाँ अनेक जन-कुंज (Human agglomerations) और जन-समूह टुकड़ों में विभक्त हैं। अत इनको जनसंख्या का कुंज स्वरूप (Clusered Pattern) कहा जा सकता है।[8] यहाँ अपेक्षित थोड़ी ही भूमि पर अधिकांश मानव-समुदाय बसे हैं जबकि अनेक क्षेत्रों में आबादी प्राय नगण्य सी है।

एशिया की घनी जनसंख्या का एकमात्र कारण मानसूनी जलवायु है। घनी जनसंख्या का निवास प्राय १०° और ४०° उत्तरी अक्षांशों के बीच में है, जिसके बाद ही महाद्वीपीय जलवायु के प्रभाव के कारण जनसंख्या में न्यूनता आ जाती है, जिन अक्षांशों से एशिया में जनसंख्या की कमी आरम्भ होती है ठीक इसके विपरीत यूरोप में उन्हीं अक्षांशों से यह बढ़ना आरम्भ होती है।[9] यह ठीक ही कहा गया है कि एशिया में कुछ स्थान अधिक जनसंख्या वाले और कुछ स्थान कम जनसंख्या वाले हैं।[10] यहां घनी जनसंख्या के केन्द्र धीरे-धीरे एक दूसरे की ओर बढ़ते हैं और अन्त में मिल जाते हैं। इसका कारण धूप, नदियाँ, और वर्षा हैं जो कि भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि करते हैं। यहाँ घनी व बिखरी दोनों ही प्रकार की जनसंख्या पाई जाती है। इन दोनों के बीच में गहरी खाइयाँ हैं। सैंकड़ों और हजारों प्रति वर्गमील जनसंख्या वाले भाग यकायक ऐसी सीमा द्वारा उन प्रदेशों से अलग हो जाते हैं जो नितान्त

8. *Finch & Trewartha*, **Op. Cit.**, p. 526.
9. *Blache, V.*, **Op. Cit.**, p. 103 and 116.
10. *Cressey, G. B.*, **Asias' Land & People**, 1944, pp 26-27.

		निर्यात का प्रतिशत			
१९००	६१·०	११·८	१५·२	८·५	१५·६
१९२९	४६ ६	९·९	१०·९	६·१	१५·९
१९५१	२७ ८	—	९·७	५·५	१९·९
१९५४	४० ४	—	९·८	५·५	१९·३
१९५५	४१ ४	—	९ ५	५·०	२०·२
१९६१	४२ ५	—	९·४	५·३	२०·९
		कुल व्यापार का प्रतिशत			
१९००	६५ ९	१२ ६	१८·७	८·७	११·५
१९२९	५३·१	९ ५	१३·२	६·३	१४·०
१९५१	४० ७	—	११·५	५ ५	१७·२
१९५४	४२ ५	—	१०·६	५·५	१६·५
१९५६	४३ ७	—	१०·१	५·४	१६·६
१९६१	४४·८	—	९ ९	५·६	१६·९

कुछ व्यापारिक संधियाँ (Trade Treaties)

पिछले महायुद्ध के उपरान्त विश्व के अनेक देशों ने मिलकर परस्पर समझौतों से कुछ संधियाँ, मैत्रियाँ आदि स्वीकार की है जिनका उद्देश्य विश्व के व्यापार को बढ़ाने तथा कच्चे माल को सब तक पहुँचाने का है। इनमें से कुछ मुख्य संधियाँ इस प्रकार है —

बेनेलक्स (Benelux)—यह **बेलजियम लक्समबर्ग और नीदरलैंड** तीन देशों की एक संस्था है जिसका उद्देश्य इन तीनों देशों के मध्य पूर्ण रूप से चुंगी आदि की एकता रखना है। इसके फलस्वरूप इन देशों के मध्य कोई व्यापारिक बाधा नही पड़ती।

एक बाजार की व्यवस्था (Cammon Market)—यह व्यवस्था **रोमसं** के नाम से अथवा **यूरोपियन इकोनामिक कम्यूनिटी** (European Economic Community) के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह पश्चिमी यूरोप के **इटली, फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी, बेल्जियम, नीदरलैंड्स** और **लक्सम्बर्ग** आदि ६ देशों का एक संघ है जिसका जन्म जनवरी १९५८ में हुआ। इसका उद्देश्य १९७० तक इन देशों के बीच विद्यमान सभी आर्थिक अवरोधों को अंत कर एक विस्तृत आंतरिक बाजार की स्थापना करना है। इस संधि का सम्बन्ध मुख्यत यद्यपि आर्थिक, व्यावसायिक तथा व्यापारिक विषयों से हैं किन्तु इसका मूल उद्देश्य आर्थिक एकता के आधार पर राजनीतिक एकता स्थापित करना है। ये सब देश आयात वस्तु पर एक समान और एक नीति के अनुसार कर लगाते हैं।

यूरोपियन फ्री ट्रेड एसोसिएशन (E. F. T. A)—इस संघ की स्थापना १९५९ में स्टॉकहोम संधि के अंतर्गत की गई। इसका लक्ष्य अपने सदस्य देशों के बीच व्यापार बढ़ाना तथा आर्थिक उन्नति करना है। **आस्ट्रिया, डेनमार्क, नार्वे, पुर्तगाल, स्वीडेन, फिनलैंड, स्विटजरलैंड** और **ब्रिटेन** इस संघ के सदस्य हैं। प्रत्येक देश अन्य देशों के प्रति राष्ट्रीय नीति का अनुसरण करता है।

भागों में आबादी का घनत्व २ मनुष्य प्रति मील से भी कम है। एशिया के भीतरी भागों में वर्षा की मात्रा अत्यन्त कम है, यातायात के साधनों का अभाव है, गर्मियों में अत्यन्त गर्मी और जाड़े में अत्यन्त जाड़ा पड़ता है।

यद्यपि एशिया के कुछ भाग अत्यन्त कम आबाद हैं किन्तु इन प्रदेशों में भी आबादी धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है। पश्चिम से रूसी साइबेरिया के जंगलों, रूसी तुर्किस्तान तथा आपस के अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों की ओर जनसंख्या क्रमशः बढ़ती जा रही है। अब मनुष्य चीनी मंगोलिया और मंचूरिया को बराबर आबाद करते जा रहे हैं और यह आशा की जा सकती है कि किसी समय गिने-चुने प्रतिकूल भागों को छोड़ कर सभी प्रदेश आबाद हो जावेंगे।

यूरोप में जनसंख्या के विन्यास

यूरोप में आबादी का जमाव मुख्यतः ४०° और ६०° उत्तरी अक्षांशों के बीच पाया जाता है। इन अक्षांशों के उत्तर में जनसंख्या बहुत ही बिखरी हुई मिलती है। केवल नार्वे, स्वीडन और फिनलैंड के समुद्र तटीय भाग इसके अपवाद स्वरूप हैं। यूरोप की २३% आबादी का एक ठोस क्षेत्र है जिसमें सर्वत्र ऊँचा घनत्व मिलता है। यूरोप में आबादी के इस समूहीकरण के निम्न कारण हैं—(१) भूमि की पैदावार का उपयोग, (२) मिश्रित खेती का प्रयोग, (३) उन्नत वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग, और (४) गेहूँ, जौ तथा शाक-सब्जियों की प्रचुर पैदावार होना।

यूरोप के जनसंख्या के मानचित्र को देखने से यह स्पष्ट होता है कि दक्षिणी भाग तथा हालैंड को छोड़ कर घनी जनसंख्या के प्रदेश औद्योगिक क्षेत्र ही हैं। इन क्षेत्रों में स्थित, आवागमन के मार्गों की सुविधा, औद्योगिक ईंधन की प्रचुरता, खनिज पदार्थों का बाहुल्य तथा अनुकूल जलवायु सम्बन्धी दशाओं के कारण जनसंख्या का अधिक जमाव हुआ है।

उत्तरी पश्चिमी यूरोप में जनसंख्या के अनेक केन्द्र पाये जाते हैं। यद्यपि दक्षिणी पूर्वी एशिया की भाँति यहाँ घनी जनसंख्या तथा बिखरी जनसंख्या वाले क्षेत्रों के बीच में गहरी खाइयाँ नहीं हैं किन्तु ब्रिटेन में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं जहाँ केवल ६०% व्यक्ति खेती करते हैं और ८०% नगरों में रहते हैं। इस देश में ६ औद्योगिक क्षेत्र हैं जो जनसंख्या के केन्द्र हैं। ये क्षेत्र क्रमशः लंकाशायर, यार्कशायर, मिडलैंड्स, नार्थम्बरलैंड, डरहम, न्यूकैसिल और स्काटलैंड हैं। इन केन्द्रों में सबसे बड़ा केन्द्र लन्दन है जहाँ सम्पूर्ण ब्रिटेन के $\frac{1}{5}$ वाँ भाग जनसंख्या का निवास है। इस केन्द्र की आबादी अधिकतर व्यापारिक है किन्तु व्यापार के साथ-साथ यहाँ कुछ विशेष धन्धे भी किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त लन्दन देश की राजनैतिक और आर्थिक राजधानी भी है।

यूरोप के महाद्वीपीय भाग में अत्यन्त घनी आबादी की एक पेटी है जो उत्तरी सागर और इंगलिश चैनल से तथा सोवियत रूस से नीपर नदी के दक्षिणी भाग तक बराबर चली गई है। इसमें यूरोप की $\frac{1}{2}$ से अधिक जनसंख्या रहती है। इस जनसंख्या की घनी पेटी के मध्य में होकर ५०° उत्तरी अक्षांश रेखा जाती है। अतः यह अक्षांश यूरोप की **जनसंख्या की धुरी** (Axis of European Population) कहलाती है।[12] यह पेटी पूर्व से पश्चिम को ओर चौड़ी होती गई और आबादी भी

12 *Finch & Trewartha*, **Op. Cit.**, p. 529.

अध्याय ३६

जनसंख्या का विन्यास

(Distribution of Population)

पृथ्वी के धरातल पर मानव आवासित भाग का अनुपात बहुत ही कम है इसलिए मानव स्वयं इस ग्रह पर उत्कृष्ट प्राणी नही कहा जा सकता। श्री वानलून[1] (Vanloon) मानव जीवन के सख्यात्मक पहलू की सम्बन्धित अर्थहीनता के विषय मे लिखते है कि, "दो अरब या उससे भी अधिक निवासियों को ½ घन मील के संदूक मे रक्खा जा सकता है और यदि प्रति व्यक्ति पीछे ६ वर्ग फीट स्थान घेरा जावे तो ग्रह की समस्त जनसख्या ४५० वर्गमील से अधिक स्थान नही घेरेगी।" इससे ज्ञात होता है *कि पृथ्वी के क्षेत्रफल की तुलना मे जनसख्या कितनी कम है।* यद्यपि मनुष्यों द्वारा घेरे जाने वाला भू-भाग बहुत ही सूक्ष्म है लेकिन श्रीब्रुश[2] (Brunhes) महोदय ने लिखा है कि मानव भूगोल को समझने के लिये सबसे अधिक आवश्यक मानचित्र (१) जनसंख्या के वितरण, और (२) वर्षा के वितरण के है।

विश्व की जनसख्या १९६१ मे ३०३३६ लाख थी। इसमे से अफ्रीका मे २६०० लाख; एशिया मे १७०४१ लाख, यूरोप मे (रूस को छोडकर) ४२६१ लाख; उत्तरी और मध्य अमरीका मे २६६५ लाख, दक्षिणी अमेरिका १४८९ लाख, *आस्ट्रेलिया और ओसीनिया मे १६३ लाख और रूस में २०८८ लाख थी।* दूसरे शब्दो में कहा जा सकता है कि विश्व की सम्पूर्ण जनसंख्या का ८% अफ्रीका मे; ५५% एशिया मे; १४% यूरोप मे, १४% उत्तरी, मध्य और दक्षिणी अमरीका मे, ७% रूस मे और शेष ओसीनिया मे निवास करती है।

नीचे की तालिका मे महाद्वीपो मे जनसंख्या का वितरण बताया गया है[3]:

महाद्वीप	क्षेत्रफल (००० वर्गमील मे)	जनसख्या (००० मे)	जनसख्या का घनत्व प्रति वर्गमील
अफ्रीका	११,६४३,०००	२६०,०९६	२२·३
एशिया	१०,४०४,०००	१,७०४,१८५	१६४
आस्ट्रेलिया-ओसीनिया	३,२९१,०००	१६,३००	५·०
यूरोप (रूस को छोड़कर)	१,९०२,६३१	४२६,१२९	२२६
उत्तरी व मध्य अमरीका	९,३६६,०००	२६६,४५२	२८·४
द० अमरीका	६,८७२,०००	१४८,९७८	२१·७
रूस	८,६४९,०००	२०८,८२७	२४·२
विश्व का योग	५७,६००,०००	३,०३३,६९७	५८·२

1. *Vanloon, H.*, **Home of Mankind.**
2. *Brunhes, J.*, **Human Geography**, 1952, p 46.
3. **Demographic Year Book**, 1963.

टोलडो, बफैलो और आक्रोन शामिल है। (३) ओन्टेरियो झील का दक्षिणी सिरा और मोहाक घाटी के क्षेत्र जिसमें रोचेस्टर, साईराक्यूज, यूटिका और रोनेकटाडी शामिल है। (४) ओहियो की ऊपरी घाटी में जिसमें पिट्सबर्ग मुख्य केन्द्र हैं। उत्तर पूर्वी औद्योगिक पेटी की आबादी का घनत्व २०० व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। संयुक्त राज्य के पूर्वी भागों में आबादी इतनी अधिक होने के कई कारण हैं।

(i) यह भाग सबसे पहले आबाद हुआ और अप्लेशियन की बाधा के कारण पश्चिमी की ओर आबादी का प्रवजन नहीं हो पाया, फलस्वरूप आबादी भी अधिक हो गई और जनसख्या का घनत्व भी बढ़ता गया।

(ii) यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र के पास होने और कटे-फटे तट के असख्य बन्दरगाहों से एक वृहत् मात्रा में व्यापार यूरोप से होता है।

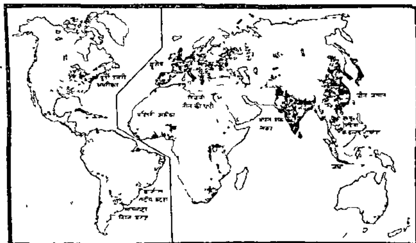
(iii) कोयला, लोहा और जल विद्युत की प्रचुर प्राप्ति पर अवलम्बित औद्योगिक विकास भी बड़ा व्यापक हुआ है जिससे आबादी अन्य क्षेत्रों से इस ओर को आकर्षित हुई है।

(iv) इस भाग की जलवायु लगभग पश्चिमी यूरोप की भांति है और स्थिति भी प्राय उन्हीं अक्षांशों में है अत यूरोपीय लोग सबसे पहले इन्हीं भागों में बसे। इसके अतिरिक्त यहाँ के आर्थिक साधन (मछलियाँ, लकड़ी, कोयला क्षेत्र और उपजाऊ भूमि) सभी यूरोप की भाँति ही हैं अत. यूरोपीय जनसख्या इनका उपयोग कर सकी।



चित्र २११. उत्तरी अमरीका में जनसंख्या का वितरण

हैं। जो विशेषत शुष्क भागो, शीत प्रधान क्षेत्रों और अत्यधिक उष्ण और आर्द्र भागो मे/स्थित है। श्री जेम्स के अनुसार विशाल क्षेत्रो के दूरस्थ भागो मे अनेक भागों मे जनसख्या बहुत ही विरली है।



चित्र २०९. विश्व मे जनसख्या का वितरण

संसार की जनसंख्या के वितरण मानचित्र के अध्ययन से यह प्रकट होता है कि मनुष्यों का तीन चौथाई से अधिक भाग दो या तीन महाद्वीपीय क्षेत्रों में केन्द्रित है। उनमें एक दक्षिणी पूर्वी एशिया, दूसरा पश्चिमी व मध्य यूरोप एव तीसरा (जो कि पहले दो से छोटा है) पूर्वी और मध्य स० रा० अमेरिका व कनाडा हैं।

जनसख्या वितरण की दृष्टि से विश्व के प्रथम १६ देश इस प्रकार है—

	जनसख्या (लाख मे)	विश्व का प्रतिशत	क्षेत्रफल (वर्गमील मे)	विश्व के क्षेत्रफल का प्रतिशत	प्रतिवर्ग मील पीछे घनत्व
१. चीन	७००००	२३·०	३,६९१,५१२	७·१	१९०
२. भारत	४३३४१	१५ १	८,६४६,५१२	२ ४	३७०
३ रूस	२०८८ २	७·२	८,१७३,७७५	१६ ६	२४ २
४. स० राज्य अमरीका	१७९३·२	६·२	३,६१५,२११	६·९	४९·२
५. पाकिस्तान	९३८·१	३ ३	३६४,७३७	० ७	२५७
६ जापान	९४९·३	३·२	१४६,६९०	०·३	६४७
७. इंडोनेशिया	९५१·८	३·१	५७५,८९४	१·१	१६५
८. ब्राजील	७५२·७	२·२	३,२८७,२०४	६·३	२०·०

मध्य अमरीका के उत्तरी भागों और मैक्सिको मे भूमध्यरेखीय गर्मी और आर्द्रता के कारण, जो अधिकतर यूरोपीय लोगो के लिए और देशी-निवासियों के लिए अहितकर है, मानव अधिकतर ऊँचे भागों मे ठंडी जलवायु वाले प्रदेशों में रहते हैं। मैक्सिको की अधिकाश जनसख्या ऊचे, ठंडे और नम दक्षिणी पठारी भाग मे रहती है, जहाँ जौ, गेहूँ और मक्का तथा गन्ना और ताड़ वृक्ष बहुलता से पैदा होते हैं जबकि इसी ऊँचाई पर आल्पस पर्वतों पर ताप-क्रम अत्यन्त न्यून होने के कारण यत्र-तत्र केवल घास या काई ही पैदा होती है।

इसी प्रकार कोलबिया मे ६,५०० फीट की ऊँचाई पर केला और गन्ना तथा इससे अधिक ऊँचाई पर गेहूँ, जौ और आलू पैदा होते है। बोगोटा मे (जो ८६०० फीट ऊँचा है) विस्तृत पैमाने पर पशुपालन और अनाजो का उत्पादन किया जाता है। यही बात इक्वोडोर, पीरू और बोलीविया के पठार के बारे मे सही है। अमेजन के ढालो पर, अधिक वर्षा होने के कारण गन्ना तथा कहवा और जोजा तथा हुँआकायो मे ११,००० फीट की ऊँचाई पर फल तथा सब्जियाँ पैदा की जाती हैं अतः इन भागो से स्वभावत: जनसख्या ऊँचे स्थानो पर मिलती है।[1]

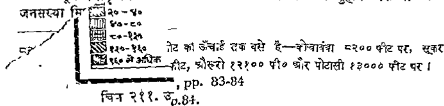
इन क्षेत्रों के विपरीत, अमेजन के जगली और दलदली भाग, एडीज की ऊँचाइया, पैटेगोनिया, चिली और पीरू के मरुस्थल तथा मध्य अमरीका की मलेरिया उत्पादक जलवायु ग्रेनचाको के गर्म दलदली और बाढ क्षेत्र तथा ब्राजील के गर्म घास के मैदान मे जनसख्या बहुत ही छितरी पाई जाती है।

अफ्रीका में जनसंख्या का विन्यास

अफ्रीका में भी जनसख्या का विन्यास बडा असमान और सीमान्त है। सबसे घनी आबादी नील की घाटी, भूमध्यसागरीय तट, दक्षिणी तट, केनिया व अबीसीनिया के पठारो पर पश्चिमी सूडान और गिनी तट पर मिलती है। अन्यत्र जनसख्या बहुत कम है क्योंकि अधिकतर यहाँ भूमि मरुस्थली है तथा कृषि के अयोग्य है। अकेला सहारा मरुस्थल ही अफ्रीका के ¼ भाग को घेरे है और दक्षिणी अफ्रीका का कालाहारी का मरुस्थल कुल क्षेत्रफल के ⅓ भाग को घेरे है। शेष भागो मे विषुवतरेखीय वन मिलते हैं जिनमें टिसीटिसी मक्खियो, अस्वास्थ्यकर जलवायु तथा जगली पशुओ के कारण बहुत कम आबादी मिलती है।

नील नदी के डेल्टा मे जनसख्या अधिक मिलती है क्योंकि यहाँ बाढ द्वारा गई मिट्टी के क्षेत्रो मे कृषि उत्पादन की सुविधा है। वर्ष भर नहरो द्वारा सिंचाई की व्यवस्था पाई जाती है जिसके सहारे वर्ष मे तीन फसलें तक प्राप्त की जाती हैं और कपास, गन्ना तथा तम्बाकू जैसी औद्योगिक फसलें भी पैदा की जाती हैं, जिनके लिए अधिक श्रमिको की आवश्यकता पडती है।

भूमध्यसागरीय तट पर मोरक्को से लगा कर नील के मुहाने तक भी घनी जनसख्या मि



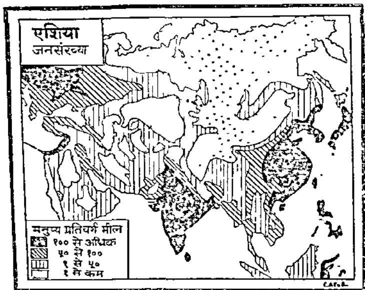
चित्र २११.

ीट की ऊँचाई तक बसे है—कोचाबंबा ८२०० फीट पर, सुकर ीट, ओरूरो १२१०० फी० और पोटासी १३००० फीट पर।

, pp. 83-84

p.84.

वीरान है। यह विशिष्ट घनी जनसंख्या का भाग धरातलीय आकृति एवं भूमि के गुणों पर आधारित है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया में साधारणतया नदियों द्वारा निर्मित निम्न मैदान हैं। इन मैदानों की ओर ही किसान स्वाभाविकतया आकर्षित हुए हैं जहाँ उपजाऊ मिट्टी साधारण ढाल और प्रचुर जल की सुलभता है।



चित्र २१०. एशिया की जनसंख्या

एशिया मे विश्व की लगभग आधी जनसंख्या निवास करती है। यह एक पहाड़ी प्रदेश है जहाँ नदियो द्वारा लाई गई कांप मिट्टी के बिछ जाने से निचले उपजाऊ मैदान सीमित मात्रा मे पाये जाते हैं। इस प्रदेश की अधिक वर्षा ऊँचे भागो की उपजाऊ मिट्टी को बहा कर ले आती है और उन्हे सर्वथा खेती के अनुपयुक्त बना देती है। नदियो की घाटियो मे जहाँ मिट्टी उपजाऊ है तथा जल का बाहुल्य है, अधिकतर खेतिहर जनसंख्या पाई जाती है क्योंकि उपजाऊ मिट्टी और पर्याप्त जल दोनों ही चावल की खेती के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। अतः इस विस्तृत प्रदेश मे चावल ही मुख्य उपज है। थाइलैंड, हिंदचीन और बर्मा मे चावल की उपज तथा जनसंख्या के वितरण के बीच गहरा सम्बन्ध पाया जाता है। इन देशों की सभ्यता चावल की सभ्यता (Rice Culture) कही जाती है[11] क्योंकि यहाँ के आर्थिक और सामाजिक जीवन में चावल का बडा महत्व है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि एशिया में जनसंख्या नदियो की उपजाऊ घाटियो तक ही सीमित है।

इसके विपरीत एशिया में कितने ही बड़े प्रदेश ऐसे हैं जहाँ जनसंख्या की अत्यन्त कमी है। साइबेरिया, मंगोलिया, पूर्वी तुर्किस्तान और तिब्बत के अधिकतर

11. *Finch & Trewartha*, **Op Cit.**, p. 527.

इस दिशा की ओर बढती गई है। आबादी का सबसे अधिक घनत्व राइन नदी के निचले भाग के आस-पास है जहाँ कि कोयले और लोहे और पोटाश की बडी महत्वपूर्ण खानें है और यह संसार के बडे प्राकृतिक जलमार्ग के मुहाने के पास स्थित है। सबसे घनी आबादी का केन्द्रीयकरण उत्तरी-पूर्वी जर्मनी, हॉलैंड, बेल्जियम और उत्तरी फ्रांस मे है और पूर्व की ओर आबादी का घनत्व कुछ कम हो गया है जिनमे दक्षिणी-पूर्वी जर्मनी, चेकोस्लोवेकिया, उत्तरी बोहिमिया, मोरेविया, दक्षिणी पोलैंड मे गैलिशिया और दक्षिणी सोवियत रूस मे यूक्रेन शामिल हैं। यूरोप की इस पेटी मे जिसमें कि महाद्वीप के एक चौथाई मनुष्य आबाद है, यूरोप के सबसे महत्वपूर्ण कोयले की खानें है जिसकी शक्ति के साधनो ने अनेक उद्योग-धन्धो को और औद्योगिक शहरो को जन्म दिया है।

यूरोप के भूमध्यसागरीय प्रदेश मे घनी जनसंख्या के केन्द्र छोटे-छोटे डेल्टाओं के मैदान और नदियों की घाटी मे पाये जाते हैं। किन्तु घनी आबादी के इन केन्द्रो में खेती ही लोगो का मुख्य धन्धा है। आबादी के इन क्षेत्रों मे सबसे महत्वपूर्ण इटली में पो नदी की उपजाऊ और विस्तृत घाटी है। यहाँ देहाती और शहरी दोनों प्रकार की आबादियो का मिश्रण मिलता है क्योंकि यह इटली का सबसे अधिक औद्योगिक भाग है। वैलेंशिया, मरशिया और उत्तरी पुर्तगाल के तटीय प्रदेशो मे (जहाँ गेहूँ अधिक पैदा होता है) जनसंख्या घनी है। इसके विपरीत पहाडी, दलदली तथा मरुभूमियो मे जैसे आल्पस पर्वत, प्रिपेट दलदल और शुष्क स्पेन के मैसेटा और कैस्पीयन के तट मे—जनसख्या कम है। अतएव यह स्पष्ट है कि पूर्वी एशिया की घनी आबादी के केन्द्र नदियों के द्वारा बने हुए विस्तृत मैदानों में स्थित हैं जहाँ के प्रदेश कृषि प्रधान हैं किन्तु पश्चिमी और मध्यवर्ती यूरोप की अधिकतर आबादी व्यापारिक और औद्योगिक शहरों पर केन्द्रित है, जिसका सम्बन्ध वहाँ के खनिज पदार्थों, व्यापार के महत्वपूर्ण मार्गों और भोज्य पदार्थों तथा अन्य कच्चे पदार्थों के पैदा करने वाले उपजाऊ मैदानों से हैं। जनसख्या का क्षेत्रीय वितरण इस तथ्य को पुष्टि करता है कि ४०° अक्षाश रेखा जो एशिया मे घनी आबादी की उत्तरी सीमा बनाती है, वहां यूरोप मे उसकी दक्षिणी सीमा निर्धारित करती है।

उत्तरी अमेरिका में जनसंख्या का विन्यास

उत्तरी अमेरिका की लगभग ६०% जनसख्या अटलांटिक तट पर बसी है। सयुक्त राज्य मे आबादी की संख्या के विचार से दो स्पष्ट भाग है। एक सयुक्त राज्य का पूर्वी तटीय भाग, और दूसरा सयुक्त राज्य का पश्चिमी भाग। पहले मे औद्योगिक दृष्टि से चरम विकास हो जाने के कारण आबादी अधिक है, लेकिन दूसरे भाग मे आबादी काफी कम है। भीतरी भाग मे धरातल काफी ऊबड-खाबड है और वर्षा भी कम होती है। सयुक्त राज्य की ८५ प्रतिशत जनसख्या १००° देशान्तर के पूर्व में रहती है। पूर्वी भाग में आबादी का समान वितरण है और केन्द्रीय कम कहीं भी नही पाया जाता है। केवल ओहियो के उत्तर और मिसीसिपी के पूर्व मे कुछ औसत से अधिक जनसंख्या वाले केन्द्र पाये जाते हैं। दक्षिणी मेन-मेरीलैन्ड तक की अत्यन्त विकसित औद्योगिक पेटी पर अधिकतम घनत्व की पेटी भी फैली है। अप्लेशियन के पश्चिमी की ओर घनी आबादी के चार केन्द्र पाये जाते है—(१) मिशीगन झील के दक्षिणी सिरे का क्षेत्र जिसमे शिकागो और मिलवाकी शामिल हैं। (२) ईरी झील का दक्षिणी और पश्चिमी सिरे का क्षेत्र जिसमे डिट्रायट, क्लीवलैंड,

तीसरी श्रेणी के स्वरूप (Patterns of Third Order) अथवा अपेक्षतया जनहीन क्षेत्र (large relatively empty Spaces)—वे हैं जहां जनसंख्या या तो अत्यन्त ही कम है अथवा इसका नितान्त अभाव है। ऐसे क्षेत्र स्थल भाग के ३/४ भाग पर फैले है जहाँ केवल ५% जनसंख्या रहती है। ऐसे क्षेत्र ध्रुवीय अथवा उप-ध्रुवीय क्षेत्र, मरुस्थल अथवा रूखी घास के प्रदेश, उच्च पर्वतीय प्रदेश और भूमध्य रेखिक वन प्रदेश है।

इन बडे और छोटे जनसंख्या के कुजों के बीच-बीच मे भी कई क्षेत्रों मे विशेषत. नगरो के आसपास, ग्रामीण कृषि प्रधान क्षेत्रो मे जनसख्या केन्द्रित पाई जाती है। इस प्रकार स्पष्ट होगा कि जनसख्या का क्षेत्रीय वितरण न केवल बडा असमान वरन् जटिल भी है। उदाहरण के लिए, (१) भारत और चीन के सभी भाग समान रूप से घने बसे नहीं है। इन देशो मे नदियो के मैदानो और नगरो के आसपास अधिक घने बसाव मिलते हैं। चीन की ४/५ जनसख्या उसके १/३ भाग मे ही रहती है। (२) भारत मे भी ३/४ जनसख्या सतलज, गगा और ब्रह्मपुत्र के मैदान मे केन्द्रित पाई जाती है। (३) कनाडा की लगभग ४०% जनसख्या सेंट लारेंस नदी और ओंटेरियो झील के मध्य क्षेत्र मे बसी है, जिसका क्षेत्रफल कनाडा के कुल क्षेत्रफल का केवल १% ही है। (४) सयुक्त राज्य की अधिकाश जनसख्या एपेलेशियन और अटलांटिक तट के बीच मे भागो मे बसी है। इस प्रकार (५) आस्ट्रेलिया की २/५ जनसख्या मुख्यत सिडनी, न्यूकैसिल और मैलबोर्न नामक तीन नगरों मे रहती है जबकि इनका सम्मिलित क्षेत्रफल आस्ट्रेलिया के क्षेत्रफल का केवल ·०००१% है। (६) जनसख्या का असमान वितरण उन क्षेत्रो मे भी मिलता है जिन्हें सीमात क्षेत्रो (Pioneer Fringe) की सज्ञा दी जाती है। कनाडा के सीमान्त क्षेत्रों मे—विशेषत कैनेडियन प्रेरी और मैकेंजी की घाटी—जनसख्या आस्ट्रेलिया के सीमान्त क्षेत्रो की अपेक्षा (मरुस्थलीय प्रदेश के चारों ओर) अधिक घनी है। अमेजन बेसीन की अपेक्षा कांगो बेसीन और पूर्वी द्वीप समूह भी अधिक घने बसे हैं। (७) इसी प्रकार ऊँचाइयो पर जहाँ जलवायु स्वास्थ्यवर्धक है तथा जीविकोपार्जन के थोडे भी साधन उपलब्ध हैं वहाँ मनुष्य रहने लगा है। अफ्रीका मे जनसख्या का अधिकतर आवास एबीसीनिया मे ५८०० से ८००० फीट की ऊँचाई पर पाया जाता है। नई दुनिया मे भी लगभग २ हजार मील लबे क्षेत्र मे जो मैक्सिको से चिली तक फैला है, जनसख्या ६५०० फीट से अधिक ऊँचे भागो मे ही मिलती है और तिब्बत मे १२००० फीट की ऊँचाई तक।[१८]

जनसख्या के वितरण मे सबसे अधिक असमानता उत्तर और दक्षिण मे, महाद्वीपीय और महासागरीय गोलार्द्धों मे मिलती है, जिन्हें कुछ प्राणिशास्त्री दक्षिण-भू (Arctogaea) और उत्तर-भू (Natogaea) कहते है। उत्तरी ध्रुव के चारो ओर के समस्त भूमि-तट पर (चकची प्रायद्वीप से लैपलैंड तक तथा ग्रीनलैंड से अलास्का तक) मनुष्य निवास करता हुआ पाया गया है। ग्रीनलैंड मे ८०° उत्तरी अक्षास के उत्तर मे अस्थाई निवास-स्थानों के चिन्ह मिले हैं। इन क्षेत्रो में मानवीय ज्वार भाटा निरतर चढता उतरता रहता है किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध मे ऐसा नहीं है। उत्तरी ध्रुव के चारों ओर की जलवायु तथा आर्थिक स्रोत किसी भी अश मे दक्षिण ध्रुव के चारो ओर के क्षेत्रो से अच्छे नहीं हैं, फिर भी यहाँ मनुष्य रह रहे है, जबकि

18. *Brunhes. J.*, **Op. Cit.**, p. 83.

पश्चिमी भाग मे आवादी बहुत कम है। वितरण या क्रम केन्द्रीय है। नदी की घाटियो, सिंचाई के क्षेत्रों, पीडमोण्ट काप के मैदानों, पर्वतीय बेसिनों और खनिज पदार्थों के शोषण क्षेत्रों मे केन्द्रीय क्रम पाये जाते हैं। पश्चिम की ओर केलीफोर्निया की घाटी आवादी का मुख्य क्षेत्र है। प्रशान्त महासागर के तटीय राज्यों में जहाँ जलवायु आर्द्र है, उद्योग तथा व्यापार काफी बढ़ा-चढ़ा है वहाँ जन-संख्या भी अधिक है। इस तट पर जनसंख्या के तीन मुख्य केन्द्र हैं :—

(१) प्यूजेट साउड, विलामेट की घाटी (जिसमे सियेटल, पोर्टलैंड और टकोमा बन्दरगाह स्थित) हैं।

(२) कैलीफोर्निया की घाटी और सैनफ्रांसिस्को के केन्द्र।

(३) दक्षिणी केन्द्र जिसमे लॉस एंजिल्स और सैनडीगो स्थित हैं।

कनाडा की जनसंख्या देश के दक्षिणी किनारो पर विशेष रूप से केन्द्रित है, जहाँ कृषि प्रधान भाग स्थित है। अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के साथ-साथ जाने वाली आवादी की पेटी लगातार नही कही जा सकती। देश का अधिकतर भाग बंजर और व्यर्थ होने के कारण आवादी कुछ भागो मे ही केन्द्रित है। जनसंख्या के जमाव के मुख्य क्षेत्र ये हैं . सेन्ट लारेन्स नदी की घाटी, ओंटेरिया प्रायद्वीप, आन्ध्र महासागर के तटीय प्रदेश के दक्षिणी भाग, प्रेरी प्रदेश और ब्रिटिश कोलंबिया का दक्षिणी पश्चिमी तटीय क्षेत्र। ओन्टेरिया मे और इरी झील के उत्तर मे ओन्टोरियो प्रायद्वीप मे कनाडा की समस्त जनसंख्या १५० मील चौडी पेटी मे सीमित है जो दक्षिण मे अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से लगी हुई है। अधिक शक्ति जलवायु, विशाल दलदल और झीलों के कारण उत्तरी कनाडा प्राय जनशून्य है।

लैटिन अमरीका में जनसंख्या का विन्यास

दक्षिणी अमरीका की जनसंख्या का आधे से अधिक भाग अकेले ब्राजील मे रहता है, १/६ भाग अर्जेनटाइना में और १/३ भाग एन्डीज पर्वत के देशो मे। यहाँ की अधिकतर जनसंख्या तटीय भागो मे ही पाई जाती है जहाँ महासागरो के द्वारा यातायात अत्यन्त सुगम है और विदेशो से सम्पर्क रखा जा सकता है। ऐसे क्षेत्र ब्राजील के साओपोलो और सैंटोस तथा अर्जेनटाइना और वेनेजुएला के तटीय भाग हैं। मध्यवर्ती अक्षाशो मे अर्जेनटाइना और यूरुग्वे मे लाप्लाटा नदी के मैदान मे कृषि की सुविधाओं के कारण जनसंख्या अधिक मिलती है। उत्तरी-पूर्वी ब्राजील मे उष्णार्द्र खेती के अन्तर्गत कहवा और कपास पैदा किये जाने से जनसंख्या अधिक सघन मिलती है।

अन्यत्र जनसंख्या मुख्यत ऊँचे भागों में हो मिलती है, जहाँ का जलवायु निम्न प्रदेशो की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यप्रद है और जहाँ ताबा, चादी, शोरा आदि खनिज मिलते हैं। इक्वेडोर, पीरू, बोलीविया और कोलम्बिया मे जनसंख्या ६५०० फीट से अधिक ऊँचाई पर मिलती है।[13]

---

१३. पीरू में परेक्वीपा नगर ७,८०० फीट की ऊँचाई पर, कूजो १०,००० फीट, सिक्वानि, ११,००० फीट, ओराया १२,८०० फीट; मूसेरो ११,८०० फीट तथा पूनो १२५०० फीट पर स्थित हैं। वैरो डी-पैस्को नगर तो १४,००० फीट की ऊँचाई पर है। इसी प्रकार बोलीविया में नगर

किन्तु पूर्वी भागों में मनुष्य को प्रकृति से निरन्तर युद्ध करना पड़ा है, जैसा कि भी ब्लाश ने कहा है 'इस प्रदेश में जहाँ दो बड़ी नदियों द्वारा जमा की हुई काप मिट्टी मिलती है, प्रकृति के प्रति संघर्ष अति तीव्र है। पहले यह प्रदेश दलदलों और रुके हुए पानी का एक जाल सा था, जिसमें बाढ़-ग्रस्त नदियाँ मोड़दार मार्गों में बहती थीं उन तक पहुँच अब भी इतनी कठिन है कि सन् १८५६ ई० में टैपिंग लोगों का उत्तर की ओर प्रस्थान रुक गया था। समय-समय पर भौमकाय जन्तु अपने पिंजड़े से बाहर निकल आता है, ह्वांगो नदी अपने मार्ग को अकस्मात छोड़कर देहाती प्रदेशों में कीचड़ और बाढ़ ला देती है। रोमें बैरी के विरुद्ध युद्ध का अर्थ है सहयोग ऐसे प्रदेशों के लिए केवल एक विकल्प है—निष्ठुरता अथवा अतिजनसंख्या।"[19]

चीन में जनसंख्या का सबसे अधिक जमाव पीले मैदानों में हुआ है। भूमि के उपजाऊपन और जल की सुविधा आदि में स्थानीय भेद होने से जनसंख्या में भी स्थानीय भेद पाये जाते हैं। उत्तरी चीन में बहुत से तटीय भाग क्षारीय भूमि व जल-निकास की कठिनाई के कारण कम घने बसे हैं किन्तु दक्षिण चीन के डेल्टाई मैदान बड़े घने बसे हैं।[20] इसी प्रकार दक्षिण की ओर ह्वांगहो और यांग्टसीक्याग के बीच के पठारी भाग घने बसे नहीं हैं क्योंकि यहाँ जीवन यापन की सुविधायें कम पाई जाती हैं तथा समय-समय पर अकालों का भी प्रकोप रहता है अतः जनसंख्या मुख्यतः बिखरी हुई पायी जाती है जबकि उत्तर में यह घनीभूत मिलती है।

चीन में जनसंख्या मुख्यतः पहाड़ों की तलैटी में, नहरी मैदानों में और भीतरी निम्न भागों में पाई जाती है, जहाँ कृषि परम्परागत है।

भीतरी नीचा मैदान—जो चार नदियों का प्रान्त सैंचुवान है—जहाँ नदियाँ एकत्रित होती हैं, चीनी कृषि की सिंचाई का चमत्कार (Irrigation marvels o Chinese Agriculture) कहलाता है। चेंग्टू के मध्यवर्ती मैदान में जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर ३००-५०० मनुष्य का है किन्तु अधिकांश जनसंख्या (लगभग $\frac{2}{3}$) सैंचुवान के मध्यवर्ती भाग में ही रहती है।[21]

चीन में जनसंख्या के मुख्य जमाव ६ प्रमुख क्षेत्रों में पाये जाते हैं:—

(१) ह्वांगो नदी का मैदान जिसमें ह्वांगो और ह्वी हो नदियों द्वारा लाई गई उपजाऊ काप मिट्टी में शताब्दियों से कृषि होती आ रही है। यहाँ प्रति वर्ग मील पीछे १००० से भी अधिक व्यक्ति पाये जाते हैं। इस क्षेत्र में पेकिंग में २७·६ लाख व्यक्ति रहते हैं।

(२) यांग्टसीक्याग नदी का डेल्टा जिसमें प्रति वर्गमील पीछे २००० से भी अधिक व्यक्ति रहते हैं। अकेले शङ्घाई में ६२ लाख व्यक्ति निवास करते हैं।

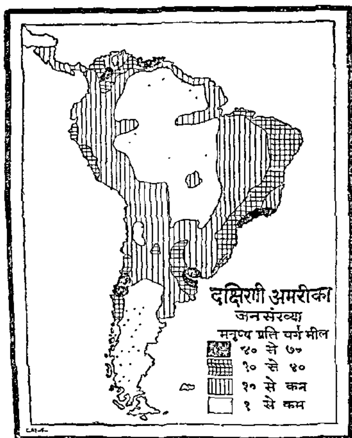
(३) दक्षिण में सिक्याग नदी के डेल्टा में कैंटन के चारों ओर का क्षेत्र।

(४) सैंचुआन नदी के बेसिन में जहाँ प्रति वर्ग मील ४००-५०० व्यक्ति पाये जाते हैं। किन्तु पश्चिमी भाग में चेंग्टू मैदान में तो प्रति वर्गमील पीछे

---

19. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 92.
20. *Cressy, G. B.*, **Land of 500 Millions**, p. 15.
21. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 94.

पूर्वी अफ्रीका मे अधिकाश जनसंख्या युगेंडा, केनिया और न्यासालैंड मे ऊँचाई पर मिलती है। एबीसीनिया में जनसंख्या अधिकतर ५,८०० से ८,००० फीट के बीच मे रहती है। दक्षिणी अफ्रीका में जनसंख्या मुख्यत. रोडेशिया और दक्षिणी अफ्रीका संघ मे मिलती है, जहाँ सोना, ताँबा और एस्बस्टस आदि खनिज पाये जाते है और जहाँ की जलवायु भी यूरोपीय लोगो के अनुकूल है।



चित्र २१२ दक्षिणी अमरीका मे जनसंख्या

नाइजीरिया और घाना के तटीय प्रदेशो मे मानसूनी जलवायु के कारण उष्ण कटिबन्धीय खेती करने की सुविधा है अत. जनसंख्या घनी है।

अन्य दक्षिणी महाद्वीपो की भाति अफ्रीका में जनसंख्या का जमाव तटीय भागो में ही मिलता है।

आस्ट्रेलिया में जनसंख्या का विन्यास

आस्ट्रेलिया मे जनसंख्या अन्य महाद्वीपों की अपेक्षा कम है तथा जो भी है

चैंकियाग	१०१·८	२५,२८०
फूकेन	१२३·१	१४,६५०
तैवां	३६·०	९,६८०
मध्य-दक्षिणी प्रदेश		
होनान	१६७·०	४८,६७०
हूपे	१८७·५	३०,७९०
हूनान	२१०·५	३६,२२०
कियान्सी	१६४·८	१८,६१०
क्वांगटुंग	२३१·४	३७,९६०
क्वांग्सी-चुआंग	२२०·४	१९,३९०
दक्षिणी-पश्चिमी प्रदेश		
सेचवान	५६९·०	७२,१६०
क्वीचाऊ	१७४·०	१६,८९०
यूनान	४३६·२	१९,१००
तिब्बत	१,२२२·६	१,२७०
उत्तरी-पश्चिमी प्रदेश		
शैंसी	१९५·८	१८,१३०
कांसू	३६६·५	१२,८००
निंग्सिया हुई	६६·४	१,८१०
चिंघाई	७२१·०	२,०५०
सिंक्याग-यूघर	१,६४६·८	५,६४०
चीन का सम्पूर्ण योग	९,७३६	६०१,९३८

चीन की ग्रामीण जनसंख्या ५०५३ लाख या ८६·७%
चीन की नागरिक जनसंख्या ७७३ लाख या १३·३%
१९६१ में चीन की अनुमानित जनसंख्या ७१६० लाख आकी गई है।

चीन मे जनसंख्या का वितरण इन बातो पर निर्भर है :—

(१) यहां विस्तृत नदियो के उपजाऊ मैदान हैं जिनकी जलवायु कृषि कार्य के उपयुक्त है।

(२) चावल की खेती के कारण जनसंख्या का घनत्व और भी अधिक है।

(३) प्राचीन काल मे अधिक बच्चे पैदा करने के लिए राज्य द्वारा प्रोत्साहन मिलता था। यूरोपीय लेखको ने चीनी परिवारो मे अधिक बच्चों की संख्या के लिए 'भयावह' शब्दों का प्रयोग किया है। "जहां कहीं चीनी लोग इकट्ठे होते हैं—चावल

यूक्रेनियन ,,	६०१·०	४३,०६१	७१·६
वाइलोरूस ,,	२०७·६	८,२२६	३६·५
उजवेकिस्तान ,,	४०८·६	८,६६५	२१·१
कज्जाक ,,	२,७५६·०	१०,३८७	३·७
शून्य प्रदेश	६००·०	३,१०८	५·०
जार्जियन गणतंत्र	६६·७	४,२००	६०·०
अजरबैजान ,,	८६·६	३,६७३	४५·५
लिथूनियन ,,	६५·२	२,८०४	४३·१
मोल्डेवियन ,,	३३·७	३,०४०	८६·४
लैटेवियन गणतंत्र	६७·३	२,१४२	३३·४
खिरगीज ,,	१६८·५	२,२२५	११·१
ताजिक ,,	१४३·०	२,१०४	१४·७
आरमेनियम,,	२६·८	१,८६३	६३·१
तुर्कमन ,,	४८८·०	१,६२६	३·३
इस्टोनियन ,,	४५·१	१,२२१	२७·१

जनसंख्या के वितरण की विश्व प्रणालियाँ

(World pattern of Population Distribution)

विश्व की जनसंख्या के वितरण का अध्ययन सामान्यत: तीन रूपों में किया जाता है :[१७]

प्रथम श्रेणी के स्वरूप (Patterns of First Order) के अंतर्गत वे प्रदेश आते है जिनमे जनसख्या के घने कुज या जमाव मिलते है। पूर्वी एशिया, दक्षिणी पूर्वी एशिया, पश्चिमी यूरोप, रूस के दक्षिणी-पश्चिमी भाग और उत्तरी अमरीका के उत्तरी-पूर्वी भाग तथा कनाडा के सेंट लारेंस क्षेत्र इस श्रेणी मे सम्मिलित किये जाते हैं (Major areas of Concentration)।

द्वितीय श्रेणी के स्वरूप (Patterns of Second Order) अथवा जनसंख्या के लघु क्षेत्र (Minor areas of Concentration)—वे हैं जहाँ जनसख्या कुछ भागो मे अत्यन्त घनी और अपने निकटवर्ती स्थानो मे कम घनी है। उदाहरण के लिए सतलज, सिंध और गगा के मैदान मे जनसख्या अधिक घनी है किंतु इनके निकट ही पठारी भाग और मरुस्थलीय क्षेत्र में यह कम घनी मिलती है। घनी जनसख्या वाले बगाल के बगल में ही छितरी जनसख्या वाले आसाम और ब्रह्मा हैं। इसी प्रकार टाकिन के बगल मे लाओस है।

---

17. *Finch, V. and Trewartha, G.* **Elements of Geography,** 1942, pp. 613-614; *Baker, O. E,* "Population and Food Supply and American Agriculture," **Geographical Review,** Vol. XVIII, No. 3, 1928, p. 353.

जाता है। उत्तरी होकैडो में भी अधिक शीत जलवायु और अनुपजाऊ भूमि के कारण उत्पादन अधिक नहीं होता अतः जनसंख्या का घनत्व संपूर्ण जापान का केवल १/३ ही है।

जापान में सबसे अधिक जनसंख्या का जमाव टोकियो से लेकर क्यूश्यू तक जापान की औद्योगिक पेटी में मिलता है जो ६०० मील लंबी है। पहाड़ी भागों पर छोटे-छोटे समतल भाग मिलते हैं जहाँ जनसंख्या का वितरण द्वीप के समान है।

बड़े उद्योगों से सम्बन्धित नगरों को छोड़ कर जापान में घनी जनसंख्या का घनिष्ठ सम्बन्ध धान की खेती अथवा चाय की खेती से है जो पहाड़ियों के निचले ढालों पर उगाई जाती है। पर्वतों से घिरी भूमि छोटे-छोटे खंडों में विभाजित है, मानसूनी वर्षा द्वारा सिंचाई निश्चित रहती है और मछलियों के मलबे तथा पहाड़ों से उखाड़े गये पौधे खाद का काम देते हैं। यह जानकर आश्चर्य होता है कि जापान के तीन बड़े द्वीपों में, जहाँ प्राचीन सभ्यता विकसित हुई और जहाँ जनसंख्या का घनत्व इंगलैंड और उत्तरी इटली के समान है, कृषि क्षेत्र कुल योग का केवल सातवाँ भाग है किन्तु कृषि का प्रकार घनीभूत बगीचेनुमा है जहाँ वर्ष में दो फसलें और दक्षिण पश्चिम में तीन भी पैदा की जाती हैं।

जापान में अधिकांश जनसंख्या ३७°-३८° उत्तरी अक्षांशों के दक्षिण में ही रहती है। ४५° अक्षांशों के उपरांत तो यह बहुत ही विरली है।

इंडोनेशिया

यहाँ भी जनसंख्या का वितरण बड़ा असमान है। यहाँ जावा और मदुरा नामक दो छोटे द्वीपों में (जिनका क्षेत्रफल केवल ७%) ही देश की ७०% जनसंख्या मिलती है, जबकि अन्य द्वीप बहुत ही कम बसे हैं। जावा और मदुरा में ६१५ लाख व्यक्ति रहते हैं, जबकि सुमात्रा में १५५ लाख, सुलावेसी में ७० लाख; नूसा तंगारा में ६५ लाख और कालीमंतान में केवल ४१ लाख। जावा और मदुरा में अधिक जनसंख्या मिलने का प्रमुख कारण इन द्वीपों में उपजाऊ लावा मिट्टी का मिलना है। इसके अतिरिक्त यहाँ जनसंख्या मुख्यतः ऊँचे और अपेक्षतया ठंडे भागों में केन्द्रित है। इन दोनों द्वीपों में सागरीय प्रभाव भी परिलक्षित है क्योंकि इनका अक्षांशीय विस्तार प्रायः नगण्य-सा ही है। अतः जनसंख्या तटीय भागों में भी केन्द्रित पाई जाती है। प्राचीनकाल में डच-निवासियों ने स्थानीय श्रम के सहयोग से बागाती खेती का प्रसार किया था इसके उपरांत पश्चिमी लोगों ने भी यहाँ अपनी बस्तियाँ स्थापित कर सफाई, स्वास्थ्य आदि की पूर्ण व्यवस्था की। खेती भी नई प्रणाली से की जाने लगी तथा उपयुक्त जलवायु के कारण वर्ष में धान की एक से अधिक फसलें प्राप्त की जाने लगीं। फलतः जनसंख्या का जमाव भी उपयुक्त क्षेत्रों में अधिक बढ़ता गया।

पाकिस्तान

यहाँ भी जनसंख्या का वितरण प्रायः बड़ा असमान है। पर्वतों की तलैटियों में नदियों की घाटियों में अथवा जल-प्राप्त होने वाले भागों में और तटीय भागों में जनसंख्या अधिक मिलती है। यहाँ जनसंख्या का वितरण इस प्रकार है.—

दक्षिणी महाद्वीप-ऐंटार्कटिक-और टैराडेल फ्यूगो जन-विहीन क्षेत्र है। अतः स्पष्ट है कि जनसंख्या का विन्यास किसी स्थान की स्थिति से प्राप्त होने वाले लाभों से ही नहीं समझा जा सकता।[19] ऐतिहासिक खोजों और मानव के अस्थि-पंजरों से अथवा उसकी निर्मित वस्तुओं के अवशेषों से यह प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य प्राचीन काल से ही प्रायः सभी स्थानों पर पहुँच गया था। उत्तरी अमरीका में वह तुरीय (Quarternary age) युग में सामान्य रूप से फैला हुआ था। दक्षिणी अमरीका केप उपनिवेश अथवा आस्ट्रेलिया में भी वह फैला हुआ था तथा पुरापाषाण युग (Paleolithic) में भी जबकि महाद्वीपों के कुछ भागों पर आच्छादित हिम-पिंड पूर्ण रूप से गले नहीं थे, मानव जाति के अधिवास का क्षेत्र इतना अधिक बढ़ गया था कि मनुष्य प्रायः हर स्थान पर मिलता था।[20]

(क) अधिक जनसंख्या के कुंज (*Areas of Major Concentration*)

जैसा कि ऊपर कहा गया है अधिक जनसंख्या के मुख्यतः चार कुंज हैं जो पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशिया, पश्चिमी यूरोप और उत्तरी अमरीका के उत्तरी पूर्वी भागों में अवस्थित हैं।

पूर्वी एशिया में जनसंख्या के घने कुंज चीन, जापान और कोरिया में है।

दक्षिणी-पूर्वी एशिया में इंडोचीन से लगाकर पाकिस्तान के देश सम्मिलित हैं—विशेषकर भारत, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, मलाया और जावा अधिक घने बसे हैं।

चीन—चीन में जनसंख्या का एक बड़ा भाग याग्टसीक्याग सीक्याग, ह्वांगहो और उनकी सहायक नदियों की घाटी में रहता है। चीनी लोग ऐतिहासिक काल में पश्चिम की ओर से आये हैं। इनके प्रमुख मार्ग कासू और शेन्सी के प्रान्त रहे हैं क्योंकि इन प्रान्तों की भू-रचना, जलवायु और वनस्पति मध्य एशिया की ही भाँति थी। नदियों के मुहानों पर बसने के पूर्व ये पश्चिम की ओर पहाड़ी ढालों और पर्वतों के किनारों पर फैल गये थे (जैसा कि अब भी चिहली और शादुंग में देखा जाता है) और पर्वतीय नदियों द्वारा खेती की सिंचाई करके उत्पादन प्राप्त करते थे। प्रसार के समय ये नदियों की चौड़ी घाटी में रुक गए थे और यहीं चीनी सभ्यता का विकास हुआ माना जाता है। शासी में तैंफूआन-फू के निचले मैदान को जिसका क्षेत्रफल ५००० वर्ग किलोमीटर है—चीनी सभ्यता का केन्द्र माना जाता है। दूसरा केन्द्र ह्वॉ० हो नदी पर स्थित सैनफू प्रदेश है जिसका क्षेत्रफल उससे दुगुना है। इन्हीं क्षेत्रों से चीनी लोग उत्तरी मैदान में फैलने लगे। नदियों की घाटियों में उपजाऊ मिट्टी और कृषि के अनुकूल जलवायु होने से इनकी संख्या में वृद्धि होने लगी और इनका प्रसार अधिक पूर्व तथा दक्षिण की ओर होने लगा। शैंसी, हेनान और शादुंग प्रान्तों में सबसे अधिक उपजाऊ मिली मिट्टी तथा मानसून वर्षा का लाभ मिलने से चीन के प्रथम राजवंश की राजधानी थी और ये ही प्रदेश विचारकों तथा दार्शनिकों के जन्म स्थान थे। मध्य का प्रदेश ह्वागहो नदी के दक्षिण में होनान का प्रान्त चीनी मुहावरे के अनुसार 'केन्द्र का पुष्प' कहलाता है। जनसंख्या यहाँ उत्तर के गाँवों में अगणित छोटे-छोटे झोंपड़ों में फैली हुई पाई जाती है।

19. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 35.
20. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 38.

भारत में अधिक घने बसे और कम बसे क्षेत्र इस प्रकार हैं :—

(१) घनी जनसंख्या के क्षेत्र—यहाँ प्रति वर्ग मील में ५०० व्यक्तियों से अधिक मनुष्य रहते हैं। ऐसे भागों में पश्चिमी बंगाल, पंजाब, दक्षिणी प्रायद्वीप का दक्षिणी पश्चिमी समुद्र तट, केरल, उड़ीसा, आंध्र तथा मद्रास का तट सम्मिलित हैं। यह भाग संसार के सबसे अधिक घने बसे भागों में से है। यहाँ समतल भूमि, घनी वर्षा, उपयुक्त गर्मी और यातायात के साधनों की सुगमता के कारण ही जनसंख्या का घनत्व अधिक है।

(२) अच्छी जनसंख्या वाले भाग—यहाँ प्रति वर्ग मील में ३०० से ५०० व्यक्ति तक रहते हैं। ऐसा भाग दक्षिणी नदियों के डेल्टा पूर्वी बिहार, महाराष्ट्र, दक्षिणी पंजाब, कोंकन तट और पश्चिमी उत्तर प्रदेश हैं। यहाँ की भूमि उपजाऊ है और वर्षा की कमी सिंचाई द्वारा पूरी की जाती है।

(३) मध्यम जनसंख्या वाले भाग—जहाँ १५० से ३०० व्यक्ति प्रति वर्ग मील में रहते हैं। इसमें सम्पूर्ण दक्षिणी प्रायद्वीप (तट की घनी बस्ती) तथा उत्तर और पूर्वी पहाड़ी जंगलों में कम बस्ती के जंगलों को छोड़कर असम और हिमाचल प्रदेश शामिल हैं। मध्य प्रदेश, बिहार के खनिज क्षेत्र, मैसूर, मद्रास, ब्रह्मपुत्र की घाटी (गोहाटी जिला छोड़कर) मध्य प्रदेश और राजस्थान के ग्वालियर तथा जयपुर जिले इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

(४) कम जनसंख्या वाले भाग—यहाँ प्रति वर्ग मील में १०० से १५० मनुष्य से भी कम रहते हैं। इसमें राजस्थान का पूर्वी भाग, मध्य और पश्चिमी मध्य प्रदेश, आंध्र का दक्षिणी भाग शामिल हैं। यहाँ की भूमि अनुपजाऊ, कम वर्षा, यातायात के साधनों की कमी और जलवायु भी विषम है।

(५) बहुत ही कम जनसंख्या वाले भाग—यहाँ प्रति वर्गमील में १०० मनुष्य से भी कम रहते हैं—उ० प० राजस्थान, तराई, असम की पहाड़ियाँ, हिमाचल प्रदेश, मनीपुर, जम्मू-काश्मीर, सुन्दरवन, छोटा नागपुर का पठार तथा उड़ीसा के सूखे भाग शामिल हैं।

जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़ों के अध्ययन से हम निम्न परिणामों पर पहुँचते हैं :

भारत में जनसंख्या का जमाव वर्षा के परिणाम के साथ घटता जाता है अर्थात् अधिक वर्षा वाले भागों में कम वर्षा वाले भागों की अपेक्षा ज्यादा घनी आबादी है। उदाहरण के लिये, बंगाल में जनसंख्या का घनत्व सबसे अधिक है। जैसे-जैसे पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ते जाते हैं, वर्षा की मात्रा के साथ-साथ जनसंख्या भी घटती जाती है। इस स्वर्ण नियम के कुछ अपवाद भी हैं। यद्यपि पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा पंजाब के भागों में वर्षा की मात्रा बहुत कम है किन्तु उपजाऊ भूमि तथा सिंचाई की सुविधा के कारण वहाँ भी अधिक जनसंख्या है। छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र में भी खनिज पदार्थों के आकर्षण से अधिक घनी आबादी है। असम राज्य का पर्वतीय भाग बहुत कम आबाद है यद्यपि वहाँ अधिक वर्षा होती है। इसके निम्न कारण हैं :—(१) यहाँ वनों की अधिकता है, (२) यहाँ की जलवायु स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है; (३) सीमा प्रान्तीय क्षेत्र में होने के कारण यह सुरक्षित भी नहीं है।

चावल उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में (जैसे बंगाल तथा बिहार) अधिक आबादी

१७०० से भी अधिक व्यक्ति रहते हैं। सैचुआन प्रान्त में ६२० लाख व्यक्ति रहते हैं।

(५) कैंटन और शङ्घाई के बीच समुद्र तटीय मैदानों में।

(६) यागट्सीक्याग नदी के मध्यवर्ती भाग में जहाँ आने-जाने के मार्ग बहुत उत्तम है—हैंकाऊ के निकट।

यदि मंचूरिया से यूनान तक उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम में एक काल्पनिक रेखा खीचें तो चीन की जनसख्या दो भागो में बँट जाती है। इस रेखा के पश्चिम के शुष्क भाग का क्षेत्रफल लगभग २२ लाख वर्ग मील है किन्तु शुष्कता के कारण यह १५० से २०० लाख मनुष्यों को ही जीवन-निर्वाह के साधन दे पाता है। रेखा के पूर्व के भाग का क्षेत्रफल १८ लाख वर्ग मील ही है किन्तु यह अधिक आर्द्र होने से खेती के उपयुक्त है अत यहाँ ४० से ५० करोड़ तक व्यक्ति रहते हैं। इस भाग मे चीन का उत्तरी मैदान, यागट्सीक्याग की घाटी तथा लाल बेसिन अत्यन्त घने बसे है। श्री किंग (King) के अनुसार लाल बेसिन के अनेक भागो मे ३,००० मनुष्य और १,००० पशु केवल १ वर्ग मील क्षेत्र पर जीवन-निर्वाह करते है किन्तु पहाड़ी भागो से जनसख्या कम पाई जाती है।

चीन के विभिन्न भागो मे जनसख्या का वितरण इस प्रकार है :—[22]

प्रदेश/प्रान्त	क्षेत्रफल (००० वर्ग किलोमीटर)	जनसंख्या १९५७ (००० में)
उत्तरी-पूर्वी प्रदेश		
हीलगक्याग	४६३ ६	१४,८६०
किरीन	१८७·०	१२,५५०
लाओनिंग	१५१ ०	२४,०९०
आतरिक मगोलिया	१,१७७ ५	९,२००
उत्तरी प्रदेश		
होपी	२०२·७	४३,७३०
पेंकिग	७·१	४,०१०
शासी	१५७ १	१५,९६०
पूर्वी प्रदेश		
शाटुग	१५३ ३	५४,०३०
कियागसू	१०२ २	४५,२३०
शंघाई	५·८	६,९००
एनवी	१३९·९	३५,५६०

22. **The Statesman's Year Book**, 1962, p. 868.

केरल	१५,००२	१,६६,०४	१,१२७
मध्य प्रदेश	१७१,२१७	३,२३,७२	१८९
मद्रास	५०,३३१	३,३६,८७	६६९
महाराष्ट्र	११८,७१७	३,९५,५४	३३३
मैसूर	७४,२१०	२,३५,८७	३१८
उडीसा	६०,१६४	१,७५,४९	२९२
पजाब	४७,१०८	२,०३,०७	४३०
राजस्थान	१३२,१५२	२,०१,५६	१५३
उत्तर प्रदेश	११३,६५४	७,३७,४६	६४९
प० बंगाल	३३,८२९	३,४९,२७	१,०३२

केन्द्र द्वारा प्रशासित राज्य	क्षेत्रफल वर्ग मील	जनसख्या	घनत्व
अडमान नीकोवार	३,२१५	६३,५४८	२०
दिल्ली	५७३	२६,५८,६१२	४,६४०
हिमाचल प्रदेश	१०,८८५	१३,५१,१४४	१२४
लक्का द्वीप, मालद्वीप आदि	११	२४,१०८	२,१९२
मनीपुर	८,६२८	७८०,०३७	९०
त्रिपुरा	४,०३६	११,४२,००५	२८३
दादरा-नगर हवेली	१८९	५७,९६३	३०७
गोआ, डामन-ड्यू	१,४२६	६,२६,९७८	४४०
नागालैंड	६,३६६	३,६९,२००	५८
पाडीचेरी	१८५	३,६९,०७९	१,९९५
भारत का योग	१२,६१,५९७	४३,९०,७३	३७३

अस्तु, कहा जा सकता है कि एशिया मे लीबिया से लगाकर मचूरिया तक वर्षा और नदी दोनो से जल की पूर्ति पर अधिकार और अधिकाधिक सिचाई की व्यवस्था जनसख्या के वितरण में बडे महत्वपूर्ण तत्व रहे है। इस प्रकार की कृषि के लिए, जो नखलिस्तानो मे बहुत सीमित होती है और मध्य एशिया के सकडे अंचल मे नियत्रित है, गगा के मैदानो और चीन में असीमित विस्तार के लिए बहुत क्षेत्र मिला अत. ये दोनो ही मनुष्य के लिए आकर्षण के विशाल केन्द्र हो गये। यह आकर्षण पूर्वी एशिया के समस्त समुद्रतट की परिधि पर प्रतीत हुआ है।

के खेतो में काम के लिए, नावें चलाने के लिए, बहुसंख्यक उप-बस्तियों मे अथवा अत्यधिक संख्या मे नगर की सड़को पर—तो यही विचार होता है कि मानो मानव-तडाग (Ocean of Humanity) उफना जा रहा है।"[23]

(४) चीनी लोग अधिकतर पहाड़ों की तलैटियों में या पहाड़ी ढालों पर भी बसे हैं जहाँ वे परिश्रम द्वारा सुन्दर कृषि करते हैं।

(५) इनकी सिंचाई व्यवस्था भी बड़ी सुन्दर है अत: खेती के लिए जल का समुचित उपयोग किया जाता है।

चीन की अधिकांश जनसंख्या गाँवो में ही निवास करती है। ८७% गाँवों में जनसंख्या घनी होने के कारण उपजाऊ मैदानो मे गहरी खेती का प्रयोग और चीनियों का अपनी भूमि के लिए धार्मिक कारणो से प्रगाढ प्रेम दृष्टिगोचर होता है।

ये लोग अपने मुर्दो को गाडते हैं अत. उनकी देखभाल के लिए उनकी कब्रो के निकट ही रहते है।

जापान

जापान मे जनसंख्या का वितरण एक समान नही है। जापान मे दक्षिणी तट के मैदान मे जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है। यहाँ जापान का अधिकांश चावल पैदा किया जाता है तथा उद्योग-धन्धो की भी खूब उन्नति हुई है। इसके अतिरिक्त यह भाग जापान का सबसे प्राचीन भाग भी है जहाँ आरम्भ से ही मनुष्य निवास करते हैं। जापान मे ८८ करोड आबादी का वितरण वहाँ की भू-रचना पर आधारित है। जहाँ कहीं समतल और उपजाऊ मिट्टी पाई जाती है वही आदमी बसे हुए हैं। चाहे वह भाग छोटा और पहाड़ों से घिरा हुआ ही क्यों न हो।[24] आबादी का केन्द्रीयकरण मैदानी भागो मे अधिक है। ऊँचाई के साथ आबादी का घनत्व कम होता जाता है। देश का अधिकतर भाग पहाडी होने से आबादी अलग-अलग बिखरी हुई है।[25] जापान की तीन-चौथाई जनसंख्या क्यूशू, शिकोकू और होन्शू द्वीपो मे स्थित है। जहाँ चावल और पहाडी ढालों पर चाय की खेती होती है, वही सघन जनसंख्या के क्षेत्र पाये जाते है। यद्यपि यहाँ खेती कुल भूमि के १५% भाग पर ही होती है किन्तु गहरी खेती द्वारा साल भर मे दो तीन फसलें उगाई जाती है। समुद्री तटो पर मछली पकडने के व्यवसाय के कारण घनी आबादी है। कहा जाता है कि संसार मे समुद्र ने कहीं भी प्रजाति के भौतिक और नैतिक विकास मे इतना महत्वपूर्ण योग नहीं दिया है जितना जापान मे। यही तथ्य जापान के तट पर घने बसावका समाधान करता है।[26]

पश्चिमी तट पर होकैडो मे जनसंख्या का घनत्व संपूर्ण देश का १/५ है, यहाँ अधिकतर जनसंख्या नदियो की घाटियों मे ही मिलती है। जलवायु की कठोरता के कारण उत्तरी होकैडो में ४०° उत्तरी अक्षांस मे पहुँचने पर घनत्व क्रमश. कम होता जाता है, जो यजो द्वीप मे घट कर केवल २० मनुष्य प्रति वर्ग किलोमीटर रह

---

23. *Blache*, **Op. Cit.**
24. *Cressy*, **Asia's Land and People**, p. 189.
25. *Stamp. L. D.*, **Asia**, *1957*, pp 509-10.
26. *Blache*, **Op. Cit.**

उत्तरी अमरीका का उत्तरी पूर्वी क्षेत्र

यह विश्व का तीसरा जनसंख्या जमघट है जहाँ संयुक्त राज्य अमरीका तथा कनाडा की क्रमशः ७०% और ६०% जनसंख्या रहती है। यद्यपि सं० राज्य की कुल जनसंख्या की लगभग ८५% १००° पश्चिमी देशान्तर के पूर्व में मिलती है, तथापि यहाँ इसका विन्यास बड़ा असमान है। जनसंख्या का घनत्व उत्तरी पूर्वी भागों में प्रति वर्ग मील २०० तक है जबकि पश्चिमी भागों में यह केवल १२ मनुष्यों का ही रहता है। पश्चिमी भागों में यह मुख्यत कुछ ही क्षेत्रों में केन्द्रित है जहाँ सिंचाई के जल अथवा खनिज पदार्थों की प्राप्ति होती है। प्रशांत महासागर के तटीय क्षेत्र की जलवायु और नदी घाटियों में अधिक जनसंख्या का पोषण करती है, किन्तु यहाँ भी ओरेगन की प्यूजेट साउंड, विलामेटी घाटी, कैलीफोर्निया की घाटी और सैनफ्रांसिस्को खाड़ी तथा लॉस ऐंजिल्स के भाग अधिक बसे हैं।

संयुक्त राज्य के पूर्वी भागों में जनसंख्या का बसाव बड़ा घना है विशेषकर यह मिसीसिपी नदी के पूर्व में ओहियो नदी के उत्तर में और सैंट लारेंस तक सीमित है। इस क्षेत्र में विशाल औद्योगिक नगर पाये जाते हैं—जो सभी आंध्र महासागर के तट पर दक्षिणी मेन से लगाकर मैरीलैंड तक विस्तृत हैं।

कनाडा में जनसंख्या का जमाव ओंटेरियो प्रायद्वीप से लगाकर सैंट लारेंस की एस्चुरी तक सकड़ी पेटी में पाया जाता है। आंध्र महासागर के तटीय प्रदेश के दक्षिणी भाग, प्रेरी प्रान्तों के कृषि प्रधान क्षेत्र और ब्रिटिश कोलम्बिया के दक्षिणी-पश्चिमी प्रशांत महासागर के तटीय क्षेत्र भी घने बसे हैं।

जन विहीन प्रदेश (Empty Lands)

उपरोक्त घनी आबादी वाले प्रदेशों के सर्वथा विपरीत अपेक्षतया जनहीन प्रदेश हैं। जनहीन प्रदेश मुख्यत आर्कटिक महासागर की सीमा पर हैं। यहाँ आबादी की न्यूनता, पैदावार की छोटी मौसम, कम तापमान, पालों की भीषणता और कम उपजाऊ भूमि आदि मुख्य भौतिक परिस्थितियाँ हैं। अन्टार्टिका, ग्रीनलैंड तथा अन्य हिमाच्छादित क्षेत्रों में भी जनसंख्या का अभाव है। टुन्ड्रा में ६०° अक्षांशों के निकट तो जनसंख्या बहुत ही थोड़ी है। कृषि यहाँ असम्भव है। यहाँ केवल शिकार करना, मछली पकड़ना, पशु चराना, व खनिज खोदना आदि व्यवसाय ही चलाये जा सकते हैं। उत्तरी ध्रुव के चारों ओर समस्त भू-भाग में रहने वाली कुछ जातियों ने अपना जीवन पूर्णतः वहाँ के वातावरण के अनुकूल बना लिया है। यहाँ के लोग जनसंख्या की कमी को स्थान परिवर्तन के द्वारा पूरी कर लेते हैं। निरंतर भ्रमण ही यहाँ के मनुष्य और जानवरों का एक मात्र जीवन आधार है। मानवीय ज्वार का उतार-चढ़ाव उत्तरी ध्रुव प्रदेशों के न रहने योग्य किनारों को धो देता है। दक्षिणी ध्रुव के पास महाद्वीपों के किनारों पर इस शक्ति का कोई चिन्ह नहीं पाया जाता है।[30] महाद्वीपों की उत्तरी किनारों पर के बड़े क्षेत्र में केवल ५,००,००० ही मनुष्य रहते हैं।

इसके विपरीत जलवायु परिस्थितियों में उष्ण-आर्द्र प्रदेश के जंगलों में बहुत कम आबादी है। अमेजन व कांगो बेसिन की अति उष्ण और आर्द्र जलवायु में

---

30. *Blache*, **Op. Cit.**, pp. 34-35.

पश्चिमी पाकिस्तान	५४,५०१ वर्गमील	२०,०२४,००० जनसंख्या
पूर्वी पाकिस्तान	३१०,२३६ ,,	१५,६०६,००० ,,
योग	३६४,७३७ वर्गमील	३५,६३३,०००

भारत

भारत मे जनसंख्या का वितरण बड़ा विषम है। यहाँ सबसे अधिक जनसंख्या उत्तर के बड़े मैदान मे (३९%) और सबसे कम हिमालय-प्रदेश मे पाई जाती है (केवल ४.८%)। अन्य भागों मे दक्षिणी पठार पर ३०.४%; पश्चिमी घाट और तटीय प्रदेश मे ११.२% तथा पूर्वी घाट और तटीय प्रदेश में १४.५% जनसंख्या निवास करती है।

१९६१ की जन गणना के अनुसार भारत के विभिन्न क्षेत्रो में जनसंख्या का वितरण इस प्रकार है.—[२७]

	क्षेत्रफल वर्गमील	जनसंख्या	घनत्व प्रति वर्गमील
उत्तरी क्षेत्र	१९०,८१५	४८,०३३,१४६	२५२
मध्य क्षेत्र	२८४,८७१	१०६,११८,८०९	३७३
पूर्वी क्षेत्र	२६१,४९२	११३,५९३,४९६	४३४
पश्चिमी क्षेत्र	१९१,१५१	६०,२४५,०३१	३१५
दक्षिणी क्षेत्र	२४६,०२५	११०,५५४,०७४	४४९
अडमान नीकोबार	३,२१५	६३,५४८	२०
गोआ, डामन ड्यू	१,४२६	६२६,९७८	४४०
संपूर्ण भारत	१,१७८,९९५	४३९,२३५,०८२	३७३

यदि जनसंख्या के वितरण का विश्लेषण भौगोलिक इकाइयों की पृष्ठ-भूमि में करें तो ये असमानतायें और भी स्पष्ट हो जाती है। एक ओर गंगा के निचले मैदान मे प्रति वर्ग ८३२ व्यक्ति रहते है वहाँ थार के मरुस्थल में केवल ६१ व्यक्ति, पश्चिमी हिमालय प्रदेश मे ६८; छोटा नागपुर के पठार पर २४६; पूर्वी हिमालय प्रदेश में ११८; मध्य के पहाड़ व पठार पर १६४; दक्षिण के पठार के उत्तरी भाग में २४६; मलाबार-कोकण तट पर ६३८; दक्षिणी मद्रास मे ५५४; उत्तरी मद्रास और तटीय उड़ीसा क्षेत्र मे ४६१ और मध्य गंगा की घाटी मे ३३२ व्यक्ति प्रति मील पाये गये है।[२८]

27. **Census of India,** Paper No. 1 of 1962.

28. **Census of India,** 1951, Vol I, Report, pp. 20 and 28.

(ग) कृषि घनत्व।
(घ) आर्थिक घनत्व।
(ङ) पौष्टिक घनत्व।

(क) जनसंख्या का गणित या वास्तविक घनत्व (Arithmetic or Real Density)

जनसंख्या और भूमि के क्षेत्रफल का सम्बन्ध मनुष्य और भूमि का अनुपात (Manland ratio) या गणित घनत्व कहलाता है। यह घनत्व प्रति वर्ग मील अथवा किलोमीटर में पीछे मनुष्यों की संख्या को प्रकट करता है। कभी-कभी यह आबादी का साधारण गणित घनत्व कहलाता है। सन् १९५५ में सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या २६,८९० लाख थी। प्रति वर्गमील पीछे यह घनत्व ४५ या प्रति वर्ग किलोमीटर पीछे २० था। परन्तु इस अनुपात से कोई महत्वपूर्ण तथ्य नहीं निकलता क्योंकि पृथ्वी का ७०% से अधिक भाग जल से पूर्ण है, जिस पर कोई रहने का स्थान नहीं। यदि इस जल प्रदेश को निकाल दिया जाय तो औसतन प्रति वर्गमील भूमि पर ३५ मनुष्य बसते है। यह गणित घनत्व या साधारण मनुष्य और भूमि का अनुपात कुछ सीमा तक उन प्रदेशो के लिए महत्वपूर्ण है जो कम बसे हुए हैं।

नीचे की तालिका मे विश्व के प्रमुख देशों का वास्तविक घनत्व बताया गया है :—[32]

देश	क्षेत्रफल (००० वर्गमील मे)	जनसख्या (००० मे) १९६१ मे	घनत्व प्रति वर्ग मील	घनत्व प्रति किलोमीटर
रूस	८,६४९,५१२	२०८,८२७	२४ २	१०
स० राज्य अमरीका	३,६१५,२११	१७९,३२३	४९·६	१९
कनाडा	३,८५१,११३	१८,६००	४ ८	२
बेल्जियम	११,७७९	९,२२९	७८४	३००
डेनमार्क	१७,१५९	४,६२०	२६९	१०६
फ्रांस	२१२,८२२	४७,०००	२२१	८३
प० जर्मनी	९५,९२१	५६,१७३	५८६	२१५
इटली	११६,३००	५०,४६४	४३४	१६४
नीदरलैंड्स	१२,५३८	११,७२१	९३५	३४२
पुर्तगाल	३५,५०७	९,१३०	२५७	९५

32. **Britannica Book of the Year**, *1963*, p. 40.

है क्योंकि (१) अन्य अनाजों की अपेक्षा, चावल की उतनी ही मात्रा में अधिक आदमियों की उदर पूर्ति हो जाती है। (२) चावल मे भोजन के अधिक पोषक तत्व होते हैं। (३) चावल की प्रति एकड पैदावार भी बहुत अधिक होती है। चावल की फसल तैयार भी बहुत शीघ्र हो जाती है। (४) अधिक जनसख्या वाले क्षेत्रो में चावल का उत्पादन अधिक सुगम होता है।

उत्तरी मैदानी क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा के कारण जनसख्या का घनत्व अधिक है। यातायात तथा सन्देश-वाहन के साधनों की भी यहाँ विशेष सुविधा है। जीवन की समस्त आवश्यक वस्तुएँ यहाँ उपलब्ध है। दिल्ली राज्य में सबसे अधिक आबादी है क्योंकि—(१) यह भारत सरकार की राजधानी है, (२) व्यापार, उद्योग तथा यातायात सभी दृष्टियों से यह बढा-चढा है; (३) देश के बटवारे के कारण यहाँ शरणार्थी.भी अधिक आ बसे हैं।

केरल राज्य की जनसख्या का घनत्व सब राज्यों से अधिक है क्योंकि—(१) यह चावल उत्पादन करने वाला क्षेत्र है। यहाँ मृत्यु सख्या बहुत कम है। यहाँ ४५% व्यक्ति साक्षर हैं, (२) उद्योग धन्धो की भी अच्छी उन्नति हुई है।

दक्षिणी पठारी क्षेत्र मे जनसख्या का घनत्व बहुत कम है, क्योंकि यह एक ऊँचा-नीचा पठार है जहाँ कृषि की सुविधायें बहुत कम हैं। यातायात के साधनो की भी यहाँ कमी है। यह बौछार का प्रदेश है। किन्तु पूर्वी तथा पश्चिमी तटीय भागो मे जनसख्या का घनत्व अधिक है, क्योंकि वहाँ चावल की खेती की सुविधा है तथा जलवायु भी स्वास्थ्यवर्धक है। कला-कौशल के केन्द्रो मे भी जनसंख्या अधिक है जैसे इन्दौर, बम्बई, अहमदाबाद, कानपुर और जमशेदपुर आदि मे।

निष्कर्ष के रूप मे यह कहा जा सकता है कि भारत मे औद्योगिक नगरों मे, बन्दरगाहो के आसपास, नदियों की घाटियों मे, समतल मैदानो मे और खनिज पदार्थों के पाये जाने वाले स्थानो मे जहाँ जीवन-यापन और आवागमन के मार्गों की सुमुचित सुविधायें प्राप्त हैं, अधिक घनत्व पाया जाता है। इसके विपरीत पहाडी, पठारी, रेगिस्तानी क्षेत्रो मे जहाँ जलवायु प्रतिकूल और जल का अभाव होता है, घनत्व कम है। इसके अतिरिक्त भारत की कृषि-पट्टी (Agricultural-belt) मे जनसख्या का घनत्व बहुत ही अधिक है। यह कृषि पट्टी पजाब के सिंचाई वाले क्षेत्र से आरम्भ होकर उत्तर-प्रदेश, बिहार, बगाल होती हुई पूर्वी घाट के मद्रास, आंध्र, मैसूर, केरल होती हुई पश्चिमी घाट के महाराष्ट्र राज्य तक जाती है।

नीचे की तालिका मे भारत मे जनसख्या का वितरण बताया गया है :—

राज्य	क्षेत्रफल वर्ग मील में	जनसख्या (००० मे)	जनसख्या का घनत्व
आध्र प्रदेश	१०६,२८६	३,५६,८३	३३६
आसाम	७८,५२६	१,२२,०६	१५५
बिहार	६७,१६६	४,६४,५६	६६१
गुजरात	७२,२४५	२,०६,३३	२८६
जम्मू-काश्मीर	८६,०२३	३५,६१	—

प्रमुख देशों की कृषि भूमि का घनत्व

देश	प्रति वर्ग मील खेतीहर भूमि पर	देश	प्रति वर्ग मील खेतीहर भूमि पर
जापान	४,०००	द० अमेरिका	२४
हॉलैंड	२,५००	अफ्रीका	३५
इङ्गलैंड और वेल्स	२,१००	ओसीनिया	३
न्यूजीलैंड	६००	यूरोप (रूस को छोडकर)	३२१
भारतवर्ष	६३०	मध्यपूर्व	४५५
चीन	३००—३५००	दक्षिणी पूर्वी एशिया	३८०
स० रा० अमेरिका	७७	अर्जेनटाइना	११४
कनाडा	७७	फ्रांस	४७०
डेनमार्क	५००	इटली	८००

कृषि भूमि पर जनसख्या के घनत्व सम्बन्धी उपर्युक्त आकडे प्रस्तुत करते हुए श्री कॉलिन क्लार्क (Colin Clark) कहते हैं कि, "यदि किसी देश मे डेनमार्क की आधुनिक कृषि पद्धति का सहारा लिया जाय तो उस देश मे प्रति कृषि किलोमीटर पीछे २०० व्यक्ति अथवा प्रति वर्ग मील पीछे ५०० मनुष्यों का निर्वाह हो सकता है।" इस स्तर के अनुसार विश्व के अधिकाश देशो में कृषि योग्य भूमि पर जनसख्या का भार अधिक नही कहा जा सकता किन्तु जापान, बेल्जियम, हॉलैंड और इङ्गलैंड, वेल्स मे निस्सदेह खेतीहर भूमि पर अधिक भार है। किन्तु भारत की अवस्था निश्चय ही डेनमार्क से ऊपर है। बेल्जियम, जर्मनी, इङ्गलैंड व वेल्स आदि देशो मे घनत्व बहुत अधिक दिखाई देता है। किन्तु इन देशो मे लोग केवल कृषि भूमि पर ही निर्भर नही है, बहुत बडी सख्या निर्यात उद्योगो मे भी लगी हुई है। इस प्रकार ये लोग अतिरिक्त पैदावार वाले देशो से खाद्यान्न प्राप्त कर लेते हैं। वस्तुत, इनकी स्थिति जैसी दिखाई पडती है वैसी शोचनीय नही है।

इस सम्बन्ध मे श्री क्लार्क कुछ महत्वपूर्ण निर्णयो पर पहुँचे हैं। यूरोप (रूस को छोडकर) की कृषि भूमि का क्षेत्रफल १४० लाख वर्ग मील है जिस पर ४५००० लाख जनसख्या का निर्वाह होता है—जिनमे से ६५% कृषि उत्पादन पर आश्रित है। यदि समस्त यूरोप डेनमार्क की तरह ही अधिक घना बसा होता तो यूरोप की इस सम्पूर्ण कृषि भूमि पर ७००० लाख व्यक्ति को भोजन मिल सकता है। किन्तु यूरोपीय कृषि के स्तर से सयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा बहुत ही थोडे मनुष्यो का निर्वाह करते है। दक्षिणी पूर्वी एशिया (बर्मा, थाइलैंड और मलाया को छोडकर) अधिक घना बसा है। अस्तु, विश्व के अधिकाश देश अपनी क्षमता से कम ही बसे हैं। चीन, जापान और भारत जैसे देश निश्चय ही घने बसे हैं। यहाँ लोग मुख्यतः खेती पर आश्रित हैं, किन्तु प्रति व्यक्ति पीछे कृषि भूमि का औसत एक एकड़ से भी कम है। फलत भारत और चीन मे सदा ही भोजन की समस्या बनी रहती है

पश्चिमी यूरोप

यूरोप में अत्यन्त प्राचीन काल से लेकर अब तक मानव विकास की सभी अवस्थायें मिलती हैं। यहाँ शिकारी व्यवसाय से लगा कर आधुनिक वृहत उद्योग तक मिलते है। श्री ब्लाशे के शब्दो मे : "चार बडे मानवी जमावों—भारत, चीन, यूरोप और संयुक्त राज्य—मे वर्तमान काल मे यूरोपीय समूह सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। वितरण की दृष्टि से यूरोप ऐसा केन्द्र है जिसका प्रभाव ससार के सभी भागो पर पडा है और संख्या तथा आर्थिक महत्व की दृष्टि से अन्य कोई भी समूह उसके सामने फीका है।"[२९]

पश्चिमी यूरोप मे जहाँ औद्योगीकरण और कृषि में विशेषीकरण की प्रवृति दृढ हुई है वहाँ जनसंख्या के बड़े जमाव दृष्टिगोचर होते है। यहाँ यह ७ कुजों मे केन्द्रित पाई जाती है जो औद्योगिक नगरों तथा कोयले की खानो से संबंधित है। (१) लंका शायर क्षेत्र मानचेस्टर और लिवरपूल जैसे नगरो सहित पिनाइन श्रेणी के पश्चिम मे, तथा (२) यार्क शायर क्षेत्र लीड्स, ब्रैडफोर्ड और शैफील्ड जैसे नगरो सहित इस श्रेणी के पूर्व मे स्थित है। (३) बर्मिघम और स्टॉक के समीप ही तीसरा क्षेत्र है। (४) उत्तरी-पूर्वी इगलैंड मे नार्थम्बरलैण्ड क्षेत्र टाइन व टीज नदियो के मध्य है। (५) स्कॉटलैण्ड क्षेत्र स्काटिश मैदान मे कोयले की खानो के निकट है। (६) साऊथवेल्स क्षेत्र की कोयला खानो के ही निकट स्वारी और कार्डिफ स्थित है (७) लंदन क्षेत्र—जहाँ ग्रेट ब्रिटेन की लगभग ⅕ जनसंख्या रहती है।

यूरोप की मुख्य भूमि पर भी अंग्रेजी नहर तथा उत्तरी सागर के तट पर जनसख्या अधिक है जो यूरोप की चतुर्मुखी औद्योगिक प्रवृति का सूचक है। यहाँ फ्रास, बेल्जियम, नीदरलैंड्स, जर्मनी और डेनमार्क तथा राइन नदी के क्षेत्र अत्यधिक घने बसे है। राईन घाटी के पूर्व की ओर कुछ कम घने बसे भागों के साथ दक्षिणी और पूर्वी जर्मनी, उत्तरी चैकोस्लोवाकिया, दक्षिणी पोलैंड और यूक्रेन की ओर एक विशाल पट्टी यूरोप के बीचो बीच फैली है जहाँ जनसख्या अधिक है। रूस मे जनसख्या का घनापन एक त्रिभुजाकार क्षेत्र मे दीख पड़ता है जिसके कोने क्रमश लेनिनग्राड, ओडेसा और टोमस्क बनाते हैं।

पश्चिमी यूरोप के इस प्रदेश मे जनसख्या की सघनता के ये प्रमुख कारण हैं :—

(१) अन्य महाद्वीपो के क्षेत्रीय अनुपात में यहाँ कृषि योग्य भूमि तथा उपजाऊ मिट्टी की अधिकता है अतः कृषि की सुविधायें हैं।

(२) केवल अत्यन्त उत्तरी शीत खडो को छोड़ कर जलवायु प्रायः सुन्दर है जो कृषि मे सहायक है और इसीलिए यहाँ अधिक ऊँचे अक्षांसों तक कृषि की जाती है।

(३) आर्थिक स्रोतो का विदोहन सबसे अधिक किया गया है तथा विज्ञान और तकनीकी ज्ञान ने आर्थिक और सामाजिक उन्नति करने मे योगदान दिया है।

(४) यहाँ कोयला तथा खनिज पदार्थ अधिक मिलते हैं और आवागमन के मार्गों की प्रचुरता है।

---

29. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 111.

देश	प्रतिवर्ग मील कृषि भूमि पर खेतिहर जनसंख्या का भार
बल्गेरिया	२५५
पोलैंड	२३६
इटली	२३४
बेल्जियम	१८७
हॉलैंड	१८५
स्विट्जरलैंड	१७२
हगरी	१६१
जर्मनी	१२५
फ्रास	११७
डेनमार्क	६६
ब्रिटेन	४६

(घ) जनसंख्या का आर्थिक घनत्व (Economic Density)

यह घनत्व किसी देश की पोषणशक्ति और उस देश की जनसंख्या के बीच के सम्बन्ध को सूचित करता है। इसके अनुसार किसी देश मे पोषण के लिए खेती तक ही सीमित रह कर देश के अन्य स्रोतो—खनिज पदार्थ, वन सम्पति, मिट्टी, मछलियाँ और अन्य प्राकृतिक साधनो—को भी दृष्टिगत रखा जाता है किन्तु यह बडी जटिल समस्या है और आज तक विश्व के किसी भी देश की जनसख्या का आर्थिक घनत्व निकालने का कोई प्रयत्न नही किया गया है।

(ङ) पौष्टिक घनत्व (Nutrition Density)

जिन देशो की अधिकाश जनसख्या ग्रामीण है तथा जहाँ आय और भोजन का मुख्य आधार कोई एक प्रमुख अनाज ही होता है, वहाँ इसी प्रकार के घनत्व का महत्व अधिक होता है। उदाहरणार्थ, थाइलैंड, दक्षिणी चीन और बर्मा तथा हिन्द चीन मे कृषि के अन्तर्गत चावल ही अधिक बोया जाता है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका मे गेहूँ की पेटी, मक्का की पेटी आदि मे जिनमे एक ही फसल का विशिष्टीकरण होता है, ऐसे देशो मे पौष्टिक घनत्व ही देश की जनसख्या के उपयोग का मापदड बताता है। डॉबी (Dobby) के अनुसार हिंदचीन के विभिन्न राज्यो मे पौष्टिक घनत्व इस प्रकार था (१९५१) :—

अनाम (मध्य हिन्दचीन)	२.५	मनुष्य पीछे प्रति एकड की खेती होती है
कोचीन-चीन (द० हिन्दचीन)	१.०	,,
टानकिन (उ० वियतनाम)	२.६	,,
कम्बोडिया	१.२	,,
लाओस	०.६	,,

मक्खियों, मच्छरों, बिमारियां, अनउर्वरा मिट्टी, खनिज पदार्थों की कमी व आवागमन के साधनों के अभाव के कारण जनसख्या अत्यन्त ही कम है।[31] इन क्षेत्रों को निवास योग्य व उन्नतिशील बनाने के लिए अधिक धन लगाने की आवश्यकता है।

तीसरी प्रकार के कम जनसख्या के क्षेत्र सूखे प्रदेश हैं। यहाँ जल की कमी, मानव आवास के मार्ग में सबसे बड़ी कठिनाई है। अरब, सहारा, गोबी, अटाकामा और विशाल आस्ट्रेलिया के रेगिस्तान के इन शुष्क प्रदेशों में सिचाई के साधनों और सूखी खेती की प्रणाली द्वारा जनसख्या वितरण मे कुछ सुधार किया जा सकता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सामान्यतः अधिक कम जनसख्या वाले प्रदेशों के क्षेत्र शुष्क प्रदेश, शीत प्रदेश, गर्म और आर्द्र दलदली भूमि के क्षेत्र तथा हिमालय, राकी, आल्पस और एन्डीज को कठोर और भयानक पर्वतीय घाटियों में पाये जाते हैं। घने बसे हुए विशाल और लघु क्षेत्रों व कम घने क्षेत्रों में जनसख्या के स्थानीय केन्द्र, राजधानियाँ, शहर, कस्बे और गाँव में होते हैं। बिखरे जाते हुए क्षेत्र सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते है। इस प्रकार विश्व की जनसख्या का वितरण चित्र अत्यन्त ही जटिल है।

मोटे तौर पर प्रतिकूल या नकारात्मक क्षेत्रों (negative areas) का क्षेत्रफल ३२० लाख वर्ग मील है (ठढे प्रदेश ' १२० लाख वर्ग मील; शुष्क प्रदेश १५० लाख वर्ग मील, अत्यत आर्द्र-प्रदेश २० लाख वर्ग मील, ऊबड़-खाबड़ प्रदेश १० लाख वर्ग मील और अन्य प्रदेश २० लाख वर्ग मील) जो सपूर्ण विश्व के क्षेत्रफल का लगभग ३/४ है किन्तु इनमे विश्व की केवल ५% जनसख्या ही रहती है।

इन क्षेत्रों मे से कुछ मे अभी जनसख्या का जमाव बढ़ने लगा है। कनाडा, साइबेरिया और अलास्का मे खेती वैज्ञानिक ढग से की जाने लगी है। दक्षिणी अफ्रीका के अर्द्ध-उष्ण क्षेत्रो मे ऊँचे भागों में यूरोपीय लोग बसने लगे है। घास के मैदानों मे भी खेती के विस्तार के साथ जनसख्या की सघनता बढने की पूरी सभावनायें हैं। इन भागो मे सिचाई की सुविधा तथा पशु चारण के स्थायीपन का प्रयास किया जा रहा है। किन्तु फिर भी सहारा व आस्ट्रेलिया के मरुस्थलों और विषुवत रेखा के घने जगलों में भविष्य मे जनसख्या के बढने और आवास करने की सम्भावनायें जलवायु सबधी कारणों से बहुत ही कम हैं।

जनसंख्या का घनत्व (Density of Population)

जनसख्या का घनत्व एक ऐसा बैरोमीटर है जिसके द्वारा मनुष्य और वातावरण के निरन्तर परिवर्तनशील सम्बन्ध की सूचना मिलती है। उदाहरणार्थ, पश्चिमी बगाल की जनसख्या का घनत्व १०३२ है किन्तु असम मे केवल १५५। दोनो राज्यो मे घनत्व में अन्तर होने का मुख्य कारण इन दोनो की पोषण शक्ति का विभिन्न होना है।

जनसख्या का घनत्व निम्न प्रकार का हो सकता है :—

(क) जनसख्या का गणित या वास्तविक घनत्व।

(ख) कृषि भूमि का घनत्व।

---

31. *U. N. O.*, **Economic Survey of Latin America, 1949, p. 143.**

का प्रारंभिक फल है जिससे मनुष्य एकत्रित होकर कुछ स्थानों में बस गये जिससे वे अपनी अभ्यस्त जीवन-चर्या को चालू रख सकें।"

जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले अन्य कारण

विश्व और भारत मे जनसंख्या के वितरण की प्रणाली और उसके परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारण अत्यन्त ही जटिल और भिन्न-भिन्न है। किन्तु मुख्यत. ये दो प्रकार के हैं · (क) **भौगोलिक कारण**, जिसमे जलवायु, जल की पूर्ति और प्राप्ति, स्थल रूप, मिट्टी की उर्वरा शक्ति, अन्य प्राकृतिक साधन और स्थिति आदि सम्मिलित किये जाते हैं, (ख) **सांस्कृतिक अथवा अभौगोलिक कारण** जिसके अन्तर्गत मनुष्य का स्वभाव और उद्देश्य, उनकी आर्थिक गतिविधियाँ और तरीके, उनकी समाज-व्यवस्था और स्थानान्तरण (migration) आदि सम्मिलित हैं। इन सभी कारणो की बडी जटिल प्रतिक्रियायें होती है। फलस्वरूप जनसंख्या के वितरण पर इनका प्रभाव भी शनैः शनै ही होता है।

(क) भौगोगिक कारण (Geographic factors)

पृथ्वी के धरातल की भौतिक अवस्थाओं का जनसंख्या के वितरण की प्रणाली पर बडा प्रभाव पडता है। श्री **हन्टिगटन** और श्री **टेलर** सदृश्य विद्वानो की तो यह धारणा है कि जनसंख्या के वितरण पर भौतिक तत्वो (मुख्यत· जलवायु) का प्रत्यक्ष प्रभाव होता है।[४०] कई आधुनिक भूगोलवेत्ताओं का यह भी मत है कि सस्कृति व सभ्यता के द्वारा भौतिक तत्वो का प्रभाव कई अशों तक दूर हो जाता है। अस्तु, जनसख्या की वितरण प्रणाली वस्तुत भौगोलिक और सास्कृतिक दोनो ही कारणो की प्रतिक्रिया का परिणाम है।[४१]

जनसख्या के घनत्व पर प्रभाव डालने वाले तत्व ये हैं—

१. जलवायु (Climate)

जनसख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले तत्वो मे जलवायु सबसे प्रमुख, । T । र के आवास पर जलवायु का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनो ही प्रकार से प्रभाव होता है। यद्यपि यह सभव है कि मनुष्य की संस्कृति मे कुछ सीमा तक अन्तर हो सकता है किन्तु वह जलवायु द्वारा अंकित सीमाओं को तोड नही सकता।[४२] पियर्सन ने यह बताया है कि जलवायु द्वारा लगाई गई सीमाओ के कारण ही धरातल के आधे भाग मे प्रति वर्ग मील १ व्यक्ति से भी कम मनुष्य रहते हैं।[४३] अन्य

---

40 *E Huntington*, **Civilization and Climate**, 1924, Chapter XVIII, *G Taylor*, **Environment and Race**, 1927.

41. "Pattern of population distribution is viewed as the product of the interplay of both geographic and cultural phenomena"–*Blumenstack and Thornwaite*, 'Climate and World Pattern' in 'Climate and man' **Ye. r Book of Agriculture**, 1941, pp. 98-127.

42. **Ibid**, p. 98.

43. *Pearson*, **The Growth and Distribution of Population**, 1935, p. 25.

स्विटजरलैंड	१५,९४१	५,४२९	३४१	१३०
संयुक्त राष्ट्र	९४,५१०	५२,८३४	५५९	३०३
अर्जेनटाइना	१,०७२,०७०	२०,००६	१८·७	७
ब्राजील	३,२८७,२०४	७५,२७१	२०·०	८
चिली	२८६,३९७	७,३४०	२२·९	१०
घाना	९१,८४२	६,९४३	७५·६	—
दक्षिण अफ्रीका संघ	४७२,६८५	१६,१२२	३४·१	—
अरब गणतंत्र (मिश्र)	३८६,१०१	२६,०५९	६७·५	—
ब्रह्मा	२६१,७८९	२१,५२७	८२·३	—
लंका	२५,३३२	१०,१६७	४०१	१५१
चीन	३,६९१,५१२	७००,०००	१९०	६८
भारत	१,१७३,७७५	४३९,०००	३७३	१३६
इंडोनेशिया	५७५,८९४	९५,१८५	१६५	—
ईराक	१६७,५६८	७,२६३	४३·३	—
जापान	१४६,६९०	९४,९३०	६४७	२५२
पाकिस्तान	३६४,७३७	९३,८१२	२५७	९८
सऊदी अरब	६१८,०००	६,०३६	९·८	—
आस्ट्रेलिया	२,९७१,०८१	१०,६६०	३·६	१
न्यूजीलैंड	१०३,७३६	२,४८५	२४०	१०
संपूर्ण विश्व	५७,६००,०००	३,०३३,९९७	५८·२	२२

इस तालिका से स्पष्ट होगा कि भारत की जनसंख्या का घनत्व ३७३ है जो कई देशों से अधिक है किन्तु इङ्गलैंड, वेल्स, बेल्जियम, जर्मनी, जापान, जावा और मदुरा, इटली, और नीदरलैंड्स से कम ही है।

(ख) कृषि भूमि का घनत्व (Physiological Density)

यह घनत्व उपर्युक्त घनत्व से अधिक सही और महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे जनसंख्या तथा कृषि के योग्य भूमि का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है। उदाहरणार्थ, भारत का सम्पूर्ण क्षेत्रफल १२ ६ लाख वर्गमील है जिसमें इसमें से केवल ५ ७ लाख वर्ग मील भूमि ही खेती के योग्य है और जनसंख्या ३६ करोड है। अतः इसकी कृषि भूमि का घनत्व ६३० मनुष्य प्रति वर्ग मील है। विश्व के अन्य देशों की कृषि भूमि का घनत्व इस प्रकार है :—[33]

33. *Clark Colin*, **Population Growth and Living Standards,** 1953, p. 10, I. L. O., (Geneva).

है, जिसके सहारे वर्ष मे दो फसलें और कहीं-कहीं तीन फसलें भी सुगमतापूर्वक पैदा की जा सकती है। अत. जनसख्या का जमाव मुख्यत. इन प्रदेशो मे नदियों की घाटियो मे बढ़ता ही गया जहाँ न अधिक सूखा ही पड़ता है, न अधिक आर्द्रता ही रहती है, और जो न अधिक गर्म तथा न अधिक ठंढे ही हैं। इन प्रदेशों में स्थित असख्य स्रोतो, झीलो, भूमिगत और नदियों का जल प्रभाव खेती के लिये पर्याप्त जल मिल जाता है, और जहाँ मध्यवर्ती एशिया (Asian Massif) से निकलने वाली नदियाँ उत्तम काप मिट्टी लाकर भूमि को उर्वरा बनाती रहती है।"[४८] इसी कारण गगा की घाटी नील तथा याग्टसी की घाटी जनसख्या के भार से दबी पडी है।

एशिया के मैदानो मे जनसख्या का विन्यास[४९]

एशिया मे कृषि के मैदान	क्षेत्रफल वर्गमील मे	जनसख्या	घनत्व प्रति वर्गमील
सिंधु-पजाब	१०३,०००	२०,६००,०००	२००
गगा का मैदान	१५०,०००	६८,७८७.०००	७५०
गगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा	८०,०००	६५,०००,०००	८१०
ईरावदी डेल्टा	२७,०००	६,०००,०००	३३०
मीनाम डेल्टा	१२,०००	७,०००,०००	५८०
मीकाग डेल्टा	१४,०००	५,६००,०००	४००
लाल नदी का डेल्टा	६,०००	६,०००,०००	१,०००
ह्सी नदी (कैंटन डेल्टा)	१८,०००	३०,०००,०००	६००
याग्टसी का मैदान	१०३,०००	७५,०००,०००	७३०
ह्वागहो का मैदान	१३४,०००	८७,०००,०००	६५०
मनचूरिया का मैदान	१७०,०००	३०,०००,०००	१७५
जैचुआन का मैदान	७५,०००	५०,०००,०००	६५८
इनका योग	८५७,०००	४७१,३४६,०००	५५०

किन्तु इसके विपरीत अमेजन तथा कागो नदियो की घाटियो, पूर्वी द्वीप समूह आदि मे वहाँ की अस्वास्थ्यकर जलवायु मनुष्य को आलसी, निर्बल और अकुशल बना देती है। यही नहीं यहाँ की जलवायु घने जगलो और असख्य जीव जन्तुओं को उत्पन्न कर मानव का रहना भी असभव बना देती है। अत इन भागो मे प्रति वर्ग मील १० व्यक्तियो से भी कम मनुष्य रहते हैं। इसी प्रकार उत्तरी व दक्षिणी ध्रुव प्रदेशो मे भी जलवायु की कठोरता के कारण प्रति वर्ग मील एक मनुष्य से भी कम रहता है।

48. *Blache*, **Op. Cit.**, pp 75-76.

49. Based on *N. Ginsburg* **Pattern of Asia,** 1958; *O. H. K. Spate*, **In .ia and Pakistan,** 1959, *G. Cressy* **Land of the 500 Millions,** 1955, and *J. E. Spencer*, **Asia, East by South,** 1954.

और आये दिन अकाल का सामना करना पड़ता है [34]। श्री क्लार्क के अनुसार समस्त विश्व की कृषि भूमि का क्षेत्रफल २४० लाख वर्ग मील है। यदि इस पर डेनिश प्रणाली के अनुसार खेती की जाय तो इससे वर्तमान २३० करोड़ की अपेक्षा १,२०० करोड़ मनुष्यों का जीवन निर्वाह हो सकेगा। इसी प्रकार यदि गहरी खेती के तरीकों का प्रयोग किया जाय तो भारत में भी अधिक जनसंख्या का निर्वाह हो सकता है।

(ग) जनसंख्या का कृषि घनत्व (Agricultural Density)

यह घनत्व खेतीहर जनसंख्या तथा खेतीहर भूमि के पारस्परिक सम्बन्ध को सूचित करता है। इसमें कृषि योग्य भूमि के प्रति वर्ग मील में कृषकों की संख्या निकालते हैं। उदाहरणार्थ, १९५१ की जनगणना के अनुसार-भारत की जनसंख्या में से २४ करोड़ खेतीहर थी तथा खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल ५.७ लाख था अतः भारत की जनसंख्या का कृषि घनत्व ४३५ मनुष्य प्रति वर्ग मील होगा। इसी प्रकार जापान में कृषि भूमि का घनत्व तो ४,००० मनुष्य प्रति वर्ग मील है किन्तु कृषि घनत्व १,८०० मनुष्य प्रति वर्ग मील ही है क्योंकि जापान की आधी जनसंख्या खेतीहर है। इंगलैंड और वेल्स में, जहाँ खेतीहर जनसंख्या केवल ८% है, कृषि भूमि का घनत्व २,१०० है किन्तु कृषि घनत्व १७० मनुष्य प्रति वर्ग मील है। इंडोनेशिया में यह घनत्व १,००० के लगभग है। विभिन्न देशों और प्रत्येक देश के विभिन्न भागों के कृषि घनत्व में बड़ा भारी विभेद विद्यमान देखा जाता है। पश्चिमी दक्षिणी अमेरिका और मध्य अमेरिका में शेष दक्षिणी अमरीका की तुलना में कृषि घनत्व काफी अधिक है।[35] अफ्रीका—जहाँ आबादी बहुत अधिक वर्षा के वितरण और जलपूर्ति से प्रभावित है—में भी घनत्व में बड़ा विभेद मिलता है। उदाहरणतः टैंगेनिका में कृषि भूमि का घनत्व साधारणतः ऊँचा (४६३ से ६६५ व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर तक) है।[36] चीन व पूर्वी तथा दक्षिणी एशिया के चावल क्षेत्रों में भी कृषि घनत्व में बड़ा अन्तर देखा जाता है। सुदूर पूर्व के देशों में सबसे उल्लेखनीय बात घने आबाद मैदानी भागों और उजाड़ पहाड़ी भागों के बीच की विपरीतता (Contrast) है।[37]

नीचे की तालिका में श्री स्थीनजर के अनुसार विश्व के प्रमुख देशों का कृषि घनत्व बताया गया है।[38]

---

34. *Smith, R*, **World Population & World Food Smpplies**, 1956, p. 17.

35. *K. Davis*, "Population and the Further Spread of Industrial Society," **Proceedings of the American Phylosophical Society**, (U. S. A.), Vol. 95, No. 1, (1951), p. 10

36. *U. N. O.*, **The Population of Tangangika**, 1949, p. 44.

37. Refer to (i) Conliffee, **China Today**, 1922, p. 15, (ii) *I. Bowman*, **Limits of Land Settlements**, 1937, p. 172 and *Davis*, **The Population of India and Pakistan**, 1951, p 19.

38. Quoted by *Finch and Trewartha*. **Elements of Geography**, 1942, p. 624.

मानसूनी जलवायु प्रदेश दो ऐसे खड है जहाँ की जलवायु सुविधाओ और कठिनाइयों से युक्त है। दोनो खडो मे एक-एक मौसम उत्पादन के लिए अनुकूल होता है, पहले खड मे शीत ऋतु और दूसरे मे ग्रीष्म ऋतु का उत्तरार्द्ध जबकि वर्षा होती है अतः मानव के लिये आवश्यक हो जाता है कि वह उत्पादन इतना अधिक कर ले कि जिससे वर्ष भर उसका निर्वाह हो सके। मानव प्रगति और विकास के लिए यही दो भाग बडे अनुकूल रहे है। भूमध्य सागरीय खड मे यूनान, रोम, मिश्र, बेबीलोन, सीरिया और फिलिस्तीन तथा मानसूनी खड मे चीन और भारत की भूमियाँ।

श्री हटिंगटन की धारणा है कि "विश्व की ऊँची भौतिक सस्कृति (Materialistic Culture) और सभ्यता वाले देश आश्चर्यजनक रूप से सर्वोच्च जलवायु शक्ति वाले देशो से सम-केन्द्रित हैं तथा यह सभ्यता उस देश विशेष की जलवायु द्वारा प्रदत्त शारीरिक और मानसिक शक्ति का परिणाम है"। श्री फेयरग्रीव पूर्णत इस मत से सहमत नही हैं। उनका कहना है कि मानव का सास्कृतिक इतिहास उसके शक्ति के ऊपर उत्तरोत्तर नियत्रण की कहानी है। अत मानव सभ्यता के वितरण मानचित्र को मनुष्य द्वारा शक्ति के उपयोग और नियन्त्रण के द्वारा स्पष्ट करना चाहिये।[५२] फिर भी यह सत्य है कि सयुक्त राज्य के पूर्वी प्रदेश और उत्तरी पश्चिमी यूरोप मे जहाँ भौतिक सस्कृति और औद्योगिक सभ्यता का अधिक विकास हुआ है वे अन्य समीपीय देशो से अपने यहा जनसख्या को आकर्षित कर धीरे-धीरे विश्व के सबसे घने क्षेत्र बन गये है।

श्री ब्रून्स के अनुसार विश्व के धरातल पर उत्तरी और दक्षिणी ठंडे और गरम कटिबन्धो के बीच के सीमान्तक (Transitional) क्षेत्र मिलते है जिनमे अफ्रीका और यूरोप मे अधिक जनसख्या का निवास पाया जाता है। इनके अनुसार अफ्रीका और यूरोप के विभिन्न जलवायु खडो मे रेखांकित प्रदेश ही अधिक जनसख्या वाले भाग है—[५३]

कटिबन्ध	जलवायु	प्रदेश
१. उत्तरी शीत कटिबध	ठंडे और शुष्क	लैपलैंड
	ठंडे और तर	स्कैंडेनिविया के वन तथा रूस
२. सीमान्तक कटिबंध या	शीतोष्ण कटिबध	यूरोप के आध्र महासागरीय तट, और भूमध्यमहासागरीय क्षेत्र
३. उष्ण कटिबंध	गर्म और शुष्क	सहारा
	सीमान्तक	सूडान
	गर्म और तर	कागो वन

52. *J. Fairgrieve*, **Geography and World Power**, 1921, p 3.
53. *Brunhes*, **Op. Cit.**, p. 101.

जनसंख्या घनत्व के कारण

श्री ब्लाशे ने जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले तत्वों में दो बातों को प्रमुख माना है।[39]

(१) पराजय या परावर्तन के कारण घनत्व (Density as a Result of Retreat)

मानव इतिहास में यद्यपि युद्ध और आक्रमण आदि कुछ ही समय हुए हैं किन्तु कुछ प्रदेशों में, विशेषकर स्टैपी में (जो मंगोलिया से तुर्किस्तान तक अथवा अरब से मगरेब तक फैला है) सदैव ही अन्य प्रदेशों की अपेक्षा ऐसे युद्ध अधिक हुए हैं। इन युद्ध के अखाड़ों में मनुष्यों को सदैव निरंतर आक्रमणों और तदजनित युद्धों और पराजयों का फल भोगना पड़ा है। पूर्वी अफ्रीका में मसाई जाति और दक्षिणी अफ्रीका में काफिर जाति का यही इतिहास रहा है। उत्तरी और दक्षिणी अमरीका में भी रॉकी और ऐंडीज पर्वतो पर रहने वाली ब्लैक-फीट जाति मैदानों में बढ़कर सदैव लूटमार करती रही। ऐसे भागों से लोग सुरक्षा और शरण प्राप्त करने के लिए अन्यत्र क्षेत्रों को चले जाते थे और उनके स्थान पर विजेता आकर बस जाते थे। इसी प्रकार कबीलिया के पर्वत, साब का नखलिस्तान, और तुआत व तिफलित के नखलिस्तान की अतिरिक्त जनसंख्या का कारण इसी प्रकार की ऐतिहासिक घटनायें माना जाता है।

यूनान के जुड़े हुए प्रायद्वीप और विशेषकर पड़ोसी द्वीप तुर्कों की विजय के कारण ही अधिक घने बस गये। इन्हीं तुर्कों ने स्पेन के पठारी भाग से लोगों को जंगलों की ओर खदेड़ कर उनकी भूमि पर अधिकार कर लिया। अल्जीरिया, यूक्रेन और काकेशिया का इतिहास भी इसी बात को दोहराता है। काकेशस और बाल्कन द्वीप के पर्वत युद्धों में सदैव मनुष्यों को शरण प्रदान करते रहे जिसके कारण पर्वतीय क्षेत्रों की जनसंख्या का घनत्व बढ़ गया था।

(२) एकेन्द्रीकरण के फलस्वरूप घनत्व (Density as a Result of Concentration)

मनुष्य ने आरम्भ से ही अपने निवास के लिए ऐसे स्थानों को चुना जिन पर खेती करना सरल था। यही वे स्थायी रूप से बस गये, जबकि निकटवर्ती क्षेत्र बिल्कुल शून्य पड़े रहे। सूडान में खेतिहर बस्तियों के विस्तार में मुख्य बाधा उनके अपर्याप्त औजार और कृषि-सबंधी ज्ञान की कमी रही है अत: इनका क्षेत्र सीमित रह गया। यूरोप में सामूहिक साहस-कार्यों में व्यवस्थित योगदान, उत्तम औजारों का आविष्कार और ऐसे पौधों का उत्पादन जो साधारण भूमि पर भी पनप सकें और कृषि में वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग के कारण एक प्रदेश एक ही इकाई बन गया है। किन्तु इसके विपरीत चीन और जापान जैसे देशों में फसलों का उत्पादन मैदानों अथवा निचले पहाड़ी भागों तक ही सीमित है जबकि पर्वतो का प्रयोग पशु-चारण के लिए भी नहीं किया जाता। श्री ब्लाशे के शब्दों में "भूत और वर्तमान तथ्यों से हमको यह ज्ञात होता है कि अति-जनसंख्या उत्त प्रवृति या आवश्यकता

39. *Blache*, **Op. Cit.**, pp., 63-67.

प्रो० ब्रून्स के अनुसार "प्रत्येक राज्य और वास्तव में प्रत्येक मानव अधिवास एक छोटी मानवता, कुछ मिट्टी और थोडे से जल का सामूहिक रूप है।"[५७] वास्तव में जल समस्त मानव जीवन का जीवनदायक स्रोत है इसी तथ्य को श्री ब्लाशे ने इस प्रकार व्यक्त किया है "जहाँ कहीं मनुष्य जीवन की तनिक भी गुंजायश है वही आबादी हो गई है जहाँ यदि नाम मात्र को भी जल है या जहाँ जल मिलने की सम्भावना मात्र है, मनुष्य ने उन भाग्यशाली स्थानो पर कुएँ खोदकर अपनी जल संबंधी आवश्यकताओ को पूरा कर लिया है। "जहाँ पर अन्य स्थानो की अपेक्षा जल पर अधिक नियन्त्रण किया जा सकता है, वहाँ जनसख्या केन्द्रित हो जाती है।" ईरानी कहावत के अनुसार "जहाँ कही जल और अच्छी मिट्टी है वही कृषक मिलता है।"

जिन प्रदेशों मे वर्षा बहुत ही कम अथवा बहुत ही अधिक होती हैं, वे भी जनसंख्या के निवास के लिए अनुकूल नही होते। कम वर्षा के कारण कृषि-कार्य सभव नही होता और अधिक वर्षा के कारण मिट्टी का उपजाऊपन बह कर चला जाता है, उसका क्षरण होने लगता है तथा आर्द्रता के कारण घनी वनस्पति उग आती है जिसको साफ करना कठिन हो जाता है। इस अत्यधिक वर्षाके कारण ही अमेजन नदी के लगभग २० लाख वर्ग मील क्षेत्र मे जनसंख्या का घनत्व केवल २ मनुष्यो का पाया जाता है।

इस सम्बन्ध मे प्रो० ब्रून्स का कथन सत्य प्रतीत होता है। "कम वर्षा की भाँति अत्यधिक वर्षा भी जनसंख्या के केन्द्रीयकरण और विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है अत: मानवता का सबसे बडा और सबसे सुन्दर विकास इन क्षेत्रों के मध्यवर्ती भागो मे ही हुआ है। यह सदैव ही माध्यमिक खंड रहे हैं जिन्हे जनसंख्या का पालना कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।"[५८] वास्तव मे "The distribution of human beings in very often is direct proportion to the distribution of water. (Brunhes)

विश्व के विस्तृत अर्द्ध-आर्द्र भागो मे और भारत के अधिकतर दक्षिणी पठार के ऊपर सामान्यत: साधारण वर्षा होती है। यहाँ वर्षा का औसत भी एक साल से दूसरे साल बदलता रहता है। ऐसे भागो में वर्षा की अनिश्चितता खेतों के के लिए बड़ी हानिप्रद सिद्ध होती है। सिंचित क्षेत्रो के अतिरिक्त अन्य भागों मे कम वर्षा के कारण कृषि की पैदावार पर बड़ा विपरीत प्रभाव पडता है। ऐसे भागो को आवास की दृष्टि से स्पष्ट ही सीमान्तक (Marginal) प्रदेश माना जा सकता है।

भारत मे जनसख्या का घनत्व बहुत अधिक वर्षा की मात्रा पर निर्भर करता है। जिन प्रदेशो मे मिट्टी तथा प्राकृतिक रूप से सिंचाई के लाभ उपलब्ध हैं

---

57 "Every state and indeed, every human establishment in an amalgam made of a little humanity, a little soil and a little water." —*Brunhes*, **Op. Cit.**, p. 40.

58. "Excessive rainfall, too, like a shortage of rain, militates against an excessive growth of population, so that the greatest and best development of humanity is found in areas lying between these two extremes. It is always the intermediate zones that are the greatest cradle of population."—*Brunhes*, **Op. Cit.**, p. 46.

लेखकों ने भी कम जनसंख्या के वितरण पर जलवायु के प्रभाव को यही महत्व दिया है।[४४]

विश्व में सबसे कम जनसंख्या वाले भाग ठंडे प्रदेश है। उत्तरी गोलार्ध के उच्च अक्षांश में महाद्वीपों की भूमि का लगभग १०% भाग आता है किन्तु वहाँ समस्त विश्व की कुछ ही हजार जनसंख्या रहती है। एटार्कटिका महाद्वीप का क्षेत्रफल लगभग ५,५००,००० वर्गमील है और जो यूरोप का ४० गुना बड़ा है, वहाँ एक भी मानव स्थायी रूप से नहीं रहता। इसी प्रकार ग्रीनलैंड में भी जिसका क्षेत्रफल १० लाख वर्गमील है और जो भारत का लगभग आधा है, २५००० मनुष्यों से अधिक नहीं रहते। कनाडा के यूकन, उत्तरी पश्चिमी प्रदेश और फ्रैंकलिन के उत्तरी-पूर्वी जिलों का क्षेत्रफल लगभग २० लाख वर्गमील है किन्तु जनसंख्या केवल ३५,००० ही है। अलास्का और रूस के उत्तरी प्रदेश आदि सभी ठंडे क्षेत्रों को मिलाकर ६४ लाख वर्गमील क्षेत्र में जनसंख्या प्रायः शून्य सी है।

यहाँ अत्यधिक ठंड के कारण सांस की बीमारियों से मृत्यु संख्या बढ़ जाती है।[४५] इन प्रदेशों की अन्य जलवायु सम्बन्धी बातों (लम्बी रात्रियों और सूर्य ताप की न्यूनता) का मनुष्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। पैदावार की मौसम के छोटे होने से इन प्रदेशों की उत्पादन शक्ति भी बड़ी मात्रा में घट जाती है।

श्री बेकर ने अनुमान लगाया है कि भूपटल का ६४ लाख वर्गमील भाग इतना ठंडा है कि वहाँ पैदावार हो नहीं सकती।[४६] ऊँचे तापक्रमों का भी आबादी के वितरण और घनत्व पर बड़ा प्रभाव होता है। इसके द्वारा कीड़े, मकोड़ों, पौधों के कीटाणुओं, वनस्पति आदि की शीघ्रता से बढ़वार होती है। फलस्वरूप ऐसे भागों में आवास कम हो जाता है। अफ्रीका के विस्तृत भाग पौधों और पशुओं की बीमारियों के कारण नितान्त ही बेकार पड़े है। ऊँचे तापक्रमों के साथ आर्द्रता होने पर मनुष्य और उसकी कार्यशक्ति पर बड़ा हानिप्रद प्रभाव पड़ता है। इसी कारण यूरोप-निवासी उष्ण व आर्द्र भागों में बहुत ही कम संख्या में रहते पाये जाते हैं।[४७]

एक तानाशाह की तरह जलवायु यह निर्धारित करती है कि विश्व के किन भागों में मनुष्य निवास करें। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध भूगोलशास्त्री प्रो० ब्लाचे का कथन है कि "सबसे अधिक जनसंख्या के केन्द्र कर्क रेखा और ४०° उत्तरी अक्षांशों के बीच ही सीमित हैं, क्योंकि यहाँ का जलवायु न तो अधिक गर्म है और न ही अधिक ठंडा। यहाँ की गर्मी में पेड़-पौधे भली भाँति पनप सकते है। इसके अतिरिक्त इन प्रदेशों में जलवायु साधारणतः गर्म और वर्षा ऋतु ४-५ महीने वाली होती

44. For example, (i) *E Semple*, **Influences of Geographic Environment,** 1911, p. 10 (ii) *Markham*, **Climate & Energy of Nations,** 1947, p. 38.

45. *Winslow and Herrington*, **Temperature and Human Life,** 1949, pp. 254-255

46. *Baker*, "Population and Food Supply" etc. in **Geographical Review,** Vol. XVIII, No. 3 (1928), pp. 353-373.

47. *Price*, **White Settlers in Tropics,** 1939, pp. 232 & 238.

जरा सा भी सूखा पड़ने से फसलें नष्ट हो जाती हैं। यदि ढालों को कृषि योग्य बनाया भी जाए तो वे मिट्टी के कटाव के शिकार होते हैं।

गंगा के मैदान मे फसलो के सापेक्षिक महत्व में परिवर्तन ४० इंच समवर्षा रेखा के समीप होता है। पूर्व मे चावल मुख्य फसल हो जाती है। गेहूँ और जौ का महत्व घट जाता है। ज्वार बाजरा तो कहीं दिखाई भी नहीं पडता है। आबादी भी अधिकतर पूर्व में ही केन्द्रित देखी जाती है। उड़ीसा और आंध्र के तटीय जिलो में (जहाँ वर्षा ५०" होती है) आबादी का औसत कम पाया जाता है क्योंकि इन जिलो के पश्चिमी भाग पहाडी हैं और पूर्वी भाग दलदली हैं। फिर पहाडी और दलदली भागों के बीच की पट्टी मे आबादी निचले गंगा के मैदान की आबादी की तरह घनी आबाद है। अस्तु, यह कहा जा सकता है कि कम वर्षा वाले भागो मे भी जहाँ जल की सुविधा उपलब्ध है, आबादी के केन्द्र बन जाते हैं। किन्तु श्री जेम्स का कथन है कि मनुष्य जल की सुविधा बढ़ाने के प्रयत्न द्वारा शुष्क प्रदेशो के नगण्य भागो को ही अब तक आवास के योग्य बना सका है।[60] जल के अभाव के कारण शुष्क भागो मे कृषि खनिज और यातायात आदि सभी प्रकार की गतिविधियाँ बढ़ नही पाती।[61]

(३) स्थल रूप (Land Forms)

भूमि की बनावट का भी जनसख्या के वितरण पर बड़ा प्रभाव पडता है। इस तथ्य की सत्यता इसी बात से प्रतीत होती है कि सम्पूर्ण विश्व की जनसख्या का $\frac{8}{10}$ भूमि के उन प्रदेशो मे निवास करता है जो साधारणतः समुद्र के धरातल से १५०० फुट ऊँचे हैं। विश्व के धरातल का १२% पर्वत, १४% पहाड़ियाँ, ३३% पठार और ४१% मैदान हैं। इसके विपरीत भारत की भूमि का ११% पहाड, १८% पहाड़ियाँ, २८% पठार और ४३% मैदान के अन्तर्गत है। मैदानो मे भारत की $\frac{3}{4}$ जनसख्या निवास करती है। मैदानो मे जीवन निर्वाह की सुविधा सबसे अधिक पाई जाती है—यथा कृषि, उद्योग तथा औद्योगिक क्रियाएँ। विस्तृत भूतल के सपाट होने से आवागमन के मार्गों की सुविधा भी होती हैं जिससे मनुष्य का विचरण सरलता से हो सकता है। अतः मैदान मे जनसख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है। वास्तव मे प्राचीन सभ्यता के केन्द्र—जहाँ जनसख्या पूरी प्रकार जमा थी इन्ही मैदानो मे स्थित थे। यही सभ्यता जन्मी और विश्व के अन्य भागो मे फैली। ये भाग क्रमशः दजला और फरात, सिन्धु, गगा यांग्टीसीक्यांग और नील नदियो तथा ह्वांग्हो के मैदान हैं। वर्तमान काल मे भी प्रायः सभी बडे औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्र जो घनी आबादी के केन्द्र हैं—मैदानो मे ही पाये जाते हैं जबकि उच्च पर्वतीय प्रदेश निर्जन हैं। विश्व के बहुत ही थोडे नगर पहाडो मे बसे हैं। यही कारण है कि उच्च हिमालय, आल्पस, रॉकी, एण्डीज, पामीर का पठार, काकेशस पर्वत, मैक्सिको के सियरा माद्रा, स्कैंडेनेविया के ऊँचे पर्वत, उत्तरी-पूर्वी साइबेरिया के पर्वत, अथवा मध्य एशिया के पहाडी भाग मानव से शून्य हैं जबकि गगा, राइन अथवा सेंट लॉरेन्स के मैदान मानव निवास से परिपूर्ण हैं। भूमि की अत्यधिक ऊबड़-खाबड प्रकृति और समतल भूमि के अभाव के कारण ही दक्षिणी पूर्वी राजस्थान, असम और दक्षिणी पठार पर बडे-बडे शहरो का विकास नही हो सका है। ऊबड़-खाबड प्रकृति वाले प्रदेश मे आबादी के विकास मे निम्न

60. *U. N. O.*, **Determinents & Consequences, Etc.,** p. 166.

61. **Ibid,** p. 165 ; *Blache*, **Op. Cit.,** pp. 32-35.

विश्व के गर्म और शुष्क मरुस्थल अधिक गर्मी और जल के अभाव में मानवता से शून्य हैं। यह सच ही कहा गया है कि विश्व की सभ्यता मे मरुस्थल बड़ी खाइयाँ हैं।[५०] इन मरुस्थलों के जहाँ कहीं भूमिगत जल पातालतोड़ कुओं के रूप में मिल जाता है वहीं जनसंख्या पाई जाती है, अन्यत्र क्षेत्र बिल्कुल निर्जन होते है। हमारे देश मे भी अर्ध मरुस्थली भागों मे आबादी का घनत्व प्रति वर्ग मील १२ से ६ व्यक्ति पाये जाते है। पूर्वी हिमालय मे औसत ६ व्यक्ति और पश्चिमी हिमालय मे २१ व्यक्ति पडता है। मरुस्थली भागों मे भी घनत्व मे बडा अन्तर देखा जाता है, जैसे प्रति वर्ग मील आबादी का घनत्व गगानगर जिले मे ७७, बीकानेर में ३२, चुरू मे ८१, जोधपुर मे ८०, बाड़मेर मे ४३, जालोर मे ६४, पाली में १११ और जैसलमेर में ७ व्यक्ति है। पश्चिमी हिमालय में यह औसत जम्मू और काश्मीर में ५१, कांगडा मे ८८, हिमाचल प्रदेश में १०२, गढ़वाल मे ११४, नैनीताल मे १२७ और अलमोडा मे १४१ है। इसके विपरीत पूर्वी हिमालय में नागा की पहाडियो मे औसत केवल ४८ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। अर्ध-मरुस्थली भाग न केवल अत्यधिक गर्म ही है किन्तु इनमे पानी की भी बड़ी कमी पाई जाती है। पूर्वी भाग बहुत ही आर्द्र और मलेरिया-ग्रस्त है और पश्चिमी भाग शुष्क है। फलस्वरूप इन सब भागों मे आबादी का घनत्व बहुत ही कम है।

इसके विपरीत अर्द्ध-उष्ण भागों और गंगा के निचले तथा ऊपरी मैदानी भागो (उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बगाल सहित) मे जहाँ ४-५ महीने की साधारण गर्म और वर्षा वाली मौसम होती है तथा जाडे में भी सर्दी साधारण होती है, पेड पौधो के विकास के लिए बडी अच्छी अवस्थायें प्रदान करती है। इसी कारण इन भागो में रबी और खरीफ की दो फसलें सरलता से पैदा कर ली जाती है। फलस्वरूप यहाँ अकाल पड़ने का कोई डर नही रहता। इन्ही उत्तम अवस्थाओ के कारण ये भाग घने आबाद हो गये हैं। गगा की घाटी तो इतिहास के प्रारंभिक समय से ही घनी जनसख्या से पटी हुई है। उत्तरी पश्चिमी यूरोप की सामुद्रिक जलवायु और पूर्वी सयुक्त राज्य अमेरिका की आर्द्र-महाद्वीपीय जलवायु भी बडी उत्तम है। यहाँ की जलवायु मानव की कार्य क्षमता को बढाने वाली, उसे फुर्तीला, चुस्त और उत्साही बनाने वाली है। अतः इन भागो मे भी जनसख्या का भारी केन्द्रीयकरण हुआ है।[५१]

श्री हंटिंगटन के अनुसार उत्तर-पश्चिमी यूरोप उत्तर-पूर्वी सयुक्त राज्य, प्रशान्त महासागरीय तटीय सयुक्त राज्य, दक्षिण पूर्वी आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड उन्नत सभ्यता वाले देश हैं क्योकि इनमे जलवायु की कठोरता वाले क्षेत्र मिलते हैं। इनके अनुसार मानवीय विकास के लिए सामान्यतः वार्षिक तापक्रम ठडे महीने में ४०° फा० से कुछ कम तथा गरम महीने में ७०° फा० तक होना चाहिए। शुष्क मौसम को छोडकर अन्य ऋतुओं मे सापेक्षिक आर्द्रता सामान्यतः ऊँची होनी चाहिए और वर्षा सभी ऋतुओ में। चक्रवातीय तूफानों का क्रम निरंतर बना रहना चाहिए जिससे तापक्रम और आर्द्रता मे बहुधा सामान्य परिवर्तन होते रहे। भूमध्यसागरीय तथा

---

50. "The deserts are the gaps in world's civilization"—*Freeman & Raup*, **Op. Cit.**, p. 408.

51. *Huntington, E.*, **Civilization and Climate**, 1924, pp. 291-324 and pp. 387-411.

मे तेहरान, हमादान, इस्कतान, मगर तथा अफगानिस्तान मे काबुल, ३७०० से ५८०० फीट के बीच पाये जाते है जबकि ल्हासा तो १२७०० फीट की ऊँचाई पर बसा है। ग्याग्टसी, १३००० फीट और फारी १४००० फीट तथा मैक्सिको मे अधिकाश नगर ६५००० फीट की ऊँचाई पर मिलते है। यही बात वोलीविया, इक्वेडोर, पीरू आदि देशो के बारे मे सही है। उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो मे नीचे भाग अस्वस्थ्यकर होते है अत. जनसख्या ऊचे भागो मे ही मिलती है।

(४) भूमि की उर्वरा शक्ति (Natural Fertility of Land)

भूमि की उर्वरा शक्ति भी किसी स्थान विशेष पर जनसंख्या को आकर्षित करती है। कई स्थानो पर जलवायु, स्थल रूप और पहुँचने की सुविधा एक समान होते हुए भी यदि वहाँ की मिट्टी के गुण आदि के बातो मे भिन्नता होती है तो वहाँ आबादी के घनत्व और भूमि के उपयोग मे कई स्थानीय भेद उत्पन्न हो जाते हैं। यदि हम समस्त विश्व को ध्यान मे रखें तो हम पृथ्वी को मिट्टी की किस्मो की दृष्टि से कई भागो मे बॉट सकते हैं।[६५] श्री बुलफेंगर न बताया है कि ऊँचे और मध्यवर्ती अक्षासो मे पोडजोल लेटराइट मिट्टियां कृषि के लिए ठीक नही होती फिर भी महाद्वीपो मे पाई जाती है। इन मिट्टियो को सुधारने मे बडी वैज्ञानिक और आर्थिक समस्यायें आ खडी होती हैं।[६६] उष्ण प्रदेशो की लैटेराइट मिट्टियाँ स्पष्टतया कमजोर होती हैं। ये निरन्तर गहरी और निरन्तर खेती के लिए अनुपयुक्त होती है।[६७] अत ऐसी मिट्टियाँ सदा ही कम जनसख्या को आकर्षित करती है, जैसा दक्षिण के पठार पहाड़ियो मे, उडीसा के पूर्वी घाट प्रदेश, राजमहल की पहाडियो, दक्षिणी महाराष्ट्र और असम के कुछ भागो मे देखा जाता है। श्री पारसन का तो मत यह है कि उष्ण भागों की उत्तम लैटराइट मिट्टी पर झूमिग प्रणाली की खेती ही सर्वाधिक उपयुक्त हो सकती है जिससे स्थाई वार्षिक उत्पादन बनाया रखा जा सकता है।[६८] अफ्रीका के उष्ण भागो, असम, निम्न हिमालय और बोर्नियो, सिलेबीज, न्यूगिनी आदि क्षेत्रो मे इसी प्रकार की खेती की जाती है किन्तु ऐसी खेती के साथ आबादी बहुत कम मिलती है।

इसके विपरीत गहरी कच्छारी मिट्टियो मे उपजाऊ तत्व अधिक होते हैं।[६९]

---

65. *Kellogg*, "Soil and Society" in 'Soils and Man' **Year Book of Agriculture**, 1950, p 865.

66. *Wolfanger*, "World population Centres in Relation to Soils in Report of the 15th Annual Meeting," **American Soil Survey Asson. Bulletin**, XVI, (1935), p. 7.

67. *Wolfanger*, "6 Major Soil Groups and Some of their Geographical Implications." **The Geographical Review**, Vol. XIX, No. I (1929), p. 103.

68. *Parrsons*, **"Potentialities of Tropical land" Geographical Review**, Vol. XLI, No. 3 (1951), pp. 503-505.

69. "Enormous layers of alluvium not only responded to the call of the plough but was also of the best geographical conditions for the age-long sedimentation of human alluvium in these land." —*Blache*, **Op. Cit.**

	सीमान्तक	ऊपरी जम्बेसी तथा ऊपरी कांगो प्रदेश
	गर्म और शुष्क	कालाहारी
४. दक्षिणी सीमान्तक कटिबंध		दक्षिण अफ्रीका के तटीय प्रदेश
५. दक्षिणी शीत कटिबंध	शीत और शुष्क शीत और तर	महासागर

एशिया और अमरीका में जलवायु कटिबंध यूरोप से भिन्न हैं। एशिया में ये कटिबंध सामान्यतः उत्तर की ओर खिसक गये हैं, क्योंकि तिब्बती प्रदेश में ताप-क्रम एक दम कठोर हो जाते हैं (अप्रैल से अक्टूबर तक) जिसके कारण मानसून काल में वर्षा होती है। अमरीका में भू आकृतियाँ उत्तर से दक्षिण में फैले होने के कारण जलवायु कटिबंध अक्षांश-देशान्तरों के सहारे मिलते हैं।

अस्तु, श्री ब्रून्स के शब्दों में "सीमान्तक कटिबंध ही वास्तव में मानव द्वारा आवासित है और यही प्राचीनकाल की सभ्यताओं का जन्म हुआ—दूसरे शब्दों में यही कटिबंध मानव-भूमि (Human Lands) हैं। इनके अन्तर्गत चीन, भारत और सूडान जैसे उष्ण-कटिबंधीय मानसूनी वर्षा वाले देश, भूमध्यसागरीय शीतकालीन वर्षा प्रदेश, अफ्रीका के दक्षिणी भाग, द० पूर्वी आस्ट्रेलिया और कैलीफोर्निया, तथा सं० राज्य के उत्तरी क्षेत्र हैं।"[५४]

(२) जल प्राप्ति (Water Supplp)

किसी भी क्षेत्र की जनसख्या का घनत्व वहाँ की जल प्राप्ति की अवस्थाओं पर निर्भर करता है। वर्षा की कमी धरातल के विशाल भागों को आवास के लिये बेकार कर देती है। श्री बेकर के अनुसार धरातल की केवल १ ५ करोड वर्गमील भूमि खेती के लिये बहुत ही शुष्क है। सहारा, कालाहारी, अटाकामा, सोनोरा, संयुक्त राज्य का पश्चिमी अन्तपर्वतीय पठार आस्ट्रेलिया का शुष्क हृदय, अरब और संलग्न क्षेत्र, थार, गोबी, ऑरडोस और तकला मकान के मरुस्थल, रूस के किजलीकुम तथा कराकुम और अर्जेनटाइना के पेंटेगोनिया तथा उत्तर-पश्चिमी भाग इसी प्रकार के शुष्क प्रदेश हैं। परन्तु श्री जेम्स ने बताया है कि मरुभूमियों (जो समस्त धरातल के १८% के लगभग हैं) में सम्पूर्ण विश्व की ४% आबादी रहती है।[५५] वर्षा की कमी से न केवल जलपूर्ति में ही कमी पड जाती है, अपितु मिट्टी की नमी भी घट जाती है, जिसके फलस्वरूप वहाँ पशु सख्या भी सीमित रह जाती है। ऐसी अवस्थाओं में कृषि का विकास नहीं हो पाता। कृषि के अभाव में यहाँ व्यापार और उद्योग-धन्धों के विकास की सभावनायें भी सीमित हो जाती हैं।[५६]

54. *Brunhes*, **Op. Cit**, p. 102.

55. *Baker*, **Ibid**, p. 355, *James, P.*, **Geography of Man**, p. 39; *E. Semple*, **Op. Cit.**, p. 483 and 504; *Brooke*, **Climate and Future.**

56. Settlement "In Climate & Man," **Year Book of Agriculture**, 1941, pp. 232—233.

पठार, अफ्रीका के ईथोपिया के पठार, ब्राजील का पुराना पठार तथा उत्तरी-पश्चिमी संयुक्त राज्य अमरीका के कोलम्बिया के पठार पर तथा उष्ण कटिबन्धीय और शीतोष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों के घास के मैदान में मिलती है। इनमें सुगमता से हल चलाया जा सकता है तथा थोड़े ही श्रम में कृषि उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, अतः स्वभावतः ही ये क्षेत्र अधिक जनसंख्या वाले होते हैं।

दक्षिण के लावा प्रदेश में यद्यपि काफी भूमि पर खेती होती है परन्तु जनसंख्या का घनत्व १७० से ३०० व्यक्ति प्रति वर्ग मील ही है। घाटों के समीप मालनद (Malnad) में गहरी रेगर मिलती है। यहीं जनसंख्या का घनत्व भी सबसे अधिक है। हैदराबाद के पूर्व में और पश्चिम में मराठवाड़ा और तैलगाना में आबादी के घनत्व में थोड़ा अन्तर पाया जाता है। इसका कारण यह है कि पश्चिम में अच्छी काली मिट्टी पाई जाती है जो सिंचाई के उपयुक्त नहीं है और वर्षा भी कम होती है। पूर्व में यद्यपि हल्की मिट्टियाँ मिलती हैं किन्तु वर्षा अधिक होती है और सिंचाई संभव है। अतः दोनों भागों में सन्तुलन रहता है। मराठवाड़ा में प्रायः गाँव बड़े और समान दूरी पर बसे हुए मिलते हैं। किन्तु गंगा की घाटी और पूर्वी तटीय मैदान की तुलना में यहाँ गाँव की यह दूरी बहुत अधिक होती है। जहाँ कहीं जल की सुविधा मिलती है वहीं अधिकतर (मुख्यतः घाटियों में कुओं के पास) गाँव बसे हैं। तैलगाना में इसके विपरीत भूमि पहाड़ी होने से गाँव तालाबों के निकट पाये जाते हैं।

अस्तु, यह कहा जाता है कि जहाँ न केवल भूमि बहुत उपजाऊ ही है अपितु सरलता से हल चलाने योग्य भी है वहीं आबादी के वर्तमान और भूतकालीन केन्द्र स्थित है।[७३] एक बार ऐसे क्षेत्रों में जनसंख्या का जमाव हो जाता है तो जनसंख्या का घनत्व बढ़ता जाता है। मानव अपनी संस्थायें बनाता है और अपनी क्रियाओं को क्षेत्र विशेष में केन्द्रित करता है किन्तु उसका पड़ौसी क्षेत्र निर्जन और उजाड़ होता जाता है।[७४]

५. फसल की प्रकृति (Nature of Crop)

प्रदेश विशेष में पाई गई फसलों की किस्म का भी वहाँ की जनसंख्या के घनत्व पर प्रभाव पड़ता है। यह देखा जाता है कि जिन प्रदेशों में चावल मुख्य फसल है, जैसे (चीन, इन्डोनेशिया, जावा, द० पूर्वी एशिया के अन्य देश, जापान और भारत पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, मलाबार, कोंकण और तटीय मैदान), वे घनी जनसंख्या के क्षेत्र हैं। किन्तु जिन भागों में गेहूँ की प्रधानता है वहाँ अपेक्षतया आबादी का घनत्व कम है। चावल उत्पादन क्षेत्रों में फसलों का ऐसा सामंजस्य होता है कि वे अधिक कीमती ही नहीं होतीं वरन् अत्यधिक पैदावार देने वाली भी होती हैं। फलतः वे अपेक्षतया अधिक आबादी का पालन पालन-पोषण कर सकती हैं।

चावल उत्पादन क्षेत्रों में फसलों के सामंजस्य के अतिरिक्त अन्य कई ऐसे कारण हैं कि जिससे वहाँ घनी आबादी पाई जाती है :—

(अ) गेहूँ का उत्पादन विभिन्न प्रकार की जलवायु और मिट्टियों में होता है तथा फसलें बोने के बाद इसकी विशेष देखभाल करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

---

73 *Gangulee*, **Op. Cit.**, p. 1.

74. *Blache*, **Op. Cit**, pp. 66.

अथवा जहाँ कृत्रिम रूप से सिंचाई की सुविधा उपस्थित है वहाँ खेती गहरी और विस्तृत दोनो ही प्रणालियो द्वारा की जाती है। अस्तु, जनसंख्या भी घनी पाई जाती है। किन्तु यह देखा गया है कि जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ जनसंख्या का घनत्व कम और जहाँ वर्षा अधिक होती है वहाँ जनसंख्या का घनत्व भी अधिक होता है। गंगा के पूर्वी मैदान में जहाँ वर्षा का औसत ४२ इंच है आबादी का घनत्व अधिक है, परन्तु गंगा के पश्चिमी मैदान मे जहाँ वर्षा का औसत केवल ३०" है आबादी का औसत कम है।[५९]

यद्यपि जनसंख्या के वितरण पर वर्षा की मात्रा का भी प्रभाव पड़ता है किन्तु उसके भी कुछ अपवाद हैं। उदाहरण के लिए असम की जलवृष्टि गुजरात या दक्षिणी भारत की अपेक्षा तीन गुनी अधिक है, किन्तु जनसंख्या कम पाई जाती है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश, बिहार व पश्चिमी बंगाल उन क्षेत्रों की अपेक्षा जहाँ ७५" वर्षा होती है, अधिक घने बसे हैं। इनसे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी क्षेत्र की जनसंख्या और वहाँ प्राप्त होने वाली वर्षा की मात्रा मे गहरा सम्बन्ध है किन्तु ऐसा करने से पूर्व कुछ तथ्यो पर विचार करना आवश्यक है। खेती की सफलता के लिए साधारणत. ४०" की वर्षा पर्याप्त मानी जाती है, इससे अधिक मात्रा कृषि के लिए हानिकारक हो सकती है। यदि वर्षा जल की मात्रा निश्चित मात्रा से कम है अथवा सामयिक अकाल पड़ जाते है तो निश्चय उसके द्वारा खेती प्रभावित होगी और इसका प्रभाव ही परोक्ष रूप से जनसंख्या के घनत्व पर भी पड़ेगा। किन्तु इस अभाव को दूर करने के लिये कृत्रिम सिंचाई के साधनों का सहारा लिया जा सकता है। इसी कारण पूर्वी दक्षिणी मद्रास में (वर्षा ३२") पश्चिमी तट की भाँति ही (जहाँ ११०" वर्षा होती है) अधिक जनसंख्या पाई जाती है। बिहार तथा पंजाब के अधिकांश भाग नहरों द्वारा सुन्दर उत्पादक उद्यानों मे परिवर्तित कर दिए हैं। पंजाब मे सिंचित भूमि का क्षेत्र १९३१ में १३·६७ लाख से बढ़कर सन् १९५१ में १६·१४ लाख एकड़ हो गया। परिणामस्वरूप वहाँ की आबादी का घनत्व भी प्रति वर्गमील २९० से बढ़कर ३४३ हो गया। यही बात राजस्थान और उत्तर प्रदेश में भी देखने को मिलती है। राजस्थान में घनत्व ८९ से बढ़कर १२१ और उत्तर प्रदेश मे ४३९ से ५५७ हो गया। इस अवधि में राजस्थान मे सिंचित भूमि का क्षेत्र ११·७५ लाख एकड़ से १५·९७ लाख एकड़ और उत्तर प्रदेश मे ४६·७८ लाख एकड़ से ६३·२२ लाख एकड़ हो गया था।

इसमे कोई संशय नही कि अपर्याप्त जल मात्रा से फसलें पैदा नहीं की जा सकती किन्तु फसलों का उत्पादन भूमि की रचना पर भी अवलम्बित है। जहाँ भूमि का तल सपाट है वहाँ प्रति इंच पर खेती की जाती है तथा जल प्राप्त करने के लिए नदी नालों का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इन क्षेत्रों मे भूमि का कटाव भी नही होता किन्तु जहाँ भूमि ऊबड़-खाबड़ है वहाँ केवल ढालों के निचले भागो मे ही उपजाऊ मिट्टी मिलती है। जितना अधिक भूमि का ढाल होता है उतना ही अधिक जल तेजी से बह कर चला जाता है और खेती के लिए अधिक तथा समान रूप से अधिक जल की आवश्यकता अनुभव होती है। ऊँचे भागो मे

---

59. *B. N. Gangulee*, **Trends of Agriculture and Population in the Ganges Valley**, 1938, pp. 63—64.

गये किन्तु पूर्वी एंगलिया और पॉन्टिक पहाड़ियाँ जनविहीन हो गई। भारत में भी छोटा नागपुर डिवीजन मे खनिज पदार्थो की प्राप्ति के कारण जनसंख्या बढ़ गई है। इसी प्रकार हीराकुण्ड और दामोदर घाटी योजनाओं के कारण आशा की जाती है कि यह प्रदेश 'भारत रूर' बन जायेगा। अब भी अनेक खनिजो के कारण जमशेदपुर, आसनसोल, रानीगंज, भरिया, चितरंजन आदि स्थानो की जनसंख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। यूरोप में भी जनसंख्या का घनिष्ट सम्बन्ध खनिज केन्द्रों से ज्ञात होता है। रूर, डोनज, साईलेशिया, सार और लोरेन की कोयले की खानो के कारण ये प्रदेश औद्योगिक क्षेत्र होने से बडे घने बसे है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया, पश्चिमी कैलीफोर्निया और दक्षिणी अफ्रीका संघ मे सोने की खोज के कारण ही आबादी शीघ्रतापूर्वक बढ़ गई थी।

संयुक्त राज्य अमेरिका में अप्लेशियन कोयले क्षेत्रों और पेन्सिलवेनिया औद्योगिक क्षेत्रो में ही घनी आबादी केन्द्रित है। जहाँ कोयला और लोहा मिलता है वे उद्योग के लिये आकर्षण केन्द्र बन जाते है। फलत वहीं आबादी का घनत्व भी बढ़ जाता है। ग्रेट ब्रिटेन मे तो आबादी का वितरण वहाँ की खनिज केन्द्रो के अनुरूप ही है। अत यहा आबादी के वितरण की प्रणाली उसके कोयले और औद्योगिक क्षेत्रों के मानचित्र से समझी जा सकती है। औद्योगीकरण के साथ आबादी का बढ़ना एक साधारण बात है। औद्योगिक जीवन-यापन के ढगो द्वारा स्थानीय अकाल का कम डर रहता है, खाद्य पूर्ति की उचित व्यवस्था होती है। अधिक बडे आर्थिक अवसर, शिक्षा की उन्नति और स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाएँ उपलब्ध होती है।[७७]

७. भौगोलिक स्थिति (Geographical Situation)

किसी देश की भौगोलिक स्थिति अथवा उसका यातायात के साधनो से सम्बन्ध होना भी जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करता है। उदाहरणत लदन (८२ लाख), पेरिस (२८ लाख), टोकियो (८३ लाख), मास्को (५० लाख); न्यूयार्क (७८ लाख); शघाई (६६ लाख); बम्बई (४१ लाख) और कलकत्ता (२९ लाख) आदि शहर आबादी के बडे महत्वपूर्ण केन्द्र बन गये हैं। यहाँ आबादी के केन्द्रित हो जाने के पीछे एक मात्र कारण संसार के बाजारों के सापेक्ष इनकी भौगोलिक स्थिति बडी लाभदायक है। यह सभी नगरो के मार्गो के केन्द्रो पर स्थित हैं, जहाँ थोड़ी सी भूमि पर करोडो व्यक्ति रहते हैं।[७८]

आज के व्यापारिक और औद्योगिक आबादी के घने केन्द्रो का आरंभ निश्चय ही संयोगवश हुआ होगा किन्तु उसी क्षेत्र के अन्य केन्द्रो की तुलना मे उनका विकास और विस्तार अधिक लाभदायक भौगोलिक स्थिति होने के कारण ही सम्भव हुआ है। प्रो० जैफरसन के अनुसार विश्व की $\frac{१}{२०}$ जनसंख्या से भी अधिक का निवास केवल १०० बड़े-बड़े नगरो तक ही सीमित है।[७९] कुछ अशो मे यातायात की

---

77. *James*, **Geography of Man**, p. 14.

78. "These cities are the notable nuclear of human agglomerations teeming with millions of lives." *Mammria.*

79. *M. Jafferson*, "Distribution of World's City Folks. A Study in Comparative Civilization"—**Geographical Review**, Vol. 21, (1939), pp. 446-465.

बाधायें आती है : (१) कृषि योग्य भूमि की कमी, (२) प्राप्त कृषि भूमि को बनाये रखने की कठिनाई, (३) कृषि औजारो और यातायात के साधनो के उपयोग मे अपेक्षतया अधिक खर्च, (४) एकान्त शून्यता, (५) मानव की गति विधियो पर ऊँचाई का विपरीत प्रभाव।[62] कुमारी सेम्पल के मतानुसार कुछ खनिज पदार्थों मे धनी भागों और उष्ण प्रदेशो को छोडकर सर्वत्र ही एक निश्चित ऊँचाई के बाद भोजन और आबादी के घनत्व दोनों मे ऊँचाई के साथ-साथ कमी हो जाती है। मैदानी प्रदेशों मे तुलनात्मक दृष्टि से सबसे अधिक सुख-सुविधायें विद्यमान है। फलत: ऊँचे भागो के लोग सदा ही मैदानों मे आकर बसते रहे हैं। अब भी घनी आबादी वाले भागो मे यह प्रवृत्ति देखी जाती है।[63]

यूरोप के भूमध्यसागरीय प्रदेश मे ८०० मीटर से अधिक ऊंचाई पर मानवीय बस्तियो का प्रभाव अभाव है सिवाय इस क्षेत्र के दक्षिणी सिरे के निकट। सियरा नैवेडा पर्वत के दक्षिणी ढालो पर फैले हुए गाँव भी जैतून की उपरी सीमा (१२०० मीटर) से ऊपर नही पाये जाते। यद्यपि सिसली मे जहाँ-तहाँ बडे नगर काफी ऊँचाई पर पाये जाते है—जैसे ९९७ मीटर की ऊँचाई पर कैस्ट्रोगुवानी और हैना नगर तथा ८७८ मीटर की ऊँचाई पर कैलेसिबेटा किंतु द्वीप की अधिकाश जनसख्या ३०० से ८०० मीटर की ऊँचाइयो के बीच मे ही है। मानवीय बस्तियो का क्रम प्राय- उस समोच्च रेखा पर पाया जाता है, जहाँ चेस्टन की अपेक्षा जैतून अथवा अगूर पैदा किया जाता है। इन्ही दोनो फसलो के कारण ही घनी जनसख्या की तरगें अपीनाइन, दक्षिणी वेल्स और सेवीनीज पर्वतो पर सबसे अधिक ऊँचाई पर पहुँच सकी हैं किन्तु अब ये भाग जनविहीन हो रहे है। क्योंकि इन पहाडो के ढालों पर अधिक श्रम करना पडता है और खेतो की निरन्तर मरम्मत और ध्यान देना आवश्यक होता है। अत इन भागो मे जनसख्या मे एक प्रकार का लम्बरूप ज्वार और भाटा अनुभव होता है। पहले इतनी ऊँचाइयों पर सुरक्षा देखी जाती थी, किंतु अब आकर्षण विपरीत दिशा मे पाया जाता है।[64]

किंतु विश्व के अनेक भागो मे ऊँचे प्रदेशो मे भी जनसख्या मिलती हैं। इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

यूरोप के शीतोष्ण जलवायु प्रदेशो मे मानव निवास ज्यों-ज्यों ऊँचाई बढ़ती जाती है, त्यो-त्यो बिखरा हुआ और कम होता जाता है क्योंकि अधिक ऊँचाई पर सास लेने के लिए वायु बडी हल्की हो जाती है। इसी कारण स्विटज़रलैंड की केवल ५% जनसख्या ३२५० फ़ीट (१००० मीटर) से अधिक ऊँचाई पर मिलती है और सम्पूर्ण पर्वतीय प्रदेश में केवल ४४% जनसख्या इस ऊँचाई से अधिक नही मिलती। किन्तु इसके विपरीत अफ्रीका मे एबीसीनिया मे बसा हुआ भाग ४६०० से ८००० फीट की ऊँचाई पर ही मिलता है। यमन मे भी साना नगर ७००० फीट की ऊँचाई पर बसा है जिसके निकट फल और कहवा के उद्यान मिलते हैं। ईरान

62. *E Semple*, **Op Cit.**, pp. 562-563; and *James*, **Geography of Man**, Group VIII.

63. *Faucett*, "The Changing Distribution, of Population" **The Scottish Geographical Magazine**, Vol. 53., No. 3, (1937), p. 366.

64. *Blache*, **Op. Cit.**

सामग्री को बिना किसी प्रकार से उसकी वृद्धि किये हुये भी हमेशा समाप्त करने मे लगी रहती है। इसलिये एक स्थान के कद-मूल-फल समाप्त हो जाने पर उन्हे इधर-उधर घूमना पडता है। अत उनके जीवन-निर्वाह के लिये लम्बे-चौडे प्रदेशो की आवश्यकता होती है। यदि ऐसा न हो तो वे भूखो मर जायें। इन भागो मे उनका मुख्य कार्य पशु-पक्षियो को मारना मछलियाँ पकडना तथा जगली फल-मूल इकट्ठा करना ही है। यही कारण है कि जगली और शिकारी जातियो की आबादी बहुत ही कम हुआ करती है। टुन्ड्रा, साइबेरिया के उत्तरी मैदानो सहारा और अरब की मरभूमियाँ, उत्तरी अमेरिका के वन-प्रदेश अथवा मध्य अफ्रीका, मलाया और अमेजन के घने जगलो मे अथवा दकन के पठार के भीतरी भागो (अरावली, सतपुडा आदि) मे ५०-१०० वर्गमील क्षेत्र मे एक मनुष्य तक ही पाया जाता है। इसी प्रकार मरुस्थलो मे भी—केवल मरुद्यानो को छोड कर सैकडो वर्गमीलो मे एक भी आदमी नही पाया जाता।

(ख) पशु-पालन अवस्था (Pastoral Stage)—शिकारियों की भाँति चरवाहो को अपने पशुओ के लिये बहुत लम्बे-चौडे प्रदेशो की आवश्यकता पडा करती है क्योकि यदि चरागाह अच्छे होने हैं तो पशु चराने वाली जातियाँ वहाँ स्थायी रूप से रहती है अन्यथा चारे की खोज मे इन्हे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकना पडता है। अस्तु, चरवाहे बहुत समय तक एक ही स्थान पर टिक कर नही रह सकते। पहाडी ढालो अथवा घास के मैदानो मे यही हाल होता है। नार्वे, स्वीडेन, स्विट्जरलैंड, स्पेन, अर्जेनटाइना पम्पास, प्रेरी, तिब्बत और मध्य एशिया के भागो मे जनसख्या का घनत्व इसी कारण कम हैं—प्रति वर्गमील पीछे २ से ५ व्यक्ति का।[८३]

(ग) कृषि अवस्था (Agriculture Stage)—मानव के सास्कृतिक विकास की कृषि अवस्था मे एक विशिष्ट खेतीहर प्रदेश प्रति वर्गमील मे ५०० व्यक्तियो का भरण-पोषण सरलता से कर सकता है क्योकि कृषि की देखभाल करने के लिए मानव को एक ही स्थान पर टिक कर रहना पडता है। कृषि मे भी विस्तृत खेती की अपेक्षा गहरी खेती पर अधिक जनसख्या का निर्वाह होना है। विस्तृत खेती पर प्रति वर्गमील २५ से १२५ व्यक्तियो का ही निर्वाह हो सकता है किन्तु गहरी खेती पर यह औसत १२५ से ५०० आदमी पडता है।[८४] इसी प्रकार यदि कृषि भूमि पर घास व मास देने वाले जानवरो को पालने की अपेक्षा खाद्यान्न उत्पन्न किये जायें तो उससे अधिक व्यक्तियो का पोषण होता है।

शाकाहारी भोजन की तुलना मे पशु भोजन पैदा करने के लिये अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। एक एकड भूमि पर १० टन आलू पैदा हो सकता है किन्तु मास का औसत १ से २ हडरवेट ही पडता है। एक पशु अपने भोजन के लिए ५ से १० पौड घास आदि चर जाता है किन्तु मानव भोजन के लिये बदले मे एक पौंड मास ही देता है।[८५]

83 *Semple*, **Op. Cit.**, p. 28

84. *M. Jafferson*, **Principles of Geography**, 1926, p 22.

85. *J. Russel*, **World Population and World Resources**, p. 16.

गंगा का मैदान जो कि कच्छार से ही बना है, लगभग ३,००,००० वर्ग मील मे फैला हुआ है। कृषि की दृष्टि से यह बहुत ही महत्वपूर्ण मैदान है। यह मैदान समस्त देश का १६ प्रतिशत भाग घेरता है। किन्तु यहाँ समस्त देश की ४२% जनसख्या रहती है। यदि हम इसके साथ मद्रास के डेल्टाओ, गुजरात और केरल को मिला दें तो कुल जनसख्या का लगभग आधा भाग मिट्टी के मैदानो पर बसा मिलेगा। गगा के ऊपरी और निचले मैदानो मे अन्य तत्वों के अलावा मिट्टी के उपजाऊपन के कारण ही ११·० करोड लोगो का भारी जमाव सम्भव हुआ है। गगा के निचले मैदान का क्षेत्रफल भारत का ६·६% ही है किन्तु यहाँ कुल आबादी का १६·४% भाग रहता है। यहाँ आबादी का घनत्व प्रति वर्ग मील ८३२ पड़ता है। गगा के ऊपरी मैदान का क्षेत्रफल देश के क्षेत्रफल का ४८% है किन्तु यहाँ १०·८% जनसंख्या निवास करती है। इस क्षेत्र का घनत्व ६८१ मनुष्य प्रति वर्ग मील है। मलाबार कोकन तट का क्षेत्रफल केवल ३% है किन्तु यहाँ ७% जनसख्या पाई जाती है। इसी प्रकार उत्तरी मद्रास और उडीसा के तटीय भागो का क्षेत्रफल ३·६% है किन्तु ५·८% जनसख्या निवास करती है। इन सभी भागो मे मिट्टी की असीम उर्वरा शक्ति तथा पर्याप्त जलवृष्टि के कारण अधिक जनसख्या पाई जाती है। कृष्णा, गोदावरी, कावेरी नदियो के डेल्टे चावल के महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इन भागो में उपजाऊ भूमि तथा मिश्रित खेती के प्रचार होने से ये आबादी के घने क्षेत्र बन गये है।

कच्छारी मिट्टी के मैदान अत्यन्त ही उपजाऊ और घने आबाद हैं किन्तु इसके विपरीत लैटराइट मिट्टी के प्रदेशो मे बहुत छितरी हुई आबादी मिलती है। दक्षिणी पूर्वी एशिया मे ये घने आबाद भाग मुख्यत विशाल बाढ के मैदानो, अन्तर-पर्वतीय कच्छारी मैदानो और अन्य विशिष्ट मिट्टी के प्रदेशो मे मिलते हैं।[70] इसी कारण इन भागो को कच्छारी सभ्यता वाले भाग (Alluvial Civilization) कहा गया है।[71] चीन मे याग्टीसी की घाटी, मिश्र मे नील की घाटी, गगा का निचला मैदान और तटीय मैदान आबादी की दृष्टि से ससार के विशिष्ट स्थान बन गये है। इसका एकमात्र कारण यहाँ बहने वाली विशाल नदियाँ हैं जो भारी मानसून वर्षा के कारण साल भर बहती रहती है। अपने निरन्तर बहाव के कारण ये अपनी घाटियो मे कच्छार की अनेक तहे बिछाने मे सफल हुई है। अत. शताब्दियो से यहाँ हल चलाना सम्भव हुआ है। कृषि की इस सुविधा के कारण ही उन भागो मे शताब्दियो से जन-सख्या का जमाव होता रहा है।[72] यही बात यूरोप के उत्तरी-पश्चिमी मैदान के लिए भी सत्य है। जहाँ भी भूमि की उर्वरा-शक्ति के कारण ही अपार कृषि आबादी पाई जाती है।

काली लावा मिट्टी मे वनस्पति के सडे-गले अश मिले होते हैं तथा नमी को रोकने की क्षमता बहुत अधिक होती है। इस प्रकार की मिट्टियाँ मुख्यत. भारत के

---

70. *U. N. O.* **Determinents of Population Growth,** 1953, p. 334.
71. *Finch & Trewartha,* **Elements of Geography,** 1942, p. 616.
72. *L. D. Stamp,* **Asia,** 1957, p. 508.

अत्यन्त आवश्यक हो जाती है। अत आवागमन के केन्द्र का मुख्य उदाहरण बन्दरग है जहाँ सामुद्रिक तथा स्थलीय मार्ग एक दूसरे से मिलते है और आवागमन के साध मे परिवर्तन हो जाता है। बम्बई, रूआ, ग्लासगो, न्यूकैसल, न्यूयार्क, रायोडी जानेर लन्दन आदि इसके मुख्य उदाहरण है। सिंगापुर तथा लन्दन मध्यस्थो (Entrepot का कार्य करते है। इसी प्रकार डुलूथ और फोर्ट विलियम मे गेहूँ और लोहा रे द्वारा लाया जाता है और इसे झीलो से नाव द्वारा बाहर ले जाया जाता है।

(२) कुछ यातायात के केन्द्र पडोसी क्षेत्रो के बीच द्वार का काम करते है भारत मे उत्तरी मैदान और दक्षिणी पठारी भाग के मिलन स्थल पर ग्वालियर जयपुर, आगरा, रेवाडी, भरतपुर अजमेर, झाँसी, बरेली, गोरखपुर आदि ऐसे ही नगर है। सयुक्त राज्य अमेरिका मे मिनियापोलिस, कन्सास, सेंटपाल, सेंट लुइस, कन्सास सिटी पश्चिमी शुष्क और पूर्वी आर्द्र भागो के बीच व्यापारिक द्वार का काम करते हैं।

(३) जिस स्थान पर पर्वत और मैदानी भाग मिलते हैं वहाँ मैदान की सारी उपज एकत्रित की जाती है और फिर उस बडे बोझ को छोटे-छोटे टुकडो मे बाँट कर पहाडी भागो को भेज दिया जाता है। इन नगरो को सामान तोड नगर (Break of Bulk Town) कहते हैं। यूरोप मे आल्पस पर्वत के दोनो ओर उत्तर और दक्षिण मे तथा एपेलेशियन और रॉकी पर्वतो के सहारे ऐसे ही नगरो की स्थितियाँ पाई जाती हैं। भारत मे हरिद्वार, कालका, देहरादून, काठगोदाम इसके प्रमुख उदाहरण है।

(४) मरुस्थल आवागमन के मार्गों मे बाधा डालते है अत इनकी बाहरी सीमा पर सागरो के तटो की भाँति सारे मार्ग आकर मिल जाते है और स्थल बन्दरगाहो की उत्पत्ति हो जाती है। अफ्रीका मे टिम्बकटू, रूसी तुर्किस्तान मे मर्व और बुखारा इसी प्रकार के नगरो के उदाहरण है। मरुस्थलो मे जहाँ कई काफिले या कारवा मार्ग आकर मिलते है वहाँ भी प्राय नगर बस जाते है। अरब मे रियाध ऐसा ही नगर है।

(५) पहाडी भागो मे पर्वतीय दुर्गम श्रेणियो को पार करने के एक-मात्र द्वार उनमे स्थित दर्रे (Passes or Cols) हैं। इसलिए उन पर नियन्त्रण रखना वहाँ की सरकारो के लिए अत्यन्त आवश्यक है। नियन्त्रण के लिये मुहाने वाले स्थानो पर सैनिक अड्डे (Military Centres) स्थापित किये जाते है। इनकी छावनियाँ (Cantonment) बडी महत्वपूर्ण होती है। देहरादून, मेरठ, सिकन्दराबाद, जबलपुर, पूना आदि भारत के प्रसिद्ध सैनिक केन्द्र हैं। इसी प्रकार जिब्राल्टर, रावलपिंडी, पेशावर, माल्टा, सिकन्द्रिया, डार्विन, सिडनी, क्वेटा, अदन, फोर्टसम, हाऊसटन आदि भी उत्तम प्रकार के सैनिक केन्द्र हैं।

(६) जहाँ कई दिशाओ से आकर रेल-मार्ग या सडकें एक स्थान पर मिलती हैं ऐसे स्थानो पर कई क्षेत्रों की उपज इकट्ठी होती है और वहाँ वस्तु एकत्रित और वितरित करने के केन्द्र बस जाते है। यह सच ही कहा गया है कि "नगर सडको को जन्म देते है और सडकें नगरो को बनाती एव विकसित करती है।"[6] अजमेर,

6. The City creates the road, the road in turn creates the city or recreates it."—*Finch and Trewartha*, **Op. Cit**

अतः इसका उत्पादन उन क्षेत्रों के अनुकूल होता है जहाँ भूमि का विस्तार अधिक होता है, तथा यह कृषि की विस्तृत प्रणाली द्वारा उत्पन्न किया जाता है। कृषि की यह प्रणाली जनसंख्या के निम्न घनत्व को प्रदर्शित करती है, और अधिक घनत्व गहरी खेती वाले प्रदेशों से सम्बन्धित रहता है। प्रो० कार्वर का कहना है कि "यद्यपि विश्व के व्यापार में गेहूँ का महत्व अधिक है किन्तु गहरी खेती की दृष्टि से यह एक दरिद्र फसल है।"[75] जबकि चावल उत्पादन के लिये अधिक देखभाल और निरन्तर श्रम की आवश्यकता पड़ती है। अस्तु, दक्षिणी पूर्वी देशों की नदियों की घाटियों में चावल के खेत तैयार करने, फसल रोपने, उनको अन्यत्र लगाने और तैयार होने तक उनकी देखभाल के लिये अधिक श्रम की आवश्यकता होने से ही अधिक जनसंख्या का जमाव पाया जाता है। इसी प्रकार उन क्षेत्रों में जहाँ चावल हाथ से रोप कर लगाया जाता है उन क्षेत्रों की अपेक्षा जहाँ वह बिखेर कर बोया जाता है वहाँ जनसंख्या का अधिक घनत्व पाया जाता है।

(ब) अन्य फसलों की अपेक्षा चावल का प्रति एकड़ उत्पादन अधिक होता है। अच्छी अवस्था में ५० पौंड बीज एक एकड़ भूमि के लिये पर्याप्त होता है और इसके द्वारा इसकी ७० गुनी अथवा ३५०० पौंड उपज प्राप्त की जा सकती है। यदि चावल के साथ मांस या फलियों आदि का भी उपयोग किया जाय तो एक एकड़ भूमि का उत्पादन वर्ष भर तक ५ वयस्कों को उचित भोजन प्रदान कर सकता है और एक वर्ग मील भूमि पर २०००से भी अधिक जनसंख्या का निर्वाह हो सकता है। इस आधार पर समस्त संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या न्यूयार्क स्टेट के क्षेत्रफल पर निर्वाह कर सकती है।[76] गंगा, ब्रह्मपुत्र, इरावदी, मीनाम, मीकॉग, यॉग्ट्सी-क्यांग, ह्वांगहो और सी नदियों की घाटी में चावल की प्रति एकड़ पैदावार अधिक होने से ही जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है।

(स) चावल की फसल साधारणतः २-३ महीने में पक जाती है और वर्ष भर में उसकी ३-४ फसलें तक उगाई जा सकती है। अतः गेहूँ के अपेक्षा चावल अधिक व्यक्तियों को भोजन दे सकता है।

६. खनिज पदार्थों और शक्ति के साधनों की प्राप्ति (Availability of Minerals & Power Resources)

खनिज पदार्थों या शक्ति के स्रोतों की जहाँ उपलब्धता होती है वहाँ खनिज उद्योगों की आर्थिक क्रिया के फलस्वरूप आबादी बढ़ जाती है। उक्त क्षेत्रों में खनिज पदार्थ पर आधारित कई भारी उद्योग चालू हो जाते हैं जिनमें अधिक आबादी की आवश्यकता पड़ती है। किसी क्षेत्र में खनिज पदार्थों की प्राप्ति घनत्व को दो प्रकार से प्रभावित करती है। जिन स्थानों में नये खनिज मिलते हैं वहाँ पड़ौसी क्षेत्रों से जनसंख्या आकर्षित होने लगती है और धीरे-धीरे आबादी के नये केन्द्र स्थापित हो जाते हैं। इंगलैंड में बर्मिंघम और न्यूकैसिल इसी कारण घनी आबादी के केन्द्र बन

75. *T. N. Carver*, **Principles of Rural Economics,** 1926, p. 157.

76. *E. Huntington & S. W. Cushing*, **Principles of Human Geography,** 1959, p. 284

रोक के कारण ही क्रमश- आबादी मे भारी वृद्धि होने लगी। किन्तु बाद मे कनाडा और आस्ट्रेलिया की नई भूमियो को जाने की स्वतन्त्रता और प्रवास नीति को प्रोत्साहन देने के कारण ब्रिटेन को बडी छूट मिली। प्रशान्त महासागर के अनेक द्वीपो और मन्चूरिया के मैदान मे उत्तरोत्तर आबादी कभी न बढी होती यदि चीन और जापान अपने घने आबाद भागो से लोगो को प्रवास की छूट न देते। इसी प्रकार इण्डोनेशियाई सरकार की चेष्टा से ही जावा की घनी आबादी निकटवर्ती द्वीपो मे जाकर बसी और होर्नेडो द्वीप के मध्य की जनसख्या समीपीय द्वीपो को चली गई। यही नहीं, अनेक देशो की सरकारो ने अपने देश की सीमाओ के भीतर ही, सुरक्षा और सेना की शक्ति बढाने, कम आबाद भागो मे अछूने प्राकृतिक साधनो का उपयोग करने के लिए नया देश मे अधिक आत्मनिर्भरता करने के लिए आबादी के वितरण मे परिवर्तन करने की अथक चेष्टायें की हैं। रूस, स० रा० अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और कई लेटिन अमरिकी देशो ने जनहीन भागो मे नि.शुल्क भूमि देने आदि के तरीके अपना कर विदेशो से लोगो को आकर्षित किया है।

अन्त मे यह स्मरणीय है कि समस्त धरातल पर जनसख्या के वितरण की प्रणाली (जिसमे स्थानीय और प्रादेशिक अनेक विपरीततायें होती है) अनेक कारणो का परिणाम है। इसमें यद्यपि भौगोलिक तत्वो का बडा महत्वपूर्ण योग होता है किन्तु सामाजिक और राजनैतिक कारणो का प्रभाव भी कम नही होता। यहाँ यह स्वीकार करना पडेगा कि ससार के विभिन्न भागो मे जनसंख्या के वितरण की भिन्नता के पीछे कोई एक कारण नही होता बल्कि कई कारण मिले-जुले रूप से कार्य करते हैं। विशेष कर आज के वैज्ञानिक युग मे तो यह बात और भी स्पष्ट हो गई है।

मानव समूह (Human Groups)

अत्यन्त प्राचीन काल मे जब मानव जाति सर्वप्रथम भूमण्डल पर फैली, तब न से क्षेत्रीय विन्यास मे उसने अधिक प्रगति नही की है। आरम्भ मे जनसख्या का जमाव कुछ ही क्षेत्रो तक सीमित था—विशेषत हिन्द महासागर, दक्षिणी और अटलाटिक महासागर के द्वीपो मे शनैं शनैं मानवीय बाढ ने भूमि के अनेक उपलब्ध क्षेत्रो को आच्छादित कर दिया किन्तु दीर्घकाल से बसे हुए दूरस्थ भू-भाग (oikoumene) अब पूर्णत. उसके अधिकार मे आए हैं। इससे जनसख्या के घनत्व मे वृद्धि हुई है किन्तु यह एक समान नही है। सच तो यह है कि क्षेत्रीय विस्तार मे जो कमी रही थी वह मानव ने स्थानीय गहराई मे पूरी करली है।[91]

मनुष्य ने सामूहिक प्रयत्नो द्वारा अपने वातावरण मे पर्याप्त परिवर्तन किया है। इस कार्य मे उसे अपने ही समाज का सहयोग प्राप्त करना पडा है किंतु सामाजिक सहयोग प्रसार-विधियो के विपरीत सिद्ध होता है। यह अवश्य सत्य है कि जब कोई वर्ग या समूह बढता है तो वह अधिक क्षेत्र भी घेरने लगता है, किन्तु उस क्षेत्र मे अनेक छोटे-छोटे समूह पैदा हो जाते हैं। अत मनुष्य अपने इस सामाजिक स्वभाव के कारण बहुसख्यक होने हुए भी अधिक क्षेत्र नही घेरता। प्रो० ब्लाशे ने इस मानव-समूह को दो विशिष्ट श्रेणियो मे बाँटा है। ये समूह अपने किसी विशेष आतरिक गुण के कारण मनुष्यो को बाँधे रहता है। श्री ब्लाशे ने इन्हे अणु-समूह (Molecular Group) और चलवासी समूह (Nomadic Group) की संज्ञा दी है।[92]

91. *Blache*, **Op. Cit.**, p. 49.
92. *Blache*, **Ibid**, pp. 50-59

सुविधाओ के कारण ही आबादी के घने केन्द्र साधारणत. महाद्वीपों के किनारों पर मिलते हैं।

यातायात के साधन आने-जाने की कठिनाई को कम कर देते है। श्री लिवेश्योर के अनुसार किसी प्रदेश की जनसख्या बिखरे हुए केन्द्रो की सख्या द्वारा निर्मित होती है, जिसके चारो ओर कम होने वाले मकेद्र कटिबन्ध होते है। यह केन्द्रो के चारों ओर अथवा आकर्षण रेखाओ पर एकत्र होती है। जनसख्या तेल की बूँद के समान नही फैली; आरम्भ मे वह मूँगे के समान गुच्छो मे बढी। जनसख्या के समूह एक प्रकार से रवे बनने की क्रिया के समान कुछ बिन्दुओं पर एकत्रित हो गये। इन जनसख्याओं ने अपनी बुद्धि से प्राकृतिक स्रोतों और ऐसे स्थानो के महत्व को बढाया जिससे अन्य मनुष्य स्वेच्छापूर्वक अथवा बाध्य होकर, दाय प्राप्ति के लाभो मे भाग लेने लगे, और चुने हुए स्थान पर अधिकाधिक जनसख्या निरन्तर बढने लगी।[८०]

श्री जार्ज ने यह बताया है कि शीतोष्ण कटिबन्ध के दो-तिहाई लोग समुद्र से ५०० किलोमीटर से भी कम दूरी पर रहते है और शेष मे से आधे आन्तरिक भागो मे १००० किलोमीटर से भी कम दूरी पर रहते हैं।[८१] भीतरी भागों मे मरुस्थल, स्टेपी, ऊँचे पर्वत, घने जगल आदि विपरीत अवस्थायें ही इसके मुख्य कारण हैं। जहाँ स्थल या समुद्री यातायात के मार्ग मिलते है उन तटीय क्षेत्रो तथा उनके पृष्ठ-प्रदेशों की विश्व व्यापार के विस्तार के साथ उत्तरोत्तर उन्नति होती जाती है।[८२] भारत मे भी आधुनिक यातायात के विकास के साथ-साथ आबादी शहरों और कस्बो मे केन्द्रित होती जा रही है। एक लाख से अधिक आबादी वाले १११ नगर कुल नागरिक आबादी का ⅓ वें भाग से भी अधिक जनसख्या रखते है।

(८) भरण पोषण की शक्ति (Supporting Capacity)

ससार के विभिन्न प्रदेशों मे भरण पोषण की शक्ति या जीवन-यापन के साधन भी धरातल के ऊपर आबादी के असमान वितरण का कारण है। भरण पोषण की यह क्षमता बहुत अधिक उस प्रदेश की सास्कृतिक अवस्था पर निर्भर है।

(क) शिकारी अवस्था (Hunting Stage)—लकडी चीरने, पशु चराने अथवा शिकार करने मे जो लोग लगे रहते हैं उनकी जनसख्या का घनत्व कम होता है क्योकि एक स्थान के जगल अथवा घास समाप्त हो जाने पर उन्हे विवशत: दूसरी जगहो को प्रस्थान करना पडता है। जगलो मे प्रति वर्गमील आबादी बहुत कम होती है। इसका कारण यह है कि शिकारी जातियाँ अपने आस-पास की प्रकृतिदत्त भोजन-

80. "Population did not spread like a drop of oil; in the beginning it grew in lumps, like Coral Reefs of population collected at certain points by a sort of crystalisation process. These populations, by their intelligence, increased the natural resources and the values of such places so that other man, whether voluntarily or under compulsion, came to share in the advantages of the inheritance and successive layers accumulated on the chosen spot"—*Blache*, **Op. Cit.**, pp. 15-16.

81. *George, quoted in U. N. O.'s* **Determinents Etc.**, p. 168.

82. *Smith & Phillips*, **Industrial and Commercial Geography**, 1946, p. 751, 780.

जब विभिन्न समूह व्यापारिक कार्यों के लिए अथवा यातायात के साधनों के कारण एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, तो न केवल घनत्व में ही वृद्धि होती है वरन् वे एक दूसरे को भी प्रभावित करने लगते हैं। प्रत्येक समूह दूसरे समूह से कुछ सीखता है और आपस में व्यापारिक सामाजिक एवं राजनीतिक सम्पर्क स्थापित कर लेता है। अफ्रीका में भूमध्यरेखीय वन और सवन्ना के सम्पर्क क्षेत्र में जनसंख्या कुछ घनी मिलती है। इसी प्रकार पशु-पालन और खेती हर क्षेत्रों के बीच टैल और सूडान की मरुस्थलीय सीमाओं पर तथा पश्चिमी एशिया के स्टैपी की अनिश्चित सीमाओं पर मंडियाँ और कभी-कभी बड़े नगर या कस्बे स्थापित हो जाते हैं। ऐसे क्षेत्रों को प्राय सघान के स्थान कहा जा सकता है क्योंकि ऐसे क्षेत्र दो विपरीत समूहों को सम्पर्क में लाते है।

घनत्व के केन्द्र और उनकी मध्यवर्ती पेटियाँ

जब छोटे-छोटे समूह विभिन्न समूहों से मिलते है तो वे सब मिलकर बड़े मानव समुदाय या पुंज की रचना कर देते है।। पृथ्वी छोटे-छोटे भागो मे बसी है और प्रत्येक छोटा क्षेत्र निरन्तर वृद्धि करते हुए वृत का केन्द्र रहा है। सबसे अधिक सभ्य देशो मे वृत्त अत मे प्राय एक दूसर को ढक लेते हैं, यद्यपि सदा नही। अनेक घने बसे केन्द्र कालान्तर मे जाकर एक हो जाते है और सम्पूर्ण क्षेत्र को लगभग एकसी सघनता प्रदान कर देते हैं।

वस्तुत सत्य यह है कि मनुष्य ने कुछ ही स्थानों पर बसना अधिक पसद किया है। ऐसे स्थान सदा अत्यन्त उपजाऊ न थे किन्तु उन्हें सुगमता से जोता जा सकता था। जैसे—स्वाबिया, बरगंडी, बेरी आदि के चूना व खड़िया मिट्टी के पठार और दक्षिणी रूस से उत्तरी फ्रांस तक भुरभुरी मिट्टी का प्रदेश जो एक विस्तृत पट्टी के रूप में फैला है और जहा हिम-युग के बाद वनो के जमने मे कठिनाई हुई। यूरोपीय बस्तियो के लिए ऐसे वनो मे साफ किये स्थान अधिक आकर्षक बन गए जहाँ मनुष्य एकत्रित हुए, सलग्न हुए और शक्तिशाली बन गये। दक्षिणी-पूर्वी तथा सुदूर पूर्वी एशिया में जनसख्या का प्रारम्भिक जमाव उपजाऊ नदियों की घाटियों में ही हुआ जहाँ आज भी जनसख्या की अधिकता मिलती है।

विश्व में जनसंख्या का घनत्व

जनसख्या के घनत्व की दृष्टि से विश्व को निम्न स्पष्ट भागो मे बाँटा जा सकता है—

(क) **अधिक घने बसे भाग**—जिनका घनत्व प्रति वर्गमील पीछे २५० व्यक्तियों का मिलता है। इस भाग मे **एशिया** मे गगा, सतलज, सिंध, ब्रह्मपुत्र, याग्ट्सीक्याग, मीनाम, मीकाग, सीक्याग नदियो की घाटियाँ, जापान की औद्योगिक पेटी, अफ्रीका में नील की घाटी और डेल्टा-प्रदेश, **यूरोप** मे पश्चिमी यूरोप की औद्योगिक पेटी जो फ्रास, बेल्जियम, नीदरलैंड, डेनमार्क, और जर्मनी मे होती हुई दक्षिणी रूस तक फैली है, तथा **उत्तरी अमेरिका** मे उत्तरी-पूर्वी औद्योगिक क्षेत्र। इन भागो में कृषि तथा उद्योगों के अत्यधिक विकास के कारण जनसख्या का घनत्व अधिक है।

(ख) **घने बसे भाग**—जिनका घनत्व १२५ से २५० मनुष्यों का है। इस भाग मे भारत, यूरोप, और चीन के कृषि प्रधान क्षेत्र है जिनके बीच-बीच मे औद्योगिक क्षेत्रों की पेटियाँ मिलती है अत कई भागो मे स्थानीय घनत्व ६०० मनुष्य से

गंगा की घाटी के अनेक जिलों मे प्रति वर्ग मील १,००० से २,००० व्यक्ति तक रहते है। चीन नदी घाटियों के कुछ भागों मे यह औसत ४,००० व्यक्तियों तक पहुँच जाता है। पूर्वी भागों में आबादी का यह अपरिमित भार मुख्यत. कृषि पर आधारित है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के विस्तृत मैदानों का भी यही हाल है। वास्तव मे द० पू० एशिया के मानसूनी प्रदेश और यूरोप के शीतोष्ण खंडो मे विश्व की ⅙ भूमि पर सम्पूर्ण जनसंख्या का ⅔ भाग पाया जाता है।

मछली पकड़ने का व्यवसाय भी जनसख्या को एक स्थान पर स्थिर रहने के लिये बाध्य करता है। फलस्वरूप वहाँ घनी आबादी पाई जाती है। दक्षिणी चीन, जापान के तटीय प्रदेश, ब्रिटिश कोलम्बिया, इग्लैंड और भारत के पश्चिमी तट के निकट और गंगा के डेल्टे मे इसी कारण असख्य मछुओं की बस्तियाँ देखी जाती है।

(च) **औद्योगिक अवस्था** (*Industrial Stage*)—मानव विकास की औद्योगिक और व्यापारिक अवस्था मे एक प्रदेश की पोषण शक्ति अत्यधिक बढ जाती है। यही कारण है कि ससार के कुछ औद्योगिक प्रदेश जैसे, सार, रूर, लकाशायर, पेन्सिलवेनिया और हुगली आदि प्रति वर्ग मील ५०० से ८०० व्यक्तियों का निर्वाह करते है। व्यापार आदि के निमित्त भी अनेक क्षेत्रो मे जनसंख्या का जमाव हो जाता है। आधुनिक युग मे इसी कारण कई देशों मे दानव नगर (Giant Dinossaur Cities) उत्पन्न हो गये है। वस्तु, साधारणत जिन क्षेत्रो में शिकार करना, पशु पालना, लकडी काटना आदि व्यवसाय किये जाते है वहाँ जनसख्या का घनत्व कम होता है किन्तु कृषि या उद्योग प्रधान देशो मे अधिक होता है।[86] वास्तव में विश्व मे घनी आबादी के केन्द्र वही हैं जहाँ अनेक प्रकार की गति विधियाँ एक साथ चलती है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक आर्थिक किया कुछ न कुछ अंशो में अन्य आर्थिक क्रियाओं से सम्बन्धित होती है। विश्व व्यापार और कल कारखानों के विकास और कृषि के यन्त्रीकरण ने जनसख्या के वितरण की प्रणाली को ही बदल दिया है। बड़े-बड़े औद्योगिक देश अपने भोजन की पूर्ति दूर देशो से आयात कर पूरी कर लेते है। इस प्रकार आबादी का अधिक से अधिक केन्द्रीयकरण कुछ राजधानी क्षेत्रो मे ही होता जाता है।[87]

यूरोप के औद्योगिक क्षेत्रो मे जनसख्या का विन्यास—[88]

यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र	क्षेत्रफल (००० वर्गमील मे)	जनसख्या (लाख मे)	घनत्व प्रति वर्गमील
फ्रांस (भूमध्यसागरीय ब्रिटेनी प्रदेश को छोडकर,)	१७८·८	३६३	२२१
पश्चिमी मध्यवर्ती यो	३०४	१२७	४००

86. *Freeman and Raupe*, **Essentials of Geography**, 1949, p. 407.

87. U N. O. Determinents etc., p. 171; *Whtie & Raup*, **Human Geography**, 1948, pp. 664–665.

88. *Philbrick, A. K*, **This Human World**, 1963, p. 142.

है। इनमे वर्षा की मात्रा कम होने पर सिंचाई की जाती है और उपयुक्त क्षेत्रों में खेती की जाती है।

(४) **कम घनत्व वाले भाग**—जिनका प्रति वर्गमील घनत्व २५ से २६ का होता है। जिन क्षेत्रों मे घास के मैदान पाये जाते हैं वहाँ पशु-पालन अथवा उपयुक्त अवस्थाओं में सिंचाई के सहारे कृषि की जाती है। एशिया और अमरीका के विस्तृत घास के मैदानी प्रदेश इसी प्रकार के हैं।

(५) **जन विहीन भाग**—अत्यधिक ठंडे भाग (ध्रुवीय और उपध्रुवीय क्षेत्र) मरुस्थल एवं सूखी घास के कम वर्षा वाले क्षेत्र, उच्च पर्वतीय भाग तथा भूमध्यरेखीय वन प्रदेश मानवता से प्राय शून्य हैं।

प्रश्न

१. "विश्व की लगभग आधी से अधिक जनसंख्या महाद्वीपों के पश्चिमी भागों में २०° से ४०° अक्षांशों के बीच में ही पाई जाती है।" इसका क्या कारण है?
२. "जनसंख्या के वितरण में जलवायु और भरण पोषण के साधनों का बड़ा हाथ होता है।" इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं?
३. उत्तरी अमेरिका, पश्चिमी यूरोप और दक्षिणी पूर्वी एशिया में जनसंख्या का वितरण बताते हुए उसके घनत्व में विभिन्नता के कारण बताइये?
४. चीन, जापान और भारत आदि मानसूनी देशों में जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है। इसके भौगोलिक कारण क्या हैं?
५. जनसंख्या के वितरण पर प्रभाव डालने वाले भौगोलिक कारणों पर प्रकाश डालिए। इस सम्बन्ध में भारत के उदाहरण द्वारा अपने विचार प्रकट करिये।
६. सभ्य मनुष्य शीतोष्ण कटिबन्ध के निचले भागों में ही अधिक क्यों पाये जाते हैं?
७. आस्ट्रेलिया में जनसंख्या के वितरण पर अपने विचार प्रकट करिए। इस सम्बन्ध में यह भी बताइये कि कौन से भाग घने बसे और कौन से कम बसे हैं।
८. भारत में जनसंख्या के वितरण में भौगोलिक दशाओं का क्या प्रभाव पड़ता है? समझाइये कि पश्चिमी बंगाल में अधिक आबादी क्यों है?
९. आधुनिक जगत में किन कारणों से आवास-प्रवास में नियन्त्रण पाया जाता है, इन नियंत्रणों के कारण जो समस्याएँ उठी हैं, उन्हें बताइए।
१०. भारत में जनसंख्या के घनत्व पर जलवायु सम्बन्धी तत्वों का क्या प्रभाव पड़ा है? मानव ने इनमें किस प्रकार परिवर्तन किया है?
११. भारत में जनसंख्या के घनत्व को निर्धारित करने वाली कौन-कौन सी भौगोलिक दशायें हैं? क्या भारत में जनाधिक्य है?
१२. ऊपरी गंगा के मैदान में जनसंख्या के वितरण पर पूर्ण प्रकाश डालिये। यह भी बताइए कि वहाँ जनसंख्या की पुनर्व्यवस्था की क्या दशा है?
१३. किसी प्रदेश में जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले तत्वों को समझाइये।
१४. क्या आप इस मत से सहमत हैं कि "देशान्तर गमन से जनसंख्या की समस्या का हल नहीं हो सकता।" इस समस्या के हल करने के साधन बताइये।

हैं। इन सुविधाओ के कारण कई पिछडे और वीरान क्षेत्र लहलहाने लगे है तथा समुद्र दूर महाद्वीपो के भीतरी भागो और अर्ध ध्रुवीय प्रदेशो मे भी आबादी के पोषण की क्षमता बढ गई है।

(ख) अभौगोलिक तत्व (Non-Geographic Factors)

उपर्युक्त भौगोलिक कारणो के अतिरिक्त जनसख्या के जमाव और वितरण पर अनेक अभौगोलिक कारणो का भी प्रभाव पडता है। इनमें से मुख्य कारक ये है :—

(१) धार्मिक और सामाजिक कारण— शताब्दियो मे बना हुआ सामाजिक-आर्थिक दृष्टिकोण किसी भी स्थान पर जनसख्या के केन्द्रित करने और बिखेरने में बडा सहयोगी होता है। पूर्वी देशो में सयुक्त परिवार प्रथा, बाल विवाह, और सन्तानोत्पादन की आवश्यकता तथा लोगो को अपने परिवार के समस्त सदस्यो को पैत्रिक भूमि के समीप ही रखने की प्रवृति और प्रवास की मनाई आदि ऐसी परम्परायें है जो भारत, चीन और जापान में कृषि भूमियो में जनसख्या को घनीभूत कर देने मे सहायक होती है। इन देशो में स्त्री के अधिक बच्चो को जन्म देने की क्षमता भी घनी जनसख्या का महत्वपूर्ण कारण है। इसके अतिरिक्त इन देशो मे लोग बडे ही गरीब और अज्ञानी हैं। कृत्रिम गर्भ-निरोध के तरीको से ये बिलकुल अपरिचित है। अस्तु, इन देशो मे घनी जनसख्या का यह भी एक कारण है।

सामाजिक तत्वो मे मुख्य तत्व धार्मिक भी है। एक धर्म के लोग दूसरे धर्म के अनुयायियो को पीडित करते हैं। इस उत्पीडन से बचने के लिए विधर्मी मनुष्य उस देश को छोड कर दूसरे अनुकूल देशो मे चले जाते हैं। जर्मनी से सहस्रों यहूदी हिटलर के अत्याचारो से मुक्ति पाने के लिए इगलैंड और अमरीका जा बसे थे। बाइबल के अनुसार यहूदी मिश्र से मुसलमानो के अत्याचारो से त्राण पाने को फिलिस्तीन मे जा बसे और यही आज इनका राष्ट्रीय घर है। फ्रास से इसी कारण १७ वी शताब्दी मे प्रोटेस्टैन्ट लोग इगलैंड और दक्षिणी अमरीका को चले गये।

(२) राजनीतिक कारण—मनुष्य के आर्थिक जीवन की उन्नति के लिए जातीय गुण, धर्म, सामाजिक परम्परायें तथा शासन-प्रबन्ध भी बडा सहयोग देते हैं। कोई भी व्यक्ति ऐसे स्थान मे रहना पसन्द नही करेगा जहाँ उसके जीवन और सम्पत्ति की रक्षा का उचित प्रबन्ध न हो। शक्तिशाली और न्यायपूर्ण शासन जो प्रजा की रक्षा करते हुये उसे उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करा सके जनसख्या की वृद्धि के लिए बहुत ही उपादेय हुआ करते है। मगोलिया और मचूरिया तथा पश्चिमी सीमा-प्रान्तो मे जनसख्या की कमी का यह मुख्य कारण है क्योकि यहाँ पर कोई सुसगठित एव शक्तिशाली शासन न होने के कारण डाकुओ और चोरो की भरमार रहती है जिसके कारण बहुत ही कम बाहरी लोग वहाँ जाने और रहने का साहस किया करते हैं। मध्य अमरीका और दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी देशो मे कोई शक्तिशाली सरकार नही है जिससे वहाँ किसी प्रकार के उद्योग या व्यापार की सुसगठित व्यवस्था नही है और इसलिये आबादी भी बहुत कम है।

(३) आवास-प्रवास नीति—पृथ्वी के जनसख्या के वितरण पर सरकार की (Immigration) और प्रवास (Migration) सम्बन्धी नीति भी राजनीतिक शक्ति के रूप में बडा भारी प्रभाव डालती है। ग्रेट ब्रिटेन और जापान मे सन् १८२१ और १८२४ मे अपने नागरिको पर सयुक्त राज्य अमेरिका को जाने पर लगाई गई

अध्याय ३७

नगरों की उत्पत्ति एवं विकास

(GROWTH & DEVELOPMENT OF TOWNS)

नगरों की विकास व्यवस्था (Evolutionary Cycle of Towns)

यद्यपि अनेक विद्वानों ने नगरों की विकास-व्यवस्था के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये हैं, किन्तु इनमें डा० टेलर और डा० ममफोर्ड की व्यवस्था अधिक वैज्ञानिक मानी जाती है। डा० टेलर ने नगरों को उनकी विकास-व्यवस्था के अनुसार तथा डा० ममफोर्ड ने उनकी सामाजिक व्यवस्था के अनुसार विभाजित किया है।

डा० टेलर के मतानुसार किसी नगर के विकास की सात अवस्थाएँ होती है[1]—

(१) पूर्व शैशवावस्था, (२) शैशवावस्था, (३) बाल्यावस्था, (४) किशोरावस्था, (५) प्रौढ़ावस्था, (६) उत्तर प्रौढ़ावस्था, और (७) वृद्धावस्था।

(१) **पूर्व शैशव अवस्था** (Sub Infantile Stage) में निवास स्थान और व्यापार के क्षेत्र एक ही स्थान पर मिले जुले होते है। इनके मध्य मे छोटी और सकड़ी एक दो गलियाँ होती हैं। प्रायः घरों का अग्र भाग दुकानों के रूप मे तथा पिछला भाग रहने के लिए काम मे लाया जाता है। बाजार गली के ही दोनों ओर की दुकानें ही होती है। इस अवस्था वाले नगर नव-विकसित क्षेत्रों में ही पाये जाते हैं। इनका वातावरण मुख्यतः ग्रामीण होता है। जैसे—हिमालय की तलैटी अथवा कनाडा की मैकेंजी नदी की घाटी क्षेत्र मे।

(२) **नगर की शैशवावस्था** (Infantile Stage) मे सड़कों और गलियों का स्वरूप विकसित होने लगता है। बस्ती कुछ बढ़ने लगती है। दुकानों की संख्या भी बढ़ जाती है किन्तु नगर का वातावरण ग्रामीण ही रहता है।

(३) **नगर की बाल्यावस्था** (Juvenile Stage) मे मुख्य सड़क के अतिरिक्त बस्ती के विकास मे सुविधा पहुँचाने के लिये भीतर की ओर गलियाँ आयोजित रूप से बनने लगती है। इन गलियों का मुख्य प्रयोजन वहाँ के मकानों मे रहने वालों के आने जाने की सुविधा होती है। नगर का व्यापारिक क्षेत्र उससे पृथक हो जाता है किन्तु यह उसके निकट ही होता है। उत्तर प्रदेश के अधिकांश तहसीलों के कस्बे इसी प्रकार के है।

(४) **किशोरावस्था** (Adolescent Stage) में नगरों का व्यावसायिक क्षेत्र विकसित होने लगता है। मकानों और व्यवसाय स्थलों मे परिवर्तन होने लगता

---

1 *Taylor, G.* "Seven Ages of Towns," **Economic Geography,** No. 21, 1945.

(क) **अणु समूह या छोटे वर्ग**—इस प्रकार का समूह विशिष्टत. देश की प्रकृति पर निर्भर होता है। जैसे गरमी या आर्द्रता की कमी के कारण पौधों की बाढ मारी जाती है, इसी प्रकार मानव-समाज भी ऐसी दशाओं मे नही पनप सकता। टुड्रा अथवा भूमध्यरेखीय प्रदेश ऐसे ही क्षेत्र कहे जा सकते है। एस्कीमो लोगो की बस्ती ८ या १० झोपडों का एक समूह मात्र होती है। ७५° अक्षांश के उपरान्त तो यह बस्ती केवल २ या ३ झोपडियो का ही रूप ले लेती है। साइबेरिया मे अनादिर प्रात मे १४ झोपडियो का ही गाँव पाया गया है। सहारा या कालाहारी मरुस्थल मे अथवा आस्ट्रेलिया के विस्तृत मरुस्थल मे शुष्कता का वही प्रभाव पडता है जो अत्यन्त शीत का होता है। यहा भी गाँव केवल ३—४ झोपडियो से लेकर १०—१२ झोपड़ियों का समूह-मात्र होता है। भारत में द० पू० राजस्थान में भीलों की बस्तियाँ अत्यन्त बिखरी हुई और केवल ८—१० घरों का समूह है। बुशमैन और आस्ट्रेलिया के आदिवासियों की बस्तियाँ एक दर्जन से अधिक घरों की नहीं होती। इसी प्रकार भूमध्यरेखीय अफ्रीकी वनों मे और उष्ण कटिबधीय ऐंडीज के पूर्वी ढालो के वनो में मनुष्य की बस्ती का महत्व वनस्पति के घनत्व के अनुपात मे कम होता जाता है। अर्थात् **जहां जितनी घनी वनस्पति होती है, वहां आबादी उतनी ही कम होती है।** कागो के बेसीन में भूमध्य रेखा और ६° उत्तर तथा दक्षिणी अक्षाशो के बीच औसत गाँव ३० घरो का होता है किन्तु सामान्य रूप से एक बस्ती ८ या १० झोपडियो की ही मिलती हैं। बोर्नियो और सुमात्रा के भीतरी भागो मे भी यही स्थिति मिलती है। किन्तु जब भू-आकृति या जलवायु कम कठोर होने लगती है अथवा जहाँ वनस्पति का घनत्व कम होने लगता है वहाँ गाँवो की सख्या सीमान्त क्षेत्रो पर बडी तेजी से बढती है मानो किसी ने जादू कर दिया हो। वनो की भीतरी जनसख्या सवन्ना के निकट आने पर बढती है। स्वय सवन्ना मे बिखरे हुए गाँव मिलते है जिनमे प्रत्येक मे कई सौ अथवा हजार व्यक्ति रहते है।

(ख) **चलवासी या घुमक्कड़ समूह**—यह समूह सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर घूमता रहता है क्योंकि इनका व्यवसाय पशुपालन होता है। यह अपने पशुओ के लिए चारे और चरागाहो की तलाश मे काफी दूर-दूर तक घूमता रहता है अत इसे जीवन-यापन के लिए अपेक्षत अधिक क्षेत्र की आवश्यकता पड़ती है, यद्यपि इनकी संख्या कम होती है। पूर्वी सहारा की कुछ जातियो की शाखायें मिश्र से मध्य अफ्रीका के भीतर दूर तक फैली है। साब और बोगर व टेनिट-अल-हद की नदियों के बीच मे ये लोग अपने प्रवासो मे लगभग ५०० किलोमीटर की दूरी तय करते हैं। किरगीज फरगना की घाटियो से अल्टाई के पठार तक लगभग ६५०० किलोमीटर की दूरी के बीच मे घूमा करते हैं। यात्रा के लिए जल की सुविधा, बीच-बीच मे ठहरने के स्थान और विशाल चरागाहो की आवश्यकता पड़ती है। ये समूह कठिनता से ही कभी एक बार एकत्रित हो पाते है। जीवित रहने के लिए उनको सदा दूर और पृथक्-पृथक् रहना पड़ता है। अत पशु-पालन व्यवस्था के अतर्गत भूमि पर स्थायी अधिवासो का अभाव मिलता है।

समूहों के पारस्परिक सम्बन्ध

जनसख्या के घनत्व की दृष्टि से भूमध्यरेखीय वन सवन्ना, स्टैपी आदि प्रदेशों मे विभिन्न मानव-समूह निवास करते है। इनके अधिकार मे भूमि का भाग बडा असमान पाया जाता है, किन्तु चूँकि ये समस्त समूह एक सार्वभौमिक पूर्णता (Terrestrial Whole) के भाग होते है (जिसमे मनुष्य ही चालक शक्ति है) अत. वे एक दूसरे को प्रभावित करते है।

कस्बों के विकास के विभिन्न चरण

१ शैशवावस्था का नगर—घरों तथा दुकानों का विन्यास पूर्णतः बिखरा हुआ तथा अनियोजित, फैक्ट्रियों का अभाव।

२ बाल्यावस्था का नगर—घरों तथा दुकानों के क्षेत्रों में स्पष्टतः पृथकीकरण।

३ किशोरावस्था का नगर—अच्छे घरों के लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं; फैक्ट्रियाँ बिखरी हुई।

४. शीघ्र प्रौढावस्था का नगर—अच्छे मकानों का पृथकीकरण।

५ दीर्घ प्रौढावस्था का नगर—व्यवसायिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों का पृथक्-पृथक् होना, मकानों का स्वरूप छोटे झोपड़ों से लगाकर आधुनिकतम होना।

नगरों के विकास के विभिन्न चरण

प्रथम चरण—नगर के बढ़ने के कारण निकटवर्ती गाँवों का उनमें मिल जाना, विश्वविद्यालय, कालेजों की स्थापना, जनसंख्या के लिए जल की पूर्ति दूरस्थ स्थानों से किया जाना।

द्वितीय चरण—गलियों, सड़कों और रेलमार्गों का विस्तार, दैनिक तथा सायंकालीन समाचार पत्रों का प्रकाशन और प्रसार।

तृतीय चरण—छोटे-छोटे गाँव अलग म्यूनिसिपैलिटी वाले बन जाते हैं।

चतुर्थ चरण—नगर के विभिन्न क्षेत्रों में आदर्श बस्तियों की बसावट।

पंचम चरण—नगर में यातायात पर नियंत्रण रखने के लिए सड़कों पर पुल आदि का बनाया जाना।

षष्ठम चरण—कई दूर की बस्तियाँ नगरों में विलीन कर दी जाती हैं, नगरों में मोहल्लों की संख्या बढ़ जाती है तथा विशिष्ट खंड बनाये जाते हैं।

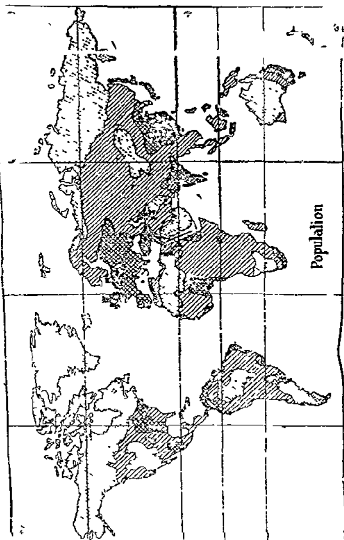
सप्तम चरण—बड़े नगरों के क्षेत्र विकसित हो जाते हैं, तथा नागरिक परिषदों, और नगर विकास परिषदों की स्थापना हो जाती है।

लुइस ममफोर्ड के अनुसार नगरों के विकास की प्रमुख अवस्था इस प्रकार है :—[3]

प्राचीनतम अवस्था (Eopolis)—जब मनुष्य ने उपयुक्त क्षेत्रों में कृषि और पशुपालन धंधों का विकास किया तो वे इनमें स्थायी रूप से टिक कर रहने लगे। इनमें आवश्यकता की सभी चीजें उपलब्ध होती थीं। इन्हीं गाँवों से कालांतर में नगरों का जन्म हुआ माना जाता है। 1

पोलिस (Polis)—जब एकसी भौगोलिक स्थिति और समान सामूहिक

3. *Mumford*, Lous, **Culture of Cities**, 1938.



चित्र २१३ जनसंख्या का वितरण

भी अधिक का हो जाता है । उपयुक्त जलवायु, पर्याप्त जल-वृष्टि तथा उपजाऊ भूमि के कारण घनत्व अधिक मिलता है ।

(३) **मध्यम घनत्व वाले भाग**—जिनमें प्रति वर्गमील २६ से १२५ मनुष्य तक पाये जाते हैं । ऐसे भागों में मिसीसिपी नदी का मैदान और उससे सलग्न उत्तरी पूर्वी क्षेत्र, अधिकांश पूर्वी यूरोप के देश, मुख्य चीन के उत्तरी पश्चिमी तथा हिंद चीन के पूर्वी और भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग विशेष रूप से सम्मिलित किये जाते

नगरो की स्थिति को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Affecting Sites and Situations of Towns & Cities)

प्राचीनकाल से ही नगरो के बसाने मे चार मुख्य बातो पर अधिक जोर दिया गया है :—

(१) उस स्थान की केन्द्रीयता (Nodality)
(२) उस स्थान की सुरक्षित स्थिति (Defence)
(३) पीने योग्य जल की प्रचुरता (Abundance of drinking water)
(४) समतल भूमि की उपलब्धता

(१) **केन्द्रीयता**—केन्द्रीयता प्राप्त करने के लिए अधिकतर नगर ऐसे स्थानो पर बसाये गये है जहाँ चारो ओर मे मार्ग आकर मिलते है अथवा जहाँ पहले नगरो को बसाया गया और फिर वहाँ मार्गो को केन्द्रित किया गया। इस प्रकार के नगरो के उदाहरण मुख्यत अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिण मे पाये जाते है। केपटाउन, मेलबोर्न, ब्यूनर्स आयर्स और रायो-डी जानेरो इनके आदर्श उदाहरण है। नगरो की स्थिति केन्द्रीय हो अस्तु उन्हे बहुधा नदियो के सगम पर ही बसाया गया था।

(२) **सुरक्षा**—नगरो की स्थापना मे स्थान विशेष की सुरक्षा का महत्व बहुत अधिक होता है। असख्य ऐसे उदाहरण हैं जिनसे पता लगता है कि प्राचीन काल से ही नगरो का जन्म किसी किले आदि के कारण हुआ है। ऐसे नगरो के चारो ओर दीवार बना कर पूरी सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाता था। इन नगरो के नाम प्राय बर्ग या चेस्टर (Burgh or Chester) दिया जाता था, जिनका अर्थ नैसर्गिक दुर्ग अथवा सैन्य-स्थल होता है। सुरक्षा की दृष्टि से पहाडो के तेज ढाल और जल-बाधायें, (नदियो के रूप मे) नगरो की स्थापना के लिए उपयुक्त स्थान माने जाते थे। उत्तरी अमेरिका मे बसने वाले यूरोपीय लोगो ने नदियो के पूर्वी तट पर ही अपनी प्रारम्भिक बस्तियाँ बसाई थीं। इसी प्रकार मध्य युग मे जर्मनी के उपनिवेशीकरण मे एल्ब नदी के पूर्वी तटो को ही अधिक मान्यता दी गई। कई बार नदियो के सकडे मुहाने भी नगरो की स्थापना में सहायता देते है। प्राचीन नगर पृष्ठ-देशो के सरक्षण और बैंक का काम करते रहे हैं। धन की अधिकता और पृष्ठ-देश की सुरक्षा का भार भी इन पर ही रहा है अत नगर ऐसे ही स्थानो पर बसाये गये जो सभी प्रकार से सुरक्षित थे। देशों और राज्यों की राजधानियाँ नगरो के राजनीतिक पक्षों की द्योतक होती है। ऐसे नगरो का विकास प्राचीन काल मे ही राजनीतिक मनोवृत्ति के साथ हुआ था। यद्यपि आज के अणु और वायुयान युग मे सुरक्षा जैसी कोई चीज नही है, किन्तु फिर भी ऐसे नगरो का अस्तित्व पाया जाता है। पेरिस, मास्को, वाशिंगटन, कैनबरा, दिल्ली, पेकिंग ऐसे नगरो के मुख्य उदाहरण है। प्राचीनकाल मे पानी के पास की स्थिति से नगरो को सुरक्षा प्राप्त होती थी। ऐसे नगरो को नैसर्गिक दुर्ग (Natural Fortification) कहा जाता है।

(३) **जल की प्रचुरता**—आरम्भ से ही मानव का निवास स्थान उन्ही क्षेत्रों मे रहा है जहाँ पीने और खेती के लिए पर्याप्त मात्रा मे मीठा जल मिलता था। यही कारण है कि अधिकाश नगर नदियो के किनारे ही स्थापित किये गये थे, किन्तु आज के युग मे इस तत्व का महत्व अधिक नही रह गया है क्योकि अब जल की कमी दूर के स्थानो से नलो द्वारा जल लाकर पूरी की जा सकती है। आस्ट्रेलिया स्थित कालगूर्ली की सोने की खानो और मैसूर की कोलार की खानो के लिए जल लगभग

१५. "पृथ्वी के १।७ भाग पर ही विश्व की जनसंख्या का २।३ भाग निवास करता है।" इस असमान वितरण से उत्पन्न हुई समस्याओं पर प्रकाश डालिये। भविष्य में किस प्रकार जनसंख्या का समान वितरण किया जा सकता है?

१६. आधुनिक जगत में—भारत का विशेष सन्दर्भ सहित-जनसंख्या के वितरण का वर्णन करिये।

१७. जनसंख्या के घनत्व का प्रभाव आर्थिक क्रियाओं और मानव के निवास स्थान पर किस प्रकार पड़ता है? भारत के उदाहरण द्वारा समझाइए।

१८. भारत में जनसंख्या के वितरण को समझाते हुए बताइए कि भौगोलिक वातावरण का इस वितरण पर किस प्रकार प्रभाव पड़ा है?

अत्यन्त आवश्यक हो जाती है। अत आवागमन के केन्द्र का मुख्य उदाहरण बन्दरगाह है जहाँ सामुद्रिक तथा स्थलीय मार्ग एक दूसरे से मिलते है और आवागमन के साधनो मे परिवर्तन हो जाता है। बम्बई, रूआ, ग्लासगो, न्यूकैसल, न्यूयार्क, रायोडी जानेरो, लन्दन आदि इसके मुख्य उदाहरण है। सिंगापुर तथा लन्दन मध्यस्थो (Entrepot) का कार्य करते है। इसी प्रकार डुलूथ और फोर्ट विलियम मे गेहूँ और लोहा रेल द्वारा लाया जाता है और इसे झीलो से नाव द्वारा बाहर ले जाया जाता है।

(२) कुछ यातायात के केन्द्र पडोसी क्षेत्रो के बीच द्वार का काम करते है। भारत मे उत्तरी मैदान और दक्षिणी पठारी भाग के मिलन स्थल पर ग्वालियर, जयपुर, आगरा, रेवाडी, भरतपुर अजमेर, झाँसी, बरेली, गोरखपुर आदि ऐसे ही नगर है। सयुक्त राज्य अमेरिका मे मिनियापोलिस, कन्सास, सेंटपाल, सेंट लुइस, कन्सास सिटी पश्चिमी शुष्क और पूर्वी आर्द्र भागो के बीच व्यापारिक द्वार का काम करते हैं।

(३) जिस स्थान पर पर्वत और मैदानी भाग मिलते हैं वहाँ मैदान की सारी उपज एकत्रित की जाती है और फिर उस बडे बोझ को छोटे-छोटे टुकडो मे बाँट कर पहाडी भागो को भेज दिया जाता है। इन नगरो को सामान तोड नगर (Break of Bulk Town) कहते हैं। यूरोप मे आल्पस पर्वत के दोनो ओर उत्तर और दक्षिण मे तथा एपेलेशियन और रॉकी पर्वतो के सहारे ऐसे ही नगरो की स्थितियाँ पाई जाती हैं। भारत मे हरिद्वार, कालका, देहरादून, काठगोदाम इसके प्रमुख उदाहरण है।

(४) मरुस्थल आवागमन के मार्गों मे बाधा डालते है अत इनकी बाहरी सीमा पर सागरो के तटो की भाँति सारे मार्ग आकर मिल जाते है और स्थल बन्दरगाहो की उत्पत्ति हो जाती है। अफ्रीका मे टिम्बकटू, रूसी तुर्किस्तान मे मर्व और बुखारा इसी प्रकार के नगरो के उदाहरण है। मरुस्थलो मे जहाँ कई काफिले या कारवा मार्ग आकर मिलते हैं वहाँ भी प्राय नगर बस जाते है। अरब मे रियाध ऐसा ही नगर है।

(५) पहाडी भागो मे पर्वतीय दुर्गम श्रेणियो को पार करने के एक-मात्र द्वार उनमे स्थित दर्रे (Passes or Cols) हैं। इसलिए उन पर नियत्रण रखना वहाँ की सरकारो के लिए अत्यन्त आवश्यक है। नियत्रण के लिये मुहाने वाले स्थानो पर सैनिक अड्डे (Military Centres) स्थापित किये जाते है। इनकी छावनियाँ (Cantonment) बडी महत्वपूर्ण होती है। देहरादून, मेरठ, सिकन्दराबाद, जबलपुर, पूना आदि भारत के प्रसिद्ध सैनिक केन्द्र हैं। इसी प्रकार जिब्राल्टर, रावलपिंडी, पेशावर, माल्टा, सिकन्द्रिया, डार्विन, सिडनी, क्वेटा, अदन, फोर्टसम, हाऊस्टन आदि भी उत्तम प्रकार के सैनिक केन्द्र हैं।

(६) जहाँ कई दिशाओ से आकर रेल-मार्ग या सडकें एक स्थान पर मिलती हैं ऐसे स्थानो पर कई क्षेत्रों की उपज इकट्ठी होती है और वहाँ वस्तु एकत्रित और वितरित करने के केन्द्र बस जाते है। यह सच ही कहा गया है कि "नगर सडको को जन्म देते है और सडकें नगरो को बनाती एव विकसित करती है।"[६] अजमेर,

6. The City creates the road, the road in turn creates the city or recreates it."—*Finch and Trewartha*, **Op. Cit**

है। दोनो ही अब अधिक सुव्यवस्थित हो जाते हैं और नगर का मुख्य केन्द्र (nucleus) प्रकट होने लगता है। इसके अतिरिक्त कुछ छोटे केन्द्र भी प्रकट हो जाते है जो निकटवर्ती मोहल्लो की सेवा करते है। औद्योगीकरण भी होने लगता है। उत्तर प्रदेश और राजस्थान के कुछ जिला-केन्द्रो को इसी श्रेणी मे सम्मिलित किया जा सकता है।

(५) प्रौढावस्था (Mature Stage) मे नगरो के विभिन्न कार्यो के मुख्य क्षेत्र अलग-अलग हो जाते है अत उनका योजनाबद्ध विकास होना आरम्भ हो जाता है। नगर के विभिन्न क्षेत्रो मे अनेक कार्य पेटियाँ (Functional Zones) स्थापित हो जाती है—जैसे जयपुर मे जौहरी बाजार, धान की मडी, पुस्तको के लिए चौड़ा रास्ता तथा त्रिपोलिया बाजार, पसारियो के लिए रामगज मडी आदि। उद्योग, व्यवसाय, शिक्षा, प्रशासन और स्वास्थ्य सेवाओ के कार्यालय आदि भी नगरो मे स्पष्ट रूप से स्थापित किये जाते है। ये साधारणत निवास गृहों से दूर स्वच्छ वातावरण मे होते हैं। नगरो के बाहर भी आधुनिक ढग के बगले तथा भीतर कई मंजिले मकान बनने लगते है। इनका व्यापार क्षेत्र भी बढ जाता है और जनसख्या भी। राजस्थान मे अजमेर, जयपुर, उदयपुर, कोटा, बीकानेर, जोधपुर तथा उत्तरी भारत मे इलाहाबाद, आगरा, कानपुर, अमृतसर, जबलपुर, पटना तथा दक्षिण भारत मे बंगलौर, मैसूर आदि ऐसे ही नगर है। इस प्रकार के नगरो की जनसंख्या १ लाख से अधिक होती है।

(६) दीर्घ प्रौढावस्था (Late Mature Stage) मे नगरो के कार्य क्षेत्र तथा जनसख्या बढ जाने से उनका सुनियोजित विकास नगर आयोजन प्रणाली के अनुसार नगर विकास सस्थाओ द्वारा किया जाने लगता है। नये मकान सडको के सहारे चौडे तथा हवादार बनने लगते है। अतिरिक्त जनसख्या तथा औद्योगिक श्रमिको के लिए विशेष रूप से पृथक बस्तियां या उपनगरो की स्थापना हो जाती है। नये उद्योगो के विकास के लिए औद्योगिक क्षेत्रो को भी पृथक स्थान दिया जाता है। नगर का कार्य क्षेत्र इतना बढ जाता है कि उसके अन्तर्गत अनेक ग्रामीण क्षेत्र भी आ जाते है। नगरो का वातावरण बिल्कुल बदल जाता है। वे पूर्णत: नागरिक व्यवस्था वाले हो जाते है। विश्व के सभी बडे नगर, जिनकी जनसख्या १० लाख से अधिक होती है वे, प्राय इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

(७) वृद्धावस्था (Old or Senile Stage) मे नगर अपने विकास को खो बैठता है, किन्तु ऐसा सभी नगरो के साथ नही होता, क्योकि समय-समय पर राजनीतिक एव सामाजिक या व्यापारिक कारणों से उनका पुनरुत्थान होता रहता है। रेलमार्गो या राष्ट्रीय मार्गो से दूर पड जाने, व्यापार की दिशा मे परिवर्तन हो जाने अथवा उद्योग-धन्धो की कार्यविधि बदल जाने से कई नगर अपने पतन की ओर उन्मुख होने लगते है। कई मोहल्ले खाली हो जाते हैं और केवल मुख्य सडक अथवा रेल स्टेशन की ओर ही अधिक बसावट मिलती है। गढमुक्तेश्वर, कन्नौज, काल्पी, फरुखाबाद, सिकन्द्राबाद सभवतः ऐसे ही नगर हैं।

सक्षेप मे, डा० टेलर के अनुसार एक कस्बे तथा एक नगर (जिसकी जनसख्या ५०,००० से अधिक होती है) का विकास निम्न चरणो मे होता है—[2]

---

2. *Taylor, G.*, **Urban Geography,** 1958, p. 422.

(८) नदियो के दोनो किनारो के पृष्ठ देश के निजी व्यापारिक केन्द्र भी कभी-कभी दोनो किनारो पर बस जाते हैं। इन दोनो नगरो मे घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। ये दोनो नगर एक दूसरे के आमने-सामने होते हैं। ये नगर जुडवाँ नगर (Twin Towns) कहलाते हैं। कलकत्ता और हावडा, मिलन और ट्यूरिन, बुडा और पेस्ट इलाहाबाद और झाँसी, सैंट पाल और मिनियापालिस ऐसे ही जुडवा नगरो के उदाहरण हैं।

(९) नदी जिस स्थान पर एक तंग घाटी मे जाती है और जहाँ से वह बाहर निकलती है उन दोनो स्थानो पर भी नगर बस जाते हैं। बिन्जेन नदी पर ऐसा ही ही नगर है।

(१०) (i) जहाँ नदी झील मे गिरती है, वहाँ नगर बस जाते है। सुपीरियर झील के किनारे डुलुथ और मिशीगन के किनारे शिकागो इस प्रकार के नगरो के उदाहरण है। (ii) जहाँ नदी झील से बाहर निकलती है वहाँ भी नगर बस जाते है। जैसे जैनोवा और डिट्रायट। (iii) दो झीलों के बीच वाले स्थानो पर भी नगर बन जाते हैं। थुने और ब्रिंज झीलो के बीच इन्टरलैकेन नगर की स्थिति इसी प्रकार की है। (iv) झीलो के किनारे स्थित नगरो को सस्ते यातायात की सुविधायें मिल जाती हैं। ऐसे स्थानो पर कई स्थल मार्ग आकर मिल जाते है। जिनोवा, शिकागो बफैलो ऐसे ही नगर है।

(११) जहाँ नदी पहाडी श्रेणियो के बीच बहती है, उस खाली जगह पर आकर कई मार्ग मिलते है। ऐसे स्थानो पर नगरो का व्यापार बढ जाता है और वे व्यापारिक केन्द्र बन जाते है। इस प्रकार नगरो के मुख्य उदाहरण गिल्डफोर्ड, टूलो-रीम्स, मुकडेन और लिकोलन हैं।

(१२) डेल्टा के सिरे पर कई स्थान प्रसिद्ध नगर बन जाते हैं। ऐसे स्थानो से नदी की कई शाखायें हो जाती हैं जिनके द्वारा नगर मे कच्चा माल एकत्रित किया जाता है। काहिरा, कटक, अविगनोन, तजौर और कलकत्ता ऐसे ही नगर है।

(ग) वायुमार्गों पर नगरो की स्थिति

जो स्थान वायुमार्गों पर स्थित होने हैं वे भी धीरे-धीरे प्रमुख नगर बन जाते है। करांची, जोधपुर, कानो, डाकर, तेहरान, ब्रिडसी, रगून और सिंगापुर ऐसे ही प्रसिद्ध हवाई अड्डे है।

नगरों की स्थिति के अन्य कारण

आवागमन के मार्गो के मिलन के स्थानो के अतिरिक्त भी अन्य कई कारणो से किसी स्थान पर नगर बस जाते हैं, जैसे—

(१) **राजधानियाँ या राजनीतिक कारण**—जो स्थान किसी राज्य अथवा देश का शासन-प्रबन्ध व्यवस्था करने का केन्द्र स्थल होता है, वहाँ धीरे-धीरे सरकारी कार्यालयो मे काम करने के लिए बडी सख्या मे लोग एकत्रित हो जाते है। लखनऊ, जयपुर, दिल्ली, ग्वालियर, नागपुर, लदन, पेरिस, बर्लिन, मास्को, वाशिंगटन, नानकिंग, कैनबरा, पेकिंग आदि विश्व की प्रसिद्ध राजधानियाँ है। अन्तर्राष्ट्रीय नीति के बल पर ही हेग, रोम तथा वाशिंगटन और जेनोवा का महत्व इतना अधिक बढ गया है।

सुरक्षा तथा कार्यों को सपादन करने के लिए अनेक गाँव आपस मे मिल जाते है, तो इस अवस्था का प्रादुर्भाव होता है। इसमे सामान्यत साधारण यंत्रों और श्रम-विभाजन द्वारा कार्य होने लगता है किन्तु इनका वातावरण अब तक ग्रामीण ही रहता है। उद्योग-धंधो का विकास पारिवारिक सगठनों और जाति-सगठनो द्वारा ही किया जाता है। सामाजिक दृष्टि से इस अवस्था के नगरो मे सामान्यता तथा सहकारी भावना पाई जाती है।

मैट्रोपॉलिस अवस्था (Metropolis)—जब किसी क्षेत्र विशेष में अनेक नगर होते हैं जो एक दूसरे से अधिक दूरी पर नही होते तो कोई एक बडा नगर इन छोटे नगरो का नेतृत्व करता है और इनमे आपसी व्यापारिक तथा आर्थिक संबंध बढने लगता है। कृषि-प्रधान क्षेत्रों मे ऐसे नगर आदान-प्रदान के बडे केन्द्र बन जाते हैं, जहाँ कृषि-वस्तुओं का व्यापार बडी मात्रा मे होने लगता है किन्तु सामाजिक दृष्टि से इन नगरों मे व्यक्तिवाद की भावना स्पष्टत परिलक्षित होने लगती है क्योकि विभिन्न सस्कृति और धर्मावलबी इन नगरो मे बस जाते है। ये अधिकतर प्रशासनिक सेवाओं, व्यापार तथा सामाजिक सेवाओ और आविष्कारो मे लगे रहते है, अत: आपसी सहयोग की भावना कम हो जाती है।

(४) **मेगापोलिस** (Megapolis) अवस्था मे नगर अपने विकास की चरम-सीमा तक पहुँच जाता है। निवास गृह कई मजिले और भव्य होने लगते है, बाजार पूर्णत विस्तृत होते है जिनमे मानव आवश्यकता की सब वस्तुयें—कीमती से कीमती मिलती है। नगर का कार्य-क्षेत्र अधिक विशिष्ट हो जाता है। खाद्यान्नो की कमी नही रहती, क्योकि निकटवर्ती क्षेत्रो से प्राप्त करने की पर्याप्त सुविधा होती है। जनसख्या अधिक घनी मिलती है किन्तु नगरो का वातावरण दूषित होता है और कई सामाजिक बुराइयाँ घर कर जाती है। उदाहरण के लिए "शिक्षा का महत्व केवल सख्यात्मक रह जाता है, यत्र चालित मानवो का समूह बढ़ जाता है, जीवन और शिक्षा का सबध नही रहता, उद्योगो का सम्बन्ध उनके जीवनोपयोगी उद्देश्य से भिन्न होता है, स्वय जीवन भी एक प्रकार से खडित हो जाता है जो अन्तत जर्जर और अव्यवस्थित हो जाता है।" श्री मम्फोर्ड के अनुसार सिकन्दरिया, पेरिस, न्यूयार्क, लन्दन आदि इसी प्रकार के नगर हैं। भारत मे कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई और मद्रास तथा कानपुर आदि नगरो की गणना ऐसे ही नगरों मे की जा सकती है।

(५) **टायरैनोपोलिस** (Tyranopolis) अवस्था मे नगरो मे राजनीति का विकास अधिक होने लगता है, श्रम-सम्बन्ध बिगड जाते है और समय-समय व्यापारिक मदियों के कारण आर्थिक जीवन असतुलित और प्राय अस्त-व्यस्त सा हो जाता है। अनेक बार नगरो की स्थिति बडी बेकाबू हो जाती है अत सैनिक सहायता की आवश्यकता पडने लगती है। ऐसी स्थिति मे उद्योग-धन्धो तथा सामाजिक सेवाओ का ह्रास होने लगता है और मानव जीवन अधिक सुरक्षित नही रह पाता। फलत नगर सूने होने लगते है और जनसख्या अधिक सुरक्षित स्थानो को चली जाती है।

(६) **नेक्रोपोलिस** (Nekropolis) अवस्था मे नगरो का पतन होने लगता है। इसका कारण महामारी, दुर्भिक्ष अथवा युद्ध आदि का होना है।

(६) व्यावसायिक और औद्योगिक केन्द्र (Commercial and Industrial Centres)—जब एक नगर किसी एक व्यवसाय या उद्योग के लिए प्रसिद्ध हो जाता है, तो उस उद्योग के सभी केन्द्र उस स्थान पर बसने की चेष्टा करते हैं। चूंकि इन नगरों की प्रवृत्ति विशिष्टीकरण की होती है अतः इनकी प्रकृति भी विशेष प्रकार की होती है। प्रो० हंटिंगटन के अनुसार "व्यापारिक नगर उस राक्षस की तरह होता है, जो अपनी सम्पत्ति के द्वार पर बैठा रहता है। एक ओर तो वह अपनी सारी उपज डकार जाता है दूसरी ओर वह अपनी क्षेत्रीय उपज को दूर के स्थानो तक पहुँचाता है और उसके बदले में क्षेत्रीय आवश्यकताओं की माँग पूरी किया करता है।"[7] इसका मुख्य उदाहरण कन्सास नगर है जो अपने पडोसी क्षेत्र की मकई, गेहूँ तथा अन्य अनाजो को एकत्रित करता है और उन्हे पूर्व की ओर भेज कर अपनी क्षेत्रीय आवश्यकताओ की पूर्ति करता है।

इसी प्रकार 'औद्योगिक नगर की तुलना भी उस राक्षस से की जा सकती है जो अपने हाथों से मशीनें, कपडा, रासायनिक पदार्थ अथवा अन्य सामान काफी मात्रा मे तैयार करता है और इन मालो को वेच कर कच्चा माल तथा खाद्य-सामग्री अपने पडोसियों या दूरस्थ देशो से प्राप्त करता है।"[8] आधुनिक काल मे सभी नगर औद्योगिक और व्यापारी होते हैं। ओमाहा और मैम्फिस मुख्यत व्यापारी नगर हैं किन्तु वाटरबरी और रोचेस्टर विशेषतः औद्योगिक ही हैं। कानपुर, शघाई, लन्दन, शिकागो, न्यूयार्क, बम्बई, कलकत्ता, ओसाका दोनो ही प्रकार के नगर हैं।

भारत मे रूरकेला, टाटानगर, भिलाई, आसनसोल, मोदीनगर, चितरंजन, दुर्गापुर तथा विदेशों मे बर्मिघम, लिवरपूल, एमस्टरडम, पिट्सबर्ग, बर्लिन, टोकियो, कारगोड़ा और मैगनीटोगोरस्क मुख्यत औद्योगिक नगर हैं।

अन्त मे यह कहा जा सकता है कि यद्यपि नगरो और कस्बों की स्थापना मे स्थितियों का प्रभाव होता है किन्तु अनेक भागों में मानव स्थितियो के प्रभावों को अपने परिश्रम द्वारा पलट डाला है। कई क्षेत्रो की दलदल भूमि को सुखाकर, नदियो के मार्गों को उचित दिशा मे मोडकर तथा पर्वतीय भागो मे टेढे-मेढे रेल मार्ग तथा सडकें बनाकर खनिज केन्द्रों में अथवा स्वास्थ्यप्रद भागो मे नगरो की स्थापना कर ली है। किन्तु सत्य तो यह है कि अधिक जनसंख्या वाले नगरों का केन्द्रीयकरण मुख्यत आवागमन के मार्गों से सबंधित रहा है। जितना बडा नगर होता है उतना ही अधिक उसके चारो ओर सडको का जाल-सा बिछा रहता है और छोटे नगरो में इसका उल्टा ही होता है। विश्व के महान साम्राज्य सडको के विकास के रूप मे ही प्रसिद्ध हुए हैं—चीनी और रोम साम्राज्य आदि।[9]

कस्बों और नगरों का वर्गीकरण (Classification of Towns & Cities)

कस्बो और नगरों को वर्गीकरण कई आधारो पर किया जा सकता है, जैसे उनकी स्थिति, उनके कार्य और उनकी विकास-विधियों के आधार पर।

7. *E. Huntington*, **Principles of Economic Geography**, p. 613.
8. **Ibid**, p. 613.
9. *Brunhes, J.*, **Op. Cit**, pp. 76-77

३०० मील दूर से लाया जाता है। प्राचीन काल मे नदियो के किनारे मथुरा, वाराणसी, पाटलीपुत्र आदि नगरों को बसाया गया था।

(४) **समतल भूमि एवं यातायात के साधन**—इन तत्वो के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है जो नगर बनाये जाए वे ऐसे स्थानो पर स्थित हो जहाँ उनके भविष्य के विस्तार के लिए पर्याप्त भूमि मिल सके और जहाँ से आस-पास के प्रदेश के साथ सुगम सम्बन्ध हो। अत किसी नगर अथवा व्यापारिक केन्द्र की उत्पत्ति और विकास के लिए सस्ते और सरल यातायात के साधनों का होना आवश्यक है। प्रो० ब्लाशे के शब्दो मे *"नगर मार्गो से जुड़े होते हैं"* (Les Routes ont fait les villes) और वास्तव मे नगर उन्ही स्थानो पर बसते है जो किसी मार्ग पर होते है विशेषत: जहाँ किसी प्राकृतिक बाधा ने मार्गो को अवरुद्ध किया हो अथवा यातायात के साधनों का परिवर्तन (break of bulk) आवश्यक हो। नगर मार्ग-व्यवस्था के नाभिबिंदु होते हैं और उनका महत्व इस बात से स्पष्ट होता है कि वे कहाँ तक नाभिबिंदु की भांति कार्य करते हैं।[4] यह बात न केवल व्यापारिक नगरो पर ही लागू होती है वरन् अत्यन्त विशिष्ट नगरो पर भी।

श्री स्माइल्स के अनुसार नगरो और कस्बो की स्थापना मे स्थितियां (Situations) सदैव प्रभाव डालती रहती हैं। क्योकि स्थितियाँ न केवल भौतिक परिस्थितियो को ही व्यक्त करती हैं—जिनका प्रभाव यातायात (Traffic) को केन्द्रित करने मे होता है, वरन् ये राजनीतिक भूगोल को भी व्यक्त करती है क्योकि यह उस क्षेत्र की सीमा को भी प्रभावित करती है जिनका सबध नगरो के कार्यो मे होता है।[5]

आधुनिक काल मे नगरो और कस्बो का स्वरूप औद्योगिक तथा व्यापारिक दोनो ही होता है, जिसके पूर्ण विकास के लिए आवागमन के मार्गो का महत्त्व सभवत. अन्य कारणो से सबसे अधिक होता है। इन मार्गो पर स्थिति के अनुसार नगरो की स्थिति तीन प्रकार की हो सकती है —

(क) स्थल मार्गों पर, (ख) जल मार्गों पर, तथा (ग) वायु मार्गो पर।

(क) स्थल-मार्गों पर नगरों की स्थिति

नगरो की स्थिति पर धरातलीय बनावट का बडा प्रभाव पड़ता है। मैदानों, पर्वतों और मरुस्थलो मे नगरो को बसाने के लिए विभिन्न *भौगोलिक परिस्थितियां* होती है। आवागमन के केन्द्रो की उत्पत्ति और विकास मुख्यत दो कारणो से होता है। (१) जहाँ बहुत से मार्ग एक स्थान पर आकर मिलते हैं, तथा (२) जहाँ कोई प्राकृतिक बाधा रही हो जिसने मार्ग को अवरुद्ध कर दिया हो।

(१) जहां आवागमन के साधनो मे परिवर्तन होता है अथवा जहां दो विभिन्न प्रकार के क्षेत्र मिलते हैं वहां नगरो की उत्पत्ति अनिवार्य भी हो जाती है। क्योकि ऐसे स्थानो पर माल इकट्ठा करने (Storage) और पैकिंग करने आदि की सुविधायें

4 "Towns are nodes of route-systems and their importance closely reflects the degree to which they possess the property which has been called nodality" –*Smailes*, **Geography of Towns**, 1960, p. 55.

5. **Ibid**, p. 54.

(i) एकत्रण सम्बन्धी—(क) खनिज केन्द्र, (ख) मछली पकड़ने के केन्द्र, (ग) वनों के निकटवर्ती केन्द्र, (घ) गोदामों वाले केन्द्र।

(ii) वितरण सम्बन्धी—(क) निर्यात केन्द्र, (ख) आयात केन्द्र, (ग) रसद या पूर्ति वाले नगर।

(iii) स्थानान्तरण सम्बन्धी—(क) बाजार, (ख) प्रपात नगर, (ग) सामान-तोड़क नगर, (घ) पुल वाले नगर, (ङ) ज्वार सीमान्त वाले नगर, (च) नौ-सीमान्त वाले नगर।

नगरों का कार्य सम्बन्धी एक दूसरा वर्गीकरण चौंसी हैरिस द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यह वर्गीकरण मुख्यत अमरीकी नगरों के लिये है। इस वर्गीकरण के लिए ९८४ नगरों में जनसंख्या के व्यवसाय सम्बन्धी आँकड़े इकट्ठे किये गये थे। उन्हीं के आधार पर श्री हैरिस ने नगरों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :[11]

(१) औद्योगिक या निर्माणक नगर (Manufacturing Cities)—जिनमें ६०% लोगों का मुख्य व्यवसाय कारखानों में काम करना है। ऐसे नगर संयुक्त राज्य की औद्योगिक पेटी में पाये जाते हैं। यह पेटी ओहियो नदी के उत्तर में तथा दक्षिण की ओर पिडमौंट के पठार और एपैलेशियन की बड़ी घाटी तक फैली है। फिलाडेल्फिया, पिट्सबर्ग, ओहियो, डिट्रायट, लोवेल तथा फाल-रिवर ऐसे ही नगर हैं। ये नगर पहले व्यापार आदि में ही संलग्न थे किन्तु अब प्रमुख औद्योगिक केन्द्र बन चुके हैं। भारत में इस प्रकार के नगर भिलाई, दुर्गापुर, मोदीनगर, जमशेदपुर आदि हैं।

(२) विभिन्नता वाले नगर (Diversified Cities)—जिनमें उद्योगों में ६०% से कम तथा थोक और खुदरा व्यापार में क्रमश २०% तथा ५०% से कम जनसंख्या लगी है। बोस्टन, न्यूयार्क, बाल्टीमोर, अटलांटा, बर्मिंघम, शिकागो, मिनियापोलिस, सैंट लुईस, हाऊस्टन, स्पोकेन, पोर्टलैंड, स्कारमैंटो तथा लॉस एंजिल्स ऐसे ही नगर हैं। कानपुर, दिल्ली, इन्दौर, आगरा की गणना इस प्रकार के नगरों में कर सकते हैं।

(३) थोक व्यापार वाले मुख्य नगर—शिकागो तथा न्यूयार्क हैं। कुछ नगर जो वितरण-कार्यों से सम्बन्धित हैं—जैसे, सैनफ्रांसिसको, सिएल, साल्टलेक, डेनवर, ओमाहा और डल्लास आदि भी इसी श्रेणी में सम्मिलित किये जाते हैं। इनमें २०% जनसंख्या थोक व्यापार में लगी होती है।

(४) खुदरा व्यापार वाले नगर—औद्योगिक पेटी की सीमा पर अवस्थित हैं विशेषत तेल उत्पादन प्रदेश में जैसे विचीया, तूलसा तथा श्रेवपोर्ट आदि। आधे से अधिक इस प्रकार के नगर बड़े मैदान के पूर्वी छोर पर इन नगरों में कुल जनसंख्या का ५०% से कुछ भाग लगा होता है।

(५) यातायात नगर—जहाँ कुल जनसंख्या का ११% भाग लगा है। ये अधिकतर रेल मार्गों या बन्दरगाहों पर स्थित पाये जाते हैं। न्यूआर्लियन्स, गैलवेस्टन, कम्बरलैंड, सवन्ना आदि ऐसे ही नगर हैं।

11. *Harris, C.* "Functional Classification of Cities of U. S A," **Geographical Review**, 1943, p. 92.

कंचनपारा, मुगलसराय, वाल्टेयर, आरकोन, खड़गपुर, गोरखपुर, हुब्ली, कानपुर, लखनऊ दिल्ली, अहमदाबाद, इण्डियानापोलिस, पेरिस लन्दन तथा न्यूयार्क ऐसे नगरों के प्रमुख उदाहरण है।

(ख) जल-मार्गो पर नगरों की स्थिति

(१) नदियों के सगम पर, जहाँ तीन घाटियाँ मिलती हैं, नगरो का विकास हो जाता है क्योंकि ऐसे स्थानो पर तीन ओर के तीन पृष्ठ देशो की उपज इकट्ठी की जाती है और यहाँ से उन्हे पुनर्वितरण किया जा सकता है। गगा-यमुना के सगम पर इलाहाबाद, मिसीसिपी और मिस्सौरी के सगम पर सेंट लुइस; श्वेत और नीली नील पर खारतूम; हान और याग्टसीक्याग पर हांको और शहेल तथा टेम्स के सगम पर ऑक्सफोर्ड ऐसे ही नगर हैं। ये नगर माल एकत्रित करने और उसे पुर्नवितरण करने का काम करते है।

(२) नदियो के मोड पर भी (meanders) जहाँ नदियों का बहाव बहुत तेज होता है एक ओर से आये हुए माल को इकट्ठा करके नीचे की ओर माल को पुनर्वितरण करने का प्रबन्ध होने से, बडे-बडे नगर बस जाते हैं। ऐसे नगर मुख्यतः व्यापारिक ही होते हैं। डोन नदी के मोड पर शैफील्ड, ह्वागहो पर कोई फेंग और वाल्गा पर स्टालिनग्राड तथा नाइजर पर टिम्बकटू और नील पर खारतूम ऐसे ही नगरो के उदाहरण हैं।

(३) उन नदियो के मुहाने पर, जहाँ तक कि बडे-बड़े जहाज आ जा सकते हैं, भीतरी भाग का माल भेजने और बाहर का माल एकत्रित करने मे व्यापारिक नगर बस जाते हैं। सेंटलारेंस पर क्यूबेक और गगा के मुहाने के पास कलकत्ता इसी तरह के नगर है।

(४) नदियो की एस्चुरी के सिरे पर या यातायात की सीमा पर जहाँ से आगे कोई पुल नहीं बनाया जा सकता वहाँ भी नगरो की उत्पत्ति हो जाती है। हैम्बर्ग, रोम और लन्दन ऐसे ही नगर हैं।

(५) जिन स्थानो पर नदी की गहराई इतनी कम होती है कि नदी को सरलता से पार किया जा सके वहा भी नगर बस जाते है। इनके मुख्य उदाहरण बेडफोर्ट और वॉरसेस्टर हैं। इन्हे **फोर्ड नगर** (Ford Towns) कहते है। भारत मे महानदी पर कटक, कृष्णा पर विजयवाडा और गोदावरी पर राजमहेंद्री ऐसे ही नगरो के उदाहरण हैं।

(६) *नदियों पर झरने वाले स्थानो पर नाव यातायात समाप्त हो जाता है* इसलिये वहाँ से माल को दूसरे यातायात मार्ग पर रखना पडता है। ऐसे स्थानो को यातायात साधन के परिवर्तन का नगर कहते हैं। जल प्रपात से जल और विद्युत-शक्ति दोनो ही प्राप्त हो जाती है। सयुक्त राज्य मे प्रपात रेखा (Fall Line) पर स्थित किल्लालो, बफैलो, रकाफ्होसेन ऐसे ही नगर हैं। ये सभी व्यापारिक और औद्योगिक नगर होते है।

(७) नदी के मोड के बीच मे ऊँची भूमि पर भी नगरों का विकास हो जाता है। ऐसी भूमि के चारो ओर नदी खाई (ditch) का काम करती है और शहर की सुरक्षा होती है। ड्यूरबरी, डरहम और पेरिस ऐसे नगरो के मुख्य उदाहरण हैं।

३. बाहर से आने वाली वस्तुओं का वितरण करते हैं ।

ये तीनों कार्य नगरों के आर्थिक कार्य या क्रियायें कहलाती हैं ।

इनके अतिरिक्त नगरों के सामाजिक कार्य भी होते है, यथा—

१. ये शिक्षा, स्वास्थ्य, आमोद-प्रमोद तथा अन्य सास्कृतिक सेवायें प्रदान करते हैं ।

२. ये प्रादेशिक और जिलों के निवासियों के बीच विचारों का आदान-प्रदान करने में योग देते हैं । जिलों के केन्द्र बिन्दु होने के कारण ये सही अर्थ में विभिन्न विचारों वाली जनसंख्या के लिए आदर्श मिलन-स्थल का कार्य करते हैं ।

३ ये क्षेत्र की सामाजिक जीवन के प्रतीक होते हैं तथा नये विचारों और सम्मतियों के निकास-गृह ।[12]

(ग) विकास विधियों के अनुसार नगरों का वर्गीकरण

कस्बों या नगरों का विकास सभी क्षेत्रों में समान रूप से या एकसा नहीं होता । प्राय. इनकी विकास विधियाँ कम अधिक एकसी होती हैं । मोटे तौर पर कस्बे या नगर दो प्रकार के होते हैं । एक वे जिनका विकास बिना किसी पूर्व योजना के हुआ है अत. इन्हें **अनियोजित कस्बे या नगर** (unplanned towns) कहा जाता है । दूसरे वे जिनकी उत्पत्ति एक निश्चित योजना के अनुसार की जाती है । जहाँ मानव की आवश्यकता के सभी उपादान एकत्रित करने के प्रयास किये जाते है । ऐसे नगर साधारण बस्तियों से नगरों के कार्य सम्पन्न करने के लिए विकसित किये जाते है । ये अधिकतर किसी पूर्व-नागरिक केन्द्र के निकट होते हैं । ऐसे नगर **सुनियोजित** (Planned) कहलाते हैं ।

विश्व में दोनों ही प्रकार के कस्बे तथा नगर मिलते है, **ऊर, मिनोआन** तथा **फोनीशियन नगर** मुख्यत अनियोजित हैं जबकि **ताल अमरना, मोहन जोदड़ो** **तिमगदनगर** नियोजित नगर थे ।

प्रत्येक विकास या निर्माण विधि की अपनी विशेषता होती है, जिसके अनुसार ही कोई नगर बसाया जाता है । मुख्य विकास विधियाँ ये हैं .—

(१) **शतरंज या जाल योजना** (Chequer Board or Grid Plan)—इस योजना में नगर की सड़कें बिल्कुल सीधी होती हैं तथा वे एक दूसरे को समकोण पर काटती है । मकानों तथा दुकानों का निर्माण सड़कों के दोनों ओर होता है तथा सड़कों के बीच वाले भाग **ट्रैफिक स्टेशन** के लिए काम में लाये जाते हैं तथा सुन्दरता के लिए इनमें फूल आदि के पौधे या फव्वारे लगा दिये जाते हैं । प्राचीन काल का मोहन जोदड़ो नगर पूर्णत इसी विधि के अनुसार बनाया गया था । यही विधि मध्य पूर्व के अनेक प्राचीन नगरों के निर्माण में अपनाई गई थी । विशेषकर एलैक्सैन्डर के आक्रमण के उपरात । ६ ठी शताब्दी से तो यह विधि बहुत ही अधिक काम में लाई

12. "As the traffic nodes of the district they are **par excellance** the meeting places and points of assembly of population, the hubs of social life, and the clearing house of opinions and ideas"—*Smails*, **Op. Cit.**, p. 137.

(२) शिक्षा केन्द्र (Educational Centres)—ये के होते हैं। इन स्थानो मे शिक्षा प्राप्त करने के लिए दूर-दूर मे लगते है। इनकी सुख सुविधाओ को पूर्ण करने के लिए अन्य आकर जम जाते हैं और कालान्तर में ये केन्द्र बड़े विख्यात हो जाते हैं। प्राचीन भारत मे नालन्दा और तक्षशिला दो विश्वविख्यात विश्वविद्यालय थे। वर्तमान काल मे भी अलीगढ़, अनामलायनगर, रुड़की, सागर, वल्लभनगर, प्रयाग, वाराणसी, ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज, स्टाकहोम, लीपजिग, हावर्ड, कोलंबिया, बर्लिन आदि शिक्षा केन्द्रो के रूप में ही महत्वपूर्ण है।

(३) स्वास्थ्यवर्धक स्थान (Health Resort)—कुछ स्थान अपनी उत्तम जलवायु और प्राकृतिक दृश्यो के कारण ही नगरों के रूप मे विकसित हो जाते हैं। यहाँ हजारो यात्री सैर करने के लिए आते है और इस प्रकार यहाँ होटल आदि का व्यवसाय उन्नत कर जाता है। यात्रा उद्योग (Tourist Industry) प्रोत्साहित होता है। भारत मे नैनीताल, दार्जिलिंग, शिमला, मु० डलहौजी, मसूरी, अल्मोड़ा, गुलमर्ग, श्रीनगर, उटकमड, राची, पचमढी, आबू, महाबलेश्वर, कोडेकैनाल, कोनूर तथा स्विटजरलैंड मे डैविस, बर्न, ज्यूरिच आदि ऐसे ही रमणीक नगर है जहाँ प्रति वर्ष ग्रीष्म ऋतु मे असख्य व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ करने आते हैं।

शीतोष्ण कटिबन्ध मे समुद्र तटीय भागों मे **बीच नगर** (Beach Towns) बड़े महत्व वाले होते हैं। इन स्थानो मे लोग मनोरंजन और क्रीडा के लिए जाते है। फ्रास मे नाइन्स, सयुक्त राज्य अमरीका मे न्यूजर्सी, बेल्जियम मे ओस्टैंड, इंगलैंड में ब्राइटन, इटली मे जेनेवा और भारत मे मद्रास, पुरी, वाल्टेयर और गोपालपुर आदि ऐसे ही नगरो की श्रेणी मे आते है।

(४) तीर्थ स्थान (Religious Towns)—प्राचीन काल से ही तीर्थ स्थानों मे नगरो का विकास हुआ है। ऐसे स्थानो मे हजारो यात्री आते जाते है तो उनकी सेवा-सुश्रुषा और आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अन्य लोग भी वहाँ आकर बस जाते है और स्थायी रूप से वहाँ की जनसख्या बढ जाती है। गया, हरिद्वार, वृन्दावन, मथुरा, प्रयाग, काजीवरम्, तंजौर, रामेश्वरम्, उज्जैन, पुरी, मदुराई, नासिक, वाराणसी, द्वारिकापुरी और नाथद्वारा ऐसे ही प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। विदेशो में जैरुसलेम, मक्का, मदीना, ल्हासा, रोम भी धार्मिक केन्द्र हैं।

(५) खनिज केन्द्र (Mineral Centres)—जिन भागो मे खनिज पदार्थ पाये जाते हैं उनकी उन्नति शीघ्र ही हो जाती है और वहाँ नगरो का विकास भी हो जाता है। नैवादा के सिल्वर पीक नगर का महत्व उसकी चाँदी की खानों मे निहित है। ओंटारिया का सडबरी नगर भी निकल की खानो के कारण ही प्रसिद्ध हुआ है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया के मरुस्थल मे कालगूर्ली, और कूलगार्ली नगरो की उत्पत्ति सोने की खानो के कारण ही हुई। शैफील्ड तथा न्यूकैसिल, धनबाद, रानीगंज, आसनसोल का विकास कोयले की खानो के कारण हुआ। उत्तरी कनाडा मे नार्मन वेल्स और कैनोल्म और संयुक्त राज्य अमरीका मे पैट्रोलिया वीमान्ट का विकास मिट्टी के तेल के कुओ के कारण हुआ। डॉसन सिटी और किम्बरले का महत्व सोने और हीरों की खानो के कारण ही सभव हो सका है। किन्तु खनिज केन्द्रो का जीवन काल अत्यन्त अल्प और अस्थाई होता है। क्योकि ज्योंही खनिज पदार्थों की समाप्ति होना आरम्भ होती है वे नगर भी उजड़ जाते है।

आधुनिक नगर-निर्माण विद्वानों की राय में पैलियोटैकनिक नगरों में शीघ्रातिशीघ्र सुधार किये जायें तथा एक आधुनिक नगर में ५०,००० से अधिक जनसंख्या न हो। प्रति ५०,००० व्यक्तियों के नगर को पूर्णतः स्वावलम्बी बनाया जाय। इस प्रकार के नये नगर पुराने नगरों के निकट ही अथवा उनसे कुछ दूर हरी-पट्टी (green-belt) के उस पार बसाया जाये।

कस्बों का पतन या ह्रास (Decline of Towns)

नगरों के विकास के कारणों का जितना अध्ययन किया गया है उतना अध्ययन उनके पतन के कारणों का नहीं। फिर भी पुरानी दुनिया में ऐसे अनेक नगर हैं जिनका पतन हो चुका है। इसी प्रकार नई दुनिया के नये भागों में, जहाँ आर्थिक स्रोत या प्राकृतिक सम्पत्ति के नष्ट होने पर अनेक भूत नगरों (Ghost Cities) के अवशेष मिलते हैं विशेषतः संयुक्त राज्य के पूर्वी भागों में तथा कनाडा के उत्तर-पश्चिमी भाग में। सन् १५०० में यूरोप के पाँच प्रमुख नगर कुस्तुनतुनिया, पेरिस, नेपल्स, मिलान और लिस्बन थे किन्तु आज इनमें से केवल पेरिस ही विश्व का एक प्रमुख नगर है, जबकि अन्य चार नगर अपनी समृद्धि खो बैठे हैं। क्योंकि पहले भूमध्यसागरीय तट का व्यापार इन्हीं चार नगरों द्वारा होता था किन्तु बाद में उत्तमआशा अन्तरीप के मार्ग की खोज के उपरान्त विश्व का व्यापार अमरीकी देशों से होने लगा तो इन नगरों का महत्व कम हो गया। १४६३ में कुस्तुनतुनिया का ह्रास बड़ी तेजी से हुआ। मिलान और नेपल्स का इसके एक शताब्दी बाद। १६०० से १८०० के बीच में अनेक नये नगरों का उदय हुआ जिनमें प्रमुख लंदन, लिस्बन और अमस्टरडम प्रमुख हैं। ये सभी आंध्र-महासागर में उपयुक्त स्थानों पर बसे हैं अतः इनका व्यापारिक महत्व बढ़ा है। १८०० तक लंदन विश्व का पहला, लिस्बन चौथा और अमस्टरडम नवां नगर बन गया था। इसी अवधि में मास्को और वियना नगर भी बने। इनके उदय का कारण उनका राजनीतिक महत्व का होना था। इस काल में उत्तरी अमरीका में भी नगरों का विकास हुआ किन्तु अनेक नगरों का पतन भी हुआ।

आधुनिक नगरों के पतन के मुख्य कारण ये हैं :—

(१) **मार्गों का विचलित होना**—अनेक कस्बे और नगर किसी घाटी, पर्वत, खाड़ी, नदियों के मुहाने या मैदानों की उपज नहीं वरन् वे मानव द्वारा इनके उपयोगों की उपज है। किसी स्थान की केन्द्रीय स्थिति मार्गों के मिलन पर होती है, किन्तु जब व्यापार का स्वरूप बदलता है तो व्यापारिक मार्गों का रुख भी बदल जाता है। १६ वीं और १७ वीं शताब्दी में सामुद्रिक जहाजों के विकास के फलस्वरूप व्यापार का स्वरूप बदल कर स्थलीय से जलीय हो गया। अतः जो स्थान आंध्र महासागर के तट पर थे उनका महत्व बढ़ गया, जबकि भूमध्यसागरीय तट के स्थानों का महत्व कम हो गया। विशेषतः मार्सेलीज का किन्तु स्वेज नहर के खुलने पर इस नगर का महत्व एक बार फिर से बढ़ गया। भारत में भी रेलों के विकास के कारण जहाँ एक ओर नये नगर अस्तित्व में आए वहाँ दूसरी ओर नदियों पर स्थित स्थानों का महत्व समाप्त हो गया।

(२) **निकटवर्ती भागों में नये नगरों का जन्म**—जब किसी प्राचीन कस्बे या नगरों के निकट किसी नये औद्योगिक और व्यवसायिक नगर का जन्म हो जाता

(क) स्थिति के आधार पर

सामान्यतः कस्बे तथा नगरो की स्थिति भूतल पर सुनिश्चित होती है। ये प्राय. पहाडो पर या उनकी तलैटियो मे, पठारो पर, घाटियो मे अथवा मैदानो में स्थित होते हैं, *जहाँ न केवल सुरक्षा होती है वरन् विस्तार और आवागमन के लिये* लम्बे चौडे उपयुक्त क्षेत्र मिलते है तथा पीने का जल भी उपलब्ध हो जाता है। ऐसे कस्बो या नगरो को क्रमश **पहाड़ी नगर** (Hill town)-जैसे बर्न, नैनीताल, दार्जिलिंग या शिलांग; **पठारी नगर** (Piedmont town)-नागपुर, जबलपुर, इंदौर; **घाटी के नगर** (Valley town)-देहरादून तथा **मैदानी नगर** (Foot hill town) इलाहाबाद पेरिस, लखनऊ, कानपुर आदि कहते है। पहाडी भागों मे **दर्रों के नगर** (Gap town) भी मिलते हैं, जो प्राय दर्रों मे या उनके निकट ही बसे होते है—जैसे, खैबर, पेशावर आदि; अथवा पहाडी झील के निकट **झील के नगर** (Lake town) जैसे कॉन्सटैंस, लुसर्न अथवा श्रीनगर आदि। समुद्र तटीय भागो मे **तटीय नगर** (Coastal town) *अथवा बन्दरगाह, द्वीपो पर बसे द्वीपीय नगर (होनोलूलू, पोर्ट ब्लेयर आदि) और* जल प्रपातो पर या उसके सहारे नगर जैसे उत्तरी-पूर्वी अमरीका मे **प्रपात नगर** (Fall town) ये सभी प्रकार के नगर सामान्यत· वस्तुओ का आदान-प्रदान करने में लगे होते हैं।

(ख) कार्यों के आधार पर

मार्शल अरूसो (Marcel Aurousseau) ने कार्यों के आधार पर कस्बों और नगरो को ६ बडे वर्गों मे तथा २८ उप-वर्गों मे बाँटा है। इस वर्गीकरण का मुख्य आधार नगरो के ये कार्य हैं प्रशासन, सुरक्षा, संस्कृति, उत्पादन, मनोरंजन तथा *आवागमन। इन ६ वर्गों को पुन निम्न विभागो मे बाँटा गया है :*[10]

१. **प्रशासन** (Administration)—(क) राजधानियाँ और (ख) माल-गुजारी वसूल करने वाले कस्बे नगर।

२. **सुरक्षा** (Defence)—(क) किले या गढ, (ख) सैनिक कस्बे; (ग) सामुद्रिक सैनिक कस्बे।

३. **सांस्कृतिक** (Culture)—(क) गिरजाघर वाले कस्बे; (ख) विश्व विद्यालय वाले कस्बे, (ग) कला केन्द्र, (घ) धार्मिक केन्द्र, (च) तीर्थयात्रा विश्राम केन्द्र।

४. **उत्पादन** (Production)—(क) औद्योगिक नगर, (ख) कुटीर उद्योग वाले केन्द्र।

५. **मनोरंजन** (Recreation)—(क) स्वास्थ्य केन्द्र; (ख) भ्रमण केन्द्र; (ग) अवकाश केन्द्र।

६. **संचार एवं आदान प्रदान** (Communications)—

---

10 *Aurosseau, M.* "Distribution of Population," **Geography cal Review**, Vol. XI, 1921; *Finch & Trewarcha* **Elements of Geography**, 1957, p. 855.

'नगर का जन्म इसलिए हुआ कि उस स्थान का वातावरण उसके लालन-पालन और शिक्षा के लिए बड़ा अनुकूल था क्योंकि यह वातावरण पूर्णत. सुरक्षित था। छोटे नगरो मे मनुष्यो में सहयोग की भावना अधिक होती है तथा जीवन सीधा-सादा होता है। किन्तु दानव नगर मे भीड़ से सम्बन्धित अनेक बुराइयां घर कर लेती हैं। अनेक प्रकार के जुर्म होने लगते हैं। अनेक प्रकार की क्रियायें—कई प्रकार के खेल तथा मुक्केबाजी आदि—अधिकता से होने लगती है। युद्ध काल मे इन पर हवाई-आक्रमण होने का भी डर रहता है। जब बाहर से खाद्यपूर्ति संभव नहीं हो पाती तो इसकी विशाल जनसख्या भूखों मरने लगती है। भूमि की कीमतें बढ जाती हैं, यातायात के किराये और यातायात की भीड़ भी बढने लगती है। आमोद-प्रमोद के लिए खुले स्थानो का प्राय अभाव हो जाता है। जब किसी नगर की जनसख्या ५०,००० से अधिक हो जाती है तो वह अपने नागरिको का पूरा कोटा भरने मे असमर्थ हो जाता है। जन्म दर घट जाने से प्रवास भी बन्द हो जाता है। अत: भविष्य के नगर आज के दानव नगरो से छोटे होने चाहिए।"

नगरों की विशेषताएँ एवं कार्य

यदि हम विश्व की जनसख्या विन्यास के मानचित्र पर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट होगा कि कुछ विशेष प्रदेशो मे जनसंख्या घनी है अत. इन्ही क्षेत्रों मे नगर (Cities) मिलते हैं, जबकि ध्रुवीय प्रदेशो और मरुस्थलीय क्षेत्रो में नगरो का वास्तविक अभाव पाया जाता है। नगरो की स्थापना मे कोई एक कारण नही होता। यद्यपि तापक्रम और वर्षा तथा भौतिक स्वरूप नगरो की स्थिति को प्रभावित करते हैं किन्तु राजनीतिक कारण, किसी खनिज या तेल स्रोतो की उपलब्धि, बन्दरगाह सम्बन्धी सुविधा तथा अन्य अनुकूल दशायें नगरो की स्थिति को प्रभावित करते हैं अत: जहाँ ये अनुकूल दशायें अधिक मात्रा मे मिलती हैं वही नगर बन जाते हैं।

कस्बो और नगरो मे बहुत ही कम अन्तर पाया जाता है। प्राय. कस्बे ही कालान्तर मे जाकर नगरो का रूप धारण कर लेते हैं। यद्यपि जनसंख्या के आधार पर उनमे विशेष अन्तर नही कहा जा सकता किन्तु कार्य तथा कार्य-क्षेत्र की दृष्टि से अवश्य ही दोनो मे अन्तर होता है। कस्बो के कार्य अधिकतर सीमित होते हैं, उनमें नगरों की भाँति स्पष्टत. कार्यक्षेत्र नही मिलते। अतः कस्बो मे आवागमन, आदान-प्रदान, विनिमय, एकत्रण, बैंकिंग सुविधाओ आदि की उतनी अच्छी व्यवस्था नही मिलती जितनी एक बडे नगर मे मिलती है। दूसरा बडा अन्तर नगरो के सामाजिक संगठन मे होता है। डा० ममफोर्ड के अनुसार "यह एक स्थान है जहाँ जीवन की अनेक भिन्न रश्मियाँ मिलाकर एक हो जाती हैं तथा प्रत्येक ऐतिहासिक युग का प्रभाव स्पष्टत. दृष्टिगोचर होता है और यह प्रभाव नगर के जीवन-स्तर मे पूर्णतः जम जाता है। युग और स्थान की जटिलता किसी नगर के चरित्र को एक विशेष स्वरूप प्रदान करती है क्योंकि नगर मे उस प्रदेश की सांस्कृतिक जीवन की झाँकी देखने को मिलती है और यह इसकी कला और व्यवस्था का सच्चा प्रतीक होता है।"[१४]

नगर तत्कालीन मानव सभ्यता की चरम सीमा का प्रतीक हैं, यहाँ साधारण-तया अधिक जन समूह एकत्रित रहता है। किसी क्षेत्र के नगर उसके भौतिक विकास

14. *Mumford, L.*, **Culture of Cities**, 1946.

इन नगरों के अन्तर्गत श्री हैरिस ने विश्वविद्यालय नगर (एन एबोर, ब्लू-मीगटन, लौरेंस तथा इथाका) खनिज केन्द्र (हिबीग, बूटे, कोनेल्सविले); स्वास्थ्य केन्द्र (फोनिक्स, सैन डियागो, कोलोराडो स्प्रिंग, सैंटा फे, मियामी, बाइलोक्सी, एटलांटा सिटी आदि) प्रकार के नगरों को भी स्वीकार किया है।

अमरीका के इन नगरो के बारे मे एक विशेष रोचक तथ्य यह है कि अधिकांश नगर एक कटिबन्ध के रूप मे उत्तर-पूर्वी कोने मे है जिसका अर्थ यह है कि ये नगर अभी विकास की अस्थायी अवस्था मे हैं। आरम्भ मे जब उद्योगो का विकास न्यू इगलैंड स्टेट्स मे हुआ तो अधिकाश नगर इसी क्षेत्र मे बसे, क्योकि पश्चिमी भाग विकास के प्रथम चरणों मे ही था। अब औद्योगिक विकास के क्षेत्र मिसीसिपी क्षेत्रो मे होने से नगर भी पश्चिमी ओर स्थापित होने लगे। भविष्य मे इस स्थिति मे और भी परिवर्तन होने की सभावनायें हैं।

नीचे हम नागरिक बस्तियों का अपना वर्गीकरण प्रस्तुत करते है.—

नागरिक बस्ती के आधार

१ व्यावसायिक आधार	२ सामाजिक आधार	३ राजनीतिक आधार
१. क्षेत्रीय केन्द्र	१ शिक्षा केन्द्र	१. व्यवस्था केन्द्र
२. व्यावसायिक एव औद्योगिक केन्द्र	२. कला और संस्कृति केन्द्र	२. राजधानी एवं गढ
३. आवागमन के केन्द्र	३ स्वास्थ्य केन्द्र	३. सैनिक केन्द्र
(क) रेलवे जकशन	४. आमोद-प्रमोद	४. नौ-सेना केन्द्र
(ख) सड़कों के केन्द्र	५. भ्रमण स्थल	
(ग) हवाई अड्डे	६. धार्मिक महत्व के केन्द्र	
(घ) नदियों के सगम स्थान एव मोड़ पर	७. ऐतिहासिक केन्द्र	
(ङ) बन्दरगाह	८. विज्ञान एवं साहित्य केन्द्र	
(ञ) दर्रों के निकट		
४. खनिज केन्द्र		

उपरोक्त आधार पर नगरों के कार्य ये है—

१. नगर रोजगार के केन्द्र होते हैं।

२. अपने निकटवर्ती क्षेत्रों के उत्पादनों के लिए यह एकत्रीकरण तथा बाजारों की व्यवस्था करते है।

की उत्पत्ति का प्रश्न नही उठा। आज भी विश्व के उन भागो मे जहाँ के निवासी खानाबदोश हैं—जैसे टड्रा और स्टेप्स प्रदेश मे—वहाँ नगरो का अभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। यदि यह कहा जाय कि नगरो के विकास और सभ्यता के स्तरो मे घनिष्ट सम्बन्ध है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। प्रो० टेलर (Taylor) के अनुसार नगरो का जीवन भी एक चक्र मे चलता है। अस्तु, प्रत्येक नगर किसी विशिष्ट युग की सास्कृतिक अवस्था और सभ्यता की दशा को व्यक्त करता है। नगरो और व्यापारिक विकास का भी गहरा सम्बन्ध है। आधुनिक सभ्यता व्यापारिक और औद्योगिक वृद्धि पर निर्भर करती है। अत इस युग के बडे-बडे नगर व्यापारिक और औद्योगिक ही है। ठीक ही कहा गया है कि आवागमन के साधन, और साज सुविधा ने ही बडे नगरों के अस्तित्व को सभव बनाया है। नगरों और व्यापार मे एक की वृद्धि से दूसरे की वृद्धि होती है। औद्योगिक क्राति के पूर्व स्थानीय उपज के क्रय विक्रय के लिए छोटे नगरो की उत्पत्ति हुई। इसके पश्चात् तो ज्यो-ज्यो बड़े उद्योग-धन्धो का विकास होता गया त्यो-त्यो नगरो का भी विकास होने लगा। यहाँ यह बता देना उचित होगा कि नगरो की विशेषतायें इस प्रकार है.—

(१) नगरो मे मकान एकत्रित तथा निवास सघन होता है। अत. वहाँ जन-संख्या का घनत्व भी बहुत अधिक होता है। उदाहरण के लिए न्यूयार्क की गगनचुम्बी ६ १ । मे ९०-८० मजिल होती है और प्रत्येक मजिल में १०-१५ हजार व्यक्ति रहते है। भारत मे बम्बई, कलकत्ता मे ५-६ मजिले मकान साधारणत. पाये जाते है। अन्यत्र दो तीन मजिलें।

(२) इनका मुख्य आधार व्यवसाय–वाणिज्य और उद्योग होता है।

(३) इनमे सामाजिक कार्यों की प्रधानता होती है, जैसे शिक्षा प्रचार, कला, धर्म तथा आमोद-प्रमोद के साधनो की व्यवस्था होती है।

(४) इनका राजनीतिक आधार भी होता है। इनके अन्तर्गत कचहरियाँ, थाना, जेल, न्यायालय आदि होती है।

नगरो के कई कार्य होते हैं। नगर के विभिन्न भाग विभिन्न कार्य करते है प्रत्येक भाग का कार्य किसी एक विशिष्ट प्रकार का होता है। ये सभी भाग मिलाकर एक सम्मिलित नगर व्यवस्था तथा जटिलता को जन्म देते हैं। अत नगर मे व्यवसायिक, निवास सबधी, प्रशासकीय और अन्य कार्य क्षेत्र होते है। इसीलिए नगरो के कार्य भी विभिन्न प्रकार के होते है। **परबोम** के अनुसार नगरो के सात प्राथमिक कार्य होते हैं। ये उस नगर की योजना द्वारा स्पष्टत होते है। यह रहने का स्थान होता है, मार्गो का मिलन बिंदु होता है, कला तथा विज्ञान का केन्द्र होता है, शासन का केन्द्र होता है, । सामाजिक सम्पर्क का साधन होता है तथा धर्म का मन्दिर होता है।"[१७] प्रत्येक नगर का अस्तित्व और विकास इन्ही मे से किसी एक या अनेक सम्मिलित कार्यो पर अवलबित रहता है। प्रत्येक नगर अपने पृष्ठ देश का आकर्षण-बिंदु होता है। इस पृष्ठ देश को कई नामो से पुकारा जाता है—यथा Umland,[१८] 'Hinterland, 'Sphere of

17. *Purbom, C. B.*, **The Building of Satellite Towns**, **Pt. I.**, p. 8.

18. इस शब्द का सबसे पहले उपयोग अमरीकी भूगोल शास्त्री स्टैनले डोज ने किया था—**Geographical Review**, Vol. 29, No. 3, Sept. 1932, pp. 159-

जाने लगी है। रोमन लोगो ने इस विधि को अपना कर अपने साम्राज्य मे अनेक नगरो का विकास किया यद्यपि रोम के नगर चार-दिवारी से घिरे होते थे जिनमें साधारणतः चार दरवाजे होते थे। उत्तरी अफीका में टिमगढ नगर की एक भुजा ३५० गज की थी जिसमे कुल १३२ चक (Blocks or Insulae) थे। थियेटर, वाचनालय आदि के स्थान बड़े उपयुक्त थे। मोहन जोदड़ो नगर मे ४ प्रमुख सडकें तथा अनेक छोटी सडकें थी जो एक दूसरे से समकोण बनाती थी। सडकें प्राय. १८ फीट चौड़ी थी किन्तु नगर के मध्य की सडक ३३ फीट थी। सम्पूर्ण नगर आयताकार भागो में बटा था। गलियां प्रायः वायु की प्रवाह दिशा के अनुसार बनाई गई थी। सड़को के मोड पर मकानो के कोने गोलाई लिए बनाये गये थे जिससे गाड़ियाँ भली भाति मुड तथा निकल सकें। आधुनिक भारत मे जयपुर तथा चंडीगढ़ नगरों का निर्माण भी इसी विधि के अनुसार किया गया है। **विचेंस्टर, कोलचेस्टर, टूर्स; ओलियन्स, सारगोसा,** मोस्को, पेरिस, प्रकृति नगरो मे भी यह विधि अपनाई गई है। चकों मे विभिक्त होने के कारण इस प्रणाली को आयताकार अथवा **वर्गाकार** (Rectilineal Pattern) भी कहा जाता है।

मध्य युग के जर्मनी, फ्रास तथा पश्चिमी यूरोप के अनेक नगरो मे यही विधि मिलती है।

(२) **मकड़ी के जाले या रेडियो केन्द्रित विधि** (Spiders Web a Radio-Centric Plan)—**जागृत तथा सुधार युग** मे आयताकार विधि की अपेक्षा नगरो की सुन्दरता के स्थान पर उनकी सुरक्षा पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। इसके अंतर्गत नगरो की योजना एक मकडी के जाले की भाति होती है। इसमे नगर का विकास नियमित रूप से होता है। सडकें बड़ी और चौडी तथा प्रधान सडको को जोड़ने वाली होती है। इनके दोनों किनारो पर निवास-स्थान अथवा *बाजार बनाया* जाता हैं। नगर का प्रमुख व्यापारिक भाग (Core or Kernel of the City) बीच मे होता है, जहाँ प्रत्येक दिशा से आना जाना सभव होता है। इसी भाग में वस्तुओं का आदान-प्रदान भी होता है। **सेंट पीटर्सबर्ग, वार्सेलीज, कार्लश्रू, फिलाडेलफिया तथा क्योटो** नगर इस विधि के नगर है।

कभी-कभी नगरो का विकास भिन्न भिन्न भागों मे भिन्न भिन्न विधियों द्वारा भी किया जाता है अतः इनमें कई विधियों का एक साथ मिश्रण मिलता है। **श्री ममफोर्ड लुईस** *ने नगरो के विकास को निम्न प्रकार से बताया है* —

Eotechnic—जिसके अंतर्गत नगर चार दिवारो से घिरे सुरक्षित स्थान होते है। इनमे सुन्दर भवन और मंदिर तथा गिरजाघर आदि होते हैं तथा जिनमें व्यापार आदि भी होता है।

Paleotechnic—आधुनिक औद्योगिक नगर जिनका विकास कुछ नियोजित और कुछ पुराने ढगो से ही होता है।

Neotechnic—आधुनिक नगर जिनका विकास पूर्णतः एक योजनाबद्ध नियम के अनुसार होता है।

Megapolies—पूर्णतः अनियोजित नगर जिनकी जनसख्या १० लाख घरो से भी अधिक की होती है।

अत्यन्त घने एवं पास-पास बसे नगर मुख्यत. औद्योगिक क्षेत्रों में मिलते हैं–जहाँ एक या दो प्रधान नगर होने हैं और इन्ही के निकट अनेक छोटे सहायक नगर होते हैं। ये सब यातायात के मार्गो द्वारा आपस मे जुडे होते हैं। यद्यपि ये छोटे नगर केवल आर्थिक एव औद्योगिक उन्नति के लिए इन बडे नगरों का ही भाग होते हैं किन्तु प्रशासन की दृष्टि मे ये स्वतन्त्र इकाइयाँ होते हैं। जब अनेक नगर आपस मे मिल जाते हैं तो वे महानगरों या नगर समूहों (Conurbations) का निर्माण करते हैं। इस शब्द का उपयोग सबसे पहले श्री पैट्रिक गीडस ने किया था जब साधारण दशा में नगर का विकास और विस्तार वाहरी क्षेत्र की ओर हो, क्योंकि बीच के भाग पहले ही भर जाते हैं, अथवा जब छोटे-छोटे नगर आपस मे मिल जाते हैं या बड़ा नगर इन नगरो का भक्षण कर लेता है तो ये सब मिलकर नगर समूह को जन्म दे देते हैं। ऐसे नगरो मे भवन निर्माण क्रिया के साथ साथ नागरिक सीमा भी बढ जाती है। इस प्रकार के नगर-समूह विश्व के अनेक भागो मे मिलते हैं, जिनमे से कुछ मुख्य इस प्रकार हैं :—

ग्रेट ब्रिटेन मे इस प्रकार के कई महानगर मिलते हैं। १९ वी शताब्दी के आरंभ मे लन्दन विश्व का पहला बडा नगर था जिसकी जनसख्या १० लाख से भी अधिक थी। पेरिस की यह स्थिति १८५० मे और न्यूयार्क की १८६० मे हुई। ये ही १८ आधुनिक युग के महानगरो मे गिने जाते हैं। इस प्रकार के महानगर लगभग १०० माने जाते हैं। ग्रेट ब्रिटेन मे इनमे से सात हैं जिनका सम्बन्ध उद्योग विशेषो से है—मध्यवर्ती क्लाइड साइड, मर्से-साइड, दक्षिणी-पूर्वी लंकाशायर, टाइनसाइड, वैस्ट राइडिंग ऑफ़ यार्कशायर और वैस्ट-मिडलैंड समूह के अनेक नगर जो बर्मिघम और वूल्वरहैम्पटन के चारो ओर फैले हैं। लन्दन स्वय एक बडा महानगर है। ग्रेट ब्रिटेन की लगभग ४०% जनसख्या इन सात वडे नगर-समूहो मे रहती है जो कुल नागरिको की आधी जनसख्या है। नीचे की तालिका मे इन नगर-समूहो का क्षेत्रफल एवं जन-सख्या दी गई है[२]:—

महानगरीय क्षेत्र	क्षेत्रफल (वर्गमील मे)	जनसख्या (लाख मे) १९२१	१९३१	१९५१	१९६१
ग्रेटर-लन्दन	७२४·२	७४·८८	८२ १६	८३·४८	८१·७२
द० पू० लंकाशायर	३७९ ५	२३·६१	२४ २७	२४ २३	२४·२७
प० मिडलैंड	२६८·८	१७ ७३	१९·३३	२२ ३७	२३·४४
मध्य क्लाइडसाइड	३२४·४	१६ ३८	१६ ९०	१७ ६०	१८·०२
प० यार्कशायर	४८४ ६	१६·१४	१६ ५५	१६·९३	१७·०३
मर्सीसाइड	१५०·०	१२·६३	१३·४७	१३८२	१३·८६
टाइनसाइड	९०·२	८·१६	८ २७	८·३६	८·५२

लन्दन महानगर का क्षेत्र लदन काउटी से लगाकर मिडलसैक्स, हर्टफोर्ड शायर

2. *H. M. S.O.*, **Britain—An Official Handbook**, 1963, p. 17.

है, जो आधुनिक उपकरणों द्वारा अपने पृष्ठ-देश की अच्छी सेवा कर सकते हैं, तो उनका महत्व एक दम बढ जाता है और पुराने नगर प्राय. नष्ट होने लगते हैं। जैसे कानपुर के विकास के फलस्वरूप काल्पी का व्यापारिक महत्व समाप्त हो गया।

(३) राजनीतिक कारण—जब किसी प्रदेश या राज्य का क्षेत्रीय विस्तार बढ जाता है तो उसकी राजधानी का महत्व भी अवश्य ही बढता है—जैसा कि रोम के साथ हुआ है। १८७१ में जब यह इटली की राजधानी बनाया गया था तो इसकी जनसख्या लगभग २½ लाख थी किन्तु १९३१ में जब इसका कार्य क्षेत्र बढा तो जनसख्या भी १० लाख से अधिक होगई। इसी प्रकार व्यूनेस आयरेस तथा पेरिस नगरो का भी विकास हुआ किन्तु इसके विपरीत आस्ट्रिया के पतन के उपरात वियना का महत्व कम हो गया।

राजधानियो के अतिरिक्त राजनीतिक कारणो से बन्दरगाहों का महत्व भी नष्ट होने लगता है। ट्रीस्ट बन्दरगाह का महत्व आस्ट्रिया के पृष्ठदेश के विस्तार के कारण बढा है, किन्तु बाद मे १९२० मे यूरोप मे राजनीतिक परिवर्तनो के कारण जब बोहीमिया का व्यापार हैम्बर्ग के बदरगाह द्वारा होने लगा तो ट्रीस्ट का व्यापारिक महत्व बिल्कुल ही कम हो गया।

(४) नगरों के कार्यों का ह्रास—जब किसी नगर के पुराने कार्यों मे कमी होने लगती है अथवा बढती हुई आवश्यकता की पूर्ति नही हो पाती तो इन नगरो का पतन होने लगता है। जैसा कि रोन नदी के डेल्टा में स्थित एगे मोर्ट नगर के इतिहास से स्पष्ट होता है। इस बन्दरगाह का महत्व बहुत ही अल्पकाल के लिए केवल तब तक रहा जब तक कि फ्रांसीसी राजाओ का अधिकार लैंगडोक तटीय प्रदेशो मे नही हुआ। उसके बाद इस का पतन हो गया।

अंत मे यह कहा जा सकता है कि कोई भी एक कारण नगरो या कस्बों के पतन के लिए उत्तरदायी नही है। "इसमे कोई सदेह नही है कि नगर की स्थिति का जन्म मानव द्वारा स्वेच्छा से किया गया चुनाव है जो वह अपने वातावरण के साथ करता है, किन्तु इनकी वृद्धि, लालन-पालन अथवा पतन का सबध निश्चित रूप से उन भौतिक कारणो से होता है जो मानव सस्कृति मे बदलते रहते है।"[13] भौतिक कारण भी कस्बो के विनाश के कारण हो सकने है—यथा सूखा, बाढे या भूकम्प सदृश्य शक्तियाँ अथवा ज्वालामुखी के विस्फोट। ये कुछ विशिष्ट कारण हो सकने है किन्तु इनका प्रभाव अधिक नगरों पर नहीं पडता क्योकि भौतिक शक्तियो का कार्य प्रायः धीमे-धीमे ही होता है।

सास्कृतिक परिवर्तनो के फलस्वरूप भी नगरो के महत्व मे कमी होने लगती है। मानव जीवन की नई आवश्यकतायें नये स्थानो या नगरो को जन्म देती है और पुरानो को नष्ट कर देती है। किन्तु जो नागरिक क्षेत्र मानव व्यवस्था एव तात्रिक ज्ञान के फलस्वरूप होने वाले आकस्मिक परिवर्तनों से लाभान्वित होते हैं वे कम ही होते हैं किन्तु समय बीतने पर ये सुदृढ होती जाती हैं, इनकी जनसख्या सम्पति और समृद्धि मे स्थायित्व आ जाता है।

श्री ममफोर्ड के शब्दो मे दानव नगरों के पतन के बीज इस प्रकार बोये जाते हैं:

13 *Smailes*, **Op. Cit**, p. 65.

भाग १००० मील लंबी है जो औद्योगिक केन्द्रों को घेरे हुए है। इस पेटी के प्रमुख नगर न्यूयार्क, शिकागो, पिट्सबर्ग बोस्टन आदि है।

इन नगरों की जनसख्या इस प्रकार है—

	१९००	१९३०	१९४० (लाख मे)	१९५०	१९६१
न्यूयार्क	३४ ३७	६९'३०	७४ ५४	७८'३५	७७'८१
शिकागो	१६ ९८	३३ ७६	३३'९६	३६'०६	३५'५०
पिट्सबर्ग					६'०४
बोस्टन					६'९६

एशिया मे जापान मे भी महानगरो की एक पट्टी मिलती है। यहाँ १८९० मे नागरिक जनसख्या केवल ३०० लाख थी किन्तु अब यह लगभग ३½ गुना बढ गई है। जनसख्या की यह वृद्धि मुख्यत चार बडे नगरो और औद्योगिक केंद्रों मे ही हुई है जो क्वाटो के मैदानी भाग मे पूर्व-पश्चिम मे फैले है। टोकियो-याकोहामा, मे (८० लाख) तथा ओसाका-कोबे मे (५० लाख) मे अधिक मानव निवास करते है। ये ही यहाँ के विशाल नागरिक क्षेत्र है।

रूस मे भी १९३९ के बाद नगर-समूहों का विकास हुआ है। यहाँ १ लाख जनसख्या वाले लगभग ८२ नगर है जबकि मास्को और लेनिनग्राड मे क्रमशः ५० लाख और २८ लाख निवासी रहते है। १९३९ मे ऐसे नगर थे जिनकी जनसंख्या ५०,००० या उससे अधिक की थी। अब इनकी जनसख्या तीन-गुनी से भी अधिक बढ गई है। कुछ ऐसे नगरो का भी जन्म हो गया जिनका १९२६ मे बिलकुल ही अस्तित्व न था जैसे करगंडा और मैगनीटोगोवस्क जिनकी जनसख्या १½ लाख से भी अधिक है।

भारत मे भी इस प्रकार के मुख्यत तीन नगर-समूह मिलते है। एक कलकत्ता नगर का, दूसरा बृहत् बबई का और तीसरा दिल्ली का। कलकत्ता-समूह मे जूट तथा अन्य कारखानो के कारण छोटे-छोटे कई नगर मिल कर इस नगर समूह की रचना करते है। ये सभी उप-नगर ये है—अलीपुर, हावडा लिलुआह, दमदम, बराहनगर, रघुनाथपुर, कोननगर, श्रीरामपुर, बैद्यबटी, बरहामपुर, टिनगुरा, हुबली और गौरीपुर-नैहाटी। कलकत्ता की जनसख्या २९ २ लाख है किन्तु यदि इन सब उपनगरों को भी मिला दिया जाये तो वृहत्तर कलकत्ता की जनसख्या ४२ लाख से भी ऊपर हो जाती है। इसी प्रकार बृहत् बबई की जनसंख्या ४१ ५ लाख और दिल्ली की २३'५ लाख है। भारत की जनसख्या का ४४% एक लाख या उससे अधिक जनसख्या वाले नगरों मे रहती है। आस्ट्रेलिया की आधी जनसख्या यहाँ के ५ बड़े नगरो मे रहती है—सिडनी, ब्रिस्बेन, मेल्बोर्न, एडीलेड और पर्थ।

१० लाख जनसंख्या वाले नगर (Million Cities)

प्राय· सभी देशो मे जहाँ औद्योगिक विकास बढा है, उनमे जनसंख्या भी बढी है। इसका मुख्य कारण ग्रामीण क्षेत्रो की ओर से जनसख्या का नगरो की ओर उन्मुख

तथा सांस्कृतिक प्रगति के सूचक होते है। नगरों के अभ्युत्थान के साथ ही साथ श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण का विकास होता है और उसके फलस्वरूप धन-धान्य, कलाकौशल तथा विज्ञान आदि प्रोत्साहन पाते है। प्रो० थॉमस का कथन है कि "नगरों की उत्पत्ति और उनका विकास मनुष्य के जीवन पर गहरा प्रभाव डालता है।" प्रो० ब्लाशे (Blache) के अनुसार, "एक नगर सामाजिक संगठन होता है जिसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। यह सभ्यता की उस सीढी का प्रतिनिधित्व करता है, जिन तक कुछ क्षेत्र नही पहुँच पाये है और जो शायद कभी पहुँच भी न सकें।"[15]

नगरो का यह सामाजिक सगठन नगर की भौतिक सीमाओं को भी लांघ जाता है। यह उस सम्पूर्ण क्षेत्र मे दृष्टिगोचर होता है जिस पर नगर का व्यापारिक, राजनीतिक एव सास्कृतिक प्रभाव रहता है।

डा० ममफोर्ड ने नगरो के सामाजिक महत्व को इस प्रकार व्यक्त किया है। जैसा कि इतिहास मे मिलता है नगर एक समुदाय की शक्ति और संस्कृति के मिलने का सबसे बड़ा केन्द्र है। यही विभिन्न जीवो की किरण एक होकर सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हो जाती है। यह सामाजिक सबध का द्योतक है। यह मन्दिर बाजार, न्यायालय और शिक्षा का घर होता है। यही नगर मे सभ्यता की वस्तुओं का उत्पादन और आदान प्रदान होता है। यही मानव अनुभव दृष्टव्य-चिन्हों, चरित्र के स्वरूपो तथा विशिष्ट व्यस्था के रूप मे फल-फूलता है। यही सभ्यता की चर्चायें होती हैं और यही समय समय समाज के विभिन्न ड्रामा खेले जाते हैं।"[16] इन्हीं नगरो मे विभिन्न क्षेत्रो से जन समुदाय आकर एकत्रित हो जाता है और शनैः शनैः इसकी जनसख्या बढ जाती है।

नगरो की स्थापना इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना कही जा सकती है। आरम्भ से ही मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते समूहों में रहता आया है। किन्तु नगरो की उत्पत्ति उस समय हुई जब मनुष्य और उसको प्राकृतिक परिस्थितियो मे एक स्थाई सम्पर्क स्थापित हुआ। शिकारी जीवन या लकड़ियाँ काटने की अवस्था मे मनुष्य का एक स्थान पर स्थायी रूप से रहना असभव था, फलतः नगरों

15. "A city is a social organisation of much greater scope, it is the expression of a stage of civilisation which certain localities have not achieved and which they mayp erhaps never of themselves attain.", *V. Blache*, **Principles of Human Geography,** p.461

16 "The city as one finds in history, in the point of maximum concentration for power and culture of a community. It is the place where the diffused rays of many separate beams of life fall into focus; with gains in both social effectiveness and significance. The city is the form and symbol of an integrated social relationship : it is the seat of the temple, the market, the hall of justice, the academy of learning. Here in the city the goods of civilization are multiplied and manifolded, here is where human experience is transformed into visible signs, symbols, patterns of conduct systems or order. Here is where issues of civilization are focussed. Here too ritual passes on occasion into the active drama of a fully differentiated and self-conscious society."—*Mumford,* **The Culture of Cities p. 3.**

(१) ऐसे नगर मुख्यत. यूरोपीय देशो तथा यूरोपीय लोगो द्वारा बसे देश मे ही अधिक है जैसे-अमरीका तथा आस्ट्रेलिया मे। जबकि इसके विपरीत अन्तर-उष्ण-कटिबंधीय निम्न क्षेत्रो में जनसख्या अधिक होते हुए भी नगरो की सख्या कम है क्योंकि अधिकाश निवासी कृषक है।

(२) अधिकाश बड़े नगर ध्रुवीय क्षेत्रो को छोड़ कर मध्यवर्ती अक्षाशो मे ही है जिससे स्पष्ट होता है कि जिन प्रदेशो मे औद्योगिक स्रोतो का विकास अधिक हुआ है उन्ही मे बड़े नगरो का जन्म हुआ है। मध्य अक्षासो में ऐसे तीन क्षेत्र प्रधान है।

(क) सयुक्त राज्य अमरीका मे न्यू इग्लैंड से लगा कर चेसपिक की खाडी तक लगभग १००० मील लबी औद्योगिक पेटी-जिसके प्रधान नगर शिकागो, न्यूयार्क, बोस्टन, डिट्रायट, बाल्टीमोर वाशिंगटन, सेंट लुइसफिलाडेलफिया, पिट्सबर्ग आदि है। इसमे १० लाख से अधिक जनसख्या वाले १२ नगर हैं।

(ख) ग्रेट-ब्रिटेन से लगा कर डैन्यूब नदी की मध्य घाटी तक का औद्योगिक क्षेत्र जिसमे १० लाख जनसख्या वाले १२ नगर हैं। प्रमुख नगर लदन, पेरिस, और बर्लिन है। यही क्षेत्र आगे रूस मे भी चला गया है जहाँ मास्को, लेनिनग्राड, कीव, बाकू, गोर्की, खारकोव, तास्कद, आदि प्रसिद्ध नगर हैं।

(ग) सुदूर पूर्व मे चीन और जापान मे भी बड़े नगर है। पेकिंग, शघाई, टिटसीन, मुकडेन, वूहान, चुगकिंग, कैंटन, हार्बिन, नानकिंग, चीन मे तथा टोकियो, ओसाका, नगोया, याकोहामा, क्योटो और कावे जापान के बडे नगर है।

भारत मे १० लाख जनसख्या से अधिक के ये नगर है वृहत्तर बबई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास, अहमदाबाद और हैदराबाद। जबकि १ लाख से अधिक जनसख्या वाले नगरो की सख्या ४६ है।

(४) ये बड़े नगर न केवल घने बसे क्षेत्रो मे है वरन इनकी उपस्थिति किसी कारण विशेष से ही वहाँ है। या तो वे कोई बन्दरगाह हैं, या पुराने राज्य की राजधानी अथवा औद्योगिक केन्द्र।

(५) महाद्वीपो मे वितरण की दृष्टि से नगर सबसे अधिक यूरोप में हैं, जहाँ कि कुल जनसख्या का १७% नागरिक है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, विश्व की १० लाख जनसख्या वाले १७ नगर यूरोप मे हैं जिसमें से ९ यूरोप के उत्तरी पश्चिमी कोने में और शेष मैड्रिड से मास्को तक फैले हैं।

उत्तरी अमरीका मे सयुक्त राज्य की तटीय रियासतें तथा दक्षिणी-पूर्वी कनाडा के औद्योगिक क्षेत्र नगरो की सख्या अधिक है। पश्चिमी तट पर सैनफ्रांसिसको, लॉस एँजिल्स, विक्टोरिया और प्रिंस रूपर्ट आदि प्रसिद्ध नगर है। स० राज्य के मरुस्थलीय भाग मे भी नगरो का क्षेत्रीय केन्द्रों के रूप में विकास हुआ है। कन्सास सिटी, ओमाहा, सेंट लुइस, सेंट पॉल और ओकलाहामा प्रमुख क्षेत्रीय केन्द्र हैं। पूर्व की ओर तथा मध्य में अनेक औद्योगिक नगर हैं—वाशिंगटन, न्यूयार्क, फिलाडेल फिया, शिकागो पिट्सबर्ग, बर्मिघम, इडियानापोलिस, बोस्टन, आदि।

एशिया महाद्वीप मे जनसंख्या का आधार कृषि होने से नगरो की सख्या कम है। फिर भी पिछले ३० वर्षों में आर्थिक विकास मे प्रगति होने से नगरो की सख्या बढी है। जापान, चीन तथा भारत मे औद्योगिक क्षेत्रो अथवा बन्दरगाहो मे नगरो का अधिक विकास पाया जाता है।

influence, Catchment' area,[18] तथा Triblutary Area[19] । इसी को जैफरसन ने भौगोलिक प्रान्त (geographic province) कहा है। इससे तात्पर्य उस क्षेत्र का है जो नगर की भौतिक सीमाओं से भी बाहर की ओर काफी दूर तक फैला होता है जिसमे नगर के निवास भवन, शासनीय स्थल, जल-प्रदाय क्षेत्र, तथा सड़कों और बसो के मार्ग होते है और जहाँ से नगर के लिए साग-सब्जियाँ, दूध, ईधन, अनाज आदि उपलब्ध होते है तथा जहाँ तक डाक, अखबार आदि का प्रसार होता है।

नगर उन सभी भागो या प्रदेशों मे बढते हैं जहाँ मैदान क्षेत्र अधिक होते हैं, जिनमे यातायात के मार्ग बनाने की सुविधा मिलती है। यह सच ही कहा गया है कि मैदान किसी राष्ट्र के आर्थिक और सास्कृतिक जीवन मे हृदय का स्थान रखते हैं। इन पर बड़े-बड़े नगर विकास पाते है और वे रेलो, सड़को या वायुयानो द्वारा परस्पर मिला दिये जाते हैं। पठारो पर भी अथवा जिन पठारों के पार उपजाऊ मैदान हैं, अथवा जिनका सामाजिक महत्व होता है उन पर अधिक खर्च करके भी रेलें और सड़कें बनाई जाती हैं, जो न्यूनतम अवरोध की दिशा से उन पर चढती उतरती हैं, उन पर भी कई नगर बस जाते है। सच तो यह है कि भूतल के चेहरे को किसी भी मानवीय कारण ने इतना अधिक परिवर्तित नही किया है जितना कि आधुनिक नगरो की उत्पत्ति की बाढ ने।[21] यह परिवर्तन केवल भौतिक (Phiysiognomic) ही नही है वरन् यह एक बडा भूतात्विक परिवर्तन है जिसमे नदियों के मार्गों को बदला गया है, खड्डो को पूरा गया है और ऊँचाइयो को नीचा किया गया है।

नगरों का वितरण (Distribution of Cities)

सामान्यतः भूतल पर नगरों का वितरण दो प्रकार का पाया जाता है—(१) दूर दूर बसे नगर, तथा (२) अत्यन्त घने और निकट बने नगर।

दूर बसे नगर प्राय. कृषि-प्रधान क्षेत्रो मे मिलते है जहाँ जनसख्या का स्वरूप एक सा ही होता है। ऐसे नगर अपने क्षेत्रो की माग को पूरा करने के साथ-साथ उनकी प्रशासनीय व्यवस्था भी करते है। इसके अतिरिक्त मैदानी कृषि प्रधान क्षेत्रो मे, जहाँ जनसख्या का सामान्य घनत्व अधिक होता है, प्राय बड़े-बड़े कस्बे और नगर समान दूरियो पर और पास-पास मिलते है। इस प्रकार की व्यवस्था सयुक्त राज्य के मध्य-पश्चिमी भागों तथा अर्जेनटाइना एव हगरी और गगा--सतलज के मैदानो में मिलती है। इसके विपरीत जहाँ उद्योग मुख्यत किसी स्थानीय आर्थिक श्रोतो की प्राप्ति पर ही निर्भर होते है, वहाँ नगर एक दूसरे से दूर मिलते हैं, यद्यपि इनमे यातायात-संबध होता है।

209 बाद में डा० टेलर ने भी इसका उपयोग किया है—**Geographical Journal,** Vol. 116, 1950, p 84.

19. इन शब्दों का उपयोग ग्रीन ने अपने "Urban Hinternlands in England wales: An Analysis of Bus Service, **Gegoraphical Journal,** vol. 116, 1950, p. 64 पर किया है।

20 अंतिम शब्द का उपयोग हैरिस ने **Salt Lake City–A Regional. Capital,** 1940 में किया है।

21. *Brunhes, J,* **Op. Cit**, p. 87.

रोम	४·६३	१०·००	१६·४६	१६·८३
मिलन	४·८६	६·६२	१२·८६	१४·७१
बारसीलोना	५·३३	६·६१	११·३३	१५·५७
मैड्रिड	५·४०	८·६६	११·८७	२२·५६
ग्लासगो	७·६१	१०·८८	११·०६	१०·५४
बर्मिंघम	५·२२	१०·०२	११·०७	११·०५
बुखापेस्ट	—	—	—	१२·२५
नेपल्स	—	—	—	११·५०
एशिया				
टोकियो	१८·१६	२०·७०	५३·८५	१००·१०
शंघाई	४·५७	३०·००	४३·००	६६·००
ओसाका	६·६६	२४·५३	१६·५६	३०·११
कलकत्ता	११·४५	१४·८५	२१·०८	२६·२६
पेकिंग	१०·००	१२·६७	१६·०३	४१·४०
टिटसीन	७·५०	१३·८७	१६·८६	३२·२०
बम्बई	७·७६	११·६१	१४·८६	४१·४६
क्योटो	३·८१	७·६५	११·०१	१२·८४
बैंकाक	—	—	—	१५·७७
चुगकिंग	—	—	—	२१·२१
मनीला	—	—	—	११·४५
मद्रास	५·००	६·४०	१४·१०	१७·२५
नगोया	२·२६	६·०७	१०·३०	१५·६१
कैंटन	—	—	—	१८·४०
मुकडन	—	—	—	२४·११
हैदराबाद	४·४०	४·६०	१०·८०	१२·५२
सिंगापुर	—	—	—	—
याकोहामा	—	—	—	१३·७५
दिल्ली	२·००	४·४०	१३·८०	२३·५६
नानकिंग	२·७०	६·३३	११·१८	१४·१६
उत्तरी अमरीका				
न्यूयार्क	३४·३७	६६·२०	७८·३५	७७·८१
शिकागो	१६·६८	३३·७६	३६·०६	३५·५०

सरे, एसेक्स तथा कैंट आदि काऊंटियो तक फैला है। ब्रिटेन की ४३४ लाख जनसंख्या मे से १६० लाख मानव इन नगर-समूहो में रहते हैं।

यूरोप मे महानगरों का सबसे अच्छा विकास उत्तर-पश्चिमी जर्मनी के रूर प्रदेश मे ऐसेन के चारो ओर हुआ है। इन प्रदेशों में उत्तम कोयले की अनेकों खानें स्थित हैं। रूर नदी इस प्रदेश में पूर्व-पश्चिम होती हुई उत्तर की ओर बहती है। अतः इसी के सहारे सहारे १६ वी शताब्दी मे ऐसेन, ओवरहोसेन, ड्यूसबर्ग, डोर्टमंड आदि नगर बसे। औद्योगिक विकास के कारण इस प्रदेश मे और भी अनेक नगरों का जन्म हुआ जैसे बोचम, हर्न, गेल्स, हैम्बोर्न आदि। अब ये सब एक ही क्षेत्र में होने से एक नगर-समूह की पट्टी का निर्माण करते हैं। इसी क्षेत्र के लगभग १२ मील दक्षिण की ओर वूपर नदी की सकड़ी और गहरी घाटी है, जिसके समीपवर्ती भागो में कच्चा लोहा अधिक मिलता है। यहाँ अनेक लोहे और इस्पात के केन्द्रो की स्थापना हो गई जो कालान्तर में आपस मे जुड से गए। इस प्रकार के नगरो मे कोलन, सोलिनजेन, रेमशीड, क्रिफैल्ड, हैगन, वूपरटल, गैवल्सबर्ग, डसलडर्फ आदि मुख्य हैं। यह सब एक बडा नगर-समूह बनाते है।

रूर-घाटी प्रदेश के महानगरों की पट्टी

नगर	१८७१	१९१०	१९३९	१९६१
	(जनसख्या लाख मे)			
ऐसेन	०·५२	२·९५	६·५६	७·२६
डसलडर्फ	०·६६	३·५६	५·३६	७·०२
डार्टमुंड	०·४४	२·१४	५·३७	६·४१
ड्यूसबर्ग	०·३३	३·३०	४·३१	५·०३
वूपरटल	१ ४५	३·३६	३·९८	४·२०
गैलसकिरचन	०·०८	१·७०	३·१३	३·८५
बोचम	०·२१	१ ३७	३·०३	३·६१
ओवरहोसेन	० १३	०·९०	१·९१	२·५६
क्रीफैल्ड	०·५७	१·२९	१·६६	२·१३
हैगन	०·२०	० ८६	१·५१	—
सोलिनजेन	—	०·४६	१ ३८	—
रेमशील्ड	०·२२	०·७२	१ ०३	—

इस प्रकार जर्मनी मे ड्यूसबर्ग और डार्टमंड के बीच लगभग ३५० लाख व्यक्ति निवास करते हैं।

संयुक्त राज्य अमरीका मे नगरो की विस्तृत पेटी निरंतर लबाई मे मिशीगन झील के दक्षिणी तटीय भाग के सहारे गैरी से शिकागो तक फैली है। यह पेटी लग-

में कुछ कठिनाई पड़ती है, फिर भी नागरिक जनसंख्या का अधिकांश पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी-पूर्वी अमरीका में ही अधिक मिलता है जहाँ व्यापार व्यवसाय तथा उद्योगों का विकास अधिक हुआ है। संयुक्त राज्य अमरीका में नगर के स्थान माने गये हैं जहाँ की जनसंख्या १० से १५ हजार के बीच में होती है।[२४]

जर्मनी में नगरों का वर्गीकरण चार भागों में किया गया है: (क) २ से ५ हजार के झुंडों को Landstdt, (ख) ५,००० से २०,००० के झुंडों को Klein-stadt; (ग) २०,००० से १०० ००० के झुंडों को Mittelstadt और १ लाख से ऊपर को Grossestadt। इस वर्गीकरण से यह पता नहीं लगता कि किस विशेष श्रेणी को नगर कहा जाये। इंगलैंड में उस जनसंख्या को नागरिक कहा जाता है जो बोरो (Boroughs) या नागरिक जिलों में रहती है। फ्रांस में कम्यून को नगर की संज्ञा तब दी जाती है जबकि वहाँ की जनसंख्या केन्द्र में कम से कम २,००० हो। इसी प्रकार कनाडा में उन स्थानों को भी जहाँ जनसंख्या २०० की होती है तथा जापान में २०,००० की जनसंख्या वाले स्थान को नगर कहा गया है।

भारत में भी नगरों को जनसंख्या की दृष्टि से दो श्रेणियों में बाँटा गया है जिनकी जनसंख्या १ लाख से अधिक है उन्हें प्रथम श्रेणी के नगर कहा गया है; जबकि इनसे कम जनसंख्या वाले स्थानों को कस्बों की संज्ञा दी गई है—५० हजार से ९९,९९९ जनसंख्या वाले भागों को द्वितीय श्रेणी के नगर; २०००० से ४९,९९९ को तृतीय श्रेणी के नगर, १०,००० से १९,९९९ को चतुर्थ श्रेणी के नगर तथा ५,००० से ९,९९९ को पंचम श्रेणी के नगर और ५००० से कम को छठी श्रेणी के नगर माना गया है। इस वर्गीकरण के अनुसार भारत में प्रथम श्रेणी के १०७ नगर तथा १४१ द्वितीय श्रेणी के, ५१५ तृतीय श्रेणी के, ८१७ चतुर्थ श्रेणी के; ८४४ पाँचवीं श्रेणी के तथा २६६ छठी श्रेणी के नगर हैं। इनकी कुल संख्या १९५१ में ३,०५७ थी और जनसंख्या ६,२२,७६,७२९ थी जबकि १९६१ में इनकी संख्या २६९० तथा जनसंख्या ७,८८,३५,९३९ थी। नगरों की संख्या में कमी का कारण उनका पुनर्वर्गीकरण तथा कई छोटे उपनगरों को बड़े नगरों में मिला दिया जाना है।

अस्तु, जनसंख्या को U. N. O के जनसंख्या आयोग के अनुसार नागरिक या ग्रामीण विभाजन न देकर केवल तीन भागों में बाँटा जाय।

(क) २,००० से कम जनसंख्या वाले झुंड, तथा

(ख) २,००० से १०,००० जनसंख्या वाले झुंड, तथा

(ग) १०,००० से अधिक जनसंख्या वाले झुंड

नगरों की समस्यायें (Problems of Cities)

यद्यपि बड़े-बड़े नगर सामाजिक संगठन के प्रतीक होते हैं, किन्तु इनके विकास के साथ-साथ कई सामाजिक बुराइयाँ भी दृष्टिगोचर होने लगती हैं। सभी बड़े

डा० टेलर ने उस स्थान को जहाँ की जनसंख्या ५०,००० या उससे अधिक है नगर की संज्ञा दी है जब जनसंख्या ५०० से १०,००० है उसे कस्बे का और ५०० से कम होने पर गाँव की— *G. Taylor*, **Urban Geography**, 1958, p. 5.

24. *Jist and Halberg*, **Urban Society**, 1938.

होना रहा है। बर्फ की गेंद की भांति जो नगर पहले से ही बड़े थे उनकी जनसंख्या काफी बढ़ी है। इस प्रकार के बड़े नगर अथवा १० लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर (Millon Cities) बन्दरगाहों, औद्योगिक केन्द्रों, पुरानी राजधानियों के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं।

विश्व मे इस प्रकार के नगरो की संख्या पिछली शताब्दी से ही बढी है। १८०० मे विश्व मे १ लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों की संख्या केवल २३ थी। १६०० में यह १४६ हो गई और १६४१ में ६४०, १६५१ में ७०० और १६६१ में ८८० हो गई। इनमे से तीन-चौथाई नगर यूरोप अथवा यूरोपीयों द्वारा वासित प्रदेशो मे हैं।

नगरीकरण की इस प्रगति से स्पष्ट होता है कि जहाँ १८०० में कुल विश्व की जनसंख्या का केवल २% भाग २०,००० या उससे अधिक जनसंख्या वाले नगरो मे रहता था, वहाँ १६६१ मे २० प्रतिशत भाग ऐसे नगरो में रहता था अथवा दूसरे शब्दो मे ५० करोड़ व्यक्ति २०,००० या उससे अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों मे रहते है तथा विश्व की ३/५ नागरिक जनसंख्या १ लाख या उससे अधिक जनसंख्या वाले नगरो मे रहती है। यह सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या १३% है, जबकि १८०० मे यह प्रतिशत केवल १.७% था। *जैसा कि नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा* :—

२०,००० तथा १ लाख जनसंख्या वाले नगरो में
कुल निवासियो का प्रतिशत

वर्ष	२०,००० या उससे अधिक	१ लाख या उससे अधिक
१८००	२.४	१.७
१८५०	४ ३	२ ३
१६००	६ २	५.५
१६५०	२०.१	१३.१

१६६१ में ६१ नगर ही ऐसे थे जिनकी जनसंख्या लाख या उससे अधिक थी। अब प्रत्येक १० मे से २ व्यक्ति २०,००० या उससे अधिक जनसंख्या वाले नगरो में रह रहे हैं। यदि यही प्रगति रही तो सन् २,००० तक विश्व की लगभग आधी जनसंख्या तथा २०५० तक प्रत्येक १० मे से ६ व्यक्ति नगरों मे रहने लगेगा।

१६०० मे विश्व मे १० लाख जनसंख्या या उससे अधिक जनसंख्या वाले केवल १० नगर थे। इनमे से ५ यूरोप मे, ३ उत्तरी अमरीका मे, और १-१ रूस तथा एशिया में थे।

१६६१ मे इस प्रकार के नगरो की संख्या ६१ थी जिनमे से एशिया में २१, यूरोप मे १७ उत्तरी अमरीका मे ८ दक्षिणी अमरीका मे ४, आस्ट्रेलिया मे २, तथा १ अफ्रीका मे था।

इन १० लाख जनसंख्या वाले नगरो के वितरण की कुछ विशेषतायें ये है :—

के साधनों का विकास, पीने के जल तथा बिजली या कोयले की प्राप्ति आदि का सबंध जनसख्या के आकार से होता है। जब जनसख्या अधिक बढ जाती है तो इन सुविधाओं में भी कमी होने लगती है। यह एक सामान्य तथ्य है कि गर्मी की मौसम में दिल्ली नगर के कुछ क्षेत्रो मे (दरियागज, पहाड़गज, करौलबाग, जगपुरा, सब्जी मन्डी, लाजपत नगर, कालकाजी, निजामुद्दीन तथा ओखला) बस्तियों मे जल की समस्या बडी भीषण हो जाती है तथा बिजली की मात्रा इतनी कम मिलने लगती है कि पूर्ति की माँग से सामजस्य करने के लिए प्रति दिन किसी न किसी क्षेत्र को बिजली के बिना रहना पड़ता है।

भोज्य पदार्थ, दूध, साग-सब्जी तथा अन्य दैनिक आवश्यकता की वस्तुयें मँहगी हो जाती हैं और रहने के स्थान भी नहीं मिल पाते। अधिकाश जनसख्या नगरो से दूर उप-नगरो या बस्तियो मे (कहीं-कहीं तो यह दूरी ५० से ६० मील तक की होती है) रहती है, जिसमे आने-जाने की कठिनाइयाँ बढ जाती है। हजारो मनुष्यो का प्रतिदिन नगर मे आना जाना एक सामाजिक समस्या हो जाती है। सभी क्षेत्रों में चहल-पहल, भीड़-भड़क्का दीख पड़ता है तथा लोगो के आने जाने मे भी बडा समय नष्ट हो जाता है, इससे उनकी कार्यक्षमता तथा शरीर पर बड़ा अहितकर प्रभाव पड़ता है। एक प्रतिवेदन के अनुसार समय के नष्ट होने से उत्पन्न हानि का अनुमान भारत मे प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों का माना गया है।[28]

अन्य नागरिक सुविधाओं का भी बड़े नगरों मे अभाव मिलता है। हजारों बच्चे स्कूल, कालेजों मे प्रवेश पाये बिना रह जाते हैं, अस्पताल मरीजों के लिए पर्याप्त नहीं होते तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इन नगरो मे नालियों, स्वच्छ गलियों तथा खुले स्थानों का अभाव मिलता है। इनमें अधिकाशत गदे, घने और अंधकार-युक्त क्षेत्र मिलते हैं, जिन्हें ममफोर्ड द्वारा Blight Areas की संज्ञा दी गई है।

मकानो की इतनी कमी हो जाती है कि अधिकाश औद्योगिक नगरों मे न केवल मकान कई मंजिले बनाने पडते हैं वरन् श्रमिक बस्तियों मे तो एक-एक कमरे वाले घरों मे ही अधिकाश जनसख्या को रहना पडता है, जिनकी लम्बाई-चौडाई १२'×१५' और १०'×१०' ही होती है। यदि एक कमरे मे निवासियों का औसत २·५ व्यक्ति भी माना जाये तो इस दृष्टि से बम्बई मे लगभग ६६% मकानो मे भीड़ रहती है। बम्बई नगर मे तो मकान की दशा बडी ही खराब है। यहाँ बायकुला में ६६%; सिवडी में ८१%, मैजगाँव और परेल मे ८८% और नागदेवी मे ८७% निवासी एक ही कमरे वाले घरो मे रहते हैं। लखनऊ मे ऐसे लोगों की सख्या ५१%; कानपुर मे ६२%; अहमदाबाद में ७३% तथा नागपुर-जबलपुर मे ७३% है। कलकत्ता मे औद्योगिक जनसख्या का एक-तिहाई प्रति कमरे पीछे ६ से १२ मनुष्यो का रहता है। अधिकाश जनसख्या तो मकान न होने के कारण रात के समय पटरियों (Pavements) पर या दुकानों के बाहर गलियों मे ही सोते हैं। हाल की एक जाँच के अनुसार दिल्ली मे ऐसे लोगो की सख्या लगभग १२,००० मानी गई है। कलकत्ता तथा बम्बई मे तो यह सख्या और भी अधिक है। १९६१ मे भारत मे—लाख घरों की कमी का अनुमान लगाया गया था। विश्व के सभी बड़े नगरो मे

28. *Govt. of India,* **Location of Industries in India,** 1946, p. 12.

नगरों के प्रस्थान के कारण

(Causes of movement towards the cities)

जैसा कि ऊपर कहा गया है, ग्रामीण जनसंख्या का अधिकाश भाग नगरो की ओर खिचने लगा है। इससे नगरो की जनसख्या मे बड़ी वृद्धि हुई है। इस आकर्षण के प्रमुख कारण ये है:—

(१) जिन देशो मे कृपको के पास भूमि थोडी है, अथवा जहाँ भूमिहीन कृपक या श्रमिक अधिक हैं वहाँ के निवासी अपने निकटवर्ती औद्योगिक क्षेत्रों की ओर रोजगार पाने की आशा मे चले जाते हैं, क्योंकि गांवो मे थोडी भूमि से पर्याप्त जीवनोपार्जन की सुविधा नही मिलती।

(२) औद्योगिक क्षेत्रो मे उद्योग के विकास के साथ-साथ श्रमिकों की आवश्यकता बढती जाती है, जिसकी पूर्ति नगरो के पृष्ठ देश से ही की जाती है।

(३) विश्व के अनेक भागों मे जनसख्या का भार भूमि पर अधिक बढ रहा है, विशेषकर द० पूर्वी एशियाई देशो मे, अत इसको कम करने के लिए भी गाँवो से नगरों की ओर जनसख्या का स्थानान्तरण होने लगा है।

(४) खेती मे यन्त्रीकरण की प्रगति होने से कृपको को कम काम मिलने लगा है, अत' वे रोजगार की तलाश मे नगरो की ओर ही बढते हैं।

(५) नगरो मे आधुनिक काल की सभी नागरिक तथा सामाजिक सुविधायें, शिक्षालय, न्यायालय, अस्पताल, सिनेमा आदि मिलती हैं अत ग्रामीण क्षेत्रों से जनसख्या का विकास नगरो की ओर होने लगता है।

इस प्रकार कई देशो मे ग्रामीण क्षेत्र उजडते जा रहे हैं तथा नगरों की जनसख्या बहुत ही तेजी से बढ रही है। गाँवो मे इस प्रकृति के कारण खेती उजड रही है तथा खाद्यान्नो के उत्पादन मे कमी होने लगी है जब कि अत्यधिक जनसख्या के कारण नगरो मे अनेक सामाजिक बुराइयाँ फैलने लगी है।

विश्व के कुछ प्रमुख नगरो की जनसख्या इस प्रकार है.—

यूरोप	१९००	१९३०	१९५१	१९६१
		(लाख मे)		
लदन	४५ ३६	४३ ९६	८३·४८	८१ ७१
पेरिस	२६ ६०	२८·९१	२७ २५	२८ ११
बर्लिन	२७ १२	४२·२७	३३·२१	१० ७०
मास्को	११ ७४	२७ ८१	४१ ३७	५०·३२
लेनिनग्राड	१४ ३९	२२·२८	३१·९१	२८·८८
वियना	१७ २७	१८ ३६	१७ ३१	१६ २७
हैम्बर्ग	७·२१	११·४७	१६·०४	१८ ३२
बुडापेस्ट	७ ३२	१०·०५	१० ७३	१८·०७

स्वार्थ का ही विचार रखता है। मानव के सुन्दर गुणो का नाश हो जाता है और वह एक यन्त्र से अधिक कुछ नही रहता।

बड़े नगरों की विभिन्न समस्याओ को हम कुछ विद्वानो के शब्दो मे प्रस्तुत करते हैं.—

"From now on, most people will be born grow up, live, work and die in great metropolitan complexes, some in cities, some in the the expanding suburbs, **but mostly in urban surroundings.** Form now an we are on urbanized civilization. Characteristic of this development is a fluidity of population and of economic life. This flow changes the basic structure of the family, the community, social relations, employment choices, shopping education, communication and political associations The new metropolitanism profoundly disturbs most of our social institutions as churches, clubs, societies, voluntary hospitals and charities, cultural and recreational establishments, political parties and even governmental operations Traffic is suddenly snarled, transportation systems are in trouble, schools are over burdened, slums outrun modernization and renewal, water is short, pollution increases, and crime breaks out all over While this looks pretty bad don't forget, you and I are doing this. We are producing the metropolis "[29]

"Population growth and suburban expansian have created and ill continue to create unprecedented demands for new schools, road, hospital, water and sewerage systems and other essential facilities As state and local authorities fall behind the necessary construction ond financial face in fulfilling the needs of families and businesses all are touched by physical problems such as water supply, sanitation, traffic congestion, proper land use and zoning, home building, and dispersal of trace and industry. Problems of governmental concern such as water pollution, smoke, and other public health problems, civic defense, traffic control, fire and police protection and air port development spill over the bound of existing governmental units Simultaneously there has been extraordinarilyhigh mobility within older cities New neighbourhood entirely of home owners are created in outlying arears, while older section of the city lose populations on undego little net change. But the latter is often the net result of the replacement of middle class families by lower-income families "[30]

"Despite the presence of modern industry, modern transportation and modern ideas these places have a sprawling, unsanitary, un-

---

29 *Luther H. Gulick* (President) of the Institute of public Administration, (New York), quoted by *R !C. Cook* in 'the worlds great Cities Evolution or Devolution ? **Population Bulletin**. Vol. XVI, No. 6 September. 1960.

30 *Mortorn Haffiman* (Director of Research & Analysis Baltimore Urban Renewal and Housing Agency) quoted by *C. Cook* **Op. Cit.**

लॉस ऐंजिल्स	१०·०२	१२·३८	१६·५७	२४·७६
फिलाडेलफिया	१२·६३	१६·५०	२०·६४	२०·०२
डिट्रायट	२·८५	१५·६८	१८·३८	१६·७०
मैक्सिको सिटी	३·४५	१०·०७	२०·४३	२२·३४
मोंट्रियल	—	—	—	२१·०६
दक्षिणी अमरीका				
ब्यूनेस आयर्स	८·८१	२१·००	३०·००	२६·६६
रायोडीजानेरो	६·८७	१४·६६	२३·३५	३३·०७
साओ पॉलो	२·४०	६ ६२	२० ४१	३७·७६
सैंरियागो	—	—	—	—
आस्ट्रेलिया				
सिडनी	४·८७	१२·५४	१५·४६	२१·८१
मेलबोर्न	४·६६	१०·३३	१२·८८	१६·०७
अफ्रीका				
काहिरा	५·७०	११ ०३	२१·००	३३·४६
सिकन्दरिया	—	—	—	१५·१३

नागरिक जनसंख्या (Urban Population)

विश्व की जनसख्या का केवल १५% नागरिक जनसख्या है। यूरोप मे यह प्रतिशत १७ है, जबकि एशिया के देशो में, कृषि-प्रधान उद्योग होने से नागरिक प्रतिशत बहुत ही कम है। सबसे अधिक नगर जनसंख्या इगलैंड मे मिलती है, जहाँ इसका प्रतिशत ८० है। फ्रास मे यह प्रतिशत ५६, इटली में ७१, पुर्तगाल मे ३१, यूनान मे ३७ और यूगोस्लाविया मे १६%, जबकि जापान मे नागरिक जनसख्या का प्रतिशत ६५, रूस मे ५०, भारत मे १८ और सयुक्त राज्य अमरीका मे ५७ है।

इसमें कोई सदेह नही कि नागरिक जनसख्या का प्रतिशत आर्थिक और औद्योगिक दृष्टि से प्रगतिशील देशो मे ही अधिक है, किन्तु 'नागरिक जनसख्या' की व्याख्या भिन्न-भिन्न देशो मे भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है[२३] अतः तुलना करने

२३. प्रो॰ विल्सन के अनुसार "नगरों के अन्तर्गत वे समस्त क्षेत्र आते हैं जिनमें जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्गमील १,००० से अधिक होता है और जहाँ वस्तुतः कोई कृषि नहीं होती। जबकि वह क्षेत्र जहाँ प्रति वर्गमील जनसख्या का घनत्व १०० से १००० तक है और जिनमें कृषि एव अन्य कार्य साथ-साथ होते है, वे गाँव कहे जाते हैं"—*Wilson W. F.,* **Urban Community—A Redefinition of Cities,** p. 18.

श्री मार्क जैफरसेन के अनुसार प्रति वर्गमील पीछे जिन क्षेत्रों में जनसख्या का घनत्व १०,००० हो उन्हें नगर माना जाता है **Aothropology of Some Great Cities,** *American Geographi Societycal,* Vol. 41, No. 542.

नगरों की संरचना (Structure of Cities) अथवा नगरों का आंतरिक भूगोल

भूमि की रचना और यातायात के साधनों का प्रभाव नगर के ढांचे पर पड़ता है। नगरों के मुख्य ढांचे इस प्रकार हाते हैं :—

(१) पंक्तिनुमा (Lineal)—जब एक नदी के समानान्तर या सड़क के किनारे कोई नगर बस जाता है, तो उसका ढाँचा पंक्तिनुमा कहा जाता है क्योंकि नदी के समानान्तर ही इस नगर की प्रमुख सडकें होती हैं। मकानों की पंक्तियाँ भी इसी के समानान्तर होती हैं। मुख्य सडक जिस पर बाजार होता है वह भी नदी के समानान्तर होता है। हरिद्वार, वाराणसी, मथुरा आदि इस प्रकार के प्रमुख उदाहरण है।

(२) बहुमुखी ढांचा (Radial)—अनेक सड़कों के मिलने के स्थान पर उत्पन्न हुआ नगर का ढांचा इसी प्रकार का होता है। सडको के द्वारा उत्पन्न चौराहे पर नगर का प्रमुख बाजार होता है। चौराहे से दूर जाते समय दुकानों का महत्व भी कम हो जाता है। मकान सडको के पीछे भीतरी भागो मे बहुत सटे हुए घने होते है। मेरठ, अलीगढ, गाजियाबाद और अम्बाला ऐसे ही नगरो के उदाहरण हैं।

(३) तीरनुमा ढांचा (Arrow Type)—जब एक नगर अन्तरीय पर बसा होता है तो उसका एक भाग सकरा और समुद्र से विपरीत दिशा मे उसका थल भाग चौड़ा होता है। यहाँ मकानों के लिये अधिक भूमि होती है। इसी प्रकार का ढाँचा उननगरो का भी होता है जो नदियो के सगम पर बसे होते हैं।

(४) सीढ़ीनुमा (Terrace)—ऐसा ढांचा प्राय. पहाडी क्षेत्रो मे नगरों का होता है। यहाँ पहाडी ढाल पर सडकें एव पंक्तियो मे प्रत्येक सीढी पर समानान्तर बने हुए देखे जाते हैं। शिमला और नैनीताल ऐसे नगरो के उदाहरण हैं।

(५) मधुमक्खी के ढाँचों वाला (Bee-hive Type)—इस प्रकार के ढाँचो मे भी नगरों का बसाव मिलता है। यह अवस्था बस्ती की उस समय होती है जबकि नगर के मध्य मे कोई आकर्षण का बिन्दु होता है—जैसे मडी, व्यवसाय, कारखाना, किला एव राजनैतिक दफ्तर आदि हो।

नगरो का आकार भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है, जिनका अपना आन्तरिक भूगोल होता है। नगरो मे भूमि के विभिन्न उपयोगो के अन्तर्गत अनेक बातें सम्मिलित की जाती हैं जैसे निवास स्थान, व्यापार-क्षेत्र, औद्योगिक पेटी, सडको तथा खुले स्थानो की प्राप्ति आदि। यही सब मिलकर नगरो के नागरिक प्रदेश (Urban Regions) का निर्माण करते हैं। ये स्थान या स्वरूप किसी नगर के किस भाग या क्षेत्र मे अवस्थित हैं, उनकी बनावट तथा स्वरूप कैसा है, उनका सापेक्षिक सम्बन्ध तथा सामाजिक अन्तर-निर्भरता किस प्रकार की है—आदि बातें एक नागरिक क्षेत्र के भौगोलिक विश्लेषण के लिए आवश्यक मानी जाती हैं।

प्राचीनकाल मे जब नगरों का विकास होने ही लगा था तो निवास और व्यापार के क्षेत्र एक ही स्थान पर होते थे। बहुधा घरो का भीतरी भाग रहने के लिए तथा बाहरी भाग दुकानो के लिए व्यवहृत किया जाता था किन्तु नगरो के विकास के साथ-साथ ये दो भागो क्रमशः एक दूसरे से अब पृथक किए जाने लगे हैं

नगरो में गदी बस्तियाँ, निवास स्थानो का अभाव, बेरोजगारी की समस्या, कारखानों मे कार्य सबधी असतोषजनक दशायें, आमोद-प्रमोद तथा स्वास्थ्य सेवाओं की कमी पाई जाती है। भोजन सबधी वस्तुयें भी शुद्ध नही मिलती। सामाजिकता का अभाव मिलता है। सामाजिकता तथा शिष्टाचार केवल समान कार्य करने वालो मे ही होती है, जो भी सघो द्वारा सदैव बनाकर रखने का प्रयास किया जाता है, अन्यथा मनुष्य एक दूसरे से अपरिचित होता है। **श्री ममफोर्ड** के शब्दो मे "आधुनिक बडा नगर तात्रिक क्षेत्र मे अपने आप मे मास्कृतिक अलगाव का अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत करता है। दूसरे स्थान पर इन्होंने लिखा है "एक बड़ा नगर आर्थिक दृष्टि से अवाछनीय, राजनीतिक दृष्टि से अस्थिर, जैविक दृष्टि से पतन की ओर उन्मुख तथा सामाजिक दृष्टि से असतोषजनक होता है।[25] कुछ इसी प्रकार के विचार **प्रो० रोबसन** ने भी प्रस्तुत किये है कि अधिक समय तक आधुनिक दशाओ मे हाथी के आकार वाले नगरो के अनुपातो को न तो और अधिक सहा जा सकता है और न इनकी वृद्धि ही वाछनीय है।"[26] **प्रो० एटवुड** के शब्दो मे "Urban megalomania is just as regrettable a disease as elhphantasis."[27] यह कथन वास्तव मे सत्य ही है। अधिक बडे नगर अपने निवासियो की सामान्य आवश्यकताओ की पूर्ति पूर्णत. नही करते; प्रत्येक को इसकी शिकायत ही रहती है। अमरीका और यूरोप मे तो बहुत से नगरो का विकास और वृद्धि ही रुक सा गया है। केंद्रोपसारी शक्तियों के कारण, जिनका विकास मोटर तथा अन्य रेल चलने वाले वाहनो के कारण हुआ है। अनेक विकासशील देशो मे बडे नगरो मे मानव का भार कम होता जा रहा है।

बडे नगरो की सामान्य समस्यायें इस प्रकार हैं :—

१ **नगरों के आकार में वृद्धि होना**—प्राय. सभी औद्योगिक क्षेत्रो मे अनेक छोटे उपनगरो का विकास किसी बडे औद्योगिक नगर के चारो ओर अथवा निकट मे हो जाता है। इससे न केवल उपनगरो तथा बडे नगरो में जनसख्या का भार घना हो जाता है, वरन् रहने के स्थानों की भी कमी हो जाती है। विश्व के कुछ बडे *नगरो में जनसख्या का घनत्व कितना घना है यह इस बात से स्पष्ट होगा कि जहाँ* **फिलाडेलफिया** मे प्रति वर्गमील १५,१०० मनुष्य रहते है, वहाँ न्यूयार्क में २५,०००, शिकागो मे १६,४०० तथा लदन मे मनुष्य रहते हैं। भारत मे कलकत्ता मे २४,४००, बम्बई में ४८,४००, मद्रास मे २२,३००; अमृतसर मे २४,८०० और दिल्ली मे मनुष्य प्रति वर्गमील में रहते हैं। कुछ विशिष्ट भागों मे तो यह घनत्व और भी अधिक है—उदाहरणार्थ, बम्बई के 'द' वार्ड मे प्रति वर्गमील ७२,००० मनुष्य तथा कलकत्ता के प्रथम वार्ड मे यह घनत्व ४०,००० मनुष्यों का है। इतना अधिक घनत्व तो न्यूयार्क तथा लदन मे भी नही पाया जाता।

अधिक घनत्व के कारण नगरो में मिलने वाली सामान्य सुविधायें भी कम पडने लगती है क्योकि नगरो की प्रसार-विधियाँ, उप-नगरो की उत्पत्ति, गमनागमन

---

25. 'A big city becomes economically unsound, politically unstable, biologically degenerate and socially unsatisfying"—*L. Mumford*, **Op. Cit.**

26. *Robson, A.* **Great Cities of the World.**

27. *Atwood, A. W.* **"Grat Cities"** in the Saturday Evening Post, Vol. cci No. 5.

मकानो की यह विकट समस्या है, न्यूयार्क में तो ८० मंजिल ऊँचे मकान इस समस्या को हल करने के लिए बनाये गए है, जिन्हे Sky Scrapers कहा जाता है। अन्य नगरो मे (लदन, पेरिस, न्यूयार्क आदि) भूमि के नीचे तथा दूसरे नगरों में खंभों पर भूमि के ऊपर रेल-मार्ग बनाये गए है।

इन गदी बस्तियों में रहने वालों का जीवन-स्तर तो नीचा रहना ही है, वरन् ये अनेक सामाजिक बुराइयो से भी ग्रसित रहते है।

(२) **उपनगरों का प्रसार**—ज्यो-ज्यों मुख्य नगर बढता जाता है, उससे सम्बन्धित उपनगरों का भी प्रसार होने लगता है। इन नगरो से निम्न श्रेणी के लोग कार्य की तलाश मे बड़े नगरो मे जाकर रहने लगते हैं। नगरों के विकास के कारण उनके मध्यवर्ती भागो से अधिकाश व्यापारी, उद्योगपति खुले स्थानो मे रहने के लिए चले जाते है, उनके स्थान पर गंदी बस्तियो का प्रसार हो जाता है, जिनमे अधिकाशत. निम्न वर्ग के लोग रहने लगते है और समय तथा मूल्यो के परिवर्तन के कारण ये भाग पतन की ओर बढने लगते हैं। ममफोर्ड के अनुसार "बडे नगरो में प्रत्येक क्षेत्र एक सीमान्तक क्षेत्र होता है, क्योकि कोई क्षेत्र जो पहले अच्छे भवनों और सुन्दर सडकों वाला रहा है, वह अब नीचे मकान तथा अत्यधिक घनत्व और गदगी वाले हो गए हैं। अन्तिम स्थिति वह होती है जबकि ऐसे नगरो की जनसख्या घटने लगती है, मकान वीरान होने लगते हैं, किराया तथा टैक्स कम हो जाता है और आर्थिक तथा नागरिक दृष्टि से ऐसे नगर एक देनदारी ही जाती हैं।"

जो नगर जितना बडा होता जाता है, उसी अनुपात मे वहाँ अच्छे स्थानों का अभाव भी बढता जाता है, जिसके कारण भूमि के मूल्यों मे वृद्धि हो जाती है। अनेक बार नगरो के विस्तार के लिए निकटवर्ती क्षेत्रो की कृषि-योग्य भूमि को बसावट (Built-up) के लिए ले लिया जाता है इससे खाद्यान्नो तथा साग-सब्जियो के उत्पादन का अभाव होने लगता है। ऐसी भूमियो पर न केवल रहने के मकान बनाये जाते है वरन् फैक्ट्रियाँ, खेल-कूद के मैदान, हवाई जहाज ठहरने के स्थान, सैनिक बैंठकें आदि बना दिए जाते हैं जो कृषि भूमि के क्षेत्रफल को घटा देते है। इससे नगरो के निकटवर्ती क्षेत्रों की सुन्दरता भी नष्ट हो जाती है।

(३) प्रशासकीय तथा नागरिक सुविधाओं का अभाव

ज्यो-ज्यो नगर का स्वरूप, उसकी जनसख्या की वृद्धि के कारण बदलने लगता है, त्यों-त्यो उसके प्रशासकीय प्रबन्ध की समस्या गभीर रूप धारण करती जाती है। सिटी कारपोरेशन. अथवा म्यूनिसिपैल्टियो का कार्य क्षेत्र भी बढने लगता है। इनका कार्य न केवल नगरो की सफाई रखना, वरन् पेय-जल, बिजली, सड़को तथा जल-प्रवाह की सुविधायें प्रदान करना होता है, वरन् शिक्षा तथा आमोद-प्रमोद की सुविधाओ को जुटाना भी होता है। इन कार्यों मे अनेक नागरिक समितियो, पुलिस, न्याय-विभाग आदि का सहयोग होता है। किन्तु फिर भी नगर की सफाई तथा रोशनी व्यवस्था गडबड ही रहती है।

(४) नगरो के विकास और वृद्धि का सबसे अधिक प्रभाव सामाजिक होता है। चूँकि मनुष्य सदा मशीनों के बीच मे रहता है, उन्ही मे काम करता है अत. उसका जीवन भी मशीनो की भाँति नीरस और शुष्क हो जाता है। उसमे मानवीय गुणों और पारस्परिक सहयोग की भावना का अभाव बढता जाता है, प्रत्येक अपने

planned and neglected character that is strangely anacronistic'''the extensiveness and persistence of ignorance disease over crowding and stratification seem appaling."

"Over-blawn, dropsical city of elephantine proportion can no longer be regarded as desirable or even tolerable in its present condition." [31]

यह कथन इस ओर इगित करता है कि भविष्य मे नगरो के और अधिक राक्षसी—स्वरूप को वाछनीय नही माना जा सकेगा। अत यह आवश्यक है कि नगरो का न केवल पुनरुद्धार किया जाये वरन् नये नगरो को योजनाबद्ध प्रणाली के अतर्गत ही बसाया जाये।

नगरो की व्याख्या करते हुए श्री ममफोर्ड ने कहा है अपने पूरे अर्थ मे नगर एक भौगोलिक इकाई है एक आर्थिक व्यवस्था है, एक औद्योगिक प्रसारण है, सामाजिक कार्य का नाट्य-स्थल है, और सामूहिक एकता का एक सुन्दर समन्वय तथा चिन्ह।"[32] किन्तु वास्तव मे आधुनिक नगरो का स्वरूप इतना अधिक विकृत हो गया है, उसमे इतनी अधिक सामाजिक बुराई उत्पन्न हो गई है कि अब नगर-निर्माता यह अनुभव करने लगे है कि भविष्य के नगर न केवल सभी सुविधाओ से पूर्ण सुव्यवस्थित एव सुनियोजित हो वरन् वे निश्चित आकार से बडे भी न हो। भविष्य क नगर छोटे-छोटे हो तो उनके चारो ओर एक हरी-दीवार हो जो उनको दूसरे नगरो से पृथक् करती हो, तथा ये ऐसे हों कि जिनमे मनुष्य आकार न केवल रहने के लिए रहें वरन् एक अच्छे जीवन के लिए रहें। अतएव, अच्छा तो यही होगा कि ग्रामीण क्षेत्रो का नगरीकरण और नागरिक क्षेत्रो का ग्रामीणीकरण किया जाये। नगरो के निर्माण और विकास मे मानवीय आवश्यकताओ को पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। इस संबध मे हम श्री ममफोर्ड का उद्धरण "the home, the garden, the park must be planned for loves and love making : that is an essential aspect of an environment designed for human growth. Love making and home making, eroticism and domesticity,sexual delight and assiduous nurture of children these are among the highest human goals of genuine bio-technic planning." अतएव नगरो का निर्माण करते समय मानव-आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखा जाये।

(१) प्रत्येक देश मे नगर निर्माण सबधी योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए एक देश-व्यापी अधिनियम बनाया जाय।

(२) सूर्य-प्रकाश, वायु-दिशा, तापक्रम तथा वर्षा सबंधी दशाओ की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर मकानो को बनाया जाये।

(३) निम्नतम आवश्यकताओ के लिए एक घर मे दो कमरे, रसोई, स्नान-घर तथा शौचालय और बाहर की ओर कुछ खुला स्थान रखा जाये।

(४) नगरो मे सडको, नालियो का विकास ठीक प्रकार किया जाये।

---

31 *Davis, K.*, **Population of India and Pakistan,** 1951, p. 148

32. The city in its complete sense is a geographic plexus, an economic organisation, an industrial process, a theatre of social action, and an aesthetic symbol of collective unity." **Op. Cit.,** p 480.